

॥ ओम् ॥

यजुर्वेद भाष्य

(स्वामी दयानंद सरस्वतीजीना भाष्य अनुसार
मूल मंत्र, पदार्थ अने भावार्थ सहित)



: अनुवाद :

वेद दयालमुनि आर्य

प्रकाशक

वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड

पो. सागपुर, जि. साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७.

ફોન : (०२७७४) २७७२१७, (०२७७०) २५७२२४, २८७४१७, २८१४८६

E-mail : darshanyog@gmail.com

Website : www.darshanyog.org

યજુર્વેદ ભાષ્ય

(સ્વામી દયાનંદ સરસ્વતીજીના ભાષ્ય અનુસાર ગુજરાતી અનુવાદ)

પ્રકાશન તિથિ : પોષ, ૨૦૬૫ વિક્રમી, ડિસેમ્બર સન ૨૦૦૮,
સૃષ્ટિ સંવત ૧,૯૬,૦૮,૫૩,૧૦૯
સંસ્કરણ (ગુજરાતી) : પ્રથમ (પ્રત ૫૦૦૦)

● મુખ્ય વિતરક ●

શ્રી રણસિંહ આર્ય

દ્વારા ડૉ. સદ્ગુણ આર્યા

‘સમ્યક્’, કર્મચારી સોસાયટી પાસે, પો. ગાંધીગ્રામ, જૂનાગઢ – ૩૬૨૦૦૧

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, રાયપુર દરવાજા બહાર, અમદાવાદ-૨૨.

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, હાથીખાના, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૧.

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પોરબંદર-૩૬૦૫૭૫.

આર્યસમાજ, નવાડેરા, ભરૂચ-૩૬૨૦૦૧.

આર્યસમાજ, સ્ટેશન રોડ, આણંદ-૩૮૮૦૦૧

આર્યસમાજ, ૪૪-૪૫, સરદારનગર, ભરતનગર રોડ, ભાવનગર.

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પ્રાંચપ્રા. જિ. સુરેન્દ્રનગર-૩૬૩૩૧૦

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, ખંભાળિયા નાકા, જામનગર-૫.

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, સૈજપુર બોધા, અમદાવાદ-૪૫.

આર્યસમાજ, વિશ્રામભાગ કોલોની, મકરપુરા રોડ, પ્રતાપનગર, વડોદરા-૪.

આર્યસમાજ, સોની ફળિયા, સુરત-૩૬૫૦૦૩

આર્યસમાજ, આર્યસમાજ માર્ગ, વિસાવદર, જિ. જૂનાગઢ-૩૬૨૧૩૦.

આર્યસમાજ, સેક્ટર-૨૪, ગાંધીનગર-૩૮૨૦૨૪

આર્યસમાજ, દાતાર રોડ, જૂનાગઢ-૩૬૨૦૦૧.

આર્યસમાજ, ન્યૂ માણેકલાલ એસ્ટેટ, ઘાટકોપર(પ.) મુંબઈ-૪૦૦૦૮૬.

શ્રી અરવિંદ રાણા, ૭૯૧-ડી-૩ પંચશીલ પાર્ક, સેક્ટર-૨૧, ગાંધીનગર.

શ્રી મહેન્દ્રભાઈ ગાંધી, પ્લોટ નં. ૪૩૯, સેક્ટર-૨૩, ગાંધીનગર.

શ્રી ચંદ્રેશ આહુજા, ૩૧૦, ૧૧-બી સાધૂ વાસવાણી સોસા., ગોપાલપુરી, ગાંધીધામ.

સર્વોદય સાહિત્ય મંદિર, પ્લેટ ફોર્મ નં.-૧, રેલવે સ્ટેશન, અમદાવાદ.

શ્રી સુરેશ ચાવડા, ‘પ્રેમ મોહન’, ૯ નૂતનનગર, કાલાવડ રોડ, રાજકોટ.

મૂલ્ય : ૫૦૦-૦૦ રૂ.**લેસર ટાઈપ સેટિંગ** : રાજ ગ્રાફિક્સ, અમદાવાદ. ફોન : ૨૬૫૭૫૦૨૯**રંગ સજ્જા** : વિનાયક ગ્રાફિક્સ, અમદાવાદ. ફોન : ૯૮૭૯૦૯૪૩૨૫**આવરણ** : રાજકલ્પ મુદ્રણાલય, અમદાવાદ. ફોન : (૦૨૭૧૭)૨૪૪૦૧૬**પુસ્તક બંધન** : રોયલ ક્રિએશન કંપની, અમદાવાદ. ફોન : ૨૫૫૦૭૦૩૩**મુદ્રક** : પ્રિન્ટ કોન, અમદાવાદ. ફોન : ૩૨૯૮૩૧૧૮

प्रकाशकीय

प्रातः पूर्व दिशा में सूर्य के उदय होते ही समस्त विश्व की वस्तुओं की यथार्थता का ज्ञान हो जाता है वैसे ही मानव समाज में वेद ज्ञान स्वर्गी सूर्य के उपस्थित होने पर ही सच्चे ईश्वर, धर्म, संस्कृति, सभ्यता, आचार, विचार और आदर्श परम्पराओं से सम्बन्धित सिद्धांतों का ज्ञान होता है इसके विपरीत वेदों के अध्ययन की गुस्कुलीय आर्ष परम्परा के अभाव में अनेक प्रकार के अवैदिक मत पन्थ सम्प्रदाय चल पड़ते हैं। उनके कारण अन्धपरम्परा, पाखण्ड, आडम्बर आदि का प्रचलन हो जाता है। मानव समाज में सत्य, न्याय, दया, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, संयम, व्रत आदि का लोप हो जाता है और उसके स्थान पर सर्वत्र संशय, भय, भ्रम, छल, कपट, द्वेष, स्वार्थ, अशान्ति और दुःख व्याप्त हो जाते हैं।

वेद सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ है। यह बात न केवल भारतीय हिन्दू अपितु पाश्चात्य विद्वान् भी मानते हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर महाभारत के काल तक समस्त विश्व के लोग मात्र इसे ही ईश्वरीय ग्रन्थ मानते आये हैं। मर्यादा पुस्तोत्तम रामचन्द्र जी, योगिराज श्री कृष्ण चन्द्र जी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कपिल, कणाद, व्यास, बादरायण आदि ऋषि-महर्षि, सभी महानुभावों ने इन्हीं वेदों का गुस्कुलों में अध्ययन किया था।

गीता, रामायण, महाभारत, ब्राह्मण, स्मृतियाँ, दर्शन, उपनिषद्, पुराण आदि पुस्तकों में भी वेद को ईश्वरीय ज्ञान माना है। वेदों में न केवल व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय व विश्वस्तरीय की भौतिक विकास की बातों का वर्णन है अपितु जीवन में सुख, शान्ति, सन्तोष, निर्भीकता और स्वतन्त्रता प्राप्त करानेवाली आध्यात्मिक विद्याओं का भी वर्णन सूत्ररूप में है। उदाहरण के रूप में गणित, भाषा, रसायन, चिकित्सा, भवन निर्माण, अस्त्र-शस्त्र निर्माण, युद्ध, वनस्पति, कृषि, उद्योग, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीति, न्याय, आयुर्वेद, संगीत, भूगोल, खगोल, सृष्टि उत्पत्ति विज्ञान, पर्यावरण, विमान, दूरसंचार आदि अपरा विद्या के साथ साथ इन्हीं वेदों में शरीर, आत्मा और मन को पवित्र तथा उत्तम बनाकर मोक्ष की प्राप्ति के लिये संस्कार, मनोनियंत्रण, जप, तप, ध्यान, वैराग्य, समर्पण, निष्कामकर्म, समाधि आदि परा विद्या के विषय भी बीज रूप में विद्यमान हैं। इतनी विद्याओं का उल्लेख वेदों के अतिरिक्त अन्य किसी भी तथाकथित ईश्वरीय ग्रन्थ में नहीं है। इसी के आधार पर वेदों को ईश्वरीय ज्ञान कहा गया है।

ईश्वरीय ज्ञान के ग्रन्थ में जो जो विशेषतायें होनी चाहिए वे सभी इन वेद ग्रन्थों में उपलब्ध हैं जैसे कि -

१. जो सर्वाधिक प्राचीन हो ।
२. जिसमें मानवीय इतिहास न हो ।
३. जिसमें जैसा ईश्वर है वैसा ही ईश्वर का वर्णन पाया जाता हो ।
४. जिसमें मनुष्यों की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए समस्त ज्ञान-विज्ञान विद्यमान हो ।
५. जिसमें वर्णित सिद्धान्तों, नियमों में परस्पर विरोध न हो ।
६. जो किसी देश, जाति, मत, सम्प्रदाय विशेष के लिए न होकर मानव मात्र के लिए हो ।
७. जिसमें प्रत्यक्ष आदि प्रमाण तथा विज्ञान के विरुद्ध कोई कथन न हो ।
८. जिसमें जादू, टोना, चमत्कार, अन्धविश्वास, पाखण्ड से सम्बन्धित बातें न हो ।
९. जिसमें सृष्टिक्रम विरुद्ध किसी भी असम्भव बात का वर्णन न हो ।

देश विदेश में गुजराती भाषी सज्जनों के समक्ष चर्चा या प्रवचनों में जब मैं वेद की चर्चा करता था तो लोग पूछते थे कि क्या गुजराती में वेद उपलब्ध है ? हम पढ़ना चाहते हैं । जब मैं निषेध कर दिया करता था तो लोग निराश हो जाया करते थे । मेरे मन में भी यह स्थिति खटकती थी । पिछले कुछ वर्षों से वेदों का गुजराती अनुवाद कराने और उन्हें प्रकाशित कराके गुजरात के प्रबुद्धवर्ग, राज्याधिकारी, शासनाध्यक्ष, न्यायाधीश, धर्माचार्यों, कथाकारों, सन्तों, महन्तों, बापुओं, लेखकों, बुद्धिजीवी प्रतिष्ठित महानुभावों, संचार-माध्यमों, विश्व विद्यालयों, पुस्तकालयों, मन्दिरों, आश्रमों में सर्वत्र यह पुस्तक पहुँचाने की इच्छा प्रबल हो रही थी । जो आज आंशिक रूप से पूरी हो रही है ।

आज देश-विदेश में धर्म, अध्यात्म के नाम पर पण्डित, पुरोहित, आचार्य, सन्त, बापू, संन्यासी, कथाकार अपने प्रवचनों और उपदेशों में प्रायः गीता, रामायण, महाभारत, पुराण, भागवत आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों की ही कथाएं करते हैं, सर्वमान्य वेद-मन्त्रों का आधार लेकर शुद्ध सैद्धान्तिक ज्ञान का वर्णन नहीं करते हैं । यदि उपर्युक्त विद्वान् अपने प्रवचनों व कथाओं में वेदों को स्वीकार कर लें तो अनायास ही समस्त विश्व में सच्चे ईश्वर, धर्म, शिक्षा, नीति, आचार, सिद्धान्त व व्यवहार का ज्ञान हो जाये, और समाज में प्रचलित अनेक प्रकार की भ्रान्तियां, संशय, पाखण्ड, आडम्बर आदि समाप्त हो जाए, धार्मिक व्यक्तियों के घन, समय व शक्ति का अपव्यय भी बच जाए और समस्त मनुष्य समाज अपने जीवन को सब प्रकार से उन्नत बनाकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अधिकारी

बन जाए।

वेदों का गुजराती भाषा में अनुवाद करवा कर प्रकाशन करवाना एक बहुत बड़ा पुस्तक साध्य कार्य था। बार-बार निवेदन करने पर वानप्रस्थी दयालमुनि जी ने अति व्यस्त होने पर भी समय निकालकर अल्प काल में ही यजुर्वेद का गुजराती भाषा में पदार्थ और भावार्थ लिखकर पाण्डुलिपि तैयार कर दी। अब आई बात प्रकाशन की, यदि चार पांच लाख की लागत व्यय से सम्पन्न होने वाला कार्य होता तो हम बिना किसी सूचना के प्रकाशित कर देते किन्तु इस कार्य के सम्पन्न होने में बहुत बड़ी राशि की अपेक्षा थी इसलिए पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लोगों को वेद भाष्य प्रकाशन की सूचना दी गई और हमें प्रसन्नता हुई कि मात्र एक दो मास में ही आर्य सज्जनों ने उत्साहपूर्वक आधी से अधिक राशि प्रदान कर दी, आशा है अवशिष्ट राशि भी प्राप्त हो जाएगी।

ग्रन्थ के प्रकाशनार्थ जिन धार्मिक दानी सज्जनों ने आर्थिक सहयोग किया है या अग्रिम ग्राहक बने हैं उनका हम धन्यवाद करते हैं। जिन्होंने परोक्षस्वरूप से भाग-दौड़ करके, बुद्धि लगाकर, अपनी जीवनचर्या को अस्त व्यस्त करके भी इसके मुद्रण, प्रकाशन, आदि में सहयोग किया है वे भी धन्यवाद के पात्र हैं। विशेष कर श्री शशिकान्त जी आर्य (प्रिन्ट कॉन) जिन्होंने अल्प व्यय पर, शीघ्र और सुन्दर रूप में यह पुस्तक प्रकाशित कराई एतदर्थ उनका भी धन्यवाद करता हूँ। विदेश में प्रचार तथा अन्यान्य कार्यों में व्यस्त होने के कारण मैं इसके प्रकाशन में पर्याप्त समय नहीं लगा पाया किन्तु ब्रह्मचारी दिनेश कुमार जी आर्य ने प्रारम्भ से लेकर अन्त तक हर प्रकार से इसको सम्पन्न कराने में पर्याप्त पुस्तक किया है। ब्रह्मचारी प्रियेश जी आर्य आदि विद्यालय के ब्रह्मचारियों तथा श्री हीरालाल जी पाटील आदि वानप्रस्थ आश्रम के साधकों ने भी इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु बहुत श्रम किया है वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

चारों वेदों का गुजराती में अनुवाद कराके प्रकाशित कराने की इच्छा है। प्रथम यजुर्वेद भाष्य आपके हाथों में है जिसका आधार स्वामी दयानंद सरस्वती जी द्वारा निस्वत आदि वैदिक व्याकरण से प्रमाणित और प्राचीन ऋषियों की परम्परा के अनुस्वरूप किया संस्कृत भाष्य है। दूसरा सामवेद, जिसका भी अनुवाद हो चुका है, वह भी शीघ्र प्रकाशित करके आपको प्राप्त कराने का प्रयास करेंगे। आप महानुभावों से अपेक्षा है कि स्वयं परिवार के साथ इस ग्रन्थ का नियमित स्वाध्याय करेंगे साथ ही न केवल देश में अपितु विदेशों में भी अपने परिचित गणमान्य, बुद्धिजीवी, प्रतिष्ठित सज्जनों तक इस ग्रन्थ को पहुँचाकर अधिकाधिक इसका प्रचार प्रसार करके हमारे सहयोगी बनेंगे, इसी आशा और विश्वास के साथ -

वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्य वन, रोजड़.
मार्गशीर्ष शुक्ल ४-२०६५
(१-१२-२००८)

शुभेच्छु
ज्ञानेश्वरार्यः

અનુવાદકીય

વેદ

બ્રહ્મની અમૃતવાણી,

આદિ ગુરુ પરમપિતાનું પીયૂષપાન,

ઈશ્વરીય જ્ઞાનનો ખજાનો,

અપૌરુષેય વિજ્ઞાનનો ભંડાર.

માનવ સૃષ્ટિનાં પ્રાંગણમાં સંધ્યાના સોનલવરણાં કિરણોનો પરમેશ્વરીય જ્ઞાનપ્રકાશ !

તે ઋચ્યાઓ-મંત્રો પ્રભાતનાં ખિલેલાં મધમધતાં પુષ્પો ! પ્રાક્ કાળથી મહાભારત સુધી એ જ્ઞાન પ્રકાશ ઝળહળાટ ઝગમગતો અવનિને અજવાળતો રહ્યો.

એ પુષ્પોની સૌરભ સંસારના પટ પર મહેકતી રહી.

પરંતુ મધ્યકાલીન સાયણ વગેરે ભાષ્યકારોએ વેદોને માત્ર યજ્ઞના કર્મકાંડની પોથી બનાવી દીધી.

વેદોમાં પશુબલિ, માંસભક્ષણ, મદિરાપાન, બહુદેવતાવાદ, મૂર્તિપૂજા, અવતારવાદ, દેવો, ઋષિઓ અને રાજાઓનો ઇતિહાસ, તેઓની અશ્લીલ કથાઓ, અનેક કપોલ-કલ્પિત વાર્તાઓ રચીને વેદોના નામે પ્રચલિત કરી.

એ જ રીતે પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોએ પોતાની મલિન મનોકામના પૂર્ણ કરવા વેદોનું વિકૃત અને ભ્રષ્ટ

સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કર્યું.

આ રીતે મધ્યકાલીન અને પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોએ વેદોને વિકૃત, અશ્લીલ અને બીભત્સ બનાવ્યાં. ત્યારે-વર્તમાનકાલીન એક આર્ષદ્રષ્ટા, યુગપુરુષે વેદોનાં ભાષ્ય કરીને તેનો પુનરુદ્ધાર કર્યો.

એ યુગપુરુષ વેદ દિવાકર દયાનંદ !

એ આર્ષદ્રષ્ટા દયાનંદે વેદભાષ્યો કરીને, મધ્યકાલીન અને પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોના વિકૃત અને અશ્લીલ અર્થોને દૂર કરીને, વેદોને વિશુદ્ધ ઈશ્વરીય જ્ઞાન-વિજ્ઞાન રૂપમાં પ્રકાશિત કર્યાં.

એ વેદ ભાસ્કરના દિવ્યજ્ઞાન પ્રકાશ આડે આવેલા અનાર્ષ સિદ્ધાન્તોના કાળાડિંભ વાદળોને દૂર કરી આર્યાવર્તને ઝગમગાટ ઝળકાવવા એ આર્ષદ્રષ્ટા દયાનંદનું હૃદય પોતાની આત્મકથામાં ધબકે છે :

“પરમાત્માની કૃપાથી (જો) મારું શરીર હશે અને વેદભાષ્ય સંપૂર્ણ થાય તેવા કુશળ દિવસો જોવામાં આવશે, તો નિઃસંદેહ આર્યાવર્ત દેશમાં સૂર્ય સમાન પ્રકાશ ફેલાઈ જશે.... પરંતુ (કદાચ) સૂર્યની સામે ગ્રહણ આવશે, તો (પણ) થોડા જ સમયમાં ફરી ઉગ્રહ (ગ્રહણ મુક્ત) અર્થાત્ નિર્મળ બની

જશે.”

મહર્ષિ દયાનંદના વેદભાષ્યથી સમસ્ત સંસારમાં જ્ઞાનપ્રકાશનાં સોનેરી કિરણો ઝળહળી ઊઠ્યાં. બ્રહ્મર્ષિ દયાનંદની વેદ પરની અપ્રતિમ આસ્થા હતી કે - “વેદ સર્વ સત્યવિદ્યાઓનું પુસ્તક છે. વેદ ભણવા-ભણાવવા અને સાંભળવા-સંભળાવવા એ આર્યોનો પરમ ધર્મ છે.”

ઋષિપ્રવર દયાનંદ ચારેય વેદોનું ભાષ્ય કરીને મનુષ્ય માત્રને શ્રેષ્ઠ અને સુખી જોવા ઈચ્છતા હતા; પરંતુ તેમાં યજુર્વેદનું સંપૂર્ણ અને ઋગ્વેદનાં અપૂર્ણ ભાષ્યના ૭૫૮૫ મંત્રોનું વેદામૃત આપીને નિર્વાણ પામ્યા.

અનુવાદ : સ્વામી દયાનંદે મૂળ વેદભાષ્ય સંસ્કૃતમાં કરેલ છે; તેનો હિંદીમાં અનુવાદ સ્વયં માર્ગદર્શન દ્વારા શિષ્યો-પંડિતો દ્વારા કરાવેલ છે; તેનું પ્રકાશન પરોપકારિણી સભા-અજમેર દ્વારા થયેલ છે. તદનુસાર સાર્વદેશિક સભા તથા અન્યો દ્વારા હિંદી અનુવાદ પ્રકાશિત થયેલ છે. મેં આ અનુવાદમાં તેનો આધાર રાખેલ છે.

પ્રસ્તુત અનુવાદમાં મેં મૂળ મંત્ર, મંત્રના સંસ્કૃત પદ = શબ્દ સાથે પદાર્થ = પદનો અર્થ અને અન્તમાં ભાવાર્થનો ક્રમ રાખીને ભાષ્યનો સંપૂર્ણ અનુવાદ કરેલ છે.

ભાષ્યના અનુવાદની હિંદી ભાષા સવાસો વર્ષ જૂની તથા મુદ્રણમાં અલ્પ વિરામ વગેરે રહિત હોવાથી અનુવાદ તથા વાક્ય રચના વગેરેમાં આચાર્ય સુદર્શનદેવ રચિત ‘દયાનંદ યજુર્વેદ ભાષ્ય - ભાસ્કર’નો માર્ગદર્શકરૂપે ઉપયોગ કરેલ છે.

ભાવાર્થ : મેં સ્વામીજીના મૂળ સંસ્કૃત ભાવાર્થનો પ્રાયઃ અનુવાદ કરવા પ્રયાસ કરેલ છે. તેમ છતાં તેમાં વિદ્વદ્વર્ય આચાર્ય સુદર્શનદેવનો ઉક્ત ગ્રંથ તથા પં. સત્યાનંદ વેદવાગીશ સંપાદિત ‘ભાવાર્થ પ્રકાશ’ માર્ગદર્શક બની રહેલ હોઈ તેઓનો આભાર માનું છું.

સ્વામીજીના યજુર્વેદ ભાષ્યનો ગુજરાતીમાં અભાવ દીર્ઘકાળથી ખટકતો હતો. પરંતુ આયુર્વેદ સાહિત્ય લેખનમાં અતિ વ્યસ્ત હતો; તેમજ આ અનુવાદનું કાર્ય મહાન અને દુષ્કર પણ હતું.

આચાર્યશ્રી જ્ઞાનેશ્વરજી આર્ય વેદોના ગુજરાતી અનુવાદ માટે મને વારંવાર પ્રેરિત અને પ્રોત્સાહિત કરતા હતા અંતે તેમના માર્ગદર્શન સાથે આ કાર્ય સંપન્ન કરેલ છે. તે બદલ તથા પ્રકાશન માટે હું તેઓશ્રીનો અન્તઃકરણપૂર્વક આભારી છું.

અનુવાદ મૂળ ગ્રંથાનુરૂપ કરવાના યથાશક્ય પ્રયાસ છતાં સહજ માનુષ પ્રમાદના કારણે ત્રુટિ રહેવી સ્વાભાવિક છે, તે બદલ ક્ષમાપ્રાર્થી છું.

ઋષિ દયાનંદે સત્યવિદ્યારૂપ વેદને ભણવાને-સ્વાધ્યાયને આર્યોનો ‘પરમધર્મ’ કહેલ છે. તદનુસાર આ અનુવાદરૂપ સ્વાધ્યાયથી મેં આનંદ પ્રાપ્ત કરેલ છે અને તેમાં સહભાગી બનવા આપ સર્વને આવકારું છું.

‘પ્રણવ’, ટંકારા.

૨૦૨૩ અષાઢ સુદ ૧૫

વિદુષાં કૃપૈષી

— દયાલ મુનિ આર્ય

॥ ઓ૩મ્ ॥

અથ યજુર્વેદભાષાભાષ્યારમ્ભઃ ક્રિયતે ॥

યો જીવેષુ દધાતિ સર્વસુકૃતજ્ઞાનં ગુણૈરીશ્વરઃ । તં નત્વા ક્રિયતે પરોપકૃતયે સદ્યઃ સુબોધાય ચ ॥
ઋગ્વેદસ્ય વિધાય વૈ ગુણગુણિજ્ઞાનપ્રદાતુર્વર્મ્ । ભાષ્યં કામ્યમથો ક્રિયામયયજુર્વેદસ્ય ભાષ્યં મયા ॥ ૧ ॥

ચતુસ્ત્ર્યઙ્કૈરઙ્કૈરવનિસહિતૈર્વિક્રમસરે । શુભે પૌષે માસે સિતદલભવિશ્વોન્મિતતિથૌ ।
ગુરોર્વારિ પ્રાતઃપ્રતિપદમતીષ્ટં સુવિદુષાં । પ્રમાણૈર્નિર્બંધં શતપથનિસ્સ્વતાદિભિરપિ ॥ ૨ ॥

વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરા સુવ । યદ્ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

હવે યજુર્વેદ ભાષ્યનો આરંભ કરવામાં આવે છે.

જો નિર્ગુણ ગુણપુજ્જ સે દેત સુકૃત વિજ્ઞાન । પ્રણતપાલ જગદીશ્વરહિ કરિ પ્રણામ તિહિ ધ્યાન ॥ ૧ ॥

જ્ઞાનદાયિ ઋગ્વેદ કા ભાષ્યાભીષ્ટ વિધાય । પર-ઉપકાર વિચારિ કરિ શીઘ્ર સુબોધ નિધાય ॥ ૨ ॥

શતપથ બ્રાહ્મણ આદિ પુનિ નિઘન્ટુ નિસ્સ્વત નિહારિ । યજુર્વેદ જો ક્રિયા પર વર્નો તાહિ વિચારિ ॥ ૩ ॥

એક સહસ્ત્ર નવશત અધિક વિક્રમસર ચૌતીસ । પૌષ શુક્લ તેરસિ તિથિ દિન અધીશ વાગીશ ॥

વિક્રમ સંવત ૧૯૩૪ના પોષ સુદ ૧૩ને ગુરુવારે યજુર્વેદનું ભાષ્ય કરવાનો આરંભ કરવામાં આવે છે.
વિશ્વાનિ..... મંત્રનો અર્થ ભૂમિકામાં આપવામાં આવ્યો છે.

ઈશ્વરે ઋગ્વેદમાં ગુણ અને ગુણીના વિજ્ઞાનના પ્રકાશ દ્વારા સર્વ પદાર્થ જાહેર કર્યા છે. મનુષ્ય તે પદાર્થથી જે જે રીતે યથાયોગ્ય ઉપકાર મેળવવા માટે ક્રિયા કરવી જોઈએ તથા જે ક્રિયાના જે અંગ વા સાધન છે તે યજુર્વેદમાં દર્શાવવામાં આવ્યાં છે. કેમ કે જ્યાં સુધી ક્રિયા કરવાનું દૃઢ જ્ઞાન ન હોય ત્યાં સુધી તે જ્ઞાનથી ઉત્તમ સુખ મળી શકતું નથી અને વિજ્ઞાનનો હેતુ એવો છે કે જે ક્રિયાપ્રકાશ અવિદ્યાની નિવૃત્તિ અધર્મમાં અપ્રવૃત્તિ તથા ધર્મ અને પુરુષાર્થનો સંયોગ કરવાનો છે જે કર્મકાંડ છે તે વિજ્ઞાનના નિમિત્ત અને જે વિજ્ઞાન કાંડ છે તે ક્રિયાનું ફળ આપનાર હોય છે. કોઈ જીવ એવો નથી જે મન, પ્રાણ, વાયુ, ઈન્દ્રિય અને શરીરના ચલાવ્યા વિના એક ક્ષણ પણ રહી શકે, કેમકે જીવ અલ્પજ એકદેશવર્તી ચેતન છે. તેથી જે ઈશ્વરે ઋગ્વેદના મંત્રોથી સર્વ પદાર્થના ગુણગુણીના જ્ઞાન અને યજુર્વેદના મંત્રોથી સર્વ ક્રિયા કરવા જણાવ્યું છે કેમકે ઋક્ષ અને યજુઃ એ બન્ને શબ્દના અર્થ પણ એ જ છે કે જેથી મનુષ્ય ઈશ્વરથી લઈ પૃથિવી પર્યંત પદાર્થોના જ્ઞાનથી ધાર્મિક વિદ્વાનોનો સંગ, સર્વ શિલ્પક્રિયા સહિત વિદ્યાઓની સિદ્ધિ, શ્રેષ્ઠ વિદ્યા, શ્રેષ્ઠ ગુણ વા વિદ્યાના દાન, યથાયોગ્ય ઉક્ત વિદ્યાના વ્યવહારથી સર્વોપકારને અનુકૂળ દ્રવ્યાદિ પદાર્થોના ખર્ચ કરે તેથી એનું નામ યજુર્વેદ છે. વળી એ શબ્દોનો અભિપ્રાય ભૂમિકામાં જાહેર કર્યો છે ત્યાં જોઈ લેવો જોઈએ. કેમકે તે ભૂમિકા ચારે વેદની એક જ છે.

આ યજુર્વેદમાં બધું મળીને ચાળીસ અધ્યાય છે. એ એક એક અધ્યાયમાં કેટલા કેટલા મંત્ર છે તે નીચેના કોઠામાં દર્શાવ્યું છે અને ચાળીસે અધ્યાય મળીને એકંદર ૧૯૭૫ મંત્ર છે.

અધ્યાય મંત્ર	અધ્યાય મંત્ર	અધ્યાય મંત્ર	અધ્યાય મંત્ર	અધ્યાય મંત્ર	અધ્યાય મંત્ર
૧ ૩૧	૮ ૬૩	૧૫ ૬૫	૨૨ ૩૪	૨૯ ૬૦	૩૬ ૨૪
૨ ૩૪	૯ ૪૦	૧૬ ૬૬	૨૩ ૬૫	૩૭ ૨૨	૩૭ ૨૧
૩ ૬૩	૧૦ ૩૪	૧૭ ૯૯	૨૪ ૪૦	૩૧ ૨૨	૩૮ ૨૮
૪ ૩૭	૧૧ ૮૩	૧૮ ૭૭	૨૫ ૪૭	૩૨ ૧૬	૩૯ ૧૩
૫ ૪૩	૧૨ ૧૧૭	૧૯ ૯૫	૨૬ ૨૬	૩૩ ૯૭	૪૦ ૧૭
૬ ૩૭	૧૩ ૫૮	૨૦ ૯૦	૨૭ ૪૫	૩૪ ૫૮	કુલ મંત્ર
૭ ૪૮	૧૪ ૩૧	૨૧ ૬૧	૨૮ ૪૬	૩૫ ૨૨	૧૯૭૫

ઓ૩મ્

યજુર્વેદ-ભાષ્ય

॥ અથ પ્રથમોઽધ્યાયઃ ॥

ઓ૩મ્ ડ્રુષે ત્વોર્જે ત્વા વાયવ સ્થ દેવો વઃ સવિતા પ્રાર્પયતુ શ્રેષ્ઠતમાય
કર્મણઽઆપ્યાયધ્વમઘ્ન્યાઽન્દ્રાય ભાગં પ્રજાવતીરનમીવાઽઅયક્ષ્મા મા વ
સ્તેનઽઈશત માઘશંસો ધ્રુવાઽઅસ્મિન્ ગોપતૌ સ્યાત બહ્વીર્યજમાનસ્ય પશૂન્
પાહિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સવિતા-સર્વ જગતના ઉત્પાદક, સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યયુક્ત દેવઃ-સર્વ સુખોના દાતા અને સર્વ વિદ્યાઓના પ્રકાશક પરમાત્મા છે, તે વઃ-આપણાં અને આપણાં મિત્રોનાં જે વાયવઃ-સર્વ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનારાં, સ્પર્શ ગુણવાળાં પ્રાણ, અન્તઃકરણ અને ઈન્દ્રિયો સ્થ-છે, તેને શ્રેષ્ઠતમાય-અત્યુત્તમ કર્મણે-કરવા યોગ્ય, સર્વને ઉપકારક યજ્ઞ વગેરે કર્મો માટે પ્રાર્પયતુ-સારી રીતે સંયુક્ત કરે.

અમે લોકો ડ્રુષે-અન્નાદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થો, વિજ્ઞાન પ્રાપ્તિની ઈચ્છા અને ઋર્જે-પરાક્રમ અર્થાત્ ઉત્તમ રસની પ્રાપ્તિ માટે ભાગમ્-સેવા કરવા યોગ્ય ધન અને જ્ઞાનથી પૂર્ણ, ત્વા-ઉક્ત ગુણયુક્ત, તથા ત્વા-અનંત પરાક્રમાદિ ગુણોને આપનાર આપનો સદા આશ્રય કરીએ છીએ. હે મિત્રો મનુષ્યો ! તમે પણ એવા બનીને આપ્યાયધ્વમ્-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો તથા અમે પણ ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરીએ.

હે ભગવન્ જગદીશ્વર ! અમોને ઈન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે પ્રજાવતીઃ-જે અધિક પ્રજા-સંતતિયુક્ત તથા જે અનમીવાઃ-વ્યાધિ અને અયક્ષ્માઃ-રાજયક્ષ્મા ક્ષય વગેરે રોગ રહિત છે તે અઘ્ન્યા-ઉન્નતિ કરવા યોગ્ય ગાય વગેરે પશુઓ હિંસા કરવા યોગ્ય નથી અથવા ઈન્દ્રિયો અથવા પૃથિવી આદિ લોક છે, તેને સદા પ્રાર્પયતુ-સંયુક્ત કરો.

હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી અમારામાંથી દુઃખ આપનાર કોઈ અઘશંસઃ-પાપી તથા સ્તેનઃ-ચોર, ડાકુ મા ઈશત-કદી પણ ઉત્પન્ન નહિ થાઓ.

આપ એ યજમાનસ્ય-પરમેશ્વર અને સર્વોપકારક ધર્મનું સેવન કરનારા મનુષ્યના પશૂન્-પશુઓ ગાય, ઘોડા, હાથી વગેરે તથા લક્ષ્મી અને પ્રજાની પાહિ-નિરંતર રક્ષા કરો, જેથી એ પદાર્થોનું હરણ કરવાને પૂર્વોક્ત કોઈ (પાપી કે ચોર) દુષ્ટ મનુષ્ય સમર્થ ન બને.

અસ્મિન્-એ ધાર્મિક ગોપતૌ-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોની રક્ષા ઈચ્છનારા ધાર્મિક સજ્જન મનુષ્ય પાસે બહ્વીઃ-વિપુલ ઉક્ત પદાર્થો ધ્રુવાઃ-નિશ્ચલ સુખદાયક સ્યાત-રહે.

આ મંત્રની વ્યાખ્યા શતપથ બ્રાહ્મણમાં કરવામાં આવી છે.

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ હંમેશાં પરમેશ્વર અને ધર્મયુક્ત પુરુષાર્થનો આશ્રય કરીને, ઋગ્વેદના અધ્યયનથી ગુણ અને ગુણીને જાણીને, સર્વ પદાર્થોના સંપ્રયોગથી પુરુષાર્થની સિદ્ધિ માટે શ્રેષ્ઠતમ ક્રિયાઓથી સંયુક્ત થવું જોઈએ.

જેથી ઈશ્વરની કૃપાપૂર્વક સર્વ મનુષ્યોના સુખ અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ થાય. સમ્યક્ ક્રિયા – શુભકર્મોથી પ્રજાની રક્ષા તથા શિક્ષણ હંમેશાં કરવાં જોઈએ, જેથી કોઈ પણ રોગરૂપી વિદ્વન તથા ચોર કદાપિ બળવાન ન બને અને પ્રજા તથા પુત્રાદિ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે.

હે મનુષ્યો ! જેણે આ વિચિત્ર આશ્ચર્યરૂપ સૃષ્ટિની રચના કરી છે, તે જગદીશ્વરનો હંમેશાં ધન્યવાદ કરીએ. તેમ કરવાથી પરમ દયાળુ ઈશ્વર તમારા પર કૃપા કરીને સદા રક્ષા કરશે એમ માનવું જોઈએ. (૧)

વસોઃ પવિત્રમસિ દ્યૌરસિ પૃથિવ્યસિ માતરિશ્વનો ઘર્મોઽસિ વિશ્વધાઽસિ ।

પરમેણ ધામ્ના દૃહસ્વ મા હ્વાર્મા તે યજ્ઞપતિર્હર્ષિત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જે વસોઃ-યજ્ઞ પવિત્રમ્-શુદ્ધિનો હેતુ અસિ-છે, દ્યૌઃ-જે વિજ્ઞાન પ્રકાશનો હેતુ અને સૂર્ય કિરણોમાં સ્થિર થનાર અસિ-છે, પૃથિવી-વાયુની સાથે દેશ-દેશાંતરમાં ફેલાનાર અસિ-છે, માતરિશ્વનઃ-વાયુને ઘર્મઃ-શુદ્ધ કરનાર અસિ-છે, વિશ્વધાઃ-સંસારને ધારણ કરનાર અસિ-છે તથા જે પરમેણ-ઉત્તમ ધામ્ના-સ્થાનથી દૃહસ્વ-સુખની વૃદ્ધિ કરનાર છે.

એ યજ્ઞનો માહ્વાઃ-ત્યાગ ન કર. તથા તે-તારા યજ્ઞપતિઃ-યજ્ઞની રક્ષા કરનાર યજ્ઞમાન પણ તેનો મા હ્વાર્ષીત-ત્યાગ કરે નહિ.

ધાત્વર્થના અભિપ્રાયથી યજ્ઞ શબ્દનો અર્થ ત્રણ પ્રકારનો થાય છે : (૧) આ લોક અને પરલોકના સુખ માટે વિદ્યા, જ્ઞાન અને ધર્માચરણના સેવનથી વૃદ્ધ વિદ્વાનોનો સત્કાર કરવો. (૨) સારી રીતે પદાર્થોના ગુણોના મેળ અને વિરોધના જ્ઞાનથી શિલ્પ વિદ્યાનું પ્રત્યક્ષ કરવું તથા (૩) વિદ્વાનોનો નિત્ય સમાગમ અર્થાત્ શુભ વિદ્યા, સુખ ધર્માદિ ગુણો તથા સત્યનું નિત્ય દાન કરવું. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને ઉત્તમ ક્રિયા દ્વારા વિધિપૂર્વક કરવામાં આવેલ યજ્ઞથી મનુષ્યોમાં પવિત્રતાનો પ્રકાશ, પૃથ્વીનું રાજ્ય, વાયુરૂપી પ્રાણ સમાન રાજનીતિ, પરાક્રમ, સર્વની રક્ષા, આ લોક અને પરલોકમાં પરમસુખની વૃદ્ધિ, પરસ્પર સરળતાથી વ્યવહાર અને કુટિલતાનો ત્યાગ વગેરે શ્રેષ્ઠ ગુણો પ્રાપ્ત થાય છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ પરોપકાર અને પોતાના સુખ માટે વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી પ્રીતિપૂર્વક યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨)

વસોઃ પવિત્રમસિ શ્વતધારં વસોઃ પવિત્રમસિ સહસ્ત્રધારમ્ ।

દેવસ્ત્વા સવિતા પુનાતુ વસોઃ પવિત્રેણ શ્વતધારેણ સુષ્વા કામધુક્ષઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે વસો:-યજ્ઞ શતધાર્મ-અસંખ્ય સંસારને ધારણ કરનાર અને પવિત્રમ્-શુદ્ધિ કરનાર કર્મ અસિ-છે તથા જે વસો:-યજ્ઞ સહસ્રધાર્મ-અનેકવિધ બ્રહ્માંડને ધારણ કરનાર અને પવિત્રમ્-શુદ્ધિનો હેતુ અને સુખદાયક છે, ત્વા-તે યજ્ઞને દેવ:-સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ સવિતા-વસુ વગેરે તેત્રીસ દેવોની ઉત્પત્તિ કરનાર પરમેશ્વર પુનાતુ-પવિત્ર કરે.

હે જગદીશ્વર ! આપ અમારાથી સેવિત જે વસો:-યજ્ઞ છે તે પવિત્રેણ-પવિત્રકારક વેદ વિજ્ઞાન કર્મથી શતધારેણ-વિપુલ વિદ્યાઓના ધારણ કરનાર વેદ અને સુખ્વા-સારી રીતે પવિત્ર કરનાર યજ્ઞ દ્વારા અમોને પવિત્ર કરો.

હે વિદ્વાન પુરુષ અથવા જિજ્ઞાસુ મનુષ્ય ! તું કામ્-તું વેદની શ્રેષ્ઠ વાણીઓમાંથી કઈ-કઈ વાણીના અભિપ્રાયને અધુક્ષ:-તારા મનમાં પૂર્ણ કરવા અર્થાત્ જાણવા ઈચ્છે છે ? (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પૂર્વોક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને પવિત્ર બની જાય છે તેને પરમેશ્વર અનેક પ્રકારનાં વિજ્ઞાનથી યુક્ત કરીને, અનેક પ્રકારનું સુખ પ્રદાન કરે છે. પરંતુ જે કર્મશીલ - એવી ક્રિયાઓ કરનાર અને પરોપકારી હોય છે, તેને જ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે; અન્ય આળસુને પ્રાપ્ત થતું નથી. આ મંત્રમાં 'કામધુક્ષ:' એ પદોથી વાણીના વિષયમાં પ્રશ્ન છે. (૩)

સા વિશ્વાયુઃ સા વિશ્વકર્મા સા વિશ્વધાયાઃ ।

इन्द्रस्य त्वा भागःसोमेनातनच्चि विष्णो हव्यरक्ष ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે વિષ્ણો-ચરાચર જગતમાં વ્યાપક ઈશ્વર ! આપ જે વાણીને ધારણ કરો છો, સા-તે (૧) વિશ્વાયુઃ-પૂર્ણ આયુદાતા, સા-તે (૨) વિશ્વકર્મા-સંપૂર્ણ ક્રિયાકાંડને સિદ્ધ કરનાર તથા સા-તે (૩) વિશ્વધાયાઃ-સર્વ જગતને વિદ્યા અને ગુણો દ્વારા ધારણ કરનારી છે. પૂર્વ મંત્રના પ્રશ્નના ઉત્તરમાં એ ત્રણ પ્રકારની વાણી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે.

એ વાણી દ્વારા હું ઇન્દ્રસ્ય-પરમેશ્વરના ભાગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય યજ્ઞને સોમેન-વિદ્યા દ્વારા સિદ્ધ થયેલા રસ અથવા આનંદથી, આ તનચ્ચિ-મારા હૃદયમાં દેહ કરું છું.

હે પરમેશ્વર ! હવ્યમ્-પૂર્વોક્ત યજ્ઞસંબંધી આપવાનાં તથા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો અથવા વિજ્ઞાનની આપ રક્ષ-નિરંતર રક્ષા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : વાણી [વિદ્યા] ત્રણ પ્રકારની છે : પ્રથમ તે જે બ્રહ્મચર્ય-આશ્રમમાં પૂર્ણ વિદ્યા અધ્યયન અને પૂર્ણ આયુ પ્રાપ્ત કરવા માટે સેવન કરવામાં આવે છે.

બીજી તે જે ગૃહાશ્રમમાં અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓ દ્વારા ઉદ્યોગોથી સુખદાયક વિસ્તારથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

ત્રીજી તે જે [આ સંસારમાં] સર્વ મનુષ્યો દ્વારા સર્વ મનુષ્યોના શરીર અને આત્માના સુખની વૃદ્ધિ માટે ઈશ્વર વગેરે પદાર્થોના વિજ્ઞાનને પ્રકાશિત કરનારી છે, તે વાણીનો વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમમાં ઉપદેશ કરવામાં આવે છે.

આ ત્રણ પ્રકારની વાણી વિના કોઈને પણ સંપૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી; કારણ કે તેના દ્વારા જ મનુષ્યે પૂર્વોક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન અને વ્યાપક ઈશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

આ રીતે સેવિત આ યજ્ઞ સંસારમાં રક્ષાનું કારણ બને છે, તથા પ્રેમપૂર્વક સત્યભાવથી પ્રાર્થના કરવાથી ઈશ્વર તેની સદા રક્ષા કરે છે.

પરંતુ જે ક્રિયામાં નિપુણ, ધાર્મિક, પરોપકારી મનુષ્યો છે, તેઓ ઈશ્વર અને ધર્મને જાણીને શ્રેષ્ઠ કર્મ અને સાધન દ્વારા લોક - સાંસારિક અને પરલોક - મોક્ષના સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહીં. (૪)

અગ્નેં વ્રતપતે વ્રતં ચરિષ્યામિ તચ્છકેયં તન્મે રાધ્યતામ્ ।

इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વ્રતપતે-સત્યભાષણાદિ ધર્મોનું પાલન કરનાર અને અગ્ને-સત્યધર્મના ઉપદેશક પરમેશ્વર ! હું અનૃતાત્-અસત્યથી પુથક, સત્યમ્-વેદવિદ્યા, પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણો, સૃષ્ટિક્રમ, વિદ્વાનોનો સંગ, શ્રેષ્ઠ વિચાર તથા આત્માની શુદ્ધિ વગેરે પ્રકારો દ્વારા જે ભ્રાંતિરહિત, સર્વહિતકારી, તત્ત્વ અર્થાત્ સિદ્ધાંતનો પ્રકાશ કરનારાથી સિદ્ધ થયેલ, સારી રીતે પરીક્ષા કરેલ વ્રતમ્-સત્યભાષણ, સત્ય આચરણ અને સત્ય માનવારૂપ વ્રત છે, તેનું ઉપૈમિ-અનુષ્ઠાન અર્થાત્ નિયમપૂર્વક ગ્રહણ કરવું, જાણવું તેની પ્રાપ્તિની ઈચ્છા કરું છું. મે-મારા તત્-તે-સત્યવ્રતને આપ રાધ્યતામ્-સારી રીતે સિદ્ધ કરો. જેથી અહમ્-હું તે સત્યવ્રતના પાલનમાં શકેયમ્-સમર્થ બનું તથા હું इदમ્-આ સત્યવ્રતનું પ્રત્યક્ષરૂપમાં આચરણ ચરિષ્યામિ-કરીશ. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને નિયમથી પાલન કરવા યોગ્ય ધર્મનો ઉપદેશ કરે છે - જે ન્યાયયુક્ત, પક્ષપાતરહિત, સુપરીક્ષિત, સત્ય-લક્ષણોથી યુક્ત, સર્વહિતકારી, લોક - સાંસારિક અને પરલોક - મોક્ષના સુખનું કારણ છે, તે ધર્મનું જ સર્વ મનુષ્યોએ સદા આચરણ કરવું જોઈએ અને તેનાથી વિરુદ્ધ જે અધર્મ છે તેનું આચરણ કોઈએ કદાપિ કરવું ન જોઈએ. આ રીતે સર્વેએ પ્રતિજ્ઞા કરવી જોઈએ કે -

હે પરમેશ્વર ! અમે વેદોમાં આપના દ્વારા પ્રકાશિત એ સત્યધર્મનું આચરણ કરવા ઈચ્છીએ છીએ. આપની કૃપાથી અમારી એ ઈચ્છા સારી રીતે પૂર્ણ થાય.

જેથી અમે અર્થ, કામ અને મોક્ષરૂપ ફળને સરળતાથી પ્રાપ્ત કરી શકીએ તથા અધર્મનો સર્વથા ત્યાગ કરીને અનર્થ, કુકર્મ, બંધનરૂપ દુઃખ ફળયુક્ત પાપોને છોડવા અને છોડાવવામાં સમર્થ બનીએ.

જેમ આપ સત્યવ્રતના પાલક હોવાથી વ્રતપતિ છો, તેમ અમે પણ આપની કૃપા અને પુરુષાર્થથી યથાશક્તિ સત્યવ્રત પાલક બનીએ.

આ રીતે સદા ધર્મ કરવાની ઈચ્છાથી અને સત્કર્મ દ્વારા સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર બનીએ. એવી ઈચ્છા સર્વ મનુષ્યોએ કરવી જોઈએ.

શતપથ બ્રાહ્મણમાં આ મંત્રની વ્યાખ્યામાં કહ્યું છે કે - મનુષ્યોનું આચરણ સત્ય અને અસત્ય એમ બે પ્રકારનું હોય છે. તેમાં જે વાણી, મન અને શરીરથી સત્યનું આચરણ કરે છે, તેઓ દેવ કહેવાય છે; અને જે અસત્યનું આચરણ કરે છે, તેઓ મનુષ્ય અર્થાત્ અસુર તથા રાક્ષસ છે. (૫)

કસ્ત્વા યુનક્તિ સ ત્વા યુનક્તિ કસ્મૈ ત્વા યુનક્તિ તસ્મૈ ત્વા યુનક્તિ ।

કર્મણે વાં વેષાય વામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! **ક:**-કોણ ત્વામ્-તને સારાં કર્મનું અનુષ્ઠાન કરવા માટે યુનક્તિ-આજ્ઞા આપે છે ? **સ:**-તે જગદીશ્વર ત્વા-તને વિદ્યા વગેરે શુભગુણોને પ્રકટ કરવા માટે વિદ્વાન અથવા વિદ્યાર્થી બનવા આજ્ઞા આપે છે.

કસ્મૈ-ક્યા પ્રયોજન માટે ત્વા-તને અને મને યુનક્તિ-યુક્ત કરે છે ? **તસ્મૈ**-પૂર્વોક્ત સત્યવ્રતના આચરણરૂપ યજ્ઞ કરવા માટે, ત્વા-ધર્મપ્રચારમાં પુરુષાર્થી તને યુનક્તિ-આજ્ઞા આપે છે.

સ:-તે જ ઈશ્વર **કર્મણે**-પૂર્વોક્ત શ્રેષ્ઠ કર્મ કરવા માટે **વામ્**-કર્મ કરનાર તથા કરાવનારને નિયુક્ત કરે છે. **વેષાય**-શુભ ગુણ અને વિદ્યા પ્રાપ્તિ માટે **વામ્**-વિદ્યાના અધ્યયન અને અધ્યાપન માટે તમોને ઉપદેશ આપે છે અર્થાત્ આજ્ઞા આપે છે. (૬)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પ્રશ્ન-ઉત્તર દ્વારા ઈશ્વર જીવોને ઉપદેશ આપે છે : (૧) કોઈ બીજાને પ્રશ્ન કરે - મને સત્યકર્મમાં કોણ પ્રવૃત્ત કરે છે ? ઉત્તર - ઈશ્વર પુરુષાર્થયુક્ત કર્મ કરવાનો તને આદેશ આપે છે. (૨) કોઈ વિદ્યાર્થી વિદ્વાનને પ્રશ્ન કરે - કોણ મારા આત્મામાં અન્તર્યામી રૂપમાં સત્યને પ્રકાશિત કરે છે ? ઉત્તર - સર્વવ્યાપક જગદીશ્વર. (૩) પ્રશ્ન - ક્યા પ્રયોજન માટે સત્યને પ્રકાશિત કરે છે ? ઉત્તર - સુખ અને પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે. (૪) પ્રશ્ન - ક્યા પ્રયોજન માટે મને આજ્ઞા આપે છે ? ઉત્તર - સત્યવિદ્યા અને ધર્મના પ્રચાર માટે. (૫) પ્રશ્ન - મને અને તને - બંનેને ક્યાં ક્યાં કામ કરવા માટે ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે ? ઉત્તર - પરસ્પર જવાબ આપવો કે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવા માટે. (૬) પ્રશ્ન - ક્યા પદાર્થની પ્રાપ્તિ માટે આજ્ઞા આપે છે ? ઉત્તર - સમસ્ત વિદ્યાની અને સર્વ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે તથા તેના પ્રચાર માટે આજ્ઞા આપે છે.

મનુષ્યોએ બે પ્રયોજનો માટે પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ : એક - અત્યંત પુરુષાર્થ અને શરીરના આરોગ્યથી ચક્રવર્તી રાજ્યરૂપી લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ કરવી. બીજું - સમસ્ત વિદ્યાઓનું સમ્યક્ અધ્યયન કરીને તેનો સર્વત્ર પ્રચાર કરવો જોઈએ. કોઈ મનુષ્યે ક્યારેય પણ પુરુષાર્થ છોડીને આળસમાં નહિ પડ્યા રહેવું જોઈએ. (૬)

પ્રત્યુષ્ટ્શ્રક્ષઃ પ્રત્યુષ્ટાઽઅરાતયો નિષ્ટ્મ્શ્રક્ષો નિષ્ટ્માઽઅરાતયઃ ।

ઉર્વુન્તરિક્ષમન્વૈમિ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : મને ઉચિત છે કે પુરુષાર્થ દ્વારા **શ્રક્ષઃ**-દુષ્ટ ગુણ અને દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત [રાક્ષસ] મનુષ્યને **પ્રત્યુષ્ટમ્**-નિર્મૂળ કરું તથા **અરાતયઃ**-જે રાતિ અર્થાત્ દાન વગેરે ધર્મથી રહિત અને દયાહીન દુષ્ટ શત્રુ

છે તેને પ્રત્યુષ્ટા:-પ્રત્યક્ષ નિર્મૂળ કરું તથા રક્ષ:-દુષ્ટ સ્વભાવ, દુષ્ટગુણી, વિદ્યાવિરોધી અને સ્વાર્થી મનુષ્ય તથા નિષ્ટપ્તામ્-અરાતય:-છલયુક્ત-કપટી, વિદ્યાદાન અને ગ્રહણથી રહિત દુષ્ટ પ્રાણીઓને નિષ્ટપ્તા:-નિરંતર સંતાપયુક્ત કરું. આ રીતે કરીને અન્તરિક્ષમ્-સુખની પ્રાપ્તિ કરનારા ઉત્તમ સ્થાન અને ઉરુ-અપાર સુખને અન્વેમિ-પ્રાપ્ત કરું. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા કરે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ પોતાનો દુષ્ટ સ્વભાવ છોડીને તથા અન્યોને વિદ્યા અને ધર્મોપદેશથી દુષ્ટતા વગેરે અધર્મયુક્ત વ્યવહાર છોડાવવો જોઈએ; તેમજ અનેકવિધ જ્ઞાન અને સુખ આપીને સર્વ મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને વિદ્યા, ધર્મ અને પુરુષાર્થથી યુક્ત કરીને સદા સુખ સંપન્ન કરવાં જોઈએ. (૭)

ધૂર્સિ ધૂર્વ ધૂર્વન્તં ધૂર્વ તં યોઽસ્માન્ ધૂર્વતિ તં ધૂર્વ યં વ્યં ધૂર્વામઃ ।

દેવાનામસિ વહ્નિતમ્ સસ્નિતમં પપ્રિતમં જુષ્ટતમં દેવહૂતમમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ ધૂ:-સર્વ દોષનાશક અને સર્વ રક્ષક અસિ-છો, આથી અમે ઈષ્ટ બુદ્ધિથી દેવાનામ્-વિદ્વાનોને વિદ્યા, મોક્ષ અને સુખમાં વહ્નિતમમ્-યથાયોગ્ય પહોંચાડનાર, સસ્નિતમમ્-અત્યંત શુદ્ધ અને શુદ્ધિકારક, પપ્રિતમમ્-સર્વ વિદ્યા અને આનંદથી સંસારને અથવા મૂર્ત દ્રવ્યોને પૂર્ણ કરનાર, જુષ્ટતમમ્-ધાર્મિક ભક્તજનોની સેવા કરવા યોગ્ય અને દેવહૂતમમ્-વિદ્વાનોની સ્તુતિ કરવા યોગ્ય છો. ત્વા-આપની અમે નિત્ય ઉપાસના કરીએ છીએ.

ય:-જે કોઈ દેષી, છલી, કપટી, પાપી અને કામકોધાદિ યુક્ત મનુષ્ય અસ્માન્-ધર્માત્મા તથા સર્વને સુખયુક્ત કરનારા અમોને ધૂર્વતિ-દુઃખ આપે છે. તથા યમ્-જે પાપીને વ્યમ્-અમે ધૂર્વામઃ-દુઃખ આપીએ છીએ તમ્-તેને આપ ધૂર્વ-શિક્ષા કરો. તથા જે સર્વનો દ્રોહ કરનારા અથવા દુઃખ આપનારાને આપ હંમેશાં ધૂર્વ-તાડના - શિક્ષા કરો.

દ્વિતીય-ભૌતિક અર્થ :

હે શિલ્પવિદ્યાના ઈચ્છુક મનુષ્ય ! તું જે ભૌતિક અગ્નિ ધૂ:-સર્વ પદાર્થોનું છેદન કરનાર હોવાથી હિંસક અને અંધકારનાશક અસિ-છે. તે કલા - કૌશલથી યાનોમાં - વાહનોમાં પ્રયોગ કરવા યોગ્ય તથા દેવાનામ્-પૃથિવી વગેરેનો પ્રકાશક છે. તે વહ્નિતમમ્-યથાયોગ્ય સુખોનું સાધન છે. સસ્નિતમમ્-શુદ્ધિનો હેતુ, શિલ્પવિદ્યાનો હેતુ, વ્યાપનશીલ પપ્રિતમમ્-પોતાની વ્યાપ્તિથી જગતના મૂર્ત પદાર્થો તથા શિલ્પવિદ્યાથી સાધ્ય અંગોને પૂર્ણ કરનાર, જુષ્ટતમમ્-શિલ્પીજનોથી અત્યંત સેવનીય દેવહૂતમમ્-દેવ અર્થાત્ વિદ્વાનો દ્વારા અત્યંત સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અગ્નિનું વ્યમ્-અમે ધૂર્વામઃ-તાડન કરીએ છીએ.

ય:-જે અગ્નિનું યુક્તિથી સેવન ન કરવામાં આવે તો અસ્માન્-ધૂર્વતિ-પીડા આપે છે, તમ્-તે ધૂર્વન્તમ્-પીડા કરનાર અગ્નિનું ધૂર્વ-તાડન અથવા યાન વગેરેમાં ઉપયોગ કર.

હે વીરપુરુષ ! તું ય:-જે દુષ્ટ શત્રુ અસ્માન્-અમને દુઃખ આપે છે, તમ્-તેનો ધૂર્વ-નાશ કર તથા જે કોઈ ચોર વગેરે છે તેનો પણ ધૂર્વ-નાશ કર. (૮)

ભાવાર્થ : જે ધાતા ઈશ્વર સર્વ જગતને ધારણ કરે છે, તે પાપી દુષ્ટ જીવોને તેણે કરેલા પાપનું ફળ આપીને તાડના કરે છે અને ધાર્મિકોની રક્ષા કરે છે.

તે સર્વ સુખદાતા, આત્મશુદ્ધિ કરનાર, પૂર્ણ વિદ્યાના દાતા, વિદ્વાનોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અને પ્રીતિપૂર્વક ઈષ્ટ બુદ્ધિથી સેવન કરવા યોગ્ય છે; તે જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ભક્તિ કરવા યોગ્ય છે.

જે ભૌતિક અગ્નિ શિલ્પવિદ્યાની ક્રિયાનો મુખ્ય સાધક તથા પૃથ્વી વગેરે પદાર્થોનો અત્યંત પ્રકાશક હોવાથી શ્રેષ્ઠ છે.

જેના પ્રયોગથી આગ્નેયાસ્ત્ર વગેરે વિદ્યા દ્વારા શત્રુઓનો પરાજય થાય છે, તેનું શિલ્પી લોકો વિદ્યા યુક્તિથી અગ્નિહોત્ર તથા વાહનોની ક્રિયાની સિદ્ધિ માટે સેવન - પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૮)

અહ્નતમસિ હવિર્ધાનં દૃઃહસ્વ મા હ્વામા તે યજ્ઞપતિર્હાર્ષીત્ ।

વિષ્ણુસ્ત્વા ક્રમતામુરુ વાતાયાપહત્સ્સ્વ રક્ષો યચ્છન્તાં પઞ્ચ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઋત્વિક્ મનુષ્યો ! તું જે અગ્નિથી વૃદ્ધિ પામેલ અહ નુતમ્-કુટિલતા રહિત હવિર્ધાનમ્-હોમ દ્રવ્યોનો આધાર યજ્ઞ છે તેની દૃઃહસ્વ-વૃદ્ધિ કરો. પરંતુ કોઈ પણ સમયે મા હ્વા:-તેનો ત્યાગ ન કરો. તથા તે-તમારા યજ્ઞપતિ:-યજમાન પણ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનનો ત્યાગ ન કરે.

આ રીતે તમે પઞ્ચ-ઉપર, નીચે, અંગસંકોચન, ફેલાવવા અને હરવા-ફરવાનાં પાંચ કર્મોથી હવન યોગ્ય દ્રવ્યોથી અગ્નિમાં યચ્છન્તામ્-હવન કરો.

ત્વા-તે હવન કરેલ દ્રવ્યને વિષ્ણુ:-વ્યાપનશીલ સૂર્ય અપહતમ્ રક્ષ:-દુર્ગંધ વગેરેનો નાશ કરીને ઉસ્વાતાય-વાયુની અત્યંત શુદ્ધિ અને સુખની વૃદ્ધિ માટે આકાશમાં ફેલાવે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પરસ્પર પ્રેમથી કુટિલતાનો ત્યાગ કરીને, શિક્ષક અને શિષ્ય બનીને, એ અગ્નિવિદ્યાને વિજ્ઞાન અને ક્રિયા દ્વારા જાણીને તેનો પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે મહાન શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરીને શત્રુ તથા દરિદ્રતાનું નિવારણ કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ ।

અગ્નયે જુષ્ટં ગૃહ્લામ્યગ્નીષોમાભ્યાં જુષ્ટં ગૃહ્લામિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : સવિતુઃ-સર્વજગતના ઉત્પાદક, સકલ ઐશ્વર્યદાતા, દેવસ્ય-સર્વજગતના પ્રકાશક, સુખદાતા પરમેશ્વરે પ્રસવે-રચેલા આ જગતમાં અશ્વિનો:-સૂર્ય અને ચન્દ્રનાં બાહુભ્યામ્-બળ અને વીર્યથી તથા પૂષ્ણ:-પુષ્ટિ કરનાર પ્રાણના હસ્તામ્યામ્-ગ્રહણ તથા ત્યાગથી અગ્નયે-અગ્નિવિદ્યા સિદ્ધ કરવા માટે જુષ્ટમ્-વિદ્યાભિલાષી જે કર્મનું સેવન કરે છે, ત્વા-તેનો હું ગૃહ્લામિ-સ્વીકાર કરું છું.

એ રીતે અગ્નીષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને જલ વિદ્યા દ્વારા જુષ્ટમ્-વિદ્વાનોએ જે સુંદર ફળની કામના કરી છે તે ફળનો હું ગૃહ્લામિ-સ્વીકાર કરું છું. (૧૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યને ઉચિત છે કે, વિદ્વાનોના સમાગમથી અને સારી રીતે પુરુષાર્થ દ્વારા ઈશ્વર દ્વારા રચેલ આ સૃષ્ટિ અર્થાત્ સંસારમાં સંપૂર્ણ વિદ્યાઓની સિદ્ધિ માટે અને સૂર્ય, ચંદ્ર, અગ્નિ, જલ વગેરે પદાર્થોથી સર્વનાં બલ અને વીર્યની વૃદ્ધિ માટે સર્વ વિદ્યાઓનું સેવન કરીને તેનો પ્રચાર કરવો જોઈએ. જેમ જગદીશ્વરે સર્વ પદાર્થોની ઉત્પત્તિ અને તેનું ધારણ કરીને ઉપકાર કર્યો છે, તેમ આપણે પણ નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૦)

**ભૂતાય ત્વા નારાતયે સ્વરભિવિચ્છેષ્ઠં દૃઃહન્તાં દુર્યાઃ પૃથિવ્યામુર્વન્તરિક્ષમન્વેમિ ।
પૃથિવ્યાસ્ત્વા નાભૌ સાદયામ્યદિત્યાઽપસ્થેઽગ્ને હૃવ્યરક્ષ ॥ ૧૧ ॥**

પદાર્થ : હું જે યજ્ઞની ભૂતાય-પ્રાણીઓના સુખ તથા અરાતયે-દરિદ્રતા વગેરે દોષોના નિવારણ માટે અદિત્યા-વેદવાણી અથવા વિજ્ઞાનપ્રકાશના ઉપસ્થે-ગુણોમાં સાદયામિ-સ્થાપના કરું છું તથા ત્વા-તે યજ્ઞનો કદી પણ ન-ત્યાગ કરતો નથી.

હે વિદ્વાનો ! આપ પૃથિવ્યામ્-વિસ્તૃત ભૂમિ પર દુર્યાઃ-ઘરોની દૃઃહન્તામ્-વૃદ્ધિ કરો. હું પૃથિવ્યાઃ-શુદ્ધ વિસ્તૃત ભૂમિના નાભૌ-મધ્યમાં જે ગૃહોમાં સ્વઃ-જલ વગેરે સુખના પદાર્થોને અભિવિચ્છેષ્ઠમ્-સર્વ રીતે જોઈ ઉર્વન્તરિક્ષમ્-તે પૃથિવીમાં ઘણો અવકાશ આપીને સુખથી રહેવા યોગ્ય સ્થાન રચીને અન્વેમિ-પ્રાપ્ત કરું.

હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ હૃવ્યમ્-આપ અમારા આપવા અને લેવા યોગ્ય પદાર્થોનું રક્ષ-સદા રક્ષણ કરો.

દ્વિતીય પક્ષ : હે અગ્ને પરમેશ્વર ! હું ભૂતાય-સંસારી જીવોના સુખ અરાતયે-દરિદ્રતાનો નાશ તથા દાનાદિ ધર્મ કરવા માટે પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીની નાભૌ-મધ્યમાં [ઈશ્વરની સત્તા તથા તેની ઉપાસનાથી] સ્વઃ-સુખ સ્વરૂપ ત્વા-શાન્તિ માટે આપને અભિવિચ્છેષ્ઠમ્-સર્વત્ર જોઈ તથા આપની કૃપાથી અમારા ગૃહ વગેરે પદાર્થો તથા તેમાં રહેનારાં મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓ દૃઃહન્તામ્-નિત્ય વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય.

હું પૃથિવ્યામ્-વિસ્તૃત ભૂમિ પર ઉરુ-બહુ જ અન્તરિક્ષમ્-વ્યાપક અવકાશયુક્ત સ્થાનના નિવાસ માટે અદિત્યા ઉપસ્થે-સર્વત્ર વ્યાપક આપની સમક્ષ સદા અન્વેમિ-પ્રાપ્ત થાઉં. ત્વા-આપનો કદી પણ ત્યાગ ન-ન કરું. હે જગદીશ્વર ! આપ મારા હૃવ્યમ્-અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થોની સર્વદા રક્ષ-રક્ષા કરો.

તૃતીય પક્ષ : હું શિલ્પ વિદ્વાનો જ્ઞાતા યજ્ઞમાન ભૂતાય-સાંસારિક પ્રાણીઓના સુખ અને અરાતયે-દરિદ્રતાદિ દોષોના વિનાશ અર્થાત્ દાનાદિ ધર્મ કરવાની ઈચ્છાથી પૃથિવ્યા નાભૌ-આ પૃથ્વી પર શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ કરનાર અગ્ને-અગ્નિને હોમ અને શિલ્પવિદ્યા માટે સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું. કારણ કે શિલ્પવિદ્યા તેના દ્વારા સિદ્ધ થાય છે.

અદિત્યાઃ-એ અગ્નિ અન્તરિક્ષમાં સ્થિત મેઘમંડલમાં હોમ દ્વારા પહોંચેલાં શ્રેષ્ઠ દ્રવ્યોની રક્ષા કરે છે. એટલા માટે અગ્નિનું પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર સ્થાપન કરીને ઉર્વન્તરિક્ષમ્-બહુ અવકાશયુક્ત સ્થાન અને વિવિધ સુખોને અન્વેમિ-પ્રાપ્ત કરું છું. આથી તે અગ્નિને પૃથિવી પર સ્થાપિત કરું છું. આ રીતે

શ્રેષ્ઠ કર્મો કરતાં કરતાં સ્વઃ-અનેક સુખોને અભિવિચ્છેષમ્-જોઉં. તથા મારા દુર્યાઃ-ગૃહ અને તેમાં નિવાસ કરનાર મનુષ્યોમાં દૂંહન્તામ્-શુભ ગુણ અને સુખની વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય એટલા માટે હું તે ભૌતિક અગ્નિનો કદી ત્યાગ ન-કરું નહિ. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર મનુષ્યને આજ્ઞા આપે છે. - હે મનુષ્ય ! હું તને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપવા માટે પૃથિવી પર સ્થાપિત કરું છું.

તું વેદવિદ્યા અને ધર્માનુષ્ઠાનયુક્ત પુરુષાર્થથી સુંદર, સર્વ ઋતુઓમાં સુખપ્રદ તથા વિશાળ અવકાશયુક્ત ઘર બનાવીને સુખ પ્રાપ્ત કર.

મારી સૃષ્ટિમાં જેટલા પદાર્થો છે, તેના ગુણોનું સમ્યક્ અન્વેષણ તથા અનેક વિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ કરીને તેની સદા રક્ષા અને પ્રચાર કર. [જેથી સર્વ પ્રાણીઓના સુખની વૃદ્ધિ થાય.]

મનુષ્યે અહીં એમ માનવું જોઈએ કે - સર્વવ્યાપક, સર્વના સાક્ષી, સર્વના મિત્ર, સર્વ સુખોના વર્ધક, ઉપાસના યોગ્ય અને સર્વશક્તિમાન પરમેશ્વરને જાણીને સર્વનો ઉપકાર, વિવિધ વિદ્યાની વૃદ્ધિ, ધર્મમાં પ્રવૃત્તિ, અધર્મમાં નિવૃત્તિ, કલાકૌશલ સંપાદન તથા યજ્ઞ ક્રિયાનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧૧)

પવિત્રે સ્થો વૈષ્ણવ્યૌ સવિતુર્વૈઃ પ્રસવે ઉત્પુનામ્યચ્છિદ્રેણ પવિત્રેણ સૂર્યસ્ય રશ્મિભિઃ । દેવીરાપોઽઅગ્રેગુવોઽઅગ્રેપુવોઽગ્રઽઙ્ગમમ્દ્ય યજ્ઞં નયતાગ્રે યજ્ઞપતિઃ સુધાતું યજ્ઞપતિં દેવયુવમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ સવિતુઃ-પરમેશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા આ જગતમાં અચ્છિદ્રેણ-નિર્દોષ અને પવિત્રેણ-પવિત્ર કરવાના હેતુ સૂર્યસ્ય-સૂર્યનાં રશ્મિભિઃ-કિરણો છે, તેનાથી વૈષ્ણવ્યૌ-યજ્ઞ સંબંધી પ્રાણ અને અપાનની ગતિ તથા પવિત્રે-પદાર્થોને પણ પવિત્ર કરવાનો હેતુ બને. જેમ તે સૂર્યનાં કિરણોથી અગ્રગુવઃ-આગળ સમુદ્ર અને અંતરિક્ષમાં જનાર, અગ્રેપુવઃ-પ્રથમ પૃથિવીમાં રહેનાર સોમ ઔષધિનું સેવન કરનાર તથા દેવીઃ-દિવ્યગુણયુક્ત વઃ-તે આપઃ-જલ પવિત્ર થાય;

તેમ નયત-પવિત્ર પદાર્થોનો હોમ અગ્નિમાં કરો. હું પણ તેમ જ અદ્ય-આજે ઙ્ગમ્-આ યજ્ઞમ્-પૂર્વોક્ત ક્રિયા સંબંધી યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરીને અગ્રે-જે પ્રથમ સુધાતુમ્-શ્રેષ્ઠ મન આદિ ઈન્દ્રિય તથા સુવર્ણ આદિ ધનયુક્ત યજ્ઞપતિમ્-યજ્ઞ કરનાર તથા દેવયુવમ્-વિદ્વાનો તથા શ્રેષ્ઠ ગુણોને સ્વયં પ્રાપ્ત તથા અન્યોને પણ પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા યજ્ઞપતિમ્-યજ્ઞની કામના કરનારને ઉત્પુનામિ-પવિત્ર કરું છું. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ સંયોગથી વિકારને પ્રાપ્ત થાય છે, તે અગ્નિથી અતિસૂક્ષ્મ પરમાણુરૂપ બનીને વાયુમાં વિચરણ કરે છે અને શુદ્ધ બને છે.

જેમ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી વાયુ અને જલની ઉત્તમ શુદ્ધિ અને પુષ્ટિ થાય છે, તેમ અન્ય પ્રકારથી થઈ શકતી નથી. જેથી હોમ-ક્રિયાથી શુદ્ધ થયેલ વાયુ, અગ્નિ અને જલ વગેરેથી શિલ્પવિદ્યા દ્વારા યાનો

- વાહનો બનાવીને પોતાની અને અન્યોની કામના સિદ્ધ કરવી જોઈએ.

જે જલ પૃથિવી સ્થાનથી અન્તરિક્ષરૂપ સમુદ્રમાં યડીને ત્યાંથી ફરી પૃથિવી આદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેને પ્રથમ જલ કહે છે; અને જે વાદળામાં સ્થિત છે, તેને દ્વિતીય જલ કહે છે.

શતપથ બ્રાહ્મણમાં મેઘ - વાદળને વૃત્ત અને સૂર્યને ઈન્દ્ર નામથી વર્ણન કરીને યુદ્ધકથા રૂપમાં આ મંત્રની વ્યાખ્યામાં મેઘકથા બતાવી છે. (૧૨)

યુષ્માઽન્દ્રોઽવૃણીત વૃત્રતૂર્યે યૂયમિન્દ્રમવૃણીધ્વં વૃત્રતૂર્યે પ્રોક્ષિતા સ્થ । અગ્નયે ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામ્યગ્નીષોમાભ્યાં ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ । દૈવ્યાય કર્મણે શુન્ધધ્વં દેવયજ્યાયૈ યદ્વોઽશુદ્ધાઃ પરાજઘ્નુરિદં વસ્તચ્છુન્ધામિ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જેમ એ ઇન્દ્ર:-સૂર્યલોક વૃત્રતૂર્યે-મેઘ-વાદળોનાં વધ માટે યુષ્મા:-તે પૂર્વોક્ત જળોનો અવૃણીત-સ્વીકાર કરે છે, જેમ જળ ઇન્દ્રમ્-વાયુનો અવૃણીધ્વમ્-સ્વીકાર કરે છે, તેમ યૂયમ્-હે મનુષ્યો ! તેમ તમે એ જળ ઔષધિ રસોને શુદ્ધ કરવા માટે વૃત્રતૂર્યે-મેઘના શીઘ્ર વેગમાં પ્રોક્ષિતા:-સંસારી પદાર્થોને સીંચનાર જલનો અવૃણીધ્વમ્-સ્વીકાર કરો.

જેમ એ જલ શુદ્ધ સ્થ-થાય છે, તેમ તમે પણ શુદ્ધ બનો. આથી હું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર - યજ્ઞમાન દૈવ્યાય-સર્વને શુદ્ધ કરનાર કર્મણે-ઉપર, નીચે, આકુંચન, પ્રસારણ અને ગમનાદિ પાંચ પ્રકારનાં કર્મો તથા દેવયજ્યાયૈ-વિદ્વાન અથવા શ્રેષ્ઠ ગુણોની દિવ્ય ક્રિયા માટે અગ્નયે-ભૌતિક અગ્નિના સુખ માટે, જુષ્ટમ્-સારી ક્રિયાઓથી સેવન કરવા યોગ્ય ત્વા-તે યજ્ઞને પ્રોક્ષામિ-કરું છું, તથા અગ્નિષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને સોમથી વર્ષા નિમિત્ત જુષ્ટમ્-પ્રીતિ આપનાર અને પ્રીતિથી સેવન કરવા યોગ્ય ત્વા-ઉક્ત યજ્ઞને પ્રોક્ષામિ-મેઘમંડળમાં પ્રેરિત કરું છું.

આ રીતે યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલ શુન્ધધ્વમ્-સારી રીતે શુદ્ધ થાય છે. યત્-યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ વ:-તે જલના અશુદ્ધિ વગેરે દોષો પરાજઘ્નુ:-નિવૃત્ત થાય છે. તત્-માટે અશુદ્ધિની નિવૃત્તિ સુખદાયક બને તે માટે હું શુન્ધામિ-સારી રીતે શુદ્ધ કરું છું.

દ્વિતીય અર્થ : હે યજ્ઞ કરનારા મનુષ્યો ! યત્-જે કારણે ઇન્દ્ર:-સૂર્યલોક વૃત્રતૂર્યે-મેઘ વાદળોનાં વધ માટે યુષ્મા:-પૂર્વોક્ત જલ અને ઇન્દ્રમ્-વાયુનો અવૃણીત-સ્વીકાર કરે છે. તથા જે કારણે સૂર્ય વૃત્રતૂર્યે-મેઘની શીઘ્રતાના કારણે યુષ્મા:-પૂર્વોક્ત જલ પ્રોક્ષિતા:-પદાર્થોનું સિંચન સ્થ-કરેલ છે. એથી યૂયમ્-તમે ત્વા-ઉક્ત યજ્ઞનો સ્વીકાર કરીને નયત-સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો.

આ રીતે સર્વ મનુષ્યો દૈવ્યાય-શ્રેષ્ઠ કર્મ અથવા દેવયજ્યાયૈ-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણોની શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓ તથા અગ્નયે-પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે જુષ્ટમ્-પ્રીતિ કરાવનાર યજ્ઞનું પ્રોક્ષામિ-સેવન કરો તથા અગ્નિષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને સોમથી પ્રકાશિત યજ્ઞને મેઘમંડલમાં પહોંચાડો.

હે મનુષ્યો ! આ રીતે તમે સર્વ પદાર્થો તથા સર્વ મનુષ્યોને શુન્ધધ્વમ્-શુદ્ધ કરો. યત્-જેથી વ:-તમારા અશુદ્ધિ વગેરે દોષો સદા પરાજઘ્નુ:-નિવૃત્ત થતા રહે. એ જ રીતે હું વેદોનો પ્રકાશ કરનાર તમારા લોકોની શુદ્ધિની શુન્ધામિ-સારી રીતે વૃદ્ધિ કરું છું. (૧૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે અગ્નિ અને સૂર્યની એટલા માટે રચના કરી છે કે, તે સર્વ પદાર્થોમાં પ્રવેશ કરીને,

તે જલ અને ઔષધિના રસને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે. [તે સૂક્ષ્મ બનેલ રસ] વાયુને પ્રાપ્ત થઈને મેઘસમૂહમાં પહોંચીને ત્યાંથી પૃથિવી પર આવીને શુદ્ધ અને સુખકર્તા બને છે.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઉત્તમ સુખની પ્રાપ્તિ માટે અગ્નિમાં સુગંધિત પદાર્થોના હોમથી વાયુ અને જલની શુદ્ધિ કરીને દિવ્ય સુખોની ઉત્પત્તિ માટે અતિપ્રેમથી નિત્ય યજ્ઞ કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ દોષો નાશ પામીને આ સંસારમાં નિરંતર શુદ્ધ ગુણ પ્રકાશિત થાય.

એટલા માટે હું ઈશ્વર એ શુદ્ધિનો આદેશ આપું છું કે, તમે પરોપકાર માટે નિત્ય શુદ્ધ કર્મ કરો.

આ રીતે જ વાયુ, અગ્નિ અને જલના ગુણોનું ગ્રહણ કરીને તેનો શિલ્પવિદ્યામાં પ્રયોગ કરીને અનેક યાનો તથા યંત્ર-કલાઓ રચીને પુરુષાર્થથી સદા સુખી રહો. (૧૩)

શર્માસ્યવધૂત્-રક્ષોઽવધૂતાઽઅરાતયોઽદિત્યાસ્ત્વર્ગસિ પ્રતિ ત્વાદિતિવેત્તુ ।

અદ્રિરસિ વાનસ્પત્યો ગ્રાવાસિ પૃથુબુઢ્નઃ પ્રતિ ત્વાદિત્યાસ્ત્વર્ગવેત્તુ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારાં ઘર શર્મ-સુખદાતા અસિ-હો, તે ઘરથી રક્ષા:-દુષ્ટ સ્વભાવવાળાં પ્રાણીઓ અવધૂતમ્-દૂર રહે. અરાતય:-દાન વગેરે ધર્મરહિત શત્રુ અવધૂતા:-દૂર રહે અને તે ઘર અદિત્યા:-પૃથિવીની ત્વક્-ત્વયા-આવરણ સમાન અસિ-હો, અદિતિ:-જ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વરથી જ તે ઘરને પ્રતિવેત્તુ-સર્વ મનુષ્યો જાણે અને પ્રાપ્ત કરે.

જે વાનસ્પત્ય:-વનસ્પતિથી ઉત્પન્ન થનાર પૃથુબુઢ્ન:-અતિ વિસ્તૃત અન્તરિક્ષમાં નિવાસ કરનાર તથા ગ્રાવા-જલને ગ્રહણ કરનાર અદ્રિ:-મેઘ અસિ-છે. તે અને આ વિદ્યાને અદિતિ:-જગદીશ્વર તમારા માટે વેત્તુ-કૃપા કરીને જણાવે. વિદ્વાન પુરુષ પણ અદિત્યા:-પૃથિવીની ત્વક્-ત્વયા સમાન ત્વા-તે ઘરની રચનાને પ્રતિવેત્તુ-જાણે (૧૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે - મનુષ્ય શુદ્ધ અને સર્વ તરફની અવકાશયુક્ત - વિસ્તારયુક્ત પૃથિવી - ભૂમિ પર સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક ઘર બનાવીને તેમાં સુખપૂર્વક રહે. તે ઘરથી સર્વ દુષ્ટ મનુષ્યો અને દોષોને દૂર કરે. તથા ત્યાં સર્વ સાધનો સ્થાપિત કરે. તેમ કરવાથી વાયુ, વર્ષા અને જલની શુદ્ધિ દ્વારા સંસારમાં મહાન સુખની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ થાય છે. (૧૪)

અગ્નેસ્તનૂરસિ વાચો વિસર્જનં દેવવીતયે ત્વા ગૃહ્ણામિ બૃહદ્ ગ્રાવાસિ વાનસ્પત્યઃ સઙ્કદં દેવેભ્યો હવિઃ શમીષ્વ સુશમિં શમીષ્વ । હવિષ્કૃદેહિ હવિષ્કૃદેહિ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હું સર્વ જનોની સમાન જે હવિઃ-પદાર્થના સંસ્કાર માટે વૃહદ્ગ્રાવાસિ-મોટા પથ્થર અસિ-છે. અને વાનસ્પત્ય:-કાષ્ઠના મૂસળ વગેરે પદાર્થો છે. દેવેભ્યઃ-વિદ્વાન અથવા દિવ્યગુણો માટે યજ્ઞને દેવવીતયે-શ્રેષ્ઠ ગુણોના પ્રકાશ અને શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન અથવા વિવિધ ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે પ્રતિગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું.

હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોના સુખ માટે સુ એમિ-સારી રીતે દુઃખને શાંત કરનાર હવિઃ-યજ્ઞ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને શમીષ્વ-શમીષ્વ-અત્યંત શુદ્ધ કરો. જે મનુષ્ય વેદાદિ શાસ્ત્રોનું પ્રીતિપૂર્વક પઠન અને પાઠન કરે છે, તેને આ હવિષ્કૃત્-હોમમાં યજાવવા યોગ્ય પદાર્થોનું વિધાન કરનારી જે યજ્ઞના

વિસ્તાર માટે વેદના ભાષાવાથી બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, વૈશ્ય અને શૂદ્રોની શુદ્ધ, સુશિક્ષિત અને પ્રસિદ્ધ વાણી પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય વેદાદિ શાસ્ત્રો દ્વારા યજ્ઞની ક્રિયા અને તેના ફળને જાણીને ઉત્તમ પ્રકારે તૈયાર કરેલ હવિથી યજ્ઞ કરે છે, ત્યારે તે સુગંધી વગેરે દ્રવ્યોના હોમ દ્વારા પરમાણુરૂપ બનીને વાયુ અને વર્ષાના જલમાં વિસ્તૃત થઈને, સર્વ પદાર્થોને શ્રેષ્ઠ બનાવીને દિવ્ય સુખો ઉત્પન્ન કરે છે.

જે મનુષ્ય આ રીતે પ્રાણીઓના સુખ માટે પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞને નિત્ય કરે છે, તેનો સર્વ લોકો 'હે હવિષ્કૃત્ - હવિ આપનાર આવો, યજ્ઞકર્તા આવો, તેમ કહીને સત્કાર કરે છે. (૧૫)

કુક્કુ ટોઽસિ મધુજિહ્વ ડ્વિષમૂર્જમાવદ્ ત્વયા વયઃસંઘાતઃસંઘાતં જેષ્ઠ વર્ષવૃદ્ધમસિ પ્રતિ ત્વા વર્ષવૃદ્ધં વેત્તુ પરાપૂતઃ રક્ષઃ પરાપૂતા અરાતયોઽપહતઃ રક્ષો વાયુર્વો વિવિનક્તુ દેવો વઃ સવિતા હિરણ્યપાણિઃ પ્રતિગૃહ્ણાત્વચ્છિદ્રેણ પાણિનાં ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જે કારણે આ યજ્ઞ મધુજિહ્વ:-જેમાં મધુર ગુણયુક્ત વાણી છે, કુક્કુટ:-ચોર અને શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર અસિ-છે, ડ્વિષમ-અન્નાદિ પદાર્થો તથા ઝર્જમ-વિદ્યાદિ બલ અથવા અત્યુત્તમ રસને પ્રાપ્ત કરાવે છે. જેથી તેનું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ.

હે વિદ્વાનો ! તમે એ ત્રણ પ્રકારના જે યજ્ઞ છે, તેનું અનુષ્ઠાન અને ગુણોના જ્ઞાતા અસિ-છો. આથી તેના ગુણોનો અમોને આવદ-ઉપદેશ કરો. જેથી વયમ્-અમે ત્વયા-તમારી સાથે સંઘાતં સંઘાતમ્-જેમાં ઉત્તમ રીતે શત્રુઓનો પરાજય થાય છે અર્થાત્ અતિ ભારે સંગ્રામોમાં વારંવાર આ જેષ્ઠ-સર્વ પ્રકારથી જીતીએ. કારણ કે આપ યુદ્ધ વિદ્યાને જાણનાર અસિ-છો.

એથી સર્વ મનુષ્ય વર્ષવૃદ્ધમ્-શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોની વર્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર ત્વા-આપ તથા વર્ષવૃદ્ધમ્-વર્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર એ યજ્ઞને પ્રતિવેત્તુ-જાણો.

આ રીતે સંગ્રામ કરીને મનુષ્યોએ પરાપૂતમ્-પવિત્રતા વગેરે ગુણોથી રહિત રક્ષઃ-દુષ્ટ, પરાપૂતા:-શુદ્ધિરહિત, તથા અરાતયઃ-દાન વગેરે ધર્મથી રહિત શત્રુઓ તથા રક્ષઃ-ડાકુઓનો હંમેશાં અપહતમ્-નાશ થાય તેવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

જેમ જે હિરણ્યપાણિઃ-જ્યોતિ જેનો હાથ છે. એવો જે વાયુઃ-ભૌતિક વાયુ છે, તે અચ્છિદ્રેણ-એકરસ પાણિના-પોતાના ગમનાગમન વ્યવહારથી યજ્ઞ અને સંસારમાં અગ્નિ તથા સૂર્યથી અતિ સૂક્ષ્મ બનેલ પદાર્થો - કણોને પ્રતિગૃહ્ણાતુ-ગ્રહણ કરે છે.

જેમ હિરણ્યપાણિઃ-કિરણ જેના હાથ છે તે કિરણ વ્યવહારથી સવિતા-વર્ષા અને પ્રકાશ દ્વારા દિવ્ય ગુણોને ઉત્પન્ન કરવામાં હેતુ દેવઃ-પ્રકાશમય સૂર્યલોક છે, વઃ-તે પદાર્થોને વિવિનક્તુ-પૃથક્ અર્થાત્ પરમાણુ રૂપ બનાવે છે, તેમ પરમેશ્વર અને વિદ્વાન મનુષ્ય અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પાણિના-પોતાના ઉપદેશરૂપ કિરણોના વ્યવહારથી સર્વ વિદ્યાઓનું વિવિનક્તુ-વિષ્લેષણ કરે છે. તેમ જ કૃપા કરીને પ્રીતિપૂર્વક વઃ-

તમને અત્યંત આનંદ આપવા માટે પ્રતિગૃહ્ણાતુ-ગ્રહણ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્યોએ યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન યુદ્ધમાં, દુષ્ટ શત્રુઓ પર વિજય, પદાર્થોના ગુણોનું જ્ઞાન, વિદ્યા-વૃદ્ધોની સેવા, દુષ્ટ મનુષ્યો તથા દોષોનું નિરાકરણ, સર્વ પદાર્થોને ઈન્દ્રિય-ભિન્ન કરનાર અગ્નિ અને સૂર્ય છે અને સર્વ પદાર્થોને ધારણ કરનાર વાયુ છે, તેનું જ્ઞાન અને પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા વિદ્વાનોનો સંગ કરીને તથા સમસ્ત વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

ધૃષ્ટિરસ્યપાઽગ્નેઽઅગ્નિમામાદં જહિ નિષ્ક્રવ્યાદઃસેધા દૈવયજં વહ ।

ધ્રુવમસિ પૃથિવીં દૃંહ બ્રહ્મવનિ ત્વા ક્ષત્રવનિ સજાતવન્યુપદધામિ ભ્રાતૃવ્યસ્ય વધાય ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ! આપ ધૃષ્ટિ:-આપ અત્યંત નિર્ભય અસિ-છો. એથી નિષ્ક્રવ્યાદમ્-પાકેલા પદાર્થો છોડીને આમાદમ્-કાચા પદાર્થોને પકાવનાર અને દેવયજમ્-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણોનો મેળાપ - પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિમ્-ભૌતિક અથવા વીજળીરૂપ અગ્નિને આપ સેધ-સિદ્ધ કરો. આ રીતે અમને મંગલ - ઉત્તમ સુખ માટે શાસ્ત્રોની શિક્ષા આપીને દુઃખોને અપજહિ-દૂર કરો અને આનંદને આવહ-પ્રાપ્ત કરાવો.

હે પરમેશ્વર ! આપ ધ્રુવમ્-નિશ્ચય સુખ આપનાર અસિ-છો, એથી પૃથિવીમ્-વિસ્તૃત ભૂમિ તથા તેમાં રહેનાર મનુષ્યોને દૃંહ-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી વૃદ્ધિયુક્ત કરો.

હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! જેથી આપ અત્યંત પ્રશંસનીય છો, તેથી હું ભ્રાતૃવ્યસ્ય-દુષ્ટ અને શત્રુના વધાય-વિનાશ માટે બ્રહ્મવનિ-બ્રાહ્મણ અર્થાત્ વિદ્વાનના રક્ષક, ક્ષત્રવનિ-ક્ષત્રિયોના રક્ષક, સજાતવનિ-મારા સમાન અન્ય મનુષ્યોના રક્ષક, ત્વા-આપને ઉપદધામિ-હૃદયમાં ધારણ કરું છું. (૧૭)

દ્વિતીય અર્થ : હે વિદ્વાન યજમાન ! જે કારણે એ અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ ધૃષ્ટિ:-અતિ તીક્ષ્ણ હોવાથી તથા નિકૃષ્ટ પદાર્થોને છોડીને ઉત્તમ પદાર્થોથી દેવયજમ્-વિદ્વાન અથવા દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞને આવહ-પ્રાપ્ત કરાવે છે. આથી આપ નિષ્ક્રવ્યાદમ્-પકવ - ભસ્મ પદાર્થોને છોડીને આમાદમ્-કાચા પદાર્થોને બાળનાર તથા દેવયજમ્-વિદ્વાન અર્થાત્ દિવ્યગુણો પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિમ્-પ્રત્યક્ષ વીજળીરૂપી અગ્નિને આવહ-પ્રાપ્ત કરાવો, તથા અન્યોને એ રીતે શિક્ષિત સેધ-કરો, તેના અનુષ્ઠાનમાં રહેલા દોષોને અપજહિ-દૂર કરો.

જે કારણે એ અગ્નિ સૂર્યરૂપે ધ્રુવમ્-નિશ્ચલ અસિ-છે. આથી તે આકર્ષણ શક્તિથી પૃથિવીમ્-વિસ્તૃત ભૂમિ અને તેમાં રહેલ પ્રાણીઓને દૃંહ-ધારણ કરે છે અને ઉત્તમ ગુણોની વૃદ્ધિ કરે છે. આથી હું ત્વા-તે બ્રહ્મવનિ-બ્રાહ્મણ અર્થાત્ બ્રાહ્મણોના રક્ષક, ક્ષત્રવનિ-ક્ષત્રિયોના રક્ષક તથા સજાતવનિ-અન્ય પુરુષોના પણ રક્ષક અગ્નિને ભ્રાતૃવ્યસ્ય-શત્રુના વધાય-વિનાશ માટે યજ્ઞવેદી અથવા વિમાન વગેરેમાં ઉપદધામિ-સ્થાપિત કરું છું. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વશક્તિમાન ઈશ્વરે ભૌતિક અગ્નિને આમ અર્થાત્ કાચા પદાર્થને બાળનાર બનાવેલ છે.

જેથી તે ભસ્મરૂપ પદાર્થોને બાળવામાં સમર્થ થતો નથી. તેથી મનુષ્યો કાચા પદાર્થોને પકાવીને ખાય

છે. જેથી ઉદરનું ખાધેલું અન્ન પાકે છે તેને 'આમાત્', અને જે મૃત શરીરને બાળે છે તેને 'કવ્યાત્' અગ્નિ કહે છે.

જેણે દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ રચેલ છે, પૃથ્વીનું ધારણ, આકર્ષણ અને પ્રકાશ આપનાર સૂર્ય રચેલ છે, જે બ્રહ્મ અર્થાત્ વેદજ્ઞાતા બ્રાહ્મણો, ધનુર્વેદ જ્ઞાતા ક્ષત્રિયો તથા અન્ય સમાન જન્મવાળા મનુષ્યો દ્વારા સમ્યક્ સેવન કરવામાં આવે છે.

જે સર્વ ઉત્પન્ન પદાર્થોમાં વિદ્યમાન રહેનાર પરમેશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિ છે, તેમાં પરમેશ્વર સર્વનો ઉપાસ્ય છે અને ભૌતિક અગ્નિ ક્રિયાઓની સિદ્ધિ માટે કરવા યોગ્ય છે. (૧૭)

અગ્ને બ્રહ્મ ગૃભ્ણીષ્વ ધ્રુર્ણમસ્યન્તરિક્ષં દૃહ્ બ્રહ્મવનિ ત્વા ક્ષત્રવનિ સજાતવન્યુપદધામિ ભ્રાતૃવ્યસ્ય વધાય । ધ્રુર્મસિ દિવં દૃહ્ બ્રહ્મવનિ ત્વા ક્ષત્રવનિ સજાતવન્યુપદધામિ ભ્રાતૃવ્યસ્ય વધાય । વિશ્વાભ્યસ્ત્વાશાભ્યઽપદધામિ ચિત્ સ્થોર્ધ્વચિતો ભૃગૂણામઙ્ગિરસાં તર્પસા તપ્યધ્વમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ! આપ ધરુણમ્-સર્વ લોકને ધારણ કરનાર અસિ-છો. એથી અમારી બ્રહ્મ-વેદિક સ્તુતિને ગૃભ્ણીષ્વ-ગ્રહણ કરો, અન્તરિક્ષમ્-અમારા આત્મામાં સ્થિત અક્ષય જ્ઞાન છે, તેની દૃહ-વૃદ્ધિ અને દેહ કરો.

હું ભ્રાતૃવ્યસ્ય-શત્રુઓના વધાય-વિનાશ માટે બ્રહ્મવનિ-સર્વ મનુષ્યોના સુખ માટે વેદના શાખા-શાખાન્તર વિભાગ કરનારા બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રવનિ-રાજધર્મનું આચરણ કરનાર, સજાતવનિ-સર્વ વિદ્યાઓને સમાનરૂપમાં સર્વને પ્રદાન કરનાર ત્વામ્-આપને ઉપદધામિ-હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હે સર્વને ધારણ કરનાર પરમેશ્વર ! આપ ધ્રુર્મ્-લોકોને ધારણ કરનાર અસિ-છો. તેથી કૃપા કરીને અમારામાં દિવમ્-અતિ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનની દૃહ-વૃદ્ધિ કરો. હું ભ્રાતૃવ્યસ્ય-શત્રુઓના વધાય-વિનાશ માટે બ્રહ્મવનિ-ક્ષત્રવનિ-સજાતવનિ-ઉક્ત વેદ, રાજ્ય તથા પરસ્પર સમાન વિદ્યા અથવા રાજ્યાદિ વ્યવહારોનો યથાયોગ્ય વિભાગ કરનાર ત્વા-આપને ઉપદધામિ-વારંવાર હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હું ત્વા-આપને સર્વવ્યાપક જાણીને વિશ્વાભ્યઃ-સર્વ આશાભ્યઃ-દિશાઓથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા આપને વારંવાર ઉપદધામિ-મનમાં ધારણ કરું છું.

હે મનુષ્યો ! તમે મને એ રીતે જાણીને ચિત્-વિજ્ઞાની ઋર્ધ્વચિત્-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન પુરુષોની પ્રેરણાથી કપાલોને અગ્નિ પર રાખીને તથા ભૃગૂણામ્-જેનાથી વિદ્યા વગેરે ગુણો પ્રાપ્ત થાય છે, એવા અઙ્ગિરસામ્-પ્રાણોને તર્પસા-પ્રભાવથી તપ્યધ્વમ્-તપો અને તપાવો.

દ્વિતીય અર્થ : હે વિદ્વાન ધર્માત્મા પુરુષ ! જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ દ્વારા ધરુણમ્-સર્વ લોકોને ધારણ કરનાર તેજ બ્રહ્મ-વેદ અને અન્તરિક્ષમ્-આકાશમાં રહેલ પદાર્થોનું ગ્રહણ તથા વૃદ્ધિ કરવામાં આવે છે. ત્વા-તેને તમે હોમ અને શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે ગૃભ્ણીષ્વ-ગ્રહણ કરો અને દૃહ-વિદ્યાયુક્ત ક્રિયાઓથી વૃદ્ધિ કરો.

હું પણ ભ્રાતૃવ્યસ્ય-શત્રુઓના વધાય-વિનાશ માટે ત્વા-તે બ્રહ્મવનિ-ક્ષત્રવનિ-સજાતવનિ-સંસારી મૂર્ત પદાર્થોનો પ્રકાશ કરવા તથા રાજગુણોનો દેષાન્તરૂપ પ્રકાશ કરનાર ભૌતિક અગ્નિને શિલ્પવિદ્યા વગેરે વ્યવહારોમાં ઉપદધામિ-સ્થાપન કરું છું. એ સ્થાપિત અગ્નિ આપણાં અનેક સુખોને ધારણ કરે છે - સુખદાયક બને છે.

એ જ રીતે સર્વ લોકોને ધર્મ-ધારણ કરનાર વાયુ અસિ-છે. તથા દિવમ્-પ્રકાશમય સૂર્યલોકને વૃંહ-દઢ કરે છે. હે મનુષ્યો ! તેને હું ભ્રાતૃવ્યસ્ય-જેમ શત્રુઓના વધાય-વિનાશ માટે બ્રહ્મવનિ-ક્ષત્રવનિ-સજાતવનિ-વેદ, રાજ્ય તથા પરસ્પર સમાન શ્રેષ્ઠ શિલ્પ વિદ્યાઓને યથાયોગ્ય કાર્યોમાં યુક્ત કરનાર તે ભૌતિક અગ્નિને ઉપદધામિ-સ્થાપિત કરું છું, તેમ તમે પણ શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓમાં યુક્ત કરીને વિદ્યાના બળ દ્વારા વૃંહ-વૃદ્ધિ કરો.

હે વિદ્યાના ઈચ્છુક પુરુષ ! જે વાયુ, પૃથિવી અને સૂર્ય વગેરે લોકોને ધારણ કરી રહેલ છે, તેને તમે પોતાના જીવન વગેરેના સુખ તથા શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ માટે યથાયોગ્ય કાર્યોમાં સંલગ્ન કરીને તેની વિદ્યાની વૃંહ-વૃદ્ધિ કરો; જેમ અમે શત્રુઓના વિનાશ માટે બ્રહ્મવનિ-ક્ષત્રવનિ-સજાતવનિ-અગ્નિના ઉક્ત ગુણોની સમાન વાયુને શિલ્પવિદ્યા વગેરેના વ્યવહારોમાં ઉપદધામિ-સંયુક્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પોતાનાં અનેક દુઃખોના વિનાશ માટે તેને યથાયોગ્ય કાર્યોમાં સંયુક્ત - સંલગ્ન કરો.

હે મનુષ્યો ! જેમ હું વાયુ વિદ્યાનો જ્ઞાતા ત્વા-તે અગ્નિ તથા વાયુને વિશ્વાભ્યઃ-સર્વ આશાભ્યઃ-દિશાઓથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે યથાયોગ્ય શિલ્પ વ્યવહારોમાં ઉપદધામિ-ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ ધારણ કરો.

શિલ્પવિદ્યા તથા હોમ કરવા માટે ચિત્તઃ ઋર્ધ્વચિત્તઃ [સ્થ]-પદાર્થોથી ભરેલાં પાત્રો અને યાનોમાં સ્થાપન કરેલ કલાયંત્રોને ભૃગુણામ્-જેથી પદાર્થોને પકાવે છે તે અઙ્ગિરસામ્-અંગારોના તપસા-તાપથી તપ્યધ્વમ્-ઉક્ત પદાર્થોને પકાવો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્યાનોની ઉન્નતિ, મૂર્ખતાનો વિનાશ, સર્વ શત્રુઓના નિવારણ દ્વારા રાજ્યની વૃદ્ધિ માટે વેદ વિદ્યાને ગ્રહણ કરો.

જે અગ્નિની વૃદ્ધિનો હેતુ અને સર્વધારક વાયુ છે તથા અગ્નિમય સૂર્ય અને ઈશ્વર છે, તેને સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપક જાણીને, યજ્ઞની સિદ્ધિ, વિમાનાદિની રચના તથા તેનું સંચાલન કરીને, દુઃખોને દૂર કરીને, શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૧૮)

શર્માસ્યર્વધૂતઃ રક્ષોઽર્વધૂતાઽઅરાતયોઽદિત્યાસ્ત્વર્ગસિ પ્રતિ ત્વાદિતિર્વેત્તુ ।
ધિષ્ણાસિ પર્વતી પ્રતિ ત્વાદિત્યાસ્ત્વર્ગવેત્તુ દિવ સ્કમ્ભનીરસિ ધિષ્ણાસિ પાર્વતેયી
પ્રતિ ત્વા પર્વતી વૈત્તુ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ લોકો જે આ યજ્ઞ શર્મ-સુખદાયક અસિ-છે, અદિતિઃ-નાશરહિત છે. જેથી રક્ષઃ-દુષ્ટ અને દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત મનુષ્ય અર્વધૂતમ્-વિનાશ પામે છે તથા અરાતયઃ-દાનાદિ ધર્મરહિત

- લોભી મનુષ્ય અવધૂતા:-નાશ પામે છે અને તે યજ્ઞ અદિત્યા:-અન્તરિક્ષ અને પૃથિવીની ત્વક્-ત્વચા
- આવરણ સમાન અસિ-છે, ત્વા-તેને પ્રતિ વેત્તુ-જાણો.

જે વિદ્યા નામક યજ્ઞથી પર્વતી-બહુ જ જ્ઞાનવાળી, દિવ:-પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ લોકને સ્કમ્ભની:-રોકનારી [અસિ-] છે તથા પાર્વતેયી-પર્વત અર્થાત્ મેઘની પુત્રી સમાન અર્થાત્ પૃથિવી સમાન ધિષ્ણા-વેદવાણી [અસિ-] છે. અદિત્યા:-પૃથિવીની ત્વક્-શરીરને આચ્છાદિત કરનારી ત્વચા સમાન વિસ્તારને પ્રાપ્ત થાય છે. ત્વા-તે યજ્ઞ તથા તે ઘૌને પ્રતિ વેત્તુ-યથાવત્ જાણો.

જે સત્ સંગતિ નામક યજ્ઞથી પર્વતી-શ્રેષ્ઠ બ્રહ્મજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનારી ધિષ્ણા-ઘૌ: અર્થાત્ પ્રકાશરૂપી બુદ્ધિ અસિ-પ્રાપ્ત થાય છે, ત્વા-તેને પણ પ્રતિવેત્તુ-યથાવત્ જાણો (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા પોતાના વિજ્ઞાનથી સારી રીતે સામગ્રી સંપાદન કરીને જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવામાં આવે છે, તે વર્ષા અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરનાર છે. તે અગ્નિ અને મનથી સારી રીતે સિદ્ધ કરેલ સૂર્યપ્રકાશની ત્વચા સમાન સેવા કરે છે. (૧૯)

ધાન્યમસિ ધિનુહિ દેવાન્ પ્રાણાય ત્વોદાનાય ત્વા વ્યાનાય ત્વા । દીર્ઘામનુ પ્રસિત્તિમાયુષે ધાં દેવો વઃ સવિતા હિરણ્યપાણિઃ પ્રતિગૃભ્નાત્વચ્છિદ્રેણ પાણિના ચક્ષુષે ત્વા મહીનાં પયોઽસિ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જે ધાન્યમ્-પુષ્ટિકારક, સુખકારક અને રોગનાશક અન્ન તથા પય:-જલ અસિ-છે, તે દેવાન્-વિદ્વાનો, જીવો તથા ઈન્દ્રિયોને ધિનુહિ-દીપ્ત કરે છે. તેથી હે મનુષ્યો ! જે રીતે ત્વા-તેને પ્રાણાય-જીવન ધારણ માટે, ત્વા-તેને ઉદાનાય-સ્ફૂર્તિ, બળ અને પરાક્રમ માટે, ત્વા-તેને વ્યાનાય-શુભ ગુણ-કર્મ અને વિદ્યાનાં અંગોમાં વ્યાપ્ત કરવા માટે, દીર્ઘામ્-ઘણા દિવસો સુધી, પ્રસિત્તિમ્-અતિ ઉત્તમ સુખબંધનયુક્ત, આયુષે-પૂર્ણ આયુ ભોગવવા માટે ધામ્-ધારણ કરું છું. તેમ જ તમે પણ તે પ્રયોજન માટે તેને નિત્ય ધારણ કરો.

જેમ વઃ-અમને હિરણ્યપાણિઃ-મોક્ષ આપવાનો વ્યવહાર છે, તે સર્વ જગતના ઉત્પાદક દેવઃ-સવિતા-સર્વ ઐશ્વર્ય દાતા ઈશ્વર અચ્છિદ્રેણ-પોતાની વ્યાપકતા અને પાણિના-ઉત્તમ વ્યવહારથી મહીનામ્-વાણીના ચક્ષુષે-પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન માટે પ્રત્યનુગૃભ્નાતુ-પોતાના અનુગ્રહથી ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે પણ તે ઈશ્વરને અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પાણિના-સ્તુતિ વગેરે ગ્રહણ કરીએ - સ્તુતિ કરીએ.

જેમ હિરણ્યપાણિઃ-પદાર્થોના પ્રકાશ આપનાર દેવઃ સવિતા-સૂર્યલોક મહીનામ્-લોકલોકાન્તરોની પૃથિવીમાં નેત્ર સંબંધી વ્યવહાર માટે અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર તીવ્ર પ્રકાશથી પયઃ-જલને પ્રતિગૃભ્નાતુ-ગ્રહણ કરીને અન્ન વગેરે પદાર્થોની પુષ્ટિ કરે છે, તેમ અમે પણ તેને અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પાણિના-વ્યવહારથી મહીનામ્-પૃથિવીના ચક્ષુષે-પદાર્થોની દૃષ્ટિગોચરતા માટે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ અન્ન, જલ અને વાયુ વગેરે પદાર્થો છે, તે સર્વની શુદ્ધિ, બળ, પરાક્રમ અને સ્થિર દીર્ઘ આયુની પ્રાપ્તિમાં સમર્થ બને છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ તે યજ્ઞ કર્મનું નિત્ય

અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ.

પરમેશ્વરે જે અતિ પૂજનીયા વેદવાણીનો પ્રકાશ કરેલ છે, તેને પ્રત્યક્ષ કરવા માટે ઈશ્વરની કૃપાની અપેક્ષા તથા સદા સ્વ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર પરોપકારી મનુષ્યો પર કૃપા કરે છે, તેમ આપણે પણ સર્વ પ્રાણીઓ પર નિત્ય કૃપા કરવી જોઈએ.

જેમ એ અન્તર્યામી ઈશ્વર આત્મા અને વેદોમાં સત્યજ્ઞાનને તથા સૂર્યલોક મૂર્ત - ભૌતિક પદાર્થોને નિરંતર પ્રકાશિત કરે છે, તેમ આપણે સર્વ મનુષ્યોએ સર્વના સુખ માટે સમસ્ત વિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ [પ્રાપ્ત]કરીને તેને નિત્ય પ્રકાશિત કરવી જોઈએ અને તેથી પૃથિવીનું (ચક્રવર્તી) રાજ્ય વગેરે ઉત્તમ સુખોને નિત્ય પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨૦)

**દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । સં વપામિ
સમાપ્ઽઓષધીભિઃ સમોષધયો રસેન । સર્વેતીર્જગતીભિઃ પૃચ્ચન્તાઽઽ સં મધુમતી-
ર્મધુમતીભિઃ પૃચ્ચન્તામ્ ॥ ૨૧ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું સવિતુઃ-સકલ ઐશ્વર્ય દાતા દેવસ્ય-પરમેશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા પ્રત્યક્ષ સંસારમાં, સૂર્યલોકના પ્રકાશમાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ભૂમિના તેજની બાહુભ્યામ્-દૃઢ રીતે પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિ કરનાર વાયુના હસ્તાભ્યામ્-પ્રાણ અને અપાનથી ત્વા-પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞનો સંવપામિ-વિસ્તાર કરું છું, તેમ તમે પણ તેનો - યજ્ઞનો વિસ્તાર કરો.

જેમ આ ઉત્પન્ન સંસારમાં ઔષધીભિઃ-યવ વગેરે ઔષધિઓથી આપઃ-જલ અને ઔષધયઃ-ઔષધિ રસેન-આનંદદાયક રસથી તથા જગતીભિઃ-ઉત્તમ ઔષધિઓથી રેવતીઃ-ઉત્તમ જલ અને મધુમતીભિઃ-મધુર રસયુક્ત ઔષધિઓથી મધુમતીઃ-અત્યંત ઉત્તમ રસરૂપ જલ, એ સર્વ મળીને વૃદ્ધિ પામે છે.

એ રીતે આપણે પણ ઔષધિઓથી જલ અને ઔષધિ, ઉત્તમ જલથી તથા ઉત્તમ ઔષધિઓથી રસયુક્ત જલ અને અત્યુત્તમ મધુર રસયુક્ત ઔષધિઓથી પ્રશંસનીય રસરૂપ જલ, એ સર્વનો યથાયોગ્ય પરસ્પર સંપૃચ્ચન્તામ્-યુક્તિપૂર્વક વૈદક અને શિલ્પશાસ્ત્રની રીતિ - વિધિથી મેળ કરવો જોઈએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ ઈશ્વર દ્વારા ઉત્પાદિત અને સૂર્ય દ્વારા પ્રકાશિત આ સંસારમાં અનેક પ્રકારનાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો મેળવીને ત્રણ પ્રકારનો યજ્ઞ નિત્ય કરવો જોઈએ.

જેમ કે જલ પોતાના રસથી જે ઔષધિઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તે ઔષધિઓ ઉત્તમ રસના યોગથી રોગનાશક હોવાથી સુખદાયક બને છે.

જેમ ઈશ્વર કારણમાંથી કાર્ય [જગત]ની યથાવત્ રચના કરે છે, સૂર્ય સર્વ સંસારને પ્રકાશિત કરીને, નિરંતર રસને સૂક્ષ્મ કરીને પૃથિવી વગેરેનું પોતાની તરફ આકર્ષણ કરે છે તથા વાયુ ધારણ કરીને પુષ્ટિ કરે છે.

એ જ પ્રમાણે આપણે પણ યથાવત્ શુદ્ધ કરેલ અને પરસ્પર મિશ્રિત દ્રવ્યોથી વિદ્વાનોનો સંગ, વિદ્યાની ઉન્નતિ, હોમ અને શિલ્પ નામક યજ્ઞો દ્વારા વાયુ, વર્ષા અને જલની શુદ્ધિ નિત્ય કરવી જોઈએ. (૨૧)

**जनयत्यै त्वा संयौमिदमग्नेरिदमग्नीषोमयोरिषे त्वा घर्मोऽसि विश्वायुरु-
प्रथाऽउरु प्रथस्वोरु । ते यज्ञपतिः प्रथतामग्निष्टे त्वचं मा हिंसीहेवस्त्वा सविता
श्रपयतु वर्षिष्ठेऽधि नाके ॥ २२ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે રીતે હું જનયત્યૈ-સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરનારી રાજ્યલક્ષ્મી માટે ત્વા-તે યજ્ઞને સંયૌમિ-અગ્નિની વચ્ચે પદાર્થોને છોડીને યુક્ત કરું છું, તેમ તમારે પણ અગ્નિના સંયોગથી સિદ્ધ કરવું જોઈએ. અમે ઇદમ્-આ સંસ્કાર કરેલો હવે અગ્નેઃ-અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, ઇદમ્-તે હવે ફેલાઈને અગ્નિષોમયોઃ-અગ્નિ [સૂર્ય] અને સોમ [ચંદ્ર]ની મધ્યમાં પહોંચીને ઇષે-અન્ન વગેરેને ઉત્પન્ન કરવામાં હેતુ બને છે.

જે વિશ્વાયુઃ-પૂર્ણ આયુ તથા ઉસ્મથાઃ-બહુ સુખ આપનાર ધર્મઃ-યજ્ઞ અસિ-છે, તેનો હું જેમ વિસ્તાર કરું છું, તેમ ત્વા-તેનો હે પુરુષો ! તમે પણ ઊરુ પ્રથસ્વ-વિસ્તાર કરો.

આ રીતે વિસ્તાર કરનાર તે-આપના માટે એ યજ્ઞપતિઃ-યજ્ઞના સ્વામી અગ્નિઃ-ભૌતિક યજ્ઞ સંબંધી અથવા શરીરસ્થ અગ્નિ તથા તે-સવિતા-અન્તર્યામી દેવઃ-જગદીશ્વર ઊરુ પ્રથતામ્-અનેક રીતે સુખની વૃદ્ધિ કરે. [તે ત્વચં-તમારા શરીરનો] મા હિંસીત્-કદી પણ નાશ ન કરે. તથા તે પરમેશ્વર વર્ષિષ્ટે-અત્યંત વિકાસ પામીને અધિનાકે-જે અત્યુત્તમ સુખ છે, તેમાં ત્વા-તમને શ્રપયતુ-સુખથી યુક્ત કરે.

દ્વિતીય અર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું જે વિશ્વાયુઃ-પૂર્ણ આયુ તથા ઉસ્મથાઃ-બહુ સુખદાતા ધર્મઃ-યજ્ઞ અસિ-છે, ત્વા-તે યજ્ઞને જનયત્યૈ-રાજ્યલક્ષ્મી તથા ઇષે-અન્નાદિ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરવા માટે સંયૌમિ-સંયુક્ત કરું છું. તથા તેની સિદ્ધિ માટે ઇદમ્-આ અગ્નેઃ-અગ્નિમાં અને ઇદમ્-એ અગ્નીષોમયોઃ-અગ્નિ અને સોમ [સૂર્ય અને ચંદ્ર]માં શુદ્ધ કરેલ હવે સંવપામિ-પહોંચાડું છું; તેમ તમે પણ તે યજ્ઞનો ઊરુ પ્રથસ્વ-વિસ્તાર કરો, જેથી એ અગ્નિઃ-ભૌતિક અગ્નિ તે-તમારા ત્વચમ્-શરીરને મા હિંસીત્-રોગોથી નષ્ટ ન કરે.

જેમ દેવઃ-જગદીશ્વર સવિતા-અન્તર્યામી વર્ષિષ્ટે-અત્યધિક વૃદ્ધિ પામેલ જે અધિનાકે-અત્યુત્તમ સુખ છે, તેમાં ત્વા-તે યજ્ઞને અગ્નિમાં પરિપક્વ કરે છે. તેમ તમે પણ એ યજ્ઞને શ્રપયતુ-પરિપક્વ કરો અને તે-તમારા યજ્ઞપતિઃ-યજ્ઞના સ્વામી પણ તે યજ્ઞને ઊરુ પ્રથતામ્-વિસ્તારયુક્ત કરે. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ પ્રકારનો યજ્ઞ નિત્ય કરવો જોઈએ કે જે પૂર્ણ લક્ષ્મી, સંપૂર્ણ આયુ, અન્નાદિ પદાર્થ, રોગનાશ તથા સર્વ સુખોનો વિસ્તાર કરે છે. તે યજ્ઞ કોઈએ કદી પણ છોડવો ન જોઈએ.

કારણ કે તે વાયુ, વર્ષા, જલ અને ઔષધિઓની શુદ્ધિ કરનાર છે. એ યજ્ઞ વિના કોઈ પ્રાણી સારી રીતે સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતું નથી. આથી તે જગદીશ્વર યજ્ઞાનુષ્ઠાનની સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે. (૨૨)

मा भूर्मा संविकथाऽअतमेरुर्यज्ञोऽतमेरुर्यजमानस्य प्रजा भूयात् त्रितायं त्वा

દ્વિતાય ત્વૈકૃતાય ત્વા ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન પુરુષો ! તમે અતમેસુ-શ્રદ્ધાળુ બનીને યજમાનસ્ય-યજમાનના યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી મા ભે:-ડરો નહિ, તેનાથી મા સંવિક્ષ્ઠા:-વિચલિત ન બનો. એ રીતે યજ્ઞ:-યજ્ઞ કરતાં તમે શ્રેષ્ઠ, અતમેસુ-ગ્લાનિરહિત અને શ્રદ્ધાવાન પ્રજા-સંતાન ભૂયાત્-પ્રાપ્ત કરો.

હું ત્વા-તે ભૌતિક અગ્નિને ઉક્ત ગુણયુક્ત તથા એકતાય-સત્ય સુખ માટે દ્વિતાય-વાયુ તથા વૃષ્ટિ જળની શુદ્ધિ તથા ત્રિતાય-અગ્નિ, કર્મ અને હવિને માટે સંયૌમિ-નિશ્ચિત - સ્થાપિત કરું છું. (૨૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર પ્રત્યેક મનુષ્યને આજ્ઞા અને આશીર્વાદ આપે છે કે - કોઈ પણ મનુષ્યે યજ્ઞ, સત્યાચરણ અને વિદ્યાગ્રહણથી ડરવું નહિ અને વિચલિત થવું નહિ. કારણ કે એ યજ્ઞાદિ શુભ કર્મોથી જ તમે ઉત્તમ સંતાન તથા શારીરિક, વાચિક અને માનસિક નિશ્ચલ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૨૩)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદેઽધ્વરકૃતં દેવેભ્યઽન્દ્રસ્ય બાહુરસિ દક્ષિણઃ સહસ્રભૃષ્ટિઃ શતતેજા વાયુરસિ તિગ્મતેજા દ્વિષતો વધઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હું સવિતુઃ-અન્તર્યામી પ્રેરણા કરનાર તથા દેવસ્ય-સર્વ આનંદદાયક પરમેશ્વરની પ્રસવે-પ્રેરણાથી અશ્વિનોઃ-સૂર્ય, ચંદ્ર અને અધ્વર્યુનાં બાહુભ્યાં-બળ અને વીર્યથી તથા પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકારક વાયુથી, હસ્તાભ્યામ્-જે ગ્રહણ અને ત્યાગના હેતુથી ઉદાન અને અપાન છે, તેનાથી દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો અથવા દિવ્ય સુખોની પ્રાપ્તિ માટે અધ્વરકૃતમ્-યજ્ઞથી સુખકારક [ત્વા-તે] કર્મને આદદે-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું.

મેં જે યજ્ઞ કર્યો છે તે ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યના સહસ્રભૃષ્ટિઃ-અનેક પ્રકારના પદાર્થોને પચાવી - પાક કરવાનું સામર્થ્ય તથા શતતેજાઃ-અનેક પ્રકારનાં તેજ તથા દક્ષિણઃ-પ્રાપ્ત કરનાર બાહુઃ-કિરણસમૂહ અસિ-છે.

જે ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યના મેઘમંડળના તિગ્મતેજાઃ-તીક્ષ્ણ તેજવાળા વાયુઃ-વાયુ માટે અસિ-છે, તેનાથી અમને અનેક પ્રકારનાં સુખોની પ્રાપ્તિ અને દ્વિષતઃ-શત્રુઓનો વધઃ-નાશ કરવો જોઈએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્યોથી સારી રીતે સિદ્ધ કરેલ યજ્ઞ જે અગ્નિમાં હોમ કરેલાં દ્રવ્યોને ઉપર લઈ જાય છે, તે સૂર્યનાં કિરણોમાં સ્થિર થાય છે, વાયુ તેને ધારણ કરે છે અને સર્વના ઉપકાર માટે હજારો પ્રકારનાં સુખો પ્રાપ્ત કરાવીને દુઃખોનો વિનાશ કરનાર બને છે. (૨૪)

પૃથિવિ દેવયજન્વ્યોષધ્યાસ્તે મૂલં મા હિંસિષં વ્રજં ગંચ્છ ગોષ્ઠાનં વર્ષતુ તે દ્યૌર્બધાન દૈવ સવિતઃ પરમસ્યાં પૃથિવ્યાશ્ચ શતેન પાશૈર્યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્યં દ્વિષ્મસ્તમતો મા મૌક્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સૂર્યાદિ જગતના પ્રકાશક, સવિત:-રાજ્ય અને ઐશ્વર્યદાતા પરમેશ્વર ! તે-આપની કૃપાથી હું દેવયજનિ-વિદ્વાનોનું યજ્ઞ કરવાનું સ્થાન તે-આ જે પૃથિવિ-ભૂમિ છે [તથા ઔષધ્યા:-જે યવાદિ ઔષધિ છે], તેના મૂલમ્-વૃદ્ધિ કરનારા મૂળનો મા હિંસિષમ્-નાશ ન કરું.

હું પૃથિવ્યામ્-અનેક પ્રકારની સુખદાતા ભૂમિમાં ય:-જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરું છું, તે વ્રજમ્-જલની વૃષ્ટિ કરનાર મેઘને ગચ્છ-પ્રાપ્ત થાય; ત્યાં જઈને ગોષ્ઠાનમ્-સૂર્યનાં કિરણોના ગુણોથી વર્ષતુ-વરસાવે છે અને દ્યૌઃ-સૂર્યના પ્રકાશને વર્ષતુ-વરસાવે છે - પ્રકાશ પાથરે છે.

હે વીર પુરુષો ! આપ અસ્યામ્-આ ઉત્કૃષ્ટ પૃથિવીમાં ય:-જે કોઈ અધર્મી, ડાકુ અસ્માન્-સર્વનો ઉપકાર કરનાર ધર્માત્મા સજ્જન એવા અમારો દ્વેષ્ટિ-વિરોધ કરે છે, ચ-તથા યમ્-જે દુષ્ટ શત્રુથી વયમ્-અમે ધાર્મિક શૂર લોકો દ્વિષ્મ:-વિરોધ કરીએ છીએ, તમ્-તે દુષ્ટ પરમ્-શત્રુને શતેન-અનેક પાશૈઃ-બંધનોથી બધાન-બાંધો અને તેને અતઃ-એ બંધનથી કદી મા મૌક્-મુક્ત કરો નહિ. (૨૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - વિદ્વાન મનુષ્યોએ પૃથિવીમાં રાજ્ય, ત્રિવિધ યજ્ઞ અને ઔષધિઓનો કદી પણ નાશ ન કરવો જોઈએ.

અગ્નિમાં હોમ કરેલ દ્રવ્યોના સુગંધ વગેરે ગુણોથી યુક્ત ધૂમ, મેઘમંડળમાં પહોંચીને, સૂર્ય તથા વાયુથી સૂક્ષ્મ, આકર્ષિત અને ધારણ કરેલ જલસમૂહને શુદ્ધ કરીને મહાન સુખ ઉત્પન્ન કરે છે. આથી તે યજ્ઞનો કોઈ કદી ત્યાગ કરે નહિ.

જે દુષ્ટ મનુષ્ય છે, તેને આ પૃથિવી પર અનેક બંધનોથી બાંધીને, દુષ્ટ કર્મોથી હટાવીને, તેને ક્યારેય મુક્ત ન કરે તથા પરસ્પર દ્રેષનો ત્યાગ કરીને એકબીજાનાં સુખની વૃદ્ધિ માટે હંમેશાં પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૫)

અપારસું પૃથિવ્યૈ દૈવયજનાદ્વધ્યાસં વ્રજં ગચ્છ ગોષ્ઠાનં વર્ષતુ તે દ્યૌર્બધાન દૈવ સવિતઃ પરમસ્યાં પૃથિવ્યાથ્ઞ શતેન પાશૈર્યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્રયં દ્વિષ્મસ્તમતો મા મૌક્ । અરંરો દિવં મા પસો દ્રપ્સસ્તે દ્યાં મા સ્કન્ વ્રજં ગચ્છ ગોષ્ઠાનં વર્ષતુ તે દ્યૌર્બધાન દૈવ સવિતઃ પરમસ્યાં પૃથિવ્યાથ્ઞ શતેન પાશૈર્યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્રયં દ્વિષ્મસ્તમતો મા મૌક્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સર્વ આનંદદાતા જગદીશ્વર ! સવિત:-સર્વ પ્રાણીઓના અન્તર્યામી, સત્ય પ્રકાશક, આપની કૃપાથી અમે વિદ્વાનો પરસ્પર ઉપદેશ કરીએ કે, જેમ સર્વનો પ્રકાશક સૂર્યલોક આ પૃથિવીમાં અનેક બંધનકારક કિરણો દ્વારા આકર્ષણથી પૃથિવી વગેરે સર્વ પદાર્થોને બાંધે છે, તેમ આપ પણ દુષ્ટોને બાંધીને શુભ ગુણોને પ્રકાશિત કરો.

જેમ હું પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીમાં દેવયજનાત્-વિદ્વાનો જે સંગ્રામમાં સારા પદાર્થોને તથા ઉત્તમ વિદ્વાનોના સત્સંગને પ્રાપ્ત કરું છું, તેથી અરસમ્-દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત શત્રુઓને અપવધ્યાસમ્-મારું છું, તેમ તમે પણ

તેને મારો.

જેમ હું વ્રજમ્-હું ઉત્તમ ગુણીજનનો સંગ પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ તેને ગચ્છ-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ હું ગોષ્ઠાનમ્-અધ્યયન-અધ્યાપનરૂપ વ્યવહારની મેઘગર્જના સમાન વેદવાણીને શ્રેષ્ઠ શબ્દોરૂપી બુંદોને વરસાવું છું, તેમ તમે પણ વર્ષતુ-વરસાવો.

જેમ મારી વિદ્યાનો દ્યૌઃ-પ્રકાશ સર્વને દેશ્યમાન છે, તેમ તે-તમારી વિદ્યા પણ પ્રકાશિત બનો.

જેમ હું યઃ-જે મૂર્ખ લોકો અસ્માન્-અમો વિદ્યાપ્રચારકોનો દ્વેષ્ટિ-વિરોધ કરે છે, ચ-અને યમ્-જે વિદ્યા વિરોધીઓને વયમ્-અમે વિદ્વાનો દ્વિષ્મઃ-દુષ્ટ સમજીએ છીએ, તમ્-તે પરમ્-વિદ્યા શત્રુને અસ્યામ્-સર્વ પદાર્થોને ધારણ કરનારી પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં શતેન-અનેક પાશૈઃ-બંધનોથી નિત્ય બાંધું છું, અને તેને કદી છોડતો નથી, તેમ હે વીરો ! તમે પણ તેને બધાન-બાંધો અને કદી પણ તેને અતઃ-એ બંધનથી મા મૌક્-મુક્ત કરો નહિ.

જે દુષ્ટજન અમારો વિરોધ કરે અને જે દુષ્ટોનો અમે વિરોધ કરીએ તેને તે બંધનથી કોઈ મનુષ્ય મુક્ત કરે નહિ. એ રીતે સર્વ લોકો - વિદ્વાનો તેને ઉપદેશ કરતા રહે કે - હે અસો-દુષ્ટ પુરુષ ! તું દિવમ્-વિદ્યા પ્રકાશથી ઉન્નતિને મા પત્તઃ-નહિ પામે. તથા તે-તારા દ્રવ્સઃ-આનંદપ્રદ વિદ્યારૂપી રસ દ્યામ્-આનંદને મા સ્કન્-નહિ પામે.

હે કલ્યાણમાર્ગના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! જેમ હું વ્રજમ્-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ માર્ગને પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ ગચ્છ-તેને પ્રાપ્ત કરો.

જેમ દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ ગોષ્ઠાનમ્-પૃથિવીના નિવાસસ્થાન અન્તરિક્ષને પોતાની વર્ષાથી પૂર્ણ કરે છે, તેમ ઈશ્વર અથવા વિદ્વાન પુરુષ તે-તમારી કામનાઓને વર્ષતુ-વરસાવે અર્થાત્ કમથી પૂર્ણ કરે.

જેમ દેવ-વ્યવહારનો હેતુ સવિતઃ-સૂર્યલોક અસ્યામ્-બીજ વાવવા યોગ્ય પૃથિવ્યામ્-બહુ પ્રજાયુક્ત પૃથિવીમાં શતેન-અનેક પાશૈઃ-બંધનરૂપ કિરણો દ્વારા આકર્ષણથી પૃથિવી વગેરે સર્વ પદાર્થોને બાંધે છે, તેમ તમે પણ દુષ્ટોને બાંધો અને યઃ-જે ન્યાય વિરોધી અસ્માન્-ન્યાયાધીશ અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે છે, ચ-અને યમ્-અન્યાયકારી જનોનું વયમ્-સર્વ હિત સાધક અમે દ્વિષ્મઃ-કોપ કરીએ છીએ. તમ્-તે પરમ્-શત્રુને અસ્યામ્-આ પૃથિવ્યામ્-ઉક્ત ગુણયુક્ત પૃથિવીમાં શતેન-અનેક પાશૈઃ-સામ, દામ, દંડ અને ભેદ વગેરે કર્મોથી બાંધું છું તથા જેમ હું તેને તે દંડ અર્થાત્ શિક્ષા દ્વારા બાંધીને છોડતો નથી, તેમ તમે પણ બધાન-બાંધો અર્થાત્ બંધનરૂપ શિક્ષાથી તેને કદી પણ મા મૌક્-મુક્ત કરો નહિ. (૨૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોનાં કાર્યોમાં વિઘ્ન કરનાર દુષ્ટ પ્રાણીઓનો નાશ કરો. શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાની નિત્ય વૃદ્ધિ કરો.

જે રીતે અનેક ઉપાયોથી શ્રેષ્ઠોની હાનિ અને દુષ્ટોની વૃદ્ધિ ન થાય તેવું આચરણ કરો. સદા શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર અને દુષ્ટોને દંડ આપીને તેમનું બંધન કરવું જોઈએ.

પરસ્પર પ્રેમથી વિદ્યા અને શરીર બળ સંપાદન કરીને કલા દ્વારા કલાયંત્રોથી અનેક યાનોની રચના કરીને સર્વને સુખ આપવું જોઈએ. નિરંતર ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા તેની ઉપાસના કરવી

જોઈએ. (૨૬)

ગાયત્રેણ ત્વા છન્દસા પરિગૃહ્ણામિ ત્રૈષ્ટુભેન ત્વા છન્દસા પરિગૃહ્ણામિ જાગતેન ત્વા છન્દસા પરિગૃહ્ણામિ। સુક્ષ્મા ચાસિ શિવા ચાસિ સ્યોના ચાસિ સુષદા ચાસ્યૂર્જસ્વતી ચાસિ પર્યસ્વતી ચ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : જે યજ્ઞના કારણે આ પૃથિવી શ્રેષ્ઠ પદાર્થોથી સુક્ષ્મા-શોભાયમાન અસિ-બને છે; ચ-તથા કલ્યાણકારી ગુણોથી ચ-તથા મનુષ્યોથી એ શિવા-મંગલકારી અસિ-બને છે ચ-તથા અતિ શ્રેષ્ઠ સુખોથી એ સ્યોના-સુખદાયક અસિ-બને છે. ચ-અને શ્રેષ્ઠ સુખકારી ગતિથી એ સુષદા-સારી રીતે સ્થિતિ કરવા યોગ્ય અસિ-બને છે ચ-તથા જે શ્રેષ્ઠ જવ વગેરે અન્નોથી અનેક પ્રકારનાં ઋર્જસ્વતી-ધાન્યથી સંપન્ન અસિ-બને છે, ચ-અને જે શ્રેષ્ઠ મધુરાદિ રસોયુક્ત ફળોથી યુક્ત એ પૃથિવી પર્યસ્વતી-પ્રશંસનીય રસવાળી અસિ-બને છે.

ત્વા-તે યજ્ઞનો જ્ઞાતા હું ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છન્દસા-જે ચિત્તને પ્રસન્ન કરનાર છે, તેથી પરિગૃહ્ણામિ-સર્વ રીતે સિદ્ધ કરું છું અને હું ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રિષ્ટુભ્ છન્દસા-જે સ્વતંત્રતાથી આનંદપ્રદાતા છે, તેનાથી ત્વા-પદાર્થસમૂહને પરિગૃહ્ણામિ-સર્વ રીતે એકત્ર કરું છું, અને હું જાગતેન-જગતી કે જે છન્દસા-અત્યન્ત આનંદનો પ્રકાશ કરવાવાળો છે તેનાથી ત્વા-તે ભૌતિક અગ્નિને પરિગૃહ્ણામિ-સારી રીતે સ્વીકાર કરું છું.

ભાવાર્થ : વેદોના પ્રકાશક ઈશ્વર આપણને ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમને વેદમંત્રોનું અધ્યયન, તેના અર્થોનું જ્ઞાન તથા યજ્ઞ અનુષ્ઠાન વિના સુખરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી. આથી એ ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞની સિદ્ધિ પ્રયત્નથી કરીને સદા સુખમાં રહેવું જોઈએ.

જે આ સૃષ્ટિમાં વાયુ, જલ તથા ઔષધિઓને દૂષિત કરનાર દુર્ગંધ વગેરે દોષો તથા દુષ્ટ મનુષ્યો છે, તેમનું સર્વદા નિવારણ કરવું જોઈએ. (૨૭)

પુરા ક્રૂરસ્ય વિસૃપો વિરષિન્નુદાદાય પૃથિવીં જીવદાનુમ્। યામૈર્યં-શ્ચન્દ્રમસિ સ્વધાભિસ્તામુ ધીરાસોઽનુદિશ્ય યજન્તે। પ્રોક્ષણીરાસાદય દ્વિષતો વધોઽસિ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે વિરષિન્-મહાન ગુણોથી યુક્ત જગદીશ્વર ! આપે યામ્-જે સ્વધાભિ:-અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત અને જીવદાનુમ્-પ્રાણીઓને જીવનદાન આપનાર પદાર્થો તથા પૃથિવીમ્-અનેક પ્રજાયુક્ત પૃથિવીને ઉદાદાય-ઉપર ઉઠાવીને ચન્દ્રમસિ-ચંદ્રલોકની સમીપ સ્થાપિત કરી છે, એથી તામ્-એ પૃથિવીને ધીરાસ:- ધીર બુદ્ધિ [મેધાવી] લોકો પ્રાપ્ત થઈને આપને અનુદિશ્ય-અનુકૂળ બનીને યજન્તે-યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરે છે.

જેમ ચન્દ્રમસિ-આનંદમાં રહીને ધીરાસ:-બુદ્ધિમાન પુરુષ યામ્-જે જીવદાનુમ્-જીવોની હિતકારક પૃથિવીમ્-પૃથિવીના અનુદિશ્ય-આશ્રિત બનીને સેના અને શસ્ત્રોને ઉદાદાય-ક્રમશઃ વિસૃપ:-જે યુદ્ધપુરુષનો

પ્રભાવ દેખાડવા યોગ્ય અને ક્રૂરસ્ય-શત્રુઓનાં અંગોને કાપીને, સંગ્રામમાં શત્રુઓને જીતીને રાજ્યને ઐચ્યન્-પ્રાપ્ત કરે છે.

જેમ એ રીતે ધીરપુરુષ પુગ-પૂર્વ સમયમાં પ્રાપ્ત કરેલ જે ક્રિયાઓથી પ્રોક્ષણી: ૩-સારી રીતે પદાર્થોને સીંચીને તેને આસાદ્ય-સંપાદન - પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિરણિન્-મહાન ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક પુરુષ ! તું પણ તેને પ્રાપ્ત થઈને ઈશ્વરનું પૂજન અને પદાર્થની સિદ્ધિ કરનાર - પ્રાપ્ત કરનાર શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓનું સંપાદન કર અને જે રીતે દ્વિષતઃ-શત્રુઓનો વધઃ-નાશ અસિ-થાય, તેમ તેનો નાશ કરીને નિત્ય આનંદમાં રહે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે અંતરિક્ષમાં પૃથિવીઓ, તેની સમીપ ચંદ્ર અને તેની સમીપ પૃથિવીઓ, એકબીજાની સમીપ સ્થિત નક્ષત્ર, સર્વની મધ્યમાં સૂર્યલોક અને તેમાં અનેક પ્રકારની પ્રજાઓ રચીને સ્થાપિત કરેલ છે. તેમાં રહેલા સર્વ મનુષ્યોએ તે ઈશ્વરની ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

જ્યાં સુધી મનુષ્યો બળ અને ક્રિયાઓ પુરુષાર્થથી યુક્ત થઈને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરતા નથી, ત્યાં સુધી તેમને રાજ્ય સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. યુદ્ધ અને બળ વિના શત્રુ કદી પણ ડરતા નથી. વિદ્યા, ન્યાય તથા વિનય વિના પ્રજાનું યથાવત્ પાલન થઈ શકતું નથી.

આથી સર્વેએ જિતેન્દ્રિય બનીને ઉક્ત રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને સર્વના સુખ માટે નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૮)

પ્રત્યુષ્ટ્શ્રક્ષઃ પ્રત્યુષ્ટાઽઅરાતયો નિષ્ટ્સશ્રક્ષો નિષ્ટ્સાઽઅરાતયઃ । અનિશિતોઽસિ સપલ્ક્ષિદ્વા-જિનં ત્વા વાજેધ્યાયૈ સમ્માર્જિમ્ । પ્રત્યુષ્ટ્શ્રક્ષઃ પ્રત્યુષ્ટાઽઅરાતયો નિષ્ટ્સશ્રક્ષો નિષ્ટ્સાઽઅરાતયઃ । અનિશિતાઽસિ સપલ્ક્ષિદ્વાજિનીં ત્વા વાજેધ્યાયૈ સમ્માર્જિમ્ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હું, જે અનિશિતઃ-અતિ વિસ્તૃત સપલ્ક્ષિત્-શત્રુઓનો નાશ કરનાર સંગ્રામથી પ્રત્યુષ્ટ્શ્રક્ષઃ-વિઘ્નકારી પ્રાણી અને પ્રત્યુષ્ટા અરાતયઃ-સત્યવિરોધી શત્રુઓ બળબળતી શિક્ષા - દંડને પ્રાપ્ત અસિ-થાય છે અથવા નિષ્ટ્સશ્રક્ષઃ-જે બંધનથી બાંધવા યોગ્ય નિષ્ટ્સા અરાતયઃ-વિદ્યા વિરોધી હંમેશાં સંતાપ પામે છે. ત્વા-તે વાજિનમ્-વેગવાન યુદ્ધને વાજેધ્યાયૈ-અન્નાદિ પદાર્થોથી બળવાન કરવા યોગ્ય સેના છે, તેના માટે યુદ્ધનાં સાધનોને સમાર્જિમ્-સારી રીતે યુદ્ધ કરું છું અર્થાત્ તેના દોષોનો વિનાશ કરું છું.

હું જે સપલ્ક્ષિત્-શત્રુનો નાશ કરનાર અને અનિશિતા-અતિ વિસ્તીર્ણ સેનાથી પ્રત્યુષ્ટ્શ્રક્ષઃ-પારકું સુખ સહન ન કરનાર મનુષ્ય અથવા પ્રત્યુષ્ટા અરાતયઃ-એવા દુર્ગુણયુક્ત અનેક મનુષ્યો નિષ્ટ્સશ્રક્ષઃ-જુગારી, પરસ્ત્રીગામી તથા નિષ્ટ્સા અરાતયઃ-બીજાને દુઃખ આપનાર મનુષ્યને સારી રીતે હાંકી કાઢવામાં આવે અસિ-છે.

ત્વા-તે વાજિનીમ્-બળ અને વેગ આદિ ગુણયુક્ત સેનાને વાજેધ્યાયૈ-બહુ સાધનોથી પ્રકાશિત કરવા માટે સમાર્જિમ્-સારી રીતે શ્રેષ્ઠ શિક્ષાથી શુદ્ધ કરું છું.

[દ્વિતીય અર્થ :] હું જે અનિશિત:-મહાન ક્રિયાઓથી સિદ્ધ થનાર અને સપત્લક્ષિત્-દોષો અથવા શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર પ્રત્યુષ્ટં રક્ષ:-વિધનકારી પ્રાણી અને પ્રત્યુષ્ટા અરાતય:-જેમાં સત્યના વિરોધીઓ સારી રીતે સંતાપરૂપ અર્થાત્ શિક્ષાને પ્રાપ્ત અસિ-થાય છે અને નિષ્ટપ્તં રક્ષ:-જે બંધનથી બાંધવા યોગ્ય નિષ્ટપ્તા અરાતય:-વિદ્યાના વિધનકારીઓ નિરંતર સંતાપને પ્રાપ્ત થાય છે. ત્વા-તે વાજિનમ્-યજ્ઞને વાજેધ્યાયૈ-અન્ન આદિ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવા માટે સંમાર્જ્મિ-શુદ્ધતાથી પ્રાપ્ત કરું છું.

[એ રીતે જે સપત્લક્ષિત્-શત્રુઓનો નાશ કરનારી અનિશિતા-અતિ વિસ્તારયુક્ત ક્રિયાથી પ્રત્યુષ્ટં રક્ષ:-વિધનકારી પ્રાણી તથા પ્રત્યુષ્ટા અરાતય:-દુર્ગુણ અને નીચ મનુષ્ય નાશ પામે છે. નિષ્ટપ્તં રક્ષ:-કામ, ક્રોધાદિ રાક્ષસી ભાવ દૂર થાય છે. નિષ્ટપ્તા અરાતય:-જેમાં દુઃખ અને દુર્ગંધ વગેરે દોષો નાશ અસિ-પામે છે. ત્વા-તે વાજિનીમ્-સત્ક્રિયાને વાજેધ્યાયૈ-અન્નાદિ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવા માટે સંમાર્જ્મિ-સારી રીતે સિદ્ધ કરું છું. એ જ રીતે આપ પણ એ યજ્ઞ તથા સત્ક્રિયાને પવિત્રતાપૂર્વક સિદ્ધ કરો.] (૨૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યા અને શુભ ગુણોના પ્રકાશ તથા દુષ્ટ શત્રુઓની નિવૃત્તિ માટે નિત્ય પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ.

ઉત્તમ શિક્ષાથી, શસ્ત્ર-અસ્ત્ર તથા સત્પુરુષોથી ઉત્તમ સેના દ્વારા શ્રેષ્ઠ જનોની રક્ષા તથા દુષ્ટજનોનો વિનાશ કરવો જોઈએ. જેથી અશુદ્ધિ વગેરે દોષોનો નાશ અને સર્વત્ર પવિત્રતા પ્રસારિત થાય. (૨૯)

**અદિત્યૈ રાસ્નાસિ વિષ્ણોર્વેષ્ણોઽસ્યૂર્જે ત્વાઽદબ્ધેન ત્વા ચક્ષુષાવપ્શ્યામિ ।
અગ્નેર્જિહ્વાસિં સુહૂર્દેવેભ્યો ધામ્ને ધામ્ને મે ભવ યજુષે યજુષે ॥ ૩૦ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ અદિત્યૈ-પૃથિવીના રાસ્ના-રસ વગેરે પદાર્થો ઉત્પન્ન કરનાર અસિ-છો, હે વિષ્ણો:-વ્યાપક વેષ્ણ:-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોમાં પણ રહેલ અસિ-છો, અગ્ને:-ભૌતિક અગ્નિની જિહ્વા-જીભરૂપ અસિ-છો, તથા દેવેભ્ય:-વિદ્વાનો માટે ધામ્ને ધામ્ને-જેમાં તે વિદ્વાનો સુખકારક પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે છે તે ત્રણે ધામ અર્થાત્ સ્થાન, નામ અને જન્મ છે, તે ધામોની પ્રાપ્તિ તથા યજુષે યજુષે-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના જ્ઞાન માટે સુહૂ:-જે શ્રેષ્ઠથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય છે. એ રીતે ત્વા-આપને હું અદબ્ધેન-પ્રેમ-સુખયુક્ત ચક્ષુષા-વિજ્ઞાનથી ઋર્જે-પરાક્રમ, અદિત્યૈ-પૃથિવી દેવેભ્ય: શ્રેષ્ઠ ગુણો તથા ધામ્ને ધામ્ને-સ્થાન, નામ અને જન્મ આદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ તથા યજુષે યજુષે-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના આશયના જ્ઞાન માટે [ત્વા-આપને] અવપ્શ્યામિ-જ્ઞાનરૂપી નેત્રોથી નિહાળું છું. આપ કૃપા કરીને [મે-] મને વિદિત અને મારી પૂજાને ગ્રહણ ભવ-કરો.

દ્વિતીય અર્થ : જે કારણે આ યજ્ઞ અદિત્યૈ-અન્તરિક્ષને રાસ્ના-રસયુક્ત કરનાર અસિ-છે, વિષ્ણો:-યજ્ઞસંબંધી કાર્યોનો વેષ્ણ:-વ્યાપક અસિ-છે, અગ્ને:-ભૌતિક અગ્નિની જિહ્વા-જીભરૂપ અસિ-છે, દેવેભ્ય:- તથા દિવ્યગુણ ધામ્ને ધામ્ને-કીર્તિ, સ્થાન અને જન્મની પ્રાપ્તિ તથા [મે-] મારા માટે યજુષે યજુષે-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના આશયના જ્ઞાન માટે, સુહૂ:-સારી રીતે પ્રશંસા કરવા યોગ્ય ભવ-બને છે. આથી

ત્વા-તે યજ્ઞને હું અદબ્ધેન-સુખપૂર્વક, ચક્ષુષા-પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ દ્વારા નેત્રોથી અવપશ્યામિ-નિહાળું છું. તથા ત્વા-તેને અદિત્યૈ-પૃથિવી વગેરે પદાર્થ દેવેભ્યઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણ ઋર્જે-પરાક્રમ, ધામ્ને ધામ્ને-સ્થાન-સ્થાન તથા યજુષે યજુષે-યજુર્વેદના મંત્રથી હિત થવા માટે અવપશ્યામિ-ક્રિયાની કુશળતાથી નિહાળું છું.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એમ માનવું જોઈએ કે, એ જગદીશ્વર પ્રત્યેક વસ્તુમાં રહેલ છે, વેદોમાં પ્રતિપાદિત છે અને પૂજાને યોગ્ય છે.

પ્રત્યેક મંત્રથી વિધિપૂર્વક કરવામાં આવતો આ યજ્ઞ સર્વ પ્રાણીઓને પ્રત્યેક વસ્તુઓમાં પરાક્રમ અને બળ આપનાર છે. (૩૦)

સવિતુસ્ત્વા પ્રસવડઉત્પુનામ્યચ્છિદ્રેણ પવિત્રેણ સૂર્યસ્ય રશ્મિભિઃ । સવિતુર્વઃ પ્રસવડઉત્પુનામ્યચ્છિદ્રેણ પવિત્રેણ સૂર્યસ્ય રશ્મિભિઃ । તેજોઽસિ શુક્રમસ્યમૃતમસિ ધામ નામાસિ પ્રિયં દેવાનામનાધૃષ્ટં દેવયજનમસિ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : જે યજ્ઞ સવિતુઃ-પરમેશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પવિત્રેણ-પવિત્ર તથા સૂર્યસ્ય-પ્રકાશમય સૂર્યનાં કિરણોની રશ્મિભિઃ-કિરણો સાથે મળીને સર્વ પદાર્થોને શુદ્ધ - પવિત્ર કરે છે. ત્વા-તે યજ્ઞ તથા યજ્ઞકર્તાને હું ઉત્પુનામિ-ઉત્કૃષ્ટતા સાથે પવિત્ર કરું છું.

એ રીતે સવિતુઃ-પરમેશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પવિત્રેણ-શુદ્ધિકારક સૂર્યસ્ય-જે ઐશ્વર્ય હેતુઓના પ્રેરક પ્રાણને રશ્મિભિઃ-અંતરથી પ્રકાશિત કરનાર ગુણ છે, તેનાથી વઃ-તમને તથા પ્રત્યક્ષ પદાર્થોને યજ્ઞ કરીને ઉત્પુનામિ-પવિત્ર કરું છું.

હે બ્રહ્મન્ ! આપ તેજોઽસિ-સ્વયં પ્રકાશમાન, શુક્રમસિ-શુદ્ધ, અમૃતમસિ-નાશરહિત, ધામાસિ-સર્વ પદાર્થોના આધાર, નામાસિ-વંદના કરવા યોગ્ય, દેવાનામ્-વિદ્વાનોને પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક, અનાધૃષ્ટમ્-નિર્ભય તથા દેવયજનમસિ-વિદ્વાનોને પૂજ્ય છો. તેથી હું ત્વા-આપનો જ આશ્રય - શરણ ગ્રહણ કરું છું.

દ્વિતીય અર્થ : જે યજ્ઞ તેજોઽસિ-પ્રકાશ, શુક્રમસિ-શુદ્ધિનો હેતુ, અમૃતમસિ-મોક્ષ સુખદાતા, ધામાસિ-અન્નાદિ પદાર્થોની પુષ્ટિ કરનાર, નામાસિ-જલનો હેતુ, દેવાનામ્-શ્રેષ્ઠ ગુણોની પ્રિયમ્-પ્રીતિ કરાવનાર તથા અનાધૃષ્ટમ્-કોઈને ખંડન કરવા યોગ્ય નથી અર્થાત્ અત્યંત ઉત્કૃષ્ટ અને દેવયજનમ્-વિદ્વાનોને પરમેશ્વરની પૂજા કરાવનાર અસિ-છે. આથી એ યજ્ઞથી હું સવિતુઃ-જગદીશ્વરે સર્જેલા સંસારમાં અચ્છિદ્રેણ-નિરંતર પવિત્રેણ-અતિ શુદ્ધ યજ્ઞ તથા સૂર્યસ્ય-ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વરના ગુણ અથવા ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સૂર્યનાં રશ્મિભિઃ-વિજ્ઞાનાદિ પ્રકાશ અથવા કિરણોથી વઃ-તમને તથા તે પ્રત્યક્ષ - એ સર્વ પદાર્થોને ઉત્પુનામિ-પવિત્ર કરું છું. (૩૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર યજ્ઞવિદ્યાના ફળનો ઉપદેશ આપે છે કે - તમારા દ્વારા કરવામાં આવેલ યજ્ઞ સૂર્યનાં કિરણો દ્વારા વિહાર કરે છે. તે પોતાના નિરંતર શુદ્ધ ગુણથી સર્વ પદાર્થોને પવિત્ર કરે છે.

એ પવિત્ર ગુણથી સૂર્યનાં કિરણો દ્વારા સર્વ પદાર્થોને તેજસ્વી, શુદ્ધ, અમૃતરસથી યુક્ત, સુખદાયક, પ્રસન્નતાકારક, દૃઢ તથા યજ્ઞને યોગ્ય બનાવે છે; જેથી અનેક ભોજન, વસ્ત્રથી શરીરની પુષ્ટિ, બુદ્ધિબળ વગેરે તથા શુદ્ધ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ જીવોને સુખ આપે છે. (૩૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : ઈશ્વરે આ અધ્યાયમાં મનુષ્યોને શુભ કર્મોનું અનુષ્ઠાન (૧), દોષ અને શત્રુઓનું નિવારણ (૨૮), યજ્ઞ ક્રિયાનાં ફળ જાણવાં (૧૦), શ્રેષ્ઠ રીતે પુરુષાર્થ કરવા (૯), વિદ્યાનો વિસ્તાર કરવા (૮) ધર્મપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરવા (૭), ધર્મના અનુષ્ઠાનમાં નિર્ભયતાથી રહેવા (૨૩), સર્વની સાથે મિત્રતાથી વર્તવા (૮), વેદનાં અધ્યયન-અધ્યાપનથી સર્વ વિદ્યા ગ્રહણ કરાવવા (૨૭), શુદ્ધિ તથા પરોપકાર માટે પ્રયત્ન કરવા (૩૧) ની આજ્ઞા આપી છે. તેનું સર્વ મનુષ્યોએ અનુષ્ઠાન કરવું યોગ્ય છે.

॥ इति प्रथमोऽध्यायः ॥



॥ અથ દ્વિતીયાધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દૃરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

કૃષ્ણોઽસ્યાચ્ચરેષ્ટોઽગ્નયે ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ વેદિરસિ બર્હિષે ત્વા જુષ્ટાં પ્રોક્ષામિ
બર્હિરસિ સ્ત્રુગ્મ્યસ્ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેથી એ યજ્ઞ આચ્ચરેષ્ટઃ-વેદીની રચનાથી ખોટલ સ્થાનમાં સ્થિર થઈને કૃષ્ણઃ-ભૌતિક અગ્નિથી છિન્ન અર્થાત્ સૂક્ષ્મરૂપ તથા વાયુના ગુણથી આકર્ષણને પ્રાપ્ત અસિ-થાય છે, તેથી હું અગ્નયે-ભૌતિક અગ્નિમાં હવન કરવા માટે જુષ્ટમ્-પ્રેમથી શુદ્ધ કરેલ ત્વા-તે યજ્ઞ અર્થાત્ હુત સામગ્રીને પ્રોક્ષામિ-ઘૃત વગેરેથી સીંચીને શુદ્ધ કરું છું.

જે કારણે એ વેદિઃ-અંતરિક્ષમાં સ્થિત અસિ-થાય છે, તેથી હું બર્હિષે-હોમ કરેલ દ્રવ્યોને અંતરિક્ષમાં પહોંચાડવા માટે જુષ્ટામ્-પ્રેમથી સંપાદન કરેલી ત્વા-તે વેદીને પ્રોક્ષામિ-ઘૃત વગેરે સુંદર પદાર્થોથી સિંચું છું.

જેથી એ બર્હિઃ-જળ અંતરિક્ષમાં સ્થિર થઈને પદાર્થોને શુદ્ધ કરનાર અસિ-બને છે, તેથી ત્વા-તેની શુદ્ધિ માટે શુદ્ધ કરેલ જુષ્ટમ્-પુષ્ટિકારક હુત દ્રવ્યોને હું સ્ત્રુગ્મ્યઃ-સુવા વગેરે સાધન દ્વારા અગ્નિમાં હોમવા માટે પ્રોક્ષામિ-શુદ્ધ કરું છું.

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ વેદી રચીને, પાત્ર વગેરે સામગ્રીને ગ્રહણ કરીને, સારી રીતે શુદ્ધ કરેલ તે હવિનો અગ્નિમાં હોમ કરીને કરવામાં આવેલો યજ્ઞ, શુદ્ધ વર્ષાના જલથી સર્વ ઔષધિઓને પુષ્ટ કરે છે. આ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી સર્વ પ્રાણીઓને નિત્ય સુખ આપવું એ મનુષ્યોનો પરમ ધર્મ છે. (૧)

અદિત્યૈ વ્યુન્દનમસિ વિષ્ણોં સ્તુપોઽસ્યૂર્ણમ્ પ્રદસં ત્વા સ્તૃણામિ સ્વાસસ્થાં દેવેભ્યો
ભુવપતયે સ્વાહા ભુવનપતયે સ્વાહા ભૂતાનાં પતયે સ્વાહા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જેથી આ યજ્ઞ અદિત્યૈ-પૃથિવીના વ્યુન્દનમ્-વિવિધ ઔષધિ વગેરે પદાર્થોને સિંચનાર અસિ-બને છે, તેથી હું તેનું અનુષ્ઠાન કરું છું. વિષ્ણોઃ-એ યજ્ઞની સિદ્ધિ કરાવનાર સ્તુપઃ શિખારૂપ ઋર્ણમ્ પ્રદસમ્-ઉલૂખલ [ખાંડણિયો] અસિ-છે, ત્વા-તેથી હું તે અન્નનાં ફોતરાં દૂર કરનાર પથ્થર - સાંબેલું અને ખાંડણિયાને સ્તૃણામિ-ઢાંકું છું.

વેદી દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો તથા દિવ્ય સુખોની પ્રાપ્તિ માટે હિતકારી અસિ-હોય છે, જેથી હું તેને સ્વાસસ્થામ્-એવી બનાવું છું, કે જેમાં હોમ કરેલા પદાર્થો સારી રીતે રહે.

જેથી આ સંસાર, ભુવન અર્થાત્ લોકલોકાન્તર અને સંસારી પદાર્થોના પતિ પરમેશ્વર પ્રસન્ન થાય છે. અથવા ભૌતિક અગ્નિ સુખોને સિદ્ધ કરનાર બને છે. આથી ભુવપતયે સ્વાહા-ભુવનપતયે સ્વાહા-ભૂતાનાં પતયે સ્વાહા-તે પરમેશ્વરની પ્રસન્નતા અને આજ્ઞાપાલન માટે વેદીના ગુણો, સત્યભાષણ અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ વાક્ય વગેરે ઉત્તમ વાણીયુક્ત વેદ છે, તેના મંત્રો સાથે સ્વાહા શબ્દના અનેક ઉચ્ચાર સાથે યજ્ઞ વગેરે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું વિધાન કરવામાં આવે છે. એ પ્રયોજન માટે વેદીને રચું છું. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વેદી વગેરે યજ્ઞનાં સાધનોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પ્રાણીઓના સુખ માટે તથા પરમેશ્વરની પ્રસન્નતા માટે સારી રીતે ક્રિયાયુક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરો. સદા સત્ય જ બોલો. જેમ હું ન્યાયથી સમસ્ત વિશ્વનું પાલન કરું છું, તેમ તમે પણ પક્ષપાત છોડીને સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરીને સુખ સંપાદન કરો. (૨)

ગન્ધર્વસ્ત્વા વિશ્વાવસુઃ પરિદધાતુ વિશ્વસ્યારિષ્ટ્યૈ યજમાનસ્ય પરિધિરસ્યગ્નિરિડઽઈંડિતઃ । ઇન્દ્રસ્ય બાહુરસિ દક્ષિણો વિશ્વસ્યારિષ્ટ્યૈ યજમાનસ્ય પરિધિરસ્યગ્નિરિડઽઈંડિતઃ । મિત્રાવરુણૌ ત્વોત્તરતઃ પરિધિતાં ધ્રુવેણ ધર્મણા વિશ્વસ્યારિષ્ટ્યૈ યજમાનસ્ય પરિધિરસ્યગ્નિરિડઽઈંડિતઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોએ જે આ ગન્ધર્વઃ-પૃથિવી અથવા વાણીને ધારણ કરનાર, વિશ્વાવસુઃ-વિશ્વને વસાવનાર, પરિધિઃ-સર્વ તરફથી સંપૂર્ણ વસ્તુઓને ધારણ કરનાર, ઇન્દ્રઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, અગ્નિઃ-સૂર્યરૂપ અગ્નિની, ઈંડિતઃ-સ્તુતિ અસિ-કરે છે. જે વિશ્વસ્ય-સંસારના અને વિશેષ કરીને યજમાનસ્ય-યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનના અરિષ્ટ્યૈ-દુઃખ નિવારણથી સુખપ્રદાન કરીને યજ્ઞને પરિદધાતુ-ધારણ કરે છે. આથી વિદ્વાન ત્વા-તેને વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે પરિદધાતુ-ધારણ કરે.

વિદ્વાનો દ્વારા જે વાયુ ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યનું બાહુઃ-બળ અને દક્ષિણઃ-વર્ષાની પ્રાપ્તિ કરાવનાર અથવા પરિધિઃ-શિલ્પવિદ્યાના અભિલાષી ઇન્દ્રઃ-દાહ, પ્રકાશ વગેરે ગુણયુક્ત હોવાથી સ્તુતિ યોગ્ય ઈંડિતઃ-શોધાયેલા અને અગ્નિઃ-પ્રત્યક્ષ અગ્નિ અસિ-છે, તે વાયુ અને અગ્નિનો સારી રીતે શિલ્પવિદ્યામાં ઉપયોગ કરીને યજમાનસ્ય-શિલ્પવિદ્યા પ્રેમી તથા વિશ્વસ્ય-સર્વ પ્રાણીઓના અરિષ્ટ્યૈ-સુખ માટે અસિ-હોય છે.

જે બ્રહ્માંડમાં રહેનાર, ગમનાગમન સ્વભાવવાળા મિત્રાવરુણૌ-પ્રાણ અને અપાન વાયુ છે, તે ધ્રુવેણ-નિશ્ચલ ધર્મણા-પોતાની ધારણા શક્તિથી ઉત્તરતઃ-પૂર્વોક્ત વાયુ અને અગ્નિથી ઉત્તરકાલમાં વિશ્વસ્ય-ચરાચર જગત્ તથા યજમાનસ્ય-સર્વની સાથે મિત્રભાવે વર્તનાર સજ્જન પુરુષના અરિષ્ટ્યૈ-સુખકારક ત્વા-તે પૂર્વોક્ત યજ્ઞને પરિધિતામ્-સર્વ રીતે ધારણ કરે છે.

જે વિદ્વાન દ્વારા ઇન્દ્રઃ-વિદ્યાપ્રાપ્તિ માટે સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અને પરિધિઃ-સર્વ શિલ્પવિદ્યાનું પરિધાન તથા ઈંડિતઃ-વિદ્યાભિલાષીઓથી પ્રશંસનીય અગ્નિઃ-વીજળીરૂપ અગ્નિ અસિ-છે; તે પણ એ યજ્ઞને સર્વ પ્રકારથી ધારણ કરે છે. તેના ગુણોને જાણીને મનુષ્યે પણ યથાવત્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે જે સૂર્ય, વીજળી અને પ્રત્યક્ષ ભૌતિક અગ્નિ રૂપમાં ત્રણ પ્રકારના અગ્નિ નિર્માણ કરેલ છે; તે મનુષ્ય દ્વારા વિદ્યા દ્વારા સારી રીતે પ્રયોગમાં લેવામાં આવતાં અનેક પ્રકારનાં કાર્યો સિદ્ધ કરે છે. (૩)

વીતિહોત્રં ત્વા કવે દ્યુમન્તઃસમિધીમહિ । અગ્ને બૃહન્તમધ્વરે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે કવે-સર્વજ્ઞ તથા પ્રત્યેક પદાર્થમાં ક્રમશઃ વિજ્ઞાનયુક્ત અગ્ને-જ્ઞાનસ્વરૂપ પરમેશ્વર !

અમે અધ્વરે-મિત્રભાવે રહેવા માટે **બૃહન્તમ્**-સર્વને મહાન તથા અપાર સુખની વૃદ્ધિ કરનાર, **દ્યુમન્તમ્**-અત્યંત પ્રકાશમાન તથા **વીતિહોત્રમ્**-અગ્નિહોત્ર વગેરે યજ્ઞોને જણાવનાર, **ત્વા**-આપ - પરમેશ્વરને **સમિધીમહિ**-હૃદયમાં સારી રીતે પ્રકાશિત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : અમે લોકો અધ્વરે-હિંસાથી રહિત અર્થાત્ જે કદી ત્યાગ કરવા યોગ્ય નથી તે શ્રેષ્ઠ યજ્ઞમાં **વીતિહોત્રમ્**-પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરવા માટે અગ્નિહોત્ર વગેરે ક્રિયાઓ જેથી સિદ્ધ થાય છે તથા **દ્યુમન્તમ્**-અત્યંત પ્રચંડ જ્વાળાયુક્ત, **બૃહન્તમ્**-અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરવા તથા **કવે**-પદાર્થોમાં ક્રમશઃ દૃષ્ટિગોચર થનાર **ત્વા**-તે **અગ્ને**-ભૌતિક અગ્નિને **સમિધીમહિ**-સારી રીતે પ્રકાશિત - પ્રજ્વલિત કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : સંસાર જેટલાં પણ ક્રિયાઓનાં સાધન તથા ક્રિયાઓથી સાધ્ય - સિદ્ધ થનાર પદાર્થ છે, તે સર્વને ઈશ્વરે રચીને ધારણ કરેલ છે.

મનુષ્યોએ તેનાથી તેના ગુણોનાં જ્ઞાન દ્વારા અને ક્રિયાઓ દ્વારા અનેક પ્રકારના ઉપકારો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૪)

સમિદસિ સૂર્યસ્ત્વા પુરસ્તાત્ પાતુ કસ્યાશ્ચિદ્ભિશસ્ત્યૈ ।

સવિતુર્બાહૂ સ્થઽઊર્ણમ્નદસં ત્વા સ્તૃણામિ સ્વાસસ્થં દેવેભ્યઽઆ ત્વા વસવો રુદ્રાઽઆદિત્યાઃ સદન્તુ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : **ચિત્**-જેમ કોઈ મનુષ્ય સુખ પ્રાપ્તિ માટે ક્રિયા દ્વારા પ્રાપ્ત થયેલા પદાર્થોની રક્ષા કરતાં આનંદ પામે છે, તેમ એ યજ્ઞ **સમિત્**-વસંત ઋતુ સમાન સારી રીતે પ્રકાશિત **અસિ**-થાય છે. **ત્વા**-તેના **સૂર્યઃ**-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિનો હેતુ સૂર્યલોક **કસ્યાઃ**-સર્વ પદાર્થોના **અભિશસ્ત્યૈ**-પ્રકટીકરણ માટે **પુરસ્તાત્**-પ્રથમથી જ તેની **પાતુ**-રક્ષા કરનાર હોય છે.

જે **સવિતુઃ**-સૂર્યલોકનાં **બાહૂ**-બળ અને વીર્ય **સ્થઃ**-છે, જેથી એ યજ્ઞ નિત્ય વિસ્તારને પ્રાપ્ત થાય છે. **ત્વા**-તે **ઊર્ણમ્નદસમ્**-સુખનાં વિઘ્નોનો નાશ કરવા **સ્વાસસ્થમ્**-તથા શ્રેષ્ઠ અન્તરિક્ષરૂપી આસન પર વિરાજમાન થનાર યજ્ઞને **વસવઃ**-અગ્નિ વગેરે આઠ વસુ અર્થાત્ અગ્નિ, પૃથિવી, વાયુ, અન્તરિક્ષ, સૂર્ય, પ્રકાશ, ચન્દ્રમા અને તારાગણ એ વસુ; **સ્દ્ધાઃ**-પ્રાણ, અપાન, વ્યાન, ઉદાન, સમાન, નાગ, કૂર્મ, કૃકલ, દેવદત્ત, ધનંજય અને જીવાત્મા એ અગિયાર રુદ્ર તથા **આદિત્યાઃ**-બાર મહિના **સદન્તુ**-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

ત્વા-તે યજ્ઞ **ઊર્ણમ્નદસમ્**-અત્યંત સુખવર્ધક, **સ્વાસસ્થમ્**-અને અન્તરિક્ષમાં સ્થિર થનાર તે યજ્ઞને હું પણ સુખની પ્રાપ્તિ તથા **દેવેભ્યઃ**-દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરવા માટે **આસ્તૃણામિ**-સારી રીતે સામગ્રીથી આચ્છાદિત કરીને સિદ્ધ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વને એ ઉપદેશ આપે છે કે - મનુષ્ય દ્વારા વસુ, રુદ્ર અને આદિત્યોથી જે-જે ઉપકાર લઈ શકાય છે; તે સર્વની રક્ષા માટે નિત્ય લેવા જોઈએ.

જે અગ્નિમાં દ્રવ્યોનો હોમ કરવામાં આવે છે, તે સૂર્ય અને વાયુને પ્રાપ્ત થાય છે, તે સૂર્ય અને વાયુ તે પૃથક્ દ્રવ્યોની રક્ષા કરીને, ફરી પૃથિવી પર છોડી દે છે. જેથી પૃથિવી પર દિવ્ય ઔષધિ વગેરે

પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનાથી પ્રાણીઓને નિત્ય સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. આથી ઉક્ત યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૫)

ઘૃતાર્ચ્યસિ જુહૂર્નામ્જ્ના સેદં પ્રિયેણ ધામ્ના પ્રિયઃ સદ્ઽઆસીદ ઘૃતાર્ચ્ય-
સ્યુપભન્નામ્ના સેદં પ્રિયેણ ધામ્ના પ્રિયઃ સદ્ઽઆસીદ ઘૃતાર્ચ્યસિ ધ્રુવા નામ્ના
સેદમ્પ્રિયેણ ધામ્ના પ્રિયઃ સદ્ઽઆસીદ। પ્રિયેણ ધામ્ના પ્રિયઃ સદ્ઽઆસીદ।
ધ્રુવાઽઅસદન્નૃતસ્ય યોનોૌ તા વિષ્ણો પાહિ પાહિ યજ્ઞં પાહિ યજ્ઞપતિં પાહિ માં
યજ્ઞન્યમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે [નામ્ના-] જુહૂઃ-હવિ અગ્નિમાં હોમવા માટે સુખ ઉત્પન્ન કરનાર ઘૃતાર્ચી-ઘૃતને પ્રાપ્ત કરાવનાર આદાન ક્રિયા અસિ-છે, સા-તે યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત થયેલ સાર ગ્રહણની ક્રિયા છે. તે પ્રિયેણ-સુખોથી તૃપ્ત કરનાર શોભાયમાન ધામ્ના-સ્થાનથી યુક્ત ઇદમ્-આ પ્રિયમ્-તૃપ્ત કરનાર સદઃ-ઉત્તમ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. તેને આસીદ-સિદ્ધ કરે છે.

જે નામ્ના-પ્રસિદ્ધિથી ઉપભૂત્-સમીપ પ્રાપ્ત પદાર્થોને ધારણ કરનાર તથા ઘૃતાર્ચી-જલને પ્રાપ્ત કરાવનાર હસ્તક્રિયા અસિ-છે, સા-તે યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત થયેલ પ્રિયેણ-પ્રીતિકારક ધામ્ના-સ્થાનથી યુક્ત ઇદમ્-આ ઔષધિ વગેરે પદાર્થોનો સમૂહ પ્રિયમ્-જે આરોગ્યથી સુખદાયક અને સદઃ-દુઃખનાશક છે, તેને આસીદ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે [નામ્ના-] ધ્રુવા-સ્થિર સુખો તથા ઘૃતાર્ચી-આયુને પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્યા અસિ-છે, સા-તે સારી રીતે શ્રેષ્ઠ કાર્યોમાં સ્થાપિત કરેલી પ્રિયેણ-પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનાર [ધામ્ના-] સ્થિતિ હેતુ ઇદમ્-આ પ્રિયમ્-આનંદપ્રદ જીવન તથા સદઃ-વસ્તુને આસીદ-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે ક્રિયા દ્વારા પ્રિયેણ-પ્રસન્નતા કરનાર ધામ્ના-હૃદયથી પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક સદઃ-જ્ઞાન આસીદ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, સા-તે વિજ્ઞાન બધાએ નિત્ય સિદ્ધ કરવું જોઈએ.

હે વિષ્ણો-વ્યાપક પરમેશ્વર ! જેમ ઋહસ્ય યોનોૌ-શુદ્ધ યજ્ઞમાં જે-જે ધ્રુવા-સ્થિર વસ્તુ અસદન્-હોય, તેમ તેની નિરંતર પાહિ-રક્ષા કરો તથા કૃપા કરીને [યજ્ઞં-] યજ્ઞની પાહિ-રક્ષા કરો, યજ્ઞન્યમ્-યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરવા યજ્ઞપતિમ્-યજ્ઞના પાલક યજ્ઞમાનની પાહિ-રક્ષા કરો અને યજ્ઞને પ્રકાશિત કરનાર મામ્-હું હોતા, ચ-અને અધ્વર્યુ, ઉદ્ગાતા અને બ્રહ્માની પાહિ-રક્ષા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞ પૂર્વોક્ત મંત્રમાં વસુ, રુદ્ર અને આદિત્યથી સિદ્ધ થાય છે, તે વાયુ અને જલની ક્રિયા શુદ્ધિ દ્વારા સર્વ સ્થાનો તથા સર્વ વસ્તુઓને પ્રિય, સ્થિર, સુખદાયક અને જ્ઞાનવર્ધક બનાવે છે; તેની વૃદ્ધિ અને રક્ષા માટે સર્વ મનુષ્યોએ વ્યાપક ઈશ્વરની પ્રાર્થના તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૬)

અગ્નેં વાજ્જિદ્ વાજં ત્વા સરિષ્યન્તં વાજ્જિત્ઃ સમ્માર્જિમ્।

નમો દેવેભ્યઃ સ્વધા પિતૃભ્યઃ સુયમે મે ભૂયાસ્તમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જેથી એ અગ્ને-અગ્નિ વાજજિત્-અર્થાત્ જે ઉત્કૃષ્ટ અન્નને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વ પદાર્થોને શુદ્ધ કરે છે, એથી હું ત્વા-તે વાજમ્-વેગવાન સરિષ્યન્તમ્-સર્વ પદાર્થોને અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડનાર અને વાજજિતમ્ [વાજ-] અર્થાત્ યુદ્ધને જીતાડનાર ભૌતિક અગ્નિ છે, તેને સમ્માર્જિમ્-સારી રીતે શુદ્ધ કરું છું.

યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત જે અગ્નિથી દેવેભ્યઃ-દિવ્ય સુખદાયક પૂર્વોક્ત વસુ વગેરેથી સુખ માટે નમઃ-અત્યંત મધુર શ્રેષ્ઠ જલ તથા પિતૃભ્યઃ-પાલન કરનારી વસંત વગેરે ઋતુઓ છે તેના દ્વારા આરોગ્ય માટે સ્વધા-અમૃતરૂપ અન્ન થાય છે, તે સુયમે-બળ તથા પરાક્રમ આપનાર છે, તે યજ્ઞથી મે-મારા માટે પણ ભૂયાસ્તમ્-બળ અને પરાક્રમ આપનાર બને. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે - મનુષ્યે પૂર્વ મંત્રમાં વર્ણિત અગ્નિને મુખ્ય સાધન બનાવવો જોઈએ. કારણ કે અગ્નિ ઉપર જવાના સ્વભાવવાળો હોવાથી સર્વ પદાર્થોનો છેદક છે. યાન અને અસ્ત્રોમાં અગ્નિનો વિધિપૂર્વક ઉપયોગ કરવાથી તે શીઘ્ર ગતિ અને વિજયનો હેતુ બનીને, ઋતુઓ દ્વારા દિવ્ય પદાર્થોને સિદ્ધ કરીને, અન્ન-જલને શુદ્ધ કરીને સુખદાયક બનાવે છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૭)

અસ્કન્નમદ્ય દેવેભ્યઃઆજ્યઃ સંધ્રિયાસમઙ્ઘ્રિણા વિષ્ણો મા ત્વાવક્રમિષ્ણં વસુમતીમગ્ને તે છાયામુપસ્થેષં વિષ્ણો સ્થાનમસીતઙ્ઘ્નદ્રો વીર્યમકૃણોદૂર્ધ્વોઃ ડધ્વરઙ્ઘાસ્થાત્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હું દેવેભ્યઃ-ઉત્તમ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે જે અસ્કન્નમ્-નિશ્ચલ સુખદાયક આજ્યમ્-ઘૃત વગેરે શ્રેષ્ઠ પદાર્થ છે તેને અંધ્રિણા-ગતિ સાધનરૂપ અગ્નિ દ્વારા અદ્ય-આજ સંધ્રિયાસમ્-ધારણ કરું અને ત્વા-તેનો હું મા-અવક્રમિષમ્-પરિત્યાગ ન કરું.

હે અગ્નિ જગદીશ્વર ! તે-આપનો વસુમતીમ્-પદાર્થ દાતા છાયામ્-આશ્રયને ઉપસ્થેષમ્-પ્રાપ્ત કરું.

જે એ અગ્ને-અગ્નિ વિષ્ણોઃ-યજ્ઞના સ્થાનમ્-નિવાસનું સ્થાન અસિ-છે, તેને પણ વસુમતીમ્-ઉત્તમ પદાર્થ દાતા છાયામ્-આશ્રયને હું ઉપસ્થેષમ્-પ્રાપ્ત થઈને યજ્ઞને સિદ્ધ કરું. તથા જે ઋર્ધ્વઃ-આકાશ અને અધ્વરઃ-યજ્ઞ-અગ્નિમાં રહેનાર આ-સર્વ રીતે અસ્થાત્-સ્થિત રહે છે, તેને ઙ્ઘ્નદ્રઃ-સૂર્ય અને વાયુ ધારણ કરીને વીર્યમ્-વીર પુરુષનાં કર્મ અથવા પરાક્રમ અકૃણોત્-બનાવી દે છે. (૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - જે પૂર્વોક્ત યજ્ઞ દ્વારા અન્ન અને જલ શુદ્ધ થઈને અધિક માત્રામાં ઉત્પન્ન થાય છે, જેથી તે યજ્ઞને સિદ્ધ કરવા માટે મનુષ્યોએ અધિક સામગ્રી એકત્ર કરવી જોઈએ.

જેમ હું સર્વત્ર વ્યાપક છું, મારી આજ્ઞાનું કદી પણ ઉલ્લંઘન ન કરવું જોઈએ. જે અનેકવિધ સુખોને આપનાર મારા આશ્રયને ગ્રહણ કરીને અગ્નિમાં જે યજ્ઞ કરવામાં આવે છે, જેને સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી સૂક્ષ્મ કરીને વાયુની સહાયતાથી ઉપર ખેંચીને ઉપર મેઘમંડલમાં સ્થાપિત કરે છે, ફરી ત્યાંથી ભૂમિ પર પાડે છે, જેથી ભૂમિમાં મહાન પરાક્રમ - શક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે; તે યજ્ઞનું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૮)

અગ્ને વેર્હોત્રં વેદૂત્યમવતાં ત્વાં દ્યાવાપૃથિવીઙ્ઘવ ત્વં દ્યાવાપૃથિવી સ્વિષ્ટકૃદ્દેવેભ્યઙ્ઘ્નદ્રઙ્ઘાજ્યેન હૃવિષાં ભૂત્સ્વાહા સં જ્યોતિષા જ્યોતિઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ! જે દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશમય સૂર્યલોક અને પૃથિવી યજ્ઞની અવતામ્-રક્ષા કરે છે, તેની ત્વમ્-આપ વે:-રક્ષા કરો. જેમ એ ભૌતિક અગ્નિ હોત્રમ્-યજ્ઞ અને દૂત્યમ્-દૂતકર્મ દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશમય સૂર્યલોક અને પૃથિવીનું રક્ષણ કરે છે, તેમ હે ભગવાન્ ! દેવેભ્ય:-વિદ્વાનો માટે સ્વિષ્ટકૃત્-તેની ઈચ્છાનુસાર ઉત્તમ ઈષ્ટ કાર્યો માટે આપ અમારી અવ-રક્ષા કરો.

જેમ એ આજ્યેન યજ્ઞ અને અગ્નિ હોમવા યોગ્ય ઘૃત વગેરે ઉત્તમ પદાર્થો હવિષા- સંસ્કૃત અર્થાત્ સારી રીતે શુદ્ધ કરેલ હોમનાં દ્રવ્યો કેસર વગેરે પદાર્થો અને જ્યોતિષા-પ્રકાશયુક્ત લોકોની સાથે જ્યોતિ:-પ્રકાશમય કિરણોથી સ્વિષ્ટકૃત્-બહુ જ ઈષ્ટકારી ઇન્દ્ર:-સૂર્યલોક પણ દ્યાવાપૃથિવી-અમારા ન્યાય તથા પૃથિવીના રાજ્યની રક્ષા કરનાર અભૂત્-બને છે, તેમ આપ જ્યોતિ:-વિજ્ઞાનરૂપ જ્યોતિના દાનથી અમારી અવ-રક્ષા કરો. એમ સ્વાહા-વેદવાણી એ કર્તવ્ય-કર્મનો ઉપદેશ કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે મનુષ્યોને વેદોમાં ઉપદેશ આપેલ છે કે મનુષ્યો દ્વારા જે-જે અગ્નિ, પૃથિવી, સૂર્ય તથા વાયુ વગેરે પદાર્થોથી અગ્નિહોત્ર અને દૂતકર્મને કર્મના નિમિત્ત માનીને કરવામાં આવે છે, તે કર્મ ઈચ્છિત સુખ આપનાર હોય છે. આઠમાં મંત્રમાં યજ્ઞના સાધન કહેલ તેનું ફળ નવમાં મંત્રમાં પ્રકાશિત કરેલ છે. (૯)

**મયીદમિન્દ્રઽન્દ્રિયં દધાત્વસ્માન્ રાયો મઘવાનઃ સચન્તામ્ । અસ્માક્ઃ સન્ત્વાશિષઃ
સત્યા નઃ સન્ત્વાશિષઽડપહૂતા પૃથિવી માતોપ માં પૃથિવી માતા હૃયતામગ્નિરાગ્નીઘ્રાત્
સ્વાહા ॥ ૧૦ ॥**

પદાર્થ : ઇન્દ્ર:-પરમેશ્વરે મયિ-મારામાં ઇદમ્-પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિયમ્-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિનાં ચિહ્નો છે, તે પરમેશ્વરે પોતાના જ્ઞાનથી જોયાં છે અને પ્રકાશિત કર્યાં છે તથા સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરનારા વિદ્વાનોને પ્રદાન કર્યાં છે. જેને ઇન્દ્ર અર્થાત્ વિદ્વાનો પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરે છે તેને તથા રાયઃ-વિદ્યા, સુવર્ણ અને ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ સંપત્તિને દધાતુ-નિત્ય સ્થાપન કરે.

પરમેશ્વરની કૃપા અને અમારા પુરુષાર્થથી મઘવાન:-જેમાં વિપુલ ધન, રાજ્યાદિ પદાર્થો વિદ્યમાન છે, તેને અમે પૂર્ણ ઐશ્વર્યયુક્ત સંપત્તિને પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ ધન ન:-અમે પરોપકાર કરનારા ધર્માત્મા લોકોને સચન્તામ્-પ્રાપ્ત થાય અને આ રીતે અસ્માક્મ્-અમે પરોપકાર કરનારા ધર્માત્માની આશિષ:-કામના સત્યા:-સિદ્ધ સન્તુ-થાય તથા તે રીતે ન:-અમારી આશિષ:-ન્યાયપૂર્વકની ઈચ્છાયુક્ત ક્રિયાઓ સત્યા:-સિદ્ધ સન્તુ-થાય.

એ રીતે માતા-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિને માન્ય કરનારી વિદ્યા અને પૃથિવી-અત્યંત સુખકારી ભૂમિ છે, ઉપહૂતા-જેને રાજ્ય વગેરે સુખ માટે મનુષ્ય ક્રમથી પ્રાપ્ત કરે છે, તે મામ્-સુખની ઈચ્છા કરનાર મને ઉપહૃયતામ્-સારી રીતે ઉપદેશ કરે છે.

મેં અનુષ્ઠાન કરેલ એ અગ્નિ:-ભૌતિક અગ્નિને આગ્નીઘ્રાત્-બળતણ વગેરે પ્રજ્વલિત કરે છે, તે અમોને વાંછિત સુખો આપનાર બનીને ન:-અમોને સુખ આપનાર બને. કારણ કે એ રીતે સારી રીતે હોમને પ્રાપ્ત થઈને ઈચ્છિત કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર છે. સ્વાહા-સર્વ મનુષ્યો માટે આ યજ્ઞકર્મ કરવાનો

વેદવાણી ઉપદેશ આપે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પુરુષાર્થી અને ઈશ્વરનો ઉપાસક છે, તે જ સ્વચ્છ મન, શ્રેષ્ઠ તથા ઉત્તમ ધન અને સત્ય કામના પ્રાપ્ત કરે છે; અન્ય નહીં.

સર્વને માન આપવાના કારણે આ મંત્રમાં પૃથિવી શબ્દથી ભૂમિ અને વિદ્યા પ્રકાશિત કરેલ છે. સર્વે તે બંનેથી સદા ઉપકાર કરે. એવો ઈશ્વરે આ મંત્રમાં ઉપદેશ કરેલ છે.

નવમાં મંત્ર દ્વારા, સિદ્ધ કરવામાં આવેલ અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી ઈષ્ટ સુખોની પ્રાપ્તિનો ઉપદેશ કરેલ છે. તે આ દશમાં મંત્ર દ્વારા પણ પ્રકાશિત કરેલ છે. (૧૦)

ઉપહૂતો દ્યૌષ્વિતોપ માં દ્યૌષ્વિતા હ્યતામગ્નિરાગ્નીધ્રાત્ સ્વાહા । દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । પ્રતિગૃહ્ણામ્યગ્નેષ્ટ્વાસ્યેન પ્રાશ્નામિ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : મારા દ્વારા જે દ્યૌઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ પિતા-સર્વપાલક ઈશ્વરની ઉપહૂત:-ઉપાસના કરનાર મામ્-સુખોપભોગ કરનાર મને ઉપહ્યતામ્-સારી રીતે સ્વીકારો.

એ રીતે જે દ્યૌઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ પિતા-સર્વ ઉત્તમ ઉત્તમ ક્રિયાઓના પાલક સૂર્યલોક મને ઉપહૂત:-ક્રિયામાં પ્રયુક્ત કરનાર મામ્-સર્વ સુખના ભોક્તા મને વિદ્યા - જ્ઞાન ઉપહ્યતામ્-પ્રદાન કરે છે.

જે અગ્નિ:-જઠરાગ્નિ સ્વાહા-સારા ભોજનને આગ્નીધ્રાત્-ઉદરમાં પચાવી દે છે. તેથી હું દેવસ્ય-આનંદદાયક સવિતુઃ-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલ સંસારમાં વિદ્યમાન છે, ત્વા-તે, ઉક્ત ભોગને અશ્વિનોઃ-પ્રાણ અને અપાનના બાહુભ્યામ્-આકર્ષણ અને ધારણ ગુણ - શક્તિ દ્વારા તથા પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકારક સમાન વાયુના હસ્તાભ્યામ્-શોધન અને શરીરના પ્રત્યેક અંગમાં પહોંચાડવાના ગુણોથી પ્રતિગૃહ્ણામિ-સારી રીતે - નિત્ય ગ્રહણ કરું છું.

ગ્રહણ કરીને અગ્નેઃ-પ્રજ્વલિત ભૌતિક પાયક અગ્નિમાં પકાવીને ત્વા-તે ભક્ષ્ય પદાર્થને આસ્યેન-પોતાના મુખથી પ્રાશ્નામિ-સારી રીતે ભોજન કરું છું. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે પોતાના આત્માની શુદ્ધિ માટે અનંત વિદ્યાના પ્રકાશક પરમેશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. તથા વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે નેત્રોથી સારી રીતે જોઈને સંસ્કાર કરેલ પ્રમાણયુક્ત ભોજન નિત્ય કરવું જોઈએ.

ઈશ્વર દ્વારા સંસારમાં ઉત્પન્ન પદાર્થોથી જે સર્વ પ્રકારના ભોગ સિદ્ધ - પ્રાપ્ત થાય છે, તેને વિદ્યા તથા ધર્મયુક્ત વ્યવહાર સાથે સ્વયં ભોગવવા જોઈએ તથા અન્યોને ભોગવાવા જોઈએ.

પૂર્વ મંત્રથી પૃથિવી પર વિદ્યા દ્વારા પ્રાપ્ત થનાર તથા માન હેતુ જે પદાર્થ કહેલ છે, તેનો સર્વેએ ધર્મ અને યુક્તિપૂર્વક ઉપભોગ કરવો જોઈએ. એ વાત આ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. (૧૧)

एतं तै देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमव तेन यज्ञर्पतिं तेन

માર્મવ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય સુખ અને શ્રેષ્ઠ ગુણોના દાતા ! સવિતઃ-સકલ ઐશ્વર્યના વિદાતા જગદીશ્વર ! વેદ અને વિદ્યાન આપનાથી પ્રકાશિત થયેલ એતમ્-એ પૂર્વોક્ત યજ્ઞને પ્રાહુઃ-સારી રીતે કહે છે. જેથી બૃહસ્પતયે-મહત્તમ વેદવાણીનું પાલન કરનાર બ્રહ્મણે-ચારેય વેદોના અધ્યયનથી જેણે બ્રહ્માની પદવી પ્રાપ્ત કરેલ છે, તે વિદ્યાનને સુખ અને શ્રેષ્ઠ અધિકાર પ્રાપ્ત થાય છે.

એ યજ્ઞમ્-યજ્ઞ સંબંધી ધર્માનુષ્ઠાનથી યજ્ઞપતિમ્-યજ્ઞ કરનારા અને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર વિદ્યાન અને તે વિદ્યા-ધર્મરૂપ પ્રકાશ દ્વારા મા-મારી પણ અવ-રક્ષા કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે સૃષ્ટિના આરંભમાં દિવ્ય ગુણવાન અગ્નિ, વાયુ, આદિત્ય અને અંગિરા નામક ઋષિઓને ચારે વેદોના ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા પ્રાપ્તિજન્ય સુખ માટે યજ્ઞના અનુષ્ઠાનની વિધિ બતાવી છે, જેથી સર્વની રક્ષા થાય છે.

કારણ કે વિદ્યા અને શુદ્ધિ ક્રિયા વિના કોઈને પણ સુખ તથા રક્ષણ પ્રાપ્ત થઈ શકતાં નથી. આથી સર્વેએ પરસ્પર પ્રેમ માટે તેની પ્રયત્નપૂર્વક વૃદ્ધિ અને રક્ષા કરવી જોઈએ.

જે અગિયારમાં મંત્ર દ્વારા યજ્ઞ ફળ અને ઉપભોગનો ઉપદેશ કરેલ છે, તેનો પ્રકાશ ઈશ્વરે જ કરેલ છે, તેમ જ્ઞાત થાય છે. (૧૨)

મનો જૂતિર્જુષતામાજ્યસ્ય બૃહસ્પતિર્યજ્ઞમિમં તનોત્વરિષ્ટં યજ્ઞસમિમં દધાતુ । વિશ્વે દેવાસંઽદ્બુહ માદયન્તામોઽમ્પ્રતિષ્ઠ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જૂતિઃ-મારું અત્યંત વેગથી કર્મોમાં વ્યાપ્ત મનઃ-મનનશીલ અને જ્ઞાનપ્રાપ્તિનું સાધન મન આજ્યસ્ય-યજ્ઞ સામગ્રીનું જુષતામ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરે.

બૃહસ્પતિઃ-મહાન પ્રકૃતિ અને પ્રકાશ વગેરેના રક્ષક જગદીશ્વર જે ઇમમ્-આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ અરિષ્ટમ્-અહિંસનીય યજ્ઞમ્-સુખરૂપી યજ્ઞનો તનોતુ-વિસ્તાર કરે ઇદમ્-આ યજ્ઞ અરિષ્ટમ્-ત્યાજ્ય નથી. યજ્ઞમ્-જે અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિરૂપ યજ્ઞ છે, તેને સન્દધાતુ-સારી રીતે ગ્રહણ કરાવે.

હે વિશ્વે દેવાસઃ-સર્વ વિદ્યાનો ! તમે પાલન કરવા યોગ્ય તે બંને યજ્ઞનો વિસ્તાર કરીને ઇહ-આ સંસાર અથવા આપણાં મનમાં માદયન્તામ્-આનંદિત થાઓ.

હે ઓઽમ્-ઓંકાર અર્થ જગદીશ્વર ! આપ બૃહસ્પતિઃ-પ્રકૃતિ વગેરેનું પાલન કરનાર ઇહ-આ સંસારમાં અથવા વિદ્યાનોના હૃદયમાં પ્રતિષ્ઠ-કૃપા કરીને યજ્ઞ અથવા વેદવિદ્યાની સ્થાપના કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમારું મન શુભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થાય. મારા દ્વારા સંસારમાં જે યજ્ઞ કરવાની આજ્ઞા આપું છું, તેનું અનુષ્ઠાન કરીને સ્વયં સુખી બનો તથા અન્યને સુખી કરો.

ઓમ્ એ પરમેશ્વરનું નામ છે. જેમ પિતા અને પુત્રનો પ્રિય સંબંધ છે, તેમ ઈશ્વર સાથે ઓંકારનો સંબંધ છે.

શુભ કર્મો વિના કોઈની પણ પ્રતિષ્ઠા - સન્માન થઈ શકતું નથી. આથી સર્વ મનુષ્યોએ અધર્મનો ત્યાગ કરીને ધર્મકાર્યોનું સેવન કરવું જોઈએ, જેથી સંસારમાં અવિદ્યારૂપી અંધકારનું નિવારણ થઈને વિદ્યારૂપી સૂર્ય પ્રકાશિત થાય.

બારમાં મંત્રમાં જે યજ્ઞનો ઉપદેશ કરેલ હતો, તેના અનુષ્ઠાનથી સર્વને સન્માન અને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે આ મંત્ર દ્વારા પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે. (૧૩)

एषा तेऽअग्ने समित्तया वर्धस्व चा च प्यायस्व ।

वर्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि ।

अग्ने वाजजिद्वाजं त्वा ससृवांसं वाजजित्सम्मार्ज्मि ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ! તે-આપની જે **एषा-આ સમિત્-સારી** રીતે પદાર્થોના ગુણોને પ્રકાશિત કરનારી વેદવિદ્યા છે, **तया-તે** વિદ્યા દ્વારા અમે કરેલી સ્તુતિને પ્રાપ્ત કરીને આપ નિત્ય **वर्धस्व-અમારા** જ્ઞાનમાં વૃદ્ધિ કરો. **च-એ** અને તે વેદવિદ્યાથી અમારી પણ નિત્ય વૃદ્ધિ કરો.

હે ભગવન્ ! એ રીતે આપના ગુણોને જાણનારા અમે લોકોથી **च-પણ** પ્રકાશિત થઈને આપ **आ प्यायस्व-અમારા** આત્મામાં પણ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરાવો. એ રીતે અમારી પણ વૃદ્ધિ કરો.

હે ભગવન્ ! **अग्ने-વિજ્ઞાન** સ્વરૂપ અને વિજય પ્રદાન કરનાર, **वाजजित्-સર્વના** વેગને જીતનાર પરમેશ્વર ! **वाजम्-જ્ઞાન** સ્વરૂપ, **ससृवांसम्-સર્વને** જાણનાર **त्वा-આપની** **वर्धिषीमहि-સ્તુતિઓથી** વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. **च-અને** આપ કૃપા કરીને અમને પણ સર્વના વેગના વિજેતા, જ્ઞાનવાન - સર્વના મનના જ્ઞાતા કરો, જેમ **वयम्-અમે** **आ + प्यासिषीमहि-આપની** અધિકમાં અધિક સ્તુતિ કરીએ, તેમ આપ પણ અમારાં સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણો અને સુખોની **आप्यायस्व-વૃદ્ધિ** કરો. અમે આપના આશ્રયને પ્રાપ્ત થઈને આપની આજ્ઞાના પાલન દ્વારા **सम्मार्ज्मि-સારી** રીતે શુદ્ધ બનીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે **एषा-આ અગ્ને-ભૌતિક** અગ્નિ છે, **ते-તેને સમિત્-સારી** રીતે પ્રદીપ્ત કરનાર કાષ્ઠાદિ સમૂહ છે. તેથી **तया-એ** અગ્નિની **वर्धस्व-વૃદ્ધિ** અને **आप्यायस्व-પરિપૂર્ણ** પણ થાય છે. અમે **त्वा-તે** **वाजम्-વેગવાન** અને **ससृवांसम्-શિલ્પવિદ્યાના** ગુણોને પ્રાપ્ત કરવા તથા **वाजजितम्-સંગ્રામને** જીતવાના સાધનરૂપ અગ્નિની વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે અધિક **वर्धिषीमहि-વૃદ્ધિ** કરીએ છીએ. **च-અને** **आप्यासिषीमहि-કલાઓમાં** પરિપૂર્ણ પણ કરીએ છીએ. જેથી એ અગ્નિ શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ વિમાનાદિ યાનો દ્વારા વેગયુક્ત, શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા તથા સંગ્રામમાં વિજેતા અમને વિજય-પ્રદાનથી વૃદ્ધિ કરે છે; **त्वा-તેથી** અમે એ અગ્નિનો **सम्मार्ज्मि-સારી** રીતે પ્રયોગ કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં 'વર્ધસ્વ' અને 'પ્યાયસ્વ' તે બે ક્રિયાપદો આદર માટે જાણવાં જોઈએ. જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા ક્રિયા-કોશલમાં ઉન્નતિ કરે છે, તે વિદ્યામાં સર્વને આનંદિત કરીને, દુષ્ટ શત્રુઓને જીતીને, શુદ્ધ બનીને, સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્ય આળસુ મનુષ્ય નહીં.

મંત્રમાં આવેલા ચાર 'ચ' પદોથી એમ જાણવું જોઈએ કે ઈશ્વરની ધર્માનુકૂળ આજ્ઞા સ્થૂલ અને

સૂક્ષ્મ ભેદથી અનેક પ્રકારની છે. તથા ક્રિયાકાંડમાં કર્તવ્ય કર્મ પણ અનેક પ્રકારનાં છે.

તેમાં મંત્રમાં જે વેદવિદ્યાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે, તેથી સુખ પ્રાપ્તિ માટે યજ્ઞનું વિધાન કરેલ છે. આ મંત્રમાં એ વેદવિદ્યા દ્વારા એ રીતે પુરુષાર્થ કરવાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે. (૧૪)

અગ્નીષોમયોરુજ્જિતિમનૂજૈષં વાજસ્ય મા પ્રસવેન પ્રોહામિ । અગ્નીષોમૌ તમપનુદતાં યોઽસ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વયં દ્વિષ્મો વાજસ્યૈનં પ્રસવેનાપોહામિ । ઇન્દ્રાગ્ન્યોરુજ્જિતિમનૂજૈષં વાજસ્ય મા પ્રસવેન પ્રોહામિ । ઇન્દ્રાગ્ની તમપનુદતાં યોઽસ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વયં દ્વિષ્મો વાજસ્યૈનં પ્રસવેનાપોહામિ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હું અગ્નિષોમયો:-પ્રસિદ્ધ ભૌતિક અગ્નિ અને ચંદ્રલોકના ઝજ્જિતિમ્-દુઃખદાયક શત્રુઓને અનુજ્જેષમ્-અનુકમથી જીતું અને વાજસ્ય-યુદ્ધના પ્રસવેન-ઉત્પાદનથી વિજય કરનારને મા-મને પોતાને પ્રોહામિ-સારી રીતે શુદ્ધ તર્કોથી સંયુક્ત કરું.

જે મારાથી સારી રીતે વિદ્યા દ્વારા ક્રિયા - કુશળતામાં સંયુક્ત કરેલ અગ્નીષોમૌ-ઉક્ત અગ્નિ અને ચંદ્રલોક છે, તે ય:-જે અન્યાયકારી દુષ્ટ મનુષ્ય અસ્માન્-ન્યાય કરનારા અમે લોકોથી દ્વેષ્ટિ-શત્રુભાવ રાખે છે. યં ચ-અને જે અન્યાયકારીથી વયમ્-અમે ન્યાયાધીશ લોકો દ્વિષ્મ:-વિરોધ કરીએ છીએ, તમ્-તે શત્રુ અને રોગોને અપનુદતામ્-દૂર કરીએ.

હું એનમ્-એ દુષ્ટ શત્રુને વાજસ્ય-યાન વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત સેનાના સંગ્રામની પ્રસવેન-સારી રીતે પ્રેરણાથી અપોહામિ-દૂર કરું છું.

હું ઇન્દ્રાગ્ન્યો:-વાયુ અને વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિની ઝજ્જિતિમ્-વિદ્યાથી સારી રીતે ઉત્કર્ષને અનુજ્જેષમ્-અનુકમથી પ્રાપ્ત કરું.

હું વાજસ્ય-જ્ઞાનની પ્રેરણા દ્વારા વેગની પ્રાપ્તિના પ્રસવેન-ઐશ્વર્યના માટે ઉત્પન્ન કરીને વાયુ અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણનાર મામ્-હું પોતે નિત્ય પ્રોહામિ-સારી રીતે તર્કો દ્વારા સુખોને પ્રાપ્ત કરું.

મારા દ્વારા ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરેલ ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને વિદ્યુત્ અગ્નિ છે, તે ય:-જે મૂર્ખ મનુષ્ય અસ્માન્-અમે વિદ્વાનોનો દ્વેષ્ટિ-અપ્રીતિથી વર્તે છે; ચ-અને યમ્-જે મૂર્ખથી વયમ્-અમે વિદ્વાનો દ્વિષ્મ:-અપ્રીતિ કરીએ છીએ; તમ્-તે વેર કરનાર મૂઢ મનુષ્યને અપનુદતામ્-દૂર કરીએ.

હું પણ એનમ્-એને વાજસ્ય-વિજ્ઞાનના પ્રસવેન-પ્રકાશ દ્વારા અપોહામિ-શ્રેષ્ઠતમ શિક્ષા આપીને શુદ્ધ કરું છું. (૧૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ આ સંસારમાં વિદ્યા અને યુક્તિથી અગ્નિ અને જલના મેળથી, કલા - કૌશલથી વેગ આદિ ગુણોના પ્રકાશથી તથા વાયુ અને વિદ્યુત્ની વિદ્યાથી

સંપૂર્ણ દરિદ્રતાનો નાશ અને શત્રુઓ પર વિજયની સાથે સુશિક્ષાથી મનુષ્યોની મૂર્ખતાને દૂર કરીને, વિદ્વતાને પ્રાપ્ત કરાવીને વિવિધ સુખોને સ્વયં પ્રાપ્ત કરે તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવે.

આ રીતે સમસ્ત પદાર્થ વિદ્યાઓને જગતમાં પ્રકાશિત કરે. પૂર્વ મંત્ર દ્વારા જે કાર્ય પ્રકાશિત કરેલ તેની આ મંત્ર દ્વારા પુષ્ટિ કરવામાં આવી છે. (૧૫)

વસુભ્યસ્ત્વા રુદ્રેભ્યસ્ત્વાદિત્યેભ્યસ્ત્વા સંજાનાથાં દ્યાવાપૃથિવી મિત્રાવરુણૌ ત્વા વૃષ્ટ્યાવતામ્ । વ્યન્તુ વયોક્તરિહાણા મરુતાં પૃષતીર્ગચ્છ વશા પૃષ્નિર્ભૂત્વા દિવં ગચ્છ તતો નો વૃષ્ટિમાવહ । ચક્ષુષ્ણાઽઅગ્નેઽસિ ચક્ષુર્મે પાહિ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : અમે વસુભ્યઃ-અગ્નિ આદિ આઠ વસુઓથી ત્વા-તે યજ્ઞને તથા સ્ત્રેભ્યઃ-અગિયાર રુદ્રોથી ત્વા-તે યજ્ઞને અને આદિત્યેભ્યઃ-બાર મહિનાઓથી ત્વા-તે ક્રિયા સમૂહને નિત્ય ઉત્તમ તર્કોથી જાણીએ, તથા યજ્ઞ દ્વારા એ દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્યપ્રકાશ અને ભૂમિ સંજાનાથામ્-તેનાથી ઉત્પન્ન થનારી શિલ્પ વિદ્યા, સિદ્ધ કરનાર છીએ.

મિત્રાવરુણૌ-જે મિત્ર અર્થાત્ બાહ્ય પ્રાણવાયુ અને વરુણ અર્થાત્ આંતરિક ઉદાનવાયુ જે શરીરમાં રહેનાર છે તે વૃષ્ટ્યા-શુદ્ધ જળની વર્ષાથી ત્વા-દ્યાવા પૃથિવીમાં સ્થિત સંસારની અવતામ્-રક્ષા કરે છે.

વયઃ-જેમ પક્ષી પોતાના માળા બાંધે છે અને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તે [ગાયત્રી વગેરે] છંદો દ્વારા રિહાણાઃ-ઈશ્વરપૂજક અમે લોકો ત્વા-તે છંદો દ્વારા યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીએ છીએ.

જે યજ્ઞમાં આપેલી આહુતિ પૃષ્નિઃ-અંતરિક્ષમાં સ્થિર વશા-શોભાયમાન ભૂત્વા-થઈને મસ્તામ્-વાયુના સંગથી દિવમ્-સૂર્યના પ્રકાશને ગચ્છ-પ્રાપ્ત થાય છે.

તે તતઃ-ત્યાંથી નઃ-અમારા સુખ માટે વૃષ્ટિમ્-વર્ષાને આવહ-સારી રીતે વરસાવે છે. તે વર્ષાનું જલ પૃષતીઃ-નદી-નાળાને પ્રાપ્ત થાય છે.

જેથી એ ભૌતિક અગ્નિ ચક્ષુષ્ણાઃ-નેત્રોનો રક્ષક અસિ-છે, તેથી મે-અમારાં ચક્ષુઃ-બાહ્ય અને આંતરિક ચક્ષુ વિજ્ઞાનની પાહિ-રક્ષા કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : 'પ્રોહામિ' તથા 'અપોહામિ' તે બે પદોની અનુવૃત્તિ છે.

મનુષ્યો અગ્નિમાં જે આહુતિ આપે છે, તે વાયુના સંયોગથી મેઘમંડલમાં જઈને, સૂર્યથી ખેંચેલા જલને શુદ્ધ કરીને, ફરી ત્યાંથી પૃથિવી પર આવીને ઔષધિઓની પુષ્ટિ કરે છે. તે આહુતિઓ વેદમંત્રો દ્વારા જ આપવી જોઈએ. જેથી તેના ફળ-જ્ઞાનમાં નિત્ય શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી રહે.

એ અગ્નિ સૂર્યરૂપ થઈને સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેથી જોવાના વ્યવહારની રક્ષા થાય છે. એ વસુ વગેરેથી વિદ્યારૂપ ઉપકાર શ્રવણ કરીને, દુષ્ટ ગુણ તથા દુષ્ટ પ્રાણીઓનું નિત્ય નિવારણ કરવું જોઈએ. એ જ સર્વની પૂજા અને સત્કાર છે. પૂર્વ મંત્રમાં કહે છે તે જ આ મંત્રમાં વિશેષરૂપે પ્રકાશિત કરેલ છે. (૧૬)

य परिधिं पर्यधत्थाऽग्ने देवपणिभिर्गुह्यमानः । तं तंऽएतमनु जोषं भराम्येष
भेत्त्वदपचेतयाताऽअग्नेः प्रियं पाथोऽपीतम् ॥ १७ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વત્ર વ્યાપક ઈશ્વર ! આપ દેવપણિભિઃ-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનોની સ્તુતિઓથી ગુહ્યમાનઃ-સારી રીતે આપના ગુણોના વર્ણનને પ્રાપ્ત થઈને યમ્-તે ગુણોને અનુકૂળ જોષમ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરવા યોગ્ય પરિધિમ્-પ્રભુતાને પર્યધત્થાઃ-નિરંતર ધારણ કરો છો. તમ્-આપની પ્રભુતાને ઇત્-જ એષઃ-હું અનુભરામિ-પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હું ત્વત્-આપનાથી મા-અપચેતયાતૈ-કદી પ્રતિકૂળ ન બનું. અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપની સૃષ્ટિમાં મેં જે પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક પાથઃ-શરીરની રક્ષા કરનાર અન્ન અપીતમ્-ગ્રહણ કરેલ છે, તેનાથી પણ કદી મા-અપચેતયાતૈ-પ્રતિકૂળ ન બનું.

દ્વિતીય અર્થ : હે જગદીશ્વર ! તે-આપની સૃષ્ટિમાં એષઃ-જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ અને દેવપણિભિઃ-દિવ્યગુણયુક્ત પૃથિવી વગેરે પદાર્થો ગુહ્યમાનઃ-સારી રીતે સ્વીકાર કરેલ યમ્-જે પરિધિમ્-વિદ્યાદિ ગુણો અને જોષમ્-પ્રીતિપૂર્વક યોગ્ય કર્મને પર્યધત્થાઃ-સર્વ પ્રકારથી ધારણ કરે છે, તમિત્-તેને હું અનુભરામિ-તેની પશ્ચાત્ સ્વીકાર કરું છું. અને તેથી કદી પણ મા-અપચેતયાતૈ-પ્રતિકૂળ બનતો નથી.

મેં જે અગ્નેઃ-એ અગ્નિના સંબંધથી પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક અને પાથઃ-શરીરની રક્ષા કરનાર અન્ન અપીતમ્-ગ્રહણ કરેલ છે, તેને હું જોષમ્-અત્યંત પ્રીતિપૂર્વક નિત્ય અનુભરામિ-કમથી પ્રાપ્ત કરું છું. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પ્રત્યેક પદાર્થોમાં વ્યાપક રહીને તેને ધારણ કરનાર, વિદ્વાનો દ્વારા સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર છે, તેની નિત્ય પ્રીતિપૂર્વક ઉપાસના કરવી જોઈએ, જેથી તેની આજ્ઞા પાલન કરવાથી પ્રિય સુખ પ્રાપ્ત થાય છે.

ઈશ્વરે પ્રકાશ, દાહ તથા વેગ વગેરે ગુણોથી યુક્ત મૂર્તિમાન દ્રવ્યોમાં વ્યાપક અગ્નિ રચેલ છે. મનુષ્ય તેનો કલા-કૌશલ વગેરેમાં પ્રયોગ કરીને મનુષ્યોએ અગ્નિથી સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ, જેથી સર્વ સુખ સિદ્ધ - પ્રાપ્ત થાય.

પૂર્વ મંત્રમાં જે અગ્નિને વર્ષાદિનો સાધક કહેલ છે, તે અગ્નિની આ મંત્રમાં વ્યાપકતા બતાવેલ છે. આ [બંને મંત્રો]માં સંગતિ છે. (૧૭)

सुश्रवभागा स्थेषा बृहन्तः प्रस्तरेष्ठाः परिधेयाश्च देवाः । इमां वाचमभि
विश्वे गृणन्तऽआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वंस्वाहा वाट् ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે બૃહન્તઃ-સ્વયં વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થનાર, પ્રસ્તરેષ્ઠાઃ-શ્રેષ્ઠ ન્યાય વિદ્યારૂપી આસનમાં સ્થિર થનાર, પરિધેયાઃ સર્વ પ્રકારની ધારણા બુદ્ધિયુક્ત, ચ-અને ઇમામ્-આ પ્રત્યક્ષ વાચમ્-ચારે વેદોની વાણીનો ઉપદેશ કરનારા દેવાઃ-વિદ્વાનો ! તમે ઇષા-પોતાના જ્ઞાનથી સંસ્ત્રવભાગાઃ-ઘૃત આદિ પદાર્થો ડોમ કરનાર સ્થ-બનો.

સ્વાહા-સારાં - મધુર વચનોથી વાટ્-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર ક્રિયાને પ્રાપ્ત થઈને અસ્મિન્-પ્રત્યક્ષ

બર્હિષિ-જ્ઞાન અને કર્મકાંડમાં માદયધ્વમ્-આનંદિત બનો, તેમજ અન્યને પણ આનંદિત કરો.

એ જ રીતે ઉક્ત જ્ઞાનને કર્મકાંડમાં ઉક્ત વાણીની પ્રશંસા કરતાં તમે પોતાના વિચારથી ઉત્તમ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થનારી ક્રિયાને પ્રાપ્ત થઈને **બૃહન્તઃ**-વૃદ્ધિ અને **પ્રસ્તરેષ્ટાઃ**-ઉત્તમ કાર્યોમાં સ્થિત થનાર **વિશ્વે**-સર્વ **દેવાઃ**-શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થ **પરિધેયાઃ**-ધારણ કરો તથા અન્યોને ધારણ કરાવો અને તેની સહાયતાથી ઉક્ત જ્ઞાન અને કર્મકાંડમાં સદા **માદયધ્વમ્**-આનંદ પામો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - જે ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી મનુષ્ય વેદવિદ્યાના પ્રચારમાં તથા શ્રેષ્ઠ વ્યવહારમાં નિત્ય પ્રવૃત્ત રહે છે, તેને જ મહાન સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. પૂર્વમંત્રમાં જે અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિરૂપ બે અર્થ કહેલ છે, તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરવાનું આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૧૮)

**ઘૃતાચી' સ્થો ધુર્યો' પાતઃ સુમ્ને સ્થઃ સુમ્ને મા ધત્તમ્ । યજ્ઞ નમશ્ચ ત્ડડપ્
ચ યજ્ઞસ્ય શિવે સન્તિષ્ઠસ્વ સ્વિષ્ટે મે સન્તિષ્ઠસ્વ ॥ ૧૯ ॥**

પદાર્થ : જે અગ્નિ અને વાયુ ધુર્યો-યજ્ઞના મુખ્ય અંગને પ્રાપ્ત કરાવનાર **ચ**-અને **સુમ્ને**-સુખરૂપ **સ્થ**-છે તથા **ઘૃતાચી**-જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયા કરાવનાર **સ્થઃ**-છે, જે સર્વ જગતનું **પાતમ્**-પાલન કરે છે, તે મારાથી સારી રીતે ઉત્તમ ક્રિયા - કુશળતાથી યુક્ત થઈ **મા**-મને - યજ્ઞ કરનારને **સુમ્ને**-સુખમાં **ધત્તમ્**-સ્થાપન કરે છે.

જેમ આ **યજ્ઞ**-જગદીશ્વર **ચ**-તથા **નમઃ**-નમ્રતા એ બંને તે-તારા **શિવે**-કલ્યાણ માટે **ઉપસંતિષ્ઠસ્વ**-સમીપ - પાસે રહે છે, તેમજ **મે**-મારી પાસે પણ રહે છે. આથી જેમ હું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને **સુમ્ને**-સુખને પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ તેમાં **સંતિષ્ઠસ્વ**-સ્થાન પામો. (૧૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે એ રસનું છોદન અને ધારણ કરનાર, સંસારના પાલક, સુખદાયક, ક્રિયાકાંડના કારણભૂત, ઉપર તથા તિરછી ગતિ કરનાર અગ્નિ અને વાયુના કાર્યને સિદ્ધ કરીને, સ્થિર સુખને પ્રાપ્ત કરો.

મારી આજ્ઞાનું પાલન અને મને સદા નમસ્કાર કરો. પૂર્વ મંત્રમાં વર્ણિત ઉપકારોથી પરમ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૧૯)

**અગ્નેઽદબ્ધ્યાયોઽશીતમ પાહિ મા દિદ્યોઃ પાહિ પ્રસિત્યૈ પાહિ દુરિષ્ટ્યૈ પાહિ
દુરંદમન્યાઽઅવિષં નઃ પિતું કૃણુ સુષદા યોનો સ્વાહા વાડગ્નયૈ સંવેશપતયે સ્વાહા
સરસ્વત્યૈ યશોભગિન્યૈ સ્વાહા ॥ ૨૦ ॥**

પદાર્થ : હે અદબ્ધ્યાયો-નિર્વિદ્ધન આયુ આપનાર અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ અશીતમમ્-ચરાચર જગતમાં વ્યાપક યજ્ઞને **દુરિષ્ટ્યૈ**-દુષ્ટ અર્થાત્ વેદવિરુદ્ધ યજ્ઞથી **પાહિ**-રક્ષા કરો, **મા**-મને **દિદ્યોઃ**-અતિ દુઃખથી **પાહિ**-રક્ષા કરો. **પ્રસિત્યૈ**-ભારે બંધનોથી **પાહિ**-રક્ષા કરો અને **દુરંદમન્યૈ**-દુષ્ટ ભોજનથી **પાહિ**-રક્ષા કરો.

ન:-અમારા માટે અવિષમ્-વિષાદિ દોષરહિત પિતુમ્-અન્ન વગેરે પદાર્થો કૃણુ-ઉત્પન્ન કરો.

ન:-અમને સુષદા-સુખથી સ્થિરતા આપનાર ઘરમાં સ્વાહા-વાદ્-વેદોક્ત વાક્યોથી સિદ્ધ થનારી શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓમાં સ્થિર કૃણુ-કરો, જેથી અમે યશોભગિન્યૈ-યશ, સત્ય વચન વગેરે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું સેવન કરનારી સરસ્વત્યૈ-પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનારી શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત વેદવાણી માટે સ્વાહા-ધન્યવાદ તથા સંવેશપતયે-સારી રીતે જે પૃથિવી વગેરે લોકોમાં પ્રવેશ કરે છે તેના આપ પતિ અર્થાત્ પાલનહાર છો, અગ્નયે-આપ છો તે માટે સ્વાહા-ધન્યવાદ અને નમ:-નમસ્કાર કરીએ છીએ. (૨૦)

દ્વિતીય અર્થ : હે ભગવન્ જગદીશ્વર ! જે આપે આ અદબ્ધાયો-નિર્વિદ્ન આયુ આપનાર અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ રચેલ છે, તે પણ અણીતમમ્-સર્વત્ર વ્યાપક યજ્ઞની દુષ્ટિચૈ-દુષ્ટ યજ્ઞથી પાહિ-રક્ષા કરે છે. તે મા-મારી દિદ્યો:-અતિ દુઃખોથી પાહિ-રક્ષા કરે છે. પ્રસિત્યૈ-ભારે દારિદ્ર બંધનોથી પાહિ-રક્ષા કરે છે. તથા દુરદ્મન્યૈ-દુષ્ટ ભોજન કરવાની ક્રિયાઓથી પાહિ-રક્ષા કરે છે.

ન:-અમારા પિતુમ્-અન્ન વગેરે પદાર્થો અવિષમ્-વિષાદિ દોષરહિત કૃણુ-કરી દે છે, તે સુષદા-સુખદાયક ઘર અથવા જન્માન્તરમાં સ્વાહા જેને અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ; વાદ્-જે યજ્ઞાદિ શુભ કર્મોનું કારણ છે. અમે તે સંવેશપતયે-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોનું પાલન કરનાર અગ્નયે-ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને સ્વાહા-હોમ તથા સાથે યશોભગિન્યૈ-સરસ્વત્યૈ-ઉક્ત ગુણયુક્ત વેદવાણીની પ્રાપ્તિ માટે સ્વાહા-પરમાત્માનો ધન્યવાદ કરીએ છીએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વ પ્રકારનાં દુઃખોથી રક્ષા કરનાર, ઉત્તમ જન્મના કારણભૂત શુભ કર્મો [કરવાનો] ઉપદેશ કરનાર તથા ઉત્તમ ભોગોના દાતા જગદીશ્વર છે, તેની સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ.

તે ઈશ્વરે સૃષ્ટિમાં સૂર્ય, વીજળી તથા પ્રત્યક્ષરૂપમાં જે અગ્નિ પ્રકાશિત કરેલ છે, તેનો પણ ઉત્તમ રીતે વિદ્યાપૂર્વક ઉપકાર-કાર્યોમાં પ્રયોગ કરવાથી સર્વ પ્રકારની રક્ષા અને ઉત્તમ ભોગોનું કારણ બને છે.

જે કીર્તિની કારણભૂત, સત્ય લક્ષણોથી યુક્ત વેદરૂપી વાણી - વિદ્યા દ્વારા ઉત્તમ જન્મોની પ્રાપ્તિ અને સર્વ પદાર્થોથી શ્રેષ્ઠ વિદ્યા પ્રકાશિત થાય છે, તે સદા સ્વયં સ્વીકાર કરવા યોગ્ય તથા અન્યોથી પણ સ્વીકાર કરાવવા યોગ્ય છે.

આ મંત્રમાં 'નમ:' અને 'યજ્ઞ' એ બે પદો પૂર્વ મંત્રથી ગ્રહણ કરેલ છે. પૂર્વ મંત્રમાં કહેલ મનુષ્યો દ્વારા અનુષ્ઠાન કરેલ કર્મોનું ફળ આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૨૦)

વેદોઽસિ યેન ત્વં દૈવ વેદ દેવેભ્યો વેદોઽભવસ્તેન મહાં વેદો ભૂયાઃ । દેવા ગાતુવિદો ગાતું વિત્ત્વા ગાતુમિત । મનસસ્પતઽદ્મં દૈવ યજ્ઞંઽસ્વાહા વાતે ધાઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-શુભગુણોના દાતા જગદીશ્વર ! ત્વમ્-આપ વેદ:-ચરાચર જગતના જ્ઞાતા અસિ-છો. સર્વ જગતને વેદ-જાણો છો, તથા યેન-જે વિજ્ઞાન અથવા વેદથી દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો માટે વેદ:-પદાર્થોને જણાવનાર અભવ:-બનો છો, તેન-તે વિજ્ઞાનના પ્રકાશથી આપ મહામ્-મારા માટે જે હું વિશેષ જ્ઞાનની ઈચ્છા રાખું છું વેદ:-વિજ્ઞાન આપનાર ભૂયાઃ-બનો.

હે ગાતુવિદ:-સ્તુતિ જ્ઞાતા દેવા:-વિદ્વાનો ! જે વેદોથી મનુષ્યો સર્વ વિદ્યા જાણે છે, તેના દ્વારા તમે

ગાતુમ્-વિશેષ જ્ઞાનને વિત્ત્વા-પ્રાપ્ત થઈને ગાતુમ્-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય વેદને ઇત-પ્રાપ્ત થાઓ. મનસસ્પતે-વિજ્ઞાનના પાલક દેવ-સર્વ જગત્ પ્રકાશક પરમેશ્વર, આપ ઇમમ્-પ્રત્યક્ષ અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય યજ્ઞમ્-ક્રિયાકાંડથી સિદ્ધ થનાર, યજ્ઞરૂપ સંસારની સ્વાહા-ક્રિયાને અનુકૂળ વાતે-પવન વચ્ચે ધા:-સ્થિર કરો.

હે વિદ્વાનો ! એ વિજ્ઞાનથી વિશેષ જ્ઞાન આપનારા પરમેશ્વરની જ નિત્ય ઉપાસના કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે જે સર્વજ્ઞ ઈશ્વરે વેદવિદ્યા પ્રકાશિત કરી છે, તેને ઉપાસના યોગ્ય જાણીને, કર્મકાંડનું અનુષ્ઠાન કરીને સર્વનું કલ્યાણ કરો.

કારણ કે વેદના વિશેષ જ્ઞાન અને વેદોક્ત વિધાન અનુસાર આચરણ કર્યા વિના મનુષ્યોને કદી પણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી.

વેદવિદ્યા દ્વારા સર્વના સાક્ષી - દેષ્ટા ઈશ્વર દેવને સર્વવ્યાપક માનીને જ તમે નિત્ય ધર્મના આચરણકર્તા બની શકો છો. (૨૧)

સં બૃહિરંદ્રક્તાઃ હૃવિષાઃ ઘૃતેનુ સમાદિત્યૈર્વસુભિઃ સમ્મરુદ્ધિઃ ।

સમિન્દ્રો વિશ્વદેવેભિરંદ્રક્તાં દિવ્યં નભો ગચ્છતુ યત્ સ્વાહા ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યત્-હવન કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો હૃવિષા-હોમ કરવા યોગ્ય ઘૃતેન-ઘી વગેરે સુગંધીયુક્ત પદાર્થોથી સંયુક્ત કરીને હવન કરશો, ત્યારે તે આદિત્યૈઃ-બાર મહિના વસુભિઃ-અગ્નિ વગેરે આઠ નિવાસસ્થાન અને મસંદ્ધિઃ-પ્રજાજનો સાથે મળીને સુખનો સમ્ અંકતામ્-સારી રીતે પ્રકાશ કરશે.

ઇન્દ્રઃ-સૂર્યલોક જે યજ્ઞમાં નાખેલ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી સુગંધી વગેરે પદાર્થોયુક્ત હવિ સંગચ્છતુ-પહોંચાડે છે, તેથી સમ્-સારી રીતે મિશ્રિત થયેલ વિશ્વદેવેભિઃ-પોતાનાં કિરણોથી દિવ્યમ્-જે તેના પ્રકાશમાં એકત્ર થનાર નભઃ-જલને સમ્ અંકતામ્-સારી રીતે પ્રકટ કરે છે. (૨૨)

ભાવાર્થ : યજ્ઞમાં શુદ્ધ કરેલ જે હવિ અગ્નિમાં હોમવામાં આવે છે, તે અન્તરિક્ષમાં વાયુ, જલ અને સૂર્યનાં કિરણોની સાથે મળીને ચોતરફ ફેલાઈને આકાશમાં રહેલ સર્વ પદાર્થોને દિવ્ય ગુણયુક્ત બનાવીને પ્રજાને નિરંતર સુખ આપે છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ઉત્તમ સામગ્રી તથા શ્રેષ્ઠ સાધનો દ્વારા ત્રિવિધ યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨૨)

કસ્ત્વા વિમુઞ્ચતિ સ ત્વા વિમુઞ્ચતિ કસ્મૈ ત્વા વિમુઞ્ચતિ તસ્મૈ ત્વા વિમુઞ્ચતિ ।

પોષાય રક્ષાસાં ભાગોસિ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : કઃ-કોણ સુખ આપનાર યજ્ઞમાન મનુષ્ય ત્વા-યજ્ઞનો વિમુઞ્ચતિ-ત્યાગ કરે છે ? કોઈ નહિ. જે યજ્ઞનો ત્યાગ કરે છે, ત્વા-તેનો સઃ-યજ્ઞનું પાલન કરાવનાર - યજ્ઞસ્વરૂપ પરમેશ્વર પણ વિમુઞ્ચતિ-ત્યાગ કરે છે.

જે યજ્ઞ કરનાર મનુષ્ય યજ્ઞદ્રવ્યોને યજ્ઞમાં નાખે છે, ત્વા-તે કસ્મૈ-શા માટે અગ્નિમાં વિમુઞ્ચતિ-નાખે છે તસ્મૈ-જેથી સર્વને સુખ પ્રાપ્ત થાય તથા પોષાય-પુષ્ટિ વગેરે ગુણો માટે ત્વા-તે પદાર્થોને વિમુઞ્ચતિ-

નાખે છે. જે પદાર્થો સર્વના ઉપકાર માટે યજ્ઞમાં સંયુક્ત કરવામાં આવતા નથી, તે રક્ષસામ્-દુષ્ટ પ્રાણીઓના ભાગ:-અંશ અસિ-બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વર દ્વારા વેદના માધ્યમથી આપેલ આજ્ઞાના વ્યવહારનો ત્યાગ કરે છે, તે સર્વ સુખોથી હીન બનીને, દુષ્ટોથી પીડિત થઈને સદા દુઃખી થાય છે.

કોઈએ પૂછ્યું કે - જે યજ્ઞનો ત્યાગ કરે છે, તેનું શું થાય છે ? ઉત્તર મળ્યો - ઈશ્વર પણ તેનો ત્યાગ કરે છે.

તેણે ફરી પૂછ્યું - કયા પ્રયોજન માટે તેનો ત્યાગ કરે છે ? ઉત્તર - દુઃખ ભોગવવા માટે.

જે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તે સુખોથી યુક્ત - પુષ્ટ રહે છે; અને જે તેની આજ્ઞાનો ત્યાગ કરે છે, તે રાક્ષસ કહેવાય છે. (૨૩)

સં વર્ચસા પર્યસા સન્તનૂભિરગન્મહિ મનસા સશિવેન ।

ત્વષ્ટા સુદત્રો વિદધાતુ રાયોઽનુમાર્ષ્ટુ તન્વો યદ્વિલિષ્ટમ્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : અમે પુરુષાર્થી બનીને વર્ચસા-જેમાં સર્વ પદાર્થો પ્રકાશિત બને છે, તે વેદાધ્યયનથી પર્યસા-જેનાથી સર્વ પદાર્થો જાણી શકાય છે, તે જ્ઞાનથી મનસા-જેનાથી સર્વ વ્યવહાર વિચારી શકાય છે, તે અન્તઃકરણથી શિવેન-સર્વ સુખ અને તનૂભિઃ-જેમાં વિપુલ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે શરીરોની સાથે રાયઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ ધન સમગન્મહિ-પ્રાપ્ત કરીએ. સુદત્રઃ-સારી રીતે સુખ આપનાર, ત્વષ્ટા-સર્વ દુઃખોને તથા પ્રલયકાલમાં સર્વ પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનાર ઈશ્વર કૃપા કરીને અમારા માટે રાયઃ-વિદ્યાદિ પદાર્થોને સંવિદધાતુ-સારી રીતે સંયુક્ત રાખે. અમારા તન્વઃ-શરીરની યત્-જેટલી વિલિષ્ટમ્-વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરવાની પરિપૂર્ણતા છે, તેને સમ્ અનુમાર્ષ્ટુ-સારી રીતે નિરંતર શુદ્ધ કરે. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ કામનાઓને પૂર્ણ કરનાર ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા વિદ્યા-અધ્યયન, વિજ્ઞાન, શરીરબળ, મનની શુદ્ધિ, કલ્યાણની પ્રાપ્તિ અને સર્વોત્તમ લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ હંમેશાં કરવી જોઈએ. તથા સર્વ વ્યવહાર અને પદાર્થોને નિત્ય શુદ્ધ રાખવા જોઈએ. (૨૪)

દિવિ વિષ્ણુર્વ્યક્રંઽસ્ત જાગતેન ચ્છન્દસા તતો નિર્ભક્તો યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ યં
ચ વયં દ્વિષ્મોઽન્તરિક્ષે વિષ્ણુર્વ્યક્રંઽસ્ત ત્રૈષ્ટુભેન ચ્છન્દસા તતો નિર્ભક્તો યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ
યં ચ વયં દ્વિષ્મઃ । પૃથિવ્યાં વિષ્ણુર્વ્યક્રંઽસ્ત ગાયત્રેણ ચ્છન્દસા તતો નિર્ભક્તો
યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ યં ચ વયં દ્વિષ્મોઽસ્માદન્નાદસ્યૈ પ્રતિષ્ઠાયાઽઅર્ગન્મ સ્વુઃ સં જ્યોતિષાભૂમ ॥

૨૫ ॥

પદાર્થ : જાગતેન-સર્વને સુખદાતા, ચ્છન્દસઃ-આહ્વાદકારક જગતી ઇંદ્ર અને અનુષ્ઠાન કરેલ આ વિષ્ણુઃ-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત પદાર્થોમાં વ્યાપક યજ્ઞ દિવિ-સૂર્ય પ્રકાશમાં વ્યક્રં સ્ત-જાય છે, પછી તતઃ-ત્યાંથી નિર્ભક્તઃ-વિભાગ અર્થાત્ પરમાણુરૂપ બનીને સર્વ જગતને તૃપ્ત કરે છે. યઃ-જે વિરોધી શત્રુ

અસ્માન્-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનારા અમારા લોકોનો દ્વેષ્ટિ-વિરોધ કરે છે; ચ-તથા યમ્-દંડ આપીને શિક્ષા કરવા યોગ્ય જે દુષ્ટ પ્રાણીથી વયમ્-અમે યજ્ઞના અનુષ્ઠાન કરનારાઓ દ્વિષ્મ:-અપ્રીતિ - વિરોધ કરીએ છીએ અને તેને યજ્ઞથી દૂર કરીએ છીએ.

અમે જે વિષ્ણુ:-યજ્ઞને ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રણ પ્રકારથી કરનાર અને છન્દસા-સ્વતંત્રતા આપનાર ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી અગ્નિમાં સારી રીતે સંયુક્ત કરેલ છે તે અન્તરિક્ષે-આકાશમાં વ્યક્રંસ્ત-પહોંચીને ત્યાંથી ફરી તત:-તે અન્તરિક્ષથી નિર્ભક્ત:-પૃથક્ થઈને વાયુ અને વર્ષા જલની શુદ્ધિ દ્વારા સર્વ સંસારને સુખી કરે છે. ય:-જે દુઃખ આપનાર પ્રાણી અસ્માન્-સર્વના ઉપકારક અમોને દ્વેષ્ટિ-દુઃખ આપે છે ચ-તથા યમ્-સર્વના અહિત કરનારા દુષ્ટોને વયમ્-અમે સર્વના હિતકારી અમોને દ્વિષ્મ:-પીડા આપે છે તેને એ યજ્ઞથી દૂર કરીએ છીએ.

અમારા દ્વારા જે વિષ્ણુ:-યજ્ઞ ગાયત્રેણ-સંસારની રક્ષા કરનાર અને છન્દસા-અતિ આનંદદાયક ગાયત્રી છંદથી નિરંતર કરવામાં આવે છે, તે પૃથિવ્યામ્-વિશાળ પૃથિવીમાં વ્યક્રંસ્ત-વિવિધ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે ફેલાય છે. તત:-તે પૃથિવીથી નિર્ભક્ત:-પૃથક્ થઈને અન્તરિક્ષમાં જઈને પૃથિવીના પદાર્થોની પુષ્ટિ કરે છે. ય:-જે પુરુષ અમારા રાજ્યના વિરોધી અસ્માન્-અમે ન્યાય કરનાર છીએ તેનાથી દ્વેષ્ટિ-વેર કરે છે; ચ-તથા યમ્-જે શત્રુથી વયમ્-અમે ન્યાયાધીશ દ્વિષ્મ:-વેર કરે છે તેને એ યજ્ઞથી રોકીએ છીએ.

અમે અસ્માત્-એ યજ્ઞથી પ્રત્યક્ષ શુદ્ધ કરેલ અન્નાત્-ભોજન કરવા યોગ્ય અન્નથી સ્વ:-સુખરૂપી સ્વર્ગને અગન્મ-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ.

અસ્ત્યૈ-એ પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત થનારી પ્રતિષ્ઠાયૈ-પ્રતિષ્ઠા અર્થાત્ સન્માન માટે જ્યોતિષા-વિદ્યા અને ધર્મનો પ્રકાશ કરનાર પરમેશ્વરની સાથે સમભૂમ-સદા સંયુક્ત રહે. (૨૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય દ્વારા જેટલાં સુગંધી વગેરે ગુણયુક્ત દ્રવ્યો અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, તે સૂક્ષ્મ થઈને સૂર્ય-પ્રકાશ, આકાશ અને ભૂમિમાં વિચરણ કરીને સર્વ સુખોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે વાયુ, અગ્નિ, જલ, પૃથિવી વગેરે પદાર્થો, શિલ્પ વિદ્યાથી સિદ્ધ કલાયન્ત્રો દ્વારા વિમાન વગેરે યાનોમાં પ્રયુક્ત કરવામાં આવે છે, તે સૂર્યપ્રકાશ અને અંતરિક્ષમાં સર્વ પ્રાણીઓને સુખપૂર્વક વિહાર કરાવે છે.

જે દ્રવ્યો સૂર્ય કિરણો અને અગ્નિ દ્વારા સૂક્ષ્મ બનીને અન્તરિક્ષમાં અને ત્યાર પછી પૃથિવી પર આવીને, ફરી ભૂમિ પરથી ઉપર જઈને ફરી ત્યાંથી આવે છે.

આ રીતે મનુષ્યોએ વારંવાર પુરુષાર્થ દ્વારા દોષો, દુઃખો અને શત્રુઓનું સારી રીતે નિવારણ કરીને સ્વયં સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ તથા અન્યોને કરાવવો જોઈએ.

યજ્ઞ દ્વારા શુદ્ધ કરેલ વાયુ, જલ, ઔષધિ અને અન્ન દ્વારા આરોગ્ય, બુદ્ધિ અને શારીરિક બળની વૃદ્ધિ કરીને, મહાન સુખ પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યાના પ્રકાશથી નિત્ય પ્રતિષ્ઠા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨૫)

સ્વયંભૂરસિ શ્રેષ્ઠો રશ્મિર્વર્ચોદાઽસિ વર્ચોમે દેહિ । સૂર્યસ્યાવૃતમન્વાવર્તે ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન ! આપ શ્રેષ્ઠ:-અત્યંત પ્રશંસનીય, રશ્મિ:-પ્રકાશક તથા પ્રકાશમાન સ્વયંભૂ:- સ્વયંભૂ, અનાદિ સ્વરૂપ અસિ-છો. તથા વર્ચ્વોદા-વિદ્યા દાતા અસિ-છો. તેથી આપ મે-મને વર્ચ્વ:-વિજ્ઞાન અને પ્રકાશ દેહિ-આપો. સૂર્યસ્ય-આપ ચરાચર જગતના આત્મા છો, તેમાં આવૃતમ્-નિરંતર સજ્જન લોકો વર્તમાન રહે છે. હું તે ઉપદેશનો અન્વાવર્તે સ્વીકાર કરું છું. (૨૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરનાં તથા જ્ઞાનવાન - ચેતન જીવનાં કોઈ માતા-પિતા નથી. પરંતુ તે પરમેશ્વર જ સર્વના માતા-પિતા છે. એથી ઉત્તમ પ્રકાશનું કારણ તથા વિદ્યા પ્રદાન કરનાર અન્ય કોઈ નથી. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને વિદ્વાનની આજ્ઞામાં વર્તવું જોઈએ. (૨૬)

અગ્ને' ગૃહપતે સુગૃહપતિસ્ત્વયા'ઽગ્ને'ઽહં ગૃહપતિના ભૂયાસઃ સુગૃહપતિસ્ત્વં મયા'ઽગ્ને ગૃહપતિના ભૂયાઃ । અસ્થૂરિ ણૌ ગાર્હપત્યાનિ સન્તુ શ્તઃ હિમાઃ સૂર્ય'સ્યાવૃતમન્વાવર્તે ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહપતે-ઘરનું પાલન કરનાર અગ્ને-પરમેશ્વર તથા વિદ્વાન ત્વમ્-આપ સુગૃહપતિ:-બ્રહ્માંડ, શરીર અને નિવાસનાં ઘરોના શ્રેષ્ઠ પાલનહાર અસિ-છો, તે ગૃહપતિના-શ્રેષ્ઠ ગુણવાન ત્વયા-આપની સાથે અહમ્-હું સુગૃહપતિ:-મારું પોતાનું ઘર સારી રીતે ચલાવનાર ભૂયાસમ્-બનું.

હે પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન મયા-હું શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર ગૃહપતિના-ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી મનુષ્ય છું. મને ઉપાસનાથી પ્રાપ્ત થયેલ મારા ઘરના આપ પાલનહાર ભૂયા:-બનો. આ રીતે નૌ-અમે સ્ત્રી-પુરુષ ઘરના પતિ છીએ. જે અમારા ગાર્હપત્યાનિ-અર્થાત્ ગૃહપતિના સંયોગથી ઘરનાં કામ સિદ્ધ થાય છે, તે અસ્થૂરિ-આળસ રહિત સિદ્ધ સન્તુ-થાય.

આ રીતે અમે સ્ત્રી-પુરુષ વર્તન કરતાં સૂર્યસ્ય-આપ અને વિદ્વાનના આવૃતમ્-વર્તમાન અર્થાત્ જેમાં સારી રીતે રાત-દિવસ બને છે, તેમાં શ્તઃ હિમાઃ-સો વર્ષ અથવા સો વર્ષથી અધિક વર્તીએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : અમે બંને સ્ત્રી-પુરુષ પુરુષાર્થી બનીને, જે સર્વ પદાર્થોની સ્થિતિ યોગ્ય સંસારરૂપી ગૃહના નિરંતર રક્ષક જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન છે, તેનો આશ્રય કરીને ભૌતિક અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી, સ્થિર સુખોને કરનાર સર્વ કાર્ય સિદ્ધ કરીને, સો વર્ષ સુધી જીવીએ અને જિતેન્દ્રિયતાથી સો વર્ષથી પણ અધિક સુખપૂર્વક જીવનનો ઉપભોગ કરીએ. (૨૭)

અગ્ને' વ્રતપતે વ્રતમ'ચારિષ્ઠં તદ'શકં તન્મે'ઽરાધી'દમ્હં ચ'ઽણ્વા'ઽસ્મિ સ્ત્રો'ઽસ્મિ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે વ્રતપતે-ન્યાયોચિત્ કર્મોના પતિ ! અગ્ને-સત્ય સ્વરૂપ પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને મે-મારા માટે વ્રતમ્-સત્ય લક્ષણ અને પ્રસિદ્ધ નિયમોયુક્ત સત્યાચરણ વ્રતને અરાધિ-સારી રીતે સિદ્ધ કર્યું છે. તત્-તે સ્વ આચરણ કરવા યોગ્ય સત્ય નિયમને અશકમ્-સારી રીતે આચરવા સમર્થ બનું. અચારિષ્ઠમ્-તેવો મને બનાવો. ચઃ-મેં જે ઉત્તમ અને અધમ કર્મો કર્યા છે તદેવાહમ્-તેને ભોગવું છું. હજી જેવાં કર્મ હું કરનાર અસ્મિ-છું તેવાં કર્મનાં ફળ ભોગનાર અસ્મિ-બનું છું

ભાવાર્થ : મનુષ્યે એ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે, હું જે કર્મ કરું છું, તેવું પરમેશ્વરની વ્યવસ્થા દ્વારા ફળ ભોગવું છું અને ભોગવીશ.

કોઈ પણ જીવને - પ્રાણીને પોતાના કર્મથી વિરુદ્ધ - અધિક કે ન્યૂન ફળ પ્રાપ્ત થતું નથી. આથી સુખરૂપ ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે ધર્માનુસાર કર્મો કરવાં જોઈએ, જેથી કદી દુઃખ પ્રાપ્ત થાય નહિ. (૨૮)

અગ્નયે કવ્યવાહનાય સ્વાહા સોમાય પિતૃમતે સ્વાહા ।

અપહતાઽસુરા રક્ષાંશ્સિ વેદિષદઃ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે કવ્યવાહનાય-વિદ્વાનોનું હિત કરનારા, કર્મોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા તથા અગ્નયે-સર્વ પદાર્થોને ભસ્મ કરીને દેશાન્તરમાં પ્રાપ્ત કરાવનાર ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને સુખ માટે સ્વાહા-વેદવાણીથી પિતૃમતે-જેમાં વસંત વગેરે ઋતુ પાલનમાં હેતુ હોવાથી પિતર સંયુક્ત રહે છે. સોમાય-જેમાં ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર સોમલતા માટે સ્વાહા-પોતાના પદાર્થોને ધારણ કરનાર ધર્મયુક્ત વિદ્વાન કરીને જે વેદિષદઃ-પૃથિવીમાં રહેનાર રક્ષાંસિ-અન્યોને દુઃખ આપનાર સ્વાર્થી જનો તથા અસુરાઃ-દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત મૂર્ખ છે, તેમનો અપહતાઃ-વિનાશ કરી દેવો જોઈએ.(૨૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો દ્વારા યુક્તિપૂર્વક પ્રયોગ કરવામાં આવેલ એ અગ્નિ શિલ્પીજનોનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. જેથી સંસારના ઉપકારથી સર્વ સુખ અને પૃથિવી પર દુષ્ટજનો તથા દોષોની નિવૃત્તિ થાય, એવો વિદ્વાનોએ નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૯)

યે રૂપાણિ પ્રતિમુઞ્ચમાનાઽસુરાઃ સન્તઃ સ્વધયા ચરન્તિ ।

પરાપુરો નિપુરો યે ભરન્ત્યગ્નિષ્ટાલ્લોકાત્ પ્રણુદાત્યસ્માત્ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : યે-જે મનુષ્ય સ્પ્રાણિ-પોતાના અન્તઃકરણમાં જે જ્ઞાન છે તેને પ્રતિમુઞ્ચમાનાઃ-છુપાવે છે અને વિપરીત ભાવને પ્રકટ કરે છે, અર્થાત્ પોતાના અસલ રૂપને છુપાવે છે. અસુરાઃ-ધર્મનો લોપ સન્તઃ-કરે છે, અસુર બનીને સ્વધયા-પૃથિવી પર ચરન્તિ-વિચરે છે.

જે પરાપુરઃ-સ્વાર્થી, પોતાના સુખ માટે અધર્મનાં કાર્યો કરનાર નિપુરઃ-નીચ, દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત જનોની સહાયતા કરનાર સન્તઃ-અન્યાયથી બીજાના પદાર્થો પડાવનાર છે તાન્-તે દુષ્ટોને અગ્નિઃ-જગદીશ્વર અસ્માત્-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ લોકથી પ્રણુદાતિ-દૂર કરે. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટ મનુષ્ય મન, શરીર, વાણીથી મિથ્યા આચરણ કરીને, પૃથિવી પર અન્યાયથી અન્ય પ્રાણીઓને પીડા આપીને, પોતાના સુખ માટે પારકાના પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે, ઈશ્વર તેને દુઃખયુક્ત કરે છે અને નીચ યોનિમાં જન્મ આપે છે. જે પાપનાં ફળો ભોગવીને ફરી મનુષ્ય શરીર ધારણ કરવા યોગ્ય બને છે. જેથી મનુષ્યોએ એવા લોકોથી અને પાપકર્મોથી હંમેશાં દૂર રહીને ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. (૩૦)

અત્ર પિતરો માદયધ્વં યથાભાગમાવૃષાયધ્વમ્ ।

અમીમદન્ત પિતરો યથાભાગમાવૃષાયિષત ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે પિતરઃ-ઉત્તમ વિદ્યા તથા ઉત્તમ શિક્ષા અને વિદ્યાદાન દ્વારા પાલન કરનારા વિદ્વાનો !
અન્ન-અમારા સત્કારયુક્ત વ્યવહાર અથવા સ્થાનમાં યથાભાગમ્-યથાયોગ્ય પદાર્થોના ભાગને આવૃષાયધ્વમ્-
જેમ બળદ પોતાની પાસે નીરેલું ઘાસ આનંદથી આરોગે છે, તેમ સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો અને માદયધ્વમ્-
આનંદિત બનો. તથા જેવી રીતે અમે યથાભાગમ્-યથાયોગ્ય પોતાની બુદ્ધિને અનુકૂળ ગુણ વિભાગને
પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે આવૃષાયિષત-વિદ્યા અને ધર્મનું રક્ષણ કરો અને અમીયદન્ત-સર્વને આનંદ
આપો.

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - માતા-પિતા આદિ, વિદ્વાન અધ્યાપક, ધર્માત્મા તથા અન્ય
પિતૃજન - એ લોકો સમીપ રહેતા હોય અથવા અન્ય સ્થાનથી આવતા હોય, ત્યારે તેમને જોઈને આમ
પ્રાર્થનાપૂર્વક વાક્યો કહેવાં અને સેવા કરવી જોઈએ.

હે અમારા પિતૃજનો ! આપનું સ્વાગત છે, આપ અમારી સમીપ પધારો અને અમારા દ્વારા પ્રદાન
કરેલ યથાયોગ્ય ભોગ્ય પદાર્થો તથા આસન વગેરે સ્વીકાર કરીને સુખને પ્રાપ્ત કરો. જે-જે આપની
આવશ્યક વસ્તુ હોય, તે લાવવાની આજ્ઞા કરો.

આ રીતે અમારા સત્કારને પ્રાપ્ત કરીને આપ અમોને પ્રશ્ન-ઉત્તર રીતિથી, સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ વિદ્યાથી
તથા ધર્મના ઉપદેશથી ઉન્નત કરો. આપના સદુપદેશથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત અમે લોકો નિત્ય ઉત્તમ ક્રિયાઓ
સ્વયં કરીને, અન્યોને કરાવીને, સર્વ પ્રાણીઓની સુખ અને વિદ્યાની ઉન્નતિ નિત્ય કરીએ. (૩૧)

નમો વઃ પિતરો રસાય નમો વઃ પિતરઃ શોષાય નમો વઃ પિતરો જીવાય
નમો વઃ પિતરઃ સ્વધાય નમો વઃ પિતરો ઘોરાય નમો વઃ પિતરો મન્યવે નમો
વઃ પિતરઃ પિતરો નમો વો ગૃહાન્નઃ પિતરો દત્ત સતો વઃ પિતરો દેષ્મૈતદ્વઃ પિતરો
વાસઃ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે પિતરઃ-વિદ્વાનો આનંદ આપનારા વિદ્વાનો ! રસાય-વિજ્ઞાનરૂપી આનંદની પ્રાપ્તિ માટે
વઃ-તમને અમારા નમઃ-નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-દુઃખનાશક અને રક્ષક વિદ્વાનો ! શોષાય-દુઃખ અને શત્રુઓની નિવૃત્તિ માટે વઃ-તમને
અમારા નમઃ-નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-ધર્માનુસાર જીવિકાનું જ્ઞાન આપનાર વિદ્વાનો ! જીવાય-જેથી પ્રાણ ધારણ થાય છે તે
જીવિકા માટે વઃ-તમને અમારા નમઃ-નિરાભિમાનતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-વિદ્યા, અન્ન વગેરે ભોગોની શિક્ષા આપનાર વિદ્વાનો સ્વધાય-અન્ન, પૃથિવી, રાજ્ય
અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરવા માટે વઃ-તમને અમારા નમઃ-સુશીલતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-પાપ અને આપત્કાલના નિવારક વિદ્વાનો ઘોરાય-દુઃખ સમૂહની નિવૃત્તિ માટે વઃ-તમને
અમારા નમઃ-નમ્રતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-શ્રેષ્ઠોના પાલક વિદ્વાનો ! મન્યવે-દુષ્ટાયરણ કરનાર દુષ્ટ જીવો પર ક્રોધ કરવા માટે વઃ-

તમને અમારા નમઃ-ક્રોધત્યાગપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-જ્ઞાની વિદ્વાનો ! વઃ-તમને વિદ્યા માટે નમઃ-અમારી વિજ્ઞાન ગ્રહણની ઈચ્છા માટે નમસ્કાર છે.

હે પિતરઃ-પ્રેમપૂર્વક રક્ષા કરનાર વિદ્વાનો ! વઃ-તમારા સત્કાર માટે અમારા નમઃ-સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર છે. આપ નઃ-અમારા ગૃહાન્-ઘેર નિત્ય આવો અને આવીને રહો.

હે પિતરઃ-વિદ્યાદાતા વિદ્વાનો ! નઃ-અમારા માટે શિક્ષા અને વિદ્યા નિત્ય દત્ત-આપતા રહો.

હે [પિતરઃ]- માતા-પિતાદિ વિદ્વાનો ! અમે વઃ-આપને માટે જે-જે સતઃ-પદાર્થો વિદ્યમાન છે તે નિત્ય દેષ્મ-આપીએ.

હે પિતરઃ-સેવા કરવા યોગ્ય પિતૃજનો ! અમારા દ્વારા આપેલા વાસઃ-વસ્ત્રાદિને ગ્રહણ કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં અનેક 'નમઃ' શબ્દ અનેક શુભ ગુણો તથા સત્કાર દર્શક છે. જેમ કે વસંત, શ્રીધ્મ, વર્ષા, શરદ્, હેમંત, શિશિર એ છ ઋતુઓ ક્રમશઃ રસ, શોષણ, જીવન, અન્ન, ઘનત્વ અને ક્રોધને ઉત્પન્ન કરનાર છે.

એ જ રીતે પિતરજનો અનેક વિદ્યાઓના ઉપદેશોથી મનુષ્યોને નિરંતર તૃપ્ત કરે છે. તેઓનો ઉત્તમ પદાર્થોથી સત્કાર કરીને, તેઓથી નિરંતર વિદ્યા અને ઉપદેશોને ગ્રહણ કરવાં જોઈએ. (૩૨)

આર્ધત્ત પિતરો ગર્ભં કુમારં પુષ્કરસ્ત્રજમ્ । યથેહ પુરુષોઽસત્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે પિતરઃ-વિદ્યાદાનથી રક્ષા કરનારા વિદ્વાનો ! આપ યથા-જેમ આ બ્રહ્મચારી ઙ્હ-આ સંસારમાં અથવા અમારા કુળમાં પોતાના શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યા અને પુરુષાર્થયુક્ત મનુષ્ય અસત્-બનો, તેમ ગર્ભમ્-ગર્ભની સમાન પુષ્કરસ્ત્રજમ્-વિદ્યાગ્રહણ કરવા માટે માળા ધારણ કરેલા કુમારમ્-બ્રહ્મચારીનો આર્ધત્ત-સારી રીતે સ્વીકાર ધારણ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - વિદ્વાન પુરુષો અને વિદ્વૃષી દેવીઓ ક્રમશઃ વિદ્યાના અભિલાષી કુમારો તથા કુમારીકાઓને વિદ્યાદાન માટે ગર્ભની સમાન ધારણ કરે. જેમ ગર્ભમાં ક્રમશઃ શરીરની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ અધ્યાપક લોકો ઉત્તમ શિક્ષાથી કુમાર અને કુમારિકાઓની સદ્વિદ્યામાં વૃદ્ધિ કરે તથા તેમનું પાલન કરે. જેથી વિદ્યા દ્વારા ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી બનીને હંમેશાં સુખી રહે. તેવું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૩૩)

ઊર્જા વહન્તીરમૃતં ઘૃતં પયઃ ક્વીલાલં પરિસ્તૃતમ્ ।

સ્વધા સ્થં તર્પયંત મે પિતૃન્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે પુત્રાદિ જનો ! તમે મે-મારા પિતૃન્-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત પિતરોને ઊર્જમ્-અનેક પ્રકારના શ્રેષ્ઠતમ રસ વહન્તીઃ-સુખદાયક સ્વાદિષ્ટ જલ અમૃતમ્-સર્વ રોગનાશક ઔષધિ, મિષ્ઠાન્ન પદાર્થો પયઃ-દૂધ ઘૃતમ્-ધી ક્વીલાલમ્-ઉત્તમ રીતે પકાવેલ પવિત્ર અન્ન તથા પરિસ્તૃતમ્-રસ ઝરતાં પાકાં ફળો આપીને

તર્પયત-તૃપ્ત કરો. આ રીતે તેના સેવનથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને સ્વધા:-પરધનનો ત્યાગ કરીને પોતાના ધનનું સેવન કરનાર સ્થ-બનો. (૩૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્ય પોતાના પુત્ર, નોકર વગેરેને આ રીતે આદેશ આપે કે, તમે લોકોએ આપણાં માતા-પિતા તથા વિદ્યાદાતા પિતૃજનોની પ્રેમપૂર્વક નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. જેમ તેઓએ બાલ્યાવસ્થા તથા વિદ્યા ભણાવવા સમયે આપણું પાલન કરેલ છે, તેમ આપણે પણ તેઓનો હંમેશાં સર્વ પ્રકારે સત્કાર કરવો જોઈએ. જેથી આપણામાં ક્યારેય વિદ્યાનાશ અને કૃતદનતાનો દોષ ઉત્પન્ન ન થાય.

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : ઈશ્વરે આ અધ્યાયમાં જે-જે વેદી વગેરેની રચના (૧), યજ્ઞની ફળ પ્રાપ્તિનાં સાધનો (૨), યજ્ઞ સામગ્રીનું ધારણ (૩), અગ્નિના દૂતકર્મનું પ્રકાશન (૯), આત્મા અને ઈન્દ્રિય વગેરેની શુદ્ધિ (૧૦), સુખોનો ભોગ (૧૧), વેદોનો પ્રકાશ (૧૨), પુરુષાર્થની સિદ્ધિ (૧૪), યુદ્ધમાં વિજય (૧૫) શત્રુનું નિવારણ (૧૫), દ્વેષનો ત્યાગ (૧૫), અગ્નિ વગેરે પદાર્થોનો યાનોમાં પ્રયોગ (૧૭), ઈશ્વરમાં પ્રીતિ (૧૮), પૃથિવી વગેરેથી ઉપકાર લેવો (૧૯), દિવ્ય ગુણોનો વિસ્તાર (૧૯), સર્વની રક્ષા (૨૦), વેદ શબ્દના અર્થનું વર્ણન (૨૧), વાયુ, અગ્નિ વગેરે પદાર્થોને પરસ્પર મેળવવા (૨૨), પુરુષાર્થનું ગ્રહણ (૨૪), ઉત્તમ પદાર્થોનો સ્વીકાર કરવો (૨૪), યજ્ઞમાં હોમ કરેલ પદાર્થોનું ત્રણે લોકમાં જવું અને ફરી ત્યાંથી આવવું (૨૫), સ્વયંભૂ શબ્દના અર્થનું વર્ણન (૨૬), ગૃહસ્થોનું કર્તવ્ય (૨૭), સત્યનું આચરણ (૨૮), અગ્નિમાં હવન કરવો (૨૯), દુષ્ટોનું નિવારણ (૩૦) અને પિતરજનોની સેવા (૩૧-૩૪)નો ઉપદેશ કરેલ છે. તેનું મનુષ્યોએ પ્રેમપૂર્વક સેવન કરવું જોઈએ. આ પ્રમાણે પ્રથમાધ્યાયના અર્થ સાથે દ્વિતીયાધ્યાયના અર્થની સંગતિ સમજવી જોઈએ.

॥ ઇતિ દ્વિતીયોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ તૃતીયોઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સમિધાગ્નિં દુવસ્યત ઘૃતૈર્બોધયતાતિથિમ્ । આસ્મિન્ હૃવ્યા જુહોતન ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે સમિધા-સારી રીતે અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરનાર સમિધાથી શુદ્ધ સુગંધી વગેરેથી યુક્ત ઘૃત વગેરેથી તથા યાનો-વાહનોમાં જળ-વરાળ વગેરેથી અગ્નિમ્-ભૌતિક અગ્નિને બોધયત- પ્રદીપ્ત કરો તથા જેની અતિથિમ્-આવવા જવાની તિથિ નક્કી નથી તે સંન્યાસી વગેરે અતિથિની સમાન તે અગ્નિનું દુવસ્યત-સેવન કરો.

અસ્મિન્-એ અગ્નિમાં હૃવ્યા-હોમ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો જેવાં કે કેસર-કસ્તૂરી વગેરે સુગંધી, ગોળ-સાકરાદિ મધુર, ઘૃત-દૂધાદિ પુષ્ટ અને રોગનાશક ગળો તથા સોમલતાદિ ઔષધિ - એ ચાર પ્રકારના સાકલ્ય દ્વારા આ + જુહોતન-ઉત્તમ રીતિથી હોમ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગૃહસ્થ લોકો આસન, અન્ન, જળ, વસ્ત્ર અને પ્રિયવચન વગેરેથી ઉત્તમ ગુણયુક્ત અતિથિની સેવા કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ યજ્ઞવેદી, કલાયંત્ર તથા યાનોમાં અગ્નિ સ્થાપિત કરીને યથાયોગ્ય બળતણ, ઘૃત, જળ વગેરેથી પ્રજ્વલિત કરીને વાયુ, વર્ષા જલની શુદ્ધિ તથા યાન સંબંધી કાર્ય નિત્ય કરવા જોઈએ - તેનાં દ્વારા સંસારનો ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૧)

સુસમિદ્ધાય શોચિષે ઘૃતં તીવ્રં જુહોતન । અગ્નયે જાતવેદસે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સુસમિદ્ધાય-સારી રીતે પ્રજ્વલિત, શોચિષે-શુદ્ધ, દોષ નિવારક, જાતવેદસે-સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન અગ્નયે-રૂપ, દાહ, પ્રકાશ, છેદન વગેરે ગુણ-સ્વભાવયુક્ત અગ્નિમાં તીવ્રમ્-સર્વ દોષોનું નિવારણ કરવામાં તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત ઘૃતમ્-ઘૃત, મધુર વગેરે પદાર્થોનો જુહોતન-સારી રીતે હોમ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આ પ્રજ્વલિત અગ્નિમાં શીઘ્ર દોષ-નિવારક અને શુદ્ધ કરેલ પદાર્થોનો હોમ કરીને સર્વ સુખોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨)

તં ત્વા સમિદ્ધિરઙ્ગિરો ઘૃતેન વર્ધયામસિ । બૃહચ્છોચા યવિષ્ઠ્ય ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : અમે લોકો જે અઙ્ગિરઃ-સુખદાયક, અત્યંત યુવા યવિષ્ઠ્ય પદાર્થોને પૃથક્ કરવામાં અતિ બળવાન બૃહત્-મહાન તેજથી યુક્ત શોચ-પ્રકાશ કરે છે, ત્વા-તે ભૌતિક અગ્નિની સમિદ્ધિઃ-સમિધા તથા ઘૃતેન-ઘૃત વગેરેથી પ્રદીપ્ત કરીને વર્ધયામસિ-વૃદ્ધિ કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ગુણોના કારણે મહાન પૂર્વોક્ત અગ્નિ છે, તેને હોમ અને શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ માટે બળતણ વગેરે સાધનો દ્વારા પ્રજ્વલિત કરીને નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩)

उप त्वाग्ने हविष्मतीर्घृताचीर्यन्तु हर्यत । जुषस्व समिधो मम ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હર્યત-સુખદાયક, કામના કરવા યોગ્ય અગ્ને-અગ્નિ છે, તે મમ-મારા સમિધ:-સમિધા વગેરે સામગ્રીનું જુષસ્વ-સેવન કરે છે. જેમ તમ્-તે અગ્નિ સમિધા - ઘૃતાદિ પદાર્થો યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે હવિષ્મતી:-શ્રેષ્ઠ હવિ ઘૃતાચી:-ઘૃતાદિ પદાર્થોયુક્ત સમિધા વગેરેનો સંચય કરો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે આ અગ્નિમાં સમિધાઓ તથા ઘૃત વગેરેની આહુતિઓ આપે છે, ત્યારે તે એને અતિ સૂક્ષ્મ કરીને વાયુ દ્વારા દેશાન્તરમાં પહોંચાડીને, દુર્ગંધ વગેરે દોષોનું નિવારણ કરીને સર્વને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૪)

भूर्भुवः स्वः द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिष्णा ।

तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હું અન્નાદ્યાય-ભક્ષણ કરવા યોગ્ય અન્ન માટે ભૂમ્ના-વિભુ અર્થાત્ ઐશ્વર્યથી દ્યૌરિવ-આકાશમાં સૂર્યસમાન વરિષ્ણા-સારા ગુણોથી પૃથિવીવ-વિશાળ ભૂમિ સમાન તે-પ્રત્યક્ષ અથવા તસ્યા:-અપ્રત્યક્ષ અર્થાત્ આકાશાદિ લોકમાં સ્થિત દેવયજનિ-દેવ - વિદ્વાનો જ્યાં યજ્ઞ કરે છે અથવા પૃથિવી-ભૂમિના પૃષ્ઠે-પટ પર ભૂ:-ભૂમિ ભુવ:-અન્તરિક્ષ સ્વ:-દિવ અર્થાત્ પ્રકાશ સ્વરૂપ સૂર્યલોક તેની અન્તર્ગત સ્થિત તથા અન્નાદમ્-જવ વગેરે સર્વ અન્નોનું ભક્ષણ કરનાર અગ્નિમ્-પ્રસિદ્ધ અગ્નિને આદધે-સ્થાપિત કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઈશ્વર-રચિત ત્રણે લોકોના ઉપકારક, પોતાની વ્યાપ્તિથી સૂર્યપ્રકાશ સમાન, શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પૃથિવી સમાન, પોત-પોતાના લોકોમાં સ્થિત એ અગ્નિના કાર્યની સિદ્ધિ માટે યત્નપૂર્વક ઉપયોગ કરો. (૫)

आयं गौः पृश्निरक्रीदसदन् मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : અયમ્-આ પ્રત્યક્ષ ગૌ:-ગોળરૂપ પૃથિવી પિતરમ્-પાલક સ્વ:-સૂર્યલોકની પુર:-આગળ-આગળ અસદત્-ધૂમે છે તથા માતરમ્-પોતાની યોનિ - ઉત્પત્તિરૂપ જળની સાથે સહવર્તમાન પ્રયન્-સારી રીતે ચાલતી પૃશ્નિ:-અન્તરિક્ષ - આકાશમાં આક્રમીત્-ચોતરફ ધૂમે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જળ અને અગ્નિના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલ આ પૃથિવીનો ગોળો આકાશમાં પોતાની કક્ષામાં પોતાના રક્ષક સૂર્યના આકર્ષણથી પ્રતિક્ષણ ચોતરફ ધૂમે છે. જેથી રાત-દિવસ, શુકલ-કૃષ્ણપક્ષ, ઋતુ અને અયન વગેરેનો ક્રમશઃ કાલ વિભાગ બને છે. (૬)

अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती । व्यंख्यन् महिषो दिवम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જે અસ્ય-આ અગ્નિની પ્રાણાત્-બ્રહ્માંડ અને શરીરની વચ્ચે ઉપર જનારા વાયુથી અપાનતી-નીચે જનાર વાયુને ઉત્પન્ન કરતી રોચના-દીપ્તિ - પ્રકાશરૂપી વિદ્યુત્ અન્ત:-બ્રહ્માંડ અને શરીરની વચ્ચે

ચરતિ-ચાલે છે તે મહિષ:-પોતાના ગુણોથી મહાન અગ્નિ દિવમ્-સૂર્યલોકને વ્યઘ્ચત્-પ્રકટ કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ વિદ્યુત્ નામથી પ્રસિદ્ધ, સર્વના મધ્યમાં કાન્તિરૂપ રહેલ છે, તે પ્રાણ અને અપાનની સાથે સંયુક્ત થઈને, પ્રાણ, અપાન, અગ્નિ અને પ્રકાશની ગતિ વગેરે ચેષ્ટાઓના વ્યવહારોને પ્રકટ કરે છે, એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૭)

ત્રિંશદ્ધામ્ વિરાજતિ વાક્ પત્ન્યાય ધીયતે । પ્રતિ વસ્તોરહ દ્યુભિઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ દ્યુભિઃ-પ્રકાશાદિ ગુણોથી પ્રતિવસ્તો:-પ્રતિદિન ત્રિંશત્-અન્તરિક્ષ, આદિત્ય અને અગ્નિ સિવાયના પૃથિવી વગેરે જે ત્રીસ વસુ વગેરે દેવોનાં ધામ-સ્થાન છે તેને વિરાજતિ-પ્રકાશિત કરે છે. તે પત્ન્યાય-ચાલવા-ચલાવવા વગેરે ગુણોથી પ્રકાશયુક્ત અગ્નિ માટે પ્રતિવસ્તો:-પ્રતિદિન વિદ્વાનોએ અહ-સારી રીતે વાક્-વાણી ધીતયે-અવશ્ય ધારણ કરવી જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે વાણી પ્રાણયુક્ત શરીરમાં સ્થિત વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ દ્વારા નિત્ય પ્રકાશિત થાય છે, તે અગ્નિના ગુણોને પ્રકાશિત કરવા માટે વિદ્વાનોએ તે વાણીનો ઉપદેશ અને શ્રવણ નિત્ય કરવાં જોઈએ. (૮)

અગ્નિર્જ્યોતિર્જ્યોતિર્ગ્નિઃ સ્વાહા સૂર્યો જ્યોતિર્જ્યોતિઃ સૂર્યઃ સ્વાહા ।

અગ્નિર્વર્ચો જ્યોતિર્વર્ચઃ સ્વાહા સૂર્યો વર્ચો જ્યોતિર્વર્ચઃ સ્વાહા ।

જ્યોતિઃ સૂર્યઃ સૂર્યો જ્યોતિઃ સ્વાહા ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : અગ્નિ:-પરમેશ્વર સ્વાહા-સત્યવાણીને, જ્યોતિઃ-વિજ્ઞાનપ્રકાશથી યુક્ત કરીને સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા આપે છે. એ રીતે અગ્નિ:-જે પ્રસિદ્ધ અગ્નિ જ્યોતિઃ-શિલ્પવિદ્યા સાધનોને પ્રકાશ આપે છે.

સૂર્યઃ-જે ચરાચર સર્વ જગતનો આત્મા પરમેશ્વર જ્યોતિઃ-સર્વના આત્મામાં પ્રકાશ અથવા જ્ઞાન તથા સર્વ વિદ્યાઓનો ઉપદેશ આપે છે કે સ્વાહા-મનુષ્ય જેવું હૃદયથી જાણે છે, તેવું જ બોલે.

સૂર્યઃ-પોતાના પ્રકાશથી પ્રેરણા માટે સૂર્યલોક જ્યોતિઃ-મૂર્તિમાન પદાર્થોનો પ્રકાશ કરે છે.

અગ્નિઃ-સર્વ વિદ્યાઓના પ્રકાશક પરમેશ્વર મનુષ્યોને માટે વર્ચઃ-સર્વ વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિના સાધન ચારે વેદોને પ્રકટ કરે છે, જે જ્યોતિઃ-શરીર અને બ્રહ્માંડમાં રહેલ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ વર્ચઃ-વિદ્યા અને વૃષ્ટિનો હેતુ છે. સૂર્યઃ સર્વ વિદ્યા પ્રકાશક જગદીશ્વર સર્વ મનુષ્યો માટે સ્વાહા-વેદવાણીથી વર્ચઃ-બધી વિદ્યાનો પ્રકાશ અને જ્યોતિઃ-વિદ્યુત્, સૂર્ય અને અગ્નિ નામના તેજનો પ્રકાશ કરે છે. જે સૂર્યઃ-સૂર્યલોક પણ વર્ચઃ-શરીર અને આત્માના બળનો પ્રકાશ કરે છે.

જે સૂર્ય :-પ્રાણવાયુ વર્ચઃ-સકલ વિદ્યા પ્રકાશક જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરે છે અને જ્યોતિઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ જગદીશ્વર સારી રીતે હવન કરેલા પદાર્થોને પોતાના રચેલા પદાર્થોમાં પોતાની શક્તિથી સર્વત્ર ફેલાવે છે. તે પરમાત્મા જ સર્વનો ઉપાસ્ય દેવ અને ભૌતિક અગ્નિ કાર્યસિદ્ધિનું સાધન છે. (૯)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં 'સ્વાહા' શબ્દનો અર્થ નિરુક્તકારની પદ્ધતિથી ગ્રહણ કરેલ છે. ઈશ્વર કારણરૂપ - રૂપતન્માત્રા અગ્નિથી સ્થૂલ અગ્નિ જગતને પ્રકાશિત કરે છે. તેમાં અગ્નિ પોતાના પ્રકાશથી સ્વયંને

તથા પોતાથી ભિન્ન વિશ્વને પ્રકાશિત કરે છે.

પરમેશ્વર વેદો દ્વારા સંપૂર્ણ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે છે. એ રીતે અગ્નિ અને સૂર્ય પણ શિલ્પવિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે છે. (૯)

સજૂર્દેવેન સવિત્રા સજૂ રાત્ર્યેન્દ્રવત્યા । જુષાણોઽઅગ્નિર્વેતુ સ્વાહા ।

સજૂર્દેવેન સવિત્રા સજૂરુષસેન્દ્રવત્યા । જુષાણઃ સૂર્યો વેતુ સ્વાહા ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : અગ્નિ:-જે ભૌતિક અગ્નિ દેવેન-સર્વ જગતને જ્ઞાન આપવા તથા સવિત્રા-સર્વ જગતના ઉત્પાદક ઈશ્વરના રચેલા જગતની સાથે સજૂ:-સમાનરૂપમાં જુષાણ:-સેવન કરતા ઇન્દ્રવત્યા-વીજળીથી યુક્ત રાત્ર્યા-અંધકારરૂપ રાત્રિ સાથે સ્વાહા-વાણીનું સેવન કરતાં વેતુ-સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત થાય છે.

એ જ રીતે સૂર્ય:-જે સૂર્યલોક દેવેન-સર્વ પ્રકાશક તથા સવિત્રા-સર્વના અન્તર્યામી પરમેશ્વરના ઉત્પન્ન અને ધારણ કરેલા જગતની સાથે સજૂ:-સમાનરૂપમાં જુષાણ:-સેવન કરતાં ઇન્દ્રવત્યા-સૂર્યપ્રકાશયુક્ત ઊષસા-પ્રાતઃકાલના પ્રકાશ સાથે સ્વાહા-અગ્નિમાં હોમ કરેલી આહુતિઓનું જુષાણ:-સેવન કરતાં વ્યાપ્ત થઈને હવન કરેલ પદાર્થોને વેતુ-દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે. તેનાથી સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે આ અગ્નિ ઈશ્વરે રચેલ છે, તે તેની સત્તાથી પોતાના સ્વરૂપને ધારણ કરીને રાત્રિના વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે.

એ જ રીતે સૂર્ય ઉપા કાલને પ્રાપ્ત થઈને સર્વ મૂર્ત દ્રવ્યોને પ્રકાશિત કરવામાં સમર્થ બને છે. એમ તમે જાણો. (૧૦)

ઉપપ્રયન્તોઽધ્વરં મન્ત્રં વોચેમાગ્નયે । આરેઽઅસ્મે ચ શૃણ્વતે ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : અધ્વરમ્-ક્રિયામય યજ્ઞને ઉપપ્રયન્ત:-સારી રીતે જાણીને અમે અસ્મે-અમારાથી આરે-દૂર તથા ચ-નજીક શૃણ્વતે-સાચું - ખોટું સાંભળનારા અગ્નયે-વિજ્ઞાનરૂપી અન્તર્યામી જગદીશ્વર છે. તેના માટે મન્ત્રમ્-જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનાર મંત્રોનું વોચેમ્-નિત્ય ઉચ્ચારણ અને વિચાર કરીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદ મંત્રો દ્વારા ઈશ્વરની સ્તુતિ અને યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને, જે ઈશ્વર અંદર અને બહાર વ્યાપક હોવાથી બધું સાંભળી રહેલ છે, માટે તેનાથી ડરીને ક્યારેય પણ અધર્મ કરવાની ઈચ્છા કરવી નહિ.

જ્યારે મનુષ્ય એ ઈશ્વરને જાણે છે ત્યારે તેની સમીપ સ્થિત છે, અને જ્યારે તેને જાણતો નથી ત્યારે તે દૂર રહેલ છે, તેમ માનવું જોઈએ. (૧૧)

અગ્નિર્મૂર્ધ્વા દિવઃ ક્કુત્પતિઃ પૃથિવ્યાઽઅયમ્ । અપાથ્ઞ રેતાઁસિ જિન્વતિ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અયમ્-જે કાર્યકારણથી પ્રત્યક્ષ ક્કુત્-સર્વથી મહાન મુર્ધ્વા-સર્વ ઉપર વિરાજમાન, અગ્નિ:-સર્વના સ્વામી જગદીશ્વર દિવઃ-તે પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ જગત તથા પૃથિવ્યા:-

પ્રકાશરહિત પૃથિવી વગેરે જગતનું પતિ:-રક્ષણ-પાલન કરીને અપામ્-પ્રાણ અને રેતાંસિ-વીર્ય - બળવાન જિન્વતિ-બનાવવાની રચના જાણે છે. તેથી તે જગદીશ્વરને પૂજ્ય માનો.

દ્વિતીય અર્થ : અયમ્-જે પૂર્વોક્ત પ્રકાશાદિ ગુણોથી યુક્ત ભૌતિક અગ્નિ છે, તે કકુત્-મહાન છે. કારણ કે દિવ:-પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ જગત સર્વથી મૂર્ધ્ના-ઉપર વિરાજમાન શિર છે અને પૃથિવ્યા:-પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ જગતના પતિ:-પાલનના હેતુ છે. કારણ કે તે પ્રાણો તથા અપામ્-જલોને રેતાંસિ-વીર્યને - બળને જિન્વતિ-ઉત્પન્ન કરે છે અને સર્વને સુખ પહોંચાડે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ - ઈશ્વર પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય વગેરે અને પ્રકાશરહિત પૃથિવી વગેરે બે પ્રકારનાં જગતની રચના તથા પાલન કરીને પ્રાણોમાં બળ સ્થાપિત કરે છે.

જે ભૌતિક અગ્નિ પૃથિવી વગેરે જગતના પાલનનો હેતુ છે તથા વિદ્યુત અને જઠરાગ્નિ રૂપ છે, તે પ્રાણો અને જળોના બળને ઉત્પન્ન કરે છે, તે ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ સુખને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે. (૧૨)

ઉમા વામિન્દ્રાગ્નીઽઆહુવધ્યાઽઉમા રાધસઃ સહ માદયધ્યૈ ।

ઉમા દાતારાવિષાઁરંયીણામુમા વાજસ્ય સાતયૈ હુવે વામ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હું જે ઉમા-બે દાતારૌ-સુખ આપનાર ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને અગ્નિ છે. વામ્-તેના આહુવધ્યૈ-ગુણ જાણવા માટે હુવે-ગ્રહણ કરું છું.

રાધસઃ-ઉત્તમ સુખયુક્ત રાજ્યાદિ ધનોના ભોગની સહ-સાથે માદયધ્યૈ-આનંદ માટે વામ-તે ઉમા-બંનેને હુવે-ગ્રહણ કરું છું.

ઇષામ્-સર્વને ઈષ્ટ સ્વીણામ્-અત્યંત શ્રેષ્ઠ ચકવર્તી રાજ્યાદિ ધન તથા વાજસ્ય-અત્યંત શ્રેષ્ઠ અન્નનો સાતયૈ-સારી રીતે ઉપભોગ કરવા માટે ઉમૌ-તે બંને - વાયુ અને અગ્નિને હુવે-ગ્રહણ કરું છું. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં નિશ્ચયપૂર્વક સારી રીતે અગ્નિ અને વાયુના ગુણોને જાણીને, તેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તે સાર્વભૌમ રાજ્યાદિ સમસ્ત ધનને પ્રાપ્ત કરીને નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે, અન્ય નહીં. (૧૩)

અયં તે યોનિર્ઋત્વિયો યતો જાતોઽઅરોચથાઃ ।

તં જાનન્નગ્નઽઆરોહાથા નો વર્દ્યા રયિમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! તે-આપની સૃષ્ટિમાં જે ઋત્વિયઃ ઋતુ-ઋતુમાં પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અગ્નિ અને વાયુથી જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થયેલા અરોચથાઃ-સર્વ પ્રકારથી પ્રકાશ કરે છે. તથા જે સૂર્ય વગેરે રૂપમાં પ્રકાશ કરનાર લોકોની આરોહ-ઉન્નતિ કરે છે, ઉંચે ચઢી જાય છે. તે નઃ-અમારા રયિમ્-રાજ્યાદિ ધનની વૃદ્ધિ કરે છે. તમ્-તે અગ્નિને જાનન્-જાણીને આપ તેનાથી નઃ-અમારા રયિમ્-સર્વ ભૂગોળના રાજ્યાદિથી સિદ્ધ કરેલ ધનની વર્દ્ય-વૃદ્ધિ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વકાલમાં યથાવત્ પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે, જે વાયુના કારણે ઉત્પન્ન થાય છે તથા જે અનેક કાર્યોની સિદ્ધિ કરનાર હોવાથી સર્વને સુખ આપનાર છે, તે [અગ્નિને] યથાવત્ જાણીને તથા તેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્ય સિદ્ધ કરવાં જોઈએ. (૧૪)

અયમિહ પ્રથમો ધાયિ ધાતૃભિર્હોતા યજિષ્ઠોઽઅધ્વરેષ્વીઙ્યઃ ।

યમર્જવાનો ભૃગવો વિરુચુર્વનેષુ ચિત્રં વિશ્વં વિશેવિશે ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : અર્જવાન:-જે વિદ્યા સંતાન - વિદ્યા ભણાવીને વિદ્વાન બનાવનાર ભૃગવ:-યજ્ઞ વિદ્યાના જાણનાર વિદ્વાન છે. તે ઇહ-આ સંસારમાં વનેષુ-સેવન કરવા યોગ્ય અધ્વરેષુ-ઉપાસના તથા અગ્નિહોત્રથી લઈને અશ્વમેધ સુધી અથવા શિલ્પ વિદ્યા અન્તર્ગત યજ્ઞોમાં વિશે વિશે-પ્રત્યેક પ્રજામાં વિશ્વમ્-વ્યાપક ચિત્રમ્-અદ્ભુત ગુણયુક્ત યમ્-જે ઈશ્વર અને અગ્નિને વિસ્ત્રુ:-પ્રજ્વલિત કરે છે, અયમ્-તે ધાતૃભિ:- ઈશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિ યજ્ઞને ધારણ કરનાર વિદ્વાનો દ્વારા ઈઙ્ય:-યજ્ઞમાં ઉપાસના યોગ્ય પ્રથમ:- અથવા યજ્ઞમાં પ્રથમ સાધન છે. તથા ઉપાસના કે પૂજા યોગ્ય છે. હોતા-યજ્ઞનું ગ્રહણ કરનાર છે, યજિષ્ઠ:- અત્યંત ઉપાસના અને શિલ્પ વિદ્યાના હેતુ છે, તે ઇહ-અગ્નિને આ સંસારમાં ધાયિ-ઉક્ત વિદ્વાનો દ્વારા ધારણ કરવામાં આવે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ યજ્ઞ ક્રિયાની સિદ્ધિ માટે ઉપાસના યોગ્ય ઈશ્વરની સ્તુતિ તથા સાધનરૂપ ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને આ સૃષ્ટિમાં પ્રજાનાં સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરવાં જોઈએ. (૧૫)

અસ્ય પ્રતામનુ દ્યુત્શુક્રં દુદુહેઽહ્યઃ । પર્યઃ સહસ્ત્રસામૃષિમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : અહ્યઃ સર્વ વિદ્યા પ્રસારક વિદ્વાનો ! અસ્ય-એ ભૌતિક અગ્નિની સહસ્ત્રસામ્-અસંખ્ય કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર ઋષિમ્-કાર્ય સિદ્ધિમાં હેતુ પ્રતામ્-પ્રાચીન અનાદિ સ્વરૂપથી નિત્ય વર્તમાન દ્યુતમ્-કારણમાં રહેનાર દીપ્તિને જાણીને શુક્રમ્-શુદ્ધ કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર પર્યઃ-જલને અનુ દુદુહે-સારી રીતે પૂરણ કરે છે અર્થાત્ અગ્નિમાં હવન વગેરે કરીને વૃષ્ટિથી સંસારને પૂર્ણ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ ગુણયુક્ત અગ્નિનું કારણરૂપ તથા અનાદિ હોવાથી નિત્યતા જાણવી યોગ્ય છે, તેમ સંસારના અન્ય પદાર્થોનું પણ કારણરૂપથી અનાદિત્વ જાણવું જોઈએ. તેને જાણીને એ અગ્નિ વગેરે પદાર્થોનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૬)

તનૂઽપાઅગ્નેઽસિ તન્વં મે પાહ્યાયુર્દાઽઅગ્નેઽસ્યાયુર્મે દેહિ વર્ચોદાઽઅગ્નેઽસિ વર્ચો મે દેહિ । અગ્ને યન્મે તન્વાઽઝનં તન્મ્ઽઆપૃણ ॥ ૧૭ ॥

હે અગ્ને-સર્વરક્ષક જગદીશ્વર ! યત્-આપ તનૂપા:-સર્વ પદાર્થોનાં શરીરોના રક્ષક અસિ-છો, જેથી મે-મારા તન્વમ્-શરીરની પણ પાહિ-રક્ષા કરો.

હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ આયુર્દા:-આયુષ્ય દાતા અસિ-છો, જેથી મે-મને આયુ:-પૂર્ણ આયુ

અર્થાત્ સો વર્ષ સુધી જીવન દેહિ-આપો.

હે અગ્ને-સર્વ વિદ્યામય ઈશ્વર ! આપ વર્ષોદાઃ-વિજ્ઞાનદાતા અસિ-છો, જેથી મે-મને સારી રીતે વર્ષઃ-પૂર્ણ વિદ્યા દેહિ-આપો.

હે અગ્ને-કામના પૂર્ણ કરનાર ઈશ્વર ! મે-મારા તન્વાઃ-અન્તઃકરણ નામક શરીરમાં યત્-જેટલા ઝનમ્-બુદ્ધિ, બલ અને શૌર્ય વગેરેની ન્યૂનતા છે તત્-તેને આપૂણ-પૂર્ણ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : અગ્ને-આ ભૌતિક અગ્નિ યત્-જેમ તનૂપાઃ-શરીરની રક્ષાનો હેતુ અસિ-છે, તેમ જઠરાગ્નિરૂપથી મે-મારા તન્વમ્-શરીરની પાહિ-રક્ષા કરે છે.

અગ્ને-જ્ઞાનનો હેતુ અગ્નિ આયુર્દાઃ-જીવનનો હેતુ અસિ-છે, તેમ મે-મને આયુઃ-જીવન માટે ક્ષુધાદિ ગુણો દેહિ-આપે છે.

અગ્ને-જેમ અગ્નિ વર્ષોદાઃ-વિજ્ઞાન પ્રાપ્તિનો હેતુ અસિ-છે, તેમ મે-મને વર્ષઃ-વિદ્યાપ્રાપ્તિ માટે બુદ્ધિ-બળ વગેરે દેહિ-આપે છે.

અગ્ને-અગ્નિ કામના પૂર્તિનો હેતુ છે, તે યત્-જેટલી મે-મારા તન્વાઃ શરીરમાં બુદ્ધિ વગેરે સામર્થ્યની ઝનમ્-ન્યૂનતા છે, તત્-તેટલા ગુણોનું આપૂણ-પૂર્ણ કરે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે આ સંસારમાં જે કારણે સર્વ પ્રાણીઓના માટે શરીર, આયુના નિમિત્ત, વિદ્યાનો પ્રકાશ અને સમસ્ત અંગોની પૂર્ણતા રચેલ છે, જેથી સર્વ પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને ધારણ કરી રહેલ છે.

એ જ રીતે પરમેશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં પ્રકાશ વગેરે ગુણવાન હોવાથી તે અગ્નિ પણ સર્વ પદાર્થોના પાલનનો મુખ્ય સાધક છે. તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૧૭)

इन्धानास्त्वा शतं हिमां द्युमन्तं समिधीमहि । वयस्वन्तो वयस्कृतं सहस्वन्तः सहस्कृतम् । अग्ने सपत्नदम्भनमदब्धासोऽ अदाभ्यम् । चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે ચિત્રાવસો-આશ્ચર્યરૂપ ધનયુક્ત અગ્ને-પરમેશ્વર ! અદબ્ધાસઃ-દંભ, અહંકાર અને હિંસાદિ દોષ રહિત, વયસ્વન્તઃ-પ્રશંસનીય પૂર્ણ આયુ યુક્ત, સહસ્વન્તઃ-અત્યંત સહનશીલ, અદાભ્યમ્-માનવા યોગ્ય, સપત્નદમ્ભનમ્-શત્રુનો નાશ કરવા, વયસ્કૃતમ્-અવસ્થાની પૂર્તિ કરવા, સહસ્કૃતમ્-સહન કરવા કરાવવા, દ્યુમન્તમ્-અનંત પ્રકાશયુક્ત, ત્વા-આપનો ઇન્ધાનાઃ-ઉપદેશ તથા શ્રવણ કરતાં અમે શતમ્-સો વર્ષ અથવા તેથી અધિક વર્ષો હિમાઃ-હેમન્ત ઋતુયુક્ત સમિધીમહિ-સારી રીતે જીવીએ. આ રીતે કરતાં હું પણ તે-આપની કૃપાથી સર્વ દુઃખોને પારમ્-પાર કરીને સ્વસ્તિ-સુખોને અશીય-પ્રાપ્ત કરું.

દ્વિતીય અર્થ : અદબ્ધાસઃ-દંભ, અહંકાર, હિંસાદિ દોષરહિત, વયસ્વન્તઃ-પૂર્ણ આયુયુક્ત, સહસ્વન્તઃ-અત્યંત સહનશીલ, ત્વા-તે અદાભ્યમ્-ઉપયોગ કરવા યોગ્ય, સપત્નદમ્ભનમ્-આગ્નેયાદિ શસ્ત્ર અસ્ત્ર વિદ્યામાં હેતુ હોવાથી શત્રુઓને જીતવા, વયસ્કૃતમ્-અવસ્થાની વૃદ્ધિ કરવા, સહસ્કૃતમ્-સહનશક્તિ આપનાર, દ્યુમન્તમ્-સારી રીતે પ્રકાશયુક્ત અગ્ને-કાર્યોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિને ઇન્ધાનાઃ-પ્રજ્વલિત

કરતાં અમે શતમ્-સો વર્ષ સુધી હિમા:-હેમન્ત ઋતુ સાથે સમિધીમહિ-જીવીએ. આ રીતે કરતાં હું પણ જે એ ચિત્રાવસો-આશ્ચર્યરૂપ ધનની પ્રાપ્તિનું સાધન ભૌતિક અગ્નિ છે તે-તેના પ્રકાશથી દરિદ્રતા વગેરે દુઃખોથી પારમ્-પાર કરીને સ્વસ્તિ-અત્યંત સુખોને અશીય-પ્રાપ્ત કરું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થ, ઈશ્વરની ઉપાસના તથા અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી ઉપકાર-ગ્રહણ કરીને, સર્વ દુઃખોનો અંત - નાશ તથા ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરીને સો વર્ષ સુધી જીવિત રહેવું જોઈએ.

કોઈ પણ મનુષ્યે એક ક્ષણ પણ આળસમાં રહેવું નહીં. પરંતુ જેથી પુરુષાર્થ - વૃદ્ધિ થાય તેમ આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૮)

સં ત્વમગ્ને સૂર્યસ્ય વર્ચસાગથાઃ સમૃષીણાશ્ચસ્તુતેન ।

સં પ્રિયેણ ધામ્ના સમહમાયુષા સં વર્ચસા સં પ્રજયા સઃ રાયસ્પોષેણ ગ્મિષીય ॥

૧૯ ॥

પદાર્થ : અગ્ને-જગદીશ્વર ! જે આપ સૂર્યસ્ય-સર્વની અન્તર્ગત પ્રાણ તથા ઋષીણામ્-વેદવેત્તા, મંત્ર દ્રષ્ટા વિદ્વાનોની જે સંસ્તુતેન-સ્તુતિ કરવા, સંપ્રિયેણ-પ્રસન્નતાથી માનવા, સર્વર્ચસા-વિદ્યાધ્યયન અને પ્રકાશ કરવાનું ધામ્ના-સ્થાન સમાયુષા-શ્રેષ્ઠ જીવન, સંપ્રજયા-સંતાન અને રાજ્ય તથા રાયસ્પોષેણ-શ્રેષ્ઠ ધનના ભોગથી પુષ્ટિ સાથે સમગથાઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેની સાથે અહમ્-હું પણ સર્વ સુખોને સંગ્મિષીય-પ્રાપ્ત કરું.

દ્વિતીય અર્થ : જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ પૂર્વોક્ત સર્વથી સમગથાઃ-સંગત થઈને પ્રકાશને પ્રાપ્ત થાય છે. તે સિદ્ધિ માટે અગ્નિ સાથેના અહમ્-હું વ્યવહાર દ્વારા સર્વ સુખોને સંગ્મિષીય-પ્રાપ્ત કરું. (૧૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલનથી મનુષ્ય ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા તથા અગ્નિ વગેરે પદાર્થોના ઉચિત પ્રયોગથી સર્વ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૯)

અન્ધ સ્થાન્ધો વો ભક્ષીય મહ સ્થ મહો વો ભક્ષીયાર્જ સ્થોર્જ વો ભક્ષીય રાયસ્પોષ સ્થ રાયસ્પોષ વો ભક્ષીય ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : જે અન્ધ:-બળવાન વૃક્ષ અને ઔષધિ વગેરે પદાર્થો સ્થ-છે, વ:-તેના પ્રકાશથી હું અન્ધ:-વીર્યને પુષ્ટ કરનાર અન્નોનું ભક્ષીય-ગ્રહણ કરું, મહ:-મહાન વાયુ, અગ્નિ વગેરે અથવા વિદ્યાદિ પદાર્થો સ્થ-છે, વ:-તેનાથી હું મહ:-મહાન ક્રિયાઓની સિદ્ધિ કરનારાં કર્મોનું ભક્ષીય-સેવન કરું.

જે ઝર્જ:-જલ, દૂધ, ઘી, મધુર તથા ફળ વગેરે રસયુક્ત પદાર્થો સ્થ-છે, વ:-તેનાથી હું ઝર્જમ્-પરાક્રમયુક્ત રસનો ભક્ષીય-ભોગ કરું.

જે રાયસ્પોષ:- અનેક ગુણયુક્ત પદાર્થો સ્થ-છે વ:-ચક્રવર્તી રાજ્ય અને શ્રી વગેરે પદાર્થોથી હું રાયસ્પોષમ્-શ્રેષ્ઠ ધનનો ભોગ ભક્ષીય-સેવન કરું. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જગતના પદાર્થોના ગુણોને જાણીને ક્રિયા - કૌશલથી ઉપકારને ગ્રહણ કરીને સર્વ સુખોને ભોગવે. (૨૦)

રેવતી રમધ્વમ્સ્મિન્યોનાવ્સ્મિન્ ગોષ્ટ્વેઽસ્મિલ્લોક્વેઽસ્મિન્ ક્ષયૈ ।

ઙ્ઙૃહૈવ સ્ત માપગાત ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે રેવતી:-વિદ્યા, ધન, ઇન્દ્રિય, પશુ અને પૃથિવીના રાજ્ય વગેરેથી યુક્ત શ્રેષ્ઠ નીતિ સ્ત-છે, તે અસ્મિન્-આ યોનો-જન્મસ્થળમાં, અસ્મિનોષ્ટે-ઇન્દ્રિય તથા પશુ વગેરેનાં રહેવાનાં સ્થાન અસ્મિન્ લ્લોકે-સંસાર તથા અસ્મિન્ ક્ષયે-અમે બનાવેલાં ઘરોમાં રમધ્વમ્-રમણ કરવાની ઇચ્છા કરનાર તમે ઙ્ઙૃહૈવ-તેમાં રહો. અર્થાત્ માપગાત-એનાથી કદી દૂર ન જાવ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જ્યાં વિદ્યાન નિવાસ કરે છે, ત્યાં વિદ્યાદિ ગુણોના નિવાસના કારણે પ્રજાઓ વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધનથી સંપન્ન બનીને નિત્ય સુખી રહે છે તેથી સર્વેએ એવી ઇચ્છા કરવી જોઈએ કે અમારાથી વિદ્યાનો તથા વિદ્યાનોથી અમે કદી પણ દૂર ન થઈએ - સદા સમાગમ બની રહે. (૨૧)

સંહિતાસિં વિશ્વરૂપ્સૂર્જા માવિશ ગોપત્યેન ।

ઉપ ત્વાગ્ને દિવેદિવે દોષાવસ્તર્દ્વિયા વયમ્ । નમો ભરન્ત્ઽમ્સિ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : નમઃ-અન્નને ભરન્તઃ-ધારણ કરતાં અમે ધિયા-પોતાની બુદ્ધિ તથા કર્મથી જે અગ્ને-વીજળીરૂપ અગ્નિથી સર્વ પદાર્થોની સંહિતા-સાથે ઋર્જા-વેગ અને પરાક્રમ વગેરે ગુણયુક્ત, વિશ્વસ્ત્વી-સર્વ પદાર્થોમાં રૂપગુણયુક્ત, ગોપત્યેન- ઇન્દ્રિય અને પશુઓના પાલન કરનાર જીવની સાથે વર્તમાન હોવાથી મા-મારામાં આવિશ-પ્રવેશ કરે છે. ત્વા-તે દોષાવસ્તઃ-રાત્રિને પોતાના તેજથી દૂર કરનાર અગ્ને-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને જ્ઞાનના પ્રકાશ માટે દિવેદિવે-પ્રતિદિન ઉપૈમસિ-સમીપ પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૨૨).

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે, જે ઈશ્વરે સર્વ મૂર્ત દ્રવ્યોમાં વિદ્યુત્ રૂપથી વ્યાપ્ત, સર્વ રૂપોના પ્રકાશક, ચંદ્રા વગેરે વ્યવહારોનો હેતુ અને વિચિત્ર ગુણયુક્ત અગ્નિની રચના કરેલ છે. તે ઈશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૨)

રાજન્તમધ્વરાણાં ગોપામૃતસ્ય દીદિવિમ્ । વર્દ્ધમાનંઞ સ્વે દમે ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : નમઃ અન્નથી સત્કારપૂર્વક ભરન્તઃ-ધારણ કરનારા અમે ધિયા-બુદ્ધિ અને કર્મથી અધ્વરાણામ્-અગ્નિહોત્રથી લઈને અશ્વમેધ સુધીના યજ્ઞ તથા ગોપામ્-ઇન્દ્રિય તથા પૃથિવી વગેરેની રક્ષા કરવા રાજન્તમ્-પ્રકાશમાન ઋક્ષસ્ય-અનાદિ સત્યસ્વરૂપ કારણથી દીદિવિમ્-વ્યવહાર કરવા સ્વે-પોતાના દમે-મોક્ષરૂપ સ્થાનમાં વર્ધમાનમ્-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનારા પરમાત્માને ઉપૈમસિ-નિત્ય પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૨૩)

દ્વિતીય અર્થ : જે પરમાત્માએ અધ્વરાણામ્-શિલ્પ વિદ્યાથી સાધ્ય યજ્ઞ તથા ગોપામ્-ઇન્દ્રિય તથા પશુ આદિના રક્ષક, રાજન્તમ્-પ્રકાશમાન ઋક્ષસ્ય-જલ દીદિવિમ્-વ્યવહાર યોગ્ય બનાવનાર સ્વે-પોતાના દમે-શાન્ત રૂપમાં વર્ધમાનમ્-વૃદ્ધિ પામતાં જે અગ્નિને પ્રકાશિત કરેલ છે, તે અગ્નિને નમઃ-સત્ક્રિયાથી ભરન્તઃ-ધારણ કરીને અમે ધિયા-કર્મ અને બુદ્ધિ દ્વારા ઉપૈમસિ-હંમેશા પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર અનાદિ સ્વરૂપ કારણ-પ્રકૃતિથી સર્વ કાર્યોની રચના કરે છે, તેમ ભૌતિક અગ્નિ જલની પ્રાપ્તિથી સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૨૩)

સ નઃ પિતેવ્ સૂનવેઽગ્ને સૂપાયનો ભવ । સર્વસ્વા નઃ સ્વસ્તયૈ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-કરુણામય, વિજ્ઞાન સ્વરૂપ, સર્વના પિતા જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને જેમ સૂનવે-પુત્રને પિતેવ-પિતા સારા ગુણો શીખવે છે, તેમ આપ પિતા સમાન નઃ-અમને સૂપાયનઃ-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન આપનાર ભવ-છો, તેમ સઃ-આપ નઃ-અમને સ્વસ્તયે-સદા સુખથી સર્વસ્વ-સંયુક્ત રાખો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે સર્વના પિતા ઈશ્વર ! જેમ કૃપાળુ વિદ્વાન પિતા પોતાનાં સંતાનોને સુરક્ષિત અને સુશિક્ષિત કરીને વિદ્યા, ધર્મ અને સુશીલતા વગેરે ગુણોમાં સંયુક્ત કરે છે, તેમ આપ અમારી નિરંતર રક્ષા કરીને અમને શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોમાં સંયુક્ત કરો. (૨૪)

અગ્ને ત્વં નોઽઅન્તમઽઉત ત્રાતા શિવો ભવા વસ્તુથ્યઃ ।

વસુરગ્નિર્વસુશ્રવાઽઅચ્છાં નક્ષિ દ્યુમત્તમઃ રયિં દાઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વ રક્ષક જગદીશ્વર ! જે ત્વમ્-આપ વસુશ્રવાઃ-સર્વને સાંભળવા માટે શ્રેષ્ઠ કાન આપનાર, વસુઃ-સર્વ પ્રાણીઓ જેમાં રહે છે તથા સર્વ પ્રાણીઓમાં આપ રહો છો, અગ્નિઃ-વિજ્ઞાન પ્રકાશયુક્ત નક્ષિ-સર્વવ્યાપક આપ નઃ-અમારામાં અન્તમઃ-અન્તર્યામી રૂપમાં રહીને જીવનના અત્યંત ત્રાતા-રક્ષા કરનાર વસ્તુથ્યઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત અને શિવઃ-મંગલમય અને મંગલકારક ભવ છો.

ઉત-અને આપ નઃ-અમારા માટે દ્યુમત્તમમ્-અત્યંત પ્રકાશયુક્ત રયિમ્-વિદ્યા, ચક્રવર્તી રાજ્ય વગેરે ધન અચ્છ દાઃ-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એમ જાણવું જોઈએ કે, પરમેશ્વર સિવાય અમારી રક્ષા કરનાર બીજું કોઈ નથી, કારણ કે તે સર્વશક્તિમાન હોવાથી સર્વત્ર વ્યાપક છે. (૨૫)

તં ત્વાં શોચિષ્ઠ દીદિવઃ સુમ્નાયં નૂનમીમહે સચ્ચિભ્યઃ ।

સ નોં બોધિ શ્રુધી હર્વમુરુષ્યા ણોઽઅઘાયતઃ સમસ્માત્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે શોચિષ્ઠ-અત્યંત શુદ્ધ સ્વરૂપ દીદિવઃ-સ્વયં પ્રકાશમાન આનંદપ્રદ જગદીશ્વર ! અમે નઃ-અમારા તથા સચ્ચિભ્યઃ-મિત્રોના સુમ્નાય-સુખ માટે તં ત્વા-આપની પાસે ઈમહે-યાચના કરીએ છીએ.

જે આપ નઃ-અમને બોધિ-સારી રીતે વિજ્ઞાન આપો છો. સઃ-તે આપ નઃ-અમારા હર્વમ્-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય સ્તુતિસમૂહ યજ્ઞને શ્રુધિ-કૃપા કરીને સાંભળો નઃ-અમને સમસ્માત્-સર્વ અઘાયતઃ-પાપાચરણોથી અર્થાત્ અન્યને પીડા કરવાનાં પાપોથી ઉચ્ચ-દૂર રાખો. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પોતાના માટે, મિત્રો માટે અને સર્વ પ્રાણીઓના સુખની પ્રાપ્તિ માટે પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરવી જોઈએ અને તેવું આચરણ કરવું જોઈએ.

પ્રાર્થના કરવાથી જગદીશ્વર અધર્મથી દૂર રહેવાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યને પોતાની સત્તાથી સર્વ પાપોથી પૃથક્ કરે છે. એ જ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ પોતાના વિચાર અને પુરુષાર્થથી સર્વ પાપોથી દૂર રહીને

નિત્ય ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. એમ જાણવું જોઈએ. (૨૬)

इडऽएह्यदित्तएहि काम्याऽएत। मयि वः कामधरणं भूयात् ॥ २७ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી **इडे**-આ પૃથિવી મને રાજ્ય કરવા માટે **एहि**-અવશ્ય પ્રાપ્ત થાય.

अदिते-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર નાશરહિત રાજનીતિ પણ **एहि**-પ્રાપ્ત થાય. એ જ રીતે હે ભગવન્ ! મને પૃથિવી અને રાજનીતિ દ્વારા **काम्याः**-ઈચ્છિત પદાર્થો **एत**-પ્રાપ્ત થાય તથા **मयि**-મને **वः**-તે પદાર્થોની **कामधरणम्**-કામના **भूयात्**-સદા બની રહે. (૨૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ કામના કરવા યોગ્ય પદાર્થોની કામના નિરંતર કરવી જોઈએ. તેની પ્રાપ્તિ માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના તથા [સ્વયં] પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. કોઈ પણ મનુષ્ય એક ક્ષણ પણ કામના વિના રહી શકતો નથી. માટે અધર્મના વ્યવહારથી કામનાને હટાવીને, ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં જેટલી કામના વધારી શકાય તેટલી વધારવી જોઈએ. (૨૭)

सोमानुं स्वर्णं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं यऽऔशिजः ॥ २८ ॥

પદાર્થ : હે **ब्रह्मणस्पते**-સનાતન વેદશાસ્ત્રના પાલક જગદીશ્વર ! આપ **यः**-જે હું **औशिजः**-સર્વ વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાનના પુત્ર સમાન છું, તો મને **कक्षीवन्तम्**-વિદ્યા અધ્યયનમાં શ્રેષ્ઠ નીતિયુક્ત **स्वर्णम्**-સર્વ વિદ્યાઓનું પ્રવચન કરનાર તથા **सोमानम्**-ઔષધિઓનો રસ પ્રાપ્ત કરાવવા અને સર્વ વિદ્યાની સિદ્ધિ કરનાર **कृणुहि**-બનાવો. (૨૮)

ભાવાર્થ : પુત્ર બે પ્રકારના હોય છે : એક ઔરસ - શરીરથી ઉત્પન્ન, બીજા વિદ્યાજ - વિદ્યાથી ઉત્પન્ન. આ પ્રકારના પુત્રોની પ્રાપ્તિ માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. જેથી અમે વિદ્યાથી પ્રકાશિત, સર્વ ક્રિયાઓમાં કુશળ અને પ્રીતિપૂર્વક વિદ્યાનું અધ્યયન કરાવનાર પુત્રથી યુક્ત બનીએ. (૨૮)

यो रेवान् योऽअमीवहा वसुवित् पुष्टिवर्द्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः ॥ २९ ॥

પદાર્થ : **यः**-જે વેદશાસ્ત્રનું પાલન કરવા, **रेवान्**-વિદ્યાદિ અનંત ધનવાન **अमीवहा**-અવિદ્યાદિ રોગોને દૂર કરવા-કરાવવા, **वसुवित्**-વસ્તુઓને યથાયોગ્ય જાણવા, **पुष्टिवर्द्धनः**-શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ અને **तुरः**-સારાં કામોમાં જલદી પ્રવેશ કરનાર તથા કરાવનાર જગદીશ્વર છે. **सः**-તે **नः**-અમને શ્રેષ્ઠતમ કર્મ અને ગુણોની સાથે **सिषक्तु**-સંયુક્ત કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : સમસ્ત સંસારમાં જે ધન છે, તે સર્વ ઈશ્વરનું જ છે. મનુષ્ય ઈશ્વરને જેવી પ્રાર્થના કરે છે, તેવો તેને સ્વયં પુરુષાર્થ પણ કરવો જોઈએ. જેમ ઈશ્વર 'रेवान्'-એશ્વર્યવાન છે, એ વિશેષણ બોલવા કે સાંભળવા માત્રથી કૃતકૃત્ય બની જતો નથી. પરંતુ પોતાના પરમ પુરુષાર્થ દ્વારા પણ ધનની વૃદ્ધિ અને રક્ષા નિરંતર કરવી જોઈએ.

જેમ તે ઈશ્વર **अमीवहा**-રોગવિનાશક છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ નિત્ય રોગ નષ્ટ કરવા જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર **वसुवित्**-વસ્તુઓનો જ્ઞાતા છે, તેમ મનુષ્યોએ યથાશક્તિ પદાર્થવિદ્યા જાણવી જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર પુષ્ટિવર્દન:- સર્વની પુષ્ટિ-વર્ધક છે, તેમ મનુષ્યોએ સર્વની પુષ્ટિની નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર તુર:- શીઘ્રકારી છે, તેમ મનુષ્યોએ અભીષ્ટ કાર્યો શીઘ્ર કરવાં જોઈએ.

જેમ ઈશ્વરના શુભ ગુણ, કર્મની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે, તેમ (ઈશ્વર) સર્વ મનુષ્યોને અત્યંત પુરુષાર્થથી શુભ ગુણ, કર્મ આચરણોથી નિત્ય યુક્ત કરે. (૨૯)

મા ન: શઃસોઽઅરંરુષો ધૂર્તિ: પ્રણઙ્ મર્ત્યસ્ય । રક્ષાં ણો બ્રહ્મણસ્પતે ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણસ્પતે-જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી ન:-અમારી વેદવિદ્યા મા પ્રણક્-કદી નાશ ન પામે અને જે અસ્થ:-દાન આદિ ધર્મરહિત અને પરધન ગ્રહણ કરનાર મર્ત્યસ્ય-મનુષ્યની ધૂર્તિ:-હિંસા કે દ્રોહ છે તેનાથી ન:-અમારી નિરંતર રક્ષ-રક્ષા કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય હંમેશાં પ્રશંસનીય કર્મ કરે, નિન્દનીય નહીં. કોઈથી દ્રોહ અને દુષ્ટોનો સંગ ન કરે. ધર્મની રક્ષા અને ઈશ્વરની ઉપાસના હંમેશાં કરે. (૩૦)

મહિ ત્રીણામવોઽસ્તુ દ્યુક્ષં મિત્રસ્યાર્યમ્ણ: । દુરાધર્ષ વરુણસ્ય ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણસ્પતે-જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી મિત્રસ્ય-બહાર તથા અંદર રહેનાર પ્રાણવાયુ તથા અર્યમ્ણ:-જે આકર્ષણથી પૃથિવી આદિ અન્ય પદાર્થોને ધારણ કરનાર સૂર્યલોક અને વસ્ત્રાસ્ય-જલ ત્રીણામ્-એ ત્રણેના પ્રકાશથી ન:-અમારામાં દ્યુક્ષમ્-નીતિનો પ્રકાશ રહેલો છે અથવા દુરાધર્ષમ્-અતિ કષ્ટથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દેહ મહિ-મહાન વેદવિદ્યાની અવ:-રક્ષા અસ્તુ-થાવ. (૩૧)

ભાવાર્થ : અહીં પૂર્વમંત્રથી 'બ્રહ્મણસ્પતે' તથા 'ન:' એ બે પદોની અનુવૃત્તિ સમજવી.

મનુષ્યોએ સર્વ પદાર્થોથી પોતાની અને બીજાની ન્યાયપૂર્વક રક્ષા કરીને યથાવત્ રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૩૧)

નહિ તેષામમા ચન નાધ્વસુ વારુણેષુ । ઈંશે રિપુરઘશંસ: ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વરના ઉપાસક છે, તેષામ્-તેમનાં અમા-ધરમાં અધ્વસુ-માર્ગોમાં અને વારુણેષુ-ચોર, ડાકુ, શિકારી વગેરેનું નિવારણ કરનાર સંગ્રામોમાં ચન-પણ અઘશંસ:-પાપ કર્મોનું કથન કરનાર રિપુ:-શત્રુ નહિ-ઉભો રહેલો નથી. ન-તેને દુ:ખ-કલેશ આપી શકતો નથી. તે ઈશ્વર અને ધાર્મિક વિદ્વાનોને પામવાને હું ઈંશે-સમર્થ બનું. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે ધર્માત્મા અને સર્વના ઉપકારક મનુષ્યો છે, તેઓને કોઈનો ભય હોતો નથી. જે અજાતશત્રુ છે, તેનો કોઈ શત્રુ હોતો નથી. (૩૨)

તે હિ પુત્રાસોઽઅદિતે: પ્ર જીવસે મર્ત્યાય । જ્યોતિર્યચ્છન્ત્યજસ્રમ્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : જે અદિતે:-અવિનાશી કારણરૂપી શક્તિના પુત્રાસ:-બાહ્ય અને અંદર રહેનાર પ્રાણ, સૂર્યલોક, વાયુ અને જલ વગેરે પુત્ર છે, તે-તે પૂર્વોક્ત હિ-જ મર્ત્યાય-મનુષ્યોના મૃત્યુ અને જીવસે-જીવન માટે

અજસ્રમ્-નિરંતર જ્યોતિઃ-તેજ કે પ્રકાશ યચ્છન્તિ-આપે છે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે કારણરૂપી સમર્થ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન થયેલ પ્રાણ [સૂર્યલોક, વાયુ અને જલ] વગેરે પદાર્થો છે, તે સદા જ્યોતિ પ્રદાન કરીને સર્વના જીવન અને મૃત્યુના નિમિત્ત બને છે. (૩૩)

કદા ચ્ન સ્તરીરસિ નેન્દ્રં સશ્ચસિ દાશુષે ।

ઉપોપેન્નુ મઘવન્ ભૂયઽન્નુ તે દાનં દેવસ્ય પૃચ્ચતે ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સુખદાતા ઈશ્વર ! આપ સ્તરીઃ-સુખોથી આચ્છાદિત કરનાર અસિ-છો તથા દાશુષે-વિદ્યા વગેરે દાન કરનાર મનુષ્ય માટે કદાચન-ક્યારે ઇત્-જ્ઞાન નુ-જલદી સચ્ચસિ-પ્રાપ્ત ન-નથી કરાવતા ? તે કાલમાં હે મઘવન્-વિદ્યાદિ ધનવાન જગદીશ્વર ! દેવસ્ય-કર્મફળના આપનાર તે-આપના દાનમ્-આપેલ ઇત્-જ્ઞાનને દાશુષે-વિદ્યાદિ આપનાર માટે ભૂયઃ-ફરી નુ-જલદી ઉપોપૃચ્ચતે-પ્રાપ્ત કદાચન-ક્યારે ન-થતાં નથી ? (૩૪)

ભાવાર્થ : જો ઈશ્વર કર્મફળના દાતા ન હોય તો કોઈ પણ જીવ વ્યવસ્થાપૂર્વક કર્મફળને પ્રાપ્ત કરી શકે નહિ. (૩૪)

તત્ સવિતુર્વરેણ્યં ભર્ગો દેવસ્ય ધીમહિ । ધિયો યો નઃ પ્રચોદયાત્ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : અમે સવિતુઃ-સર્વ જગતના ઉત્પત્તિકર્તા, દેવસ્ય-પ્રકાશમય, શુદ્ધ સ્વરૂપ, સર્વ સુખદાતા પરમેશ્વર જે વરેણ્યમ્-અતિ શ્રેષ્ઠ અને ભર્ગઃ-પાપરૂપ દુઃખોના મૂળને નષ્ટ કરનાર તેજઃ-સ્વરૂપ છે, તત્-તેને ધીમહિ-ધારણ કરીએ.

યઃ-જે સવિતા દેવ અર્થાત્ અન્તર્યામી પરમેશ્વર સર્વ સુખદાતા છે, તે પોતાની કડુણા કરીને નઃ-અમારી ધિયઃ-બુદ્ધિને ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવમાં પ્રચોદયાત્-પ્રેરિત કરે. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના ઉત્પત્તિકર્તા, સર્વથી શ્રેષ્ઠ, સમસ્ત દોષનાશક અને શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમેશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. કયા પ્રયોજન માટે ? તે પ્રશ્નના ઉત્તરમાં વેદ કહે છે :

તે ઈશ્વરની સ્તુતિ, ધારણા, પ્રાર્થના અને ઉપાસના કરવાથી અમને સર્વ દુષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી પૃથક્ રાખે છે અને સર્વ શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી નિત્ય પ્રવૃત્ત કરે છે. જેથી પરમાત્માની સ્તુતિ વગેરે કરવાં જોઈએ.

પ્રાર્થનાનો એ જ મુખ્ય સિદ્ધાન્ત છે કે જેવી પ્રાર્થના કરો તેવાં કર્મ કરવાં જોઈએ. (૩૫)

પરિં તે દૂડમ્ભો રથોઽસ્માંરઽઅશ્નોતુ વિશ્વતઃ । યેન રક્ષસિ દાશુષઃ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ યેન-જે જ્ઞાનથી દાશુષઃ-વિદ્યાદિ દાન કરનાર વિદ્વાનોની વિશ્વતઃ-સર્વ રીતે રક્ષસિ-રક્ષા કરો છો અને જે તે-આપના દૂડમ્ભઃ-દુઃખથી પણ નાશ નહિ પામનાર રથઃ-સર્વને જાણવા યોગ્ય વિજ્ઞાન સર્વ દિશાઓથી રક્ષા કરવા માટે તે અસ્માન્-આપની આજ્ઞાનું પાલન કરનાર અમને પરિ-સર્વ રીતે અશ્નોતુ-પ્રાપ્ત થાય. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વના રક્ષક પરમેશ્વરની અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના અને પુરુષાર્થ નિત્ય કરવાં જોઈએ. જેથી રક્ષા પામીને આપણે દુષ્ટ - અસત્ વિદ્યા અને અધર્મ વગેરે દોષોનો ત્યાગ કરીને શ્રેષ્ઠ વિદ્યા તથા ધર્મ વગેરે શુભ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખી રહીએ. (૩૬)

ભૂર્ભુવઃ સ્વઃ સુપ્રજાઃ પ્રજાભિઃ સ્યાશ્ચ સુવીરો વીરૈઃ સુપોષઃ પોષૈઃ ।

નર્યં પ્રજાં મેં પાહિ શશ્ચસ્યં પશૂન્ મેં પાહ્યથર્યં પિતું મેં પાહિ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે નર્ય-નીતિમાન મનુષ્યો પર કૃપાળુ પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને મે-મારી પ્રજામ્-પુત્રાદિ પ્રજાની પાહિ-રક્ષા કરો. મે-મારાં પશૂન્-ગાય, ઘોડા, હાથી વગેરે પશુઓની પાહિ-રક્ષા કરો. હે અથર્ય-સંદેહરહિત જગદીશ્વર ! આપ મે-મારા પિતુમ્-અન્નની પાહિ-રક્ષા કરો. હે શંસ્ય-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર ! આપની કૃપાથી હું ભૂર્ભુવઃ સ્વઃ-જે પ્રિયસ્વરૂપ પ્રાણ, બળના હેતુ ઉદાન તથા સર્વ ચેષ્ટા વગેરે વ્યવહારોનો હેતુ વ્યાન વાયુ છે, તેની સાથે યુક્ત થઈને પ્રજાભિઃ-પોતાને અનુકૂળ સ્ત્રી, પુત્ર, વિદ્યા, ધર્મ, મિત્ર, નોકર અને પશુ વગેરે પદાર્થો સાથે સુપ્રજાઃ-ઉત્તમ વિદ્યા, ધર્મયુક્ત પ્રજા સહિત વીરૈઃ-શૌર્ય, ધૈર્ય, વિદ્યા, શત્રુઓનું નિવારણ તથા પ્રજાપાલનમાં કુશળની સાથે સુવીરઃ-શ્રેષ્ઠ શૂરવીરયુક્ત અને પોષૈઃ-પુષ્ટિકારક પૂર્ણ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન થયેલ વ્યવહારોની સાથે સુપોષઃ-શ્રેષ્ઠ પુષ્ટિ ઉત્પાદન કરનાર સ્યામ્-સદા બની રહું. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની ઉપાસના તથા ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલનનો આશ્રય લઈને ઉત્તમ નિયમો તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા શ્રેષ્ઠ પ્રજા, વીર પુરુષ તથા પુષ્ટિ વગેરે કારણોથી પ્રજાનું પાલન કરીને નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૭)

આગન્મ વિશ્વવેદસમ્સ્મભ્યં વસુવિત્તમમ્ । અગ્નેં સમ્રાટ્પિ હ્યુમ્નમ્પિ સહઽઆયચ્છસ્વ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે સમ્રાટ્-પ્રકાશસ્વરૂપ અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ અસ્મભ્યમ્-અમે ઉપાસકો માટે હ્યુમ્નમ્-પ્રકાશસ્વરૂપ ઉત્તમ યશ તથા સહઃ-ઉત્તમ બળને અભ્યાયચ્છસ્વ-સર્વ બાજુથી વિસ્તૃત કરો છો, જેથી અમે વસુવિત્તમમ્-પૃથિવી વગેરે લોકોને જાણવા તથા વિશ્વવેદસમ્-સર્વ સુખના જ્ઞાતા આપને અભ્યાગન્મ-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે સમ્રાટ્-પ્રકાશ કરનાર અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ અસ્મભ્યમ્-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર અમે લોકો માટે હ્યુમ્નમ્-ઉત્તમ યશ તથા સહ-બળ અભ્યાયચ્છસ્વ-સર્વ બાજુથી વિસ્તૃત કરે છે તે વસુવિત્તમમ્-પૃથિવી વગેરે લોકોને સૂર્યરૂપથી પ્રકાશ કરીને વિશ્વવેદસમ્-સર્વ સુખોને જણાવનાર ભૌતિક અગ્નિને અમે અભ્યાગન્મ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૩૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિના ગુણોનું વિજ્ઞાન જાણીને, તેના અનુસાર આચરણ કરીને બધી બાજુથી કીર્તિ અને બળનો નિત્ય વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૩૮)

અયમ્ અગ્નિઃ ગૃહપતિઃ ગાર્હપત્યઃ પ્રજાયા વસુવિત્તમઃ ।

અગ્નેઃ ગૃહપતેઽભિ દ્યુમ્નમ્ભિ સહઽઆયચ્છસ્વ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહપતે-ઘરના પાલક અગ્ને-પરમેશ્વર ! જે અયમ્-આ ગૃહપતિઃ-સ્થાન વિશેષમાં પાલન માટે ગાર્હપત્યઃ-ઘરના પાલકની સાથે સંયુક્ત પ્રજયા વસુવિત્તમઃ-પ્રજાને માટે સર્વ પ્રકારનું ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર છે. જેથી આપ દ્યુમ્નમ્-સુખ અને પ્રકાશયુક્ત ધન અભ્યાયચ્છસ્વ-સારી રીતે આપો તથા સહઃ-ઉત્તમ બળ-પરાક્રમ અભ્યાયચ્છસ્વ-સારી રીતે આપો.

દ્વિતીય અર્થ : જે કારણે ગૃહપતિઃ-ઘરના પાલક હેતુ પ્રજાયાઃ-પુત્ર, મિત્ર, સ્ત્રી અને નોકર વગેરે પ્રજાને વસુવિત્તમઃ-દ્રવ્ય વગેરે પ્રદાન કરનાર ગાર્હપત્યઃ-ઘરના સ્વામીથી સંયુક્ત અયમ્-આ અગ્ને-વિદ્યુત્, સૂર્ય અથવા જ્વાળામય ભૌતિક અગ્નિ છે, તેથી તે ગૃહપતે-ઘરનો પાલક તે અગ્ને-અગ્નિ અમોને અભિદ્યુમ્નમ્-બધી બાજુથી શ્રેષ્ઠ ધન અને સહઃ-બળને અભ્યાયચ્છસ્વ-ચોતરફથી વિસ્તારયુક્ત કરે છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થો દ્વારા જ્યારે ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તેની આજ્ઞામાં રહીને અગ્નિનો કાર્ય સિદ્ધિ માટે સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે તે અગ્નિ અનેક પ્રકારનાં ધન અને બળનો વિસ્તાર કરે છે. કારણ કે પ્રજાની મધ્યમાં તે અગ્નિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે સર્વોત્તમ સાધક છે. [અત્યંત સિદ્ધિ કરાવનાર છે.] (૩૯)

અયમ્ અગ્નિઃ પુરીષ્વો રયિમાન્ પુષ્ટિવર્દ્ધનઃ ।

અગ્નેઃ પુરીષ્યાભિ દ્યુમ્નમ્ભિ સહઽઆયચ્છસ્વ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે પુરીષ્વ-કર્મો પરિપૂર્ણ કરનાર સર્વોત્તમ અગ્ને-શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન ! આપ જે અયમ્-આ પુરીષ્વઃ-સર્વ સુખોને પૂર્ણ કરવામાં અત્યુત્તમ રયિમાન્-શ્રેષ્ઠતમ ધનયુક્ત પુષ્ટિવર્દ્ધનઃ-પુષ્ટિવર્ધક અગ્નિઃ-ભૌતિક અગ્નિથી અમે લોકો માટે અભિદ્યુમ્નમ્-ઉત્તમ ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા અભિસહઃ-ઉત્તમ શરીર અને આત્માના બળનો આયચ્છસ્વ-સર્વ રીતે વિસ્તાર કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની કૃપા અને સ્વયં પુરુષાર્થ દ્વારા અગ્નિવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને અનેક પ્રકારનાં ધન અને બળનો સર્વતઃ વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૪૦)

ગૃહા મા વિભીત મા વૈપધ્વમૂર્જ વિભ્રતઽમ્સિ ।

ઋર્જ વિભ્રદ્વઃ સુમનાઃ સુમેધા ગૃહાનૈમિ મનસા મોદમાનઃ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચર્યાશ્રમથી સર્વ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ ગૃહાશ્રમી તથા ઋર્જમ્-શૌર્યાદિ પરાક્રમોને વિભ્રતઃ-ધારણ કરેલ ગૃહાઃ-બ્રહ્મચર્યાશ્રમ પશ્ચાત્ ગૃહસ્થાશ્રમને પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા રાખનાર મનુષ્યો ! તમે ગૃહસ્થાશ્રમને યથાવત્ પ્રાપ્ત કરો.

તે ગૃહસ્થાશ્રમના અનુષ્ઠાનથી મા વિભીત-ડરો નહિ તથા મા વૈપધ્વમ્-કંપો નહિ.

પરાક્રમોને ધારણ કરેલ અમે ગૃહાન્-ગૃહસ્થાશ્રમને પ્રાપ્ત થયેલ તમને અમ્સિ-નિત્ય પ્રાપ્ત થઈ રહીએ અને વઃ-તમારામાં રહીને ગૃહસ્થાશ્રમમાં વર્તમાન સુમનાઃ-ઉત્તમ જ્ઞાન, સુમેધાઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિયુક્ત મનસા-

વિજ્ઞાનથી મોદમાન:-હર્ષ ઉત્સાહયુક્ત ઋર્જમ્-અનેક પ્રકારનાં બળોને બિભ્રત્-ધારણ કરીને હું અત્યંત સુખોને એમિ-નિરંતર પ્રાપ્ત કરું. (૪૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પૂર્ણ બ્રહ્મચર્ય આશ્રમનું સેવન કરીને, યુવાવસ્થામાં સ્વયંવર-વિધિથી પોતાના સમાન સ્વભાવ, વિદ્યા, તપ અને બળયુક્ત તથા સારી રીતે પરીક્ષા કરેલી સ્ત્રી સાથે વિવાહ કરીને, શરીર અને આત્માના બળને ઉત્પન્ન કરીને, સંતાનોત્પત્તિ કરીને સર્વ સાધનોથી શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોમાં સ્થિર રહેવું જોઈએ.

કોઈ મનુષ્યે ગૃહસ્થાશ્રમ કરવાથી કદી પણ ડરવું નહિ અને કંપવું નહિ. કારણ કે સર્વ શ્રેષ્ઠ વ્યવહારો અને આશ્રમોનું મૂળ ગૃહસ્થાશ્રમ છે. તેથી તેનું સમ્યક્ રીતે અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. તેના વિના મનુષ્યની વૃદ્ધિ અને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી. (૪૧)

યેષામ્બદ્ધ્યેતિ પ્રવસન્ યેષુ સૌમનસો બહુઃ ।

ગૃહાનુપહ્વયામહે તે નો જાનન્તુ જાનતઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : પ્રવસન્-પ્રવાસ કરતો અતિથિ યેષામ્-જે ગૃહસ્થનું અધ્યેતિ-સ્મરણ કરે છે, યેષુ-જે ગૃહસ્થોમાં બહુઃ-અધિક સૌમનસઃ-પ્રીતિભાવ છે, તે ગૃહાનુ-તે ગૃહસ્થોની અમે અતિથિઓ ઉપહ્વયામહે-હંમેશાં પ્રશંસા કરીએ છીએ. જે પ્રેમ રાખનાર ગૃહસ્થી છે, તે-તેઓ જાનતઃ-જાણીને ધાર્મિક નઃ-અમે અતિથિઓને જાનન્તુ-યથાવત્ જાણે - સત્કાર કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : સર્વ ગૃહસ્થીઓએ સર્વ ધાર્મિક વિદ્વાન અતિથિઓ સાથે તથા અતિથિઓએ ગૃહસ્થીઓ સાથે અત્યંત સુહૃદ્-મિત્રતાભાવ રાખવો જોઈએ, પરંતુ દુષ્ટો સાથે નહિ.

અતિથિ-વિદ્વાનોની સાથે સંગતિથી પરસ્પર વાર્તાલાપ કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જે પરોપકારી વિદ્વાન અતિથિ છે, તેની ગૃહસ્થીઓએ નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ; અન્યની નહિ. (૪૨)

ઉપહૂતાઽહુ ગાવઽપહૂતોઽઅજાવયઃ । અથોઽઅન્નસ્ય કીલાલઽપહૂતો ગૃહેષુ નઃ । ક્ષેમાય વઃ શાન્ત્યૈ પ્રપંચે શિવઃ શમ્મઃ શંયોઃ શંયોઃ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : ઇહ-આ ગૃહસ્થાશ્રમમાં અથવા આ સંસારમાં વઃ-તમારા શાન્ત્યૈ-સુખ માટે નઃ-અને અમારી ક્ષેમાય-રક્ષા માટે ગૃહેષુ-નિવાસ યોગ્ય સ્થાનોમાં ગાવઃ-દૂધ આપનારી ગાયો ઉપહૂતાઃ-સમીપ પ્રાપ્ત તથા અજાવયઃ-ઘેટાં-બકરાં હોય. ઉપહૂતાઃ-સમીપ પ્રાપ્ત અથો-તત્પશ્ચાત્ અન્નસ્ય-પ્રાણોને ધારણ કરનારા કીલાલઃ-અન્નાદિ પદાર્થો ઉપહૂતાઃ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. તે સર્વનું રક્ષણ કરતાં રહી હું ગૃહસ્થ શંયોઃ-સર્વ સુખનાં સાધનોથી શિવમ્-કલ્યાણ અને શમ્મમ્-આનંદને પ્રપંચે-પ્રાપ્ત કરું. (૪૩)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોને ઉચિત છે કે, ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તેની આજ્ઞા પાલન દ્વારા ગાય, હાથી, ઘોડા વગેરે પશુઓ અને ભક્ષ્ય - યજ્ઞ વગેરે ચાવવાના, ભોજ્ય - ભાત વગેરે ખાવાના, લેહ્ય - ચાટવાના ચટણી વગેરે, તથા ચૂષ્ય - શેરડી વગેરે ચૂષવાના પદાર્થોનો પોતાની પાસે સંગ્રહ કરીને, પોતાની તથા બીજાની રક્ષા કરીને વિજ્ઞાન, ધર્મ અને પુરુષાર્થથી સાંસારિક અને પારમાર્થિક સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ.

કોઈએ પણ આળસું બનવું નહિ.

પરંતુ જે મનુષ્ય પુરુષાર્થી બનીને ધર્મપૂર્વક ચક્રવર્તી રાજ્ય વગેરેનું ઉપાર્જન કરીને તેની રક્ષા અને વૃદ્ધિ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેને શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવે છે. અન્યને નહિ. (૪૩)

પ્રઘાસિનો હવામહે મરુતશ્ચ રિશાદસઃ । કરંભેળ સ્જોષસઃ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : અમે ગૃહસ્થીઓ કરંભેળ-અવિદ્યારૂપી દુઃખથી પૃથક્ બની, સ્જોષસઃ-સમાન રૂપથી સર્વની સાથે પ્રીતિ કરનાર રિશાદસઃ-દોષ અને શત્રુઓનો નાશ કરનાર, પ્રઘાસિનઃ-ઉત્તમ ભોજન કરનાર અતિથિઓ મસ્તઃ-અતિથિ ચ-તથા ઋત્વિજો - યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનોનો હવામહે-સત્કાર કરી નિત્ય આમંત્રિત કરતા રહીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થીઓને ઉચિત છે કે, વેદો, શૂરવીરો અને યજ્ઞ કરનારા ઋત્વિજોને બોલાવીને તથા તેમની સેવા કરીને તેઓની પાસેથી વિદ્યા અને શિક્ષા નિત્ય ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૪૪)

યદ્ ગ્રામે યદરણ્યે યત્ સભાયાં યદિન્દ્રિયે ।

યદેનશ્ચક્રમા વ્યમિદં તદવ્યજામહે સ્વાહા ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : વ્યમ્-કર્મનું અનુષ્ઠાન કરનારા અમે, યદ્-ગ્રામે-જે ગૃહસ્થોથી સેવિત ગામ, યત્ અરણ્યે-વાનપ્રસ્થો સેવિત વન, યત્ સભાયામ્-જે સભાનું વિદ્વાનો સેવન કરે છે. યત્ ઇન્દ્રિયે-યોગી લોકો જે મન અને શ્રોતાદિ ઇન્દ્રિયોનું સેવન કરે છે. તેમાં સ્થિત થઈને જે એનઃ-પાપ તથા અધર્મ ચક્રમ્-કરે છે અથવા કરાવે છે તે સર્વને અવ્યજામહે-દૂર કરતાં રહીશું તથા જે જે એ સ્થાનોમાં સ્વાહા-સત્યવાણીથી પુણ્ય અથવા ધર્માચરણ ચક્રમ્-કરવા યોગ્ય છે, તત્-તેને વ્યજામહે-પ્રાપ્ત થતાં રહીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : ચારે આશ્રમોમાં રહેનારા મનુષ્યોએ મન, વચન અને કર્મથી સદા સત્ય કર્મનું આચરણ કરીને, પાપનો ત્યાગ કરીને સભા અર્થાત્ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યા અને શિક્ષાના પ્રચારથી પ્રજાનાં સુખોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૫)

મો ષૂ ણ્ડન્દ્રાત્ર પૃત્સુ દેવૈરસ્તિ હિ ષ્મા તે શુષ્મિન્નવ્યાઃ ।

મહશ્ચિદ્યસ્ય મીદુષો યવ્યા હવિષ્મતો મરુતો વન્દતે ગીઃ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-શૂરવીર ! આપ અત્ર-આ સંસારમાં પૃત્સુ-યુદ્ધોમાં દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાથે નઃ-અમારી સુ-સારી રીતે રક્ષા કરો તથા મો-હણો નહિ.

હે શુષ્મિન્-પૂર્ણ બળયુક્ત શૂરવીર ! હિ-નિશ્ચય રીતે ચિત્-જેમ તે-આપની મહઃ-મહાન ગીઃ-વેદ પ્રમાણયુક્ત વાણી મીદુષઃ-વિદ્યા વગેરે ઉત્તમ ગુણોથી સિંચનાર હવિષ્મતઃ-ઉત્તમ હવિ અર્થાત્ પદાર્થયુક્ત મસ્તઃ-ઋતુ-ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનારા વિદ્વાનોના વન્દતે-ગુણોને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ વિદ્વાનો આપના ગુણોનો અમારા માટે નિરંતર પ્રકાશ કરીને આનંદિત કરે છે, તેમ જે અવ્યાઃ-

યજ્ઞ કરનાર યજમાન અસ્તિ-છે, તે આપની આજ્ઞાથી જે યવ્યા-ઉત્તમ યવ વગેરેનો અગ્નિમાં હોમ કરે છે, તે પદાર્થ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર બને છે. (૪૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આરાધના કરીને, સમ્યક્ રીતે સામગ્રીનો સંગ્રહ કરીને, યુદ્ધોમાં શત્રુઓને જીતીને, ચક્રવર્તી રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને તથા તેનું પાલન કરીને મહાન આનંદનું સેવન કરે છે, ત્યારે સુરાજ્ય બને છે. (૪૬)

અક્રન્ કર્મ્ કર્મકૃતઃ સહ વાચા મયોભુવાં । દેવેભ્યઃ કર્મ્ કૃત્વાસ્તં પ્રેતં સચાભુવઃ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય મયોભુવા-સુખદાયક, સત્યપ્રિય, મંગલકારી વાચા-વેદવાણી અથવા પોતાની વાણીની સહ-સાથે સચાભુવઃ-પરસ્પર સંગી બનીને કર્મકૃતઃ-શુભ કર્મોને કરતાં કર્મ-પોતાનાં અભીષ્ટ કર્મો અક્રન્-કરે છે, તે દેવેભ્યઃ-વિદ્વાન અથવા ઉત્તમ ગુણ અને સુખને માટે કર્મ-કરવા યોગ્ય કર્મનું કૃત્વા-અનુષ્ઠાન કરીને અસ્તમ્-સંપૂર્ણ સુખયુક્ત ઘરને પ્રેત-પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યને યોગ્ય છે કે, આળસનો ત્યાગ કરીને સદા પુરુષાર્થ કરે. મૂર્ખતાનો ત્યાગ કરીને વેદવિદ્યાની પવિત્ર વાણીથી યુક્ત રહે. સદા પરસ્પર સહાયતા કરે.

જે આવો વ્યવહાર કરે છે તેઓ દિવ્ય સુખોથી પરિપૂર્ણ મોક્ષ નામક આનંદને તથા વ્યાવહારિક આનંદને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે. પરંતુ આળસુ લોકો ક્યારેય પણ આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૪૭)

અવંભૃથ નિચુમ્પુણ નિચેરુરસિ નિચુમ્પુણઃ ।

અવં દેવૈર્દેવકૃતમેનોઽયાસિષ્મવ મર્ત્યૈર્મર્ત્યૈકૃતં પુરુરાવ્ગો દેવ રિષ્સ્પાહિ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે અવંભૃથ-વિદ્યા તથા ધર્મના અનુષ્ઠાનથી શુદ્ધ નિચુમ્પુણ-ધૈર્યથી શબ્દ વિદ્યાને ભણાવનાર વિદ્વાન્ ! જેમ હું નિચુમ્પુણઃ-જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર, નિચેરુ-નિરંતર વિદ્યાનો સંગ્રહ કરનાર, દેવૈઃ-પ્રકાશ સ્વરૂપ મન વગેરે ઈન્દ્રિયોથી દેવકૃતમ્-ક્રિયામાણ કર્મ અથવા મર્ત્યૈઃ-મરણધર્મા મર્ત્યકૃતમ્-શરીરોથી કરેલાં એનઃ-પાપ કર્મને અવ અયાસિષ્મ-દૂર કરીને શુદ્ધ બનું છું, તેમ તું પણ અસિ-બન.

હે દેવ-જગદીશ્વર ! આપ અમને પુસ્તાવ્ગઃ-બહુ દુઃખ આપનાર તથા રિષઃ-મારવા યોગ્ય શત્રુ તથા પાપથી પાહિ-રક્ષા કરો અર્થાત્ તેને દૂર કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે, પાપની નિવૃત્તિ અને ધર્મમાં પ્રવૃત્તિ માટે પરમેશ્વરને નિત્ય પ્રાર્થના કરીને, મન-વચન-કર્મથી જે પાપ થાય છે તેથી દૂર રહે.

જે કોઈ અજ્ઞાનવશ પાપ કરેલ છે, તેનું ફળ દુઃખ માનીને ફરી બીજીવાર ન કરે. પરંતુ સર્વકાલમાં પવિત્ર કર્મોના આચરણની વૃદ્ધિ કરે. (૪૮)

પૂર્ણા દર્વિ પરાં પત્ સુપૂર્ણા પુનરાપત ।

વસ્નેવ વિક્રીણાવહાઽઙ્ઘમૂર્જઃ શતક્રતો ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : જે દર્વિ-પાકને સિદ્ધ કરનાર અને હોમ યોગ્ય પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારી ચમચી - કડછી છે તે પૂર્ણા-દ્રવ્યોથી ભરેલી આહુતિ પરાપત-હોમેલા પદાર્થોના અંશોને ઉપર પહોંચાડી, આકાશમાં વૃષ્ટિ દ્વારા સુપૂર્ણા-પૂર્ણ થઈ પુનરાપત-ફરી સારી રીતે પૃથિવીમાં ઉત્તમ જલરસને પ્રાપ્ત કરાવે છે. તેથી હે શતક્રતો-અસંખ્ય કર્મ તથા પ્રજ્ઞાવાન જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી અમે યજ્ઞ કરાવનાર - હોતા તથા કરનાર યજમાન બન્ને ઙ્ઘમ્-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થો ઋર્જમ્-પરાક્રમયુક્ત વસ્તુઓને વસ્નેવ-વૈશ્યોના વ્યવહાર સમાન વિક્રીણાવહૈ-આપીએ અથવા ગ્રહણ કરીએ. (૪૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા જે સુગંધિત વગેરે દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરવામાં આવે છે, તે ઉપર જઈને વાયુ અને વર્ષા-જલને શુદ્ધ કરીને ફરી પૃથિવી પર આવે છે, જેથી જવ વગેરે ઔષધિઓ શુદ્ધ બનીને સુખ અને પરાક્રમ આપનાર બને છે.

જેમ વેપારી રૂપિયા વગેરે દઈને અથવા લઈને બીજા પદાર્થોને ખરીદે છે અથવા વેચે છે, તેમ [યજ્ઞકર્તા મનુષ્ય] અગ્નિમાં દ્રવ્યોને આપીને - હોમીને વર્ષા તથા સુખ વગેરે ખરીદે છે અને વર્ષા ઔષધિ વગેરેને લઈને ફરી વર્ષા માટે વેચે છે, અર્થાત્ અગ્નિમાં હોમ કરવામાં આવે છે. (૪૯)

દેહિ મે દદામિ તે નિ મે દેહિ નિ તે દધે ।

નિહારં ચ હરાસિ મે નિહારં નિહારાણિ તે સ્વાહા ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મિત્ર ! તું સ્વાહા-જેમ સત્યવાણી હૃદયથી બોલે છે, તેમ મે-મને એ વસ્તુ દેહિ-આપે છે તથા હું તે-તને એ વસ્તુ દદામિ-આપું અથવા આપીશ; તું મે-મારી તે વસ્તુ નિદેહિ-ધારણ કર, હું તે-તારી એ વસ્તુ નિદધે-ધારણ કરું છું.

તું મે-મને નિહારમ્-મૂલ્યથી ખરીદવા યોગ્ય વસ્તુ હરાસિ-આપ, હું તે-તને નિહારમ્-પદાર્થોનું મૂલ્ય નિહારાણિ-નિશ્ચયથી આપું. સ્વાહા-આ સર્વ વ્યવહારો સત્યવાણીથી કરવા અન્યથા વ્યવહાર સિદ્ધ થતા નથી. (૫૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ લેણ-દેણ, અનામત - થાપણ રાખવાનો વ્યવહાર સત્યપૂર્વક કરવો જોઈએ. જેમ કોઈએ કહ્યું, 'આ વસ્તુ તમે આપશો કે નહિ ?' જો તે કહે કે, 'આપું છું અથવા આપીશ.' તો તે રીતે આચરણ કરવું જોઈએ.

કોઈએ કહ્યું 'તું મારી આ વસ્તુ તારી પાસે રાખ, મને જરૂર પડે ત્યારે આપજે,' એ જ રીતે 'હું તારી વસ્તુ રાખું છું અને આવ ત્યારે આપીશ. અથવા તમારી પાસે આવીને આપીશ અથવા મારી પાસે આવી જજે' વગેરે વ્યવહાર સત્યવાણીથી કરવો જોઈએ. સત્ય વ્યવહાર વિના કોઈની પ્રતિષ્ઠા અને કાર્ય સિદ્ધિ થતી નથી. તથા પ્રતિષ્ઠા અને કાર્ય સિદ્ધિ વિના કોઈ નિરંતર સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૫૦)

અક્ષન્નમીમદન્ત્ હ્યવ પ્રિયાઽઅધૂષત ।

અસ્તૌષત્ સ્વભાનવો વિપ્રા નવિષ્ટયા મતી યોજા ન્વિન્દ્ર તે હરી ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! જે તે-આપના સંબંધી મનુષ્ય સ્વભાનવ:-પોતાના જ તેજથી પ્રકાશિત થનાર તથા અવ પ્રિયા:-અન્યને પ્રસન્ન કરનાર વિપ્રા:-વિદ્વાનો છે, તે નવિષ્ટયા-સર્વથા નવીન મતી-બુદ્ધિથી હિ-નિશ્ચયપૂર્વક પરમાત્માની અસ્તૌષત-સ્તુતિ અને અક્ષન્-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોનું ભક્ષણ કરતા અમીમદન્ત-આનંદને પ્રાપ્ત કરતા અને તેથી તે શત્રુ અને દુઃખોને ન્વધૂષત-શીઘ્ર ધુજાવે છે, તેમ એ યજ્ઞમાં ઇન્દ્ર-હે સભાપતિ ! તે-આપની સહાયથી આ યજ્ઞમાં નિપુણ બને અને તું હરી-પોતાનાં બળ અને પરાક્રમને અમારી સાથે યોજ-સંયુક્ત કર. (૫૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રતિદિન નવીન વિજ્ઞાન અને ક્રિયાઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જેમ મેઘાવી લોકો વિદ્વાનોના સંગ અને શાસ્ત્રોના અધ્યયનથી નવી-નવી બુદ્ધિ અને ક્રિયાને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ કરવું જોઈએ. (૫૧)

સુસન્દૃશં ત્વા વયં મઘવન્ વન્દિષીમહિ ।

પ્ર નૂનં પૂર્ણબન્ધુર સ્તુતો યાસિ વશાન્૨ઽઅનુ યોજા ન્વિન્દ્ર તે હરી ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્ ! ઉત્તમ વિદ્વાદિ ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-પરમાત્મન્ ! વયમ્-અમે સુસન્દૃશમ્-સારી રીતે વ્યવહારોને જોનારા ત્વા-આપની નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક વન્દિષીમહિ-સ્તુતિ કરીએ અને [હે પૂર્ણબન્ધુર:-સંપૂર્ણ જગતના પૂર્ણ બંધુ - હિતકારી પ્રભુ !] અમો સ્તુત:-સ્તુતિ કરનારને આપ વશાન્-ઈચ્છિત પદાર્થો યાસિ-પ્રાપ્ત કરાવો છો અને તે-આપનાં હરી-બળ-પરાક્રમોને આપ અનુપ્રયોજ-અમારી સહાય માટે યુક્ત કરો.

દ્વિતીય અર્થ : વયમ્-અમે સુસન્દૃશમ્-સારી રીતે પદાર્થોને દેખાડનાર, મઘવન્-ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર અને પૂર્ણબન્ધુર:-સંપૂર્ણ જગતને બાંધનાર ત્વા-એ સૂર્યલોકની નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક વન્દિષીમહિ-સ્તુતિ કરીએ છીએ.

સ્તુત:-સૂર્યના ગુણોને પ્રકાશિત કરવાથી, તે વશાન્-ઉત્તમ વ્યવહારોથી સિદ્ધ કરાવનાર કામનાઓને યાસિ-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

હે વિદ્વાન ! આપ નુ-જેમ તે-સૂર્યના હરી-ધારણ અને આકર્ષણ શક્તિ જગતમાં ઉપયોગી છે, તેમ વિદ્વાના સિદ્ધિકારક ગુણોને અનુપ્રયોજ-પ્રયોગમાં લાવો. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ જગતના હિતકારી જગદીશ્વરનું અભિનંદન અને સ્તુતિ કરવાં જોઈએ, અન્યની નહિ.

જેમ સૂર્ય મૂર્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉપાસનાથી તે જગદીશ્વર પણ ભક્તજનોના આત્મામાં વિજ્ઞાન ઉત્પન્ન કરીને, સર્વ સત્ય વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે. આથી ઈશ્વરને છોડીને અન્યની ઉપાસના કરવી નહીં. (૫૨)

મનો ન્વાહ્વામહે નારાશ્સેન સ્તોમેન । પિતૃણાં ચ મન્મભિઃ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : અમે નારાશ્સેન-પુરુષોના અત્યન્ત પ્રશંસનીય સ્તોમેન-સ્તુતિયુક્ત વ્યવહાર અને પિતૃણામ્-પાલક ઋતુઓ અથવા જ્ઞાની મનુષ્યોના, મન્મભિઃ-જેથી સર્વ ગુણો જાણી શકાય છે, તે ગુણોની સાથે મનઃ-સંકલ્પ-વિકલ્પ આત્મક મન ન્વાહ્વામહે-સર્વ તરફથી હટાવીને દેઢ કરીએ છીએ. [વિદ્યાદિ ગુણોમાં યુક્ત કરીએ છીએ.]. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે મનુષ્ય જન્મની સફળતા માટે પોતાના મનને વિદ્યાદિ ગુણોથી યુક્ત કરવું જોઈએ. જેમ ઋતુઓ પોતાના ગુણોને કમથી પ્રકાશિત કરે છે અને જેમ વિદ્વાનો કમથી અનેક પ્રકારની વિદ્યાનો સાક્ષાત્ કરે છે, તેમ નિરંતર પુરુષાર્થ કરીને વિદ્યા અને પ્રકાશની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૫૩)

આ નંડણ્તુ મનઃ પુનઃ ક્રત્વે દક્ષાય જીવસે । જ્યોક્ ચ સૂર્ય દૃશે ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : મનઃ-જે સ્મરણ કરનાર ચિત્ત, જ્યોક્-નિરંતર સૂર્યમ્-પરમેશ્વર, સૂર્યલોક અથવા પ્રાણને દૃશે-જોવા, ક્રત્વે-ઉત્તમ વિદ્યા અને ઉત્તમ કર્મની સ્મૃતિ જીવસે-સો વર્ષથી અધિક જીવવા ચ-અને અન્ય શુભ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે છે, તે નઃ-અમને પુનઃ-વારંવાર પ્રત્યેક જન્મમાં આ-સર્વ રીતે ણ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૫૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઉત્તમ કર્મ દ્વારા ચિત્તશુદ્ધિ કરીને ફરી પુનર્જન્મમાં [ઉત્તમ]ચિત્તની પ્રાપ્તિની આકાંક્ષા કરવી જોઈએ, જેથી મનુષ્ય-જન્મ પ્રાપ્ત કરીને ઈશ્વરની ઉપાસના સિદ્ધ કરીને નિરંતર શ્રેષ્ઠ ધર્મનું આચરણ કરી શકાય. (૫૪)

પુનર્નઃ પિતરો મનો દદાતુ દૈવ્યો જનઃ । જીવં વ્રાત્સચેમહિ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે પિતરઃ-ઉત્પાદક, અન્ન વગેરે તથા વિદ્યા આપીને રક્ષણ કરનાર માતા-પિતા [તથા ગુરુજનો] ! આપની શિક્ષાથી દૈવ્યઃ-વિદ્વાનોમાં ઉત્પન્ન થયેલ જનઃ-વિદ્યા અને ધર્મથી બીજા માટે ઉપકારોને પ્રકટ કરનાર વિદ્વાન મનુષ્ય નઃ-અમારા માટે પુનઃ-આ જન્મ કે બીજા જન્મમાં મનઃ-ધારણાવતી બુદ્ધિ દદાતુ-આપો, જેથી અમે જીવમ્-જ્ઞાનસંપન્ન જીવન તથા વ્રાતમ્-સત્યવાણી વગેરે ગુણ સમુદાયને સચેમહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન માતા-પિતા - આચાર્યોની સુશિક્ષા વિના મનુષ્યોના માનવજીવનની સફળતા સંભવ નથી અને તે શિક્ષા વિના મનુષ્ય પરિપૂર્ણ જીવન અને કર્મનું નિર્માણ તથા સંપાદન કરી શકતો નથી. આથી માતા-પિતા-આચાર્ય પોતાનાં સંતાનોને ઉત્તમ ઉપદેશ દ્વારા શરીર અને આત્માના બળથી સંપન્ન બનાવવાં જોઈએ. (૫૫)

વ્યઃસોમ વ્રતે તવ મનસ્તનૂષુ બિભ્રતઃ । પ્રજાવન્તઃ સચેમહિ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સર્વ જગતના સર્જનહાર જગદીશ્વર ! તવ-આપના વ્રતે-સત્ય ભાષણાદિ ધર્મના અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્ત થઈને તનૂષુ-વિસ્તૃત સુખયુક્ત શરીરોમાં મનઃ-અન્તઃકરણની અહંકારાદિ વૃત્તિને

બિભ્રતઃ-ધારણ કરીને પ્રજાવન્તઃ-બહુપુત્ર આદિ તથા રાષ્ટ્ર આદિ ધનયુક્ત થઈને અમે સચેમહિ-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : તવ-આ સોમ-સોમલતા વગેરે ઔષધિઓના વ્રતે-સત્ય વિજ્ઞાન માટે તનૂષુ-સુખયુક્ત શરીરોમાં મનઃ-ચિત્તની વૃત્તિને બિભ્રતઃ-ધારણ કરીને પ્રજાવન્તઃ-પુત્ર, રાજ્ય વગેરે ધનયુક્ત થઈને વયમ્-અમે સચેમહિ-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આજ્ઞામાં રહેનાર મનુષ્ય શરીર અને આત્માના સુખને નિત્ય પ્રાપ્ત કરે છે. એ રીતે યુક્તિથી સોમ વગેરે ઔષધિઓનું સેવન કરનાર પણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૫૬)

एष तै रुद्र भागः सह स्वस्त्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहा। एष तै रुद्र भागऽआखुस्तै पशुः ॥ ५७ ॥

હે સ્દ-અન્યાયકારી મનુષ્યોને રડાવનાર વિદ્વાન ! જે તે-તારો ઇષઃ-આ ભાગઃ-સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ સમૂહ છે, તેને તું અમ્બિકયા-વેદવાણી તથા સ્વસ્ત્રા-ઉત્તમ વિદ્યા અને ક્રિયાની સહ-સાથે જુષસ્વ-સેવન કર.

હે સ્દ-વિદ્વાન ! જે તે-તારો ઇષઃ-આ ભાગઃ-ધર્મથી પ્રાપ્ત ભાગ તથા સ્વાહા-વેદવાણી છે, તેનું સેવન કર.

હે સ્દ-વિદ્વાન ! જે તે-તારો તારું ઇષઃ-આ આખુઃ-ખોદવા યોગ્ય શસ્ત્ર-સાધન તથા પશુઃ-ભોગ્ય પદાર્થ છે. તમ્-તેનું જુષસ્વ-સેવન કર.

દ્વિતીય અર્થ : જે ઇષઃ-આ સ્દ-પ્રાણ છે તે-જેનો ઇષઃ-આ ભાગઃ-ધર્મથી પ્રાપ્ત ભાગ છે. જેને અમ્બિકયા-વાણી તથા સ્વસ્ત્રા-વિદ્યા-ક્રિયાથી સહ-સાથે જુષસ્વ-સેવન કરતા તથા જે તે-જેનો સ્વાહા-સત્યવાણી રૂપ ભાગઃ-ભાગ છે અને જે તેનું આખુઃ-ખોદવા યોગ્ય પદાર્થ તથા પશુઃ-દર્શનીય ભોગ્ય પદાર્થ છે. જેનું એ જુષસ્વ-સેવન કરે છે, તેનું સેવન સર્વ મનુષ્યો સદા કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જેમ ભાઈ પોતાની પ્રિય વિદુષી બહેનની સાથે વેદાદિ શબ્દવિદ્યા ભણીને આનંદ ભોગવે છે.

જેમ આ પ્રાણ શ્રેષ્ઠ શબ્દવિદ્યાથી પ્રિય લાગે છે, તેમ વિદ્વાન મનુષ્ય શબ્દવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને સુખી બને છે.

એ બંને વિના કોઈ પણ સત્ય જ્ઞાન અને સુખ-ભોગને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૫૭)

अव रुद्रमदीमहावं देवं त्र्यम्बकम्।

यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात् ॥ ५८ ॥

પદાર્થ : અમે ત્ર્યમ્બકમ્-ત્રણે કાળમાં એકરસ જ્ઞાનયુક્ત, દેવમ્-સુખ આપનાર તથા સ્દમ્-દુષ્ટોને રડાવનાર જગદીશ્વરની ઉપાસના કરીને સર્વ દુઃખોનો અવાદીમહિ-સારી રીતે નાશ કરીએ.

યથા-જેમ પરમેશ્વર ન:-અમને વસ્યસ:-ઉત્તમ વાસ કરનાર અવાકરત્-સારી રીતે બનાવે. યથા-જેમ ન:-અમને શ્રેયસ:-અત્યંત શ્રેષ્ઠ કરત્-બનાવે યથા-જેમ ન:-અમને વ્યવસાયયાત્-નિશ્ચયયુક્ત બનાવે, તેમ સુખપૂર્વક નિવાસ કરાવવા તથા ઉત્તમ ગુણયુક્ત અને સત્યપણાથી દેઠ નિશ્ચય પ્રદાતા પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરીએ. (૫૮)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય ઈશ્વરની ઉપાસના વિના સર્વ દુઃખોનો અન્ત કરી શકતો નથી.

જે ઈશ્વર સર્વને સુખમય નિવાસયુક્ત, પ્રશંસનીય અને સત્ય નિશ્ચય કરનાર બનાવે છે, તેની આજ્ઞાનું પાલન સર્વેએ કરવું જોઈએ. (૫૮)

ભેષજમસિ ભેષજઙ્ગવેઽશ્વાય પુરુષાય ભેષજમ્ । સુખમ્મેષાય મેષ્ઠૈ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ ભેષજમ્-શરીર, અન્ત:કરણ, ઈન્દ્રિય અને ગાય વગેરે પશુઓના રોગોનો નાશ કરનાર અસિ-છો.

ભેષજમ્-અવિદ્યા વગેરે કલેશોને દૂર કરનાર અસિ-છો, તે આપ ન:-અમારા માટે ગવે-ગાય વગેરે અશ્વાય-ઘોડા વગેરે પુસ્ત્રાય-સર્વ મનુષ્યો મેષાય-ઘેટાં અને મેષ્ઠૈ-ઘેટી વગેરે માટે સુખમ્-શ્રેષ્ઠ સુખ પ્રદાન કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની ઉપાસના વિના શરીર, આત્મા અને પ્રજાનાં દુઃખો દૂર થઈ સુખ ઉત્પન્ન થતું નથી.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને ઔષધના સેવનથી શરીર, આત્મા, પ્રજા તથા પશુઓનાં દુઃખોની પ્રયત્નપૂર્વક નિવૃત્તિ કરીને સુખને ઉત્પન્ન કરવું જોઈએ. (૫૯)

ત્ર્યમ્બકં યજામહે સુગન્ધિં પુષ્ટિવર્ધનમ્ । ઊર્વારુકમિવ્ બન્ધનાન્મૃત્યોર્મુક્ષીય માઽમૃતાત્ । ત્ર્યમ્બકં યજામહે સુગન્ધિં પતિવેદનમ્ । ઊર્વારુકમિવ્ બન્ધનાદિતો મુક્ષીય મામૃતઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : અમે સુગન્ધિમ્-શુદ્ધ ગંધયુક્ત પુષ્ટિવર્ધનમ્-શરીર આત્મા અને સમાજના બળની વૃદ્ધિ કરનાર, ત્ર્યમ્બકમ્-રુદ્રરૂપ જગદીશ્વર છે તેની યજામહે-નિરંતર સ્તુતિ કરીએ.

તેની કૃપાથી ઊર્વાસ્કમિવ-જેમ એક જાતની કાકડી પાકીને બન્ધનાત્-વેલાથી છૂટી પડીને અમૃતતુલ્ય બને છે, તેમ અમે પણ મૃત્યો:-પ્રાણ અને શરીરના વિયોગથી મુક્ષીય-છૂટી જઈએ અને અમૃતાત્-મોક્ષરૂપ સુખથી મા-કદી પણ શ્રદ્ધારહિત ન બનીએ.

અમે સુગન્ધિમ્-શ્રેષ્ઠ ગંધયુક્ત પતિવેદનમ્-રક્ષણ કરનાર સ્વામીને આપનાર ત્ર્યમ્બકમ્-સર્વના અધ્યક્ષ જગદીશ્વરનું યજામહે-નિરંતર સત્કારપૂર્વક ધ્યાન ધરીએ.

એના અનુગ્રહથી ઊર્વાસ્કમિવ-જેમ કાકડી પાકીને બન્ધનાત્-વેલાથી છૂટી પડી અમૃત સમાન મીઠી બને છે, તેમ અમે પણ ઙ્ગતઃ-આ શરીરથી મુક્ષીય-છૂટી જઈ અમૃતઃ-મોક્ષ તથા અન્ય જન્મનાં સુખ

અને સત્યધર્મનાં ફળથી મા-પૃથક્ ન બનીએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરને છોડીને કોઈ અન્યની પૂજા ન કરે, કારણ કે વેદમાં તેનું વિધાન ન હોવાથી દુઃખરૂપી ફળદાયક છે. જેમ કાકડી ફળ વેલામાં લાગેલ હોય તે સ્વયં પાકીને સમય થતાં વેલાના બંધનથી છૂટીને ઉત્તમ સ્વાદયુક્ત બને છે, તેમ અમે પૂર્ણ આયુ ભોગવીને શરીરનો ત્યાગ કરીને મુક્તિને પ્રાપ્ત કરીએ.

અમે કદી પણ મોક્ષપ્રાપ્તિનાં કર્મોથી, પરલોકથી અથવા પરજન્મથી વિરક્ત - ઉદાસ ન બનીએ.

અમે કદીપણ નાસ્તિકતાનો આશ્રય લઈને ઈશ્વરનો અનાદર ન કરીએ.

જેમ લોકો સાંસારિક સુખ માટે અન્ન, જળ વગેરે પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે છે, તેમ જ અમે ઈશ્વર, વેદ, વેદોક્ત ધર્મ અને મુક્તિમાં નિત્ય શ્રદ્ધા રાખીએ. (૬૦)

एतत्तै रुद्रावसं तेन पुरो मूर्जवतोऽतीहि ।

अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासाऽअहिंसन्नः शिवोऽतीहि ॥ ६१ ॥

પદાર્થ : હે રુદ્ર-શત્રુઓને રડાવનાર, યુદ્ધવિદ્યામાં કુશળ સેનાધ્યક્ષ વિદ્વાન ! અવતતધન્વા-યુદ્ધ માટે વિશાળ ધનુષ્યને ધારણ કરનાર, પિનાકાવસઃ-પિનાક અર્થાત્ જે શસ્ત્રથી શત્રુઓના બળનો નાશ કરી પોતાનું રક્ષણ કરનાર, કૃત્તિવાસઃ-ચામડાં અને કવચ સમાન દેહ વસ્ત્ર ધારણ કરનાર, શિવઃ-સર્વ સુખ આપનાર અને પરઃ- ઉત્તમ સામર્થ્યયુક્ત - બળવાન શૂરવીર પુરુષ ! આપ મૂર્જવતઃ-મુંજ ઘાસ વગેરે યુક્ત પર્વતની પર બીજા દેશમાં શત્રુઓને અતીહિ-પ્રાપ્ત કરો [ભગાડી મૂકો].

एतत्-જે આ તે-આપનું અવસમ્-રક્ષણ કરવું છે તેન-તેથી નઃ-અમારી અહિંસન્-હિંસા છોડીને રક્ષા કરતા આપ અતીહિ-અમારો સર્વ રીતે સત્કાર કરો. (૬૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અજાતશત્રુ [શત્રુરહિત]બનીને, રાજ્યને શત્રુરહિત કરીને તથા સર્વ અસ્ત્ર-શસ્ત્ર તૈયાર કરીને, દુષ્ટોને દંડ આપીને તથા તેમનો નાશ કરીને શ્રેષ્ઠોના પાલનકર્તા બનો. જેથી દુષ્ટ સુખી અને શ્રેષ્ઠ દુઃખી કદી ન બને. (૬૧)

त्रायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्रायुषम् ।

यद्वेषु त्रायुषं तन्नोऽस्तु त्रायुषम् ॥ ६२ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ યત્-જે દેવેષુ-વિદ્વાનોના વર્તમાનમાં ત્રાયુષમ્-બ્રહ્મચારી, ગૃહસ્થ, વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમોના પરોપકારયુક્ત આયુ વર્તનથી જે જમદગ્નેઃ-ચક્ષુ વગેરે ઈન્દ્રિયોને ત્રાયુષમ્-શુદ્ધિ, બળ અને પરાક્રમયુક્ત ત્રણ ગણી આયુ અને જે કશ્યપસ્ય-ઈશ્વરપ્રેરિત ત્રાયુષમ્-ત્રણ ગણી અર્થાત્ ત્રણસો વર્ષથી અધિક પણ આયુ વિદ્યમાન છે, તત્-તે શરીર, આત્મા અને સમાજને આનંદ આપનાર ત્રાયુષમ્-ત્રણસો વર્ષથી અધિક પણ આયુને નઃ-અમને પ્રાપ્ત કરાવો. (૬૨)

ભાવાર્થ : અહીં ચક્ષુ સર્વ ઈન્દ્રિયોમાં તથા કશ્યપ - સર્વદેષ્ટા ઈશ્વર નિર્માણ કરનારાઓમાં ઉત્તમ

છે, તેમ સમજવું જોઈએ.

'ત્ર્યાયુષમ્'-પદની ચાર વાર આવૃત્તિથી ત્રણ ગણી આયુથી અધિક ચાર ગણી આયુનું ગ્રહણ કરીને તથા તેની પ્રાપ્તિ માટે ઈશ્વરને પ્રાર્થના કરીને સ્વયં પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. જેમ કે -

હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી જેમ વિદ્વાન લોકો વિદ્યા, પરોપકાર અને ધર્માનુષ્ઠાન દ્વારા આનંદપૂર્વક ત્રણસો વર્ષો સુધીની આયુ ભોગવે છે. -

તેમ ત્રણ પ્રકારનાં દુઃખોથી રહિત, શરીર, ઈન્દ્રિય, અન્તઃકરણ તથા પ્રાણ સંબંધી સુખોથી પરિપૂર્ણ અને વિદ્યાવિજ્ઞાનથી સંપન્ન આયુ છે, તેને અમે પ્રાપ્ત કરીને ત્રણસો વર્ષની અથવા ચાર સો વર્ષની આયુ સુખપૂર્વક ભોગવીએ. (૬૨)

**શિવો નામાસિ સ્વધિતિસ્તે પિતા નમસ્તેઽસ્તુ મા માં હિંસીઃ । નિવર્ત્ત-
યામ્યાયુષ્ષેઽન્નાદ્યાય પ્રજનનાય રાયસ્પોષાય સુપ્રજાસ્ત્વાય સુવીર્યાય ॥ ૬૩ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર અને ઉપદેશક વિદ્વાન ! જે આપ સ્વધિતિ-અવિનાશી હોવાથી વજ્રમય અસિ-છો, જે તે-આપનું શિવઃ-સુખસ્વરૂપ વિજ્ઞાન આપનાર નામ-નામ અસિ-છે.

આપ મારા પિતા-પાલનહાર અસિ-છો તે-આપને મારા નમઃ-સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર અસ્તુ-છે.

આપ મા-મને મા હિંસીઃ-અલ્પ આયુથી મુક્ત કરો, [દીર્ઘાયુષી કરો] અને હું આપને આયુષ્-પૂર્ણ આયુ ભોગવવા અન્નાદ્યાય-અન્ન વગેરે ભોગવવા, સુપ્રજાસ્ત્વાય-ઉત્તમ પુત્રાદિ તથા ચક્રવર્તી રાજ્યાદિની પ્રાપ્તિ કરવા સુવીર્યાય-ઉત્તમ શરીર, આત્મામાં બળ પરાક્રમ માટે તથા રાયસ્પોષાય-વિદ્યા અને સુવર્ણ વગેરે ધનની પુષ્ટિ માટે વર્ત્તયામિ-વર્તાવું અને વર્તું છું.

આ રીતે વર્તન કરવાથી સર્વ દુઃખોને છોડાવીને, મારા આત્મામાં ઉપાસ્ય રૂપમાં નિશ્ચય કરીને અન્તર્યામી સ્વરૂપ આપનો આશ્રય કરીને સર્વ સાથે વર્તાવ કરું છું. (૬૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય મંગલમય અને સર્વના પિતા પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને ઉપદેશકોના સંગ વિના સાંસારિક અને પારલૌકિક [આધ્યાત્મિક] સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

કોઈએ પણ નાસ્તિક બનીને ઈશ્વર અને વિદ્વાનોનો અનાદર ન કરવો જોઈએ.

જે નાસ્તિક બનીને ઈશ્વરનો અને વિદ્વાનોનો અનાદર કરે છે, તેનો સર્વત્ર અનાદર થાય છે. આથી મનુષ્યે સદા આસ્તિક રહેવું જોઈએ. (૬૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ ત્રીજા અધ્યાયમાં અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞોનું વર્ણન (૧-૩), અગ્નિના સ્વભાવનું પ્રતિપાદન (૪, ૫), પૃથિવીના ભ્રમણનું લક્ષણ (૬), અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિનું પ્રતિપાદન (૧૨, ૧૪, ૧૮ ઈશ્વર-ભૌતિક, ૨૪, ૨૯ ઈશ્વર), અગ્નિહોત્રના મંત્રોનો પ્રકાશ (૧-૩), ઈશ્વરનું ઉપસ્થાન (૧૧), અગ્નિનું સ્વરૂપ (૭, ૮, ૯, ૧૬), ઈશ્વરની પ્રાર્થના, ઉપાસના અને તેનાં ફળોનું વર્ણન (૨૭, ૩૦, ૩૧), ઈશ્વરના સ્વભાવનું પ્રતિપાદન (૩૫), સૂર્યનાં કિરણોનાં કાર્યનું વર્ણન (૩૩), નિત્ય ઉપાસના (૩૫), સાવિત્રી મંત્રનું પ્રતિપાદન (૩૫), ઈશ્વર ઉપાસના (૩૫),

યજ્ઞફળનું પ્રકાશન (૪૯), ભૌતિક અગ્નિનું વર્ણન (૪૦), ગૃહાશ્રમનું અનુષ્ઠાન અને લક્ષણ (૪૧), ઈન્દ્ર અને મરુતનું કાર્ય (૪૬), પુરુષાર્થ કરવો આવશ્યક (૪૭), પાપોથી નિવૃત્તિ (૪૮), યજ્ઞની સમાપ્તિ આવશ્યક (૪૯), સત્યતાથી લેણ-દેણનો વ્યવહાર કરવો (૫૦), વિદ્વાન અને ઋતુઓના સ્વભાવનું વર્ણન (૨૧), ચાર અન્તઃકરણનું લક્ષણ (૫૩, ૫૪, ૫૫), રુદ્ર શબ્દના અર્થનું પ્રતિપાદન (૫૭-૬૩), ત્રણસો વર્ષની આયુનું સંપાદન (૬૨), ધર્મથી આયુ વગેરે પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરવાનું વર્ણન છે. તેથી બીજા અધ્યાયની સાથે આ ત્રીજા અધ્યાયના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ ઇતિ તૃતીયોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ચતુર્થોઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

एदमगन्म देवयजनं पृथिव्या यत्र देवासोऽअजुषन्त विश्वे ।

ऋक्सामाभ्यांऽऽसन्तरन्तो यजुर्भि रायस्पोषेण समिषा मदेम ।

इमाऽआपः शम् मे सन्तु देवीः ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैन्ः हिंसीः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ પૃથિવ્યા:-ભૂમિ પર મનુષ્ય જન્મને પ્રાપ્ત કરીને **ઇદમ્-આ** દેવયજનમ્-વિદ્વાનોનું યજન-પૂજન, સત્કાર અને દાનને પ્રાપ્ત કરીને **યત્ર-જે** દેશમાં **ઋક્સામાભ્યામ્-ઋગ્વેદ,** સામવેદ તથા **યજુર્ભિઃ-યજુર્વેદના** મંત્રોમાં કહેલાં કર્મ, **રાયસ્પોષેણ-ધનની** પુષ્ટિ, **સમિષા-શ્રેષ્ઠ** વિદ્યાદિની ઈચ્છા તથા **અન્નાદિથી દુઃખોનો સન્તરન્તો-અંત** કરીને - પાર કરીને **વિશ્વે-સર્વ** દેવાસ:-વિદ્વાન - અમે વિદ્વાનો સુખોને **અગન્મ-પ્રાપ્ત** કરીએ **અજુષન્ત-તથા** સર્વ રીતે તેનું સેવન કરીને **મદેમ-સુખી** રહીએ.

ઉ-અને મે-મારા દ્વારા સુનિયમ, વિદ્યા, શ્રેષ્ઠ શિક્ષાની સાથે સેવન કરેલ **ઇમાઃ-આ દેવીઃ-શુદ્ધ આપઃ-જલ** સુખ આપનાર બને છે, તેમ ત્યાં તું પણ તેને પ્રાપ્ત કરીને **જુષસ્વ-સેવન** કરીને આનંદને પ્રાપ્ત કર, તે જલ વગેરે પદાર્થો પણ તને **શમ્-સુખકારક સન્તુ-બને.**

જેમ **ઓષધે-સોમલતા** વગેરે ઔષધિગણ સર્વ રોગોથી રક્ષા કરે છે, તેમ તું પણ અમારી ત્રાયસ્વ-રક્ષા કર.

સ્વધિતે-રોગનાશકમાં વજ્ર સમાન બનીને **એન્મ્-એ** યજમાન તથા પ્રાણીમાત્રને **મા હિંસીઃ-કદી** માર નહિ (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય અંગ અને ઉપનિષદો સહિત ચારે વેદોને ભણીને, અન્યોને ભણાવીને, વિદ્યાને પ્રકાશિત કરીને, વિદ્વાન બનીને, શ્રેષ્ઠ કર્મોનાં અનુષ્ઠાનથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે;

તેમ એ વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને, તેમની પાસેથી વૈદિક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, શ્રેષ્ઠ આચરણ અને ઔષધિ સેવનથી દુઃખનો નાશ કરીને, શારીરિક તથા આત્મિક પુષ્ટિથી ધન-સંચય કરીને, સર્વ મનુષ્યોએ આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧)

आपोऽअस्मान् मातरः शुन्ध्यन्तु घृतेन नो घृतप्सुः पुनन्तु ।

विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि ।

दीक्षातपसोस्तनूरसि तां त्वा शिवांश् શગ્માં પરિદધે ભદ્રં વર્ણ પુષ્યન્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **ભદ્રમ્-અતિ** સુંદર **વર્ણમ્-ગ્રહણ** કરવા યોગ્ય અતિ સુંદર રૂપને **પુષ્યન્-પુષ્ટ** કરતો હું **ઘૃતપ્સુઃ-ધીને** પવિત્ર કરવા **દેવીઃ-દિવ્ય** ગુણયુક્ત **માતરઃ-માતા-પિતા** સમાન પાલન કરનારા

આપ:-જલ રિપ્રમ્-વ્યક્ત વાણીથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અને જાણવા યોગ્ય વિશ્વમ્-સર્વને પ્રવહન્તિ-પ્રાપ્ત કરે છે, હે વિદ્વાનો ! અસ્માન્-અમો મનુષ્યોને શુન્ધયન્તુ-બાહ્ય દેશને શુદ્ધ કરો અને જે ઘૃતેન-જલ ઘી સમાન પુષ્ટ કરનાર છે, તેથી ન:-અમને સુખ આપીને તેનાથી પુનન્તુ-પવિત્ર કરો.

જેમ હું ઇત્-પણ ઉત્-સારી રીતે આખ્ય:-એ જલોથી શુચિ:-પવિત્ર તથા આપૂત:-શુદ્ધ થઈને દીક્ષાતપસો:-બ્રહ્મચર્ય વગેરેના ઉત્તમ નિયમોના પાલનથી, જે ધર્મના અનુષ્ઠાન માટે તનૂ:-શરીર અસિ-એ, તે શિવામ્-કલ્યાણકારી શગ્મામ્-સુખસ્વરૂપ શરીરને એમિ-પ્રાપ્ત કરીને પરિદધે-સર્વ રીતે ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ તે જલ અને તામ્-તે ત્વામ્-અત્યુત્તમ શરીરને ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, પ્રાણોને ધારણ કરાવનાર તથા માતા-પિતા સમાન પાલન કરનાર જલ છે, તેનાથી સર્વ પ્રકારથી પવિત્ર થઈને, તેને શુદ્ધ કરીને, મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ.

તેનાથી સુંદર વર્ણ અને રોગરહિત શરીર બનાવીને, નિત્ય પ્રયત્નપૂર્વક ધર્મનું આચરણ કરીને, પુરુષાર્થથી આનંદ પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૨)

મ્હીનાં પયોંસિ વર્ચોંદાઽસિ વર્ચોં મે દેહિ ।

વૃત્રસ્યાંસિ કૃનીનકશ્કુર્દાઽસિ ચક્ષુર્મે દેહિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે આ મહિનામ્-પૃથિવી વગેરેના પયઃ-જલરસના નિમિત્ત અસિ-એ, વર્ચોંદાઃ-દીપ્તિ આપનાર અસિ-એ, જે મે-મારા માટે વર્ચઃ-પ્રકાશ દેહિ-આપે છે, જે વૃત્રસ્ય-મેઘનો કનીનકઃ-પ્રકાશિત કરનાર અસિ-એ. તથા જે ચક્ષુર્દાઃ-નેત્રના વ્યવહારને સિદ્ધ કરનાર [અર્થાત્ જોવાનું સાધન ચક્ષુ આપનાર] અસિ-એ, તે સૂર્ય મે-મારા માટે ચક્ષુઃ-નેત્ર વ્યવહારને દેહિ-પ્રદાન કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : સૂર્યના પ્રકાશ વિના વર્ષાની ઉત્પત્તિ અને નેત્રોના વ્યવહારની [જોવાની] સિદ્ધિ થતી નથી, તેથી જેણે એ સૂર્યની રચના કરી છે, તે ઈશ્વરને કરોડો ધન્યવાદ આપવા જોઈએ. એમ મનુષ્યોએ જાણવું યોગ્ય છે. (૩)

ચિત્પતિર્મા પુનાતુ વાક્પતિર્મા પુનાતુ દેવો માં સવિતા પુનાત્વચ્છિંદ્રેણ પવિત્રેણ સૂર્યસ્ય રશ્મિભિઃ । તસ્ય તે પવિત્રપતે પવિત્રપૂતસ્ય યત્કામઃ પુને તચ્છકેયમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે પવિત્રપતે-પવિત્રજનોના પાલક પરમેશ્વર ! ચિત્પતિઃ-વિજ્ઞાનના સ્વામી, વાક્પતિઃ-વાણીને નિર્મળ અને સવિતા-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનાર, દેવઃ-દિવ્ય સ્વરૂપ આપ પવિત્રેણ-શુદ્ધ કરનાર, અચ્છિંદ્રેણ-અવિનાશી વિજ્ઞાનથી સૂર્યસ્ય-સૂર્ય તથા પ્રાણના રશ્મિભિઃ-પ્રકાશ અને ગમનાગમનથી મા-મને તથા મારા ચિત્તને પુનાતુ-પવિત્ર કરો. મા-મને તથા મારી વાણીને પુનાતુ-પવિત્ર કરો. મા-મને તથા મારા ચક્ષુને પુનાતુ-પવિત્ર કરો.

જે પવિત્રપૂતસ્ય-શુદ્ધ સ્વાભાવિક વિજ્ઞાન વગેરે ગુણોથી પવિત્ર તે-આપની કૃપાથી યત્કામઃ-જે ઉત્તમ કામનાયુક્ત હું પુને-પવિત્ર બનું છું.

જે તે-આપની ઉપાસનાથી તત્-તે અતિ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરવા શકેયમ્-સમર્થ બનું છું. [તસ્ય]-તે આપ

જગદીશ્વરની હું સેવા કેમ ન કરું ? (૪)

ભાવાર્થ : જે વેદોના વિશેષ જ્ઞાતા અને રક્ષક સ્વામી પરમેશ્વરે વિદ્યા, પૃથિવી, જલ, વાયુ અને સૂર્ય આદિ શુદ્ધિકારક પદાર્થોની રચના કરી છે, તેની ઉપાસનાથી મનુષ્યોએ કામનાની પરિપૂર્ણતા અને પવિત્રતા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૪)

આ વૌ દેવાસઽઈમહે વામં પ્રયત્પૃથ્વરે ।

આ વૌ દેવાસઽઆશિષૌ યજ્ઞિયાસો હવામહે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે દેવાસ:-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી પ્રકાશિત વિદ્વાનો ! જેમ અમે વ: - તમને પ્રયતિ-સુખયુક્ત અધ્વરે-હિંસા કરવાને અયોગ્ય યજ્ઞના અનુષ્ઠાનમાં વ:-તમારા વામમ્-પ્રશંસનીય ગુણસમૂહની આ ઈમહે-સારી રીતે યાચના કરીએ છીએ.

હે દેવાસ:-વિદ્વાનો ! જેમ અમે આ સંસારમાં આપનાથી યજ્ઞિયા-યજ્ઞને સિદ્ધ કરવા યોગ્ય આશિષ:- ઈચ્છાઓનો આ હવામહે-સારી રીતે સ્વીકાર કરી શકીએ, તેમ જ આપ અમારા માટે સદા પ્રયત્ન કરતા રહો. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમ વિદ્વાનો દ્વારા ઉત્તમ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને, પોતાની ઈચ્છાઓ પૂર્ણ કરીને, એ વિદ્વાનોનો સંગ અને સેવા કરવાં જોઈએ. (૫)

સ્વાહા યજ્ઞં મનસઃ સ્વાહોરોરન્તરિક્ષાત્ સ્વાહા દ્યાવાપૃથિવીભ્યાઃસ્વાહા વાતાદારંભે સ્વાહા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું સ્વાહા-વેદોક્ત, સ્વાહા-ઉત્તમ શિક્ષા સહિત, સ્વાહા-વિદ્યાઓનો પ્રકાશ, સ્વાહા-સત્ય અને સર્વ જીવોનું કલ્યાણ કરનારી વાણી અને સ્વાહા-સારી રીતે પ્રયુક્ત કરેલ ઉત્તમ ક્રિયાથી ઝો:-વિશાળ અન્તરિક્ષાત્-આકાશ અને વાતાત્-વાયુની શુદ્ધિ કરીને દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-શુદ્ધ પ્રકાશ [દ્યુલોક] અને ભૂમિના પદાર્થો મનસઃ-વિજ્ઞાન અને ઠીક-ઠીક ક્રિયાથી યજ્ઞમ્-યજ્ઞને પૂર્ણ કરવા માટે પુરુષાર્થનો આરંભે-નિત્ય આરંભ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે વેદોક્ત રીતિથી મન-વચન-કર્મથી જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તે અન્તરિક્ષ વગેરેમાં વાયુની શુદ્ધિથી પ્રકાશ અને પૃથિવીની પવિત્રતા કરીને સર્વને સુખી કરે છે. (૬)

આકૂત્યૈ પ્રયુજેઽગ્નયે સ્વાહા મેધાયૈ મનસેઽગ્નયે સ્વાહા દીક્ષાયૈ તપસેઽગ્નયે સ્વાહા સરસ્વત્યૈ પૂષ્ણેઽગ્નયે સ્વાહા । આપૌ દેવીર્બૃહતીર્વિશ્વશમ્ભુવૌ દ્યાવાપૃથિવીઽઝરૌઽઅન્તરિક્ષા । બૃહસ્પતયે હૃવિષા વિધેમ્ સ્વાહા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ અમે આકૂત્યૈ-ઉત્સાહ, પ્રયુજે-શ્રેષ્ઠ ધર્મયુક્ત ક્રિયાઓ, અગ્નયે-અગ્નિ પ્રદીપન, સ્વાહા-વેદવાણીનો પ્રચાર, સરસ્વત્યૈ-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, પૂષ્ણે-પુષ્ટિ કરવા, બૃહસ્પતયે-મોટા

મોટા અધિપતિઓ થવા, અગ્નયે-વિદ્યુત્ની વિદ્યાનું ગ્રહણ, સ્વાહા-ભણવા-ભણાવવાથી વિદ્યા, મેઘાયૈ-બુદ્ધિની વૃદ્ધિ, મનસે-વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ, અગ્નયે-કારણરૂપ, સ્વાહા-સત્યવાણીની પ્રવૃત્તિ, દીક્ષાયૈ-ધર્મનિયમ અને આચરણની રીતિ, તપસે-પ્રતાપ, અગ્નયે-જઠરાગ્નિની શુદ્ધિ, સ્વાહા-ઉત્તમ સ્તુતિયુક્ત વાણી દ્વારા બૃહતી:-મહાન ગુણોથી યુક્ત, વિશ્વશમ્ભુવ:-સર્વને સુખ ઉત્પન્ન કરાવનાર, દેવી:-દિવ્યગુણસંપન્ન, આપ:-પ્રાણ અને જલથી, સ્વાહા-સત્યભાષણ, દ્યાવાપૃથિવી-ભૂમિ અને પ્રકાશની શુદ્ધિ માટે, ઝો-બહુ સુખ પ્રાપ્તિ, અન્તરિક્ષ-અન્તરિક્ષમાં રહેનારા પદાર્થોને શુદ્ધ અને જે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી તથા વેદવાણીથી યજ્ઞ સિદ્ધ થાય છે, તે સર્વને હવિષા-સત્ય અને પ્રેમભાવથી વિધેમ-સિદ્ધ કરીએ, તેમ તમે પણ કર્યા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : યજ્ઞના અનુષ્ઠાન વિના ઉત્સાહ, બુદ્ધિ, સત્યવાણી, દીક્ષા, તપ, ધર્માચરણ, વિદ્યા અને પુષ્ટિની પ્રાપ્તિ સંભવ નથી અને તેના વિના કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરની આરાધના કરવામાં સફળતા પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

આથી સર્વ મનુષ્યોએ એ સર્વનું અનુષ્ઠાન કરીને સંપૂર્ણ આનંદને પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૭)

વિશ્વૌ દેવસ્ય નેતુર્મત્તૌ વુરીત સ્વચ્ચમ્ ।

વિશ્વૌ રાયઽઙ્ગુધ્યતિ દ્યુમ્નં વૃણીત પુષ્યસે સ્વાહા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જેમ વિશ્વ:-સર્વ મર્ત્ત:-મનુષ્ય નેતુ:-સર્વને પ્રાપ્ત તથા દેવસ્ય-સર્વ પ્રકાશક પરમેશ્વરની સાથે સ્વચ્ચમ્-મિત્રતા અને ગુણ-કર્મ સમૂહનો વુરીત-સ્વીકાર અને વિશ્વ:-સર્વ રાયે-ધનની પ્રાપ્તિ માટે ઙ્ગુધ્યતિ-બાણને ધારણ કરે છે અને તે દ્યુમ્નમ્-ધનનો વૃણીત-સ્વીકાર કરે છે અર્થાત્ પોતાનું બનાવે છે, તેમ હે મનુષ્ય ! એ સર્વનું અનુષ્ઠાન કરીને સ્વાહા-શુભકર્મથી તું પણ પુષ્યસે-પુષ્ટ બન. (૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના અને પરસ્પર મિત્રતા કરીને, યુદ્ધમાં દુષ્ટોને જીતીને, રાજ્યલક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરીને, સુખી રહેવું જોઈએ. (૮)

ઋક્સામયોઃ શિલ્પે સ્થસ્તે વામારંભે તે માં પાત્માસ્ય યજ્ઞસ્યોદ્વૃચઃ ।

શર્માસિ શર્મ મે યચ્છ નમસ્તેઽસ્તુ મા માં હિંસીઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! આપ જે હું ઋક્સામયોઃ-ઋગ્વેદ અને સામવેદના અધ્યયન પછી ઉદ્વૃચઃ-જેમાં સારી રીતે ઋચાઓ પ્રત્યક્ષ કરવામાં આવે છે, અસ્ય-આ યજ્ઞસ્ય-શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ થયેલ યજ્ઞ સંબંધી વામ્-એ શિલ્પે-મન તથા પ્રસિદ્ધ ક્રિયાથી સિદ્ધ થનાર વિદ્યાઓ સ્થ-છે, તે-તે બન્નેથી આરંભે-આરંભ કરું છું.

જે મા-મારી આ-સર્વ તરફથી પાતમ્-રક્ષા કરે છે, તે-તેઓ સ્થ:-છે. તેમને વિદ્વાનોના સાનિધ્યથી ગ્રહણ કરું છું.

હે વિદ્વન્ મનુષ્ય ! તે-તારા માટે મે-મારા નમ:-અન્નાદિ સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર અસ્તુ-છે. તથા તમે મા-મને ચલાયમાન ન કરો અને યત્-જે શર્મ-સુખ અસિ-છે, તે શર્મ-સુખને મે-મારા માટે યચ્છ-પ્રદાન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનો પાસેથી વેદોનું અધ્યયન કરીને, શિલ્પવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, હસ્તક્રિયાઓથી સ્વયં સાક્ષાત્કાર કરીને, વિમાનાદિ યાનોની રચનાઓનું નિર્માણ કરીને, સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૯)

ऊर्गस्याङ्गिरस्यूर्णम्रदाऽऊर्जं मयि धेहि । सोमस्य नीविरसि विष्णोः शर्मांसि शर्म यजमानस्येन्द्रस्य योनिरसि सुऽसस्याः कृषीस्कृधि । उच्छ्रयस्व वनस्पतऽऊर्ध्वो मां पाह्यःहंसऽआस्य यज्ञस्योदृचः ॥ १० ॥

પદાર્થ - હે વનસ્પતે-પ્રકાશનીય વિદ્વાનો પ્રચાર કરનારા વિદ્વાન ! તું જે અંગ્ગિરસિ-અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી સિદ્ધ કરેલી ઊર્ણમ્રદાઃ-આચ્છાદનને હટાવનાર ઊર્જ-પરાક્રમ તથા અન્નાદિને પ્રદાન કરનારી શિલ્પ વિદ્યા અસિ-છે, અથવા જે ઊર્જમ્-પરાક્રમ તથા અન્નાદિને ધારણ કરે અસિ-છે, જે સોમસ્ય-ઉત્પન્ન પદાર્થોનું નીવિઃ-આચ્છાદન કરનાર અસિ-છે.

જે વિષ્ણોઃ-શિલ્પવિદ્યામાં વ્યાપક બુદ્ધિ, યજમાનસ્ય-શિલ્પક્રિયાને જાણનાર, ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત મનુષ્યના શર્મ-સુખનું યોનિઃ-કારણ અસિ-છે.

જે અસ્ય-આ ઉદ્વચઃ-ઋચ્યાઓને પ્રત્યક્ષ કરનાર યજ્ઞસ્ય-શિલ્પક્રિયા-સાધ્ય યજ્ઞ માટે શર્મ-સુખકારક અસિ-છે, તેને મયિ-શિલ્પવિદ્યાને જાણવાના ઇચ્છુક મારામાં આ ધેહિ-સારી રીતે ધારણ કરે છે.

સુસસ્યાઃ-ઉત્તમ ધાન્ય ઉત્પન્ન કરવા તથા કૃષીઃ-ખેતી તથા ભૂમિનું વિલેખન કરનારી ક્રિયાઓને કૃધિ-સિદ્ધ કરીને ઊર્ધ્વ : -ઉપર સ્થિત થનાર મા-મને ઉચ્છ્રયસ્વ-ઉત્તમ ધાન્યયુક્ત ખેતીનું સેવન કરાવો અને અંહસઃ-પાપ અને દુઃખોથી પાહિ-રક્ષા કરો. જે વિમાન વગેરે યાનોમાં તથા યજ્ઞોમાં વનસ્પતે-વૃક્ષની શાખા ઉપર રાખવામાં આવે છે, તેનો પણ ઉચ્છ્રયસ્વ-ઉપયોગ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે વિદ્વાનોથી શિલ્પવિદ્યાનો સાક્ષાત્કાર કરીને તથા તેનો પ્રચાર કરીને સર્વ મનુષ્યોને સમૃદ્ધિયુક્ત બનાવવા જોઈએ. (૧૦)

व्रतं कृणुताग्निर्ब्रह्माग्निर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः । दैवीं धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसः सुतीर्था नोऽअसद्वशौ । ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षक्रतवस्ते नोऽवन्तु ते नः पान्तु तेभ्यः स्वार्हा ॥ ११ ॥

પદાર્થ : અમે જે બ્રહ્મ-બ્રહ્મપદવાચ્ય અગ્નિઃ-નામથી પ્રસિદ્ધ અસત્-છે, જે યજ્ઞઃ-અગ્નિસંજ્ઞક અને જે વનસ્પતિઃ-વનોનો પાલક યજ્ઞ અગ્નિઃ-અગ્નિ નામે છે, તેની ઉપાસના કરીને, તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, અભિષ્ટયે-ઈષ્ટ સિદ્ધિ માટે જે સુતીર્થા-જેથી અત્યુત્તમ, દુઃખોથી તારનાર, વેદાધ્યયનાદિ તીર્થ પ્રાપ્ત થાય છે, તે સુમૃડીકામ-ઉત્તમ સુખયુક્ત વર્ચોધામ્-વિદ્યારૂપી પ્રકાશને ધારણ કરવા તથા દૈવીમ્-દિવ્યગુણ સંપન્ન ધિયમ્-બુદ્ધિ અને ક્રિયાને મનામહે-જાણીએ.

યે-જે દક્ષક્રતવઃ-શરીર અને આત્માનાં બળ, બુદ્ધિ તથા ક્રિયાથી યુક્ત મનોજાતાઃ-વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન થયેલ મનોયુજઃ-સત્ય-અસત્યને જાણીને દેવાઃ-વિદ્વાનો વજ્ઞે-પ્રકાશયુક્ત કર્મમાં રહે છે. તથા જેનાથી

સ્વાહા-વિદ્યાયુક્ત વાણી પ્રાપ્ત થાય છે. તેભ્યઃ-તેનાથી પૂર્વોક્ત પ્રજ્ઞા બુદ્ધિની મનામહે-યાચના કરીએ છીએ. તે-તેઓ નઃ-અમને અવન્તુ-વિદ્યા, ઉત્તમ ક્રિયા તથા શિક્ષા વગેરેમાં પ્રવિષ્ટ [કરાવે] અને નઃ-અમારી નિરંતર પાન્તુ-રક્ષા કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે જેનું 'અગ્નિ' નામ છે, તે બ્રહ્મને જાણીને તથા તેની ઉપાસના કરીને ઉત્તમ બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ.

વિદ્વાન લોકો જે બુદ્ધિ દ્વારા શિલ્પ યજ્ઞોને સિદ્ધ કરે છે, તે વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, સ્વતંત્ર વ્યવહારમાં સદા સ્થિર રહેવું જોઈએ.

બુદ્ધિ વિના કોઈ પણ મનુષ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. માટે સર્વ વિદ્વાનોને ઉચિત છે કે સર્વ મનુષ્યોને બ્રહ્મવિદ્યા, પદાર્થવિદ્યા અને બુદ્ધિ પ્રદાન કરીને તેમની નિરંતર રક્ષા કરવી જોઈએ અને એ રક્ષિત લોકોએ પરમેશ્વર અને ધાર્મિક વિદ્વાનોનાં ઉત્તમ પ્રિય કાર્યો નિત્ય કરવાં જોઈએ. (૧૧)

શ્વાત્રાઃ પીતા ભવત યૂયમાપોઽઅસ્માકમન્તરુદરે સુશેવાઃ ।

તાઽઅસ્મભ્યમયક્ષ્માઽઅનમીવાઽઅનાગસઃ સ્વદન્તુ દેવીરમૃતાઽઋતાવૃધઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અમે પીતાઃ-પાન કરેલ અસ્માકમ્-મનુષ્યોના અન્તઃ-મધ્ય તથા ઉદરે-શરીરની અંદર રહેલું અસ્મભ્યમ્-મનુષ્યો વગેરે માટે સુશેવાઃ-ઉત્તમ સુખયુક્ત અનમીવાઃ-જવર વગેરે રોગસમૂહથી રહિત અયક્ષ્માઃ-ક્ષય વગેરે રોગકારક દોષોથી રહિત અનાગસઃ-પાપ દોષોનાં કારણોથી રહિત ઋતાવૃધઃ-સત્યવર્ધક અમૃતાઃ-નાશરહિત અમૃતરસયુક્ત દેવીઃ-દિવ્યગુણ સંપન્ન આપઃ-પ્રાણ અથવા જલ છે. તાઃ-તેનું આપ સ્વદન્તુ-સારી રીતે સેવન કરો.

આનુ અનુષ્ઠાન કરીને યૂયમ્-તમે સર્વ મનુષ્યો સુખ ભોગવનાર ભવત-નિત્ય રહો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના સંગથી અને ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સર્વ પ્રકારથી સુપરીક્ષિત, શુદ્ધ, પવિત્ર, શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરનાર, તથા રોગનાશક જલ વગેરે પદાર્થોનું સેવન કરવું જોઈએ.

વિદ્યા અને આરોગ્ય વિના કોઈ પણ મનુષ્ય નિરંતર કર્મ કરી શકતો નથી. આથી તેનું - જલાદિ પદાર્થોનું સદા સેવન કરવું જોઈએ. (૧૨)

इयं ते यज्ञियां तनूरपो मुञ्चामि न प्रजाम् ।

अहोमुचः स्वाहाकृताः पृथिवीमाविशत पृथिव्या सम्भव ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ તે-તારું જે ઇયમ્-આ યજ્ઞિયા-યજ્ઞને યોગ્ય તનૂઃ-શરીર અપઃ-જલ અને પ્રાણ તથા પ્રજામ્-પ્રજાની રક્ષા કરે છે, જેને તું છોડતો નથી. હું પણ મારા તે શરીરને પૂર્ણ આયુ ભોગવ્યા વિના પ્રમાદથી અધવચ્ચે ન મુજ્જામિ-છોડતો - ત્યાગ કરતો નથી.

હે મનુષ્યો ! જેમ તમે પૃથિવ્યા-ભૂમિ સાથે વૈભવયુક્ત થઈને અંહોમુચ્ચ-દુઃખોને છોડાવવા તથા સ્વાહાકૃતા:-વાણીથી સિદ્ધ કરેલ અપઃ-જલ અને પૃથિવીમ્-ભૂમિને આવિશત-સારી રીતે વિજ્ઞાનથી પ્રવેશ કરો [છો], હું પણ તેનાથી ઐશ્વર્ય સહિત અને તેમાં [પૃથિવીમાં] પ્રવેશ કરું છું, તેમ તું પણ સમ્ભવ-બન અને પૃથિવીમાં પ્રવેશ કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યાથી પદાર્થોને પરસ્પર મેળવીને તથા તેનું સેવન કરીને રોગરહિત શરીર અને આત્માનું પાલન કરી સુખી રહેવું જોઈએ. (૧૩)

અગ્ને ત્વઃ સુ જાગૃહિ વ્યઃ સુ મન્દિષીમહિ । રક્ષાઃ ગોઽપ્રયુચ્છન્ પ્રબુધે નઃ પુનસ્કૃધિ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : અગ્ને-જે અગ્નિ પ્રબુધે-જાગવાના સમયે સુજાગૃહિ-સારી રીતે જગાડે જેથી વ્યમ્-જગત્નાં કર્મ કરનારા અમે સુમન્દિષીમહિ-આનંદપૂર્વક સૂઈએ છીએ અને જે અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદ રહિત બનીને નઃ-અમે પ્રમાદ રહિતની રક્ષ-રક્ષા કરે છે તથા પ્રમાદ કરનારનો નાશ કરે છે અને જે નઃ-અમારી સાથે પુનઃ-વારંવાર આ રીતે કૃધિ-વ્યવહાર કરે છે, તેનું યુક્તિપૂર્વક સર્વ મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ સૂવા, જાગવા, જીવન અને મરણનો હેતુ છે, તેનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરવું જોઈએ. (૧૪)

પુનર્મનઃ પુનરાયુર્મ્ઽઆગન્ પુનઃ પ્રાણઃ પુનરાત્મા મ્ઽઆગન્ પુનશ્ચક્ષુઃ પુનઃ શ્રોત્રં મ્ઽઆગન્ । વૈશ્વાનરોઽદબ્ધસ્તનૂપાઽઅગ્નિર્નઃ પાતુ દુરિતાદવઘ્યાત્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : જેના સંબંધ અથવા કૃપાથી મે-મને જે મનઃ-વિજ્ઞાનસાધક મન આયુઃ-જીવન પુનઃ-ફરી-ફરી આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે.

મે-મને પ્રાણઃ-શરીરનો આધાર પ્રાણ પુનઃ-ફરી આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે.

આત્મા-સર્વત્ર વ્યાપક સર્વાન્તર્યામી પરમાત્માનું વિજ્ઞાન આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે.

મે-મન ચક્ષુઃ-જોવા માટે નેત્ર પુનઃ-ફરી આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે અને શ્રોત્રમ્-શબ્દ ગ્રહણ કરનાર કાન આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે.

તે અદબ્ધઃ-હિંસા કરવા અયોગ્ય તનૂપાઃ-શરીર તથા આત્માની રક્ષા કરવા તથા વૈશ્વાનરઃ-શરીરને પ્રાપ્ત થનાર અગ્નિઃ-અગ્નિ અથવા પ્રાપ્ત થનાર પરમેશ્વર નઃ-અમને અવઘ્યાત્-નિંદિત દુરિતાત્-પાપથી ઉત્પન્ન થયેલ દુઃખ અથવા દુષ્ટ કર્મોથી પાતુ-રક્ષા કરે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે જીવ શયન અથવા મરણને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે જે કાર્ય સિદ્ધ કરનારી મન વગેરે ઈન્દ્રિયો છે, તે અંતર્લીન સમાન થઈને ફરીથી પુનઃ જાગવાથી અથવા જન્માન્તરમાં પ્રાપ્ત થાય

છે, તે જે વિદ્યુત્ અગ્નિ વગેરેના સંબંધથી તથા પરમેશ્વરની સત્તા તથા વ્યવસ્થાથી ગોલકયુક્ત બનીને કાર્ય કરવામાં સમર્થ બને છે.

તે સારી રીતે સેવન કરેલ જઠરાગ્નિ સર્વની રક્ષા કરે છે તથા ઉપાસના કરેલ જગદીશ્વર પાપકર્મથી હટાવીને, ધર્મમાં સંલગ્ન કરીને, વારંવાર મનુષ્યજન્મ પ્રદાન કરીને, દુષ્ટ આચરણ અને દુઃખોથી પૃથક્ કરીને, સાંસારિક અને મોક્ષવિષયક સુખ પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧૫)

ત્વમગ્ને વ્રતપાઽસિ દેવઽઆ મર્ત્યેષ્વા । ત્વં યજ્ઞેષ્વીઙ્યઃ ।

રાસ્વેર્યત્સોમા ભૂયો ભર દેવો નઃ સવિતા વસોદાતા વસ્વદાત્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઐશ્વર્યદાતા અગ્ને-જગદીશ્વર ! જે ત્વમ્-આપ મર્ત્યેષુ-મનુષ્યોમાં વ્રતપાઃ-સત્યાચરણની રક્ષા સવિતા-સર્વ જગત્ના ઉત્પાદક યજ્ઞેષુ-સત્કાર અને ઉપાસના વગેરેમાં ઈંદ્ર્યઃ-સ્તુતિને યોગ્ય દેવઃ-પ્રકાશક દેવ અસિ-છો. નઃ-અમારા માટે વસોઃ-ધનનું દાતા-દાન કરનાર વસુ-ધન અદાત્-આપે છે. તે ઇચ્છત્-પ્રાપ્ત કરતાં આપ ભૂયઃ-વારંવાર પુષ્કળ ધન આરાસ્વ-આપો આભર-સર્વ સુખોથી પોષણ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : ત્વમ્-જે અગ્ને-અગ્નિ મર્ત્યેષુ-મરણધર્મી મનુષ્યોનાં કાર્યોમાં વ્રતપાઃ-નિયમાચરણનું પાલન દેવઃ-પ્રકાશક દેવ યજ્ઞેષુ-અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞોમાં ઈંદ્ર્યઃ-ખોજવા યોગ્ય, સોમઃ-ઐશ્વર્ય આપવા સવિતા-સર્વ જગતના પ્રેરક દેવઃ-પ્રકાશમાન અગ્નિ છે તે નઃ-અમારા માટે વસોઃ-ધનને દાતા-પ્રાપ્ત ઇચ્છત્-કરાવતા ભૂયઃ અત્યધિક વસુ-ધનને અદાત્-આપે છે અને આરાસ્વ-ધન આપવાના નિમિત્ત બનીને આભર-સર્વ પ્રકારનાં સુખોથી પુષ્ટ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સત્યસ્વરૂપ, પૂજાયોગ્ય, સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, સકલ સુખદાતા પરમેશ્વરની જ ઉપાસના કરીને સુખી બનવું જોઈએ.

અને એ રીતે કાર્ય સિદ્ધિ માટે ભૌતિક અગ્નિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને સર્વ સુખો પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૧૬)

ऐषा तै शुक्र तनूरेतद्वर्चस्तया सम्भवं भ्राजङ्गच्छ । जूरसि धृता मनसा जुष्टा विष्णवे ॥ १७ ॥

પદાર્થ : હે શુક્ર-વીર્ય પરાક્રમયુક્ત વિદ્વાન ! તે-તારા જે વિષ્ણવે-પરમેશ્વર અથવા યજ્ઞ માટે તેં જેને ધૃતા-ધારણ કરેલ છે તયા-તેનાથી તું જૂઃ-જ્ઞાની અને વેગયુક્ત બનીને એતત્-આ વર્ચઃ-વિજ્ઞાન અને તેજયુક્ત સમ્ભર-સંપન્ન બની સારી રીતે વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે તનૂઃ-શરીર અસિ-છે. તેનાથી તું ભ્રાજમ્-પ્રકાશને ગચ્છ-પ્રાપ્ત કર અને ધૃતા-ધારણ કરેલ મનસા-વિજ્ઞાનથી પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરવાના કારણે વિજ્ઞાન સંપન્ન થયેલ મન દ્વારા શરીર અને આત્માના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને તથા યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને વિજ્ઞાનયુક્ત મનથી સદા

સુખી રહેવું જોઈએ. (૧૭)

તસ્યાસ્તે સત્યસવસઃ પ્રસવે તન્વો યન્ત્રમશીય સ્વાહા ।

શુક્રમસિ ચન્દ્રમસ્યમૃતમસિ વૈશ્વદેવમસિ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! સત્યસવસઃ-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત અથવા જગતના નિમિત્ત કારણરૂપ તે-આપના પ્રસવે-સર્જેલા સંસારમાં આપની કૃપાથી જે સ્વાહા-વાણી અથવા વિદ્યુત્ છે, તસ્યાઃ-તે બન્નેના સાનિધ્યથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને યુક્ત હું જે શુક્રમ્-શુદ્ધ અસિ-છે, ચન્દ્રમ્-આહ્લાદકારક અસિ-છે અમૃતમ્-અમૃતાત્માનો વ્યવહાર તથા પરમાર્થથી સુખને સિદ્ધ કરનાર અસિ-છે અને વૈશ્વદેવમ્-સર્વ દેવ અર્થાત્ વિદ્વાનોને સુખ આપનાર અસિ-છે, તત્-તે યન્ત્રમ્-સંકોચન, વિકાસન-વૃદ્ધિ, ચાલન, બંધન કરનાર યંત્રને અશીય-પ્રાપ્ત કરું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર દ્વારા રચેલ આ સૃષ્ટિમાં વિદ્યા દ્વારા કલાયંત્રોની સિદ્ધિના માધ્યમથી, અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી સમ્યક્ ઉપકાર ગ્રહણ કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૧૮)

ચિદસિ મનાસિ ધીરસિ દક્ષિણાસિ ક્ષત્રિયાસિ યજ્ઞિયાસ્યદિતિરસ્યુભયતઃ-
શીર્ષ્ણી । સા નઃ સુપ્રાચી સુપ્રતીચ્યેધિ મિત્રસ્ત્વા પદિ બંધનીતાં પૂષાઽધ્વન-
સ્પાત્વિન્દ્રાયાધ્યક્ષાય ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! સત્યસવસઃ-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત તે-આપના પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલ સંસારમાં જે ચિત્-વિદ્યા વ્યવહાર ચેતાવનારી અસિ-છે, જે મના-જ્ઞાનની સાધક અસિ-છે, જે ધીઃ-બુદ્ધિ અને કર્મને પ્રાપ્ત કરનારી અસિ-છે, જે દક્ષિણા-વિજ્ઞાન અને વિજય પ્રાપ્ત કરવા ક્ષત્રિયા-રાજાના પુત્ર સમાન વર્તનારી અસિ-છે, જે યજ્ઞિયા-યજ્ઞ કરાવવા યોગ્ય અસિ-છે, જે ઉભયતઃ-શીર્ષ્ણી-બન્ને પ્રકારથી શિર સમાન, ઉત્તમ ગુણ યુક્ત અને અદિતિઃ-નાશરહિત વાણી તથા વીજળી અસિ-છે, સા-તે નઃ-અમને સુપ્રાચી-પૂર્વકાળ અને સુપ્રતીચી-પશ્ચિમ કાળમાં સુખ આપનારી ણ્ધિ-બને.

જે પૂષા-પુષ્ટિ કરનાર મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર બનીને મનુષ્યત્વ માટે ત્વા-તે વાણી તથા વીજળીને પદિ-પ્રાપ્તિ યોગ્ય ઉત્તમ વ્યવહારમાં અધ્યક્ષાય-સારી રીતે વ્યવહાર જોઈને ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર, અધ્યક્ષ અને શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર માટે બંધનીતામ્-બંધનયુક્ત કરે.

તે આપ અધ્વનઃ-વ્યવહાર અને પરમાર્થની સિદ્ધિ કરાવનાર માર્ગમાં નઃ-આપ અમારી નિરંતર પાતુ-રક્ષા કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે બહાર અને અંદરથી રક્ષા કરવાના કારણે સર્વોત્તમ વાણી અને વિદ્યુત્ છે, તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન કાળમાં સુખદાયી છે, એમ જાણવું જોઈએ.

જે કોઈ મનુષ્ય અને સભાપતિની પ્રસન્નતા તથા તેની આજ્ઞાપાલન માટે તથા ઉત્તમ વ્યવહારોની સિદ્ધિ માટે, સત્ય વાણી અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને દંઢતાપૂર્વક વશમાં કરી લે છે, તે જ મનુષ્ય સર્વનો રક્ષક બને છે. (૧૯)

અનુ ત્વા માતા મન્યતામનુ પિતાઽનુ ભ્રાતા સગર્ભ્યોઽનુ સખા સયૂથ્યઃ । સા
દૈવિ દેવમચ્છેહીન્દ્રાય સોમઃ રુદ્રસ્ત્વાવર્તયતુ સ્વસ્તિ સોમસખા પુનરેહિ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે સ્ત્રી-પરમેશ્વર અથવા ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યના અખંડ પાલનથી પૂર્ણ વિદ્વાન્ ત્વા-તને જે વાણી, વિદ્યુત્ અને સોમમ્-ઉત્તમ પદાર્થોનો સમૂહ સ્વસ્તિ-સુખના ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે આવર્તયતુ-પ્રવૃત્ત કરે; અને જેનાથી સા-તે સોમસખા-વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત વાણી અને દેવિ-દિવ્યગુણ વિદ્યુત્ દેવમ્-ઉત્તમ ધર્માત્મા વિદ્વાનને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તેને તું પુનઃ-વારંવાર અચ્છ-સારી રીતે ઇહિ-પ્રાપ્ત કર.

એ વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે ત્વા-તને માતા-ઉત્પન્ન કરનારી જનની અનુમન્યતામ્-અનુમતિ અર્થાત્ આજ્ઞા આપે. એ જ રીતે પિતા-જનક સગર્ભ્યઃ-તે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થયેલ અર્થાત્ ભ્રાતા-સહોદર ભાઈ અને સયૂથ્યઃ-સમૂહમાં રહેનાર સખા-મિત્ર સર્વે પ્રસન્નતાપૂર્વક આજ્ઞા આપે, તે વિદ્યાને તું પુનરેહિ-અત્યંત પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત કર. (૨૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરસ્પર એવો વ્યવહાર કરવો જોઈએ કે - જેમ ધર્મપરાયણ વિદુષી માતા, ધર્માત્મા વિદ્વાન પિતા, ભાઈ અને મિત્ર વગેરે સત્ય વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત રહે, તેમ પુત્ર વગેરેએ પણ અનુકરણ કરવું જોઈએ.

તથા જેમ વિદ્વાન ધાર્મિક પુત્ર વગેરે ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત રહે, તેમ માતા-પિતાદિએ પણ અનુસરણ કરવું જોઈએ. આ રીતે સર્વે પરસ્પર વર્તાવ કરીને આનંદમાં રહે. (૨૦)

વસ્વ્યસ્યદિતિરસ્યાદિત્યાસિં રુદ્રાસિં ચન્દ્રાસિં ।

બૃહસ્પતિષ્ટ્વા સુમ્ને રમ્ણાતુ રુદ્રો વસુભિરાચકે ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ જે વસ્વી-અગ્નિ વગેરે પદાર્થ નામક વસુ વિદ્યાથી સંબંધિત તથા જેને ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનારાઓએ પ્રાપ્ત કરેલ અસિ-છે, જે અદિતિઃ-પ્રકાશકારક અસિ-છે, સ્ત્રી-પ્રાણવાયુથી સંબંધિત અને જેણે ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરનારાઓએ પ્રાપ્ત કરેલ અસિ-છે.

જે આદિત્યા-સૂર્યસમાન સર્વ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરનારી અને જેનું અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરીને ગ્રહણ - સ્વીકાર કરેલ અસિ-છે, જે ચન્દ્રા-આહ્લાદદાયક અસિ-છે, જેને બૃહસ્પતિઃ-સર્વોત્તમ સ્ત્રી-દુષ્ટોને રડાવનાર પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન સુમ્ને-સુખમાં રમ્ણાતુ-રમણ કરતાં અને જે વસુભિઃ-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોની સાથે - સંગ રહેનારી વાણી અથવા વિદ્યુતનું આચકે-નિર્માણ તથા ઈચ્છા કરતાં અથવા જેની હું ઈચ્છા કરું છું, તેમ તું પણ ત્વા-તેને રમ્ણાતુ-રમણયુક્ત અથવા તેને સિદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે વાણી અને વિદ્યુત્ પ્રાણ અને પૃથિવી વગેરે સાથે રહીને અનેક વ્યવહારોની સિદ્ધિનો હેતુ - સાધક છે.

જે જિતેન્દ્રિયતા અને ધર્માચરણપૂર્વક યથાયોગ્ય બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનારા મનુષ્યો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક ક્રિયાઓમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ વાણી અને વિદ્યુત્ અત્યંત સુખકારક બને છે, [હે મનુષ્ય] તું પણ તે બંનેનું સેવન કર. (૨૧)

**અદિત્યાસ્ત્વા મૂર્દ્ધન્નાજિઘર્મિ દેવયજને પૃથિવ્યાઽઙ્ઙાયાસ્પદમસિ ઘૃતવત્
સ્વાહાં । અસ્મે રમસ્વાસ્મે તે બન્ધુસ્ત્વે રાયો મે રાયો મા વયઃ રાયસ્પોષેણ વિયૌષ્મ
તોતો રાયઃ ॥ ૨૨ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જેમ દેવયજને-વિદ્વાનોના સંગ કરવામાં તથા દાન આપવામાં એ અદિત્યા:-અન્તરિક્ષ પૃથિવ્યા:-ભૂમિ અને ઙ્ઙાયા:-વાણીને સ્વાહા-સારી રીતે યજ્ઞક્રિયાના મધ્યમાં જે મૂર્દ્ધન્-સર્વથી ઉપર રહેલ ઘૃતવત્-પુષ્ટિકારક ઘૃતસમાન પદમ્-જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદવી [વાણી અને વિદ્યુત્] અસિ-છે. જેને હું આ+જિઘર્મિ-પ્રદીપ્ત કરું છું, તેમ ત્વા-તેને તું પણ પ્રદીપ્ત કર.

જે અસ્મે-અમારામાં વિભૂતિ રમણ કરે છે, તે તમારામાં પણ રમસ્વ-રમણ કરાવો.

જે અસ્મે-અમારા બન્ધુ:-ભાઈ છે, તે તે-તારા પણ થાય અને જે રાય:-વિદ્યાદિ અને સુવર્ણાદિ ધનસમૂહ ત્વે-તારી પાસે છે, તે મે-મારી પાસે પણ થાય.

જે તોત:-જાણવા, પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય રાય:-વિદ્યારૂપી ધન મારામાં છે, તે તારામાં પણ થાય; જે રાય:-તમારી અને મારી સમૃદ્ધિ છે, તે સર્વના સુખ માટે પ્રયુક્ત થાય.

આ રીતે જાણીને નિશ્ચય કરતાં તથા આચરણ કરતાં તમે વયમ્-અમે અને સર્વ જનો રાયસ્પોષેણ-ધનની પુષ્ટિથી કદી પણ મા વિયૌષ્મ-પૃથક્ ન રહીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે સત્યવિદ્યા અને ધર્મથી સંસ્કૃત વાણી અને વિદ્યા તથા ક્રિયા દ્વારા સમ્યક્ પ્રયુક્ત વિદ્યુત્ વગેરેની વિદ્યા છે, તેનો સર્વને ઉપદેશ કરીને, ગ્રહણ કરીને, સર્વની સુખ-દુઃખની વ્યવસ્થાને સમાન જાણીને, સમસ્ત ઐશ્વર્યને પરોપકારમાં લગાવીને સદા સુખી રહેવું જોઈએ.

જેથી પોતાના તથા અન્યના ઐશ્વર્યનો ડ્રાસ થાય એવો વ્યવહાર કદી પણ કરવો નહિ. (૨૨)

સમચ્ચે દેવ્યા ધિયા સં દક્ષિણયોરુચક્ષસા ।

મા મ્ઽઆયુઃ પ્રમોષીર્મોઽઅહં તવ વીરં વિદેય તવ દેવિ સન્દશિ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ અહમ્-હું દક્ષિણયા-જ્ઞાનસાધક અને અજ્ઞાનનાશક ઉચ્ચક્ષસા-અત્યંત સ્પષ્ટ કથન અથવા દર્શનયુક્ત દેવ્યા-પ્રકાશમાન ધિયા-પ્રજ્ઞા અથવા કર્મથી તવ-આપની દેવિ-દિવ્યગુણોથી શોભાયમાન તે વાણી અથવા વિદ્યુત્ને સન્દશિ-સારી રીતે જોવા યોગ્ય વ્યવહારમાં જીવનને સમચ્ચે-કથનથી પ્રકટ કરું છું.

તે મે-મારા આયુઃ-જીવનનો મા પ્રમોષી:-નાશ ન કરે. તેને હું અવિદ્યાથી મો-નષ્ટ ન કરું. તવ-હે સર્વના મિત્ર ! અન્યાયથી આપના વીરમ્-શૂરવીરને મા સંવિદેય-પ્રાપ્ત ન કરું, તેમ તું પણ સર્વ આચરણ

અને અન્યાયથી મારા શૂરવીરોને પ્રાપ્ત ન કર. (૨૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો શુદ્ધ કર્મ અને બુદ્ધિ દ્વારા વાણી-વિદ્યા અને વિદ્યુત-વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, આયુની વૃદ્ધિ કરીને, વીરોને વિદ્યાદિ ગુણોમાં સિદ્ધ કરીને સદા સુખી રહે. (૨૩)

एष ते गायत्रो भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते त्रैष्टुभो भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते जागतो भागऽइति मे सोमाय ब्रूताच्छन्दोनामानां साम्राज्यङ्गच्छेति मे सोमाय ब्रूतात् । आस्मा कोऽसि शुक्रस्ते ग्रह्यो विचितस्त्वा विचिन्वन्तु ॥ २४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું કોણ એ યજ્ઞનો ગાયત્રઃ-વેદસ્થ ગાયત્રી છંદયુક્ત મંત્રોના સમૂહોથી પ્રતિપાદિત ભાગઃ-સેવન કરવા યોગ્ય ભાગ છે ? ઇતિ-એમ વિદ્વાનને પૂછ.

તે વિદ્વાન તે-તને એ યજ્ઞનો આ પ્રત્યક્ષ છે ઇતિ-એ રીતે સોમાય-પદાર્થવિદ્યા સંપાદન કરનાર મે-મારા માટે છે, તેમ બ્રૂતાત્-કહે.

તું કોણ તે યજ્ઞનો ત્રૈષ્ટુભઃ-ત્રિષ્ટુપ છંદથી પ્રતિપાદિત ભાગઃ-ભાગ છે ? ઇતિ-એમ વિદ્વાનને પૂછ.

તે વિદ્વાન તે-તને એ યજ્ઞનો ઇષઃ-આ ભાગ છે. ઇતિ-એ રીતે પ્રત્યક્ષરૂપથી સમાધાન સોમાય-ઉત્તમ રસને સંપાદન કરનાર મે-મારા માટે છે તેમ બ્રૂતાત્-કહે - ઉપદેશ કરે.

તું કોણ એ યજ્ઞનો જાગતઃ-જગતી છંદથી કથિત ભાગઃ-અંશ છે ? ઇતિ-એમ આપને પૂછ.

તે [આપ] તે-તને એ યજ્ઞનો ઇષઃ-આ પ્રસિદ્ધ ભાગ છે, ઇતિ-એ રીતે સોમાય-પદાર્થવિદ્યાને સંપાદન કરનાર મે-મારા માટે ઉત્તર બ્રૂતાત્-કહે - આપે.

જેમ આપ છન્દોનામાનામ્-ઉષ્ણિક વગેરે છંદોના મધ્યમાં કહેલ યજ્ઞના ઉપદેશમાં સામ્રાજ્યમ્-સારી રીતે રાજ્યને ગચ્છ-પ્રાપ્ત થા ઇતિ-એ રીતે સોમાય-ઐશ્વર્યયુક્ત મે-મારા માટે સાર્વભૌમ રાજ્યની પ્રાપ્તિ માટેનો ઉપાય બ્રૂતાત્-કહો - ઉપદેશ કરો.

જે કારણે આપ આસ્માકઃ-અમને શુક્રઃ-પવિત્ર કરનાર ઉપદેશક અસિ-છો, તેમ હું તે-આપનો ગ્રહ્યઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિચિતઃ-ઉત્તમ ધનાદિ દ્રવ્ય અને ગુણોથી યુક્ત શિષ્ય છું.

આપ મને સર્વ ગુણોથી ઉન્નત કરો. એ કારણે હું ત્વા-આપને વૃદ્ધિયુક્ત કરું છું અને સર્વ મનુષ્ય ત્વા-આપ તથા એ યજ્ઞ અને મને વિચિન્વન્તુ-વૃદ્ધિયુક્ત - ઉન્નત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનોને પ્રશ્ન કરીને સર્વ વિદ્યાઓનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ અને વિદ્વાનો એ વિદ્યાને ગ્રહણ કરાવે.

પરસ્પર અનુગ્રહ ભાવથી વર્તાવ કરીને સર્વ લોકો વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને ચક્રવર્તી રાજ્યનું સેવન કરો. (૨૪)

अभि त्वं देवः सवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चीमि सत्यसवः रत्नधामभि प्रियं मतिं कविम् । ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत । सुक्रतुः

કૃપા સ્વઃ । પ્રજાભ્યસ્ત્વા પ્રજાસ્ત્વાઽનુપ્રાણન્તુ પ્રજાસ્ત્વમનુપ્રાણિહિ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હું યસ્ય-જે સચ્ચિદાનંદાદિ લક્ષણયુક્ત પરમેશ્વર, ધાર્મિક સભાપતિ અને પ્રજાજનના સવીમનિ-સર્જાયેલા સંસારમાં ઋર્ધ્વા-ઉત્તમ અમતિઃ-સ્વરૂપ ભાઃ-પ્રકાશમાન અદિદ્યુતત્-પ્રકાશિત છે, જેની કૃપા-કરુણા સ્વઃ-સુખદાતા છે.

હિરણ્યપાણિઃ-જેણે સૂર્ય વગેરે જ્યોતિ વ્યવહારમાં ઉત્તમ ગુણ કર્મોને યુક્ત કર્યા છે. સુક્રતુઃ-જે શ્રેષ્ઠ પ્રજા અને કર્મયુક્ત ઈશ્વર, સભા-સ્વામી અને પ્રજાજનને સ્વઃ-સૂર્ય અને સુખને અમિમીત-સ્થાપિત કર્યા છે.

ત્યમ્-તે ઓળ્યોઃ-દ્યુલોક અને પૃથિવીલોક તથા સવિતારમ્-અગ્નિ વગેરેને ઉત્પન્ન અને સંપ્રયોગ કરનાર તથા કવિક્રતુમ્-સર્વજ્ઞ અને સર્વ વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિમાન રત્નધામ્-રમણીય રત્નોને ધારણ કરનાર સત્યસવમ્-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત પ્રિયમ્-સર્વના પ્રીતિકારક મતિમ્-વેદાદિ શાસ્ત્ર તથા વિદ્વાનોને માન્ય કવિમ્-વેદવિદ્યાનો ઉપદેશ કરનાર તથા દેવમ્-સુખદાતા પરમેશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને પ્રજાજનનું અર્ચામિ-પૂજન કરું છું. ત્વા-આપને પ્રજાભ્યઃ-ઉત્પન્ન થયેલી સૃષ્ટિથી પૂજું છું, તે આપની સૃષ્ટિમાં પ્રજાઃ-મનુષ્યાદિ અનુપ્રાણન્તુ-આયુ ભોગવે ત્વમ્-અને આપ કૃપા કરીને પ્રજાઃ-પ્રજાને જીવોને અનુકૂળ અનુપ્રાણિહિ-અનુગ્રહ કરો [જીવન પ્રદાન કરો]. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના રચયિતા, નિરાકાર, વ્યાપક, સર્વશક્તિમાન અને સચ્ચિદાનંદ વગેરે લક્ષણયુક્ત પરમેશ્વરની, પ્રજાપાલનમાં તત્પર અને ધાર્મિક પ્રજાજનોની પૂજા નિત્ય કરવી જોઈએ. તેનાથી ભિન્ન બીજા કોઈની નહિ કરવી જોઈએ.

વિદ્વાનોએ પ્રજાજનોના સુખ માટે તેની [ઈશ્વરની] સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપદેશ [ક્રમશઃ]નિત્ય કરવાં જોઈએ. જેથી સમસ્ત પ્રજા તેની આજ્ઞાની અનુકૂળ સદા રહે. જેમ પ્રાણોમાં સમસ્ત જીવોને પ્રેમ છે, તેમ પરમાત્મા વગેરેમાં રાખવો જોઈએ. (૨૫)

શુક્રં ત્વા શુક્રેણ ક્રીણામિ ચન્દ્રં ચન્દ્રેણામૃતમૃતૈન । સગ્મે તે ગોરુસ્મે તે ચન્દ્રાણિ તર્પસ્તનૂરસિ । પ્રજાપતેર્વર્ણઃ પરમેણ પશુના ક્રીયસે સહસ્ત્રપોષં પુષેયમ્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જેમ સગ્મે-પૃથિવી સાથે રહેલ યજ્ઞમાં તપસઃ-પ્રતાપયુક્ત અગ્નિ અથવા તપસ્વી અર્થાત્ ધર્માત્મા વિદ્વાનનું તનૂઃ-શરીર અસિ-છે. તેને શિલ્પવિદ્યા તથા સત્યોપદેશને પ્રાપ્ત કરવા માટે પશુના-વેચાયેલાં ગાય વગેરે પશુઓ કરીને, ધન વગેરે સામગ્રીથી ગ્રહણ કરીને, પ્રજાપતેઃ-પ્રજાના પાલક સૂર્યનું વર્ણઃ-વરણ કરવા - સ્વીકાર કરવા યોગ્ય તેજ ક્રીયસે-ખરીદાય છે. તેથી સહસ્ત્રપોષમ્-અસંખ્ય પોષણ સાધનોથી પુષ્ટ થઈને હું પુષેયમ્-પુષ્ટ કે બળવાન બનું.

હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જે તે-આપને ગોઃ-પૃથિવીના રાજ્યના સાનિધ્યથી ચન્દ્રાણિ-સુવર્ણ વગેરે ધાતુ પ્રાપ્ત થાય છે, તે અસ્મે-અમારા માટે પણ થાય.

જેમ હું પરમેણ-ઉત્તમ શુક્રેણ-શુદ્ધ ભાવથી શુક્રમ્-શુદ્ધિકારક યજ્ઞ ચન્દ્રેણ-સુવર્ણથી ચન્દ્રમ્-સુવર્ણ અને અમૃતેન-નાશરહિત વિજ્ઞાનથી અમૃતમ્-મોક્ષ સુખને ક્રીણામિ-ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ ત્વા-તેને ગ્રહણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ શરીર, મન, વાણી અને ધન દ્વારા ઈશ્વરની ઉપાસના વગેરે લક્ષણોયુક્ત યજ્ઞનું નિરંતર અનુષ્ઠાન કરીને અગણિત અને અનુપમ પુષ્ટિ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨૬)

**મિત્રો ન્ઽઽહિ સુમિત્રઘ્ઽઽન્દ્રસ્યોરુમાવિશ્ઽ દક્ષિણમુશન્નુશન્ત્ઽઽ સ્યોનઃ સ્યોનમ્ ।
સ્વાન્ ભ્રાજાઙ્ઙારે બમ્ભારે હસ્ત સુહસ્ત કૃશાનવેતે વઃ સોમક્રયણાસ્તાત્રક્ષધ્વં મા
વૌ દભન્ ॥ ૨૭ ॥**

પદાર્થ : હે સ્વાન-ઉપદેશ કરનાર, ભ્રાજ-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરનાર, અંઙ્ઙારે-છળના શત્રુ, બમ્ભારે-વિચાર-વિરોધીઓના શત્રુ, હસ્ત-પ્રસન્ન કરનાર, સુહસ્ત-સારી રીતે હસ્ત ક્રિયાને જાણનાર, કૃશાનો-દુષ્ટોને કૃશ કરનાર, સુમિત્રઘઃ-શ્રેષ્ઠ મિત્રોને ધારણ કરનાર, મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર, સ્યોનઃ-સુખની ઊશ્ન-કામના કરનાર સભાધ્યક્ષ ! આપ નઃ-અમને આ ઙ્ઙહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ.

દક્ષિણમ્-ઉત્તમ અંગયુક્ત, ઊસ્મ્-બહુ ઉત્તમ પદાર્થોથી યુક્ત તથા સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, ઊશન્તમ્-કામના કરવા યોગ્ય, સ્યોનમ્-સુખમાં આવિશ-પ્રવેશ કરો.

હે સભાધ્યક્ષો ! એતે-જે ઙ્ઙન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ વિદ્વાનના સોમક્રયણાઃ-સોમ અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થો ખરીદનાર પ્રજા અને નોકર વગેરે મનુષ્ય વઃ-તમારી રક્ષા કરે અને તમે લોકો પણ તેની રક્ષધ્વમ્-સદા રક્ષા કરો.

જેમ તે શત્રુઓ તાન્-તે વઃ-તમારી હિંસા કરવા સમર્થ મા દભન્-ન બને, તેમ એ રીતે પરસ્પર મળીને સમ્યક્ પ્રીતિપૂર્વક આચરણ કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોએ પરસ્પર પ્રેમથી ઉપકારમાં તથા ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં રહીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, અવિદ્યારૂપી અંધકારનો નાશ કરીને, ચક્રવર્તી રાજ્ય પર શાસન કરીને સદા આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૨૭)

પરિં માગ્ને દુશ્ચરિતાદ્વાધસ્વા મા સુચરિતે ભજ ।

ઉદાયુષા સ્વાયુષોદસ્થામમૃતાંઽઽનુ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને જે કર્મથી સ્વાયુષા-ઉત્તમતાયુક્ત પ્રાણ ધારણ કરનાર આયુષા-આ જીવનથી અમૃતાન્-જીવનમુક્ત અને મોક્ષને પ્રાપ્ત વિદ્વાનો અથવા મોક્ષરૂપી આનંદોને ઉદસ્થામ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

તેથી મા-મને સંયુક્ત કરીને દુશ્ચરિતાત્-દુષ્ટાચરણથી ઊત્ બાધસ્વ-પૃથક્ કરીને મા-મને સુચરિતે-અત્યુત્તમ ધર્માચરણયુક્ત વ્યવહારમાં અન્વાભજ-સારી રીતે સ્થાપિત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા અધર્મત્યાગ અને ધર્મગ્રહણ કરવા માટે સાચા ભાવથી પ્રાર્થના કરેલ એ પરમેશ્વર જેમ તેને અધર્મથી છોડાવીને ધર્મમાં શીઘ્ર પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ મનુષ્યે સ્વયં આજીવન ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત રહીને સંસારનાં અને મુક્તિનાં સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨૮)

પ્રતિ પન્થામપદ્મહિ સ્વસ્તિગામનેહસમ્ । યેન વિશ્વાઃ પરિ દ્વિષો વૃણક્તિં વિન્દતે વસુ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપના અનુગ્રહથી યુક્ત પુરુષાર્થી બનીને અમે યેન-જે માર્ગથી વિદ્વાન મનુષ્ય વિશ્વાઃ-સર્વ દ્વિષઃ-શત્રુસેના અથવા દુઃખદાયી ભોગ ક્રિયાઓથી પરિવૃણક્તિ-સર્વ પ્રકારથી દૂર કરી વસુ-સુખદાયક ધનને વિન્દતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તે અનેહસમ્-હિંસારહિત સ્વસ્તિગામ્-સુખપૂર્વક જવા યોગ્ય પન્થામ્-માર્ગને પ્રત્યપદ્મહિ-પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત કરીએ.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ દ્રેષ વગેરેનો ત્યાગ, વિદ્યા ધનની પ્રાપ્તિ તથા ધર્મમાર્ગનો પ્રકાશ પ્રાપ્ત કરવા માટે ઈશ્વરની પ્રાર્થના, ધર્મનું સેવન અને વિદ્વાનોની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. (૨૯)

અદિત્યાસ્ત્વગસ્યદિત્યૈ સદ્ઽઆસીદ । અસ્તંભનાદ્ દ્યાં વૃષભોઽઅન્તરિક્ષમમિમીત વરિમાણમ્પૃથિવ્યાઃ । આસીદ્દ્વિશ્વા ભુવનાનિ સમ્રાઙ્ વિશ્વેત્તાનિ વરુણસ્ય વ્રતાનિ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી વૃષભઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત આપ અદિત્યાઃ-પૃથિવીનું ત્વક્-આચ્છાદન કરનાર અસિ-છો, અદિત્યૈ-પૃથિવી વગેરે સૃષ્ટિ માટે સદઃ-સ્થાપન કરવા યોગ્ય આસીદ-વ્યવસ્થાને સ્થાપિત કરો છો. તથા દ્યામ્-સૂર્યાદિને અસ્તમ્નાત્-રચો છો. વરિમાણમ્-અત્યંત ઉત્તમ અન્તરિક્ષમ્-અંતરિક્ષને અમિમીત-રચો છો. સમ્રાટ્-સારી રીતે પ્રકાશ પ્રાપ્ત સર્વના અધિપતિ આપ પૃથિવ્યાઃ-અન્તરિક્ષના મધ્યમાં વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકોનું આસીદત્-સ્થાપન કરો છો, એથી તાનિ-એ વિશ્વા-સર્વ વસ્તુસ્ય-શ્રેષ્ઠરૂપ તે-આપનાં ઇત્-જ વ્રતાનિ-સત્ય સ્વભાવ અને કર્મ છે એમ અમે અપદ્મહિ-જાણીએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે વૃષભઃ-અત્યુત્તમ સમ્રાટ્-સ્વયં પ્રકાશમાન સૂર્ય અને વાયુ અદિત્યાઃ-પૃથિવી વગેરેને ત્વક્-આચ્છાદિત કરનાર અસિ-છે તથા અદિત્યૈ-પૃથિવી વગેરે સૃષ્ટિ માટે સદઃ-લોકોને આસીદ-સ્થાપન દ્યામ્-પ્રકાશને અસ્તમ્નાત્-ધારણ વરિમાણમ્-શ્રેષ્ઠ અન્તરિક્ષમ્-આકાશની અમિમીત-રચના અને પૃથિવ્યાઃ-આકાશની મધ્યમાં વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકોને આસીદત્-સ્થાપન કરે છે. તાનિ-તે વિશ્વા-બધા તે-તે વસ્તુસ્ય-સૂર્ય અને વાયુનો ઇત્-જ વ્રતાનિ-સ્વભાવ અને કર્મ છે એમ અમે અપદ્મહિ-જાણીએ છીએ. (૩૦)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરનો એ સ્વભાવ છે, કે તે આ સર્વ સંસારમાં વ્યાપક છે, તેને રચીને, તેને ધારણ કરે છે; એ રીતે સૂર્ય અને વાયુનો પણ પ્રકાશ કરવો અને લોકોને ધારણ કરવાનો સ્વભાવ છે. પૂર્વ મન્ત્રમાંથી 'અપદ્મહિ' પદની અનુવૃત્તિ આવેલ છે. (૩૦)

વનેષુ વ્યુન્તરિક્ષં તતાન વાજમર્વત્સુ પર્યઽસ્ત્રિયાસુ ।

હૃત્સુ ક્રતું વરુણો વિક્ષ્વાગ્નિં દિવિ સૂર્યમદધાત્ સોમમદ્રૌ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : જે વરુણ:-અત્યુત્તમ, પરમેશ્વર, સૂર્ય અથવા પ્રાણવાયુ છે તે વનેષુ-કિરણ અથવા વનોમાં અન્તરિક્ષમ્-આકાશને વિતતાન-વિસ્તારયુક્ત કરેલ અથવા કરતાં અર્વત્સુ-અત્યુત્તમ વેગાદિ ગુણયુક્ત વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થ અને ઘોડા વગેરે પશુઓમાં વાજમ્-વેગ ઝસ્ત્રિયાસુ-ગાયોમાં પય:-દૂધ હૃત્સુ-હૃદયોમાં ક્રતુમ્-પ્રજ્ઞા તથા કર્મ વિક્ષુ-પ્રજ્ઞામાં અગ્નિમ્-અગ્નિ દિવિ-પ્રકાશમાં સૂર્યમ્-સૂર્ય અદ્રૌ-પર્વત તથા મેઘ-વાદળોમાં સોમમ્-સોમવલ્લી વગેરે ઔષધિ અને શ્રેષ્ઠ રસને અદધાત્-ધારણ કર્યા કરે છે, તે ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તે બંનેનો ઉપયોગ કરીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ [વરુણ: =]પરમેશ્વર પોતાની વિદ્યાના પ્રકાશ અને જગતની રચના દ્વારા સમસ્ત પદાર્થોમાં તે-તે સ્વભાવયુક્ત ગુણોને સ્થાપિત કરીને, વિજ્ઞાન આદિ તથા વાયુ અને સૂર્ય વગેરેનો વિસ્તાર કરે છે, તેમ જ વાયુ અને સૂર્ય પણ સર્વના સુખનો વિસ્તાર કરે છે. (૩૧)

સૂર્યસ્ય ચક્ષુરારોહાગ્નેરક્ષણઃ કનીનકમ્ । યત્રૈતશેભિરીયસે ભ્રાજમાનો વિપશ્ચિતા ॥

૩૨ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! યત્ર-જ્યાં આપ એતશેભિ:-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી ભ્રાજમાન:-પ્રકાશમાન વિપશ્ચિતા-મેધાવી વિદ્વાનથી ઈંચસે-વિજ્ઞાત થાવ છો.

જ્યાં આપ પ્રાણવાયુ તથા વિદ્યુત્ એતશેભિ:-વેગાદિ ગુણો તથા વિપશ્ચિતા-વિદ્વાનથી ભ્રાજમાન:-પ્રકાશિત થઈને ઈંચસે-વિજ્ઞાત થાવ છો.

જ્યાં આપ પ્રાણ તથા વિદ્યુત્ સૂર્યસ્ય-સૂર્ય અથવા વિદ્યુત્ અને અગ્ને:-ભૌતિક અગ્નિને અક્ષણ:-જોવાનાં સાધન કનીનકમ્-પ્રકાશક ચક્ષુ:-નેત્રોને આરોહ-બતાવો છો, ત્યાં અમે આપની ઉપાસના અને તે બંને પ્રાણ અને વિદ્યુત્નો ઉપયોગ કરીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક ઈશ્વરની ઉપાસના કરવામાં આવે છે અને પ્રાણ તથા વિદ્યુત્નો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવામાં આવે છે, તેમ જ મનુષ્યો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક [ઈશ્વરની] ઉપાસના કરવી જોઈએ. [પ્રાણનો] ઉપયોગ કરવો જોઈએ અને [વિદ્યુત્નો] સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૩૨)

ઉસ્ત્રાવેતં ધૂર્ષાહૌ યુજ્ચેથામનશ્રૂડઅવીરહણૌ બ્રહ્મચોદનૌ ।

સ્વસ્તિ યજમાનસ્ય ગૃહાન્ ગચ્છતમ્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્યા અને શિલ્પક્રિયાને પ્રાપ્ત કરવાના ઈચ્છુક લોકો બ્રહ્મચોદનૌ-અન્ન અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે અનશ્રૂ-અવ્યાપી અવીરહણૌ-વીરોનું રક્ષણ કરનાર ઉસ્ત્રૌ-જ્યોતિયુક્ત તથા નિવાસના હેતુ ધૂર્ષાહૌ-પૃથિવી અને ધર્મના ભારને ધારણ કરનાર વિદ્વાન આ ઇતમ્-સૂર્ય અને વાયુને પ્રાપ્ત થતાં અથવા યુજ્ચેથામ્-જોડાતાં અને યજમાનસ્ય-ધાર્મિક યજમાનના ગૃહાન્-ઘેર સ્વસ્તિ-સુખપૂર્વક ગચ્છતમ્-ગમન કરે છે, તેમ તમે પણ તેને યુક્તિથી સંયુક્ત કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વિદ્વાન કમશઃ સર્વને પ્રકાશિત, ધારણ, સહન, યુક્ત અને પ્રાપ્ત કરીને

સુખને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમજ શિલ્પવિદ્યાના કર્મકર્તા દ્વારા યાનોમાં યુક્તિથી સંયુક્ત કરેલ અગ્નિ અને જલ સુખપૂર્વક સર્વત્ર સર્વની ગતિ કરાવે છે. (૩૩)

ભદ્રો મૈઽસિ પ્રચ્ચવસ્વ ભુવસ્પતે વિશ્વાન્યભિ ધામાનિ । મા ત્વા પરિપરિણો વિદન્મા ત્વા પરિપન્થિનો વિદન્મા ત્વા વૃકાઽઅઘાયવો વિદન્ । શ્યેનો ભૂત્વા પરાપત્ યજમાનસ્ય ગૃહાન્ ગચ્છ તન્નો સંસ્કૃતમ્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે ભુવઃ-પૃથિવીના પતે-પાલક વિદ્વાન ! તું મે-મારો ભદ્રઃ-કલ્યાણકાર બંધુ અસિ-છે.

તે તું નૌ-મારું અને તારું જે સંસ્કૃતમ્-શિલ્પવિદ્યાથી સંસ્કાર કરેલ યાન છે તત્-તેથી વિશ્વાનિ-સર્વ ધામાનિ-સ્થાનો પર અભિ પ્રચ્ચવસ્વ-સારી રીતે જા. જેથી સર્વ સ્થાન પર જતાં ત્વા-તને જેમ પરિપરિણઃ-છળથી રાત્રિમાં અન્યના પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર વૃકાઃ-ચોર મા વિદન્-ન મળે, એવો પ્રયત્ન કર.

પરદેશમાં જનાર ત્વા-તને જેમ પરિપન્થિનઃ-માર્ગમાં લૂંટનાર ડાકુ મા વિદન્-ન મળે, તેમ કર.

જેમ પરમૈશ્વર્યયુક્ત ત્વા-તને અઘાયવઃ-પાપના ઈચ્છુક દુષ્ટ મનુષ્ય મા વિદન્-ન મળે તેવાં કર્મ સદા કર.

તું શ્યેનઃ-બાજ પક્ષી સમાન વેગ અને બલયુક્ત ભૂત્વા-બનીને તે દુષ્ટોથી પરાપત-દૂર રહે અને એ દુષ્ટોને દૂર પણ કર, આમ કરીને યજમાનસ્ય-ધાર્મિક યજમાનના ગૃહાન્-ઘર અને દેશ-દેશાન્તરોમાં ગચ્છ-જા, અને જતાં માર્ગમાં તને કોઈ પણ દુઃખ ન આપે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ વિમાન આદિ યાન બનાવીને, તેમાં બેસીને તથા તેને યથોચિત્ રૂપે ચલાવીને, બાજ પક્ષીની સમાન દ્વીપ આદિ અન્ય દેશોમાં જઈને, ધન પ્રાપ્ત કરીને, ત્યાંથી આવીને, દુષ્ટ પ્રાણીઓથી દૂર રહીને, સદા સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૩૪)

નમો મિત્રસ્ય વરુણસ્ય ચક્ષ્ણે મહો દેવાય તદૃતઃ સપર્યત ।

દૂરેદશે દેવજાતાય કેતવે દિવસ્પુત્રાય સૂર્યાય શઃસત ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે મિત્રસ્ય-સર્વના મિત્ર વરુણસ્ય-શ્રેષ્ઠ દિવઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમૈશ્વરનું વ્રહ્મમ્-સત્યસ્વરૂપ છે તત્-તે ચેતનની સેવા-પૂજા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તેનું સેવન સદા સપર્યત-કરો.

જેમ તે મહઃ-મહાન દૂરેદશે-દૂર રહેલા પદાર્થોને દેખાડવા ચક્ષ્ણે-સર્વને જોવા દેવજાતાય-દિવ્ય ગુણોથી પ્રસિદ્ધ કેતવે-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ દેવાય-દિવ્યગુણયુક્ત પુત્રાય-પવિત્ર કરનાર સૂર્યાય-ચરાચર જગતના આત્મા પરમૈશ્વરને નમઃ-નમસ્કાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ પ્રશંસત્-તેની સ્તુતિ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : હે મનુષ્યો ! જે મિત્રસ્ય-પ્રકાશ વરુણસ્ય-શ્રેષ્ઠ દિવઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યલોકનું વ્રહ્મમ્-યથાર્થ સ્વરૂપ છે તત્-તે પ્રકાશ સ્વરૂપને તમે પણ વિદ્યાથી સપર્યત-સેવન કરો.

જેમ અમે જે ચક્ષ્ણે-સર્વને જોવા દેવજાતાય-દિવ્યગુણોથી પ્રસિદ્ધ કેતવે-જ્ઞાન કરાવનાર અગ્નિનો પુત્રાય-પુત્ર દૂરેદશે-દૂર રહેલા પદાર્થોને દેખાડવા મહઃ-મહાન દેવાય-દિવ્યગુણોથી યુક્ત સૂર્યાય-સૂર્યના

માટે પ્રવૃત્ત થઈએ. [પ્રયત્ન કરીએ], તેમ તમે પણ પ્રવૃત્ત થાવ. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેની કૃપાથી અથવા પ્રકાશથી ચોર, ડાકુ વગેરે દૂર ભાગી જાય છે અને પરમેશ્વર સમાન સમર્થ અને સૂર્ય સમાન લોક નથી, આથી સર્વ મનુષ્યોએ તેની પ્રશંસા કરવી યોગ્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૫)

વરુણસ્યોત્તમ્બનમસિ વરુણસ્ય સ્કમ્ભસર્જની સ્થો વરુણસ્યઽઋત્સદન્યસિ વરુણસ્યઽઋત્સદનમસિ વરુણસ્યઽઋત્સદનમાસીદ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી આપ વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ જગતનો ઉત્તમ્બનમ્-પ્રતિબંધ અર્થાત્ બાંધનાર અસિ-છો. જે વસ્ત્રાસ્ય-વાયુના સ્કમ્ભસર્જની-આધારરૂપી પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરનાર વસ્ત્રાસ્ય-સૂર્યની ઋત્સદની-જળની ગમનાગમન કરાવનારી ક્રિયા સ્થ:-છે, તેને ધારણ કરનાર છો.

જે વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ ઋત્સદનમ્-પદાર્થોનું સ્થાન અસિ-છો વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ ઋત્સદનમ્-સત્યજ્ઞાનોનાં સ્થાનને આસીદ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવો છો. એથી અમે આપનો આશ્રય લઈએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે વસ્ત્રાસ્ય-જગતને ઉત્તમ્બનમ્-ધારણ કરનાર અસિ-છે, જે વસ્ત્રાસ્ય-વાયુના સ્કમ્ભસર્જની-આધારોને ઉત્પન્ન કરનાર તથા જે વસ્ત્રાસ્ય-સૂર્યની ઋત્સદની-જળની ગમનાગમન કરાવનારી ક્રિયા સ્થ:-છે. તેને ધારણ કરનાર તથા જે વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ ઋત્સદનમ્-સત્ય પદાર્થોના સ્થાનરૂપ અસિ-છે. તે વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ ઋત્સદનમ્-પદાર્થોના સ્થાનને આસીદ-સારી રીતે પ્રાપ્ત અને ધારણ કરે છે, તેનો ઉપયોગ કેમ ન કરવામાં આવે ? (૩૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર વિના સર્વ જગતની રચના, ધારણ, પાલન અને પૂર્ણ જ્ઞાન કોઈ કરી શકતા નથી.

સૂર્ય વિના કોઈ સમસ્ત ભૂમિ આદિ સંસારને પ્રકાશિત અથવા ધારણ કરી શકતા નથી.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની ઉપાસના અને સૂર્યનો યથાવત્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૩૬)

યા તે ધામાનિ હૃવિષા યજન્તિ તા તે વિશ્વા પરિભૂરસ્તુ યજ્ઞમ્ ।

ગયસ્ફાનઃ પ્રતરણઃ સુવીરોઽવીરહા પ્રચરા સોમ દુર્યાન્ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેમ વિદ્વાન લોકો યા-જે તે-આપનાં ધામાનિ-સ્થાનોનું હૃવિષા-દેવાં-લેવાં યોગ્ય દ્રવ્યોથી યજન્તિ-સત્કારપૂર્વક ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે પણ તા-તે વિશ્વા-સર્વનું ગ્રહણ કરીએ.

જેમ તે-આપનો તે યજ્ઞ વિદ્વાનોને ગયસ્ફાનઃ-સંતાન, ધન અને ઘરની વૃદ્ધિ કરનાર પ્રતરણઃ-દુઃખોથી પાર કરનાર સુવીરઃ-ઉત્તમ વીરોનો યોગ કરનાર અવીરહા-કાયર, દરિદ્રતાયુક્ત અવીર અર્થાત્ પુરુષાર્થહીન મનુષ્ય તથા શત્રુઓનો નાશ કરનાર તથા પરિભૂઃ-સર્વપ્રકારથી સુખદાયક છે, તેમ તે આપની કૃપાથી અમારા માટે અસ્તુ-બને. જેનું વિદ્વાન લોકો યજન્તિ-યજન કરે છે, તે યજ્ઞમ્-યજ્ઞ અમે પણ કરીએ.

હે સોમ-સોમ વિદ્યાનું સંપાદન કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ અમે એ યજ્ઞ કરીને ઘરોમાં આનંદ કરીએ, એમાં કર્મ કરીએ, તેમ તું પણ એને કરીને દુર્યાન્-ઘરોમાં પ્રચર-સુખનો પ્રચાર કર, જાણ અને અનુષ્ઠાન કર.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન લોકો ઈશ્વરમાં પ્રેમ અને સંસારમાં યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેમજ સર્વ મનુષ્યોએ આચરણ કરવું જોઈએ. (૩૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં શિલ્પવિદ્યા (૯, ૧૦), વૃષ્ટિની પવિત્રતાનું સંપાદન (૨), વિદ્વાનોનો સંગ (૫), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન(૬), ઉત્સાહ આદિ ગુણોની પ્રાપ્તિ (૭), યુદ્ધ કરવું (૮), શિલ્પ વિદ્યાની સ્તુતિ (૯), યજ્ઞના ગુણોનું વર્ણન (૧૦), સત્યવ્રતનું ધારણ (૧૧), જલ અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન (૧૨, ૧૩, ૧૪), પુનર્જન્મનું કથન (૧૫), ઈશ્વર પ્રાર્થના (૨૮, ૨૯), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન (૧૭), પુત્રાદિ દ્વારા માતા-પિતાદિનું અનુકરણ (૨૦), યજ્ઞની વ્યાખ્યા (૨૪), દિવ્ય બુદ્ધિ - મેધાની પ્રાપ્તિ (૨૩), પરમેશ્વરની પૂજા (૨૫), સૂર્યના ગુણોનું વર્ણન (૩૩), પદાર્થોના ક્રય-વિક્રયનો ઉપદેશ (૨૬), મિત્રતા કરવી (૨૭), ધર્મનો પ્રચાર (૨૮), પરમેશ્વર તથા સૂર્યના ગુણોનો પ્રકાશ (૩૦ થી ૩૩), ચોર વગેરેનું નિવારણ (૩૪), ઈશ્વર અને સૂર્ય આદિના ગુણોનું વર્ણન (૩૫, ૩૬) અને યજ્ઞનું ફળ (૩૭) કહેવામાં આવેલ છે. તેથી આ અધ્યાયાર્થની ત્રીજા અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. ઊવટ અને મહીધર આદિએ આ અધ્યાયની વ્યાખ્યા શબ્દાર્થ વિરુદ્ધ કરેલ છે. (૩૭)

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥



॥ અથ પઞ્ચમાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓ૩મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અગ્નેસ્તનૂરસિ વિષ્ણવે ત્વા સોમસ્ય તનૂરસિ વિષ્ણવે ત્વાઽતિથેરાતિથ્યમસિ
વિષ્ણવે ત્વા શ્યેનાય ત્વા સોમભૂતે વિષ્ણવે ત્વાઽગ્નયૈ ત્વા રાયસ્પોષ્ઠદે વિષ્ણવે
ત્વા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ હું હવિ અગ્નેઃ-વિદ્યુત્ પ્રસિદ્ધ રૂપ અગ્નિના તનૂઃ-શરીર સમાન
અસિ-છે. ત્વા-તે હવિનો વિષ્ણવે-યજ્ઞના અનુષ્ઠાન માટે સ્વીકાર કરું છું.

જે સોમસ્ય-જગતમાં ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોની તનૂઃ-વિસ્તારપૂર્વક સામગ્રી અસિ-છે, ત્વા-તે સામગ્રીનો
વિષ્ણવે-વાયુની શુદ્ધિ માટે ઉપયોગ કરું છું.

જે અતિથેઃ-સંન્યાસી વગેરેનું આતિથ્યમ્-અતિથિપણું તથા સેવા-સત્કારરૂપ કર્મ અસિ-છે, ત્વા-તેને
વિષ્ણવે-વિજ્ઞાન-યજ્ઞની પ્રાપ્તિ માટે ગ્રહણ કરું છું.

જે શ્યેનાય-જે બાજ પક્ષી સમાન શીઘ્રગમન માટે પ્રવૃત્ત થાય અસિ-છે, ત્વા-તે દ્રવ્યને અગ્નિમાં
નાખું છું.

જે વિષ્ણવે-વિદ્યા કર્મયુક્ત સોમભૂતે-સોમને ધારણ કરનાર યજ્ઞમાન માટે સુખ અસિ-છે, ત્વા-
તેને ગ્રહણ કરું છું.

જે અગ્નયે-અગ્નિની વૃદ્ધિ માટે કાષ્ઠ વગેરે છે, ત્વા-તેનો સ્વીકાર કરું છું.

જે રાયસ્પોષ્ઠદે-જે ધનની પુષ્ટિ આપનાર તથા વિષ્ણવે-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને વિદ્યાની વ્યાપ્તિ માટે
સમર્થ પદાર્થ છે, ત્વા-તેને ગ્રહણ કરું છું. તેમ જ તમે પણ તેનું સેવન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ મંત્રમાં કહેલ ફળોની પ્રાપ્તિ માટે ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞોનું અનુષ્ઠાન કરવું
જોઈએ. (૧)

અગ્નેર્જનિત્રમસિ વૃષ્ણૌ સ્થઽઽર્વશ્યસ્યાયુરસિ પુસ્ત્રવાઽસિ । ગાયત્રેણ ત્વા
છન્દસા મન્થામિ ત્રૈષ્ટુભેન ત્વા છન્દસા મન્થામિ જાગતેન ત્વા છન્દસા મન્થામિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું જે અગ્ને-આગ્નેય અસ્ત્રાદિની સિદ્ધિ કરનારા અગ્નિને જનિત્રમ્-
ઉત્પન્ન કરનાર હવિ અસિ-છે, જે વૃષ્ણૌ-વર્ષા કરનાર સૂર્ય અને વાયુ અસ્થઃ-છે, જે ઝર્વશી-અનેક
સુખોને આપનારી ક્રિયા અસિ-છે, જે આયુઃ-જીવન અસિ-છે, જે પુસ્ત્રવાઃ-અનેક શાસ્ત્રોનો ઉપદેશ કરવાને
નિમિત્ત અસિ-છે.

ત્વા-તે અગ્નિને ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છન્દસા-આનંદકારક ઇંદ ક્રિયાથી મન્થામિ-મંથન કરું છું. ત્વા-
તે સોમ આદિ ઔષધ સમૂહને ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રિષ્ટુપ છન્દસા-ઇંદથી મન્થામિ-મંથન કરું છું. ત્વા-તે શત્રુ-

દુઃખ સમૂહને જાગતેન-જગતી છન્દસા-છંદથી મન્થામિ-તાડન કરીને નિવારણ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આ રીતિથી સેવન કરેલ પૂર્વોક્ત યજ્ઞથી પરોપકાર કરવો જોઈએ. (૨)

ભવતં નઃ સર્મનસૌ સચૈતસાવરેપસૌ । મા યજ્ઞહિંસિષ્ટં મા યજ્ઞપતિં જાતવેદસૌ શિવૌ ભવતમદ્ય નઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે અરેપસૌ-પ્રાકૃત મનુષ્યોનાં ભાષારૂપી વચનથી રહિત સર્મનસૌ-સમાન વિજ્ઞાનયુક્ત સચૈતસૌ-સમાન જાણવા-જણાવવાયુક્ત જાતવેદસૌ-વેદ અને ઉપવિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરેલ ભણવા-ભણાવનાર વિદ્વાન નઃ-અમારા માટે ઉપદેશ આપનાર ભવતમ્-બને.

જે યજ્ઞમ્-ભણવા-ભણાવવારૂપ યજ્ઞ તથા યજ્ઞપતિમ્-વિદ્યાપ્રદ યજ્ઞનું પાલન કરનાર યજ્ઞમાનને મા હિંસિષ્ટમ્-કષ્ટ ન આપે. તે [બન્ને] અદ્ય-આજ નઃ-અમારા માટે શિવૌ-મંગલકારક ભવતમ્-બને. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યા પ્રચાર માટે, અધ્યયન અને અધ્યાપનનો તથા મંગલ આચરણનો કદી પણ ત્યાગ કરવો નહિ; કારણ કે તે સર્વોત્તમ છે. (૩)

અગ્નાવગ્નિશ્ચરતિ પ્રવિષ્ટઽઋષીણાં પુત્રોઽઅભિશસ્તિપાવાં ।

સ નઃ સ્યોનઃ સુયજાં યજેહ દેવેભ્યો હૃવ્યઃ સદમપ્રયુચ્છન્ત્સ્વાહાં ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે અભિશસ્તિપાવા-સર્વ પ્રકારની હિંસા કરનારાથી રહિત અગ્નૌ-વિદ્યુત્ અગ્નિની વિદ્યામાં પ્રવિષ્ટઃ-પ્રવેશ કરનાર-કરાવનાર ઋષિણામ્-વેદાદિ શાસ્ત્રોના શબ્દ, અર્થ અને સંબંધોને યથાવત્ જાણનારે પુત્રઃ-ભણાવેલ સ્યોનઃ-સર્વથા સુખકારક સુયજા-વિદ્યાઓનો સારી રીતે પ્રત્યક્ષ સંગ કરાવનારા અગ્નિઃ-પ્રકાશ આત્મા [વિદ્વાન] અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદ રહિત અધ્યાપક વિદ્વાન ચરતિ-આચરણ કરે છે.

જે નઃ-અમારા માટે ઙ્હ-આ સંસારમાં દેવેભ્યઃ-વિદ્વાન તથા દિવ્યગુણોથી હૃવ્યમ્-લેવા-દેવા યોગ્ય પદાર્થ તથા સદમ્-જ્ઞાન અને સ્વાહા-હવન કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ અન્નાદિને પ્રાપ્ત કરે છે. સઃ-તેથી આપ યજ-સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવો. (૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે અગ્નિ કાર્ય-કારણ ભેદથી બે પ્રકારનો છે, તેમાં કાર્યરૂપથી સૂર્ય આદિમાં અને કારણરૂપથી વિદ્યુત્ નામક સર્વ ભૌતિક પદાર્થોમાં પ્રવિષ્ટ થઈને રહે છે. મનુષ્યોએ તેના [વિષયમાં] વિજ્ઞાનપૂર્વક પ્રવેશ કરીને તથા એ બન્ને અગ્નિઓનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

આર્પતયે ત્વા પરિપતયે ગૃહ્ણામિ તનૂનષ્ટ્રે શાક્વરાય શક્વનઽઓજિષ્ઠાય ।
અનાધૃષ્ટમસ્યનાધૃષ્યં દેવાનામોજોઽનભિશસ્ત્યભિશસ્તિપાઽઅનભિશસ્તેન્યમઞ્જસા
સત્યમુપગેષ્ઠઃ સ્વિતે મા ધાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હું હે પરમાત્મન્ ! જેનાથી આપ હિંસારૂપી કર્મોથી અલગ રહેનારા અને રાખનારા છો,

તેનાથી ત્વા-આપને આપતયે-સર્વ રીતે સ્વામી હોવાથી પરિપતયે-સર્વ બાજુથી રક્ષા શાક્વરાય-સર્વ સામર્થ્યની પ્રાપ્તિ શક્વને-શૂરવીરયુક્ત સેના ઓજિષ્ઠાય-જેમાં સર્વોત્કૃષ્ટ પરાક્રમ હોય છે, તે વિદ્યા હોવાથી તનૂનષ્ટ્રે-જેથી ઉત્તમ શરીર થાય છે. તેના માટે ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું.

આપ કૃપા કરીને તે દેવાનામ્-વિદ્વાનોના અનાઘૃષ્ટમ્-જેનું કોઈ અપમાન કરી શકતા નથી. જે અનાઘૃષ્ટમ્-કોઈથી અપમાન કરવાને યોગ્ય નથી. અનભિશસ્તિ-કોઈથી હિંસા કરવા યોગ્ય નથી. અભિશસ્તેન્યમ્-અહિંસારૂપી ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનાર સત્યમ્-અવિનાશી ઓજઃ-તેજ છે. તેનું ગ્રહણ કરાવીને સ્વિતે-સારી રીતે, જે વ્યવહારમાં સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમાં મા-મને ધાઃ-ધારણ કરો. જેથી સત્યમ્-સત્યવ્યવહારને ઉપગેષમ્-જાણીને કરું.

દ્વિતીય અર્થ : હું જે અનાઘૃષ્ટમ્-ન દૂર થનાર, અનાઘૃષ્ટમ્-ન કોઈથી નષ્ટ થનાર અનભિશસ્તિ-ન હિંસા કરનાર અનભિશસ્તેન્યમ્-અને હિંસા રહિત ધર્મ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય દેવાનામ્-વિદ્વાન્ તથા પૃથિવી વગેરેમાં વિદ્યમાન સત્યમ્-કારણરૂપ નિત્ય ઓજઃ-પરાક્રમ સ્વરૂપયુક્ત અભિશસ્તિપાઃ-હિંસાથી રક્ષાના હેતુરૂપ વિદ્યુત્ અસિ-છે.

જે મા-મને સ્વિતે-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વ્યવહારમાં ધાઃ-ધારણ કરે છે. અન્નસા-સહજ રીતે ઓજિષ્ઠાય-અત્યંત તેજસ્વી આપતયે-સારી રીતે પાલન કરવા યોગ્ય વ્યવહાર પરિપતયે-જેમાં સર્વ રીતે પાલન કરનાર હોય છે. તનૂનષ્ટ્રે-જેમાં ઉત્તમ શરીર પ્રાપ્ત થાય છે. શાક્વરાય-શક્તિને ઉત્પન્ન કરનાર અને શક્વને-શક્તિયુક્ત વીરસેનાની પ્રાપ્તિ માટે છે, ત્વા-તેને ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું. જેથી તે સત્ય કારણરૂપ પદાર્થોને ઉપગેષમ્-જાણી શકું. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને પરમાત્માના વિજ્ઞાન વિના સાચું સુખ અને વિદ્યુત્ આદિની વિદ્યા તથા કલાકૌશલ વિના સર્વ સાંસારિક સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. માટે તે સર્વ પ્રયત્નથી કરવા જોઈએ. (૫)

અગ્નેં વ્રતપાસ્ત્વે વ્રતપા યા તવ તનૂરિયઃ સા મયિ યો મમ તનૂરેષા સા ત્વચિં ।

સહ નૌ વ્રતપતે વ્રતાન્યનું મે દીક્ષાં દીક્ષાપતિર્મન્યતામનુ તપસ્તપસ્પતિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેના માટે હે અગ્ને-વ્રતપતે-જગદીશ્વર ! આપ તથા વિદ્યુત્ સત્ય ધર્માદિ નિયમોનું વ્રતપાઃ-પાલન કરાવનાર છો. તેથી ત્વે-તે આપ તથા વિદ્યુત્માં હું વ્રતપાઃ-પૂર્વોક્ત વ્રતોનું પાલન કરનારી ક્રિયાયુક્ત બનું છું. યા-જે ઇયમ્-આ તવ-આપ અને તેની તનૂઃ-વ્યાપક વ્યાપ્તિ છે. સા-તે મયિ-મારામાં યો-જે ણ્ષા-આ મમ-મારા તનૂઃ-શરીરમાં છે. સા-તે ત્વચિ-આપ તથા તેમાં છે.

વ્રતાનિ-જે બ્રહ્મચર્યાદિ વ્રત છે તે મારામાં રહે અને જે મે-મારામાં છે તે ત્વચિ-તમારામાં છે. જે આપ તથા તે તપસ્પતિઃ-જિતેન્દ્રિયત્વાદિપૂર્વક ધર્માનુષ્ઠાનના પાલન નિમિત્ત છે. તે મે-મારા માટે તપઃ-પૂર્વોક્ત તપને અનુમન્યતામ્-વિજ્ઞાપિત કરો અથવા કરે છે અને જે આપ તથા તે દીક્ષાપતિઃ-વ્રતોપદેશની રક્ષા કરનાર છો, તે મે-મારા માટે દીક્ષામ્-વ્રતોપદેશને અનુમન્યતામ્-આજ્ઞા કરે અથવા કરે છે. તેથી પણ નૌ-હું અને આપ ભણનાર-ભણાવનાર બન્ને પ્રેમપૂર્વક વર્તીને વિદ્વાન અને ધાર્મિક બનીએ. જેથી

બન્નેની વિદ્યાવૃદ્ધિ સદા થતી રહે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક ઉપકાર બુદ્ધિથી પરમૈશ્વરમાં અથવા વિદ્યુત્માં પોતાના તથા અન્યોના પુરુષાર્થની વ્યાપ્ય-વ્યાપક સંબંધી વિદ્યાને જાણીને ધર્માચરણમાં નિરંતર પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૬)

**અંશુરંશુષ્ટે દેવ સોમાપ્યાયતામિન્દ્રાયૈકધનવિદે । આ તુભ્યમિન્દ્રઃ
પ્યાયતામા ત્વમિન્દ્રાય પ્યાયસ્વ । આપ્યાયયાસ્માન્ત્સર્ખીન્ત્સન્ન્યા મેધયા સ્વસ્તિ
તૈ દેવ સોમ સુત્યામશીય । એષ્ટા રાયઃ પ્રેષે ભગાયઽઋતમૃતવાદિભ્યો નમો
દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્ ॥ ૭ ॥**

પદાર્થ : હે સોમ-પદાર્થ વિદ્યાના જાણનાર અથવા દેવ-દિવ્યગુણ સંપન્ન જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન ! વિદ્યુદ્ધા જેથી વે-આપ અથવા એ વિદ્યુત્નું સામર્થ્ય અંશુરંશુઃ-પ્રત્યેક અવયવ-અંગની આપ્યાયતામ્-રક્ષાથી વૃદ્ધિ કરે અથવા કરાવે છે.

ઇન્દ્રઃ-જે આપ વા વિદ્યુત્ એવધનવિદે-અર્થાત્ ધર્મવિજ્ઞાનથી ધનથી પ્રાપ્ત થનાર ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત મારા માટે આપ્યાયતામ્-વૃદ્ધિ કરે અથવા કરાવે છે. [ત્વમ્-આપ તેને ઇન્દ્રાય-દુઃખ નાશ માટે] આપ્યાયસ્વ-વૃદ્ધિયુક્ત કરો અથવા કરે છે. તે આપ વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોના સાચા અર્થોની પ્રાપ્તિને સન્ન્યા-પ્રાપ્તિ કરાવનાર મેધયા-પ્રજ્ઞાથી અસ્માન્-અમને સર્ખીન્-સર્વ મિત્રોને આપ્યાયસ્વ-આગળ વધારો. જેથી સ્વસ્તિ-સુખની સદા વૃદ્ધિ થતી રહે.

સોમ-હે પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા ઈશ્વર અથવા વિદ્વાન ! આપની શિક્ષા તથા વિદ્યુત્ વિદ્યાથી યુક્ત થઈને હું સુત્યામ્-શ્રેષ્ઠતમ ઉત્પન્ન કરનારી ક્રિયામાં કુશળ બની ઇષે-સિદ્ધિની ઈચ્છા તથા અન્ન આદિ ભગાય-ઐશ્વર્ય માટે એષ્ટાઃ-ઈચ્છિત સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર રાયઃ-ધનસમૂહને અશીય-પ્રાપ્ત કરું અને ઋત્તવાદિભ્યઃ-સત્યવાદી વિદ્વાનોને એ ધન આપીને સત્યવિદ્યા અને દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-પ્રકાશ અને ભૂમિથી ઋત્તમ્-અન્નને પ્રાપ્ત કરું. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમૈશ્વરની ઉપાસના, વિદ્વાનોની સેવા, વિદ્યુત્ વિદ્યાનો પ્રચાર કરીને, શરીર અને આત્માને પુષ્ટ કરનારી ઔષધિઓ તથા ધનના સંગ્રહથી ચિકિત્સા શાસ્ત્ર અનુસાર વ્યવહાર કરીને સર્વ આનંદનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૭)

**યા તૈઽઅગ્નેઽયઃશ્યા તનૂર્વર્ષિષ્ટા ગહ્વરેષ્ટા । ડગ્રં વચોઽઅપાવધીત્ત્વેષં
વચોઽઅપાવધીત્ સ્વાહા । યા તૈઽઅગ્ને રજઃશ્યા તનૂર્વર્ષિષ્ટા ગહ્વરેષ્ટા । ડગ્રં
વચોઽઅપાવધીત્ત્વેષં વચોઽઅપાવધીત્ સ્વાહા । યા તૈઽઅગ્ને હરિશ્યા તનૂર્વર્ષિષ્ટા
ગહ્વરેષ્ટા । ડગ્રં વચોઽઅપાવધીત્ત્વેષં વચોઽઅપાવધીત્ સ્વાહા ॥ ૮ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને યા-જે તે-તે અગ્ને-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિના અયઃશ્યા-સુવર્ણ આદિમાં શયન કરનાર વર્ષિષ્ટા-અત્યંત મહાન ગહ્વરેષ્ટા-અંદર રહેનાર તનૂઃ-શરીર ડગ્રમ્-કૂર, ભયંકર વચઃ-

વચનનો અપાવધીત્-નાશ કરે છે. ત્વેષમ્-પ્રદીપ્ત વચ:-શબ્દ વા સ્વાહા-ઉત્તમતાથી હવન કરેલા અન્નને અપાવધીત્-દૂર કરે છે.

જે તે-આ અગ્ને-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિના વર્ષિષ્ઠા-અત્યંત વિસ્તીર્ણ ગહ્વરેષ્ઠા-અંદર રહેલ રજ:શયા-લોકોમાં શયન કરનાર તનૂ:-શરીર ઉગ્રમ્-કૂર વચ:-કથનનો અપાવધીત્-નાશ કરે છે. ત્વેષમ્-પ્રદીપ્ત વચ:-કથન વા સ્વાહા-ઉત્તમ વાણીને અપાવધીત્-નષ્ટ કરે છે. તેને જાણીને તેની પાસેથી કામ લેવું જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યુત્ની જે વ્યાપ્તિ મૂર્ત અને અમૂર્ત પદાર્થોમાં છે, તેને યુક્તિપૂર્વક ઉત્તમ રીતિથી જાણીને તથા તેનો ઠીક ઉપયોગ કરીને સર્વ દુ:ખોનો નાશ કરવો જોઈએ. (૮)

ત્સાયની મેઽસિ વિત્તાયની મેઽસ્યર્વતાન્મા નાથિતાદર્વતાન્મા વ્યથિતાત્ ।
વિદેદ્ગ્નિર્નભો નામાગ્નેઽઅઙ્ગિરઽઆયુના નામ્નેહિ યોઽસ્યાં પૃથિવ્યામસિ યત્તેઽનાધૃષ્ટં
નામં યજ્ઞિયં તેન ત્વા દધે વિદેદ્ગ્નિર્નભો નામાગ્નેઽઅઙ્ગિરઽઆયુના નામ્નેહિ યો
દ્વિતીયસ્યાં પૃથિવ્યામસિ યત્તેઽનાધૃષ્ટં નામં યજ્ઞિયં તેન ત્વા દધે વિદેદ્ગ્નિર્નભો
નામાગ્નેઽઅઙ્ગિરઽઆયુના નામ્નેહિ યસ્તૃતીયસ્યાં પૃથિવ્યામસિ યત્તેઽનાધૃષ્ટં નામં
યજ્ઞિયં તેન ત્વા દધે । અનુ ત્વા દેવવીતયે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન ! જેમ હું યત્-જે તપ્તાયની-સ્થાપન કરવા યોગ્ય વસ્તુઓના સ્થાનયુક્ત વિદ્યુત્ અસિ-છે, વા જે વિત્તાયની-ભોગ અને પ્રતીત પદાર્થને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્યુત્ જવાળા અસિ-છે. ત્વા-તેની વિદ્યા જાણું છું. તેમ તું પણ એને મે-મારી પાસેથી એહિ-પ્રાપ્ત કર.

જેમ આ યત્-જે અગ્નિ:-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ નભ:-જલ અને પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરાવીને મા-મારું વ્યથિતાત્-ભયથી અવતાત્-રક્ષા કરે છે, નાથિતાત્-ઐશ્વર્ય પ્રદાનથી અવતાત્-રક્ષા કરે છે, તેમ તારાથી સેવન કરેલ અગ્નિ તારું પણ રક્ષણ કરશે.

જેમ હું તેન-તે સાધનથી જે અગ્ને-જઠરરૂપ અઙ્ગિર:-અંગમાં રહેનાર આ અગ્નિ આયુના-જીવન નામ્ના-નામક પ્રસિદ્ધિથી અસ્યામ્-આ પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં નામ-પ્રસિદ્ધ છે, ત્વા-તેને જાણું છું. તેમ તું પણ તેને મે-મારાથી એહિ-સારી રીતે જાણ.

જેમ હું તેન-તે જ્ઞાનથી યત્-જે અનાધૃષ્ટમ્-નાશ પામવા યોગ્ય નથી. યજ્ઞિયમ્-યજ્ઞાંગસમૂહ. નામ-પ્રસિદ્ધ તેજ છે, ત્વા-તેને દેવવીતયે-દિવ્ય ગુણોની પ્રાપ્તિ માટે ત્વા-તે યજ્ઞને આદધે-ધારણ કરું છું, તેમ તું તેના દ્વારા ઉત્તમ ગુણોને પ્રાપ્ત કરવા ધારણ કર. તેમ સર્વ મનુષ્યો પણ તેનાથી એને વિદેત્-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ હું તેન-જે દ્વિતીયસ્યામ્-અન્ય પૃથિવ્યામ્-ભૂમિમાં અગ્ને + અઙ્ગિર:-અંગારોમાં રહેનાર અગ્નિ આયુના-જીવન તથા નામ્ના-પ્રસિદ્ધિથી નામ-પ્રસિદ્ધ છે. ય:-જે નભ:-સુખ આપે છે. તેન-ત્વા-તેનાથી તેને પ્રાપ્ત થયેલ છું, તેમ તું તેનાથી એને એહિ-જાણ અને સર્વ મનુષ્યો પણ તેનાથી એને વિદેત્-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ હું તેન-પુરુષાર્થથી જે અનાઘૃષ્ટમ્-પ્રગલ્ભ ગુણ સહિત યજ્ઞિયમ્-યજ્ઞસંબધી નામ-પ્રસિદ્ધ તેજ

છે. ત્વા-તેને ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે આદધે-ધારણ કરું છું, તેમ તું તેને માટે ધારણ કર અને સર્વ મનુષ્યો પણ વિદેત્-ધારણ કરે.

જેમ હું તેન-તે ક્રિયાકૌશલથી જે અગ્નિ:-અગ્નિ આયુના-જીવન વા પ્રસિદ્ધિથી અદ્ગિર:-અંગોનું સૂર્ય રૂપથી પોષણ કરનાર નામ-પ્રસિદ્ધ છે. અથવા જે નભ:-આકાશને પ્રકાશિત કરે છે. ત્વા-તેને ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ તેને ધારણ કર અને સર્વ લોકો પણ અનુવેદિત્-તેને સારી રીતે જાણીને કાર્ય સિદ્ધ કરે.

જેમ હું તેન-ઈન્ધન-બળતણાદિ સામગ્રીથી જે અનાદૃષ્ટમ્-પ્રગલ્ભસહિત યજ્ઞિયમ્-શિલ્પવિદ્યા સંબંધી નામ-પ્રસિદ્ધ તેજ છે. ત્વા-તેને વિદ્વાનોની પ્રાપ્તિ માટે આદધે-ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ તેનાથી તેની પ્રાપ્તિ માટે અન્વેહિ-શોધ કર અને મનુષ્યો પણ વિદ્વાનો પ્રયોગ કરે. (૯)

ભાવાર્થ : જે પ્રસિદ્ધ, સૂર્ય અને વિદ્યુત્-રૂપથી ત્રણ પ્રકારનો અગ્નિ સર્વ લોકોમાં બહાર અને અંદર વિદ્યમાન છે, તેને જાણીને તથા જણાવીને સર્વ મનુષ્યોએ સર્વ કાર્યની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૯)

સિંશ્ઠ્વાસિ સપત્સાહી દેવેભ્યઃ કલ્પસ્વ સિંશ્ઠ્વાસિ સપત્સાહી દેવેભ્યઃ । શુન્ધસ્વ સિંશ્ઠ્વાસિ સપત્સાહી દેવેભ્યઃ શુમ્ભસ્વ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જે સપત્સાહી-જેનાથી શત્રુઓ સહન કરે છે તે દેવેભ્યઃ-ઉત્તમ ગુણો શૂરવીરો માટે કલ્પસ્વ-અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરીને પ્રાપ્ત કર. સિંહી-જે દોષોનો નાશ કરનારી વા શબ્દોના ઉચ્ચારણ કરનારી વાણી અસિ-છે. તેને દેવેભ્યઃ-વિદ્વાન, દિવ્યગુણ વા વિદ્યાના ઈચ્છુક મનુષ્યો માટે શુન્ધસ્વ-શુદ્ધતાથી પ્રકાશિત કર.

જે સપત્સાહી-દોષોનો નાશ તથા સિંહી-અવિદ્યાનો નાશ કરનારી વાણી અસિ-છે, તેને દેવેભ્યઃ-ધાર્મિક જનો માટે શુન્ધસ્વ-શુદ્ધ કર.

જે સપત્સાહી-દુષ્ટ સ્વભાવ અને સિંહી-દુષ્ટ દોષોનો નાશ કરનારી વાણી અસિ-છે, તેને દેવેભ્યઃ-સુશીલ વિદ્વાનો માટે શુમ્ભસ્વ-સુશોભિત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : વાણી ત્રણ પ્રકારની હોય છે : એક શિક્ષા અને વિદ્યાથી સંસ્કૃત, બીજી સત્યભાષણયુક્ત અને ત્રીજી મધુર. તેનો મનુષ્યોએ સદા સ્વીકાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

ઇન્દ્રઘોષસ્ત્વા વસુભિઃ પુરસ્તાત્પાતુ પ્રચેતાસ્ત્વા રુદ્રૈઃ પશ્ચાત્પાતુ મનોજવાસ્ત્વા પિતૃભિર્દક્ષિણતઃ પાતુ વિશ્વકર્મા ત્વાદિત્યૈરુત્તરતઃ પાત્વીદમહં તમં વાર્બીહિર્ધા યજ્ઞાન્નિઃસૃજામિ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ પ્રચેતા:-ઉત્તમ જ્ઞાનયુક્ત ઇન્દ્રઘોષ:-પરમાત્મા, વેદવિદ્યા તથા વિદ્યુત્નો ઘોષ અર્થાત્ શબ્દ, અર્થ અને સંબંધથી બોધ કરાવનાર વિશ્વકર્મા-સર્વ કર્મવાળો હું વિજ્ઞાન-અધ્યયન-અધ્યાપન તથા હોમરૂપ યજ્ઞથી ઇદમ્-અંદર રહેનાર તપ્તમ્-ઉષ્ણ જલ બહિર્ધા-બહાર ધારણ કરેલ શીતળ વા:-જળનું નિઃસૃજામિ-સંપાદન અથવા નિક્ષેપ કરું છું, તેમ આપ પણ કરો.

જે વસુભિઃ-અગ્નિ આદિ પદાર્થ તથા ચોવીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ મનુષ્યોની સાથે રહેલ
 ઇન્દ્રઘોષઃ-પરમેશ્વર, જીવ અને વિદ્યુતના અનેક શબ્દો સંબંધી વાણી છે તેની પુસ્તાત્-પૂર્વદેશથી જેમ
 હું રક્ષા કરું છું, તેમ આપ પણ પાતુ-રક્ષા કરો.

જે સ્તૈઃ-પ્રાણ વા ચુંમાળીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાળનાર વિદ્વાનોની સાથે રહીને પ્રચેતાઃ-ઉત્તમ જ્ઞાન
 કરાવનારી વાણી છે, તેની પશ્ચાત્-પશ્ચિમ દેશથી રક્ષા કરું છું, તેમ આપ પણ પાતુ-રક્ષા કરો.

જે પિતૃભિઃ-જ્ઞાની વા ઋતુઓની સાથે રહેલ મનોજવાઃ-મનના સમાન વેદવાણી છે, તેનું દક્ષિણતઃ-
 દક્ષિણ દેશથી પાલન કરું છું, તેમ આપ પણ પાતુ-રક્ષા કરો.

જે આદિત્યૈઃ-બાર મહિના વા અડતાળીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાળનાર વિદ્વાનોની સાથે રહીને વિશ્વકર્મા-
 સર્વ કર્મયુક્ત વાણી છે, તેનું ઉત્તરતઃ-ઉત્તર દેશથી પાલન કરું છું, તેમ આપ પણ પાતુ-રક્ષા કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વસુ, રુદ્ર, આદિત્ય અને પિતૃજનો દ્વારા સેવિત તથા યજ્ઞ દ્વારા અધિકૃત વાણી
 અને જલની વિદ્યા તથા સત્ક્રિયા સાથે સેવન કરીને, તેને નિરંતર શુદ્ધ અને નિર્મળ બનાવવી જોઈએ. (૧૧)

**સિંઙ્ઙહ્વાસિ સ્વાહાં સિંઙ્ઙહ્વાસ્યાદિત્યવનિઃ સ્વાહાં સિંઙ્ઙહ્વાસિ બ્રહ્મવનિઃ ક્ષત્રવનિઃ
 સ્વાહાં સિંઙ્ઙહ્વાસિ સુપ્રજાવનીં રાયસ્પોષવનિઃ સ્વાહાં સિંઙ્ઙહ્વાસ્યાવહ દેવાન્યજમાનાય
 સ્વાહાં ભૂતેભ્યસ્ત્વા ॥ ૧૨ ॥**

પદાર્થ : હું જે આદિત્યવનિઃ-મહિનાઓનું વિભાગ કરનારી સિંહી-કૂરતા વગેરે દોષોનો નાશ કરનારી
 સ્વાહા-જ્યોતિઃશાસ્ત્રથી સંસ્કારયુક્ત વાણી અસિ-છે;

જે બ્રહ્મવનિઃ-પરમાત્મા, વેદ અને વેદને જાણનારા મનુષ્યો સેવન કરે છે તે સિંહી-બળથી મૂર્ખતાનો
 નાશ કરનારી સ્વાહા-પઠન-પાઠન વ્યવહારયુક્ત વાણી અસિ-છે;

જે ક્ષત્રવનિઃ-રાજ્ય, ધનુર્વિદ્યા અને શૂરવીરોનું સેવન કરનારી અને સિંહી-ચોર, ડાકુ અને અન્યાયનો
 નાશ કરનારી સ્વાહા-રાજ્યવ્યવહારમાં ચતુર વાણી અસિ-છે;

જે રાયસ્પોષવનિઃ-વિદ્યાદિ ઉત્તમ ધનોની પુષ્ટિનું સેવન કરનારી અને સિંહી-અવિદ્યા નાશક સ્વાહા-
 વાણી અસિ-છે;

જે સુપ્રજાવનિઃ-ઉત્તમ પ્રજાનું સેવન કરનારી તથા સિંહી-સર્વ દુષ્ટોનો નાશ કરનારી સ્વાહા-વ્યવહારથી
 ધન પ્રાપ્ત કરાવનારી વાણી અસિ-છે;

જે યજમાનાય-વિદ્વાનોનું પૂજન કરનાર યજમાનના માટે સ્વાહા-દિવ્ય વિદ્યા સંપન્ન વાણી દેવાન્-
 વિદ્વાન, દિવ્યગુણ વા ભોગોને આવહ-પ્રાપ્ત કરાવે છે, ત્વા-તેને ભૂતેભ્યઃ-સર્વ પ્રાણીઓ માટે યજ્ઞાત્-
 યજ્ઞ દ્વારા નિઃસૃજામિ-સંપાદન (પ્રાપ્ત) કરું છું. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અધ્યયન આદિ દ્વારા ઐશ્વર્યયુક્ત લક્ષણવાળી વેદાદિ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તથા

તેને સર્વ મનુષ્યોને ભણાવીને સર્વને આનંદિત કરવા જોઈએ. (૧૨)

ધ્રુવોઽસિ પૃથિવીં દંહ ધ્રુવક્ષિદસ્યન્તરિક્ષં દંહાચ્યુતક્ષિદસિ દિવં દંહાગ્નેઃ પુરીષમસિ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જે યજ્ઞ ધ્રુવઃ-નિશ્ચલ પૃથિવીમ્-ભૂમિને વિસ્તારે અસિ-છે, તેને તમે દંહ-વિસ્તારો.

જે ધ્રુવક્ષિત્-નિશ્ચલ સુખ અને શાસ્ત્રોના નિવાસ કરાવનારા અસિ-છે અને અન્તરિક્ષમ્- આકાશમાં સ્થિત પદાર્થોને પુષ્ટ કરે છે, તેને તમે દંહ-વિસ્તારો.

જે અચ્યુતક્ષિત્-નાશરહિત પદાર્થોનો નિવાસ કરાવનાર અસિ-છે અને દિવમ્-વિદ્યાદિ પ્રકાશને પ્રકાશિત કરે છે, તેને તમે દંહ-વિસ્તારો.

જે અગ્નેઃ-વિદ્યુતાદિ અગ્નિ અને પુરીષમ્-પશુઓની પૂર્તિ કરાવનાર યજ્ઞ અસિ-છે, તેનું તમે અનુષ્ઠાન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યા અને ક્રિયા દ્વારા સિદ્ધ કરેલ, ત્રણે લોકોના પદાર્થોને પુષ્ટ કરનાર અને વિદ્યા તથા ક્રિયાથી યુક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૧૩)

યુજ્જતે મનઽઉત યુજ્જતે ધિયો વિપ્રા વિપ્રસ્ય બૃહતો વિપશ્ચિતઃ ।

વિ હોત્રા દધે વયુનાવિદેકઽઇન્મહી દેવસ્ય સવિતુઃ પરિષ્ટુતિઃ સ્વાહા ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : જેમ જે વિહોત્રાઃ-લેનાર-આપનાર વિપ્રાઃ-બુદ્ધિમાન મનુષ્યો છે, તે જે બૃહતઃ-સર્વથી મહાન વિપ્રસ્ય-અનંત જ્ઞાન-કર્મયુક્ત વિપશ્ચિતઃ-સર્વ વિદ્યા સહિત સવિતુઃ-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક દેવસ્ય-સર્વ પ્રકાશક મહેશ્વરની મહી-મહાન પરિષ્ટુતિઃ-સર્વ પ્રકારની સ્તુતિરૂપ સ્વાહા-સત્યવાણીને જાણીને મનઃ-મનને યુજ્જતે-યુક્ત કરે છે, ઉત-અને ધિયઃ-બુદ્ધિઓને પણ યુજ્જતે-સ્થિર કરે છે, તેમ વયુનાવિત્-ઉત્તમ કર્મોને જાણનાર એકઃ-સહાય રહિત હું એકલો તેને જાણીને તેમાં મારું મન અને બુદ્ધિને વિદધે-સદા નિશ્ચલ રાખું છું. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વરમાં જ મન અને બુદ્ધિને યુક્ત કરીને વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પણ એ રીતે ઉપદેશ કરવો જોઈએ. (૧૪)

इदं विष्णुविचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पांशुसुरे स्वाहा ॥ १५ ॥

પદાર્થ : વિષ્ણુઃ-જે સર્વ જગતમાં વ્યાપક જગદીશ્વર, જે કાંઈ આ જગતમાં છે તેની વિચક્રમે-રચના કરતાં ઇદમ્-આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ જગતને ત્રેધા-ત્રણ રીતે ધારણ કરે છે.

અસ્ય-આ પ્રકાશવાન, પ્રકાશરહિત અને અદેશ્ય ત્રણ પ્રકારના પરમાણુ આદિ રૂપ સ્વાહા-સારી રીતે જોવા અને બતાવવા યોગ્ય જગતને ગ્રહણ કરીને ઇદમ્-આ સમૂહમ્-સારી રીતે વિચાર કરીને કથન

કરવા યોગ્ય અદૃશ્ય જગતને પાંસુરે-અન્તરિક્ષમાં સ્થાપન કરે છે, તે જ જગદીશ્વર સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસનીય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે પ્રથમ પ્રકાશમય સૂર્ય આદિ, બીજી પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ પ્રસિદ્ધ જગત્ રચેલ છે, અને ત્રીજું પરમાણુ આદિ અદૃશ્ય જગત્ છે, તે સર્વને કારણભૂત અવયવોથી રચીને અન્તરિક્ષમાં સ્થાપિત કરેલ છે.

તેમાં ઔષધિ આદિને પૃથિવી પર, અગ્નિ આદિને સૂર્યમાં અને પરમાણુ આદિને આકાશમાં સ્થાપિત કરેલ છે - રાખેલ છે. અને એ સર્વને પ્રાણોના શિર પર રાખેલ છે.

આ જગત્નું નામ ગાયત્રી છે, કારણ કે તે ગયોમાં વિસ્તરેલ છે. ગયનો અર્થ પ્રાણ છે. જેથી પ્રાણોમાં વિસ્તરેલ છે. તેથી તેને ગાયત્રી કહે છે. (૧૫)

इरावती धेनुमती हि भूतः सूयवसिनी मनवे दशस्या ।

व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्त्थं पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा ॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે વિષ્ણો-સર્વવ્યાપી જગદીશ્વર ! આપ જે ઇરાવતી-ઉત્તમ અન્નયુક્ત ધેનુમતી-પ્રશંસનીય અનેક વાણીયુક્ત પ્રજા વા પશુયુક્ત સૂયવસિની-અનેક મિશ્રિત - અમિશ્રિત વસ્તુઓથી યુક્ત ભૂમિ વા વાણી પૃથિવીમ્-ભૂમિ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક સ્વાહા-વેદવાણી વા ભૂતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ સર્વ જગત્ને મયૂખૈઃ-જ્ઞાનપ્રકાશ આદિ ગુણોથી અભિતઃ-બધી બાજુથી દાધર્થ્ય-ધારણ કરો છો.

રોદસી-પ્રકાશ લોકો તથા પૃથિવી લોકોનું વ્યસ્કભ્નાઃ-સમ્યક્ સ્તંભન કરો છો તે મનવે-વિજ્ઞાનયુક્ત દશસ્યા-દશન અર્થાત્ દાંતોની વચ્ચે સ્થિત જિહ્વા સમાન આચરણ કરનાર આપને માટે એત્તે-એ અમે લોકો જગત્ને નિવેદન કરીએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ :

જે વિષ્ણો-વ્યાપક પ્રાણ જે ઇરાવતી-ઉત્તમ અન્નયુક્ત ધેનુમતી-પશુયુક્ત સૂયવસિની-બહુજ મિશ્રિત - અમિશ્રિત પદાર્થયુક્ત ભૂમિ વા વાણી છે તે પૃથિવીમ્-ભૂમિ સ્વાહા-વા ઈન્દ્રિયોને મયૂખૈઃ-કિરણો પોતાના બળ આદિથી અભિતઃ-સર્વ રીતે દાધર્થ્ય-ધારણ કરે છે અને રોદસી-પ્રકાશલોક અને પૃથિવીલોકનું વ્યસ્કભ્નાઃ-સ્તંભન કરે છે તે દશસ્યા-દાંતની સમાન આચરણ કરનાર તથા મનવે-વિજ્ઞાનયુક્ત સૂર્ય માટે ભૂતં હિ-નિશ્ચયપૂર્વક સર્વ જગતને કરવા માટે ઈશ્વરે આપેલ છે, એમ એત્તે-એ અમે સર્વે જાણીએ છીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી અને પોતાની આકર્ષણમયી જ્યોતિઓથી સમસ્ત પૃથિવી આદિ જગતને રોકીને તથા આકૃષ્ટ કરીને ધારણ કરે છે, તેમ જ પરમેશ્વર અથવા પ્રાણ પોતાના સામર્થ્યથી સમસ્ત જગત્ને રચીને તથા ધારણ કરીને વ્યવસ્થિત કરે છે. (૧૬)

દેવશ્રુતૌ^૧ દેવેષ્વાઘૌષતં પ્રાચી પ્રેતમધ્વરં કલ્પયન્તીઽઋર્ધ્વં યજ્ઞં નયતં મા
જિહ્વરતમ્ । સ્વં ગોષ્ટમાવદતં દેવી દુર્યેઽઆયુર્મા નિર્વાદિષ્ટં પ્રજાં મા નિર્વાદિષ્ટમત્ર
રમેથાં વર્ષ્મન્ પૃથિવ્યાઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ જે દેવેષુ-વિદ્વાન વા દિવ્યગુણોમાં દેવશ્રુતૌ-વિદ્વાનો પાસેથી શ્રવણ કરેલા પ્રાણ અપાનવાયુ ઘોષતમ્-ઘોષ કરે - શબ્દ વ્યક્ત કરે અને જે પ્રાચી-પ્રાપ્ત કરનારી વા કલ્પયન્તી-સામર્થ્યયુક્ત પ્રકાશ અને ભૂમિ ઋર્ધ્વમ્-ઉત્તમ ગુણયુક્ત યજ્ઞમ્-વિજ્ઞાન અને શિલ્પમય યજ્ઞને પ્રેતમ્-જણાવતા રહીને નયતમ્-પ્રાપ્ત કરે. મા જિહ્વરતમ્-કુટિલ ગતિયુક્ત ન હોય.

જે દેવી-દિવ્યગુણોથી સંપન્ન દુર્યે-ગૃહરૂપ સ્વયં-પોતાના ગોષ્ટમ્-કિરણ અને અવયવોના સ્થાનના આવદતમ્-ઉપદેશ નિમિત્ત હોય આયુઃ-જીવનને મા નિર્વાદિષ્ટમ્-નષ્ટ ન કરે. પ્રજામ્-ઉત્પન્ન સૃષ્ટિને મા નિર્વાદિષ્ટમ્-નષ્ટ ન કરે અને તે પૃથિવ્યાઃ-આકાશ અને પૃથિવીની મધ્ય અત્ર-આ વર્ષ્મન્-સુખથી સેવન કરવા યોગ્ય જગત્માં રમેથામ્-રમણ કરે તેમ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેટલું જગત્ અન્તરિક્ષના મધ્યમાં રહેલ છે, તે સર્વથી મનુષ્યોએ અત્યધિક સુખોનું સંપાદન કરવું જોઈએ. (૧૭)

વિષ્ણોનું કં વીર્યાણિ પ્રવોચં યઃ પાર્થિવાનિ વિમમે રજાંશ્ચસિ ।

યોઽઅસ્કભાયદુત્તરં સધસ્થે વિચક્રમાણસ્ત્રેધોરુગાયો વિષ્ણાવે ત્વા ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે યઃ-જે વિચક્રમાણઃ-જગત્ રચનાના કારણ અંશોને - દ્રવ્યોને યુક્ત કરીને ઉસ્માયઃ-વેદ દ્વારા બહુ અર્થોનો ઉપદેશ કરનાર જગદીશ્વર પાર્થિવાનિ-પૃથિવીના વિકાર અર્થાત્ પૃથિવીના ગુણોથી ઉત્પન્ન થનાર વા અન્તરિક્ષમાં જણાવેલા ત્રેધા-ત્રણ પ્રકારના રજાંસિ-લોકોને વિમમે-અનેક પ્રકારથી રચે છે.

જે ઉત્તરમ્-અંતિમ અવયવોને સધસ્થમ્-સાથે રહેનારાં કારણોને અસ્કભાયત્-રોકી રાખે છે. યઃ-જેનો વિષ્ણાવે-ઉપાસના આદિ યજ્ઞ માટે આશ્રય લેવામાં આવે છે. તે વિષ્ણોઃ-વ્યાપક પરમેશ્વરના વીર્યાણિ-પરાક્રમયુક્ત કર્મોનું પ્રવોચમ્-કથન કરું છું અને હે પરમેશ્વર ! નુ-શીઘ્ર જ કમ્-સુખસ્વરૂપ ત્વા-આપનો આશ્રય કરું છું - શરણ ગ્રહણ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે પરમેશ્વરે પૃથિવી, સૂર્ય અને ત્રસરેણુ ભેદથી ત્રણ પ્રકારનું જગત્ રચીને ધારણ કરેલ છે, તેની ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૮)

દિવો વા વિષ્ણાઽઉત વા પૃથિવ્યા મહો વા વિષ્ણાઽઉરોન્તરિક્ષાત્ ।

ઉભા હિ હસ્તા વસુના પૃણસ્વા પ્રયચ્છ દક્ષિણાદોત સ્વ્યાદ્વિષ્ણવે ત્વા ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે વિષ્ણો-સર્વવ્યાપી પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને અમને દિવઃ-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ વા-અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી વસુના-દ્રવ્ય સાથે આપૃણસ્વ-સુખોથી પૂર્ણ કરો.

પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિથી ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થો ઉત્-પણ વા-અથવા મહઃ-મહત્વ અવ્યક્ત પ્રકૃતિથી અને ઉત્-પણ ઝરોઃ-બહુ અન્તરિક્ષાત્-અન્તરિક્ષનાં દ્રવ્યોની સાથે સુખોને હિ-નિશ્ચય કરીને પૂર્ણ કરો.

વિષ્ણો-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ ઈશ્વર ! આપ દક્ષિણાત્-દક્ષિણ ઉત્-અને સ્વ્યાત્-વામ પાર્શ્વથી સુખોને પ્રદાન કરો. ત્વા-તે આપને વિષ્ણવે-યોગવિજ્ઞાન પણ માટે પૂજન કરે છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે વ્યાપક ઈશ્વર દ્વારા મહત્વ, સૂર્ય, ભૂમિ, અન્તરિક્ષ, વાયુ, અગ્નિ અને જલ આદિ પદાર્થોને તથા તેમાં સ્થિત ઔષધિ આદિ અને મનુષ્ય આદિને રચીને, ધારણ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓ માટે સુખ સ્થાપિત કરવામાં આવે છે, તેની ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૯)

પ્ર તદ્વિષ્ણુ સ્તવતે વીર્યેણ મૃગો ન ભીમઃ કુચરો ગિરિષ્ઠાઃ ।

યસ્યોરુષુ ત્રિષુ વિક્રમણેષ્વધિક્ષિયન્તિ ભુવનાનિ વિશ્વા ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જેના ઉસ્મુ-અત્યંત ત્રિષુ-ત્રિવિક્રમણેષુ-વિવિધ પ્રકારનાં કર્મોમાં વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોક અધિક્ષિયન્તિ-નિવાસ કરે છે. અને વીર્યેણ-પોતાના પરાક્રમથી ભીમઃ-ભય કરનાર કુચરઃ-નિંદિત પ્રાણીઓનો વધ કરનાર અને ગિરિષ્ઠાઃ-પર્વતમાં રહેનાર મૃગઃ-સિંહ ન-સમાન પાપીઓને શોધી શોધીને દુઃખ આપીને પ્રસ્તવતે-ઉપદેશ કરે છે તત્-તેને કદી પણ ભૂલવા ન જોઈએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ સિંહ પોતાના પરાક્રમથી યથેષ્ટ વિચરણ કરે છે, તેમ જ જગદીશ્વર પણ પોતાના પરાક્રમથી સર્વ લોકોને નિયમમાં રાખે છે. (૨૦)

વિષ્ણો રાટમસિ વિષ્ણોઃ શ્નષ્ટ્રે સ્થો વિષ્ણોઃ સ્યૂરસિ વિષ્ણોર્ધુવોઽસિ ।

વૈષ્ણવમસિ વિષ્ણવે ત્વા ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : જે આ અનેક પ્રકારનું જગત છે, તે વિષ્ણોઃ-વ્યાપક પરમેશ્વરના પ્રકાશથી રાટમ્-ઉત્પન્ન થઈને પ્રકાશિત છે. વિષ્ણોઃ-સર્વ સુખોથી ભરપૂર ઈશ્વરથી સ્યૂઃ-વિસ્તૃત અસિ-છે. સર્વ જગત્ વૈષ્ણવમ્-યજ્ઞનું સાધન અસિ-છે.

વિષ્ણોઃ-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ જે ઈશ્વરે શ્નષ્ટ્રે-જડ અને ચેતનની સમાન બે પ્રકારનું શુદ્ધ જગત્ છે, તે સર્વ જગત્ના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! અમે ત્વા-આપનો વિષ્ણવે-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવા આશ્રય લઈએ છીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વર જ આ સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધારણકર્તા, તેમાં વ્યાપક અને

સર્વના ઈષ્ટ દેવ છે, તેમ જાણીને સર્વ કામનાઓની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવ્વેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદે નાર્યસીદમહઃ રક્ષાસાં ગ્રીવાઽપિ કૃન્તામિ । બૃહન્નસિ બૃહદ્રવા બૃહતીમિન્દ્રાય વાચં વદ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ હું દેવસ્ય-સર્વ પ્રકાશક, આનંદદાતા સવિતુઃ-સકલ જગત્ ઉત્પાદક ઈશ્વરના પ્રસવે-રચેલા સંસારમાં જે યજ્ઞને આદદે-ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ ત્વા-તેને ગ્રહણ કર.

જેમ હું નારી-યજ્ઞક્રિયા વા ઇદમ્-યજ્ઞના અનુષ્ઠાનનું ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ ગ્રહણ કર.

જેમ અહમ્-હું રક્ષાસામ્-દુષ્ટ સ્વભાવના શત્રુઓના ગ્રીવાઃ-શિરોનું અપિકૃન્તામિ-છેદન કરું છું, તેમ તું પણ છેદન કર.

જેમ હું આ અનુષ્ઠાનથી બૃહદ્રવાઃ-મોટાઈ પામી મોટો બનું છું, તેમ તું પણ બન.

જેમ હું ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે બૃહતીમ્-મહાન વાચમ્-વાણીનો ઉપદેશ આપું છું, તેમ તું પણ વદ-આપ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન મનુષ્યો ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિદ્યા દ્વારા પદાર્થોની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યોએ એ યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨૨)

રક્ષોહણં બલગહનં વૈષ્ણવીમિદમહં તં બલગમુત્કિરામિ યં મે નિષ્ટ્યો યમમાત્યો નિચ્ચાનેદમહં તં બલગમુત્કિરામિ યં મે સમાનો યમસમાનો નિચ્ચાનેદમહં તં બલગમુત્કિરામિ યં મે સબન્ધુર્યમસબન્ધુર્નિચ્ચાનેદમહં તં બલગમુત્કિરામિ યં મે સજાતો યમસજાતો નિચ્ચાનોત્કૃત્યાઙ્ઙિરામિ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ અહમ્-હું બલગહનમ્-બળનું મંથન કરનારાં અને રક્ષોહણમ્-રાક્ષસોને હણનારાં કર્મ અને વૈષ્ણવીમ્-વ્યાપક ઈશ્વરની વેદવાણીનું અનુષ્ઠાન કરીને યમ્-જે બલગમ્-બલદાયક યજ્ઞને ઉત્કિરામિ-ઉત્કૃષ્ટપણાથી પ્રેરિત અર્થાત્ આ સંસારમાં પ્રકાશિત કરું છું, તમ્-તે યજ્ઞને તેમજ તું પણ ઇદમ્-એને પ્રકાશિત કર.

જેમ મે-મારા નિષ્ટ્યઃ-યજ્ઞમાં કુશળ અમાત્યઃ-મેધાવી વિદ્વાન મનુષ્ય યમ્-જે યજ્ઞ અને ઇદમ્-ભૂગર્ભ વિદ્યાની પરીક્ષા માટે સ્થાનને નિચ્ચાન-નિઃસંદેહ બનન-ખોદે છે, તેમ તમ્-તેને તારો નોકર પણ ખોદે.

જેમ અહમ્-ભૂગર્ભ વિદ્યાનો જ્ઞાતા હું યમ્-બલગમ્-બલ પ્રાપ્ત કરાવનારા બેતી આદિ યજ્ઞ તથા ઇદમ્-ખોદકામને ઉત્કિરામિ-સારી રીતે સંપાદન કરું છું, તેમ તમ્-તેને તું પણ કર.

જેમ મે-મારા સમાન:-સમાન અથવા અસમાન મનુષ્ય યમ્-જે કર્મને નિચ્છાન-ખોદકામ કરે છે, તેમ તારું પણ ખોદકામ કરે.

જેમ અહમ્-ભણનાર-ભણાવનાર હું યમ્-જે બલગમ્-આત્મબલ આપનાર યજ્ઞ વા ઇદમ્-ભણવા-ભણાવવા રૂપી કાર્યને ઉત્કિરામિ-સંપાદન કરું છું, તેમ તમ્-તેને તું પણ કર.

જેમ મે-મારા સબન્ધુ:-ભાઈ સમાન અથવા મિત્ર અસબન્ધુ:-ભાઈની અસમાન અર્થાત્ અમિત્ર યમ્-જે પાલનરૂપી યજ્ઞ અથવા એ કાર્યને નિચ્છાન-નિ:સંદેહ કરે છે, તેમ તારું કાર્ય પણ કરે.

જેમ અહમ્-સર્વનો મિત્ર હું યમ્-જે બલગમ્-રાજ્યબલ પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞ વા ઇદમ્-એ કાર્યને ઉત્કિરામિ-સંપન્ન કરું છું, તેમ તમ્-તેને તું પણ કર.

જેમ સજાત:-સાથે ઉત્પન્ન થયેલા અસજાત:-પૃથક્ ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્ય યમ્-જે યજ્ઞ વા કૃત્યામ્-ઉત્તમ ક્રિયાને નિચ્છાન-નિ:સંદેહ કરે છે, તેમ તારા એ યજ્ઞ અથવા એ ક્રિયાને નિ:સંદેહ કરે.

જેમ હું આ પૂર્વોક્ત સર્વ કર્મને ઉત્કિરામિ-સંપાદન કરું છું, તેમ તું પણ કર. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં ધાર્મિક વિદ્વાનોનું અનુકરણ કરવું જોઈએ, અન્યોનું નહીં. (૨૩)

સ્વરાડસિ સપત્નહા સત્રરાડસ્યભિમાતિહા જનરાડસિ રક્ષોહા સર્વરાડસ્યમિત્રહા ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જે કારણે આપ સ્વરાડ્-સ્વયં પ્રકાશમાન અસિ-છો, તેથી સપત્નહા-શત્રુઓને મારનાર છો, તેથી તમે સત્રરાડ્-યજ્ઞોમાં પ્રકાશમાન અસિ-છો, તેથી અભિમાતિહા-અભિમાનીનો નાશ કરનાર છો, જેથી આપ જનરાડ્-ધાર્મિક વિદ્વાનોમાં પ્રકાશમાન છો, તેથી રક્ષોહા-દુષ્ટ રાક્ષસજનોનો નાશ કરનાર છો. જેથી આપ સર્વરાડ્-સર્વમાં પ્રકાશિત છો, તેથી અમિત્રહા-અમિત્ર અર્થાત્ શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર છો.

દ્વિતીય અર્થ : જેથી આ સૂર્યલોક સ્વરાડ્-સ્વયં અસિ-પ્રકાશમાન છે. તેથી સપત્નહા-મેઘ-વાદળાંના અવયવોને કાપનાર છો, એ કારણે એ સત્રરાડ્-યજ્ઞોમાં પ્રકાશમાન છો. તેથી અભિમાતિહા-અભિમાની ચોર વગેરેનું હનન કરનાર છો; જે કારણે એ જનરાડ્-ધાર્મિક વિદ્વાનોના મનમાં પ્રકાશિત અસિ-છો. તેથી રક્ષોહા-રાક્ષસ તથા દુષ્ટોનો નાશ કરનાર છો. જેથી એ સર્વરાડ્-સર્વમાં પ્રકાશમાન અસિ-છો. તેથી અમિત્રહા-દુષ્ટોને દંડ આપવાના નિમિત્ત છો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન (રાજન્) ! જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી ચોર અને વ્યાઘ્ર વગેરેને ડરાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ તું પણ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને સર્વને સુખી કર. (૨૪)

રક્ષોહણો વો બલગહનઃ પ્રોક્ષામિ વૈષ્ણવાન્નક્ષોહણો વો બલગહનોઽર્વનયામિ વૈષ્ણવાન્નક્ષોહણો વા બલગહનોઽર્વસ્તૃણામિ વૈષ્ણવાન્નક્ષોહણો વાં

**બલગ્હનાઽપદધામિ વૈષ્ણવી રક્ષોહણૌ વાં બલગ્હનૌ પર્યૂહામિ વૈષ્ણવી વૈષ્ણવમસિ
વૈષ્ણવા સ્થ ॥ ૨૫ ॥**

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ આદિ મનુષ્યો ! જેમ તમે રક્ષોહણ:-દુઃખોનો નાશ કરનાર છો, તેમ શત્રુઓના બળનું વેરણ-છેરણ કરનાર હું વૈષ્ણવાન્-યજ્ઞ દેવતાવાળા વ:-આપ લોકોનો સત્કાર કરીને યુદ્ધમાં શસ્ત્રોથી પ્રોક્ષામિ-એ ધમંડી મનુષ્યોને શુદ્ધ કરું.

જેમ આપ રક્ષોહણ:-અધર્માત્મા, દુષ્ટ, દસ્યુઓને મારનાર છો, તેમ બલગ્હન:-શત્રુ સેનાનો અંદાજ લેનાર હું વૈષ્ણવાન્-યજ્ઞ સંબંધી વ:-તમને માન્ય કરીને દુષ્ટોને અવનયામિ-દૂર કરું છું.

જેમ બલગ્હન:-પોતાની સેનાની વ્યૂહની શિક્ષાનું મંથન કરનાર હું રક્ષોહણ:-શત્રુઓને મારવા તથા વૈષ્ણવાન્-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર વ:-તમને અવસ્તૃણામિ-સુખથી આચ્છાદિત કરું છું, તેમ તમે પણ કરો.

જેમ રક્ષોહણૌ-રાક્ષસોને મારનાર તથા બલગ્હનૌ-બળોનું મંથન કરનાર વામ્-યજ્ઞપતિ તથા યજ્ઞ કરાવનાર વિદ્વાનનું ધારણ કરો છો, તેમ હું પણ અપદધામિ-ધારણ કરું છું.

જેમ રક્ષોહણૌ-રાક્ષસોને મારનાર બલગ્હનૌ-બળોનું મંથન કરનાર વામ્-પ્રજા, સભાધ્યક્ષ આપ વૈષ્ણવી-સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપક વિદ્વાનોની ક્રિયા તથા વૈષ્ણવમ્-વિષ્ણુ સંબંધી જ્ઞાન છે, તે બધાને તર્કથી જાણો છો, તેમ હું પણ પર્યૂહામિ-તર્કથી સારી રીતે જાણું.

જેમ આપ સર્વ લોકો વૈષ્ણવા:-વ્યાપક પરમેશ્વરની ઉપાસના કરનાર સ્થ-છો, તેમ હું પણ બનું. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા ઉચિત વ્યવહારથી શરીર અને આત્માના પૂર્ણ બળને પ્રાપ્ત કરીને યજ્ઞથી પ્રજાનું પાલન કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને સાર્વભૌમ રાજ્યનું શાસન કરવું જોઈએ. (૨૫)

**દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવૈઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદે
નાર્યસીદમહઃ રક્ષાસાં ગ્રીવાઽઅપિંકૃન્તામિ । યવોઽસિ યવયાસ્મદ્દ્વેષો
યવયારાંતીર્દિવે ત્વાઽન્તરિક્ષાય ત્વા પૃથિવ્યૈ ત્વા શુન્ધન્તાલ્લોકાઃ પિતૃષદનાઃ
પિતૃષદનમસિ ॥ ૨૬ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ હું સવિતુઃ-સર્વ જગતના ઉત્પાદક અને દેવસ્ય-સર્વ આનંદ આપનાર પરમેશ્વરના પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં અશ્વિનો:-પ્રાણ અને અપાનના બાહુભ્યામ્-બળ અને વીર્ય તથા પૂષ્ણ:-અતિપુષ્ટ વીરના હસ્તાભ્યામ્-પ્રબળ પ્રતાપયુક્ત ભુજા અને દંડથી અનેક ઉપકારોને આદદે-ગ્રહણ કરું છું તથા ઇદમ્-આ જગતની રક્ષા કરીને રક્ષાસામ્-દુષ્ટ કર્મ કરનાર પ્રાણીઓના ગ્રીવાઃ-શિરોનું અપિ-કૃન્તામિ-છેદન કરું છું, તથા જેમ પદાર્થોના ઉત્તમ ગુણોને મિશ્રિત કરું છું, તેમ તું પણ ઉપકાર

પ્રાપ્ત કર અને યવય-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પદાર્થોને સંયુક્ત કર.

જેમ હું દ્વેષ:-ઈર્ષા વગેરે દોષો તથા અરાતી:-શત્રુઓને અસ્મત્-પોતાનાથી દૂર કરું છું, તેમ તું પણ યવય-દૂર કર.

હે વિદ્વન્ ! જેમ અમે દિવે-ઐશ્વર્યાદિ ગુણોનો પ્રકાશ કરવા માટે ત્વા-તને અન્તરિક્ષાય-આકાશમાં રહેનાર પદાર્થોને શુદ્ધ કરવા માટે ત્વા-આપને પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીના પદાર્થોની પુષ્ટિ કરવા માટે ત્વા-આપનું સેવન (આશ્રય) કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો.

જેમ પિતૃષદનમ્-વિદ્યાવાન જ્ઞાની લોકોનું સ્થાન અસિ-છે. અને જેથી પિતૃષદના:-જેમ જ્ઞાની લોકોમાં રહીને પવિત્ર બને છે, તેમ હું શુદ્ધ બનું. તથા સર્વ મનુષ્યો શુન્ધન્તામ્-પોતાની શુદ્ધિ કરે અને હે નારિ-સ્ત્રી ! તું પણ આ સર્વ ઉપદેશોનું એ રીતે આચરણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ક્રિયા અનુસાર તથા યથાક્રમ વિદ્વાનોનો આશ્રય કરીને યજ્ઞાનુષ્ઠાનથી સર્વની શુદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૬)

उद्दिवंश्च स्तभानान्तरिक्षं पृणं दृंहस्व पृथिव्यां द्युतानस्त्वां मारुतो मिनोतु
मित्रावरुणौ ध्रुवेण धर्मणा। ब्रह्मवनिं त्वा क्षत्रवनिं रायस्पोषवनिं पर्यूहामि।
ब्रह्मं दृंह क्षत्रं दृंह आयुर्दृंह प्रजां दृंह ॥ २७ ॥

પદાર્થ : હે પરમ વિદ્વાન ! જેમ ત્વા-આપને માસ્ત:-વાયુ ધ્રુવેણ-નિશ્ચલ ધર્મણા-ધર્મથી મિનોતુ-પ્રયુક્ત કરે છે, મિત્રાવરુણૌ-પ્રાણ અને અપાન પણ ધર્મથી પ્રયુક્ત કરે છે, તેમ આપ કૃપા કરીને અમારા માટે દિવમ્-વિદ્યા ગુણોના પ્રકાશથી ઉત્તમાન-અજ્ઞાનને દૂર કરો. તથા અન્તરિક્ષમ્-સર્વ પદાર્થોના અવકાશને આ પૃણ-પરિપૂર્ણ કરો.

પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર દ્યુતાન:-સદ્વિદ્યાના ગુણોનો વિસ્તાર કરીને આપ સુખોની દંહસ્વ-વૃદ્ધિ કરો; બ્રહ્મ-વેદવિદ્યાની દંહ-વૃદ્ધિ કરો, ક્ષત્રમ્-રાજ્યની વૃદ્ધિ કરો, આયુ:-જીવનની દંહ-વૃદ્ધિ કરો. તથા પ્રજામ્-ઉત્પન્ન થયેલ સંતાનોની દંહ-વૃદ્ધિ કરો.

તેથી હું બ્રહ્મવનિ-બ્રહ્મવિદ્યાનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર, ક્ષત્રવનિ-રાજ્યનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર રાયસ્પોષવનિ-અને ધનસમૂહની પુષ્ટિનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર આપને પર્યૂહામિ-સર્વ પ્રકારના તર્કોથી નિશ્ચય કરું છું, તેમ આપ મને સર્વથા સુખદાયક બનો તથા આપને સર્વ મનુષ્યો તર્કથી જાણો. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જગદીશ્વરની સત્ય ભાવથી પ્રાર્થના કરવાથી તથા શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનની સેવા કરવાથી એ સર્વને સુખ આપે છે, તેમજ આ યજ્ઞ પણ વિદ્યા આદિની વૃદ્ધિ કરીને સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૨૭)

ध्रुवासिं ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजयां पशुभिर्भूयात्।

ઘૃતેન દ્યાવાપૃથિવી પૂર્યેથામિન્દ્રસ્ય છુદિરસિ વિશ્વજનસ્ય છાયા ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે યજ્ઞ કરનાર યજમાનની પત્ની ! જેમ તું પ્રજયા-રાજ્ય અથવા પોતાનાં સંતાન અને પશુભિઃ-હાથી, ઘોડા, ગાય, વગેરે પશુઓ સહિત અસ્મિન્-આ આયતને-જગતમાં, પોતાના સ્થાન-ઘરમાં અથવા સર્વનો સત્કાર કરવા યોગ્ય યજ્ઞમાં ધ્રુવા-દેહ સંકલ્પ અસિ-છે, તેમ અયમ્-આ યજમાનઃ-યજ્ઞ કરનાર તારા પતિ યજમાન પણ ધ્રુવઃ-દેહ સંકલ્પ રહે.

તમે બન્ને ઘૃતેન-ઘૃતાદિ સુગંધી પદાર્થો દ્વારા દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિને પૂર્યેથામ્-પરિપૂર્ણ કરો.

હે યજ્ઞ કરનારી પત્ની ! તું ઇન્દ્રસ્ય-અત્યંત ઐશ્વર્યને પણ પોતાના યજ્ઞથી છદિઃ-પ્રાપ્ત કરનારી અસિ-છે. હવે તું અને તારો પતિ યજમાન વિશ્વજનસ્ય-સંસારમાં છાયા-સુખ કરનાર ભૂયાત્-બનો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે યજ્ઞ કરનાર યજમાન અને યજમાન - પત્ની દ્વારા તથા જે યજ્ઞ દ્વારા નિશ્ચલ વિદ્યા અને સુખ પ્રાપ્ત થઈને દુઃખ નાશ પામે, તે બંનેનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ અને યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨૮)

પરિ ત્વા ગિર્વળો ગિરંડુમા ભવન્તુ વિશ્વતઃ । વૃદ્ધાયુમનુ વૃદ્ધયો જુષ્ટા ભવન્તુ જુષ્ટયઃ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે ગિર્વળઃ-સ્તુતિઓથી - વાણીથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર ! વા સભાપતિ ! ઇમાઃ-એ મારી કરેલી વિશ્વતઃ-સમસ્ત ગિરઃ-સ્તુતિઓ પરિ-સર્વ પ્રકારથી ભવન્તુ-પ્રાપ્ત થાવ અને મારી સ્તુતિ તે સમય પૂરતી અર્થાત્ ક્ષણિક ન હોય પરંતુ વૃદ્ધાયુમ્-વૃદ્ધોની સમાન આચરણ કરનાર આપની અનુ-પશ્ચાત્ વૃદ્ધયઃ-અત્યંત વધતી અને જુષ્ટયઃ-પ્રીતિ કરવા યોગ્ય જુષ્ટાઃ-પ્રેમાળ હોય. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સમસ્ત શુભ ગુણ-કર્મની સાથે વર્તમાન જગદીશ્વર અથવા સભાપતિ સ્તુતિ યોગ્ય છે, તેમ તમારે પણ બનવું જોઈએ. (૨૯)

ઇન્દ્રસ્ય સ્યૂરસીન્દ્રસ્ય ધ્રુવોઽસિ એન્દ્રમસિ વૈશ્વદેવમસિ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર તથા સભાપતિ ! જેમ વૈશ્વદેવમ્-સમસ્ત પદાર્થોનું નિવાસસ્થાન અન્તરિક્ષ છે, તેમ આપ એન્દ્રમ્-સર્વનો આધાર છો, તેથી અમને ઇન્દ્રસ્ય-પરમૈશ્વર્યનો સ્યૂઃ-સંયોગ કરનાર અસિ-છો. અને ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્ય આદિ લોક અને રાજ્યને ધ્રુવઃ-નિશ્ચલ કરનાર અસિ-છો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જેમ સકલ ઐશ્વર્યનો આધાર ઈશ્વર છે, તેમ સભાધ્યક્ષાદિ મનુષ્યો પણ હોવા જોઈએ. (૩૦)

વિભૂરસિ પ્રવાહણો વહ્નિરસિ હવ્યવાહનઃ ।

શ્વાત્રોઽસિ પ્રચૈતાસ્તુથોઽસિ વિશ્વવૈદાઃ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર તથા વિદ્વાન્ ! જેથી આપ જેમ વ્યાપક આકાશ અને પ્રવાહણઃ-જેમ વાયુ

મહાન નદ હોય છે, ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા હોય છે, તેમ વિભૂઃ-વ્યાપક અને ઐશ્વર્યયુક્ત અસિ-છો.

વહ્નિઃ-જેમ હવન કરેલા પદાર્થોને યોગ્ય સ્થાનમાં પહોંચાડનાર અગ્નિ છે, તેમ હવ્યવાહનઃ-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું સંપાદન કરનાર અસિ-છો.

જેમ જીવોમાં પ્રાણ છે, તેમ પ્રચેતાઃ-ચેતના કરનાર શ્વાત્રઃ-વિદ્વાન અસિ-છે.

જેમ સૂત્રાત્મા વાયુ સર્વમાં વ્યાપક છે, તેમ વિશ્વવેદાઃ-વિશ્વને જાણવા તુથઃ-જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર અસિ-છો. જેથી આપ સત્કાર કરવા યોગ્ય છો, એમ અમે જાણીએ છીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના સત્કારનો કદી ત્યાગ ન કરવો જોઈએ, એ બંનેની પ્રાપ્તિ વિના કોઈને વિદ્યા તથા સુખનો લાભ થઈ શકતો નથી. તેથી એ બંને સર્વ રીતે જાણવા યોગ્ય છે. (૩૧)

उशिर्गसि कृविरङ्गारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाञ्छुन्ध्यूरसि मार्जालीयः ।
सम्राडसि कृशानुः परिषद्योऽसि पवमानो नभोऽसि प्रतक्वा मृष्टोऽसि
हव्यसूदनऽऋतधामासि स्वर्ज्योतिः ॥ ३२ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી આપ ડશિક્-કાન્તિમાન્ અસિ-છો, અંધારિઃ-વિપથગામી જીવોના શત્રુ તથા કવિઃ-કાન્તમતિ અસિ-છો. બમ્ભારિઃ-બંધનના શત્રુ તથા તાર આદિ તંતુઓનો વિસ્તાર કરનાર અસિ-છો. દુવસ્વાન્-પ્રશંસનીય સેવાયુક્ત સ્વયં શુન્ધ્યૂઃ-શુદ્ધ અસિ-છો માર્જાલીયઃ-સર્વને શુદ્ધ કરનાર સમ્રાટ્-અને સારી રીતે પ્રકાશમાન અસિ-છો કૃશાનુઃ-પદાર્થોને અતિ સૂક્ષ્મ પવમાનઃ-પવિત્ર અને પરિષદ્ધઃ-સભામાં કલ્યાણ કરનાર અસિ-છો.

જેમ આપ પ્રતક્વા-હર્ષિત અને નભઃ-પર પદાર્થોને હરનારને મારનાર અસિ-છો. હવ્યસૂદનઃ-હોમનાં દ્રવ્યોને (શુદ્ધ કરીને) યથાયોગ્ય વ્યવહારમાં લાવનાર તથા મૃષ્ટઃ-સુખ - દુઃખને સહન કરનાર તથા કરાવનાર અસિ-છો.

જેમ સ્વર્જ્યોતિઃ-અન્તરિક્ષને પ્રકાશિત કરનાર અને ઋત્ત્વધામા-સત્યધામ યુક્ત અસિ-છો, તેમજ ઉક્ત ગુણોથી પ્રસિદ્ધ આપ સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસના કરવા યોગ્ય છો. એમ અમે જાણીએ છીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે જેવા ગુણોવાળો સંસાર રચેલ છે, તેવા ગુણોથી પ્રસિદ્ધ તે ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૨)

समुद्रोऽसि विश्वव्यचा अजोऽस्येकपादहिरसि बुध्न्यो वागस्यैन्द्रमसि
सदोऽस्यृतस्य द्वारौ मा मा सन्ताप्तमध्वनामध्वपते प्र मा तिर स्वस्ति मेऽस्मिन्
पथि देवयाने भूयात् ॥ ३३ ॥

પદાર્થ : જેમ પરમેશ્વર સમુદ્રઃ-સર્વ પ્રાણીઓનું ગમનાગમન કરાવનાર વિશ્વવ્યચાઃ-જગતમાં વ્યાપક

અને અજઃ-અજન્મા અસિ-છે, એકપાત્-જેના એક ચરણમાં સંપૂર્ણ વિશ્વ છે. અહિઃ-વ્યાપનશીલ બુદ્ધ્યઃ- તથા અન્તરિક્ષમાં વ્યાપક થનાર અસિ-છે, અને વાક્-વેદવાણી રૂપ અસિ-છે.

એન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યના સદઃ-સ્થાનરૂપ છે અને ઋક્સ્ય-સત્યનાં દ્વારૌ-મુખોને મા સંતાપ્તમ્-સંતાપ કરાવનાર નથી. અધ્વપતે-હે ધર્મ-વ્યવહારના માર્ગોનું પાલન કરનારા વિદ્વાનો ! તેમ તમે પણ સંતાપ કરો નહિ.

હે ઈશ્વર ! મા-મને અધ્વનામ્-ધર્મ-શિલ્પના માર્ગથી પ્રતિર-પાર કરો. અને મે-મારા અસ્મિન્-એ દેવયાને-વિદ્વાનોનો જવા-આવવા યોગ્ય પથિ-માર્ગમાં જેમ સ્વસ્તિ-સુખ ભૂયાત્-હોય તેવો અનુગ્રહ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ કૃપાળુ ઈશ્વર આ સંસારમાં સર્વ જીવોની શિક્ષા આદિ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ વિદ્વાનોએ પણ પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર, જગતનું કારણ - પ્રકૃતિ અને જીવ અનાદિ અને અજન્મા હોવાથી અવિનાશી છે, તેમ પોતાનું પણ સમજવું જોઈએ.

જેમ પરમેશ્વરની કૃપા, ઉપાસના દ્વારા સૃષ્ટિ-વિદ્યા તથા પુરુષાર્થથી સંપન્ન મનુષ્યોને વિદ્વાનોના માર્ગની પ્રાપ્તિ થાય છે અને તેમાં સુખ ઉત્પન્ન થાય છે, તેમ અન્યોને થતાં નથી. (૩૩)

મિત્રસ્ય મા ચક્ષુષેક્ષધ્વમ્ગ્નયઃ સગરાઃ સગરા સ્થ સગરેણ નામ્ના રૌદ્રેણાનીકેન પાત માગ્નયઃ પિપૃત માગ્નયો ગોપાયત મા નમો વોઽસ્તુ મા મા હિઃસિષ્ટ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે સગરાઃ-અન્તરિક્ષ અવકાશયુક્ત અગ્નયઃ-શ્રેષ્ઠ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરનારા વિદ્વાનો ! તમે મા-મને મિત્રસ્ય-મિત્રની દૃષ્ટિએ ઈક્ષધ્વમ્-નિહાળો. આપ સગરાઃ-વિદ્યોપદેશ અવકાશયુક્ત સ્થ-રહો.

જેમ આપ અગ્નયઃ-સાંસારિક વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિઓની રક્ષા કરો છો, તેમ સગરેણ-અન્તરિક્ષની સાથે રૌદ્રેણ-શત્રુઓને રડાવનારી નામ્ના-પ્રસિદ્ધ અનીકેન-સેનાથી મા-મારું પાત-રક્ષણ કરો.

અગ્નયઃ-જેમ જ્ઞાનીજનો સર્વને સર્વ પ્રકારનું સુખ આપે છે, તેમ પિપૃત-સુખોથી પૂર્ણ કરો. ગોપાયત-સર્વ રીતે પાલન કરો અને કદી મા-મને મા હિંસિષ્ટ-નષ્ટ ન કરો. વઃ-એથી આપને માટે મે-મારા નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-હો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાના દાન દ્વારા વિદ્વાન લોકો સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરે છે, તેમ એ વિદ્વાનોને વિદ્યા નિમિત્ત કાર્યોમાં લાગેલા વિદ્યાર્થીઓ પણ સુખી રાખે. (૩૪)

જ્યોતિરસિ વિશ્વરૂપું વિશ્વૈષાં દેવાનાંઽ સ્મિત્ । ત્વઃ સૌમ તનૂકૃદ્ભ્યો દ્વેષોંભ્યોઽન્યકૃતેભ્યઽઽરુ યન્તાસિ વરૂથ્ઽઽ સ્વાહાં જુષાણો અમુરાજ્યસ્ય વેતુ સ્વાહાં ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઐશ્વર્યદાતા જગદીશ્વર ! આપ વિશ્વેષામ્-સર્વ દેવાનામ્-વિદ્વાનોના વિશ્વસ્ત્રમ્-સર્વ રૂપયુક્ત જ્યોતિઃ-સર્વ પ્રકાશક સમિત્-સારા સુંદર પ્રકાશિત અસિ-છો.

તનુકૃદ્ભ્યઃ-શરીરોનું સંપાદન કરનાર દ્વેષોભ્યઃ-દ્વેષ કરનાર જીવો તથા અન્યકૃતેભ્યઃ-અન્ય મનુષ્યો માટે દુષ્ટ કર્મોના યન્તા-નિયામક અસિ-છો.

તેના દ્વારા ઉરુ-બહુ વસ્ત્રમ્-ઉત્તમ ગૃહ સ્વાહા-વાણી અપ્તુઃ-વ્યાપક આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનનું જુષાણઃ-સેવન કરતા મનુષ્ય સ્વાહા-વેદવાણીને વેતુ-જાણે. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેથી પરમેશ્વર સર્વ લોકોના નિયંત્રા છે, તેથી એ સર્વ લોકો નિયમમાં ચાલે છે. (૩૫)

અગ્ને નયં સુપથાં રાયેઽઅસ્માન્વિશ્વાનિ દેવ વયુનાનિ વિદ્વાન્ ।

યુયોધ્યુસ્મઙ્જુહુરાણમેનો ભૂયિષ્ઠાં તે નમઽઉક્તિં વિધેમ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વને સન્માર્ગે વાળનાર દેવ-અને સર્વ આનંદદાતા વિદ્વાન્-સમસ્ત વિદ્યાવાન જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી રાયે-મોક્ષરૂપ ઉત્તમ ધન માટે સુપથા-જેમ ધાર્મિક જન ઉત્તમ માર્ગ દ્વારા વિશ્વાનિ-સમસ્ત વયુનાનિ-ઉત્તમ કર્મ, વિજ્ઞાન અને પ્રજાને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અસ્માન્-અમને નય-પ્રાપ્ત કરાવો.

જુહુરાણમ્-કુટિલ એન:-દુઃખફળરૂપી પાપને અસ્મત્-અમારાથી યુયોધિ-દૂર કરો.

અમે તે-આપની ભૂયિષ્ઠામ્-અત્યંત નમ ઉક્તિમ્-નમસ્કારરૂપ વાણી વિધેમ-સદા બોલીએ. (૩૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રેમથી ઉપાસના કરવાથી જગદીશ્વર જીવોને દુષ્ટ માર્ગથી છોડાવીને, ધર્મ માર્ગમાં સ્થાપિત કરીને તેને તેના તે તે કર્મ અનુસાર સાંસારિક અને પારલૌકિક સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ ન્યાયાધીશોએ પણ કરવું જોઈએ. (૩૬)

અયં નૌઽઅગ્નિર્વિવસ્કૃણોત્વયં મૃધઃ પુરઽણતુ પ્રભિન્દન્ ।

અયં વાજાઞ્જયતુ વાજસાતાવયઃ શત્રૂ ઞ્જયતુ જર્હૃષાણઃ સ્વાહા ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : આ અગ્નિઃ-પરમેશ્વરના ઉપાસકજન નઃ-અમે પ્રજાસ્થ જીવોની વરિવઃ-નિરંતર રક્ષા કૃણોતુ-કરે. જેમ કોઈ વીર પુરુષ પોતાની સેનાને લઈને સંગ્રામમાં નિંદિત દુષ્ટ શત્રુઓને પ્રથમથી જ ઘેરી લે છે, તેમ અયમ્-આ યુદ્ધ કુશળ સેનાપતિ વાજસાતાૌ-સંગ્રામમાં દુષ્ટ શત્રુઓને પુરઃ-પ્રથમથી જ ણતુ-ઘેરી લે.

જેમ અયમ્-આ વીરોને હર્ષ દેનાર સેનાપતિ દુષ્ટ શત્રુઓને પ્રભિન્દન્-છિન્ન-ભિન્ન કરીને વાજાન્-સંગ્રામોને જયતુ-જીતે છે, તેમ અયમ્-આ વિજય કરાવનાર સેનાપતિ જર્હૃષાણઃ-નિરંતર પ્રસન્ન બનીને સ્વાહા-યુદ્ધ પ્રબંધકની શ્રેષ્ઠ વાણી બોલતા જયતુ-વિજયને પ્રાપ્ત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની ઉપાસના કરતો નથી, તેનો સર્વત્ર વિજય થતો નથી. જે સુશિક્ષિત વીરોની સત્કારપૂર્વક સેનાની રક્ષા નથી કરતાં, તેનો સર્વત્ર પરાજય થાય છે.

તેથી[પરમાત્માની ઉપાસના અને વીરોનો સત્કાર] એ બે કાર્યો મનુષ્યોએ સદા કરવાં જોઈએ. (૩૭)

**उरु विष्णो विक्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि। घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं
तिर स्वाहा ॥ ३८ ॥**

પદાર્થ : જેમ સર્વવ્યાપક પરમેશ્વર સર્વ જગતની રચના કરતાં જગતના કારણને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ જગતની રચના કરે છે, તેમ હે વિદ્યાદિ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર વીર પુરુષ ! પોતાની વિદ્યાના ફળને **उरु-બહુ જ વિ-સારી રીતે ક્રમસ્વ-પહોંચીને ક્ષયાય-નિવાસ કરવા** યોગ્ય ગૃહ અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિને યોગ્ય **ન:-અમને કૃધિ-બનાવો.**

હે ઘૃતયોને-વિદ્યાદિ શિક્ષાયુક્ત પુરુષ ! જેમ અગ્નિ ઘૃત પીને પ્રદીપ્ત થાય છે, તેમ તું પણ પોતાના ગુણોમાં ઘૃતમ્-ધીનું **પ્રપ્ર પિબ-વારંવાર પાન કરીને શરીર-બળ આદિથી પ્રકાશમાન બન.**

જેમ ઋત્વિગાદિ વિદ્વાન જન **યજ્ઞપતિમ્-યજમાનની રક્ષા કરીને તેને યજ્ઞથી પાર કરે છે, તેમ તું પણ સ્વાહા-યજ્ઞની ક્રિયાથી યજ્ઞમ્-યજ્ઞથી તિર-પાર થા. (૩૮)**

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર વ્યાપક હોવાથી સમસ્ત સંસારની રચના કરવા તથા રક્ષા કરવામાં સમર્થ છે તથા સર્વને સુખી કરે છે, તેમ સર્વેએ આનંદિત રહેવું જોઈએ.

જેમ અગ્નિ બળતણને સળગાવે છે, તેમ શત્રુઓને બાળી નાખવા જોઈએ.

જેમ હોતા વગેરે મનુષ્યો ધાર્મિક યજમાનને પ્રાપ્ત કરી પોતાનાં કાર્યો સિદ્ધ કરે છે, તેમ પ્રજાના લોકો ધર્માત્મા સભાપતિને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને સિદ્ધ કરે. (૩૮)

**देव सवितरेष ते सोमस्तः रक्षस्व मा त्वा दधन्। एतत्त्वं देव सोम
देवो देवाँऽऽउपांगाऽद्दमहं मनुष्यान्त्सह रायस्योषेण स्वाहा निर्वरुणस्य
पाशान्मुच्ये ॥ ३९ ॥**

પદાર્થ : હે દેવ-સકલ વિદ્યાના પ્રકાશક ઐશ્વર્યવાન્ વિદ્વાન સભાધ્યક્ષ ! જેમ હું આપની સહાયતાથી મારા ઐશ્વર્યની રક્ષા કરું છું, તેમ તું જે **एष:-આ તે-તારો સોમ:-ઐશ્વર્ય સમૂહ છે. તમ્-તેની રક્ષસ્વ-રક્ષા કર.**

જેમ મને શત્રુઓ દુઃખ આપી શકતા નથી, તેમ **त्वाम्-તને પણ મા દધન્-આપી શકે નહિ.**

હે દેવ-સુખદાતા અને સોમ-સજ્જનોના માર્ગમાં ચલાવનાર રાજા ! **त्वम्-તું एतत्-એથી સભાધ્યક્ષ અને દેવ:-પરિપૂર્ણ વિદ્યાથી પ્રકાશિત દેવાન્-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની उप-સમીપ અગા:-જા અને હું પણ જાઉં.**

જેમ હું **इदम्-એ આચરણથી राय:-અત્યંત ધનથી पोषेण-પુષ્ટિયુક્ત થઈને મનુષ્યાન્-વિચારવાન પુરુષ અને દેવાન્-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને वस्राणस्य-દુઃખથી તિરસ્કાર કરનાર દુષ્ટ જનના पाशात्-બંધનથી मुच्ये-છૂટું, તેમ તું પણ नि:-નિરંતર મુક્ત બન. (૩૯)**

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને એ યોગ્ય છે, કે અપ્રાપ્ત ઐશ્વર્યની પુરુષાર્થથી પ્રાપ્તિ અને તેની રક્ષા તથા ઉન્નતિ કરીને, ધાર્મિક મનુષ્યોનો સંગ કરીને તથા ઐશ્વર્યથી તેનો સત્કાર કરીને, ધર્મનું અનુષ્ઠાન કરીને તથા વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરીને દુઃખરૂપી બંધનથી મુક્ત બને. (૩૯)

અગ્ને' વ્રતપાસ્તે વ્રતપા યા તવ તનૂર્મચ્યભૂદેષા સા ત્વયિ યો મમ તનૂમ્ત્વચ્યભૂદિચ્સા મયિ'। યથાયથં નૌ' વ્રતપતે વ્રતાન્યનું મે દીક્ષાં દીક્ષાપતિરમશ્ચસ્તાનુ તપસ્તપસ્પતિઃ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : વ્રતપા:-જેમ સત્યનું પાલન કરનાર વિદ્વાન હોય, તેમ અગ્ને-હે વિજ્ઞાનથી સમુન્નત વિદ્વાન ! જે મારા વ્રતપા:-સત્ય ગુણોનું પાલન કરનાર આચાર્ય અભૂત્-હતા, તેમ હું તે-તારો બનું [અર્થાત્ તારા બતાવેલ વ્રતોનું પાલન કરનાર બનું].

યા-જે તવ-તારું તનૂ:-વિદ્યા આદિ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર શરીર છે, સા-તે મયિ-તારા મિત્રો તારામાં પણ હોય. આ-ત્વયિ-મારા મિત્ર મારામાં પણ હોય.

યા-જે મમ-મારી તનૂ:-વિદ્યાનો વિસ્તાર છે, સા-તે ત્વયિ-મારા અધ્યાપક તારામાં હોય. ઇચ્મ-આ મયિ-તારા શિષ્ય મારામાં બુદ્ધિ હોય.

વ્રતપતે-હે સત્ય આચરણાદિ વ્રતોના પાલક ! જેમ સત્ય ગુણ, સત્ય ઉપદેશના રક્ષક વિદ્વાન હોય છે, તેમ હું અને તું યથાયથમ્-મિત્ર બનીને વ્રતાનિ-સત્ય આચરણોનું વર્તન કરીએ.

હે મિત્ર ! જેમ તવ-તારા દીક્ષાપતિ:-યથોક્ત ઉપદેશનું પાલન કરનાર આચાર્ય તને દીક્ષામ્-સત્ય ઉપદેશ અમંસ્ત-સમજે છે, તેમ મારા માટે અનુ-બતાવે.

જેમ તારા તપસ્પતિ:-અખંડ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનાર આચાર્ય તારા માટે તપ:-પ્રથમ કષ્ટ અને પછી સુખ આપનાર બ્રહ્મચર્યની શિક્ષા આપે છે. તેમ મારા અખંડ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર આચાર્ય તપ:-પ્રથમ કષ્ટ અને પછી સુખ આપનાર બ્રહ્મચર્યની શિક્ષા આપે. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ પહેલાં વિદ્વાનોના નિર્માતા અધ્યાપક થયા હતા, તેમ અમે પણ બનીએ.

જ્યાં સુધી મનુષ્યો સુખ-દુઃખ તથા હાનિ-લાભની વ્યવસ્થાના વિષયમાં પરસ્પર પોતાના આત્મા સમાન વ્યવહાર નથી કરતાં, ત્યાં સુધી પૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તે સર્વનું અનુષ્ઠાન શા માટે ન કરવું જોઈએ ? (૪૦)

ઊરુ વિષ્ણો વિક્રમસ્વોરુ ક્ષયાય નસ્કૃધિ। ઘૃતં ઘૃતયોને પિબ પ્રપ્રં યજ્ઞપતિં તિર્ સ્વાહા ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : જેમ સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત થનાર વાયુ ચાલે છે, તેમ હે વિદ્યા ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર વિદ્વાન ! ઊરુ-અતિ વિસ્તારયુક્ત ક્ષયાય-વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ માટે વિક્રમસ્વ-પોતાની વિદ્યાનાં અંગોથી પરિપૂર્ણ - સંપન્ન બનો અને ન:-અમને સુખી કૃધિ-કરો.

જેમ જલનું નિમિત્ત વિદ્યુત્ છે, તેમ પદાર્થ ગ્રહણ કરનાર વિદ્વન્ ! વિદ્યુત્ની સમાન ઘૃતમ્-જલનું પિબ-પાન કરો.

જેમ હું યજ્ઞપતિને દુઃખથી પાર ઉતારું છું, તેમ તું પણ સ્વાહા-સારી રીતે હવન આદિ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને પ્રપ્રતિસ-સારી રીતે દુઃખને પાર કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ પવન સર્વને સુખ આપીને સર્વનું અધિષ્ઠાન છે, તેમ વિદ્વાનો પણ બને. (૪૧)

અત્યન્યા૨ડઅગાં નાન્યા૨ડઅપાંગામર્વાક્ ત્વા પરેભ્યોડવિદં પુરોડવરેભ્યઃ તં ત્વા જુષામહે દેવ વનસ્પતે દેવયજ્યાયૈ દેવાસ્ત્વા દેવયજ્યાયૈ જુષન્તાં વિષ્ણવે ત્વા । ઓષધે ત્રાયસ્વ સ્વધિતે મૈનઃ હિંસીઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે વનસ્પતે-જડી-બુટ્ટીઓની રક્ષા કરનાર દેવ-વિદ્વાન ! જેમ તું અન્યાન્-વિદ્વાનોના વિરોધી મૂર્ખજનોને છોડીને અન્યાન્-મૂર્ખોના વિરોધી વિદ્વાનો સમીપ જાય છે, તેમ હું પણ વિદ્વાનોના વિરોધીઓને છોડીને અપ-સમીપ અગામ્-જાઉં.

જેમ તમે પરેભ્યૈઃ-ઉત્તમથી પરઃ-ઉત્તમ અને અવરેભ્યઃ-નાનાથી અર્વાક્-નાના હોય તમ્-ત્વામ્-તેને હું અવિદમ્-પ્રાપ્ત કરું.

જેમ દેવાઃ-વિદ્વાન લોકો દેવયજ્યાયૈ-ઉત્તમ ગુણ આપવા માટે ત્વા-તને યાહે છે, તેમ અમે પણ ત્વા-તને જુષામહે-યાહીએ.

જેમ અમે દેવયજ્યાયૈ-ઉત્તમ ગુણોના સંગથી ત્વા-તને યાહીએ છીએ, તેમ અન્ય એ લોકો પણ યાહે.

જેમ ઔષધિઓનો સમૂહ વિષ્ણવે-યજ્ઞ માટે સિદ્ધ થઈ સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ હે રોગોને દૂર કરનાર અને સ્વધિતે-દુઃખોનો વિનાશ કરનાર વિદ્વાન ! અમે ત્વા-તને યજ્ઞ માટે યાહીએ.

હે શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન જન ! જેમ હું આ યજ્ઞનો વિનાશ કરવા નથી ઈચ્છતો, તેમ તું પણ અનમ્-આ યજ્ઞનો મા હિંસીઃ-વિનાશ ન કર.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ નીચ વ્યવહારો અને નીચ પુરુષોનો ત્યાગ કરીને ઉત્તમ વ્યવહારો અને ઉત્તમ પુરુષોની પ્રતિદિન કામના કરવી જોઈએ.

ઉત્તમ મનુષ્યોથી ઉત્તમ શિક્ષા અને સાધારણ મનુષ્યોથી સાધારણ શિક્ષા ગ્રહણ કરવી જોઈએ.

યજ્ઞ અને યજ્ઞ સામગ્રીનો કદી પણ નાશ ન કરવો જોઈએ. સર્વેએ પરસ્પર સુખથી રહેવું જોઈએ. (૪૨)

દ્યાં મા લૈઋન્તરિક્ષું મા હિંસીઃ પૃથિવ્યા સમ્ભવ । અયઃહિ ત્વા સ્વધિતિસ્તેતિજાનઃ પ્રણિનાય મહતે સૌભગાય । અતસ્ત્વં દૈવ વનસ્પતે શતવલ્શો વિરોહ સહસ્ત્રવલ્શા વિ વયઃ રુહેમ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ હું સૂર્યની સામે રહીને દ્યામ્-તેનો પ્રકાશ દૃષ્ટિગોચર કરતો નથી, તેમ તું પણ તેને મા લેખી:-દૃષ્ટિગોચર કર નહિ.

જેમ હું અન્તરિક્ષમ્-યથાર્થ પદાર્થોના અવકાશને બગાડતો નથી, તેમ તું પણ તેને મા-હિંસી:-બગાડ નહિ.

જેમ હું પૃથિવ્યા-પૃથિવીની સાથે પ્રકટ થાઉં છું, તેમ તું પણ સમ્-ભવ-તેની સાથે પ્રકટ રહે.

હિ-જે કારણે જેમ તેતિજાન:-અત્યંત તીક્ષ્ણ સ્વધિતિ:-વજ્ર શત્રુઓનો વિનાશ કરીને ઐશ્વર્ય આપે છે. અતઃ-એ કારણે અયમ્-આ ત્વા-તને મહતે-અત્યંત શ્રેષ્ઠ સૌભગાય-સૌભાગ્ય માટે સંપન્ન કરે. તથા અન્ય પદાર્થ પણ જેમ ઐશ્વર્યને પ્રણિનાય-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવે.

હે દેવ-આનંદયુક્ત વનસ્પતે-વનોની રક્ષા કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ શતવલ્શા:-સેંકડો અંકુરોવાળું વૃક્ષ વિશેષતઃ ફળે છે - વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ તું પણ એ ઉક્ત પ્રશંસનીય સૌભાગ્યથી વિ-રોહ-વિવિધ રીતે - સારી રીતે વૃદ્ધિ પામ.

જેમ સહસ્રવલ્શા:-હજારો અંકુરોવાળા વૃક્ષ ફળે - વૃદ્ધિ પામે, તેમ અમે પણ એ સૌભાગ્યથી ફળીએ-ફૂલીએ - વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં કોઈ મનુષ્યે વિદ્યારૂપી પ્રકાશનો અભ્યાસ કદી છોડવો નહિ અને સ્વતંત્રતાનો અભ્યાસ, ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ તથા યોગ દ્વારા અગણિત ઉન્નતિ કરવી; તેનો કદી પણ ત્યાગ કરવો નહિ. (૪૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : યજ્ઞાનુષ્ઠાનનું સંપાદન (૧, ૨) યજ્ઞ સંપાદક વિદ્વાન (૩), પરમાત્માની પ્રાર્થના (૫), વિદ્યા પ્રાપ્તિ અને વિદ્વાનોની વિદ્યામાં વ્યાપ્તિનું નિરૂપણ (૪), અગ્નિ આદિથી યજ્ઞની સિદ્ધિ (૯), સર્વ વિદ્યા નિમિત્ત વાણીની વ્યાખ્યા (૧૦, ૧૧), અધ્યયન-અધ્યાપનરૂપ યજ્ઞનું વિવરણ (૧૨), યોગાભ્યાસનું લક્ષણ (૧૪), સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિ (૧૫), ઈશ્વર અને સૂર્યનાં કર્મોનું કથન (૧૬, ૧૭), પ્રાણ-અપાનની ક્રિયાનું નિરૂપણ (૧૬), વિભુ ઈશ્વરની વ્યાપ્તિનું લક્ષણ (૧૮-૨૧), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન (૨૨) સૃષ્ટિથી ઉપકાર ગ્રહણ (૨૩), સૂર્ય અને સભાધ્યક્ષના ગુણોની કામના (૨૪), યજ્ઞાનુષ્ઠાનની શિક્ષા આપવી (૨૫, ૨૬), ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષનાં કાર્યોનો ઉપદેશ (૨૯), યજ્ઞની સિદ્ધિ (૨૭, ૨૮), ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષથી કાર્ય સિદ્ધિ (૩૦), તથા તેના સ્વરૂપ અને કાર્યનું વર્ણન (૩૨), ઈશ્વર સમાન વિદ્વાનોના વર્તાવ અને લક્ષણ (૩૩), ઈશ્વરની ઉપાસના (૩૬), શૂરવીરોના ગુણોનું કથન (૩૭), ઈશ્વર અને વિદ્યુત્ના ગુણોનું વર્ણન (૩૮), પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ (૪૩), આકાશાદિ દૃષ્ટાન્તથી વિદ્યુત્ના ગુણોનું વર્ણન (૪૧), ઈશ્વરના ઉપાસકોના ગુણોનું પ્રકાશન, સર્વ બંધનથી મુક્તિ, પરસ્પર વર્ણનનો પ્રકાર, દુષ્ટોનો ત્યાગ અને વિદ્વાનોના સંગની આવશ્યકતા (૪૨) યજ્ઞ સિદ્ધિ માટે વિદ્યા-સંગ્રહનો ઉપદેશ કરેલ છે. આમ પંચમ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થોની યતુર્થ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થોની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति पञ्चमोऽध्यायः ॥



॥ અથ ષષ્ઠાધ્યાયસ્યારમ્ભઃ ॥

ઓ૩મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવૈઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદૈ નાર્યસીદમહઃ રક્ષસાં ગ્રીવાઽર્પિકૃન્તામિ । યવોઽસિ યવયાસ્મદ્દ્વેષો યવયારાતીર્દિવે ત્વાઽન્તરિક્ષાય ત્વા પૃથિવ્યૈ ત્વા શુન્ધન્તાલ્લોકાઃ પિતૃષદનાઃ પિતૃષદનમસિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેમ પિતૃષદનાઃ-પિતરોમાં રહેનારા વિદ્વાનો દેવસ્ય-પ્રકાશમય અને સવિતુઃ-સમસ્ત વિશ્વના ઉત્પાદક જગદીશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં અશ્વિનોઃ-પ્રાણ અને અપાનનાં બાહુભ્યામ્-બળ અને ઉત્તમ વીર્યથી તથા પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકારક પ્રાણના હસ્તાભ્યામ્-ધારણ અને આકર્ષણથી ત્વા-તને ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું પણ આદદે-ગ્રહણ કરું છું.

જેમ હું રક્ષસામ્-દુષ્ટ કામ કરનાર જીવોના ગ્રીવાઃ-ગળાં કૃન્તામિ-કાપું છું, તેમ ત્વમ્-તું અપિ-પણ કાપ.

હે સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે તું યવઃ-સંયોગ-વિભાગ કરનાર અસિ-છો, એ કારણે અસ્મત્-મારાથી દ્વેષઃ-દ્વેષ અર્થાત્ અપ્રીતિ કરનાર શત્રુઓને યવય-દૂર કર, અને અરાતીઃ-જે મારા નિરંતર શત્રુ છે તેને યવય-પૃથક્ કર.

જેમ હું ન્યાય વ્યવહારથી રક્ષા કરવા યોગ્ય જન દિવે-વિદ્યાદિ ગુણોના પ્રકાશ કરવા માટે ત્વામ્-ન્યાય - પ્રકાશક તને અન્તરિક્ષાય-આભ્યન્તર વ્યવહારમાં રક્ષા કરવા માટે ત્વામ્-તારા સત્યના અનુષ્ઠાન કરવાનો અવકાશ આપનારને તથા પૃથિવ્યૈ-ભૂમિના રાજ્ય માટે ત્વા-તારા રાજ્યનો વિસ્તાર કરનારને પવિત્ર કરું છું, તેમ એ લોકો પણ ત્વા-આપને શુન્ધન્તામ્-પવિત્ર કરે.

જેમ તું પિતૃષદનમ્-વિદ્વાનોના ઘરની સમાન અસિ-છો. પિતાની સમાન સર્વ પ્રજાનું પાલન કર.

હે સભાપતિની નારિ-શ્રી ! તું પણ એમ જ કર.

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાના નિષ્ણાત વિદ્વાન લોકો ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં પોતાની અને અન્યોની દુષ્ટતાને દૂર કરીને રાજ્યનું સેવન કરે છે તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૧)

અગ્રેણીરસિ સ્વાવેશઽડન્નેતૃણામેતસ્ય વિત્તાદધિ ત્વા સ્થાસ્યતિ દેવસ્ત્વા સવિતા મધ્વાનક્તુ સુપિપ્પલાભ્યસ્ત્વૌષધીભ્યઃ । દ્યામગ્રેણાસ્પૃક્ષઽઆન્તરિક્ષં મધ્યેનાપ્રાઃ

પૃથિવીમુપરેણાદ્દેહીઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેમ અગ્રેણીઃ-અધ્યાપક પોતાના શિષ્યોને અને પિતા પોતાના પુત્રોને અભ્યાસના આરંભ પહેલાં જ તેને ઉત્તમ શિક્ષાથી સુશીલ, જિતેન્દ્રિય અને ધાર્મિકતાયુક્ત કરે છે, તેમ અમારા સૌ માટે તમે અસિ-છો.

उन्नेतृणाम्-જે ઉન્નતિ કરનારનું રાજ્ય હોય, તેમ સ્વાવેશઃ-સારા ગુણોમાં પ્રવેશ કરનારા સમાન બનીને તું એતસ્ય-આ રાજ્યનું પાલન કરવાનું વિત્તાત્-જાણ.

હે રાજન્ ! જેમ ત્વા-તને સભાસદો સુપિપ્પલાભ્યઃ-ઉત્તમ ફળોવાળી ઓષધીભ્યઃ-ઔષધિઓથી મધ્વા-પ્રાપ્ત થયેલ મધુર ગુણોથી યુક્ત રસોથી અનક્તુ-સીંચે, તેમ પ્રજાજન પણ તને સીંચે.

તું આ રાજ્યમાં પોતાના અગ્રેણ-પ્રથમ યશથી દ્યામ્-વિદ્યા અને રાજનીતિના પ્રકાશને અસ્પૃક્ષઃ-સ્પર્શ કર. મધ્યમેન-મધ્યમ અર્થાત્ ત્યારબાદ વધારેલા યશથી અન્તરિક્ષમ્-ધર્મનો વિચાર કરવાના માર્ગને આપ્રાઃ-પૂર્ણ કર અને ઉપરેણ-પોતાના રાજ્યના નિયમોથી પૃથિવીમ્-આ ભૂમિના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને અદ્દેહીઃ-દેહ કરીને વૃદ્ધિ કર.

देवः-સમસ્ત રાજાઓના પણ રાજા સવિતા-સર્વ જગતને અન્તર્યામી રૂપે પ્રેરણા આપનાર જગદીશ્વર ત્વા-તને રાજા બનાવીને તારા ઉપર સ્થાસ્યતિ-અધિષ્ઠાતા બની રહેશે. (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય રાજપુરુષો તથા પ્રજાજનોની સ્વીકૃતિ વિના રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બની શકતો નથી.

રાજા તથા સભાની સંમતિ વિના કોઈ પણ મંત્રીત્વની કમશઃ યશોવૃદ્ધિ વિના સેનાપતિત્વને, દંડનાયકત્વને તથા સર્વ લોકાધીશત્વને યોગ્ય બની શકતા નથી. (૨)

या ते धामान्युश्मसि गर्मध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गाःअऽयासः । अत्राह तदुरुगायस्य
विष्णोः परमं पदमवभारि भूरि । ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनी रायस्पोषवनि पर्यूहामि ।
ब्रह्म दृह क्षत्रं दृहायुर्दृह प्रजां दृह ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! યા-જેમાં તે-તારા ધામાનિ-ધામ અર્થાત્ જેમાં પ્રાણી સુખ પ્રાપ્ત કરે તે સ્થાનોનો અમે ગમધ્યૈ-ઝ્મસિ-પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા કરીએ છીએ. તે સ્થાનો સૂર્યના પ્રકાશ જેવાં છે, તેમ યત્ર-જેમાં ઉચ્ચાયસ્ય-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વિષ્ણોઃ-સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરની ભૂસ્ત્રિંગાઃ-અત્યંત પ્રકાશમાન ગાવઃ-કિરણો અયાસઃ-ફેલાયેલ છે.

અત્ર-અહ-એમાં જ તત્-તે પરમેશ્વરના પરમમ્-સર્વ રીતે ઉત્તમ પદમ્-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પરમપદ વિદ્વાનોએ ભૂરિ અવ ભારિ-બહુધા ધારણ કરેલ છે. તેથી ત્વા-તને બ્રહ્મવનિ-પરમેશ્વર અને વેદવિજ્ઞાન ક્ષત્રવનિ-રાજ્ય અને વીરોની ચાહના રાયસ્પોષવનિ-ધનની પુષ્ટિના વિભાગ કરનાર આપને હું પર્યૂહામિ-વિવિધ તર્કોથી સમજાવું છું.

તું બ્રહ્મ-પરમાત્મા અને વેદને દંહ-દેહ કર, અર્થાત્ પોતાના ચિત્તમાં સ્થિર કર, આગળ વધ. ક્ષત્રમ્-રાજ્ય અને ધનુર્વેદવેતા ક્ષત્રિયોની દંહ-ઉન્નતિ કરીને આયુઃ-પોતાની અવસ્થાની દંહ-વૃદ્ધિ કર. અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય અને રાજ્યધર્મથી દેહ કર તથા પ્રજામ્-પોતાનાં સંતાન અને રક્ષા કરવા યોગ્ય પ્રજાજનોની દંહ-ઉન્નતિ કર. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય સભાધ્યક્ષથી રક્ષિત સ્થાનની કામના વિના સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરનો અનાદર કરીને ધર્મરાજ્યનો ભોગ કરી શકતો નથી.

કોઈ પણ મનુષ્ય વિજ્ઞાન, સેના, જીવન અર્થાત્ અવસ્થા અને પ્રજાની રક્ષા વિના વૃદ્ધિ - ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૩)

વિષ્ણોઃ કર્માણિ પશ્યત્ યતૌ વ્રતાનિ પસ્પ્ષે । ઇન્દ્રસ્ય યુજ્યઃ સર્વા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સભાસદો ! જેમ ઇન્દ્રસ્ય-પરમેશ્વરના યુજ્યઃ-સદાચારયુક્ત સર્વા-મિત્ર વિષ્ણોઃ-તે વ્યાપક ઈશ્વરના કર્માણિ-જે સંસારની રચના, પાલન અને સંહાર કરવાના સત્ય ગુણ છે, તેને જોતાં હું યતઃ-જે જ્ઞાનથી વ્રતાનિ-પોતાના મનમાં સત્ય ભાષણાદિ નિયમોને પસ્પ્ષે-બાંધું છું અર્થાત્ નિયમ કરું છું, તેમ તે જ્ઞાનથી તમે પણ પરમેશ્વરના ઉત્તમ ગુણોને પશ્યત-દેહતાથી જુઓ કે જેથી રાજ્ય આદિ કાર્યોમાં સત્યતાપૂર્વક અનુષ્ઠાન કરનાર બની શકો. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરના અવિરોધ-અનુકૂળતા અને સત્યાચરણ વિના ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોને દેખી - જાણી શકતો નથી; અને તેમ કર્યા વિના રાજ્યકાર્યોનું યથાર્થ રૂપમાં સંપાદન કરી શકાતું નથી. નિશ્ચય સત્યાચરણ વિના રાજ્યની વૃદ્ધિમાં કોઈ સમર્થ બની શકતું નથી. (૪)

તદ્વિષ્ણોઃ પરમં પદમ્ સદા પશ્યન્તિ સૂર્યઃ । દિવીવ ચક્ષુરાત્તમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સભ્યજનો ! જે પૂર્વોક્ત કર્મથી સૂર્યઃ-સ્તુતિ કરનારા વેદવેતાઓ વિષ્ણોઃ-સંસારની ઉત્પત્તિ, પાલન અને સંહાર કરનાર પરમેશ્વરના જે પરમમ્-સર્વોત્કૃષ્ટ પદમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદને દિવિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં આતમમ્-વ્યાપ્ત ચક્ષુઃ-નેત્રની ઇવ-સમાન સદા-ત્રણે કાળમાં પશ્યન્તિ-જુએ છે, તત્-તેને તમે પણ નિરંતર જુઓ. (૫)

ભાવાર્થ : નિર્મળ વૃત્તિવાળા વિદ્વાનો પોતાની વિદ્યાના પ્રકાશથી જેમ ઈશ્વરના ગુણો જોઈને વિશુદ્ધ આચરણશીલ બની જાય છે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૫)

પરિવીરસિ પરિ ત્વા દૈવીર્વિશો વ્યયન્તાં પરીમં યર્જમાનુઃ રાયો મનુષ્યાણામ્ ।

દિવઃ સૂનુરસ્યેષ તે પૃથિવ્યાલ્લોકઽઆરણ્યસ્તૈ પશુઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ રાજન ! તું પરિવીઃ-સર્વ વિદ્યાઓમાં સારા આપ્ત થનાર સમાન અસિ-છે ત્વામ્-તને દૈવીઃ-વિદ્વાનોના વિશઃ-સંતાનના સમાન પ્રજા પરિ + વ્યયન્તામ્-સર્વ વ્યાપ્ત અર્થાત્ સર્વ સ્થાનમાં વ્યાપ્ત થયેલા તારા કાર્યકારી હોય.

દિવઃ-પ્રકાશના પુંજ સૂર્યથી **સૂનુઃ**-ઉત્પન્ન થયેલ કિરણ સમુદાય સમાન તું **અસિ**-છે. તે-તારો પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં **લોકઃ**-રાજધાનીનો દેશ હોય અને **આરણ્યઃ**-વન્ય સિંહાદિ દુષ્ટ પશુઓ તારા વશમાં હોય. (૬)

ભાવાર્થ : રાજ્યકર્તા રાજાનો આશ્રય લઈને પ્રજાજન તેને 'કર' પ્રદાન કરે.

તે રાજા પ્રજાપાલન માટે સિંહ આદિ પશુઓ તથા ડાકુ આદિ પુરુષોને મારીને, પોતાની પ્રજાને યથોચિત રીતિથી ધર્મમાં સ્થિત રાખે. (૬)

उपावीरस्युप देवान्दैवीर्विशः प्रागुरुशिजो वह्नितमान् । देव त्वष्टर्वसु रम हव्या तै स्वदन्ताम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **દેવ**-દિવ્યગુણ સંપન્ન **ત્વષ્ટઃ**-સર્વ દુઃખોનું છેદન કરનાર સભાધ્યક્ષ ! જેથી તું **ઉપાવીઃ**-શરણાગત પાલક સમાન **અસિ**-છે. તેથી **દૈવીઃ**-વિદ્વાનો સાથે સંબંધ રાખનાર દિવ્યગુણ સંપન્ન **વિશઃ**-પ્રજા જેમ **ઉશિજઃ**-શ્રેષ્ઠ ગુણથી શોભિત કામના કરવા યોગ્ય **વહ્નિતમાન્**-અતિશય ધર્મમાર્ગમાં ચાલનાર અને ચલાવનાર **દેવાન્**-વિદ્વાનોને **ઉપપ્રાગુઃ**-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તને પણ પ્રાપ્ત થાય.

જેમ તારા આશ્રયથી પ્રજા ધનાઢ્ય બનીને સુખી બને, તેમ તું પણ પ્રાપ્ત પ્રજાજનોથી સત્કાર પામી **રમસ્વ**-હર્ષ પામ.

જેમ તું પ્રજાના પદાર્થોનો ભોગ કરે છે, તેમ પ્રજા પણ તારા **હવ્યા**-ભોગ્ય યોગ્ય મૂલ્યવાન **વસુ**-ધનાદિ પદાર્થોને **સ્વદન્તામ્**-ભોગવે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ગુણગ્રાહીજનો ઉત્તમ ગુણોનું સેવન કરે છે, તેમ પ્રજાએ ન્યાયકુશળ રાજાનું સેવન કરવું, જેથી પરસ્પરની પ્રીતિપૂર્વક સર્વની ઉન્નતિ થાય છે. (૭)

रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि ।

ऋतस्य त्वा देवहविः पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुषः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે **રેવતીઃ**-પ્રશસ્ત ધનવાળાં સંતાનો ! પ્રજાજનો ! તમે વિદ્યા અને સુશિક્ષામાં **રમધ્વમ્**-રમણ કરો-ક્રીડા કરો.

હે **બૃહસ્પતે**-વેદવાણીનું પાલન કરનાર વિદ્વાન ! આપ **ઋતસ્ય**-સત્ય અને ન્યાયના વ્યવહારથી પ્રાપ્ત **વસ્તૂનિ**-ધન અર્થાત્ અમને આપેલા દ્રવ્ય આદિ પદાર્થોનો **ધારય**-સ્વીકાર કરો. [હવે ગુરુ શિષ્યને ઉપદેશ આપે છે.]

હે રાજન ! અથવા પ્રજાજન ! **માનુષઃ**-સર્વ શાસ્ત્રનો વિચાર કરનાર હું **પાશેન**-અવિદ્યારૂપી બંધનથી તને **પ્રતિ મુજ્જામિ**-મુક્ત કરું છું. તું વિદ્યા અને સુશિક્ષામાં **ધર્ષા**-સમર્થ બન. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ ઉત્તમ શિક્ષાથી કુમારો અને કુમારિકાઓને જગદીશ્વરથી લઈને પૃથિવી સુધીના પદાર્થોનું જ્ઞાન કરાવવું જોઈએ; જેથી તેઓ અવિદ્યાના બંધનનો ત્યાગ કરીને સદા સુખી રહે. (૮)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । અગ્નીષોમાભ્યાં
જુષ્ટં નિયુનજ્મિ । અદ્ભ્યસ્ત્વૌષધીભ્યોઽનુ ત્વા માતા મન્યતામનુ પિતાનુ ભ્રાતા
સગર્ભ્યોઽનુ સખા સયૂથ્યઃ । અગ્નીષોમાભ્યાં ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય હું સવિતુઃ-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત દેવસ્ય-વેદવિદ્યાનો પ્રકાશ કરનાર પરમેશ્વરે
પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા આ જગતમાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના બાહુભ્યામ્-ગુણોથી તથા પૂષ્ણઃ-પૃથિવીના
હસ્તાભ્યામ્-હાથોની સમાન ધારણ અને આકર્ષણરૂપ ગુણોથી ત્વામ્-તને આદદે-સ્વીકાર કરું છું.

અગ્નિષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને સોમના તેજ અને શાન્તિ ગુણોથી જુષ્ટમ્-પ્રીતિ કરતાં ત્વા-તને
જે બ્રહ્મચર્ય ધર્મને અનુકૂળ જલ ઔષધિ છે, તે અદ્ભ્યઃ-જલ અને ઔષધીભ્યઃ-ઘઉં વગેરે અન્નાદિ
પદાર્થોથી નિયુનજ્મિ-નિયુક્ત કરું છું.

તને મારી પાસે રહેવા માટે તારી માતા-જનની અનુ + મન્યતામ્-અનુમતિ આપે. પિતા-પિતા
અનુમતિ આપે સગર્ભ્યઃ-સહોદર ભ્રાતા-ભાઈ અનુ-અનુમતિ આપે. સખા-મિત્ર અનુ-અનુમતિ આપે
અને સયૂથ્યઃ-સહવાસી અનુ-અનુમતિ આપે.

અગ્નીષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને સોમના તેજ અને શાન્તિ ગુણોનું [ગ્રહણ કરાવવા માટે] જુષ્ટમ્-
પ્રેમપૂર્વક ત્વા-તને પ્ર ઉક્ષામિ-તે ગુણોથી બ્રહ્મચર્યના નિયમોનું પાલન કરવા માટે અભિષિક્ત કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં માતા, પિતા, બંધુવર્ગ અને મિત્રવર્ગ પોતાનાં સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને
તેમને બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરાવે, જેથી તેઓ શ્રેષ્ઠ ગુણવાન બની શકે. (૯)

અપાં પેરુરસ્યાપો દેવીઃ સ્વદન્તુ સ્વાત્તં ચિત્સદૈવહવિઃ ।

સં તેં પ્રાણો વાતેન ગચ્છતાશ્ચ સમઙ્ગાનિ યજત્રૈઃ સં યજ્ઞપતિરાશિષા ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! તું અપામ્-જળ આદિ પદાર્થોનું પેરુ-રક્ષણ કરનાર અસિ-છે. સંસારના સર્વ
જીવ તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલા દેવીઃ-દિવ્ય સુખ આપનાર (આપઃ) જલને ચિત્-તથા સ્વાત્તમ્-ધર્મયુક્ત
વ્યવહારથી પ્રાપ્ત થયેલા પદાર્થોને દેવહવિઃ-વિદ્વાનોને ભોગવવા સમાન સંસ્વદન્તુ-સારી રીતે ભોગવે.

આશિષા-મારા આશીર્વાદથી તે-તારા અઙ્ગાનિ-શિર વગેરે અવયવો યજત્રૈઃ-યજ્ઞ કરાવનારની સાથે
સમ્-સમ્યક્ નિયુક્ત રહે અને પ્રાણઃ-પ્રાણ વાતેન-પવનની સાથે સઙ્ગચ્છતામ્-ઉત્તમતાથી રક્ષણ કરે અને
તું યજ્ઞપતિઃ-વિદ્યાપ્રચારરૂપી યજ્ઞનો પાલક બન. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞમાં આહુતિઓ આપવામાં આવે છે, તે સૂર્ય [કિરણો]માં પ્રાપ્ત થાય છે. સૂર્યની
આકર્ષણ શક્તિ દ્વારા પૃથિવી તથા જલના આકર્ષણથી વર્ષા થાય છે. વર્ષાથી અન્ન અને અન્નથી પ્રાણીઓ
જીવિત રહે છે. આ રીતે પરંપરાના સંબંધથી યજ્ઞ દ્વારા શુદ્ધ જલ અને આહુતિ આપેલ પદાર્થોનો સર્વ
જીવો ઉપયોગ કરે છે. (૧૦)

ઘૃતેનાક્તૌ પશૂંસ્ત્રાયેથાં રેવતિ યજમાને પ્રિયં ધાઽઆવિશા ।
 ઉરોરન્તરિક્ષાત્સજૂર્દેવેન વાતેનાસ્ય હવિષસ્ત્મના યજ સમસ્ય તન્વા ભવ । વર્ષો
 વર્ષીયસિ યજ્ઞે યજ્ઞપતિં ધાઃ સ્વાહા દેવેભ્યો દેવેભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે ઘૃતેન, અક્તૌ-ઘૃતપ્રસક્ત અર્થાત્ ઘૃતપ્રિય યજ કરનાર અને કરાવનારાઓ ! તમે પશૂન-
 ગાય આદિ પશુઓ ત્રાયેથામ્-પાળો, તમે એક-એક જન દેવેન-સર્વગત વાતેન-પવનથી સજૂઃ-સમાન
 પ્રેમ રાખીને સમાન ઉરોઃ-વિસ્તૃત અન્તરિક્ષાત્-અન્તરિક્ષથી ઉત્પન્ન થયેલ પ્રિયમ્-પ્રિય સુખને રેવતિ-
 ઉત્તમ ઐશ્વર્ય સંપન્ન યજમાને-યજ કરનાર ધનવાન પુરુષમાં ધાઃ-સ્થાપના કરો અને આવિશ-તેના
 અભિપ્રાયને પ્રાપ્ત થાવ અને અસ્ય-એના હવિષઃ-હોમયોગ્ય પદાર્થોને ત્મના-આપજ નિષ્પાદન કરેલ
 સમાન યજ-અગ્નિમાં હોમો અર્થાત્ યજની કોઈ ક્રિયાથી વિપરીત ભાવ ન કરો. અને અસ્ય-એના
 તન્વા-શરીરની સાથે સમ્ + ભવ-એકી ભાવ રાખો, પરંતુ વિરોધથી ભેદભાવનું આચરણ ન કરો.

હે વર્ષો-યજ કર્મથી સર્વ સુખ પહોંચાડનારા ! દેવેભ્યઃ-સ્વાહા-દેવેભ્યઃ-સ્વાહા-સત્કર્મના અનુષ્ઠાનથી
 પ્રકાશિત ધર્મિષ્ઠ જ્ઞાની પુરુષ જે યજ જોવાની ઈચ્છા કરીને વારંવાર યજમાં આવે છે, તે વિદ્વાનો માટે
 સારી સત્કારયુક્ત વાણીઓનું ઉચ્ચારણ કરીને યજ્ઞપતિને વર્ષીયસિ-સર્વ સુખની વર્ષા કરનાર યજમાં
 ધાઃ-સ્થિર કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : યજ માટે ઘૃત આદિ પ્રાપ્ત કરવાના ઈચ્છુક મનુષ્યોએ ગાય આદિ પશુઓ રાખવાં જોઈએ.
 ઘૃત આદિ ઉત્તમ દ્રવ્યોથી અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞો કરીને તેના દ્વારા જલ અને વાયુની સારી રીતે શુદ્ધિ કરીને
 પ્રાણીઓના અભીષ્ટ સુખ ઉત્પન્ન કરવાં જોઈએ. (૧૧)

માહિર્ભૂર્મા પૃદાકુર્નમસ્તઽઆતાનાનર્વા પ્રેહિં । ઘૃતસ્ય કુલ્યાઽડપંડ્રહૃતસ્ય
 પથ્યાઽઅનુ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે આતાન-સારી રીતે સુખનો વિસ્તાર કરનાર વિદ્વાન્ ! તું મા-ન અહિઃ-સાપ સમાન કુટિલ
 માર્ગગામી મા-ન પૃદાકુઃ-મૂર્ખજન સમાન અભિમાની અથવા વ્યાઘ્ર સમાન હિંસક ભૂઃ-બન. તે નમઃ-
 સર્વ સ્થાનમાં તારા સુખ માટે અન્ન આદિ પદાર્થો પ્રથમથી જ પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે.

અનર્વા-ઘોડા વગેરેની સવારી વિના નિરાશ્રય પુરુષ જેમ ઘૃતસ્ય-જલની કુલ્યાઃ-મોટી ધારાઓને
 પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ ઋહસ્ય-સત્યના પથ્યાઃ-માર્ગોને પ્રાપ્ત થા. (૧૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્યે ધર્મના માર્ગમાં, કુટિલમાર્ગી સર્પની સમાન કુટિલ આચરણવાળા ન
 બનવું જોઈએ, પરંતુ સદા સરળ સ્વભાવવાળા બનવું જોઈએ. (૧૨)

દેવીરાપઃ શુદ્ધા વૌદ્ધ્વઃ સુપરિવિષ્ટા દેવેષુ સુપરિવિષ્ટા વ્યં પરિવેષ્ટારો

ભૂયાસ્મ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે કુમારીકાઓ ! તમે જેમ આપ:-શ્રેષ્ઠ ગુણોને પ્રાપ્ત કરનારી શુદ્ધા:-સત્યકર્મ - અનુષ્ઠાનથી પવિત્ર દેવી:-વિદ્યા પ્રકાશમાન વિદુષી સ્ત્રીઓ દેવેષુ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન પતિઓમાં સુપરિવિષ્ટા:-સેવાભાવથી પ્રવિષ્ટ થઈને પોતાના પતિઓને વોદ્ધ્વમ્-પ્રાપ્ત થાવ છો અને તે વિદ્વાન પતિજનો તે સ્ત્રીઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે અને અમે પરિવેષ્ટા-એ કર્મની યોગ્યતાને ભૂયાસ્મ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદુષી મહિલાઓ અને વિદ્વાનોની પત્નીઓ પતિવ્રત ધર્મનું પાલન કરનાર હોય છે, તેમ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓ તે પ્રકારના ગુણ તથા સ્વભાવયુક્ત બને અને બ્રહ્મચારી છાત્ર ગુરુજનોના સ્વભાવયુક્ત બને, જેથી ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા સ્ત્રી-પુત્ર આદિની રક્ષામાં તત્પર બની શકે. (૧૩)

વાચં તે શુન્ધામિ પ્રાણં તે શુન્ધામિ ચક્ષુસ્તે શુન્ધામિ શ્રોત્રં તે શુન્ધામિ નાભિં તે શુન્ધામિ મેઢ્ઠં તે શુન્ધામિ પાયું તે શુન્ધામિ ચરિત્રાસ્તે શુન્ધામિ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! હું વિવિધ શિક્ષાઓથી તે-તારી વાચમ્-ભાષણની સાધન વાણીને શુન્ધામિ-શુદ્ધ અર્થાત્ સદ્ધર્માનુકૂળ કરું છું.

તે-તારા ચક્ષુ:-દર્શનના સાધન નેત્રને શુન્ધામિ-શુદ્ધ કરું છું, તે-તારી નાભિમ્-જેથી નાડી આદિ બાંધવાના સાધનરૂપ નાભિને શુન્ધામિ-પવિત્ર કરું છું, તે-તારા મેઢ્ઠમ્-મૂત્રોત્સર્ગાદિ કરનાર ઉપસ્થ ઈન્દ્રિયને શુન્ધામિ-નિર્મળ કરું છું, તે-તારી પાયુમ્-જેથી રક્ષા કરવામાં આવે છે તે ગુદેન્દ્રિયને શુન્ધામિ-પવિત્ર કરું છું. ચરિત્રાન્-સમસ્ત વ્યવહારોને શુન્ધામિ-પવિત્ર અર્થાત્ શુદ્ધ ધર્મને અનુકૂળ કરું છું તથા ગુરુપત્નીના પક્ષમાં સર્વત્ર 'કરી રહી છું' એમ યોજના કરવી જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : ગુરુઓ અને ગુરુપત્નીઓએ વેદ, ઉપવેદ, અંગ, ઉપાંગોની શિક્ષાથી શરીર, ઈન્દ્રિય, અન્તઃકરણ, આત્મા અને મનની શુદ્ધિ, શરીરની પુષ્ટિ અને પ્રાણોની સંતુષ્ટિનો ઉપદેશ પ્રદાન કરીને સર્વ કુમાર અને કન્યાઓને શુભ ગુણોમાં પ્રવૃત્ત કરવાં જોઈએ. (૧૪)

મનસ્ત્-આપ્યાયતાં વાક્ત્-આપ્યાયતાં પ્રાણસ્ત્-આપ્યાયતાં ચક્ષુસ્ત્-આપ્યાયતાં શ્રોત્રં ત્-આપ્યાયતામ્ । યત્તે ક્રૂરં યદાસ્થિતં તત્-આપ્યાયતાં નિષ્ટ્યાયતાં તત્તે શુદ્ધ્યતુ શમહોભ્યઃ । ઓષધે ત્રાયસ્વ સ્વધિતે મૈનઃહિસીઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! મારી શિક્ષાથી તે-તારું મન:-મન આપ્યાયતામ્-પર્યાપ્ત ગુણયુક્ત બને, તે-તારા પ્રાણ:-પ્રાણ આપ્યાયતામ્-બલાદિ ગુણયુક્ત બને, તે-તારી ચક્ષુ:-દૃષ્ટિ આપ્યાયતામ્-નિર્મળ બને, તે-તારા શ્રોત્રમ્-કાન આપ્યાયતામ્-સદ્ગુણ વ્યાપ્ત બને.

તે-તારો યત્-જે ક્રૂરમ્-દુષ્ટ વ્યવહાર છે તે નિ:-સ્વાયતામ્-દૂર થાય. યત્-જે તે-તારો આસ્થિતમ્-નિશ્ચય છે તે આપ્યાયતામ્-પૂરો થાય. આ રીતે તે-તારો સમસ્ત વ્યવહાર શુદ્ધ્યતુ-શુદ્ધ થાય અને અહોભ્યઃ-પ્રતિદિન તારા માટે શમ્-સુખરૂપ બને.

હે ઓષધે-પ્રવર અધ્યાપક ! આપ એનમ્-આ શિષ્યની ત્રાયસ્વ-રક્ષા કરો અને મા હિંસી:-વ્યર્થ તાડના-મારપીટ કરો નહિ.

હે સ્વધિતે-પ્રશસ્ત અધ્યાપિકે ! તું આ કુમારિકા શિષ્યાની ત્રાયસ્વ-રક્ષા કર અને એને વ્યર્થ તાડના ન કર. (૧૫)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ કર્મો કરવાથી સર્વની ઉન્નતિ થાય છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ગુરુ શિક્ષા અનુસાર સમસ્ત ઉત્તમ કર્મો કરવાં જોઈએ. ગુરુજનો ગુણોના ગ્રહણ માટે તાડના કરે છે, જેથી તેઓનું એ કર્મ સાંસારિક ઉન્નતિ અને મોક્ષનું સાધન બને છે, એમ જાણવું જોઈએ.

પતિ અને પત્ની પરસ્પર આ રીતે ઉપદેશ કરે - હે પતિદેવ ! આપ, જે રીતે આ શિષ્ય શીઘ્ર વિદ્વાન બને તેવો પ્રયત્ન કરો.

હે ધર્મપત્ની ! આપ જેમ આ કન્યા શીઘ્ર વિદુષી બને તેવો ઉપાય કરો. (૧૫)

**રક્ષાસાં ભાગોઽસિ નિરસ્તઃ રક્ષઽદ્દમહઃ રક્ષોઽભિતિષ્ટામીદમહઃ રક્ષોઽવ્બાધ-
ઽદ્દમહઃ રક્ષોઽધમં તમૌ નયામિ । ઘૃતેન દ્યાવાપૃથિવી પ્રોર્ણુવાથાં વાયો વે
સ્તોકાનામગ્નિરાજ્યસ્ય વેતુ સ્વાહા સ્વાહાકૃતેઽઋધ્વનભસં મારુતં ગચ્છતમ્ ॥ ૧૬ ॥**

પદાર્થ : હે દુષ્ટ કર્મ કરનાર મનુષ્ય ! તું રક્ષસામ્-દુષ્ટો અર્થાત્ પરાર્થ નાશ કરીને પોતાના સ્વાર્થની રક્ષા કરનારનો ભાગ:-એક ભાગ અસિ-છે, એથી રક્ષ:-રાક્ષસ સ્વભાવના તું નિરસ્તમ્-નીકળી જા. અહમ્-હું ઇદમ્-એવા રક્ષ:-સ્વાર્થીનો અભિતિષ્ટામિ-તિરસ્કાર કરવા માટે સન્મુખ આવું છું અને માત્ર સન્મુખ જ નહિ પરંતુ અહમ્-હું ઇદમ્-એવા રક્ષ:-દુષ્ટજનને અવબાધે-અત્યંત તિરસ્કારપૂર્વક ફટકારું છું - નાશ કરું છું, જેથી તે ફરી સામે આવે નહીં અને અહમ્-હું ઇદમ્-એવા રક્ષ:-દુષ્ટજનને અધમમ્-દુ:સહ નયામિ-દુ:ખ આપું છું.

હવે શ્રેષ્ઠ ગુણગ્રાહી શિષ્ય માટે ઉપદેશ છે - હે વાયો-ગુણને ગ્રહણ કરનાર સત્-અસત્ વ્યવહારની વિવેચના કરનાર તું સ્તોકાનામ્-સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ વ્યવહારને વે:-જાણ, અને તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જલથી દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિ પ્રોર્ણુવાથામ્-સારી રીતે આચ્છાદિત રહે.

અગ્નિ:-સમસ્ત વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન્ તારા ઘૃતાદિ પદાર્થોથી સ્વાહા-સારી રીતે હોમ કરેલને વેતુ-જાણે તથા સ્વાહાકૃતે-હવન કરેલાં સ્નેહ દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત પૂર્વોક્ત જે સૂર્ય અને ભૂમિ છે તે ઋધ્વનભસમ્-તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલને ઉપર પહોંચાડનાર માસ્તમ્-વાયુને ગચ્છતમ્-પ્રાપ્ત થાય. (૧૬)

ભાવાર્થ : બુદ્ધિમાન, સત્ય અને અસત્યનું વિવેચન કરનાર વિદ્વાન પોતાના શિષ્યોમાં યથાયોગ્ય શિક્ષાનો ઉપદેશ કરે છે.

યજ્ઞકર્મથી જલ અને વાયુથી શુદ્ધિ થઈને વર્ષા થાય છે, વર્ષાથી જ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૬)

દ્વદમાપઃ પ્રવહતાવદ્યં ચ મલં ચ યત્ । યચ્ચાભિદુદ્રોહાનૃતં યચ્ચ શ્પેઽઅંધીરુણમ્ ।

આપો મા તસ્માદેનસઃ પર્વમાનશ્ચ મુઞ્વતુ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે આપ:-સર્વ વિદ્યાવ્યાપક વિદ્વાનો ! આપ જેમ આપ:-જલની શુદ્ધિ કરો છો, તેમ મારું યત્-જે અવદ્યમ્-અકથનીય નિંદકર્મ ચ-અને વિકાર તથા યત્-જે મલમ્-અવિદ્યારૂપી મળ છે ઇદમ્-એને પ્રવહત-વહાવી દો અર્થાત્ દૂર કરો. ચ-અને યત્-જે હું અનૃતમ્-મિથ્યા કોઈથી દુદ્રોહ-દ્રોહ કરતો હોઉં ચ-અને યત્-જે અભીક્ષ્ણમ્-નિર્ભય નિરપરાધી પુરુષને શેષે-ઠપકો આપું છું. તસ્માત્-તે ઉક્ત એનસઃ-પાપથી મા-મને પૃથક્ રાખો. ચ-અને જેમ પર્વમાનઃ-પવિત્ર વ્યવહાર મા-મને પાપ વ્યવહારથી પૃથક્ રાખે છે, તેમ ચ-અન્ય મનુષ્યોને પણ રાખે. (૧૭)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યે જલની સમાન સાંસારિક પદાર્થોના શોધક બનીને ધર્માનુસાર કર્મોનું આચરણ કરવું જોઈએ.

સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થનાથી દુષ્ટ આચરણથી પૃથક્ થઈને નિર્મળ-શુદ્ધ વિદ્યાદિ ગ્રહણ કરવાનાં કર્મોમાં સદા પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૧૭)

સં તે મનો મનસા સં પ્રાણઃ પ્રાણેન ગચ્છતામ્ । રેડસ્યગ્નિષ્ટ્વા શ્રીણાત્વાપસ્ત્વા સમરિણન્વાતસ્ય ત્વા ધ્રાજ્યૈ પૂષ્ણો રથ્ઙ્હ્યાઽઙ્ઘમ્ણો વ્યથિષત્પ્રયુતં દ્વેષઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે શૂરવીર યોદ્ધા ! સંગ્રામમાં તે-તારું મન:-મન મનસા-વિદ્યાબળ અને પ્રાણઃ-પ્રાણ પ્રાણેન-પ્રાણની સાથે સમ્ + ગચ્છતામ્-સાથે રહે.

હે વીર ! તું રેટ્-શત્રુઓને મારનાર અસિ-છે. ત્વા-તને અગ્નિ:-યુદ્ધથી ઉત્પન્ન ક્રોધનો અગ્નિ શ્રીણાત્-પરિપકવ બનાવે. તું પ્રયુતમ્-કરોડો શત્રુઓની સેનાને પ્રાપ્ત થાય છે. તને તેથી ઉત્પન્ન ઙ્ઘમ્ણઃ-સંતાપયુક્ત દ્વેષ-દ્વેષથી મા વ્યથિષત્-વ્યથિત ન કરે. જેથી વાતસ્ય ધ્રાજ્યૈ-પવનની ગતિ સમાન ગતિ કરવા માટે અથવા પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકારક સૂર્યની રંઘૈ-વેગ સમાન વેગ માટે અર્થાત્ યથાર્થરૂપથી યુદ્ધ ભૂમિમાં પ્રવૃત્તિ થવા માટે આપ:-શ્રેષ્ઠતમ જલ સમ-અરિણન્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુદ્ધમાં મન લગાવીને, પોતાના બળની વૃદ્ધિ કરનાર અન્ન-પાનનું [સેવન કરીને] અને શસ્ત્રાસ્ત્ર આદિ પદાર્થોની તૈયારી કરીને શત્રુઓને મારીને, સંગ્રામમાં વિજયી બનવું જોઈએ. (૧૮)

ઘૃતં ઘૃતપાવાનઃ પિબત વસાં વસાપાવાનઃ પિબતાન્તરિક્ષસ્ય હવિરસિ સ્વાહા ।

દિશ્ઽપ્રદિશ્ઽઆદિશો વિદિશ્ઽ ઉદ્દિશો દિગ્ભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે ઘૃતપાવાનઃ-જલપાન કરનારા વીરપુરુષો ! તમે ઘૃતમ્-અમૃત સમાન જલનું પિબત-પાન કરો.

હે વસાપાવાનઃ-નીતિનું પાલન કરનારા વીરો ! તમે વસામ્-જે વીર રસથી પૂર્ણ વાણી અર્થાત્ શત્રુઓનું સ્તંભન કરનારી વાણી છે, તેનું પિબત-પાન કરો.

હે સેનાધ્યક્ષ ! ચક્રવ્યૂહાદિ સેનાના રચયિતા ! તું પ્રત્યેક વીરને જેથી અન્તરિક્ષસ્ય-આકાશનો હવિઃ-અવરોધ અર્થાત્ યુદ્ધમાં અનેકોની વચ્ચે શત્રુઓને વિવિધ વ્યૂહોથી ઘેરનાર અસિ-છે. તે સ્વાહા-શોભાયમાન વાણીથી જે દિશઃ-પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર, દક્ષિણ પ્રદિશઃ-આગ્નેય, નૈઋત્ય, વાયવી અને ઇશાની ઉપદિશા આદિશઃ-સામેની દિશા વિદિશા-પાછળની દિશા અને હૃદિશઃ-જ્યાં શત્રુ હોય તે લક્ષ્ય દિશા છે તે સર્વ દિગ્મ્યઃ-દિશાઓથી યથાયોગ્ય વીરોને વિભક્ત કરીને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિઓને એ ઉચિત છે, કે તેઓ પોતાના સૈનિક વીરોને શારીરિક બળથી યુક્ત તથા યુદ્ધવિદ્યામાં સુશિક્ષિત કરીને, યુદ્ધમાં સર્વ દિશાઓમાં યથોચિત રૂપમાં પોતાની સેનાના ભાગોને સ્થાપિત કરીને, સર્વ શત્રુઓને ઘેરીને તથા તેમને જીતીને ન્યાયપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરે. (૧૯)

ऐन्द्रः प्राणोऽअङ्गेऽअङ्गे निदीध्यदैन्द्रऽउदानोऽअङ्गेऽअङ्गे निधीतः । देव त्वष्टृभूरिं ते संसमेतु सलक्ष्मा यद्विषुरूपं भवाति । देवत्रा यन्तमवसे सखायोऽनु त्वा माता पितरौ मदन्तु ॥ २० ॥

પદાર્થ : હે ત્વષ્ટઃ-શત્રુબળ વિદારક દેવ-દિવ્ય વિદ્યાસંપન્ન સેનાપતિ ! આપ અવસે-રક્ષા આદિ માટે અઙ્ગે-અઙ્ગે-જેમ અંગ-અંગમાં એન્દ્રઃ-ઈન્દ્ર અર્થાત્ જીવ જેનો દેવતા છે, તે શરીરમાં રહેલો પ્રાણવાયુ સર્વ વાયુઓનો તિરસ્કાર કરીને સ્વયં પ્રકાશિત થાય છે, તેમ આપ સંગ્રામમાં સર્વ શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરીને નિદીધ્યત્-પ્રકાશિત બનો.

અથવા અઙ્ગે-અઙ્ગે-જેમ પ્રત્યેક અંગમાં ઉદાનઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોને ઉપર પહોંચાડનાર ઉદાન વાયુ પ્રવૃત્ત છે, તેમ પોતાના વૈભવથી સર્વ વીરોને ઉત્સાહિત કરતા સંગ્રામમાં નિધીતઃ-નિરંતર સ્થાપિત કરેલ સમાન પ્રકાશિત બનો.

યત્-જે તે-આપનું વિષુસ્ત્પમ્-વિવિધ રૂપ સલક્ષ્મ-પરસ્પર યુદ્ધનું લક્ષણ ભવાતિ-છે, તે સંગ્રામે-સંગ્રામમાં ભૂરિ-વિસ્તારથી સંસમ્ + એતુ-પ્રવૃત્ત થાય.

હે સેનાધ્યક્ષ ! તારી રક્ષા માટે બધા શૂરવીર પુરુષો સખાયઃ-મિત્ર સમાન વર્તન કરે. માતા-માતા પિતરઃ-પિતા, કાકા, મોટા કાકા, નોકર અને શુભચિંતક દેવત્રા-દેવો અર્થાત્ વિદ્વાનો ધર્મયુદ્ધ અને વ્યવહારને ચંતમ્-પ્રાપ્ત કરીને ત્વા-તારું અનુમદન્તુ-અનુમોદન કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : સર્વના મિત્ર સેનાપતિ જેમ પ્રાણ અને ઉદાન પ્રત્યેક અંગમાં વિચરણ કરે છે, તેમ યુદ્ધમાં વિચરણ કરતા સૈનિક વીરોને અને પ્રજાજનોને હર્ષિત કરીને શત્રુઓને જીતે. (૨૦)

समुद्रं गच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवः सवितारं गच्छ स्वाहा । मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहाऽहोरात्रे गच्छ स्वाहा छन्दाँँसि गच्छ स्वाहा द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा यज्ञं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यं नभो गच्छ स्वाहाग्निं

વૈશ્વાનરં ગચ્છ સ્વાહા મનોં મે હાર્દિં યચ્છ દિવં તે ધૂમો ગચ્છતુ સ્વુર્જ્યોતિઃ
પૃથિવીં ભસ્મના પૃણ સ્વાહાં ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે ધર્માદિ રાજ્યકર્મ કરનાર શિષ્ય ! તું સ્વાહા-અશ્વતરી નૌકા અર્થાત્ મોટા જહાજ આદિ બનાવવાની વિદ્યાથી નૌકાદિ યાન પર બેસીને સમુદ્રમ્-સમુદ્રમાં ગચ્છ-જા. સ્વાહા-ખગોળને પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યાથી બનાવેલ વિમાનાદિ યાનો દ્વારા અન્તરિક્ષમ્-આકાશમાં ગચ્છ-જા.

સ્વાહા-વેદવાણીથી દેવમ્-પ્રકાશમાન સવિતારમ્-સર્વ ઉત્પાદક પરમેશ્વરને ગચ્છ-જાણ. સ્વાહા-વેદ અને સજ્જનોના સંગથી શુદ્ધ સંસ્કારને પ્રાપ્ત થયેલ વાણીથી મિત્રાવસ્થા-પ્રાણ અને ઉદાનને ગચ્છ-જાણ.

સ્વાહા-જ્યોતિષ વિદ્યા દ્વારા અહોરાત્રે-દિવસ અને રાત અથવા તેના ગુણોને ગચ્છ-જાણ - પ્રાપ્ત કર. સ્વાહા-વેદાંગ વિજ્ઞાન સહિત વાણીથી છન્દાંસિ-ઋગ્, યજુઃ, સામ અને અથર્વ એ ચારે વેદોને ગચ્છ-સારી રીતે જાણ.

સ્વાહા-ભૂમિયાન, આકાશમાર્ગ વિમાન અને ભૂગોળ અથવા ભૂગર્ભ વગેરે યાનો બનાવવાની વિદ્યાથી દ્યાવાપૃથિવી-ભૂમિ અને સૂર્યપ્રકાશસ્થ - તેના અન્તર્ગત ઈચ્છિત દેશ-દેશાન્તરોને ગચ્છ-જાણ અને પ્રાપ્ત કર.

સ્વાહા-સંસ્કૃત વાણીથી યજ્ઞમ્-અગ્નિહોત્ર, શિલ્પ અને રાજનીતિ વગેરે યજ્ઞોને ગચ્છ-પ્રાપ્ત કર.

સ્વાહા-વૈદક વિદ્યાથી સોમમ્-ઔષધિસમૂહ અર્થાત્ સોમલતાને ગચ્છ-જાણ.

સ્વાહા-જલના ગુણ અને દોષનું જ્ઞાન કરાવનાર વિદ્યાથી દિવ્યમ્-વ્યવહારમાં લાવવા યોગ્ય પવિત્ર નભઃ-જલને ગચ્છ-જાણ.

સ્વાહા-વિદ્યુત્, આગ્નેય અસ્ત્રાદિ, તારબર્કી [વીજળીથી ખબર આપનાર તાર] તથા પ્રસિદ્ધ સર્વ કલાયંત્રોને પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યાથી અગ્નિમ્-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને ગચ્છ-સારી રીતે જાણ.

મે-મારા મનઃ-મનને હાર્દિં-પ્રેમપૂર્વક યચ્છ-સત્યધર્મમાં સ્થિત કરીને અર્થાત્ મારા ઉપદેશને અનુકૂળ વર્તન કર. તે-તારી ધૂમઃ-કલાઓ અને યજ્ઞના અગ્નિનો ધુમાડો દિવમ્-સૂર્યપ્રકાશને તથા જ્યોતિઃ-તેની જ્યોતિ સ્વઃ-અન્તરિક્ષને ગચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય અને તું યંત્રકલા અગ્નિમાં સ્વાહા-કાષ્ટાદિ પદાર્થોને ભસ્મ કરીને તે ભસ્મના-રાખથી પૃથિવીમ્-પૃથ્વીને આપૂણ-ભરી દે અર્થાત્ આચ્છાદિત કરી દે. (૨૧)

ભાવાર્થ : ધર્મ આદિ, રાજ્ય અને વ્યાપાર વૃત્તિના ઈચ્છુક મનુષ્યે ભૂમિયાન, અન્તરિક્ષયાન, આકાશયાન અને વિવિધ યંત્રકલાની રચનાઓથી સર્વ સામગ્રી સિદ્ધ કરીને દ્રવ્યોનો સંચય કરવો જોઈએ. (૨૧)

માપો મૌષધીર્હિંસીર્ધામ્નોઃ ધામ્નો રાજ્ઞસ્તતોં વરુણ નો મુજ્વ । યદાહુરઘ્ન્યાઽઙ્ગિતિ
વરુણેતિ શર્પામહે તતોં વરુણ નો મુજ્વ । સુમિત્રિયા ન્ઽઆપ્ઓષધયઃ સન્તુ

દુર્મિત્રિયાસ્તસ્મૈ સન્તુ યોઽસ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્યં દ્વિષ્મઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્-સભાપતિ ! આપ પોતાનાં પ્રત્યેક સ્થાનોમાં આપ:-જલ અને ઓષધી:-અન્ન-પાન પદાર્થ તથા કરિયાણું વગેરે તથા વનજ પદાર્થોને મા હિંસી:-નષ્ટ કરો નહિ અર્થાત્ પ્રત્યેક સ્થાનથી અમને સર્વ ઈચ્છિત પદાર્થો મળતાં રહે, કેવળ એટલું જ નહિ, પરંતુ તત:-તે ધામ્ન: ધામ્ન:-સ્થાન-સ્થાનથી ન:-અમને મા + મુઞ્જ-ત્યાગો નહિ.

હે વસ્મ-ન્યાય કરનાર સભાપતિ ! કરેલા ન્યાયમાં અઘ્ન્યા:-મારવાને અયોગ્ય ગાય આદિ પશુના સોગન-શપથ છે. ઇતિ-એમ આપ કહો છો અને અમે પણ શપામહે-શપથ-સોગન લઈએ છીએ. આપ પણ એ પ્રતિજ્ઞાનો ત્યાગ કરો નહિ અને અમે પણ ત્યાગ નહિ કરીએ.

હે વરુણ ! આપના રાજ્યમાં ન:-અમને આપ:-જલ અને ઔષધિઓ સુમિત્રિયા:-શ્રેષ્ઠ મિત્ર સમાન સન્તુ-બની રહે. તથા ય:-જે અસ્માન્-અમારાથી દ્વેષ્ટિ-વેર-દ્વેષ રાખે છે. ચ-અને વયમ્-અમે યમ્-જેનાથી દ્વિષ્મ:-વેર કરીએ છીએ, તસ્મૈ-તેને માટે તે ઔષધિઓ દુર્મિત્રિયા:-દુઃખ આપનાર અને શત્રુ સમાન સન્તુ-બની રહે. (૨૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ પ્રજાજનો પાસેથી અનીતિપૂર્વક ધન ગ્રહણ ન કરે. રાજા - રાજ્યની રક્ષાની પ્રતિજ્ઞા કરે, કે અમે અન્યાય કરીશું નહિ અને દુષ્ટોને સદા દંડ આપશું. (૨૨)

હૃવિષ્મતીરિમાઽઆપોં હૃવિષ્માંરઽઆવિવાસતિ ।

હૃવિષ્માન્દેવો ઽઅધ્વરો હૃવિષ્માંરઽઅસ્તુ સૂર્યઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન લોકો ! તમે એવા કામો કરો કે જેથી ઇમા:-એ આપ:-જલ હૃવિષ્મતી:-ઉત્તમ દાન અને આદાન ક્રિયા શુદ્ધિ તથા સુખ આપનાર હોય અર્થાત્ જેથી અનેક પ્રકારનાં ઉપકાર કરવામાં આવે હૃવિષ્માન્-પવન ઉપકાર અનુપકારકને આ-સારી રીતે વિવાસતિ-પ્રાપ્ત કરે છે.

દેવ:-સુખદાતા અધ્વર:-યજ્ઞ પણ હૃવિષ્માન્-પરમ આનંદપ્રદ સૂર્ય:-તથા સૂર્યલોક પણ હૃવિષ્માન્-સુગંધાદિયુક્ત થઈને સુખદાયક અસ્તુ-બની રહે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે વાયુ અને જલના સંયોગથી અનેક સુખ સિદ્ધ કરવામાં આવે છે, જેથી અનેક દેશ દેશાન્તરોમાં જવાથી વસ્તુઓની પ્રાપ્તિ થાય છે; તેના દ્વારા એ કાર્ય, કોઈ ક્રિયા કરવામાં અતિ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય જ કરી શકે છે.

જે અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓને પ્રકાશિત કરનાર છે, તે યજ્ઞ વૃષ્ટિ આદિ સુખનો ઉત્પાદક છે. (૨૩)

અગ્નેર્વોઽપન્નગૃહસ્ય સદસિ સાદયામીન્દ્રાગ્ન્યોર્ભાગધેયીં સ્થ મિત્રાવરુણયો-
ર્ભાગધેયીં સ્થ વિશ્વૈષાં દેવાનાં ભાગધેયીં સ્થ । અમૂર્યાઽ ઉપ સૂર્યે યાભિર્વા સૂર્યઃ
સહ તા નોં હિન્વન્ત્વધ્વરમ્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓ ! અમૂઃ-તે યાઃ-જે સ્વયંવર વિવાહથી પતિની વરણી કરી છે, તેની સમાન જે ઇન્દ્રાગ્ન્યોઃ-સૂર્ય અને વિદ્યુત્ના ગુણોને ભાગધેયીઃ-અલગ-અલગ જાણનારી સ્થ-છે.

મિત્રાવસ્થાયોઃ-પ્રાણ અને ઉદાનના ગુણોને ભાગધેયીઃ-પૃથક્-પૃથક્ જાણનારી સ્થ-છે, વિશ્વેષામ્-વિદ્વાન અને પૃથિવી આદિ પદાર્થોને ભાગધેયીઃ-સેવન કરનારી સ્થ-છે, તે વઃ-તમે સર્વને અપન્નગૃહસ્ય-જેને ગૃહકાર્ય પ્રાપ્ત થયેલ નથી તે બ્રહ્મચર્યનું અનુષ્ઠાન કરનારા અને અગ્નેઃ-સર્વ વિદ્યાદિ ગુણોથી પ્રકાશિત શ્રેષ્ઠ બ્રહ્મચારીની સદસિ-સભામાં હું સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું.

જે યાઃ ડપ સૂર્યે-સૂર્યલોકના ગુણોમાં ડપ-ઉપસ્થિત થાય છે, વા-અથવા યાભિઃ-જેની સહ-સાથે સૂર્ય-સૂર્યલોકમાં રહેલ જે સૂર્યના ગુણોમાં અતિ ચતુર છે, તાઃ-તે સર્વ નઃ-અમારા અધ્વરમ્-ધરના કામકાજને વિવાહ કરીને હિન્વન્તુ-વૃદ્ધિ કરે. (૨૪)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્ય ધર્મનું પાલન કરનારી કન્યાઓનો, અવિવાહિત અને તે કન્યાઓની સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પુરુષોની સાથે વિવાહ કરવો ઉચિત છે.

એટલા માટે ગુરુપત્નીઓ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓને એવો જ ઉપદેશ આપે. માત્ર આપત્કાળમાં પૂર્વ વિવાહિત સ્ત્રીપુરુષોનો નિયોગ થઈ શકે છે, અન્યથા નહિ. (૨૪)

હૃદે ત્વા મનસે ત્વા દિવે ત્વા સૂર્યાય ત્વા । ડુર્ધ્વમિમમધ્વરં દિવિ દેવેષુ હોત્રાં યચ્છ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કન્યા ! તું જેમ અમે સર્વ દેવેષુ-પોતાને સુખ આપનાર પતિઓની પાસે રહેનારી અને હોત્રાઃ-અગ્નિહોત્ર આદિ કર્મનું અનુષ્ઠાન કરનારી છીએ તેવી થા.

જેમ અમે હૃદે-હાર્દિક સુખ માટે ત્વા-તને, મનસે-સારું-નરસું વિચારવા માટે ત્વા-તને દિવે-સર્વ સુખોનો પ્રકાશ કરવા માટે ત્વા-તને, સૂર્યાય-સૂર્યની સમાન ગુણો માટે ત્વા-તને શિક્ષણ આપીએ છીએ, તેમ તું પણ દિવિ-સમસ્ત સુખોના પ્રકાશમાં નિમિત્ત ઇમમ્-આ અધ્વરમ્-નિરંતર સુખ આપનાર ગૃહાશ્રમ રૂપી યજ્ઞને ડુર્ધ્વમ્-ઉત્કૃષ્ટ રીતિથી યચ્છ-ગ્રહણ કર.

ભાવાર્થ : જેમ પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓ સાથે પ્રિય આચરણ કરીને, અગ્નિહોત્ર આદિ કર્મોમાં તલ્લીન રહે છે, તેમ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓએ વિવાહ પછી બ્રહ્મચારિણીઓ અને બ્રહ્મચારીઓએ પણ પરસ્પર વર્તવું જોઈએ. (૨૫)

સોમ રાજન્વિશ્વાસ્ત્વં પ્રજાડપાવરોહ વિશ્વાસ્ત્વાં પ્રજાડપાવરોહન્તુ । શૃણોત્વગ્નિઃ સમિધા હવં મે શૃણવન્ત્વાપો ધિષ્ણાશ્ચ દેવીઃ । શ્રોતા ગ્રાવાણો વિદુષો ન યજ્ઞઃ શૃણોતુ દેવઃ સવિતા હવં મે સ્વાહા ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-શ્રેષ્ઠ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્-સમસ્ત ઉત્કૃષ્ટ ગુણોથી પ્રકાશમાન સભાધ્યક્ષ ! ત્વમ્-તું પિતા સમાન વિશ્વાઃ-સમસ્ત પ્રજાઃ-પ્રજાજનોની ડપાવરોહન્તુ-સમીપસ્થ રહીને રક્ષા કર અને ત્વામ્-

તને વિશ્વાઃ-સમસ્ત પ્રજાઃ-પ્રજાજન પુત્ર સમાન આશ્રિત હોય.

હે સભાધ્યક્ષ ! આપ જેમ સમિધા-પ્રદીપ્ત કરનાર પદાર્થથી અગ્નિઃ-સર્વ ગુણયુક્ત અગ્નિ પ્રકાશિત થાય છે, તેમ મે-મારી હવમ્-પ્રગલ્ભ વાણી-સ્તુતિ શ્રાણોતુ-સાંભળીને ન્યાયથી પ્રકાશિત બનો. ચ-અને આપઃ-સર્વગુણોમાં વ્યાપ્ત ધિષણાઃ-વિદ્યા, બુદ્ધિયુક્ત દેવીઃ-શ્રેષ્ઠતમ ગુણોથી પ્રકાશમાન તારી પત્ની પણ માતાઓની સમાન સ્ત્રીજનોના ન્યાયને શૃણવન્તુ-સાંભળે.

હે ગ્રાવાણઃ-સત્યાસત્યનો વિવેક કરનારા વિદ્વાન સભાસદો ! તમે અમારા અભિપ્રાયને અમારા કહેવાથી શ્રોત-સાંભળો તથા દેવઃ-વિદ્યાથી પ્રકાશિત સવિતા-ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ વિદુષઃ-વિદ્વાનોના યજ્ઞમ્-યજ્ઞની ન-સમાન મે-અમારા પ્રજાજનોના હવમ્-નિવેદનને સ્વાહા-સ્તુતિરૂપ વાણી જેવી હોય તેવી શ્રાણોતુ-સાંભળો. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજા પરસ્પર સંમતિથી સમસ્ત રાજ્ય વ્યવહારોનું પાલન કરે. (૨૬)

દેવીરાપોઽપાં નપાદ્યો વઽઙ્કર્મિર્હીવિષ્ણુઽન્દ્રિયાવાન્ મદિન્તમઃ ।

તં દેવેભ્યો દેવત્રા દત્ત શુક્રપેભ્યો યેષાં ભાગ સ્થ સ્વાહા ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે આપઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી સંપન્ન દેવીઃ-શુભકર્મોથી પ્રકાશમાન પ્રજાજનો ! તમે રાજભક્ત સ્થ-બનો શુક્રપેભ્યઃ-શરીર અને આત્માના પરાક્રમના રક્ષક દેવેભ્યઃ-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનો માટે યેષામ્-જે વઃ-તમારા બળવાન વિદ્વાનોની યઃ-જે અપાં નપાત્-જળના નાશરહિત ઙ્કર્મિઃ-જલતરંગ સમાન પ્રજારક્ષક ઙ્કર્મિયાવાન્-જેમાં પ્રશંસનીય ઈન્દ્રિયો બને છે તથા મદિન્તમઃ-આનંદદાયક હવિષ્યઃ-ભોગ યોગ્ય પદાર્થોથી નિષ્પન્ન ભાગઃ-ભાગ છે, તે તમે સર્વ તમ્-તેને સ્વાહા-આદરસહિત ગ્રહણ કરો. જેમ રાજા આદિ સભ્યજન દેવત્રા-દિવ્યભોગ આપે છે, તેમ તમે પણ આને આનંદ દત્ત-આપો. (૨૭)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોને એ ઉચિત છે, કે ઉત્કૃષ્ટ ગુણયુક્ત સભાપતિનો સ્વીકાર કરીને, રાજ્યની રક્ષા માટે કર - પ્રદાન કરીને ન્યાયને પ્રાપ્ત કરે. (૨૭)

કાર્ષિરસિ સમુદ્રસ્ય ત્વા ક્ષિંત્યાઽઽન્નયામિ । સમાપોઽઅદ્ધિરંગમત્ સમોષધીભિરોષધીઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે વૈશ્યજન ! તું કાર્ષિઃ-હળથી ભૂમિને ખેડનાર અસિ-છે. ત્વા-તને સમુદ્રસ્ય-અન્તરિક્ષમાં અક્ષિત્યૈ-પરિપૂર્ણ થવા માટે સમ્ ઉત્ નયામિ-સારી રીતે ઉત્સાહિત કરું છું. તમે સર્વ લોકો અદ્ધિઃ-યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલોથી આપઃ-જલ અને ઓષધીભિઃ-ઔષધિથી ઓષધીઃ-ઔષધિઓને સમ્ અગમત-પ્રાપ્ત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : ખેતર વગેરે ભૂમિઓમાં અનેક પ્રકારની ઔષધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે. ઔષધિઓથી અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરવામાં આવે છે, યજ્ઞોથી અન્તરિક્ષ જલના પરમાણુઓ પરિપૂર્ણ બને છે.

આથી વિદ્વાન લોકો બુદ્ધિ રહિતના મનુષ્યોને ખેતરો વગેરે [કાર્ય માટે] લઈ જાય છે કારણ કે તેઓ વિદ્યાભ્યાસ કરવામાં સમર્થ હોતા નથી. (૨૮)

યમગ્ને પૃત્સુ મર્ત્યમવા વાજૈષુ યં જુનાઃ । સ યન્તા શશ્વતીરિષ્ઃ સ્વાહા ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે (અગ્ને)-જ્યારે ક્યારેક વિવેક કરનારા આપ [વિદ્વાન] ! પૃત્સુ-સંગ્રામોમાં યમ-જે મનુષ્યની અવા:-રક્ષા કરો છો અને વાજેષુ-અન્ન આદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે યમ-જેને જુનાઃ-નિયુક્ત કરો છો, સ:-તે શશ્વતી:-નિરંતર અનાદિરૂપ ઇષઃ-પોતાની પ્રજાઓનો યન્તા-નિર્વાહ કરનાર બને છે અર્થાત્ તેમને નિયમોમાં રાખે છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : ગુરુજનોની શિક્ષાથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ થાય છે. (૨૯)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદે રાવાસિ ગમ્भीરમિમમધ્વરં કૃધીન્દ્રાય સુષૂતમમ્ । ઉત્તમેન પવિનોર્જસ્વન્તં મધુમન્તં પયસ્વન્તં નિગ્રાભ્યા સ્થ દેવશ્રુતસ્તર્પયત મા ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : સર્વ સુખદાતા સવિતુઃ-તથા સમસ્ત ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર જગદીશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના બાહુભ્યામ્-બલ અને પરાક્રમ ગુણોથી પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિ કરનાર સોમ આદિ ઔષધિગણના હસ્તાભ્યામ્-રોગનાશક તથા ધાતુઓને સામ્ય રાખનાર ગુણોથી ત્વા-તને કર - ધન આપનારનો આદદે-સ્વીકાર કરું છું.

તું ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યવાન મારા માટે ઉત્તમેન-ઉત્તમ અર્થાત્ સભ્ય પવિના-વાણીથી ઇમમ્-આ ગમ્भीરમ્-અત્યંત સમજવા યોગ્ય સુષૂતમમ્-સર્વ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન થયેલા ઋર્જસ્વન્તમ્-રાજ્યને બળવાન બનાવનાર મધુમન્તમ્-સમસ્ત મધ આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોયુક્ત પયસ્વન્તમ્-દૂધ આદિ સહિત કર-ધનને અધ્વરમ્-નિષ્કપટ કૃધિ-કરો. દેવશ્રુતઃ-શ્રેષ્ઠ રાજ્યગુણોને સાંભળનાર તમે મારા માટે નિગ્રાભ્યઃ-નિરંતર સ્વીકાર કરવા યોગ્ય સ્થ-છો. મા-મને આ કર પ્રદાનથી તર્પયત-તૃપ્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોને યોગ્ય છે, કે તેઓ રાજા સમીપ આવીને પોતાના સર્વ ભોગ્ય પદાર્થોનો યથા યોગ્ય ભાગ તેને પ્રદાન કરે, કારણ કે તે ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થનાર પદાર્થોના અંશભાગી હોય છે. (૩૦)

મનોં મે તર્પયત્ વાચં મે તર્પયત પ્રાણં મે તર્પયત્ ચક્ષુર્મે તર્પયત્ શ્રોત્રં મે તર્પયતાત્માનં મે તર્પયત પ્રજાં મે તર્પયત પશૂન્મે તર્પયત ગુણાન્મે તર્પયત ગુણા મે મા વિતૃષન્ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે સભ્યજનો અને પ્રજાજનો ! તમે પોતાના ગુણો દ્વારા મે-મારાં મનઃ-મનને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારી વાચમ્-વાણીને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારા પ્રાણમ્-પ્રાણને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારા ચક્ષુઃ-નેત્રોને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારા શ્રોત્રમ્-કાનોને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારા આત્માનમ્-આત્માને તર્પયત-તૃપ્ત કરો.

મે-મારી પ્રજામ્-સંતાનાદિ પ્રજાને તર્પયત-તૃપ્ત કરો. મે-મારા પશૂન્-ગાય, હાથી, ઘોડા આદિ પશુઓને તર્પયત-તૃપ્ત કરો, મે-મારા ગુણાન્-નોકરોને તર્પયત-તૃપ્ત કરો, જેથી મે-મારા ગુણાઃ-રાજ્ય કે પ્રજા કર્માધિકારી અથવા સેવકજન કામોમાં મા વિતૃષન્-ઉદાસ રહે નહિ. (૩૧)

ભાવાર્થ : રાજ્યનો પ્રબંધ સભાને આધીન થવા યોગ્ય છે, જેથી સર્વ પ્રજાજન, રાજાના સેવકો અને રાજપુરુષો પ્રજાના સેવક બનીને તથા સ્વકાર્યોમાં પ્રવૃત્ત રહીને એકબીજાને પ્રસન્ન રાખી શકે. (૩૧)

इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्रवतऽइन्द्राय त्वादित्यवतऽइन्द्राय त्वाभिमातिघ्ने ।

श्येनाय त्वा सोमभृतेऽग्नये त्वा रायस्पोषदे ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! વસુમતે-જે કર્મમાં ચોવીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાલનથી તેના દ્વારા અનેક સારા વિદ્વાન્ ઉત્પન્ન થાય છે. સ્દ્રવતે-જે ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરે છે તે ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત કર્મ માટે ત્વા-આપને ગ્રહણ કરે છે. આદિત્યવતે-જે અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરે છે તે સૂર્યસમાન પરમ વિદ્વાન્ બને છે.

ઇન્દ્રાય-ઉત્તમ ગુણોની પ્રાપ્તિ માટે ત્વા-આપના અભિમાતિઘ્ને-જે કર્મમાં મોટા-મોટા અભિમાની શત્રુજન માર્યા જાય તે ઇન્દ્રાય-પરમોત્કૃષ્ટ શત્રુ વિદારક કામ માટે ત્વા-આપ સોમભૃતે-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય ધારણ કરનારા શ્યેનાય-યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં બાજ પક્ષીની સમાન ઝપટ મારનાર ત્વા-આપનો રાયસ્પોષદે-ધનથી પુષ્ટ કરનાર અગ્નયે-વિદ્યુતાદિ પદાર્થોના ગુણોનો પ્રકાશ કરવા માટે ત્વા-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : જે ઈન્દ્ર, વાયુ, યમ, સૂર્ય, અગ્નિ, વરુણ, ચન્દ્ર અને ધનવાન ગુણોથી યુક્ત, વિદ્વાનોને પ્રિય, વિદ્યાના પ્રચારક અને સર્વને સુખ આપનાર હોય, તેને જ રાજા માનવો જોઈએ. (૩૨)

यत्तै सोम दिविज्योतिर्यत्पृथिव्यां यदुरावन्तरिक्षे । तेनास्मै यजमानायोरु राये
कृद्ध्यधि दात्रे वोचः ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સમસ્ત ઐશ્વર્યપ્રેરક સભાપતિ ! તે-તારા યત્-જે દિવિ-સૂર્યલોકમાં પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં અને યત્-જે ઝૌ-વિસ્તૃત અન્તરિક્ષે-આકાશમાં જ્યોતિઃ-જેમ જ્યોતિ હોય, તેમ રાજકર્મ છે. તેન-તેથી તું અસ્મૈ-એ પરોપકાર માટે યજમાનાય-યજ્ઞ કરતા યજમાન માટે ઊરુ-કૃધિ-અત્યંત ઉપકાર કર તથા રાયે-ધનવૃદ્ધિ માટે અધિ, વોચઃ-અધિકમાં અધિક રાજ્યનો પ્રબંધ કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજા પોતાના રાજ્યના ઉત્કર્ષથી સર્વ લોકોને વિદ્યાદિ શુભ ગુણ કર્મોમાં સુશિક્ષિત કરીને, પુરુષાર્થી બનાવે, જેથી તેઓ પુરુષાર્થ કરીને ધન આદિ પદાર્થોની સદા વૃદ્ધિ કરે. (૩૩)

श्वात्रा स्थं वृत्रतुरो राधोगूर्ताऽअमृतस्य पत्नीः । ता देवीर्देवत्रेमं यज्ञं नयतोपहृताः
सोमस्य पिबत ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે દેવીઃ-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીઓ ! તમે વૃત્રતુરઃ-વીજળીની સમાન મેઘ - વાદળોના વરસાદની સમાન સુખદાયક ગતિથી ચાલનાર રાધોગૂર્તાઃ-ધનનો ઉદ્યોગ - વૃદ્ધિ કરવા પત્ન્યઃ-અને યજ્ઞમાં સહયોગિની સ્થ-બનો.

દેવત્રા-તથા શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ પતિઓમાં પ્રેમપૂર્વક રહો. ઇદમ્-આ યજ્ઞને નયત-સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કર્યા કરો અને ઉપહૃતાઃ-બોલાવેલી પોતાના પતિઓની સાથે અમૃતસ્ય-અતિ સ્વાદયુક્ત સોમ આદિ

ઔષધિઓના રસનું પિબત-પાન કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનોની વિદુષી સ્ત્રીઓ પોતાના ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ પુરુષોએ પણ પોતાની સ્ત્રીઓને સદા પ્રસન્ન રાખવી જોઈએ. (૩૪)

**મા ભેર્મા સંવિક્ષ્થાઽઋર્જઃ ધત્સ્વ ધિષ્ણે વીઙ્વી સતી વીઙ્વેથામૂર્જઃ દધાથામ્ ।
પાપ્મા હતા ન સોમઃ ॥ ૩૫ ॥**

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું વીઙ્વી સતી-શરીર અને આત્માથી બલવતી થઈને પતિથી મા ભેઃ-ડર નહિ. મા સંવિક્ષ્થાઃ-કંપ નહિ અને ઋર્જમ્-દેહ તથા આત્માના બલ અને પરાક્રમને ધત્સ્વ-ધારણ કર.

હે પુરુષ ! તું પણ પોતાની પત્નીથી તેમજ વર્ત. તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ ધિષ્ણે-સૂર્ય અને ભૂમિ સમાન પરોપકાર અને પરાક્રમને ધારણ કરો, જેથી વીઙ્વેથામ્-દેહ બલયુક્ત બનો. આ રીતે પરસ્પર અનુકૂળ વર્તન કરતાં તમારાં બન્નેના પાપ્મા-અપરાધો હતઃ-નાશ પામો. અને સોમઃ-ચંદ્ર ન-સમાન આનંદ અને શાન્તિ આદિ ગુણોની વૃદ્ધિ કરીને પરસ્પરના આનંદની વૃદ્ધિ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ એવી રીતે વ્યવહાર કરે, કે જેથી પરસ્પરના ભય અને ઉદ્વેગ નાશ પામે. તથા આત્માનો દેહ-ઉત્સાહ, પ્રેમ અને ગૃહાશ્રમના વ્યવહારોની સિદ્ધિ અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ થાય.

બંનેના દોષો અને દુઃખોને દૂર કરીને ચંદ્રમા સમાન પરસ્પર હર્ષકારી બનો. (૩૫)

પ્રાગપાગુદ્ગધરાક્સર્વતસ્ત્વા દિશ્ઽઆધાવન્તુ । અમ્બ નિષ્પર્ સમરીવિદામ્ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે અમ્બ-પ્રેમભાવથી પ્રાપ્ત થનારી માતા ! જો તારી અરીઃ-સંતાનાદિ પ્રજા પ્રાક્-પૂર્વ અપાક્-પશ્ચિમ ઉદક્-ઉત્તર અધરાક્-દક્ષિણ અને સર્વતઃ-સર્વ દિશઃ-દિશાઓથી ત્વા-તને આ + ધાવન્તુ-દોડીને પ્રાપ્ત થાય, તેને નિઃ + પર-નિરંતર પ્રેમ કર, અને તે પણ તને સમ્-સારી રીતે વિદામ્-જાણે અર્થાત્ સેવા કરે. (૩૬)

ભાવાર્થ : માતાપિતાને યોગ્ય છે, કે પોતાનાં સંતાનોને વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં લગાવીને નિરંતર તેમની રક્ષા કરે. સંતાનોને યોગ્ય છે, કે તેઓ સર્વ રીતે માતા-પિતાની સેવા કરે. (૩૬)

ત્વમ્ઙ્ પ્રશંસિષો દેવઃ શંવિષ્ટ મર્ત્યમ્ ।

ન ત્વદન્યો મઘવન્નસ્તિ મર્ડિતેન્દ્ર બ્રવીમિ તે વચઃ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્-પ્રિય શંવિષ્ટ-અત્યંત બલયુક્ત મઘવન્-ઈશ્વર સમાન સમૃદ્ધ ઙ્-રિદ્ધિ-સિદ્ધિ આપનાર સભાપતિ ! ત્વમ્-આપ મર્ત્યમ્-પ્રજાના મનુષ્યોને પ્રશંસિષઃ-પ્રશંસાયુક્ત કરો.

આપ દેવઃ-દેવ અર્થાત્ શત્રુઓને જીતનાર ત્વદન્યઃ-તમારાથી અન્ય મર્ડિતા-સુખ આપનાર ન-કોઈ નથી, એમ હું તે-આપને વચઃ-પૂર્વોક્ત રાજ્ય પ્રબંધને અનુકૂળ વચન બ્રવીમિ-કહું છું. (૩૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર પક્ષપાતરહિત, સર્વના મિત્ર છે, તેને અનુકૂળ સભાપતિ રાજ્યધર્મના પાલક રાજા પણ પ્રશંસનીયની પ્રશંસા, નિંદનીયની નિંદા, દંડનીયને દંડ અને રક્ષા કરવા યોગ્યની રક્ષા કરીને

॥ અથૈકાદશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

યુઙ્જાનઃ પ્રથમં મનસ્તત્ત્વાય સવિતા ધિયઃ ।

અગ્નેર્જ્યોતિર્નિચાચ્યં પૃથિવ્યાઽધ્યાભરત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે સવિતા-ઐશ્વર્યની કામના કરનાર મનુષ્ય ! તત્ત્વાય-તે પરમેશ્વર આદિ પદાર્થોના જ્ઞાતા માટે પ્રથમમ્-આદિમાં મનઃ-વિચાર સ્વરૂપ અન્તઃકરણની વૃત્તિઓને ધિયઃ-ધારણાત્મક અન્તઃકરણની વૃત્તિઓને યુઙ્જાનઃ-યોગાભ્યાસ અને ભૂગર્ભવિદ્યામાં યુક્ત કરીને અગ્નેઃ-પૃથ્વી આદિમાં રહેનારી વિદ્યુતના જ્યોતિઃ-પ્રકાશને નિચાચ્ય-નિશ્ચય કરીને પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિને અધિ-ઉપર આભરત્-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરે, તે યોગી અને ભૂગર્ભવિદ્યાના જ્ઞાતા બને. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય યોગવિદ્યા અને ભૂગર્ભવિદ્યા પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે, તે યમ આદિ યોગના અંગો અને ક્રિયા-કૌશલથી પોતાના હૃદયને પવિત્ર કરીને, તત્ત્વોના વિજ્ઞાન માટે બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને, તેને ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી જાણીને તેનો ઉપયોગ કરે.

તદનંતર જે પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ પદાર્થોના પ્રકાશક બ્રહ્મ છે, તેને જાણીને, તેનો પોતાના આત્મામાં નિશ્ચય કરીને પોતાના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરે. (૧)

યુક્તેન મનસા વયં દેવસ્ય સવિતુઃ સુવે । સ્વર્ગ્યાય શક્ત્યા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે યોગ અને તત્ત્વવિદ્યાના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે યોગીઓ યુક્તેન-યોગાભ્યાસથી યુક્ત મનસા-વિજ્ઞાન અને શક્ત્યા-પોતાના સામર્થ્યથી દેવસ્ય-સર્વના પ્રકાશક સવિતુઃ-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક ઈશ્વરના સુવે-જગત્ રૂપ ઐશ્વર્યમાં સ્વર્ગ્યાય-સુખની પ્રાપ્તિના સાધનો માટે પ્રકાશને અધિક રીતે ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પ્રકાશને ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં સમાધિસ્થ બનીને યોગ અને તત્ત્વવિદ્યાનું યથાશક્તિ સેવન કરે;

તે સુંદર આત્મજ્ઞાનના પ્રકાશથી યુક્ત બનીને યોગ અને પદાર્થ વિજ્ઞાનનો અભ્યાસ કરે, તો અવશ્ય સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૨)

યુક્ત્વાય સવિતા દેવાન્ત્સ્વર્યતો ધિયા દિવમ્ ।

બૃહજ્જ્યોતિઃ કરિષ્યતઃ સવિતા પ્રસુવાતિ તાન્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે સવિતા-યોગ અને પદાર્થજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરનાર પરમાત્મામાં મનને યુક્ત્વાય-યુક્ત

કરીને ધિયા-બુદ્ધિથી દિવમ્-વિદ્યાના પ્રકાશને તથા સ્વઃ સુખને યતઃ-પ્રાપ્ત કરનારા, બૃહત્-મહાન જ્યોતિઃ વિજ્ઞાનને કરિષ્યતઃ ઉત્પન્ન કરનારા તે દેવાન્-દિવ્યગુણોને પ્ર+સુવાતિ-ઉત્પન્ન કરે છે; તાન્-તે દિવ્ય ગુણોને અન્ય જન પણ સવિતા-પ્રેરણાવાન બનીને ઉત્પન્ન કરે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યોગ અને પદાર્થવિદ્યાનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ અવિદ્યાદિ કલેશોના નિવારક શુદ્ધ ગુણોને ઉત્પન્ન કરી શકે છે.

જે મનુષ્યો ઉપદેશકથી યોગ અને તત્ત્વજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને, એ રીતે અભ્યાસ કરે, તે પણ એ દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩)

યુજ્જતે મનઽઉત યુજ્જતે ધિયો વિપ્રા વિપ્રસ્ય બૃહતો વિપ્શિચતઃ ।

વિ હોત્રાં દધે વયુનાવિદેક્ઽઙ્મહી દેવસ્ય સવિતુઃ પરિષ્ટુતિઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે હોત્રાઃ-દાન દેવા અને લેવાના સ્વભાવ યુક્ત વિપ્રાઃ-બુદ્ધિમાન પુરુષ યસ્ય-જે બૃહતઃ-મહાન વિપ્શિચતઃ-સંપૂર્ણ વિદ્યાઓથી યુક્ત આપ્ત વિદ્વાન સમાન, વિપ્રસ્ય-સર્વશાસ્ત્રના જ્ઞાતા બુદ્ધિમાન વિદ્વાનથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને-જે સવિતુઃ-સર્વ જગતના ઉત્પાદક અને દેવસ્ય-સર્વના પ્રકાશક જગદીશ્વરની મહી-મહાન પરિષ્ટુતિઃ-સર્વ પ્રકારની સ્તુતિ છે, તે તત્ત્વજ્ઞાનના વિષયમાં જેમ મનઃ-પોતાના ચિત્તને યુજ્જતે-પરમાત્મા વા તત્ત્વજ્ઞાનમાં સમાધિસ્થ કરે છે ઉત્-અને ધિયઃ-પોતાની બુદ્ધિઓને યુક્ત કરે છે, તેમ વયુનાવિત્-પ્રકૃષ્ટજ્ઞાન યુક્ત એકઃ-અન્યની સહાયની અપેક્ષા વિના ઙ્મહી-જ હું વિ+દધે-મન અને બુદ્ધિને યુક્ત કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર યોગી એકાન્ત દેશમાં પરમાત્મામાં સમાધિસ્થ બને છે, તે તત્ત્વજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને, નિત્ય-સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

યુજે વાં બ્રહ્મ પૂર્વ્ય નમોંભિર્વિ શ્લોકઽણ્તુ પથ્યેવ સૂરઃ ।

શૃણ્વન્તુ વિશ્વેઽમૃતસ્ય પુત્રાઽઆ યે ધામાનિ દિવ્યાનિ તસ્થુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે યોગશાસ્ત્રના જ્ઞાનના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! આપ જેમ શ્લોકઃ-સત્યવાણીથી યુક્ત હું યોગી નમોંભિઃ-સ્તુતિ, પ્રાર્થના, ઉપાસના રૂપ સત્કારોથી જે પૂર્વ્યમ્-પૂર્વ યોગીઓએ પ્રત્યક્ષ કરેલ બ્રહ્મ-સર્વથી મહાન વ્યાપક ઈશ્વરનો યુજે-પોતાના આત્મામાં સાક્ષાત્ કરું છું, તે ઈશ્વર વામ્-તમે યોગનું અનુષ્ઠાન કરનાર-યોગી અને ઉપદેશ કરનાર બન્નેને સૂરઃ-વિદ્વાનને જેમ પથ્યેવ-ઉત્તમ ગતિને માટે માર્ગ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ વિ+ણ્તુ-વિવિધ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાય.

જેમ વિશ્વે-સર્વ પુત્રાઃ-ઉત્તમ સંતાનો સમાન આજ્ઞાકારી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાનો અમૃતસ્ય-અવિનાશી ઈશ્વરના યોગથી દિવ્યાનિ-સુખના પ્રકાશમાન ધામાનિ-સ્થાનોને આતસ્થુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ હું પણ તેને પ્રાપ્ત કરું, (૫)

ભાવાર્થ : યોગ-જિજ્ઞાસુજનો, યોગારૂઢ આપ્ત વિદ્વાનોનો સંગ કરે, તેના સંગથી યોગની વિધિ જાણીને બ્રહ્મનો સાક્ષાત્કાર કરે.

જેમ વિદ્વાનો દ્વારા પ્રકાશિત ધર્મનો માર્ગ સર્વને સુખથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ યોગીજનોથી યોગની વિધિ સરળતાથી પ્રાપ્ત થાય છે.

તેથી સર્વ લોકો યોગવિધિથી પરબ્રહ્મની ઉપાસના કરે. (૫)

યસ્ય પ્રયાણમન્વન્યઽદ્યુર્દેવા દેવસ્ય મહિમાનમોર્જસા ।

યઃ પાર્થિવાનિ વિમમે સઽત્શો રજાઞ્સિ દેવઃ સવિતા મહિત્વના ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે યોગીજનો ! તમે યસ્ય-જે દેવસ્ય-સર્વ સુખોના દાતા ઈશ્વરની મહિમાનમ્-સ્તુતિને પ્રયાણમ્-સર્વ સુખ પ્રાપ્તિના સાધન શ્રેષ્ઠ પ્રાણને અનુ-કર્મ પછી અન્યે-જીવ આદિ દેવાઃ-વિદ્વાનો યયુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે.

યઃ-જે એત્શઃ-પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વ જગતમાં પ્રાપ્ત, સવિતા-સમસ્ત જગતના નિર્માતા, દેવઃ-શુદ્ધ સ્વરૂપ ભગવાન છે, તે મહિત્વના-પોતાની મહિમાથી અને ઓજસા-પરાક્રમથી પાર્થિવાનિ-પૃથ્વી પર પ્રસિદ્ધ રજાઞ્સિ-સર્વ જનોને વિ+મમે-વિમાન આદિ યાનોની સમાન નિર્માણ કરે છે, સઃ-તે ઇત્-જ નિરંતર ઉપાસનીય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સર્વ જગતને અન્તરિક્ષમાં અનન્ત બળથી ધારણ કરનાર, જગતના નિર્માતા, સુખોના દાતા, શુદ્ધ સ્વરૂપ, સર્વશક્તિમાન અને સર્વાન્તર્યામી, ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે-તે જ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહીં. (૬)

દેવ સવિતઃ પ્રસુવ યજ્ઞં પ્રસુવ યજ્ઞપતિં ભગાય ।

દિવ્યો ગન્ધર્વઃ કેતપૂઃ કેતન્નઃ પુનાતુ વાચસ્પતિર્વાચિં નઃ સ્વદતુ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સત્યયોગ વિદ્યા દ્વારા ઉપાસનાને યોગ્ય શુદ્ધ જ્ઞાનના દાતા સવિતઃ-સર્વ સિદ્ધિઓને ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વર ! આપ નઃ-અમારા ભગાય-સમગ્ર ઐશ્વર્ય માટે યજ્ઞમ્-સુખદાયક વ્યવહારને પ્ર+સુવ-ઉત્પન્ન કરો, યજ્ઞપતિમ્-એ સુખદાયક વ્યવહારના રક્ષકજનને પ્ર+સુવ-ઉત્પન્ન કરો.

આપ ગન્ધર્વઃ-પૃથ્વીને ધારણ કરનાર, દિવ્યઃ-શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં સર્વ શ્રેષ્ઠ, કેતપૂઃ-વિજ્ઞાનથી પવિત્ર કરનાર છો, તે આપ નઃ-અમારા કેતમ્-વિજ્ઞાનને પુનાતુ-પવિત્ર કરો.

આપ વાચસ્પતિઃ-સત્ય વિદ્યાઓથી યુક્ત વેદવાણીના પ્રચારથી રક્ષા કરનાર છો, તે આપ નઃ-અમારી વાચમ્-વાણીને સ્વદતુ-સ્વાદિષ્ટ-મધુર અને મૃદુ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે સમસ્ત ઐશ્વર્યથી યુક્ત, શુદ્ધ બ્રહ્મની ઉપાસના કરે છે, યોગની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના કરે છે, તે સકલ ઐશ્વર્ય, આત્મશુદ્ધિ અને યોગને પ્રાપ્ત કરી શકે છે.

જે જગદીશશ્વરની વેદવાણીની સમાન પોતાની વાણીને શુદ્ધ કરી લે છે, તે સત્યવાદી બનીને સર્વ ક્રિયાઓનાં ફળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

**इमं नो देव सवितर्यज्ञं प्रणय देवाव्युः सखिविदुः सत्राजितं धनजितं स्वर्जितम् ।
ऋचा स्तोमः समर्धय गायत्रेण रथन्तरं बृहद् गायत्रवर्त्तन्ति स्वाहा ॥ ८ ॥**

પદાર્થ : હે દેવ-સત્ય કામનાઓને પૂર્ણ કરનાર અને સવિતઃ-અન્તર્યામી રૂપથી આત્મામાં પ્રેરણા કરનાર જગદીશ્વર ! આપ નઃ-અમારા ઇમમ્-પૂર્વોક્ત અને હવે પછી કહેવાશે તે દેવાવ્યમ્-દિવ્ય વિદ્વાનો વા ગુણોના રક્ષક, સખિવિદમ્-મિત્રોને જાણનાર, સત્રાજિતમ્-સત્યનો વિજય કરાવનાર, ધનજિતમ્-ધનની ઉન્નતિ કરનાર, સ્વર્જિતમ્-સુખને વધારનાર અને ઋચ્વા-ઋગ્વેદથી જેની સ્તોમમ્-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, યજ્ઞમ્-વિદ્યા અને ધર્મનો સંયોગ કરાવનાર યજ્ઞને સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી પ્રણય-પ્રાપ્ત કરાવો.

ગાયત્રેણ-ગાયત્રી આદિ છંદથી જ ગાયત્રવર્ત્તન્તિ-ગાયત્રી આદિ છંદોની ગાનવિદ્યાને બૃહત્-મહાન રથન્તરમ્-ઉત્તમ યાનોથી જેના દ્વારા પાર કરાય તે માર્ગને સમર્ધય-સારી રીતે વધારો. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈર્ષા, દ્વેષ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, ઈશ્વરની સમાન સર્વની સાથે મિત્રભાવ રાખે છે, તે વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૮)

**देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । आददे गायत्रेण
छन्दसाङ्गिरस्वत्पृथिव्याः सधस्थाद्ग्नિं पुरीष्यमङ्गिरस्वदाभर त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गि-
रस्वत् ॥ ९ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! હું જે ત્વા-આપને દેવસ્ય-સૂર્ય આદિ સર્વ જગતને પ્રકાશ આપનાર અને સવિતુઃ-સર્વ ઐશ્વર્યમાં પ્રસવે-નિષ્પન્ન ઐશ્વર્યમાં અશ્વિનોઃ-પ્રાણ અને ઉદાનના બાહુભ્યામ્-બલ અને આકર્ષણથી પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકારક વિદ્યુત્થી હસ્તાભ્યામ્-ધારણ અને આકર્ષણથી અંગિરસ્વત્-અંગારા સમાન આદદે-ગ્રહણ કરું છું.

આપ ગાયત્રેણ-ગાયત્રી મંત્રથી પ્રતિપાદિત છન્દસા-આનંદદાયક અર્થની સાથે પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના સધસ્થાત્-એક સ્થાનથી અંગિરસ્વત્-પ્રાણોની સમાન અને ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રિષ્ટુપ્થી નીકળેલા છન્દસા-સ્વતંત્ર અર્થની સાથે અંગિરસ્વત્-ચિહ્નોની સમાન પુરીષ્યમ્-જલને ઉત્પન્ન કરનાર અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ આદિ ત્રણ પ્રકારના અગ્નિને આ+ભર-ધારણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિનાં ગુણોના જ્ઞાતા વિદ્વાનની સેવા કરીને, પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન અગ્નિનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૯)

अभिरसि नार्यसि त्वया वयमग्निः शक्रेम खनितुः सधस्थ आ ।

जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वत् ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પી ! જે ત્વયા-તારી સાથે સધસ્થે-એક સ્થાનમાં વિદ્યમાન વયમ્-અમે જે અધ્નિઃ-લોખંડથી બનેલ ભૂમિ ખોદવાનું સાધન પાવડો છે, જે નર માટે નારી-નારીની સમાન કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર અસિ-છે, જેથી શિલ્પીઓ ભૂગર્ભ વિદ્યાને જાણી શકે માટે તેને ગ્રહણ કરીને જાગતેન-જગતી મંત્રના વિધાન માટે છન્દસા-સુખદાયક સ્વતંત્ર સાધનથી અદ્ગ્નિસ્વત્-પ્રાણોની સમાન અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિને યજ્ઞિતુમ્-ખોદવા માટે આ+શક્રેમ-સર્વ રીતે સમર્થ બની શકે તેને [અધ્નિને]તું બનાવ (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે અધ્નિ-ખોદવા આદિના ઉત્તમ સાધનોથી પૃથિવી આદિને ખોદીને, અગ્નિથી સંયુક્ત કરીને, સુવર્ણ આદિનું નિર્માણ કરવું જોઈએ પરંતુ પ્રથમ ભૂગર્ભ સંબંધી પદાર્થ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને તેમ કરી શકે છે, તેમ નિશ્ચિત જાણવું જોઈએ. (૧૦)

હસ્તઽઆધાય સવિતા વિભ્રદધ્નિઃ હિરણ્યયીમ્ ।

અગ્નેર્જ્યોતિર્નિચાચ્ય પૃથિવ્યાઽઅધ્યાભરદાનુષ્ટુભેનુ છન્દસાદ્ગ્નિસ્વત્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : સવિતા-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર શિલ્પી આનુષ્ટુભેન-અનુષ્ટુપ છંદમાં પ્રતિપાદિત છન્દસા-સ્વતંત્ર અર્થના યોગથી હિરણ્યયીમ્-તેજોમય ધાતુથી નિર્મિત્ અધ્નિમ્-ખોદવાના સાધન વિશેષ શસ્ત્રને હસ્તે-હાથમાં આધાયવિભ્રત્-ધારણ કરીને અદ્ગ્નિસ્વત્-પ્રાણ સમાન અગ્નેઃ-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિની જ્યોતિ જ્યોતિઃ-તેજ ને નિચાચ્ય-નિશ્ચય કરીને તેને પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના અધિ-ઉપર આ+ભરત્-સારી રીતે ધારણ કરે, પકડે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે-જેમ લોખંડ અને પથ્થરોમાં વિદ્યુત્ વિદ્યમાન છે, તેમજ સર્વ પદાર્થોમાં પ્રવિષ્ટ છે, તે વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને, કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને ભૂમિ પર અગ્નેય આદિ શસ્ત્રો અથવા વિમાન આદિ યાનોને સિદ્ધ કરે. (૧૧)

પ્રતૂર્ત વાજિન્નાદ્રવ વરિષ્ઠામનુ સંવતમ્ ।

દિવિ તે જન્મ પરમમન્તરિક્ષે તવ નાભિઃ પૃથિવ્યામધિ યોનિરિત્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-પ્રશંસિત જ્ઞાનથી યુક્ત વિદ્વાન ! જે તે-આપની શિલ્પવિદ્યા દ્વારા દિવિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં પરમમ્-ઉત્તમ જન્મ-પ્રસિદ્ધિ છે, તવ-આપની અન્તરિક્ષે-આકાશમાં નાભિઃ-બંધન છે, પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર યોનિઃ-નિમિત્ત પ્રયોજન છે, તેથી આપ વિમાન આદિ યાનોમાં બેસીને વરિષ્ઠામ્-અત્યંત શ્રેષ્ઠ સંવતમ્-ઉત્તમ રીતિથી પ્રતૂર્તમ્-અતિ તીવ્ર ઇત્-જ અનુ-પશ્ચાત્ આ + દ્રવ-સારી રીતે ગતિશીલ બનો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય વિદ્યા અને હસ્ત ક્રિયામાં પરમ પ્રયત્નમાં પ્રવૃત્ત થઈને વિમાન આદિ યાનો બનાવીને શીઘ્ર યાતાયાત કરે છે, ત્યારે તેને સુલભ રીતે ધન પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૨)

યુજ્જાથાંશ્ચ રાસંભં યુવમસ્મિન્ યામે વૃષણવસૂ । અગ્નિં ભરન્તમસ્મયુમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વૃષ્ણવસૂ-સૂર્ય અને વાયુની સમાન સુખ વરસાવનાર અથવા સુખમાં વસનારા શિલ્પીઓ તથા તેના સ્વામીજનો ! યુવમ્-તમે બન્ને અસ્મિન્-આ યામે-યાનમાં રાસભમ્-જલ અને અગ્નિના વેગ-ગુણ રૂપ અશ્વને, અસ્મયુમ્-અમને લઈ જનાર, ભસ્તમ્-ધારણ કરનાર, અગ્નિમ્-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને યુજ્ઞાથામ્-યુક્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જે યાનમાં યન્ત્ર, કલા, જલ અને અગ્નિનો પ્રયોગ કરે છે, તે સુખથી દેશાન્તરમાં ગમન કરી શકે છે. (૧૩)

યોગેયોગે તવસ્તરં વાજેવાજે હવામહે । સર્વાયુઽન્દ્રમૂતયે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સર્વાયુઃ-પરસ્પર મિત્રો ! જેમ અમે ઋતયે-રક્ષા આદિ માટે યોગેયોગે-પ્રત્યેક કાર્યમાં, વાજેવાજે-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં, તવસ્તરમ્-અત્યંત બળવાન ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યવાન પુરુષને રાજા હવામહે-માનીએ છીએ, તેમ તમે પણ માનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો પરસ્પર મિત્ર બનીને એક-બીજાની રક્ષા માટે અત્યંત બળવાન, ધાર્મિક રાજાનો સ્વીકાર કરે છે, તે નિર્વિધ્ન બનીને સુખની વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧૪)

પ્રતૂર્વન્નેહ્યવક્રામન્નશસ્તી રુદ્રસ્ય ગાણપત્યં મયોભૂરેહિ ।

ઊર્વુન્તરિક્ષું વીહિ સ્વસ્તિર્ગવ્યૂતિરભયાનિ કૃણવન્ પૂષ્ણા સયુજાં સહ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! સ્વસ્તિર્ગવ્યૂતિઃ-સુખથી યુક્ત માર્ગવાળા આપ સયુજા-એક સાથે સંયુક્ત થનારી પૂષ્ણા-બલ, પુષ્ટિ યુક્ત પોતાની સેનાની સહ-સાથે-સહાયથી અશસ્તીઃ-નિંદિત શત્રુઓની સેનાઓને પ્રતૂર્વન્-મારતા એહિ-આવો. શત્રુઓનાં દેશોનું અવક્રામન્-ઉલ્લંઘન કરીને એહિ-આવો. મયોભૂઃ-સુખને ઉત્પન્ન કરનાર આપ સ્વસ્તિ-શત્રુઓને રડાવનાર પોતાના સેનાપતિના ગાણપત્યમ્-સેના સમૂહના સ્વામિત્વને એહિ-પ્રાપ્ત કરો. અભયાનિ-પોતાના રાજ્યમાં સર્વ પ્રાણીઓને નિર્ભયતા કૃણવન્-ઉત્પન્ન કરીને અન્તરિક્ષમ્ + ઊરુ-પરિપૂર્ણ આકાશમાં વીહિ-વિવિધ ગતિ પ્રાપ્ત કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : રાજા સદા પોતાની સેનાને સુશિક્ષિત અને હૃષ્ટ-પુષ્ટ રાખે. જ્યારે શત્રુઓથી યુદ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે પોતાના રાજ્યને ઉપદ્રવરહિત કરીને યુક્તિ તથા બલથી શત્રુઓનો નાશ કરે.

અથવા-શ્રેષ્ઠોનું પાલન-રક્ષા કરીને સર્વત્ર સુંદર કીર્તિનો પ્રસાર કરે. (૧૫)

પૃથિવ્યાઃ સધસ્થાદગ્નિં પુરીષ્યમઙ્ગિરસ્વદાભરાગ્નિં પુરીષ્યમઙ્ગિરસ્વદચ્છૈમોઽગ્નિં પુરીષ્યમઙ્ગિરસ્વદ્દારિષ્યામઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અમે પૃથિવ્યાઃ-(ભૂમિ વા અન્તરિક્ષના સધસ્થાત્-એક સ્થાનથી અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણોની સમાન પુરીષ્યમ્-ઉત્તમ સુખ આપનાર અગ્નિમ્-સ્થૂલ અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને અચ્છ-ઉત્તમ રીતિથી ઇમઃ-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, અને જેમ અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણોની સમાન પુરીષ્યમ્-ઉત્તમ સુખદાયક

અગ્નિમ્-અન્તરિક્ષસ્થ વિદ્યુત્ને ભરિષ્ઠ્યામ્:-ધારણ કરીએ, તેમ આપ પણ અદ્ગિસ્વત્-સૂર્યની સમાન પુરીષ્યમ્-ઉત્તમ સુખદાયક અગ્નિમ્-પૃથિવી પર વિદ્યમાન અગ્નિને આ + ભર-ધારણ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે વિદ્વાનોનું અનુસરણ કરવું જોઈએ. અવિદ્વાનોનું નહિ. અને સર્વથા ઉત્સાહથી અગ્નિ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાનું ગ્રહણ કરીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

અન્વગ્નિરુષસામગ્રમચ્ચદન્વહાનિ પ્રથમો જાતવેદાઃ ।

અનુ સૂર્યસ્ય પુરુત્રા ચ રશ્મીનનુ દ્યાવાપૃથિવીઽઆતતન્થ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ પ્રથમઃ + જાતવેદાઃ-ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોમાં પ્રથમથી જ વિદ્યમાન સૂર્યલોક અને અગ્નિઃ + ઊષસામ્-ઉષાકાલથી અગ્રમ્-પ્રથમ જ અહાનિ દિવસોને અન્વચ્ચત્-પ્રસિદ્ધ કરે છે, સૂર્યસ્ય-સૂર્યના અગ્રમ્-પ્રથમ પુસ્ત્રા-અનેક રશ્મીન્-કિરણોને અન્વાતતન્થ-ફેલાવે છે, અને દ્યાવાપૃથિવીચ-સૂર્ય અને પૃથિવી લોકને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ આપ વિદ્યાના વ્યવહારની પ્રવૃત્તિ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ કારણ કાર્યરૂપ વિદ્યુત્ = અગ્નિ અનુક્રમથી સૂર્ય, ઉષા અને દિવસોને ઉત્પન્ન કરીને પૃથિવી આદિને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ વિદ્વાનોએ સુશિક્ષા કરીને, બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા, ધર્માચરણ અને સુશીલતાનો સર્વત્ર પ્રચાર કરીને, સર્વજનોને જ્ઞાન અને આનંદથી પ્રકાશિત કરવા જોઈએ. (૧૭)

આગત્ય વાજ્યધ્વાનઃ સર્વા મૃધો વિધૂનુતે ।

અગ્નિઃ સ્ધસ્થે મહતિ ચક્ષુષા નિચિકીષતે ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ જેમ વાજી-વેગવાન ઘોડાઓ અધ્વાનમ્-પોતાના માર્ગને આગત્ય-પ્રાપ્ત કરીને સર્વાઃ-સર્વ મૃધઃ-સંગ્રામોને વિધૂનુતે-કંપાયમાન કરે છે, અને જેમ ગૃહસ્થ પુરુષ ચક્ષુષા-નેત્રોથી મહતિ-સુંદર-વિશાળ સ્ધસ્થે-એક સ્થાનમાં અગ્નિમ્-અગ્નિનું નિચિકીષતે-ચયન કરવા ઈચ્છે છે, તેમ સર્વ સંગ્રામોને કંપાયમાન કરો તથા પ્રત્યેક ઘરોમાં વિદ્યાનો પ્રચાર કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ ઘોડાની સમાન ગમન-આગમન કરીને, શત્રુઓને જીતીને, આગ્નેયાસ્ત્ર-વિદ્યાને સિદ્ધ કરીને, પોતાના બલાબલનો વિચાર કરીને, રાગ-દ્વેષ આદિ દોષોને શાન્ત કરીને, અધર્મી પુરુષોને જીતવા જોઈએ. (૧૮)

આક્રમ્ય વાજિન્ પૃથિવીમગ્નિમિચ્છ રુચા ત્વમ્ ।

ભૂમ્યા વૃત્વાય નો બ્રૂહિ યતઃ ઋનેમ તં વ્યમ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-પ્રશંસિત જ્ઞાનયુક્ત સભાપતિ વિદ્વાન રાજન્ ! ત્વમ્-આપ સ્ત્રા-પ્રીતિથી શત્રુઓને આક્રમ્ય-પદાકાન્ત કરીને, પૃથિવીમ્-પૃથિવીનું રાજ્ય અને અગ્નિમ્-અગ્નિ વિદ્યાની ઇચ્છા-ઈચ્છા કરો.

ભૂમ્યાઃ-પૃથિવી પર નઃ-અમને વૃત્વાય-સ્વીકાર કરીને બ્રૂહિ-ભૂગર્ભવિદ્યા અને અગ્નિવિદ્યાનો ઉપદેશ કરો, યતઃ-જેથી વ્યમ્-અમે તમ્-તે વિદ્યામાં ઋનેમ-પ્રવિષ્ટ થઈએ-પ્રાપ્ત કરીએ.

ભાવાર્થ : મનુષ્ય (ભૂગર્ભવિદ્યા અને અગ્નિવિદ્યા દ્વારા પાર્થિવ પદાર્થોની સુપરીક્ષા કરીને સુવર્ણ આદિ

રત્નોને ઉત્સાહ પૂર્વક પ્રાપ્ત કરે. તેમજ જે ખોદવાવાળા નોકર-મજૂર લોકો છે, તેને પણ ભૂગર્ભ અને અગ્નિવિદ્યાનો ઉપદેશ કરે. (૧૯)

દ્યૌસ્તૈ પૃષ્ઠં પૃથિવી સ્થસ્થમાત્માન્તરિક્ષઃ સમુદ્રો યોનિઃ ।

વિચ્છાયા ચક્ષુષા ત્વમ્ભિ તિષ્ઠ પૃતન્યતઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન રાજન્ ! જે તે-આપના દ્યૌઃ પ્રકાશ સમાન વિનયયુક્ત પૃષ્ઠમ્-પાછળનો વ્યવહાર છે, પૃથિવી-પૃથિવીની સમાન સ્થસ્થમ્-વિશાળ સ્થાન છે, અન્તરિક્ષમ્-આકાશ સમાન અવિનાશી ક્ષોભરહિત-ધૈર્યયુક્ત આત્મા-પોતાનું સ્વરૂપ છે, સમુદ્રઃ-સમુદ્ર સમાન યોનિઃ-નિમિત્ત-પ્રયોજન છે, તે ત્વમ્-આપ ચક્ષુષા-વિચારની સાથે-વિવેકથી વિચ્છાયા-પોતાની ઐશ્વર્ય પ્રસિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને પૃતન્યતઃ-પોતાની સેનાને લડાવવાને ઈચ્છુક મનુષ્ય-શત્રુજનની અભિ-સન્મુખ તિષ્ઠ-સ્થિત કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ન્યાયમાર્ગ પર ચાલનાર, દંઢ ઉત્સાહી, દંઢ સ્થાન અને દંઢ આત્મા યુક્ત છે. તથા - જેનું પ્રયોજન વિવેક સાધ્ય છે, તેની સેના વીર હોય છે. તે નિશ્ચિત વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બને છે. (૨૦)

ઉક્ક્રામ મહતે સૌભંગાયાસ્માદાસ્થાનાદ્ દ્રવિણોદા વાજિન્ ।

વ્યથ્ઞ સ્યામ સુમતૌ પૃથિવ્યાઽઅગ્નિં ચ્ચનન્તઽપસ્થૈઽઅસ્યાઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત વિદ્વાન ! જેમ દ્રવિણોદાઃ-ધનધાતા અસ્યાઃ-આ પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના અસ્માત્-આ આસ્થાનાત્-નિવાસ સ્થાનથી અપસ્થૈ-સમીપમાં અગ્નિમ્-અગ્નિવિદ્યાની ચ્ચનન્તઃ-શોધ કરતાં વ્યથ્-અમે મહતે-મહાન સૌભંગાય-સુંદર ઐશ્વર્ય માટે સુમતૌ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાં પ્રવૃત્ત સ્યામ-થઈએ છીએ, તેમ આપ ઉક્ક્રામ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે આ સંસારમાં ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. પરસ્પર સંમતિ કરીને પૃથિવી આદિથી રત્નોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૨૧)

ઉદ્ક્રમીદ્ દ્રવિણોદા વાજ્યર્વાકઃ સુલોકઃ સુકૃતં પૃથિવ્યામ્ ।

તતઃ ચ્ચનેમ સુપ્રતીકમ્ અગ્નિં સ્વો રુહાણાઽઅધિનાર્કમુત્તમમ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે ભૂગર્ભ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! જેમ દ્રવિણોદાઃ-ધનધાતા આપ જેમ વાજી-બળવાન અર્વા-ઘોડા ચાલે-ઉછળે છે, તેમ પૃથિવ્યામ્-ભૂમિથી અધિ + ઉદ્ક્રમીત્-સર્વાધિક ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો. સુકૃતમ્-ધર્માચરણથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય, સુલોકમ્-દર્શનીય, ઉત્તમમ્-અતિશ્રેષ્ઠ, નાકમ્-સર્વ દુઃખોથી રહિત સુખને અકઃ-સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરો. તતઃ-ત્યારપછી સ્વઃ-સુખપૂર્વક સ્થાણાઃ-પ્રાપ્ત કરતાં અમે પણ આ પૃથિવી પર સુપ્રતીકમ્-સુંદર પ્રીતિનો વિષય અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની ચ્ચનેમ-શોધ કરીએ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપણે સર્વ મળીને, જેમ પૃથિવી પર ઘોડો ચાલે છે, તેમ પુરુષાર્થી બનીને, પૃથિવી આદિની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, દુઃખોને દૂર કરીને, સર્વોત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૨)

આ ત્વાં જિઘર્મિ મનસા ઘૃતેન પ્રતિક્ષિયન્તં ભુવનાનિ વિશ્વા ।

પૃથું તિરૃશ્ચા વચસા બૃહન્તં વ્યચિષ્ટમન્નૈ રભસં દૃશાનમ્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે જ્ઞાન ઈચ્છુક પુરુષ ! જેમ હું મનસા-મન તથા ઘૃતેન-ઘૃતથી યુક્ત વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકસ્થ વસ્તુઓમાં પ્રતિક્ષિયન્તમ્-પ્રત્યક્ષ નિવાસ અને નિશ્ચયકારક, તિરૃશ્ચા-તિરછી ગતિ રૂપ વચસા-જીવનથી પૃથુમ્-વિશાળ અને બૃહન્તમ્-મહાન અન્નૈઃ-જવ આદિ અન્નોની સાથે રભસમ્-બલયુક્ત વ્યચિષ્ટમ્-વેગથી ફેંકનાર દૃશાનમ્-દર્શનીય વાયુના ગુણોને આજિઘર્મિ-સારી રીતે પ્રકાશિત કરું છું-ધારણ કરું છું, તેમ ત્વા-આપને પણ એ વાયુના ગુણોને ધારણ કરાવું છું. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિ દ્વારા સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોને વાયુમાં નાખીને-પહોંચાડીને, તે સુગંધિત વાયુથી નીરોગ બનીને દીર્ઘાયુને પ્રાપ્ત કરે. (૨૩)

આ વિશ્વતઃ પ્રત્યજ્ઞવં જિઘર્મ્યર્ક્ષસા મનસા તજ્જુષેત ।

મર્ચ્યશ્રી સ્પૃહ્યદ્વર્ણોઽઅગ્નિર્નાભિમૃશે તન્વા જર્મુરાણઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! ન-જેમ વિશ્વતઃ-સર્વ તરફથી અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ અને પ્રાણવાયુ શરીરમાં વ્યાપક બનીને અભિમૃશે-સહન કરનાર માટે હિતકારક છે, જેમ તન્વા-શરીર દ્વારા જર્મુરાણઃ-શીઘ્ર હાથ-પગ આદિ અંગોને ગતિમાન કરતા સ્પૃહ્યદ્વર્ણઃ-ઈચ્છાવાળાએ સ્વીકાર્યા સમાન મર્ચ્યશ્રીઃ-મનુષ્યની શોભા સમાન વાયુની સમાન વેગવાન બનીને, હું જે પ્રત્યજ્ઞમ્-શરીરને નિરંતર ગતિ આપનાર વિદ્યુત્ને અરક્ષસા-રાક્ષસોની દુષ્ટતાથી રહિત મનસા-ચિત્તથી આજિઘર્મિ-પ્રકાશિત કરું છું, તેમ તત્-તે તેજનું-અગ્નિનું જુષેત-તું સેવન કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોને જાણીને, તેમને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને શ્રીમાન-ધનવાન બનો. (૨૪)

પરિ વાજપતિઃ ક્વિરગ્નિર્હૃવ્યાન્યક્રમીત્ । દધ્વદ્રત્તાનિ દાશુષે ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે વાજપતિઃ અન્નાદિના રક્ષક ગૃહસ્થ સમાન, કવિઃ-કાન્તદર્શી, દાની ગૃહસ્થ પુરુષ, દાશુષે-દાન આપવા યોગ્ય વિદ્વાન માટે રત્તાનિ-સુવર્ણ આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થ દધત્-ધારણ કરનાર સમાન અગ્નિઃ-પ્રકાશમાન પુરુષ હૃવ્યાનિ-આપવા યોગ્ય વસ્તુઓને પરિ-સર્વ તરફથી અક્રમીત્-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તું જાણ. (૨૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન પુરુષ અગ્નિ દ્વારા પૃથિવસ્થ પદાર્થોથી ધન પ્રાપ્ત કરીને, શ્રેષ્ઠ માર્ગ પર ચાલનારા સત્યાત્રોમાં દાન કરીને, વિદ્યાના પ્રચારથી સર્વને સુખ પ્રદાન કરે. (૨૫)

परि त्वाग्ने पुरं वयं विप्रः सहस्य धीमहि ।

धृषद्वर्णं दिवेदिवे हुन्तारं भङ्गुरा-वताम् ॥ २६ ॥

પદાર્થ : હે સહસ્ય-સ્વ બલના ઈચ્છુક અગ્ને-અગ્નિવત્ વિદ્યાથી પ્રકાશમાન વિદ્વાન પુરુષ ! જેમ વયમ્-અમે દિવેદિવે-પ્રતિદિન ભઙ્ગુરાવતામ્-કુત્સિત સ્વભાવ-વાળાના પુરમ્-નગરને અગ્નિ સમાન હન્તારમ્-સંહારનાર, ધૃષદ્વર્ણમ્-ઉત્તમ વર્ણયુક્ત-રૂપવાન વિપ્રમ્-વિદ્વાન ત્વા-આપને પરિ-સર્વ રીતે ધીમહિ-ધારણ કરે, તેમ તું અમને ધારણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજન ન્યાયથી પ્રજાના રક્ષક, અગ્નિ સમાન શત્રુઓના સંહારક અને સર્વદા સુખ આપનાર પુરુષને સેનાપતિ બનાવે. (૨૬)

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि ।

त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः ॥ २७ ॥

પદાર્થ : હે નૃપતે-મનુષ્યોના પાલક અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન ન્યાયાધીશ રાજન્ ! ત્વમ્-આપ દ્યુભિઃ સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન ન્યાયાદિ ગુણોથી યુક્ત છો, ત્વમ્-આપ આશુશુક્ષણિઃ-શીઘ્ર દુષ્ટોના સંહારક છો, ત્વમ્-આપ અદ્ભ્યઃ વાયુ વા જલોથી, ત્વમ્-આપ અશ્મનઃ-મેઘ વા પાષાણાદિથી, ત્વમ્-આપ વનેભ્યઃ-વન વા કિરણોથી, ત્વમ્-આપ ઓષધીભ્યઃ સોમલતાદિ ઔષધિઓથી, ત્વમ્-આપ નૃણામ્-મનુષ્યોમાં શુચિઃ-પવિત્ર પરિ-સર્વ રીતે જાયસે-પ્રસિદ્ધ છો, તેથી આપનો આશ્રય ગ્રહણ કરીને અમે પણ એવા બનીએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે રાજા અથવા સભાસદ પુરુષ સર્વ પદાર્થોનાં ગુણોનું ગ્રહણ, વિદ્યા અને ક્રિયા કૌશલથી ઉપકારોનું ગ્રહણ કરી શકે છે, અને જે ધર્માચરણથી પવિત્ર તથા શીઘ્રકારી હોય છે, તે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, અન્ય આળસુ મનુષ્ય નહિ. (૨૭)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । पृथिव्याः
सधस्थाद्गिन् पुरीष्यमङ्गिरस्वत् खनामि । ज्योतिष्मन्तं त्वाग्ने सुप्रतीकमजस्त्रेण
भानुना दीद्यतम् । शिवं प्रजाभ्योऽर्हिःसन्तं पृथिव्याः सधस्थाद्गिन् पुरीष्यमङ्गिरस्वत्
खनामः ॥ २८ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ભૂગર્ભ અને શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! જેમ હું સવિતુઃ-સર્વ જગતના ઉત્પાદક દેવસ્ય-પ્રકાશમાન ઈશ્વરના પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલ આ સંસારમાં અશ્વિનોઃ-આકાશ અને પૃથિવીના બાહુભ્યામ્-આકર્ષણ અને ધારણ શક્તિ સમાન ભુજાઓથી, પૂષ્ણઃ-પ્રાણના બલ અને પરાક્રમ સમાન હસ્તાભ્યામ્-હાથોથી ત્વા-આપને આગળ કરીને પૃથિવ્યાઃ ભૂમિના સધસ્થાત્-એક સ્થાનથી પુરીષ્યમ્-પૂર્ણ સુખદાતા જ્યોતિષ્મન્તમ્-અનેક જ્યોતિયુક્ત અજસ્ત્રેણ-નિરંતર ભાનુના-દીપ્તિથી દીદ્યતમ્-અત્યંત પ્રકાશમાન પુરીષ્યમ્-

સુંદર રક્ષક અગ્નિમ્-વાયુસ્થ વિદ્યુત્ને અદ્ગ્નિસ્વત્-વાયુ સમાન યજ્ઞામિ-સિદ્ધ કરું છું.

જેમ ત્વા-આપનો આશ્રય ગ્રહણ કરીને અમે પૃથિવ્યાઃ-અન્તરિક્ષના સધસ્થાત્-એક પ્રદેશથી અદ્ગ્નિસ્વત્-સૂક્ષ્મરૂપ વાયુના સમાન વિદ્યમાન, અર્હિસન્તમ્-દુઃખરહિત, પુરીષ્યમ્-પાલક સાધનોમાં ઉત્તમ વિદ્યમાન, પ્રજાભ્યઃ પ્રજા માટે શિવમ્-મંગલકારક અગ્નિમ્-અગ્નિને યજ્ઞામઃ-પ્રકટ કરીએ છીએ. તેમ સર્વજનો કર્યા કરે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન સર્વત્ર વિદ્યમાન વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને સર્વ પદાર્થોથી સાધનો-ઉપસાધનો દ્વારા પ્રસિદ્ધ-પ્રકટ કરીને તેનો કાર્યોમાં પ્રયોગ કરે છે, તેઓ મંગલમય ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. કોઈપણ ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થ વિદ્યુત્ની વ્યાપ્તિથી રહિત નથી. એમ સર્વ લોકો જાણે. (૨૮)

અપાં પૃષ્ઠમસિ યોનિર્ગ્નેઃ સંમુદ્રમ્ભિત્ત્વઃ પિન્વમાનમ્ ।

વર્ધમાનો મહાંરઆ ચ પુષ્કરે દિવો માત્રયા વરિમ્પા પ્રથસ્વ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેથી આપ અગ્નેઃ-સર્વત્ર વ્યાપક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી ગતિ કરનારા, યોનિઃ-સંયોગ-વિભાગને જાણનારા મહાન્-પૂજનીય વર્ધમાનઃ-વિદ્યા તથા ક્રિયાની કુશળતાથી નિત્ય વૃદ્ધિ કરનારા આપ અસિ-છો, તેથી અભિત્ત્વઃ-સર્વ તરફથી પિન્વમાનમ્-જલ વરસાવનાર, અપામ્-જલોના પૃષ્ઠમ્-આધારભૂત, પુષ્કરે-અન્તરિક્ષમાં વિદ્યમાન, દિવઃ-દીપ્તિની માત્રયા-માત્રાથી વધનાર, સમુદ્રમ્-જેનાથી જલ ઉપર તરફ જાય છે તે સમુદ્રને ચ-અને તેમાં વિદ્યમાન સર્વ મૂર્ત પદાર્થોને જાણીને વરિમ્પા-અધિકતાથી આ+પ્રથસ્વ-ઉત્તમ સુખોનો વિસ્તાર કરનાર બનો. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ પૃથિવી આદિ મૂર્ત પદાર્થોમાં વિદ્યુત્ વિદ્યમાન છે, તેમ જલમાં પણ છે, એમ માનીને તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરીને મહાન વિસ્તૃત સુખોને સિદ્ધ કરો. (૨૯)

શર્મી ચ સ્થો વર્મી ચ સ્થોઽચ્છિદ્રે બહુલેઽઽભે ।

વ્યચસ્વતી સંવસાથાં ભૃતમ્ગ્નિં પુરીષ્યમ્ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને શર્મ-ગૃહાશ્રમ ચ-અને તેની સામગ્રીને પ્રાપ્ત થયેલ સ્થઃ-છો, વર્મ-સર્વ તરફથી સુરક્ષા ચ-અને તેના સુરક્ષાના સહાયક પદાર્થોને ઝમ્બે-બે બહુલે-અધિક પદાર્થોને ગ્રહણ-પ્રાપ્ત કરાવનાર, વ્યચસ્વતી-સુખની પ્રાપ્તિથી યુક્ત અચ્છિદ્રે-નિર્દોષ વિદ્યુત્ અને અન્તરિક્ષની સમાન જે ઘરમાં ધર્મ, અર્થનાં કાર્યો સ્થઃ-છે, તે ઘરમાં ભૃતમ્-પોષણ કરનાર પુરીષ્યમ્-રક્ષકોમાં શ્રેષ્ઠ અગ્નિમ્-અગ્નિને ગ્રહણ કરીને સંવસાથામ્-ઉત્તમ રીતે આચ્છાદન કરીને વસો. (૩૦)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થો બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક સત્કાર, ઉપકાર અને ક્રિયા-કુશળતાથી વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, અનેક દ્વારો યુક્ત, સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક, સર્વ તરફથી સુરક્ષિત, અગ્નિ-વિદ્યુત્ આદિ સાધનોથી યુક્ત ઘરો બનાવીને તેમાં સુખપૂર્વક નિવાસ કરે. (૩૦)

સંવસાથાઃસ્વર્વિદાં સમીચીઽઽરસા ત્મનાં ।

અગ્નિમન્તર્ભૌરિષ્યન્તી જ્યોતિષ્મન્તમજસ્રમિત્ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને સમીચી-સારી રીતે પદાર્થોને જાણનારા ભરિષ્યન્તી-સર્વનું પાલન કરનારા અને સ્વર્વિદા-સુખને પ્રાપ્ત કરનારા અને જ્યોતિષ્મન્તમ્-પ્રશંસનીય જ્યોતિથી યુક્ત અન્તઃ સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને ઇત્-જ ત્મના-આત્મા અને ઝસા-અન્તઃકરણથી અજસ્રમ્-નિરંતર સંવસાથામ્-ઉત્તમરીતિથી આચ્છાન કરો, તો લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરી શકો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્યુત્ને ઉત્પન્ન કરીને ગ્રહણ કરી શકે છે, તે વ્યવહારમાં કદી દરિદ્ર બનતો નથી. (૩૧)

પુરીષ્યોઽસિ વિશ્વભરાઽઽર્થર્વા ત્વા પ્રથમો નિરમન્થદગ્ને ।

ત્વામગ્ને પુષ્કરાદધ્યર્થર્વા નિરમન્થત । મૂર્ધ્નો વિશ્વસ્ય વાઘતઃ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ક્રિયા-કુશળતાને સિદ્ધ કરનાર વિદ્વાન ! જે વાઘતઃ-શાસ્ત્રવિદ્-મેઘાવી આપ પુરીષ્યઃ-પશુઓને સુખ આપનાર અસિ-છો, તે ત્વા-આપના અર્થર્વા-રક્ષક પ્રથમઃ-ઉત્તમ વિશ્વભરાઃ સર્વના પોષક વિદ્વાન વિશ્વસ્ય-સમસ્ત સંસારના મૂર્ધ્નઃ-શિર સમાન પુષ્કરાત્-અન્તરિક્ષથી અધિ-સમીપ અગ્નિનું નિઃ + અમન્થત્-નિત્ય મંથન કરીને ગ્રહણ કરે છે, તે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે આ જગતમાં વિદ્વાન છે, તે સુવિચાર અને પુરુષાર્થ દ્વારા અગ્નિ-આદિ વિદ્યાને સિદ્ધ કરીને તેની સર્વને શિક્ષા આપે. (૩૨)

તમું ત્વા દ્વધ્યઙ્ઙૃષિઃ પુત્રઽઙ્ઙૃષિઃ પુત્રઽઙ્ઙૃષિઃ પુત્રઽઙ્ઙૃષિઃ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ અર્થર્વણઃ-રક્ષક વિદ્વાનના પુત્રઃ-પવિત્ર શિષ્ય દ્વધ્યઙ્ઙ-સુખોને ધારણ કરનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોના જ્ઞાતા છે, તે ઋષિઃ-વેદાર્થના જાણનાર ઝ-તર્ક-વિતર્ક સાથે સકલ વિદ્યાઓના જાણકાર બનીને જે વૃત્રહણમ્-સૂર્ય સમાન શત્રુનાશક અને પુન્દ્રમ્-શત્રુઓના નગરનો નાશ કરનાર આપને ઙ્ઙૃષિઃ-તેજસ્વી કરે છે, તેમ તમ્, ત્વા-તે આપને સર્વ વિદ્યાનો વિદ્યા અને વિનયથી ઉન્નતિ યુક્ત કરે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે સાંગોપાંગ વેદોનું અધ્યયન કરીને વિદ્વાન અને વિદુષીઓ હોય, તે રાજપુત્ર આદિ અને રાજકન્યા આદિને વિદ્વાન અને વિદુષી બનાવીને, તેના દ્વારા ધર્મપૂર્વક રાજ્યવ્યવહાર અને પ્રજા વ્યવહાર કરાવે. (૩૩)

તમું ત્વા પાથ્યો વૃષા સમીધે દસ્યુહન્તમમ્ । ધ્નઞ્ઞયઃ ર્ણેરણે ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે વીર પુરુષ ! જે આપ પાથ્યઃ અન્ન-જલ આદિ પદાર્થોનો ઉત્તમ રીતિથી ઉપયોગ કરનાર, તથા વૃષા-પરાક્રમ, ર્ણેરણે-શૂરવીરતા આદિ યુક્ત વિદ્વાન છે, તમ્-પૂર્વોક્ત પદાર્થ વિદ્યાને જાણનાર,

ધનઙ્ગયમ્-શત્રુઓના ધનને જીતનાર ઊ-અને દસ્યુહન્તમમ્-દસ્યુઓનું અત્યંત ઉનન કરનાર ત્વા-આપને વીરોની સેના દ્વારા વિદ્વાન રાજધર્મની શિક્ષાથી સમીધે-ઉદીપ્ત કરે. (૩૪)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ રાજપુરુષ આપત વિદ્વાનોથી વિનય અને યુદ્ધવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાની રક્ષા માટે ચોરોનો નાશ કરીને, શત્રુઓને જીતીને પરમ ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરે. (૩૪)

સીદ્દ્ હોત્ત્ : સ્વઽઽ લોકે ચિકિત્વાન્ત્સાદયા યજ્ઞઃસુકૃતસ્ય યોનોૌ ।

દેવાવીર્દેવાન્ હૃવિષાં યજાસ્યગ્નેં બૃહદ્યજમાને વયોધાઃ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન ! હોત્ત્:-દાન આપનાર ચિકિત્વાન્-વિજ્ઞાનથી યુક્ત આપ લોકે-દર્શનીય સ્વે-સુખમાં સીદ્દ-સ્થિત-વિરાજમાન રહો. સુકૃતસ્ય-ઉત્તમ કર્મ કરનાર ધાર્મિક પુરુષના યોનો-કારણમાં યજ્ઞમ્-ધર્મયુક્ત રાજ્ય અને પ્રજાના વ્યવહારને સાદય-પ્રાપ્ત કરાવો.

દેવાવીઃ-વિદ્વાનોથી રક્ષિત અને શિક્ષિત થતા આપ હૃવિષા-દેવા-લેવા યોગ્ય ન્યાયથી દેવાન્-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોનો યજાસિ-સત્કાર, સેવા અને સંગ કરો તથા યજમાને-યજમાને-રાજા આદિ મનુષ્યોમાં વયઃ-દીર્ઘ આયુને ધાઃ-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો આ જગતમાં બે કર્મો નિરંતર કરે. પ્રથમ-બ્રહ્મચર્ય અને જિતેન્દ્રિયતા આદિની શિક્ષાથી શરીરનું આરોગ્ય અને બલ આદિથી યુક્ત દીર્ઘ આયુ કરે.

બીજું-વિદ્યા અને ક્રિયા-કુશળતા ગ્રહણ કરીને આત્મિક બલને પ્રાપ્ત કરે.

જેથી સર્વ મનુષ્યો શારીરિક અને આત્મિક બલથી યુક્ત બનીને સદા આનંદમાં રહે. (૩૫)

નિ હોતાં હોતૃષદને વિદાનસ્ત્વેષો દીદિવાંઽઽસદત્સુદક્ષઃ ।

અદબ્ધવ્રતપ્રમતિર્વસિષ્ઠઃ સહસ્ત્રમ્ભરઃ શુચિંજિહ્વોઽઅગ્નિઃ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : જે જન મનુષ્યજન્મને પ્રાપ્ત કરીને હોતૃષદને-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાનોના સ્થાન-ઘરમાં, દીદિવાન્-ધર્મયુક્ત વ્યવહાર કરવાને ઈચ્છુક, ત્વેષઃ-શુભ ગુણોથી પ્રકાશમાન, વિદાનઃ જ્ઞાન વૃદ્ધિનો જિજ્ઞાસુ, શુચિંજિહ્વઃ-સત્ય ભાષણથી પવિત્ર વાણીયુક્ત, સુદક્ષઃ-ઉત્તમ બલયુક્ત, અદબ્ધવ્રતપ્રમતિઃ-રક્ષા કરવા યોગ્ય ધર્માચરણ રૂપી વ્રતોથી ઉત્તમ બુદ્ધિયુક્ત, વસિષ્ઠઃ-અત્યંત સમીપ રહેનાર-અન્તેવાસી, સહસ્ત્રમ્ભરઃ-અસંખ્ય શુભ ગુણોને ધારણ કરનાર, હોતા-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર પુરુષ નિરંતર ન્યસદત્-વિદ્યમાન રહે, તો સમસ્ત સુખને પ્રાપ્ત કરે. (૩૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે માતા-પિતા પોતાનાં પુત્રો અને કન્યાઓને સુશિક્ષા આપીને પછી વિદ્વાનો અને વિદુષીઓની સમીપ ચિરકાલ સુધી રાખીને અધ્યયન કરાવે;

ત્યારે-તે સૂર્ય સમાન કુલ અને દેશના પ્રકાશક બની શકે છે. (૩૬)

સઃસીદસ્વ મ્હાંઽઽસિ શોચસ્વ દેવવીતમઃ ।

વિ ધૂમમર્ગને અરુષં મિયેધ્ય સૃજ પ્રશસ્ત દર્શતમ્ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે પ્રશસ્ત-પ્રશંસનીય, મિયેધ્ય-દુષ્ટોને દૂર કરનાર, અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન ! દેવવીતમ:- વિદ્વાનોને અત્યંત ઈષ્ટ આપ વિધૂમમ્-નિર્મલ, દર્શતમ્-દર્શનીય, અસ્તમ્-સુંદર સ્વરૂપને સૃજ-સિદ્ધ કરો અને શોચસ્વ-પવિત્ર બનો.

જે કારણે આપ મહાન્-મહાન ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાન્ અસિ-છો, તેથી અધ્યાપન કાર્યમાં-સ્થાનમાં સંસીદસ્વ-વિરાજમાન રહો. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્વાનોના અત્યંત પ્રિય, સુંદર રૂપ, ગુણ અને લાવણ્યથી યુક્ત, પવિત્ર, મહાન, આપ્ત વિદ્વાન હોય, તે જ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરાવી શકે છે. (૩૭)

અપો દેવીરૂપસૃજ મધુમતીરયક્ષ્માય પ્રજાભ્યઃ ।

તાસામાસ્થાનાદુજ્જિહતામોષ્ઠયઃ સુપિપ્પલાઃ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠ વૈદ ! આપ મધુમતી:-પ્રશંસનીય મધુરાદિ ગુણયુક્ત દેવી:-પવિત્ર અપ:-જલોને ઉપસૃજ-સિદ્ધ કરો, જેથી તાસામ્-તે જલોના અસ્થાનાત્-આશ્રયથી સુપિપ્પલા:-સુંદર ફળોયુક્ત ઓષ્ઠયઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓને પ્રજાભ્યઃ-રક્ષા કરવા યોગ્ય પ્રાણીઓને અયક્ષ્માય-યક્ષ્મા આદિ રોગોના નિવારણ માટે ઉજ્જિહતામ્-પ્રાપ્ત થાય.

ભાવાર્થ : રાજા બે પ્રકારના વૈદોનું સંરક્ષણ કરે, એક-સુગંધિ પદાર્થોના હોમથી વાયુ, વૃષ્ટિ અને ઔષધિઓને શુદ્ધ કરે. બીજા-શ્રેષ્ઠ વૈદ વિદ્વાન જન નિદાન આદિ દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓને સદા નીરોગ રાખે. કારણકે-આ કર્મ વિના સમાજને કદી પણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. (૩૮)

સં તે વાયુર્માતૃરિશ્વા દધાતૂત્તાનાયા હૃદયં યદ્વિકસ્તમ્ ।

યો દેવાનાં ચરસિ પ્રાણથેન કસ્મૈ દેવ વષ્ટસ્તુ તુભ્યમ્ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે પત્ની રાણી ! ઉત્તાનાયા:-મહાન શુભ લક્ષણોના વિસ્તારથી યુક્ત તે-આપનું યત્-જે વિકસ્તમ્-અનેક પ્રકારની શિક્ષાથી સંપન્ન હૃદયમ્-અન્તઃકરણ છે, તેને યજ્ઞથી પવિત્ર થયેલો માતૃરિશ્વા-આકાશમાં વિચરણ કરનાર વાયુ:-પવન સમ્+દધાતુ-સારી રીતે પુષ્ટ કરે.

હે દેવ-સ્વામિન, ઉત્તમ સુખદાતા પતિ દેવ ! ય:-જે આપ વિદ્વાન પ્રાણથેન-સુખના હેતુ પ્રાણવાયુથી દેવાનામ્-ધર્માત્મા વિદ્વાનોના જે વિવિધ પ્રકારથી શિક્ષિત હૃદયને ચરસિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ તુભ્યમ્-આપને માટે મને વષ્ટ-ક્રિયાની કુશળતા અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૩૯)

ભાવાર્થ : પૂર્ણ યુવાન પુરુષ બ્રહ્મચારિણી સાથે વિવાહ કરે, તેના પ્રત્યે અપ્રિય આચરણ કદીપણ ન કરે. જે સ્ત્રી-કન્યા જે બ્રહ્મચારીની સાથે વિવાહ કરે, તેનું અનિષ્ટ મનમાં કદી પણ વિચારે નહિ.

આ રીતે બન્ને-સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રસન્ન બનીને પ્રીતિપૂર્વક ઘરનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરે.-સંભાળે. (૩૯)

સુજાતો જ્યોતિષા સહ શર્મ વસ્ત્રમાસદત્સ્વઃ ।

વાસોઽઅગ્ને વિશ્વરૂપઃ સંવ્યયસ્વ વિભાવસો ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિભાવસો-વિવિધ પ્રકાશયુક્ત ધનથી યુક્ત અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી, જ્યોતિષા-વિદ્યાપ્રકાશથી સહ-યુક્ત, સુજાતઃ-સુપ્રસિદ્ધ ગૃહસ્થ આપ સ્વઃ-સુખદાયક, વસ્થમ્-શ્રેષ્ઠ, શર્મ-ઘરમાં આસદત્-સારી રીતે રહો, વિશ્વસ્થમ્-વિવિધ સ્વરૂપવાળા વાસઃ-વસ્ત્રને સમ્+વ્યયસ્વ-ધારણ કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સુંદર વસ્ત્ર અને આભૂષણોથી શોભાયમાન બનીને ઘર આદિ વસ્તુઓને સદા પવિત્ર રાખે. (૪૦)

ઉદું તિષ્ઠ સ્વધ્વરાવા નો દેવ્યા ધિયા ।

દૃશે ચ ભાસા બૃહતા સુશુક્વનિરાગ્નેં યાહિ સુશસ્તિભિઃ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધ્વર-સજ્જન, વિદ્વાન, માનનીય વ્યવહાર કરનાર ગૃહસ્થ ! આપ નિરંતર ઉત્તિષ્ઠ-પુરુષાર્થ દ્વારા ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરીને અન્ય મનુષ્યોને સદા પ્રાપ્ત કરાવો. દેવ્યા-શુદ્ધ વિદ્યા અને શિક્ષાથી યુક્ત ધિયા-બુદ્ધિ વા ક્રિયાથી નઃ-અમારી અવ-રક્ષા કરો.

હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન ! સુશુક્વનિઃ-ઉત્તમ પવિત્ર પદાર્થોના વિભાગ કરનાર આપ ઉ-તર્કથી-વિચારપૂર્વક દૃશે-સુખને જોવા માટે બૃહતા-મહાન્ ભાસા-પ્રકાશરૂપ સૂર્ય સમાન સુશસ્તિભિઃ-સુંદર, પ્રશંસનીય ગુણોથી સર્વ વિદ્યાઓને આ, યાહિ-પ્રાપ્ત કરો, ચ-અને અમારા માટે પણ સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવો. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ પવિત્ર વિદ્યા અને બુદ્ધિના દાનથી સર્વની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. કારણ કે સુશિક્ષા વિના મનુષ્યોના સુખના માટે અન્ય કોઈ આશ્રય નથી. એથી આલસ્ય અને કપટ આદિ કુકર્મોનો ત્યાગ કરીને વિદ્યા પ્રચાર માટે સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૪૧)

ઋધ્વઽઋ ષુ ણઽઋતયે તિષ્ઠા દેવો ન સવિતા ।

ઋધ્વો વાજસ્ય સનિતા યદ્વિઙ્ગિર્વાઘદ્ધિર્વિહ્વામહે ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન અધ્યાપક ! આપ ઋધ્વઃ-ઉપર આકાશમાં વિદ્યમાન દેવઃ-પ્રકાશક સવિતા-સૂર્યની ન-સમાન નઃ-અમારી ઋતયે-રક્ષા આદિ માટે સુતિષ્ઠ-સુસ્થિર રહો.

યત્-જે આપ અઙ્ગિભિઃ-પ્રકટ કરનાર કિરણોની સમાન વાઘદ્ધિઃ-યુદ્ધ વિદ્યામાં કુશળ બુદ્ધિમાનોની સાથે વાજસ્ય-વિજ્ઞાનનું સનિતા-સેવન કરનાર બનો. ડ-તેને અમે વિહ્વામહે-વિશેષ કરીને બોલાવીએ છીએ-[કામના કરીએ છીએ.] (૪૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો-જેમ સૂર્ય, ભૂમિ અને ચન્દ્ર આદિની ઉપર સ્થિત થઈને પોતાની જ્યોતિષી સર્વની રક્ષા કરીને પ્રકાશ કરે છે, તેમ ઉત્કૃષ્ટ ગુણોથી વિદ્યા અને ન્યાયને પ્રકાશિત કરીને સર્વ પ્રજાને સુશોભિત કરે. (૪૨)

સ જાતો ગર્ભોઽસિ રોદસ્યોર્ગ્ને ચારુર્વિભૂતઽઓષધીષુ ।

ચિત્રઃ શિશુઃ પરિ તમાઽસ્યવક્તૂન્ પ્ર માતૃભ્યોઽઅધિ કનિક્રદદ્ ગાઃ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! જે આપ જેમ રોદસ્યોઃ-આકાશ અને પૃથિવીમાં જાતઃ-પ્રસિદ્ધ ચારુ-સુંદર ઓષધીષુ-સોમલતાદિ ઓષધિઓમાં વિભૂતઃ-વિશેષ રૂપમાં ધારણ અને પોષણ કરેલ ચિત્રઃ-આશ્ચર્યરૂપ ગર્ભઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય સૂર્ય છે, તે માતૃભ્યઃ-માનનીય માતા અર્થાત્ કિરણોથી તમાંસિ-રાત્રિરૂપ અવક્તૂન્-અંધકારને પર્યંધિકનિક્રદદ્-સર્વ તરફથી અધિક ગતિ કરતા ગાઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જ શિશુઃ-બાલ્યાવસ્થામાં ગાઃ-વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ બ્રહ્મચર્ય વગેરે શ્રેષ્ઠ નિયમોથી ઉત્પન્ન પુત્ર વિદ્યાઓ ભણીને માતા-પિતાને સુખી કરે છે, તેમ માતા-પિતાએ પણ પ્રજા-સંતાનોને સુખ આપવું જોઈએ. (૪૩)

સ્થિરો ભવ વીઙ્વજ્ઞઽઆશુર્ભવ વાજ્યર્વન્ ।

પૃથુર્ભવ સુષદસ્ત્વમ્ગ્નેઃ પુરીષવાહ્ણઃ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-વિજ્ઞાનવાન્ પુત્ર ! તું વિદ્યા ગ્રહણ કરવા માટે સ્થિરઃ દૃઢ-નિશ્ચલ ભવ-બન. વાજી-નીતિને પ્રાપ્ત થઈને, વીઙ્વજ્ઞ-દૃઢ અને અત્યંત બળવાન અવયવોથી યુક્ત આશુઃ-શીઘ્ર કાર્ય કરનાર ભવ-બન.

ત્વમ્-તું અગ્નેઃ-અગ્નિ સંબંધી સુષદઃ-ઉત્તમ વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન અને પુરીષવાહ્ણઃ-પાલન આદિ શુભ કર્મોને કરનાર પૃથુઃ-સુખનો વિસ્તાર કરનાર ભવ-બન. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે ઉત્તમ સંતાનો ! તમે બ્રહ્મચર્યથી શરીરના બળને તથા વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી આત્મ બળને પૂર્ણ દૃઢ કરીને સ્થિરતાથી તેની રક્ષા કરો.

આગ્નેય આદિ અસ્ર વિદ્યાથી શત્રુઓનો વિનાશ કરો. આ રીતે માતા-પિતા પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપે. (૪૪)

શિવો ભવ પ્રજાભ્યો માનુષીભ્યસ્ત્વમ્ઙ્ગિરઃ ।

મા દ્યાવાપૃથિવીઽઅભિ શૌંચીર્માન્તરિક્ષું મા વનસ્પતીન્ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ગિરઃ-પ્રાણોની સમાન પ્રિય સુસંતાન ! ત્વમ્-તું માનુષીભ્યઃ-મનુષ્ય આદિ પ્રજાભ્યઃ-પ્રસિદ્ધ પ્રજાઓ માટે શિવઃ-કલ્યાણકારી અને મંગલમય ભવ-બન.

દ્યાવાપૃથિવી-વિદ્યુત્ અને ભૂમિના વિષયમાં મા+અભિ+શૌંચીઃ-અતિ શોક ન કર. અન્તરિક્ષમ્-આકાશના વિષયમાં મા-શોક ન કર. વનસ્પતિન્-વડ આદિ વનસ્પતિઓનો મા-શોક ન કર. (૪૫)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ સંતાન પ્રજા પ્રત્યે મંગલ આચરણમાં રહીને-પૃથિવી આદિ પદાર્થોના વિષયોમાં શોકરહિત રહે, પરન્તુ એ પૃથિવી આદિની રક્ષા કરીને ઉપકાર માટે ઉત્સાહથી પ્રયત્ન કરે. (૪૫)

પ્રૈતુ વાજી કનિક્રદન્નાનદ્દ્રાસભઃ પત્વા । ભરન્નગ્નિં પુરીષ્ઠું મા પાઘ્યાયુષઃ
પુરા । વૃષાગ્નિં વૃષણં ભરન્નપાં ગર્ભઃ સમુદ્રિયમ્ । અગ્નઽઆયાહિ વીતયૈ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ઉત્તમ સંતાન વિદ્વાન ! તું કનિક્રદત્-ગતિ કરનાર, નાનદત્-અધિક શબ્દ કરનાર, રાસભઃ-દાન કરવા યોગ્ય, પત્વા-ગતિશીલ વા વાજી-ઘોડાની સમાન, આયુષઃ-નિયત વર્ષોના જીવનથી પુરા-પૂર્વે મા + પ્રૈતુ-મૃત્યુ ન પામે.

પુરીષ્ઠમ્-રક્ષાનાં સાધનોમાં શ્રેષ્ઠ અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને ભરન્-ધારણ કરીને મા પાદિ-આમ-તેમ ન જાઓ.

જેમ વૃષા-અતિ બલવાન, અપામ્-જલોના સમુદ્રિયમ્-સમુદ્રમાં થયેલ ગર્ભમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, વૃષણમ્-વર્ષા કરનાર, અગ્નિમ્-સૂર્યને ભરન્-ધારણ કરીને વીતયે-વિવિધ સુખોની વ્યાપ્તિ માટે આયાહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૪૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિષય-લોલુપતાના ત્યાગથી તથા બ્રહ્મચર્ય સેવનથી પૂર્ણ આયુને ધારણ કરીને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના વિજ્ઞાનથી ધર્મયુક્ત વ્યવહારને ઉન્નત કરે. (૪૬)

ઋતઃ સત્યમૃતઃ સત્યમગ્નિં પુરીષ્ઠમઙ્ગિરસ્વદ્ભ્રામઃ । ઓષધયઃ પ્રતિમોદધ્વમગ્નિ-
મેતઃ શિવમાયન્તમ્ભ્યત્ર યુષ્માઃ । વ્યસ્યન્ વિશ્વાઽઅનિરાઽઅમીવા નિષીદન્નોઽઅપ
દુર્મતિં જહિ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે સુસંતાનો ! જેમ અમે ઋત્તમ્-યથાર્થ, સત્યમ્-નાશરહિત, ઋત્તમ્-અવ્યભિચારી, સત્યમ્-સત્પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ તથા સત્ય માનવું, બોલવું અને કરનાર, પુરીષ્ઠમ્-રક્ષાના સાધનોમાં ઉત્તમ, અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને અઙ્ગિરસ્વત્-વાયુની સમાન ભ્રામઃ-ધારણ કરીએ છીએ. અને એતમ્-એ પૂર્વોક્ત આયન્તમ્-પ્રાપ્ત કરેલ, શિવમ્-મંગલકારી, અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને ધારણ-પ્રાપ્ત કરીને તમે પણ અભિમોદધ્વમ્-આનંદિત રહો. જે ઓષધયઃ-જવ આદિ ઔષધિ યુષ્માઃ-તમારા માટે પ્રતિ-પ્રાપ્ત થાય છે તેને અમે ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો.

હે વૈદ ! આપ વિશ્વાઃ-સર્વ અનિરાઃ-સર્વથા આપવા અયોગ્ય અમીવાઃ-એવા રોગોની પીડાઓને વ્યસ્યન્-વિવિધ પ્રકારથી દૂર કરીને, અત્ર-એ આયુર્વેદ વિદ્યામાં નિષીદન્-વિરાજમાન બનીને નઃ-અમારી દુર્મતિમ્-દુષ્ટ બુદ્ધિને અપજહિ-સર્વ રીતે દૂર કરો. આ રીતે એ વૈદની પ્રાર્થના કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો-પ્રથમ-ઋત સત્ય અર્થાત્ સૂક્ષ્મ, સત્ય કારણ બ્રહ્મને, બીજું-ઋત સત્ય અર્થાત્ અવ્યકત જીવને, સત્યાભાષણ આદિથી તથા પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન ઔષધિઓને જાણીને-

શરીરના જવર વગેરે રોગો તથા આત્માના અવિદ્યા આદિ રોગોને દૂર કરીને, માદક દ્રવ્યોના ત્યાગથી સુમતિને સંપાદન કરીને, સુખ પ્રાપ્ત કરીને નિત્ય આનંદમાં રહે. (૪૭)

ઓષધયઃ પ્રતિગૃભ્ણીત્ પુષ્પવતીઃ સુપિપ્પલાઃ ।

અયં વો ગર્ભઽઋત્વિયઃ પ્રત્નઃ સ્ધસ્થમાસદત્ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે જે ઓષધયઃ-સોમલતાદિ ઔષધિઓ છે, જેના દ્વારા અયમ્-એ ઋત્વિયઃ-સમ્યક્ ઋતુકાલને પ્રાપ્ત થયેલ ગર્ભઃ-ગર્ભ વઃ-તમારા પ્રત્નમ્-પ્રાચીન સ્ધસ્થમ્-નિયત સ્થાન-ગર્ભાશયને પ્રાપ્ત થાય તે પુષ્પવતીઃ-શ્રેષ્ઠ પુષ્પોવાળી સુપિપ્પલાઃ-સુંદર ફળોથી યુક્ત ઔષધિઓને પ્રતિગૃહ્ણીત-નિશ્ચયપૂર્વક ગ્રહણ કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : માતા-પિતા કન્યાઓને વ્યાકરણ આદિ ભણાવીને, વેદક શાસ્ત્રને પણ ભણાવે, જેથી તે આરોગ્યકારક ગર્ભને સંપાદન કરનારી ઔષધિઓને જાણીને, ઉત્તમ સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને સદા પ્રસન્ન રહે. (૪૮)

વિ પાજસા પૃથુના શોશુચાનો બાર્ધસ્વ દ્વિષો રક્ષસોઽમીવાઃ ।

સુશર્મણો બૃહતઃ શર્મણિ સ્યામગ્નેરહઃ સુહવસ્ય પ્રણીતૌ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે પતે ! જે આપ પૃથુના-વિસ્તૃત તથા વિ-વિવિધ પ્રકારના પાજસા-બલની સાથે શોશુચાનઃ-અતિ પવિત્ર બનીને સદા વર્તાવ કરો, અમીવાઃ-રોગોની સમાન પ્રાણીઓને પીડા આપનાર રક્ષસઃ-દુષ્ટ દ્વિષઃ-શત્રુરૂપ વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓને બાર્ધસ્વ-તાડના કરો તો હું બૃહતઃ-મહાન, સુશર્મણઃ-ઉત્તમ શોભાયમાન સુહવસ્ય-સુંદર લેવા-દેવાનો વ્યવહાર જેમાં હોય એવા અગ્નેઃ-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન આપના શર્મણિ-સુખકારક ઘરમાં અને પ્રણીતૌ-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત નીતિમાં અહમ્-આપની સ્ત્રી સ્યામ-બનું. (૪૯)

ભાવાર્થ : વિવાહના સમયે પુરુષ અને સ્ત્રી વ્યભિચાર ત્યાગની પ્રતિજ્ઞા કરીને, વ્યભિચારિણી સ્ત્રી અને લંપટ પુરુષનો સર્વથા સંગ છોડીને, પરસ્પર પણ અતિ વિષયાશક્તિનો પરિત્યાગ કરીને, ઋતુગામી બનીને પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક બળવાન સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે.

વ્યભિચારની સમાન સ્ત્રી અને પુરુષ માટે અનિષ્ટકારી, આયુનાશક અને અપયશકારક બીજું કોઈ કર્મ નથી. માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરીને ધર્માચારી બનીને દીર્ઘાયુ પ્રાપ્ત કરે. (૪૯)

આપો હિ ષ્ઠા મયોભુવસ્તા ન્ઽઋર્જે દધાતન । મહે રણાય ચક્ષસે ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે આપઃ-જળથી સમાન શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનારી શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! જે તમે મયોભુવઃ-સુખને ભોગવનારી સ્થ-છો, તાઃ-તે તમે ઋર્જે-બલયુક્ત પરાક્રમ અને મહે-મહાન ચક્ષસે-ખ્યાતિને યોગ્ય રણાય-સંગ્રામ માટે નઃ-અમને હિ-નિશ્ચય કરીને દધાતન-ધારણ કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ પતિ પોતાની સ્ત્રીઓને સદા સુખી રાખે. એ પતિ યુદ્ધકર્મમાં પણ તેનાથી અલગ ન રહે અર્થાત્ બન્ને સદા સાથે રહે. (૫૦)

યો વઃ શિવતમો રસસ્તસ્ય ભાજયતેહ નઃ । ઉશતીરિવ માતરઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! વઃ-તમારા અને નઃ-અમારા ઇહ-ગૃહાશ્રમમાં યઃ-જે શિવતમઃ-અત્યંત સુખકારી

સ્સ:-કર્તવ્ય આનંદ છે, તસ્ય-તેનો માતર: + ઝ્શતીરિવ-જેમ કામના કરતી માતા પોતાના પુત્રોનું સેવન કરે છે, તેમ ભાજયત-સેવન કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓએ જેમ માતા-પિતા પોતાના પુત્રોની સેવા કરે છે, તેમ પોતાના પતિની પ્રીતિપૂર્વક સેવા કરવી જોઈએ.

જેમ તૃષાતુરને જલ તૃપ્ત કરે છે, તેમ સુશીલતાપૂર્વક આનંદથી સ્ત્રી-પુરુષ તૃપ્ત રહે. (૫૧)

તસ્માઽઅરં ગમામ વો યસ્ય ક્ષયાય જિન્વથ । આપો જનયથા ચ નઃ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે આપ:-જલોની સમાન શાન્ત સ્વભાવથી વિદ્યમાન સ્ત્રીઓ ! જે તમે ન:-અમને ક્ષયાય-નિવાસ સ્થાન માટે જિન્વથ-તૃપ્ત ચ-અને જનયથ-ઉત્તમ સંતાન ઉત્પન્ન કરો, તે વ:-તમને અમે અસ્-સામર્થ્યની સાથે ગમામ-પ્રાપ્ત કરીએ. યસ્ય-જે ધર્મયુક્ત વ્યવહારની પ્રતિજ્ઞા કરો, તેનું પાલન કરનારી બનો અને અમે પણ તેનું પાલન કરનારા બનીએ. (૫૨)

ભાવાર્થ : પુરુષ જે સ્ત્રીનો પતિ હોય અને જે પુરુષની જે સ્ત્રી હોય, તે પુરુષ અને સ્ત્રી પરસ્પર કદીપણ અનિષ્ટ કરે નહિ.

આ રીતે સુખ વિસ્તારથી અલંકૃત બનીને ધર્મપૂર્વક ગૃહકાર્ય કરો. (૫૨)

મિત્રઃ સંસૃજ્ય પૃથિવીં ભૂમિં ચ જ્યોતિષા સહ ।

સુજાતં જાતવેદસમયક્ષમાય ત્વા સંસૃજામિ પ્રજાભ્યઃ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે પતે ! જે આપ મિત્ર:-સર્વના મિત્ર બનીને પ્રજાભ્ય:-પાલન કરવા યોગ્ય પ્રજાના અયક્ષમાય-આરોગ્ય માટે જ્યોતિષા-વિદ્યા, ન્યાય અને સુશિક્ષાના પ્રકાશની સહ-સાથે પૃથિવીમ્-અન્તરિક્ષ ચ અને ભૂમિમ્-પૃથિવીની સાથે સંસૃજ્ય-સંબંધ કરીને મને સુખ આપો છો, તે સુજાતમ્-અતિ પ્રસિદ્ધ જાતવેદસમ્-વેદને જાણનાર ત્વા-આપને હું સંસૃજામિ-તે કાર્ય માટે તૈયાર કરું છું. (૫૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ ઉત્તમ ગુણોયુક્ત વિદ્વાનોના સંગથી શ્રેષ્ઠ આચાર ગ્રહણ કરીને, શરીર અને આત્માના આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ પ્રજાની ઉત્પત્તિ કરવી જોઈએ. (૫૩)

રુદ્રાઃ સંસૃજ્ય પૃથિવીં બૃહજ્જ્યોતિઃ સમીધિરે ।

તેષાં ભાનુરજસ્રઽઙ્ચુક્રો દેવેષુ રોચતે ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! ઇત્-જેમ સ્ત્રા:-પ્રાણવાયુના અવયવરૂપ સમાનાદિ વાયુ સંસૃજ્ય-સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને પૃથિવીમ્-ભૂમિને બૃહત્-મહાન જ્યોતિઃ-પ્રકાશને સમીધિરે-પ્રકાશિત કરે છે, તેષામ્-તેનાથી ઉત્પન્ન થયેલ શુક્ર:-કાન્તિમાન ભાનુ:-સૂર્ય દેવેષુ-દિવ્ય પૃથિવી આદિમાં અજસ્ર:-નિરંતર રોચતે-પ્રકાશ કરે છે, તેમ વિદ્યારૂપી ન્યાય સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને પ્રજાજનોને પ્રકાશિત અને તેનાથી પ્રજાઓમાં દિવ્ય સુખોનો પ્રચાર કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સૂર્યનું, સૂર્ય પ્રકાશનું, પ્રકાશ નેત્રથી જોવાના વ્યવહારનું કારણ છે, તેમ સ્ત્રી-

પુરુષ પરસ્પરના સુખનાં સાધનો-ઉપસાધનો બનાવીને સુખોને સિદ્ધ કરે. (૫૪)

સંસૃષ્ટાં વસુભી રુદ્રૈર્ધીરૈઃ કર્મણ્યાં મૃદમ્ ।

હસ્તાભ્યાં મૃદ્વીં કૃત્વા સિનીવાલી કૃણોતુ તામ્ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે પતે ! આપ જેમ શિલ્પીજનો હસ્તાભ્યામ્-હાથોની કર્મણ્યામ્-ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલી મૃદમ્-માટીને ઘાટ આપે છે, તેમ ધીરૈઃ-અતિ સંયમી, વસુભિઃ-જે ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરનાર, સ્ત્રૈઃ-અને જેણે ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને વિદ્યાબળને પૂર્ણ કરેલ છે, તેના દ્વારા સંસૃષ્ટામ્-ઉત્તમ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરેલ બ્રહ્મચારિણી યુવતીને મૃદ્વીમ્-મૃદુ ગુણ અને સ્વભાવયુક્ત કૃણોતુ-બનાવો. અને જે સ્ત્રી સિનીવાલી-પ્રેમબદ્ધ કન્યાઓને બળવાન કરનારી છે, તામ્ તેને પોતાની સ્ત્રી કૃત્વા-બનાવીને સુખી કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : જેમ કુંભાર વગેરે શિલ્પીઓ-કારીગરો જલથી માટીને કોમળ બનાવીને, તેનાથી ઉત્પન્ન ઘડા વગેરે બનાવીને સુખના કાર્યો સિદ્ધ કરે છે.

એ રીતે વિદ્વાન માતા-પિતા દ્વારા શિક્ષિત, પ્રિય કન્યાઓને બ્રહ્મચારીઓ વિવાહ માટે ગ્રહણ કરીને ગૃહાશ્રમનાં સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરે. (૫૫)

સિનીવાલી સુકપર્દા સુકુરીરા સ્વૌપશા ।

સા તુભ્યમદિતે મહ્યોઽસ્ત્રાં દધાતુ હસ્તયોઃ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે મહિ-સત્યકારને યોગ્ય અદિતે-અખંડિત આનંદ ભોગવનારી સ્ત્રી ! જે સિનીવાલી-પ્રેમથી યુક્ત સુકપર્દા-ઉત્તમ કેશયુક્ત, સુકુરીરા-સુંદર શ્રેષ્ઠ કર્મોને કરનારી, સ્વૌપશા-ઉત્તમ સ્વાદિષ્ટ ભોજન બનાવનારી, જે તુભ્યમ્-તારા માટે હસ્તયોઃ-હાથોમાં ઝલામ્-દાળ વગેરે બનવવાનું સાધન તાંબડી દધાતુ-ધારણ કરે સા-તેનું તું સેવન કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ સુશિક્ષિત, ચતુર સેવિકાઓને રાખે. જેથી રસોઈ આદિથી સંબંધિત સર્વ કાર્ય યથાસમય થતું રહે. (૫૬)

ઝલાં કૃણોતુ શક્ત્યાં બાહુભ્યામદિતિર્ધિયા ।

માતા પુત્રં યથોપસ્થે સાગ્નિં વિભર્તુ ગર્ભઽઆ । મુખસ્ય શિરોઽસિ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ પુરુષ ! જે કારણથી તું મુખસ્ય-યજ્ઞના શિરઃ-શિર સમાન અસિ-છે, તે કારણે આપ ધિયા-જ્ઞાન વા કર્મથી શક્ત્યા-પાક વિદ્યાના સામર્થ્ય અને બાહુભ્યામ્-બન્ને ભુજાઓથી ઝલામ્-પકાવવાની તાંબડીને કૃણોતુ-સિદ્ધ કરો-નિર્માણ કરો.

જે અદિતિઃ-પુત્ર ઉત્પન્ન કરનારી જનની તારી સ્ત્રી છે સા-તે ગર્ભે-પોતાની કૂખમાં, યથા-જેમ માતા-માતા ઉપસ્થે-પોતાના ખોળામાં પુત્રમ્-પુત્રને સુખપૂર્વક બેસાડે છે, તેમ અગ્નિમ્-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વીર્યને આભિર્ભર્તુ-ધારણ કરે, (૫૭)

ભાવાર્થ : કુંવારી કન્યા અને કુમાર વર બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા પૂર્ણ કરીને, બલ, બુદ્ધિ તથા પરાક્રમથી યુક્ત સંતાનોને ઉત્પન્ન કરવા માટે વિવાહ કરીને, વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી, મહાન ઔષધિઓથી પાક બનાવીને;

વિધિપૂર્વક ગર્ભાધાન કરીને, પછી પથ્યનું પાલન કરે, પરસ્પર મિત્રતાથી રહીને, બાળકોના ગર્ભાધાન આદિ કર્મ કરે. (૫૭)

વસવસ્ત્વા કૃણવન્તુ ગાયત્રેણ છન્દસાઽઙ્ગિરસ્વદ્ધ્રુવાસિ પૃથિવ્યસિ ધારયા મયિ પ્રજાઽંરાયસ્પોષં ગૌપત્યઃ સુવીર્યઃ સજાતાન્યર્જમાનાય રુદ્રાસ્ત્વા કૃણવન્તુ ત્રૈષ્ટુભેન છન્દસાઽઙ્ગિરસ્વદ્ધ્રુવાસ્યન્તરિક્ષમસિ ધારયા મયિ પ્રાજઽંરાયસ્પોષં ગૌપત્યઃ સુવીર્યઃ સજાતાન્યર્જમાનાયાઽઽદિત્યાસ્ત્વા કૃણવન્તુ જાગતેન છન્દસાઽઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવાસિ દ્યૌરસિ ધારયા મયિ પ્રજાઽં રાયસ્પોષં ગૌપત્યઃ સુવીર્યઃ સજાતાન્યર્જમાનાય વિશ્વે ત્વા દેવા વૈશ્વાનરાઃ કૃણવન્ત્વાનુષ્ટુભેન છન્દસાઽઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવાસિ દિશોઽસિ ધારયા મયિ પ્રજાઽં રાયસ્પોષં ગૌપત્યઃ સુવીર્યઃ સજાતાન્યર્જમાનાય ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કુમારી સ્ત્રી ! જે તું અઙ્ગિરસ્વત્-ધનંજય પ્રાણની સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ અસિ-છે. અને તું પૃથિવ્યસિ-વિસ્તૃત સુખ કરનારી અસિ-છે. તે ત્વા-તને ગાયત્રેણ-વેદમાં વિધાન કરેલ છન્દસા-ગાયત્રી આદિ છંદોથી વસવઃ-ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચારી રહેનાર વિદ્વાન મારી સ્ત્રી કૃણવન્તુ-બનાવે.

હે કુમાર બ્રહ્મચારી પુરુષ ! જે તું અઙ્ગિરસ્વત્-પ્રાણવાયુની સમાન ધ્રુવઃ-નિશ્ચલ છે અને પૃથિવી-પૃથિવીની સમાન ક્ષમાશીલ અસિ-છે. તે ત્વા-તને વસવઃ-ઉક્ત વસુ નામક વિદ્વાન ગાયત્રેણ-વેદમાં પ્રતિપાદિત છન્દસા-ગાયત્રી આદિ છંદોથી મારા પતિ કૃણવન્તુ-બનાવે. તે તું મયિ-તારાથી પ્રસન્ન મારી પત્નીમાં પ્રજામ્-સુંદર સંતાનો, રાયઃ-ધનની પોષમ્-પુષ્ટિને ગૌપત્યમ્-ગૌ અર્થાત્ ગાય, પૃથિવી અથવા વાણીના પતિ ભાવને, સુવીર્યમ્-સુંદર પરાક્રમને ધારય-સ્થાપિત કર. હું અને તું બન્ને સજાતાન્-એક ગર્ભાશયથી ઉત્પન્ન સર્વ સંતાનોને યજમાનાય-વિદ્યાના દાતા આચાર્યને વિદ્યા ગ્રહણ માટે સમર્પિત કરીએ.

હે સ્ત્રી ! જે તું અઙ્ગિરસ્વત્-આકાશની સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચય અસિ-છે અને અન્તરિક્ષમ્-અવિનાશી-અક્ષય પ્રેમથી યુક્ત અસિ-છે, તે ત્વા-તને રુદ્રાઃ-રુદ્ર નામક વિદ્વાન ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર વિદ્વાન ત્રૈષ્ટુભેન-વેદમાં કહેલ છન્દસા-ત્રિષ્ટુપ છંદથી મારી સ્ત્રી કૃણવન્તુ-બનાવે.

હે વીર પુરુષ ! જે તું આકાશ સમાન નિશ્ચલ છે અને દેવ પ્રેમથી યુક્ત છે, તે તને ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર વિદ્વાન વેદમાં પ્રતિપાદિત ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી મારો સ્વામી બનાવે. તે તું મયિ- મારી પ્રિય પત્નીમાં પ્રજામ્-સત્ય, બલ અને ધર્મથી યુક્ત સંતાનોને, રાયઃ-રાજ્યલક્ષ્મીની પોષમ્-પુષ્ટિને ગૌપત્યમ્-અધ્યાપક ભાવને તથા સુવીર્યમ્-ઉત્તમ પરાક્રમને ધારય-ધારણ કર, હું-તું-બન્ને

સજાતાન્-એક ઉદરથી ઉત્પન્ન સર્વ સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને, વેદવિદ્યાના અધ્યયન માટે યજમાનાય-અંગ-ઉપાંગો સહિત વેદને ભણાવનાર અધ્યાપકને પ્રદાન કરીએ.

હે વિદુષી સ્ત્રી ! જે તું અઙ્ગિસ્સ્વત્-આકાશની સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ અસિ-છે, ઘૌઃ-સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન અસિ-છે, તે ત્વા-તને આદિત્યાઃ-અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરીને પૂર્ણ વિદ્યા અને બલની પ્રાપ્તિથી યુક્ત આપ્ત, સત્યવાદી, ધર્માત્મા વિદ્વાન જાગતેન-વેદમાં કહેલ છન્દસા-જગતી છંદથી મારી પત્ની કૃણ્વન્તુ-કરે.

હે વિદ્વાન પુરુષ ! જે તું આકાશ સમાન દૃઢ અને સૂર્ય સમાન તેજસ્વી છે, તે તને અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત, ધર્માત્મા વિદ્વાન વેદોક્ત જગતી છંદથી મારા પતિ બનાવે. તે તું મયિ-મારી પ્રિય પત્નીમાં પ્રજામ્-શુભ ગુણોથી યુક્ત સંતાનોને રાયઃ-ચક્રવર્તી રાજ્યલક્ષ્મીને પોષમ્-પુષ્ટિને, ગૌપત્યમ્-સકલ વિદ્યાના અધિપતિ-ભાવને તથા સુવીર્યમ્-સુંદર પરાક્રમને ધારય-ધારણ કર. હું-તું-બન્ને સજાતાન્-પોતાના સંતાનોને જન્મથી ઉત્તમ ઉપદેશ આપીને સર્વ વિદ્યાઓને ગ્રહણ કરવા માટે યજમાનાય-ક્રિયા-કૌશલ સહિત સર્વ વિદ્યાના પ્રવક્તા-આચાર્યને સોંપીએ.

હે સુંદર ઐશ્વર્યયુક્ત પત્ની ! જે તું અઙ્ગિસ્સ્વત્-સૂક્ષ્મ પ્રાણવાયુ સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ અસિ-છે અને દિશઃ-સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિવાળી અસિ-છે. તે તને વૈશ્વાનરાઃ-સર્વ મનુષ્યોમાં શોભાયમાન વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-ઉપદેશક વિદ્વાનો આનુષ્ટુભેન-વેદમાં કહેલ છન્દસા-અનુષ્ટુપ્ છંદથી મારા આધીન કૃણ્વન્તુ-કરે.

હે પુરુષ ! જે તું સૂક્ષ્મ વાયુની સમાન સ્થિત છે, દિશઃ-સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિમાન અસિ-છે, જે ત્વા-તને સર્વ પ્રજાઓમાં શોભાયમાન, સર્વ વિદ્વાન મારા આધિન કરે, તે આપ મયિ-મારામાં પ્રજામ્-શુભ લક્ષણ યુક્ત સંતાનોને રાયઃ-સર્વ ઐશ્વર્યની પોષમ્-પુષ્ટિને ગૌપત્યમ્-વાણીની ચતુરાઈને તથા સુવીર્યમ્-સુંદર પરાક્રમને ધારય-ધારણ કર. હું-તું-બન્ને ઉત્તમ ઉપદેશ માટે સજાતાન્-આપણાં સંતાનોને યજમાનાય-સત્યના ઉપદેશક અધ્યાપકની સમીપ સમર્પણ કરીએ. (૫૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પરીક્ષા કરીને એક-બીજ દૃઢ પ્રીતિ યુક્ત બને, ત્યારે વેદ વિધિ અનુસાર યજ્ઞ કરીને, વેદોક્ત નિયમોનો સ્વીકાર કરીને વિવાહ કરે. તથા સંતાન ઉત્પન્ન કરે.

જ્યાં સુધી પુત્ર-પુત્રીઓ આઠ વર્ષ સુધીના થાય ત્યાં સુધી માતા-પિતા તેને ઉત્તમ શિક્ષા આપે. ત્યાર પછી બ્રહ્મચર્ય વ્રત ધારણ કરાવી, વિદ્યા અધ્યયન માટે પોતાના ઘરથી અતિ દૂર આપ્ત વિદ્વાનો અને વિદુષીઓની પાઠશાળામાં મોકલે.

આ કાર્યમાં જેટલું ધન વ્યય કરવા યોગ્ય હોય તેટલું ખર્ચ કરે, સંતાનોને વિદ્યા દાનથી અધિક બીજો કોઈ ઉપકાર અને ધર્મ નથી. માટે તેનું નિરંતર અનુષ્ઠાન કર્યા કરે. (૫૮)

અદિત્યૈ રાસ્નાસ્યદિતિષ્ટે બિલં ગૃભ્નાતુ । કૃત્વાય સા મ્હીમુખાં મૃન્મયીં યોનિમ્ગનયૈ । પુત્રેભ્યઃ પ્રાર્યચ્છદદિતિઃ શ્રુપયાનિતિ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપિકા વિદુષી ! જે કારણે તું અદિત્યૈ-વિદ્યાપ્રકાશ માટે રાસ્ના-દાનશીલ અસિ-છે. તેથી તે-તારી પાસેથી બિલમ્-બ્રહ્મચર્યને ધારણ કૃત્વાય-કરીને અદિતિઃ-પુત્ર અને કન્યા વિદ્યાઓને

ગૃહ્ણાતુ-ગ્રહણ કરે.

તે સા-તું અદિતિ:-માતા મૃન્મયીમ્-માટીની બનેલી યોનિમ્-પદાર્થોને મિશ્ર કરનારી મહીમ્-મોટી ઉઝામ્-પાકસ્થાલી-તાંબડીને અગ્નયે-અગ્નિ પર સ્થાપિત કરવા માટે પુત્રેભ્ય:-સંતાનોને પ્રાયચ્છત્-પ્રદાન કરે. તેઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત બનીને ઉઝામ્-તાંબડીમાં ઇતિ-એવી રીતે શ્રપયાન્-અન્ન આદિ પદાર્થો પકાવે . (૫૯)

ભાવાર્થ : કુમાર પુરુષોની પાઠશાળામાં અને કન્યાઓ સ્ત્રીઓની પાઠશાળામાં જઈને, બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરીને સુશીલતાથી વિદ્યાઓ અને પાક વિધિને શીખે-ગ્રહણ કરે, આહાર-વિહારોનું પણ નિયમાનુસાર સેવન કરે,

વિષયોની કથા કદી સાંભળે પણ નહિ, મદ્ય, માંસ આળસ અને અતિનિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, અધ્યાપકોની સેવા અને અનુકૂળતા અનુસાર વર્તાવ કરીને ઉત્તમ વ્રતોને ધારણ કરે. (૫૯)

વસવસ્ત્વા ધૂપયન્તુ ગાયત્રેણ છન્દસાઙ્ગિસ્વદ્ રુદ્રાસ્ત્વા ધૂપયન્તુ ત્રૈષ્ટુભેનુ
છન્દસાઙ્ગિસ્વદાદિત્યાસ્ત્વા ધૂપયન્તુ જાગતેનુ છન્દસાઙ્ગિસ્વદ્ વિશ્વે ત્વા દેવા
વૈશ્વાનરા ધૂપયન્ત્વાનુષ્ટુભેનુ છન્દસાઙ્ગિસ્વદિન્દ્રસ્ત્વા ધૂપયતુ વરુણસ્ત્વા ધૂપયતુ
વિષ્ણુસ્ત્વા ધૂપયતુ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારી વા બ્રહ્મચારિણી ! જે વસવ:-વસુ નામક પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન છે, તે ગાયત્રેણ-છન્દસા-વેદના ગાયત્રી છંદથી ત્વા-તને અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણોની સમાન સુગંધિત અન્નાદિ સમાન ધૂપયન્તુ-સંસ્કારયુક્ત-શુદ્ધ કરે.

સ્દા:-જે મધ્યમ કોટિના રુદ્ર નામક વિદ્વાન છે, તે ત્રૈષ્ટુભેન-છન્દસા-વેદોક્ત ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી અઙ્ગિસ્વત્-વિજ્ઞાનની સમાન ત્વા-તારો ધૂપયન્તુ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સંસ્કાર-શુદ્ધ કરે.

આદિત્યા:-સર્વોત્તમ અધ્યાપક વિદ્વાન જાગતેન-છન્દસા-વેદોક્ત જગતી છંદથી અઙ્ગિસ્વત્-બ્રહ્માંડના શુદ્ધ વાયુની સમાન ત્વા-તારો ધૂપયન્તુ-ધર્મયુક્ત વ્યવહારના ગ્રહણથી સંસ્કાર કરે.

વૈશ્વાનરા:-સર્વ મનુષ્યોમાં સત્ય, ધર્મ અને વિદ્યાનો પ્રકાશ કરનાર વિશ્વે-સર્વ દેવા:-સત્યના ઉપદેશક વિદ્વાન આનુષ્ટુભેન-વેદોક્ત અનુષ્ટુપ્ છન્દસા-છંદથી અઙ્ગિસ્વત્-વિદ્યુત્ની સમાન ત્વા-તારો ધૂપયન્તુ-સત્યોપદેશથી સંસ્કાર કરે.

ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા ત્વા-તારો ધૂપયતુ-રાજનીતિ વિદ્યાથી સંસ્કાર કરે.

વસુન્ઠ:-શ્રેષ્ઠ ન્યાયાધીશ ત્વા-તારો ધૂપયતુ-ન્યાયક્રિયાથી સંયુક્ત કરે.

વિષ્ણુ:-સકલ વિદ્યા અને યોગાંગોનું આચરણ કરનાર યોગીરાજ ત્વા-તને ધૂપયતુ-યોગવિદ્યાથી સંસ્કારયુક્ત કરે. તું એ સર્વની સેવા કર્યા કર. (૬૦)

ભાવાર્થ : સર્વ અધ્યાપક અને સંપૂર્ણ અધ્યાપિકા સર્વ ઉત્તમ ક્રિયાઓથી બ્રહ્મચારીઓ અને બ્રહ્મચારિણીઓને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી શીઘ્ર યુક્ત કરે.

જેથી તેઓ બ્રહ્મચર્ય પૂર્ણ કરીને, યથા સમય ગૃહાશ્રમ આદિનું સેવન કરે. (૬૦)

અદિતિષ્ટ્વા દેવી વિશ્વદેવ્યાવતી પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વત્ ખનત્વવત દેવાનાં ત્વા પત્નીદેવીવિશ્વદેવ્યાવતીઃ પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વદ્ધતૂખે ધિષણાસ્ત્વા દેવીવિશ્વદેવ્યાવતીઃ પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વદ્ધ્મીન્ધતામુખે વરૂત્રીષ્ટ્વા દેવીવિશ્વદેવ્યાવતીઃ પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વચ્છ્રપયન્તૂખે ગ્નાસ્ત્વા દેવીવિશ્વદેવ્યાવતીઃ પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વત્પચન્તૂખે જનયસ્ત્વાઽછિન્નપત્રા દેવીવિશ્વદેવ્યાવતીઃ પૃથિવ્યાઃ સ્ધસ્થૈઽઅઙ્ગિરસ્વત્પચન્તૂખે ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : હે અવત-અવગુણ અને નિદારહિત [અકથનીય આનંદયુક્ત.] બાળક ! વિશ્વદેવ્યાવતી-સર્વ વિદ્વાનોમાં પ્રશસ્ત જ્ઞાનવાણી, અદિતિઃ-અખંડ વિદ્યા ભણાવનારી, દેવી-વિદુષી સ્ત્રી, પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના સધસ્થે-એક શુભ સ્થાનમાં ત્વા-તને અઙ્ગિરસ્વત્-અગ્નિની સમાન ખનતુ-જેમ ભૂમિને ખોદીને જલ પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્યાયુક્ત કરે.

હે ઉખે-જ્ઞાનયુક્ત કન્યા ! દેવાનામ્-વિદ્વાનોની પત્નીઃ-સ્ત્રી જે વિશ્વદેવ્યાવતીઃ-સંપૂર્ણ વિદ્વાનોમાં અધિક વિદ્યાયુક્ત દેવીઃ-વિદુષી છે. પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના સધસ્થે-એક સ્થાનમાં અઙ્ગિરસ્વત્-પ્રાણની સમાન ત્વા-તને દધતુ-ધારણ કરે.

હે ઉખે-વિજ્ઞાનની ઈચ્છુક કન્યા વિશ્વદેવ્યાવતીઃ-સર્વ વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ ધિષણાઃ-પ્રશંસિત વાણીયુક્ત બુદ્ધિમતી દેવીઃ-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના સધસ્થે-એક સ્થાનમાં ત્વા-તને અઙ્ગિરસ્વત્-પ્રાણની સમાન અમીન્ધતામ્-પ્રદીપ્ત કરે.

હે ઉખે-અન્ન આદિ પકાવવાની તાંબડી સમાન વિદ્યાને ધારણ કરનારી કન્યા ! વિશ્વદેવ્યાવતીઃ-ઉત્તમ વિદુષી વસ્ત્રીઃ-વિદ્યા ગ્રહણ માટે સ્વીકાર કરવા યોગ્ય દેવીઃ-રૂપવતી સ્ત્રી પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના સધસ્થે-એક શુદ્ધ સ્થાનમાં ત્વા-તને અઙ્ગિરસ્વત્-સૂર્યની સમાન શ્રપયન્તુ-શુદ્ધ તેજસ્વિની કરે.

હે ઉખે-જ્ઞાનની ઈચ્છુક કન્યા ! વિશ્વદેવ્યાવતીઃ સર્વ વિદ્યાવાનોમાં ઉત્તમ દેવીઃ-શુદ્ધવિદ્યાથી યુક્ત ગ્નાઃ-વેદવાણીની જ્ઞાતા સ્ત્રી પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના એક સધસ્થે-ઉત્તમ સ્થાનમાં ત્વા-તને અઙ્ગિરસ્વત્-વિદ્યુત્ની સમાન પચન્તુ-દેઠ બલધારિણી કરે.

હે ઉખે-જ્ઞાન જિજ્ઞાસુ કુમારી ! વિશ્વદેવ્યાવતીઃ ઉત્તમ વિદ્યા ભણેલી અચ્છિન્નપત્રાઃ-અખંડિત નવીન શુદ્ધ વસ્ત્રોને ધારણ કરનાર તથા યાનોમાં જનારી જનયઃ-શુભગુણોથી પ્રસિદ્ધ દેવીઃ-દિવ્યગુણોને આપનારી સ્ત્રી પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના સધસ્થે-ઉત્તમ પ્રદેશમાં ત્વા-તને અઙ્ગિરસ્વત્-ઔષધિઓના રસની સમાન પચન્તુ-સંસ્કાર યુક્ત કરે.

હે કુમારી કન્યે ! તું એ પૂર્વોક્ત સર્વ સ્ત્રીઓથી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા ગ્રહણ કર. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેમ નિપુણ રસોયા દ્વારા તાંબડી-પાત્ર આદિમાં અન્નાદિ સંસ્કૃત કરીને શ્રેષ્ઠ બનાવવામાં

આવે છે તેમ, માતા-પિતા, આચાર્ય અને અતિથિઓ કુમાર અને કુમારિકાઓને તેની બાલ્યાવસ્થાથી લઈને વિવાહથી પૂર્વ સુધી ઉત્તમ બનાવે. (૬૧)

મિત્રસ્ય ચર્ષણીઘૃતોઽવો દેવસ્ય સાનસિ । દ્યુમ્નં ચિત્રશ્રવસ્તમમ્ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું ચર્ષણીઘૃતઃ-સુશિક્ષાથી મનુષ્યોને ધારણ કરનાર મિત્રસ્ય-મિત્ર દેવસ્ય-કામના યોગ્ય પતિના ચિત્રશ્રવસ્તમમ્-ચિત્ર = આશ્ચર્ય રૂપ અન્નાદિ પદાર્થના હેતુ સાનસિ-સેવન કરવા યોગ્ય પ્રાચીન-જૂના દ્યુમ્નમ્-ધનની અવઃ-રક્ષા કર. (૬૨)

ભાવાર્થ : ગૃહકાર્યોમાં કુશળ સ્ત્રી સર્વ આન્તરિક ગૃહકાર્યોને સ્વાધીન રાખીને તેને યથાવત્ ઉન્નત કરે. (૬૨)

દેવસ્ત્વા સવિતોઽપતુ સુપાણિઃ સ્વઙ્ગુરિઃ સુબાહુરુત શક્ત્યા ।

અવ્યથમાના પૃથિવ્યામાણા દિશ્ઽઆપૃણ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! સુબાહુઃ-સુંદર ભુજાઓયુક્ત, સુપાણિઃ-સુંદર હાથયુક્ત, સ્વઙ્ગુરિઃ-સુંદર આંગળીઓ યુક્ત, સવિતા-સૂર્ય સમાન ઐશ્વર્યદાતા, દેવઃ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, અને સ્વભાવયુક્ત પતિ છે, તે શક્ત્યા-પોતાના સામર્થ્યથી પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર સ્થિર કરીને ત્વા-તને ઝઢપતુ-વૃદ્ધિની સાથે ગર્ભવતી કરે. ઝત-અને તું પણ પોતાના સામર્થ્યથી અવ્યથમાના-નિર્ભય બનીને પતિના સેવનથી પોતાની આણાઃ-ઈચ્છા અને કીર્તિથી સર્વ દિશઃ-દિશાઓને આપૃણ-પૂર્ણ કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રેમયુક્ત, હૃદયને રુચિકર, સુપરીક્ષિત બનીને, પોતાની ઈચ્છાનુસાર સ્વયંવર વિધિથી વિવાહ કરીને, અતિ વિષયાસક્તિનો ત્યાગ કરીને, ઋતુગામી બનીને, પોતાના સામર્થ્ય-બલની હાનિ કદી પણ ન કરે.

કારણ કે જિતેન્દ્રિય સ્ત્રી-પુરુષોમાં રોગોની ઉત્પત્તિ અને તેના બલની હાનિ થતી નથી. તેથી તેઓ એ સંયમનું પાલન કરતા રહે. (૬૩)

ઝથાયઃ બૃહતી ભવોદુઃ તિષ્ઠ ધ્રુવા ત્વમ્ ।

મિત્રૈતાં તઽઝુઝાં પરિદદામ્યભિત્યાઽણ્ણ મા ભેદિ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી કન્યા ! ત્વમ્-તું ધ્રુવા-મંગલકાર્યોમાં નિશ્ચલ બુદ્ધિયુક્ત, બૃહતી-મહાન પુરુષાર્થયુક્ત, ભવ-બન. વિવાહ કરવા માટે ઝત્તિષ્ઠ-પ્રયત્ન કર. ઝથાય-આલસ્ય ત્યાગીને એ પતિનો સ્વીકાર કર.

હે મિત્ર-સુહૃદ્પતિ ! તે-તારા માટે ણ્ણ-એ ઝથામ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય કન્યાને અભિત્યૈ-નિર્ભયતા માટે પરિદદામિ-સર્વ પ્રકારે પ્રદાન કરું છું. ઝ-તેથી તું ણ્ણ-એ પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત થયેલી સ્ત્રીને મા ભેદિ-ભિન્ન કર નહિ. (૬૪)

ભાવાર્થ : કન્યા અને વર ક્રમશઃ પોતાને પ્રિય પુરુષ અને પોતાને પ્રિય કન્યાને સ્વયં પરીક્ષા કરીને

તેનો સ્વીકાર કરવાની ઈચ્છા કરે.

જ્યારે બન્નેના વિવાહ કરવાનો નિશ્ચય થાય, ત્યારે માતા, પિતા, આચાર્ય આદિ તે બન્નેના વિવાહ કરે.

તેઓ બન્ને પરસ્પર ભેદભાવ અને વ્યભિચાર કદી ન કરે પરંતુ પુરુષ સ્ત્રી-વ્રતી અને સ્ત્રી પતિવ્રતા બનીને સાથે મળીને રહે. (૬૪)

**વસવસ્ત્વાહૃન્દન્તુ ગાયત્રેણ છન્દસાઙ્ગિસ્વદ્રુદ્રાસ્ત્વાહૃન્દન્તુ ત્રૈષ્ટુભેન છન્દ-
સાઙ્ગિસ્વદાદિત્યાસ્ત્વાહૃન્દન્તુ જાગતેન છન્દસાઙ્ગિસ્વદ્વિશ્વે ત્વા દેવા વૈશ્વા-
નરાઽઽઆહૃન્દન્ત્વાનુષ્ટુભેન છન્દસાઙ્ગિસ્વત્ ॥ ૬૫ ॥**

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! વસવઃ-વસુ નામક પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ ગાયત્રેણ-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાઓનું જેમાં જ્ઞાન કરવામાં આવે તે વેદના વિભાગ રૂપ સ્તોત્ર છન્દસા-ગાયત્રી છંદથી જે ત્વા-તને અઙ્ગિસ્વત્-અગ્નિની સમાન આહૃન્દન્તુ-પ્રકાશમાન કરે.

સ્દ્વાઃ-મધ્યમ કોટિના રુદ્રનામક વિદ્વાન્ ત્રૈષ્ટુભેન-જેમાં જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના સ્થિત છે. તે છન્દસા-વેદના સ્તોત્ર ભાગથી અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણની સમાન ત્વા-તને આહૃન્દન્તુ-પ્રજ્વલિત કરે.

આદિત્યાઃ-ઉત્તમ કોટિના આદિત્ય નામક વિદ્વાન્ જાગતેન-જગત્ની વિદ્યાના પ્રકાશક છન્દસા-વેદના સ્તોત્ર ભાગથી ત્વા-તને અઙ્ગિસ્વત્-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી આહૃન્દન્તુ-શુદ્ધ કરે.

વૈશ્વાનરાઃ-સમસ્ત મનુષ્યોમાં શોભાયમાન દેવાઃ સત્ય ઉપદેશ આપનાર વિશ્વે-સર્વ વિદ્વાન્ આનુષ્ટુભેન-વિદ્યા ગ્રહણ કર્યા પછી જે દુઃખોથી છોડાવે તે છન્દસા-વેદના ભાગથી ત્વા-તને અઙ્ગિસ્વત્-સમસ્ત ઔષધિઓના રસની સમાન આહૃન્દન્તુ-શુદ્ધ રૂપમાં સંપન્ન કરે. (૬૫)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને, જે વિદ્વાન્ અને વિદ્યુષીઓ શરીર અને આત્માના બલની વૃદ્ધિ કરનાર ઉપદેશથી [સર્વને] સુશોભિત કરે, તેની સેવા અને સંગ નિરંતર કરો, અન્ય શૂદ્ર જનોનો નહિ. (૬૫)

**આકૂતિમગ્નિં પ્રયુજંથ્ સ્વાહા મનો મેધામગ્નિં પ્રયુજંથ્ સ્વાહા ચિત્તં વિજ્ઞાતમગ્નિં
પ્રયુજંથ્ સ્વાહા વાચો વિદ્ધૃતિમગ્નિં પ્રયુજંથ્ સ્વાહા પ્રજાપતયે મનવે સ્વાહાઽગ્નયે
વૈશ્વાનરાય સ્વાહા ॥ ૬૬ ॥**

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે વેદના ગાયત્રી આદિ મંત્રોથી સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી આકૂતિમ્-ઉત્સાહ આપનાર ક્રિયાથી પ્રયુજમ્-પ્રેરણા કરનાર અગ્નિમ્-પ્રસિદ્ધ અગ્નિને સ્વાહા-સત્યવાણીથી મનઃ-ઈચ્છાના સાધનને મેધામ્-બુદ્ધિ અને પ્રયુજમ્-સંબંધ કરનારી અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને સ્વાહા-સત્ય વ્યવહારોથી વિજ્ઞાતમ્-જાણેલા વિષયને પ્રયુજમ્-વ્યવહારમાં પ્રયોગ કરેલ અગ્નિમ્-અગ્નિ સમાન પ્રકાશિત ચિત્તમ્-ચિત્તને સ્વાહા-યોગક્રિયાની રીતિથી વાચઃ-વાણીઓની વિદ્ધૃતિમ્-વિવિધ પ્રકારની ધારણાઓને પ્રયુજમ્-પ્રયોગ

કરેલ અગ્નિમ્-યોગાભ્યાસથી ઉત્પન્ન કરેલ વિદ્યુત્ને પ્રજાપતયે-પ્રજાના સ્વામી મનવે-મનનશીલ પુરુષ માટે સ્વાહા-સત્યવાણીને તથા અગ્નયે-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ વૈશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન જગદીશ્વરને માટે સ્વાહા-ધર્મયુક્ત ક્રિયાને યુક્ત કરાવીને નિરંતર આહ્વાન-ઉત્તમ રીતે શુદ્ધ કરો. (૬૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થથી વેદાદિ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરીને તથા ઉત્સાહાદિને વધારીને વ્યવહાર તથા પરમાર્થની ક્રિયાઓના સંબંધથી આ લોક અને પરલોકનાં સુખોને પ્રાપ્ત કરે. (૬૬)

વિશ્વોં દેવસ્ય નેતુર્મર્તો વુરીત સુખ્યમ્ ।

વિશ્વોં રાયઽઈષુધ્યતિ દ્યુમ્નં વૃણીત પુષ્યસે સ્વાહાં ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યની સમાન વિશ્વઃ સર્વ મર્ત્તઃ-મનુષ્ય નેતુઃ-સર્વના નાયક, દેવસ્ય-સર્વજગતના પ્રકાશક પરમેશ્વરની સુખ્યમ્-મિત્રતાનો વુરીત-સ્વીકાર કરે.

વિશ્વઃ-સર્વ મનુષ્યો રાયે-શોભા અને લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ માટે ઈષુધ્યતિ-બાણ આદિ શાસ્ત્રોને ધારણ કરે. (૬૭)

સ્વાહા-સત્યવાણી અને દ્યુમ્નમ્-પ્રકાશયુક્ત યજ્ઞને વા અન્નને વૃણીત-ગ્રહણ કરે અને જેમ તેનાથી તું પુષ્યસે-પુષ્ટ બને છે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૬૭)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ મનુષ્યોએ પરમેશ્વર સાથે મિત્રતા કરીને, સત્ય વ્યવહાર દ્વારા ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, યશસ્વી કાર્યો નિત્ય કર્યા કરે. (૬૭)

મા સુ ભિત્થા મા સુ રિષોઽમ્બ ધૃષ્ણુ વીરયસ્વ સુ ।

અગ્નિષ્ચેદં કરિષ્યથઃ ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : હે અમ્બ-માતા ! તું અમને વિદ્યાથી મા + સુ + ભિત્થાઃ-પૃથક ન કર, મા + સુ + રિષઃ-દુઃખ ન આપ, ધૃષ્ણુ-દૈઢતાપૂર્વક સુ + વીરયસ્વ-આરંભ કરે સુંદર કર્મને પૂર્ણ આ રીતે આચરણ કરતાં તમે માતા અને પુત્ર બન્ને અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન ચ-ઇદમ્-કરવા યોગ્ય એ સર્વ કર્મોને કરિષ્યથઃ-કરી શકશો. (૬૮)

ભાવાર્થ : માતા પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપે, જેથી તેઓ પરસ્પર પ્રેમી અને વીર બને. જે કરવા યોગ્ય હોય તે કર્મ કરે અને ન કરવા યોગ્ય ન કરે. (૬૮)

દૃઃહસ્વ દેવિ પૃથિવિ સ્વસ્તયઽઆસુરી માયા સ્વધયા કૃતાસિં ।

જુષ્ટં દેવેભ્યઽઙ્દમસ્તુ હૃવ્યમરિષ્ટા ત્વમુદિહિ યજ્ઞેઽઅસ્મિન્ ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે પૃથિવિ-ભૂમિ સમાન વિદ્યાના વિસ્તારને પ્રાપ્ત થયેલી દેવિ-વિદ્યાથી યુક્ત પત્ની ! તને સ્વસ્તયે-સુખ માટે સ્વધયા-અન્ન વા જલથી જે આસુરી-પ્રાણપોષક પુરુષોની માયા-બુદ્ધિ છે તેને કૃતા-સિદ્ધ કરેલ અસિં-છે, તેથી ત્વમ્-તું પતિની-મારી દંહસ્વ-ઉન્નતિ કર. અરિષ્ટા-હિંસા રહિત બનીને

અસ્મિન્-એ યજ્ઞે-સંગ કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમમાં ઝદિહિ-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કર. તેં જે જુષ્ટમ્-સેવન કરેલ ઙ્દમ્-એ હવ્યમ્-દાન આપવા-લેવા યોગ્ય પદાર્થ છે, તે દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોની પ્રાપ્તિ માટે અસ્તુ-થાય. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી પતિને પ્રાપ્ત કરીને ઘરમાં રહે છે, તે સુબુદ્ધિથી સુખ માટે પ્રયત્ન કરે.

તે શ્રેષ્ઠ રીતે અન્નાદિ પદાર્થોને રુચિકારક બનાવે અને કદી કોઈને દુઃખ અથવા કોઈ સાથે વૈર બુદ્ધિ ન રાખે. (૬૯)

દ્રવન્નઃ સર્પિરાસુતિઃ પ્રત્નો હોતા વરેણ્યઃ । સહસસ્પુત્રોઽઅદ્ભુતઃ ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : હે પતે ! તું દ્રવન્નઃ-વૃક્ષ આદિ ઔષધિઓ યુક્ત, અથવા અન્ન યુક્ત છે એવા સર્પિરાસુતિઃ-દૂત આદિ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરનાર, પ્રત્નઃ-સનાતન હોતા-આદાન-પ્રદાન કરનાર, વરેણ્યઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, સહસઃ-બળવાનના પુત્રઃ-પુત્ર અને અદ્ભુતઃ-અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ યુક્ત આપ સુખ માટે એ ગૃહાશ્રમમાં શોભાયમાન બનો. (૭૦)

ભાવાર્થ : કન્યા-જેના પિતા બ્રહ્મચર્ય સેવનથી બલવાન હોય, જે પુરુષાર્થથી અન્ન આદિ વિવિધ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરી શકે અને પવિત્ર સ્વભાવ યુક્ત પુરુષ હોય, તેની સાથે વિવાહ કરીને-નિરંતર સુખનો ભોગ કરે. (૭૦)

પરસ્યાઽઅધિ સંવતોઽવરંરઽઅભ્યાતર । યત્રાહમસ્મિ તારંઽઅવ ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! જે પરસ્યાઃ-ઉત્તમ કન્યા હું તારો અધિ-પતિ બનવા ઈચ્છું છું, તે તું સમ્વતઃ-વિભક્ત અવરાન્-નીચ ગુણ, સ્વભાવને અધિ+આ+તર-દૂર કર અને યત્ર-જે કુળમાં અહમ્-હું અસ્મિ-હું તાન્-તે ઉત્તમ મનુષ્યોની અવ-રક્ષા કર. (૭૧)

ભાવાર્થ : કન્યા-પોતાનાથી અધિક બલ અને વિદ્યા યુક્ત અથવા સમાન હોય તેવા પતિનો સ્વીકાર કરે પરન્તુ અલ્પનો નહિ. જેનાથી પાણિ-હસ્ત ગ્રહણ કરે તેના સંબંધી અને મિત્રોને સદા સંતુષ્ટ કરે. (૭૧)

પરમસ્યાઃ પરાવતો રોહિદશ્વઽહાર્ગહિ ।

પુરીષ્ઠઃ પુરુપ્રિયોઽગ્ને ત્વં તરા મૃધઃ ॥ ૭૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વીન્ વિજ્ઞાનયુક્ત પતે ! રોહિદશ્વઃ-રોહિત્-અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી યુક્ત અશ્વ-વાહનોથી યુક્ત, પુરીષ્ઠઃ-પાલકોમાં શ્રેષ્ઠ, પુરુપ્રિયઃ-અનેક મનુષ્યોથી પ્રીતિ રાખનાર, ત્વમ્-આપ ઙ્દહ-આ ગૃહાશ્રમમાં પરાવતઃ-દૂર દેશથી પરમસ્યાઃ-અતિ ઉત્તમ ગુણ, રૂપ અને સ્વભાવયુક્ત કન્યાની કીર્તિ સાંભળીને આર્ગહિ-આવો અને તેની સાથે મૃધઃ-બીજાના પદાર્થોની ઈચ્છા કરનારા શત્રુઓનો તર-તિરસ્કાર કરો. (૭૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાની કન્યા અથવા પુત્રનો વિવાહ સમીપ દેશમાં કદી કરવો નહિ. જેટલો દૂર દેશમાં વિવાહ કરવામાં આવે છે, તેટલું અધિક સુખ મળે છે. સમીપ દેશમાં કરવાથી કંકાસ જ થાય છે. (૭૨)

યદગ્ને કાન્નિ કાન્નિ ચિદા તે દારૂણિ દુધ્મસિ ।

સર્વં તદસ્તુ તે ઘૃતં તજ્જુષસ્વ યવિષ્ઠ્ય ॥ ૭૩ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ્ય-અત્યંત યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થયેલ અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન પુરુષ વા સ્ત્રી ! આપ જેમ કાન્નિ કાન્નિ ચિત્-કર્ષ, કર્ષ પણ વસ્તુઓ તે-તારી છે, તેને અમે દારૂણિ-કાષ્ઠના પાત્રમાં-કબાટમાં આદધ્મસિ-ધારણ કરીએ.-રાખીએ.

યત્-જે કર્ષ અમારી વસ્તુ છે, તત્-તે સર્વમ્-બધી તે-તારી અસ્તુ-જ થાય, જે અમારા ઘૃતમ્-ઘૃત આદિ પદાર્થો છે, તત્-તેનું તું જુષસ્વ-સેવન કર. યત્-જે કર્ષ તારા પદાર્થો છે. તે બધાં અમારા છે અને જે તારા ઘૃત વગેરે પદાર્થો છે તેને અમે ગ્રહણ કરીએ. (૭૩)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચારી આદિ મનુષ્ય પોતાના સર્વ પદાર્થો સર્વના [ઉપકાર] માટે રાખે. કદીપણ ઈર્ષ્યાથી પરસ્પર જુદા ન પડે, જેથી સર્વના સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય અને વિદ્વન ન પડે. આ રીતે સ્ત્રી-પુરુષ પણ પરસ્પર વર્તન કરે. (૭૩)

યદત્યુપજિહ્વિકા યદ્વમ્નોઽતિસર્પતિ ।

સર્વં તદસ્તુ તે ઘૃતં તજ્જુષસ્વ યવિષ્ઠ્ય ॥ ૭૪ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ્ય-અત્યંત યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત પતે ! આપ અને ઉપજિહ્વિકા-જેની જિહ્વા ઈન્દ્રિય અનુકૂળ અર્થાત્ વશમાં હોય એવી સ્ત્રી યત્-જે અતિ-ભોજન કરે છે, યત્-જે વમ્નઃ-મુખથી બહાર નીકળેલ પ્રાણવાયુ અતિ+સર્પતિ-અત્યંત તીવ્ર ગતિ કરે છે, તત્-તે સર્વમ્-સર્વ તે-તારા અસ્તુ-બને. જે તારા ઘૃતમ્-ઘૃત આદિ ઉત્તમ પદાર્થો છે તત્-તેનું તું જુષસ્વ-સેવન કર. (૭૪)

ભાવાર્થ : જે તરફ પતિ પ્રવૃત્ત હોય અથવા જે તરફ પત્ની પ્રવૃત્ત હોય, તદનુસાર પતિ-પત્ની બન્ને પ્રવૃત્ત રહે. જે પત્નીના ધન આદિ પદાર્થો હોય તે પતિના અને જે પતિના ધન આદિ પદાર્થો હોય તે પત્નીના બને. આ વિષયમાં કદીપણ કોઈ પ્રકારનો દ્વેષ ન કરવો જોઈએ. પરંતુ પરસ્પર મળીને બન્ને આનંદ ભોગવે. (૭૪)

અહરહરપ્રયાવં ભરન્તોઽશ્વાયેવ તિષ્ઠતે ઘાસમ્સમૈ ।

રાયસ્પોષેણ સમિષા મદન્તોઽગ્ને મા તે પ્રતિવેશા રિષામ ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન પુરુષ ! અહરહઃ-પ્રતિદિન તિષ્ઠતે-વિદ્યમાન અશ્વાયેવ-જેમ ઘોડાને ખાવા માટે ઘાસ આદિ પદાર્થ ધરવામાં આવે છે, તેમ અસ્મૈ-એ ગૃહસ્થ પુરુષ માટે અપ્રયાવમ્-અન્યાયથી પૃથક્ ગૃહાશ્રમને યોગ્ય ઘાસમ્-ભોગ્ય પદાર્થોને ભરન્તઃ-ધારણ કરતાં રાયઃ-ધનની પોષેણ-પુષ્ટિ તથા ઇષા-અન્નાદિથી સમ્+મદન્તઃ-સમ્યક્ આનંદિત થઈને પ્રતિવેશાઃ-ધર્મપ્રવેશમાં પ્રસિદ્ધ બનીને અમે તે-તારા ઐશ્વર્યને મા રિષામ-કદી નષ્ટ ન કરીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : જેમ અથપાલક અથ આદિ પશુઓ માટે જવ તથા દૂધ આદિ પદાર્થોનો નિત્ય સંચય કરે છે, તેમ ગૃહસ્થજનોએ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને સર્વને સુખી કરે. ધનના અભિમાનમાં કોઈની સાથે કદી ઈર્ષ્યા ન કરે. અન્યોની ઉન્નતિ સાંભળીને/જોઈને સદા આનંદ માણે. (૭૫)

નાભા પૃથિવ્યાઃ સમિધાનેઽઅગ્નૌ રાયસ્પોષાય બૃહતે હવામહે ।

ઙ્રમ્મદમ્ બૃહદુક્થમ્ યજત્રમ્ જેતારમ્ગ્નિમ્ પૃતનાસુ સાસહિમ્ ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થો ! જેમ અમે બૃહતે-મહાન રાયઃ-લક્ષ્મીની-ઐશ્વર્યની પોષાય-પુષ્ટિ કરનાર પુરુષ માટે પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના નાભા-મધ્યમાં સમિધાને-ઉત્તમ રીતે પ્રદીપ્ત અગ્નૌ-અગ્નિમાં અને પૃતનાસુ-સેનાઓમાં સાસહિમ્-અત્યંત સહનશીલ, ઙ્રમ્મદમ્-અન્નથી આનંદિત થનાર બૃહદુક્થમ્-ભારે પ્રશંસાયુક્ત, યજત્રમ્-સંગ્રામ કરવા યોગ્ય, અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ની સમાન શીઘ્રતા કરનાર, જેતારમ્-વિજેતા સેનાપતિ પુરુષને હવામહે-બોલાવીએ છીએ, તેમ તમે પણ બોલાવો (૭૬)

ભાવાર્થ : પૃથિવી પર રાજ્ય કરનાર લોકોએ શસ્ત્રાસ્ત્રોનો સંચય કરીને, પૂર્ણ બુદ્ધિ, વિદ્યા, શરીર તથા આત્માના બળથી સંપન્ન પુરુષને સેનાપતિ બનાવીને નિર્ભયતાપૂર્વક પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૭૬)

યાઃ સેનાઽઅભીત્વરીરાવ્યાધિનીરુગ્ગણાઽઙ્ગત ।

યે સ્તેના યે ચ તસ્કરાસ્તાસ્તેઽઅગ્નેઽપિદધામ્યાસ્યૈ ॥ ૭૭ ॥

પદાર્થ : હે સેના અને સભાના સ્વામી ! જેમ હું યાઃ-જે અભીત્વરીઃ-સન્મુખ બનીને યુદ્ધ કરનારી, આવ્યાધિનીઃ-અનેક રોગોથી યુક્ત વા તાડન કરવા યોગ્ય, ઙ્ગણાઃ-શસ્ત્રો લઈને વિરોધમાં ઉદ્યત થયેલી સેનાઃ-સેના છે, તેને ઙ્ગ-અને યે-જે સ્તેનાઃ-સુરંગ લગાવીને પર-પદાર્થોનું અપહરણ કરનાર છે, ચ-અને યે-જે તસ્કરાઃ-જુગાર આદિ છળ-કપટથી અન્યોનાં પદાર્થોનું અપહરણ કરનાર છે. તાન્-તેને તે-એ અગ્ને-અગ્નિની આસ્યૈ-સળગતી જવાળાઓમાં અપિદધામિ-નાખું છું, તેમ તું પણ તેને તેમાં નાંખ. (૭૭)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક, રાજપુરુષોને જે અનુકૂળ સેનાઓ અને પ્રજાઓ છે, તેનો નિરંતર સત્કાર કરીને, જે વિરોધી [સેનાઓ અને પ્રજાઓ] છે; તથા જે ડાકુ આદિ ચોર, દુષ્ટ વચનયુક્ત, જૂઠું બોલનારા તથા વ્યભિચારી મનુષ્ય હોય. તેને અગ્નિ દ્વારા દગ્ધ કરવા આદિ ઉગ્ર દંડોથી અત્યંત તાડના કરીને વશમાં કરવા જોઈએ. (૭૭)

દશ્ષષ્ટ્રાભ્યામ્ મલિમ્લૂન્ જમ્ભ્યૈસ્તસ્કરાૌઽઙ્ગત ।

હનુભ્યામ્ સ્તેનાન્ ભગવસ્તાસ્ત્વં ખાદ્ સુખાદિતાન્ ॥ ૭૮ ॥

પદાર્થ : હે ભગવઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ અને સેનાપતિ રાજા ! જેમ ત્વમ્-આપ જમ્ભ્યૈઃ-મુખમાં રહેલ જિહ્વા આદિ અવયવો તથા દશ્ષષ્ટ્રાભ્યામ્-તીક્ષ્ણ દાંતોથી જે મલિમ્લૂન્-મલિન આચરણયુક્ત સિંહ આદિને તથા હનુભ્યામ્-જડબાથી તસ્કરાન્-ચોરોની સમાન વિદ્યમાન સુખાદિતાન્-અન્યાયથી બીજાના

પદાર્થોને ભોગવનાર અને સ્તેનાન્-રાત્રિમાં દીવાલ આદિ તોડ-ફોડ કરીને પારકો માલ લઈ જનારા મનુષ્યોને **ખાદ-મૂળથી** નષ્ટ કરો છો, તેમ **તાન્-તેને** અમે **ઉત્-પણ** નષ્ટ કરીએ. (૭૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે ગાય આદિની હિંસા કરનાર પશુઓ તથા મનુષ્ય અને જે ચોર આદિ હોય, તેઓને અનેક પ્રકારથી બંધન, તાડન અને વિનાશ દ્વારા વશમાં કરવા જોઈએ. (૭૮)

યે જનૈષુ મલિમ્લવ સ્તેનાસસ્તસ્કરા વનૈ ।

યે કક્ષૈષ્વઘાયવસ્તાંસ્તૈ દધામિ જમ્ભયોઃ ॥ ૭૯ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! હું સેનાપતિ-યે-જે **જનેષુ-મનુષ્યોમાં મલિમ્લવ:-**મલિન સ્વભાવથી આવા-ગમન કરનાર **સ્તેનાસ:-**ગુપ્ત ચોર જે **વને-વનમાં તસ્કરા:-**પ્રસિદ્ધ ચોર, લુંટારાઓ અને **યે-જે કક્ષેષુ-ધર-મકાન આદિમાં અઘાયવ:-**પાપ કરીને જીવનની ઈચ્છા કરનારા છે **તાન્-તેઓને તે-આપના જમ્ભયો:-**પહોળા કરેલા મુખમાં કોળિયા સમાન **દધામિ-રાખું છું.** (૭૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષોનું એ કર્તવ્ય છે, કે જે ગામમાં અથવા વનમાં રહેલા પ્રસિદ્ધ અથવા અપ્રસિદ્ધ ચોર અને પાપાચારી મનુષ્યો છે, તેને રાજાને આધીન કરે. (૭૯)

યોઽઅસ્મભ્યમરાત્રીયાદ્યશ્ચ નો દ્વેષતે જનઃ ।

નિન્દાદ્યોઽસ્માન્ ધિપ્સાત્ચ સર્વ તં મસ્મસા કુરુ ॥ ૮૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ અને સેનાપતિ ! આપ **ય:-જે જન:-**મનુષ્ય **અસ્મભ્યમ્-અમારી** ધાર્મિક જનોની **અરાત્રીયાત્-શત્રુતા** કરે, **ય:-જે ન:-**અમારી સાથે **દ્વેષતે-દુષ્ટતા** કરે, **ચ-અને** અમારી **નિન્દાત્-નિંદા** કરે, **ય:-જે અસ્માન્-અમને ધિપ્સાત્-દંભ** બતાવે **ચ-અને** છળ-કપટ કરે **તમ્-તે સર્વમ્-સર્વને** **મસ્મસા-સળગાવીને સંપૂર્ણ ભસ્મ કુરુ-કરી** નાંખો. (૮૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક, ઉપદેશક અને રાજપુરુષોને યોગ્ય છે, કે તેઓ અધ્યાપન, શિક્ષા અને ઉપદેશથી તથા દંડ વિધાનથી વિરોધનો નિરંતર વિનાશ કરે. (૮૦)

સંશિતં મે બ્રહ્મ સંશિતં વીર્યું બલમ્ ।

સંશિતં ક્ષત્રં જિષ્ણુ યસ્યાહમસ્મિ પુરોહિતઃ ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : **અહમ્-હું** **યસ્ય-જે** યજમાન પુરુષનું **પુરોહિતઃ-પ્રથમ** ધારણ કરનાર **અસ્મિ-હું,** તેનું તથા **મે-મારા સંશિતમ્-પ્રશંસિત** **બ્રહ્મ-વેદનું** વિજ્ઞાન તથા તે યજમાનનું **સંશિતમ્-પ્રશંસનીય** **વીર્યમ્-પરાક્રમ** **પ્રશંસિત** **બલમ્-બળ** **સંશિતમ્-અને** પ્રશંસા યોગ્ય **જિષ્ણુ-વિજેતા** સ્વભાવનું **ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિય** કુળ બને.

ભાવાર્થ : જે જેના પુરોહિત અને યજમાન હોય, તે બન્ને પરસ્પર જે વિદ્યા, યોગ બળ અને ધર્માચરણથી આત્માની ઉન્નતિ, બ્રહ્મચર્ય દ્વારા જિતેન્દ્રિયતા અને આરોગ્યથી શરીર બળની વૃદ્ધિ થાય, તે કર્મ સદા કરે. (૮૧)

उदैषां बाहूऽअतिरमुद्वर्चोऽअथो बलम् ।

क्षिणोमि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वाँरऽअहम् ॥ ८२ ॥

પદાર્થ : અહમ્-હું યજમાન વા પુરોહિત બ્રહ્મણા-વેદ અને ઈશ્વરના વિજ્ઞાનના પ્રદાનથી, ણ્ણામ્-એ પૂર્વોક્ત ચોર આદિ દુષ્ટોના બાહુ-બળ અને પરાક્રમનું ઉદત્તિસ્-સારી રીતે ઉલ્લંઘન કરું. વર્ચઃ-તેજ તથા બલમ્-સામર્થ્યને તથા અમિત્રાન્-શત્રુઓને ઉક્ષિણોમિ-મારું છું, અથો-ત્યારપછી સ્વાન્-પોતાના મિત્રોના તેજ અને સામર્થ્યને ઉન્નયમિ-વૃદ્ધિ સાથે પ્રાપ્ત કરું. (૮૨)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ યજમાનોએ તથા પુરોહિતોએ પાપીઓના સર્વસ્વની હાનિ અને ધર્માત્માઓના સર્વસ્વની સર્વ પ્રકારે વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮૨)

अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ।

प्रप्र दातारं तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ ८३ ॥

પદાર્થ : હે અન્નપતે-ઔષધિ-અન્નોના પાલક યજમાન વા પુરોહિત ! આપ નઃ-અમારા માટે અનમીવસ્ય-રોગનાશક, સુખવર્ધક, શુષ્મિણઃ-અતિ બળદાયક, અન્નસ્ય-અન્નને પ્ર+પ્ર+દેહિ-અતિ ઉત્તમ રીતિથી પ્રદાન કરો. એ અન્નના દાતાસ્-દાતાને તારિષઃ-તૃપ્ત-કરો. તથા નઃ-અમારા દ્વિપદે-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ તથા ચતુષ્પદે-ચાર પગવાળા ગાય આદિ પશુઓ માટે ઊર્જમ્-પરાક્રમને ધેહિ-ધારણ કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય સદા આરોગ્ય અને બલકારક અન્નનું સ્વયં સેવન કરે અને અન્યોને પણ પ્રદાન કરે. મનુષ્ય તથા પશુઓનાં સુખ તથા બળની વૃદ્ધિ કરે, જેથી ઈશ્વર અને સૃષ્ટિ-ક્રમના અનુકૂળ આચરણથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ અને સદા ઉન્નતિ પ્રાપ્ત થાય. (૮૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં ગૃહસ્થ, રાજા, પુરોહિત, સેનાપતિ, પ્રજાના કર્તવ્યો-કર્મનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति एकादशोऽध्यायः ॥



અથવા સર્વજ્ઞ, સવિતા-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક જગદીશ્વર વા સૂર્ય, ઊષસ:-પ્રભાતની પ્રયાણમ્-ઉત્તમ પ્રાપ્તિને અનુ + વિ + રાજતિ-પ્રકાશિત કરે છે, વિશ્વા-સર્વ સ્વાણિ-પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રતિ + મુચ્ચતે-પ્રકટ કરે છે.

દ્વિપદે-મનુષ્ય આદિ બે પગવાળા ચતુષ્પદે-તથા ગાય આદિ ચોપગા પ્રાણીઓ માટે નાકમ્-સર્વ દુઃખોથી રહિત ભદ્રમ્-સેવન કરવા યોગ્ય સુખને વ્યખ્યત્-પ્રકાશિત કરે છે અને પ્ર + અસાવીત્-ઉત્પન્ન કરે છે, એવા તે સૂર્ય લોકને ઉત્પન્ન કરનાર ઈશ્વરને તમે જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરે સંપૂર્ણ રૂપવાન પદાર્થોના પ્રકાશક પ્રાણીઓનાં સુખ માટે પ્રકાશમાન સૂર્યની રચના કરેલ છે, તે [પરમેશ્વર]ની ભક્તિ સર્વ મનુષ્યો કરે. (૩)

સુપર્ણોઽસિ ગરુત્માંસ્ત્રિવૃત્તે શિરો ગાયત્રં ચક્ષુર્બૃહદ્રથન્તરે પક્ષૌ । સ્તોમઽઆત્મા છન્દાંસ્યઙ્ગાનિ યજૂંષિ નામં । સામં તે તનૂર્વીમદેવ્યં યજ્ઞાયઙ્ગિયં પુચ્છં ધિષ્ણ્યાઃ શ્વાઃ । સુપર્ણોઽસિ ગરુત્માન્દિવં ગચ્છ સ્વઃ પત ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે કારણે તે-આપના ત્રિવૃત્-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના એ ત્રણેથી યુક્ત શિરઃ-દુઃખોના વિનાશક છે, ગાયત્રમ્-ગાયત્રી-છંદથી કહેલ વિજ્ઞાનરૂપ હેતુ ચક્ષુઃ-નેત્ર સમાન છે, બૃહદ્રથન્તરે-મોટા રથોથી દુઃખોને છોડાવનાર પક્ષૌ-પાંખોની સમાન છે, સ્તોમઃ-સ્તુતિ યોગ્ય ઋગ્વેદ આત્મા-પોતાનું સ્વરૂપ છે, છન્દાંસિ-ઉષ્ણિક્ આદિ છંદ અઙ્ગાનિ-કાન આદિ અંગો છે, યજૂંષિ-યજુર્વેદના મંત્ર નામ-નામ યજ્ઞાયઙ્ગિયમ્-ગ્રહણ અને ત્યાગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારોના પ્રકાશક વામદેવ્યમ્-વામદેવ ઋષિ દ્વારા વિજ્ઞાત વા ઉપદિષ્ટ સામ-ત્રીજો સામવેદ તે-આપનું તનૂઃ-શરીર છે, તેથી આપ ગસ્ત્માન્-મહાત્મા, સુપર્ણઃ-સુંદર, સંપૂર્ણ લક્ષણોથી યુક્ત અસિ-છો.

જેથી ધિષ્ણ્યાઃ-શબ્દ કરનાર હેતુઓમાં શ્રેષ્ઠ શ્વાઃ-ખરી તથા પુચ્છમ્-લાંબી પૂંછની સમાન અન્તિમ અવયવ છે, તેની સમાન ગસ્ત્માન્-પ્રશંસિત શબ્દોચ્ચારણ કરનાર, સુપર્ણઃ-સુંદર ઉડનાર અસિ-છે, તે પક્ષી સમાન આપ દિવમ્-સુંદર વિજ્ઞાનને ગચ્છ-પ્રાપ્ત કરો, અને સ્વઃ-સુખને પત-ગ્રહણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સુંદર ડાળીઓ, પાંદડાં, પુષ્પો, ફળો અને મૂળયુક્ત વૃક્ષ શોભા આપે છે, તેમ વેદાદિ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન-અધ્યાપન કરાવનાર લોકો શોભા આપે છે.

જેમ પશુઓ પોતાના પૂંછ આદિ અવયવોથી પોતાનું કાર્ય કરે છે. અને જેમ પક્ષી પોતાની પાંખોથી આકાશ માર્ગથી આવાગમન કરીને પ્રસન્ન થાય છે; તેમ મનુષ્યો વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને પુરુષાર્થ દ્વારા સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૪)

વિષ્ણોઃ ક્રમોઽસિ સપત્નહા ગાયત્રં છન્દઽઆરોહ પૃથિવીમનુ વિક્રમસ્વ વિષ્ણોઃ ક્રમોઽસ્યભિમાતિહા ત્રૈષ્ટુભં છન્દઽઆરોહાન્તરિક્ષમનુ વિક્રમસ્વ વિષ્ણોઃ ક્રમોઽસ્યરાતીયતો હન્તા જાગતં છન્દઽઆરોહ દિવમનુ વિક્રમસ્વ વિષ્ણોઃ

ક્રમોઽસિ શત્રૂયતો હન્તાનુષ્ટુભં છન્દ્ઽઆરોહુ દિશોઽનુ વિક્રમસ્વ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેથી આપ વિષ્ણો:-વ્યાપક જગદીશ્વરના ક્રમ:-વ્યવહારના શોધક સપ્તહા- અને શત્રુઓના ઘાતક અસિ-જ છો તેથી ગાયત્રમ્-ગાયત્રી મંત્રથી નીકળેલ છન્દ:-શુદ્ધ અર્થ પર આ + રોહ-આરુઠ રહો, પૃથિવીમ્-પૃથિવી આદિ પદાર્થો અનુ + વિ + ક્રમસ્વ-અનુકૂળ વ્યવહારમાં લાવો.

જે કારણે આપ વિષ્ણો:-વ્યાપક કારણ-પ્રકૃતિના ક્રમ:-કાર્યરૂપ અભિમાતિહા-અભિમાનીઓને મારનારા અસિ-છો, તેથી આપ ત્રૈષ્ટુભમ્-ત્રણ પ્રકારના સુખોથી યુક્ત છન્દ:-બલદાયક વેદાર્થને આરોહ-ગ્રહણ કરો અને અન્તરિક્ષમ્-આકાશની-બગોળ વિદ્યાને અનુ + વિ + ક્રમસ્વ-અનુકૂળ વ્યવહારમાં લાવો.

જેથી આપ વિષ્ણો:-વ્યાપ્તિશીલ વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિના ક્રમ:-જાણનાર, અગ્રાતીયત:-વિદ્યા આદિ દાનના વિરોધી પુરુષોના હન્તા-નાશક અસિ-છો, તેથી જાગતમ્-જગતના જ્ઞાનના સાધન છન્દ:-સૃષ્ટિ વિદ્યાના બળકારી વેદાર્થ વિજ્ઞાનને આરોહ-પ્રાપ્ત કરો અને દિવમ્- સૂર્ય આદિ અગ્નિવિદ્યાને અનુ+વિ+ક્રમસ્વ- વ્યવહારમાં લાવો.

જે આપ વિષ્ણો:-હિરણ્યગર્ભ વાયુના ક્રમ:-જ્ઞાપક તથા શત્રૂયત:-પોતાથી શત્રુતાનો વર્તાવ કરનાર પુરુષોના હન્તા-નાશક અસિ-છો, તે આપ આનુષ્ટુભમ્-અનુકૂળતાથી સુખ સંબંધના હેતુ છન્દ:-આનંદકારક વેદ ભાગને આરોહ-ઉપયુક્ત કરો અને દિશ:-પૂર્વ આદિ દિશાઓને અનુ+વિ+ક્રમસ્વ-અનુકૂળ બનાવવાનો પ્રયત્ન કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદવિદ્યા દ્વારા ભૂગર્ભ આદિ વિદ્યાઓનો નિશ્ચય કરીને, તેની પરાક્રમપૂર્વક ઉન્નતિ કરીને, રોગ આદિ શત્રુઓનો નાશ કરવો જોઈએ. (૫)

અક્રન્દદગ્નિ સ્તનયન્નિવ દ્યૌઃ ક્ષામા રેરિહદ્વીરુધઃ સમઞ્જન્ ।

સદ્યો જજ્ઞાનો વિ હીમિદ્વોઽઅખ્યદા રોદસી ભાનુના ભાત્યન્તઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સભાપતિ સદ્યઃ-એક દિવસમાં જજ્ઞાન:-પ્રસિદ્ધ થઈ દ્યૌઃ-સૂર્યપ્રકાશરૂપ અગ્નિ:-વિદ્યુત્ અગ્નિ સમાન સ્તનયન્નિવ-ગર્જના કરતાં શત્રુઓને અક્રન્દત્-પ્રાપ્ત થાય છે.

જેમ ક્ષામા-પૃથિવી વીસ્થઃ-વૃક્ષોને ફળ-ફૂલોથી યુક્ત કરે છે, તેમ પ્રજાઓને સુખદાયક રેરિહત્-શુભ-અશુભ કર્મોનું ફળ શીઘ્ર આપે છે.

જેમ સૂર્ય ઇદ્ધઃ-પ્રદીપ્ત થઈને સમઞ્જન્-સમ્યક્ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરતા રોદસી-આકાશ અને પૃથિવીને વિ + અખ્યત્-પ્રકાશિત કરે છે, ભાનુના-પોતાની દીપ્તિથી અન્તઃ-સર્વ લોકોની મધ્યમાં આભાતિ-પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જે સભાપતિ શુભ ગુણ, કર્મ સ્વભાવથી પ્રકાશિત હોય તેને તમે રાજ્ય કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ સૂર્ય સર્વ લોકોની મધ્યમાં સ્થિત થઈને સર્વને પ્રકાશિત અને આકર્ષણ કરે છે. જેમ પૃથિવી અધિક ફળોને પ્રદાન કરનારી છે, તેમ એવા ગુણયુક્ત પુરુષનો રાજ્ય કાર્યોમાં સારી રીતે ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૬)

અગ્નેઽભ્યાવર્તિન્નભિ મા નિવર્ત્તસ્વાયુષા વર્ચસા પ્રજયા ધનેન ।

સન્યા મેધયા રચ્યા પોષેણ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અભ્યાવર્તિન્-સન્મુખ સારો વર્તાવ કરનાર, અગ્ને-તેજસ્વી, પુરુષાર્થી વિદ્વાન ! આપ આયુષા-ચિર આયુથી, વર્ચસા-અન્ન તથા અધ્યયન આદિથી, પ્રજયા-સંતાનોથી, ધનેન-ધનથી, સન્યા-સર્વ વિદ્યાઓનો વિભાગ કરનારી મેધયા-મેધા બુદ્ધિથી, રચ્યા-વિદ્યાની શોભા અને પોષેણ-પુષ્ટિથી યુક્ત થઈને અભિ+નિ+વર્ત્તસ્વ-નિરંતર વિદ્યમાન રહો તથા મા-મને પણ એ ઉક્ત પદાર્થોથી સંયુક્ત કરો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યો ભૂગર્ભ આદિ વિદ્યા વિના ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. અને મેધા-બુદ્ધિ વિના વિદ્યા પ્રાપ્ત થઈ શકતી નથી. (૭)

અગ્નેઽઅદ્ગ્નિરઃ શતં તે સન્ત્વાવૃતઃ સહસ્ત્રં તઽપાવૃતઃ ।

અથા પોષસ્ય પોષેણ પુનર્નો નષ્ટમાકૃધિ પુનર્નો રયિમાકૃધિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પદાર્થવિદ્યાના જ્ઞાતા અદ્ગ્નિરઃ-વિદ્યા રસિક વિદ્વાન્ ! જે પુરુષાર્થી તે-આપની અગ્નિની સમાન, શતમ્-સેંકડો આવૃત્તઃ-વિદ્યાની આવૃત્તિ રૂપ ક્રિયાઓ તથા સહસ્ત્રમ્-હજારો તે-આપની ઉપાવૃત્તઃ-આવૃત્તિરૂપ સુખોના ભોગ સન્તુ-થાય.

અથઃ-એ પછી આપ એનાથી પોષસ્ય-પોષક મનુષ્યની પોષેણ-રક્ષાથી નષ્ટમ્-પરોક્ષ વિજ્ઞાનને પણ નઃ-અમારા માટે પુનઃ-ફરી પણ આ+કૃધિ-સારી રીતે કરો. તથા બગડેલ રયિમ્-પ્રશંસિત શોભાને પુનઃ-ફરી પણ નઃ-અમારા માટે આ+કૃધિ-સારી રીતે કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યાઓમાં સેંકડો આવૃત્તિઓ અને શિલ્પવિદ્યાઓમાં હજારો પુનરાવૃત્તિઓ કરીને, લુપ્ત થતી પ્રકટ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરીને સર્વના માટે ઐશ્વર્ય-સુખ ઉત્પન્ન કરવા જોઈએ. (૮)

પુનરૂર્જા નિવર્ત્તસ્વ પુનરગ્નઽદ્વિષાયુષા । પુનર્નઃ પાહ્યઃહસઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ નઃ-અમને અંહસઃ-પાપોથી પુનઃ-વારંવાર નિવર્ત્તસ્વ-બચાવો, પુનઃ-વારંવાર અમારી પાહિ-રક્ષા કરો. પુનઃ-ફરી વારંવાર દ્વિષા-ઈચ્છાથી તથા આયુષા-અન્નથી ઋર્જા-પરાક્રમ-યુક્ત કર્મોને પ્રાપ્ત કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વ ઉપદેશને યોગ્ય મનુષ્યોને પાપથી નિરંતર દૂર હટાવીને, તેને શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત કરીને, સ્વયં પાપથી રહિત બનીને પરમ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૯)

સહ રચ્યા નિવર્ત્તસ્વાગ્ને પિન્વસ્વ ધારયા । વિશ્વપ્સ્યા વિશ્વતસ્પરિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન ! આપ દુષ્ટ વ્યવહારથી નિ+વર્ત્તસ્વ-દૂર રહો. વિશ્વપ્સ્યા-સર્વ ભોગ્ય વસ્તુઓનું ભક્ષણ કરનારી, ધારયા-સકલ વિદ્યાને ધારણ કરનારી વાણીથી તથા રચ્યા-ધનની સહ-

સાથે વિશ્વતઃ-સર્વ પ્રકારથી પરિ-સર્વ રીતે પિન્વસ્વ-સુખોનું સેવન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો કદી પણ અધર્મનું આચરણ ન કરે તથા અન્યોને તેનો ઉપદેશ ન આપે. એ રીતે સમસ્ત શાસ્ત્રોની વિદ્યાથી સંપન્ન બનીને પ્રશંસાને પાત્ર બને. (૧૦)

આ ત્વાહાર્ષમન્તરભૂર્ધ્રુવસ્તિષ્ટાવિચાચલિઃ ।

વિશસ્ત્વા સર્વા વાઙ્ચન્તુ મા ત્વદ્રાષ્ટ્રમધિભ્રશત્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે શુભ ગુણ અને લક્ષણોથી યુક્ત સભાપતિ રાજન્ ! ત્વા-આપને રાજ્યની રક્ષા માટે હું અન્તઃ-સભાની મધ્યમાં આ+અહાર્ષમ્-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું.

આપ સભાની મધ્યમાં અભૂઃ-વિરાજમાન રહો. અવિચાચલિઃ-સર્વથા નિશ્ચલ તથા ધ્રુવઃ-ન્યાયથી રાજ્યપાલનમાં નિશ્ચિત બુદ્ધિ બનીને તિષ્ઠ-સ્થિર રહો.

સર્વાઃ-સંપૂર્ણ વિશઃ-પ્રજા ત્વા-આપને વાઙ્ચન્તુ-ચાહે. ત્વત્-આપના પાલનથી રાષ્ટ્રમ્-રાજ્ય મા + અધિ + ભ્રશત્-નષ્ટ ન થાય. (૧૧)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ પ્રજાજન સર્વશ્રેષ્ઠ પુરુષને સભાધ્યક્ષ રાજા બનાવીને તેને ઉપદેશ આપે.

આપ જિતેન્દ્રિય બનીને સદા ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી બનો. આપના અનાચારથી રાષ્ટ્રનો કદી નાશ થાય નહિ. જેથી આપના [શુભ આચરણથી] સમસ્ત પ્રજા આપને અનુકૂળ રહેશે. (૧૧)

ઉદુત્તમં વરુણ પાશમસ્મદવાધમં વિ મધ્યમશ્ચ શ્રથાય ।

અથા વયમાદિત્ય વ્રતે તવાનાગસોઽઅદિતયે સ્યામ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વસ્ત્રા-શત્રુઓને બાંધનાર, આદિત્ય-અવિનાશી સ્વરૂપ, સૂર્ય સમાન સત્ય અને ન્યાયથી પ્રકાશિત રાજન્ ! આપ અસ્મત્-અમારા અધમમ્-નિકૃષ્ટ, મધ્યમમ્-મધ્યમ અને ઉત્તમમ્-ઉત્તમ પાશમ્-બંધનને ઉત્+અવ+વિ+શ્રથાય-સર્વથા મુક્ત કરો.

અથ-અને વયમ્-અમે પ્રજાજન અદિતયે-પૃથિવીના અખંડિત રાજ્ય માટે તવ-આપના વ્રતે-સત્ય અને ન્યાયના પાલનરૂપ વ્રતમાં અનાગસઃ-નિર્દોષ સ્યામ-બની રહીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ અનુસાર ધાર્મિક જન સત્ય આચરણમાં સ્થિત રહીને, પાપોના બંધનથી મુક્ત બનીને સુખી થાય છે, તેમ શ્રેષ્ઠ રાજાને પ્રાપ્ત કરીને પ્રજાજન આનંદિત રહે છે. (૧૨)

અગ્રેં બૃહન્નુષસામૂર્ધ્વોઽસ્થાન્નિર્જગન્વાન્ તમસો જ્યોતિષાગાત્ ।

અગ્નિર્ભાનુના રુશતા સ્વઙ્ગઽઆ જાતો વિશ્વા સદ્વાન્યપ્રાઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જે આપ અગ્રે-પ્રથમથી જેમ સૂર્ય સ્વઙ્ગઃ-સુંદર અવયવોથી યુક્ત, આ + જાતઃ-

પ્રસિદ્ધ, બૃહન્-મહાન, ઊષસામ્-પ્રભાતોના ઋર્ધ્વઃ-ઉપર આકાશમાં અસ્થાત્-સ્થિત છે, સ્થાતા-સુંદર, ખાનુના-દીપ્તિ, જ્યોતિષા-પ્રકાશથી યુક્ત તથા તમસઃ-અંધકારથી નિર્જગન્વાન્-રહિત બનીને આગાત્-સર્વ લોક-લોકાન્તરોને પ્રાપ્ત થાય છે. વિશ્વા-સર્વ સદ્ધાનિ-સ્થૂલ સ્થાનોમાં અપ્રાઃ-વ્યાપ્ત થાય છે, તેમ આપ પ્રજાની મધ્યમાં વ્યાપ્ત બનો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય સમાન સદ્ગુણોને કારણે મહાન, સજ્જનોની શિક્ષાથી ઉત્તમ બનેલ, દુર્વ્યસનોથી દૂર રહેનાર, સત્ય અને ન્યાયના કારણે સર્વત્ર પરિચિત, સુંદર અંગો યુક્ત, પ્રસિદ્ધ, સર્વના સત્કારને યોગ્ય, જાણવા યોગ્ય વ્યવહારના જ્ઞાતા અને દૂતો દ્વારા સર્વ પ્રજાઓના હૃદયના અભિપ્રાયને જાણનાર મનુષ્ય; શ્રેષ્ઠ ન્યાય દ્વારા પ્રજામાં વ્યાપ્ત બની જાય છે, તે જ રાજા બનવાને યોગ્ય છે. (૧૩)

હંસઃ શુચિષદ્વસુરન્તરિક્ષસદ્ધોતાં વેદિષદતિથિર્દુરોણસત્ ।

નૃષદ્વરસદૃતસદ્વ્યોમસદ્બ્જા ગોજાઽઋત્જાઽઅદ્રિજાઽઋત્ બૃહત્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! તમે જે હંસઃ-દુષ્ટ કર્મોના નાશક, શુચિષત્-પવિત્ર વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન, વસુઃ-સજ્જનોમાં વાસ કરનાર વા તેને વસાવનાર, અન્તરિક્ષસત્-ધર્મસ્થાનમાં સ્થિત, હોતા-સત્યનું ગ્રહણ કરનાર અને કરાવનાર, વેદિષત્-પૃથિવી અથવા યજ્ઞશાલામાં સ્થિત, અતિથિઃ-પૂજનીય વા રાજ્યની રક્ષા માટે યથોચિત ભ્રમણ કરનાર, દુરોણસત્-સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક, આકાશમાં વ્યાપ્ત વા ઘરમાં રહેનાર, નૃષત્-સેના આદિના નાયકોના અધિષ્ઠાતા, વરસત્-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની આજ્ઞામાં સ્થિત, ઋહસત્-સત્યાચરણમાં સ્થિત, વ્યોમસત્-આકાશની સમાન સર્વવ્યાપક ઈશ્વર વા જીવમાં સ્થિત, અબ્જાઃ-પ્રાણોના જનક, ગોજાઃ-ઈન્દ્રિયો વા પશુઓના ઉત્પાદક, ઋહસત્-સત્ય વિજ્ઞાનના ઉત્પાદક, અદ્રિજાઃ-મેઘોને વરસાવનાર વિદ્વાન, ઋહસત્-સત્યસ્વરૂપ, બૃહત્-મહાન, ભ્રમ્ણ અને જીવ છે, તેને જાણે છે તે સભાપતિને રાજા બનાવીને નિરંતર આનંદમાં રહો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરની સમાન પ્રજાનું પાલન કરનાર તથા તેને સુખી કરવામાં સમર્થ હોય, તે જ રાજા બનવા યોગ્ય છે. રાજા વિના પ્રજા સુખી બની શકતી નથી. (૧૪)

સીદ્ ત્વં માતુરસ્યાઽઉપસ્થે વિશ્વાન્યગ્ને વ્યુનાનિ વિદ્વાન્ ।

મૈનાં તપસા માર્ચિષાઽભિશોઽચીરન્તરસ્યાઽશુક્રજ્યોતિર્વિભાહિ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યા પ્રાપ્તિના ઈચ્છુક બાળક ત્વમ્-તું અસ્યામ્-એ માતાની વિદ્યમાનતામાં વિભાહિ-પ્રકાશિત બન. શુક્રજ્યોતિઃ-શુદ્ધ આચરણ રૂપ પ્રકાશયુક્ત વિદ્વાન્-વિદ્વાન બનીને તું અસ્યાઃ-પૃથિવીની સમાન આધાર માતુઃ-એ માતાની ઉપસ્થે-ગોદમાં સીદ્-બેસ એ માતાથી વિશ્વાનિ-દરેક પ્રકારની વ્યુનાનિ-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કર. એનામ્-એ માતાના અન્તઃ-અન્તઃકરણમાં તપસા-સંતાપથી અર્ચિષા-તેજથી મા+અભિ+શોઽચીઃ-શોકયુક્ત ન કર. પરંતુ માતાથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત બન. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિદુષી માતા દ્વારા વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, માતાનો સેવક બનીને, જનનીની સમાન પ્રજાનું પાલન કરે, તે રાજ્યના ઐશ્વર્યથી પ્રકાશિત બને છે. (૧૫)

અન્તરંગ્ને રુચા ત્વમુખાયાઃ સદને સ્વે ।

તસ્યાસ્ત્વઃ હરસા તપ્જ્જાતવેદઃ શિવો ભવ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-વેદોના જ્ઞાતા અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ જે ઉખાયાઃ-પ્રાપ્ત થયેલ પ્રજાની નીચેથી અગ્નિ સમાન સ્વે-પોતાના સદને-અભ્યાસ સ્થાનમાં તપન્-શત્રુઓને સંતાપયુક્ત કરતાં અન્તઃ-મધ્યમાં રુચા-પ્રીતિથી વર્તાવ કરો, તસ્યાઃ-તે પ્રજાના હરસા-પ્રજવલિત તેજથી ત્વમ્-આપ શત્રુઓનું નિવારણ કરતાં શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ સભાપતિ રાજા ન્યાયાસન પર બેસીને રાજ્ય પાલન સંબંધી કાર્યો કરે, તેમ પ્રજા રાજાને સુખી કરીને દુષ્ટોની તાડના કરે. (૧૬)

શિવો ભૂત્વા મહ્યમગ્નેઽઅર્થો સીદ શિવસ્ત્વમ્ ।

શિવાઃ કૃત્વા દિશઃ સર્વાઃ સ્વં યોર્નિમિહાસદઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન શત્રુઓને બાળનાર વિદ્વાન્ પુરુષ ! ત્વમ્-આપ મહ્યમ્-અમો પ્રજાજન માટે શિવઃ-સ્વયં મંગલકારી ભૂત્વા-બનીને ઇહ-આ સંસારમાં શિવઃ-મંગલકારી થતાં સર્વાઃ-સર્વ દિશઃ-દિશાઓમાં રહેનારી પ્રજાઓને શિવાઃ-મંગલાચરણથી યુક્ત કૃત્વા-કરીને સ્વમ્-પોતાના યોર્નિમ્-રાજધર્મના આસન પર આ+અસદઃ-બેસો અર્થો-અને રાજધર્મમાં સીદ-સ્થિર બનો. (૧૭)

ભાવાર્થ : રાજા સ્વયં ધાર્મિક બનીને, પ્રજાજનોને ધાર્મિક બનાવીને, ન્યાય-આસન પર બેસીને નિરંતર ન્યાય કરે. (૧૭)

દિવસ્પરિં પ્રથમં જજ્ઞેઽઅગ્નિરસ્મદ્દ્વિતીયં પરિં જાતવેદાઃ ।

તૃતીયમ્પ્સુ નૃમણાઽઅજસ્રમિન્ધાનઽએનં જરતે સ્વાધીઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ રાજાન્ ! જે અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન આપ અસ્મત્-અમારા સાન્નિધ્યથી દિવઃ-વિદ્યુત્થી પરિ-ઉપર જજ્ઞે-પ્રકટ થાવ છો. તે એનમ્-આપને પ્રથમમ્-પ્રથમ યઃ-જે જાતવેદાઃ-બુદ્ધિમાનોમાં પ્રસિદ્ધ ઉત્પન્ન થયેલાં તે આપને દ્વિતીયમ્-બીજા જે નૃમણાઃ-મનુષ્યોમાં વિચારશીલ આપને તૃતીયમ્-ત્રીજા અપ્સુ-પ્રાણ વા જલ ક્રિયાઓમાં વિદિત્ થયેલ તે આપને અજસ્રમ્-નિરંતર ઇન્ધાનઃ-પ્રકાશિત કરતા વિદ્વાન પરિજરતે-સર્વ રીતે સ્તુતિ કરે છે, તે આપ સ્વાધીઃ-સુંદર ધ્યાનથી યુક્ત પ્રજાઓને પ્રકાશિત કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પ્રથમ બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા, દ્વિતીય ગૃહાશ્રમથી ઐશ્વર્ય, તૃતીય વાનપ્રસ્થથી તપસ્યા, અને ચતુર્થ સંન્યાસાશ્રમમાં નિત્ય વેદવિદ્યા અને ધર્મનો પ્રકાશ કરે. (૧૮)

વિદ્યા તેઽઅગ્ને ત્રેધા ત્રયાણિ વિદ્યા તે ધામ વિભૃતા પુરુત્રા ।

વિદ્વા તે નામ પરમં ગુહા યદ્વિદ્વા તમુત્સં ચત્સઆજગન્થ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ પુરુષ ! તે-આપના જે ત્રેધા-ત્રણ પ્રકારથી ત્રયાણિ-ત્રણ કર્મ છે, તેને અમે વિદ્વા-જાણીએ.

હે સ્થાનોના સ્વામી ! તે-આપના જે વિભૂત-વિશેષ ધારણ કરવા યોગ્ય પુસ્ત્રા-અનેક ધામ-નામ, જન્મ અને સ્થાનરૂપ છે, તેને અમે વિદ્વા-જાણીએ.

હે વિદ્વાન પુરુષ ! તે-આપના ચત્-જે ગુહા-બુદ્ધિમાં સ્થિત ગુપ્ત પરમમ્-શ્રેષ્ઠ નામ-નામ છે તેને અમે વિદ્વા-જાણીએ.

ચત્:-જેથી આપ આજગન્થ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાવ તમ્-તે ઉત્સમ્-કૂવા સમાન તૃપ્ત કરનાર આપને વિદ્વા-અમે જાણીએ. (૧૯)

ભાવાર્થ : પ્રજા અને રાજા રાજનીતિના કાર્યો, સ્થાનો અને સર્વના નામો જાણે. જેમ ખેડૂત કૂવાથી જલ કાઢીને ખેતર વગેરેને તૃપ્ત કરે છે, તેમ પ્રજાજન ધન આદિથી રાજાને તૃપ્ત કરે અને રાજા પણ પ્રજાને તૃપ્ત કરે. (૧૯)

સમુદ્રે ત્વા નૃમણાઽઅપ્સ્વન્તનૃચક્ષાઽઈધે દિવો અગ્નઽઋધન્ ।

તૃતીયૈ ત્વા રજસિ તસ્થિવાઞ્સમપામુપસ્થૈ મહિષાઽઅવર્ધન્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ પુરુષ ! નૃમણા:-નેતાઓને વિચારનારો હું જે ત્વા-આપને સમુદ્રે-આકાશમાં અગ્નિ સમાન ઈંધે-પ્રદીપ્ત કરું છું, નૃચક્ષા:-અનેક મનુષ્યોને જોનાર હું અપ્સુ-અન્ન અને જલોની અન્ત:-મધ્યમાં પ્રકાશિત કરું છું, દિવ:-સૂર્ય પ્રકાશના ઋધન્-પ્રાત:-કાલમાં પ્રકાશિત કરું છું, તૃતીયૈ-ત્રીજા રજસિ-લોકમાં તસ્થિવાંસમ્-સ્થિત સૂર્ય સમાન જે ત્વા-આપને અપામ્-જલોની ઉપસ્થે-સમીપ મહિષા:-મહાત્મા વિદ્વાનો અવર્ધન્-ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરે, તે આપ અમારી નિરંતર ઉન્નતિ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : પ્રજામાં વિદ્યમાન સર્વ પ્રધાન પુરુષો રાજવર્ગની નિત્ય ઉન્નતિ કરે અને રાજપુરુષો પ્રજાજનોની ઉન્નતિ કરે. (૨૦)

અક્રન્દદ્ગ્નિ સ્તનયન્નિવ દ્યૌઃ ક્ષામા રેરિહદ્ વીરુધઃ સમઞ્જન્ ।

સદ્યો જજ્ઞાનો વિ હીમિદ્વોઽઅચ્ચદા રોદસી ભાનુના ભાત્યન્તઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દ્યૌઃ-સૂર્યલોક અગ્નિ:-વિદ્યુત્ સ્તનયન્નિવ-શબ્દ કરવા સમાન વીસ્થઃ-ઔષધિઓને સમઞ્જન્:-પ્રકટ કરતાં સદ્યઃ-શીઘ્ર હિ-જ અક્રન્દત્-પદાર્થોને અહીં-તહીં ચલાવી ક્ષામા-પૃથિવીને રેરિહત્ ધ્રુજાવે છે.

એ જજ્ઞાન:-પ્રસિદ્ધ થઈને ઇદ્ધઃ-જ પ્રકાશમાન બનીને ભાનુના-કિરણો સાથે રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીને ઈમ્-સર્વત્રથી વ્યચ્ચત્-વિખ્યાત કરે છે. અને બ્રહ્માંડની અન્ત:-વચ્ચે આભાતિ-સારી રીતે શોભાયમાન થાય છે, તેમ તમે પણ બનો. (૨૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે જે માટે સૂર્યલોકને ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે વિદ્યુતની સમાન સર્વ લોકોનું આકર્ષણ અને પ્રકાશન કરીને, ઔષધિ આદિ પદાર્થોની વૃદ્ધિનો હેતુ બનીને સર્વ ભૂગોળોની મધ્યમાં જેમ વિરાજમાન છે, તેમ રાજા આદિ મનુષ્યોએ પણ થવું જોઈએ. (૨૧)

શ્રીણામુંદારો ધ્રુવો રયીણાં મનીષાણાં પ્રાર્પણઃ સોમગોપાઃ ।

વસુઃ સૂનુઃ સહસોઽઅપ્સુ રાજા વિભાત્યગ્રંઽઉષસામિધાનઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઉષસામ્-પ્રભાત સમયમાં અગ્રે-આરંભમાં ઇધાનઃ-પ્રદીપ્યમાન સૂર્ય સમાન, શ્રીણામ્-સર્વ ઉત્તમ લક્ષ્મીનું, ઉદારઃ-પરીક્ષા પૂર્વક ઉત્તમ દાન કરનાર, રયીણામ્-ધનોના ધસ્ટાઃ-ધારણ કરનાર, મનીષાણામ્-બુદ્ધિઓને પ્રાર્પણઃ-પ્રાપ્ત કરાવનાર, સોમગોપાઃ-ઔષધિઓ વા ઐશ્વર્યની રક્ષા કરનાર, સહસઃ-બ્રહ્મચર્ય સેવિત જિતેન્દ્રિય બળવાન પિતાના સૂનુઃ-પુત્ર, વસુઃ-બ્રહ્મચારી બનીને, અપ્સુ-પ્રાણોમાં રાજા-પ્રકાશમાન બનીને વિભાતિ-શુભ ગુણોનો પ્રકાશ કરે છે, તેને સર્વના અધ્યક્ષ-રાજા બનાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; સુપાત્રોને દાન આપનાર, ધનનો વ્યર્થ વ્યય ન કરનાર, સર્વને વિદ્યા અને બુદ્ધિ પ્રદાન કરનાર, બ્રહ્મચર્ય સેવિત જિતેન્દ્રિય પિતાનો પુત્ર, યોગાંગોના સેવનથી પ્રકાશમાન, સૂર્યની સમાન, શત્રુઓના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી અધિક તેજસ્વી અને પિતા સમાન પ્રજાનું પાલન કરનાર મનુષ્ય છે, તેનો રાજ્ય કરવા માટે અભિષેક કરવો જોઈએ. (૨૨)

વિશ્વસ્ય કેતુર્ભુવનસ્ય ગર્ભઃઽઆ રોદસીઽઅપૃણાજ્જાયમાનઃ ।

વીડુઃ ચિદદ્રિમભિનત્ પરાયઞ્જના યદ્ગ્નિમર્યજન્ત પઞ્ચ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યત્-જે વિદ્વાન વિશ્વસ્ય-સર્વ ભુવનસ્ય-લોકોના કેતુઃ-પિતા સમાન રક્ષક અને પ્રકાશમાન, ગર્ભઃ-તેની મધ્યમાં રહેનાર, જાયમાનઃ-ઉત્પન્ન થનાર પરાયન્-શત્રુઓના ઉચ્છેદક બનીને રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીને આપૃણાત્-પરિપૂર્ણ કરે, વીડુમ્-અત્યંત બલવાન અદ્રિમ્-મેઘને અભિનત્-છિન્ન-ભિન્ન કરે, જેમ પઞ્ચ-પાંચ જનાઃ-પ્રાણરૂપ પુરુષ અગ્નિમ્-વિદ્યુતને અયજન્ત-સંયુક્ત કરે છે, ચિત્-તેમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોને કરે, તેને ન્યાયાધીશ રાજા માનો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ આ ભુવન [સૌર મંડલ]ની મધ્યમાં સૂર્ય- [પ્રકાશ પ્રાપ્ત કરાવનાર] અને આકર્ષણથી [સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ જે] સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર, રાજ્યને ધારણ કરનાર, શત્રુઓનો આમૂલ નાશ કરનાર, સુખોને ઉત્પન્ન કરનાર અને જેમ માતા ગર્ભનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રજાનું પાલન કરનાર વિદ્વાન હોય, તેને રાજ્યમાં અધિકારી બનાવવો જોઈએ. (૨૩)

ઝશિક્ પાવકો અરતિઃ સુમેધા મર્ત્યેષ્વગ્નિર્મૃતો નિ ધાયિ ।

ઇર્યત્તિ ધૂમર્મરુષંભરિંભ્રદુચ્છુક્રેણ શોચિષા દ્યામિનક્ષન્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઈશ્વરને મર્ત્યેષુ-મનુષ્યોમાં જે ઝશિક્-માનનીય, પાવકઃ-પવિત્ર કરનાર,

અરતિ:-જ્ઞાનવાન, સુમેધા:-મેધાવી વિદ્વાન તથા અમૃત:-અવિનાશી અગ્નિ:-આકાશરૂપ જ્ઞાનનો પ્રકાશ નિ+ધાયિ-સ્થાપિત કરેલ છે.

જે શુક્રેણ-શીઘ્રકારી, શોચિષા-પ્રકાશથી દ્યામ્-સૂર્યલોકમાં ઇનક્ષન્-વ્યાપ્ત થઈને ધૂમમ્-ધુમાડાના અસ્ત્રમ્-રૂપને ભરિશ્નત્-અત્યંત ધારણ કરીને વા ગાઠ બનાવીને ઉત્ + ઇર્યત્તિ-ઉપર પહોચાડે છે-પ્રાપ્ત કરાવે છે, તે ઈશ્વરની ઉપાસના કરો વા અગ્નિનો ઉપકાર પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વર રચિત પદાર્થોના કારણ-કાર્ય-પૂર્વક વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૪)

દૃશાનો રુક્મડુર્વા વ્યદ્યૌહુર્મર્ષમાયુઃ શ્રિયે રુચાનઃ ।

અગ્નિર્મૃતોઽઅભવદ્વયોભિર્યદૈનં દ્યૌરજનયત્સુરેતાઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ ! હે મનુષ્યો તમે યત્-જે કારણે દૃશાન:-દેખાડનાર, રુક્મ:-સોનેરી, શ્રિયે-શોભા માટે, સ્વાન:-પ્રદીપક, દુર્મર્ષમ્-સર્વ દુઃખોથી રહિત, આયુઃ-જીવન બનાવનાર, અમૃત:-અવિનાશી, અગ્નિ:- તેજસ્વરૂપ, ડુર્વા-પૃથિવીની સાથે પદાર્થોને વિ+અદ્યૌત્-પ્રકાશિત કરે છે, વયોભિ:-વ્યાપક ગુણોથી યુક્ત અભવત્-ઉત્પન્ન થનાર અને જે દ્યૌઃ-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ સુરેતા:-ઉત્તમ પરાક્રમવાળા જગદીશ્વરને યત્-જેના માટે એનમ્-એ અગ્નિને અજનયત્-ઉત્પન્ન કરે છે, તે ઈશ્વર. આયુ અને અગ્નિને જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સંસારના રચયિતા અનાદિ ઈશ્વરને તથા જગતના અનાદિ કારણ-પ્રકૃતિને ગુણ-કર્મ-સ્વભાવો સાથે જાણીને-ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓ દીર્ઘાયુ અને ધનવાન બને છે. (૨૫)

યસ્તૈઽઅદ્ય કૃણવદ્ભદ્રશોચેઽપૂપં દૈવ ઘૃતવન્તમગ્ને ।

પ્ર તં નય પ્રતરં વસ્યોઽઅચ્છાભિ સુમ્નં દેવભક્તં યવિષ્ઠ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે ભદ્રશોચે-સેવન કરવા યોગ્ય દીપ્તિમાન યવિષ્ઠ-અત્યંત યુવક, દેવ-દિવ્ય ભોગોના પ્રદાતા, અગ્ને-વિદ્વાન ! ય:-જે તે-આપના ઘૃતવન્તમ્-બહુ ઘૃત આદિ પદાર્થોથી યુક્ત, અભિ+સુમ્નમ્-સુખ સ્વરૂપ, દેવભક્તમ્-વિદ્વાનોના સેવન યોગ્ય, અપૂપમ્-ભોજન યોગ્ય પદાર્થ યુક્ત, વસ્ય:-અત્યંત ભોગ્ય અચ્છ-ઉત્તમ-ઉત્તમ પદાર્થોને કૃણવત્-બનાવે તમ્-તે પ્રતરમ્-રસોઈયાને આપ અદ્ય-આજે જ પ્રણય-પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષિત અત્યુત્તમ વ્યંજનો-વાનગીઓ તથા અત્યંત સ્વાદિષ્ટ અને રુચિકારક અન્નોના નિર્માતા રસોઈયાને ગ્રહણ કરે. (૨૬)

આ તં ભજ સૌશ્રવસેષ્વગ્નડુક્થડુક્થડુઆભજ શસ્યમાને ।

પ્રિયઃ સૂર્યે પ્રિયોઽઅગ્ના ભવાત્યુજ્ઞાતેન ભિનદ્દુજ્જનિત્વૈઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! આપ જે સૌશ્રવસેષુ-સુંદર ધનોમાં વિદ્યમાન છો. તમ્-તેનું આભજ-સેવન કરો, શસ્યમાને-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઉક્થે ઉક્થે-અત્યંત વાક્ વ્યવહારમાં પ્રિયઃ-પ્રીતિ રાખો,

જે સૂર્યે-સ્તુતિકારક પુરુષોમાં થયેલા વ્યવહાર અને અગ્ના-અગ્નિવિદ્યામાં પ્રિયઃ-સેવવા યોગ્ય, જાતેન-ઉત્પન્ન થયેલ અને જનિત્વૈઃ-ઉત્પન્ન થનાર પુરુષની સાથે ઉત્+ભવાતિ-ઉત્પન્ન થાય અને શત્રુઓને ઉત્+ભિનદત્-છિન્ન-ભિન્ન કરે, તમ્-તેનું આપ આભજ-સેવન કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પાક કાર્યમાં કુશળ, સર્વનો પ્રિય, અન્ન અને વ્યંજનોનો ભેદક જે રસોઈયો હોય તેનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. (૨૭)

ત્વામંગ્ને યર્જમાનાઽઅનુ દ્યૂન્ વિશ્વા વસુ દધિરે વાર્યાણિ ।

ત્વયા સહ દ્રવિણમિચ્છમાના વ્રજં ગોમન્તમુશિજો વિવ્વઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! જે ત્વામ્-આપનો આશ્રય કરીને ઝશિજઃ-બુદ્ધિમાન યજમાનાઃ-સંગતિકારક લોકો ત્વયા-આપની સહ-સાથે અનુદ્યૂન્-અનુકૂળ દિવસોમાં વિશ્વા-સર્વ વાર્યાણિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વસુ-દ્રવ્યોને દધિરે-ધારણ કરે, દ્રવિણમ્-ધનની ઇચ્છમાનાઃ-ઈચ્છા કરતા ગોમન્તમ્-સુંદર કિરણોના રૂપથી યુક્ત વ્રજમ્-મેઘ વા ગોસ્થાનને વિ+વ્વઃ-વિવિધ પ્રકારથી ગ્રહણ કરે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રયત્નશીલ વિદ્વાનોના સંગમાં પુરુષાર્થ સાથે પ્રતિદિન વિદ્યા અને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૮)

અસ્તાવ્યગ્નિર્નરાશ્ચ સુશેવો વૈશ્વાનરઽત્રઘ્ષિભિઃ સોમંગોપાઃ ।

અદ્વેષે દ્યાવાપૃથિવી હુવેમ્ દેવા ધત્ત રયિમસ્મે સુવીરમ્ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-શત્રુઓને જીતવાની ઈચ્છા કરનાર વિદ્વાનો ! જે ઋષિભિઃ-ઋષિઓ દ્વારા તમોને નરામ્-નાયક વિદ્વાનોમાં, સુશેવઃ-સુંદર સુખયુક્ત, વૈશ્વાનરઃ-સર્વ મનુષ્યોના આધાર, અગ્નિઃ-પરમેશ્વરની અસ્તાવિ-સ્તુતિ કરી છે.

જે તમે અસ્મે-અમારા માટે સુવીરમ્-જેથી શ્રેષ્ઠ વીરો હોય તે રયિમ્-રાજ્યલક્ષ્મીને ધત્ત-ધારણ કરો, તેને આશ્રિત સોમંગોપાઃ-ઐશ્વર્યના રક્ષક અમે અદ્વેષે-દ્વેષ કરવાને અયોગ્ય, પ્રીતિ વિષયક દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશસ્વરૂપ રાજનીતિ અને પૃથિવીનું રાજ્ય હુવેમ્-ધારણ કરીએ. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે સચ્ચિદાનંદ ઈશ્વરના સેવક ધાર્મિક વિદ્વાન છે, તેઓ પરોપકારી હોવાના કારણે ‘આપ્ત’ હોય છે. એવા લોકોની સંગતિ વિના કોઈપણ પોતાની વિદ્યા તથા પોતાના રાજ્યને સુસ્થિર બનાવી શકતા નથી. (૨૯)

સમિધાગ્નિં દુવસ્યત ઘૃતૈર્બોધયતાતિથિમ્ । આસ્મિન્હુવ્યા જુહોતન ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થો ! તમે જેમ સમિધા-ઉત્તમ રીતે બળતણથી અગ્નિમ્-અગ્નિને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉપદેશક વિદ્વાનોનું દુવસ્યત-સેવન કરો.

જેમ સંસ્કૃત અન્ન તથા ઘૃતૈઃ-ઘી વગેરે પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમીને જગદ્ગુપકાર કરે છે, તેમ અતિથિમ્-અનિયત્ તિથિવાળા ઉપદેશક વિદ્વાનોને બોધયત-સ્વાગત અને ઉત્સાહાદિથી સચેત કરો.

અસ્મિન્-આ જગતમાં હવ્યા-દેવા યોગ્ય પદાર્થોનું આજુહોતન-સારી રીતે દાન કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો સત્પુરુષોની સેવા કરે અને સત્પાત્રોને જ દાન આપે. જેમ અગ્નિમાં ઘૃત આદિનો હોમ કરીને સંસારનો ઉપકાર કરે છે, તેમ વિદ્વાનોને ઉત્તમ પદાર્થોનું દાન કરીને જગતમાં વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરી વિશ્વને સુખી કરો. (૩૦)

उदुं त्वा विश्वे देवाऽअग्ने भरन्तु चित्तिभिः ।

स नो भव शिवस्त्वः सुप्रतीको विभावसुः ॥ ३१ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! જે ત્વા-આપને વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાન પુરુષ ચિત્તિભિઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની સાથે અગ્નિ સમાન ઉદ્+અ+ભરન્તુ-પુષ્ટ કરે. સઃ-તે વિભાવસુઃ-જેનાથી વિવિધ પ્રકારની શોભા વા વિદ્યા પ્રકાશિત થાય. સુપ્રતીકઃ-સુંદર લક્ષણોથી યુક્ત ત્વમ્-આપ નઃ-અમારા માટે શિવઃ-મંગલમય વચનોના ઉપદેશક ભવ-બનો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જેમ વિદ્વાનોથી વિદ્યાનો સંચય કરે છે, તેમ અન્યોને પણ વિદ્યાયુક્ત બનાવે. (૩૧)

प्रेदग्ने ज्योतिष्मान् याहि शिवेभिर्ऋचिभिष्ट्वम् ।

बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिंसीस्तन्वा प्रजाः ॥ ३२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યા પ્રકાશક વિદ્વાન ! ત્વમ્-તું જેમ જ્યોતિષ્માન્-સૂર્યની જ્યોતિઓથી યુક્ત શિવેભિઃ-મંગલકારી અર્ચિભિઃ-પૂજિત બૃહદ્ભિઃ-મહાન્ ભાનુભિઃ-પ્રકાશ ગુણોથી ઇન્-જ ભાસન્-પ્રકાશમાન છે, તેમ પ્રયાહિ-સુખોને પ્રાપ્ત કરો. અને ત્વા-શરીરથી પ્રજાઃ-પાલન યોગ્ય પ્રાણીઓને મા હિંસીઃ-મારો નહિ. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો સહિત રાજન્ ! તું શરીરથી અપરાધ ન કરનાર કોઈ પણ પ્રાણીની હિંસા ન કરીને, વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશથી પ્રજાઓનું પાલન કરતાં, જીવિત અવસ્થામાં સાંસારિક સુખ અને મૃત્યુ પછી મુક્તિ સુખને પ્રાપ્ત કર. (૩૨)

अक्रन्दद्गनि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद् वीरुधः समञ्जन् ।

सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥ ३३ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! તમે જેમ દ્યૌઃ-સૂર્ય પ્રકાશકર્તા છે, તેમ વિદ્યા અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરનાર

તથા અગ્નિ:-પાયકની સમાન શત્રુઓનો નાશ કરનાર વિદ્વાન સ્તનયન્નિવ-વિદ્યુત્ની સમાન અક્રન્દત્-ગર્જના કરતાં અને વીસ્થ:-વનના વૃક્ષોની સમઙ્ગન્-ઉત્તમ રીતે રક્ષા કરતાં ક્ષામા-પૃથિવી પર રેરિહત્-યુદ્ધ કરે.

જ્ઞાન:-રાજનીતિથી પ્રસિદ્ધ થયેલ ઇન્દ્ર:-શુભ લક્ષણોથી પ્રકાશિત સદ્ય:-શીઘ્ર વ્યઘ્યત્-ધર્મયુક્ત ઉપદેશ કરે તથા ભાનુના-પુરુષાર્થના પ્રકાશથી હિ-જ રોદસી-અગ્નિ અને ભૂમિને અન્ત:-રાજધર્મમાં સ્થિર રાખતાં આભાતિ-સારી રીતે પ્રકાશ કરે છે, તે પુરુષ રાજા થવાને યોગ્ય છે એમ નિશ્ચિત જાણો. (૩૩)

ભાવાર્થ : વનના વૃક્ષોની રક્ષા વિના વરસાદની અધિકતા અને આરોગ્ય પ્રાપ્ત થતાં નથી. વિદ્યુત્ વ્યવહારની સમાન દૂરના સમાચારોનું ગ્રહણ, શત્રુઓનો વિનાશ, રાજ્યમાં વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશ વિના સુરાજ્ય થતું નથી. (૩૩)

પ્રપ્રાયમ્ અગ્નિર્ભૃતસ્ય શૃણ્વે વિ યત્સૂર્યો ન રોચતે બૃહદ્ભાઃ ।

અભિ યઃ પૂરું પૃતનાસુ તસ્થૌ દીદાય દૈવ્યોઽઅતિથિઃ શિવો નઃ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાના પુરુષો ! તમે યત્-જે અયમ્-એ અગ્નિ:-સેનાપતિ સૂર્ય:-સૂર્યની ન-સમાન બૃહદ્ભાઃ-અત્યંત પ્રકાશયુક્ત પ્રપ્ર-અત્યંત પ્રકાશની સાથે રોચતે-પ્રકાશિત થાય છે, યઃ-જે નઃ-અમારી પૃતનાસુ-સેનાઓમાં પૂસ્મ્-પૂર્ણ બલયુક્ત સેનાધ્યક્ષની નજીક અભિ+તસ્થૌ-સર્વ રીતે સ્થિર રહે.

દૈવ્યઃ-વિદ્વાનોમાં પ્રિય, અતિથિઃ-નિત્ય ભ્રમણ કરનાર અતિથિ શિવઃ-મંગલદાતા વિદ્વાન્ પુરુષ વિદ્યા + દીદાય-વિદ્યા અને ધર્મને પ્રકાશિત કરે, -જેને હું ભરતસ્ય-સેવવા યોગ્ય રાજ્યના રક્ષક શૃણ્વે-સાંભળું છું, તેને સેનાના અધિપતિ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે પુણ્ય યશવાળા પુરુષની, શત્રુઓ પર વિજય અને વિદ્યા પ્રચારની વાત સાંભળવામાં આવે છે, તે કુલીન પુરુષ જ સેનાથી યુદ્ધ કરાવનાર [સેનાપતિ]ના રૂપમાં અધિકારી બનાવવા યોગ્ય છે. (૩૪)

આપો દેવીઃ પ્રતિગૃભ્ણીત ભસ્મૈતત્સ્યોને કૃણુધ્વઃ સુરભાઽડ્ લોકે ।

તસ્મૈ નમન્તાં જનયઃ સુપત્નીર્માતેવ પુત્રં વિભૃતાપ્સ્વૈનત્ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જે આપઃ પવિત્ર જલની સમાન સંપૂર્ણ શુભ ગુણો અને વિદ્યાઓમાં વ્યાપક બુદ્ધિ દેવીઃ-સુંદર રૂપ સુશીલ સ્વભાવયુક્ત કન્યાઓ સુરભૌ-એશ્વર્યના પ્રકાશક આ લોકે-દર્શનીય લોકમાં પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન-સુખી કરે છે તેને પ્રતિગૃભ્ણીત-સ્વીકાર કરો તથા તેને સુખયુક્ત કૃણુધ્વમ્-કરો.

જે એતત્-એ ભસ્મ-પ્રકાશક તેજ છે. તસ્મૈ-તેને માટે જ સુપત્નીઃ-સુંદર પત્નીઓ જનયઃ-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા પ્રસિદ્ધ થઈ નમસ્તે કરે છે, તેના પ્રત્યે આપ લોકો પણ નમન્તામ્-નમ્ર બનો.

ઉતમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ મળીને પુત્રમ્-પુત્રને માતેવ-માતા સમાન અપ્સુ-પ્રાણોમાં એનત્-એ પુત્રને વિભૂત-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર પ્રસન્નતાથી સ્વયંવર કરીને, ધર્મપૂર્વક સંતાન ઉત્પન્ન કરીને તથા તેને વિદ્વાન બનાવીને ગૃહાશ્રમના ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૩૫)

અપ્સ્વગ્ને સધિષ્ટવ સૌષધીરનુરુધ્યસે । ગર્ભો સજ્જાયસે પુનઃ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વિદ્વાન જીવ ! જે સધિઃ-સહનશીલ તું અપ્સુ-જલોમાં ઓષધીઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓને અનુ+સ્થ્યસે-પ્રાપ્ત થાય છે, સઃ-તે જાયસે-ગર્ભમાં સન્-રહીને પુનઃ-ફરી-ફરી જન્મ-મરણ એ તવ-તારા ક્રમ-અનુક્રમ રહે, એમ જાણ. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે જીવ શરીર ત્યાગ કરે છે, તે વાયુ અને ઔષધિ આદિમાં ભ્રમણ કરીને, ગર્ભને પ્રાપ્ત કરી, યથાસમય શરીર ધારણ કરીને ફરી જન્મ પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૬)

ગર્ભોઽઅસ્યોષધીનાં ગર્ભો વનસ્પતીનામ્ ।

ગર્ભો વિશ્વસ્ય ભૂતસ્યાગ્ને ગર્ભોઽઅપામસિ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-બીજા શરીરને પ્રાપ્ત થનાર જીવ ! જેથી તું અગ્નિની સમાન જે ઓષધીનામ્-સોમલતા આદિ વા યવાદિ ઔષધિઓના ગર્ભઃ-દોષોના મધ્ય ગર્ભઃ-ગર્ભ વનસ્પતીનામ્-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓની મધ્ય ગર્ભઃ-શોધક વિશ્વસ્ય-સર્વ ભૂતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ સંસારની મધ્ય ગર્ભઃ-ગ્રહણ કરનાર અને જે અપામ્-પ્રાણ અથવા જલોના ગર્ભઃ-ગર્ભરૂપ અંદર રહેનાર અસિ-તેથી તું અજ અર્થાત્ સ્વયં જન્મરહિત અસિ-છે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્ની સમાન સર્વની અન્તર્ગત શરીર ધારણ કરનાર જીવ છે, તેને જાણો. (૩૭)

પ્રસદ્ય ભસ્મના યોનિમ્પશ્ચ પૃથિવીમગ્ને ।

સઃસૃજ્ય માતૃભિષ્ટ્વં જ્યોતિષ્માન્ પુનરાસદઃ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પ્રકાશમાન પુરુષ, સૂર્ય સમાન જ્યોતિષ્માન્-પ્રશંસિત પ્રકાશથી યુક્ત જીવ ! ત્વમ્-તું ભસ્મના-શરીર દાહ પછી પૃથિવીમ્-પૃથિવી ચ-અગ્નિ આદિ અને અપઃ-જલની મધ્યમાં યોનિમ્-દેહ ધારણના કારણને પ્રસદ્ય-પ્રાપ્ત થઈને માતૃભિઃ-માતાના ઉદરમાં વાસ કરીને પુનઃ-ફરી આસદઃ-શરીરને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! આપ જ્યારે શરીર છોડો છો, ત્યારે તેને ભસ્મીભૂત કરીને પૃથિવી આદિ-પંચભૂતોની સાથે સંયુક્ત કરો.

તમે અને તમારા આત્માઓ માતાઓના શરીરોમાં ગર્ભાશયમાં દાખલ થઈને ફરી શરીર ધારણ કરીને વિદ્યમાન બનો છો. (૩૮)

પુનરાસદ્ય સદનમપશ્ચ પૃથિવીમગ્ને ।

શેષે માતુર્યથોપસ્થેઽન્તરંસ્યાઃ શિવતમઃ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ઈચ્છા આદિ ગુણોથી પ્રકાશિત જીવ ! જે કારણે તું અપઃ-જલો ચ-અને પૃથિવીમ્-ભૂમિતલના સદનમ્-સ્થાનને પુનઃ-ફરી-ફરી આસદ્ય-પ્રાપ્ત થઈને અસ્યામ્-એ માતાના અન્તઃ-ગર્ભાશયમાં શિવતમઃ-અત્યંત મંગલકારી બનીને યથા-જેમ બાળક માતુઃ-માતાની ઉપસ્થે-ગોદમાં શેષે-સૂએ છે, તેમ માતાની સેવામાં મંગલકારી બન. (૩૯)

ભાવાર્થ : જેમ માતાઓ પોતાના સંતાનોને સુખ આપે છે, તેમ જ પુત્રોએ અનુકૂળતાપૂર્વક સેવા દ્વારા પોતાની માતાઓને નિરંતર આનંદિત રાખવી જોઈએ. માતા-પિતાથી કદીપણ વિરોધ ન કરવો જોઈએ અને માતા-પિતાએ તેને અધર્મ અને કુશિક્ષાથી યુક્ત કદીપણ ન કરવા જોઈએ. (૩૯)

પુનરૂર્જા નિવર્ત્તસ્વ પુનરગ્નઽઙ્ઘાયુષા । પુનર્નઃ પાહ્યઃઽહસઃ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વીન્ માતા-પિતા ! આપ ઙ્ઘાયુષા-અન્ન અને જીવન સાથે નઃ-અમારી ઉન્નતિ કરો, પુનઃ-ફરી-વારંવાર અંહસઃ-દુષ્ટ આચરણોથી પાહિ-રક્ષા કરો.

હે પુત્ર ! તું ઋર્જા-પરાક્રમ સાથે પાપોથી નિવર્ત્તસ્વ-દૂર રહે અને પુનઃ-ફરી અમને પણ પાપોથી બચાવ.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન માતા-પિતા ઉત્તમ સંતાનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા દુષ્ટાચરણથી દૂર રાખે, તેમ સંતાન પણ તેને પાપાચરણથી સદા પૃથક્ રાખે. તે વિના સર્વ ધાર્મિક બની શકતા નથી. (૪૦)

સહ રચ્યા નિવર્ત્તસ્વાગ્ને પિન્વસ્વ ધારંયા । વિશ્વપ્સ્ન્યા વિશ્વતસ્પરિ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન પુરુષ ! આપ વિશ્વપ્સ્ન્યા સર્વ પદાર્થોના ભોગનું સાધન ધારંયા-સુસંસ્કૃત વાણી રચ્યા-અને ધનની સહ-સાથે વિશ્વતસ્પરિ-સર્વ જગતના મધ્યમાં નિ-નિરંતર વર્ત્તસ્વ-નિશ્ચયથી વિદ્યમાન રહો અને અમારું પિન્વસ્વ-સેવન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ આ સંસારમાં સુબુદ્ધિ અને પુરુષાર્થ દ્વારા શ્રીમાન બનીને અન્યોને પણ ધનવાન બનાવવા જોઈએ. (૪૧)

બોધા મેઽઅસ્ય વર્ચસો યવિષ્ટ મંહિષ્ટસ્ય પ્રભૃતસ્ય સ્વધાવઃ ।

પીયતિ ત્વોઽનુ ત્વો ગૃણાતિ વન્દારુષ્ટે તન્વં વન્દેઽઅગ્ને ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ટ-અત્યંત યુવક ! સ્વધાવઃ-પ્રશંસિત બહુ અન્નોવાળા, અગ્ને-ઉપદેશને યોગ્ય શ્રોતાજન ! તું મે-મારા પ્રભૃતસ્ય-ઉત્તમ રીતિથી ધારણ વા પોષણ કરનાર, મંહિષ્ટસ્ય-સર્વથા ભાષણને યોગ્ય અસ્ય-આ વચસઃ-વચનને અભિપ્રાયને બોધ-જાણી જે ત્વઃ-નિંદક પુરુષ પીયતિ-નિંદા કરે ત્વઃ-કોઈ અનુ-પરોક્ષમાં ગૃણાતિ-સ્તુતિ કરે તે તે-આપના તન્વમ્-શરીરને વન્દાસ્ત-અભિવાદન કરનાર હું વન્દે-સ્તુતિ કરું છું. (૪૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે કોઈ, કોઈને ભણાવે અથવા ઉપદેશ આપે, ત્યારે ભણનાર અને સાંભળનારે ધ્યાન આપીને ભણવું અને સાંભળવું જોઈએ. જ્યારે સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય થઈ જાય ત્યારે સત્યનું પ્રહણ કરી, અસત્યનો ત્યાગ કરવો જોઈએ.

આમ કરવાથી કોઈ નિંદા કરે અથવા કોઈ પ્રશંસા કરે, તેમ છતાં સત્યનો કદી ત્યાગ ન કરવો અને અસત્યનું પ્રહણ કરવું નહિ. આ મનુષ્ય માટે વિશેષ ગુણ છે. (૪૨)

સ બોધિ સૂરિર્મઘવા વસુપતે વસુદાવન્ ।

યુયોધ્યુસ્મદ્દ્વેષાંશ્ચસિ વિશ્વકર્મણે સ્વાહા ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે વસુપતે-ધનોના પાલક, વસુદાવન્-સુપાત્રોને ધન આપનાર ! જે મઘવા-પ્રશંસિત વિદ્યાથી યુક્ત સૂરિઃ-મેધાવી વિદ્વાન્ ! આપ સત્યને બોધિ-જાણો સઃ-તે આપ વિશ્વકર્મણે-સર્વ શુભ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે સ્વાહા-સત્યવાણીથી ઉપદેશ કરતાં આપ અસ્મત્-અમને દ્વેષાંસિ-દ્વેષયુક્ત કર્મોથી વિ+યુયોધિ-સદા દૂર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય બ્રહ્મચર્યથી જિતેન્દ્રિય બનીને દ્વેષનો ત્યાગ કરીને, ધર્મના માધ્યમથી ઉપદેશ આપીને તથા સાંભળીને પ્રયત્નશીલ રહે છે, તે જ ધાર્મિક વિદ્વાન સત્ય અને અસત્યને જાણનાર અને તેનો ઉપદેશ કરવામાં સમર્થ બને છે, અન્ય હઠાગ્રહી, અભિમાની અને ક્ષુદ્રાશય-નીચ હૃદયના મનુષ્યો નહિ. (૪૩)

પુનસ્ત્વાડડિત્યા રુદ્રા વસવઃ સમિન્ધતાં પુનર્બ્રહ્માણો વસુનીથ યજ્ઞૈઃ ।

ઘૃતેન ત્વં તન્વં વર્ધયસ્વ સત્યાઃ સન્તુ યર્જમાનસ્ય કામાઃ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વસુનીથ-વેદાદિ શાસ્ત્રના બોધરૂપ ધન અને સુવર્ણાદિ ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર અધ્યાપક વા શ્રોતા ! ત્વમ્-આપ યજ્ઞૈઃ-અધ્યયન-અધ્યાપન આદિ ક્રિયારૂપ યજ્ઞોથી તથા ઘૃતેન-સુસંસ્કૃત ઘૃત આદિ વા જલથી તન્વમ્-શરીરને નિત્ય વર્ધયસ્વ-વધારો. પુનઃ-પઠન-પાઠન પછી ત્વા-આપને આદિત્યાઃ-પૂર્ણ વિદ્યા બળથી યુક્ત સ્વાઃ-મધ્યમકોટિના વિદ્વાન વસવઃ-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન, બ્રહ્માણઃ-ચારેય વેદોના અધ્યયનથી 'બ્રહ્મા' પદને પ્રાપ્ત વિદ્વાન સમ + ઙ્ચતામ્-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે, આ રીતે અનુષ્ઠાન કરવાથી યર્જમાનસ્ય-યજ્ઞ, સત્સંગ અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનાર પુરુષની કામાઃ-અભિલાષાઓ સત્યાઃ-સત્ય સન્તુ-બને. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો પ્રયત્નથી સમસ્ત વિદ્યાઓ ભણીને-ભણાવીને વારંવાર સત્સંગ કરે છે. વળી કુપથ્ય અને વિષયોનો ત્યાગ કરી શરીર અને આત્માના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને નિત્ય પુરુષાર્થ કરે છે. તેઓના સંકલ્પો સિદ્ધ થાય છે. અન્યોના નહીં. (૪૪)

અપેત વ્રીત વિ ચ સર્પતાતો યેડ્ઞ સ્થ પુરાણા યે ચ નૂતનાઃ ।

અદાદ્યમોડવસાનં પૃથિવ્યાડઅક્રન્નિમં પિતરો લોકમસ્મૈ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! **યે-જે** અન્ન-આ સમયે **પૃથિવ્યા:-**ભૂમિ પર વિદ્યમાન **પુરાણા:-**પ્રથમ વિદ્યા ભણી ચૂક્યા છે, **ચ-અને** **યે-જે** નૂતના:-વર્તમાનમાં વિદ્યાભ્યાસ કરનારા, **પિતર:-**પિતા, અધ્યાપક વા પરીક્ષક **સ્થ-છે.** તે-તેઓ **અસ્મૈ-એ** સત્ય સંકલ્પી મનુષ્ય માટે **ઇમમ્-આ** **લોકમ્-વૈદિક** જ્ઞાન લોકને **અક્રન્-પ્રાપ્ત** કરે.

જે તમને **યમ:-**પ્રાપ્ત થયેલ પરીક્ષક **અવસાનમ્-અવકાશ** વા અધિકાર **અદાત્-પ્રદાન** કરે, તે તમે **અત:-**એ અધર્મથી **અપ+ઇત-દૂર** રહો, અને ધર્મને **વિ+ઇત-વિશેષ** રીતે પ્રાપ્ત કરો. **અન્ન-અને** આ સમયે જ **વિ+સર્પત-વિશેષતાથી** પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા અને આચાર્યનો એ પરમ ધર્મ છે, કે સંતાનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષાની પ્રાપ્તિ કરાવે. જે અધર્મથી મુક્ત અને ધર્મથી યુક્ત તથા પરોપકાર પ્રેમી વૃદ્ધ અને યુવા વિદ્વાન છે, તેઓ નિરંતર સત્ય ઉપદેશથી અવિદ્યાને દૂર કરીને વિદ્યાને પ્રવૃત્ત કરીને કૃત-કૃત્ય બને. (૪૫)

સંજ્ઞાનમસિ કામધરણં મયિ તે કામધરણં ભૂયાત્ ।

અગ્નેર્ભસ્માસ્યગ્નેઃ પુરીષમસિ ચિત્ સ્થ પરિચિત્ઽઋર્ધ્વચિત્ઃ શ્રયધ્વમ્ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે **સંજ્ઞાનમ્-સંપૂર્ણ** વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત **અસિ-છો,** જે આપ **અગ્ને:-**અગ્નિથી બનેલ **ભસ્મ-રાખ** સમાન દોષોને ભસ્મ કરો **અસિ-છો,** **અગ્ને:-**વિદ્યુતના જે **પુરીષમ્-પૂર્ણ** બળને પ્રાપ્ત કરેલ **અસિ-છો,** તે વિજ્ઞાન, ભસ્મ અને બળ મને પ્રાપ્ત કરાવો.

જે તે-આપના જે **કામધરણમ્-સંકલ્પનો** આધાર અન્ત:કરણ છે, તે **કામધરણમ્-કામનો** આધાર **મયિ-મારામાં** પણ **ભૂયાત્-બને.**

જેમ તમે વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી **ચિત:-**એકત્ર થઈ, **પરિચિત:-**સર્વ પદાર્થોને સર્વત્રથી એકત્ર કરનાર **ઋર્ધ્વચિત:-**ઉત્કૃષ્ટ ગુણોના સંચયકર્તા પુરુષાર્થનું **શ્રયધ્વમ્-સેવન** કરો છો, તેમ અમે પણ કરીએ. (૪૬)

ભાવાર્થ : જિજ્ઞાસુ લોકો સદા વિદ્વાનોને વિદ્યાઓની ઈચ્છા કરીને પ્રાર્થનાપૂર્વક પૂછે, કે જેટલું આપમાં પદાર્થ વિજ્ઞાન છે, તેટલું સર્વ અમારામાં સ્થાપિત કરો. જેટલી ઉસ્તક્રિયાઓ આપ જાણો છો, તેટલી અમને પણ શીખવો. જેમ અમે આપને આશ્રિત રહીએ, તેમ તમે પણ અમારા આશ્રિત રહો. (૪૬)

અય્ઃસોઽઅગ્નિર્યસ્મિન્ત્સોમમિન્દ્રઃ સુતં દ્વધે જઠરૈ વાવશાનઃ ।

સહસ્ત્રિયં વાજ્મત્યં ન સપ્તિઃ સસવાન્ત્સન્ત્સૂયસે જાતવેદઃ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે **જાતવેદ:-**વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાન્ ! જેમ **સસવાન્-દાન** કરતાં **સન્-આપ** **સ્તૂયસે-પ્રશંસાને** યોગ્ય છો. **અયમ્-એ** **અગ્નિ:-**અગ્નિ અને **ઇન્દ્ર:-**સૂર્ય **યસ્મિન્-જેમાં** **સોમમ્-સર્વ** ઔષધિઓના રસને ધારણ કરે છે, જે **સુતમ્-તૈયાર** કરેલ પદાર્થ **જઠરૈ-પેટમાં** હું **દ્વધે-ધારણ** કરું છું, **સ:-**તે હું **વાવશાન:-**શીઘ્ર કામના કરતાં, **સહસ્ત્રિયમ્-સાથે** વિદ્યમાન મારી સ્ત્રી-પત્નીને ધારણ કરું છું, અને આપની સાથે

વાજમ્-અન્ન આદિ પદાર્થોને અત્યમ્-વ્યાપ્ત હોવા યોગ્યની ન-સમાન સપ્તિમ્-ઘોડાને દધે-ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય સર્વ રસોને ગ્રહણ કરીને સમસ્ત સંસારને રસયુક્ત કરે છે, જેમ પતિની સાથે સ્ત્રી અને સ્ત્રીની સાથે પતિ આનંદ ભોગવે છે, તેમ હું તે રસને ધારણ કરું છું. જેમ સદ્ગુણોથી યુક્ત થઈને આપ સ્તુતિ પાત્ર બનો છો, તેમ હું પણ પ્રશંસિત બનું. (૪૭)

અગ્ને યત્તૈ દિવિ વર્ચઃ પૃથિવ્યાં યદોષધીષ્વપ્સ્વા યજત્ર ।

યેનાન્તરિક્ષમુર્વાતિતન્થ ત્વેષઃ સ ભાનુરર્ણવો નૃચક્ષાઃ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે યજત્ર-સંગ કરવા યોગ્ય અગ્ને-વિદ્વાન્ ! યત્-જે તે-આપનું અગ્નિ સમાન દિવિ-દીપ્તિમય આત્મામાં વર્ચઃ-વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ છે, યત્-જે પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી ઓષધીષુ-જવ વગેરે ઔષધિઓ અને અપ્સુ-પ્રાણો અથવા જલોના વિષયમાં વર્ચઃ-તેજ અર્થાત્ વિજ્ઞાન પ્રકાશ છે. યેન-જેથી નૃચક્ષાઃ-મનુષ્યોને બતાવનાર ભાનુઃ-સૂર્ય અર્ણવઃ-અધિક જલયુક્ત ત્વેષઃ-સાગર વિસ્તૃત છે, યેન-જેથી અન્તરિક્ષમ્-આકાશને ઝરુ-અધિક આતતન્થ-ચોતરફ વિસ્તાર યુક્ત છે, તેમ સઃ-આપ તે વિજ્ઞાનપ્રકાશને અમારામાં સ્થાપિત કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : આ જગતમાં જેને સૃષ્ટિના પદાર્થોનું વિજ્ઞાન જેવું હોય, તેવું અન્યોને શીઘ્ર ગ્રહણ કરાવે. જે ગ્રહણ ન કરાવે તો તે નષ્ટ પામેલું અન્યોથી પ્રાપ્ત થઈ શકશે નહિ. (૪૮)

અગ્ને દિવોઽર્ણમચ્છા જિગાસ્યચ્છા દેવાંરઽઙ્ગિષે ધિષ્ણ્યા યે ।

યા રોચને પરસ્તાત્ સૂર્યસ્ય યાશ્ચાવસ્તાદુપતિષ્ઠન્તઽઆર્ષઃ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જે આપ દિવઃ-પ્રકાશથી અર્ણમ્-વિજ્ઞાનને યાઃ જે આપઃ-પ્રાણ વા જલ સૂર્યસ્ય-સૂર્યના રોચને-પ્રકાશમાં પરસ્તાત્-ઉપર છે. ચ-અને યાઃ-જે અવસ્તાત્-નીચે ઉપતિષ્ઠન્તે-સમીપમાં સ્થિત છે, તેની અચ્છ-સારી રીતે જિગાસિ-સ્તુતિ કરો છો.

યે-જે ધિષ્ણ્યાઃ-ઉપદેશ કરનાર છે તે દેવાન્-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્યાર્થીઓ વા વિદ્વાનો પ્રત્યે વિજ્ઞાનને અચ્છ-સારી રીતે ઙ્ગિષે-ઉપદેશ કરો છો, તેનો આપ અમારા માટે પણ ઉપદેશ કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે અત્યંત વિચારપૂર્વક વિદ્યુત્ અને સૂર્યના કિરણોમાં ઉપર, નીચે રહેનાર જલ અને વાયુ સંબંધી બોધને જેવા પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો અન્યોને પણ સમ્યક્ ઉપદેશ કરે. (૪૯)

પુરીષ્ણાસોઽગ્નયઃ પ્રાવણેભિઃ સ્જોષસઃ ।

જુષન્તાં યજ્ઞમદ્રુહોઽનમીવાઽઙ્ગો મહીઃ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યો પ્રાવણેભિઃ વિવિધ વિજ્ઞાનોથી યુક્ત થઈને અનમીવાઃ-રોગરહિત, અદ્દુહઃ-દ્રોહરહિત, સજોષસઃ-સમાન સેવા અને પ્રીતિયુક્ત, પુરીઘ્યાસઃ-પૂર્ણ ગુણ-કર્મોમાં નિપુણ અગ્નયઃ-અગ્નિસમાન વિદ્યમાન તેજસ્વી વિદ્વાન યજ્ઞમ્-વિદ્યા, વિજ્ઞાન, દાન અને ગ્રહણરૂપ યજ્ઞ અને મહીઃ-મહાન ઇષઃ-ઈચ્છાઓનું જુષન્તામ્-સેવન કરે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અવિરુદ્ધ-અનુકૂળ બનીને સત્તા-સામાન્ય રૂપથી સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેમ રોગ તથા દ્રોહ આદિ દોષોથી રહિત વિદ્વાન્ મનુષ્ય પરસ્પર પ્રેમી બનીને તથા વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને મહાન સુખોનો સદા ભોગ કરે. (૫૦)

इडामग्ने पुरुदंसंसुनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।

स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥ ५१ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! તે આપની સા-તે સુમતિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અસ્મે-અમારી ભૂતુ-બને, જેથી આપના નઃ-અને અમારા જે વિજાવા-વિવિધ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક સૂનુઃ-ઉત્પન્ન થનાર તનયઃ-પુત્ર સ્યાત્-બને.

તે સુબુદ્ધિથી તે હવમાનાય-વિદ્યાગ્રહણની સ્પર્ધા કરનાર તે પુત્ર માટે ઇડામ્-સ્તુતિ યોગ્ય વાણીને ગોઃ-વાણી સંબંધી શશ્વત્તમમ્-અનાદિ રૂપ અત્યંત વેદ જ્ઞાનને તથા પુસ્તંસમ્-જેનાથી અનેક કર્મો સિદ્ધ થાય એવા સનિમ્-ઋગ્વેદાદિ વેદ વિભાગને સાધ-સિદ્ધ કરો અને અગ્ને-હે વિદ્વાન્-અધ્યાપક અમે પણ સિદ્ધ કરીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : માતા-પિતાએ પોતાના આચાર્યના નિર્દેશ અનુસાર સાવધાનીથી ગર્ભાધાન આદિ સંસ્કારોની વિધિથી સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને વેદ અને ઈશ્વરના વિજ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ લક્ષ્મીનું ઉપાર્જન કરવું જોઈએ.

અન્ય કોઈ એવો ધર્મ-વ્યવહાર નથી, કે જે સંતાન સુખના કોષ-ભંડારની સમાન હોય, તેમ નિશ્ચય જાણો. (૫૧)

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः ।

तं जानन्नग्नुऽआ रोहार्था नो वर्धया रयिम् ॥ ५२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન શુદ્ધ અન્તઃકરણ યુક્ત વિદ્વાન્ ! જે તે આપના ઋત્વિયઃ-ઋતુકાલમાં પ્રાપ્ત થયેલ અયમ્-એ પ્રત્યક્ષ યોનિઃ-દુઃખનાશક અને સુખકારક વ્યવહાર છે, યતઃ-જેથી જાતઃ-ઉત્પન્ન થયેલ આપ અરોચથાઃ-પ્રકાશિત બનો, તમ્-તેને જાનન્-જાણતા આપ આરોહ-શુભ ગુણોથી ઉન્નત બનો, અથ-તદનન્તર નઃ-અમારા માટે રયિમ્-પ્રશંસિત લક્ષ્મીની વર્ધય-વૃદ્ધિ કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : હે માતા, પિતા અને આચાર્ય આપ પુત્ર અને પુત્રીઓને ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યના સેવનથી શ્રેષ્ઠ વિદ્યાને ઉત્પન્ન કરીને ઉપદેશ કરો - હે સંતાનો ! તમે શ્રેષ્ઠ વિદ્યા અને સદાચારથી અમને ઉત્તમ

સેવા અને ધનથી સદા સુખી કરો. (૫૨)

ચિદસિ તયા દેવતયાઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ।

પરિચિદસિ તયા દેવતયાઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે કન્યે ! જે તું ચિત-જ્ઞાનયુક્ત અસિ-છો. તયા-તે દેવતયા-દિવ્ય ગુણ પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્યાન્ સ્ત્રી સાથે અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણોની સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ સીદ-સ્થિર રહે.

હે બ્રહ્મચારિણી ! જે તું પરિચિત્-વિવિધ વિદ્યાને પ્રાપ્ત થયેલી અસિ-છો, તે તું તયા-તે દેવતયા-ધર્માનુષ્ઠાનથી યુક્ત દિવ્ય સુખદાયક ક્રિયાની સાથે અઙ્ગિસ્વત્-ઈશ્વરની સમાન ધ્રુવા-અચલ સીદ-રહે. (૫૩)

ભાવાર્થ : સર્વ માતા-પિતાઓ, અધ્યાપિકાઓ તથા વિદુષીઓએ કન્યાઓને આ રીતે સંબોધન કરવું જોઈએ. હે કન્યાઓ ! તમે સર્વ પૂર્ણ અખંડ બ્રહ્મચર્યથી સંપૂર્ણ વિદ્યાઓ અને ઉત્તમ શિક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરીને યુવતીઓ બનીને - પોતાની સમાન વરોની સાથે સ્વયંવર વિવાહ કરીને ગૃહાશ્રમ કરો તો સર્વ સુખોને પામો અને ઉત્તમ સંતાન પણ ઉત્પન્ન થાય. (૫૩)

લોકં પૃળ છિદ્રં પૃળાથો સીદ ધ્રુવા ત્વમ્ ।

ઇન્દ્રાગ્ની ત્વા બૃહસ્પતિરસ્મિન્ યોનાવસીષદન્ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે કન્યે ! જે ત્વા-તને યોનો-બંધનોથી છોડાવનાર, મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાવનાર અસ્મિન્-એ વિદ્યાના બોધમાં ઇન્દ્રાગ્ની-માતા-પિતા તથા બૃહસ્પતિ:-મહાન વેદવાણીઓની રક્ષા કરનાર અધ્યાપિકા સ્ત્રી અસીષદન્-શિક્ષાઓ શીખવે, તેમાં ત્વમ્-તું ધ્રુવા-દૃઢ નિશ્ચયપૂર્વક સીદ-સ્થિત બન. અથો-ત્યાર પછી છિદ્રમ્-છિદ્રને પૃળ-પૂર્ણ કર, [અર્થાત્-ન્યૂનતાને પૂર્ણ કર.]તથા લોકમ્-જોવા યોગ્ય પ્રાણીઓને પૃળ-તૃપ્ત કર. (૫૪)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા અને આચાર્ય કન્યાઓને ધાર્મિક વિદ્યા અને શિક્ષાનો ઉપદેશ કરે. જે શિક્ષાઓનો સ્વીકાર કરીને કન્યાઓ નિશ્ચિંત બનીને, સર્વ દુર્વ્યસનોનો ત્યાગ કરીને, સમાવર્તન સંસ્કાર પછી વિવાહ કરીને પૂર્ણ પુરુષાર્થ દ્વારા આનંદમાં રહે. (૫૪)

તાઽસ્ય સૂદદોહસઃ સોમંશ્શ્રીણન્તિ પૃશ્નયઃ ।

જન્મન્દેવાનાં વિશાંસ્ત્રિષ્વા રોચને દિવઃ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : જે દેવાનામ્-દિવ્ય વિદ્યાન પતિઓની સૂદદોહસઃ-સુંદર રસોઈયા અને ગાય આદિને દોહનારી સેવકોયુક્ત પૃશ્નયઃ-અત્યંત કોમળ અને સુડોલ શરીર યુક્ત પત્નીઓ છે, તે જન્મન્-બીજા વિદ્યા-રૂપ જન્મમાં વિદુષી બનીને દિવઃ-દિવ્ય અસ્ય-એ ગૃહાશ્રમના સોમમ્-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસથી યુક્ત

ભોજન શ્રીણન્તિ-પકાવે છે, તા:-તે બ્રહ્મચારિણી આરોચને-સારા રુચિકર વ્યવહારમાં ત્રિષુ-ત્રણે અર્થાત્ ભૂત-ભવિષ્ય-વર્તમાન કાલોમાં સુખદાયક બને છે. તથા વિશ:-ઉત્તમ સંતાનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે સુશિક્ષિત યુવકોની પોતાના સમાન રૂપ અને ગુણોથી યુક્ત સ્ત્રીઓ હોય, ત્યારે ગૃહાશ્રમમાં સદા સુખ રહે અને ઉત્તમ સંતાન ઉત્પન્ન થાય છે. તેના વિના વર્તમાનમાં સાંસારિક ઉન્નતિ તથા મૃત્યુ પછી મોક્ષ પ્રાપ્તિ સંભવ નથી. (૫૫)

इन्द्रं विश्वाअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।

रथीतमं रथीनां वाजानां सत्यपतिं पतिम् ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ વિશ્વા: સર્વ ગિર:-વેદ વિદ્યાથી સંસ્કૃત વાણીઓ સમુદ્રવ્યચસમ્-સમુદ્ર સમાન વ્યાપ્તિયુક્ત વાજાનામ્-સંગ્રામો તથા રથીનામ્-પ્રશંસિત રથોવાળા વીર પુરુષોમાં રથીતમમ્-અત્યંત પ્રશંસિત રથવાળા અર્થાત્ મહારથી, સત્યપતિમ્-સત્ અર્થાત્ ઈશ્વર, વેદ, ધર્મ વા શ્રેષ્ઠ પુરુષોના રક્ષક, પતિમ્-સર્વ ઐશ્વર્યના સ્વામીને અવીવૃધન્-વધારે અને ઇન્દ્રમ્-સર્વ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓની વૃદ્ધિ કરે. (૫૬)

ભાવાર્થ : જે કુમાર અને કુમારીઓ દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન પૂર્વક સાંગોપાંગ વેદને ભણીને પોતાની પ્રસન્નતાથી સ્વયંવર વિવાહ કરીને ઐશ્વર્ય માટે પ્રયત્ન કરે છે.

ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી વ્યભિચાર રહિત રહીને ઉત્તમ સંતાનો ઉત્પન્ન કરીને પરોપકારમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. તેઓ આ લોક અને પરલોકમાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય અવિદ્વાન્ નહિ. (૫૬)

समित्सं कल्पेथां संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ ।

इषमूर्जमभि संवसानौ ॥ ५७ ॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને સંપ્રિયૌ-પરસ્પર સમ્યક્ પ્રીતિયુક્ત, રોચિષ્ણૂ-વિષયાશક્તિથી રહિત હોવાના કારણે દેદીપ્યમાન, સુમનસ્યમાનૌ-બે મિત્ર વિદ્વાનોની સમાન વિદ્યમાન, સવસાનૌ-સુંદર વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી યુક્ત બનીને ઇષમ્-ઈચ્છાને સમ+ઇતમ્-મળીને પ્રાપ્ત કરો અને ઋર્જમ્-પરાક્રમને અભિ-સન્મુખ સંકલ્પેથામ્-સમાન અભિપ્રાયથી સમર્પિત કરો. (૫૭)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી અને પુરુષ સર્વથા વિરોધ છોડીને, પરસ્પર પ્રિય આચરણમાં સંલગ્ન, વિદ્યા અને વિચારથી યુક્ત, ઉત્તમ વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી અલંકૃત બનીને પ્રયત્નશીલ બને, તો ઘરમાં કલ્યાણ આરોગ્યની વૃદ્ધિ થાય છે. પરંતુ જો સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર દ્વેષ કરનારા હોય તો દુ:ખસાગરમાં ડૂબે છે. (૫૭)

सं वां मनांसि सं व्रता समु चित्तान्याकरम् ।

अग्नें पुरीष्याधिपा भव त्वं न इषमूर्जं यजमानाय धेहि ॥ ५८ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ હું આચાર્ય વામ્-તમે બન્નેને સંમનાંસિ-એક ધર્મમાં અર્થાત્ સંકલ્પ-વિકલ્પ આદિ અન્તઃકરણની વૃત્તિઓને, સંવૃતા-સત્યભાષણ આદિ વ્રતોને, ડ-અને સમ્ ચિત્તાનિ-ઉપદિષ્ટ ધર્મયુક્ત કર્મોને આ-સારી રીતે અકરમ્-સિદ્ધ કરું છું, તેમ તમે બન્ને મારી પ્રીતિ અનુકૂળ આચરણ કરો.

હે પુરીષ્ઠ્ય-રક્ષા યોગ્ય વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન અગ્ને-ઉપદેશક, આચાર્ય અથવા રાજન્ ! ત્વમ્-આપ નઃ-અમારી અધિપાઃ-અધિક રક્ષા કરનાર ભવ-બનો. યજમાનાય-ધર્માનુકૂલ સત્સંગના સ્વભાવના પુરુષ અથવા સ્ત્રીઓ માટે ઇષમ્-અન્ન આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થો તથા ઝર્જમ્-શરીર તથા આત્માના બલને ઘેહિ-ધારણ કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : ઉપદેશકજન શક્ય તેટલા એક ધર્મ, એક કર્મ, એક નિષ્ઠા તથા સમાન સુખ-દુઃખ જેમ બની શકે, તેવી શિક્ષા આપે.

સર્વ સ્ત્રી-પુરુષ આપ્ત વિદ્વાન્ રૂપી ઉપદેશક અને અધ્યાપકની જ સેવા કરે અને તેઓ તેના ઐશ્વર્ય તથા પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરે.

સર્વના એક ધર્મ વિના આત્માઓમાં મિત્રતા ઉત્પન્ન થતી નથી અને તેના વિના નિરંતર સુખ પણ [સંભવ] નથી. (૫૮)

અગ્ને ત્વં પુરીષ્ઠ્યો રયિમાન્ પુષ્ટિમાંર ॥ૐસિ ॥

શિવાઃ કૃત્વા દિશ્ઃ સર્વાઃ સ્વં યોનિમિહાસદઃ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! જેથી ત્વમ્-આપ ઇહ-આ સંસારમાં પુરીષ્ઠ્યઃ-એકમત પાલનમાં તત્પર, રયિમાન્-વિદ્યા, વિજ્ઞાન અને ધનથી યુક્ત તથા પુષ્ટિમાન્-પ્રશંસિત શરીર અને આત્માના બલથી યુક્ત અસિ-છો, તેથી સવાઃ-સર્વ દિશ્ઃ-ઉપદેશને યોગ્ય પ્રજાને શિવાઃ-કલ્યાણકારી ઉપદેશથી યુક્ત કૃત્વા-કરીને સ્વમ્-પોતાના યોનિમ્-સુખદાયક અને દુઃખનાશક ઉપદેશને આ+અસદઃ-સ્થાપિત કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજનોએ જે આ સંસારમાં જિતેન્દ્રિય, ધાર્મિક અને પરોપકાર-પ્રિય વિદ્વાન્ હોય, તેઓને પ્રજામાં ઉપદેશ માટે નિયુક્ત કરવા જોઈએ.

ઉપદેશકોએ પ્રયત્નપૂર્વક સર્વને શિક્ષા દ્વારા એક ધર્મથી યુક્ત, સદા અવિરોધી અને સુખ સંપન્ન બનાવે. (૫૯)

ભવતં નઃ સમનસૌ સચેતસાવરેપસૌ ॥

મા યજ્ઞઃ હિંસિષ્ટં મા યજ્ઞપતિં જાતવેદસૌ શિવૌ ભવતમદ્ય નઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને નઃ-અમારા માટે સમનસૌ-સમાન વિચારયુક્ત સચેતસૌ-સમાન જ્ઞાનયુક્ત, અરેપસૌ-અપરાધ રહિત-નિર્દોષ ભવતમ્-બનો, યજ્ઞમ્-પ્રાપ્ત થનાર ધર્મની મા હિંસિષ્ટમ્-હિંસા ન કરો, યજ્ઞપતિમ્-ઉપદેશ દ્વારા ધર્મના રક્ષકને મા-મારો નહિ. અદ્ય-આજ નઃ-

અમારા માટે જાતવેદસૌ-સંપૂર્ણ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત થઈ શિવૌ-મંગલકારી ભવતમ્-બનો. (૬૦)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સત્ય ઉપદેશ અને અધ્યાપન માટે પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત, પ્રગલ્ભ, ચતુર, નિષ્કપટ, આપ્ત વિદ્વાનોને નિત્ય પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. વળી વિદ્વાનોએ સર્વ માટે એવો ઉપદેશ આપવો જોઈએ, કે જેથી સર્વ ધાર્મિક બને. (૬૦)

માતેવ પુત્રં પૃથિવી પુરીષ્મગ્નિશ્ચ સ્વે યોનાવભારુઘા ।

તાં વિશ્વૈર્દેવૈર્ઋતુભિઃ સંવિદાનઃ પ્રજાપતિર્વિશ્વકર્મા વિ મુંજ્વતુ ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : જે ઝખા-જાણવા યોગ્ય પૃથિવી-ભૂમિ સમાન વિદ્યમાન વિદુષી સ્ત્રી સ્વે-પોતાના યોનૌ-ગર્ભાશયમાં પુરીષ્મ-પુષ્ટિકારક ગુણોથી યુક્ત, અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ સમાન સુપ્રકાશથી યુક્ત ગર્ભરૂપ પુત્રમ્-પુત્રને માતેવ-માતાની સમાન અભાઃ-પુષ્ટ વા ધારણ કરે છે, તામ્-તે સ્ત્રીને સંવિદાનઃ-સમ્યક્ બોધ આપતાં વિશ્વકર્મા-સર્વ ઉત્તમ કર્મ કરનાર, પ્રજાપતિઃ-પરમેશ્વર-વિશ્વૈઃ-સર્વ દેવૈઃ-દિવ્યગુણો અને ઋતુભિઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ દ્વારા નિરંતર દુઃખથી વિ + મુંજ્વતુ-દૂર રાખે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેમ માતા સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને પાલન કરે છે, તેમ પૃથિવી કારણરૂપ વિદ્યુત્ને પ્રકટ કરીને તેની રક્ષા કરે છે.

જેમ પરમેશ્વર પૃથિવી આદિના ગુણોને યથાર્થ રૂપમાં જાણે છે, પ્રત્યેકને નિયત સમય પર ઋતુ આદિ અને પૃથિવી આદિને ધારણ કરીને, પોત-પોતાની નિયત પરિધિમાં ચલાવીને, પ્રલય સમયમાં ભેદન કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ પોતાની બુદ્ધિ અનુસાર સર્વ પદાર્થોને જાણીને કાર્ય સિદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૬૧)

અસ્નન્વન્તમયજમાનમિચ્છ સ્તેનસ્યેત્યામન્વિહિ તસ્કરસ્ય ।

અન્યમ્સ્મદિચ્છ સા તંડુત્યા નમો દેવિ નિર્ઋતે તુભ્યમસ્તુ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે નિર્ઋતે-પૃથિવી સમાન વિદ્યમાન દેવિ-વિદુષી સ્ત્રી ! તું અસ્મત્-અમારાથી ભિન્ન સ્તેનસ્ય-અપ્રસિદ્ધ ચોર અને તસ્કરસ્ય-પ્રસિદ્ધ ચોરના સંબંધીને છોડીને અન્યમ્-કોઈ બીજાની ઇચ્છ-કામના કર. અને અસ્નન્વન્તમ્-અભિષવ આદિ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનથી રહિત અયજમાનમ્-દાનધર્મથી રહિત પુરુષની ઇચ્છ-ઈચ્છા ન કર. અને તું જે ઇત્યામ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ક્રિયાનું અનુ + ઇહિ-અનુગમન કરે સા-તે ઇત્યા-ક્રિયા તે-તારી બને. તથા તે તુભ્યમ્-તારા માટે નમઃ-અન્ન વા સત્કાર અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૬૨)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે પુરુષાર્થથી રહિત, ચોર લોકોના સંબંધી પુરુષોને પતિ રૂપમાં ઈચ્છો નહિ. પરંતુ આપ્ત પુરુષોની નીતિ યુક્ત પુરુષોનું શ્રદ્ધ કરો.

જેમ પૃથિવી અનેક ઉત્તમ ફલ પ્રદાન કરવાથી લોકોને રંજિત કરે છે, તેમ તમે બનો. એવા ગુણવાળા તમારો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. જેમ અમે આળસુ અને ચોરોથી દૂર રહીએ છીએ, તેમ તમે પણ

દૂર રહો. (૬૨)

નમઃ સુ તેં નિર્ઋતે તિગ્મતેજોઽયસ્મયં વિચૃતા બન્ધમેતમ્ ।

યમેન ત્વં યમ્યા સંવિદાનોત્તમે નાકેઽઅર્ધિં રોહયૈનમ્ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે નિર્ઋતે-નિરંતર સત્ય આચરણથી યુક્ત સ્ત્રી ! જે તે-તારા તિગ્મતેજઃ-તીવ્ર તેજવાળા અયસ્મયમ્-સુવર્ણ આદિ અને નમઃ-અન્ન આદિ પદાર્થ છે તે ત્વમ્-તું એતમ્-એ બન્ધમ્-બંધનના હેતુ અજ્ઞાનને સુ+વિચૃત-સારી રીતે ખોલ, યમેન-ન્યાયાધીશ તથા યમ્યા-ન્યાય કરનારી સ્ત્રીની સાથે સંવિદાના-સમ્યક્ બુદ્ધિયુક્ત થઈને એનમ્-એ પોતાના પતિને ઉત્તમે-ઉત્તમ નાકે-આનંદ ભોગવવામાં અધિરોહય-આરુઢ કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ આ પૃથિવી-અગ્નિ, સુવર્ણ અને અન્ન આદિથી સંબંધિત છે; તેવી તમે બનો. જેમ તમારા પતિ ન્યાયાધીશ બનીને, દોષિત અને નિર્દોષોનું સત્ય ન્યાયથી વિવેચન કરીને, દોષિતને દંડ આપે છે. અને નિર્દોષોનો સત્કાર કરે છે. અને તેમને શ્રેષ્ઠ આનંદ પ્રદાન કરે છે, તેમ તમે પણ બનો. (૬૩)

યસ્યાસ્તે ઘોરઽઆસન્ જુહોમ્યેષાં બન્ધાનામવસર્જનાય ।

યાં ત્વા જનો ભૂમિરિતિ પ્રમન્દતે નિર્ઋતિં ત્વાહં પરિં વેદ વિશ્વતઃ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે ઘોરે-દુષ્ટોને ભયકારક સ્ત્રી ! યસ્યાઃ-જે સુંદર નિયમયુક્ત તે-તારા આસન્-મુખમાં ણ્ણામ્-આ બન્ધાનામ્-દુઃખ દેનારને રોકનારના અવસર્જનાયઃ-ત્યાગ માટે અમૃતરૂપ અન્નાદિ પદાર્થો જુહોમિ-પ્રદાન કરું છું.

જે જનઃ-મનુષ્ય ભૂમિરિતિ-પૃથિવીની સમાન યામ્-જે ત્વા-તને પ્રમન્દતે-આનંદિત કરે છે તે તને અહમ્-હું વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી નિર્ઋતિમ્-પૃથિવી સમાન ત્વા-તને પરિ+વેદ સર્વ રીતે જાણું, તેમ તું પણ મને જાણ. (૬૪)

ભાવાર્થ : જેમ પતિઓ પોતાના આનંદ માટે સ્ત્રીઓનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ સ્ત્રીઓ આનંદ માટે પતિઓનું ગ્રહણ કરે. આ ગૃહાશ્રમમાં પતિવ્રતા સ્ત્રી અને પત્નીવ્રત પતિ સુખના ભંડાર સમાન છે. સ્ત્રી ક્ષેત્રરૂપ છે અને પુરુષ બીજરૂપ છે.

જો શુદ્ધ અને બલવાન શરીર યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ બન્નેના સમાગમથી ઉત્તમ અને વિવિધ પ્રકારની પ્રજા ઉત્પન્ન થાય, તો સદા કલ્યાણ થાય છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૬૪)

**યં તેં દેવી નિર્ઋતિરાબન્ધ પાશં ગ્રીવાસ્વવિચૃત્યમ્ । તં તે વિસ્યામ્યાયુષો
ન મધ્યાદથૈતં પિતુર્મદ્ધિ પ્રસૂતઃ । નમો ભૂત્યૈ યેદં ચકાર ॥ ૬૫ ॥**

પદાર્થ : હે પતે ! નિર્ઋતિઃ-પૃથિવી સમાન હું દેવી તે-તારા ગ્રીવાસુ-કંઠમાં અવિચૃત્યમ્-ત્યાગને અયોગ્ય યમ્-જે પાશમ્-ધર્મયુક્ત બંધનને આ+બબન્ધ-સારી રીતે બાંધુ છું, તમ્-તેને તે-તારા માટે પણ આયુષઃ-જીવનના સાધન અન્નની ન-સમાન વિ+સ્યામિ-પ્રવિષ્ટ કરું છું. અથ-અને મધ્યાત્-આપણાં બન્નેમાંથી કોઈપણ નિયમથી વિરુદ્ધ ન ચાલીએ. જેમ હું એતમ્-એ પિતુમ્-અન્નાદિ પદાર્થોને ભોગવું છું, તેમ પ્રસૂતઃ-લોકમાં ઉત્પન્ન થયેલ તું પણ એ અન્નાદિને અન્દિ-ભોગવ.

હે સ્ત્રી ! યા-જે દેવી-દિવ્યગુણયુક્ત તું ઇદમ્-એ પતિવ્રતરૂપ ધર્મથી સંસ્કાર પામેલી પ્રત્યક્ષ નિયમને ચક્રાર-પાળે તે ભૂત્યૈ-ઐશ્વર્ય કરનારી તારા માટે નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થ આપું છું. (૬૫)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે સ્ત્રી-પુરુષ જે અવ્યભિચાર આદિ નિયમોની પ્રતિજ્ઞા કરે, તેથી વિપરીત આચરણ કદી પણ ન કરે, કારણ કે પાણિગ્રહણ-વિવાહ કરે છે, ત્યારથી પુરુષનું જેટલું પણ પોતાનું [શરીર આદિ] છે, તે સર્વ સ્ત્રીનું અને સ્ત્રીનું કંઈ પણ [શરીર આદિ] છે, તે પુરુષનું બની જાય છે.

જો પુરુષ વિવાહિત સ્ત્રીને છોડીને પરસ્ત્રીગામી અને સ્ત્રી [પોતાના વિવાહિત પતિને છોડીને] પર પુરુષગામિની બને, તો બન્ને ચોર સમાન પાપાત્મા બને છે. તેથી પત્નીની અનુમતિ વિના પતિ અને પતિની આજ્ઞા વિના સ્ત્રી કોઈપણ કાર્ય ન કરે. અવ્યભિચાર એ જ સ્ત્રી અને પુરુષના પ્રેમની વૃદ્ધિ કરનાર કર્મ છે. (૬૫)

નિવેશનઃ સુઙ્ગમનો વસૂનાં વિશ્વાં રૂપાઽભિચંષ્ટે શ્ચીંભિઃ ।

દેવઽઙ્ગવ સવિતા સત્યધર્મેન્દ્રો ન તસ્થૌ સમરે પંથીનામ્ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : જે સત્યધર્મા-સત્યધર્મથી યુક્ત, સવિતા-સકલ જગતના ઉત્પાદક દેવઙ્ગ-ઈશ્વરની સમાન નિવેશનઃ-સ્ત્રીના સાથી સુઙ્ગમનઃ-શીઘ્રગતિથી યુક્ત શ્ચીંભિઃ-બુદ્ધિ વા કર્મોથી વસૂનામ્-પૃથિવી આદિ પદાર્થોના વિશ્વા-સર્વ સ્ત્વા-રૂપોને અભિચષ્ટે-જુએ છે.

ઇન્દ્રઃ-સૂર્યના ન-સમાન સમરે-યુદ્ધમાં પંથીનામ્-પથિકોની સન્મુખ તસ્થૌ-ઊભો રહે છે, તે જ ગૃહસ્થને યોગ્ય બને છે. (૬૬)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરે મનુષ્યના ઉપકાર માટે કારણ-પ્રકૃતિથી કાર્યરૂપ અનેક પદાર્થો રચેલ છે, તેનો મનુષ્ય ઉપયોગ કરે છે.

જેમ સૂર્ય મેઘ-વાદળાની સાથે યુદ્ધ માટે તૈયાર રહે છે, તેમ સૃષ્ટિક્રમના વિજ્ઞાનથી અને ઉત્તમ ક્રિયાથી ભૂમિ આદિ પદાર્થોથી અનેક વ્યવહારોને સિદ્ધ કરો. (૬૬)

સીરાં યુજ્જન્તિ કવયો યુગા વિતન્વતે પૃથક્ । ધીરાં દેવેષુ સુમ્નયા ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ધીરાઃ-ધ્યાનશીલ કવયઃ-બુદ્ધિમાન જન સીરાઃ-હળ અને યુગા-ધૂંસરી આદિને યુજ્જન્તિ-યુક્ત કરે છે, અને સુમ્નયા-સુખથી દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં પૃથક્-જુદા વિતન્વતે-વિસ્તાર યુક્ત કરે છે, તેમ સર્વ લોકો એ ખેતી કાર્યનું અનુષ્ઠાન કરે. (૬૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં વિદ્વાનોની શિક્ષાથી ખેતીના કાર્યોની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. જેમ યોગીજન નાડીઓમાં પરમેશ્વરનો સમાધિ યોગથી સાક્ષાત્ કરે છે, તેમ ખેતીના કાર્ય દ્વારા સુખોનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૬૭)

યુનક્ત સીરા વિ યુગા તનુધ્વં કૃતે યોનૌ વપતેહ બીજમ્ ।

ગિરા ચ શ્રુષ્ટિઃ સભરા અસન્નો નેદીયઽઙ્ગસૃણ્યઃ પ્વક્વમેયાત્ ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઇહ-આ પૃથિવી વા બુદ્ધિમાં સાધનોને વિ+તનુધ્વમ્-વિવિધ પ્રકારથી વિસ્તાર યુક્ત કરો. સીરા-ખેતીના સાધન હળ આદિ વા નાડીઓ અને યુગા-ધૂંસરીને યુનક્તઃ-યુક્ત કરો કૃતે-હળ આદિમાં જોડેલ અથવા યોગના અંગોથી શુદ્ધ કરેલ યોનૌ-અન્તઃકરણમાં અથવા ખેતરમાં બીજમ્-યવ આદિના વા સિદ્ધિના મૂળને વપત-વાવો.

ગિરા-ખેતી વિષયક કર્મોની ઉપયોગી સુશિક્ષિત વાણી ચ-અને સુવિચારથી સભરાઃ-સમાન રીતે ધારણ અને પોષણમાં યુક્ત શ્રુષ્ટિઃ-શીઘ્ર બનો.

જે સૃણ્યઃ-ખેતરમાં ઉત્પન્ન જવ આદિ અન્ન જાતિના પદાર્થો છે. તેમાં જે નેદીયઃ-અત્યંત સમીપ પ્વક્વમ્-પાકેલ અસત્-બને, તે ઙ્ગ-જ નઃ-અમને આ+ઙ્ગયાત્-પ્રાપ્ત થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનો અને ખેડૂતોથી ખેતી અને યોગની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, અનેક સાધનો સિદ્ધ કરીને ખેતી અને યોગ સિદ્ધ કરો. તેના દ્વારા જે જે પાક તૈયાર થાય તેને લઈને સ્વયં ખાવ અને અન્યોને ખવડાવો. (૬૮)

શુનઃ સુ ફાલા વિ કૃષન્તુ ભૂમિઃ શુનં કીનાશાઽઅભિ ચન્તુ વાહૈઃ ।

શુનાસીરા હ્વિષા તોશમાના સુપિપ્પલાઽઓષધીઃ કર્ત્તનાસ્મે ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : જે કીનાશાઃ-પરિશ્રમથી કષ્ટ ભોગનાર ખેતી કરનાર છે. તેઓ ફાલાઃ-ભૂમિને વિસ્તીર્ણ કરવાનું સાધન ફાલ = હળનું ફળું આદિથી યુક્ત કરીને વાહૈઃ-બળદ આદિની સાથે રહેલ હળ આદિથી ભૂમિમ્-ભૂમિને વિકૃષન્તુ-ખેડો શુનમ્-સુખને અભિચન્તુ-પ્રાપ્ત કરો.

હ્વિષા-શુદ્ધ કરેલ ઘી આદિથી શુદ્ધ તોશમાના-સંતોષકારક શુનાસીરા-વાયુ અને સૂર્ય સમાન ખેતીના સાધન અસ્મે-અમારા માટે સુપિપ્પલાઃ-સુંદર ફળોથી યુક્ત ઓષધીઃ-જવ આદિને કર્ત્તન-ઉત્પન્ન કરો અને તે ઔષધિઓથી સુ-ઉત્તમ શુનમ્-સુખ ભોગવો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે ચતુર ખેડૂત ગાય તથા બળદ આદિની રક્ષા કરીને ખેતી કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. એ ખેતરમાં કોઈપણ અમેઘ્ય-અપવિત્ર વસ્તુ નાખવી ન જોઈએ. પરન્તુ બીજ પણ સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત કરીને વાવવા જોઈએ. જેથી અન્ન આરોગ્યદાયક બનીને બલ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરે. (૬૯)

ઘૃતેન સીતા મધુના સમજ્યતાં વિશ્વૈર્દેવૈરનુમતા મરુદ્ધિઃ ।

ઠર્જસ્વતી પર્યસા પિન્વમાનાસ્માન્ત્સીતે પર્યસાભ્યા વ્વૃત્સ્વ ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : વિશ્વૈઃ-સર્વ દેવૈઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોની ઈચ્છા કરનાર વિદ્વાન મરુદ્ધિઃ-મનુષ્યની અનુમતા-આજ્ઞાથી પ્રાપ્ત પર્યસા-જલ વા દૂધથી ઠર્જસ્વતી-પરાક્રમ સંબંધી પિન્વમાના-સિંચન વા સેવન કરેલ સીતા-હળની કોસ ઘૃતેન-ઘી તથા મધુના-મધ વા સાકર આદિથી સમજ્યતામ્-સંયુક્ત કરે. તે સીતે-હળની કોસ અસ્માન્-અમને ઘી આદિ પદાર્થોથી સંયુક્ત કરશે એ માટે પર્યસા-જલથી અભ્યાવવૃત્સ્વ-પરિવૃત કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાન્ ખેડૂત વિદ્યાર્થી અનુકૂળ, ઘૃત, મધ અને જલ આદિથી સુસંકૃત કરી સ્વીકાર કરેલ ખેતીની પૃથિવી-ભૂમિને અન્નને ઉત્પન્ન કરનારી-ઉપજાઉ બનાવે છે.

જેમ બીજોને સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત કરીને વાવે છે, તેમ એ ભૂમિને સુગંધથી સંસ્કાર યુક્ત કરે. (૭૦)

લાઙ્ગલં પવીરવત્સુશેવઃ સોમપિત્સરુ ।

તદુદ્વપતિ ગામવિં પ્રફર્વ્યં ચ પીવરીં પ્રસ્થાવદ્રથવાહનમ્ ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે કિસાનો ! તમે જે સોમપિત્સરુ-જવ આદિ ઔષધિઓના રક્ષકોને-વાંકા-ચૂંકા ચલાવનાર, પવીરવત્-ઉત્તમ ફાલયુક્ત, સુશેવમ્-સુંદર સુખદાયક લાઙ્ગલમ્-હળ અને તેના છેડે જે દૃઢતા માટે લગાવેલ કાષ્ઠ વિશેષ છે, તે ચ-અને પ્રફર્વ્યમ્-ચલાવવા યોગ્ય પ્રસ્થાવત્-પ્રશંસિત પ્રસ્થાન-ગતિયુક્ત રથવાહનમ્-રથનું વહન કરનાર બળદ આદિ સાધન છે, જેથી અવિમ્-રક્ષા આદિ માટે પીવરીમ્-સર્વ પદાર્થો ભોગાવવા માટે સ્થૂલ ગામ્-પૃથિવીને ઝત્ + વપતિ-પ્રજા વાવે છે, તત્-તેને તમે સિદ્ધ કરો. (૭૧)

ભાવાર્થ : ખેડૂતે સ્થૂલ-ભારે માટીની એ અન્ન આદિના ઉત્પાદન માટે રક્ષા કરનારી [છે કે નહિ તેની] સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, હળ આદિ સાધનોથી ખેડીને, તેને એક સરખી કરીને, તેમાં સુંદર સંસ્કાર કરેલ બીજ વાવીને, ઉત્તમ ધાન્ય ઉત્પન્ન કરીને તેનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૭૧)

કામં કામદુઘે ધુક્ષ્વ મિત્રાય વરુણાય ચ ।

ઇન્દ્રાયાશ્વિભ્યાં પૂષ્ણે પ્રજાભ્યઃઓષધીભ્યઃ ॥ ૭૨ ॥

પદાર્થ : હે કામદુઘે-પાકશાસ્ત્ર નિપુણ મનોકામના પૂર્ણ કરનારી રસોયણ સ્ત્રી ! તું પૂર્વોક્ત પૃથિવી સમાન સુંદર સંસ્કાર કરેલ અન્નોની મિત્રાય-મિત્ર, વસુણાય-ઉત્તમ વિદ્વાન, ચ-અને અતિથિ, અભ્યાગત, ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, અશ્વિભ્યામ્-પ્રાણ અને અપાન, પૂષ્ણે-પુષ્ટિકારક જન, પ્રજાભ્યઃ-સંતાનો અને ઓષધીભ્યઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓથી કામમ્-ઈચ્છાને ધુક્ષ્વ-પૂર્ણ કર. (૭૨)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી વા પુરુષ ભોજન બનાવે તે સ્ત્રી વા પુરુષને પાક-વિદ્યા શીખવીને, રુચિકારક અન્ન બનાવીને, તેનું સેવન કરીને, સર્વ રોગોને દૂર કરે. (૭૨)

વિ મુચ્યધ્વમઘ્ન્યા દેવયાનાઅગન્મ તમસસ્પારમસ્ય । જ્યોતિરાપામ ॥ ૭૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો-જેમ તમે અઘ્ન્યા:-રક્ષા યોગ્ય દેવયાના:-દિવ્ય ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે ગાયોને પ્રાપ્ત કરી, સુંદર સંસ્કાર કરેલ અન્નોનું ભોજન કરીને રોગોથી વિમુચ્યધ્વમ્-વિમુક્ત રહો છો, તેમ અમે પણ રોગોથી વિમુક્ત રહીએ.

જેમ તમે તમસ:-રાત્રિ-અંધકારને પારમ્-પાર કરો છો, તેમ અમે પણ અગન્મ-પ્રાપ્ત કરીએ. જેમ તમે અસ્ય-આ સૂર્યના જ્યોતિ:-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ અમે પણ આપામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૭૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ગાય આદિ પશુઓની કદીપણ હત્યા કરે નહિ અને હત્યા કરાવે નહિ. જેમ સૂર્યોદયથી રાત્રિ નિવૃત્ત થાય છે, તેમ વેદક શાસ્ત્રની રીતિથી હિતકારી અન્નનું સેવન કરીને આપ લોકો રોગોથી નિવૃત્ત રહો. (૭૩)

સજૂરબ્દોઽઅયવોભિઃ સજૂરૂષાઽઅરૂણીભિઃ ।

**સજોષસાવશ્વિના દસૌભિઃ સજૂઃ સૂરઽએતશેન સજૂર્વૈશ્વાનરઽઙ્ઙયા ઘૃતેન
સ્વાહા ॥ ૭૪ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે સર્વ સ્ત્રી-પુરુષો જેમ અયવોભિઃ:-એકરસ ક્ષણ આદિ કાલના અવયવોથી સજૂઃ-સંયુક્ત અબ્દઃ-વર્ષ અરૂણીભિઃ રક્તપ્રભાથી સજૂઃ-યુક્ત ઊષાઃ-પ્રભાત કાલ દસૌભિઃ-કર્મો દ્વારા સજોષસૌ-પરસ્પર સમાન રૂપથી સેવા કરનાર અશ્વિના-પ્રાણ અને અપાનની સમાન સ્ત્રી-પુરુષ =દંપતી વા એતશેન-ચાલતા ઘોડા સમાન વ્યાપ્તિશીલ વેગવાન, કિરણના નિમિત્ત વાયુના સજૂઃ-સહિત સૂરઃ-સૂર્ય છે, અને ઙ્ઙયા-અન્નાદિની નિમિત્ત પૃથિવી વા ઘૃતેન-જલથી સ્વાહા-સત્યવાણીથી સજૂઃ-યુક્ત વૈશ્વાનરઃ-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિ વિદ્યમાન છે, તેમજ પ્રીતિથી સંયુક્ત રહે. (૭૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોમાં જ્યાં સુધી પરસ્પર સૌહાર્દ-મિત્રતા રહે છે, ત્યાં સુધી જ સુખ રહે છે. અને જ્યાં સુધી શત્રુતા રહે છે, ત્યાં સુધી દુઃખ રહે છે. તેથી સર્વ સ્ત્રી-પુરુષોએ પરોપકાર કર્મની સાથે જ સદા વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૭૪)

યા ઓષધીઃ પૂર્વા જાતા દેવેભ્યઃસ્ત્રિયુગં પુરા ।

મનૈ નુ બ્રહ્મૂણામહઃ શતં ધામાનિ સ્મ ચ ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : અહમ્-હું યાઃ-જે ઓષધીઃ-સોમલતા આદિ ઓષધિઓ દેવેભ્યઃ-પૃથિવી આદિથી ત્રિયુગમ્-ત્રણ વર્ષ પુરા-પૂર્વ પૂર્વાઃ-પૂર્ણ સુખદાનમાં ઉત્તમ જાતાઃ-પ્રસિદ્ધ અર્થાત્ ઉત્પન્ન થયેલી છે, જે બ્રહ્મૂણામ્-

ધારણ કરનાર રોગીઓના શતમ્-સો ચ-અને સપ્ત-સાત ધામાનિ-જન્મ વા નાડીઓના મર્મોમાં વ્યાપ્ત થાય છે, તેને નુ-શીઘ્ર મનૈ-જાણું. (૭૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પૃથિવી પર અને જલમાં જે ઔષધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે [તેમાં જે] ત્રણ વર્ષની હોય, તેનો સંગ્રહ કરીને, વૈદ્યક શાસ્ત્રવિધિ અનુસાર તેનું સેવન કરે છે, તો તે સેવન કરેલી ઔષધિઓ સમસ્ત મર્મ સ્થાનોમાં વ્યાપ્ત થઈને રોગોને દૂર કરીને, શારીરિક સુખોને શીઘ્ર ઉત્પન્ન કરી શકે છે. (૭૫)

શ્તં વૌઽઅમ્બ્ ધામાનિ સહસ્ત્રમુત વૌ રુહઃ ।

અર્ધા શતક્રત્વો યૂયમિમં મૈઽઅગદં કૃત ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રત્વઃ-સેંકડો પ્રકારની બુદ્ધિ વા ક્રિયાઓથી યુક્ત [વૈદ્ય]જનો ! યૂયમ્-તમે જેનાથી શતમ્-સેંકડો યુત્-વા સહસ્ત્રમ્-હજારો સ્હઃ-નાડીઓના અંકુરો છે તે ઔષધિઓથી મૈ-મારા ઇમમ્-આ શરીરને અગદમ્-રોગરહિત કૃત-કરો.

અર્ધ-અને સ્વયં વઃ-પોતાના શરીરોને પણ રોગ રહિત કરો. જે વઃ-તમારા અસંખ્ય ધામાનિ-મર્મ સ્થાનો છે. તેને પ્રાપ્ત કરો.

હે અમ્બ-માતા ! તું પણ એમ જ આચરણ કર. (૭૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યનું એ પ્રથમ કર્તવ્ય છે, કે ઔષધિઓનું સેવન, પથ્ય પાલન અને સુનિયમયુક્ત વ્યવહાર કરીને શરીરને સ્વસ્થ રાખવું. તેના વિના કોઈપણ ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષનું અનુષ્ઠાન કરી શકતા નથી. (૭૬)

ઓષધીઃ પ્રતિમોદધ્વં પુષ્પવતીઃ પ્રસૂવરીઃ ।

અશ્વાઽઙ્ગવ સ્જિત્વરીર્વીરુધઃ પારયિષ્ણવઃ ॥ ૭૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અશ્વા ઙ્ગવ-ઘોડાની સમાન સ્જિત્વરીઃ-શરીરથી સંયુક્ત અને રોગોને જીતનારી, વીસ્થઃ-સોમલતા આદિ પારયિષ્ણવઃ રોગના દુઃખોથી પાર લઈ જનારી, પુષ્પવતીઃ-પ્રશંસિત પુષ્પોથી યુક્ત, પ્રસૂવરીઃ-સુખોને ઉત્પન્ન કરનારી ઓષધીઃ-સોમ આદિ ઔષધિ સેવન કરીને પ્રતિ+મોદધ્વમ્-નિત્ય આનંદિત રહો. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડેસ્વાર વીર લોકો શત્રુઓને જીતીને, વિજય પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત બને છે, તેમ ઉત્તમ ઔષધનું સદા સેવન કરનાર, પથ્યનું પાલન કરનાર અને જિતેન્દ્રિય લોકો સ્વાસ્થ્ય પ્રાપ્ત કરીને, નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે. (૭૭)

ઓષધીરિતિ માતરસ્તદ્વૌ દેવીરુપ્ બ્રુવે ।

સનેયમશ્વં ગાં વાસઽઆત્માનં તવ પૂરુષ ॥ ૭૮ ॥

પદાર્થ : હે ઓષધી:-ઔષધિઓ ઇતિ-સમાન સુખદાયક દેવી:-સુંદર વિદુષી માતર:-માતાઓ ! હું પુત્ર વ:-તમને તત્-શ્રેષ્ઠ પથ્યરૂપ કર્મ ઉપબ્રુવે-સમીપસ્થ બનીને ઉપદેશ કરું.

હે પુસ્ત્ર ! પુરુષાર્થ શ્રેષ્ઠ સંતાનો ! હું માતા તવ-તારા અશ્વમ્-ઘોડા આદિ ગામ્-ગાય આદિ વા પૃથિવી આદિ વાસ:-વસ્ત્ર આદિ વા ઘર અને આત્માનમ્-જીવની નિરંતર સનેયમ્-સેવા કરું. (૭૮)

ભાવાર્થ : જેમ જેવ ઔષધિનું સેવન કરવાથી શરીરોની પુષ્ટિ કરે છે, તેમ માતાઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાના ઉપદેશથી સંતાનોને પુષ્ટ બનાવે.

જે માતાનું ઐશ્વર્ય છે, તે સંતાનનો ભાગ છે, અને જે સંતાનનું છે તે માતાનું છે, એ રીતે સર્વે પ્રીતિપૂર્વક આચરણ કરી પરસ્પર સુખોની સદા વૃદ્ધિ કરે. (૭૮)

અશ્વત્થે વૌ નિષદનં પર્ણે વૌ વસતિષ્કૃતા ।

ગોભાજઽઙ્ગત્ કિલાસથ્થ યત્ સનવથ્થ પૂરુષમ્ ॥ ૭૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઔષધિઓની સમાન યત્-જે કારણે વ:-તમારું અશ્વત્થે-કાલ રહે અથવા ન રહે એવા શરીરમાં નિષદનમ્-નિવાસ છે અને વ:-તમારા પર્ણે-કમળના પત્ર પર જલની સમાન ચલાયમાન સંસારમાં ઈશ્વરે વસતિ:-નિવાસ કૃતા-કર્યો છે, તેથી ગોભાજ:-પૃથિવીનું સેવન કરતાં કિલ-જ પૂસ્ત્રમ્-અન્ન આદિથી પૂર્ણ દેહવાળા પુરુષને સનવથ-ઔષધિ આપીને સેવન કરો. અને સુખ પ્રાપ્ત કરતાં ઙ્ગત્-આ સંસારમાં અસથ-રહો. (૭૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ માનવું જોઈએ કે અમારા શરીર અનિત્ય છે, સ્થિતિ ચંચળ છે, માટે શરીરને નીરોગી રાખીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષનું અનુષ્ઠાન શીઘ્ર કરીને અનિત્ય સાધનોથી નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરે. જેમ ઔષધિ ઘાસ આદિ પત્ર, પુષ્પ, ફળ, મૂળ કંદ અને શાખાઓ વગેરેથી શોભિત બને છે, તેમ નીરોગ શરીરથી શોભાયમાન બનો. (૭૯)

યત્રૌષધીઃ સમગ્મત્ રાજાનઃ સમિતાવિવ ।

વિપ્રઃ સઽઽચ્યતે ભિષગ્રક્ષોહામીવ્ચાતનઃ ॥ ૮૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યત્ર-જે સ્થાનોમાં ઔષધી:-સોમલતા આદિ ઔષધિ છે, તેને જેમ રાજાન:-રાજધર્મથી યુક્ત વીર પુરુષ સમિતાવિવ-યુદ્ધમાં શત્રુઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સમગ્મત-પ્રાપ્ત થાવ.

જે રક્ષોહા-દુષ્ટ રોગોના નાશક અમીવચાતન:-રોગ નિવારક વિપ્ર:-બુદ્ધિમાન ભિષક્-વૈદ્ય છે, સ:-તે તમારા પ્રત્યે ઽચ્યતે-ઔષધિઓના ગુણોનો ઉપદેશ કરે, તમે તે વૈદ્ય અને ઔષધિઓનું સેવન કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિ દ્વારા સુશિક્ષિત રાજકીય વીરપુરુષ પરમ પ્રયત્નથી બીજા દેશમાં જઈને, શત્રુઓને જીતીને રાજ્ય પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ઉત્તમ વૈદ્ય દ્વારા સુશિક્ષિત તમે ઔષધિવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરો, જે શુદ્ધ દેશમાં ઔષધિઓ છે, તેને જાણીને તેનો ઉપયોગ કરો તથા અન્યોને તેનો ઉપદેશ કરો. (૮૦)

અશ્વાવતીઃ સૌમાવતીમૂર્જયન્તીમુદૌજસમ્ ।

આવિત્સિ સર્વાઽઓષધીરસ્માઅરિષ્ટતાતયે ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અરિષ્ટતાતયે-દુઃખદાયક રોગોથી છૂટવા માટે અશ્વાવતીમ્-પ્રશંસિત શુભ ગુણોથી યુક્ત, સૌમાવતીમ્-બહુ રસયુક્ત ઉદોજસમ્-અત્યંત પરાક્રમ વર્ધક ઋર્જયન્તીમ્-બળદાયક શ્રેષ્ઠ ઔષધિઓને આ-સર્વ રીતે આવિત્સિ-જાણું, જેથી સર્વાઃ-સર્વ ઔષધીઃ-ઔષધિઓ અસ્મૈ-મારા માટે સુખદાયક બને, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનું પ્રથમ એ કર્મ છે, કે રોગોનું નિદાન, ચિકિત્સા, ઔષધ અને પથ્યનું પાલન, ઔષધિઓનું ગુણ વિજ્ઞાન અને તેનો યથાવત્ ઉપયોગ કરવો. જેથી રોગ નિવૃત્તિ થઈને સદા પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ થાય. (૮૧)

ઉચ્છુષ્મા ઔષધીનાં ગાવૌ ગોષ્ટાદિવેરતે ।

ધનઃ સનિષ્યન્તીનામાત્માનં તવ પૂરુષ ॥ ૮૨ ॥

પદાર્થ : હે પૂસ્ત્ર-પુરુષ ! પૂર અર્થાત્ દેહમાં શયન કરનાર વા દેહને ધારણ કરનાર જીવ ! ધનમ્-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનારને સનિષ્યન્તીનામ્-સેવન કરતી ઔષધીનામ્-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિઓના સંબંધથી જેમ શુષ્માઃ-ઉત્તમ બલ કરનારી ગાવઃ-ગાય વા કિરણ ગોષ્ટાદિવ-પોતાના સ્થાનથી જેમ વાછરડા વા પૃથિવીનું અને ઔષધિઓ વા તત્ત્વ તવ-તારા આત્માનમ્-આત્માને ઉદીરતે-પ્રાપ્ત થાય છે. તે સર્વની તું સેવા કર. (૮૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સારી રીતે પાળેલી ગાય દૂધ આદિ દ્વારા પોતાના વાછરડા અને મનુષ્ય આદિનું પોષણ કરીને બલ પ્રદાન કરે છે, તેમ ઔષધિઓ તમારા આત્માઓ અને શરીરોને સારી રીતે પુષ્ટ કરીને પરાક્રમી બનાવે છે.

જો કોઈ અન્ન આદિ ઔષધનું સેવન ન કરે, તો કમશઃ તે બલ અને વિજ્ઞાનના ક્ષયને પ્રાપ્ત થાય છે. જેથી તે ગાયો અને ઔષધિઓ શરીર અને આત્માના બલ અને વિજ્ઞાન માટે છે તેમ જાણવું જોઈએ. (૮૨)

ઈષ્કૃતિર્નામ વો માતાથૌ યૂયઃ સ્થ નિષ્કૃતીઃ ।

સીરાઃ પંત્રિણીં સ્થન યદ્દામર્યતિ નિષ્કૃથ ॥ ૮૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યૂયમ્-તમે જે વઃ-તમારી ઈષ્કૃતિઃ-કાર્ય સિદ્ધ કરનારી માતા-માતાની સમાન ઔષધિ નામ-પ્રસિદ્ધ છે, તેની સેવા કરવા સમાન સેવન કરેલી ઔષધિઓને જાણનાર સ્થ-બનો, પંત્રિણીઃ-વહેતી સીરાઃ-નદીઓ સમાન નિષ્કૃતીઃ-પ્રત્યુપકાર કરનાર સ્થન-બનો, અથો-અને યત્-જે ક્રિયા વા

ઔષધિ અથવા વૈદ્ય આમયતિ-રોગની વૃદ્ધિ કરે તેનો નિષ્કૃથ-ત્યાગ કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ માતા-પિતા તમારી સેવા કરે છે, તેમ તમે પણ સેવા કરો. જે-જે કર્મ રોગને ઉત્પન્ન કરનારા છે, તેનો તમે ત્યાગ કરો. આ રીતે [આચરણ કરવાથી] સારી રીતે સેવન કરેલી ઔષધિઓને માતા સમાન પુષ્ટ કરે છે. (૮૩)

અતિ વિશ્વાઃ પરિષ્ઠા સ્તેનઽઙ્ગવ વ્રજમક્રમુઃ ।

ઓષધીઃ પ્રાચુચ્યવુર્યત્કિં ચ તન્વો રપઃ ॥ ૮૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે પરિષ્ઠાઃ-સર્વત્ર વિદ્યમાન વિશ્વાઃ-સર્વ ઓષધીઃ-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિ છે, તે વ્રજમ્-જેમ ગૌશાળાની સ્તેન ઙ્ગવ-દીવાલને કૂદીને ચોર ભાગી જાય છે, તેમ અતિ+અક્રમુઃ-પૃથિવીને ફાડીને નીકળે છે.

યત્-જે કિચ્ચ-કંઈ તન્વઃ-શરીરના રપઃ-પાપોના ફળ સમાન રોગ રૂપ દુઃખ છે, તે સર્વનો પ્ર+અચુચ્યવુઃ-નાશ કરે છે, તે ઔષધિઓનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૮૪)

ભાવાર્થ : જેમ ચોર ગાયોના સ્વામી દ્વારા ધમકાવવાથી ગૌશાળાની દીવાલ આદિથી કૂદીને ભાગી જાય છે, તેમ ઉત્તમ ઔષધિ દ્વારા તાડન કરેલ રોગ નાશ પામે છે. (૮૪)

યદિમા વાજયન્નહમોષધીર્હસ્તઽઆદધે ।

આત્મા યક્ષ્મસ્ય નશ્યતિ પુરા જીવગૃભૌ યથા ॥ ૮૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જે રીતે પુરા-પૂર્વ વાજયન્-પ્રાપ્ત કરતાં અહમ્-હું યત્-જે-ઇમાઃ-એ ઓષધીઃ-ઔષધિઓને હસ્તે-હાથમાં આદધે-ધારણ કરું છું, જેથી જીવગૃભઃ-જીવને પકડનારી વ્યાધિ અને યક્ષ્મસ્ય-ક્ષય અર્થાત્ રાજરોગ નું આત્મા-મૂળ નશ્યતિ-નાશ પામે છે, તે ઔષધિઓનો શ્રેષ્ઠ યુક્તિ દ્વારા ઉપયોગ કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ઉત્તમ હસ્તક્રિયાથી ઔષધિઓને સારી રીતે સિદ્ધ કરીને, કમાનુસાર તેનો ઉપયોગ કરીને રાજ્યક્ષમા આદિ રોગોનું નિવારણ કરીને નિત્ય આનંદ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૮૫)

યસ્યૌષધીઃ પ્રસર્પથાઙ્ગમઙ્ગં પરુષ્પરુઃ ।

તતો યક્ષ્મં વિબાધધ્વઽઙ્ગો મધ્યમશીરિવ ॥ ૮૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યસ્ય-જેથી અઙ્ગમઙ્ગમ્-પ્રત્યેક અવયવોમાં તથા પરુષ્પરુઃ-પ્રત્યેક મર્મ સ્થાનમાં વિદ્યમાન છે. તેના તે ઙ્ગઃ-તીવ્ર યક્ષ્મમ્-ક્ષય રોગના મધ્યમશીરિવ-મધ્યના મર્મસ્થાનોને છેદવા સમાન વિ+બાધધ્વે-વિશેષરૂપથી દૂર કરીને તતઃ-ત્યારપછી ઓષધીઃ-ઔષધિઓને પ્ર+સર્પથ-પ્રાપ્ત કરો. (૮૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો શાસ્ત્ર અનુસાર ઔષધિઓનું સેવન કરે, તો તેઓ પ્રત્યેક અંગોથી રોગોને

નિવૃત્ત કરીને નીરોગ બની જાય છે. (૮૬)

સાકં ચક્ષ્મ પ્ર પત્ત્વાષેણ કિકિદીવિનાં ।

સાકં વાતસ્ય ધ્રાજ્યા સાકં નશ્ય નિહાકયા ॥ ૮૭ ॥

પદાર્થ : હે વૈદ્ય વિદ્વાન ! તમે કિકિદીવિના-જ્ઞાનવર્ધક ચાષેણ-આહારથી સાકમ્-ઔષધિયુક્ત પદાર્થોની સહાયથી ચક્ષ્મ-રાજરોગ પ્ર + પત્ત-દૂર થાય છે, જેમ તે વાતસ્ય-વાયુની ધ્રાજ્યા- ગતિની સાકમ્-સહાયથી એ નશ્ય-નાશ પામે અને નિહાકયા-નિરંતર ત્યાગ યોગ્ય પીડાની સાકમ્-સાથે દૂર થાય, તે માટે પ્રયત્ન કરો. (૮૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઔષધ સેવન, પ્રાણાયામ અને વ્યાયામથી રોગોનો નાશ કરીને સુખપૂર્વક રહેવું જોઈએ. (૮૭)

અન્યા વોઽઅન્યામવત્વન્યાન્યસ્યાઽપાવત ।

તાઃ સર્વાઃ સંવિદાનાઽદ્વંદં મે પ્રાવતા વચઃ ॥ ૮૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! સંવિદાનાઃ-પરસ્પર સંવાદ કરતી તમે મે-મારા ઇદમ્-એ વચઃ-વચનનું પ્રાવત-પાલન કરો. તાઃ-તે સર્વાઃ-ઔષધિઓની અન્યાઽન્યસ્યાઃ-પોતાની પરસ્પરની રક્ષા સમાન ઉપાવત-સમીપથી રક્ષા કરો.

જેમ અન્યા-એક અન્યામ્-બીજીની રક્ષા કરે છે, તેમ વઃ-તમારી અધ્યાપિકા અવતુ-તમારી રક્ષા કરે. (૮૮)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ આચરણવાળી સ્ત્રીઓ એકબીજીની રક્ષા કરે છે, તેમ અનુકૂળતાથી મિશ્ર કરેલી ઔષધિઓ સર્વ રોગોથી રક્ષા કરે છે. હે સ્ત્રીઓ ! તમે ઔષધવિદ્યા માટે પરસ્પર સંવાદ કરો. (૮૮)

યાઃ ફલિનીર્યાઽઅફલાઽઅપુષ્પા યાશ્ચ પુષ્પિણીઃ ।

બૃહસ્પતિપ્રસૂતાસ્તા નો મુઞ્ચન્ત્વઃહસઃ ॥ ૮૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યાઃ-જે ફલિનીઃ-અનેક ફળોથી યુક્ત, યાઃ-જે અફલાઃ-ફળોથી રહિત, યાઃ-જે અપુષ્પાઃ-ફળોથી રહિત ચ-અને જે પુષ્પિણીઃ-અનેક ફળોથી યુક્ત, બૃહસ્પતિપ્રસૂતાઃ-વેદવાણીના સ્વામી ઈશ્વરથી ઉત્પન્ન થયેલી ઔષધિ નઃ-અમને અંહસઃ-રોગજન્ય દુઃખથી જેમ મુઞ્ચન્તુ-મુક્ત કરે છે, તાઃ-તેમ તમને પણ મુક્ત કરે. (૮૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે સર્વ પ્રાણીઓના જીવનધારણ માટે અને રોગનિવારણ માટે જે ઔષધીઓ બનાવી છે, તેનાથી મનુષ્યોએ વેદકશાસ્ત્ર વર્ણિત ઉપયોગ અનુસાર સર્વ રોગોને નષ્ટ કરીને, પાપાચરણથી દૂર રહીને, ધર્મમાં નિત્ય પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૮૯)

મુञ્ચન્તુ મા શપથ્યાદ્થો વરુણ્યાદુત ।

અથો યમસ્ય પડ્વીશાત્સર્વસ્માદ્ દેવકિલ્વિષાત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ જેમ તે ઔષધિઓ રોગોથી દૂર રાખે છે, તેમ શપથ્યાત્-શપથ સંબંધ કર્મથી, અથો-અને વસ્યાત્-શ્રેષ્ઠજનોમાં થનાર અપરાધથી અથો-અને યમસ્ય-ન્યાયાધીશના પડ્વીશાત્-ન્યાય વિરુદ્ધ આચરણથી, ઉત્-અને સર્વસ્માત્-સર્વ દેવકિલ્વિષાત્-વિદ્વાનોમાં થનાર અપરાધથી મા-મને મુञ્ચન્તુ-પૃથક રાખો. તેમ તમને પણ પૃથક રાખે. (૯૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રમાદકારી ઔષધનો ત્યાગ કરીને અન્ય ઔષધનું સેવન કરવું જોઈએ.

સોગંદ-શપથ ક્યારેય ખાવા નહિ, શ્રેષ્ઠો પ્રત્યે કરવામાં આવતા અપરાધથી, ન્યાય વિરોધથી, પાપાચરણથી અને વિદ્વાનોની ઈર્ષ્યા કરવારૂપ કર્મથી દૂર રહીને [શ્રેષ્ઠ આદિનો] અનુકૂળતાથી વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૯૦)

અવપતન્તીરવદન્દિવઽઓષધયસ્પરિં ।

યં જીવમ્શનવામહૈ ન સ રિષ્યાતિ પૂરુષઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : અમે જે દિવઃ-પ્રકાશથી અવપતન્તીઃ-નીચે આવતી ઓષધયઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ છે, જેનો વિદ્વાનો પરિઃઅવદન્-સર્વ રીતે ઉપદેશ કરે છે. યમ્-જેનાથી જીવમ્-પ્રાણધારણને અશનવામહૈ-પ્રાપ્ત કરે છે, સઃ-તે પૂસ્નઃ-પુરુષ ન-રિષ્યાતિ-રોગોથી કદી પીડિત થતાં નથી. (૯૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યોને દિવ્ય ઔષધિઓની વિદ્યા પ્રદાન કરે. જેથી સર્વ લોકો દીર્ઘ જીવન પ્રાપ્ત કરે. એ ઔષધિઓને કદી કોઈએ નષ્ટ ન કરવી જોઈએ. (૯૧)

યાઽઓષધીઃ સોમરાજ્ઞીર્બહ્વીઃ શતવિચક્ષણાઃ ।

તાસામસિ ત્વમુત્તમારં કામાય શઃ હૃદે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેથી ત્વમ્-તું યાઃ-જે શતવિચક્ષણાઃ-અસંખ્ય શુભ ગુણોથી યુક્ત, બહ્વીઃ-અનેક સોમરાજ્ઞીઃ-સોમ જેનો રાજા અર્થાત્ સર્વોત્તમ છે. તે ઓષધીઃ-ઔષધી છે. તાસામ્-તેના વિષયમાં ઉત્તમા-ઉત્તમ વિદ્વાન અસિ-છે. એથી શમ્-કલ્યાણકારી હૃદે-હૃદય માટે અસ્મ-સમર્થ કામાય-ઈચ્છા-સિદ્ધિ માટે યોગ્ય હોય છે. તેનો અમારા માટે ઉપદેશ કરો. (૯૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓએ ઔષધવિદ્યા અવશ્ય ગ્રહણ કરવી જોઈએ. એ વિદ્યા વિના કામનાઓનું પૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાતું નથી. તથા રોગોનું નિવારણ પણ કરી શકાતું નથી. (૯૨)

યાઽઓષધીઃ સોમરાજ્ઞીર્વિષ્ટિતાઃ પૃથિવીમનું ।

બૃહસ્પતિપ્રસૂતાઽઅસ્યૈ સન્દત્ત વીર્યમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત પુરુષ ! યા:-જે સોમરાજ્ઞી:-જેમાં સોમ ઉત્તમ છે, તે બૃહસ્પતિપ્રસૂતા:-બૃહત્ કારણ રૂપ પ્રકૃતિના રક્ષક-પાલક ઈશ્વરની રચનાથી ઉત્પન્ન થયેલ ઓષધી:-ઔષધિઓ છે, તે પૃથિવીમ્-પૃથિવીના અનુ-પૃષ્ઠ ભાગ પર વિષ્ટિતા:-વિશેષ કરીને સ્થિત છે, તેનાથી અસ્યૈ-એ પત્ની માટે વીર્યમ્-બીજનું દાન કર.

હે વિદ્વાનો ! આપ એ ઔષધિઓનું વિજ્ઞાન સર્વ મનુષ્યો માટે સંદત્ત-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૯૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ મહા ઔષધિઓનું સેવન કરીને ઉત્તમ નિયમો અનુસાર ગર્ભાધાન કરવું જોઈએ અને વિદ્વાનો દ્વારા ઔષધિઓનું વિશેષ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ (૯૩)

યાશ્ચેદમ્પશૃણ્વન્તિ યાશ્ચ દૂરં પરાંગતાઃ ।

સર્વાઃ સુઙ્ગત્યં વીરુધોઽસ્યૈ સન્દત્ત વીર્યમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ યા:-જેને ચ-જાણો છો. અર્થાત્ પ્રસિદ્ધ છે અને જેને ડૂરં-દૂર દેશમાં પરાંગતા:-પ્રાપ્ત થઈ શકે છે, તે સર્વાઃ સર્વ વીર્યમ્-વૃક્ષાદિ ઔષધિઓને સંગત્ય-નજીક પ્રાપ્ત કરીને સન્દત્ત-એ વીર્યમ્-શરીરના પરાક્રમને જેમ વેદો સિદ્ધ કરે છે, તેમ તે ઔષધિઓનું વિજ્ઞાન અસ્યૈ-એ કન્યાને સંદત્ત-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૯૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે ઔષધિઓ દૂર અથવા સમીપસ્થ છે, રોગોનું હરણ કરનારી તથા બલની વૃદ્ધિ કરનારી સાંભળવામાં આવે છે, તેનો ઉપયોગ કરીને તમે નીરોગ રહો. (૯૪)

મા વૌં રિષત્ ખનિતા યસ્મૈં ચાહંં ખનામિ વઃ ।

દ્વિપાચ્ચતુષ્પાદસ્માકઃ સર્વમસ્ત્વનાતુરમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અહમ્-હું યસ્મૈં-જે પ્રયોજન માટે ઔષધિને ખનામિ-ઉપાડું છું અથવા ખોદું છું. તેમાં ખનિતા-ખોદેલી વઃ-તમને મા રિષત્-દુઃખ ન આપે, કારણ કે વઃ-તમારા ચ-અને અસ્માકમ્-અમારા દ્વિપાત્-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ તથા ચતુષ્પાત્-ગાય આદિ સર્વમ્-સર્વ પ્રજા એ ઔષધિથી અનાતુરમ્-રોગજન્ય દુઃખથી રહિત અસ્તુ-બને. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઔષધિઓને ખોદે તે મૂળ-બીજ રહિત ન કરે, જેટલી જરૂરી હોય, તેટલી પ્રતિદિન લઈને રોગોનું નિવારણ કરે અને ઔષધિઓના ઉત્પાદનની વૃદ્ધિ કરે. જેથી સર્વ પ્રાણીઓ રોગજન્ય કષ્ટોને પ્રાપ્ત ન થાય અને સુખી રહે. (૯૫)

ઓષધયઃ સમવદન્ત સોમેન સહ રાજ્ઞાં ।

યસ્મૈં કૃણોતિ બ્રાહ્મણસ્તઃ રાજન્ પારયામસિ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સોમેન રાજ્ઞા-સર્વોત્તમ સોમલતાની સહ-સાથે વિદ્યમાન ઓષધયઃ-ઔષધિઓ છે. તેના વિજ્ઞાન માટે આપ સમ્+અવદન્ત-પરસ્પર સંવાદ કરો.

હે વૈદ્ય રાજન્-રાજપુરુષ ! અમે બ્રાહ્મણ:-વેદ અને ઉપવેદોના જાણનાર યસ્મૈ-જે રોગી માટે એ ઔષધિઓને ગ્રહણ કૃણોતિ-કરે છે. તમ્-તે રોગીને રોગ સાગરથી તે ઔષધિઓ દ્વારા પારગ્યામસિ-પાર કરીએ છીએ. (૮૬)

ભાવાર્થ : વૈદ્યો પરસ્પર પ્રશ્નોત્તરથી ઔષધિ વિજ્ઞાનને ઉત્તમ કરીને રોગથી રોગીઓને પાર પહોંચાડીને નિરંતર તેઓને સુખી કરે. વળી તે વૈદ્યોમાં જે સર્વોત્તમ વિદ્વાન્ હોય, તે સર્વને આયુર્વેદ ભણાવે, (૮૬)

નાશયિત્રી બલાસસ્યાર્શસઽપચિતામસિ ।

અર્થો શ્વતસ્ય ચક્ષ્માણાં પાકારોરસિ નાશની ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વૈદ્યો ! બલાસસ્ય-અતિશય વધેલા કફની, અર્શસ:-ગુદેન્દ્રિયની વ્યાધિ વા અપચિતામ્-અન્ય વધેલા રોગોની નાશયિત્રી-નાશ કરનારી ઔષધિ અસિ-છે.

અર્થો-અને જે શ્વતસ્ય-અસંખ્ય ચક્ષ્માણામ્-ક્ષય અર્થાત્ રાજરોગો, ભગંદરાદિ તથા પાકારો:-મૂખરોગો અને મર્મછેદક શૂલનું નાશની-નાશ કરનારી અસિ-છે, તે ઔષધિને તમે જાણો. (૮૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે એમ જાણવું જોઈએ કે જેટલા રોગો છે, તેટલી જ તેને દૂર કરનારી ઔષધિઓ છે. તેના વિજ્ઞાનથી રહિત પ્રાણી રોગોથી પીડિત રહે છે. જો રોગોની ઔષધિઓ જાણી લે, તો તે રોગોના નિવારણથી તેઓ સુખી રહે. (૮૭)

ત્વાં ગન્ધર્વાઽઅઘ્નસ્ત્વામિન્દ્રસ્ત્વાં બૃહસ્પતિઃ ।

ત્વામૌષધે સોમો રાજા વિદ્વાન્ ચક્ષ્માદમુચ્યત ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઔષધિના સેવનથી રોગી ચક્ષ્માત્-ક્ષયરોગથી અમુચ્યત-મુક્ત બની જાય છે, અને જે ઔષધિ-ઔષધિનો તમે ઉપયોગ કરો છો, ત્વામ્-તેને ગન્ધર્વા:-ગાન વિદ્યામાં કુશળ ગન્ધર્વ અઘ્નન્-ખોદે છે, અર્થાત્ ગ્રહણ કરે છે, ત્વામ્-તેને ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ રાજા, ત્વામ્-તેને બૃહસ્પતિ:-વેદના જાણનારા અને ત્વામ્-તેને સોમ:-સુંદર ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાન્-સર્વશાસ્ત્રના જાણનાર રાજા-પ્રકાશમાન રાજા ત્વામ્-તે ઔષધિને ખોદે. (૮૮)

ભાવાર્થ : જે કોઈ ઔષધિઓ મૂળથી, કોઈ શાખા આદિથી, કોઈ પુષ્પોથી, કોઈ પત્રોથી, કોઈ ફલોથી, કોઈ સમસ્ત સંયોગથી રોગોને દૂર કરે છે, તેનું સેવન મનુષ્યોએ યથાવત્ કરવું જોઈએ. (૮૮)

સહસ્વ મેઽઅરાતીઃ સહસ્વ પૃતનાયતઃ ।

સહસ્વ સર્વ પાપ્માન્ઃ સહમાનાસ્યોષધે ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : ઔષધે-ઔષધિની સમાન ઔષધિવિદ્યાને જાણનારી સ્ત્રી ! જેમ ઔષધિ સહમાના-બળનું નિમિત્ત અસિ-છે, મે-મારા રોગોનું નિવારણ કરીને બળની વૃદ્ધિ કરનારી છે, તેમ અરાતીઃ-શત્રુઓને

સહસ્વ-વશમાં કરીને, પોતાની પૃતનાયતઃ-સેના, યુદ્ધની ઈચ્છા કરનારને સહસ્વ-વશમાં કર અને સર્વમ્-સર્વ પાપ્માનમ્-રોગાદિને સહસ્વ-વશમાં કર. (૯૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઔષધિઓના સેવનથી બળની વૃદ્ધિ કરીને પ્રજાના અને પોતાના શત્રુઓને તથા પાપીજનોને વશમાં કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરવા જોઈએ. (૯૯)

દીર્ઘાયુસ્તઃઓષધે ખનિતા યસ્મૈ ચ ત્વા ખનામ્યહમ્ ।

અથો ત્વં દીર્ઘાયુર્ભૂત્વા શતવલ્શા વિ રોહતાત્ ॥ ૧૦૦ ॥

પદાર્થ : હે ઔષધે-ઔષધિની સમાન ઔષધિઓના ગુણ, દોષને જાણનારા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેથી તે-તારી જે ઔષધિનું ખનિતા-સેવન કરનાર અહમ્-હું યસ્મૈ-જે પ્રયોજન માટે ચ-અને જે પુરુષ માટે ખનામિ-ખોદું તેથી તું દીર્ઘાયુઃ-દીર્ઘાયું બન. અથો-અને દીર્ઘાયુઃ-દીર્ઘાયુ ભૂત્વા-બનીને ત્વમ્-તું જે શતવલ્શા-અસંખ્ય અંકુરો યુક્ત ઔષધિ છે, ત્વા-તેનું સેવન કરીને સુખી બન. અને વિ+રોહતાત્-વિશેષ ઉન્નતિ કર.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઔષધિઓના સેવનથી દીર્ઘાયુ બનો. અને ધર્માચરણશીલ બનીને સર્વને ઔષધિ સેવનથી દીર્ઘાયુ અને ધર્માચારી બનાવો. (૧૦૦)

ત્વમુત્તમાસ્યૌષધે તવ વૃક્ષાઽપસ્તયઃ ।

અપસ્તિરસ્તુ સોઽસ્માકં યોઽઅસ્માંરઅભિદાસતિ ॥ ૧૦૧ ॥

પદાર્થ : હે વૈદ ! યઃ-જે અસ્માન્-અમને અભિદાસતિ-ઈચ્છિત સુખ આપે છે સઃ-તે ત્વમ્-તું અસ્માકમ્-અમારો અપસ્તિઃ-સંગ કરનાર અસ્તુ-બને, જે ઉત્તમા-ઉત્તમ ઔષધે-ઔષધિ અસિ-છે, તથા તવ-જેના વૃક્ષાઃ-વડ આદિ વૃક્ષ અપસ્તયઃ-સમીપ એકત્ર થનાર છે, [અર્થાત્ સંઘાતરૂપ છે] તે ઔષધિથી અમને સુખ આપ. (૧૦૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કદીપણ વિરોધી વૈદની ઔષધિ ન લેવી જોઈએ. તેમજ વિરોધી મિત્રની પણ લેવી નહિ. પરન્તુ જે વૈદકશાસ્ત્રના અર્થોનો જ્ઞાતા, આપ્ત, અજાતશત્રુ, સર્વનો ઉપકારકર્તા અને સર્વનો મિત્ર હોય, તેના દ્વારા ઔષધવિદ્યાનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૧૦૧)

મા માં હિઃસીજ્જનિતા યઃ પૃથિવ્યા યો વા દિવઃ સત્યધર્મા વ્યાનદ્ ।

યશ્ચાપશ્ન્દ્રાઃ પ્રથમો જ્જાન કસ્મૈ દેવાય હવિષા વિધેમ ॥ ૧૦૨ ॥

પદાર્થ : યઃ જે સત્યધર્મા-સત્યધર્મયુક્ત જગદીશ્વર પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના જનિતા-ઉત્પન્ન કરનાર છે, વા-અથવા યઃ-જે દિવમ્-સૂર્ય આદિ જગતને ચ-અને પૃથિવી-તથા અપઃ-જલ અને વાયુને વ્યાનદ્-ઉત્પન્ન કરીને વ્યાપ્ત બને છે, ચ-તથા ચન્દ્રાઃ-ચન્દ્રમા આદિ લોકોને જ્જાન-ઉત્પન્ન કરે છે.

જે કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ સુખકારક, દેવાય-દિવ્ય ગુણોના પ્રદાતા, વિજ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વરનું હવિષા-

ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ભક્તિયોગથી અમે વિધેમ-સેવન કરીએ, તે જગદીશ્વર મા-મને મા હિંસીત્-કુસંગથી તાડિત ન થવા દે. [અર્થાત્ પીડિત ન કરે.] (૧૦૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સત્ય ધર્મની પ્રાપ્તિ માટે તથા ઔષધિ આદિના વિજ્ઞાન માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. (૧૦૨)

અભ્યાર્વર્ત્તસ્વ પૃથિવિ યજ્ઞેન પર્યસા સહ ।

વૃપાં તેઽઅગ્નિરિષિતોઽરોહત્ ॥ ૧૦૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું જે પૃથિવિ-ભૂમિ યજ્ઞેન-સંગતિકારક યજ્ઞથી પર્યસા-જલથી સહ-યુક્ત છે, તેને અભ્યાર્વર્ત્તસ્વ-બન્ને તરફથી શીઘ્ર વર્તાવમાં લાવ. જે તે-આપના વૃપામ્-વાવેલાને ઇષિત:-પ્રેરિત કરેલ અગ્નિ:-અગ્નિ અરોહત્-ઉત્પન્ન કરે છે, તે અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ સર્વેએ જાણવા જોઈએ. (૧૦૩)

ભાવાર્થ : જે ભૂમિ સર્વનો આધાર, રત્નોનો ભંડાર, જીવનપ્રદ અને વિદ્યાથી યુક્ત છે, તેનું વિશેષ વિજ્ઞાન ભૂગર્ભ વિદ્યાથી સર્વ મનુષ્યોએ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૧૦૩)

અગ્ને યત્તે શુક્રં યચ્ચન્દ્રં યત્પૂતં યચ્ચ યજ્ઞિયમ્ । તદ્દેવેભ્યો ભરામસિ ॥ ૧૦૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! યત્-જે અગ્નિના શુક્રમ્-શીઘ્રકારી યત્-જે ચન્દ્રમ્-સુવર્ણ સમાન આનંદ આપનાર, યત્-જે પૂતમ્-પવિત્ર ચ-અને યત્-જે યજ્ઞિયમ્-યજ્ઞાનુષ્ઠાન યોગ્ય સ્વરૂપ છે, તત્-તે તે-આપના અને દેવેભ્યઃ-દિવ્યગુણો માટે ભરામસિ-અમે ધારણ કરીએ. (૧૦૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દિવ્ય ગુણ, કર્મોની પ્રાપ્તિ માટે વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિવિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ કરવું જોઈએ. (૧૦૪)

ઙ્ષમૂર્જમહમિત્ઽઆદમૃતસ્ય યોનિં મહિષસ્ય ધારામ્ ।

આ મા ગોષુ વિશ્ત્વા તનૂષુ જહામિ સેદિમનિરામમીવામ્ ॥ ૧૦૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અહમ્-હું ઙ્ષમૂર્જમ્-પરાક્રમ મહિષસ્ય-મહાન વ્રહ્મસ્ય-સત્યના યોનિમ્-કારણ ધારામ્-ધારણ કરનારી વાણીને પ્રાપ્ત કરું છું, જેમ અન્ન અને પરાક્રમ મા-મને આવિશત્-પ્રાપ્ત થાય, જેથી મારા ગોષુ-ઈન્દ્રિયો અને તનૂષુ-શરીરમાં પ્રવેશ થયેલ સેદિમ્-દુઃખના કારણો અને અનિરામ્-જેમાં અન્નનું સેવન ન કરી શકું એવી અમીવામ્-રોગોથી ઉત્પન્ન થયેલી પીડાનો આ, જહામિ-ત્યાગ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૧૦૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિનું જે સફેદ આદિથી યુક્ત સ્વરૂપ છે, તેનાથી રોગોનો નાશ કરે. ઈન્દ્રિયો અને શરીરોને સ્વસ્થ અને નીરોગ કરીને કાર્ય અને કારણનું જ્ઞાન કરાવનારી વિદ્યાયુક્ત વાણીને પ્રાપ્ત

કરે તથા યુક્ત આહાર-વિહાર કરે. (૧૦૫)

અગ્ને તવ શ્રવો વયો મહિ^૧ ભ્રાજન્તેઽઅર્ચયો^૨ વિભાવસો ।

બૃહદ્દાનો શર્વસા વાજમુક્થ્યું દધાસિ દાશુષે^૩ કવે ॥ ૧૦૬ ॥

પદાર્થ : હે બૃહદ્ભાનો-અગ્નિની સમાન મહાન વિદ્યાના પ્રકાશથી યુક્ત, વિભાવસો-વિવિધ પ્રકારની કાન્તિમાં નિવાસ કરનાર, કવે-અત્યંત બુદ્ધિમાન, અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન્ ! જેથી આપ શવસા-બલથી દાશુષે-વિદ્યાદાન યોગ્ય વિદ્યાર્થી માટે ઉક્થ્યમ્-ઉપદેશ આપવા યોગ્ય વાજમ્-વિજ્ઞાનને દધાસિ-ધારણ કરો છો, તેથી તવ-આપનું અગ્નિ સમાન મહિ-પૂજા યોગ્ય મહાન શ્રવઃ-સાંભળવા યોગ્ય શબ્દ વચઃ-ઘોવન અને અર્ચયઃ-દીપ્તિ ભ્રાજન્તે-પ્રકાશિત થાય છે-ચમકે છે. (૧૦૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિની સમાન ગુણી, આપ્ત પુરુષ સમાન શ્રેષ્ઠ કીર્તિયુક્ત બનીને પ્રકાશિત થાય છે, તે પરોપકાર માટે અન્યોને વિદ્યા, વિનય અને ધર્મનો નિરંતર ઉપદેશ કરે. (૧૦૬)

પાવકર્વાઃ શુક્રર્વાઃઽઅનૂનર્વાઃઽઉદિયર્ષિ ભાનુના^૪ ।

પુત્રો માતરા^૫ વિચરન્નુપાવસિ^૬ પૃણક્ષિ^૭ રોદસીઽઉભે ॥ ૧૦૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ પુત્રઃ-બ્રહ્મચર્યાદિ આશ્રમોમાં વિચરન્-વિચરણ કરતાં વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરે છે. અને ભાનુના-પ્રકાશથી પાવકર્વાઃ-શુક્રર્વાઃ-વિદ્યુત્ અને સૂર્યના પ્રકાશ સમાન ન્યાય કરનાર અને અનૂનર્વાઃ-પૂર્ણ વિદ્યાભ્યાસ કરનાર તથા જેમ ઉભે-બન્ને રોદસી-આકાશ અને પૃથિવી પરસ્પર સંબંધ ધરાવે છે, તેમ ઝત્, ઇર્ષિ-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરતાં રાજ્યનો પૃણક્ષિ-સંબંધ કરે છે. અને માતરા-માતા-પિતાની ઉપાવસિ-રક્ષા કરે છે એથી તું ધર્માત્મા છે. (૧૦૭)

ભાવાર્થ : માતા-પિતા આદિને એ અત્યંત ઉચિત છે, કે તેઓ સંતાનોને જન્મ આપીને, બાલ્યાવસ્થામાં જ તેને સ્વયં શિક્ષા આપીને, ત્યારે બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરાવીને, આચાર્ય કુલમાં વિદ્યા ગ્રહણ કરવા માટે મોકલીને વિદ્યાપ્રાપ્તિનો સુઅવસર પ્રદાન કરે.

સંતાનોને પણ એ અતિ ઉચિત છે, કે તેઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત બનીને, પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને, અભિમાન અને ઈર્ષાથી રહિત બનીને પ્રીતિપૂર્વક માતા-પિતાની મન, વચન અને કર્મથી યથાવત્ સેવા કરે. (૧૦૭)

ઊર્જો^૮ નપાજ્ઞાતવેદઃ સુશ્સ્તિભિર્મન્દસ્વ ધીતિર્ભિર્હિતઃ ।

ત્વેઽઇષઃ^૯ સન્દધુર્ભૂરિવર્પસશ્ચિત્રોતયો વામજાતાઃ ॥ ૧૦૮ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-બુદ્ધિ અને ધનથી યુક્ત પુત્ર ! જે ત્વે-તારામાં ભૂરિવર્પસઃ-અનેક પ્રશંસા યોગ્ય રૂપોથી યુક્ત, ચિત્રોતઃ-આશ્ચર્ય સમાન રક્ષા આદિ કર્મ કરનારી, વામજાતાઃ-પ્રશંસાને યોગ્ય કુળ અને કર્મોમાં પ્રસિદ્ધ વિદ્યાપ્રિય અધ્યાપિકા માતા આદિ વિદ્વાન સ્ત્રીઓ ઇષઃ-અન્નને સંદધુઃ-ઘરે-ભોજન કરાવે.

તે તું સુશસ્તિભિઃ-ઉત્તમ પ્રશંસાયુક્ત ક્રિયાઓ કરનારી ધીતિભિઃ-આંગળીઓથી બોલાવેલા ઋર્જઃ-પરાક્રમને નપાત્-ધર્માનુકૂળ પરાક્રમયુક્ત સર્વના હિતઃ-હિતને ધારણ કરતાં સદા મન્દસ્વ-આનંદ કર. (૧૦૮)

ભાવાર્થ : જે બાળકો અને બાલિકાઓની માતાઓ વિદ્યાપ્રિય વિદ્યુષી હોય, તે જ નિરંતર સુખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જે માતા-પિતાના સંતાન વિદ્યા, સુશિક્ષા અને બ્રહ્મચર્ય દ્વારા શારીરિક તથા આત્મિક બલથી યુક્ત ધર્માચારી હોય છે, તે જ સદા સુખી રહે છે. (૧૦૮)

इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायोऽमर्त्यं ।

स दर्शतस्य वपुषो विराजसि पृणक्षिं सानसिं क्रतुम् ॥ १०९ ॥

પદાર્થ : હે અમર્ત્ય-નાશ અને સંસારી મનુષ્યોના સ્વભાવથી રહિત અગ્ને-અગ્નિ સમાન પુરુષાર્થી ! જે ઇરજ્યન્-ઐશ્વર્યનો સંચય કરનાર આપ દર્શતસ્ય-દર્શનીય વપુષઃ-રૂપને સાનસિમ્-સનાતન ક્રતુમ્-બુદ્ધિનો પૃણક્ષિ-સંબંધ રાખો છો અને તે બુદ્ધિમાં વિશેષ કરીને વિરાજસિ-શોભિત-વિરાજમાન રહો છો સઃ-તે આપ અસ્મે-અમારા માટે જન્તુભિઃ-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓથી રાયઃ-ધનોનો પ્રથયસ્વ-વિસ્તાર કરો. (૧૦૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યને સનાતન વિદ્યા આપે છે, સ્વયં શોભનીય વેશ અને આચરણમાં વિરાજમાન રહે છે, તે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૧૦૯)

इष्कर्त्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तः राधसो महः ।

रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिः रयिम् ॥ ११० ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ અધ્વરસ્ય-વિસ્તારવા યોગ્ય યજ્ઞને ઇષ્કર્તારમ્-સિદ્ધ કરનાર પ્રચેતસમ્-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન વામસ્ય-પ્રશંસિત મહઃ-મહાન્ રાધસઃ-ધનના રાતિમ્-દાતાને; ક્ષયન્તમ્-નિવાસ કરનાર પુરુષ અને સુભગામ્-સુંદર ઐશ્વર્યની આપનારી મહીમ્-પૃથિવી તથા ઇષમ્-અન્ન આદિને તથા સાનસિમ્-પ્રાચીન રયિમ્-ધનને દધાસિ-ધારણ કરો છો, એથી અમારા સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પોતાના સુખ માટે ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે, તે આપ પુરુષ પૂજ્ય બને છે. (૧૧૦)

ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निः सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।

श्रुत्कर्णः सप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥ १११ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ જનાઃ-વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી પ્રસિદ્ધ મનુષ્ય ગિરા-વાણીથી સુમ્નાય-સુખ માટે દૈવ્યમ્-વિદ્વાનોમાં કુશળ, શ્રુત્કર્ણમ્-બહુશ્રુત, વિશ્વદર્શતમ્-સર્વ જોનાર [સર્વ વિદ્યા-બોધનો દ્રષ્ટા],

સપ્રથસ્તમમ્-અત્યંત વિદ્યાના વિસ્તારથી યુક્ત, ઋહાવાનમ્-અત્યંત સત્યાચરણથી યુક્ત મહિષમ્-મહાન્ અગ્નિમ્-વિદ્યાને અને માનુષા-મનુષ્યોના યુગા-વર્ષો વા સતયુગ આદિ પુરુઃ-પ્રથમ દધિરે-ધારણ કરેલ છે, તેવા વિદ્યાને અને વર્ષોને તું પણ ધારણ કર. એ ત્વા-તને શિખવું છું. (૧૧૧)

ભાવાર્થ : જે સત્પુરુષો થઈ ગયા છે તેનું મનુષ્યોએ અનુકરણ કરવું જોઈએ. અન્ય અધર્મીઓનું નહિ. (૧૧૧)

આપ્યાયસ્વ સમેતુ તે વિશ્વતઃ સોમ વૃષ્ણ્યમ્ । ભવા વાજસ્ય સઙ્ગથે ॥ ૧૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ચંદ્રમા સમાન કાન્તિમાન રાજપુરુષ ! જેમ સોમગુણયુક્ત વિદ્યાનના સંગથી તે-તારા માટે વૃષ્ણ્યમ્-વીર્યવાન-બલવાન પુરુષના કર્મને વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી સમેતુ-પ્રાપ્ત થાય, તેથી આપ આપ્યાયસ્વ-આગળ વધીને વાજસ્ય-વિજ્ઞાન અને વેગથી સંગ્રામના જાણનારા બનીને સંગથે-યુદ્ધમાં વિજય કરનાર ભવ-બનો. (૧૧૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષે નિત્ય વીર્ય-બલની વૃદ્ધિ કરીને શત્રુઓથી વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૧૧૨)

સં તે પયાંશ્સિ સમું યન્તુ વાજાઃ સં વૃષ્ણ્યાન્યભિમાતિષાહઃ ।

આપ્યાયમાનોઽમૃતાય સોમ દિવિ શ્રવાંશ્સ્યુત્તમાનિ ધિષ્વ ॥ ૧૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-શાન્તિયુક્ત પુરુષ ! જે તે-તમારા માટે પયાંસિ-જલ વા દૂધ સંયન્તુ-પ્રાપ્ત થાય; અભિમાતિષાહઃ-અભિમાની શત્રુઓનું નિવારણ કરનાર વાજાઃ-ધનુર્વેદનું વિજ્ઞાન સમ્-પ્રાપ્ત થાય; ઽ-અને વૃષ્ણ્યાનિ-પરાક્રમ સમ્-પ્રાપ્ત થાય, તે આપ્યાયમાનો-સારી રીતે આગળ વધતાં આપ દિવિ-પ્રકાશસ્વરૂપ ઈશ્વરમાં અમૃતાય-મોક્ષ માટે ઉત્તમાનિ, શ્રવાંસિ-ઉત્તમ શ્રવણને ધિષ્વ-ધારણ કરો. (૧૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શરીર અને આત્માના બલની નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ યોગાભ્યાસથી મોક્ષના આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧૩)

આપ્યાયસ્વ મદિન્તમ્ સોમ વિશ્વેંભિર્શુભિઃ ।

ભવા નઃ સપ્રથસ્તમઃ સઘ્વા વૃધે ॥ ૧૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મદિન્તમ-અત્યંત આનંદી સોમ-ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષ ! આપ અંશુભિઃ-જેમ કિરણોથી સૂર્ય વધે છે તેમ વિશ્વેંભિઃ-સર્વ સાધનોથી આપ્યાયસ્વ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. સપ્રથસ્તમઃ-અત્યંત વિસ્તારયુક્ત સુખ કરનાર સઘ્વા-મિત્ર બનીને નઃ-અમારી વૃધે-વૃદ્ધિ માટે ભવ-તત્પર બનો. (૧૧૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે સર્વનું હિત કરનાર મનુષ્ય છે તેની સર્વ રીતે વૃદ્ધિ થાય છે ઈર્ષા કરનારની નહિ. (૧૧૪)

આ તે વૃત્સો મનો યમત્પરમાર્ચિત્સધસ્થાત્ । અગ્ને ત્વાઙ્ગમયા ગિરા ॥ ૧૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્યાન પુરુષ ! ત્વાઙ્ગમયા-તમને કામના કરવા માટે

ગિરા-વાણીથી જે તે-તારું મન:-ચિત્ત જેમ પરમાત્-ઉત્તમ સધસ્થાત્-એક સ્થાનથી ચિત્-જ વત્સ:-વાઇરકું ગાયને મળે, તેમ આ+ચમત્-સ્થિર થાય છે, તેમ તું મુક્તિને કેમ પ્રાપ્ત ન થાય ? (૧૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે મન અને વાણીને સદા પોતાના વશમાં રાખવા જોઈએ. (૧૧૫)

તુભ્યં તાઽઅઙ્ગિરસ્તમ્ વિશ્વાઃ સુક્ષિતયઃ પૃથક્ । અગ્ને કામાય યેમિરે ॥ ૧૧૬ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ગિસ્તમ-અત્યંત સારને ગ્રહણ કરનાર અગ્ને-પ્રકાશમાન રાજન્ ! જે વિશ્વા:-સર્વ સુક્ષિતય:-શ્રેષ્ઠ પ્રજાજન પૃથક્-અલગ કામાય-ઈચ્છા સિદ્ધિ માટે તુભ્યમ્-તારા માટે યેમિરે-પ્રાપ્ત થાય છે તા:-તે પ્રજાઓની નિરંતર રક્ષા કર. (૧૧૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં પ્રજા ધાર્મિક રાજાને પ્રાપ્ત કરીને પોતપોતાની ઈચ્છા પૂર્ણ કરી લે છે, ત્યાં રાજાની વૃદ્ધિ કેમ ન થાય ? (૧૧૬)

અગ્નિઃ પ્રિયેષુ ધામ્સુ કામૌ ભૂતસ્ય ભવ્યસ્ય । સમ્રાડેકો વિરાજતિ ॥ ૧૧૭ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય સમ્રાટ્-સમ્યક્ પ્રકાશક એક:-એકજ પરમેશ્વર સમાન કામ:-સ્વીકારવા યોગ્ય અગ્નિ:-અગ્નિ સમાન વિદ્યમાન સભાપતિ ભૂતસ્ય-ભૂત અને ભવ્યસ્ય-ભવિષ્ય સમયના પ્રિયેષુ-પ્રિય ધામ્સુ-જન્મ, સ્થાન અને નામોમાં વિરાજતિ-વિરાજમાન રહે, તે જ રાજ્યના અધિકારી થવાને યોગ્ય છે. (૧૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમાત્માના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવની અનુકૂળ પોતાના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ કરે છે, તે જ સામ્રાજ્યનો ભોગ કરી શકે છે. (૧૧૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં સ્ત્રી, પુરુષ, રાજા, પ્રજા, ખેતી અને પઠન-પાઠન આદિ કર્મોનું વર્ણન છે. તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ સમજવી જોઈએ.

॥ ઇતિ દ્વાદશોઽધ્યાય ॥



॥ અથ ત્રયોદશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

મયિં ગૃહ્લામ્યગ્રેં અગ્નિઃ રાયસ્પોષાય સુપ્રજાસ્ત્વાય સુવીર્યાય ।

મામું દેવતાઃ સચન્તામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે કુમાર અને કુમારીઓ ! જેમ હું અગ્રે-પ્રથમ મયિ-મારામાં રાય:-વિજ્ઞાન આદિ ધનથી પોષાય-પુષ્ટિ સુપ્રજાસ્ત્વાય-ઉત્તમ પ્રજા થવા માટે, સુવીર્યાય-રોગરહિત સુંદર પરાક્રમની પ્રાપ્તિ માટે અગ્નિમ્-ઉત્તમ વિદ્વાનને ગૃહ્લામિ-ગ્રહણ કરું છું; જેથી મામ્-મને ડ-નિશ્ચયથી દેવતા:-ઉત્તમ વિદ્વાન્ વા ઉત્તમ ગુણ સચન્તામ્-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તમે પણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને એ ઉચિત છે, કે બ્રહ્મચર્યયુક્ત બાલ્યાવસ્થામાં વેદોના અધ્યયન દ્વારા પદાર્થ વિદ્યા, યોગાભ્યાસ, ઈશ્વરોપાસના અને બ્રહ્મજ્ઞાનને ગ્રહણ કરે.

જેથી-દિવ્ય ગુણો અને આપ્ત વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ ધન, સંતાન અને પરાક્રમને પ્રાપ્ત કરી શકે. (૧)

અપાં પૃષ્ઠમસિ યોનિર્ગનેઃ સંમુદ્રમભિત્તઃ પિન્વમાનમ્ ।

વર્ધમાનો મહાંરઽઆ ચ્ પુષ્કરે દિવો માત્રયા વરિમ્ણા પ્રથસ્વ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું અભિત્ત:-સર્વત્રથી અપામ્-સર્વત્ર વ્યાપક પરમેશ્વર આકાશ, દિશા, વિદ્યુત્, પ્રાણો વા જલોના પૃષ્ઠમ્-આધાર સમુદ્રમ્-આકાશ સમાન સાગરને પિન્વમાનમ્-સિંચનાર છો, અગ્ને:-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિના યોનિ:-કારણે દિવ:-પ્રકાશિત પદાર્થોનું માત્રયા-નિર્માણ કરનારી બુદ્ધિથી પુષ્કરે-હૃદયરૂપ અન્તરિક્ષમાં વર્ધમાન:-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થયેલ ચ્-અને મહાન્-સર્વ શ્રેષ્ઠ વા સર્વના પૂજ્ય અસિ-છો, તે આપ અમારા માટે વરિમ્ણા-વ્યાપક શક્તિથી આ+પ્રથસ્વ-પ્રસિદ્ધ બનો. (૨)

ભાવાર્થ : જે સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, સમસ્ત સંસારના રચયિતા, સર્વત્ર વ્યાપક, સર્વથી ઉત્તમ અને સર્વશક્તિમાન ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને સંપૂર્ણ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તેનું મનુષ્યોએ સેવન કેમ ન કરવું જોઈએ. (૨)

બ્રહ્મ જજ્ઞાનં પ્રથમં પુરસ્તાદ્ધિ સીમતઃ સુરુચૌ વેનઽઆવઃ ।

સ બુદ્ધ્યાઽડપમાઽસ્ય વિષ્ઠાઃ સતશ્ચ યોનિમસતશ્ચ વિ વઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે પુરસ્તાત્-સૃષ્ટિની આદિમાં જજ્ઞાનમ્-સર્વના ઉત્પાદક અને જ્ઞાતા, પ્રથમમ્-વિસ્તારયુક્ત અને વિસ્તાર કર્તા, બ્રહ્મ-સર્વથી મહાન છે, જે સુસ્ત્વઃ-સુંદર પ્રકાશયુક્ત અને સુંદર રચિના વિષય,

વેન:-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, જે અસ્ય-એથી બુધ્ન્યા: જલ સંબંધી આકાશમાં વિદ્યમાન સૂર્ય, ચન્દ્રમા, પૃથિવી અને નક્ષત્ર આદિ વિષ્ટા:-વિવિધ સ્થાનોમાં રહેલા છે, ઉપમા:-ઈશ્વર જ્ઞાન માટે ઉપમા-દેષ્ટાન્ત છે, તે સર્વને સ:-તે આવ:-પોતાની વ્યાપ્તિથી આચ્છાદન કરે છે, તે ઈશ્વર વિસીમત:-મર્યાદાથી સત:-વ્યક્ત અસત:-અવ્યક્ત-કારણ =પ્રકૃતિ ચ-અને કારણના યોનિમ્-આકાશરૂપ સ્થાનને વિવ:-ગ્રહણ કરે છે. તે બ્રહ્મની સર્વ લોકોએ નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરના વિશેષ જ્ઞાન માટે પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ લોક દેષ્ટાન્ત છે.

જે બ્રહ્મ સર્વમાં વ્યાપક બનીને સર્વને આચ્છાદિત કરે છે, સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, સર્વને ઉત્તમ નિયમથી પોત-પોતાની કક્ષામાં ચલાવે છે.

તે અન્તર્યામી બ્રહ્મ પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે, તેથી પૃથક કોઈ વસ્તુ ભક્તિ કરવા યોગ્ય નથી. (૩)

હિરણ્યગર્ભઃ સમવર્ત્તતાગ્રે ભૂતસ્ય જાતઃ પતિરેકઽઆસીત્ ।

સ દાધાર પૃથિવીં દ્યામુતેમાં કસ્મૈ દેવાય હૃવિષા વિધેમ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે એ ભૂતસ્ય-ઉત્પન્ન સંસારના જાત:-જનક પતિ:-પાલક એક:-અદ્વિતીય હિરણ્યગર્ભઃ-સૂર્યાદિ તેજોમય પદાર્થોના આધાર અગ્રે-જગતની રચના પૂર્વે સમવર્ત્ત-વિદ્યમાન આસીત્-હતા સ:-તેણે ડ્રમામ્-આ સૃષ્ટિને રચી ડત-અને પૃથિવીમ્-પ્રકાશરહિત ભૂગોલાદિ અને દ્યામ્-પ્રકાશયુક્ત સૂર્યાદિ લોકોને દાધાર-ધારણ કરેલ છે, તે કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ પ્રજાપતિ દેવાય-પ્રકાશમાન પરમાત્માની હૃવિષા-આત્મા આદિ સામગ્રીથી વિધેમ-પરિચર્યા-સેવા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તે પરમાત્માની સેવા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે ઈશ્વર ! આ વ્યક્ત સૃષ્ટિના પૂર્વે [હિરણ્યગર્ભ] ઈશ્વર જ જાગરુક હતા. જેણે આ લોકોને ધારણ કરેલ છે અને પ્રલય સમયમાં ઈન્ન-મિન્ન કરે છે. તે ઈશ્વરને તમે ઉપસના યોગ્ય માનો. (૪)

દ્રપ્સશ્ચસ્કન્દ પૃથિવીમનુ દ્યામિમં ચ યોનિમનુ યશ્ચ પૂર્વઃ ।

સમાનં યોનિમનુ સંચરન્તં દ્રપ્સં જુહોમ્યનુ સપ્ત હોત્રાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું સપ્ત-પાંચ પ્રાણ, મન અને આત્મા એ સાત હોત્રાઃ-અનુગ્રહણ કરનાર છે, ય:-જે ડ્રમામ્:-આ પૃથિવીમ્-પૃથિવી દ્યામ્-પ્રકાશમય ધુલોક ચ-અને યોનિમ્-કારણ-પ્રકૃતિને અનુ-અનુકૂળ ય:-જે પૂર્વઃ-સંપૂર્ણ સ્વરૂપ દ્રપ્સ:-આનંદ અને ઉત્સાહને અનુ-અનુકૂળતાથી ચસ્કન્દ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે યોનિમ્-સ્થાનને અનુ-અનુસાર સંચરન્તમ્-સંચારી સમાનમ્-સમાન રૂપથી દ્રપ્સમ્-સર્વત્ર અભિવ્યાપ્ત આનંદને હું અનુ + જુહોમિ-અનુકૂળતાથી ગ્રહણ કરું છું, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરનું આનંદમય સ્વરૂપ સર્વત્ર ઉપલબ્ધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે

તમે યોગાભ્યાસ કરો. (૫)

નમોઽસ્તુ સર્પેભ્યો યે કે ચ પૃથિવીમનુ।

યેઽઅન્તરિક્ષે યે દિવિ તેભ્યઃ સર્પેભ્યો નમઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે કે-કોઈ આ જગતમાં લોક-લોકાન્તર અને પ્રાણીઓ છે તેભ્યઃ-તે સર્પેભ્યઃ-લોકોના જીવો માટે નમઃ-અન્ન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

યે-જે અન્તરિક્ષે-આકાશમાં યે-જે દિવિ-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ લોકોમાં ચ-અને યે-જે પૃથિવીમ્-ભૂમિની અનુ-ઉપર ચાલે છે-ગતિ કરે છે તે સર્પેભ્યઃ-પ્રાણીઓ માટે નમઃ-અન્ન પ્રાપ્ત થાય. (૬)

ભાવાર્થ : આ જેટલા લોકો જોવામાં આવે છે અને જે જોવામાં નથી આવતા તે સર્વ પોત-પોતાની કક્ષામાં નિયત કરેલ આકાશમાં ભ્રમણ કરે છે.

તે સર્વ લોકોમાં જે પ્રાણીઓ વિચરે છે તેને માટે ઈશ્વરે [અન્નાદિ] રચેલ છે, તેનાથી તેઓનું જીવન યાપન થાય છે, એમ તમે જાણો. (૬)

યાઽઙ્ઘવો યાતુધાનાનાં યે વા વનસ્પતીંશ્ઙરનુ।

યે વાવટેષુ શેરંતે તેભ્યઃ સર્પેભ્યો નમઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યાઃ-જે યાતુધાનાનામ્-પારકા પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનારા ડાકૂઓની ઙ્ઘવઃ-ગતિ-ચાલ છે, વા-અથવા યે-જે વનસ્પતીન્-વડ આદિ વનસ્પતિઓના વનમાં અનુ-આશ્રિત રહે છે. અને યે-જે વા અથવા અવટેષુ-ગુપ્ત માર્ગોમાં શેરંતે-સૂએ છે તેભ્યઃ-તે સર્પેભ્યઃ-ચંચળ દુષ્ટ પ્રાણીઓને માટે નમઃ-વજૂ ચલાવો. (૭)

ભાવાર્થ : માર્ગોમાં અને વનોમાં જે ઠગ લોકો દિવસમાં એકાન્તમાં સૂએ છે, તે ડાકૂઓનું અને સર્પોનું મનુષ્યો શસ્ત્ર તથા ઔષધિ આદિથી નિવારણ કરે. (૭)

યે વામી રોચને દિવો યે વા સૂર્યસ્ય રશ્મિષુ।

યેષામ્પ્સુ સદસ્કૃતં તેભ્યઃ સર્પેભ્યો નમઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! યે-જે અમી-પરોક્ષમાં રહેનાર દિવઃ-વિદ્યુતના રોચને-પ્રકાશમાં, વા-અથવા યે-જે સૂર્યસ્ય-સૂર્યના રશ્મિષુ-કિરણોમાં, વા-અથવા યે-જે યેષામ્-જેના અપ્સુ-જલોમાં સદઃ-સ્થાન કૃતમ્-બનેલા છે, તેભ્યઃ-તે સર્વ સર્પેભ્યઃ-દુષ્ટ પ્રાણીઓને નમઃ-વજૂથી મારો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે તેઓ જે જલ અને અન્તરિક્ષમાં સર્પ આદિ દુષ્ટ પ્રાણીઓ રહે છે, તેની વજૂના પ્રહારથી નિવૃત્તિ કરે. (૮)

કૃણુષ્વ પાજ્ઞઃ પ્રસિતિં ન પૃથ્વીં યાહિ રાજેવામવાંશ્ઙ્ઘૈન।

તૃષ્વીમનુ પ્રસિતિં દ્રૂણાનોઽસ્તાસિ વિધ્વં રક્ષસસ્તપિષ્ઠૈઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ ! આપ પાજ:-બલ-સેનાને કૃણુષ્વ-બનાવી પ્રસિતિમ્-જાળની ન-સમાન પૃથિવીમ્-ભૂમિને યાહિ-કરો જેથી આપ અસ્તા-બાણ આદિને ફેંકનાર અસિ-છો, એથી ઇમેન-હાથીથી અમવાન્-અનેક દૂતોવાળા રાજેવ-રાજાની સમાન તપષ્ઠૈઃ-અત્યંત દુઃખદાયી શસ્ત્રોથી પ્રસિતિમ્-બંધન જાલથી સિદ્ધ કરીને રક્ષસ:-શત્રુઓનો દ્રૂણાન:-સંહાર કરતા તૃષ્વીમ્-શીઘ્ર અનુ-સામે આવીને વિધ્વ-તાડન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : રાજાની સમાન સેનાપતિએ પૂર્ણ બલ-સેનાને બનાવીને, અનેક બંધનોથી શત્રુઓને બાંધીને, બાણ આદિથી વીધીને તથા તેને જેલમાં રાખીને શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરવું જોઈએ. (૯)

તવ ભ્રમાસંઽઆશુયા પતન્ત્યનુ સ્પૃશ ધૃષ્ણતા શોશુચાનઃ ।

તપૂંષ્ઞધ્યગ્ને જુહ્વા પતજ્ઞાનસન્દિતો વિસૃજ વિષ્વંગુલ્કાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સેનાપતિ ! શોશુચાન:-અત્યંત પવિત્ર આચરણ કરનાર આપ જે તવ-આપના ભ્રમાસ:-ભ્રમણશીલ વીર, જેમ વિષ્વક્-સર્વત્રથી આશુયા-શીઘ્ર ગતિ યુક્ત ઝલ્કા:-વિદ્યુત્ની ચિનગારીઓ પડે છે, તેમ પતન્તિ-બાજ પક્ષી સમાન શત્રુઓના દળ પર પડે છે. તેને ધૃષ્ણતા-દેહ સેનાથી અનુ-અનુકૂળ સ્પૃશ-પ્રાપ્ત કરો. અને અસન્દિત:-અખંડિત બનીને જુહ્વા-ધી ના હવન કરવાના સાધન-સુવાથી અગ્નિના તપૂંષિ-તેજ સમાન શત્રુઓ પર સર્વત્રથી વિદ્યુત્ને વિસૃજ-છોડો અને પતજ્ઞાન્-ઘોડાઓને સુંદર શિક્ષાયુક્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજા, સેનાપતિ, સેના અને રાજ કર્મચારીઓએ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક બલ-સેના વધારીને, વીરોને હર્ષ પમાડીને, તેઓથી યુદ્ધ કરાવીને, આગ્નેય શસ્ત્ર આદિથી તથા તોપ આદિથી શત્રુઓ પર વિદ્યુત્ વર્ષા કરવી જોઈએ. જેથી શીઘ્ર વિજય પ્રાપ્ત થાય. (૧૦)

પ્રતિ સ્પશો વિસૃજ તૂર્ણિતમો ભવાં પાયુર્વિશોઽસ્યા અદબ્ધઃ ।

યો નોં દૂરેઽઅઘશંસો યોઽઅન્ત્યગ્ને માર્કિષ્ટે વ્યથિરાદધર્ષીત્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન શત્રુઓનું દહન કરનાર સેનાપતિ ! તે-આપના અને ન:-અમારા ય:-જે વ્યથિ:-વ્યથા આપનાર અઘશંસ:-પાપ કરવામાં પ્રવૃત્ત ચોર શત્રુઓ દૂરે-દૂર તથા ય:-જે અન્તિ-નજીક છે. જેથી તે અમને માર્કિ: + આ + દધર્ષીત્-દુઃખ ન આપે. તે શત્રુના પ્રતિ-પ્રત્યે આપ તૂર્ણિતમ:-શીઘ્ર દંડદાતા બનીને સ્પશ:-બંધન વિસૃજ-રથો અને અસ્યા:-એ વિદ્યમાન વિશ:-પ્રજાના પાયુ:-રક્ષક અદબ્ધ:-હિંસારહિત ભવ-બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સમીપ અને દૂર રહેનારા, પ્રજાઓને દુઃખ આપનારા દુષ્ટ ચોર છે, તેને રાજા આદિજનો સામ, દામ, દંડ, ભેદ આદિ ઉપાયો દ્વારા શીઘ્ર વશમાં કરીને, દયા અને ન્યાય દ્વારા ધાર્મિક પ્રજાઓનું નિરંતર પાલન કરે. (૧૧)

उदग्ने तिष्ठ प्रत्यातनुष्व न्युमित्राँऽ ओषतात्तिग्महेते ।

यो नोऽअरातिःसमिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજધારી સભાધ્યક્ષ ! આપ રાજધર્મનું ઉત્+તિષ્ઠ-ઉત્થાન કરો. ધર્માત્માઓ પ્રતિ-પ્રત્યે આતનુષ્વ-સુખોનો વિસ્તાર કરો.

હે તિગ્મહેતે-તીવ્ર દંડ આપનાર રાજપુરુષ ! અમિત્રાન્-ધર્મના દ્વેષી શત્રુઓનું નિ+ઓષતાત્-નિરંતર દહન કરો.

હે સમિધાન-સમ્યક્ તેજસ્વી સભાધ્યક્ષ ! યઃ-જે નઃ-અમારા અરાતિમ્-શત્રુઓને ઉત્સાહી ચક્રે-કરે છે તમ્-તેને નીચા-તિરસ્કૃત કરીને શુષ્કમ્-સૂકા અતસમ્-લાકડાની ન-સમાન ધક્ષિ-દહન કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદ ધર્મ અને વિજયમાં દત્તચિત બનીને મિત્રોને જલની સમાન શીતલતા આપે, તથા અગ્નિની સમાન શત્રુઓને બાળી નાખે.

જે ઉદાસીન બનીને અમારા શત્રુઓને ઉત્પન્ન કરે તેને દંઢતાથી બાંધીને નિષ્કંટક કરે. (૧૨)

ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने । अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्रमृणीहि शत्रून् । अग्नेष्ट्वा तेजसा सादयामि ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જે માટે આપ ऊर्ध्वः-ઉત્તમ ભવ-બનો, પ્રતિ-અનુકૂળ બનીને વિધ્ય-દુષ્ટ શત્રુઓની તાડના કરો. અસ્મત્-અમારા સ્થિરા-નિશ્ચલ दैव्यानि-વિદ્વાનોએ રચેલ પદાર્થોને આવિઃ + કૃણુષ્વ-પ્રકટ કરીને-આવિષ્કાર કરીને, સુખોનો તનુહિ-વિસ્તાર કરો, યાતુજૂનામ્-પારકા પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનારા અને વેગવાન શત્રુઓના जामिम-ભોજનના સ્થાન તથા अजामिम-અન્ય વ્યવહાર સ્થાનોને अव-સારી રીતે વિસ્તારપૂર્વક નાશ કરો, शत्रून्-શત્રુઓનો प्रमृणीहि-બળપૂર્વક સંહાર કરો, જેથી त्वा-આપની अग्नेः-અગ્નિના तेजसा-પ્રકાશની अधि-સન્મુખ सादयामि-સ્થાપન કરું છું. [અર્થાત્ સભાપતિ પદ પર સ્થાપિત કરું છું.] (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય રાજાના ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત બને. પ્રજા અને દરિદ્રોને સદા સુખ આપે. ધર્મમાં સ્થિર બનીને દુષ્ટ, અધર્માચારી મનુષ્યોને નિરંતર શિક્ષા કરે અને સર્વથી શ્રેષ્ઠ પુરુષને સભાપતિ બનાવે. (૧૩)

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ।

अपांश्चेतांश्चसि जिन्वति । इन्द्रस्य त्वौजसा सादयामि ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ अयम्-એ અગ્નિઃ-સૂર્ય दिवः-પ્રકાશયુક્ત આકાશની મધ્યમાં અને पृथिव्याः-ભૂમિના मूर्द्धा-સર્વ પ્રાણીઓના શિર સમાન શ્રેષ્ઠ ककुत्-મહાન पतिः-સર્વ પદાર્થોના રક્ષક બનીને अपाम्-જલના चेतांसि-સત્વથી પ્રાણીઓને जिन्वति-તૃપ્ત કરે છે, તેમ આપ પણ બનો. હું त्वा-આપને इन्द्रस्य-સૂર્યના ओजसा-પરાક્રમ સહિત રાજ્ય માટે सादयामि-[સભાપતિ પદ પર] સ્થાપિત

કરું છું. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્ય સમાન ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત, ન્યાયથી પ્રજાપાલનમાં તત્પર અને ધાર્મિક વિદ્વાન્ હોય, તેનો સર્વ મનુષ્યો રાજા તરીકે સ્વીકાર કરે. (૧૪)

ભુવો યજ્ઞસ્ય રજસશ્ચ નેતા યત્રા નિયુદ્ધિઃ સચસે શિવાભિઃ ।

દિવિ મૂર્દ્ધાનિં દધિષે સ્વર્ષા જિહ્વામગ્ને ચકૃષે હવ્યવાહમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ રાજન્ ! યત્ર-જે રાજ્યમાં આપ જેવા નિયુદ્ધિઃ-પોતાના વેગ આદિ ગુણો સહિત વાયુ રજસઃ-લોક વા ઐશ્વર્યના નેતા-નેતા બનીને દિવિ-ન્યાયના પ્રકાશમાં મૂર્દ્ધાનમ્-શિરને ધારણ કરે છે, તેમ યત્ર-જ્યાં શિવાભિઃ-કલ્યાણકારક નીતિઓથી ભુવઃ-પોતાની પૃથિવી-ભૂમિનું યજ્ઞસ્ય-રાજધર્મનું પાલન કરનાર બનીને, સચસે-સંયુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ પુરુષોથી રાજ્યને દધિષે-ધારણ કરે છે, હવ્યવાહમ્-અનેકવિધ પ્રજ્ઞાનને આપવામાં સમર્થ વિદ્વાન સ્વર્ષામ્-સુખોનું સેવન કરનાર જિહ્વામ્-શ્રેષ્ઠ વિષયોની ગ્રાહક વાણીને ચકૃષે-સિદ્ધ કરે છે, તે રાજ્યમાં સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય છે. એમ નિશ્ચિત જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યમાં રાજાઆદિ સર્વે ધાર્મિક, મંગલાચારી લોકો ધર્મપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરે, ત્યાં વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી ઉત્પન્ન સુખની વૃદ્ધિ કેમ ન થાય ? (૧૫)

ધ્રુવાસિં ધ્રુવનાસ્તૃતા વિશ્વકર્મણા ।

મા ત્વાં સમુદ્રઽઽદ્ધધીન્મા સુપર્ણોઽ વ્યથમાના પૃથિવીં દૃહ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે રાજપત્ની ! જેથી વિશ્વકર્મણા-સર્વ ધર્મયુક્ત કર્મો કરનાર પોતાના પતિની સાથે વર્તીને આસ્તૃતા-વસ્ત્ર, આભૂષણ અને શ્રેષ્ઠ ગુણોથી સારી રીતે આચ્છાદિત, ધસ્ટા-વિદ્યા અને ધર્મને ધારણ કરનારી, તું ધ્રુવા-સ્થિર અસિ-છો. તે તું અવ્યથમાના-પીડાથી રહિત બની પૃથિવીમ્-પોતાની રાજ્યભૂમિની ઉત્+દૃહ-સારી રીતે વૃદ્ધિ કર, ત્વા-તને સમુદ્રઃ-કામુક અર્થાત્ વિષયી લોકોનો વ્યવહાર મા+વધીત્-પીડિત ન કરે, અને સુપર્ણઃ-સુંદર રક્ષા કરેલા અંગોથી યુક્ત તારો પતિ મા-મારે નહિ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેવી રાજનીતિ-વિદ્યા રાજા ભણેલ હોય, તેવી રાણી પણ ભણેલી હોય. સદા બન્ને પતિવ્રતા અને સ્ત્રીવ્રત બનીને ન્યાયથી ન્યાયપાલન અને પ્રજાનું પાલન કરે.

વ્યભિચાર અને કામપીડાથી રહિત બનીને ધર્મપૂર્વક સંતાનો ઉત્પન્ન કરીને, સ્ત્રીઓનો ન્યાય સ્ત્રી અને પુરુષોનો ન્યાય પુરુષ કરે. (૧૬)

પ્રજાપતિષ્ટ્વા સાદયત્વપાં પૃષ્ઠે સમુદ્રસ્યેમન્ ।

વ્યચસ્વતીં પ્રથસ્વતીં પ્રથસ્વ પૃથિવ્યસિ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! જેમ પ્રજાપતિઃ-પ્રજાના સ્વામી રાજા સમુદ્રસ્ય-સમુદ્રના અપામ્-જલોના

અમન્-પ્રાપ્તિ સ્થાનથી પૃષ્ઠે-જલની પીઠ પર નૌકા સમાન વ્યચસ્વતીમ્-અનેક વિદ્યાની પ્રાપ્તિ તથા સત્કારથી યુક્ત પ્રથસ્વતીમ્-પ્રશંસિત કીર્તિવાળી ત્વા--તને સાદયતુ સ્થાપિત કરે, કારણકે તું પૃથિવી-ભૂમિ સમાન સુખદાયક અસિ-છો તેથી સ્ત્રીઓને ન્યાય કરવામાં પ્રથસ્વ-પ્રસિદ્ધ છો, તેમ તારો પતિ પુરુષોનો ન્યાય કરે. (૧૭)

ભાવાર્થ : રાજાપુરુષ આદિ સ્વયં જે રાજકર્મમાં પ્રવૃત્ત હોય, તેમાં પોત-પોતાની પત્નીઓને પણ સ્થાપિત કરે. જે પુરુષ પુરુષોના ન્યાયાધિકારમાં સ્થિત હોય, તેમાં તેની સ્ત્રી સ્ત્રીઓના ન્યાયાસન પર વિરાજમાન થાય. (૧૭)

ભૂરસિ ભૂમિરસ્યદિતિરસિ વિશ્વધાયા વિશ્વસ્ય ભુવનસ્ય ધર્ત્રી ।

પૃથિવીં યચ્છ પૃથિવીં દ્વહ પૃથિવીં મા હિંસીઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે રાણી ! જેથી તું ભૂઃ-ભૂમિની સમાન અસિ-છે. તેથી પૃથિવીમ્-ભૂમિને યચ્છ-નિરંતર ગ્રહણ કર. કારણ કે તું વિશ્વધાયાઃ-સર્વ ગૃહાશ્રમ અને રાજ્ય સંબંધી વ્યવહારો તથા વિશ્વસ્ય-સર્વ ભુવનસ્ય-રાજ્યને ધર્ત્રી-ધારણ કરનારી ભૂમિઃ-પૃથિવી સમાન અસિ-છે. તેથી પૃથિવીમ્-પૃથિવીની દ્વહ-વૃદ્ધિ કર અને જે કારણે તું અદિતિઃ-અખંડ ઐશ્વર્ય યુક્ત અને આકાશ સમાન ક્ષોભ રહિત અસિ-છે, તેથી પૃથિવીમ્-ભૂમિની મા+હિંસીઃ-હિંસા ન કર. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યકુળની સ્ત્રીઓ પૃથિવી આદિ સમાન ધૈર્ય આદિ ગુણોથી યુક્ત હોય, તો તે રાજ્ય કરવા યોગ્ય બની શકે છે. (૧૮)

વિશ્વસ્મૈ પ્રાણાયપાનાય વ્યાનાયોદાનાય પ્રતિષ્ઠાયૈ ચરિત્રાય । અગ્નિષ્ટ્વાભિપાતુ મહ્યા સ્વસ્ત્યા છર્દિષા શન્તમેન તયા દેવતયાઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે અગ્નિઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત તારો પતિ છે તેમ મહ્યા-મહાન સ્વસ્ત્યા-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયાથી, છર્દિષા-પ્રકાશયુક્ત કર્મથી, શન્તમેન-અત્યંત સુખદાયક કર્મ સહિત, વિશ્વસ્મૈ-સંપૂર્ણ પ્રાણાય-જીવન માટે અપાનાય-દુઃખોથી નિવૃત્તિ માટે વ્યાનાય-વિવિધ ઉત્તમ વ્યવહારની સિદ્ધિ માટે, ઉદાનાય-શ્રેષ્ઠ બલ માટે, પ્રતિષ્ઠાયૈ-સત્કાર માટે અને ચરિત્રાય-ધર્મના આચરણ માટે જે ત્વા-તારી અભિપાતુ-સન્મુખ બનીને રક્ષા કરે, તે તું તયા-તે દેવતયા-દિવ્ય સ્વરૂપ પતિ સાથે અઙ્ગિસ્વત્-જેમ કારણ-કાર્યનો સંબંધ છે, તેમ ધ્રુવા-નિશ્ચલ-સ્થિર સીદ-પ્રતિષ્ઠાયુક્ત રહે. (૧૯)

ભાવાર્થ : પુરુષો પોત-પોતાની પત્નીઓનો સત્કાર, સુખ પ્રદાન અને અવ્યભિચારથી પ્રિયાચરણ અને પાલન આદિ નિરંતર કરે. સ્ત્રીઓ પણ તેમ જ કરે. પોતાની પત્ની સિવાય પુરુષ અને પોતાના પતિ સિવાય સ્ત્રી અન્યોનો સંગ ન કરે. આ રીતે પરસ્પર પ્રિય આચરણવાળા બનીને બન્ને નિત્ય વર્તાવ કરે. (૧૯)

કાણ્ડાત્કાણ્ડાત્પ્રોહન્તી પરુષઃપરુષસ્પરિ ।

एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शूतेन च ॥ २० ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું જેમ સહસ્રેણ-અસંખ્ય ચ-અને શૂતેન-અનેક પ્રકાર સહિત કાણ્ડાત્ કાણ્ડાત્-સર્વ અવયવો અને પસ્યઃ-ગાંઠો ગાંઠોથી પરિ-સર્વત્રથી પ્રોહન્તી-અત્યંત વિસ્તરતી દૂર્વે-ધરો-ધાસ થાય છે, તેમ એવ-જ નઃ-અમને પુત્ર-પૌત્ર અને ઐશ્વર્યથી પ્રતનુ-વિસ્તૃત કર. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે ધરો ઔષધિ રોગોના નાશ કરનારી, સુખવર્ધક, અતિ વિસ્તૃત અને ચિરસ્થાયી હોય છે, તેમ સતી, વિદુષી, સ્ત્રી પોતાના કુળની સેંકડો અને હજારો રીતે વૃદ્ધિ કરે, તેમ પુરુષ પણ પ્રયત્ન કરે. (૨૦)

या शूतेन प्रतनोषि सहस्रेण विरोहसि ।

तस्यास्ते देवीष्टके विधेम हविषा वयम् ॥ २१ ॥

પદાર્થ : હે ઇષ્ટકે-ઈંટ સમાન દેહ અંગો યુક્ત અને શુભ ગુણોથી સુશોભિત, દેવિ-પ્રકાશમાન સ્ત્રી ! જેમ ઈંટ સેંકડો સંખ્યાથી મકાનને વિસ્તૃત અને હજાર સંખ્યાથી મહાન બનાવી દે છે, તેમ યા-જે તું અમને શૂતેન-સેંકડો પુત્ર-પૌત્રાદિ સંપત્તિથી પ્રતનોષિ-કરીને સહસ્રેણ-હજાર પ્રકારના પદાર્થોથી વિરોહસિ-વિવિધ પ્રકારથી વૃદ્ધિ કરે છે તસ્યાઃ-તે તે-તારી હવિષા-આપવા યોગ્ય પદાર્થોથી વયમ્-અમે વિધેમ-સેવા કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ સેંકડો તથા હજારો ઈંટો ધરના આકારને ધારણ કરીને સર્વને સુખ આપે છે, તેમ જે સુશીલ સ્ત્રીઓ પુત્ર, પૌત્ર, સેવક આદિ દ્વારા સર્વને આનંદિત કરે, તેનો પુરુષ સદા સત્કાર કરે. કારણકે સુશીલ પુરુષો અને સ્ત્રીઓના સમાગમ વિના શુભ ગુણયુક્ત સંતાનો ઉત્પન્ન થઈ શકતા નથી. આવા ગુણયુક્ત સંતાનો વિના માતા-પિતાઓને સુખ ક્યાંથી મળી શકે છે ? (૨૧)

यास्तेऽग्ने सूर्ये रुचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः ।

ताभिर्નોऽ अद्य सर्वाभी रुचे जनाय नस्कृधि ॥ २२ ॥

પદાર્થો : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વિની વિદુષી અધ્યાપિકા સ્ત્રી ! યાઃ-જે તે-તારી રુચિ છે, તાભિઃ-તે સર્વાભિઃ-સર્વ રુચિઓથી યુક્ત નઃ-અમને જેમ સ્ત્રવઃ-દીપ્તિઓ સૂર્યે-સૂર્યમાં રશ્મિભિઃ-કિરણોથી દિવમ્-પ્રકાશને આતન્વન્તિ-સારી રીતે વિસ્તૃત કરે છે. તેમ તું પણ સારી રીતે વિસ્તૃત સુખ યુક્ત કર અને અદ્ય-આ જ સ્ત્રવે-રુચિ કરાવનારા જનાય-પ્રસિદ્ધ મનુષ્યો માટે નઃ-અમને પ્રીતિયુક્ત કૃધિ-કર. (૨૨)

ભાવાર્થ : જેમ બ્રહ્માંડમાં સૂર્યની જ્યોતિઓ સર્વ વસ્તુઓને પ્રકાશિત કરીને તેને પ્રદીપ્ત કરે છે, તેમ વિદુષી, સાધ્વી, પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ સર્વ ગૃહકાર્યોને પ્રકાશિત કરે છે. જ્યાં સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રીતિયુક્ત હોય, ત્યાં સર્વ રીતે કલ્યાણ જ થાય છે. (૨૨)

યા વૌ દેવાઃ સૂર્યે રુચો ગોષ્વશ્વેષુ યા રુચઃ ।

इन्द्राग्नी ताभिः सर्वाभी रुचं नो धत्त बृहस्पते ॥ २३ ॥

પદાર્થ : દેવાઃ-વિદ્વાનો ! તમે સર્વ યાઃ-જે વઃ-તમારી સૂર્યે-સૂર્યમાં સ્વઃ-રુચિ છે અને યાઃ-જે ગોષુ-ગાયો અને અશ્વેષુ-ઘોડાઓ આદિમાં સ્વઃ-રુચિ સમાન પ્રીતિ છે, તાભિઃ-તે સર્વાભિઃ-સર્વ રુચિઓથી નઃ-અમારામાં સ્વમ્-કામના ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને સૂર્ય સમાન તેજસ્વી અધ્યાપક અને ઉપદેશક જેમ ધારણ કરે કેમ ધત્ત-ધારણ કરો.

હે બૃહસ્પતે-પક્ષપાત રહિત પરીક્ષા કરનાર પૂર્ણ વિદ્યા યુક્ત આપ નઃ-અમારી પરીક્ષા કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યોને વિદ્વાનોના સંગમાં ઈશ્વરમાં અને તેની સૃષ્ટિમાં રુચિ ઉત્પન્ન થતી નથી અને પરીક્ષા થતી નથી, ત્યાં સુધી વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ થતી નથી. (૨૩)

विराड् ज्योतिरधारयत् स्वराड् ज्योतिरधारयत् । प्रजापतिष्ट्वा सादयतु पृष्ठे पृथिव्या ज्योतिष्मतीम् । विश्वस्मै प्राणायानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ । अग्निष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद ॥ २४ ॥

પદાર્થ : જે વિરાટ્-અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓમાં સ્ત્રી જ્યોતિઃ-વિદ્યાની ઉન્નતિ અધારયત્-ધારણ કરે અને કરાવે. જે સ્વરાટ્-સર્વ ધર્મયુક્ત વ્યવહારોમાં શુદ્ધાચારી પુરુષ જ્યોતિઃ-વિદ્યુત્ આદિના પ્રકાશને અધારયત્ ધારણ કરે અને કરાવે તે સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને સંપૂર્ણ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે.

હે સ્ત્રી ! જે અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિજ્ઞાન યુક્ત તે-તારા અધિપતિઃ-સ્વામી છે, તયા-તે દેવતયા-સુંદર દેવસ્વરૂપ પતિની સાથે તું અઙ્ગિરસ્વત્-સૂક્ષ્મ વાયુની સમાન ધ્રુવા-દૃઢતાથી [સ્થિર બનીને] સીદ-રહે.

હે પુરુષ ! જે અગ્નિના સમાન તેજધારિણી તારી રક્ષા કરનારી સ્ત્રી છે, તે દેવીની સાથે તું પ્રાણોની સમાન પ્રીતિપૂર્વક નિશ્ચયથી સ્થિર રહે.

હે સ્ત્રી ! પ્રજાપતિઃ-પ્રજાનો રક્ષક તારો પતિ પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના પૃષ્ઠે-ઉપર વિશ્વસ્મૈ સર્વ પ્રાણાય-સુખ પ્રાપ્તિ માટે અપાનાય-દુઃખ નિવૃત્તિના સાધન, વ્યાનાય-સર્વ સુંદર ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના પ્રચાર માટે પ્રાણવિદ્યા માટે જે જ્યોતિષ્મતીમ્-પ્રશંસિત વિદ્યાના જ્ઞાનથી યુક્ત ત્વા-તને સાદયતુ-ઉત્તમ પદ પર સ્થાપિત કરે, તે તું વિશ્વમ્-સમસ્ત જ્યોતિઃ-વિજ્ઞાનને યચ્છ-ગ્રહણ કર અને તે વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે પોતાના પતિને સ્થિર કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષ સત્સંગ અને વિદ્યાભ્યાસ દ્વારા વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખી બને છે.

પતિ સ્ત્રીનો સત્કાર કરે અને સ્ત્રી પતિનો સત્કાર કરે, એ રીતે પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક સુખનો ઉપભોગ કરે. (૨૪)

મધુશ્ચ માધવશ્ચ વાસન્તિકાવૃત્તૂઽઅગ્નેરન્તઃશ્લેષોઽસિ કલ્પૈતાં દ્યાવાપૃથિવી
કલ્પન્તામાપ્ઽઓષધયઃ કલ્પન્તામગ્નયઃ પૃથક્ મમ જ્યૈષ્ઠ્યાય સવ્રતાઃ । યેઽઅગ્નયઃ
સમનસોઽન્તરા દ્યાવાપૃથિવીઽદ્રુમે વાસન્તિકાવૃત્તૂઽઅભિકલ્પમાનાઽદ્વિન્દ્રમિવ
દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : જેમ મમ-મારા જ્યૈષ્ઠ્યાય-જેઠ મહિનામાં વ્યવહાર અથવા મારી શ્રેષ્ઠતા માટે જે અગ્નેઃ-
ઉષ્ણતાને નિમિત્ત અગ્નિથી ઉત્પન્ન થનાર છે, જેની અન્તઃશ્લેષઃ-અંદર અનેક પ્રકારના વાયુનો સંબંધ
અસિ-થાય છે, તે મધુઃ-મધુર સુગંધ યુક્ત ચૈત્ર ચ અને માધવઃ-મધુર આદિ ગુણના નિમિત્ત વૈશાખ
ચ-તેના પદાર્થ યુક્ત વાસન્તિકૌ વસન્ત મહિનામાં મળતા ઋતુ-સર્વને સુખ પ્રાપ્તિનાં સાધન ઋતુ સુખ
માટે કલ્પેતામ્-સમર્થ બને. જે ચૈત્ર અને વૈશાખ મહિનાઓના આશ્રયથી દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિ
આપઃ-જલ પણ ભોગમાં કલ્પન્તામ્-આનંદ દાયક બને. પૃથક્-ભિન્ન-ભિન્ન ઓષધયઃ-જવ અને
સોમલતા આદિ ઔષધિઓ અને અગ્નયઃ-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ પણ કલ્પન્તામ્-કાર્યસાધક બને.

હે સવ્રતાઃ-નિરંતર સત્યભાષણાદિ વ્રતોથી યુક્ત રહેનાર સમનસઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત દેવાઃ- વિદ્વાન્
યે-જે વાસન્તિકૌ ઋતુ વસન્ત ઋતુમાં પ્રાપ્ત થનાર ચૈત્ર અને વૈશાખ છે અને યે-તેની અન્તરા-મધ્યમાં
અગ્નયઃ અગ્નિ છે, તેને અભિકલ્પમાનાઃ-સન્મુખ બનીને કાર્યમાં યુક્ત કરતા આપ ઇન્દ્રમિવ-જેમ ઉત્તમ
ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થાય, તેમ અભિસંવિશન્તુ-સર્વત્રથી પ્રવેશ કરો-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ ડ્રુમે-એ દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિ તયા-તે દેવતયા-પરમપૂજ્ય પરમેશ્વર રૂપ દેવતાના
સામર્થ સાથે ઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણની સમાન ધ્રુવે-દેહતાથી વર્તે છે, તેમ તમે સ્ત્રી-પુરુષ બન્ને સંયુક્ત સીદતમ્-
સ્થિર રહો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વસન્તઋતુમાં કફ ઉત્પન્ન થાય છે, જેમાં પ્રકાશ તીવ્ર, પૃથિવી રૂક્ષ, જલ
મધ્ય સ્થિતિમાં અને ઔષધિઓ નવા ફૂલ, ફળ અને પત્રોથી યુક્ત અગ્નિની જ્વાળાઓ સમાન છે,
તેનું યુક્તિથી સેવન કરીને તમે પુરુષાર્થથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરો.

જેમ વિદ્વાન્ પરમ પ્રયત્નથી ઋતુ અનુસાર સુખ માટે ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન
કરો. (૨૫)

અષાઢાસિ સહમાના સહસ્વારાતીઃ સહસ્વ પૃતનાયતઃ ।

સહસ્ત્રવીર્યાસિ સા માં જિન્વ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે પત્ની ! જે તું અષાઢા-શત્રુઓ દ્વારા અસહ્ય અસિ-છે, તું સહમાના-પતિ આદિ સંબંધીઓને
સહન કરતી, મારા ઉપદેશ-વચનને સહસ્વ-સહન કર.

જે તું સહસ્રવીર્યા-અસંખ્ય પ્રકારના પરાક્રમોથી યુક્ત અસિ-છે, સા-તે તું પૂતનાયત:-પોતાની સેનાની ઈચ્છુક અરાતી:-શત્રુઓનું સહસ્વ-મર્ષણ કર.

જેમ હું તને પ્રસન્ન રાખું છું, તેમ મા-મને-પતિને જિન્વ-તૃપ્ત-પ્રસન્ન કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરીને બળવાન, જિતેન્દ્રિય, વસંત આદિ ઋતુઓના કર્મોમાં વિલક્ષણ, પતિના અપરાધને ક્ષમા કરનારી, શત્રુઓનું નિવારણ કરનારી અને શ્રેષ્ઠ પરાક્રમવાળી સ્ત્રી પોતાના પતિને સદા પ્રસન્ન રાખે છે, તેમ તેને તેનો પતિ પણ સદા આનંદમય રાખે. (૨૬)

મધુ વાતાઽરુહ્તાયતે મધુ ક્ષરન્તિ સિન્ધવઃ । માધ્વીર્નઃ સન્વોષધીઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વસંત ઋતુમાં ન:-અમારા માટે વાતા:-વાયુ મધુ-મધુરતા પૂર્વક રુહ્તાયતે-જલની સમાન ચાલે છે, સિન્ધવ:-નદીઓ વા સમુદ્ર મધુ-કોમળતા પૂર્વક ચરન્તિ-વર્ષે છે. અને ઓષધી:-ઔષધિઓ માધ્વી:-મધુર રસના ગુણોથી યુક્ત સન્તુ-બને, તેવાં અમે પ્રયત્નો કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે વસંત ઋતુનું આગમન થાય છે, ત્યારે પુષ્પ આદિની સુગંધથી યુક્ત વાયુ આદિ પદાર્થો બને છે, તે ઋતુમાં ભ્રમણ કરવું પથ્ય બને છે, તેમ જાણો. (૨૭)

મધુ નક્તમુતોષસો મધુમત્પાર્થિવઃ રજઃ । મધુ દ્યૌરસ્તુ નઃ પિતા ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વસંત ઋતુમાં નક્તમ્-રાત્રિ મધુ-કોમળતાથી-મધુરતાથી યુક્ત, ઝત-અને ઉષસ:-પ્રાતઃકાલથી લઈને દિવસ મધુર પાર્થિવમ્-પૃથ્વિના રજઃ-દ્વપણુક કે ત્રસરેણુ વગેરે મધુમત્-મધુર ગુણોથી યુક્ત અને દ્યૌઃ-પ્રકાશ પણ મધુ-મધુરતાયુક્ત પિતા-રક્ષા કરનાર સમાન સમય ન:-અમારા માટે અસ્તુ-બને, તેમ તમે પણ વસંત ઋતુનું યુક્તિથી સેવન કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે વસંત ઋતુનું આગમન થતાં પક્ષી પણ મધુર શબ્દોનું ગાન કરે છે. અને પ્રાણીઓ આનંદિત બને છે. (૨૮)

મધુમાન્નો વનસ્પતિર્મધુમાંરઽસ્તુ સૂર્યઃ । માધ્વીર્ગાવો ભવન્તુ નઃ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વસંત ઋતુમાં ન:-અમારા માટે વનસ્પતિ:-પીપળ આદિ વનસ્પતિ મધુમાન્-પ્રશંસિત કોમળ-મધુરતા ગુણયુક્ત અને સૂર્યઃ-સૂર્ય પણ મધુમાન્-પ્રશંસિત મધુ-તેજ યુક્ત અસ્તુ-બને. અને ન:-અમારા માટે ગાવઃ-ગાયોની સમાન માધ્વી:-કોમળ ગુણયુક્ત કિરણો ભવન્તુ-બને, તેવો ઉપદેશ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વસંત ઋતુને પ્રાપ્ત કરીને જે પ્રકારનાં દ્રવ્યોના હોમથી વનસ્પતિ આદિ પદાર્થો મધુર આદિ ગુણયુક્તબને, તેવો યજ્ઞ કરો. આ રીતે તમે સર્વે વસંત ઋતુના સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

અપાં ગમ્ભન્ત્સીદ્ મા ત્વા સૂર્યોઽભિતાપ્સીન્માગ્નિર્વૈશ્વાનરઃ ।

અચ્છિન્નપત્રાઃ પ્રજાઽઅનુવીક્ષસ્વાનુ ત્વા દિવ્યા વૃષ્ટિઃ સચતામ્ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું વસંત ઋતુમાં અપામ્-જલનો ગમ્ભન્-આધાર મેઘમાં સીદ-સ્થિર રહે, જેથી

સૂર્યઃ-સૂર્ય ત્વા-તને મા-ન અભિતાપ્સીત્-સંતપ્ત કરે, વૈશ્વાનરઃ સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન અગ્નિઃ-અગ્નિ-વિદ્યુત્ ત્વા-તને મા-ન અભિતાપ્સીત્-સંતપ્ત કરે, અચ્છિન્નપત્રાઃ-સુંદર પૂર્ણ અવયવો યુક્ત પ્રજાઃ-પ્રજા અનુ ત્વા-તને અનુકૂળ બને. અને દિવ્યા-શુદ્ધ ગુણોથી યુક્ત વૃષ્ટિઃ-વર્ષા સચતામ્-પ્રાપ્ત થાય, તેમ અનુવીક્ષસ્વ-અનુકૂળતાથી વિશેષરૂપથી વિચાર કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય વસંત અને ગ્રીષ્મ ઋતુઓમાં જલાશયના મધ્યમાં સ્થિત શીતળ સ્થાનનું સેવન કરે, જેથી તે ગરમીથી સંતપ્ત ન બને.

જે યજ્ઞથી પુષ્કળ વરસાદ થાય અને પ્રજા આનંદિત બને, તેનું તમે અનુષ્ઠાન કરો. (૩૦)

ત્રીન્ત્સમુદ્રાન્ત્સમસૃપત્ સ્વર્ગાનપાં પતિર્વૃષભઽઙ્ઙકાનામ્ ।

પુરીષ્ઠં વસાનઃ સુકૃતસ્ય લોકે તત્ર ગચ્છ યત્ર પૂર્વે પરૈતાઃ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અપામ્-પ્રાણોના પતિઃ-રક્ષક, વૃષભઃ-વર્ષાના હેતુ [વાદળા] પુરીષમ્-પૂર્ણ સુખકારી જલને વસાનઃ-ધારણ કરતાં સૂર્ય ઙ્ઙકાનામ્-કામનાઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર અભીષ્ટ પદાર્થોમાંથી ત્રીન્-ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં રહેનાર ત્રણ પ્રકારના સમુદ્રાન્-સર્વ પદાર્થોના સ્થાન ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન સ્વર્ગાન્-સુખ પ્રાપ્તિ કરાવનાર લોકોને સમસૃપત્-પ્રાપ્ત થાય છે. તેમ આપ પણ પ્રાપ્ત કરો.

યત્ર-જે ધર્મયુક્ત વસંતના માર્ગમાં સુકૃતસ્ય-ધર્મ કરનારા પુરુષોના લોકે-માર્ગે પૂર્વે-પ્રાચીન લોકોએ પરૈતાઃ-સુખ પ્રાપ્ત કરેલ છે, તત્ર-તે વસંતના સેવન રૂપ માર્ગમાં આપ પણ ગચ્છ-ચાલો. (૩૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિક જનોના માર્ગમાં ચાલીને શારીરિક, વાચિક અને માનસિક એ ત્રણ પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. જ્યાં કામનાઓ પૂર્ણ થઈ શકે, ત્યાં પ્રયત્નો કરવા જોઈએ.

જેમ વસંત આદિ ઋતુઓ ક્રમથી વિદ્યમાન રહીને પોત-પોતાના ચિહ્નોને પ્રકટ કરે છે. તેમ ઋતુ અનુસાર વ્યવહારો કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૩૧)

મહી દ્યૌઃ પૃથિવી ચ નઽઙ્ઙમં યજ્ઞં મિમિક્ષતામ્ । પિપૃતાં નો ભરીમભિઃ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે માતા અને પિતા ! જેમ મહી-મહાન્ દ્યૌઃ-સૂર્યલોક, ચ-અને પૃથિવી-સર્વ સંસારનું સિંચન અને પાલન કરે છે, તેમ તમે બન્ને નઃ-અમારા ઙ્ઙમ્-એ યજ્ઞમ્-સેવવા યોગ્ય વિદ્યા-ગ્રહણરૂપ વ્યવહારને મિમિક્ષતામ્-સિંચન અર્થાત્ પૂર્ણ કરવાની ઈચ્છા કરો, અને ભરીમભિઃ-ધારણ, પોષણ આદિ કર્મોથી નઃ-અમારું પિપૃતામ્-પાલન કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ભૂમિ સર્વનું ધારણ, પ્રકાશ અને પાલન કરે છે, તેમ માતા-પિતાએ પોતાના સંતાનોને અન્ન, વિદ્યાદાન અને સુશિક્ષા આપીને તેને પૂર્ણ વિદ્વાન્ અને પુરુષાર્થી બનાવવા જોઈએ. (૩૨)

વિષ્ણોઃકર્માણિ પશ્યત્ યતો વ્રતાનિ પસ્પ્શો । ઇન્દ્રસ્ય યુજ્યઃ સખા ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક જીવ-યોગીને યુજ્યઃ-ઉપાસના કરવા યોગ્ય સખા-મિત્રની સમાન વિદ્યમાન છે, યતઃ-જેના પ્રતાપથી એ જીવ વિષ્ણોઃ-વ્યાપક ઈશ્વરના કર્માણિ-જગતની રચના, પાલન અને પ્રલય તથા ન્યાય આદિ કર્મો અને વ્રતાનિ-સત્યભાષણાદિ નિયમોને પસ્પ્શો-સ્પર્શ કરે છે, તેથી એ પરમાત્માના એ કર્મો અને વ્રતોને તમે પણ પશ્યત-ધારણ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરના મિત્ર, ઉપાસક, ધાર્મિક, વિદ્વાન્ પોતાના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ અનુસાર સૃષ્ટિકર્મો અનુસાર આચરણ કરે અને જાણે. તેમજ અન્ય મનુષ્યો પણ કરે અને જાણે. (૩૩)

ધ્રુવાસિં ધ્રુવેતો જજ્ઞે પ્રથમમેભ્યો યોનિભ્યોઽઅધિ જાતવેદાઃ ।

સ ગાયત્ર્યા ત્રિષ્ટુભાનુષ્ટુભાં ચ દેવેભ્યોં હૃવ્યં વંહતુ પ્રજાનન્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ તું ધરુવા-શુભ ગુણોને ધારણ કરનારી, ધ્રુવા-અને સ્થિર અસિ-છે, જેમ એ યોનિભ્યઃ-કારણોથી સઃ-તે જાતવેદાઃ-પ્રસિદ્ધ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન વાયુ પ્રથમમ્-આદિ કાર્યરૂપમાં અધિજજ્ઞે-અધિકતાથી પ્રકટ થાય છે, તેમ ઇતઃ-એ કર્મના અનુષ્ઠાનથી સર્વોપરિ પ્રસિદ્ધ બનો.

જેમ તારો પતિ ગાયત્ર્યા-ગાયત્રી ત્રિષ્ટુભા-ત્રિષ્ટુપ્ ચ-અને અનુષ્ટુભા-અનુષ્ટુપ્ મંત્રથી પ્રતિપાદિત વિદ્યા દ્વારા પ્રજાનન્-બુદ્ધિમાન બનીને દેવેભ્યઃ-ઉત્તમ ગુણો વા વિદ્વાનોથી હૃવ્યમ્-આપવા યોગ્ય વિજ્ઞાનને વંહતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ એ વિદ્યાથી બુદ્ધિમતી બનીને આપ સ્ત્રીઓથી બ્રહ્મચારિણી કન્યા વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે જગદીશ્વર, સૃષ્ટિકર્મ અને નિમિત્ત-કારણને જાણીને, વિદ્વાન્ બનીને, જેમ પુરુષોને શાસ્ત્રો ઉપદેશ આપે છે, તેમજ સ્ત્રીઓએ પણ તેને જાણીને, સ્ત્રીઓને વેદાર્થના નિષ્કર્ષસારનો ઉપદેશ કરે. (૩૪)

ઙ્ઘે રાયે રમસ્વ સહસે દ્યુમ્નઽઋર્જેઽપત્યાય ।

સમ્રાડસિ સ્વરાડસિ સારસ્વતૌ ત્વોત્સૌ પ્રાવતામ્ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે પુરુષ ! જે તું સમ્રાટ્-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી સ્વયં પ્રકાશમાન અસિ-છે.

હે સ્ત્રી ! જે તું સ્વરાટ્-સ્વયં વિજ્ઞાન અને સત્ય આચરણથી શોભાયમાન અસિ-છે.

તમે બન્ને-પુરુષ અને સ્ત્રી-ઙ્ઘે-વિજ્ઞાન, રાયે-ધન, સહસે-બલ, દ્યુમ્ને-યશ અને અન્ન, ઋર્જે-પરાક્રમ અને અપત્યાય-સંતાનોની પ્રાપ્તિ માટે રમસ્વ-રમણ કરો-યત્ન કરો.

ઉત્સૌ-કૂવાના જલની સમાન કોમળ સ્વભાવ પ્રાપ્ત કરીને સારસ્વતૌ-વેદવાણીના ઉપદેશમાં કુશળ બનીને તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષો આ સ્વ શરીર અને અન્નાદિ પદાર્થોની પ્રાવતામ્-રક્ષા આદિ કરો, એવો ત્વા-તમને ઉપદેશ આપું છું. (૩૫)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક, વિદ્વાન્ બનીને તથા વસંત ઋતુમાં પુરુષાર્થથી લક્ષ્મીવાન અને સદ્ગુણી બનીને, એક-બીજાની રક્ષા કરતાં ધર્મથી સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને, આ સંસારમાં નિત્ય આનંદ-વિહાર કરે. (૩૫)

અગ્નેં યુક્વા હિ યે તવાશ્વાસો દેવ સાધવઃ । અરં વહન્તિ મન્યવૈ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાથી યુક્ત અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! યે-જે તવ-આપના સાધવઃ-અભિષ્ટ સાધન યુક્ત અશ્વાસઃ-શિક્ષિત ઘોડા મન્યવે-શત્રુઓ પર ક્રોધ કરવા માટે અર્મ્-સામર્થ્યથી વહન્તિ-રથ આદિમાં વહન કરે છે, તેને હિ-નિશ્ચય કરીને યુક્ત-રથાદિથી યુક્ત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : રાજાઓએ વસંત ઋતુમાં પ્રથમ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને તથા સારથીઓને રથો પર નિયુક્ત કરીને શત્રુઓ પર વિજય કરવા જવું જોઈએ. (૩૬)

યુક્વા હિ દેવહૂતમાર્સઅશ્વાર્સઅગ્ને રથીરિવ । નિ હોતા પૂર્વ્યઃ સંદઃ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! પૂર્વ્યઃ-પૂર્વ વિદ્વાનોથી સુશિક્ષિત હોતા-દાનશીલ આપ દેવહૂતમાન્-વિદ્વાનો દ્વારા સ્પર્ધા વા શિક્ષા પામેલ અશ્વાન્ ઘોડાઓને રથીરિવ-જેમ શત્રુઓની સાથે અનેક રથ આદિ સેનાના અંગોવાળા યોદ્ધા યુદ્ધ કરે છે, તેમ યુદ્ધ કરવા માટે યુક્ત-યુક્ત કરો હિ-નિશ્ચય કરીને ન્યાયાસન પર નિષદઃ-નિરંતર સ્થિત રહો. (૩૭)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષ મહારથી સમાન ઘોડા આદિ સેનાના અંગોને કાર્યોમાં સંયુક્ત કરે. સભાપતિ આદિ જનો ન્યાયના આસન પર બેસીને ધર્માનુસાર ન્યાય કરે. (૩૭)

સમ્યક્ સ્ત્રવન્તિ સરિતો ન ધેનાઽઅન્તર્હૃદા મનસા પૂયમાનાઃ ।

ઘૃતસ્ય ધારાઽઅભિ ચાકશીમિ હિરણ્યયો વેતસો મધ્યૈઽઅગ્નેઃ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નેઃ વિદ્યુતના મધ્યે-મધ્યમાં વિદ્યમાન હિરણ્યયઃ-તેજોભાગ સમાન તેજસ્વી કીર્તિની ઈચ્છા રાખનાર હું જે ઘૃતસ્ય-જલની વેતસઃ-વેગવન્ત ધારાઃ-પ્રવાહરૂપ સરિતઃ-નદીઓની ન-સમાન અન્તઃ-અંદર હૃદા-અન્તઃકરણના મનસા-વિજ્ઞાનવાન ચિત્તથી પૂયમાનાઃ-પવિત્ર બનેલી ધેનાઃ-વાણીઓ સમ્યક્-ઉત્તમ રીતિથી સ્ત્રવન્તિ-ચાલે છે, તેને અભિચાકશીમિ-સન્મુખ બનીને સર્વને માટે શીઘ્ર પ્રકાશિત કરું છું, તેમ તમે પણ વાણીઓને પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ સમગતિ અને વિષમગતિથી ચાલતી અને શુદ્ધ થતી જતી નદીઓ સમુદ્રમાં પહોંચીને સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધર્મથી પવિત્ર બનેલી નિશ્ચલ વાણીઓને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવી જોઈએ. (૩૮)

ઋચે ત્વા રુચે ત્વા ભાસે ત્વા જ્યોતિષે ત્વા ।

અભૂદિદં વિશ્વસ્ય ભુવનસ્ય વાજિનમ્ગનેવૈશ્વાનરસ્ય ચ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તને વિશ્વસ્ય-સમસ્ત ભુવનસ્ય-સંસારના સર્વ પદાર્થો ચ-અને વૈશ્વાનરસ્ય-સર્વ મનુષ્યોમાં શોભાયમાન અગ્નેઃ-વિદ્યુત્ રૂપ વાજિનમ્-જ્ઞાની લોકોના અવયવ રૂપ ઇદમ્-એ વિજ્ઞાન અભૂત્-પ્રસિદ્ધ થયેલ છે, તે ઋદ્ધે-સ્તુતિ માટે ત્વા-તને સ્ત્વે-પ્રીતિ માટે ત્વા-તને ભાસે-વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે અને જ્યોતિષે-ન્યાયના પ્રકાશ માટે પણ ત્વા-અમે લોકો તારો આશ્રય કરીએ છીએ. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યને સંસારના સમસ્ત પદાર્થોનું યથાર્થ જ્ઞાન હોય, તેની સેવા કરીને સર્વ મનુષ્યોએ પદાર્થવિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૯)

અગ્નિર્જ્યોતિષા જ્યોતિષ્માન્ રુક્મો વર્ચસા વર્ચસ્વાન્ ।

સહસ્રદાઽસિ સહસ્રાય ત્વા ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ જ્યોતિષા-વિદ્યાના પ્રકાશથી અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન જ્યોતિષ્માન્-પ્રશંસિત પ્રકાશથી યુક્ત વર્ચસા-પોતાના તેજથી વર્ચસ્વાન્-જ્ઞાનદાતા અને રુક્મઃ-સુવર્ણ સુખ આપે છે, તેમ સહસ્રદા-અસંખ્ય સુખપ્રદાતા અસિ-છો. તે ત્વા-આપના સહસ્રાય-અતુલ વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે અમે સત્કાર કરીએ. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ તથા સૂર્યની વિદ્યાથી પ્રકાશયુક્ત વિદ્વાન્ હોય, તેનાથી વિદ્યા ભણીને સર્વ વિદ્યાઓ ગ્રહણ કરવી જોઈએ. (૪૦)

આદિત્યં ગર્ભં પયસા સમઙ્ઘિ સહસ્રસ્ય પ્રતિમાં વિશ્વરૂપમ્ ।

પરિવૃઙ્ઘિ હરસા માભિ મંઙ્ઘસ્થાઃ શતાયુષં કૃણુહિ ચીયમાનઃ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ વિદ્યુત્ પયસા-જલથી સહસ્રસ્ય-અસંખ્ય પદાર્થોનું પ્રતિમામ્-પરિમાણ [માપ]કરનાર સૂર્ય સમાન નિશ્ચય કરનારી બુદ્ધિને; તથા વિશ્વસ્ત્રમ્-સર્વ રૂપવાન પદાર્થોના દર્શક, ગર્ભમ્-સ્તુતિને યોગ્ય, આદિત્યમ્-સૂર્યને ધારણ કરે છે, તેમ અન્તઃકરણને સમઙ્ઘિ-સારી રીતે શુદ્ધ કરો. હરસા-પ્રજ્વલિત અગ્નિથી રોગોને પરિ-સર્વત્રથી વૃઙ્ઘિ-દૂર કરો, ચીયમાનઃ-વૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થઈને શતાયુષમ્-સો વર્ષના આયુયુક્ત પુત્રને કૃણુહિ-પ્રાપ્ત કરો. અને કદી પણ માઙ્ઘિમંસ્થાઃ-અભિમાન ન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોના હોમથી સૂર્યનો પ્રકાશ, જલ અને વાયુને શુદ્ધ કરીને, નીરોગ બનીને, સો વર્ષની આયુવાળા સંતાનોનું નિર્માણ કરો.

જેમ વિદ્યુત્ દ્વારા બનેલ સૂર્યથી રૂપવાન પદાર્થોનું દર્શન અને માપ થાય છે, તેમ વિદ્યાવાન સંતાન થાય છે. એથી કદી પણ અભિમાની બનીને પ્રમાદથી વિદ્યા અને આયુનો વિનાશ કરો નહિ. (૪૧)

વાતસ્ય જૂતિં વરુણસ્ય નાભિમશ્વં જઙ્ઞાનઃ સરિરસ્ય મધ્યે ।

શિશું નદીનાંશ્ચ હરિમદ્રિબુધનમગ્ને મા હિંસીઃ પરમે વ્યોમન્ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ પરમે-ઉત્તમ વ્યોમન્-વ્યાપક આકાશમાં, વાતસ્ય-વાયુના મધ્યે-મધ્યમાં, જૂતિમ્-વેગરૂપ અશ્વમ્-ઘોડાને સરિસ્ય-જલમય વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ સમુદ્રના નાભિમ્-બંધનને, તથા નદીનામ્-નદીઓના પ્રભાવથી જ્ઞાનમ્-પ્રકટ કરનાર, શિશુમ્-બાળક સમાન વર્તાવ યુક્ત હરિમ્-નીલવર્ણ યુક્ત અદ્રિબુધનમ્-સૂક્ષ્મ મેઘને માહિંસીઃ-નષ્ટ ન કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રમાદથી આકાશમાં વિદ્યમાન વાયુના વેગને, વર્ષાની અવસ્થાને તથા મેઘનો -વાદળાંનો નાશ ન કરીને જીવનની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

અજસ્રમિન્દુમરુષં ભુરણ્યુમગ્નિમીંડે પૂર્વચિત્તિં નમોભિઃ ।

સ પર્વાભિર્ઋતુશઃ કલ્પમાનો ગાં મા હિંસીરદિતિં વિરાજમ્ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ હું પૂર્વભિઃ-પૂર્ણ સાધનયુક્ત નમોભિઃ-અન્નો સહિત વિદ્યમાન ઇન્દુમ્-જલરૂપને અસ્રમ્-ઘોડાની સમાન, ભુરણ્યુમ્-પોષણ કરનારી, પૂર્વચિતિમ્-પ્રથમ નિર્મિત, અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને અજસ્રમ્-નિરંતર ઈંડે-અધિકતાથી શોધું છું.

તેને ઋતુશઃ-સર્વ ઋતુઓમાં કલ્પમાનઃ-સમર્થ કરતાં અદિતિમ્-અખંડિત વિરાજમ્-વિવિધ પદાર્થોથી સુશોભિત ગામ્-પૃથિવીને નષ્ટ કરતો નથી, તેમ સઃ-આપ એ અગ્નિ અને પૃથિવીને મા હિંસીઃ-નષ્ટ કરો નહિ. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઋતુઓ અનુકૂળ કરેલી ક્રિયાઓથી અગ્નિ, જલ અને અન્નનું સેવન કરીને, રાજ અને ભૂમિની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ જેથી સર્વ સુખ ઉત્પન્ન થાય છે. (૪૩)

વરૂત્રીં ત્વષ્ટુર્વરુણસ્ય નાભિમવિં જ્ઞાનાંશ્ચરજસઃ પરસ્માત્ ।

મહીંશ્ચ સાહસ્ત્રીમસુરસ્ય માયામગ્ને મા હિંસીઃ પરમે વ્યોમન્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ ત્વષ્ટુઃ-છેદનકર્તા સૂર્યને વસ્ત્રીમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય, વસ્ત્રાસ્ય-જલને નાભિમ્-રોકનારી, પરસ્માત્-શ્રેષ્ઠ રજસઃ-લોકથી જ્ઞાનામ્-ઉત્પન્ન થયેલ, અસુરસ્ય-મેઘની માયામ્-શાપક વિદ્યુત્ને તથા સાહસ્ત્રીમ્-અસંખ્ય ભૂગોળ યુક્ત ફલ પ્રદાન કરનારી, અવિમ્-રક્ષા આદિના નિમિત્ત, પરમે-સર્વથી ઉત્તમ વ્યોમન્-આકાશ સમાન વ્યાપ્ત જગદીશ્વરમાં વિદ્યમાન મહીમ્-વિશાળ ભૂમિને મા હિંસીઃ-નષ્ટ ન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે આ પૃથિવી શ્રેષ્ઠ સૂક્ષ્મ કારણથી ઉત્પન્ન, સૂર્યના આકર્ષણથી સંબંધ, જલની આધારભૂતા, મેઘની નિમિત્ત, વિશાળ ભૂગોળના આકાર યુક્ત, અગણિત સુખોને પ્રદાન કરનારી પરમેશ્વરે રચેલી છે.

તેને ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી જાણીને, તેના સુખ માટે સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪૪)

योऽअग्निर्गनेरध्यजायत् शोकात्पृथिव्याऽउत् वा दिवस्परि।

येन प्रजा विश्वकर्मा जजान तमग्ने हेडः परि ते वृणक्तु ॥ ४५ ॥

હે અને-વિદ્વાન્ ! ય:-જે પૃથિવ્યા:-પૃથિવીને શોકાત્-સૂકવનાર-શોષક અગ્નિ ઉત-વા-અથવા દિવ:-સૂર્યથી અને:-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિથી અગ્નિ:-પ્રત્યક્ષ અગ્નિ અધ્યજાયત-ઉત્પન્ન થાય છે.

येन-જેથી વિશ્વકર્મા-સર્વકર્મોના આધાર ઈશ્વર પ્રજા:-પ્રજાને પરિ-સર્વત્રથી જજાન-ઉત્પન્ન કરે છે, તમ્-તે અગ્નિને તે-તારો હેડ:-ક્રોધ પરિ-વૃણક્તુ-સર્વત્રથી છિન્ન-નષ્ટ કરે.

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે અગ્નિ પૃથિવીને ભેદીને-ફાડીને ઉત્પન્ન થાય છે અને જે સૂર્ય આદિથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે વિદ્નકારી અગ્નિથી તમે સર્વ પ્રાણીઓને પૃથક્ રાખો.

જે અગ્નિ દ્વારા ઈશ્વર સર્વની રક્ષા કરે છે, તે અગ્નિ-વિદ્યાને તમે જાણો. (૪૫)

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः।

आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षः सूर्योऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ ४६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે જગદીશ્વર દેવાનામ્-પૃથિવી આદિ દિવ્ય પદાર્થોની મધ્યમાં ચિત્રમ્-આશ્ચર્યરૂપ અનીકમ્-સેનાની સમાન કિરણ સમૂહ સમાન છે, જે મિત્રસ્ય-પ્રાણ, વરુણસ્ય-ઉદાન અને અગ્ને:-પ્રસિદ્ધ અગ્નિના ચક્ષુ:-દર્શક સૂર્ય:-સૂર્યની સમાન ઉદગાત્-ઉદિત છે, જે જગત:-ચેતન ચ-અને તસ્થુષ:-જડ જગતના આત્મા-અન્તર્યામી બનીને દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને અપ્રકાશરૂપ જગતને તથા અન્તરિક્ષમ્-આકાશને આ-સારી રીતે અપ્રા:-વ્યાપ્ત કરી રહેલ છે, તે જગતના નિર્માતા, પાલન કરનાર કે રક્ષક, અને સંહાર-પ્રલય કરનાર વ્યાપક બ્રહ્મની નિરંતર ઉપાસના કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : નિશ્ચય જ આ સંસાર કર્તારહિત તથા અધિષ્ઠાતારહિત [અર્થાત્] ઈશ્વરરહિત નથી. જે બ્રહ્મ સર્વાન્તર્યામી, સર્વ જીવોના પાપ-પુણ્યોના ફળોને આપવાની વ્યવસ્થા કરનાર તથા અનન્ત જ્ઞાન તથા પ્રકાશવાળા છે, મનુષ્યે-તે બ્રહ્મની ઉપાસના કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ રૂપી ફલની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૪૬)

इमं मा हिंसीद्विपादं पशुः सहस्राक्षो मेधाय चीयमानः। मयुं पशुं मेधमग्ने जुषस्व तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। मयुं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥ ४७ ॥

પદાર્થ : હે અને-અગ્નિથી સમાન મનુષ્ય-જન્મને પ્રાપ્ત મેધાય-સુખની પ્રાપ્તિ માટે ચીયમાન:-વૃદ્ધિ પામેલા સહસ્રાક્ષ:-હજારો-અસંખ્ય પ્રકારની દષ્ટિ યુક્ત રાજન ! તું ઇમમ્-આ દ્વિપાદમ્-મનુષ્યાદિ

અને મેધમ્-પવિત્રકારક ફલપ્રદ મયુમ્-જંગલી પશુમ્-ગાય આદિ પશુ-જીવોની મા હિંસી:-હિંસા ન કર, તે પશુમ્-પશુઓની જુષસ્વ-સેવા કર. તેન-તે પશુઓથી ચિન્વાન:-વૃદ્ધિ પામતો તું તન્વ:-શરીરમાં નિષીદ-નિરંતર સ્થિર રહે. એ તે-તારા શુક્-શોક મયુમ્-શસ્ય-ખેતી આદિ નાશક જંગલી હિંસક પશુઓને ઋઙ્છતુ-થાય. તે તારા યમ્-જે શત્રુથી અમે દ્વિષ્મ:-દ્વેષ કરીએ તમ્-તેને શુક્-શોક ઋઙ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૪૭)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્યે ઉપકારી પશુઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ. પરન્તુ-તેનું પાલન કરવું જોઈએ અને તેનાથી ઉપહાર પ્રાપ્ત કરીને સર્વ મનુષ્યોએ આનંદિત રહેવું જોઈએ.

જે જંગલી હિંસક [પશુઓ]થી અન્ય પશુઓની, ખેતીની અને મનુષ્યોની હાનિ થાય, તેનો રાજપુરુષોએ નાશ કરવો જોઈએ અથવા તેને પકડી લેવા જોઈએ. (૪૭)

इमं मा हिंसीरेकशफं पशुं कनिक्रदं वाजिनं वाजिनेषु । गौरमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद । गौरं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥ ४८ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું વાજિનેષુ-સંગ્રામોના કામોમાં ઇમમ્-એ એકશફમ્-એક ખરીયુક્ત કનિક્રદમ્-અત્યંત વ્યથાને પ્રાપ્ત થનાર વાજિનમ્-વેગવાળા પશુમ્-દર્શનીય ઘોડા વગેરે પશુઓને મા હિંસી:-માર નહિ.

હું ઈશ્વર તે-તારા માટે યમ્-જે આરણ્યમ્-જંગલી ગૌરમ્-ગોરા વર્ણના પશુઓની દિશામિ-શિક્ષા-ઉપદેશ કરું છું, તેન-તેના રક્ષણથી ચિન્વાન:-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈ તન્વ:-શરીરમાં નિષીદ-નિરંતર સ્થિર રહે.

તે-તારાથી ગૌરમ્-શ્વેત્ વર્ણવાળા પશુ પ્રત્યે શુક્-શોક ઋઙ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય અને યમ્-જે શત્રુનો અમે દ્વિષ્મ:-દ્વેષ કરીએ તમ્-તેને તે-તારાથી શુક્-શોક ઋઙ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એક ખરીવાળા ઘોડા આદિ પશુઓ કદી મારવા ન જોઈએ. તેમજ ઉપકારી જંગલી પશુઓને પણ મારવા ન જોઈએ.

જેને મારવાથી સંસારની હાનિ અને રક્ષણથી ઉપકાર થાય છે, તેનું સદા પાલન કરવું જોઈએ અને હાનિકારક હિંસક પશુઓને મારવા જોઈએ. (૪૮)

इमंसाहृस्त्रं शतधारमुत्सं व्यच्यमानं सरिरस्य मध्ये । घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हिंसीः परमे व्योमन् । गव्यमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद । गव्यं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥ ४९ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-દયાને પ્રાપ્ત થયેલ પરોપકારક રાજન્ ! તું જનાય-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓ માટે ઇમમ્-

આ સાહસ્રમ્-અસંખ્ય સુખોનાં સાધન, શતધારમ્-અસંખ્ય દૂધની ધારાવાળા, વ્યચ્યમાનમ્-અનેક પ્રકારથી પાલનને યોગ્ય, ઉત્સમ્-કૂવા સમાન રક્ષક અને વીર્યના સિંચક ખૂંટ-બળદની અને ઘૃતમ્-ઘીને દુહાનામ્-પૂર્ણ કરતી અદિતિમ્-ન મારવા યોગ્ય ગાયને મા હિંસી:-માર નહિ.

તે-તારા રાજ્યમાં જે આરણ્યમ્-જંગલમાં રહેનારી ગવયમ્-ગાય સમાન નીલગાયથી ખેતીને હાનિ થાય છે તો તેને અનુદિશામિ-ઉપદેશ કરું છું. તેન-તેને મારવાથી સુરક્ષિત અન્નથી પરમે-ઉત્કૃષ્ટ વ્યોમન્-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્મા અને સરિસ્ય-વિસ્તૃત વ્યાપક આકાશની મધ્યે-મધ્યમાં ચિન્વાન:-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થયેલ તું તન્વ:-શરીરની મધ્યમાં નિષીદ-નિવાસ કર. તે-તારા શુક્-શોક તમ્-તે ગવયમ્-રોઝ-[નીલગાય]ને ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય અને યમ્-જે તે-તારા શત્રુનો દ્વિષ્મ:-અમે દ્વેષ કરીએ તેને પણ શુક્-શોક ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય. (૪૯)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે બળદ આદિઓથી કાર્ય થાય છે, જે ગાય આદિથી દૂધ આદિ પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે, અને જે પદાર્થોથી સર્વની રક્ષા થાય છે તેની કદી પણ હિંસા ન કરવા દેવી જોઈએ. જે તેની હિંસા કરે તેને રાજા આદિ ન્યાયાધીશ અતિ દંડ આપે. જે જંગલી નીલગાય-રોઝ આદિ પશુ પ્રજાની હાનિ કરે તેનો નાશ કરવો જોઈએ. (૪૯)

इममूर्णायुं वरुणस्य नाभिं त्वचं पशूनां द्विपदां चतुष्पदाम् । त्वष्टुः प्रजानां प्रथमं जनित्रमग्ने मा हिंसीः परमे व्योमन् । उष्ट्रमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद । उष्ट्रं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु ॥ ५० ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને વિદ્યાને પ્રાપ્ત રાજન્ ! તું વરુણસ્ય-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ સુખથી નાભિમ્-સંયોગ કરનાર ઇમમ્-એ દ્વિપદામ્-બે પગવાળા મનુષ્ય, પક્ષી આદિ ચતુષ્પદામ્-ચાર પગવાળા પશૂનામ્-ગાય આદિ પશુઓના ત્વચમ્-ચામડાથી ઢાંકનાર અને ત્વષ્ટુ: સુખકારક ઈશ્વરની પ્રજાનામ્-પ્રજાઓની પ્રથમમ્-આદિ જનિત્રમ્-ઉત્પત્તિના હેતુની, પરમે-ઉત્તમ, વ્યોમન્-આકાશમાં વિદ્યમાન ઊર્ણાયુમ્-ઘેટાં આદિની મા હિંસી:-હિંસા ન કર-માર નહિ.

તે-તારા માટે હું ઈશ્વર યમ્-જે આરણ્યમ્-જંગલી ઉષ્ટ્રમ્-ઊંટને અનુ+દિશામિ-બતાવું છું, તેન-તેથી સુરક્ષિત અન્નાદિથી ચિન્વાન:-પુષ્ટ બનીને તન્વ:-શરીરમાં નિષીદ નિવાસ કર.

તે-તારો શુક્-શોક તે જંગલી ઉષ્ટ્રમ્-ઊંટને ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય અને જે દ્વેષી જનથી અમે દ્વિષ્મ:-અપ્રીતિ અર્થાત્ દ્વેષ કરીએ તમ્-તેને તે-તારો શુક્-શોક ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય. (૫૦)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જે ઘેટાં આદિની ઊન અને ચામડું પણ મનુષ્યોના સુખ માટે સમર્થ બને છે અને જે ઊંટ ભાર વહન કરીને મનુષ્યોને સુખ આપે છે, તેને જે મારવા ઈચ્છે, તેને સંસારને પીડા આપનાર જાણવા જોઈએ, [જેથી] તેને સમ્યક્ દંડ આપવો જોઈએ. વળી, જે જંગલી ઊંટ હાનિકારક હોય તેને પણ દંડ દેવો જોઈએ. (૫૦)

અજો હ્યગ્નેરજનિષ્ટ શોકાત્સોઽઅપશ્યજ્જનિતારમગ્રે । તેન દેવા દેવતામગ્રમાયસ્તેન
રોહમાયન્નુપ મેધ્યાસઃ । શરભમારણ્યમનુ તે દિશામિ તેન ચિન્વાનસ્તન્વો નિષીદ્ ।
શરભં તે શુર્ગૃચ્છતુ યં દ્વિષ્મસ્તં તે શુર્ગૃચ્છતુ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું જે હિ-નિશ્ચિત અજઃ બકરાં અજનિષ્ટ-ઉત્પન્ન થાય છે સઃ-તે અગ્રે-પ્રથમ
જનિતારમ્-ઉત્પાદકને અપશ્યત્-જુએ છે, જેથી મેધ્યાસઃ-પવિત્ર થયેલ દેવાઃ-વિદ્વાન અગ્રમ્-ઉત્તમ સુખ
અને દેવતામ્-દિવ્યગુણોને સુખપૂર્વક ઉપ+આયન્-પ્રાપ્ત કરે છે. જેથી રોહમ્-વૃદ્ધિ યુક્ત પ્રસિદ્ધિને આયન્
પ્રાપ્ત થાય તેથી તેન-તેના દ્વારા ઉત્તમ ગુણો અને ઉત્તમ સુખ તથા તેન-તેનાથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કર.

જે આરણ્યમ્-જંગલી શરભમ્-તીડ તે તારી પ્રજાને હાનિ કરનાર છે, તેને અનુદિશામિ-બતાવું છું.
તેન-તેનાથી બચાવેલા પદાર્થોથી ચિન્વાનઃ-પુષ્ટ બનીને તન્વઃ-શરીરમાં નિષીદ-નિવાસ કર.

તમ્-તે શરભમ્-તીડને તે-તારો શુક્-શોક ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય.

તે-તારા યમ્-જે શત્રુથી અમે દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ છીએ તેને શોકાત્-શોકરૂપ અગ્નેઃ-અગ્નિથી શુક્-
શોક અર્થાત્ અત્યંત શોક ઋચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય (૫૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ બકરી વગેરે પશુઓને ન મારીને તેની સમ્યક્ રક્ષા કરીને તેઓને ઉપકાર
માટે યોજવા જોઈએ. જે ઉત્તમ પશુ, પક્ષીઓના હિંસક હોય તેને અત્યંત તાડન કરવા જોઈએ. પરન્તુ
સાહુડી હાનિકારક હોય, તો પ્રજાપાલનની દૃષ્ટિએ મારવી જોઈએ. (૫૧)

ત્વં યવિષ્ઠ દાશુષો નૂંઃ પાહિ શ્રુણુધી ગિરઃ । રક્ષા તોક્મુત ત્મના ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : યવિષ્ઠ-અત્યંત યુવક ! ત્વમ્-તું એ સંરક્ષિત પશુઓથી દાશુષઃ-સુખદાતા નૂન્-ધર્મરક્ષક
મનુષ્યોની પાહિ-રક્ષા કર. એ ગિરઃ-સત્ય વાણીને શ્રુણુધિ-સાંભળ અને ત્મના-પોતાના આત્માથી મનુષ્ય
ઉત્-અને પશુઓના તોક્મ્-બચ્યાઓની રક્ષ-રક્ષા કર. (૫૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય, મનુષ્ય આદિના રક્ષક વાણીઓની વૃદ્ધિ કરે છે અને કરુણામય ઉપદેશોને
સાંભળે અને સંભળાવે છે, તેઓ સંતાનસુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૨)

અપાં ત્વેમન્ત્સાદયામ્યપાં ત્વોઙ્મન્ત્સાદયામ્યપાન્ત્વા ભસ્મન્સાદયામ્યપાં ત્વા
જ્યોતિષિ સાદયામ્યપાં ત્વાયને સાદયામ્યર્ણવે ત્વા સદને સાદયામિ સમુદ્રે ત્વા
સદને સાદયામિ । સરિરે ત્વા સદને સાદયામ્યપાં ત્વા ક્ષયે સાદયામ્યપાં ત્વા
સર્ધિષિ સાદયામ્યપાં ત્વા સદને સાદયામ્યપાં ત્વા સ્ધસ્થૈ સાદયામ્યપાં ત્વા યોનૌ
સાદયામ્યપાં ત્વા પુરીષે સાદયામ્યપાં ત્વા પાર્થસિ સાદયામિ । ગાયત્રેણ ત્વા છન્દસા
સાદયામિ ત્રૈષ્ટુભેન ત્વા છન્દસા સાદયામિ જાગતેન ત્વા છન્દસા સાદયામ્યાનુષ્ટુભેન

ત્વા છન્દસા સાદયામિ પાઙ્ક્તેન ત્વા છન્દસા સાદયામિ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ હું શિક્ષક-અપામ્-પ્રાણોની રક્ષા માટે એમન્-ગતિશીલ વાયુમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું, અપામ્-જલોની ઓઢન્-આદ્ર ઔષધિઓમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું, અપામ્-પ્રાપ્ત થયેલ કાષ્ઠોની ભસ્મન્-રાખમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું અપામ્-વ્યાપક વીજળી વગેરે અગ્નિના જ્યોતિષિ-પ્રકાશમાં ત્વા-તને સાદયામિ-નિયુક્ત કરું છું અપામ્-અવકાશ યુક્ત અયને-સ્થાનમાં ત્વા-તને સાદયામિ-બેસાડું છું સદને-સ્થિતિને યોગ્ય અર્ણવે-પ્રાણ વિદ્યામાં ત્વા-તને સાદયામિ-સંયુક્ત કરું છું. સદને-ગમનશીલ સમુદ્રે-મનના વિષયમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સંબદ્ધ કરું છું,

સદને-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય સર્સિ-વાણીના વિષયમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સંયુક્ત કરું છું, અપામ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થોના સંબંધિત ક્ષયે-ઘરમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું, અપામ્-અનેક પ્રકારના વ્યાપ્ત શબ્દોના સંબંધી સધિષિ-તે પદાર્થોમાં કે જેથી જીવ અનેક શબ્દો સાંભળે છે અર્થાત્ કાનના વિષયમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થિત કરું છું;

અપામ્-જલોના સદને-અન્તરિક્ષરૂપ સ્થાનમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું, અપામ્-જલના સધસ્થે-સમાન સ્થાનમાં ત્વા-તને સાદયામિ-સ્થાપિત કરું છું, અપામ્-જલના યોનો-સમુદ્રમાં ત્વા-તને સાદયામિ-નિયુક્ત કરું છું, અપામ્-જલની પુરીષે-રેતીમાં ત્વા-તને સાદયામિ-નિયુક્ત કરું છું, અપામ્-જલના પાથસિ-અન્નમાં ત્વા-તને સાદયામિ-પ્રેરણા કરું છું;

ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છંદથી પ્રતિપાદિત છન્દસા-સ્વતંત્ર અર્થની સાથે ત્વા-તને સાદયામિ-સંયુક્ત કરું છું, ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રિષ્ટુભ મંત્રથી પ્રતિપાદિત છન્દસા-શુદ્ધ અર્થની સાથે ત્વા-તને સાદયામિ-સંયુક્ત કરું છું, જાગતેન-જગતી છંદમાં કહેલ છન્દસા-આનંદદાયક અર્થ સાથે ત્વા-તને સાદયામિ-નિયુક્ત કરું છું, આનુષ્ટુભેન-અનુષ્ટુપ્ મંત્રમાં કહેલ છન્દસા-શુદ્ધ અર્થ સાથે ત્વા-તને સાદયામિ-પ્રેરણા કરું છું અને પાઙ્ક્તેન-પંક્તિ મંત્રથી પ્રકાશિત થયેલ છન્દસા-સ્વચ્છ અર્થની સાથે ત્વા-તને સાદયામિ-પ્રેરિત કરું છું, તેમ તું વર્તાવ કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વ પુરુષો અને સ્ત્રીઓને વેદ ભણાવીને, જગતમાં સ્થિત વાયુ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાઓમાં નિપુણ બનાવીને તે પદાર્થોના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરવામાં તેઓને પ્રવૃત્ત કરવા જોઈએ. (૫૩)

અયં પુરો ભુવસ્તસ્ય પ્રાણો ભૌવાયનો વસન્તઃ પ્રાણાયનો ગાયત્રી વાસન્તી ગાયત્ર્યૈ ગાયત્રં ગાયત્રાદુપાંશુશુરુપાંશુશોસ્ત્રિવૃત્ ત્રિવૃતો રથન્તરં વસિષ્ઠઽત્રઘ્ષિઃ । પ્રજાર્પતિગૃહીતયા ત્વયા પ્રાણં ગૃહ્ણામિ પ્રજાભ્યઃ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! અયમ્-એ પુરો ભુવઃ-પ્રથમ ઉત્પન્ન અગ્નિ છે તસ્ય-તેના ભૌવાયનઃ-સિદ્ધ કારણથી રચાયેલા પ્રાણઃ-જીવનનો હેતુ પ્રાણ છે, પ્રાણાયનઃ પ્રાણો જેનાથી બનેલ છે તે વસન્તઃ-સુગંધિ આદિમાં વસાવનાર વસંતઋતુ છે, વાસન્તી-વસંત ઋતુનું જેમાં વ્યાખ્યાન છે તે ગાયત્રી-ગાનારના રક્ષક, ગાયત્રી મંત્ર માટે ઈશ્વર, ગાયત્ર્યૈ-ગાયત્રી મંત્રના ગાયત્રમ્-ગાયત્રી છંદ, ગાયત્રાત્-ગાયત્રીથી ઉપાંશુઃ-સમીપમાં

ગ્રહણ કરવામાં આવે, **उपांशोः**-તે જપથી **त्रिवृत्**-ત્રણ-જ્ઞાન, કર્મ ઉપાસનાથી યુક્ત પુરુષ **त्रिवृत्**-તે ત્રણ પ્રકારના કૂળથી **स्थन्तरम्**-રમણીય પદાર્થોથી તારનારા સુખ અને **वसिष्ठः**-અત્યંત નિવાસના હેતુ, **ऋषिः**-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન, **प्रजापति गृहीतया**-પોતાના સંતાનોના રક્ષક પતિને ગ્રહણ કરનારી **त्वया**-તારી સાથે **प्रजाभ्यः** સંતાનોત્પત્તિ માટે **प्राणम्**-બલયુક્ત જીવન ધારણ કરે છે, તેમ તારી સાથે હું સંતાન માટે બલને **गृह्णामि**-ગ્રહણ કરું છું. (૫૪)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો ઉપયોગ કરીને, પરસ્પર પ્રેમથી અત્યંત વિષય વાસનાનો ત્યાગ કરીને, સમસ્ત જગતમાં બળનો સંગ્રહ કરીને સંતાન ઉત્પન્ન કરવા જઈએ. (૫૪)

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य मनो वैश्वकर्माणं ग्रीष्मो मानसस्त्रिष्टुव् ગ્રૈષ્મી
त्रिष्टुभः स्वाम् । स्वारादन्तर्यामोऽन्तर्यामात्पञ्चदशः पञ्चदशाद् बृहद् भरद्वाज-
ऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ ५५ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ દક્ષિણા-દક્ષિણ દિશામાં અયમ્-એ વિશ્વકર્મા-સર્વ કર્મ-ચેષ્ટાઓનો હેતુ વાયુના સમાન વિદ્વાન ગતિ કરે છે, તસ્ય-તે વાયુના યોગથી **वैश्वकर्माणम्**-જેથી સર્વ કર્મો સિદ્ધ થાય છે, તે **मनः**-વિચાર સ્વરૂપ પ્રેરક મન, **मानसः**-મનની ઉષ્મા-ગરમીથી ઉત્પન્ન સમાન **ग्रीष्मः**-રસોની નાશક ગ્રીષ્મ ઋતુ, **ग्रीष्मी**-ગ્રીષ્મ ઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર **त्रिष्टुप्**-ત્રિષ્ટુપ્ છંદ, **त्रिष्टुभः**-ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી **स्वाम्**-તાપથી ઉત્પન્ન તેજ, **स्वारात्**-અને તેજથી **अन्तर्यामः**-મધ્યાહ્નના પ્રહરમાં વિશેષ દિવસ, અને **अन्तर्यामात्**-મધ્યાહ્નના વિશેષ દિવસથી **पञ्चदशः**-પંદર તિથિઓની પૂરક સ્તુતિ યોગ્ય પૂર્ણમાસી, **पञ्चदशात्**-તે પૂર્ણમાસીથી **बृहद्**-મહાન **भरद्वाजः**-અન્ન વા વિજ્ઞાનની પુષ્ટિ તથા ધારણ કરનાર નિમિત્ત, **ऋषिः**-શબ્દ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનાર કાન, **प्रजापतिगृहीतया**-પ્રજાપાલક પતિ રાજાએ ગ્રહણ કરેલી વિદ્યાથી ન્યાયનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું **त्वया**-તારી સાથે **प्रजाभ्यः**-પ્રજાઓ માટે **मनः**-વિચાર સ્વરૂપ વિજ્ઞાનયુક્ત ચિત્તના ગ્રહણ વિજ્ઞાનનું **गृह्णामि**-ગ્રહણ કરું છું. (૫૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ પ્રાણને વશ કરનાર મન છે અને મનને વશ કરનાર પ્રાણ છે, તેમ જાણીને પ્રાણાયામથી મનની શુદ્ધિ કરીને, સમસ્ત સૃષ્ટિના પદાર્થ વિજ્ઞાનનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૫૫)

अयं पश्चाद् विश्वव्यचास्तस्य चक्षुर्वैश्वव्यचसं वर्षाश्चाक्षुष्यो जगती वार्षी
जगत्याऽऋक्समम् । क्समाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशः सप्तदशाद्वैरूपं जमदग्निर्ऋषिः
प्रजापतिगृहीतया त्वया चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે સુંદર મુખવાળી સ્ત્રી ! અયમ્-આ સૂર્યની સમાન વિદ્વાન **विश्वव्यचाः**-સમસ્ત સંસારને સર્વત્રથી પ્રકાશથી વ્યાપક બનીને પ્રકટ કરનાર બનીને **पश्चात्**-પશ્ચિમ દિશામાં વિદ્યમાન સૂર્ય છે, તસ્ય-તે સૂર્યના **वैश्वव्यचसम्**-પ્રકાશક કિરણરૂપ **चक्षुः**-નેત્ર છે, **चाक्षुष्यः**-નેત્રથી જોવા યોગ્ય **वर्षाः**-જે સમયે વાદળાઓ વર્ષે છે તે વર્ષાઋતુ છે, **वार्षी**-વર્ષાઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર **जगती**-જગત્ પ્રસિદ્ધ જગતી છંદ

છે, જગત્યા:-જગતી ઇંદથી ઋક્ષસમમ્-ઋચાઓના સેવનનો હેતુ વિજ્ઞાન છે, ઋક્ષસમાત્-તે વિજ્ઞાનથી શુક્ર:-પરાક્રમ છે, શુક્રાત્-પરાક્રમથી સપ્તદશ:-સત્તર તત્ત્વોનું પૂરક વિજ્ઞાન છે, સપ્તદશાત્-તે વિજ્ઞાનથી વૈસ્વમ્-વિવિધ રૂપોનું કારણ જગતનું જ્ઞાન છે અને જેમ જમદગ્નિ:-પ્રકાશસ્વરૂપ ઋષિ:-રૂપને પ્રાપ્ત કરાવનાર નેત્ર છે, પ્રજાપતિગૃહીતયા-સંતાન રક્ષક પતિએ ગ્રહણ કરેલ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીની સાથે પ્રજાભ્ય:-પ્રજાઓ માટે ચક્ષુ:-વિદ્યારૂપી નેત્રનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું ત્વયા-તારી સાથે સંસારથી બલનું ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું. (૫૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સામવેદના અધ્યયન દ્વારા સૂર્ય આદિ રૂપમાં પ્રસિદ્ધ સંસારને વાસ્તવિક દૃષ્ટિથી જાણીને, સમસ્ત સૃષ્ટિથી ઉત્તમ દર્શન અને ચરિત્રનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૫૬)

**इदमुत्तरात् स्वस्तस्य श्रोत्रं सौवश् शरच्छ्रौत्र्यनुष्टुप् शारद्वनुष्टुभं ऽऐडमैडान्
मन्थीमन्थिनं ऽएकविंशं ऽएकविंशाद् वैराजं विश्वामित्रं ऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया
त्वया श्रोत्रं गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ ५७ ॥**

પદાર્થ : હે સૌભાગ્યવતી ! જેમ इदम्-આ उत्तरात्-સર્વથી ઉત્તર ભાગમાં स्व:-સુખોનું સાધન દિશારૂપ છે, तस्य-તેના सौवम्-સુખનાં સાધન श्रोत्रम्-કાન છે, श्रौत्री-કાનથી સંબંધ રાખનારી शरत्-શરદઋતુ शारदी-શરદ ઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર अनुष्टुप्-પ્રવદ્ધ અર્થ યુક્ત અનુષ્ટુપ ઇંદ છે, अनुष्टुभः-તેથી ऐडम्-વાણીના વ્યાખ્યાનથી યુક્ત મંત્ર છે, ऐडात्-તે મંત્રથી मन्थी-પદાર્થોનું મંથન કરનારી મંથી-સાધન છે, मन्थिनः-તે સાધનથી एकविंशः-એકવીસ વિદ્યાઓને પૂર્ણ કરનાર સિદ્ધાન્ત-વિજ્ઞાન છે, एकविंशात्-તે સિદ્ધાન્તથી वैराजम्-વિવિધ પદાર્થોના પ્રકાશક साम-સામવેદના જ્ઞાનને પ્રાપ્ત विश्वामित्रः-સર્વને મિત્ર બનાવનાર અને ऋषिः-શબ્દનું જ્ઞાન કરાવનાર કાન અને प्रजाभ्यः-ઉત્પન્ન થયેલ વિદ્યુત્ આદિને માટે श्रोत्रम्-સાંભળવાના સાધનને ગ્રહણ કરે છે, તેમ प्रजापतिगृहीतया-પ્રજાપાલક પતિ ગ્રહણ કરેલી, त्वा-તારી સાથે પ્રસિદ્ધ થયેલી વિદ્યુત્ આદિથી श्रोत्रम्-સાંભળવાના સાધન કાનને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૫૭)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા ભણેલ અને પછી વિવાહ કરેલ સ્ત્રી-પુરુષ બહુશ્રુત બને. આપ્ત વિદ્વાનોથી ઉપદેશ શ્રવણ કર્યા વિના, ભણેલ વિદ્યા પણ ફળદાયી બનતી નથી. તેથી સદા ઉપદેશ સાંભળીને સત્યને ધારણ કરે અને અસત્યનો ત્યાગ કરે. (૫૭)

**इयमुपरि मतिस्तस्यै वाङ्मात्या हेमन्तो वाच्यः पङ्क्तिर्हेमन्ती पङ्क्त्यै
निधनं वन्निधनं वतऽआग्रयणः । आग्रयणात् त्रिणवत्रयस्त्रिंशौ त्रिणव-
त्रयस्त्रिंशाभ्यां ऽशाक्वररैवते विश्वकर्म ऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया वाचं
गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ ५८ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ સ્ત્રી ! જે इयम्-એ उपरि-સર્વથી ઉપર વિરાજમાન मतिः-બુદ્ધિ છે, तस्यै-તે

માત્યા-બુદ્ધિનું હોવું વા કર્મ વાક્-વાણી છે, વાચ્ય:-વાણિત્વ અર્થાત્ વાણીનું હોવું વા કર્મ હેમન્ત:- ઉષ્ણતાની નાશક હેમન્ત ઋતુ છે, હૈમન્તી-હેમન્ત ઋતુની વ્યાખ્યા કરનારી પઙ્કતિ:-પંકિત છન્દ છે, પઙ્કત્યૈ-તે પંકિત છન્દના નિધનવત્-મૃત્યુના પ્રશંસિત વ્યાખ્યાયુક્ત સામવેદનો ભાગ છે, નિધનવત:- તે સામના આગ્રયણ:-પ્રાપ્તિના સાધન જ્ઞાનનું ફળ કે વિજ્ઞાન છે, આગ્રયણાત્-તે વિજ્ઞાનથી ત્રિણવત્રયસ્ત્રિંશૌ- ૩ + ૯ = ૧૨-બાર અને તેત્રીસ સામવેદના સ્ત્રોત છે, ત્રિણવત્રયસ્ત્રિંશાભ્યામ્-તે સ્ત્રોતોથી શાક્વરૈવતે- શક્તિ અને ધનના સાધક સામને જાણીને વિશ્વકર્મા-સર્વ સુકર્મોનું સેવન કરનાર ઋષિ:-વેદાર્થના વક્તા ઋષિ છે. તેમ હું પ્રજાપતિગૃહીતયા-પ્રજાપતિ-પ્રજાપાલક પતિએ ગ્રહણ કરેલી ત્વયા-તારી સાથે પ્રજાભ્યામ્- પ્રજા માટે વાચમ્-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા યુક્ત વાણીને ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું. (૫૮)

ભાવાર્થ : પતિ અને પત્નીએ વિદ્વાનોની વાણી સાંભળીને બુદ્ધિ વધારવી જોઈએ, તે બુદ્ધિથી હેમન્ત ઋતુમાં કરવા યોગ્ય કાર્ય અને સામગાનને જાણીને, મહર્ષિની સમાન વર્તન કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા સંસ્કારયુક્ત-શુદ્ધ વાણીનો સ્વીકાર કરીને પ્રજાઓ માટે તેના સદા ઉપદેશ કરવા જોઈએ. (૫૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર અને પતિ-પત્નીના વ્યવહારના પ્રતિપાદનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ છે, એમ જાણો.

॥ ઇતિ ત્રયોદશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ચતુર્દશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓ૩મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાસુવ । યદ્ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥ ૧ ॥

ધ્રુવક્ષિતિર્ધ્રુવયોનિર્ધ્રુવાસિં ધ્રુવં યોનિમાસીદ સાધુયા ।

ઉચ્ચસ્ય કેતું પ્રથમં જુષાણા અશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું સાધુયા-શ્રેષ્ઠ ધર્મની સાથે ઉચ્ચસ્ય-વટલોઈ અર્થાત્ તાંબડીમાં રાંધેલ અન્નથી સંબંધિત અને પ્રથમમ્-વિસ્તૃત કેતુમ્-બુદ્ધિને જુષાણા-પ્રીતિપૂર્વક કરતી ધ્રુવક્ષિતિઃ-નિશ્ચલ રહેનારી અને ધ્રુવયોનિઃ-નિશ્ચલ ધરમાં રહેનારી, ધ્રુવા-દૃઢ ધર્મયુક્ત, અસિ-છે, તેથી તું ધ્રુવમ્-નિશ્ચલ યોનિમ્-ધરમાં આસીદ-સ્થિર બન. ત્વા-તને ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં અધ્વર્યૂ-પોતાના માટે રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક અશ્વિના-સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાદયતામ્-સારી રીતે સ્થાપિત કરે. (૧)

ભાવાર્થ : કુમારી કન્યાઓને બ્રહ્મચર્યકાલમાં અધ્યાપિકા તથા ઉપદેશિકા વિદ્યુષીઓ ગૃહસ્થ આશ્રમની તથા ધર્મશિક્ષા આપીને શ્રેષ્ઠ બનાવે. (૧)

કુલાયિનીં ઘૃતવતી પુરન્ધિઃ સ્યોને સીદ સદને પૃથિવ્યાઃ । અભિ ત્વાં રુદ્રા વસવો ગૃણન્ત્વિમા બ્રહ્મ પીપિહિ સૌભગાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્યોને-સુખ આપનારી ! જે ત્વા-તને વસવઃ-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ અને સ્દાઃ-મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાન્ ઇમા-એ બ્રહ્મ-વિદ્યાધન આપનાર ગૃહસ્થોની અભિ-સન્મુખ થઈ ગૃણન્તુ-પ્રશંસા કરે, તેથી તું સૌભગાય-સુંદર સંપત્તિ તે વિદ્યાધનને પીપિહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કર.

ઘૃતવતી-અધિક જલયુક્ત અને પુરન્ધિઃ-અનેક સુખોને ધારણ કરનારી, કુલાયિની-શ્રેષ્ઠ કુળને પ્રાપ્ત કરનારી બનીને પૃથિવ્યાઃ-પોતાની ભૂમિના સદને-ધરમાં સીદ-સ્થિત બની રહે.

અધ્વર્યૂ-પોતાના રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક અશ્વિના-સર્વવિદ્યાઓમાં વ્યાપક અને ઉપદેશક પુરુષ ત્વા-તને ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં સાદયતામ્-સ્થાપિત કરે. (૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓ સાંગોપાંગ વેદજ્ઞાનથી યુક્ત તથા ઐશ્વર્ય સુખના ઉપભોગ માટે પોતાની સમાન પતિઓ સાથે વિવાહ કરીને વિદ્યા અને સુવર્ણ આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને - સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક ધરમાં નિવાસ કરે, વિદ્વાનોનો સંગ અને શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ સદા કરતી રહે. (૨)

સ્વૈર્દક્ષૈર્દક્ષપિતેહ સીદ દેવાનાંઽ સુમ્ને બૃહતે રણાય । પિતેવૈધિ સૂનવઽઆ સુશેવાં સ્વાવેશા તન્વા સંવિશસ્વાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું જેમ સ્વૈઃ-પોતાના દક્ષૈઃ-બળ અને યતુર નોકરો સાથે વિદ્યમાન દેવાનામ્-

ધાર્મિક વિદ્વાનોની મધ્યમાં વિદ્યમાન **બૃહતે-મહાન રણાય-સંગ્રામ માટે સુમ્ને-સુખમાં દક્ષપિતા-બળ તથા ચતુર નોકરોનો પાલક પુરુષ વિજયથી વધે છે, તેમ ઇહ-આ લોકમાં એધિ-વધતી રહે, સુમ્ને-સુખમાં આસીદ-સ્થિર રહે.**

પિતેવ-જેમ પિતા સૂનવે-પોતાના પુત્રને સુંદર સુખ આપે છે, તેમ સુશેવા-સુંદર સુખ આપનારી, સ્વાવેશા-ઉત્તમ પ્રીતિ, સુંદર, શુદ્ધ શરીર, વસ્ત્ર અને અલંકારને ધારણ કરનારી બનીને તન્વા-શરીરની સાથે સંવિશસ્વ-પ્રવેશ કર.

અધ્વર્યુ-ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞથી પોતાના માટે ઈચ્છા કરનાર અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક ત્વા-તને ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં સાદયતામ્-સ્થાપિત કરે. (૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓ યુદ્ધમાં પણ પોતાના પતિઓ સાથે રહે. પોતાના નોકર, પુત્ર અને પશુઓનું પિતા સમાન પાલન કરે. સદા અતિ શ્રેષ્ઠ વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી પોતાના શરીરોને સુશોભિત કરતી રહે.

વિદ્વાનો તેને સદા એ રીતે ઉપદેશ કરે અને સ્ત્રીઓ પણ એ [વિદ્વાન્ પતિઓ]ને એ રીતે ઉપદેશ કર્યા કરે. (૩)

પૃથિવ્યાઃ પુરીષમ્સ્યપ્સો નામ તાં ત્વા વિશ્વેઽઅભિગૃણન્તુ દેવાઃ । સ્તોમપૃષ્ઠા ઘૃતવતીહ સીદ પ્રજાવદ્સમે દ્રવિણા યજસ્વાશ્વિનાધ્વર્યુ સાદયતામિહ ત્વા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે સ્તોમપૃષ્ઠા-સ્તુતિઓને જાણવાની ઈચ્છુક તું ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીની પુરીષમ્-રક્ષા, અપ્સઃ-સુંદર રૂપ તથા નામ-પ્રસિદ્ધિ છે અને ઘૃતવતી-ઉત્તમ ઘી આદિ પ્રશંસિત પદાર્થોથી યુક્ત અસિ-છે. તામ્-તેથી ત્વા-તારો વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાનો અભિગૃણન્તુ-સત્કાર કરે, ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં સીદ-વિદ્યમાન રહે અને જે ત્વા-તને અધ્વર્યુ-પોતાના રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક અશ્વિના-સકલ વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં સાદયતામ્-સ્થિત કરે, તેથી તું અસ્મે-અમારા માટે પ્રજાવત્-પ્રશંસિત સંતાન માટે દ્રવિણા-ધનને યજસ્વ-પ્રદાન કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ ગૃહાશ્રમની વિદ્યા અને ક્રિયાકૌશલમાં વિદુષી હોય, તે જ સર્વને સુખ આપી શકે છે. (૪)

અદિત્યાસ્ત્વા પૃષ્ઠે સાદયામ્યન્તરિક્ષસ્ય ધર્ત્રી વિષ્ટમ્ભનીં દિશામધિપત્નીં ભુવનાનામ્ । ઋર્મિર્દ્રપ્સો અપામસિ વિશ્વર્કર્મા ત્ઽઋષિર્શ્વિનાધ્વર્યુ સાદયતામિહ ત્વા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તે-તારા વિશ્વર્કર્મા-સર્વ શુભકર્મોથી યુક્ત, ઋષિઃ-વિજ્ઞાનદાતા પતિમાં-અન્તરિક્ષસ્ય-અન્તઃકરણના નાશરહિત વિજ્ઞાનને ધર્ત્રીમ્-ધારણ કરનારી, દિશામ્-પૂર્વ આદિ દિશાઓને વિષ્ટમ્ભનીમ્-સ્થિર કરનારી ભુવનાનામ્-સંતાનોત્પત્તિ નિમિત્ત ધરોની અધિપત્નીમ્-અધિષ્ઠાત્રી બનીને પાલન કરનારી, ત્વા-તને સૂર્યનાં કિરણો સમાન અદિત્યાઃ-પૃથિવીની પૃષ્ઠે-પીઠ ઉપર સાદયામિ-ધરની અધિકારિણી

સ્થાપિત કરું છું.

જે તું અપામ્-જલના ઝર્મિઃ-તરંગ સમાન દ્રવ્યઃ-આનંદયુક્ત અસિ-છે, તેથી ત્વા-તને ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં અધ્વર્યૂ-રક્ષા માટે યજ્ઞ કરનાર અશ્વિના-વિદ્યામાં વ્યાપક બુદ્ધિયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાદયતામ્-સ્થાપિત કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ અક્ષય સુખને ઉત્પન્ન કરનારી, સર્વ દિશાઓમાં પ્રસિદ્ધ યજ્ઞવાણી, વિદ્વાન્ પતિઓવાળી તથા નિત્ય આનંદમાં રહે છે, તે જ ગૃહાશ્રમ ધર્મના પાલન અને તેની ઉન્નતિમાં સમર્થ બને છે. (૫)

શુક્રશ્ચ શુચિશ્ચ ગૈષ્માવૃત્તૂઽઅગ્નેરન્તઃશ્લેષોઽસિ કલ્પેતાં દ્યાવાપૃથિવી
કલ્પન્તામાપઽઓષધયઃ કલ્પન્તામગ્નયઃ પૃથક્ મમ જ્યૈષ્ઠ્યાય સવ્રતાઃ । યેઽઅગ્નયઃ
સમનસોઽન્તરા દ્યાવાપૃથિવીઽદ્દુમે । ગૈષ્માવૃત્તૂઽઅભિકલ્પમાનાઽન્દ્રમિવ
દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઙ્ગિસ્વત્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ મમ-મારી જ્યૈષ્ઠ્યાય-પ્રશંસાને યોગ્ય બનવા માટે જે શુક્રઃ-શીઘ્ર ધૂળની વર્ષા અને તીવ્ર તાપથી આકાશને મલિન કરનાર જેઠ મહિનો ચ-અને શુચિઃ-પવિત્ર કરનાર અષાઠ મહિનો ચ-એ બન્ને મળીને પ્રત્યેક ગૈષ્મૌ-ગ્રીષ્મ ઋતુ-ઋતુ કહેવાય છે, જેમાં અગ્નેઃ-અગ્નિના અન્તઃશ્લેષઃ-મધ્યમાં કફના રોગોનું નિવારણ અસિ-થાય છે. જેથી ગ્રીષ્મઋતુના મહિનાઓમાં દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને અન્તરિક્ષ કલ્પેતામ્-સમર્થ બને છે, આપઃ-જલ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને છે, ઓષધયઃ-યવ અને સોમલતા આદિ ઔષધિઓ તથા અગ્નયઃ-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ પૃથક્-અલગ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને છે.

જેમ સમનસઃ-વિચારશીલ, સવ્રતાઃ-સત્યાચરણ રૂપ નિયમોથી યુક્ત અગ્નયઃ-અગ્નિ સમાન તેજસ્વીને અન્તરા + ગૈષ્મૌ + ઋતુ + અભિકલ્પમાનાઃ-સન્મુખ થઈને સમર્થ કરતા દેવાઃ-વિદ્વાનો ઈન્દ્રમિવ-વિદ્યુત્ સમાન તે અગ્નિઓની વિદ્યાઓમાં અભિસંવિશન્તુ-સર્વત્રથી ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે છે. તેમ તયા-તે દેવતયા-પરમેશ્વર દેવતાની સાથે તમે બન્ને [સ્ત્રી-પુરુષ] દ્દુમે-એ દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને પૃથિવીને ધ્રુવે-નિશ્ચલ રૂપથી એના પણ અઙ્ગિસ્વત્-અવયવોના કારણરૂપ રસની સમાન સીદતમ્-વિશેષ કરીને જ્ઞાન કરી પ્રવર્તમાન રહો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથિવી આદિ સ્થિત તથા શરીર, આત્મા અને મનમાં સ્થિત અગ્નિઓ છે, જેના વિના ગ્રીષ્મ ઋતુનો સંભવ થતો નથી. તેને જાણીને તથા તેનો ઉપયોગ કરીને તમે સર્વને સુખ પ્રદાન કરો. (૬)

સજૂઋતુભિઃ સજૂર્વિધાભિઃ સજૂર્દેવૈઃ સજૂર્દેવૈર્વયોનાધૈર્ગ્નયે ત્વા
વૈશ્વાનરાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા સજૂઋતુભિઃ સજૂર્વિધાભિઃ સજૂર્વસુભિઃ

સજૂર્દેવૈર્વૈયોનાધૈર્ગનયૈ ત્વા વૈશ્વાનરાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા સજૂર્ઋતુભિઃ
 સજૂર્વિધાભિઃ સજૂ રુદ્રૈઃ સજૂર્દેવૈર્વૈયોનાધૈર્ગનયૈ ત્વા વૈશ્વાનરાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ
 સાદયતામિહ ત્વા સજૂર્ઋતુભિઃ સજૂર્વિધાભિઃ સજૂરાદિત્યૈઃ સજૂર્દેવૈર્વૈયોનાધૈર્ગનયૈ
 ત્વા વૈશ્વાનરાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ ત્વા સજૂર્ઋતુભિઃ સજૂર્વિધાભિઃ
 સજૂર્વિશ્વૈર્દેવૈઃ સજૂર્દેવૈર્વૈયોનાધૈર્ગનયૈ ત્વા વૈશ્વાનરાયાશ્વિનાધ્વર્યૂ સાદયતામિહ
 ત્વા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે ત્વા-તને ઇહ-આ જગતમાં અધ્વર્યૂ-રક્ષા કરનાર અશ્વિના-સકલ વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક પુરુષ અને સ્ત્રી વૈશ્વાનરાય-સર્વ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે અગનયે-અગ્નિવિદ્યા માટે સાદયતામ્-નિયુક્ત અર્થાત્-સ્થાપિત કરે અને અમે પણ ત્વા-તમોને સ્થાપિત કરીએ.

તું ઋતુભિઃ-વસંત અને વર્ષાદિ ઋતુઓમાં સજૂઃ-એક સમાન તૃપ્તિ વા સેવન કરનાર, વિધાભિઃ-જલોથી સજૂઃ-પ્રીતિયુક્ત, દેવૈઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણોની સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિવાળી વા પ્રીતિવાળા તથા વયોનાધૈઃ-જીવન આદિ વા ગાયત્રી આદિ છંદોની સાથે સંબંધ માટે દેવૈઃ-દિવ્ય સુખ આપનાર પ્રાણોની સાથે સજૂઃ-સમાન રૂપથી પ્રીતિ અને તેનું સેવન કરનાર બનો.

હે પુરુષાર્થી સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે ત્વા-તને ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં વૈશ્વાનરાય-સર્વ જગતના નાયક અગનયે-વિજ્ઞાનદાતા ઈશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે અધ્વર્યૂ-રક્ષક અશ્વિના-સકલ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાદયતામ્-સ્થાપિત કરે, જે ત્વા-તને સ્ત્રી વા પુરુષને અમે સ્થાપિત કરીએ.

તું ઋતુભિઃ-ઋતુઓની સાથે સજૂઃ-પુરુષાર્થી, વિધાભિઃ-વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોના ધારણ માટે પ્રાણોની ચેષ્ટાઓ સાથે, સજૂઃ-સમાન સેવન કરનાર, વસુભિઃ-અગ્નિ આદિ આઠ પદાર્થોની સાથે સજૂઃ-પ્રીતિયુક્ત અને વયોનાધૈઃ-વિજ્ઞાનનો સંબંધ કરાવનાર દેવૈઃ-સુંદર વિદ્વાનો સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિવાળી બનો.

હે વિદ્યાધ્યયનમાં પ્રવૃત્ત બ્રહ્મચારિણી વા બ્રહ્મચારી ! જે ત્વા-તને ઇહ-આ બ્રહ્મચર્યાશ્રમમાં વૈશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યોના સુખનાં સાધન અગનયે-શાસ્ત્રોના વિજ્ઞાન માટે અધ્વર્યૂ-પાલક અશ્વિના-સકલ વિદ્યાયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાદયતામ્-નિયુક્ત કરે અને જે ત્વા-અમે પણ તને સ્થાપિત કરીએ.

તું ઋતુભિઃ-ઋતુઓની સાથે સજૂઃ-અનુકૂળ સેવન કરનાર વિધાભિઃ-વિવિધ પદાર્થોના ધારણ માટે પ્રાણની ચેષ્ટાઓથી સજૂઃ-સમાન પ્રીતિયુક્ત સ્ત્રૈઃ-પ્રાણ, અપાન, વ્યાન, ઉદાન, સમાન, નાગ, કૂર્મ, કૃકલ, દેવદત્ત, ધનંજય અને જીવાત્મા એ અગિયાર સજૂઃ-અનુસાર સેવા કરાવનાર અને વયોનાધૈઃ-વેદાદિ શાસ્ત્રોના અધ્યાપનનો પ્રબંધ કરનાર દેવૈઃ-વિદ્વાનની સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિવાળા બનો.

હે પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે ત્વા-તને ઇહ-સંસારમાં વૈશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યો માટે પૂર્ણ સુખ સાથે અગનયે-પૂર્ણ વિજ્ઞાન માટે અધ્વર્યૂ-રક્ષક અશ્વિના-શીઘ્ર જ્ઞાનદાતા સાદયતામ્-નિયત કરે અને જે-ત્વા-તને અમે નિયુક્ત કરીએ.

તું ઋતુભિઃ-ઋતુઓની સાથે સજૂઃ-અનુકૂળ આચરણ સાથે વિધાભિઃ-વિવિધ પ્રકારની સત્યક્રિયાઓ સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિયુક્ત આદિત્યૈઃ-વર્ષના બાર મહિનાઓની સાથે સજૂઃ-અનુકૂળ આહારવિહારયુક્ત

અને વયોનાથૈઃ-પૂર્ણવિદ્યાનું વિજ્ઞાન અને પ્રચારનો પ્રબંધ કરનાર દેવૈઃ-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોના સજૂઃ-અનુકૂળ પ્રીતિવાળા બનો.

હે સત્ય અર્થોનો ઉપદેશ કરનારી સ્ત્રી વા પુરુષ જે ત્વા-તને ઇહ-આ જગતમાં વૈશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી અગ્નયે-ઉત્તમ શિક્ષાના પ્રકાશ માટે અધ્વર્યૂ-બ્રહ્મવિદ્યાના રક્ષક અશ્વિના-શીઘ્ર ભણાવનાર-અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાદયતામ્-સ્થિત કરે અને જે ત્વા-તને અમે નિયત કરીએ.

તું ઋત્નુભિઃ-કાલ, ક્ષણ આદિ સર્વ અવયવો સાથે સજૂઃ-અનુકૂળ સેવન કરનાર વિદ્યાભિઃ-સુખોમાં વ્યાપક સર્વ ક્રિયાઓ સજૂઃ-અનુસાર બનીને વિશ્વૈઃ-સર્વ દેવૈઃ-સત્યોપદેશક વિદ્વાનોની સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિ યુક્ત અને વયોનાથૈઃ-કામનાને યોગ્ય જીવનનો સંબંધ કરાવનાર દેવૈઃ-પરોપકાર માટે સત્ય અને અસત્યના જ્ઞાતાઓની સાથે સજૂઃ-સમાન પ્રીતિવાળા બનો. (૭)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં મનુષ્યનો જન્મ પ્રાપ્ત કરીને સ્ત્રીઓ વિદુષી અને પુરુષો વિદ્વાન બનીને જે બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા અને સુશિક્ષાગ્રહણ આદિ શુભ કર્મોમાં સ્વયં પ્રવૃત્ત બનીને જે અન્યોને પ્રવૃત્ત કરે, તેઓ એ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત બનીને, પરમેશ્વરથી લઈને પૃથિવી પર્યન્તના પદાર્થોના યથાર્થ વિજ્ઞાનથી ઉપયોગ ગ્રહણ કરીને, સર્વ ઋતુઓમાં સ્વયં સુખી રહે તથા અન્યોને પણ સુખી કરે. (૭)

પ્રાણમ્મે પાહ્યપાનમ્મે પાહિ વ્યાનમ્મે પાહિ ચક્ષુર્મડઽર્વ્યા વિભાહિ શ્રોત્રમ્મે શ્લોકય । અપઃ પિન્વૌષધીર્જિન્વ દ્વિપાદ્વ ચતુષ્પાત્પાહિ દિવો વૃષ્ટિમેરય ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પતિ વા સ્ત્રી ! તું ડર્વ્યા-અનેક પ્રકારની ક્રિયાથી મે-મારી પ્રાણમ્-નાભિથી ઉપર ચાલનાર પ્રાણવાયુની પાહિ-રક્ષા કર, મે-મારા અપાનમ્-નાભિની નીચે ગતિ કરનાર અપાન વાયુની પાહિ-રક્ષા કર, મે-મારા વ્યાનમ્-વિવિધ શરીરની સંધિઓમાં ગતિ કરનાર વ્યાન વાયુની પાહિ-રક્ષા કર, મે-મારા ચક્ષુઃ-નેત્રોને વિભાહિ-પ્રકાશિત કર, મે-મારા શ્રોત્રમ્-કાનોને શ્લોકય-શાસ્ત્રના શ્રવણથી સંયુક્ત કર, અપઃ-પ્રાણોને પિન્વ-પુષ્ટ કર, ઔષધીઃ-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિઓને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, દ્વિપાત્-મનુષ્ય આદિ બે પગવાળા પ્રાણીઓની અવ-રક્ષા કર, ચતુષ્પાત્-ચોપગા ગાય આદિની પાહિ-રક્ષા કર.

જેમ સૂર્ય દિવઃ-પોતાના પ્રકાશથી વૃષ્ટિમ્-વર્ષા કરે છે, તેમ ઘરના કાર્યોને ઇરય-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કર. (૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ સ્વયંવર વિવાહ કરીને અત્યંત પ્રેમપૂર્વક પરસ્પર પ્રાણોની સમાન પ્રિય આચરણ, શાસ્ત્રોનું શ્રવણ અને ઔષધિ આદિનું સેવન કરીને યજ્ઞથી વરસાદ વરસાવે. (૮)

મૂર્ધા વયઃ પ્રજાપતિશ્ચન્દઃ ક્ષુત્રં વયો મયન્દં છન્દો વિષ્ટમ્ભો વયોઽધિપતિશ્ચન્દો વિશ્વર્કર્મા વયઃ પરમેષ્ઠી છન્દો વસ્તો વયો વિબલં છન્દો વૃષ્ણિર્વયો વિશાલં છન્દઃ પુરુષો વયસ્તન્દ્રં છન્દો વ્યાઘ્રો વયોઽનાધૃષ્ટં છન્દઃ સિન્હો વયશ્ચદિશ્ચન્દઃ

પષ્ટવાઙ્ વયોઃ બૃહતી છન્દઃ ડક્ષા વયઃ કક્કુપ્ છન્દઃ ડક્ષમ્-ભો વયઃ સતોબૃહતી
છન્દઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! મૂર્ધા-શિરની સમાન ઉત્તમ બ્રાહ્મણનું કુળ તથા પ્રજાપતિ:-પ્રજાના રક્ષક રાજા સમાન તું વયઃ-કામનાને યોગ્ય, મયન્દમ્-સુખદાયક, છન્દઃ-બલયુક્ત, ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિય કુળને પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર.

વિષ્ટમ્-વૈશ્યોની રક્ષા માટે અધિપતિ:-અધિષ્ઠાતા પુરુષ રાજા સમાન તું વયઃ-ન્યાય, અને વિનયયુક્ત છન્દઃ-સ્વાધીન પુરુષને પ્રેરણા કર.

વિશ્વકર્મા-સર્વ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર પરમેષ્ઠી-સર્વના સ્વામી રાજાની સમાન તું વયઃ-કામના કરવા યોગ્ય છન્દઃ-સ્વાધીનતાની ઇચ્છા-વૃદ્ધિ કર.

વસ્તઃ-સર્વ વ્યવહારોથી યુક્ત પુરુષ સમાન તું વયઃ-અનેક પ્રકારના વ્યવહારોમાં વ્યાપી વિબલમ્-વિવિધ બળ માટે છન્દઃ-આનંદની વૃદ્ધિ કર.

વૃષ્ણિઃ-સુખનું સિંચન કરનાર સમાન તું વિશાલમ્-વિસ્તારયુક્ત વયઃ-સુખદાયક છન્દઃ-સ્વાધીનતાની વૃદ્ધિ કર.

પુસ્મઃ-પુરુષાર્થની જેમ તું વયઃ-કામના કરવા યોગ્ય તન્દ્રમ્-કુટુંબના ધારણરૂપ કર્મ છન્દઃ-અને બળની વૃદ્ધિ કર.

વ્યાઘ્રઃ-જે વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોને સારી રીતે સૂંધે છે, તે જન્તુ સમાન રાજા તું વયઃ-કામના કરવા યોગ્ય અનાધૃષ્ટમ્-દેહ છન્દઃ-બળની વૃદ્ધિ કર.

સિંહઃ-પશુ આદિને મારનાર સિંહ સમાન પરાક્રમી રાજા તું વયઃ-પરાક્રમ સાથે છદિઃ-નિરોધ [આચ્છાદન] અને છન્દઃ-પ્રકાશની વૃદ્ધિ કર.

પષ્ટવાઙ્-પીઠ પર વજન ઉપાડનારા ઊંટ વગેરે સમાન વૈશ્ય તું બૃહતી-મહાન વયઃ-બળયુક્ત છન્દઃ-પરાક્રમને પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર.

ડક્ષા-[વીર્ય] સેચન કરનાર વૃષભ-બળદ સમાન શૂદ્ર તું વયઃ-અતિ બળ માટે કક્કુપ્-દિશાઓ અને છન્દઃ-આનંદની વૃદ્ધિ કર.

ત્રમ્ભઃ-ગતિશીલ પશુ સમાન નોકર તું વયઃ-બળની સાથે સતોબૃહતી-મહાન છન્દઃ-સ્વતંત્રતાની પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ બ્રાહ્મણ આદિ વર્ણોને સ્વતંત્ર કરીને, વેદ આદિનો પ્રચાર કરીને, આળસ આદિનો ત્યાગ કરીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને મહાન બળની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ (૯)

અનુદ્વાન્વયઃ પૃક્ષિણ્છન્દોઃ ધેનુર્વયોઃ જગતી છન્દસ્ત્ર્યવિર્વયસ્ત્રિષ્ટુપ્ છન્દોઃ
દિત્યવાઙ્ વયોઃ વિરાટ્ છન્દઃ પઞ્ચાવિર્વયોઃ ગાયત્રી છન્દસ્ત્રિવત્સો વયઃ ડક્ષિણ્
છન્દસ્તુર્યવાઙ્ વયોઃ ડક્ષુપ્ છન્દઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! અનહ્વાન્-ગાય અને બળદની સમાન બળવાન બનીને તું પંક્તિ:- પ્રકટ છન્દ:-સ્વતંત્ર વય:-બળની પ્રેરણા કર.

ધેનુ:-દૂધ આપનારી ગાય સમાન તું જગતી-જગતના ઉપકારક છન્દ:-આનંદની વય:-કામનાઓની વૃદ્ધિ કર.

ત્ર્યવિ:-ત્રણ-ઘેંટી, બકરી અને ગાયના અધ્યક્ષ સમાન વૃદ્ધિયુક્ત બનીને તું ત્રિષ્ટુપ્-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના માટે છન્દ:-સ્વતંત્ર વય:-ઉત્પત્તિની વૃદ્ધિ કર.

દિત્યવાહ-પૃથિવી-ભૂમિ ખેડવાથી ઉત્પન્ન થયેલ જવ આદિને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયા સમાન તું વિરાટ-વિવિધ પ્રકાશયુક્ત છન્દ:-આનંદકારક વય:-પ્રાપ્તિની વૃદ્ધિ કર.

પચ્ચાવિ:-પાંચ ઈન્દ્રિયોની રક્ષા હેતુ ઔષધિ સમાન તું ગાયત્રી-ગાયત્રી છન્દ:-મંત્રના વય:-વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કર ત્રિવત્સ-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસનાના ઈચ્છુક સમાન તું ઝષ્ણિક્-દુઃખનાશક છન્દ:-સ્વતંત્ર વય:-પરાક્રમની વૃદ્ધિ કર.

તુર્યવાટ-ચારેય વેદોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર પુરુષની સમાન તું અનુષ્ટુપ્-અનુકૂળ સ્થિતિ માટે છન્દ:-સુખસાધક વય:-ઈચ્છાની પ્રતિદિન વૃદ્ધિ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ બળદ વગેરેની રક્ષા કરીને, ખેડૂત લોકો અન્ન આદિ ઉત્પન્ન કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ સ્ત્રી-પુરુષ વિદ્યાઓનો પ્રચાર કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે. (૧૦)

इन्द्राग्नीऽअव्यथमानामिष्टकां दृंहतं युवम् ।

पृष्ठेन द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षं च विबाधसे ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને સૂર્યસમાન વિદ્યમાન સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને અવ્યથમાનામ્-અચલ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને ઇષ્ટકામ્-ઈંટ સમાન ગૃહાશ્રમને દંહતમ્-દેઢ કરો.

જેમ દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિ પૃષ્ઠેન-પીઠથી અન્તરિક્ષમ્-આકાશને બાધિત કરે છે, તેમ તમે દુઃખો અને શત્રુઓને બાધિત-પીડિત કરો.

હે પુરુષ ! જેમ તું સ્વપત્નીની પીડાને વિબાધસે-વિશેષ રૂપથી દૂર કરે છે, તેમ એ સ્ત્રી પણ તારી સર્વ પીડાને દૂર કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય જલ વરસાવીને ઔષધિ આદિની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ કુટુંબની વૃદ્ધિ કરે.

જેમ પ્રકાશ અને પૃથિવી આકાશને આચ્છાદિત કરે છે, તેમ ગૃહાશ્રમના વ્યવહારને સ્ત્રી-પુરુષ સુશોભિત કરે. (૧૧)

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीमन्तरिक्षं यच्छान्तरिक्षं दृंहान्तरिक्षं मा हिंसीः । विश्वस्मै प्राणायाम्पानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय । वायुष्ट्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया

દેવતયાઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! વિશ્વકર્મા-સર્વ શુભકર્મોમાં કુશળ પતિ જેમ વ્યચસ્વતીમ્-પ્રશસ્ત વિદ્વાન્ અને સત્કારવાળી, પ્રથસ્વતીમ્-ઉત્તમ વિસ્તૃત વિદ્યાવાળી, અન્તરિક્ષસ્ય-પ્રકાશના પૃષ્ઠે-એક ભાગમાં ત્વા-તને સાદયતુ-સ્થાપિત કરે.

તું વિશ્વસ્મૈ-સર્વ પ્રાણાય-પ્રાણ, અપાનાય-અપાન, વ્યાનાય-વ્યાન અને ઉદાનાય-ઉદાનરૂપ શરીરના વાયુ તથા પ્રતિષ્ઠાયૈ-પ્રતિષ્ઠા, ચરિત્રાય-શુભ કર્મોના આચરણ માટે અન્તરિક્ષમ્-જલાદિને યચ્છ-આપ્યા કર ; અન્તરિક્ષમ્-પ્રશંસિત શુદ્ધ જલયુક્ત અન્ન અને ધન આદિની વૃદ્ધિ કર; અન્તરિક્ષમ્-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત રોગનાશક આકાશમાં રહેલાં સર્વ પદાર્થોનો માર્હિંસી:-નાશ ન કર.

જે ત્વા-તને વાયુ:-પ્રાણ સમાન પ્રિય પતિ મહ્યા-સ્વસ્ત્યા-સુખરૂપ ક્રિયાથી, છર્દિષા-પ્રકાશથી શન્તમેન-અત્યંત સુખકારક વિજ્ઞાનથી તારી અભિપાતુ-સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તેથી તું તયા-તે દેવતયા-દિવ્ય સુખ પ્રદાન કરનાર વિદ્યમાન પ્રતિરૂપ દેવતા સાથે અઙ્ગિરસ્વત્-વ્યાપક વાયુની સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ જ્ઞાનથી યુક્ત સીદ-સ્થિર રહે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ પુરુષ સ્ત્રીને શુભ કર્મોમાં નિયુક્ત કરે, તેમ સ્ત્રી પણ પોતાના પતિને પ્રેરિત કરે જેથી નિરંતર આનંદની વૃદ્ધિ થાય. (૧૨)

રાઙ્ગ્યસિ પ્રાચી દિગ્વિરાડ્સિ દક્ષિણા દિક્ સમ્રાડ્સિ પ્રતીચી દિક્ સ્વરાડ્સ્યુદીચી દિગધિપત્ન્યસિ બૃહતી દિક્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું પ્રાચી-પૂર્વ દિક્-દિશા સમાન રાઙ્ગી-પ્રકાશમાન અસિ-છે; દક્ષિણા-દક્ષિણ દિક્-દિશા સમાન વિરાડ્-વિવિધ વિનય, વિદ્યા અને પ્રકાશયુક્ત અસિ-છે; પ્રતીચી--પશ્ચિમ દિક્-દિશા સમાન સમ્રાડ્-ચક્રવર્તી રાજા સમાન ઉત્તમ સુખયુક્ત પૃથિવી પર પ્રકાશમાન અસિ-છે; ઉદીચી-ઉત્તર દિક્-દિશાની સમાન સ્વરાડ્-સ્વયં પ્રકાશમાન અસિ-છે; બૃહતી-મહાન દિક્-ઉપર અને નીચેની દિશા સમાન અધિપત્ની-ઘરમાં અધિકાર પ્રાપ્ત કરેલી પત્ની અસિ-છે તેથી તું સર્વ પતિ આદિને તૃપ્ત કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ દિશાઓ સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, સર્વને સ્થાન આદિ બતાવનાર છે અને ક્ષોભ રહિત છે, તેમ સ્ત્રી પણ શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી યુક્ત બને. (૧૩)

વિશ્વકર્મા ત્વા સાદયત્વન્તરિક્ષસ્ય પૃષ્ઠે જ્યોતિષ્મતીમ્ । વિશ્વસ્મૈ પ્રાણાયાઽપાનાય વ્યાનાય વિશ્વં જ્યોતિર્યચ્છ । વાયુષ્ટેઽધિપતિસ્તયા દેવતયાઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ॥ ૧૪ ॥

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે જ્યોતિષ્મતીમ્-અતિ વિજ્ઞાનવાળી ત્વા-તને વિશ્વસ્મૈ-સર્વ પ્રાણાય-પ્રાણ, અપાનાય-અપાન, વ્યાનાય-વ્યાનની પુષ્ટિ માટે અન્તરિક્ષસ્ય-જલના પૃષ્ઠે-ઉપરના ભાગમાં વિશ્વકર્મા-સર્વ શુભ કર્મોના ઈચ્છુક પતિ સાદયતુ-સ્થાપિત કરે; તેથી તું વિશ્વમ્-સંપૂર્ણ જ્યોતિ:-વિજ્ઞાનને યચ્છ-

ગ્રહણ કર. (૧૪)

જે વાયુ:-પ્રાણ સમાન પ્રિય તે-તારો અધિપતિ:-સ્વામી છે તયા-તે દેવતયા-દેવ સ્વરૂપ પતિની સાથે ધ્રુવા-દંઢ અઙ્ગિસ્સ્વત્-સૂર્ય સમાન સીદ-સ્થિર રહે. (૧૪)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સ્વયં વિદુષી બનીને શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ માટે પોતાના સંતાનોને સદા વિજ્ઞાન પ્રદાન કરે. (૧૪)

નભશ્ચ નભસ્યશ્ચ વાર્ષિકાવૃત્તૂઽઅગ્નેરન્તઃશ્લેષ્ણોઽસિ કલ્પેતાં દ્યાવાપૃથિવી કલ્પન્તામાપ્ઽઓષધયઃ કલ્પન્તામગ્નયઃ પૃથ્ઙ્ મમ જ્યૈષ્ઠ્યાય સવ્રતાઃ । યેઽઅગ્નયઃ સમનસોઽન્તરા દ્યાવાપૃથિવીઽદ્રુમે । વાર્ષિકાવૃત્તૂઽઅભિકલ્પમાનાઽઙ્દ્રમિવ દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઙ્ગિસ્સ્વદ્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને-જે નભ:-વાદળોને બાંધનાર શ્રાવણ મહિનો છે ચ-અને નભસ્ય:-વર્ષાનો મધ્યભાગી ભાદરવો મહિનો છે ચ-એ બન્ને વાર્ષિકૌ-વર્ષા ઋતુના મહિનાઓ મમ-મારા જ્યૈષ્ઠ્યાય-પ્રશંસા પાત્ર છે, જેમાં અગ્ને:-ઉષ્ણ તથા અન્તઃશ્લેષઃ-જેવા મધ્યમાં શીત સ્પર્શ અસિ-થાય છે. જેથી દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ સમર્થ બને છે, તેના ભોગમાં તમે બન્ને કલ્પેતામ્-સમર્થ બનો.

જેમ ઋતુયોગ આપ:-જલ અને ઓષધયઃ-ઔષધિઓ વા અગ્નયઃ-અગ્નિ પૃથક્-જલથી અલગ સમર્થ બને છે, તેમ સવ્રતાઃ-સમાન વ્રત શ્રેષ્ઠ નિયમ સમનસઃ-સમાનમન-જ્ઞાન આપનાર અગ્નયઃ-તેજસ્વી વિદ્વાન્ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને.

યે-જે દ્રુમે-દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ વર્ષાઋતુના ગુણોમાં સમર્થ બને છે તેને વાર્ષિકૌ-ઋતુ-વર્ષાઋતુરૂપ અભિકલ્પમાનાઃ-સર્વત્રથી સુખ માટે સમર્થ કરતાં દેવાઃ-વિદ્વાન ઙ્દ્રમિવ-વિદ્યુત્ સમાન પ્રકાશ અને બળને તયા-તે દેવતયા-દિવ્યવર્ષા સાથે અભિસંવિશન્તુ-સન્મુખ થઈને સારી રીતે રહે, અન્તરા-તે બન્ને મહિનાઓમાં પ્રવેશ કરીને અઙ્ગિસ્સ્વત્-પ્રાણની સમાન પરસ્પર પ્રેમયુક્ત ધ્રુવે-નિશ્ચલ સીદતમ્-રહો. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સમાન વર્ષાઋતુમાં [ઉપયોગી] સામગ્રીનો [પ્રથમથી] સંગ્રહ કરી લેવો જોઈએ. જેથી વર્ષાઋતુમાં સર્વ સુખ પ્રાપ્ત થાય. (૧૫)

દ્વિષ્ણોર્જશ્ચ શાર્દાવૃત્તૂઽઅગ્નેરન્તઃશ્લેષ્ણોઽસિ કલ્પેતાં દ્યાવાપૃથિવી કલ્પન્તામાપ્ઽઓષધયઃ કલ્પન્તામગ્નયઃ પૃથ્ઙ્ મમ જ્યૈષ્ઠ્યાય સવ્રતાઃ । યેઽઅગ્નયઃ સમનસોઽન્તરા દ્યાવાપૃથિવીઽદ્રુમે । શાર્દાવૃત્તૂઽઅભિકલ્પમાનાઽઙ્દ્રમિવ દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઙ્ગિસ્સ્વદ્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ દ્વિષઃ-કામના યોગ્ય આસો મહિનો છે ચ-અને ઋર્જઃ-જેમાં સર્વ પદાર્થ

બલ પ્રાપ્ત કરે છે તે કારતક મહિનો છે **ચ-એ** બન્ને મહિનાઓ **શારદૌ-શરદ** **ઋતુ-ઋતુ**ના મહિનાઓ **મમ-મારા જ્યૈષ્ઠચાય:-** પ્રશંસાપાત્ર સુખ આપવા માટે છે, જેના **અન્ત:શલેષ:-** મધ્યમાં કિંચિત્ શીતસ્પર્શ **અસિ-થાય** છે, તે **દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ** અને **ભૂમિને કલ્પેતામ્-સમર્થ** કરે છે, **આપ:-જલ** અને **ઓષધય:-** ઔષધિઓ **કલ્પન્તામ્-સમર્થ** બને છે, **સવ્રતા:-** સર્વ કાર્યોના નિયમ કરનાર **અગ્નય:-શરીરના અગ્નિ પૃથક્-અલગ કલ્પન્તામ્-સમર્થ** બને છે **ચે-જે અન્તરા-મધ્યમાં સમનસ:-** મન સંબંધી **અગ્નય:-બહારનો અગ્નિ** **ઇમે-એ દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ** અને **ભૂમિને કલ્પેતામ્-સમર્થ** કરે.

શારદૌ-શરદ **ઋતુ-ઋતુ**ના બન્ને મહિનાઓમાં **ઇન્દ્રમિવ-પરમ ઐશ્વર્ય સમાન અભિકલ્પમાના:-** સર્વત્રથી આનંદની ઈચ્છા કરતાં **દેવા:-** વિદ્વાનો **અભિસંવિશન્તુ-પ્રવેશ** કરે, **તયા-તે દેવતયા-દિવ્ય શરદ** **ઋતુ** રૂપ દેવતાના નિયમની સાથે **ધ્રુવે-નિશ્ચલ સુખ સીદતમ્-પ્રાપ્ત** થાય છે, તેમ તમે **જ્યૈષ્ઠચાય-પ્રશંસિત** સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે યોગ્ય છો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! શરદ ઋતુમાં જે ઉપયોગી પદાર્થ છે, તેને સમ્યક્ રીતે સંસ્કૃત કરીને તમે તેનું સેવન કરો. (૧૬)

આયુર્મે પાહિ પ્રાણં મૈ પાહ્યપાનં મૈ પાહિ વ્યાનં મૈ પાહિ ચક્ષુર્મે પાહિ શ્રોત્રં મે પાહિ વાચમ્મે પિન્વ મનો મે જિન્વાત્માનમ્મે પાહિ જ્યોતિર્મે ચચ્છ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! **મે-મારા આયુ:-જીવનની પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારા પ્રાણમ્-પ્રાણની પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારા અપાનમ્-અપાનવાયુની પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારા વ્યાનમ્-વ્યાનની પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારા ચક્ષુ:-** નેત્રોની **પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારા શ્રોત્રમ્-કાનોની પાહિ-રક્ષા** કર; **મે-મારી વાચમ્-વાણીને પિન્વ-સુશુક્ષિથી** યુક્ત કર; **મે-મારા મન:-મનને જિન્વ-તૃપ્ત** કર; **મે-મારા આત્માનમ્-ચેતન આત્માની પાહિ-રક્ષા** કર અને **મે-મને જ્યોતિ:-વિજ્ઞાન ચચ્છ-પ્રદાન** કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી પુરુષની અને પુરુષ સ્ત્રીની જેમ આયુની વૃદ્ધિ થાય, તેમ નિત્ય આચરણ કરે. (૧૭)

મા ચ્છન્દઃ પ્રમા ચ્છન્દઃ પ્રતિમા ચ્છન્દોઽઅસ્ત્રીવયશ્છન્દઃ પઙ્ક્તિઃ શ્છન્દઽઽષ્ણિક્ ચ્છન્દોઽબૃહતી ચ્છન્દોઽનુષ્ટુપ્ ચ્છન્દોઽવિરાટ્ ચ્છન્દોઽગાયત્રી ચ્છન્દોઽસ્ત્રિષ્ટુપ્ ચ્છન્દોઽજગતી ચ્છન્દઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે **મા-પરિમાણ-માપ** માટે **ચ્છન્દઃ-આનંદકારક** છે, **પ્રમા-પ્રમાણનો હેતુ બુદ્ધિ ચ્છન્દઃ-બળ** છે, **પ્રતિમા-પ્રતીતિ નિશ્ચયની હેતુ ક્રિયા ચ્છન્દઃ-સ્વતંત્રતા** છે, **અસ્ત્રીવયઃ-બળ** અને **કાન્તિ** કરનાર **અન્નાદિ પદાર્થ ચ્છન્દઃ-બલકારી વિજ્ઞાન** છે, **પઙ્ક્તિઃ-પાંચ અવયવોથી યુક્ત યોગ ચ્છન્દઃ-પ્રકાશ** છે, **ઽષ્ણિક્-સ્નેહ ચ્છન્દઃ-પ્રકાશ** છે, **બૃહતી-મહાન પ્રવૃત્તિ ચ્છન્દઃ-આશ્રય** છે, **અનુષ્ટુપ્-સુખોનું આલંબન ચ્છન્દઃ-ભોગ** છે, **વિરાટ્-વિવિધ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ ચ્છન્દઃ-વિજ્ઞાન** છે, **ગાયત્રી-ગાયકના રક્ષક ઈશ્વર ચ્છન્દઃ-તેનો બોધ** છે, **ત્રિષ્ટુપ્-ત્રણે સુખોના આશ્રય ચ્છન્દઃ-આનંદકારી** છે અને **જગતી-જેમાં સર્વ જગત્ ગતિ** કરે છે તે **ચ્છન્દઃ-પરાક્રમ** છે તેને ગ્રહણ કરીને તથા જાણીને સર્વને સુખયુક્ત કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રમાણ = બુદ્ધિ આદિ દ્વારા ધર્મયુક્ત કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સુખોથી શોભાયમાન બને છે. (૧૮)

પૃથિવી છન્દોઽન્તરિક્ષં છન્દો દ્યૌશ્છન્દઃ સમાશ્છન્દો નક્ષત્રાણિ છન્દો
વાક્ છન્દો મનશ્છન્દઃ કૃષિશ્છન્દો હિરણ્યં છન્દો ગૌશ્છન્દોઽજાચ્છન્દોઽશ્વશ્છન્દઃ ॥

૧૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તને જેમ પૃથિવી-ભૂમિ છન્દઃ-સ્વતંત્ર છે, અન્તરિક્ષમ્-આકાશ છન્દઃ-આનંદકારી છે, દ્યૌઃ-પ્રકાશ છન્દઃ-વિજ્ઞાન છે, સમાઃ-વર્ષ છન્દઃ-બુદ્ધિ છે, નક્ષત્રાણિ-નક્ષત્રો છન્દઃ-સ્વતંત્ર છે, વાક્-વાણી છન્દઃ-સત્ય છે, મનઃ-મન છન્દઃ-નિષ્કપટ છે, કૃષિઃ-ખેતી છન્દઃ-ઉત્પત્તિ છે, હિરણ્યમ્-સુવર્ણ છન્દઃ-સુખદાયી છે, ગૌઃ-ગાય છન્દઃ-આનંદકારક છે, અજા-બકરી છન્દઃ-સુખકારક છે અને અશ્વઃ-ઘોડા આદિ છન્દઃ-સ્વાધીન છે, તેમ વિદ્યા, વિનય અને ધર્માચરણમાં, સ્વાધીનતાથી આચરણ કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સ્વચ્છ-શુદ્ધ વિદ્યા અને ક્રિયા-આચરણથી સ્વતંત્રતાપૂર્વક પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ આદિને જાણીને, ખેતી આદિ કર્મોથી સુવર્ણ આદિ પ્રાપ્ત કરીને, ગાય આદિ પશુઓની સમ્યક્ રક્ષા કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૯)

અગ્નિર્દેવતા વાતો દેવતા સૂર્યો દેવતા ચન્દ્રમા દેવતા વસવો દેવતા રુદ્રા
દેવતાઽઽદિત્યા દેવતા મરુતો દેવતા વિશ્વે દેવા દેવતા બૃહસ્પતિર્દેવતેન્દ્રો દેવતા
વરુણો દેવતા ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમોને યોગ્ય છે, કે અગ્નિઃ-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ દેવતા-દિવ્ય ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, વાતઃ-વાયુ દેવતા-શુદ્ધ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, સૂર્યઃ-સૂર્ય દેવતા-ઉત્તમ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, ચન્દ્રમાઃ-ચંદ્રમા દેવતા-શુદ્ધ ગુણ યુક્ત હોવાથી દેવતા, વસવઃ-પ્રસિદ્ધ આઠ અગ્નિ આદિ વા પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાન્ દેવતા-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી, સ્ત્વાઃ-પ્રાણ આદિ અગિયાર વા મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાન દેવતા-શુદ્ધ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, આદિત્યાઃ-બાર મહિના વા ઉત્તમ કક્ષાના વિદ્વાનો દેવતા-શુદ્ધ હોવાથી દેવતા, મસ્તઃ-મનન કર્તા વિદ્વાન, ઋત્વિજો દેવતા-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, વિશ્વે-સર્વ દેવતા-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત વા દિવ્ય પદાર્થ દેવતા-દેવસંજ્ઞાયુક્ત છે. બૃહસ્પતિઃ-બૃહદ્વચન વા બ્રહ્માંડના રક્ષક પરમાત્મા દેવતા-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત્ વા ઉત્તમ ધન દેવતા-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા અને વસુઃ-જલ વા શ્રેષ્ઠ ગુણવાળા પદાર્થો દેવતા-શ્રેષ્ઠ ગુણોયુક્ત છે. તેને તમે ઉત્તમ રીતે જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે દિવ્ય પદાર્થો અને વિદ્વાનો છે, તેઓ દિવ્ય-ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત હોવાથી 'દેવતા' કહેવાય છે.

જે દેવતાઓના દેવતા હોવાથી મહાદેવ, સર્વના ધારણકર્તા, રચયિતા, પાલનકર્તા, વ્યવસ્થાપક, પ્રલયકર્તા, સર્વશક્તિમાન અને અજન્મા છે, તે પરમેશ્વરને પણ સર્વના અધિષ્ઠાતા પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યો જાણે. (૨૦)

મૂર્ધ્વાસિ રાઙ્ ધ્રુવાસિ ધ્રુણા ધ્રુવૈસિ ધરણી ।

આયુષે ત્વા વર્ચસે ત્વા કૃષ્યૈ ત્વા ક્ષેમાય ત્વા ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું સૂર્ય સમાન મૂર્ધ્વા-ઉત્તમ અસિ-છે, રાઙ્-પ્રકાશમાન નિશ્ચલ સમાન ધ્રુવા-નિશ્ચલ શુદ્ધ અસિ-છે, ધરણા-પુષ્ટિ કરનાર ધરણી-આધારરૂપ પૃથિવી સમાન ધ્રુવૈ-ધારણ કરનારી અસિ-છે, તે ત્વા-તને આયુષે-જીવન માટે તે ત્વા-તને વર્ચસે-અન્ન માટે તે ત્વા-તને કૃષ્યૈ-ખેતી માટે ત્વા-તને ક્ષેમાય-રક્ષા માટે હું સર્વત્રથી ગ્રહણ કરું છું. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમાંગરૂપ શિર દ્વારા સર્વનું જીવન, [જેના પર] રાજ્ય કરવાથી લક્ષ્મી, ખેતી કરવાથી અન્ન આદિ અને નિવાસ કરવાથી રક્ષા થાય છે.

તેમ એ સર્વની આધારભૂતા અને માતાની સમાન માન્ય કરનારી ભૂમિ છે, તેમજ સજ્જન વિદુષી સ્ત્રી હોવી જોઈએ. (૨૧)

યન્ત્રી રાઙ્ યન્ત્રૈસિ યમની ધ્રુવાસિ ધરિત્રી ।

ઙ્ષે ત્વોર્જે ત્વા ર્યૈ ત્વા પોષાય ત્વા ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું યન્ત્રી-યંત્ર સમાન સ્થિત, રાઙ્-પ્રકાશમાન, યન્ત્રી-યંત્રોની નિમિત્ત પૃથિવી સમાન અસિ-છે, યમની-આકર્ષણ શક્તિથી નિયમન કરનારી ધ્રુવા-આકાશ સમાન દેહ નિશ્ચલ, ધ્રુવૈ-સર્વ ગુણોને ધારણ કરનારી અસિ-છે, ત્વા-તને ઙ્ષે-ઈચ્છા સિદ્ધિ માટે, ત્વા-તને ઋર્જે-પરાક્રમની પ્રાપ્તિ માટે, ત્વા-તને ર્યૈ-લક્ષ્મી માટે અને ત્વા-તને પોષાય-પુષ્ટિ માટે હું ગ્રહણ કરું છું. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ભૂમિ સમાન ક્ષમાયુક્ત, આકાશ સમાન ક્ષોભ રહિત-નિશ્ચલ અને યંત્રોની સમાન જિતેન્દ્રિય હોય છે, તે કુલદીપિકા હોય છે. (૨૨)

**આશુસ્ત્રિવૃદ્ધાન્તઃ પંચદશો વ્યોમા સપ્તદશો ધ્રુણાઙ્કવિશ્શઃ પ્રતૂર્તિરષ્ટા-
દશસ્તપો નવદશોઙ્ભીવર્ત્તઃ સવિશ્શો વર્ચો દ્વાવિશ્શઃ સમ્ભરણસ્ત્રયોવિશ્શો
યોનિશ્ચતુર્વિશ્શઃ । ગર્ભાઃ પંચવિશ્શ ઓર્જસ્ત્રિણવઃ ક્રતુરેકત્રિશ્શઃ પ્રતિષ્ઠા
ત્રયસ્ત્રિશ્શો બ્રહ્મસ્ય વિષ્ટપં ચતુસ્ત્રિશ્શો નાર્કઃ ષટ્ત્રિશ્શો વિવર્ત્તોઙ્ષ્ટાચત્વારિશ્શો
ધર્ત્ર ચંતુષ્ટોમઃ ॥ ૨૩ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સંવત્સર-વર્ષમાં આશુઃ-શીઘ્ર ત્રિવૃત્-શીત, ઉષ્ણ અને શીતોષ્ણ ત્રણ પ્રકારનો ભાન્તઃ-પ્રકાશ છે, પંચદશઃ-પંદર પ્રકારના વ્યોમા-આકાશની સમાન વિસ્તાર યુક્ત છે, સપ્તદશઃ-

સત્તર પ્રકારના ધસ્યઃ-ધારણ ગુણ છે, એકવિંશઃ-એકવીસ પ્રકારની પ્રતૂર્તિઃ-શીઘ્ર ગતિ છે, અષ્ટાદશઃ-અઠાર પ્રકારના તપઃ-સંતાપી ગુણ છે, નવદશઃ-ઓગણીસ પ્રકારના અભીવર્ત્તઃ-મુખ્ય વર્તાવ છે, સર્વિંશઃ-એકવીસ પ્રકારની વર્ચઃ-દીપ્તિ છે, દ્વાવિંશઃ-બાવીસ પ્રકારના સમ્ભરણઃ-ઉત્તમ ધારણ કરવા જેવા ગુણ છે, ત્રયોવિંશઃ-તેવીસ પ્રકારના યોનિઃ-સંયોજક અને વિયોજક ગુણ છે, ચતુર્વિંશઃ-ચોવીસ પ્રકારની ગર્ભાઃ-ગર્ભ ધારણની શક્તિ છે, પંચવિંશઃ-પચ્ચીસ પ્રકારના ઓજઃ-પરાક્રમ ત્રિણવઃ-સત્તાવીસ પ્રકારના ક્રતુઃ-કર્મ વા બુદ્ધિ છે, એકત્રિંશઃ-એકત્રીસ પ્રકારની પ્રતિષ્ઠા-સર્વની સ્થિતિની નિમિત્ત ક્રિયા છે, ત્રયસ્ત્રિંશઃ-તેત્રીસ પ્રકારની બ્રહ્મસ્ય-મહાન ઈશ્વરની વિષ્ટપમ્-વ્યાપિત છે, ચતુસ્ત્રિંશઃ-ચોત્રીસ પ્રકારનો નાકઃ-આનંદ છે ષટ્ત્રિંશઃ-છત્રીસ પ્રકારના વિવર્ત્તઃ-વિવિધ પ્રકારથી વર્તાવ છે, અષ્ટાચત્વારિંશઃ-અડતાલીસ પ્રકારના ધર્મ્-ધારણ ગુણ છે તથા ચતુષ્ટોમઃ-ચાર સ્તુતિઓના આધાર છે, તેને સંવત્સર જાણો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે સંવત્સર-વર્ષના સંબંધી ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન આદિ અવયવો છે, તેના સંબંધથી એ મંત્રોક્ત વ્યવહાર થાય છે, તેમ તમે જાણો. (૨૩)

અગ્નેર્ભાગોસિ દીક્ષાયાઽઆધિપત્યં બ્રહ્મં સ્પૃતં ત્રિવૃત્સ્તોમઃ । ઇન્દ્રસ્ય ભાગોઽસિ વિષ્ણોરાધિપત્યં ક્ષુત્રઃ સ્પૃતં પંચદશ સ્તોમઃ । નૃચક્ષ્ણસાં ભાગોઽસિ ધાતુરાધિપત્યં જનિત્રંઽસ્પૃતઃસપ્તદશ સ્તોમઃ । મિત્રસ્ય ભાગોઽસિ વરુણસ્યાધિપત્યં દિવો વૃષ્ટિર્વાતં સ્પૃતઽએકવિંશ સ્તોમઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તું અગ્નેઃ-સૂર્યના ભાગઃ-વિભાગને યોગ્ય સંવત્સરના સમાન અસિ-છે, તે તું દીક્ષાયાઃ-બ્રહ્મચર્ય આદિની દીક્ષાનું સ્પૃતમ્-પ્રીતિથી સેવન કરતાં આધિપત્યમ્-બ્રહ્મ-બ્રહ્મણ કુલના અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે ત્રિવૃત્-શરીર, વાણી અને માનસ સાધનોથી શુદ્ધ સ્તોમઃ-સ્તુતિ યોગ્ય, ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્ વા ઉત્તમ ઐશ્વર્યના ભાગઃ-વિભાગ સમાન અસિ-છે; તું વિષ્ણોઃ-વ્યાપક ઈશ્વરની સ્પૃતમ્-પ્રીતિથી સેવા યોગ્ય ક્ષુત્રમ્-ક્ષત્રિયોના ધર્મને અનુકૂળ રાજકુળના આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું પચ્ચદશઃ-પંદરમાં સ્તોમઃ-સ્તુતિકર્તા, નૃચક્ષ્ણસામ્-મનુષ્યોથી વ્યાખ્યા કરવા યોગ્ય પદાર્થોના ભાગઃ-વિભાગ સમાન અસિ-છે, તે તું ધાતુઃ-ધારણકર્તાના સ્પૃતમ્-સેવા જનિત્રમ્-જન્મ [સૃષ્ટિ] અને આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું સપ્તદશઃ-સત્તરમાં સ્તોમઃ-સ્તુતિ યોગ્ય મિત્રસ્ય-પ્રાણના ભાગઃ-વિભાગની સમાન અસિ-છે, તે તું વસ્યાસ્ય-શ્રેષ્ઠ જલ સમૂહના આધિપત્યમ્-અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કર.

જે તું વાતઃ-સ્પૃતઃ-વાયુ સમાન સેવિત અને એકવિંશઃ-એકવીસમા સ્તોમઃ-સ્તુતિના સાધન સમાન અસિ-છે, તે તું દિવઃ-પ્રકાશરૂપ સૂર્યથી વૃષ્ટિઃ-વર્ષા થવા માટે હવન આદિ ઉપાય કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે બાલ્યાવસ્થાથી લઈને સજ્જનો દ્વારા ઉપદેશ કરેલી વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્ન

પૂર્વક આધિપતિત્વ પ્રાપ્ત કરે છે તેઓ-

સ્તુતિ યોગ્ય કર્મો કરીને, શ્રેષ્ઠ બનીને, પ્રકાર સહિત [ભેદોપભેદો સહિત] કાલને જાણીને અન્યોને બતાવી શકે છે. (૨૪)

વસૂનાં ભાગ્નોઽસિ રુદ્રાણામાધિપત્યં ચતુષ્પાત્ સ્પૃતં ચતુર્વિંશ સ્તોમઃ ।
આદિત્યાનાં ભાગ્નોઽસિ મરુતામાધિપત્યં ગર્ભાઃ સ્પૃતાઃ પંચવિંશ સ્તોમઃ । અદિત્યૈ
ભાગ્નોઽસિ પૂષ્ણાઽઆધિપત્યમોજ સ્પૃતં ત્રિણવ સ્તોમઃ । દેવસ્ય સવિતુર્ભાગ્નોઽસિ
બૃહસ્પતેરાધિપત્યઃ સમીચીર્દિશ સ્પૃતાશ્ચતુષ્ટોમ સ્તોમઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તું વસૂનામ્-અગ્નિઆદિ આઠ વા પ્રથમ કોટિના વિદ્વાનોના ભાગ:-સેવવા યોગ્ય અસિ-છે, તે તું સ્દાણામ્-દશપ્રાણ આદિ અગિયારમો જીવ વા મધ્યમકોટિના વિદ્વાનના આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું ચતુર્વિંશ:-ચોવીસ પ્રકારના સ્તોમ:-સ્તુતિકર્તા, આદિત્યાનામ્-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ કોટિના વિદ્વાનોના ભાગ:-સેવન યોગ્ય અસિ-છે, તે તું ચતુષ્પાત્-ગાય આદિ પશુઓનું સ્પૃતમ્-સેવન કર; તથા મસ્તામ્-મનુષ્ય વા પશુઓના આધિપત્યમ્-અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કર.

જે તું પંચવિંશ:-પચીસ પ્રકારના સ્તોમ:-સ્તુતિ યોગ્ય, અદિત્યૈ-અખંડિત આકાશના ભાગ:-વિભાગ સમાન અસિ-છે તે તું પૂષ્ણા:-પુષ્ટિકારક પૃથિવીથી સ્પૃતમ્-સેવન યોગ્ય ઓજ:-બળને પ્રાપ્ત થઈને આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું ત્રિણવ:-સત્તાવીસ પ્રકારના સ્તોમ:-સ્તુતિ યોગ્ય, દેવસ્ય-સુખદાતા સવિતુ:-પિતાના ભાગ:-વિભાગ અસિ-છે, તે તું બૃહસ્પતે:-મહાન વેદવાણીના પાલક ઈશ્વરે આપેલ આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું ચતુષ્ટોમ:-ચારે વેદોથી કહેવા યોગ્ય સ્તુતિકર્તા છે, તે તું ગર્ભાઃ:-ગર્ભની સમાન વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી આચ્છાદિત સ્પૃતા:-પ્રીતિમાન સજ્જનો જેને જાણે છે, તે સમીચી:-સમ્યક્ પ્રાપ્તિના સાધન સ્પૃતા:-પ્રીતિના વિષય દિશ:-પૂર્વ દિશાને જાણ. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો સુશીલતા આદિ ગુણોને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ વિદ્વાનોને પ્રિય બનીને સર્વના અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે અધિપતિ-અધિષ્ઠાતા હોય, તે મનુષ્યો પ્રત્યે પિતાતુલ્ય વ્યવહાર કરે. (૨૫)

યવાનાં ભાગ્નોઽસ્યયવાનામાધિપત્યં પ્રજા સ્પૃતાશ્ચતુશ્ચત્વારિંશ સ્તોમઃ । ઋઘ્ભૂણાં
ભાગ્નોઽસિ વિશ્વેષાં દેવાનામાધિપત્યં ભૂતશ્ચ સ્પૃતં ત્રયસ્ત્રિંશ સ્તોમઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તું યવાનામ્-મળેલાં પદાર્થોનું ભાગ:-સેવન કરનાર શરદ ઋતુની સમાન

અસિ-છે; જે અયવાનામ્-પૃથક્-પૃથક્ ધર્મવાળા પદાર્થોના આધિપત્યમ્-અધિપતિભાવને પ્રાપ્ત કરીને સ્મૃતાઃ-પ્રીતિથી પ્રજાઃ-પાલન યોગ્ય પ્રજાઓને સ્મૃતાઃ-પ્રસન્ન કરે છે; જે ચતુશ્ચત્વાર્શિઃ-ચુંમાલીસ પ્રકારના સ્તોમઃ-સ્તુતિયોગ્ય, ઋશ્મૂળામ્-બુદ્ધિમાનોના ભાગઃ-સેવવા યોગ્ય અસિ-છે; વિશ્વેષામ્-સર્વ દેવાનામ્-વિદ્વાનોના ભૂતમ્-થઈ ચૂકેલા સ્મૃતમ્-સેવન કરેલા આધિપત્યમ્-અધિકારને પ્રાપ્ત કરીને જે ત્રયસ્ત્રિંશઃ-તેત્રીસમા સ્તોમઃ-સ્તુતિના વિષય સમાન અસિ-છે, તે તું અમારા સત્કારને યોગ્ય છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે એ [પૂર્વોક્ત] શરદઋતુના ગુણ કહેલ છે. તેનું યથાવત્ સેવન કરવું જોઈએ. (૨૬)

સહશ્ચ સહસ્યૃશ્ચ હૈમન્તિકાવૃત્તૂઽઅગ્નેરન્તઃશ્લેષ્ઠોઽસિ કલ્પેતાં દ્યાવાપૃથિવી કલ્પન્તામાપઽઓષધયઃ કલ્પન્તામગ્નયઃ પૃથક્-મમ જ્યૈષ્ઠ્યાય સવ્રતાઃ । યેઽઅગ્નયઃ સમનસોઽન્તરા દ્યાવાપૃથિવીઽદ્દમે હૈમન્તિકાવૃત્તૂઽઅભિકલ્પમાનાઽન્દ્રમિવ દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મિત્ર ! જે મમ-મારા જ્યૈષ્ઠ્યાય-વૃદ્ધ શ્રેષ્ઠજનો હોવા માટે સહઃ-બલકારી માગસર માસ ચ-અને સહસ્યઃ-બળમાં વિદ્યમાન પોષ માસ ચ-એ બે મહિનાઓ હૈમન્તિકૌ ઋતુ-હેમન્ત ઋતુમાં તેના ચિહ્ન-લક્ષણ જાણનાર અઙ્ગિસ્વત્-તે ઋતુના પ્રાણસમાન સીદતમ્-સ્થિર છે.

જે ઋતુની અન્તઃશ્લેષઃ-મધ્યમાં સ્પર્શ થાય છે તેની સમાન તું અસિ-છે, તે તું તે ઋતુથી દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ કલ્પેતામ્-સમર્થ બને છે, આપઃ-જલ, ઓષધયઃ-ઔષધિઓ, અગ્નયઃ-શ્વેતિમાયુક્ત અગ્નિ પૃથક્-અલગ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને છે, એમ જાણ.

યે-જે અગ્નયઃ-અગ્નિઓની સમાન અન્તરા-અંદર પ્રવેશ થનાર સવ્રતાઃ-નિયમધારી સમનસઃ-અવિરુદ્ધ વિચાર કરનારા દ્દમે-આ ધ્રુવે-દેહ દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિને કલ્પન્તામ્-સમર્થ કરે છે.

ન્દ્રમિવ-ઐશ્વર્યની સમાન હૈમન્તિકૌ-ઋતુ-હેમન્ત ઋતુના બન્ને મહિનાઓ અભિકલ્પમાનાઃ-સન્મુખ થઈને સમર્થ કરનારા દેવાઃ-દિવ્યગુણ વિદ્યુત્ની સમાન અભિસંવિશન્તુ-ઘરમાં પ્રવેશ કરે છે, તે સજ્જન તયા-તે દેવતયા-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા દેવની સાથે પ્રેમબદ્ધ થઈને નિયમથી આહાર અને વિહાર કરીને સુખી રહે. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો પોતાના સુખ માટે હેમન્ત ઋતુના પદાર્થો સેવન કરે, તેમ તેઓ તેનું અન્ય લોકોને પણ સેવન કરાવે. (૨૭)

एकयास्तुवत प्रजाऽअधीयन्त प्रजापतिरधिपतिरासीत् तिसृभिरस्तुवत ब्रह्मासृज्यत ब्रह्मणस्पतिरधिपतिरासीत् । पञ्चभिरस्तुवत भूतान्यसृज्यन्त भूतानां

પતિરધિપતિરાસીત્ । સ્મભિરસ્તુવત સમઋષયોઽસૃજ્યન્ત ધાતાધિપતિરાસીત્ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રજાપતિઃ-પ્રજાના પાલક અધિપતિઃ-સર્વના અધ્યક્ષ પરમેશ્વર આસીત્-
છે, તેની એકયા-એક વાણીથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો અને જેણે સર્વ પ્રજાઃ-પ્રજાને વેદ દ્વારા અધીયન્ત-
વિદ્યાવાન્ કરેલ છે.

જે બ્રહ્મણસ્પતિઃ-વેદના રક્ષક-પાલક અધિપતિઃ-સર્વના સ્વામી પરમાત્મા આસીત્-છે, જેણે આ
બ્રહ્મ-સકલ વિદ્યાયુક્ત વેદોને અસૃજ્યત-રચેલ છે, તેની તિસૃષ્ઠિઃ-ત્રણ-પ્રાણ, ઉદાન અને વ્યાન ગતિથી
અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે ભૂતાનિ-પૃથિવી આદિ પંચભૂતોને અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે, જે ભૂતાનામ્-સર્વ ભૂતોના પતિઃ-રક્ષક,
અધિપતિઃ-રક્ષકોના પણ રક્ષક આસીત્-છે, તેની સર્વ મનુષ્યો પઞ્ચભિઃ-સમાનવાયુ, ચિત્ત, બુદ્ધિ, અહંકાર
અને મનથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે સપ્તઋષયઃ-પાંચ મુખ્ય પ્રાણ, મહત્ત્વ સમષ્ટિ અને અહંકાર સાત પદાર્થો અસૃજ્યન્ત-રચેલ
છે, જે ધાતા-ધારક વા પોષક અધિપતિઃ-સર્વના સ્વામી આસીત્-છે, તેની સપ્તભિઃ-નાગ, કર્મ, કૃકલ,
દેવદત્ત, ધનંજય, ઈચ્છા અને પ્રયત્ન એ સાતથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના ઉત્પત્તિકર્તા, ન્યાયાધીશ પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરવી જોઈએ.
[તેના વિષયમાં] શ્રવણ, મનન અને નિદિધ્યાસન [ધ્યાન કરવાની ઈચ્છા] કરવા જોઈએ.

જેમ હેમન્ત ઋતુમાં સર્વ પદાર્થો શીતળ બને છે, તેમ પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવાથી આપ લોકો
શાન્તિયુક્ત બનો. (૨૮)

**નવભિરસ્તુવત પિતરોઽસૃજ્યન્તાદિતિરધિપત્ન્યાસીત્ । એકાદશભિરસ્તુવતઽ-
ઋત્વોઽસૃજ્યન્તાર્ત્ત્વાઽઅધિપતયઽઆસન્ । ત્રયોદશભિરસ્તુવત્ માસાઽઅસૃજ્યન્ત
સંવત્સરોઽધિપતિરાસીત્ । પઞ્ચદશભિરસ્તુવત ક્ષત્રમસૃજ્યતેન્દ્રોઽધિપતિરાસીત્ ।
સપ્તદશભિરસ્તુવત ગ્રામ્યાઃ પ્શવોઽસૃજ્યન્ત્ બૃહસ્પતિરધિપતિરાસીત્ ॥ ૨૯ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેણે પિતરઃ-રક્ષક મનુષ્ય અસૃજ્યન્ત-ઉત્પન્ન કરેલ છે, જ્યાં અદિતિઃ-
રક્ષાને યોગ્ય અધિપત્ની-અત્યંત રક્ષક માતા આસીત્-છે, તે પરમાત્માની નવભિઃ-નવ પ્રાણોથી અસ્તુવત-
ગુણ પ્રશંસા કરો.

જેણે ઋત્નવઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ અસૃજ્યન્ત-રચી છે, જ્યાં આર્ત્તવાઃ-તે-તે ઋતુઓના ગુણો
અધિપતયઃ-પોતાના વિષયમાં અધિપતિ રૂપમાં આસન્-છે, તેની એકાદશભિઃ-દશ પ્રાણો અગિયારમાં
આત્માથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે માસાઃ-ચૈત્ર આદિ બાર મહિનાઓ અસૃજ્યન્ત-રચ્યા છે, પઞ્ચદશભિઃ-પંદર તિથિઓ સહિત

સંવત્સર:-વર્ષ અધિપતિ:-સર્વ કાલના અધિષ્ઠાતા રચેલ આસીત્-છે તેની ત્રયોદશભિ:-દશ પ્રાણો અને અગિયારમાં જીવાત્મા અને બે પ્રતિષ્ઠાઓથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઇન્દ્ર:-પરમ સંપત્તિના હેતુ સૂર્ય અધિપતિ:-અધિષ્ઠાતા ઉત્પન્ન કરેલ આસીત્-છે, જેણે ક્ષત્રમ્-રાજ્ય વા ક્ષત્રિય કુળને અસૃજ્યત-રચેલ છે, તેને સપ્તદશભિ:-પગની દશ આંગળીઓ, બે જંઘા, બે ગોઠણ, બે પ્રતિષ્ઠા અને એક નાભિથી ઉપરનું અંગ એ સત્તરની અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે બૃહસ્પતિ:-મહાન પદાર્થોના રક્ષક વૈશ્યને અધિપતિ:-રચેલ આસીત્-છે અને ગ્રામ્યા:-ગામમાં રહેનારા પશવ:-ગાય આદિ પશુઓ અસૃજ્યન્ત-રચ્યા છે, તે પરમેશ્વરની પૂર્વોક્ત સર્વ પદાર્થોથી યુક્ત બનીને અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ-જેણે ઋતુ આદિ પ્રજાના પાલક [પદાર્થો] તથા [ગાય આદિ] પાલન કરવા યોગ્ય [પદાર્થો] રચેલ છે અને જેણે કાલના નિર્માણકર્તા સૂર્ય આદિ સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે પરમાત્માની ઉપાસના કરો. (૨૯)

નવદશભિરસ્તુવત શૂદ્રાર્યાવસૃજ્યેતામહોરાત્રેઽધિપત્નીઽઆસ્તામ્ । એકે-
વિશ્વશત્યાસ્તુવતૈકશપ્તાઃ પશવોઽસૃજ્યન્ત વરુણોઽધિપતિરાસીત્ । ત્રયોવિશ્-
શત્યાસ્તુવત ક્ષુદ્રાઃ પશવોઽસૃજ્યન્ત પૂષાધિપતિરાસીત્ । પઞ્ચવિશ્વશત્યાસ્તુવતાઽ-
ઽરુણ્યાઃ પશવોઽસૃજ્યન્ત વાયુરધિપતિરાસીત્ । સપ્તવિશ્વશત્યાસ્તુવત દ્વાવાપૃથિવી
વ્યૈતાં વસવો રુદ્રાઽઆદિત્યાઽઅનુવ્યાયંસ્તઽવાધિપતયઽઆસન્ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેણે ઉત્પન્ન કરેલ અહોરાત્રે-દિવસ અને રાત્રિ અધિપત્ની-સર્વ કામ કરાવવા અધિકારી-અધિષ્ઠાતા આસ્તામ્-છે, જેણે શૂદ્રાચ્યૌ-શુદ્ર અને આર્ય-દ્વિજ એ બન્ને અસૃજ્યેતામ્-રચેલ છે, તેની નવદશભિ:-દશ પ્રાણ, પાંચ મહાભૂત, મન, બુદ્ધિ, ચિત્ત અને અહંકારથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલ વસુઃ-જલ અધિપતિ:-પ્રાણની સમાન પ્રિય અધિષ્ઠાતા આસીત્-છે, જેણે એકશપ્તાઃ-એક ખરી વાળા ઘોડા આદિ પશવ:-પશુઓ અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે, તેની એકવિશત્યા-મનુષ્યોના એકવીસ અવયવોથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે રચેલા પૂષા-પુષ્ટિ કારક ભૂગોળ અધિપતિ:-રક્ષા કરનાર આસીત્-છે, જેણે ક્ષુદ્ર:-અતિ સૂક્ષ્મ પશવ:-પશુઓ અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે, તેની ત્રયોવિશત્યા-પશુઓના તેવીસ અવયવોથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલા વાયુ:-વાયુ અધિપતિ:-પાલન કરનાર-અધિષ્ઠાતા આસીત્-છે, જેણે આરુણ્યા:-વનના પશવ:-સિંહ આદિ પશુઓ અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે, તેની પઞ્ચવિશત્યા-પચીસ ક્ષુદ્ર પશુઓના અવયવો

અથવા અવયવોની કારીગરી સાથે અસ્તુવત-પ્રશંસા કરો.

જેણે રચેલા દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ વ્યૈતામ્-વિવિધ રૂપોથી પ્રાપ્ત છે, જેની રચનાથી વસવઃ-અગ્નિ આદિ પદાર્થો વા પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાન, સ્દાઃ-પ્રાણ આદિ વા મધ્યમ વિદ્વાન, આદિત્યાઃ-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ વિદ્વાન્ અનુવ્યાયન્-અનુકૂળતાથી ઉત્પન્ન થયા છે, તે એવ-તેઓ અગ્નિ આદિ વા વિદ્વાન્ અધિપતયઃ-અધિષ્ઠાતા આસન્-છે, તેની સપ્તવિંશત્યા-સત્તાવીશ વનના પશુઓના ગુણોથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેણે આર્ય, શૂદ્ર અને ડાકૂ આદિ મનુષ્યો ઉત્પન્ન કરેલ છે, જેણે પ્રાણીઓના સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ શરીર તથા નાના-મોટા પશુઓ તથા તેના પાલનના સાધન રચેલ છે.

જેની સૃષ્ટિમાં અલ્પવિદ્યા અને પૂર્ણવિદ્યાવાળા વિદ્વાન થયા છે, તે [ઈશ્વર]ને તમે ઉપાસના યોગ્ય માનો. (૩૦)

**નવવિંશત્યાસ્તુવત્ વનસ્પતયોઽસૃજ્યન્ત્ સોમોઽધિપતિરાસીત્ ।
 એકત્રિંશતાસ્તુવત પ્રજાઽસૃજ્યન્ત્ યવાશ્ચાયવાશ્ચાધિપતયઽઆસન્ ।
 ત્રયસ્ત્રિંશતાસ્તુવત ભૂતાન્યશામ્યન્ પ્રજાપતિઃ પરમેષ્ઠ્યધિપતિરાસીત્ ॥ ૩૧ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેના બનાવવાથી સોમઃ-ઔષધિઓમાં શ્રેષ્ઠ સોમ અધિપતિઃ-અધિષ્ઠાતા આસીત્-છે, જેણે તે વનસ્પતયઃ-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓને અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે, તે પરમાત્માની નવવિંશત્યા-ઓગણત્રીસ પ્રકારના વનસ્પતિના ગુણોથી અસ્તુવત-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલ યવાઃ-સમષ્ટિરૂપ અર્થાત્ જેના અવયવ મિશ્રિત મળેલા છે તે પર્વત આદિ ચ-અને ત્રસરેણુ આદિ, અયવાઃ-જેના અવયવ અમિશ્રિત-પૃથક્ પૃથક્ છે તે પ્રકૃતિના અવયવ સત્ત્વ, રજ અને તમોગુણ ચ-તથા પરમાણુ આદિ અધિપતયાઃ-મુખ્ય કારણરૂપ અધ્યક્ષ-અધિષ્ઠાતા આસન્-છે, તે પ્રજાઃ-પ્રસિદ્ધ ઔષધિઓને જેણે અસૃજ્યન્ત-રચેલ છે તે ઈશ્વરની એકત્રિંશતા-એકત્રીસ પ્રજાના અવયવોથી અસ્તુવત-પ્રશંસા કરો.

જેના પ્રભાવથી ભૂતાનિ-પ્રકૃતિના પરિણામ મહત્ત્વના ઉપદ્રવ અશામ્યન્-શાન્ત બની જાય છે, જે પ્રજાપતિઃ-પ્રજાના રક્ષક પરમેષ્ઠી-પરમેશ્વરની સમાન આકાશમાં વ્યાપક બનીને સ્થિત છે, તે પરમેશ્વર અધિપતિઃ-અધિષ્ઠાતા આસીત્-છે, તેની ત્રયસ્ત્રિંશતા-મહાભૂતોની તેત્રીસ ગુણોથી અસ્તુવત-પ્રશંસા કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વર લોકોની રક્ષા માટે વનસ્પતિ આદિ રચી ધારણ અને વ્યવસ્થિત કરી રહેલ છે, તેની જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં વસંત આદિ ઋતુઓના વર્ણનથી અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણો.

॥ इति चतुर्दशोऽध्यायः ॥



॥ અથ પઞ્ચદશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અગ્ને જાતાન્ પ્રણુદા નઃ સપ્તાન્ પ્રત્યજાતાન્નુદ જાતવેદઃ ।

અધિ નો બ્રૂહિ સુમનાઽઅહેઙ્ઙસ્તવ સ્યામ્ શર્મન્સ્ત્રિવસ્થઽઙ્ઙૌ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-રાજન્ વા સેનાપતિ ! આપ નઃ-અમારા જાતાન્-પ્રસિદ્ધ સપ્તાન્-શત્રુઓને પ્ર + નુદ-દૂર કરો.

હે જાતવેદઃ-પ્રસિદ્ધ બળવાન ! આપ અજાતાન્-અપ્રસિદ્ધ શત્રુઓને નુદ-પ્રેરણા કરો અને અમારો અહેઙ્ઙ-અનાદર ન કરતાં સુમનાઃ-પ્રશન્નચિત્ત આપ નઃ-અમારા પ્રતિ-પ્રત્યે અધિ + બ્રૂહિ-અધિક ઉપદેશ કરો. જેથી અમે તવ-આપના ડ્ઙ્ઙૌ-ઉત્તમ પદાર્થોથી યુક્ત, ત્રિવસ્થે-આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક એ ત્રણે સુખોવાળા શર્મન્-ઘરમાં સ્યામ-સુખી રહીએ. (૧)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદોએ ગુપ્તચરો દ્વારા પ્રકટ અને અપ્રકટ શત્રુઓનો નિશ્ચય કરીને તેને વશમાં કરવા જોઈએ. કોઈપણ ધાર્મિક પુરુષોનો અનાદર અને અધાર્મિકનો આદર ન કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ સજ્જનો વિશ્વાસપૂર્વક રાષ્ટ્રમાં વાસ કરે. (૧)

સહસા જાતાન્ પ્રણુદા નઃ સપ્તાન્ પ્રત્યજાતાન્ જાતવેદો નુદસ્વ ।

અધિ નો બ્રૂહિ સુમનસ્યમાનો વ્યથ્ઙ્ઙસ્યામ્ પ્રણુદા નઃ સપ્તાન્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત રાજન્ ! આપ નઃ-અમારા સહસા-બળની સાથે જાતાન્-પ્રસિદ્ધ થયેલા સપ્તાન્-શત્રુઓને પ્રણુદ-જીતો, તે પ્રતિ + અજાતાન્-યુદ્ધમાં ધૂપા શત્રુઓના સેવક મિત્રોને નુદસ્વ-પૃથક્ કરો.

સુમનસ્યમાનઃ-ઉત્તમ વિચાર કરતાં આપ નઃ-અમને અધિ + બ્રૂહિ-અધિકતાથી વિજય વિધાનનો ઉપદેશ કરો. વ્યથ્ઙ્ઙ-અમે આપના સહાયક સ્યામ-બનીએ. જે નઃ-અમારા સપ્તાન્-વિરોધમાં પ્રવૃત્ત સંબંધીઓને આપ પ્ર + નુદ-મારે, તેને અમે પણ મારીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે રાજા કર્મચારીઓ શત્રુઓના નિવારણમાં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરતા નથી તેને સારી રીતે દંડ આપવો જોઈએ. જે પોતાના સહાયક હોય, તેનો રાજાએ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨)

ષોઙ્ઙશી સ્તોમ્ ઓજો દ્રવિણં ચતુશ્ચત્વારિંશ સ્તોમો વર્ષો દ્રવિણમ્ । અગ્નેઃ પુરીષમસ્યપ્સો નામ્ તાં ત્વા વિશ્વેઽઅભિ ગૃણન્તુ દેવાઃ । સ્તોમપૃષ્ઠા ઘૃતવર્તીહ

સીદ પ્રજાવદસ્મે દ્રવિણા યજસ્વ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે ષોડશી-પ્રશંસિત સોળ કળાઓથી યુક્ત સ્તોમ:-સ્તુતિને યોગ્ય ઓજ:-પરાક્રમ દ્રવિણમ્-ધન છે, જે ચતુશ્ચત્વારિંશ-ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું આચરણ કરનાર સ્તોમ:-સ્તુતિનાં સાધન નામ-પ્રસિદ્ધ વર્ચ:-અધ્યયન દ્રવિણમ્-બળ આપે છે, જે અગ્ને:-અગ્નિની પુરીષમ્-પૂર્તિ કરનારને પ્રાપ્ત થઈને અપ્સ:-અન્યના પદાર્થોના ભોગની ઈચ્છાથી રહિત અસિ-છે, તે ત્વા-પુરુષ તથા તામ્-સ્રી ની વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાનો અભિગૂણન્તુ-પ્રશંસા કરે. તે તું સ્તોમપૃષ્ઠા-ઈષ્ટ સ્તુતિઓને જણાવનારી ઘૃતવતી-ઉત્તમ ધી વગેરે પદાર્થોથી યુક્ત બનીને ઇહ-ગૃહાશ્રમમાં સીદ-સ્થિર રહે અને અસ્મે-અમારા માટે પ્રજાવત્-અધિક સંતાનો માટે દ્રવિણા-ધનને યજસ્વ-પ્રદાન કરે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સોળ કળાઓથી યુક્ત જગતમાં વિદ્યા અને બળનો વિસ્તાર કરીને, ગૃહાશ્રમ કરીને, વિદ્યા-દાન આદિ શુભ કર્મોને નિરંતર કર્યા કરવા જોઈએ. (૩)

एवश्छन्दो वरिवश्छन्दः शम्भूश्छन्दः परिभूश्छन्दोऽआच्छच्छन्दो मनश्छन्दो
व्यचश्छन्दः सिन्धुश्छन्दः समुद्रश्छन्दः सरिरं छन्दः ककुप् छन्दस्त्रिककुप् छन्दः
काव्यं छन्दोऽअङ्कुपं छन्दोऽक्षरपङ्क्तिश्छन्दः पदपङ्क्तिश्छन्दो विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः
क्षुरश्छन्दो भ्रजश्छन्दः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે પરમ પ્રયત્નથી એવ:-છન્દ:-આનંદદાયક જ્ઞાન છે, વરિવ:-સત્ય સેવન-રૂપ છન્દ:-સુખદાયક છે, શમ્ભૂ:-સુખનો અનુભવ છન્દ:-આનંદકારી વ્યવહાર છે, પરિભૂ:-સર્વત્રથી પુરુષાર્થી છન્દ:-સત્યનો પ્રકાશક છે, આચ્છત્-દોષ નિવારણરૂપ છન્દ:-જીવન છે, મન:-સંકલ્પ વિકલ્પાત્મક છન્દ:-પ્રકાશ કરનાર છે, વ્યચ:-શુભગુણોની વ્યાપ્તિ છન્દ:-આનંદકારી છે, સિન્ધુ:-નદીની સમાન ગતિ છન્દ:-સ્વતંત્રતા છે, સમુદ્ર:-સમુદ્ર સમાન ગંભીરતા છન્દ:-પ્રયોજન સિદ્ધકારી છે, સરિરમ્-જલ સમાન મૃદુતા છન્દ:-શાન્તિદાયક છે, કકુપ્-દિશાઓ સમાન ઉજ્જવળ કીર્તિ છન્દ:-પ્રતિષ્ઠા આપનાર છે, ત્રિક્કુપ્-અધ્યાત્માદિ ત્રણ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર કર્મ છન્દ:-આનંદદાયક છે, કાવ્યમ્-દીર્ઘદર્શી કવિકૃત કાવ્ય છન્દ:-પ્રકાશક વિજ્ઞાનદાયક છે, અઙ્કુપમ્-તિર્યક્ ગતિયુક્ત જલ છન્દ:-ઉપકારી છે, અક્ષરપઙ્ક્તિ:-પરલોક છન્દ:-આનંદકારી છે, પદપઙ્ક્તિ:-આ લોક છન્દ:-સુખદાયક છે, વિષ્ટારપઙ્ક્તિ:-સર્વ દિશાઓ છન્દ:-સુખદાયક છે, ક્ષુર:-છરાની સમાન સર્વ પદાર્થોનો છેદક સૂર્ય છન્દ:-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ ભ્રજ:-પ્રકાશમય છન્દ:-સ્વચ્છ અને આનંદકારક છે, તેને સુખ માટે સિદ્ધ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત કર્મ તથા પુરુષાર્થના અનુષ્ઠાનથી પ્રિય બને છે, તેઓ સૃષ્ટિના પદાર્થોથી સુખોને ગ્રહણ કરી શકે છે. (૪)

આચ્છચ્છન્દઃ પ્રચ્છચ્છન્દઃ સંયચ્છન્દો વિચ્છચ્છન્દો બૃહચ્છન્દો રથન્તરચ્છન્દો
નિકાયશ્ચન્દો વિવધશ્ચન્દો ગિરશ્ચન્દો ભ્રજશ્ચન્દઃ સંસ્તુપ્ છન્દોઽનુષ્ટુપ્
છન્દઃઽએવશ્ચન્દો વરિવશ્ચન્દો વયશ્ચન્દો વયસ્કૃચ્છન્દો વિષ્વર્દ્ધાશ્ચન્દો વિશાલં
છન્દશ્ચદિશ્ચન્દો દૂરોહણં છન્દસ્તન્દ્રં છન્દોઽઅઙ્ગાઙ્ગં છન્દઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ આચ્છત્-સારી રીતે પાપ નિવારક કર્મ છન્દઃ-પ્રકાશ છે, પ્રચ્છત્-પ્રયત્નથી દુષ્ટ
સ્વભાવ દૂર કરાવનાર કર્મ છન્દઃ-ઉત્સાહ છે, સંયત્-સંયમ છન્દઃ-બળ છે, વિચત્-વિવિધ પ્રકારના
યત્નો કરવા છન્દઃ-ધૈર્ય છે, બૃહત્-મહાન બુદ્ધિ છન્દઃ-સ્વતંત્રતા છે, રથન્તરમ્-સમુદ્રરૂપ સંસાર પાર કરનાર
પદાર્થ છન્દઃ-સ્વીકાર યોગ્ય છે, નિકાયઃ-સંયોગનો હેતુ વાયુ છન્દઃ-સ્વીકાર યોગ્ય છે વિવધઃ-વિશેષ
રીતે પદાર્થોના રહેવાનું સ્થાન અન્તરિક્ષ છન્દઃ-પ્રકાશ છે, ગિરઃ-ભોગવવા યોગ્ય અન્ન છન્દઃ-સ્વીકારવા
યોગ્ય છે, ભ્રજઃ-પ્રકાશરૂપ અગ્નિ છન્દઃ-સ્વીકાર યોગ્ય છે, સંસ્તુપ્-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધને શ્રેષ્ઠતાથી
જણાવનારી વાણી છન્દઃ-આનંદકારક છે, અનુષ્ટુપ્-શ્રવણ પછી શાસ્ત્રોને જણાવનારી મનની ક્રિયા છન્દઃ-
ઉપદેશ છે, એવઃ-પ્રાપ્તિ કરવી/કરાવવી છન્દઃ-પ્રયત્ન છે, વરિવઃ-વિદ્વાનોની સેવા છન્દઃ-સ્વીકાર કરવા
યોગ્ય છે, વયઃ-જીવન છન્દઃ-સ્વાધીનતા છે, વયસ્કૃત્-આયુવર્ધક જીવનના સાધન છન્દઃ-ગ્રહણ કરવા
યોગ્ય છે, વિષ્વર્દ્ધાઃ-વિશેષ કરીને જેનાથી ઈર્ષા કરે તે છન્દઃ-પ્રકાશ છે, વિશાલમ્-વિસ્તૃત કર્મ છન્દઃ-
ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, છદિઃ-વિઘ્નોને દૂર કરવા છન્દઃ-સુખદાયક છે, દૂરોહણમ્-દુઃખથી વધનાર છન્દઃ-
બળ છે. તન્દ્રમ્-સ્વતંત્રતા પ્રાપ્ત કરવી છન્દઃ-પ્રકાશ છે અને અઙ્ગાઙ્ગમ્-ગણિત વિદ્યા છન્દઃ-સમ્યક્ સ્થાપન
યોગ્ય છે, તેનો સ્વીકાર કરીને તેના પ્રચાર માટે પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૫)

ભાવાર્થઃ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થદ્વારા નિરંતર પરતંત્રતાનો નાશ અને સ્વતંત્રતાની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ (૫)

રશ્મિનાં સત્યાયં સત્યં જિન્વ પ્રેતિનાં ધર્મીણાં ધર્મીં જિન્વાન્વિત્યા દિવાદિવં
જિન્વ સન્ધિનાન્તરિક્ષેણાન્તરિક્ષં જિન્વ પ્રતિધિનાં પૃથિવ્યા પૃથિવીં જિન્વ વિષ્ટમ્બેન
વૃષ્ટ્યા વૃષ્ટિં જિન્વ પ્રવયાઽહ્વાર્હજિન્વાનુયા રાત્ર્યા રાત્રીં જિન્વોશિજા વસુભ્યો
વસૂઙ્ગિન્વ પ્રકેતેનાદિત્યેભ્યઃઽઆદિત્યાઙ્ગિન્વ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું રશ્મિના-કિરણોથી સત્યાય-વિદ્યમાન સૂર્ય સમાન નિત્ય સુખની તથા સ્થૂલ
પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે સત્યમ્-અવ્યભિચારી કર્મને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, પ્રેતિના-ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત
ધર્મીણા-ન્યાયાચરણથી ધર્મમ્-ધર્મને જિન્વ-જાણ, પ્રાપ્ત કર, અન્વિત્યા-શોધ માટે દિવા-ધર્મના પ્રકાશથી
દિવમ્-સત્યના પ્રકાશને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, સન્ધિના-સંધિરૂપ અન્તરિક્ષેણ-આકાશથી અન્તરિક્ષમ્-અવકાશને
જિન્વ-જાણ, પૃથિવ્યા-ભૂગર્ભવિદ્યાના પ્રતિધિના-સંબંધથી પૃથિવીમ્-ભૂમિને જિન્વ-જાણ, વિષ્ટમ્બેન-
શરીર ધારણ માટે આહારના રસથી તેમજ વૃષ્ટ્યા-વર્ષાની વિદ્યાથી વૃષ્ટિમ્-વર્ષાને જાણ, પ્રવયા-
કાન્તિમાન અહ્વા-દિવસની વિદ્યાથી અહઃ-દિવસને જિન્વ-જાણ, અનુયા-પ્રકાશની પાછળ ચાલનાર રાત્ર્યા-

રાત્રિની વિદ્યાથી રાત્રીમ્-રાત્રિને જિન્વ-જાણ, ઝણિજા-કામનાઓથી વસુભ્યઃ-અગ્નિ વગેરે આઠ વસુઓની વિદ્યાથી વસૂન્-તે અગ્નિ આદિ વસ્તુઓને જિન્વ-જાણ અને પ્રકે તેન-ઉત્તમ વિજ્ઞાન દ્વારા આદિત્યેભ્યઃ-બાર મહિનાઓની વિદ્યાથી આદિત્યાન્-બાર મહિનાઓને જિન્વ-તત્ત્વ સ્વરૂપથી જાણ. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ પદાર્થોના પરીક્ષણો દ્વારા પદાર્થ વિદ્યા જાણવી જોઈએ, તેમ [તેનો] અન્યોને ઉપદેશ પણ કરવો જોઈએ. (૬)

તન્તુના રાયસ્પોષેણ રાયસ્પોષં જિન્વ સંસર્પેણ શ્રુતાય શ્રુતં જિન્વૈડેનૌષધી-
ભિરોષધીર્જિન્વોત્તમેન ત્નૂર્ભિસ્ત્નૂર્જિન્વ વયોધસાધીતેનાધીતં જિન્વાભિજિતા તેજસા
તેજો જિન્વ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું તન્તુના-વિસ્તારયુક્ત રાયઃ-ધનની પોષેણ-પુષ્ટિથી રાયઃ-ધનની પોષમ્-પુષ્ટિને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, સંસર્પેણ-સમ્યક્ પ્રાપ્તિના કારણે શ્રુતાય-સાંભળવા માટે શ્રુતમ્-શાસ્ત્રને સાંભળવા માટે જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, એડેન-અન્નના સંસ્કાર તથા ઔષધીભિઃ-જલ તથા ઔષધિઓની વિદ્યાથી ઔષધીઃ-ઔષધિઓને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, ઉત્તમેન-ઉત્તમકર્મના આચરણ તનૂભિઃ-શુદ્ધ શરીરોથી તનૂઃ-શરીરોને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, વયોધસા-જીવનને ધારણ કરનારી આધીતેન-ધારણશક્તિથી [સારી રીતે ભણીને] આધીતમ્-સર્વત્રથી ધારણ કરનારી વિદ્યાને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર, અભિજિતા-સામે આવેલા શત્રુઓને જીતવા માટે તેજસા-તીક્ષ્ણ-તેજપૂર્ણ કર્મથી તેજઃ-દૃઢતાને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિસ્તૃત પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરીને, સાર્વજનિક હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૭)

પ્રતિપદસિ પ્રતિપદૈ ત્વાનુપદસ્યનુપદૈ ત્વા સમ્પદસિ સમ્પદૈ ત્વા તેજોઽસિ તેજસે
ત્વા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પુરુષાર્થિની વિદુષી સ્ત્રી ! જે કારણે તું પ્રતિપત્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય લક્ષ્મી સમાન અસિ-છે તેથી પ્રતિપદે-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે ત્વા-તને જે અનુપત્-પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય શોભા સમાન અસિ-છે, તે અનુપદે-વિદ્યાધ્યયન પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ત્વા-તને જે તું સંપત્-સંપત્તિ સમાન અસિ-છે, તે સમ્પદે-ઐશ્વર્ય માટે ત્વા-તને જે તું તેજઃ-તેજ સમાન અસિ-છે, તેથી તેજસે-તેજ-ચાતુર્ય પ્રાપ્તિ માટે ત્વા-તને ગ્રહણ કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ સુખોની સિદ્ધિ માટે સમાન ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવવાળા સ્ત્રી-પુરુષો સાથે સ્વયંવર વિવાહ દ્વારા પરસ્પરનો સ્વીકાર કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૮)

ત્રિવૃદસિ ત્રિવૃતૈ ત્વા પ્રવૃદસિ પ્રવૃતૈ ત્વા વિવૃદસિ વિવૃતૈ ત્વા સવૃદસિ સવૃતૈ
ત્વાઽઽક્રમોઽસ્યાક્રમાય ત્વા સંક્રમોઽસિ સંક્રમાય ત્વોત્ક્રમોઽસ્યુત્ક્રમાય
ત્વોત્ક્રાન્તિરસ્યુત્ક્રાન્ત્યૈ ત્વાઽધિપતિનોર્જોર્જૈ જિન્વ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે તું ત્રિવૃત્-સત્વગુણ, રજોગુણ અને તમોગુણથી યુક્ત અવ્યક્ત પ્રકૃતિનો જાણનાર અસિ-છે, તે ત્રિવૃત્-ત્રણે ગુણોના કારણના જ્ઞાન માટે ત્વા-તને, જે તું પ્રવૃત્-જે કાર્યરૂપથી પ્રવૃત્ત સંસારનો જ્ઞાતા અસિ-છે. પ્રવૃત્-તે કાર્યરૂપ સંસારને જાણવા માટે ત્વા-તને, જે તું વિવૃત્-વિવિધ પ્રકારના પ્રવૃત્ત સંસારનો જ્ઞાતા અસિ-છે. વિવૃત્-તે કાર્યરૂપ સંસારને જાણવા માટે ત્વા-તને, જે તું સવૃત્-જે સમાન ધર્મ સાથે વિદ્યમાન પદાર્થોનો જાણનાર અસિ-છે, તે સવૃત્-સાધર્મ્ય પદાર્થોના જ્ઞાન માટે ત્વા-તને, જે તું આક્રમઃ-સારી રીતે પદાર્થોના રહેવાના સ્થાન અન્તરિક્ષને જાણનાર અસિ-છે, તે આક્રમાય-અન્તરિક્ષને જાણવા માટે ત્વા-તને, જે તું સંક્રમઃ-સમ્યક્ પદાર્થોનો જાણનાર અસિ-છે, તે સંક્રમાય-તે પદાર્થના જ્ઞાન માટે ત્વા-તને, જે તું ઉત્ક્રમઃ-ઉપર મેઘમંડલની ગતિનો જાણનાર અસિ-છે, તે ઉત્ક્રમાય-તે મેઘમંડલની ગતિ જાણવા માટે ત્વા-તને તથા હે સ્ત્રી ! જે તું ઉત્ક્રાન્તિઃ-સમ-વિષમ પદાર્થોના ઉલ્લંઘન માટે વિદ્યાની જાણનારી અસિ-છે, તે ઉત્ક્રાન્ત્યૈ-ગતિ [ગમન] વિદ્યાને જાણવા માટે ત્વા-તને હું સર્વ પ્રકારથી ગ્રહણ કરું છું. તે અધિપતિના-પોતાના પતિની સાથે રહીને તું ઋર્જા-પરાક્રમથી ઋર્જમ્-બળને જિન્વ-પ્રાપ્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના વિશેષ જ્ઞાન વિના કોઈ પણ વિદ્વાન બની શકતો નથી. તેથી કાર્યકારણ સમુદાયને સારી રીતે જાણીને તેનો અન્યને ઉપદેશ કરવો જોઈએ.

જેમ અધ્યક્ષની સાથે સેના વિજયને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ પોતાના સ્વામી-પતિની સાથે સ્ત્રી સર્વ દુઃખોને જીતી લે છે. (૯)

રાજ્યસિ પ્રાચી દિગ્વસંવસ્તે દેવાઽઅધિપતયોઽગ્નિર્હેતીનાં પ્રતિધર્તાં ત્રિવૃત્ ।
ત્વા સ્તોમઃ પૃથિવ્યાઽશ્રયત્વાજ્યમુક્થમવ્યથાયૈ સ્તભ્નાતુ રથન્તરઃ સામ
પ્રતિષ્ઠિત્યાઽઅન્તરિક્ષઽઋષયસ્ત્વા પ્રથમજા દેવેષુ દિવો માત્રયા વરિમ્ણા પ્રથન્તુ
વિધર્તાં ચાયમધિપતિશ્ચ તે ત્વા સર્વે સંવિદાના નાકસ્ય પૃષ્ઠે સ્વર્ગે લોકે
યજમાનં ચ સાદયન્તુ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તે-તારો અધિપતિઃ-પાલક પતિ હું-જેમ જેના વસવઃ-અગ્નિ આદિ દેવાઃ-પ્રકાશમાન અધિપતયઃ-અધિષ્ઠાતા છે, તેમ તું પ્રાચી-પૂર્વ દિક્-દિશા સમાન રાજ્ઞી-રાણી અસિ-છે.

જેમ હેતીનામ્-વજ્રાદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રને પ્રતિધર્તાં-પ્રત્યક્ષ ધારણ કરનાર ત્રિવૃત્-વિદ્યુત્, ભૂમિસ્થ અગ્નિ અને સૂર્યરૂપ ત્રણ પ્રકારની વિદ્યમાન સ્તોમઃ-સ્તુતિયુક્ત ગુણો સહિત અગ્નિઃ-મહાવિદ્યુત્ ધારણ કરનારી છે, તેમ ત્વા-તને હું તારો પતિ ધારણ કરું છું.

તું પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર અવ્યથાયૈ-શરીર પીડાના અભાવ માટે ઉક્થમ્-પ્રશંસનીય આજ્યમ્-ઘૃત આદિ પદાર્થોને શ્રયતુ-ધારણ [સેવન] કર, પ્રતિષ્ઠિત્યૈ-પ્રતિષ્ઠા માટે રથન્તરમ્-રથ આદિથી તારનાર સામ-સિદ્ધાન્ત કર્મને સ્તભ્નાતુ-ધારણ કર.

જેમ અન્તરિક્ષે-આકાશમાં દિવઃ-વિદ્યુત્નો માત્રયા-લેશ સંબંધ અને વરિમ્ણા-મહાપુરુષાર્થથી દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં પ્રથમજાઃ-પૂર્વે થયેલા ઋણયઃ-વેદાર્થવિત્ વિદ્વાન્ ત્વા-તને પ્રથન્તુ-શુભગુણોથી વિશાળ બુદ્ધિ યુક્ત કરે.

ચ-અને જેમ અયમ્-એ વિધર્તા-વિવિધ રીતે ધારણકર્તા તે-તારો પતિ તારી સાથે વર્તાવ કરે, તેમ તેની સાથે તું વર્તન કર.

ચ-અને જેમ સર્વે-સર્વ સંવિદાનાઃ-ઉત્તમ વિદ્વાન્ નાકસ્ય-અવિદ્યમાન દુઃખના પૃષ્ઠે-મધ્યમાં સ્વર્ગે-જે સ્વર્ગ અર્થાત્ અત્યંત સુખ પ્રાપ્તિ લોકે-દર્શનીય છે, તેમાં ત્વા-તને ચ-અને યજમાનમ્-તારા પતિને સાદયન્તુ-સ્થાન આપે તેમ તમે બન્ને-સ્ત્રી પુરુષ વર્તન રાખો. (૧૦)

ભાવાર્થ : પૂર્વ દિશા એટલા માટે ઉત્તમ છે, કારણ કે સૂર્ય પ્રથમ ત્યાં ઉદય થાય છે.

જે પૂર્વ દિશાથી વાયુ વહે છે-આવે છે, તે કોઈ દેશ-સ્થાનમાં વર્ષા ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે.

એ અગ્નિ સર્વનો ધારણકર્તા છે અને વાયુના કારણે વૃદ્ધિ પામે છે, જે તેને જાણે છે, તે સંસારમાં સુખનું સ્થાપન કરે છે. (૧૦)

વિરાડ્સિ દક્ષિણા દિગુદ્રાસ્તે દેવાઽધિપતયઽન્દ્રો હેતીનાં પ્રતિધર્તાપંચ-
દશસ્ત્વા સ્તોમઃ પૃથિવ્યાશ્શ્રયતુ પ્રઽડગમુક્થમવ્યથાયૈ સ્તભ્નાતુ બૃહત્સામ
પ્રતિષ્ઠિત્યાઽઅન્તરિક્ષઽઋષયસ્ત્વા પ્રથમજા દેવેષુ દિવો માત્રયા વરિમ્ણા પ્રથન્તુ
વિધર્તા ચાયમધિપતિશ્ચ તે ત્વા સર્વે સંવિદાના નાકસ્ય પૃષ્ઠે સ્વર્ગે લોકે
યજમાનં ચ સાદયન્તુ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું વિરાટ્-વિવિધ પદાર્થોથી પ્રકાશમાન દક્ષિણા-દિક્-દક્ષિણ દિશા સમાન અસિ-
છે, જે તે-તારો પતિ સ્દાઃ-વાયુ દેવાઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત વાયુ અધિપતયઃ-અધિષ્ઠાતાઓની સમાન છે,
હેતીનામ્-વજ્રોના પ્રતિધર્તા-નિશ્ચિત રીતે ધારણ કરનાર પુરુષ, પચ્ચદશઃ-પંદર સંખ્યાના પૂરક સ્તોમઃ-સ્તુતિના
સાધક ઋચ્યાઓના અર્થોના ભાગી તથા ઈન્દ્રઃ-સૂર્ય ત્વા-તારું પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર શ્રયતુ-સેવન કરે-સેવા
કરો, અવ્યથાયૈ-માનસ ભયથી રહિત તારા માટે પ્રઽડગમ્-કથનીય ઉક્થમ્-ઉપદેશ યોગ્ય વચનને સ્તભ્નાતુ-
સ્થિર કરે, તથા પ્રતિષ્ઠિત્યૈ-પ્રતિષ્ઠા માટે બૃહત્-અનેક અર્થયુક્ત સામ-સામવેદને સ્થિર કરે.

ચ-અને જેમ અન્તરિક્ષે-આકાશમાં દેવેષુ-કામના યોગ્ય પદાર્થોમાં પ્રથમજાઃ-પૂર્વ ઉત્પન્ન થયેલા
ઋણયઃ-જ્ઞાનના હેતુ પ્રાણ, દિવઃ-પ્રકાશકારક અગ્નિના માત્રયા-ઓછા ભાગ અને વરિમ્ણા-અધિકતાથી
યુક્ત છે, તેમ વિદ્વાનો ત્વા-તને પ્રથન્તુ-ઉપદેશ કરે-પ્રસિદ્ધ કરે.

જેમ વિધર્તા-વિવિધ પ્રકારના આકર્ષણથી પૃથિવી આદિ લોકોનું ધારણ ચ-તથા પોષણ કરનાર
અધિપતિઃ-સર્વ પ્રકાશક પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠ સૂર્ય ત્વા-તને પુષ્ટ કરે, તેમ સંવિદાનાઃ-સમ્યક્ વિચારશીલ
વિદ્વાનો છે તે-તેઓ સર્વે-સર્વ નાકસ્ય-દુઃખરહિત આકાશના પૃષ્ઠે-પૃષ્ઠ ભાગમાં સ્વર્ગે-સુખકારક લોકે-

જાણવા યોગ્ય દેશમાં ત્વા-તને ચ-અને યજમાનમ્-યજ્ઞવિદ્યા જાણનાર પુરુષને સાદયન્તુ-સ્થાપિત કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વાયુની સાથે વિદ્યમાન સૂર્યને અને તેની વિદ્યાનું જ્ઞાન કરાવનાર વિદ્વાનનો આશ્રય કરીને તે વિદ્યાનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યાનું બનીને અન્યોને અધ્યયન કરાવે. (૧૧)

સુમ્રાડસિ પ્રતીચી દિગાદિત્યાસ્તૈ દેવાઽઅધિપતયો વરુણો હેતીનાં પ્રતિધૃત્તાં સપ્તદશસ્ત્વા સ્તોમઃ પૃથિવ્યાઽશ્રયતુ મરુત્વતીયમુક્થમવ્યથાયૈ સ્તભ્નાતુ વૈરુપ્ સામ પ્રતિષ્ઠિત્યાઽઅન્તરિક્ષઽઋષયસ્ત્વા પ્રથમજા દેવેષુ દિવો માત્રયા વરિમ્ણા પ્રથન્તુ વિધૃત્તાં ચાયમધિપતિશ્ચ તે ત્વા સર્વે સંવિદાના નાકસ્ય પૃષ્ઠે સ્વર્ગે લોકે યજમાનં ચ સાદયન્તુ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું પ્રતીચી-પશ્ચિમ દિક્-દિશાની સમાન સમ્રાટ્-સમ્યક્ પ્રકાશમાન અસિ-છે, તે તે-તારો પતિ આદિત્યાઃ-વિદ્યુત્થી યુક્ત પ્રાણવાયુ દેવાઃ-દિવ્ય સુખદાતા અધિપતયઃ-સ્વામીજનો સમાન અયમ્-આ સપ્તદશઃ-સત્તરમાં ચ-અને સ્તોમઃ-સ્તુતિ યોગ્ય વસ્તુઃ-જલ સમુદાય સમાન હેતીનામ્-વિદ્યુત્ને પ્રતિધૃત્તાં-ધારણ કરનાર અધિપતિઃ-સ્વામી ત્વા-તારી પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર શ્રયતુ-સેવા કરે, અવ્યથાયૈ-સ્વરૂપથી અચલ તારા માટે મસ્ત્વતીયમ્-અનેક વ્યાખ્યાતા મનુષ્યોમાં વિદ્યમાન ઉક્થમ્-કથન યોગ્ય વેદવચન તથા પ્રતિષ્ઠિત્યૈ-પ્રતિષ્ઠા માટે વૈરુપ્મ્-વિવિધ રૂપોની વ્યાખ્યાથી યુક્ત સામ-સામવેદને સ્તભ્નાતુ-શ્રહણ કરે.

અને જે દિવઃ-પ્રકાશના માત્રયા-ભાગથી વરિમ્ણા-અધિકતાથી યુક્ત અન્તરિક્ષે-આકાશમાં પ્રથમજાઃ-વિસ્તાર કારણથી ઉત્પન્ન થયેલ ઋષયઃ-ગતિયુક્ત વાયુ દેવેષુ-દાનના હેતુ અવયવોમાં વિદ્યમાન છે, તેમ ત્વા-તને વિદ્વાનો પ્રથન્તુ-પ્રસિદ્ધ ઉપદેશ કરે.

જેમ વિધૃત્તાં-વિવિધ રત્નોને ધારણ કરનાર ચ-એ પણ અધિપતિઃ-અધ્યક્ષ સ્વામી રાજા-પ્રજાઓને સુખમાં રાખે છે, તેમ તે-તારા મધ્યમાં સર્વે-સર્વ સંવિદાનાઃ-સમ્યક્ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થયેલ ત્વા-તને ચ-અને યજમાનમ્-વિદ્વાનોના સેવક પુરુષને નાકસ્ય-દુઃખરહિત દેશના પૃષ્ઠે-એક ભાગમાં સ્વર્ગે-સુખકારક લોકે-દર્શનીય સ્થાનમાં સાદયન્તુ-સ્થાપિત કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો પશ્ચિમ દિશાનું તથા તે દિશામાં રહેલા પદાર્થોનું અન્યોને જ્ઞાન કરાવે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ પોતાના સંતાનોને વિદ્યાથી અલંકૃત કરે. (૧૨)

સ્વરાડસ્યુદીચી દિઙ્ મરુતસ્તે દેવાઽઅધિપતયઃ સોમો હેતીનાં પ્રતિધૃત્તૈઃ કવિઃશસ્ત્વા સ્તોમઃ પૃથિવ્યાઽશ્રયતુ નિષ્કૈવલ્યમુક્થમવ્યથાયૈ સ્તભ્નાતુ વૈરાજઃસામ પ્રતિષ્ઠિત્યાઽઅન્તરિક્ષઽઋષયસ્ત્વા પ્રથમજા દેવેષુ દિવો માત્રયા

વરિમ્ણા પ્રથન્તુ વિધર્તા ચાયમધિપતિશ્ચ તે ત્વા સર્વે^૧ સંવિદાના નાકસ્ય પૃષ્ઠે
સ્વર્ગે લોકે યર્જમાનં ચ સાદયન્તુ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ સ્વરાટ્-સ્વયં પ્રકાશમાન ડ્વીચી-ઉત્તર દિક્-દિશા અસિ-છે, તેવો તે-તારો પતિ હોય.

જે દિશાના મસ્તઃ-વાયુ દેવાઃ-દિવ્યરૂપ અધિપતયઃ-અધિષ્ઠાતા છે, તેની સમાન એકવિંશઃ-એકવીસમા સ્તોમઃ-સ્તુતિના સાધક સોમઃ-ચન્દ્રમા તથા હેતીનામ્-વજ્ર સમાન વિદ્યમાન કિરણોને પ્રતિધર્તા-ધારણ કરનાર પુરુષ ત્વા-તારી પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર શ્રયતુ-સેવા કરે. અવ્યથાયૈ-ઈન્દ્રિયોના ભયના અભાવ માટે નિષ્કેવલ્યમ્-જેમાં માત્ર એક સ્વરૂપનું વર્ણન હોય તે ઉક્થમ્-ઉપદેશ યોગ્ય વેદભાગ તથા પ્રતિષ્ઠિત્યૈ-પ્રતિષ્ઠા માટે વૈરાજમ્-વિરાટ રૂપનો પ્રતિપાદક સામ-સામવેદનો ભાગ સ્તભ્નાતુ-ગ્રહણ કરે.

ચ-અને જેમ તારા મધ્યમાં અન્તરિક્ષે-અવકાશમાં રહેલ દેવેષુ-ઈન્દ્રિયોમાં પ્રથમજાઃ-મુખ્ય પ્રસિદ્ધ દિવઃ-જ્ઞાનના માત્રયા-ભાગોથી વરિમ્ણા-અધિકતાથી યુક્ત વિદ્યમાન ઋણયઃ-બળવાન પ્રાણ છે, તેમ અયમ્-એ પ્રાણોના વિધર્તા-વિવિધ શીતને ધારણકર્તા ચ-અને અધિપતિઃ-અધિષ્ઠાતા છે, તે-તે સર્વે-સર્વ આ વિષયમાં સંવિદાનાઃ-સમ્યક્ બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ ત્વા-તને પ્રથન્તુ-પ્રસિદ્ધ કરે, અને નાકસ્ય-ઉત્તમ સુખરૂપ લોકના પૃષ્ઠે-ઉપર સ્વર્ગે-સુખદાયક લોકે-લોકમાં ત્વા-તને ચ-અને યર્જમાનમ્-યજમાન પુરુષને સાદયન્તુ-સ્થિત કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો સોમ અને પ્રાણોને આધાર રહિત જાણીને, તેનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને અધ્યાપિકાઓ શિષ્યો અને શિષ્યાઓને, વિદ્યા-ગ્રહણ કરવા માટે નિયુક્ત કરીને આનંદિત કરે. (૧૩)

અધિપત્યસિ બૃહતી દિગ્વિશ્વે તે દેવાઃઅધિપતયો બૃહસ્પતિર્હેતીનાં પ્રતિધર્તા
ત્રિણવત્રયસ્ત્રિશૌ ત્વા સ્તોમૌ પૃથિવ્યાઃશ્રયતાં વૈશ્વદેવાગ્નિમારુતેઽુક્થેઽ-
અવ્યથાયૈ સ્તભ્નીતાઃ શાક્વરૈવતે સામની પ્રતિષ્ઠિત્યાઽન્તરિક્ષુઽઋષયસ્ત્વા
પ્રથમજા દેવેષુ દિવો માત્રયા વરિમ્ણા પ્રથન્તુ વિધર્તા ચાયમધિપતિશ્ચ તે ત્વા
સર્વે^૧ સંવિદાના નાકસ્ય પૃષ્ઠે સ્વર્ગે લોકે યર્જમાનં ચ સાદયન્તુ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું બૃહતી-મહાન અધિપત્ની-સર્વ દિશાઓની ઉપર વિદ્યમાન દિક્-દિશાની સમાન અસિ-છે તે તે-તારો પતિ વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-પ્રકાશક સૂર્યાદિ પદાર્થ અધિપતયઃ-અધિષ્ઠાતા છે, તેની સમાન જે બૃહસ્પતિઃ-વિશ્વના રક્ષક હેતીનામ્-વૃદ્ધોને પ્રતિધર્તા-પ્રતીતિની સાથે ધારણ કરનાર સૂર્ય સમાન તારો પતિ ત્વા-તને ચ-અને ત્રિણવત્રયસ્ત્રિશૌ-૩ × ૯ = ૨૭ + ૩૩ = ૬૦ સાઠ સ્તોમો-સ્તુતિના સાધન પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી-ભૂમિ પર અવ્યથાયૈ-પીડા રહિતતા માટે વૈશ્વદેવાગ્નિમાસ્તે-સર્વ વિદ્વાન

અને અગ્નિ મારુતની વ્યાખ્યા કરનાર **ઊક્થે**-ઉપદેશ યોગ્ય વેદના બે ભાગોનો **શ્રયતામ્**-આશ્રય કરે **ચ**-અને જેમ **પ્રતિષ્ઠિત્યૈ**-પ્રતિષ્ઠા માટે **શાક્વરૈવતે**-શકવરી અને રેવતી છંદથી કહેલ અર્થોથી **સામની**-સામવેદના બે ભાગોની **સ્તઙ્નીતામ્**-સંગતિ કરો.

જેમ તે **અન્તરિક્ષે**-અવકાશમાં **પ્રથમજાઃ**-આદિમાં ઉત્પન્ન **ઋણયઃ**-ધનંજય આદિ સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ વાયુરૂપ પ્રાણ **દેવેષુ**-દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થોમાં **દિવઃ**-પ્રકાશની **માત્રયા**-ભાગ અને **વરિમ્ણા**-અધિકતાથી **ત્વા**-તને પ્રસિદ્ધ કરે છે, તેનો મનુષ્યો **પ્રથન્તુ**-ઉપદેશ-પ્રખ્યાત કરે.

જેમ **અયમ્**-એ **અધિપતિઃ**-સ્વામી **વિધર્તા**-વિવિધ રીતે સર્વ ધારણ કરનાર સૂર્ય છે, જેમ **સંવિદાનાઃ**-સમ્યક્ સત્ય પ્રતિજ્ઞાયુક્ત વિદ્વાન્ **ત્વા**-તને **નાકસ્ય**-પૃષ્ઠે-સુખદાયક દેશના ઉપર **સ્વર્ગે**-સુખરૂપ લોકે-સ્થાનમાં સ્થાપિત કરે છે, તે-તે **સર્વે**-સર્વ **યજમાનમ્**-તારા પુરુષ-પતિ **ચ**-અને તને **સાદયન્તુ**-સ્થિત કરે, તેમ તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ વર્તન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ દિશાઓની મધ્યમાં રહેલ દિશા સર્વથી મોટી છે, તેમ સર્વ ગુણોથી શરીર અને આત્માનું બળ અધિક-મહાન છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૪)

અયં પુરો હરિકેશઃ સૂર્યૈરશ્મિસ્તસ્ય રથગૃત્સશ્ચ રથૌજાશ્ચ સેનાનીગ્રામ્ણયૌ ।
પુઙ્ગિકસ્થલા ચ ક્રતુસ્થલા ચાપ્સરસૌ । દ્વક્ષ્ણવઃ પશવો હેતિઃ પૌરુષેયો વ્ધઃ
પ્રહેતિસ્તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ
તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : જે **અયમ્**-એ **પુરઃ**-પૂર્વ સમયમાં વિદ્યમાન **હરિકેશઃ**-હરિત વર્ણના કેશ સમાન હરણશીલ અને ક્લેશકારી તાપથી યુક્ત **સૂર્યરશ્મિઃ**-સૂર્યના કિરણો છે, **તસ્ય**-તેના **રથગૃત્સઃ**-બુદ્ધિમાન સારથી **ચ**-અને **રથૌજાઃ**-રથચાલક વાહન **ચ**-તે બન્ને તથા **સેનાનીગ્રામ્ણયૌ**-સેનાપતિ તથા ગામના અધ્યક્ષ સમાન અન્ય પ્રકારના કિરણો પણ હોય છે, તે કિરણોની **પુઙ્ગિકસ્થલા**-સામાન્ય પ્રધાન દિશા **ચ**-અને **કૃતુસ્થલા**-પ્રજ્ઞા અને કર્મને બતાવનારી ઉપદિશા **ચ**-એ બન્ને **અપ્સરસૌ**-પ્રાણોમાં ગમન કરનારી અપ્સરા કહેવાય છે.

જે **દ્વક્ષ્ણવઃ**-માંસ અને ઘાસ ખાનારા વાધ આદિ **પશવઃ**-હાનિકાક પશુઓ છે તેની ઉપર **હેતિઃ**-વિદ્યુત્ પડે.

જે **પૌસ્ત્રેયઃ**-પુરુષોના સમૂહને **વ્ધઃ**-મારનાર અને **પ્રહેતિઃ**-ઉત્તમ વજ્ર સમાન નાશ કરનાર છે તેમને-તેના માટે **નમઃ**-વજ્રનો પ્રહાર **અસ્તુ**-થાય.

જે રાજા આદિ સભ્ય રાજપુરુષો છે તે-તેઓ તે પશુઓથી **નઃ**-અમારી **અવન્તુ**-રક્ષા કરે તે-તેઓ **નઃ**-અમને **મૃડયન્તુ**-સુખી કરે.

તે-તે રક્ષક અમે **યમ્**-જે હિંસકથી **દ્વિષ્મઃ**-વિરોધ કરીએ **ચ**-અને **યઃ**-જે હિંસક **નઃ**-અમારો **દ્વેષ્ટિ**-વિરોધ કરે **તમ્**-તેને અમે **એષામ્**-તે વ્યાઘ્રાદિ પશુઓના **જમ્ભે**-મુખમાં **દધ્મઃ**-સ્થાપિત કરીએ છીએ.

(૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના કિરણો હરિત-લીલા રંગના છે, તેની સાથે લાલ, પીળા આદિ કિરણો પણ રહે છે, તેમ સેનાની અને ગ્રામીણ પુરુષો વર્તાવ કરીને રક્ષક બને.

જે રાજા આદિ જન સિંહ આદિ હિંસક પશુઓને રોકીને ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સુશિક્ષાથી અમને-સર્વ મનુષ્યોને અધર્માચરણથી રોકીને ધર્મયુક્ત કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને વિરોધીઓનું નિવારણ કરે. (૧૫)

**અયં દક્ષિણા વિશ્વર્કર્મા તસ્ય રથસ્વનશ્ચ રથેચિત્રશ્ચ સેનાનીગ્રામણ્યૌ । મેનકા
ચં સહજન્યા ચાપ્સરસૌ યાતુધાના હેતી રક્ષાંશ્ચિ પ્રહેતિસ્તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે
નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૧૬ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અયમ્-એ વિશ્વર્કર્મા-સર્વ ચેષ્ટારૂપ કર્મોનું કારણ વાયુ દક્ષિણા-દક્ષિણ દિશાથી વહે છે, તસ્ય-તે વાયુ રથસ્વન:-રથ સમાન શબ્દયુક્ત ચ-અને રથેચિત્ર:-રમણીય રથમાં ચિહ્નયુક્ત આશ્ચર્ય કાર્યો કરનાર ચ-એ બન્ને સેનાનીગ્રામણ્યૌ-સેનાપતિ અને ગ્રામાધ્યક્ષની સમાન વિદ્યમાન મેનકા-જેનાથી મનન કરવામાં આવે તે ચ-અને સહજન્યા-એક સાથે ઉત્પન્ન થયેલી ચ-એ બન્ને અપ્સરસૌ-અન્તરિક્ષમાં રહેનારી કિરણો વગેરે અપ્સરા છે.

જે યાતુધાના-પ્રજાને પીડા આપનાર છે, તેના ઉપર હેતિ:-વજ્ર જે રક્ષાંસિ-દુષ્ટ કર્મ કરનાર છે તેના ઉપર પ્રહેતિ:-ઉત્તમ વજ્ર સમાન અસ્ત્ર પડે, તેભ્ય:-તે પ્રજાપીડક આદિ માટે નમ:-વજ્રનો પ્રહાર અસ્તુ-થાય એમ કરીને જે ન્યાયાધીશ શિક્ષક છે તે-તે ન:-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તે ન:-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે.

તે-તે અમે યમ્-જે દુષ્ટથી દ્વિષ્મ:-દ્વેષ કરીએ ચ-અને ય:-જે દુષ્ટ ન:-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે તમ્-તેને ણ્ણામ્-તે વાયુઓના જમ્ભે-વ્યાઘ્રની સમાન મુખમાં દધ્મ:-ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને મધ્યસ્થ વાયુથી ઉપયોગ કરવો જાણે છે, તે શત્રુઓનું નિવારણ કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે. (૧૬)

**અયં પ્શ્ચાદ્ વિશ્વવ્યચાસ્તસ્ય રથપ્રોત્શ્ચાસમરથશ્ચ સેનાનીગ્રામણ્યૌ ।
પ્રમ્લોચન્તી ચાનુમ્લોચન્તી ચાપ્સરસૌ । વ્યાઘ્રા હેતિઃ સ્પર્ષાઃ પ્રહેતિસ્તેભ્યો નમોઽસ્તુ
તે નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૧૭ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અયમ્-એ પશ્ચાત્-પાછળ વિદ્યમાન વિશ્વવ્યચા:-વિશ્વમાં વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ રૂપી અગ્નિ છે, તસ્ય-તેના સેનાનીગ્રામણ્યૌ-સેનાપતિ અને ગામપતિ સમાન રથપ્રોત:-રમણીય તેજ

સમૂહથી વ્યાપ્ત ચ-અને અસમરથ:-જેના સમાન બીજો રથ ન હોય તે અદ્વિતીય રથ તે ચ-એ બન્ને પ્રમ્લોચન્તી-સારી રીતે સર્વ ઔષધિ આદિ પદાર્થોને શુષ્ક કરાવનાર ચ-તથા અનુમ્લોચન્તી-પશ્ચાત્ જ્ઞાનનું કારણ પ્રકાશ ચ-એ બન્ને અપ્સરસૌ-ક્રિયાકારક આકાશસ્થ કિરણો છે.

જેમ હેતિ:-સાધારણ વજ્ર સમાન પ્રહેતિ:-ઉત્તમ વજ્ર સમાન વ્યાઘ્રા:-સિંહો તથા સર્પા:-સર્પોની સમાન પ્રાણીઓના દુઃખદાયી જીવ છે તેભ્ય:-તેના માટે નમ:-વજ્ર પ્રહાર અસ્તુ-થાય.

જે પૂર્વોક્ત તેનાથી રક્ષા કરનાર છે તે-તે ન:-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તે ન:-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે.

તે-તે અમે યમ્-જેનો દ્વિષ્મ:-દ્વેષ કરીએ, ચ-અને ય:-જે દુષ્ટ ન:-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે, જેને અમે ણ્ણામ્-તે સિંહાદિના જમ્ભે-મુખમાં દધ્મ:-સ્થાપિત કરીએ છીએ, તમ્-તેને તે રક્ષક લોકો પણ સિંહાદિના મુખમાં સ્થાપિત કરે. (૧૭)

ભાવાર્થ : આ વર્ષાનું શેષ વર્ષાન છે, આ ઋતુમાં મનુષ્યોએ યોગ્ય આહાર-વિહાર કરવો જોઈએ. (૧૭)

**અયમુત્તરાત્ સંયદ્વસુસ્તસ્ય તાક્ષ્યશ્ચારિષ્ટનેમિશ્ચ સેનાનીગ્રામણ્યૌ । વિશ્વાચીં
ચ ઘૃતાચીં ચાપ્સરસાવાપૌં હેતિર્વાતઃ પ્રહેતિસ્તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે નોઽવન્તુ તે નો
મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૧૮ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અયમ્-આ ઉત્તરાત્-ઉત્તર દિશાથી સંયદ્વસુ:-યજ્ઞની સંગતિ કરનાર સમાન શરદઋતુ છે, તસ્ય-તેના સેનાનીગ્રામણ્યૌ-સેનાપતિ અને ગ્રામ અધ્યક્ષ સમાન તાક્ષ્ય:-તીક્ષ્ણ તેજને પ્રાપ્ત કરાવનાર આસો ચ-અને અરિષ્ટનેમિ:-દુઃખોને દૂર કરનાર કારતક ચ-એ બન્ને વિશ્વાચી-સર્વ જગતમાં વ્યાપક ચ-અને ઘૃતાચી-ધી અને જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી દીપ્તિરૂપ ચ-એ બન્ને અપ્સરસૌ-પ્રાણોની ગતિ છે.

જેમાં આપ:-જલ હેતિ:-વૃદ્ધિની સમાન વર્તાવ કરનાર, વાત:-પ્રિયવચન પ્રહેતિ:-અત્યંત વર્ધકની સમાન આનંદદાયક છે, એ વાયુનું જે લોકો યુક્તિથી સેવન કરે છે તેભ્ય:-તેના માટે નમ:-નમસ્કાર અસ્તુ-છે. તે-તેઓ ન:-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તેઓ ન:-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે.

તે-તે રક્ષક અમે યમ્-જેનો દ્વિષ્મ:-દ્વેષ કરીએ ચ-અને ય:-જે ન:-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે તમ્-તેને ણ્ણામ્-એ જલ અને વાયુના જમ્ભે-દુઃખદાયી ગુણરૂપ મુખમાં દધ્મ:-સ્થાપિત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : આ શરદઋતુની શેષ વ્યાખ્યા છે. આ ઋતુમાં પણ મનુષ્યોએ યુક્તિપૂર્વક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૧૮)

અયમુપર્યર્વાગ્વસુતસ્ય સેનજિચ્ચ સુષેણશ્ચ સેનાનીગ્રામણ્યૌ । ઉર્વશીં ચ

पूर्वचित्तिश्चाप्सरसाववस्फूर्जन् हेतिर्विद्युत्प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽस्तु ते नोऽवन्तु ते
नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमैषां जम्भै दध्मः ॥ १९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અયમ્-આ ઉપરિ-ઉપર વિદ્યમાન અર્વાંગ્વસુઃ-વર્ષા પછી ધન-વાદળનો હેતુ હેમન્ત ઋતુ છે, તસ્ય-તેના સેનજિત્-સેનાને જીતનાર ચ-અને સુષેણઃ-સુંદર સેનાપતિ ચ-એ બન્ને સેનાનીગ્રામણ્યૌ-સેનાપતિ અને ગ્રામ અધ્યક્ષની સમાન વિદ્યમાન માગસર અને પોષ મહિના ઝર્વશી-અધિક ખાવા માટે આન્તર દીપ્તિ ચ-અને પૂર્વચિત્તિઃ-આદિ જ્ઞાન માટે ચ-એ બન્ને અપ્સરસૌ-પ્રાણોમાં વિદ્યમાન ગતિઓ છે, અવસ્ફૂર્જન્-ભયંકર ધોષ કરનાર હેતિઃ-વજ્રની સમાન વિદ્યુત્-વિદ્યુત્ને ચલાવનાર અને પ્રહેતિઃ-ઉત્તમ વજ્રની સમાન રક્ષક પ્રાણી છે, તેભ્યઃ-તેના માટે નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થો અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય તે-તેઓ નઃ-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે તે-તેઓ નઃ-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે.

તે-તે અમે યમ્-જે દુષ્ટોનો દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ ચ-અને યઃ-જે નઃ-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે તમ્-તેને અમે ઇષામ્-એ હિંસક પ્રાણીઓના જમ્ભે-મુખમાં દધ્મઃ-સ્થાપિત કરીએ, તેમ તમે પણ સ્થાપિત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : આ પણ હેમન્ત ઋતુની શોષ વ્યાખ્યા છે, આ ઋતુનું મનુષ્યો યુક્તિપૂર્વક સેવન કરીને બળવાન બને. (૧૯)

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ।

अपांश्च रेतांश्चसि जिन्वति ॥ २० ॥

પદાર્થ : જેમ હેમન્ત ઋતુમાં અયમ્-એ પ્રસિદ્ધ અગ્નિઃ-અગ્નિ દિવઃ-પ્રકાશ અને પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિની મધ્યમાં મૂર્દ્ધા-શિર સમાન સૂર્યરૂપથી વિદ્યમાન કકુત્પતિઃ-દિશાઓના રક્ષક બનીને અપામ્-પ્રાણોના રેતાંસિ-પરાક્રમને જિન્વતિ-પૂર્ણરૂપથી તૃપ્ત કરે છે [બળની વૃદ્ધિ કરે છે], તેમ મનુષ્યોએ બળવાન બનવું જોઈએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુક્તિપૂર્વક જઠરાગ્નિ પ્રદીપ્ત કરી-વૃદ્ધિ કરીને, સંયમપૂર્વક આહાર-વિહાર કરીને નિરંતર બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

अयमग्निः सहस्त्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः ।

मूर्धा कवी रयीणाम् ॥ २१ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો અયમ્-આ અગ્નિઃ-હેમન્ત ઋતુમાં વિદ્યમાન સહસ્ત્રિણઃ-ઉત્તમ અસંખ્ય પદાર્થોથી યુક્ત તથા શતિનઃ-પ્રશસ્ત ગુણોથી અનેક વિદ્યમાન પુરુષના, વાજસ્ય-અન્ન તથા રયીણામ્-ધનોના પતિઃ-રક્ષક મૂર્દ્ધા-ઉત્તમ અંગ સમાન કવિઃ-સમર્થ છે, તેમ તમે પણ બનો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યા અને યુક્તિથી સેવન કરેલ અગ્નિ પુષ્કળ ધન-ધાન્ય પ્રદાન કરે છે, તેમ સેવન

કરેલ પુરુષાર્થ મનુષ્યોને ઐશ્વર્યવાન બનાવે છે. (૨૧)

ત્વામંગ્ને પુષ્કરાદધ્યર્થર્વા નિરમન્થત । મૂર્ધ્નો વિશ્વસ્ય વાઘતઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ અથર્વા-રક્ષક વાઘતઃ-ઉત્તમ શિક્ષિત વાણીથી અવિદ્યાનો નાશ કરનાર બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ પુરુષ પુષ્કરાત્-અન્તરિક્ષના અધિ-મધ્યમાં તથા મૂર્ધ્નઃ-શિર સમાન વિદ્યમાન વિશ્વસ્ય-સંપૂર્ણ જગતના મધ્ય અગ્નિને નિરમન્થત-નિરંતર મંથન કરીને ગ્રહણ કરે છે, તેમ ત્વામ્-તમને પણ બોધ કરું છું-સમજાવું છું. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યાનોના અનુકરણ દ્વારા આકાશ અને પૃથિવીથી વિદ્યુત્તું ગ્રહણ કરીને આશ્ચર્યયુક્ત કર્મોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૨૨)

ભુવો યજ્ઞસ્ય રજસશ્ચ નેતા યત્રા નિયુદ્ધિઃ સચસે શિવાભિઃ ।

દિવિ મૂર્ધાનં દધિષે સ્વર્ષા જિહ્વામંગ્ને ચકૃષે હવ્યવાહમ્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ આ પ્રત્યક્ષ અગ્નિ નિયુદ્ધિઃ-સંયોગ-વિભાગ કરનારી ક્રિયા તથા શિવાભિઃ-મંગલકારી દીપ્તિઓની સાથે વિદ્યમાન ભુવઃ-પ્રકટ થયેલ યજ્ઞસ્ય-કાર્યસાધક સંગત વ્યવહાર ચ-અને રજસઃ-લોકસમૂહને નેતા-આકર્ષણ કરીને સંયુક્ત કરાવે છે, યત્ર-જે દિવિ-પ્રકાશમાન પોતાના સ્વરૂપમાં મૂર્ધાનમ્-ઉત્તમ અંગ-શિર સમાન વિદ્યમાન સૂર્યને ધારણ કરે છે, હવ્યવાહમ્-આદાન-પ્રદાન કરવા યોગ્ય રસોને પ્રાપ્ત કરાવનારી સ્વર્ષામ્-સુખદાયક જિહ્વામ્-વાણીને ચકૃષે-પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ તું શુભ ગુણોની સાથે સચસે-યુક્ત કરે છે અને વિદ્યાઓને દધિષે-ધારણ કરે છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ ઈશ્વર દ્વારા નિયુક્ત કરેલ સર્વ જગતને સુખકારી બને છે, તેમ વિદ્યાના ગ્રહણ અધ્યાપકો સર્વ મનુષ્યોને સુખકારી બને છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૨૩)

અબોધ્યગ્નિઃ સમિધા જનાનાં પ્રતિ ધેનુર્મિવાયતીમુષાસમ્ ।

યજ્ઞાઙ્ઙવ પ્ર વ્યામુજ્જિહાનાઃ પ્ર ભાનવઃ સિસ્ત્રતે નાકમચ્છ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સમિધા-સમિધા વગેરે પ્રજ્વલિત કરવાના સાધનોથી આ અગ્નિઃ-અગ્નિ અબોધિ-પ્રકાશિત-પ્રજ્વલિત થાય છે, આયતીમ્-પ્રાપ્ત થનારી ઊષાસમ્-પ્રભાત સમયના પ્રતિ-સમીપ જનાનામ્-મનુષ્યોની ધેનુર્મિવ-દૂધ આપનારી ગાય સમાન છે.

જે અગ્નિથી યજ્ઞા ઙ્ઙવ-મહાન ધાર્મિક જનોની સમાન પ્ર-ઉત્તમ-ઉત્કૃષ્ટ વ્યામ્-વ્યાપક સુખની નીતિને ઊજ્જિહાનાઃ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરતાં પ્ર-ઉત્તમ ભાનવઃ-કિરણ નાકમ્-સુખને અચ્છ-સારી રીતે સિસ્ત્રતે-પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેને તમે પણ સુખ પ્રાપ્તિ માટે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેમ દૂધ આપનારી સદ્યપ્રસૂતા-નવી વિવાયેલી ગાયની યાકરી કરવાથી દૂધ આદિથી પ્રાણીઓને સુખી કરે છે; જેમ આપ્ત વિદ્વાન વિદ્યાદાન દ્વારા અવિદ્યાનું નિવારણ કરીને મનુષ્યોની ઉન્નતિ

કરે છે, તેમજ એ અગ્નિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૪)

અવોચામ કવયે મેઘ્યાય વચો વન્દારુ વૃષભાય વૃષ્ણો ।

ગવિષ્ઠિરો નમસા સ્તોમમગ્નૌ દિવીવ રુક્મમુરુવ્યજ્વમશ્રેત્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : અમે જેમ ગવિષ્ઠિર:-કિરણોમાં રહેનારી વિદ્યુત્ દિવીવ-સૂર્યના પ્રકાશની સમાન ઉચ્ચંચમ્-વિશેષ રીતે અનેક પદાર્થોમાં ગમનશીલ સ્વમ્-સૂર્યનો અશ્રેત્-આશ્રય છે, તેમ મેઘ્યાય-સર્વ શુભ લક્ષણોથી યુક્ત, પવિત્ર વૃષભાય-બળવાન વૃષ્ણો-વર્ષાકારક કવયે-બુદ્ધિમાન માટે વન્દારુ-પ્રશંસાયોગ્ય વચ:-વચનનો તથા અગ્નૌ-જઠરાગ્નિમાં નમસા-અન્નાદિથી સ્તોમમ્-પ્રશસ્ત કાર્યોનો અવોચામ-ઉપદેશ કરે. (૨૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સુશીલ અને પવિત્ર બુદ્ધિવાળા વિદ્યાર્થીઓ માટે પરમ પ્રયત્નથી વિદ્યા પ્રદાન કરવી જોઈએ; જેથી તે વિદ્યા ભણીને, સૂર્યના પ્રકાશમાં ઘટ-ઘડો પટ-વસ્ત્ર આદિને જોવા સમાન સર્વ પદાર્થોને સારી રીતે જાણી શકે. (૨૫)

અયમિહ પ્રથમો ધાયિ ધાતૃભિર્હોતા યજિષ્ઠોઽઅધ્વરેષ્વીડ્યઃ ।

યમજ્વવાનો ભૃગવો વિરુચુર્વનૈષુ ચિત્રં વિશ્વં વિશેવિશે ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જે ઇહ-આ જગતમાં અધ્વરેષુ-રક્ષાયોગ્ય વ્યવહારોમાં ઈન્ડ્યઃ-અન્વેષણને યોગ્ય, યજિષ્ઠ:-અત્યંત યજ્ઞના સાધક હોતા-ઘી આદિના ગ્રહણકર્તા પ્રથમ:-સર્વત્ર વિસ્તૃત અયમ્-એ પ્રત્યક્ષ અગ્નિ ધાતૃભિ:-ધારણ કરનારા પુરુષોએ ધાયિ-ધારણ કરેલ છે.

યમ્-જેને વનેષુ-કિરણોમાં ચિત્રમ્-આશ્ચર્યરૂપથી વિશ્વમ્-વ્યાપક અગ્નિને વિશેવિશે-સમસ્ત પ્રજા માટે અજ્વવાન:-રૂપવાન ભૃગવ:-પૂર્ણજ્ઞાન વિસ્ત્રુત:-વિશેષ કરીને પ્રકાશિત કરે છે, તે અગ્નિનો સર્વ મનુષ્યો સ્વીકાર કરે. (૨૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અગ્નિવિદ્યાને ધારણ કરીને અન્યોને પ્રદાન કરવી જોઈએ. (૨૬)

જનસ્ય ગોપાઽઅજનિષ્ટ જાગૃવિર્ગ્નિઃ સુદક્ષઃ સુવિતાય નવ્યસે ।

ઘૃતપ્રતીકો બૃહતા દિવિસ્પૃશા દ્યુમદ્વિભાતિ ભરતેભ્યઃ શુચિઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જનસ્ય-ઉત્પન્ન સંસારના ગોપા:-રક્ષક, જાગૃવિ:-જાગરુક સ્વભાવવાળા, સુદક્ષ:-ઉત્તમ બળયુક્ત, ઘૃતપ્રતીક:-ઘી થી વધનાર, શુચિ:-પવિત્ર, અગ્નિ:-વિદ્યુત્ છે; તે નવ્યસે-અત્યંત નવીન સુવિતાય-ઉત્પન્ન કરવા યોગ્ય ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે અજનિષ્ટ-પ્રકટ થયો છે, જે બૃહતા-મહાન દિવિસ્પૃશા-પ્રકાશમાં સ્પર્શ કરવાથી ભરતેભ્યઃ-સૂર્યોથી દ્યુમત્-પ્રકાશમાન થઈને વિભાતિ-શોભિત થાય છે; તેને તમે જાણો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિના વિશેષ કારણ, સૃષ્ટિના સૂર્યોનું કારણ વિદ્યુત્નું તેજ છે, તેને જાણીને

ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૨૭)

ત્વામગ્નેઽઅઙ્ગિરસો ગુહાં હિતમન્વવિન્દઙ્ગિશ્રિયાણં વનેવને ।

સ જાયસે મથ્યમાનઃ સહો મહત્ ત્વામાહુઃ સહસસ્પુત્રમઙ્ગિરઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ગિરઃ-પ્રાણસમાન પ્રિય અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ સઃ-તે મથ્યમાનઃ-મંથન કરેલો અગ્નિ પ્રસિદ્ધ-પ્રકટ થાય છે, તેમ તું વિદ્યાથી જાયસે-પ્રકટ થાય છે.

જેમ મહત્-મહાન સહઃ-બળયુક્ત સહસઃ-બળવાન વાયુથી પુત્રમ્-ઉત્પન્ન થયેલ પુત્ર સમાન વનેવને-પ્રત્યેક કિરણમાં વા પ્રત્યેક પદાર્થમાં શિશ્રિયાણમ્-આશ્રિત ગુહા-બુદ્ધિમાં હિતમ્-સ્થિત હિતકારી ત્વામ્-તે અગ્નિને આહુઃ-કહે છે; અઙ્ગિરસઃ-વિદ્વાનો અન્વવિન્દન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેનો બોધ ત્વામ્-તને કરાવું છું.-સમજાવું છું. (૨૮)

ભાવાર્થ : અગ્નિ બે પ્રકારનો છે. એક માનસ-અંદરનો અને બીજો બહારનો. તેમાં અંદરના અગ્નિને ઉચિત આહાર-વિહાર દ્વારા અને બહારના અગ્નિને મંથન આદિ દ્વારા વિદ્વાનો સેવન કરે. તેમ અન્ય મનુષ્યો પણ સેવન કરે. (૨૮)

સખાયઃ સં વઃ સમ્યજ્વમિષ્ઠં સ્તોમં ચાગ્નયૈ ।

વર્ષિષ્ઠાય ક્ષિતીનામૂર્જો નષ્ટ્રે સહસ્વતે ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે સખાયઃ-મિત્રો ક્ષિતીનામ્-મનનશીલ મનુષ્ય ! વઃ-તમારા ઋર્જઃ-બળના નષ્ટ્રે-પૌત્ર સમાન વિદ્યામાન, સહસ્વતે-અત્યંત બળયુક્ત, વર્ષિષ્ઠાય-અત્યંતવૃદ્ધ અગ્નયે-અગ્નિ માટે; જે સમ્યજ્વમ્-સુંદર સત્કાર માટે ઇષમ્-અન્નને ચ-અને સ્તોમમ્-સ્તુતિઓનો સમાહુઃ-સારી રીતે ઉપદેશ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનું અનુષ્ઠાન કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : શિલ્પી-કારીગર લોકો સર્વના મિત્ર બનીને વિદ્વાનોના કથનાનુસાર પદાર્થવિદ્યાનું અનુષ્ઠાન કરે. જે વિદ્યુત્ કારણરૂપ બળથી ઉત્પન્ન થાય છે. જે પુત્ર સમાન છે, જે સૂર્ય આદિથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે પૌત્ર સમાન છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૯)

સઃસમિદ્યુવસે વૃષન્નગ્ને વિશ્વાન્યર્યઽઆ ।

હ્રુડસ્પદે સમિધ્યસે સ નો વસૂન્યાભર ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે વૃષન્-બળવાન અગ્ને-પ્રકાશમાન અર્યઃ-વેશ્ય ! જે તું સંસમ + આ + યુવસે-અતિ ઉત્તમતાથી સંબંધ કરે છે, હ્રુડઃ-પ્રશંસા યોગ્ય પુરુષના પદે-પદ પર સમિધ્યસે-સુશોભિત બને છે, સઃ-તે તું ઇત્-જ અગ્નિના યોગથી નઃ-અમારા માટે વિશ્વાનિ-સર્વ વસૂનિ-ધનોને આભર-શ્રેષ્ઠતાથી ધારણ કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : રાજાઓ દ્વારા સમ્યક્ રક્ષિત વેશ્યજન અગ્નિ આદિની વિદ્યાઓથી પોતાના લોકો માટે

અને રાજકીય જનો માટે સમસ્ત ધન સંગ્રહિત કરે. (૩૦)

ત્વાં ચિત્રશ્રવસ્તમ્ હવન્તે વિક્ષુ જન્તવઃ ।

શોચિષ્કેશં પુરુપ્રિયાગ્નેં હૃવ્યાય વોઢવે ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે પુરુપ્રિય-અનેકને પ્રસન્ન કરનાર વા બહુજન પ્રિય ચિત્રશ્રવસ્તમ-આશ્ચર્ય રૂપ અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! વિક્ષુ-પ્રજાઓમાં હૃવ્યાય-સ્વીકારને યોગ્ય અન્નાદિ પદાર્થોની વોઢવે-પ્રાપ્તિ માટે જે શોચિષ્કેશમ્-સુકવનારા સૂર્યના કિરણો સમાન તેજસ્વી ત્વામ્-આપનો જન્તવઃ-મનુષ્યો હવન્તે-સ્વીકાર કરે છે, તેનો અમે પણ સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિનું પ્રાણીઓ સેવન કરે છે, તેને ભાર-વહન આદિ કાર્યોમાં પણ મનુષ્યો સિદ્ધ કરે. (૩૧)

एना वोऽअग्निं नमसोर्जो नपात्माहुवे ।

प्रियं चेतिष्ठमरतिष्ठ स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું વઃ-તમારા માટે એના-તે પૂર્વોક્ત નમસા-ગ્રહણ યોગ્ય અન્નથી નપાતમ્-દૈઢ સ્વભાવ, પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક, ચેતિષ્ઠમ્-અત્યંત ચેતનતા આપનાર, અરતિમ્-ચેતનતા રહિત, સ્વધ્વરમ્-ઉત્તમ રક્ષણીય વ્યવહારથી યુક્ત, અમૃતમ્-કારણરૂપથી નિત્ય, વિશ્વસ્ય-સંપૂર્ણ જગતના દૂતમ્-સર્વત્ર ગતિ કરનાર અગ્નિમ્-વિદ્યુતને અને ઝર્જઃ-પરાક્રમોને આહુવે-સ્વીકાર કરું છું, તેમ તમે મારા માટે ગ્રહણ કરો-સ્વીકાર કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો અમે તમારા માટે જે અગ્નિ આદિની વિદ્યાને પ્રકટ કરીએ, તેનો તમે સ્વીકાર કરો. (૩૧)

विश्वस्य दूतममृतं विश्वस्य दूतममृतम् ।

स योजतेऽअरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું વિશ્વસ્ય-સર્વ ભૂગોળને દૂતમ્-તપાવનાર સૂર્યરૂપ અમૃતમ્-કારણરૂપથી અવિનાશી સ્વરૂપ, વિશ્વસ્ય-સંપૂર્ણ પદાર્થોને દૂતમ્-તાપથી બાળનાર, અમૃતમ્-જલમાં પણ કારણરૂપ અગ્નિનો સ્વીકાર કરું છું, તેમ વિશ્વભોજસા-જગતના રક્ષક અસ્મા-રૂપવાન સર્વ પદાર્થોની સાથે વિદ્યમાન છે, સઃ-તે યોજતે-યુક્ત કરે છે-જોડે છે. જે સ્વાહુતઃ-ઉત્તમ રીતિથી ગ્રહણ કરતાં દુદ્રવત્-શરીર આદિમાં ગતિ કરે છે, સઃ-તેને તમારે જાણવો જોઈએ. (૩૩)

ભાવાર્થ : અહીં વિશ્વસ્ય દૂતમમૃતમ્ આ પદોની બે વખત આવૃત્તિ થવાથી બે પ્રકારની સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મરૂપ યુક્ત અગ્નિનું ગ્રહણ થાય છે, તે સર્વ કારણરૂપ નિત્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૩)

સ દુદ્રવત્ સ્વાહુતઃ સ દુદ્રવત્ સ્વાહુતઃ ।

સુબ્રહ્મા યજ્ઞઃ સુશામી વસૂનાં દેવઃ રાધો જનાનામ્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સઃ-તે અગ્નિ સ્વાહુતઃ-સારી રીતે બોલાવેલા મિત્રની સમાન દુદ્રવત્-ગતિ કરે છે. સઃ-તે અગ્નિ સ્વાહુતઃ-સારી રીતે નિમંત્રણ કરેલ વિદ્વાન સમાન દુદ્રવત્-ગતિ કરે છે. સુબ્રહ્મા-શ્રેષ્ઠ વેદોના જ્ઞાતા, યજ્ઞઃ-સંગ કરવા યોગ્ય, સુશામી-ઉત્તમ શાન્તિશીલ પુરુષની સમાન જે વસૂનામ્-પૃથિવી આદિ વસુઓ તથા જનાનામ્-મનુષ્યોના દેવમ્-કામના યોગ્ય રાધઃ-ધનરૂપ છે, તે અગ્નિનો તમે સારી રીતે ઉપયોગ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે વેગવાન, અન્યોને વેગ પ્રદાન કરનાર, શાન્તિકારક અને પૃથિવી આદિનો પ્રકાશક અગ્નિ છે, તેને વિશેષ રૂપથી કેમ ન જાણવો જોઈએ ? (૩૪)

અગ્ને વાજસ્ય ગોમતઃઈશાનઃ સહસો યહો ।

અસ્મે ધેહિ જાતવેદો મહિ શ્રવઃ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે સહસઃ-બળવાન પુરુષના યહો-સંતાન ! જાતવેદઃ-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરેલ, અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન આપ અગ્નિ સમાન ગોમતઃ-પ્રશસ્ત ગાય અને પૃથિવીથી યુક્ત વાજસ્ય-અન્નના ઈશાનઃ-સ્વામી અને સમર્થક બનીને અસ્મે-અમારા માટે મહિ-મહાન શ્રવઃ-ધનને ધેહિ-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ રીતિથી ઉપયુક્ત કરેલ અગ્નિ પુષ્કળ-પર્યાપ્ત ધન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૫)

સઙ્ઘાનો વસુષ્કવિરગ્નિરીડેન્યો ગિરા । રેવદ્સ્મભ્યં પુર્વણીક દીદિહિ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે પુર્વણીક-વિશાળ સેનાવાળા રાજપુરુષ વિદ્વાન્ ! ગિરા-વાણીથી ઈડેન્યઃ-અન્વેષણને યોગ્ય, વસુઃ-નિવાસના હેતુ, કવિઃ-સમર્થ, ઙ્ઘાનઃ-પ્રદીપ્ત સઃ-તે પૂર્વોક્ત અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે રેવત્-પ્રશંસિત ધનયુક્ત પદાર્થોને દીદિહિ-પ્રકાશિત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના પ્રકટીકરણથી મનુષ્યો માટે ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

ક્ષપો રાજન્નુત ત્મનાગ્ને વસ્તોરુતોષસઃ । સ તિગ્મજમ્ભ રક્ષસો દહ પ્રતિ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે તિગ્મજમ્ભ-તીવ્રતાથી અવયવોને ચલાવનાર રાજન્-પ્રકાશમાન અગ્ને-વિદ્વાન્ ! સઃ-તે પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત આપ જેમ તીક્ષ્ણ તેજયુક્ત અગ્નિ ક્ષપઃ-રાત્રિ, ઉત્ત-અને વસ્તોઃ-દિવસના ઉત્ત-જ ઉષસઃ-પ્રાતઃ અને સાયંકાલના પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે છે. તેમ ત્મના-તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત આત્માથી રક્ષસઃ-દુષ્ટજનોને રાત્રિની સમાન પ્રતિદહ-નિશ્ચય રીતે ભસ્મ કરો. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ પ્રભાત, દિવસ અને રાત્રિનો નિમિત્ત અગ્નિ માનેલ છે, તેમ રાજા ન્યાયનો પ્રકાશ અને અન્યાયની નિવૃત્તિનો હેતુ છે, તેમ જાણો. (૩૭)

ભદ્રો નોઽઅગ્નિરાહુતો ભદ્રા રાતિઃ સુભગ ભદ્રો અધ્વરઃ ।

ભદ્રાઽઉત પ્રશસ્તયઃ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે સુભગ-સુંદર ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન ! જેમ આહુતઃ-ધર્મની સમાન સેવન કરેલ મિત્રરૂપ અગ્નિઃ-અગ્નિ ભદ્રઃ-સેવન કરવા યોગ્ય હોય, ભદ્રા-કલ્યાણકારી રાતિઃ-દાન ભદ્રઃ-કલ્યાણકારી હોય અધ્વરઃ-રક્ષણીય વ્યવહાર ઉત-અને ભદ્રાઃ-કલ્યાણ કરનારી પ્રશસ્તયઃ-પ્રશંસનીય હોય, તેમ આપ નઃ-અમારા માટે બનો. (૩૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે જેમ વિદ્યા દ્વારા શ્રેષ્ઠ રીતિથી સેવન કરેલ જગતના પદાર્થો સુખદાયી બને છે, તેમ આપ વિદ્વાન છે એમ જાણો. (૩૮)

ભદ્રાઽઉત પ્રશસ્તયો ભદ્રં મનઃ કૃણુષ્વ વૃત્રતૂર્યે । યેનાં સમત્સુ સાસહઃ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે સુભગ-શોભન સંપત્તિવાન પુરુષ ! આપ યેન-જેનાથી અમારા વૃત્રતૂર્યે-યુદ્ધમાં ભદ્રમ્-કલ્યાણકારી મનઃ-વિચારશક્તિયુક્ત ચિત્ત હોય, ઉત-અને ભદ્રાઃ-કલ્યાણકારી પ્રશસ્તયઃ-પ્રશંસાને યોગ્ય પ્રજા હોય, અને જેનાથી સમત્સુ-સંગ્રામોમાં સાસહઃ-અત્યંત સહનશીલ વીર પુરુષ હોય, તેવા કર્મ કૃણુષ્વ-કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન રાજાએ તે કર્મો કરવા જોઈએ, કે જેથી પ્રજા અને સેના શ્રેષ્ઠ બને. (૩૯)

યેનાં સમત્સુ સાસહોઽર્વ સ્થિરા તનુહિ ભૂરિ શર્ધતામ્ ।

વનેમાં તેઽઅભિષ્ટિભિઃ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે સુભગ-સુંદર લક્ષ્મીયુક્ત પુરુષ ! આપ યેન-જેના પ્રતાપથી અમારા સમત્સુ-યુદ્ધમાં સાસહઃ-અત્યંત સહનશીલ છો, તેને તથા ભૂરિ-અનેક પ્રકારથી શર્ધતામ્-બળ-સેનાને વધારનાર અમારા સ્થિરા-સ્થિર સેનાના સાધનોની અવ + તનુહિ-સારી રીતે વૃદ્ધિ કરો. તે-આપની અભિષ્ટિભિઃ-ઈચ્છાઓ અનુસાર વિદ્યમાન અમે તે સેનાનાં સાધનોનું વનેમ-સેવન કરીએ.-ઉપયોગ કરીએ. (૪૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અતિ બળવાન વીરોના ઉત્સાહની નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ, જેથી ઉત્સાહિત બનીને તેઓ રાજા અને પ્રજાના હિતકારક કાર્યો કરે. (૪૦)

અગ્નિં તં મન્યે યો વસુરસ્તં યં યન્તિ ધેનવઃ ।

અસ્તમર્વન્તઽઆશવોઽસ્તં નિત્યાસો વાજિનઽઙ્ઘૃષ્ઠો સ્તોતૃભ્યઽઆ ભર ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યઃ-જે વસુઃ-સર્વત્ર નિવાસ કરનાર અગ્નિ છે, યમ્-જે અગ્નિમ્-વાણીની સમાન અગ્નિને ધેનવઃ-ગાયો અસ્તમ્-ઘરે યન્તિ-જાય છે, જેમ નિત્યાસઃ-કારણરૂપથી વિનાશ રહિત વાજિનઃ-વેગવાન આશ્વઃ-શીઘ્રગામી અર્વન્તઃ-ઘોડાઓ અસ્તમ્-ઘરને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ હું તમ્-તે પૂર્વોક્ત અગ્નિને મન્યે-માનું છું અને સ્તોતૃભ્યઃ-સ્તુતિકારક વિદ્વાનો માટે ઇષમ્-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોને ધારણ કરું છું, તેમજ તું અગ્નિને અસ્તમ્-આશ્રય માન અને અન્ન આદિ પદાર્થોને આભર-ધારણ કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓને અધ્યાપક આ રીતે ઉપદેશ કરે -

જેમ હું આચરણ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. જેમ ગાય આદિ પશુઓ દિવસમાં આજુ-બાજુ જંગલમાં ફરીને સાંજે પોતાના ઘેર આવીને પ્રસન્ન થાય છે, તેમજ વિદ્યાગૃહ-પાઠશાલાને પ્રાપ્ત થઈને તમે પણ પ્રસન્ન રહો. (૪૧)

સોઽઅગ્નિર્યો વસુર્ગૃણે સં યમાયન્તિ ધેનવઃ ।

સમર્વન્તો રઘુદ્રુવઃ સઃસુજાતાસઃ સૂરયઽઙ્ઘૃષ્ઠં સ્તોતૃભ્યઽઆ ભર ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી વિદ્વાન્ ! જેમ હું યઃ-જે વસુઃ-નિવાસ માટે અગ્નિઃ-છે, તેની ગૃણે-સારી રીતે સ્તુતિ કરું છું, યમ્-જેને ધેનવઃ-વાણી સમાયન્તિ-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, જેને રઘુદ્રુવઃ-ધીરજથી ચાલનારા અર્વન્તઃ-પ્રશસ્ત જ્ઞાની સુજાતાસઃ-શ્રેષ્ઠ રીતે વિદ્યાઓમાં પ્રસિદ્ધ સૂરયઃ-વિદ્વાનો સ્તોતૃભ્યઃ-સ્તુતિ કરનારા વિદ્યાર્થીઓ માટે ઇષમ્-જ્ઞાનને સમ્-સારી રીતે ધારણ કરે છે, જેમ સઃ-તે અધ્યાપક-વિદ્વાન્ ઈશ્વરાદિ પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન કરે છે, તેમ તું પણ તે પૂર્વોક્તને સમ્ + આભર-ધારણ કર. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ ગાય વાહરડાઓને તૃપ્ત કરે છે, તેમ અધ્યાપકજન વિદ્યાર્થીઓને આનંદિત કરે.

જેમ ઘોડાઓ-સવારીને શીઘ્ર દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેમ [અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓને] સમસ્ત વિદ્યાઓના પારગામી બનાવે. (૪૨)

ઉખે સુશ્ચન્દ્ર સર્પિષો દર્વી શ્રીળીષઽઆસનિ ।

ઉતો નઽઉત્પૂર્ણ્યા ઉક્થેષુ શવસસ્પતઽઙ્ઘૃષ્ઠં સ્તોતૃભ્યઽઆ ભર ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થો : હે સુશ્ચન્દ્ર-ઉત્તમ આનંદદાયક અધ્યાપક ! આપ સર્પિષઃ-ઘીને દર્વી-લેવા અને છોડવા માટેના સાધન રૂપ બે કડછીથી શ્રીળીષે-પકાવવા સમાન આસનિ-મુખમાં ઉખે-અધ્યયન-અધ્યાયન રૂપ બે ક્રિયાઓને આભર-ધારણ કર.

હે શવસઃ-બળના પતે-રક્ષક અધ્યાપક તું ઉક્થેષુઃ-ઉપદેશ કરવા અને શ્રવણ કરવા યોગ્ય વેદ વિભાગોમાં નઃ-અમારા માટે ઉતો-અને સ્તોતૃભ્યઃ-વિદ્વાનો માટે ઇષમ્-અન્નાદિ પદાર્થોને ઉત્પૂર્ણ્યાઃ-ઉત્તમતાથી પૂર્ણ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઋત્વિક્ષજનો ધૃતને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને, કડછી-ચમચાથી અગ્નિમાં હોમ કરીને વાયુ અને વર્ષા-જલને રોગનાશક બનાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ અધ્યાપકજનો વિદ્યાર્થીઓના મનોને

સુશિક્ષાથી શુદ્ધ કરીને, તેમાં વિદ્યાનો હોમ-દાન કરીને તેમના આત્માઓને પવિત્ર કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે. (૪૩)

અગ્ને તમદ્યાશ્વં ન સ્તોમૈઃ ક્રતું ન ભદ્રઃ હૃદિસ્પૃશામ્ । ઋધ્યામા ત્વઽઓઠૈઃ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અધ્યાપક ! અમે તે-આપનાથી ઓઠૈઃ-વિદ્યાનું સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર સ્તોમૈઃ-વિદ્યાની સ્તુતિરૂપ વેદના ભાગોથી અદ્ય-આજ અશ્વમ્-ઘોડાની ન-સમાન; ભદ્રમ્-કલ્યાણકારક ક્રતુમ્-બુદ્ધિની ન-સમાન તમ્-તે હૃદિસ્પૃશામ્-આત્માનો સંબંધ રાખનાર વિદ્યાબોધને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર ઋધ્યામા-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીજન-જેમ સુશિક્ષિત ઘોડા દ્વારા લોકો પોતાના ઈચ્છિત સ્થાન પર શીઘ્ર પહોંચી જાય છે, જેમ વિદ્વાન સર્વ શાસ્ત્રોના જ્ઞાનથી યુક્ત કલ્યાણકારી બુદ્ધિ દ્વારા ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તે અધ્યાપકો દ્વારા વિદ્યાને પાર કરીને, ઉત્તમ પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને સ્વયં ઉન્નતિ પામે તથા અન્યોની વેદના અધ્યાપન તથા ઉપદેશ દ્વારા ઉન્નતિ કરાવે. (૪૪)

અથા હૃગ્ને ક્રતૌર્ભદ્રસ્ય દક્ષસ્ય સાધોઃ । રથીઋતસ્ય બૃહતો બભૂથ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! જેમ તું ભદ્રસ્ય-આનંદકારક દક્ષસ્ય-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત સાધોઃ-સન્માર્ગ પર ચાલનાર ઋતસ્ય-સત્યને પ્રાપ્ત પુરુષની બૃહતઃ-મહાન વિષય વા જ્ઞાનરૂપ ક્રતોઃ-બુદ્ધિના સંગથી રથીઃ-પ્રશંસનીય રમણ સાધન યાનોથી યુક્ત બભૂથ-બને, તેમ અથ-મંગલાચરણપૂર્વક હિ-નિશ્ચય કરીને અમે પણરથી બનીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : જેમ શાસ્ત્ર અને યોગ દ્વારા ઉત્પન્ન બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને વિદ્વાન ઉન્નતિ પામે છે, તેમ અધ્યેતા-વિદ્યાર્થી પણ ઉન્નતિ કરે. (૪૫)

એભિનોઽઅકૈર્ભવા નો અર્વાઙ્ સ્વર્ણ જ્યોતિઃ ।

અગ્ને વિશ્વૈભિઃ સુમનાઽઅનીકૈઃ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યાપ્રકાશથી યુક્ત પુરુષ ! આપ નઃ-અમારા માટે વિશ્વૈભિઃ-સર્વ અનીકૈઃ-સેનાઓ સહિત રાજા સમાન સુમનાઃ-મનથી સુખકારી ભવ-બનો. એભિઃ-એ પૂર્વોક્ત અકૈઃ-પૂજા યોગ્ય વિદ્વાનો સહિત નઃ-અમારા માટે જ્યોતિઃ-જ્ઞાનના પ્રકાશક અર્વાઙ્-નિકૃષ્ટોને ઉત્કૃષ્ટ બનાવવાના જાણકાર સ્વઃ-સુખની ન-સમાન બનો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા સુશિક્ષિત બળ આદિ સેનાઓથી શત્રુઓને જીતીને સુખી થાય છે, તેમજ પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ આદિ ગુણોથી અવિદ્યા આદિ કલેશોને જીતીને મનુષ્ય સુખી થાય છે. (૪૬)

અગ્નિઃહોતારં મન્યે દાસ્વન્તં વસુઃ સૂનુઃ સહસો જાતવૈદસં વિપ્રં ન જાતવૈદસમ્ । યઽઽધ્વ્યાં સ્વધ્વરો દેવો દેવાચ્યાં કૃપા । ઘૃતસ્ય વિભ્રાષ્ટિમનુ વષ્ટિ

શોચિષાઽઽજુહ્વાનસ્ય સર્પિષઃ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે ઋર્ધ્વ્યા-ઉર્ધ્વગતિની સાથે સ્વધ્વરઃ-શુભકર્મ કરવાથી અહિંસનીય છે, દેવાચ્યા-વિદ્વાનોના સત્કાર માટે કૃપા-સમર્થ ક્રિયાથી દેવઃ-દિવ્યગુણો યુક્ત છે, શોચિષા-દીપ્તિના કારણે આજુહ્વાનસ્ય-સારી રીતે હવન કરેલ સર્પિષઃ-ઘૃત અને ઘૃતસ્ય-જલના સાનિધ્યથી વિભ્રાષ્ટિમ્-વિવિધ પ્રકારની જ્યોતિઓને અનુવષ્ટિ-પ્રકાશિત કરે છે.

તે હોતારમ્-સુખદાતા, જાતવેદસમ્-સર્વ ઉત્પન્ન પદાર્થોમાં વિદ્યમાન, સહસઃ-બળવાન પુરુષના સૂનુમ્-પુત્રની સમાન, વસુમ્-ધનદાતા, વાસ્વન્તમ્-દાનશીલ, જાતવેદસમ્-બુદ્ધિમાનોમાં પ્રસિદ્ધ-પ્રજ્ઞાવાન, અગ્નિમ્-તેજસ્વી અગ્નિ ન-સમાન વિપ્રમ્-આપ્ત જ્ઞાનીનો હું મન્યે-સત્કાર કરું છું, તેમ તમે પણ સત્કાર કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ સારી રીતે સેવા કરેલ વિદ્વાન્ વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાથી સર્વને આર્ય [શ્રેષ્ઠ] બનાવે છે, તેમ યુક્તિપૂર્વક સેવન કરેલ અગ્નિ પોતાના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી સર્વની ઉન્નતિ કરે છે. (૪૭)

અગ્ને ત્વં નો અન્તમઽઉત ત્રાતા શિવો ભવા વસ્તુથ્યઃ । વસુર્ગ્નિર્વસુશ્રવાઽ-
અચ્છાં નક્ષિ દ્યુમત્તમઃ રયિન્દાઃ । તં ત્વા શોચિષ્ઠ દીદિવઃ સુમ્નાય નૂનમીમહે
સચ્ચિભ્યઃ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ જેમ આ વસુઃ-ધનદાતા, વસુશ્રવાઃ-અન્ન અને ધનના હેતુ અગ્નિઃ-અગ્નિ રયિમ્-ધનને દાઃ-પ્રદાન કરે છે, તેમ નઃ-અમારી અન્તમઃ-અત્યંત સમીપ ત્રાતા-રક્ષક, વસ્તુથ્યઃ-શ્રેષ્ઠ ઉત-અને શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો.

હે શોચિષ્ઠ-અતિ તેજસ્વી દીદિવઃ-અતિ પ્રકાશમાન વા કામના યોગ્ય વિદ્વાન । જેમ અમે ત્વા-તને સચ્ચિભ્યઃ-મિત્રોના સુમ્નાય-સુખ માટે નૂનમ્-નિશ્ચયરૂપથી ઈમહે-પ્રાર્થના કરીએ છીએ, તેમ તમ્-તારાથી સર્વ મનુષ્ય પ્રાર્થના કરે.

જેમ હું દ્યુમત્તમમ્-પ્રશંસિત પ્રકાશોથી યુક્ત તને અચ્છ-ઉત્તમ રીતે નક્ષિ-પ્રાપ્ત થાઉં છું, તેમ તું અમને પ્રાપ્ત કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : જે મિત્ર પોતાના મિત્રને યાહે છે. અને તેની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ પુરુષ સર્વનો મિત્ર બનીને સર્વને સુખી કરે. (૪૮)

યેનઽઽઋષયસ્તપસા સુત્રમાયન્નિન્ધાનાઽઅગ્નિશ્ચઃ સ્વરાભરન્તઃ ।

તસ્મિન્નહં નિદધે નાકેઽઅગ્નિં યમાહુર્મનંવ સ્તીર્ણર્બર્હિષમ્ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : યેન-જે તપસા-ધર્માનુષ્ઠાનરૂપ કર્મથી ઙ્ઞાનાઃ-પ્રકાશમાન સ્વઃ-સુખને આભરન્તઃ-સારી રીતે ધારણ કરતાં ઋણ્યઃ-વેદના અર્થ જાણનાર ઋષિ સત્રમ્-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ આદિ

અગ્નિને આચન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તસ્મિન્-તે કર્મથી નાકે-દુઃખ રહિત સુખની પ્રાપ્તિ માટે મનવઃ-વિચારશીલ વિદ્વાન્ યમ્-જે સ્તીર્ણર્બર્હિષમ્-આકાશને આચ્છાદન કરનાર અગ્નિમ્-અગ્નિને આહુઃ-ઉપદેશ કરે છે, તેને અહમ્-હું નિદધે-ધારણ કરું છું. (૪૯)

ભાવાર્થ : જેમ વેદોના પારંગત વિદ્વાનો સત્ય આચરણ કરીને, વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને સમર્થ બને છે. એ રીતે [અન્ય] મનુષ્યોએ પણ સમૃદ્ધિવાન્ બનવું જોઈએ. (૪૯)

તં પત્નીભિરનું ગચ્છેમ દેવાઃ પુત્રૈર્ભ્રાતૃભિરુત વા હિરણ્યૈઃ ।

નાકં ગૃહ્ણાનાઃ સુકૃતસ્ય લોકે તૃતીયે પૃષ્ઠેઽઅધિ રોચ્ને દિવઃ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-વિદ્વાનો ! જેમ તમે તમ્-તે પૂર્વોક્ત અગ્નિને ગૃહ્ણાનાઃ-ગ્રહણ કરીને દિવઃ-પ્રકાશયુક્ત સુકૃતસ્ય-ઉત્તમ રીતિથી આચરણ કરેલ વેદોક્ત કર્મ અધિ-માં વા રોચ્ને-રુચિકારક તૃતીયે-વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન પૃષ્ઠે-જાણવાને ઇષ્ટ લોકે-વિચારવા વા જોવા યોગ્ય સ્થાનમાં વિદ્યમાન પત્નીભિઃ-પોત-પોતાની સ્ત્રીઓ પુત્રૈઃ-વૃદ્ધાવસ્થામાં ઉત્પન્ન દુઃખથી રક્ષા કરનાર પુત્રો ભ્રાતૃભિઃ-બંધુઓ ઉત-અન્ય વા-સંબંધીઓ તથા હિરણ્યૈઃ-સુવર્ણ આદિ ધનોથી નાકમ્-આનંદને પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ તે સર્વથી યુક્ત અમે પણ અનુ,ગચ્છેમ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન્ પોતાની સ્ત્રી, પુત્ર, બંધુ, પુત્રી, માતા, પિતા, સેવક-નોકર અને પડોશી જનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી બનાવીને સંતોષ પામે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યો તેનું અનુકરણ કરે. (૫૦)

આ વાચો મધ્યમરુહદ્ ભુરણ્યુર્યમગ્નિઃ સત્પતિશ્ચેકિતાનઃ ।

પૃષ્ઠે પૃથિવ્યા નિહિતો દવિદ્યુતદધસ્પદં કૃણુતાં ચે પૃતન્યવઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ચેકિતાનઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત સત્પતિઃ-શ્રેષ્ઠોના રક્ષક આપ વાચઃ-વાણીના મધ્યમ્-મધ્યથી ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરીને જેમ અચમ્-એ ભુરણ્યુઃ-પુષ્ટિકર્તા અગ્નિઃ-વિદ્વાન્ પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના પૃષ્ઠે-ઉપર નિહિતઃ-નિરંતર સ્થિર કરેલ દવિદ્યુતત્-ઉપદેશથી સર્વને પ્રકાશિત કરે છે અને ધર્મ પર આ + અસ્હત્-આરૂઢ થાય છે, તેની સાથે ચે-જે લોકો પ્રતન્યવઃ-યુદ્ધ માટે સેનાની ઇચ્છા કરે છે, તેને અધસ્પદમ્-પોતાના અધિકારથી ચ્યુત-પદચ્યુત કૃણુતામ્-કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ રાજા જેમ ઈશ્વર બ્રહ્માંડના મધ્યમાં સૂર્યને રાખીને સર્વને સુખથી ઉપકૃત કરે છે, તેમ જ રાજ્યના મધ્યમાં વિદ્યા અને બલને ધારણ કરીને, શત્રુઓને જીતીને, પ્રજાજનોનો ઉપકાર કરે. (૫૧)

અચમગ્નિર્વીરતમો વયોધાઃ સંહસ્ત્રિયો દ્યોતતામપ્રયુચ્છન્ ।

વિભ્રાજમાનઃ સરિરસ્ય મધ્યઽપ્ પ્ર યાહિ દિવ્યાનિ ધામ્ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : જે અયમ્-એ વીસ્તમઃ-પોતાના બળથી શત્રુના બળને અત્યંત વ્યાપ્ત કરનાર, વયોધાઃ-સર્વના જીવનને ધારણકર્તા, સહસ્ત્રિયઃ-અસંખ્ય યોદ્ધાઓની સમાન, સરિસ્વ-આકાશની મધ્યે-વચ્ચે વિભ્રાજમાનઃ-વિશેષ કરીને વિદ્યા અને ન્યાયથી દેદિપ્યમાન, અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદરહિત બનીને અગ્નિઃ-અગ્નિસમાન સેનાપતિ આપ દ્યોતતામ્-સર્વત્ર પ્રકાશિત બનો અને દિવ્યાનિ-સારા ધામ-જન્મ, કર્મ અને સ્થાનોને ઉપ + પ્ર + યાહિ-પ્રાપ્ત કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિકજનો સાથે રહીને, પ્રમાદનો ત્યાગ કરીને, જિતેન્દ્રિયપૂર્વક જીવન-આયુની વૃદ્ધિ કરીને, વિદ્યા અને ધર્માચરણથી પવિત્ર બનીને પરોપકારી બનવું જોઈએ. (૫૨)

સમ્પ્રચ્ચવધ્વમુપ સમ્પ્રયાતાગ્ને પ્થો દેવયાનાન્ કૃણુધ્વમ્ ।

પુનઃ કૃણવાના પિતરા યુવાનાન્વાતાંશ્ચસીત્ ત્વયિ તન્તુમેતમ્ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્યાઓને ઉપ + સંપ્રયાત-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કરો, દેવયાનાન્-ધાર્મિકોના પથઃ-માર્ગો પર સંપ્રચ્ચવધ્વમ્-ઉત્તમ રીતે ચાલો, અને ધર્મનું કૃણુધ્વમ્-આચરણ કરો.

હે અગ્ને-વિદ્વાન્ પિતામહ ! ત્વયિ-તમે પિતામહ-દાદા વિદ્યમાન રહેતાં પિતરા-રક્ષા કરનાર માતા-પિતા તમારા પુત્ર આદિ બ્રહ્મચર્યનું અનુષ્ઠાન કૃણવાના-કરતાં યુવાના-પૂર્ણ યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈને સ્વયંવર વિવાહ કરીને પુનઃ-પશ્ચાત્ એતમ્-ગર્ભાધાનાદિ રાતથી યથોક્ત તન્તુમ્-સંતાનને અન્વાતાંસીત્-ઉત્પન્ન કરે.

ભાવાર્થ : કુમાર ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યના સેવનથી પૂર્ણ વિદ્યાનું અધ્યયન કરીને સ્વયં ધાર્મિક બનીને; પૂર્ણ યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત થતાં, કન્યાઓની પુરુષ અને પુરુષોની કન્યાઓ પરીક્ષા કરીને, અત્યંત પ્રેમથી આકૃષ્ટ હૃદયયુક્ત બનીને, સ્વેચ્છાથી વિવાહ કરીને; ધર્મપૂર્વક સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને તથા સેવા દ્વારા માતા-પિતાને સંતુષ્ટ કરીને; આપ્ત વિદ્વાનોના માર્ગનું સદા અનુસરણ કરે.

જેમ સરળ ધર્મમાર્ગોની સ્થાપના કરે, તેમ ભૂમિ, જલ અને અન્તરિક્ષના માર્ગોનું પણ નિર્માણ કરે. (૫૩)

ઉદ્બુધ્યસ્વાગ્ને પ્રતિ જાગૃહિ ત્વમિષ્ટાપૂર્તે સઃસૃજેથામ્યં ચ ।

અસ્મિન્ સધસ્થે અધ્યુત્તરસ્મિન્ વિશ્વે દેવા યજમાનશ્ચ સીદત ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાથી પ્રકાશિત સ્ત્રી વા પુરુષ ! તું ઉદ્બુધ્યસ્વ-ઉત્કૃષ્ટ રીતિથી જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, સર્વના પ્રત્યે પ્રતિ + જાગૃહિ-અવિદ્યારૂપ નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને વિદ્યાથી ચેતન બન. ત્વમ્-તું સ્ત્રી ચ-અને અયમ્-એ પુરુષ બન્ને અસ્મિન્-આ વિદ્યમાન સધસ્થે-એક સ્થાનમાં અને ઉત્તરસ્મિન્-આગામી સમયમાં સદા ઇષ્ટાપૂર્તે-ઈષ્ટ અર્થાત્ સુખ, વિદ્વાનોનો સહકાર, ઈશ્વરની આરાધના, સત્સંગતિ અને સત્યવિદ્યા આદિનું દાન, પૂર્ત અર્થાત્ પૂર્ણબળ, બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યાથી અલંકૃત થવું, પૂર્ણ યુવાવસ્થા અને પૂર્ણ સાધન-ઉપસાધનો એ સર્વને સંસૃજેથામ્-ઉત્તમ રીતિથી સિદ્ધ કરો.

વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાનો, ચ-અને યજમાનઃ-યજ્ઞ કરનાર પુરુષ તમે એક સ્થાનમાં અધિ-સીદત-ઉન્નતિ પૂર્વક વિદ્યમાન રહો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ અને યજમાન સુખ અને પૂર્ણ સામગ્રીને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ આ જગતમાં સારી રીતે આચરણ કરે.

જ્યારે વિવાહ માટે દંઢ પ્રેમયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ બને, ત્યારે વિદ્વાનોને બોલાવીને, તેના સાનિધ્યમાં વેદોક્ત પ્રતિજ્ઞાઓ કરીને પરસ્પર પતિ અને પત્ની બને. (૫૪)

येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम् ।

तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥ ५५ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! તું દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં સ્વઃ-સુખને ગન્તવે-પ્રાપ્ત કરવા માટે યેન-જે પ્રતિજ્ઞા કરેલ કર્મથી સહસ્રમ્-ગૃહાશ્રમના અસંખ્ય વ્યવહારને વહસિ-વહન કરે છે, યેન-જે વિજ્ઞાનથી સર્વવેદસમ્-સર્વ વેદો દ્વારા પ્રતિપાદિત કર્મને યથાવત્ પ્રાપ્ત કરે છે, તેન-તેથી તે કર્મથી ઇમમ્-આ ગૃહાશ્રમરૂપી યજ્ઞમ્-સંગને યોગ્ય યજ્ઞને-ગૃહાશ્રમને નઃ-અમને નય-પ્રાપ્ત કરાવો. (૫૫)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે પ્રતિજ્ઞાઓમાં [વર-વધુથી] એ પ્રતિજ્ઞાઓ પણ કરાવવી જોઈએ; હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને જેમ પોતાના હિત માટે કાર્ય કરો છો, તેમ માતા, પિતા, આચાર્ય અને અતિથિ-જનોના સુખ માટે નિરંતર કાર્ય કરતા રહો. (૫૫)

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः ।

तं जानन्नग्नुऽआ रोहार्था नो वर्धया रयिम् ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! અયમ્-એ તે-તારું ઋત્વિયઃ-ઋતુ અનુસાર યોનિઃ-ઘર છે, યતઃ-જે વિદ્યાના અધ્યયન-અધ્યાપનથી જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થઈને તું અરોચથાઃ-પ્રકાશિત બન, તમ્-તે ઘરને જાનન્-જાણતાં વા જાણતી બનીને આરોહ-ધર્મ પર આરૂઢ-ઉન્નતિ કર અથ-ત્યારબાદ નઃ-અમારી રયિમ્-સંપત્તિની વર્ધય-વૃદ્ધિ કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે સ્ત્રી-પુરુષોએ બીજી પ્રતિજ્ઞા પણ કરવી જોઈએ; જે બ્રહ્મચર્ય અને જે વિદ્યાથી તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ કૃત-કૃત્ય બન્યા છો, તેનો સદા પ્રચાર કરો.

પુરુષાર્થપૂર્વક ધન આદિની વૃદ્ધિ કરીને તેને સન્માર્ગમાં વ્યય કરો. (૫૬)

तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी
कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः । येऽअग्नयः
समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे शैशिरावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव

દેવાઽઅભિસંવિશન્તુ તયા દેવતયાઽઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવે સીદતમ્ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વર મમ-મારી જ્યૈષ્ઠચાય-શ્રેષ્ઠતા માટે તપ:-તાપ વર્ધક મહામહિનો ચ-અને તપસ્ય:-તાપયુક્ત ફાગણ મહિનો ચ-એ બન્ને શિશિરૈ-શિશિર ઋતુમાં પ્રખ્યાત ઋતુ-પોતાના લક્ષણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર સુખદાયી ઋતુ છે.

આપ જેની અગ્ને:-અગ્નિના પણ અન્ત:શ્લેષ:-મધ્યમાં પ્રવિષ્ટ અસિ-છે, તે બન્નેથી દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ કલ્પેતામ્-સમર્થ બને, આપ:-જલ ઓષધય:-ઔષધિઓ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને, સવ્રતા:-સમાન નિયમયુક્ત વિદ્યમાન અગ્નય:-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ પૃથક્-પૃથક્ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને.

યે-જે સમનસ:-સમાન રૂપથી મન નિમિત્ત અગ્નય:-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિઓ છે ઇમે-આ દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિના અન્તરા-મધ્યમાં શૈશિરૈ-શિશિર ઋતુના સાધક ઋતુ-મહા અને ફાગણ મહિનાને અભિકલ્પમાના:-સમર્થ બનાવે છે, તે અગ્નિઓમાં ઇન્દ્રમિવ-ઐશ્વર્યની સમાન દેવા:-વિદ્વાનો અભિસંવિશન્તુ-જ્ઞાનપૂર્વક પ્રવિષ્ટ કરે.

હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને તયા-તે દેવતયા-પૂજાને યોગ્ય, સર્વત્ર વ્યાપ્ત, જગદીશ્વર દેવતાની સાથે અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણની સમાન વિદ્યમાન બનીને આકાશ અને ભૂમિની સમાન ધ્રુવે-દૈઠ સીદતમ્-સ્થિર રહો. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પ્રત્યેક ઋતુમાં ઈશ્વરથી જ સુખ માગવું જોઈએ.

ઈશ્વર વિદ્યુતની અંદર પ્રવિષ્ટ હોવાના કારણે સર્વ પદાર્થો પોત-પોતાના નિયમથી સમર્થ બને છે. વિદ્વાનો સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિઓના ગુણ-દોષોને જાણે.

સ્ત્રી-પુરુષ ગૃહાશ્રમમાં સ્થિર બુદ્ધિ થઈને શિશિર ઋતુનાં સુખનો ઉપયોગ કરે. (૫૭)

પરમેષ્ઠી ત્વા સાદયતુ દિવસ્પૃષ્ઠે જ્યોતિષ્મતીમ્ । વિશ્વસ્મૈ પ્રાણાયાપાનાય વ્યાનાય વિશ્વં જ્યોતિર્યચ્છ । સૂર્યસ્તેઽધિપતિસ્તયા દેવતયાઽઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવા સીદ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! પરમેષ્ઠી-મહાન આકાશમાં વ્યાપક થઈને વિદ્યમાન પરમેશ્વર જ્યોતિષ્મતીમ્-પ્રશસ્ત જ્ઞાનયુક્ત ત્વા-તને દિવ:-પ્રકાશના પૃષ્ઠે-ઉત્તમ ભાગમાં વિશ્વસ્મૈ-સર્વ પ્રાણાય-પ્રાણ અપાનાય-અપાન, વ્યાનાય-વ્યાન આદિની યથાર્થ ક્રિયા માટે સાદયતુ-સ્થાપિત કરે.

તું સર્વ સ્ત્રીઓ માટે વિશ્વમ્-સમસ્ત જ્યોતિ:-જ્ઞાનનો પ્રકાશ યચ્છ-સર્વ સ્ત્રીઓને પ્રદાન કર. જેથી તે-તારા સૂર્ય:-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી અધિપતિ:-સ્વામી છે, તયા-તે દેવતયા-શ્રેષ્ઠ ગુણોયુક્ત પતિની સાથે વર્તમાન રહીને અઙ્ગિસ્વત્-સૂર્યની સમાન ધ્રુવા-દૈઠતાપૂર્વક સીદ-સ્થિર રહે. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરે જે શરદ ઋતુની રચના કરી છે, તેની ઉપાસનાપૂર્વક તે શરદ ઋતુનું યુક્તિથી

સેવન કરીને સ્ત્રી-પુરુષ સુખની સદાવૃદ્ધિ કરે. (૫૮)

લોકં પૂળ છિદ્રં પૂળાથૌ સીદ ધ્રુવા ત્વમ્ ।

ઇન્દ્રાગ્ની ત્વા બૃહસ્પતિરસ્મિન્ યોનાવસીષદન્ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! ત્વમ્-તું લોકમ્-લોક તથા પરલોકને પૂળ-સુખયુક્ત કર, છિદ્રમ્-તારી ન્યૂનતાને પૂળ-પૂર્ણ કર, ધ્રુવા-નિશ્ચલ બનીને સીદ-ઘરમાં બેસ અર્થાત્ સ્થિર રહે. અથો-તદનંતર ઇન્દ્રાગ્ની-ઉત્તમ ધનવાન તથા જ્ઞાનવાન અને બૃહસ્પતિઃ-અધ્યાપક અસ્મિન્-એ યોનો-ગૃહાશ્રમમાં ત્વા-તને અસીષદન્-સ્થાપિત કરે. (૫૮)

તાઽઅસ્ય સૂદદોહસઃ સોમંશ્ચ શ્રીણન્તિ પૃશ્નયઃ ।

જન્મન્દેવાનાં વિશંસ્ત્રિષ્વારોચને દિવઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત દેવાનામ્-વિદ્વાનોના જન્મન્-જન્મ વિષયમાં પૃશ્નયઃ-પૂછનારી, સૂદદોહસઃ-રસોયા અને કાર્ય કરનારા પુરુષોથી યુક્ત, ત્રિષુ-વેદરીતિથી જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના એ ત્રણેમાં તથા દિવઃ-સર્વના અન્તઃપ્રકાશક પરમાત્માના રોચને-પ્રકાશમાં વિદ્યમાન વિશઃ-પ્રજા છે, તાઃ-તે અસ્ય-આ સભાધ્યક્ષ રાજાની સોમમ્-સોમલતા આદિ ઔષધિઓના રસથી યુક્ત ભોજનના પદાર્થોને આ-સર્વત્રથી શ્રીણન્તિ-પકાવે છે. (૬૦)

ભાવાર્થ : પ્રજાપાલક-રાજા સર્વ પ્રજાને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરવામાં નિયુક્ત કરે તથા પ્રજા તે કાર્યમાં સ્વયં નિયુક્ત થાય.

કારણ કે તે વિના જ્ઞાન, કર્મ, ઉપાસના અને ઈશ્વરનું યથાર્થ જ્ઞાન કદીપણ થઈ શકતું નથી. (૬૦)

ઇન્દ્રં વિશ્વા અવીવૃધન્ત્સમુદ્રવ્યચસું ગિરઃ ।

સ્થીતમઃ સ્થીનાં વાજાનાંશ્ચ સત્પતિં પતિમ્ ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : વિશ્વાઃ-સર્વ ગિરઃ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણી સમુદ્રવ્યચસમ્-આકાશ સમાન વ્યાપ્તિયુક્ત, સ્થીનામ્-શૂરવીરોમાં સ્થીતમમ્-અત્યંત શૂરવીર, વાજાનામ્-વિજ્ઞાની જનોના સત્પતિમ્-સત્ય વ્યવહારો અને વિદ્વાનોના રક્ષક તથા પ્રજાઓના પતિમ્-સ્વામી ઇન્દ્રમ્-પરમ સંપત્તિયુક્ત સભાપતિ રાજાને અવીવૃધન્-અભિવૃદ્ધિ કરે. (૬૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ અને પ્રજાજન રાજધર્મથી યુક્ત, ઈશ્વરની સમાન વર્તમાન ન્યાયાધીશ સભાપતિ-રાજાને નિરંતર પ્રોત્સાહિત કરે. એ જ રીતે સભાપતિ-રાજા પણ તેઓને [પ્રોત્સાહિત] કરે. (૬૧)

પ્રોથદશ્વો ન યર્વસેઽવિષ્યન્યદા મહઃ સંવરણાદ્વ્યસ્થાત્ ।

આદસ્ય વાતોઽનુ વાતિ શોચિરથ સ્મ તે વ્રજનં કૃષ્ણમસ્તિ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ યવસે-ભૂસું આદિ માટે અશ્વઃ-ઘોડાની ન-સમાન પ્રજાને પ્રોથત્-સમર્થ કરો. યદા-જ્યારે મહઃ-મહાન્ સંવરણાત્-આચ્છાદનથી અવિષ્યન્-રક્ષા આદિ કરતાં વ્યસ્થાત્-સ્થિત બનો. આત્-પુનઃ અસ્ય-એ તે-આપની વ્રજનમ્-ગતિ તથા કૃષ્ણમ્-આકર્ષણ કરનાર શોચિઃ-પ્રકાશ અસ્તિ-છે. અથ-તદનન્તર સ્મ-જ આપના વાતઃ-ગતિશીલ સેવક અનુવાતિ-અનુગમન કરે છે, આપની પાછળ ચાલે છે. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેમ પાલન કરવાથી ઘોડાઓ પુષ્ટ થઈને કાર્ય કરવામાં સમર્થ બને છે, તેમ ન્યાયપૂર્વક પાલન કરવાથી પ્રજા સંતુષ્ટ બનીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરે છે. (૬૨)

આયોષ્ટ્વા સદને સાદયામ્યવતશ્છાયાયાશ્ચં સમુદ્રસ્ય હૃદયે ।

રશ્મીવતીં ભાસ્વતીમા યા દ્યાં ભાસ્યા પૃથિવીમોર્વન્તરિક્ષમ્ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! યા-જે તું દ્યામ્-પ્રકાશ, પૃથિવીમ્-ભૂમિ અને અન્તરિક્ષમ્-આકાશની ઝરુ-અત્યંત આભાસિ-પ્રકાશિત કરે છે, તે રશ્મીવતીમ્-શુદ્ધ વિદ્યાના પ્રકાશથી યુક્ત, ભાસ્વતીમ્-શોભાપાત્ર ત્વા-તને આયોઃ-ન્યાયના અનુગામી, દીર્ઘ જીવી પુરુષના સદને-સ્થાન-ઘરમાં તથા અવતઃ-રક્ષા આદિ કરનારની છાયાયામ્-આશ્રયમાં આ + સાદયામિ-શ્રેષ્ઠ રીતે સ્થાપિત કરું છું સમુદ્રસ્ય-અન્તરિક્ષના હૃદયે-મધ્યમાં આ-શુદ્ધ રીતે હું સ્થિત કરું છું. (૬૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! ઉત્તમ રીતિથી પાલન કરનાર પતિના ઘરમાં અને તેની છાયા-આશ્રયમાં-સમુદ્ર સમાન ચંચળતા રહિત, તને (પ્રિયાને) હું સ્થાપિત કરું છું.

તું ગૃહાશ્રમના ધર્મને પ્રકાશિત કરીને પતિ આદિને સુખી કર અને તને એ લોકો સુખી કરે. (૬૩)

પરમેષ્ટી ત્વા સાદયતુ દિવસ્પૃષ્ઠે વ્યચસ્વતીં પ્રથસ્વતીં દિવં યચ્છ દિવં દૃઃહ દિવં મા હિંસીઃ । વિશ્વસ્મૈ પ્રાણાયાપાનાય વ્યાનાયોદાનાય પ્રતિષ્ઠાયૈ ચરિત્રાય । સૂર્યસ્ત્વાભિપાતુ મહ્યા સ્વસ્ત્યા છર્દિષા શન્તમેન તયા દેવતયાઽઙ્ગિરસ્વદ્ ધ્રુવે સૌદતમ્ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! પરમેષ્ટી-પરમાત્મા વિશ્વસ્મૈ-સમસ્ત પ્રાણાય-જીવન સુખ, અપાનાય-દુઃખ નિવૃત્તિ, વ્યાનાય-વિવિધ વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિ, ઉદાનાય-ઉત્તમ બલ, પ્રતિષ્ઠાયૈ-સર્વત્ર સત્કાર અને ચરિત્રાય-શ્રેષ્ઠ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે દિવઃ-કામના કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમના વ્યવહારના પૃષ્ઠે-આધાર પર પ્રથસ્વતીમ્-અત્યંત પ્રસિદ્ધ અને પ્રશંસાવાળી, વ્યચસ્વતીમ્-ઉત્તમ વિદ્યાથી યુક્ત જે ત્વા-તને સાદયતુ-સ્થાપિત કરે,

તે તું દિવમ્-ન્યાયના પ્રકાશને યચ્છ-પ્રદાન કર, દિવમ્-વિદ્યારૂપ સૂર્યને ઢુંહ-દેઢ કર, દિવમ્-ધર્મના પ્રકાશને મા હિંસી:-નષ્ટ ન કર.

સૂર્ય:-ચરાચર જગતના સ્વામી ઈશ્વર મહ્યા-મહાન શ્રેષ્ઠ સ્વસ્ત્યા-સત્કાર, શન્તમેન-અત્યંત સુખ અને છર્દિષા-સત્યાસત્યના પ્રકાશથી ત્વા-તારી અભિપાતુ-સર્વત્રથી રક્ષા કરે.

તે તારા પતિ અને તું બન્ને તયા-તે દેવતયા-પરમેશ્વર દેવતાની સાથે અઙ્ગિસ્વત્-પ્રાણ સમાન ધ્રુવે-નિશ્ચલ સીદતમ્-સ્થિર રહો. (૬૪)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર આજ્ઞા કરે છે, કે જેમ શિશિર ઋતુ સુખદાયક છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર સંતુષ્ટ રહીને, સર્વ ઉત્તમ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને, દુષ્ટ કર્મોનો પરિત્યાગ કરીને, પરમેશ્વરની ઉપાસનાથી સદા આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૬૪)

સહસ્રસ્ય પ્રમાસિં સહસ્રસ્ય પ્રતિમાસિં સહસ્રસ્યોન્માસિં સાહસ્રોઽસિ સહઽસ્રાય ત્વા ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! જે કારણે તું સહસ્રસ્ય-અસંખ્ય પદાર્થોથી યુક્ત જગતના પ્રમા-પ્રમાણ યથાર્થ જ્ઞાન સમાન અસિ-છે, સહસ્રસ્ય-અસંખ્ય વિશેષ પદાર્થોના પ્રતિમા-તોલ કરવાના સાધનની સમાન અસિ-છે, સહસ્રસ્ય-અસંખ્ય સ્થૂલ પદાર્થોને ઉન્મા-તોલવાની તુલા સમાન અસિ-છે, સાહસ્ર:-અસંખ્ય પદાર્થ અને વિદ્યાઓથી યુક્ત અસિ-છે, તેથી સહસ્રાય-અસંખ્ય પ્રયોજનોની સિદ્ધિ માટે ત્વા-તને પરમાત્મા સત્ય વ્યવહારમાં સ્થિર કરે. (૬૫)

ભાવાર્થ : ત્રણ સાધનોથી મનુષ્યોના વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે, એક 'પ્રમા' જે યથાર્થ વિજ્ઞાન છે. બીજું 'પ્રતિમા' જે માપ કરવામાં તથા પદાર્થોના વજન કરવામાં-તોલવામાં બાંટ-કાટલાં આદિ સાધન છે. ત્રીજું 'ઉન્મા' ત્રાજવા આદિ છે. (૬૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઋતુવિદ્યાનું પ્રતિપાદન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ ઇતિ પચ્ચદશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ષોડશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

નમસ્તે રુદ્ર મન્યવ્ઽઉતો ત્ઽઙ્ષવે નમઃ । બાહુભ્યામુત તે નમઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્વ-દુષ્ટ શત્રુઓને રડાવનાર રાજન્ ! તે-તારા પર મન્યવે-ક્રોધાયમાન વીર પુરુષ માટે નમઃ-વજ્ર અસ્તુ-મળો. ઉતો-અને ઙ્ષવે-શત્રુઓને મારનાર તે-તારા માટે નમઃ-અન્ન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. ઉત-અને તે-તારી બાહુભ્યામ્-ભુજાઓથી નમઃ-શત્રુઓને વજ્ર-પીડા મળો. (૧)

ભાવાર્થ : જે રાજ્ય કરવા ઈચ્છે તે બાહુબલ, યુદ્ધ વિદ્યા અને શસ્ત્રો-અસ્ત્રોની વ્યવસ્થા કરે. (૧)

યા તે રુદ્ર શિવા તનૂરઘોરાઽપાપકાશિની ।

તયાં નસ્તન્વા શન્તમયા ગિરિશન્તાભિ ચાકશીહિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ગિરિશન્ત-મેઘ વા સત્ય ઉપદેશથી સુખદાતા, સ્વ-દુષ્ટોને માટે ભયકારક અને શ્રેષ્ઠોને માટે સુખકારક શિક્ષક વિદ્વાન્ ! યા-જે તે-આપની અઘોરા-ઘોર ઉપદ્રવ રહિત, અપાપકાશિની-સત્ય ધર્મોને પ્રકાશિત કરનારી, શિવા-કલ્યાણકારી તનૂઃ-દેહ વા વિસ્તૃત ઉપદેશરૂપ નીતિ છે, તયા-તે શન્તમયા-અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી તન્વા-દેહ વા વિસ્તૃત ઉપદેશની નીતિથી નઃ-અમને આપ અભિ, ચાકશીહિ-સર્વથી શીઘ્ર શિક્ષણ આપો. (૨)

ભાવાર્થ : શિક્ષકજન શિષ્યોને ધાર્મિક નીતિની શિક્ષા આપીને તેને પાપરહિત અને કલ્યાણમય આચરણયુક્ત બનાવે. (૨)

યામિષું ગિરિશન્ત હસ્તે બિભર્ષ્યસ્તવે ।

શિવાં ગિરિત્ર તાં કુરુ મા હિંસીઃ પુરુષં જગત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ગિરિશન્ત-મેઘ દ્વારા સુખ આપનાર સેનાપતિ ! જે કારણે તું અસ્તવે-ફેંકવા માટે યામ્-જે ઙ્ષુમ્-બાણ હસ્તે-હાથમાં બિભર્ષિ-ધારણ કરે છે, તામ્-તેને શિવામ્-મંગલકારી કુરુ-કર.

હે ગિરિત્ર-વિદ્યાના ઉપદેશકો વા મેઘોના રક્ષક રાજપુરુષ ! તું પુસ્ત્રમ્-પુરુષાર્થ યુક્ત મનુષ્યાદિ જગત્-સંસારને મા હિંસીઃ-માર નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ યુદ્ધ વિદ્યા જાણીને, શસ્ત્રોને ધારણ કરીને મનુષ્યાદિ શ્રેષ્ઠ પ્રાણીઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ, પરન્તુ મંગલ આચરણથી રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩)

શિવેન્ વર્ચસા ત્વા ગિરિશાચ્છાં વદામસિ ।

યથા નઃ સર્વમિજ્જગદયક્ષ્મઃ સુમનાઽસત્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ગિરિશ-પર્વત વા મેઘોમાં શયન કરનાર રોગનાશક સ્ત્ર-વેદરાજ ! તું સુમના:-પ્રસન્નચિત્ત થઈને યથા-જેમ ન:-અમારા સર્વમ્-સર્વ જગત્-મનુષ્યાદિ જંગમ અને સ્થાવર રાજ્ય અચક્ષ્મમ્-ક્ષય આદિ રાજરોગોથી રહિત અસત્-બને, તેમ ઇત્-જ શિવેન-કલ્યાણકારી વચસા-વચનથી ત્વા-તને અમે અચ્છ-વદામસિ-સારા કહીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે વેદકશાસ્ત્રને ભણીને પર્વત આદિ પર રહેલ ઔષધિઓ તથા જલની પરીક્ષા કરીને, નિષ્કપટ ભાવથી રોગોનું નિવારણ કરી પ્રિય વાણીથી આચરણ કરે છે, તે વેદનો સર્વ સત્કાર કરે. (૪)

અધ્યવોચદધિવક્તા પ્રથમો દૈવ્યો ભિષક્ ।

અહીંશ્ચ સર્વાઙ્જમ્ભયન્ત્સર્વાંશ્ચ યાતુધાન્યોઽધરાચીઃ પરાં સુવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્ર-રોગનાશક વેદ ! જે પ્રથમ:-મુખ્ય, દૈવ્ય:-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ, અધિવક્તા-સર્વથી ઉત્તમ કક્ષાથી વેદકશાસ્ત્રને ભણાવનાર તથા ભિષક્-નિદાન આદિને જાણીને રોગને નિવૃત્ત કરનાર આપ સર્વાન્-સર્વ અહીન્-સર્પની સમાન પ્રાણઘાતક રોગોને ચ-નિશ્ચયથી જમ્ભયન્-ઔષધિઓથી નિવારણ કરીને અધ્યવોચત્-અધિક ઉપદેશ કરો.

તે આપ જે સર્વા:-સર્વ અધરાચી:-નીચી ગતિને પહોંચાડનારી યાતુધાન્ય:-રોગકારક ઔષધિઓ વા વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓ છે, તેને પરા-દૂર સુવ-કરો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદ સર્વના અધિષ્ઠાતા, મુખ્ય, ધાર્મિક અને સર્વ પરીક્ષાઓને પ્રાપ્ત વેદને રાજ્યમાં તથા સેનાઓમાં નિયુક્ત કરીને બળ અને સુખના નાશક રોગોનું, વ્યભિચારી પુરુષોનું તથા વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓનું નિવારણ કરે. (૫)

અસૌ યસ્તામ્નોઽઅરુણઽઉત્ત બ્રહ્મુઃ સુમઙ્ગલઃ ।

યે ચૈનઃ રુદ્રાઽઅભિતૌ દિક્ષુ શ્રિતાઃ સહસ્ત્રશોઽવૈષાઽઃ હેડઽઈમહે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે અસૌ-તે તામ્ર:-તાંબા સમાન દંઢ અંગયુક્ત, હેડ:-શત્રુઓનો અનાદર કરનાર, અસ્મઃ-સુંદર ગૌરવર્ણ, બ્રહ્મુ:-કિંચિત્ પીળા વા ભૂખરા વર્ણયુક્ત ઉત્ત-અને સુમઙ્ગલ:-સુંદર કલ્યાણકારી રાજા છે, ચ-અને યે-જે સહસ્ત્રશઃ-અસંખ્ય સ્ત્રા:-દુષ્ટ કર્મ કરનારાઓને રડાવનાર અભિત:-સર્વત્રથી દિક્ષુ-પૂર્વ આદિ દિશાઓમાં એનમ્-એ રાજાના શ્રિતા:-આશ્રયથી વાસ કરે છે, એષામ્-એ વીરોનો આશ્રય કરીને અમે અવ + ઈમહે-વિરુદ્ધ આચરણની ઈચ્છા ન કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિ સમાન દુષ્ટોના દાહક, ચન્દ્રમા સમાન શ્રેષ્ઠોમાં પ્રીતિકારક, ન્યાયકારી અને શુભ લક્ષણોયુક્ત રાજા તથા તેના તેવા જ કર્મચારીઓ રાજ્યમાં સર્વત્ર નિવાસ કરો, વિચરણ કરો અથવા સમીપમાં રહો.

તેનો સત્કાર કરીને તેના દ્વારા દુષ્ટોનું અપમાન તમે કરાવો. (૬)

અસૌ યોઽવસર્પિતિ નીલગ્રીવો વિલોહિતઃ ।

ઉતૈનં ગોપાઽઅદૃશ્રન્નદૃશ્રન્નુદહાર્યુઃ સ દૃષ્ટો મૃડયાતિ નઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : ય:-જે અસૌ-તે નીલગ્રીવ:-નીલમણિઓની માળા ધારણ કરેલ, વિલોહિત:-વિવિધ પ્રકારના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત શ્રેષ્ઠ સ્ત્ર:-શત્રુઓના હિંસક સેનાપતિ અવસર્પિતિ-દુષ્ટોથી વિરુદ્ધ ચાલે છે, એનમ્-એને ગોપા:-રક્ષક સેવક અદૃશ્રન્-જુએ છે ઉત-અને ઉદહાર્યુઃ-પાણી લાવનારી [પનિયારી] સ્ત્રીઓ જુએ.

સ:-તે સેનાપતિ દૃષ્ટ:-દેખભાળ કરતાં ન:-અમે ધાર્મિકોને મૃડયાતિ-સુખી કરે. (૭)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટોના વિરોધી, શ્રેષ્ઠોના પ્રિય અને દર્શનીય સેનાપતિ સર્વ સેનાઓને પ્રસન્ન રાખે, તે શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૭)

નમોઽસ્તુ નીલગ્રીવાય સહસ્ત્રાક્ષાય મીઢુષે ।

અથો યેઽસ્ય સત્વાનોઽહં તેભ્યોઽકરં નમઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : નીલગ્રીવાય-જેનો કંઠ અને સ્વર શુદ્ધ હોય, તે સહસ્ત્રાક્ષાય-હજારો સેવકોના કાર્યો પર દંષ્ટિ રાખનાર, મીઢુષે-પરાક્રમયુક્ત સેનાપતિ માટે મારું આપેલું નમઃ-અન્ન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

અથો-એ પછી યે-જે અસ્ય-એ સેનાપતિના અધિકારમાં સત્વાન:-સત્વગુણ તથા બળથી યુક્ત પુરુષ છે, તેભ્યઃ-તેને માટે પણ અહમ્-હું નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થોને અકરમ્-સિદ્ધ કરું. (૮)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ દ્વારા જેમ સેનાપતિનો અન્નાદિથી સત્કાર કરવામાં આવે, તેમ સૈનિક કર્મચારીઓનો પણ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૮)

પ્રમુજ્ઞ ધન્વનસ્ત્વમુભયોરાત્વ્યોર્જ્યામ્ ।

યાશ્ચ તે હસ્તઽઙ્ગવઃ પરા તા ભગવો વપ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે ભગવઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ ! તે-તારા હસ્તે-હાથમાં યા:-જે ઙ્ગવઃ-બાણ છે તા:-તેને ધન્વનઃ-ધનુષ્યના ઉભયો:-બન્ને આત્વ્યો:-પૂર્વઅપર છેડે જ્યામ્-પ્રત્યંચામાં [દોરીમાં] જોડીને શત્રુઓ પર ત્વમ્-તું પ્ર, મુજ્ઞ-બળપૂર્વક છોડ.

યાશ્ચ-અને તારા પર શત્રુઓએ જે બાણ છોડેલાં છે તા:-તેને પરા + વપ-દૂર કર. (૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિએ ધનુષ્ય દ્વારા ફેંકેલા બાણોથી શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. અને શત્રુઓ દ્વારા ફેંકવામાં આવેલા બાણોનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૯)

વિજ્યં ધનુઃ કપર્દિનો વિશલ્યો બાળવાંરઽઉત ।

અનેશન્નસ્ય યાઽઙ્ગવઽઆભુરંસ્ય નિષઙ્ગધિઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે ધનુર્વેદને જાણનારા પુરુષો ! અસ્ય-આ કર્પર્દિનઃ-પ્રશંસિત જટાજૂટવાળા સેનાપતિના ધનુઃ-ધનુષ્ય વિજ્યમ્-પ્રત્યંચા-દોરી રહિત મા ભૂત્-ન બને તથા એ વિશલ્યઃ-બાણના ફણાથી રહિત તથા એ આમ્બુઃ-આયુધોથી રહિત મૃષા-ન બને.

ઉત્ત-અને અસ્ય-શસ્ત્ર-અસ્ત્રને ધારણ કરનાર સેનાપતિના નિષઙ્ગધિઃ-બાણાદિ શસ્ત્રાસ્ત્ર ભંડાર મૃષા-બાલી મા ભૂત્-ન થાય તથા એ બાણવાન્-અનેક બાણોથી યુક્ત હોય.

યાઃ-જો અસ્ય-એ સેનાપતિના ઇષવઃ-બાણો અનેશન્-નષ્ટ પામે તો તાઃ-જે તમે તેને અન્ય નવા બાણ આપો. (૧૦)

ભાવાર્થ : યુદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યે દંઢ ધનુષ્ય તથા પ્રત્યંચા-દોરી આદિ તથા પુષ્કળ બાણો રાખવા જોઈએ.

યુદ્ધ કરતાં વીરોને જોઈને સેનાપતિ આદિ દ્વારા તેને ફરી બાણ આદિ સાધનો આપવા જોઈએ. (૧૦)

યા તે હેતિર્મીદુષ્ટમ્ હસ્તેં બભૂવ તે ધનુઃ ।

તયાસ્માન્વિશ્વતસ્ત્વમ્ચક્ષ્મયા પરિ ભુજ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મીદુષ્ટમ-અત્યંત વીર્યનું સેવન કરનાર સેનાપતિ ! યા-જે તે-તારી સેના છે અને જે તે-તારા હસ્તે-હાથમાં ધનુઃ-ધનુષ્ય તથા હેતિઃ-વજૂ બભૂવ-છે, તયા-તે અચક્ષ્મયા-પરાજય આદિની પીડાનું નિવારણ કરનારી સેનાથી તથા તે ધનુષ્ય આદિથી અસ્માન્-અમે પ્રજા અને સેનાના પુરુષોનું ત્વમ્-તું વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી પરિ-સારી રીતે ભુજ-પાલન કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ ઉપદેશક વિદ્વાનોએ સેનાપતિ આદિને એ રીતે ઉપદેશ કરવો જોઈએ-

આપે યથાશક્તિ સર્વ શ્રેષ્ઠજનોની સર્વથા રક્ષા અને દુષ્ટજનોની તાડના કરવી જોઈએ. (૧૧)

પરિ તે ધન્વનો હેતિરસ્માન્વૃણક્તુ વિશ્વતઃ ।

અથો યડ્ઙ્ષુધિસ્તવારેડઅસ્મન્નિર્ધેહિ તમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ ! જે તે-આપના ધન્વનઃ-ધનુષ્યની હેતિઃ-ગતિ છે તેથી અસ્માન્-અમને વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી આરે-દૂરમાં આપ પરિવૃણક્તુ-છોડો.

અથો-અને યઃ-જે તવ-આપના ઇષુધિઃ-બાણનો ભાથો છે તમ્-તેને અસ્મત્-અમારા આરે-સમીપથી નિર્ધેહિ-નિરંતર ધારણ કરો.

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોને યુદ્ધનો અને શસ્ત્રાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને શસ્ત્ર આદિ સામગ્રી સદા પોતાની પાસે રાખવી જોઈએ.

તે સામગ્રી દ્વારા એક-બીજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. અને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૨)

અવતત્ય ધનુષ્ઠ્વઃસહસ્ત્રાક્ષ શતૈષુધે ।

નિશીર્ય શલ્યાનાં મુખા શિવો નઃ સુમના ભવ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સહસ્ત્રાક્ષ-અસંખ્ય યુદ્ધ કાર્યોપર દૃષ્ટિ રાખનાર શતૈષુધે-અસંખ્ય શસ્ત્ર-અસ્ત્રોના પ્રકાશયુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! ત્વમ્-તું ધનુઃ-ધનુષ્ય અને શલ્યાનામ્-શસ્ત્રોના મુખા-અગ્રભાગનો અવતત્ય-વિસ્તાર કરીને, તેનાથી શત્રુઓને નિશીર્ય-સર્વથા મારીને નઃ-અમારા માટે સુમનાઃ-પ્રસન્ન ચિત્ત શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો. (૧૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ સામ, દામ, દંડ, ભેદ આદિ રાજનીતિના અંગોની ક્રિયાઓને સર્વ રીતે જાણીને, સંપૂર્ણ શસ્ત્રાસ્ત્રોનું નિર્માણ કરીને, તેને તીક્ષ્ણ કરીને, શત્રુઓ પ્રત્યે દુષ્ટમન અને દુઃખદાયી બને અને પ્રજાઓ પ્રત્યે સૌમ્ય સ્વભાવ અને સુખદાયક બને. (૧૩)

નમસ્તઽઆયુધ્યાનાતતાય ધૃષ્ણવૈ ।

ઉભાભ્યામુત તે નમો બાહુભ્યાં તવ ધન્વને ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! આયુધાય-યુદ્ધ કરનાર, અનાતતાય-પોતાના આશયને ગુપ્ત સંકોચમાં રાખનાર, ધૃષ્ણવૈ-પ્રગલ્ભતાને પ્રાપ્ત થનાર તે-આપના માટે નમઃ-અન્ન પ્રાપ્ત થાય, ઉત-અને તે-ભોજન કરનાર આપને માટે નમઃ-અન્ન પ્રદાન કરું છું. તવ-આપના ઉભાભ્યામ્-બન્ને બાહુભ્યામ્-બળ અને પરાક્રમથી ધન્વને-યોદ્ધા પુરુષ માટે નમઃ-અન્નને નિયત કરું. (૧૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ અધિકારીઓએ, અધ્યક્ષો તથા યોદ્ધાઓ બન્નેને માટે શસ્ત્રાસ્ત્ર આપીને, તેને શત્રુઓ સાથે નિઃશંક બનીને યુદ્ધ કરાવવું જોઈએ. (૧૪)

મા નો મહાન્તમુત મા નોઽઅર્ભકં મા નઽઽક્ષન્તમુત મા નઽઽક્ષિતમ્ ।

મા નો વધીઃ પિતરં મોત માતરં મા નઃ પ્રિયાસ્તન્વો રુદ્ર રીરિષઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્ર-યુદ્ધ સેનામાં અધિકારી વિદ્વાન્ ! આપ નઃ-અમારા મહાન્તમ્-ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત પૂજ્ય પુરુષને મા વધીઃ-માર નહિ, ઉત-અને નઃ-અમારા અર્ભકમ્-નાના બાળકને મા વધીઃ-માર નહિ, નઃ-અમારા ઽક્ષન્તમ્-ગર્ભાધાન કરનાર યુવાનને મા વધીઃ-માર નહિ, ઉત-અને નઃ-અમારા ઽક્ષિતમ્-ગર્ભને મા વધીઃ-માર નહિ, નઃ-અમારા પિતરમ્-પાલક પિતાને મા વધીઃ-માર નહિ, ઉત-અને નઃ-અમારી માતરમ્-માનને યોગ્ય માતાને પણ મા વધીઃ-માર નહિ, નઃ-અમારી પ્રિયાઃ-સ્ત્રી આદિના પ્રીતિ ઉત્પાદક તન્વઃ-શરીરને મા રીરિષઃ-માર નહિ. (૧૫)

ભાવાર્થ : યોદ્ધાઓએ યુદ્ધના સમયમાં કદીપણ વૃદ્ધ, બાળક, યુદ્ધ ન કરનાર યુવાન, ગર્ભસ્થ સંતાન, યોદ્ધાઓના માતા તથા પિતા, સર્વની સ્ત્રીઓ, દર્શકો અને દૂતોને મારવા ન જોઈએ. પરન્તુ શત્રુઓના સંબંધીઓને સદા પોતાના વશમાં રાખવા જોઈએ. (૧૫)

મા નસ્તોકે તનયે મા નઽઆયુષિ મા નો ગોષુ મા નોઽઅશ્વેષુ રીરિષઃ ।
મા નો વીરાન્ રુદ્ર ભામિનો વધીર્હવિષ્મન્તઃ સદમિત્ ત્વા હવામહે ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્વ-સેનાપતિ ! તું નઃ-અમારા તોકે-નવજાત શિશુને મા રીરિષઃ-માર નહિ, નઃ-અમારા તનયે-પાંચ વર્ષથી અધિક આયુના બાળકને મા રીરિષઃ-માર નહિ, નઃ-અમારી આયુષિ-આયુનો મા રીરિષઃ-હિંસક ન બન, નઃ-અમારા ગોષુ-ગાય, બકરી, ઘેટાં આદિની મા રીરિષઃ-હિંસા ન કર, નઃ-અમારા અશ્વેષુ-ઘોડા, હાથી અને ઊંટ આદિને મા રીરિષઃ-મારીશ નહિ, નઃ-અમારા ભામિનઃ-કોધને પ્રાપ્ત થયેલ વીરાન્-શૂરવીરોને મા વધીઃ-માર નહિ.

એથી હવિષ્મન્તઃ-અનેક વસ્તુઓનું આદાન-પ્રદાન કરનાર અમે સદમ્-ન્યાયાધ્યક્ષ ત્વા-તને ઇત્-જ હવામહે-સ્વીકારીએ છીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ કોઈ પ્રજાજનના અથવા પોતાના બાળક, કુમાર, ગાય, ઘોડા આદિ પશુઓની તથા વીરોની હત્યા ન કરવી જોઈએ.

બાલ્યાવસ્થામાં વિવાહ કરીને વ્યભિચારથી આયુ ક્ષીણ ન કરવી જોઈએ.

ગાય આદિ પશુઓ દૂધ દેવાના કારણે સર્વના ઉપકારક છે, માટે તેની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

નમો હિરણ્યબાહવે સેનાન્યે દિશાં ચ પતયે નમો નમો વૃક્ષેભ્યો હરિકેશેભ્યઃ
પશૂનાં પતયે નમો નમઃ શ્ષિઞ્જરાય ત્વિષીમતે પથીનાં પતયે નમો નમો
હરિકેશાયોપવીતિને પુષ્ટાનાં પતયે નમઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે સ્વ-શત્રુતાડક સેનાધીશ ! હિરણ્યબાહવે-જ્યોતિ સમાન તીવ્ર તેજયુક્ત ભુજાઓ યુક્ત, સેનાન્યે-સેનાને શિક્ષા આપનાર તારા માટે નમઃ-વજ્ર પ્રાપ્ત થાય. ચ-અને દિશામ્-સર્વ દિશાઓના રાજ્ય પ્રદેશોના પતયે-રક્ષક તારા માટે નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થ પ્રાપ્ત થાય.

હરિકેશેભ્યઃ-હરણશીલ સૂર્ય કિરણોથી યુક્ત વૃક્ષેભ્યઃ-આંબાદિ વૃક્ષોને કાપવા માટે નમઃ-વજ્રાદિ શસ્ત્રોને ગ્રહણ કર.

પશૂનામ્-ગાય આદિ પશુઓના પતયે-રક્ષક તારા માટે નમઃ-સત્કાર મળે.

શ્ષિઞ્જરાય-વિષયાદિ બંધનોથી રહિત ત્વિષીમતે-અનેક ન્યાયના પ્રકાશોથી યુક્ત તારા માટે નમઃ-નમસ્કાર અને અન્ન મળે.

પથીનામ્-માર્ગમાં ચાલનારાના પતયે-રક્ષક તારા માટે નમઃ-આદર પ્રાપ્ત થાય.

હરિકેશાય-હરિત કેશવાળા ઉપવીતિને-સુંદર યજ્ઞોપવિતથી યુક્ત તારા માટે નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થ પ્રાપ્ત થાય.

પુષ્ટાનામ્-નીરોગીઓની પતયે-રક્ષા કરનાર માટે નમઃ-નમસ્કાર પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શ્રેષ્ઠોને સત્કારથી, ભૂખ્યાને અન્નદાન, ચક્રવર્તી રાજ્યના શાસનથી, પશુઓના પાલનથી, યાત્રાળુઓની ચોર અને ડાકૂઓથી રક્ષા, યજ્ઞોપવિતના ધારણથી અને પુષ્ટિ-નીરોગતાથી સદા

આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧૭)

નમો વ્હ્લુશાય વ્યાધિનેઽન્નાનાં પતયે નમો નમો ભવસ્ય હૈત્યૈ જગતાં પતયે
નમો નમો રુદ્રાયાતતાયિને ક્ષેત્રાણાં પતયે નમો નમઃ સૂતાયાહન્ત્યૈ વનાનાં પતયે
નમઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ આદિ મનુષ્યોએ વ્હ્લુશાય-રાજ્યને ધારણ કરનારમાં સ્થિત વ્યાધિને-રોગીને
નમઃ-અન્ન આપવું જોઈએ, અન્નાનામ્-ઘઉં આદિ અન્નના પતયે-રક્ષકનો નમઃ-સત્કાર કરવો, ભવસ્ય-
સંસારની હૈત્યૈ-વૃદ્ધિ માટે નમઃ-અન્ન આપવું, જગતામ્-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓના પતયે-સ્વામીનો નમઃ-
સત્કાર કરવો, સ્દાય-શત્રુઓને રડાવનાર અને આતતાયિને-સારી રીતે વિસ્તૃત શત્રુસેનાને પ્રાપ્ત થનારને
નમઃ-અન્ન આપવું, ક્ષેત્રાણામ્-ધાન્યાદિ ખેતરોના પતયે-રક્ષકને નમઃ-અન્ન આપવું, સૂતાય-ક્ષત્રિયથી
બ્રાહ્મણની કન્યામાં ઉત્પન્ન વીર વા પ્રેરક પુરુષ માટે તથા અહન્ત્યૈ-કોઈને ન મારનારી રાજપત્ની માટે
નમઃ-અન્ન આપવું અને વનાનામ્-વનોની પતયે-રક્ષા કરનાર પુરુષને નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થો આપવા
જોઈએ. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે અન્નાદિથી સર્વ પ્રાણીઓનો સત્કાર કરે છે, તે જગતમાં પ્રશંસિત બને છે. (૧૮)

નમો રોહિતાય સ્થપતયે વૃક્ષાણાં પતયે નમો નમો ભુવન્તયૈ વારિવસ્કૃતાયૌષધીનાં
પતયે નમો નમો મન્ત્રિણે વાણિજાય કક્ષાણાં પતયે નમો નમઃઽચ્ચૈર્ધોષાયાક્રન્દયતે
પત્તીનાં પતયે નમઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ અને પ્રજાજનો રોહિતાય-સુખોની વૃદ્ધિ કરનાર અને સ્થપતયે-સ્થાનો-
ઘરોના રક્ષક સેનાપતિને નમઃ-અન્ન આપે, વૃક્ષાણામ્-આંબા આદિ વૃક્ષોના પતયે-સ્વામીને નમઃ-અન્ન
આપે, ભુવન્તયે-આચારવાન તથા વારિવસ્કૃતાય-સેવા કરનાર નોકરને નમઃ-અન્ન આપે, ઔષધીનામ્-
સોમલતાદિ ઔષધિઓના પતયે-રક્ષક વેદને નમઃ-અન્ન આપે, મન્ત્રિણે-વિચાર-કર્તા રાજપુરુષને
તથા વાણિજાય-વૈશ્યના વ્યવહારમાં કુશળ પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરે, કક્ષાણામ્-ઘરોમાં રહેનારાના
પતયે-રક્ષકોને નમઃ-અન્ન આપે, ઽચ્ચૈર્ધોષાય-ઊંચા સ્વરથી બોલનાર તથા આક્રન્દયતે-દુષ્ટોને
રડાવનાર ન્યાયાધીશનો નમઃ-સત્કાર કરે અને પત્તીનામ્-સેનાના અંગોના પતયે-રક્ષક સેનાધ્યક્ષનો
નમઃ-સત્કાર કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વન આદિના રક્ષકોને અન્ન આદિ આપીને વૃક્ષ તથા ઔષધિ આદિની ઉન્નતિ
કરવી જોઈએ. (૧૯)

નમઃ કૃત્સ્નાયતયા ધાવતે સત્વનાં પતયે નમો નમઃ સહમાનાય નિવ્યાધિનેઽ-
આવ્યાધિનીનાં પતયે નમો નમો નિષ્ઙ્ઙિણે કકુભાય સ્તેનાનાં પતયે નમો નમો

નિચેરવૈ પરિચરાયાર્ણ્યાનાં પતયે નમઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યો કૃત્સ્નાયતયા-સંપૂર્ણ લાભની પ્રાપ્તિ માટે ધાવતે-અહીં-તહીં આવવા-જનારાઓને નમઃ-અન્ન આપે, સત્વનામ્-પ્રાપ્ત પદાર્થોના પતયે-રક્ષકનો નમઃ- સત્કાર કરે, સહમાનાય-બળવાન અને નિવ્યાધિને-શત્રુઓનું નિરંતર તાડન કરનારને નમઃ-અન્ન આપે, આવ્યાધિનીનામ્-સર્વ તરફથી શત્રુસેનાને મારનાર આપણી સેનાના પતયે-રક્ષક સેનાપતિનો નમઃ-આદર કરે, નિષંગિણે-ઉત્તમ બાણ, તલવાર, બંદૂક, તોપ, બરછી આદિ શસ્ત્રવાળાને નમઃ-અન્ન આપે, નિચેરવે-નિરંતર પુરુષાર્થથી વિચરનારનો, પરિચરાય-ધર્મ, વિદ્યા, માતા-પિતા, સ્વામી અને મિત્રાદિની સેવા કરનારનો, કકુભાય-પ્રસન્નમૂર્તિ પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરે, સ્તેનાનામ્-અન્યાયથી પરધનનું હરણ કરનાર પ્રાણીઓના પતયે-દંડ આદિથી શોષણ કરનાર હોય તેને નમઃ-વજ્રથી મારે, અરણ્યાનામ્-વનના પતયે-રક્ષકને નમઃ-અન્નાદિ પ્રદાન કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પુરુષાર્થીજનોના ઉત્સાહ માટે તેનો સત્કાર, પ્રાણીઓ પર દયા, સુશિક્ષિત સેનાની રક્ષા, ચોર આદિની તાડના, સેવકોની પાલના તથા વનોને કાપવાથી રોકવા વગેરે કાર્યો કરીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

નમો વઙ્ચતે પરિવઙ્ચતે સ્તાયૂનાં પતયે નમો નમો નિષઙ્ગિણંડૃષ્ઠિમતે તસ્કરાણાં પતયે નમો નમઃ સૃકાયિભ્યો જિઘાંસદ્ભ્યો મુષ્ણતાં પતયે નમો નમોઽસિમદ્ભ્યો નક્તં ચરદ્ભ્યો વિકૃન્તાનાં પતયે નમઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ વઙ્ચતે-છળ-કપટથી બીજાના પદાર્થોનું હરણ કરનાર, પરિવઙ્ચતે-સર્વ રીતે કપટ વર્તન કરનારને નમઃ-વજ્રનો પ્રહાર કરે, સ્તાયૂનામ્-ચોરીથી જીવનારા પતયે-સ્વામીને નમઃ-વજ્રથી મારે, નિષઙ્ગિણે-રાજ્ય રક્ષા માટે નિરંતર તત્પર ડૃષ્ઠિમતે-પ્રશસ્ત બાણોને ધારણ કરનારને નમઃ-અન્ન આપે, તસ્કરાણામ્-ચોરી કરનારનો પતયે-તે કાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરનારને નમઃ-વજ્ર મારે, સૃકાયિભ્યઃ-વજ્રથી સજ્જનોને પીડિત કરવાની અને જિઘાંસદ્ભ્યઃ-મારવાની ઈચ્છા કરનારને નમઃ-વજ્રથી મારે, મુષ્ણતામ્-ચોરી કરનારને પતયે-દંડ પ્રહારથી પૃથિવી પર ગબડાવી પાડનારનો નમઃ-સત્કાર કરે, અસિમદ્ભ્યઃ-પ્રશસ્ત તલવારો સાથે નક્તમ્-રાતે ચરદ્ભ્યઃ-ફરતા લૂંટારાઓને નમઃ-શસ્ત્રોથી મારે અને વિકૃન્તાનામ્-વિવિધ ઉપાયોથી ચોરી લૂંટ-ફાટ કરનાર ગઠિયાને પતયે-મારીને પાડી દેનારનો નમઃ-સત્કાર કરે. (૨૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ છળ-કપટથી છોતરનારાઓ તથા દિવસ અને રાતે અનર્થ કરનારાઓનો નિગ્રહ કરીને ધર્માત્માઓનું નિરંતર પાલન કરવું જોઈએ. (૨૧)

નમઽઽષ્ણીષિણે ગિરિચરાય કુલુઙ્ચાનાં પતયે નમો નમઽઽષ્ણુમદ્ભ્યો ધન્વાયિભ્યશ્ચ વો નમો નમઽઆતન્વાનેભ્યઃ પ્રતિદધાનેભ્યશ્ચ વો નમો નમઽઆયચ્છદ્ભ્યોઽસ્યદ્ભ્યશ્ચ વો નમઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : અમે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન ઉષ્ણીષિણે-પ્રશસ્ત પાઘડી ધારણ કરનાર ગામના નેતાનો અને ગિરિચરાય-પર્વતોમાં વિચરનાર વનવાસીનો નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ, કુલુઞ્જાનામ્-ખરાબ આશયથી બીજાના પદાર્થોને લૂંટનારને પતયે-મારનારનો નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ, ઇષુમદ્ભ્યઃ-અનેક બાણવાળાને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-તથા વઃ-તમે ધન્વાયિભ્યઃ-ધનુષ્યોને પ્રાપ્ત કરનારને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ; આતન્વાનેભ્યઃ-સર્વ સુખ ફેલાવનારનો નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ; ચ-અને વઃ-તમે પ્રતિદધાનેભ્યઃ-શત્રુઓ સામે શસ્ત્ર ધારણ કરનારા વઃ-તમારો નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ; આયચ્છદ્ભ્યઃ-દુષ્ટોને ખરાબ કામોથી રોકનારાને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-અને વઃ-તમે અસ્યદ્ભ્યઃ-દુષ્ટો પર શસ્ત્ર છોડનારનો વઃ-તમારા માટે નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજનોએ પ્રધાન પુરુષ આદિનો વસ્ત્ર અને અન્નાદિના દાનથી સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨૨)

**નમો વિસૃજદ્ભ્યો વિદ્ધ્યદ્ભ્યશ્ચ વો નમો નમઃ સ્વપદ્ભ્યો જાગ્રદ્ભ્યશ્ચ વો
નમો નમઃ શયાનેભ્યઃ આસીનેભ્યશ્ચ વો નમો નમસ્તિષ્ઠદ્ભ્યો ધાવદ્ભ્યશ્ચ વો
નમઃ ॥ ૨૩ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સર્વને એમ કહો કે-વિસૃજદ્ભ્યઃ-શત્રુઓ પર શસ્ત્રો છોડનારને નમઃ-અન્ન આદિ પદાર્થો આપીશું, ચ-અને વિદ્ધ્યદ્ભ્યઃ-શસ્ત્રોથી શત્રુઓને મારનાર વઃ-તમને નમઃ-અન્ન આપીશું, સ્વપદ્ભ્યઃ-સૂતેલા પર નમઃ-વજૂ પ્રહાર કરીશું, ચ-અને જાગ્રદ્ભ્યઃ-જાગનારા વઃ-તમને નમઃ-અન્ન આપીશું, શયાનેભ્યઃ-નિદ્રા પ્રાપ્તને નમઃ-અન્ન આપીશું, ચ-અને આસીનેભ્યઃ-આસન પર બેઠેલા વઃ-તમને નમઃ-અન્ન આપીશું તિષ્ઠદ્ભ્યઃ-ઊભેલાને નમઃ-અન્ન આપીશું, ચ-અને ધાવદ્ભ્યઃ-શીઘ્રગામીજનો વઃ-તમને નમઃ-અન્ન આપીશું. (૨૩)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ લોકોએ ઉદારતાપૂર્વક અન્ન આદિના દાનથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરવા જોઈએ. (૨૩)

**નમઃ સ્મૃભાભ્યઃ સ્મૃભાપતિભ્યશ્ચ વો નમો નમોઽશ્વેભ્યોઽશ્વપતિભ્યશ્ચ વો નમો
નમઃઆવ્યાધિનીભ્યો વિવિધ્યન્તીભ્યશ્ચ વો નમો નમઃઽઊર્ગાભ્યસ્તૃઃ હૃતીભ્યશ્ચ
વો નમઃ ॥ ૨૪ ॥**

પદાર્થ : મનુષ્યો સર્વને એમ કહે-અમે સ્મૃભાભ્યઃ-ન્યાય આદિ પ્રકાશથી યુક્ત સ્ત્રીઓનો નમઃ-સત્કાર કરે; ચ-અને સ્મૃભાપતિભ્યઃ-સભાઓના રક્ષક વઃ-તમે રાજાઓનો નમઃ-સત્કાર કરે; અશ્વેભ્યઃ-ઘોડાઓને નમઃ-અન્ન આપે; ચ-અને અશ્વપતિભ્યઃ-ઘોડાઓના રક્ષકને વઃ-તમે નમઃ-અન્ન આપે; આવ્યાધિનીભ્યઃ-શત્રુસેનાને મારનારી આપણી સેનાને નમઃ-અન્ન આપે; ચ-અને વિવિધ્યન્તીભ્યઃ-શત્રુઓના વીરોને મારતી

વ:-તમે સ્ત્રીઓનો નમ:-સત્કાર કરે; ઊગણાભ્ય:-વિવિધ તર્કોવાળી સ્ત્રીઓને નમ:-અન્ન આપે; ચ-અને તુંહતીભ્ય:-યુદ્ધમાં મારતી વ:-તમો સ્ત્રીઓને નમ:-અન્ન આપે તથા યથાયોગ્ય સત્કાર કરીએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સભા અને સભાપતિ દ્વારા જ રાજ્યની વ્યવસ્થા કરવી જોઈએ. કદીપણ એક માત્ર રાજાને આધીન ન રહેવું જોઈએ, કારણકે એક રાજા દ્વારા અનેક જનોની સિદ્ધિ અને અસિદ્ધિના નિવારણનું કાર્ય થઈ શકતું નથી. (૨૪)

નમો ગુણેભ્યો ગુણપતિભ્યશ્ચ વો નમો નમો વ્રાતેભ્યો વ્રાતપતિભ્યશ્ચ વો નમો નમો ગૃત્સેભ્યો ગૃત્સપતિભ્યશ્ચ વો નમો નમો વિસ્ત્રુપેભ્યો વિશ્વસ્ત્રુપેભ્યશ્ચ વો નમઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ગુણેભ્ય:-સેવકોને નમ:-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-અને વ:-તમે ગુણપતિભ્ય:-સેવકોના રક્ષકોને નમ:-અન્ન આપો છો; વ્રાતેભ્ય:-મનુષ્યોનો નમ:-સત્કાર કરીએ છીએ; ચ-અને વ:-તમે વ્રાતપતિભ્ય:-મનુષ્યોના રક્ષકોનો નમ:-સત્કાર કરો છો; ગૃત્સેભ્ય:-પદાર્થોના ગુણોની સ્તુતિ કરનારા વિદ્વાનોનો નમ:-સત્કાર કરીએ છીએ; ચ-અને વ:-તમે ગૃત્સપતિભ્ય:-બુદ્ધિમાનોના રક્ષકોનો નમ:-સત્કાર કરો છો; ચ-અને વ:-તમે વિસ્ત્રુપેભ્ય:-વિવિધ રૂપવાળાનો નમ:-સત્કાર કરો છો; ચ-અને વિશ્વસ્ત્રુપેભ્ય:-સર્વ રૂપે મુક્ત વ:-તમે લોકોનો નમ:-સત્કાર કરે તેમ તમે પણ અન્ન પ્રદાન કરો અને સત્કાર કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત પ્રાણીઓનો ઉપકાર, વિદ્વાનોનો સંગ, સંપૂર્ણ ઐશ્વર્ય અને વિદ્યાઓને ધારણ કરીને સંતુષ્ટ રહેવું જોઈએ. (૨૫)

નમઃ સેનાભ્યઃ સેનાનિભ્યશ્ચ વો નમો નમો રથિભ્યો ઽ અરથેભ્યશ્ચ વો નમો નમઃ ક્ષત્રુભ્યઃ સંગ્રહીતૃભ્યશ્ચ વો નમો નમો મહદ્ભ્યો ઽ અર્ભકેભ્યશ્ચ વો નમઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજનો ! જેમ અમે સેનાભ્ય:-શત્રુઓને બાંધનારી સેનાઓનો નમ:-સત્કાર કરીએ છીએ, ચ-અને વ:-તમે સેનાનિભ્ય:-સેનાના નાયક પ્રધાન પુરુષને નમ:-અન્ન આપો છો, રથિભ્ય:-ઉત્તમ રથવાળાનો નમ:-સત્કાર કરીએ છીએ, ચ-અને વ:-તમે અરથેભ્ય:-રથરહિત પગથી ચાલનારાનો નમ:-સત્કાર કરો છો; ક્ષત્રુભ્ય:-ક્ષત્રિયની સ્ત્રીમાં શૂદ્રથી ઉત્પન્ન વર્ણસંકરજનોને નમ:-અન્નાદિ પદાર્થો આપીએ છીએ, ચ-અને વ:-તમે સંગ્રહીતૃભ્ય:-યુદ્ધ માટે સામગ્રી સંગ્રહ કરનારનો નમ:-સત્કાર કરો છો, મહદ્ભ્ય:-વિદ્યા અને વયોવૃદ્ધ પૂજ્ય જનોને નમ:-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થ આપીએ છીએ, ચ-અને વ:-તમે અર્ભકેભ્ય:-કનિષ્ઠ, ક્ષુદ્રાશય શિક્ષાને યોગ્ય વિદ્યાર્થીઓનો નમ:-નિરંતર સત્કાર કરો છો; તેમ તમે પણ પૂજ્ય જનોનો સત્કાર કરો અને અન્ન આદિ પ્રદાન કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ સર્વ કર્મચારીઓનો સત્કાર કરીને, તેને સુશિક્ષિત કરીને, અન્નાદિથી વૃદ્ધિ કરીને ધર્મપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૨૬)

નમસ્તક્ષાભ્યો રથકારેભ્યશ્ચ વો નમો નમઃ કુલાલેભ્યઃ કૃમ્મારિંભ્યશ્ચ વો

નમો નમો નિષાદેભ્યઃ પુઙ્ગિષ્ઠેભ્યશ્ચ વો નમો નમઃ શ્વનિભ્યો મૃગયુભ્યશ્ચ વો નમઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે રાજા આદિજનો વઃ-તમે તક્ષમ્ભ્યઃ-તક્ષક સુથારને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ; ચ-અને વઃ-તમે રથકારેભ્યઃ-અનેક રથ-વિમાનાદિ બનાવનારાઓને નમઃ-પગારાદિ આપીને સત્કાર કરો છો; કુલાલેભ્યઃ-ઉત્તમ માટીના પાત્ર બનાવનારાઓને નમઃ-અન્ન આદિ પદાર્થો આપીએ છીએ; ચ-અને વઃ-તમે કર્મરિભ્યઃ-તલવાર, બંદૂક અને તોપ આદિ નિર્માતાઓનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; નિષાદેભ્યઃ-વન, પર્વતાદિમાં રહેનારાઓને નમઃ-અન્નાદિ આપીએ છીએ; ચ-અને વઃ-તમે પુઙ્ગિષ્ઠેભ્યઃ-વર્ણો વા ભાષાઓમાં પ્રવીણજનોનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; શ્વનિભ્યઃ-કૂતરાઓને કેળવનારાઓને નમઃ-અન્ન આદિ આપીએ છીએ; ચ-અને વઃ-તમે મૃગયુભ્યઃ-પોતાના મૃગોની કામના કરનારાઓનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; તેમ તમે પણ અન્ન આપો અને સત્કાર કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે લોકો પદાર્થ વિદ્યા દ્વારા સંપૂર્ણ શિલ્પકાર્યોને સિદ્ધ કરે તેને પારિતોષિક આપીને વિદ્વાનો સત્કૃત કરે.

જે લોકો કૂતરાં આદિ પશુઓને ભોજન આદિના દાનથી પાળીને તથા તેને કેળવીને તેનો ઉપયોગ કરે, તેને રાજપુરુષ સુખ પહોંચાડે. (૨૭)

નમઃ શ્વમ્ભ્યઃ શ્વપતિભ્યશ્ચ વો નમો નમો ભવાય ચ રુદ્રાય ચ નમઃ શર્વાય ચ પશુપતયે ચ નમો નીલગ્રીવાય ચ શિતિકઠ્ઠાય ચ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે પરીક્ષકો શ્વમ્ભ્યઃ-કૂતરાઓને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-અને વઃ-તમે શ્વપતિભ્યઃ-કૂતરાઓને પાળનારાઓને નમઃ-અન્ન આપો છો, અને તેનો સત્કાર કરો છો ચ-તથા ભવાય-શુભગુણોમાં પ્રશંસિત પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ, ચ-અને સ્દાય-દુષ્ટોને રડાવનાર વીરનો સત્કાર કરીએ છીએ, ચ-તથા શર્વાય-દુષ્ટોને મારનારને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-અને પશુપતયે-ગાય આદિ પશુઓના પાલકને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ, ચ-અને નીલગ્રીવાય-સુંદર વર્ણયુક્ત કંઠથી યુક્ત ચ-અને શિતિકઠ્ઠાય-તીક્ષ્ણ અને કાળા કંઠ વાળાને નમઃ-અન્ન આપીએ છીએ અને સત્કાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ અન્ન આપો અને સત્કાર કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કૂતરાં વગેરે પશુઓને અન્ન આદિના દાનથી વધારીને તેનો ઉપયોગ કરી લેવો જોઈએ અને પશુપાલક આદિનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨૮)

નમઃ કર્પર્દિને ચ વ્યુત્કેશાય ચ નમઃ સહસ્ત્રાક્ષાય ચ શ્વતર્ધન્વને ચ નમો ગિરિશ્યાય ચ શિપિવિષ્ટાય ચ નમો મીઢુષ્ટમાય ચેષ્ટમતે ચ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : ગૃહસ્થ લોકો કર્પર્દિને-જટાધારી બ્રહ્મચારીને, ચ-અને વ્યુત્કેશાય-મુંડન કરેલ સંન્યાસીને, ચ-અને સંન્યાસના ઈચ્છુકને નમઃ-અન્ન આપે, ચ-અને સહસ્ત્રાક્ષાય-અસંખ્ય શાસ્ત્ર-વિષય આદિમાં

દષ્ટિ રાખનાર વિદ્વાન્ બ્રાહ્મણનો, **ચ**-અને શતધન્વને-ધનુર્વિદ્યા આદિ અસંખ્ય શસ્ત્ર વિદ્યાના શિક્ષક ક્ષત્રિયનો, **નમઃ**-સત્કાર કરે; **ચ**-અને ગિરિણિયાય-પર્વતોના આશ્રયમાં શયન કરનાર વાનપ્રસ્થનો, **ચ**-અને શિપિવિષ્ટાય-પશુઓના પાલક વૈશ્યનો **ચ**-અને શૂદ્રાય-શૂદ્રનો **નમઃ**-સત્કાર કરે; **ચ**-અને મીઢુષ્ટમાય-વૃક્ષ, બગીચા, ખેતર આદિને સારી રીતે સિંચનાર ખેડૂતોનો **ચ**-અને માળી આદિનો, **ઇષુમતે**-પ્રશંસિત બાણોવાળા વીરોનો, **ચ**-અને સેવક-વર્ગનો **નમઃ**-અન્નાદિ પ્રદાન કરીને તથા સત્કાર કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ બ્રહ્મચારી આદિજનોનો સત્કાર કરીને તેને વિદ્યાદાન કરે અને કરાવે, તથા સંન્યાસી આદિજનોની પૂજા કરીને વિશિષ્ટ વિજ્ઞાનને ગ્રહણ કરે. (૨૯)

નમો હ્રસ્વાય ચ વામનાય ચ નમો બૃહતે ચ વર્ષીયસે ચ નમો વૃદ્ધાય ચ સ્વૃથે ચ નમોઽગ્રાય ચ પ્રથમાય ચ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : જે ગૃહસ્થો હ્રસ્વાય-બાળકને **ચ**-અને વામનાય-પ્રશંસિત જ્ઞાનીને **ચ**-તથા મધ્યમ વિદ્વાનને **નમઃ**-અન્ન આપે છે; **ચ**-અને બૃહતે-મહાન પુરુષ **ચ**-અને વર્ષીયસે-અત્યંત વિદ્યાવૃદ્ધનો **નમઃ**-સત્કાર કરે છે; **ચ**-અને વૃદ્ધાય-વયોવૃદ્ધ **ચ**-અને સ્વૃથે-પોતાના સાથીઓ સાથે વધનારા **ચ**-અને સર્વના મિત્રનો **નમઃ**-સત્કાર કરે છે; **ચ**-અને અગ્રાય-સત્કર્મોમાં અગ્રસર પ્રથમાય-પ્રખ્યાત પુરુષનો **નમઃ**-સત્કાર કરે છે; તે સુખી રહે છે. (૩૦)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ અન્ન આદિથી અને બાળકો આદિનો સત્કાર કરીને સદ્વ્યવહારની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૦)

નમઽઆશવેં ચાજિરાય ચ નમઃ શીઘ્રાય ચ શીઘ્યાય ચ નમઽઊર્મ્યાય ચાવસ્વન્યાય ચ નમો નાદેયાય ચ દ્વીપ્યાય ચ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આશવે-વાયુની સમાન માર્ગમાં શીઘ્રગામીને, **ચ**-અને અજિરાય-ઘોડે સવારને ફેંકનાર ઘોડાને **ચ**-તથા હાથી આદિ **નમઃ**-અન્ન આદિ આપો; શીઘ્રાય-શીઘ્રગમનમાં શ્રેષ્ઠ **ચ**-તથા શીઘ્યાય-શીઘ્રતા કરનારાઓમાં પ્રસિદ્ધ **ચ**-તથા મધ્યસ્થ જનને **નમઃ**-અન્ન આપો **ચ**-અને ઊર્મ્યાય-જલતરંગોમાં વાયુ સમાન વિદ્યમાન **ચ**-અને અવસ્વન્યાય-અર્વાચીન શબ્દોમાં વિદ્યમાનને **ચ**-તથા દૂરથી સાંભળનારાઓને **નમઃ**-અન્ન આપો; નાદેયાય-નદીમાં રહેનાર **ચ**-અને દ્વીપ્યાય-ટાપુઓમાં રહેનાર **ચ**-અને તેના સંબંધીઓને **નમઃ**-અન્ન આપતાં રહો તો આપને સંપૂર્ણ આનંદ મળશે. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે ક્રિયાકૌશલથી રચિત વિમાનાદિ યાનો તથા ઘોડા આદિથી શીઘ્ર ગતિ કરનાર છે, તે ક્યા-ક્યા દ્વીપ વા દેશમાં ન જઈને રાજ્યને માટે શું-શું ધન પ્રાપ્ત ન કરી શકે ? પરંતુ સર્વત્ર જઈને સર્વસ્વ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૧)

નમો જ્યેષ્ઠાય ચ કનિષ્ઠાય ચ નમઃ પૂર્વજાય ચાપરજાય ચ નમો મધ્યમાય

ચાપગૃહ્માય ચ નમો જઘન્યાય ચ બુઘન્યાય ચ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જ્યેષ્ઠાય-અતિવૃદ્ધ ચ-અને કનિષ્ઠાય-અત્યંત બાળકનો નમઃ-સત્કાર કરો વા અન્ન આપો, પૂર્વજાય-મોટાભાઈ વા બ્રાહ્મણ ચ-અને અપરજાય-નાનાભાઈ વા-અન્યજનોને ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરો વા અન્ન આપો; મધ્યમાય-મધ્યમાં ઉત્પન્ન ભાઈ, વા ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય ચ-તથા અપગૃહ્માય-સરળ સ્વભાવવાળાનો નમઃ-સત્કાર કરો; જઘન્યાય-નીચ કર્મ કરનાર શૂદ્ર વા મલેચ્છ ચ-તથા બુઘન્યાય-અન્તરિક્ષમાં વિદ્યમાન મેઘની સમાન દાતા પુરુષનો નમઃ-અન્નાદિથી સત્કાર કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : પરસ્પર મળવાના સમયે 'નમસ્તે' એ વાક્યનું ઉચ્ચારણ કરીને નાનાઓ દ્વારા મોટાનો, મોટાઓ દ્વારા નાનાનો, નિમ્ન કોટિના લોકો દ્વારા ઉત્તમોનો અને ઉત્તમો દ્વારા નિમ્નોનો, ક્ષત્રિય આદિ દ્વારા બ્રાહ્મણોનો અને બ્રાહ્મણો દ્વારા ક્ષત્રિયો આદિનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ.

આ વેદોક્ત પ્રમાણના શિષ્ટાચારથી સર્વત્ર સર્વને એ વાક્યનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને પરસ્પરના સત્કારથી પ્રસન્ન રહેવું જોઈએ. (૩૨)

નમઃ સોભ્યાય ચ પ્રતિસર્યાય ચ નમો યામ્યાય ચ ક્ષેમ્યાય ચ નમઃ શ્લોક્યાય ચાવસાન્યાય ચ નમઃઽર્વ્યાય ચ ચ્લ્યાય ચ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સોભ્યાય-ઐશ્વર્યયુક્તોમાં પ્રસિદ્ધ ચ-અને પ્રતિસર્યાય-ધર્માત્માઓમાં ઉત્પન્ન થયેલ ચ-તથા ધનવાન ધર્માત્માઓને નમઃ-અન્ન આપીને યામ્યાય-ન્યાયકારીઓમાં ઉત્તમ ચ-અને ક્ષેમ્યાય-રક્ષા કરનારાઓમાં ચતુર ચ-અને ન્યાયાધીશાદિનો નમઃ-સત્કાર કરીને, શ્લોક્યાય-વેદવાણીમાં શ્રેષ્ઠ ચ-અને અવસાન્યાય-કાર્ય સમાપ્તિ વ્યવહારમાં કુશળ ચ-અને આરંભ કરવામાં ઉત્તમ પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરીને, ઝર્વ્યાય-મહાપુરુષોના સ્વામી ચ-અને ચ્લ્યાય-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોનો સંચય કરવામાં કુશળ ચ-અને વ્યય કરવામાં વિચક્ષણ પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરીને તે સર્વને આપ આનંદિત કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં આવેલ અનેક ચ-શબ્દોથી અન્ય પણ ઉપયોગી અર્થોનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. શ્રેષ્ઠજનોનો સત્કાર કરવો જોઈએ.

પ્રજાજનોએ ન્યાયાધીશ આદિનો તથા ન્યાયાધીશ આદિએ પ્રજાજનોનો [સત્કાર કરવો જોઈએ] પતિ આદિ પત્ની આદિને પ્રસન્ન રાખે અને પત્ની આદિ પતિને પ્રસન્ન રાખે. (૩૩)

નમો વન્યાય ચ કક્ષ્યાય ચ નમઃ શ્રવાય ચ પ્રતિશ્રવાય ચ નમઃઽઆશુષેણાય ચાશુરંથાય ચ નમઃ શૂરાય ચાવભેદિને ચ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વન્યાય-વનમાં રહેનાર ચ-અને કક્ષ્યાય-વનની સમીપ ઝૂંપડીઓમાં ચ-તથા ગુફાઓ આદિમાં રહેનારને નમઃ-અન્ન આપે છે; શ્રવાય-સાંભળવા અને સંભળાવવા માટે ચ-અને પ્રતિશ્રવાય-પ્રતિજ્ઞા કરનાર ચ-તથા પ્રતિજ્ઞા પૂર્ણ કરનારનો નમઃ-સત્કાર કરે છે; આશુષેણાય-શીઘ્રગામીની સેનાવાળા ચ-તથા આશુસ્થાય-શીઘ્રગામી રથવાળાના સ્વામી ચ-સારથિ આદિને નમઃ-

અન્ન આપે છે; શૂરાય-શત્રુઓને મારનારા ચ-અને અવભેદિને-શત્રુઓને ઇન્ન-ભિન્ન કરનાર ચ-તથા દૂતાદિનો નમઃ-સત્કાર કરે છે તેનો સર્વત્ર વિજય થાય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ વન તથા કક્ષાઓમાં રહેનાર વિદ્યાર્થીઓ તથા અધ્યાપકોને, બળવાન સેનાને, શીઘ્રગામી યાનોમાં જનાર વીરોને તથા દૂતોને અન્ન-ધન આદિથી તથા સત્કારથી પ્રોત્સાહિત કરી સદા વિજયી બનવું જોઈએ. (૩૪)

**નમોં બિલ્મિને ચ કવચિને ચ નમોં વર્મિણે ચ વસ્થિને ચ નમઃ શ્રુતાય
ચ શ્રુતસેનાય ચ નમોં દુન્દુભ્યાય ચાહનન્યાય ચ ॥ ૩૫ ॥**

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજનોના અધ્યક્ષ ! આપ બિલ્મિને-પ્રશંસિત ધારણ અને પોષણ કરનાર ચ-અને કવચિને-શરીરના રક્ષક કવચને ધારણ કરનાર ચ-તથા તેના સહકારીઓનો નમઃ-સત્કાર કરો; ચ-અને વર્મિણે-શરીર રક્ષાના અનેક સાધનોથી યુક્ત ચ-અને વસ્થિને-પ્રશંસિત ધરવાળા ચ-અને ધર આદિના રક્ષકોને નમઃ-અન્નાદિ પ્રદાન કરો; શ્રુતાય-શુભગુણોમાં પ્રસિદ્ધ ચ શ્રુતસેનાય-પ્રસિદ્ધ સેનાવાળા ચ-તથા સેનાઓનો નમઃ-સત્કાર કરો , ચ-અને દુન્દુભ્યાય-ઢોલ વગેરે વાજા વગાડનાર કુશળ ઢોલી-વાદક ચ-તથા આહનન્યાય-વીરોનો યુદ્ધમાં ઉત્સાહ વધારવા વાજાંત્ર વગાડવામાં કુશળ પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરો; જેથી તમારો પરાજય કદી પણ ન થાય. (૩૫)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોએ યોદ્ધાઓ માટે સર્વત્રથી રક્ષા, સર્વત્રથી સુખદાયક ઘર, ભોજન અને પાનના ઉત્તમ પદાર્થો, શ્રેષ્ઠજનોનો સંગ અને અતિ શ્રેષ્ઠ વાજાંત્ર આપીને પોતાના અભીષ્ટ કાર્યને સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૩૫)

**નમોં ધૃષ્ણવે ચ પ્રમૃશાય ચ નમોં નિષઙ્ગિણે ચેષુધિમતે ચ નમસ્તીક્ષ્ણેષ્વે
ચાયુધિને ચ નમઃ સ્વાયુધાય ચ સુધન્વને ચ ॥ ૩૬ ॥**

પદાર્થ : જે રાજા અને પ્રજાજનોના અધ્યક્ષ ધૃષ્ણવે-દંઢ ચ-અને પ્રમૃશાય-શ્રેષ્ઠ વિચારશીલ ચ-અને કોમળ સ્વભાવવાળા પુરુષને નમઃ-અન્નાદિ પ્રદાન કરે છે; ચ-અને નિષઙ્ગિણે-અનેક શસ્ત્રો વાળા ચ-અને ઇષુધિમતે-પ્રશંસિત શસ્ત્ર અસ્ત્ર અને મ્યાનવાળાનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; ચ-અને તીક્ષ્ણેષ્વે-તીક્ષ્ણ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી યુક્ત ચ-અને આયુધિને-તોપ આદિથી ચોતરફ યુદ્ધ કરનાર અધ્યક્ષ પુરુષનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; સ્વાયુધાય-સુંદર આયુધોવાળા ચ-અને સુધન્વને-સુંદર ધનુષ્યવાળા ચ-અને તેના રક્ષકોને નમઃ-અન્ન પ્રદાન કરે છે. તેઓ સદા વિજયી બને છે. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કોઈપણ કર્મ સારી રીતે વિચાર કરીને તથા દંઢ ઉત્સાહથી કરવા જોઈએ. શરીર તથા આત્માના બળ વિના શસ્ત્ર પ્રહાર તથા શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી, તેથી નિરંતર સેનાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

નમઃ સ્તુત્યાય ચ પથ્યાય ચ નમઃ કાટ્યાય ચ નીપ્યાય ચ નમઃ કુલ્યાય

ચ સરસ્યાય ચ નમો નાદેયાય ચ વૈશ્વન્તાય ચ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ સ્તુત્યાય-ઝરણાં, નાળા વગેરેમાં રહેનારા ચ-અને પથ્યાય-માર્ગ ચાલનારા ચ-અને માર્ગ આદિના ભોમિયાને નમઃ-અન્ન આપીને, કાટ્યાય-કૂવા વગેરેના સ્થાનમાં રહેનાર ચ-અને નીપ્યાય-વિશાળ જલાશય પર રહેનાર ચ-તથા તેના સહાયકોનો નમઃ-સત્કાર કરીને; કુલ્યાય-નહેરોનો પ્રબંધ કરનારા ચ-અને સરસ્યાય-તળાવના કાર્યમાં પ્રસિદ્ધ ગણાય તેનો નમઃ-સત્કાર કરીને; ચ-અને નાદેયાય-નદી કિનારે રહેનારા ચ-તથા વૈશ્વન્તાય-નાના જલાશયો પર રહેનારાઓને ચ-તથા વાવ આદિ પર રહેનારાઓને નમઃ-અન્નાદિ આપીને દયા પ્રકાશિત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સ્તોતો, માર્ગો, કૂવાઓ, જલપ્રાયઃ દેશો અને નાના-મોટા તળાવોનાં જળને વહાવીને તથા તેને ઉચિત સ્થાનમાં બાંધીને (બાંધ બાંધીને) ખેતર વગેરેમાં પુષ્કળ અન્ન, ફળ, ફૂલ, વૃક્ષ, વેલ અને ઝાડીઓ વગેરેની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૭)

નમઃ કૂપ્યાય ચાવૃત્યાય ચ નમો વીધ્યાય ચાતપ્યાય ચ નમો મેધ્યાય ચ વિદ્યુત્યાય ચ નમો વર્ષ્યાય ચાવર્ષ્યાય ચ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ કૂપ્યાય-કૂવા પર ચ-અને અવૃત્યાય-ખાડામાં ચ-અને જંગલોમાં રહેનારાઓને નમઃ-અન્ન આદિ આપીને, ચ-અને વિધ્યાય-વિવિધ પ્રકાશોમાં રહેનારા ચ-તથા આતપ્યાય-તડકામાં રહેનારા વા ચ-ખેતી વગેરેનો પ્રબંધ કરનારાઓને નમઃ-અન્ન આપીએ; મેધ્યાય-મેઘમાં રહેનારા ચ-તથા વિદ્યુત્યાય-વીજળીથી કામ લેનારાઓ ચ-તથા અગ્નિ વિદ્યાને જાણનારાઓને નમઃ-અન્નાદિ આપીએ; ચ-અને વર્ષ્યાય-વર્ષામાં રહેનારાઓ ચ-તથા અવર્ષ્યાય-વર્ષા રહિત દેશમાં રહેનારાઓનો નમઃ-સત્કાર કરીને આનંદિત બનીએ. (૩૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય કૂવા આદિથી કાર્ય સિદ્ધિ માટે નોકરોનો સત્કાર કરે, તો અનેક ઉત્તમ કાર્ય થઈ શકે છે. (૩૮)

નમો વાત્યાય ચ રેષ્યાય ચ નમો વાસ્તવ્યાય ચ વાસ્તુપાય ચ

નમઃ સોમાય ચ રુદ્રાય ચ નમસ્તામ્રાય ચારુણાય ચ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય વાત્યાય-વાયુ વિદ્યામાં કુશલ ચ-અને રેષ્યાય-હિંસકોમાં પ્રસિદ્ધને ચ-પણ અન્નાદિ આપે છે; ચ-તથા વાસ્તવ્યાય-પોતાના નિવાસ સ્થાન પર રહેનારા ચ-અને વાસ્તુપાય-નિવાસ સ્થાનના રક્ષકનો નમઃ-સત્કાર કરે છે; ચ-તથા સોમાય-ધનાઢય ચ-અને સ્દાય-દુષ્ટોને રડાવનારને નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; ચ-તથા તામ્રાય-અધર્મમાં ગ્લાનિ કરનાર ચ-અને અસ્માય-ધર્મને પ્રાપ્ત કરાવનારનો નમઃ-સત્કાર કરે છે, તેઓ લક્ષ્મીથી સંપન્ન બને છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો વાયુ આદિના ગુણોને જાણીને તેનો વ્યવહારોમાં પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે અનેક સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૯)

નમઃ શૃંગ્લવૈ ચ પશુપતયે ચ નમઃ ડગ્રાય ચ ભીમાય ચ નમોઽગ્રેવધાય
ચ દૂરેવધાય ચ નમો હન્ત્રે ચ હનીયસે ચ નમો વૃક્ષેભ્યો હરિકેશેભ્યો
નમસ્તારાય ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય શૃંગ્લવે-સુખને પ્રાપ્ત કરનાર ચ-અને પશુપતયે-ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરનારને ચ-તથા ગાય આદિને પણ નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; ડગ્રાય-તેજસ્વી ચ-અને ભીમાય-ભયંકર પુરુષનો નમઃ-સત્કાર કરે છે; અગ્રેવધાય-શત્રુઓને પ્રથમ બંધન વા વધ કરનારને ચ-અને દૂરેવધાય-દૂર પરના શત્રુઓને બંધન વા વધ કરનારને નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; હન્ત્રે-દુષ્ટોને મારનાર ચ-અને હનીયસે-દુષ્ટોને મારનાર તથા જડમૂલથી નાશ કરનારને નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; વૃક્ષેભ્યઃ-શત્રુઓને કાપનાર વા વૃક્ષોને તથા હરિકેશેભ્યઃ-ભૂરાવાળ વાળાને વા વૃક્ષોનો નમઃ-સત્કાર કરે છે, અથવા જળ આદિ આપે છે; અને તારાય-દુઃખથી પાર કરનાર પુરુષને નમઃ-અન્નાદિ આપે છે, તે સુખી રહે છે. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ગાય આદિ પશુઓનું પાલન કરવું જોઈએ અને ભયંકર આદિ મનુષ્યોનું શમન કરીને સંતોષ માનવો જોઈએ. (૪૦)

નમઃ શમ્ભવાય ચ મયોભવાય ચ નમઃ શઙ્કરાય ચ મયસ્કરાય ચ નમઃ
શિવાય ચ શિવતરાય ચ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય શમ્ભવાય-સુખદાયક પરમેશ્વર ચ-અને મયોભવાય-સુખ પ્રાપ્તિ માટે વિદ્વાનનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; શઙ્કરાય-કલ્યાણ કરનાર ચ-અને મયસ્કરાય-સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પહોંચાડનારનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; શિવાય-મંગલકારી ચ-અને શિવતરાય-અત્યંત મંગલ સ્વરૂપ પુરુષનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; તે કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રેમ-ભક્તિપૂર્વક સર્વમંગલ પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ અને સેનાધ્યક્ષનો સત્કાર કરે જેથી પોતાના અભીષ્ટ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૪૧)

નમઃ પાર્યાય ચાવાર્યાય ચ નમઃ પ્રતરણાય ચોત્તરણાય ચ નમસ્તીર્થ્યાય ચ
કૂલ્યાય ચ નમઃ શષ્યાય ચ ફેન્યાય ચ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય પાર્યાય-દુઃખોથી દૂર રહેનાર ચ-અને અવાર્યાય-દુઃખોના અવર ભાગમાં રહેનારનો નમઃ-સત્કાર કરે છે; ચ-તથા પ્રતરણાય-નોંકા આદિ દ્વારા તે કિનારાથી આ કિનારે પ્રાપ્ત કરનાર વા કરાવનાર ચ-અને ઉત્તરણાય-આ કાંઠેથી તે કાંઠે પ્રાપ્ત કરનાર વા કરાવનારનો નમઃ-સત્કાર કરે છે; ચ-અને તીર્થ્યાય-વેદ વિદ્યાના અધ્યાપકો તથા સત્યભાષણાદિમાં શ્રેષ્ઠ ચ-અને કૂલ્યાય-સમુદ્ર તથા નદી કિનારે રહેનારને નમઃ-અન્ન આપે છે; શષ્યાય-ઘાસ આદિ કાર્યોમાં પ્રવીણ ચ-અને ફેન્યાય-ફીણ-પરપોટાદિ વ્યવહારમાં પ્રવીણ પુરુષોને ચ-પણ નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યાનોમાં તથા નાવ આદિમાં સુશિક્ષિત હોડીવાળા આદિમાં રાખીને તથા સમુદ્ર

આદિની આરપાર જાવ-આવ કરીને દેશ-દેશાન્તર અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરના વ્યવહારોથી ધન નિષ્પન્ન કરીને પોતાના અભીષ્ટની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

**નમઃ સિકત્યાય ચ પ્રવાહ્યાય ચ નમઃ કિંશિલાય ચ ક્ષયણાય ચ નમઃ
કર્પર્દિને ચ પુલસ્તયે ચ નમ ઇરિણ્યાય ચ પ્રપથ્યાય ચ ॥ ૪૩ ॥**

પદાર્થ : જે મનુષ્ય સિકત્યાય-રેતીમાંથી સુવર્ણાદિ કાઢવામાં ચતુર ચ-અને પ્રવાહ્યાય-બળદ આદિને હાંકવામાં પ્રવીણને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; કિંશિલાય-નિંદિત વૃત્તિવાળા અનાથ ચ-અને ક્ષયણાય-નિવાસ સ્થાનમાં રહેનારને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; કર્પર્દિને-જટાધારી ચ-અને પુલસ્તયે-મહાકાય પ્રાણીઓને ફેંકનારને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; ઇરિણ્યાય-ઉપર-ખારી જમીનમાંથી અતિ ઉપકાર લેનાર ચ-અને પ્રપથ્યાય-ઉત્તમ ધર્મના માર્ગોમાં પ્રવીણ પુરુષનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; તેઓ સર્વના પ્રિય બને છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ભૂગર્ભ વિદ્યાથી રેતી વગેરેમાં રહેલ સુવર્ણ આદિ ધાતુઓને કાઢીને તથા મહાન ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરીને અનાથોનું પાલન કરવું જોઈએ. (૪૩)

નમો વ્રજ્યાય ચ ગોષ્ટ્યાય ચ નમસ્તલ્પ્યાય ચ ગેહ્યાય ચ નમો

હૃદ્ય્યાય ચ નિવેષ્યાય ચ નમઃ કાટ્યાય ચ ગહ્વરેષ્ટાય ચ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય વ્રજ્યાય-ક્રિયાઓમાં પ્રસિદ્ધ ચ-અને ગોષ્ટ્યાય-ગૌશાળાના કાર્યોમાં કુશળને ચ-પણ નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; તલ્પ્યાય-તલ્પ-શય્યા આદિના નિર્માણમાં પ્રવીણ ચ-અને ગેહ્યાય-ઘરમાં રહેનારને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; હૃદ્ય્યાય-શ્રેષ્ઠ હૃદયવાળા ચ-અને નિવેષ્યાય-વિષયોમાં નિરંતર વ્યાપ્ત હોવામાં પ્રવીણનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; કાટ્યાય-ઢાંકેલા ગુપ્ત પદાર્થોને પ્રકટ કરનાર ચ-અને ગહ્વરેષ્ટાય-અતિ ગહન ગિરિ કંદરાઓમાં રહેનાર અતિ શ્રેષ્ઠ પુરુષને ચ-પણ નમઃ-અન્નાદિ આપે છે તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો મેઘ દ્વારા વર્ષાથી ઉત્પન્ન ઘાસ આદિની રક્ષા કરીને ગાય આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ પુષ્કળ ભોગ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

**નમઃ શુષ્વ્યાય ચ હરિત્યાય ચ નમઃ પાંસવ્યાય ચ રજસ્યાય ચ નમો
લોપ્યાય ચોલપ્યાય ચ નમ ઽ ઝર્વ્યાય ચ સૂર્યાય ચ ॥ ૪૫ ॥**

પદાર્થ : જે મનુષ્ય શુષ્વ્યાય-સૂકા-નીરસ પદાર્થોમાં રહેનાર ચ-અને હરિત્યાય-લીલા-સરસ પદાર્થોમાં પ્રસિદ્ધને ચ-પણ નમઃ-જલ આદિ આપે છે; પાંસવ્યાય-ધૂળમાં રહેનાર ચ-અને રજસ્યાય-લોક-લોકાન્તરોમાં રહેનારનું ચ-પણ નમઃ-માન કરે છે; લોપ્યાય-છેદન કરવામાં પ્રવીણ ચ-અને ઝર્વ્યાય-ફેંકવામાં કુશળ

પુરુષનું ચ-પણ નમઃ-માન કરે છે; ઋર્વાય-દુષ્ટોને મારવામાં પ્રસિદ્ધ ચ-અને સૂર્વાય-દુષ્ટોની તાડના કરનારનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; તેઓના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૪૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શોષણ-સૂકાવવા અને હરિતભીના બનાવનાર વાયુઓની વિદ્યા જાણીને પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪૫)

નમઃ પૂર્ણાય ચ પર્ણશદાય ચ નમઃડદગુરમાણાય ચાભિઘ્નતે ચ નમઃ-આખિદતે
ચ પ્રખિદતે ચ નમઃડઙ્કૃદ્ભ્યો ધનુષ્કૃદ્ભ્યશ્ચ વો નમો નમો વઃ કિરિકેભ્યો
દેવાનાઃ હૃદયેભ્યો નમો વિચિન્વત્કેભ્યો નમો વિક્ષિણત્કેભ્યો નમ ડઆનિર્હૃતેભ્યઃ ॥
૪૬ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય પર્ણાય-પ્રત્યુપકારના રક્ષકને ચ-અને પર્ણશદાય-પાંદડાનાં કાતરનારને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; ડદગુરમાણાય-શ્રેષ્ઠ રીતે ઉદમ કરનાર ચ-અને અભિઘ્નતે-સન્મુખ બનીને દુષ્ટોને મારનારને ચ-પણ નમઃ-અન્ન આપે છે; આખિદતે-દીન અને નિર્ધન ચ-અને પ્રખિદતે-અત્યંત દરિદ્રનો ચ-પણ નમઃ-સત્કાર કરે છે; ઙ્કૃદ્ભ્યઃ-બાણોને બનાવનારને નમઃ-અન્નાદિ આપે છે; ચ-અને વઃ-તમે ધનુષ્કૃદ્ભ્યઃ-ધનુષ્યોના નિર્માતાનું નમઃ-માન કરો છો; દેવાનામ્-વિદ્વાનોના હૃદયેભ્યઃ-પોતાના આત્મ સમાન પ્રિયવર્તાવ કરનાર વઃ-તમે કિરિકેભ્યઃ-બાણ આદિ ફેંકનારને નમઃ-અન્નાદિ આપો છો; વિચિન્વત્કેભ્યઃ-શુભ ગુણો અને પદાર્થોનો સંચય કરનારનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; વિક્ષિણત્કેભ્યઃ-શત્રુઓનો નાશ કરનારનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; અને આનિર્હૃતેભ્યઃ-સર્વત્રથી તિરસ્કૃતનો નમઃ-સત્કાર કરો છો; તેઓ સર્વત્રથી ધનવાન બને છે. (૪૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ ઔષધિઓથી અન્ન આદિનો સંગ્રહ કરીને અનાથ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને આપીને, તેઓને આનંદિત કરવા જોઈએ. (૪૬)

દ્રાપેડઅન્ધસસ્પતે દરિદ્ર નીલ્લોહિત ।

આસાં પ્રજાનામૈષાં પશૂનાં મા ભેર્મા રોઙ્ મો ચ નઃ કિં ચનામમત્ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે દ્રાપે-નિંદિત ગતિથી રક્ષક, અન્ધસઃ-અન્નાદિના પતે-સ્વામી, દરિદ્ર-દરિદ્રતાને પ્રાપ્ત, નીલ્લોહિત-નીલવર્ણયુક્ત પદાર્થોનું સેવન કરનાર રાજા વા પ્રજાજન ! તું આસામ્-આ પ્રત્યક્ષ પ્રજાનામ્-મનુષ્યાદિ ચ-અને ણામ્-એ પશૂનામ્-ગાય વગેરે પશુઓના રક્ષક બનીને એનાથી મા-ભેઃ-ભય પ્રાપ્ત ન કર, નઃ-અમને તથા અન્ય કિમ્-કોઈને ચન-પણ મો આમમત્-રોગી ન કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે ધનવાન છે, તે દરિદ્રોનું પાલન કરે. જે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન છે, તેઓ પ્રજાના પશુઓની કદી પણ હિંસા ન કરે, જેથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ થાય. (૪૭)

इमा रुद्राय तवसै कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भ्रामहे मतीः ।

यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामेऽस्मिन्ननातुरम् ॥ ४८ ॥

પદાર્થ : હે શત્રુરોધક વીરપુરુષ ! યથા-જેમ અસ્મિન્-આ ગ્રામે-બ્રહ્માંડ સમૂહમાં અનાતુરમ્-દુઃખરહિત પુષ્ટમ્-રોગરહિત હોવાથી બળવાન વિશ્વમ્-સર્વ જગત્ શમ્-સુખી અસત્-રહે, તેમ અમે દ્વિપદે-મનુષ્યાદિ, ચતુષ્પદે-ગાય આદિ, તવસે-બલિષ્ઠ કર્પર્દિને-બ્રહ્મચર્યને સેવન કરેલ ક્ષયદ્વીરાય-દુષ્ટનાશક વીરોથી યુક્ત સ્વાય-પાપીને રડાવનાર સેનાપતિ માટે ઇમા:-એ મતી:-બુદ્ધિમાનોનું પ્રભરામહે-ઉત્તમ ધારણ અને પોષણ કરે છે, તેમ તું પણ તેને ધારણ કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ પ્રજામાં સ્ત્રી-પુરુષ બુદ્ધિમાન હોય, તેમ અનુષ્ઠાન કરીને-મનુષ્ય અને પશુઆદિથી યુક્ત રાજ્યને રોગરહિત, પુષ્ટિમાન્ અને સદા સુખી કરે. (૪૮)

या तै रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी ।

शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ॥ ४९ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્ર-રાજવેદ ! તું યા-જે તે-તારી શિવા-કલ્યાણકારી તનૂ:-કાયા વા વિશાળ નીતિ છે, શિવા-જોવામાં પ્રિય ભેષજી-ઔષધો સમાન રોગનાશક અને સ્તસ્ય-રોગીને શિવા-સુખદાયક ભેષજી-પીડા હરનારી છે, તયા-તેના દ્વારા જીવસે-જીવવા માટે વિશ્વાહા-સર્વ દિવસ ન:-અમને મૃડ-સુખી કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : રાજવેદ આદિ વિદ્વાન્ ધર્મ નીતિથી, ઔષધિઓ આપીને, હસ્તક્રિયા-કૌશલથી શસ્ત્રો દ્વારા છેદન અને ભેદન કરીને રોગોથી નિવૃત્ત કરીને સર્વ સેના તથા પ્રજાને પ્રસન્ન કરે. (૪૯)

परि नो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः ।

अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड ॥ ५० ॥

પદાર્થ : હે મીઢ્વ:-સુખની વર્ષા કરનાર રાજપુરુષ ! આપ જે સ્તસ્ય-સભાપતિ રાજાનું હેતિ:-વજ્ર છે તેથી ત્વેષસ્ય-ક્રોધાદિથી પ્રજ્વલિત અઘાયો:-પાપના ઈચ્છુક દુષ્ટાચારીથી ન:-અમને પરિ,વૃણક્તુ-સર્વ રીતે પૃથક્ રાખ. જે દુર્મતિ:-દુષ્ટ બુદ્ધિ છે, તેનાથી પણ અમને પરિવૃણક્તુ-સર્વ તરફથી બચાવો અને મઘવદ્ભ્ય:-પ્રશંસિત ધનવાનોથી પ્રાપ્ત સ્થિરા-સ્થિર બુદ્ધિ છે, તેને તોકાય-સઘોજાત બાળક અને તનયાય-કુમાર માટે પરિ + તનુષ્વ-સર્વત્રથી વિસ્તૃત કર, અને એ બુદ્ધિથી સર્વને નિરંતર અવ, મૃડ-સુખી-આનંદિત કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોની એ ધાર્મિક શક્તિ છે, જેથી પ્રજાની રક્ષા અને દુષ્ટોનો નાશ થાય; એ માટે ઉત્તમ વેદજન સર્વના સ્વાસ્થ્ય, સ્વતંત્રતા અને સુખની ઉન્નતિ કરે, જેથી સર્વ સુખ મળે. (૫૦)

मीढुष्टम् शिवतम शिवो नः सुमना भव । परमे वृक्षऽआयुधं निधाय कृत्तिं वसानुऽआ चर् पिनाकम्बिभ्रदा गहि ॥ ५१ ॥

પદાર્થ : હે મીહુષ્ટમ-અત્યંત પરાક્રમયુક્ત શિવતમ-અતિ કલ્યાણકારી સભા અથવા સેનાના પતિ !
આપ ન:-અમારા માટે સુમના:-પ્રસન્નચિત્તથી શિવ:-સુખકારી ભવ-બનો.

આયુધમ્-તલવાર, બંદૂક અને તોપ આદિ શસ્ત્રોને નિધાય-ધારણ કરીને, કૃત્તિમ્-મૃગચર્મના અંગરખાને
વસાન:-શરીર પર પહેરીને પિનાકમ્-શરીરનું રક્ષણ કરનાર ધનુષ્ય અથવા બખ્તર આદિને બિભ્રત્-
ધારણ કરતાં અમારી રક્ષા માટે આગહિ-આવો; પરમે-પ્રબળ વૃક્ષે-કાપવા યોગ્ય શત્રુ સેનામાં આ +
ચસ-સર્વત્ર વિચરણ કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિ આદિ પોતાની પ્રજા પ્રત્યે મંગલકારી-શુભ વ્યવહારવાળા તથા
દુષ્ટો માટે અગ્નિ સમાન દાહક હોય.

જેથી સર્વ ધર્મમાર્ગનો ત્યાગ કરી અધર્મ માર્ગ પર કદી પણ આચરણ ન કરે. (૫૧)

વિકિરિદ્ઘ્ વિલોહિત્ નમસ્તેઽસ્તુ ભગવઃ ।

યાસ્તૈ સહસ્રૃઃ હૈતયોઽન્યમ્સ્મન્નિ વપન્તુ તાઃ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે વિકિરિદ્ઘ-વિશેષ રૂપથી સુવરની સમાન સોનાના વા વિશિષ્ટ સુવરની નિંદા કરનાર,
વિલોહિત-વિવિધ પદાર્થોને પ્રાપ્ત, ભગવઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ રાજન્ ! તે-આપનો નમઃ-સત્કાર અસ્તુ-
થાય જેથી તે-(આપના) યા:-જે સહસ્રમ્-અસંખ્ય પ્રકારની હૈતયઃ-ઉન્નતિ વા વજ્રાદિ શસ્ત્ર છે તા:-
તે અસ્મત્-અમારાથી અન્યમ્-બીજા શત્રુનું નિવપન્તુ-નિરંતર છેદન કરે. (૫૨)

ભાવાર્થ : પ્રજાજન રાજપુરુષો પ્રત્યે એમ કહે-જે આપ લોકોની ઉન્નતિઓ અને શસ્ત્રાસ્ત્ર છે, તે
અમને સુખમાં સ્થાપિત કરે, અને અન્યોને અર્થાત્ અમારા શત્રુઓનું નિવારણ કરે. (૫૨)

સહસ્રાણિ સહસ્રશો બાહ્વોસ્તવ્ હૈતયઃ ।

તાસામીશાનો ભગવઃ પરાચીના મુખા કૃધિ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે ભગવઃ-ભાગ્યવાન્ સેનાપતિ ! જે તવ-આપની બાહ્વો:-ભુજાઓમાં સહસ્રાણિ-અસંખ્ય
હૈતયઃ-પ્રબલ વજ્રની ગતિ છે, તાસામ્-તેના ઈશાનઃ-સ્વામી બનીને આપ સહસ્રશઃ-હજારો શત્રુઓના
મુખા-મુખોને પરાચીના-પાછા ફેરવીને દૂર કૃધિ-કરો. (૫૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો-પોતાના બાહુબળથી રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને તથા અસંખ્ય શૂરવીરોની સેના બનાવીને
સર્વ શત્રુઓને પાછા મોઢે કાઢી મૂકે. (૫૩)

અસંખ્યાતા સહસ્રાણિ ચે રુદ્રાઽઅધિ ભૂમ્યામ્ ।

તેષાંઃ સહસ્રયોજ્જનેઽવ્ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ચે-જે અસંખ્યાતા-અસંખ્ય સહસ્રાણિ-હજારો સ્ત્રાઃ-સજીવ-નિર્જીવ

પ્રાણ આદિ વાયુ ભૂમ્યામ્-પૃથિવી અધિ-પર છે, તેષામ્-તેના સંબંધથી સહસ્રયોજને-અસંખ્ય ચાર ગાઉના યોજનાવાળા દેશમાં ધન્વાનિ-ધનુષ્યોનો અવતન્મસિ-વિસ્તાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : પ્રત્યેક મનુષ્ય શરીરમાં વિભક્ત અસંખ્ય ભૂમિ સંબંધી જીવ અને વાયુઓને જાણે, તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે તથા તેનો પણ ઉપકાર કરે. (૫૪)

અસ્મિન્ મહત્પૃણવેન્તરિક્ષે ભ્વાઽઅધિ ।

તેષાંઃ સહસ્રયોજનેઽવ્ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે જે અસ્મિન્-આ મહતિ-વ્યાપકતા આદિ મહાન ગુણોથી યુક્ત અર્ણવે-બહુ જળવાળા સમુદ્રની સમાન અગાધ અન્તરિક્ષે-સર્વની વચ્ચે અવિનાશી આકાશમાં ભવાઃ-વિદ્યમાન અધિ-જીવ અને વાયુ છે, તેષામ્-તેનો પ્રયોગ કરીને સહસ્રયોજને-અસંખ્ય અને ચાર ગાઉના યોજનોવાળા દેશમાં ધન્વાનિ-ધનુષ્ય વા અન્નાદિ ધાન્યોને અધ્યવતન્મસિ-અધિકતાથી વિસ્તાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યએ જેમ ભૂમિના જીવ અને વાયુઓથી કાર્યોમાં ઉપયોગ ગ્રહણ કરે છે, તેમ આકાશમાં રહેલા જીવો અને વાયુઓથી પણ ઉપયોગ ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૫૫)

નીલગ્રીવાઃ શિતિક્ષ્ણા દિવઃ રુદ્રાઽપશ્રિતાઃ ।

તેષાંઃ સહસ્રયોજનેઽવ્ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે નીલગ્રીવાઃ-કંઠમાં નીલવર્ણયુક્ત, શિતિક્ષ્ણાઃ-તીક્ષ્ણ વા શ્વેત કંઠયુક્ત, દિવમ્-વિદ્યુત્ની સમાન સૂર્ય પર અપશ્રિતાઃ-આશ્રિત સ્ત્રાઃ-જીવ વા વાયુ છે, તેષામ્-તેના ઉપયોગથી સહસ્રયોજને-અસંખ્ય યોજનોવાળા દેશમાં ધન્વાનિ-શસ્ત્રાદિને અવ + તન્મસિ-વિસ્તૃત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો અગ્નિસ્થ વાયુ વા જીવોને જાણીને ઉપયોગ કરીને આગ્નેય શસ્ત્ર આદિ સિદ્ધ કરે. (૫૬)

નીલગ્રીવાઃ શિતિક્ષ્ણાઃ શર્વાઽઅધઃ ક્ષમાચરાઃ ।

તેષાંઃ સહસ્રયોજનેઽવ્ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે નીલગ્રીવાઃ-નીલવર્ણગ્રીવાયુક્ત, શિતિક્ષ્ણાઃ-તથા શ્વેત કંઠયુક્ત, શર્વાઃ-હિંસક જીવ, અધઃ-અધોગામી, ક્ષમાચરાઃ-પૃથિવી પર વિચરણ કરનાર જીવ છે, તેષામ્-તેને સહસ્રયોજને-હજાર યોજન દેશમાં દૂર કરવા માટે ધન્વાનિ-ધનુષ્યોને અમે અવતન્મસિ-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે વાયુ ભૂમિથી આકાશમાં અને આકાશથી ભૂમિમાં આવે અને જાય છે, તેમાં જે તેજ-અગ્નિ અને ભૂમિ આદિ તત્વોના અવયવો રહે છે, તેને જાણીને, ઉપયોગ કરીને કાર્યો

સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫૭)

ये वृक्षेषु शृष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः ।

तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥ ५८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે એ-જે વૃક્ષેષુ-આંબાદિ વૃક્ષોમાં શૃષ્પિજ્જરા:-હિંસક પિંજર વર્ણવાળા નીલગ્રીવા:-નીલ વર્ણની ગ્રીવાવાળા અને ગળી જનારા વિલોહિતા:-અનેક કાળા વર્ણોવાળા સર્પ વગેરે હિંસક જીવ છે તેષામ્-તેના સહસ્રયોજને-અસંખ્ય યોજન દૂર દેશમાં કાઢી મૂકવા માટે ધન્વાનિ-ધનુષ્યોને અવતન્મસિ-વિસ્તૃત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વૃક્ષ આદિ પર વૃદ્ધિ પૂર્વક જીવનારા સર્પ આદિ છે, તેનું પણ યથાશક્તિ નિવારણ કરવું જોઈએ. (૫૮)

ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः ।

तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्મસિ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ એ-જે ભૂતાનામ્-પ્રાણી અને અપ્રાણીઓ અધિપતય:-રક્ષક વિશિખાસ:-શિખારહિત સંન્યાસી અને કપર્દિન:-જટાધારી બ્રહ્મચારી છે, તેષામ્-તેના હિતને માટે સહસ્રયોજને-હજાર યોજનના દેશમાં અમો સર્વથા ભ્રમણ કરીએ છીએ. તથા ધન્વાનિ-અવિદ્યાદિ દોષોના નિવારણ માટે વિદ્યાદિ શસ્ત્રોનો અવતન્મસિ-વિસ્તાર કરીએ છીએ; તેમ હે રાજપુરુષો ! તમે પણ સદા ભ્રમણ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સૂત્રાત્મા અને ધનંજય આદિ [વાયુઓ]ની સમાન સંન્યાસી અને બ્રહ્મચારી સર્વના શરીરો અને આત્માઓની પુષ્ટિકર્તા છે, તેના [દ્વારા કરવામાં આવેલ] અધ્યાપન અને ઉપદેશથી બુદ્ધિ અને શરીરની પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૫૯)

ये पृथां पथिरक्षय ऐलबृदाऽआयुर्युधः । तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥ ६० ॥

પદાર્થ : અમે એ-જે પથામ્-માર્ગોમાં પથિરક્ષય:-વટેમાર્ગુઓની રક્ષા કરવા સમાન, એલબૃદા:-પૃથિવીના પદાર્થોના વર્ધક, આયુર્યુધ:-પૂર્ણાયુની સાથે યુદ્ધ કરનાર ભૃત્ય-નોકર છે, તેષામ્-તેના સહસ્રયોજને-અસંખ્ય યોજન દેશમાં ધન્વાનિ-ધનુષ્યોને અવતન્મસિ-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ રાજાજનો દિવસ-રાત પ્રજાજનોની યથાવત્ રક્ષા કરે છે, તેમ પૃથિવી અને જીવન આદિની વાયુ રક્ષા કરે છે, એમ જાણો. (૬૦)

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सूकाहस्ता निषङ्गिणः ।

तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥ ६१ ॥

પદાર્થ : અમે **યે-જે સૂકાહસ્તા:**-હાથમાં વજૂને ધારણ કરનાર, **નિષંગિણ:**-પ્રશંસિત બાણ અને ભાથાયુક્ત જનોની સમાન **તીર્થાનિ-**દુઃખોથી તારનાર વેદ, આચાર્ય, સત્યભાષણ અને બ્રહ્મચર્યાદિ ઉત્તમ નિયમોમાં અથવા સમુદ્ર આદિથી તારનાર નાવ આદિ તીર્થોનો **પ્રચરન્તિ-**પ્રચાર કરીએ છીએ, **તેષામ્-** તેનો **સહસ્રયોજને-**હજાર યોજનોના દેશમાં **ધન્વાનિ-**શસ્ત્રોને **અવતન્મસિ-**વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનાં તીર્થ બે પ્રકારના છે. તેમાં પ્રથમ બ્રહ્મચર્ય, આચાર્યની સેવા, વેદનું ભણવું-ભણાવવું, સત્સંગ, ઈશ્વરોપાસના અને સત્યભાષણ આદિ છે, જે દુઃખ રૂપી સાગરથી મનુષ્યને પાર કરે છે.

બીજું-જેનાથી લોકો સમુદ્ર આદિ જલાશયોથી પાર કરી શકે તે (નાવ આદિ) છે. (૬૧)

યેઽન્નેષુ વિવિધ્યન્તિ પાત્રેષુ પિબતો જનાન્ ।

તેષાંઽ સહસ્રયોજનેઽવ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : અમે **યે-જે અન્નેષુ-**ખાદ્ય પદાર્થોમાં રહેલા **પાત્રેષુ-**પાત્રોમાં **પિબત:**-પાન કરનાર **જનાન્-** મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને **વિવિધ્યન્તિ-**બાણ સમાન ઘાયલ કરે છે, **તેષામ્-**તેના પ્રતિકાર માટે **સહસ્રયોજને-** અસંખ્ય યોજન દેશમાં **ધન્વાનિ-**ધનુષ્યોને **અવ,** **તન્મસિ-**વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જે અન્નાહાર અને જલ આદિનું પાન કરનારને વિષ આદિથી હનન કરે છે, તેનાથી સર્વે દૂર રહે. (૬૨)

યઽણ્તાવન્તશ્ચ ભૂયાંઽસશ્ચ દિશો રુદ્રા વિતસ્થિરે ।

તેષાંઽ સહસ્રયોજનેઽવ ધન્વાનિ તન્મસિ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : અમે **યે-જે ણ્તાવન્ત:**-અહીં વ્યાખ્યાત છે તે **ચ-**અને **સ્દ્ધા:**-પ્રાણ વા જીવ **ભૂયાંસ:**-તેથી પણ અધિક **ચ-**સર્વ પ્રાણ તથા જીવ **દિશ:**-પૂર્વાદિ દિશાઓમાં **વિતસ્થિરે-**વિવિધ રીતે રહેલા છે, **તેષામ્-** તેના **સહસ્રયોજને-**હજાર યોજનના દેશમાં **ધન્વાનિ-**આકાશના અવયવોના **અવ,** **તન્મસિ-**વિરુદ્ધ વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ દિશાઓમાં રહેલા જીવો વા વાયુઓનો યથાવત્ ઉપયોગ કરે છે, તેના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૬૩)

નમોઽસ્તુ રુદ્રેભ્યો યે દિવિ યેષાં વર્ષમિષ્વઃ । તેભ્યો દશ પ્રાચીર્દશ દક્ષિણા
દશ પ્રતીચીર્દશોદીર્ચીર્દશોર્ધ્વાઃ । તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ
તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : **યે-જે** સર્વહિતકારી **દિવિ-**સૂર્ય પ્રકાશાદિ સમાન વિદ્યા અને વિનયમાં વિદ્યમાન છે, **યેષામ્-** જેના **વર્ષમ્-**વર્ષાની સમાન **ઙ્ષવઃ-**બાણ છે **તેભ્યઃ-**તે **સ્દ્ધેભ્યઃ-**પ્રાણોની સમાન વર્તમાન પુરુષોને માટે

અમે કરેલ નમઃ-સત્કાર અસ્તુ-થાય.

જે દશ-દશ પ્રકાર પ્રાચીઃ-પૂર્વ, દશ-દશ પ્રકાર દક્ષિણાઃ-દક્ષિણ, દશ-દશ પ્રકાર પ્રતીચીઃ-પશ્ચિમ, દશ-દશ પ્રકાર ઉદીચીઃ-ઉત્તર અને દશ-દશ પ્રકાર ઋર્ધ્વાઃ-ઉપરની દિશાઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે તેભ્યઃ- તે સર્વનું રુદ્રેભ્યઃ-હિત કરનારા રાજપુરુષોને માટે અમારા નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થ અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે તે-તેઓ નઃ-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તેઓ નઃ-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે તે-તેથી અમારો યમ્-જેથી દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ-અપ્રીતિ કરે છે ચ-અને યઃ-જે નઃ-અમને દ્વેષ્ટિ-દુઃખ આપે છે તમ્-તેને ણ્ણામ્-એ વાયુઓની જમ્ભે-બિલાડાના મોઢામાં ઉંદરની સમાન પીડામાં દધ્મઃ-નાખીએ છીએ. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે વાયુઓથી વર્ષા થાય છે, તેમ જે સર્વત્ર અધિષ્ઠાતા છે, તે વીર પૂર્વ આદિ દિશાઓમાં અમારા રક્ષક છે.

અમે જેને વિરોધી જાણીએ, તેને સર્વત્રથી ઘેરીને વાયુ સમાન બાંધી દઈએ. (૬૪)

નમોઽસ્તુ રુદ્રેભ્યો યૈન્તરિક્ષે યેષાં વાત્ત્વઙ્ઘર્ષવઃ । તેભ્યો દશ પ્રાચીર્દશ દક્ષિણા દશ પ્રતીચીર્દશોદીચીર્દશોર્ધ્વાઃ । તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : યે-જે વિમાનાદિ યાનોમાં બેસીને અન્તરિક્ષે-આકાશમાં વિચરણ કરે છે, યેષામ્-જેના વાતઃ-વાયુની સમાન ઙ્ઘર્ષવઃ-બાણ છે, તેભ્યઃ-તે સ્ત્રેભ્યઃ-પ્રાણાદિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષોને અમારો નમઃ-સત્કાર અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જે દશ-દશ પ્રાચીઃ-પૂર્વ, દશ-દશ દક્ષિણાઃ-દક્ષિણ, દશ-દશ પ્રતીચીઃ-પશ્ચિમ, દશ-દશ ઉદીચીઃ-ઉત્તર અને દશ-દશ ઋર્ધ્વાઃ-ઉપરની દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે તેભ્યઃ-તે સર્વ હિતેષીઓને નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થો અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે તે-તેઓ નઃ-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તેઓ નમઃ-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે, તે-તેઓ વયમ્ ચ-અને અમે યમ્-જેનાથી દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ-અપ્રીતિ કરીએ ચ-અને યઃ-જે નઃ-અમને દ્વેષ્ટિ-દુઃખ આપે તમ્-તેને ણ્ણામ્-એ વાયુઓના જમ્ભે-બિલાડાના મુખમાં ઉંદરની સમાન પીડામાં દધ્મઃ-નાખીએ છીએ. (૬૫).

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આકાશમાં રહેલ [વિમાનોમાં વિચરણ કરનાર] શુદ્ધ શિલ્પીઓની સેવા કરે છે, તેને એ શિલ્પી સર્વત્રથી સમર્થ બનાવીને શિલ્પ વિદ્યાઓ શીખવે. (૬૫)

નમોઽસ્તુ રુદ્રેભ્યો યે પૃથિવ્યાં યેષામન્નમિષ્ઠવઃ । તેભ્યો દશ પ્રાચીર્દશ દક્ષિણા દશ પ્રતીચીર્દશોદીચીર્દશોર્ધ્વાઃ । તેભ્યો નમોઽસ્તુ તે નોઽવન્તુ તે નો મૃડયન્તુ તે યં દ્વિષ્મો યશ્ચ નો દ્વેષ્ટિ તમેષાં જમ્ભે દધ્મઃ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : યે-જે ભૂમિ-વિમાન આદિમાં બેસીને પૃથિવ્યામ્-વિસ્તૃત ભૂમિમાં વિચરણ કરે છે, યેષામ્-

જેના અન્નમ્-તંદુલ-ચોખાદિ ભક્ષ્ય પદાર્થ સમાન ઇષવઃ-બાણરૂપ છે, તેભ્યઃ-તે સ્ત્રેભ્યઃ-પ્રાણ આદિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષોને માટે અમે કરેલ નમઃ-સત્કાર અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. જે દશ-દશ પ્રાચીઃ-પૂર્વ, દશ-દશ દક્ષિણાઃ-દક્ષિણ, દશ-દશ પ્રતીચીઃ-પશ્ચિમ, દશ-દશ ઉદીચીઃ-ઉત્તર અને દશ-દશ ઝર્ધ્વાઃ-ઉપરની દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે તેભ્યઃ-તે સર્વ હિતૈષીઓને નમઃ-અન્નાદિ પદાર્થો અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે, તે-તેઓ નઃ-અમારી સર્વત્રથી અવન્તુ-રક્ષા કરે, તે-તેઓ નઃ-અમને મૃડયન્તુ-સુખી કરે, તે-તેઓ વયં ચ-જેને અને અમે યમ્-જેને દ્વિષ્મઃ-અપ્રસન્ન કરીએ ચ-અને યઃ-જે નઃ-અમને દ્વેષ્ટિ-દુઃખ આપે તમ્-તેને ઇષામ્-એ વાયુઓના જમ્ભે-બિલાડાના મુખમાં ઊંદરની સમાન પીડામાં દધ્મઃ-નાખીએ છીએ. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે પૃથિવી પર અન્નના અભિલાષી છે, તેઓનું પોષણ કરીને તેઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૬૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વાયુ, જીવ, ઈશ્વર અને વીરપુરુષોના ગુણ અને કર્મોના વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે. તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ષોડ્શોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ સપ્તદશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અશ્મન્નૂર્જ પર્વતે શિશ્રિયાણામ્-દ્વ્યઽઓષધીભ્યો વનસ્પતિભ્યોઽઅધિ સમ્ભૃતં પર્યઃ । તાં ન્-ઙ્મૂર્જ^૧ ધત્ત મરુતઃ સશ્રણાઽઅશ્મૈસ્તે ક્ષુન્ મયિ ત્-ઙ્મૂર્જ્ય દ્વિષ્મસ્તં તે શુર્ગ્-ચ્છતુ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સંરણાઃ-ઉત્તમ દાનશીલ મસ્તઃ-વાયુ સમાન ક્રિયાકુશળ મનુષ્યો ! તમે પર્વતે-પર્વતાકાર અશ્મન્-મેઘના શિશ્રિયાણામ્-અવયવોમાં સ્થિત વિદ્યુત્ને તથા ઝર્જમ્-પરાક્રમ અને અન્નને નઃ-અમારા માટે અધિધત્ત-અધિકતાથી ધારણ કરો. અને અદ્ભ્યઃ-જલાશયો, ઓષધિભ્યઃ-જલ આદિ ઔષધિઓ અને વનસ્પતિભ્યઃ-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓથી સમ્ભૃતમ્-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરેલ પયઃ-રસયુક્ત જલ, ઙ્મ-અન્ન, ઝર્જમ્-પરાક્રમ અને તામ્-તે પૂર્વોક્ત વિદ્યુત્ને ધત્ત-ધારણ કરો.

હે મનુષ્ય જે તે-તારા અશ્મન્-મેઘ મંડલમાં ઝર્જ-રસ વા પરાક્રમ છે, તે મયિ-મારામાં તથા જે તે-તારી ક્ષુત્-ભૂખ છે, તે મયિ-મારામાં પણ હોય, અર્થાત્ સમાન સુખ-દુઃખ માનીને આપણે પરસ્પર સહાયક બનીએ અને યમ્-જે દુષ્ટનો વયમ્-અમે દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ તમ્-તેને તે-તારો શુર્-શોક ત્રચ્છતુ-પ્રાપ્ત થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય તળાવો અને ઔષધિ આદિથી રસને ગ્રહણ કરીને, તેને મેઘસમૂહ-વાદળમાં રાખીને ફરી વરસાવે છે, તેથી અન્ન આદિ ઉત્પન્ન થાય છે.

તે અન્નના ભોજનથી જે ભૂખની નિવૃત્તિ, તેથી બલની વૃદ્ધિ, તેથી દુષ્ટોનું નિવારણ, તેથી સજ્જનોના શોકનો નાશ થાય છે, તેમજ મનુષ્યોએ પરસ્પર સમાન સુખ-દુઃખવાળા મિત્ર બનીને, એક-બીજાના દુઃખનો વિનાશ કરીને, સુખની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

इमा मेऽअग्नुऽइष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्रं च सहस्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतं चाबुदं च न्युर्बुदं च समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च परार्द्धश्चैता मेऽअग्नुऽइष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रामुष्मिल्लोके ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ મે-મારી ઇમા:-આ ઇષ્ટકા:-ઈષ્ટ સુખને સિદ્ધ કરનારી યજ્ઞની સામગ્રી ધેનવ:-દૂધ આપનારી ગાયોની સમાન સન્તુ-બને, તેમ આપને માટે પણ બને.

જે એકા-એક, ચ-દશગુણા દશ-દશ, ચ-અને દશ-દશ ચ-દશગુણા શતમ્-સો, ચ-અને શતમ્-સો ચ-દશગુણા સહસ્રમ્-હજાર, ચ-અને સહસ્રમ્-હજાર ચ-દશગુણા અયુતમ્-દશહજાર, ચ-અને અયુતમ્-દશ હજાર ચ-દશગુણા નિયુતમ્-લાખ, ચ-અને નિયુતમ્-લાખ ચ-દશગુણા પ્રયુતમ્-દશ લાખ ચ-તેના દશ ગુણા કરોડ અને તેના દશ ગુણા અર્બુદમ્-દશ કરોડ, ચ-તેના દશગુણા ન્યુર્બુદમ્-અર્વ, ચ-તેના દશગુણા ખર્વ, તેના દશગુણા નિખર્વ, તેના દશગુણા મહાપદ્મ, તેના દશગુણા શંકુ, તેના દશગુણા સમુદ્ર:-સમુદ્ર, ચ-તેના દશગુણા મધ્યમ્-મધ્ય, ચ-તેના દશગુણા અન્ત:-અન્ત અને ચ-તેના દશગુણા પરાર્દ્ધશ્ચ-પરાર્ધ, એતા:-એ મે-મારી અગ્ને-હે વિદ્વાન્ ! ઇષ્ટકા:-વેદીની ઈટો ધેનવ:-ગાયોની સમાન અમુષ્મિન્-પરોક્ષ લોકે-જોવા યોગ્ય-પરલોક અમુત્ર-પર-જન્મમાં સન્તુ-સુખદાયક બને, તેવો પ્રયત્ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સારી રીતે સેવા કરેલી ગાયો દૂધ આદિના દાનથી સર્વને સંતુષ્ટ કરે છે, તેમજ વેદીમાં યજ્ઞેલી ઈટો વરસાદની નિમિત્ત બનીને વરસાદ આદિ દ્વારા સર્વને આનંદિત કરે છે.

મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે એક-૧ સંખ્યાને દશગુણા કરતાં દશ-૧૦ સંખ્યા પ્રાપ્ત થાય છે. દશને દશ ગુણા કરતાં એકસો, એકસોને દશગુણા કરતાં હજાર, હજારને દશગુણા કરતાં અયુત, અયુતને દશગુણા કરતાં નિયુત, નિયુતને દશગુણા કરતાં પ્રયુત પ્રયુતને દશ ગુણા કરતાં કરોડ, કરોડને દશગુણા કરતાં દશ કરોડ, દશ કરોડને દશગુણા કરતાં ખર્વ, ખર્વને દશગુણા કરતાં નિખર્વ, નિખર્વને દશગુણા કરતાં મહાપદ્મ, મહાપદ્મને દશગુણા કરતાં શંકુ, શંકુને દશગુણા કરતાં સમુદ્ર, સમુદ્રને દશગુણા કરતાં અન્ત, અન્તને દશગુણા કરતાં પરાર્દ્ધ સંખ્યા થાય છે. આ સંખ્યાઓ કહેવામાં આવી છે.

મંત્રમાં પઠિત અનેક ચ-પદોથી અન્ય પણ ગણિત અંક સંખ્યા, બીજ સંખ્યા અને રેખા સંખ્યા આદિ વિદ્યાઓને યથાયોગ્ય રૂપમાં જાણવી જોઈએ.

જેમ આ લોકમાં સંખ્યાઓ છે, તેમ અન્ય લોકોમાં પણ છે.

જેમ [શિલ્પ વિષયમાં] એ સંખ્યામાં ગણવામાં આવેલી ઈંટો શ્રેષ્ઠ શિલ્પીજનો દ્વારા યજ્ઞીને ઘરનો આકાર-રૂપ બનીને શીત, ઉષ્ણ, વર્ષા અને વાયુ આદિથી મનુષ્યોની રક્ષા કરીને તેઓને આનંદિત કરે છે, તેમજ યજ્ઞમાં આપવામાં આવેલી આહુતિઓ જલ, વાયુ તથા ઔષધિઓની સાથે મળીને સર્વ પ્રાણીઓને આનંદિત કરે છે. (૨)

ઋતવ સ્થઽઋતાવૃધઽઋતુષ્ઠા સ્થઽઋતાવૃધઃ ।

ઘૃતશ્ચ્યુતૌ મધુશ્ચ્યુતૌ વિરાજો નામ કામદુઘાઽઅક્ષીયમાણાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જે તમે ઋત્તવઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ સમાન સ્થ-છો, જે ઋત્તાવૃધઃ-જલથી નદીઓ સમાન સત્યથી ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરનારી, ઋતુષ્ઠાઃ-વસંત આદિ ઋતુઓમાં સ્વસ્થ રહેનારી અને ઋત્તાવૃધઃ-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારી સ્થ-છો, જે તમે ઘૃતશ્ચ્યુતઃ-ઘૃત પ્રદાન કરનારી, મધુશ્ચ્યુતઃ-મધુર રસના કારણે પ્રાપ્ત થયેલી, અક્ષીયમાણાઃ-રક્ષા કરવા યોગ્ય, વિરાજઃ-વિવિધ ગુણોથી પ્રકાશમાન, કામદુઘાઃ-કામનાઓનું પૂરણ કરનારી નામ-પ્રસિદ્ધ દુધાળી ગાયો સમાન છો, તે તમે અમને સુખ પ્રદાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઋતુઓ અને ગાયો પોતાના સમય અનુસાર સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ સમયાનુસાર પોતાના પતિ આદિ સર્વને તૃપ્ત કરીને આનંદિત કરે. (૩)

સમુદ્રસ્ય ત્વાર્વકયાગ્ને પરિ વ્યયામસિ । પાવકોઽઅસ્મભ્યઃ શિવો ભવ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિસમાન તેજસ્વી સભાપતિ ! જેમ અમે સમુદ્રસ્ય-આકાશની મધ્યમાં અવકયા-રક્ષાત્મક ક્રિયાથી યુક્ત ત્વા-આપને પરિ, વ્યયામસિ-સર્વ બાજુથી પ્રાપ્ત થઈએ છીએ, તેમ પાવકઃ-પવિત્ર કર્તા આપ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સમુદ્રના જન્તુઓની રક્ષા કરીને તેને સુખી કરે છે, તેમ ધાર્મિક, સભાપતિ રક્ષક રાજા પોતાની પ્રજાઓની સારી રીતે રક્ષા કરીને, તેને નિરંતર સુખી રાખે. (૪)

હિમસ્ય ત્વા જરાયુનાગ્ને પરિ વ્યયામસિ । પાવકોઽઅસ્મભ્યઃ શિવો ભવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સભાપતિ ! અમે હિમસ્ય-શીતને જરાયુના-જીર્ણ કરનારા વસ્ત્રો અને અગ્નિથી ત્વા-આપને પરિ, વ્યયામસિ-સર્વત્રથી આચ્છાદિત કરીએ છીએ, તેમ પાવકઃ-પવિત્ર સ્વરૂપ આપ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે શિવઃ-મંગલમય ભવ-બનો. (૫)

ભાવાર્થ : હે સભાપતિ ! જેમ અગ્નિ અથવા વસ્ત્ર શીતથી પીડિત પ્રાણીઓને શીતથી યુક્ત કરીને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ તારા આશ્રયને પ્રાપ્ત અમે લોકો દુઃખથી મુક્ત બનીને સુખોનું સેવન કરનાર બનીએ. (૫)

ઉપ્ જ્મન્નુપ વેત્સેઽવંતર ન્દીષ્વા । અગ્નેપિત્તમપામસિ મણ્ડૂકિ તાભિરાગ્નિહિ

સેમં નોં યજ્ઞં પાવકવર્ણઃ શિવં કૃધિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિસમાન તેજસ્વિની વિદુષી, મળ્ડૂકિ-સુભૂષિત વિદુષી સ્ત્રી ! તું જ્મન્-પૃથિવી પર નદીષુ-નદીઓ તથા વેતસે-પદાર્થોના વિસ્તારમાં અવતર-ઉતર.

જેમ અગ્નિ અપામ્-પ્રાણો વા જલોના પિત્તમ્-તેજ રૂપ અસિ-છે, તેમ તું તાભિઃ-તે જલો વા પ્રાણોની સહિત ઉપ + આ + ગહિ-અમારી સમીપ આવ.

સા-તું નઃ-અમારા ઇમમ્-આ પાવકવર્ણમ્-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન યજ્ઞમ્-ગૃહાશ્રમરૂપ યજ્ઞને શિવમ્-કલ્યાણકારી ઉપ + આ + કૃધિ-બનાવ. (૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ ગૃહાશ્રમમાં પ્રયત્નથી સર્વ કાર્યોને સારી રીતે સિદ્ધ કરીને, શુદ્ધ આચરણથી કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે. (૬)

અપામિદં ન્યયનઃ સમુદ્રસ્ય નિવેશનમ્ ।

અન્યાસ્તૈઽઅસ્મત્તપન્તુ હૈતયઃ પાવકોઽઅસ્મભ્યઃ શિવો ભવ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે ઇદમ્-આ આકાશ અપામ્-જલો વા પ્રાણોના ન્યયનમ્-નિશ્ચિત સ્થાન છે, તે આકાશસ્થ સમુદ્રસ્ય-સમુદ્રના નિવેશનમ્-ઘરની સમાન ગૃહાશ્રમને પ્રાપ્ત કરીને, પાવકઃ-પવિત્ર કર્મ કરનાર બનીને આપ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બને. તે-આપના હૈતયઃ-વજ્ર વા ઉન્નતિ અસ્મત્-અમારાથી અન્યાન્-અન્ય દુષ્ટોને તપન્તુ-દુઃખ આપે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, જેમ જલોનો આધાર સમુદ્ર છે, સમુદ્રનો આધાર ભૂમિ છે અને ભૂમિનો આધાર અન્તરિક્ષ છે, તેમ ગૃહસ્થના પદાર્થોનો આધાર ગૃહ છે. તેનું નિર્માણ કરીને, મંગલ આચરણ કરીને, શ્રેષ્ઠોનું પાલન અને દુષ્ટોનું તાડન કરે. (૭)

અગ્ને પાવક રોચિષા મન્દ્રયાં દેવ જિહ્વાયાં । આ દેવાન્વૌક્ષિ યક્ષિં ચ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પાવક-મનુષ્યોના હૃદયોને શુદ્ધ કરનાર દેવ-સુંદર અગ્ને-વિદ્યાના પ્રકાશક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! આપ મન્દ્રયા-આનંદની સાધક જિહ્વા-સત્યપ્રિય વાણીથી, રોચિષા-વિદ્યા પ્રકાશથી દેવાન્-વિદ્વાન્ વા દિવ્યગુણોનો આવૌક્ષિ-ઉપદેશ કરે છે ચ-અને યક્ષિ-સંગ કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વ જગતને પ્રકાશિત કરે છે, તેમજ આપ ઉપદેશક વિદ્વાન્ સર્વ જનોને તૃપ્ત કરે. (૮)

સ નઃ પાવક દીદિવોઽગ્ને દેવાંરઽહવાર્વહ । ઉપ યજ્ઞઃ હવિશ્ચ નઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે પાવક-પવિત્ર, દીદિવઃ-તેજસ્વિન્ વા શત્રુદાહક અગ્ને-સત્યાસત્યના વિભાજક વિદ્વાન્ ! સઃ-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત આપ જેમ એ અગ્નિ નઃ-અમારા માટે ઉત્તમ ગુણવાળા હવિઃ-હવન કરેલા સુગંધિત દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ ઇહ-આ સંસારમાં યજ્ઞમ્-ગૃહાશ્રમ ચ-અને દેવાન્-વિદ્વાનોને નઃ-અમારા

માટે ઉપ + આવહ-સારી રીતે સમીપ પ્રાપ્ત કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય રૂપમાં એ અગ્નિ સર્વને માટે રસને ઉપર લઈ જઈને તથા વરસાવીને દિવ્ય સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમજ વિદ્વાન્ વિદ્યા-રસને ઉન્નત કરીને સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરે. (૯)

પાવકયા યચ્ચિતયન્ત્યા કૃપા ક્ષામન્ રુચઽષસો ન ભાનુનાં ।

તૂર્વન્ન યામન્નેતશસ્ય નૂ રણઽઆ યો ઘૃણે ન તતૃષાણોઽઅજરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : ય-જે પાવકયા-પવિત્ર કરનારી, ચિતયન્ત્યા-ચેતના કરનારી કૃપા-શક્તિમાન સેનાપતિ જેમ ભાનુના-દીપ્તિથી ઊષસઃ-પ્રભાત સમયમાં શોભે છે, ન-તેમ ક્ષામન્-રાજ્ય ભૂમિમાં સ્ત્રવે-શોભે છે.

અથવા ય-જે યામન્-માર્ગ વા પ્રહરમાં જેમ એતશસ્ય-ઘોડાના બળને નુ-શીઘ્ર તૂર્વન્-મારે છે, ન- તેમ ઘૃણે-પ્રદીપ્ત રણે-યુદ્ધમાં તતૃષાણઃ-તૃષાતુર વ્યક્તિ ન-સમાન અજરઃ-અજર, અજેય યુવાન, નિર્ભય આ + સ્ત્રવે-સારી રીતે બનીને, તે રાજ્ય કરવા યોગ્ય બને છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા પોતાની દીપ્તિથી શોભિત બને છે; તેમ ઉત્તમ સ્ત્રીની સાથે શ્રેષ્ઠ પતિ અને સેનાની સાથે સેનાપતિ સુશોભિત બને છે. (૧૦)

નમસ્તે હરસે શોચિષે નમસ્તેઽસ્ત્વર્ચિષે ।

અન્યાસ્તે અસ્મત્તપન્તુ હેતયઃ પાવકોઽસ્મભ્યઃ શિવો ભવ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! હરસે-દુઃખ હરનાર તે-તને અમારો નમઃ-સત્કાર અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

શોચિષે-પવિત્ર, અર્ચિષે-પૂજ્ય-સત્કાર યોગ્ય તે-તને અમારા નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જે તે-તારી હેતયઃ-વજ્રાદિ શસ્ત્રોથી યુક્ત સેનાઓ છે, તે અસ્મત્-અમારાથી ભિન્ન અન્યાન્-અન્ય શત્રુઓને તપન્તુ-દુઃખી સંતાપયુક્ત કરે.

પાવકઃ-શુદ્ધ કરનાર આપ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે શિવઃ-ન્યાયકારી ભવ-બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પવિત્ર લોકોને ન્યાયાધીશ બનાવીને, દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, સત્ય ન્યાય પ્રકાશિત કરવો જોઈએ. (૧૧)

નૃષદે વેડપ્સુષદે વેડ્ બર્હિષદે વેડ્ વનસદે વેડ્ સ્વર્વિદે વેડ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ આપ નૃષદે-નાયકોમાં બેસનારા પુરુષોને માટે વેડ્-ન્યાયાસને બેસનાર ન્યાયાધીશ ભવ-બનીને અપ્સુષદે-નોંકા આદિમાં બેસનાર માટે વેડ્-ન્યાયાધીશ ભવ-બનીને બર્હિષદે-પ્રજાની ઉન્નતિના વ્યવહારમાં થવા માટે વેડ્-અધિષ્ઠાતા ન્યાયાધીશ બનનારા વનસદે-વનવાસીઓ માટે વેડ્-ન્યાયમાં પ્રકાશ કરનારા અને સ્વર્વિદે-સુખના જ્ઞાતા માટે વેડ્-ઉત્સાહમાં પ્રવેશ કરનારા બનો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે દેશમાં ન્યાયાધીશ, નાવમાં યાત્રા કરનાર, પ્રજાના વર્ધક, વનવાસીઓ, નેતા અને

સુખ પ્રદાન કરનાર વિદ્વાનો હોય છે, ત્યાં સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય છે. (૧૨)

યે દેવા દેવાનાં યજ્ઞિયા યજ્ઞિયાનાંઃ સંવત્સરીણમુપ ભાગમાસંતે ।

અહુતાદૌ હવિષૌ યજ્ઞેઽસ્મિન્સ્વયં પિબન્તુ મધુનો ઘૃતસ્ય ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : યે-જે દેવાનામ્-વિદ્વાનોમાં અહુતાદઃ-હવન કર્યા વિના ભોજન કરનાર દેવાઃ-વિદ્વાન્-સંન્યાસી છે, અથવા યજ્ઞિયાનામ્-યજ્ઞ કરનારા કુશળ પુરુષોમાં યજ્ઞિયાઃ-યોગાભ્યાસાદિ યજ્ઞના યોગ્ય વિદ્વાન્ છે, તે સંવત્સરીણમ્-વર્ષભર પુષ્ટિ માટે ભાગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ પરમાત્માની ઉપાસતે-ઉપાસના કરે છે, તે અસ્મિન્-આ યજ્ઞે-સંગરૂપ યજ્ઞમાં મધુનઃ-મધ, ઘૃતસ્ય-ઘી અથવા જલ તથા હવિષઃ-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોના ભાગમ્-ભાગોને સ્વયમ્-જાતે [આપ] પિબન્તુ-સેવન કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે અગ્નિત્યાગી અર્થાત્ આહવનીય, ગાર્હપત્ય અને દક્ષિણાગ્નિથી સંબંધિત બાહ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરીને, અંદરની અગ્નિથી સંપન્ન સંન્યાનીજનો છે, તેઓ હવન ન કરવા છતાં ભોજન કરીને સર્વત્ર ભ્રમણ કરીને, સર્વ લોકોને વેદાર્થનો બોધ કરાવે. (૧૩)

યે દેવા દેવેષ્વધિં દેવત્વમાયન્યે બ્રહ્મણઃ પુરઽણ્તારૌઽસ્ય ।

યેભ્યો નઽઋતે પવતે ધામ્ કિઞ્ચન ન તે દિવો ન પૃથિવ્યાઽઅધિ સ્નુષુ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : યે-જે દેવાઃ-પૂર્ણ વિદ્વાન્ દેવેષુ, અધિ-વિદ્વાનોમાં સર્વથી શ્રેષ્ઠ ઉત્તમ કક્ષામાં વિરાજમાન થઈને દેવત્વમ્-પોતાના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને આયન્-પ્રાપ્ત કરે છે, અને યે-જે અસ્ય-આ બ્રહ્મણઃ-પરમેશ્વરને પુરણ્તારઃ-પ્રથમ પ્રાપ્ત કરનાર છે, યેભ્યઃ-જેના ઋત્તે-વિના કિમ્ + ચન-કોઈપણ ધામ-સુખનું સ્થાન ન + પવતે-પવિત્ર થતું નથી, તે-તે વિદ્વાન્ ન-ન દિવઃ-સૂર્યલોકમાં ન-ન પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના અધિસ્નુષુ-કોઈ પ્રદેશમાં આયન્-પ્રાપ્ત થાય છે. [અર્થાત્ નિવાસ કરતા નથી સર્વત્ર વિચરણ કરે છે.] (૧૪)

ભાવાર્થ : જે આ સંસારમાં સર્વશ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્, યોગીરાજ, યથાર્થરૂપમાં પરમેશ્વરને જાણે છે, તેઓ સમસ્ત લોકોને પવિત્ર કરનાર હોવા છતાં જીવનમુક્ત અવસ્થામાં પરોપકાર કરતાં અને વિદેહ શરીર રહિત મુક્તિદશામાં સૂર્યલોકમાં તથા પૃથિવી પર સ્થાયી-નિયત રૂપમાં રહેતા નથી, પરન્તુ બ્રહ્મ-ઈશ્વરમાં સ્થિત રહીને અવ્યાહત-અબાધ ગતિથી વિચરણ કરે છે. (૧૪)

પ્રાણ્દાઽઅપાન્દા વ્યાન્દા વર્ષોદા વરિવોદાઃ ।

અન્યાઽસ્તૈઽઅસ્મત્તપન્તુ હેતયઃ પાવ્કોઽઅસ્મભ્યઃ શિવો ભવ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ રાજન્ ! તે-આપની યા-જે ઉન્નતિ વા શસ્ત્રાદિ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે પ્રાણદાઃ-જીવન તથા બળ આપનારી, અપાનદાઃ-દુઃખોને દૂર કરવાના સાધન આપનારી, વ્યાનદાઃ-વ્યાપ્તિ અને વિજ્ઞાન આપનારી, વર્ષોદાઃ-સકલ વિદ્યાધ્યયન આપનારી અને વરિવોદાઃ-સત્ય, ધર્મ અને વિદ્વાનોની સેવાને વ્યાપ્ત કરનારી હેતયઃ-વજ્રાદિ સમાન શસ્ત્રોની વૃદ્ધિ થઈને અસ્મત્-અમારાથી અન્યાન્-ભિન્ન-

અન્ય દુષ્ટ શત્રુઓને તપન્તુ-તપાવે-દુઃખી કરે, અને તેની સાથે પાવકઃ-શુદ્ધિનો પ્રચાર કરતાં આપ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો.

ભાવાર્થ : તે જ રાજા છે, જે ન્યાયનો વર્ધક હોય, તે જ વિદ્વાન્ છે, જે વિદ્યા દ્વારા ન્યાયનું જ્ઞાન કરાવનાર હોય. જે પ્રજાઓને પીડિત કરે, તે રાજા નથી, જે અન્યોને વિદ્વાન્ ન બનાવે, તે વિદ્વાન્ નથી. તે પ્રજા નથી, જે નીતિમાન રાજાની સેવા ન કરે. (૧૫)

અગ્નિસ્તિગ્મેનં શોચિષા યાસદ્વિશ્વં ન્યુત્રિણમ્ । અગ્નિર્નો વનતે રયિમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અગ્નિઃ-અગ્નિ તિગ્મેન-તીવ્ર શોચિષા-પ્રકાશથી અત્રિણમ્-ભોગવવા-ભોજન યોગ્ય પદાર્થોને વિશ્વમ્-સર્વને યાસત્-પ્રાપ્ત થાય છે, અને જેમ-અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ નઃ-અમારા માટે રયિમ્-ધનનો નિ, વનતે નિરંતર વિભાગ કરનાર છે, તેમ આપ અમારા માટે બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ પોતાના તેજથી સૂકા અથવા લીલા ઘાસ આદિને બાળી નાખે છે, તેમ વિદ્વાનોએ અમારા સર્વ દોષો બાળીને અમને ગુણો પ્રાપ્ત કરાવવા જોઈએ.

જેમ વિદ્યુત્ સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેમ અમને સંપૂર્ણ વિદ્યાનું સેવન કરાવીને અવિદ્યાથી પૃથક્ કરવા જોઈએ. (૧૬)

યડ્ઙમા વિશ્વા ભુવનાનિ જુહ્વદૃષિર્હોતા ન્યસીદત્પિતા નઃ ।

સડઆશિષા દ્રવિણમિચ્છમાનઃ પ્રથમચ્છદવરાંરડઆવિવેશ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે ઋષિઃ-જ્ઞાન સ્વરૂપ, હોતા-સર્વ પદાર્થોના આપનાર તથા ગ્રહણ કરનાર નઃ-અમારા પિતા-રક્ષક પરમેશ્વર ઙ્મા-આ વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકોમાં વ્યાપ્ત થઈને ન્યસીદત્-નિરંતર સ્થિર-વિદ્યમાન છે અને જે સર્વ લોકોના જુહ્વત્-ધારણકર્તા છે. સઃ-તે આશિષા-આશીર્વાદથી અમારા માટે દ્રવિણમ્-ધનને ઇચ્છમાનઃ-પ્રદાન કરતાં અને પ્રથમચ્છદ્-વિસ્તૃત પદાર્થોને આસ્થાદિત કરતાં અવરાન્-પૂર્ણ આકાશ આદિમાં આવિવેશ-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત છે; એમ તમે જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધારણકર્તા, પાલનકર્તા, પ્રલયકર્તા અને સર્વ જીવોને સર્વ પદાર્થોને પ્રદાનકર્તા પરમેશ્વર પોતાની વ્યાપ્તિથી આકાશ આદિમાં પ્રવિષ્ટ છે, તેની નિરંતર ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૭)

કિંચ્ચ સ્વિદાસીદધિષ્ઠાનમારમ્ભણં કતમત્ સ્વિત્કથાસીત્ ।

યતો ભૂમિં જનયન્વિશ્વકર્મા વિ દ્યામૌર્ણોન્મહિના વિશ્વચક્ષાઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ જગતના અધિષ્ઠાનમ્-આધાર કિં, સ્વિત્-કથા આશ્ચર્યરૂપ આસીત્-છે ? તથા આરમ્ભણમ્-આ કાર્ય જગતની રચનાનું આરંભ કારણ કતમત્-અનેક ઉપાદાનોમાં કયું કારણ છે ? કથા સ્વિત્-કેવી રીતે તર્ક સંગત આસીત્-છે ? કે યતઃ-જેથી વિશ્વકર્મા-સર્વ સત્કર્મોવાળા પરમેશ્વર, વિશ્વચક્ષાઃ-સર્વ જગતના દૃષ્ટા જગદીશ્વર ભૂમિમ્-પૃથિવી અને દ્યામ્-સૂર્યાદિ લોકોને જનયન્-ઉત્પન્ન

કરીને મહિના-પોતાની મહિમાથી વિ + ઔર્ણોત્-વિવિધ રીતે આચ્છાદિત કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ સંસાર કોનામાં વસે છે ? તેનું આરંભ-કારણ કયું છે ? શા માટે ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર એ છે-

જે જગદીશ્વર કાર્યરૂપ જગત્ ઉત્પન્ન કરીને, પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વને આચ્છાદિત કરીને, સર્વજ્ઞ હોવાથી વિશ્વચક્ષુઃ-સર્વને જુએ છે. તે [આ સંસારના] આશ્રયસ્થાન અને આરંભ કારણ-ઉત્પન્ન કરનાર છે.

તે સર્વ શક્તિમાન તથા રચના આદિ સામર્થ્યથી યુક્ત છે, [તેનાથી] જીવોને પાપ-પુણ્યોના ફળ આપવા માટે તથા ભોગ કરાવવા માટે સર્વ જગત્ રચેલ છે, એમ તમારે જાણવું જોઈએ. (૧૮)

વિશ્વત્શ્ચક્ષુરુત વિશ્વતોમુખો વિશ્વતોંબાહુરુત વિશ્વતસ્પાત્ ।

સં બાહુભ્યાં ધર્મતિ સંપતત્રૈર્દાવાભૂમીં જનયન્દેવઽએકઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જ વિશ્વત્શ્ચક્ષુઃ-સર્વ જગતને જોનાર, ઉત-અને વિશ્વતોમુખઃ-સર્વત્રથી ઉપદેશ કરનાર, વિશ્વતોબાહુઃ-સર્વ રીતે અનંત બળ અને પરાક્રમયુક્ત, ઉત-અને વિશ્વતસ્પાત્-સર્વત્ર વ્યાપ્ત, એકઃ-અદ્વિતીય અન્યની સહાય રહિત, દેવઃ-સ્વ પ્રકાશસ્વરૂપ પતત્રૈઃ-ક્રિયાશીલ પરમાણુ આદિથી દાવાભૂમી-સૂર્ય અને પૃથિવી લોકને સંજનયન્-કાર્યરૂપ પ્રકટ કરતાં બાહુભ્યામ્-અનંત બળ અને પરાક્રમથી સર્વ જગતને સંધમતિ-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે, તે પરમેશ્વરને આપણા સર્વના રક્ષક અને ઉપાસ્ય દેવ માનો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે સૂક્ષ્મથી સૂક્ષ્મ, મહાનથી મહાન, નિરાકાર, અનંત સામર્થ્યયુક્ત અને સર્વવ્યાપક દેવ-અદ્વિતીય પરમાત્મા છે, તે જ અતિ સૂક્ષ્મ કારણ-પ્રકૃતિથી સ્થૂલ કાર્ય જગતની રચના અને પ્રલય કરવામાં સમર્થ છે.

જે તે [પરમાત્મા]ની ઉપાસના છોડીને અન્યની ઉપાસના કરે છે, તેથી બીજો કોણ સંસારમાં અભાગી હોઈ શકે ? (૧૯)

કિંઃ સ્વિદ્વનં કઽઽ સ વૃક્ષઽઆસૃ યતો દાવાપૃથિવી નિષ્ટતક્ષુઃ ।

મનીષિણો મનસા પૃચ્છતેદુ તદ્યદ્ધ્યતિષ્ઠદ્ભુવનાનિ ધારયન્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : પ્રશ્ન : હે મનીષિણઃ-મનોનિગ્રહ કરનાર યોગીજનો ! તમે મનસા-વિજ્ઞાન દ્વારા વિદ્વાનોથી કિં, સ્વિત્-શું વનમ્-સેવવા યોગ્ય કારણરૂપ વન છે, કઃ-કોણ ઽ-વિતર્કની સાથે સઃ-તે વૃક્ષઃ-નાશ પામનાર અનિત્ય કાર્યરૂપ સંસાર આસ-છે, એમ પૃચ્છત-પૂછે કે યતઃ-જેનાથી દાવાપૃથિવી-વિશાળ સૂર્ય અને ભૂમિ આદિ લોકોને કઃ-કોણે નિષ્ટતક્ષુઃ-ભિન્ન-ભિન્ન બતાવેલ છે.

ઉત્તર : યત્-જે ભુવનાનિ-પ્રાણીઓના રહેવાના લોક-લોકાન્તર સ્થાનોને ધારયન્-વાયુ, વિદ્યુત્ અને સૂર્યાદિથી ધારણ કરતાં અધ્યતિષ્ઠત્-તેના અધિષ્ઠાતા છે, તત્ ઇત્-તે જ ઽ-પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મને એ સર્વના કર્તા જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ત્રણ પાદોથી પ્રશ્ન અને અન્તિમ એક પાદમાં ઉત્તર આપવામાં આવેલ છે. મંત્રમાં વૃક્ષ શબ્દથી કાર્ય અને વન શબ્દથી કારણનો ઉપદેશ કરવામાં આવેલ છે.

જેમ સર્વ પદાર્થોને પૃથિવી, પૃથિવીને સૂર્ય, સૂર્યને વિદ્યુત્ અને વિદ્યુત્ને વાયુ ધારણ કરે છે, તેમ જ તે સર્વને જગદીશ્વર ધારણ કરે છે. (૨૦)

યા તે ધામાનિ પરમાણિ યાઽવમા યા મધ્યમા વિશ્વકર્મન્નુતેમા ।

શિક્ષા સર્વિભ્યો હૃવિષિ સ્વધાવઃ સ્વયં યજસ્વ તન્વં વૃધાનઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધાવઃ-વિપુલ અન્નથી યુક્ત, વિશ્વકર્મન્-સમગ્ર ઉત્તમ કર્મ કરનાર જગદીશ્વર ! તે-આપની સૃષ્ટિમાં યા-જે પરમાણિ-ઉત્તમ, યા-જે અવમા-નિકૃષ્ટ, યા-જે મધ્યમા-મધ્યમ કક્ષાના ધામાનિ-સર્વ પદાર્થોના આધારભૂત જન્મ, સ્થાન તથા નામ છે, ઇમા-એ સર્વને હૃવિષિ-આદાન-પ્રદાન વ્યવહારમાં સ્વયં-આપ યજસ્વ-સંયુક્ત કરો.

ઉત-અને અમારા તન્વમ્-શરીરની વૃધાનઃ-ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરતાં સર્વિભ્યઃ-આપના આજ્ઞાપાલક અમે મિત્રો માટે શિક્ષ-શુભ ગુણોનો ઉપદેશ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ આ સંસારમાં ઈશ્વરે નિમ્ન, મધ્યમ અને ઉત્તમ પદાર્થો તથા સ્થાનો બનાવ્યા છે, તેમજ સભાપતિ, રાજા આદિએ પણ ત્રણ પ્રકારના સ્થાન બનાવીને, [ત્રણ પ્રકારના] પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને; બ્રહ્મચર્યથી શરીર બળની વૃદ્ધિ કરીને તથા મિત્રોને સુશિક્ષિત કરીને ઐશ્વર્ય સંપન્ન બનવું જોઈએ. (૨૧)

વિશ્વકર્મન્ હૃવિષા વાવૃધાનઃ સ્વયં યજસ્વ પૃથિવીમુત દ્યામ્ ।

મુહ્યન્ત્વન્યેઽઅભિતઃ સપતાઽહુહાસ્માકં મઘવા સૂરિરસ્તુ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વકર્મન્-સંપૂર્ણ ઉત્તમ કર્મ કરનાર સેનાપતિ ! હૃવિષા-ઉત્તમ ગુણોના ગ્રહણથી વાવૃધાનઃ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરતાં જેમ કે ઈશ્વર પૃથિવીમ્-ભૂમિ ઉત-અને દ્યામ્-સૂર્યાદિ લોકને સંયુક્ત કરે છે, તેમ આપ સ્વયમ્-સ્વયં સર્વથી યજસ્વ-સંગ કરો.

હુહ-આ જગતમાં મઘવા-પ્રશંસિત ધનવાન્ પુરુષ સૂરિઃ-વિદ્વાન્ અસ્તુ-બને, જેથી અસ્માકમ્-અમારા અન્યે-તથા સપતાઃ-શત્રુજન અભિતઃ-બધી રીતે મુહ્યન્તુ-મોહ પામે. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય, ઈશ્વરે જે પ્રયોજન માટે જે વસ્તુ રચેલ છે, તેને તેવી જ જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે; તેના દરિદ્રતા, આલસ્ય આદિ દોષોનો નાશ થાય છે, તેથી તેના શત્રુઓ સમાપ્ત થઈ જાય છે અને તે સ્વયં વિદ્વાન્ બની જાય છે. (૨૨)

વાચસ્પતિં વિશ્વકર્માણમૂતયૈ મનોજુવં વાજેઽઽદ્યા હુવેમ ।

સ નો વિશ્વાનિ હર્વનાનિ જોષદ્વિશ્વર્શમ્ભૂરવસે સાધુર્કર્મા ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે ઋતયે-રક્ષાદિ માટે જે વાચસ્પતિમ્-વેદ વાણીના રક્ષક મનોજુવમ્-મન

સમાન વેગવાન વિશ્વકર્માણમ્-સર્વ કર્મોમાં કુશળ મહાત્મા પુરુષને વાજે-સંગ્રામ આદિ કર્મમાં હુવેમ-બોલાવીએ-સ્વીકાર કરીએ.

સ:-તે વિશ્વશમ્ભૂ:-સર્વને માટે સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, સાધુકર્મા-ધર્મયુક્ત કર્મોનું સેવન કરનાર વિદ્વાન્ ન:-અમારી અવસે-રક્ષાદિ માટે અદ્ય-આ જ વિશ્વાનિ-સર્વ હવનાનિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય કર્મોનું જોષત્-સેવન કરે. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જેણે બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને સમસ્ત વિદ્યાઓનું અધ્યયન કરેલ છે, જે ધાર્મિક તથા આલસ્ય રહિત બનીને, પક્ષપાત ત્યાગીને ઉત્તમ કર્મો કરે છે; જે શરીર અને આત્માના બળથી પૂર્ણ છે, તેને પ્રજાની રક્ષા કાર્યમાં, સર્વના અધિપતિ રાજા બનાવવા જોઈએ. (૨૩)

વિશ્વકર્મન્ હૃવિષા વર્દ્ધનેન ત્રાતારમિન્દ્રમકૃણોરવ્ધ્યમ્ ।

તસ્મૈ વિશ્નુઃ સમનમન્ત પૂર્વીર્યમુગ્રો વિહવ્યો યથાસન્ત્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વકર્મન્-સર્વ શુભ કર્મોનું સેવન કરનાર, સર્વ સભાપતિ રાજા ! આપ હૃવિષા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વર્દ્ધનેન-વૃદ્ધિથી જે અવધ્યમ્-મારવાને અયોગ્ય, ત્રાતારમ્-રક્ષક, ઇન્દ્રમ્-રાજકાર્યમાં સંમતિ આપનાર પરમ ઐશ્વર્યવાન પુરુષને મંત્રી અકૃણો:-બનાવે છે, તસ્મૈ-તેને પૂર્વી:-પૂર્વ ન્યાયાધીશોથી પ્રાપ્ત કરેલ વિશ્નુઃ-પ્રજાઓનો સમનમન્ત-સારી રીતે સત્કાર કરો.

યથા-જેમ અયમ્-એ મંત્રી ઊગ્ર:-મારવામાં પ્રચંડ વિહવ્ય:-વિવિધ પ્રકારના સાધનોથી સ્વીકાર કરવા યોગ્ય અસન્ત્-બને, તેમ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : સર્વ સભાઓના અધિષ્ઠાતા-સહિત સભાસદો તેને રાજ્યાધિકાર આપે, જે પક્ષપાતી ન હોય. જે પિતા સમાન પ્રજાનું પાલન ન કરે, તેને પ્રજા પોતાનો રાજા માને નહિ.

જે પુત્ર સમાન ન્યાયપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરે, પ્રજા તેને અનુકૂળ સદા રહે. (૨૪)

ચક્ષુષઃ પિતા મનસા હિ ધીરોઃ ઘૃતમૈનેઽઅજનન્નમ્નમાને ।

યદેદન્તાઽઅદદ્દહન્ત્ પૂર્વઽઆદિદ્ દ્યાવાપૃથિવી અપ્રથેતામ્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! આપ જે ચક્ષુષઃ-ન્યાયના દર્શક ઉપદેશકના પિતા-રક્ષક મનસા-યોગાભ્યાસથી શાન્ત અન્તઃકરણના કારણે હિ-જ ધીરઃ-ધૈર્યવાન છે, તો ઘૃતમ્-ઘૃતાદિ પદાર્થોને અજનન્ત્-ઉત્પન્ન કરે, તેને અધિકાર આપીને એને-એ રાજદલ અને પ્રજાદલ નમ્નમાને-નમીને પૂર્વે-પ્રથમથી વિદ્યમાન, દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને પૃથિવી સમાન મળીને જેમ અપ્રથેતામ્-પ્રખ્યાત બને. જ્યારે ઇત્-પણ યદા-જ્યારે અન્તા:-અન્તિમ અવયવોની સમાન અદદ્દહન્ત્-પ્રજાજન વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે આત્-તેના પશ્ચાત્ ઇત્-જ સ્થિર રાજ્ય યુક્ત બને છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય રાજા અને પ્રજાના વ્યવહારમાં એક સંમતિવાળા બનીને સદા પ્રયત્ન કરે, ત્યારે સૂર્ય અને પૃથિવીની સમાન સ્થિર સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે. (૨૫)

વિશ્વકર્મા વિમનાઽઆદિહાયા ધાતા વિધાતા પરમોત સન્દૃક્ ।

તેષામિષ્ટાનિ સમિષા મંદન્તિ યત્રા સસઋષીન્ પરઽએકમાહુઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! વિશ્વકર્મા-સર્વ જગતના બનાવનાર, જે વિમના:-વિવિધ વિજ્ઞાન યુક્ત, વિહાયા:-વિવિધ પદાર્થોમાં વ્યાપક, ધાતા-સર્વના ધારણ વા પોષણ કરનાર, વિધાતા-નિર્માતા, સન્દૃક્-સમ્યક્ દ્રષ્ટા અને પર:-સર્વોત્તમ છે, તથા જેને એકમ્-અદ્વિતીય આહુ:-કહે છે, આત્-અને યત્ર-જેમાં સપ્તઋષીન્-પાંચ પ્રાણ, સૂત્રાત્મા અને ધનંજય એ સાતને પ્રાપ્ત કરીને ઇષા-સ્વેચ્છાપૂર્વક જીવ સંમદન્તિ-સારી રીતે આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે, યત્ર-અને જે તેષામ્-તે જીવોના પરમા-શ્રેષ્ઠ ઇષ્ટાનિ-સુખ-સાધક કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તે પરમેશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના ઈષ્ટ કર્મોની સિદ્ધિ માટે વિશ્વકર્મા-સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધાતા-ધારણકર્તા, પાલક, સંહારક અને અદ્વિતીય પરમેશ્વરની જ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૬)

યો નઃ પિતા જનિતા યો વિધાતા ધામાનિ વેદ ભુવનાનિ વિશ્વા ।

યો દેવાનાં નામધાઽએકઽએવ તઃ સમ્પ્રશનં ભુવના યન્ત્યન્યા ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે ન:-અમારા પિતા-પાલક, જનિતા-સર્વ પદાર્થોના ઉત્પન્ન કર્તા, ય:-જે વિધાતા-કર્માનુસાર ફળ આપનાર જગતના નિર્માતા છે, તે વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકો અને ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામને વેદ-જાણે છે, ય:-જે દેવાનામ્-વિદ્વાનો વા પૃથિવી આદિ પદાર્થોના નામધા:-પોતાની વિદ્યાથી નામોને ધારણ કરનાર એક:-એક-અદ્વિતીય ઈશ્વર એવ-જ છે.

જેને અન્યા-અન્ય ભુવના-લોકોના પદાર્થો યન્તિ-પ્રાપ્ત છે, સમ્પ્રશનમ્-ઉત્તમ રીતિથી પૂછવા-જાણવા યોગ્ય તમ્-તેને તમે જાણો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે સર્વ જગતના પિતા સમાન પાલક, સર્વજ્ઞ અને અદ્વિતીય પરમેશ્વર છે; તેના અને તેની સૃષ્ટિના વિજ્ઞાનથી જ સર્વ મનુષ્યો પરસ્પર પ્રશ્ન-ઉત્તર કરે. (૨૭)

તઽઆયજન્ત દ્રવિણઃ સમસ્માઽઋષયઃ પૂર્વે જરિતારો ન ભૂના ।

અસૂર્તે સૂર્તે રજસિ નિષત્તે યે ભૂતાનિ સમકૃણવન્નિમાનિ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : યે-જે પૂર્વે-પૂર્ણ વિદ્યાથી સર્વના પોષક, જરિતાર:-સ્તુતિ કરવાવાળાની ન-સમાન ઋણ્ય:-વેદાર્થના જ્ઞાતા ભૂના-અધિકતાથી અસૂર્તે-અપ્રાપ્ત-પરોક્ષ, સૂર્તે-પ્રાપ્ત-પ્રત્યક્ષ, નિષત્તે-સ્થિત વા સ્થાપિત કરેલ રજસિ-લોકમાં ઇમાનિ-એ ભૂતાનિ-પ્રાણીઓને સાક્ષાત્ સમકૃણવન્-ઉત્તમ રીતે શિક્ષિત કરે, તે-તેઓ અસ્મૈ-એ ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલન માટે દ્રવિણમ્-ધનને સમ્ + આ + યજન્ત-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો આ સંસારમાં ઈશ્વરની આજ્ઞાના પાલન માટે સૃષ્ટિના અનુક્રમથી તત્ત્વને

જાણે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ આચરણ કરે. જેમ ધાર્મિક લોકો ધર્માચરણથી ધન ઉપાર્જન કરે છે, તેમ સર્વ લોકો ધન ઉપાર્જન કરે. (૨૮)

પુરો દિવા પરઽણના પૃથિવ્યા પુરો દેવેભિરસુરૈર્યદસ્તિ ।

કથં સ્વિદ્ગર્ભી પ્રથમં દદ્ધઆપો યત્ર દેવાઃ સમપ્શ્યન્ત પૂર્વે ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એના-એ દિવા-સૂર્ય આદિ લોકોથી પર:-અત્યુત્તમ પૃથિવ્યા-પૃથિવી આદિ લોકોથી પર:-પરે-ઉત્તમ, દેવેભિઃ-વિદ્વાન્ વા દિવ્ય પ્રકાશિત પ્રજાઓથી અસુરૈઃ-અવિદ્વાન વા અન્તક-મૃત્યુરૂપ પ્રજાથી પર:-ઉત્તમ અસ્તિ-છે; યત્ર-જેમાં આપ:-પ્રાણ કંસ્વિત્-કોઈ પ્રથમમ્-વિસ્તૃત ગર્ભમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થને દદ્ધે-ધારણ કરે છે; યત્ર-જેને પૂર્વે-પૂર્ણ વિદ્યાનું અધ્યયન કરનાર દેવાઃ-વિદ્વાનો સમપ્શ્યન્ત-સારી રીતે જ્ઞાનચક્ષુથી જુએ છે, તે બ્રહ્મ છે તેમ તમે જાણો. (૨૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વથી સૂક્ષ્મ, મહાન, સર્વના ધારણકર્તા વિદ્વાનોના ચિંતનના વિષય, અનાદિ ચેતન અને પર-અતિ શ્રેષ્ઠ છે, તે પરમાત્માની જ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૯)

તમિદ્ ગર્ભી પ્રથમં દદ્ધઽઆપો યત્ર દેવાઃ સમગ્ચ્છન્ત વિશ્વે ।

અજસ્ય નાભાવધ્યેકમર્પિતં યસ્મિન્વિશ્વાનિ ભુવનાનિ તસ્થુઃ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્ર-જે બ્રહ્મમાં આપ:-કારણરૂપ પ્રાણ વા જીવ પ્રથમમ્-વિસ્તૃત અને અનાદિ ગર્ભમ્-સર્વ લોકોની ઉત્પત્તિસ્થાન પ્રકૃતિરૂપ ગર્ભને દદ્ધે-ધારણ કરે છે; યસ્મિન્-જેમાં વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-દિવ્ય આત્મા અને અન્તઃકરણયુક્ત યોગીજન સમગ્ચ્છન્ત-પ્રાપ્ત થાય છે,

જે અજસ્ય-અનુત્પન્ન, અનાદિ જીવ અને અવ્યક્ત પ્રકૃતિના નાભૌ-મધ્યમાં અધિ-અધિષ્ઠાતા રૂપથી સર્વથી ઉપર વિરાજમાન, એકમ્-સ્વયં સિદ્ધ, અર્પિતમ્-સ્થિત છે; યસ્મિન્-જેમાં વિશ્વાનિ-સમસ્ત ભુવનાનિ-આધારભૂત સર્વ લોક તસ્થુઃ-સ્થિત છે તમ્-તેને ઇત્-જ તમે પરમાત્મા જાણો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે સંસારના આધાર, યોગીઓ દ્વારા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અન્તર્યામી, સ્વયં પોતાના આધાર અને સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્મા છે, તે જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા સેવન-ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૦)

ન તં વિદાથ્ ય ઽ ઇમા જજાનાન્યદ્યુષ્માકમન્તરં બભૂવ ।

નીહારેણ પ્રાવૃતા જલ્યાં ચાસુતૃપ્ઽઽકથ્શાસંચરન્તિ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ બ્રહ્મને ન જાણનારા લોકો નીહારેણ-ધૂમાડા આકારના ઝાકળ સમાન અજ્ઞાનરૂપ અંધકારથી પ્રાવૃતા:-ઢંકાયેલા, જલ્યા-અલ્પ સત્ય અને અસત્યના વાદ વિવાદમાં વિદ્યમાન, અસુતૃપ્:-પ્રાણ પોષક ચ-અને ડકથશાસ:-યોગાભ્યાસને છોડીને ઉક્ત વચનોની પ્રશંસા કરનાર અર્થાત્ શબ્દ અર્થના ખંડનમાં રત રહીને ચરન્તિ-વિચરે છે-વ્યવહાર કરે છે, તેમ તમે તમ્-તે બ્રહ્મને ન-વિદાથ્-જાણતા નથી. યઃ-જે ઇમા-એ પ્રજાઓને જજાન-ઉત્પન્ન કરે છે.

યત્-જે બ્રહ્મ યુષ્માકમ્-તમે અધર્મા-અજ્ઞાનીઓના સાનિધ્યથી અન્યત્-અર્થાત્ કાર્ય-કારણ રૂપ જગત્ અને જીવોથી ભિન્ન છે, અન્તરમ્-મધ્યમાં સ્થિત હોવા છતાં દૂરસ્થ બભૂવ-છે, તે અતિ સૂક્ષ્મ આત્માના પણ આત્મા બ્રહ્મને ન + વિદાથ-જાણતા નથી. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતોના આચરણ, વિદ્યા, યોગાભ્યાસ, ધર્માનુષ્ઠાન, સત્સંગ અને પુરુષાર્થથી રહિત છે, તેઓ અજ્ઞાનરૂપી અંધકારથી ઢંકાયેલા હોવાના કારણે બ્રહ્મને જાણી શકતા નથી.

જે જીવ બ્રહ્મ આદિથી ભિન્ન, અન્તર્યામી, સર્વના નિયંતા અને સર્વત્ર વ્યાપક છે, તેને જાણવામાં પવિત્ર આત્મા લોકો જ સમર્થ બને છે, અન્ય નહિ. (૩૧)

વિશ્વકર્મા હ્યજનિષ્ટ દેવઽઆદિદ્ ગન્ધર્વોઽઅભવદ્ દ્વિતીયઃ ।

તૃતીયઃ પિતા જનિતૌષધીનામ્પાં ગર્ભ વ્યદધાત્પુરુત્રા ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જગતમાં વિશ્વકર્મા-સર્વ શુભ કર્મોયુક્ત છે, તે દેવઃ-દિવ્યસ્વરૂપ વાયુ પ્રથમ ઇત્-જ અભવત્-છે.

આત્-ત્યારબાદ ગન્ધર્વઃ-જે પૃથિવીને ધારણ કરે છે, તે સૂર્ય વા સૂત્રાત્મા વાયુ અજનિષ્ટ-ઉત્પન્ન થયા.

ઓષધીનામ્-યવ આદિ ઓષધિઓ અપામ્-જલ વા પ્રાણોના પિતા-પાલક હિ-જ દ્વિતીયઃ-બીજા અર્થાત્ ધનંજય છે, જે પ્રાણોના ગર્ભમ્-ધારણશક્તિને વ્યદધાત્-ધારણ કરી રહેલ છે.

તે પુસ્ત્રા-અનેકોના રક્ષક, જનિતા-જલોને ધારણ કરનાર વાદળાં, તૃતીયઃ-ત્રીજા પ્રાણ આદિ સ્વરૂપ છે; તેમ તમે જાણો. (૩૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, આ સંસારમાં સમસ્ત કર્મોનું સેવન કરનાર જીવ પ્રથમ.

પૃથિવી આદિને ધારણ કરનાર વિદ્યુત્, અગ્નિ, સૂર્ય તથા વાયુ દ્વિતીય-

તથા પર્જન્ય-વાદળાં આદિ તૃતીય [પદાર્થ] છે. તેમાં જીવ અજન્મા છે, અન્ય સર્વ ઉત્પન્ન થયેલા [પદાર્થો] છે. તે પણ કારણરૂપ નિત્ય છે, એમ સમજવું જોઈએ. (૩૨)

આશુઃ શિશાનો વૃષભો ન ભીમો ઘનાઘનઃ ક્ષોભણશ્ચર્ષણીનામ્ ।

સંક્રન્દનોઽનિમિષઽએકવીરઃ શતઃ સેનાઽઅજયત્સાકમિન્દ્રઃ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! તમે જે ચર્ષણીનામ્-સર્વ મનુષ્યો વા તેથી સંબંધિત સેનાઓને આશુઃ-શીઘ્રકારી અને શિશાનઃ-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ બનાવનાર, વૃષભઃ-સાંઢની ન-સમાન ભીમઃ-ભયંકર, ઘનાઘનઃ-અત્યંત શત્રુઓના ઘાતક, ક્ષોભણઃ-તેને કંપાવનાર, સંક્રન્દનઃ-શત્રુઓને સમ્યક્ રડાવનાર અનિમિષઃ-રાત-દિવસ પ્રયત્ન કરનાર, એકવીરઃ-એકલો વીર ઇન્દ્રઃ-શત્રુઓના વિદારક સેનાપતિ અમારી સાકમ્-સાથે શતમ્-અસંખ્ય સેનાઃ-શત્રુઓને બાંધનારી સેનાઓને અજયત્-જીતે છે, તેને સેનાપતિ બનાવો. (૩૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે ધનુર્વેદના જ્ઞાતા, ઋગ્વેદાદિના વેતા, નિર્ભય, સમસ્ત વિદ્યાઓના જાણકાર,

બળવાન, ધાર્મિક, સ્વરાજ્યના અનુરાગી, જિતેન્દ્રિય, શત્રુઓના વિજેતા, પોતાની સેના શિક્ષિત અને યુદ્ધ કરાવવામાં નિપુણ વીર હોય, તેને જ સેનાપતિના અધિકાર પર સ્થાપિત કરવો જોઈએ. (૩૩)

સંક્રન્દનેનાનિમિષેણ જિષ્ણુનાં યુત્કારેણ દુશ્ચવનેન ધૃષ્ણુનાં ।

તદિન્દ્રેણ જયત્ તત્સહધ્વં યુધોં નર ઇષુહસ્તેન વૃષ્ણાં ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે યુધઃ-યુદ્ધ કરનાર નરઃ-મનુષ્યો ! તમે અનિમિષેણ-નિરંતર પ્રયત્ન કરનાર દુશ્ચવનેન-શત્રુઓને કષ્ટદાયક, ધૃષ્ણુના-દેહ ઉત્સાહી, યુત્કારેણ-વિવિધ પ્રકારની રચનાઓથી યોદ્ધાઓને મિશ્રિત અથવા અભિશ્રિત કરનાર, વૃષ્ણા-બળવાન, ઇષુહસ્તેન-બન્ને હાથોમાં શસ્ત્રોને ધારણ કરનાર, સંક્રન્દનેન-દુષ્ટોને અત્યંત રડાવનાર, જિષ્ણુના-જયશીલ-શત્રુ વિજેતા, તત્-તે પૂર્વોક્ત ઇન્દ્રેણ-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સેનાપતિની સાથે વિદ્યમાન રહીને શત્રુઓને જયત-જીતો અને તત્-તે શત્રુ સેનાના વેગ વા યુદ્ધથી ઉત્પન્ન દુઃખને સહધ્વમ્-સહન કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમે યુદ્ધ વિદ્યામાં નિપુણ, સમસ્ત શુભ લક્ષણોથી યુક્ત, બળ અને પરાક્રમથી સંપન્ન મનુષ્યને સેનાપતિ બનાવીને તથા તેની સાથે અધાર્મિક શત્રુઓને જીતીને નિષ્કંટક ચક્રવર્તી રાજ્ય ભોગવો. (૩૪)

સઽઙ્ગુહસ્તૈઃ સ નિષઙ્ગિભિર્વશી સઽઙ્ગ્રષ્ટા સ યુધઽન્દ્રો ગુણેન ।

સઽસૃષ્ટજિત્ સોમપા બાહુશઽર્ધ્યુગ્ધન્વા પ્રતિહિતાભિરસ્તા ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : સઃ-તે સેનાપતિ ઇષુહસ્તૈઃ-શસ્ત્ર હાથમાં રાખનાર, સુશિક્ષિત, બળવાન, નિષઙ્ગિભિઃ-જેના નિષંગ અર્થાત્ ભુશુંડી = બંદૂક, શતઘ્ની = તોપ આદિ અનેક આગ્નેય અસ્ત્રોવાળા ભૃત્યો-સેવકોની સાથે વિદ્યમાન, સઃ-તે સંસ્રષ્ટા-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યો વા શસ્ત્ર-અસ્ત્રોનો સંસર્ગ કરનારા, વશી-પોતાની ઈન્દ્રિયો અને અન્તઃકરણને વશમાં રાખનારા, સંસૃષ્ટજિત્-પ્રાપ્ત શત્રુઓને જીતનાર સોમપાઃ-સોમ-બલિષ્ઠ ઔષધિઓના રસનું પાન કરનાર, બાહુશઽર્ધ્વી-ભુજાઓમાં બળવાન, ડગ્ધન્વા-તીક્ષ્ણ ધનુષ્યવાન, સઃ-તે યુધઃ-યુદ્ધ કરનાર, અસ્તા-શસ્ત્ર-અસ્ત્રોને ચલાવનાર, ઇન્દ્રઃ-શત્રુઓને મારનાર સેનાપતિ ગુણેન-સુશિક્ષિત નોકરો વા સેનાના વીરોને તથા પ્રતિહિતાભિઃ-પ્રત્યક્ષ ધારણ કરેલી સેનાઓની સાથે વિદ્યમાન રહી શત્રુઓને જીતે. (૩૫)

ભાવાર્થ : સર્વના અધિપતિ રાજા અને સર્વ સેનાઓના અધ્યક્ષ સુશિક્ષિત વીર સૈનિકોની સેનાથી યુક્ત થઈને દુર્જય શત્રુઓને પણ જેવી રીતે જીતી શકે, તેવો સર્વે એ [પ્રયાસ] કરવો જોઈએ. (૩૫)

બૃહસ્પતે પરિં દીયા રથેન રક્ષોહામિત્રાંરઽપબાર્ધમાનઃ ।

પ્રભુઞ્જન્ત્સેનાઃ પ્રમૃગો યુધા જયન્નસ્માકમેદ્ધ્યવિતા રથાનામ્ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે બૃહસ્પતે-ધાર્મિક વૃદ્ધો વા સેનાઓના રક્ષકો ! રક્ષોહા-દુષ્ટોને મારનાર, અમિત્રાન્-શત્રુઓને

અપબાધમાનઃ-દૂર કરનાર, પ્રમૂળઃ-ઉત્તમ રીતે મારનાર તથા સેનાઃ-તેની સેનાઓને પ્રભજ્જન્-તોડનાર તું સ્થેન-રથસમૂહથી યુધ્ધા-યુધ્ધમાં શત્રુઓને પરિ, દીયા-સર્વત્રથી કાપીને તું જયન્-ઉત્કર્ષ-જય પ્રાપ્ત કરીને અસ્માકમ્-અમારા સ્થાનામ્-રથોની અવિતા-રક્ષા કરનાર ણ્ધિ-બન. (૩૬)

ભાવાર્થ : રાજાએ સેનાપતિ અને પોતાની સેનાની વૃદ્ધિ કરીને, શત્રુ સેનાનો નાશ કરતાં ધાર્મિક પ્રજાજનોની નિરંતર ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

બલવિજ્ઞાયઃ સ્થવિરઃ પ્રવીરઃ સહસ્વાન્ વાજી સહમાનઽઽગ્રઃ ।

અભિવીરોઽઅભિસત્વા સહોજા જૈત્રમિન્દ્ર રથમાતિષ્ઠ ગોવિત્ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-યુધ્ધની ઉત્તમ સામગ્રીથી યુક્ત સેનાપતિ ! બલવિજ્ઞાયઃ-બલયુક્ત સેનાનું નિર્માણ કરનાર, સ્થવિરઃ-વૃદ્ધ-રાજધર્મના વ્યવહારનો જ્ઞાતા, પ્રવીરઃ-ઉત્તમવીર, સહસ્વાન્-અત્યંત બળવાન, વાજી-શ્રેષ્ઠ શાસ્ત્ર જ્ઞાનયુક્ત સહમાનઃ-સુખ-દુખાદિને સહન કરનાર, ઽગ્રઃ -દુષ્ટોને મારવામાં તીવ્ર તેજયુક્ત, અભિવીરઃ-અભીષ્ટ વીરોથી યુક્ત, અભિસત્વા-સર્વત્રથી યુધ્ધ વિદ્યામાં કુશળ, રક્ષક વા વીર, સહોજાઃ-બલથી પ્રસિદ્ધ, ગોવિત્-વાણી, ગાય વા પૃથિવીને પ્રાપ્ત કરનાર બનીને તું યુધ્ધ માટે જૈત્રમ્-વિજેતાઓથી ઘેરાયેલ રથમ્-પૃથિવી, આકાશ અને સમુદ્રોના યાનોમાં આ, તિષ્ઠ-આવીને સ્થિત થા અથવા તેમાં બેસ. (૩૭)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ તથા સૈનિક વીર જ્યારે શત્રુઓ સાથે યુધ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે પરસ્પર સર્વત્રથી રક્ષા કરીને તથા રક્ષાના સાધનોનો સંગ્રહ કરીને, બુદ્ધિપૂર્વક ઉત્સાહથી યુક્ત બનીને, પુરુષાર્થી બનીને શત્રુઓને જીતવા માટે તત્પર રહે. (૩૭)

ગોત્રભિદં ગોવિદં વજ્રબાહું જયન્તમઝ્મ પ્રમૂળન્તમોર્જસા ।

ઙ્મઃ સંજાતાઽઅનુ વીરયધ્વમિન્દ્રઃ સઘાયોઽઅનુ સંરંભધ્વમ્ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે સંજાતાઃ-એક દેશ-સ્થાનમાં ઉત્પન્ન સઘાયઃ-પરસ્પરના સહાયક મિત્રો ! તમે ઓર્જસા-પોતાના શરીર વા બુદ્ધિબળથી વા સેનાઓથી ગોત્રભિદમ્-શત્રુઓના ગોત્રો અર્થાત્ સમુદાયોને છિન્ન-ભિન્ન અને જડને કાપનાર, ગોવિદમ્-ગૌ-શત્રુઓની ભૂમિને પ્રાપ્ત કરનાર, વજ્રબાહુમ્-પોતાના હાથમાં શસ્ત્રો રાખનાર, પ્રમૂળન્તમ્-શ્રેષ્ઠતાથી શત્રુઓને મારનાર, અઝ્મ-શત્રુઓને પટકનાર-દૂર કરનાર, સંગ્રામમાં જયન્તમ્-જીતનાર અને ઙ્મઃ-ઇન્દ્રમ્-એ શત્રુદલના વિદારક સેનાપતિને અનુ + વીરયધ્વમ્-અનુકૂળ વીરતા બતાવો અને અનુ + સંરંભધ્વમ્-અનુકૂળ બનીને સમ્યક્ યુધ્ધનો આરંભ કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : સેનાપતિજન અને કર્મચારીગણ-સૈનિકો પરસ્પર મિત્ર બનીને, એક-બીજાનું અનુમોદન કરીને, યુધ્ધનો આરંભ તથા વિજય કરીને, શત્રુઓના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને તથા ન્યાયપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરીને નિરંતર સુખી રહે. (૩૮)

અભિ ગોત્રાણિ સહસ્રા ગાહમાનોઽદ્યો વીરઃ શતમન્યુરિન્દ્રઃ ।

દુશ્ચ્યવનઃ પૃતનાષાડ્યુધ્યોઽસ્માકઃ સેના અવતુ પ્ર યુત્સુ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે યુત્સુ-અનેક પદાર્થોને મિશ્રિત-અમિશ્રિત કરીને યુદ્ધોમાં સહસ્રા-બળથી ગોત્રાણિ-શત્રુઓના કુળોને પ્ર + ગાહમાનઃ-સારી રીતે વિકલોકન કરનાર, અદ્યઃ-નિર્દય, શતમન્યુઃ-સો પ્રકારના ક્રોધયુક્ત, દુશ્ચ્યવનઃ-શત્રુઓ દ્વારા દુઃખોથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય, પૃતનાષાડ્-શત્રુની સેનાને સહનાર, અયુધ્યઃ-જેનાથી શત્રુ યુદ્ધ ન કરી શકે તે વીરઃ-શત્રુઓને વિદીર્ષા કરનાર વીર અસ્માકમ્-અમારી સેનાઃ-સેનાઓની અભિ + અવતુ-સર્વત્રથી રક્ષા કરે; તે ઇન્દ્રઃ-સેનાપતિ બને, એવી તમે આજ્ઞા આપો. (૩૯)

ભાવાર્થ : ધાર્મિકો પર કરુણા કરનાર, દુષ્ટો પર કઠોરતા કરનાર-નિર્દયી, સર્વના રક્ષક જે મનુષ્ય હોય, તે જ સેનાપતિ પદ પર અધિકૃત કરવા યોગ્ય છે. (૩૯)

ઇન્દ્રઽઆસાં નેતા બૃહસ્પતિર્દક્ષિણા યજ્ઞઃ પુરઽણ્તુ સોમઃ ।

દેવસેનાનામભિભજ્જતીનાં જયન્તીનાં મરુતૌ યન્ત્વગ્રમ્ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : યુદ્ધમાં અભિભજ્જતીનામ્-શત્રુસેનાને સર્વત્રથી મારનારી, જયન્તીનામ્-શત્રુઓને જીતવાના ઉત્સાહને પ્રાપ્ત કરતી, આસામ્-એ દેવસેનાનામ્-વિદ્વાનોની સેનાના નેતા-નાયક ઇન્દ્રઃ-ઉત્તમ ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ શિક્ષક પશ્ચિમમાં, યજ્ઞઃ-સંગતિ કરનાર પુરઃ-પૂર્વમાં, બૃહસ્પતિઃ-સર્વ અધિકારીઓના અધિપતિ દક્ષિણા-દક્ષિણ દિશામાં અને સોમઃ-સેનાનો પ્રેરણા અર્થાત્ ઉત્સાહવર્ધક ઉત્તરમાં ણ્તુ-જાય તથા મસ્તઃ-વાયુની સમાન વેગવાન બલિષ્ઠ શૂરવીર અગ્રમ્-આગળ યન્તુ-જાય. (૪૦)

ભાવાર્થ : જ્યારે રાજપુરુષો શત્રુઓ સાથે યુદ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે સર્વ દિશાઓમાં અધ્યક્ષો અને શૂરવીરોને આગળ તથા ડરનારને અંદરની બાજુ રાખીને ભોજન, વસ્ત્ર-કવચ, વાહન, અસ્ત્ર તથા શસ્ત્રોના ભંડાર સહિત યુદ્ધ કરે.

ત્યાં વિદ્વાનોની સેનાઓને આધીન મૂર્ખોની સેનાઓને રાખવી જોઈએ. તે સેનાઓને વિદ્વાનજનો વ્યાખ્યાન દ્વારા ઉત્સાહિત કરે અને અધ્યક્ષગણ પદવ્યૂહ આદિની રચના કરીને યુદ્ધ કરાવે. (૪૦)

ઇન્દ્રસ્ય વૃષ્ણો વરુણસ્ય રાજ્ઞઽઆદિત્યાનાં મરુતાંશ્ચ શબ્દ્ઽઉગ્રમ્ ।

મહામનસાં ભુવનચ્યવાનાં ઘોષો દેવાનાં જયતામુદસ્થાત્ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : વૃષ્ણઃ-વીર્યવાન, ઇન્દ્રસ્ય-સેનાપતિ, વરુણસ્ય-સર્વોત્તમ, રાજ્ઞઃ-ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન સર્વના અધિપતિ રાજાના ભુવનચ્યવાનામ્-ઉત્તમ ગૃહોને પ્રાપ્ત કરનાર, મહામનસામ્-મહાન વિચાર-વિજ્ઞાન યુક્ત, જયતામ્-શત્રુઓને જીતવામાં સમર્થ, આદિત્યાનામ્-૪૮ વર્ષ સુધી ભ્રમ્મચર્ય પાલન કરનાર, મસ્તામ્-પૂર્ણ વિદ્યા અને બળથી યુક્ત દેવાનામ્-વિદ્વાનોના, ઉગ્રમ્-શત્રુઓને અસહ્ય,

શબ્દ:-બળ સૈન્ય અને **ઘોષ:**-શૂરતા તથા ઉત્સાહને ઉત્પન્ન કરનાર અનેક વાજંત્રોનો શબ્દઘોષ યુદ્ધ આરંભ કરવા પહેલાં **ઉદસ્થાત્-કરે.** (૪૧)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિએ શિક્ષા સમયે તથા યુદ્ધ સમયે, મનોહર તથા નિર્ભયતા આદિ ભાવોની ઉત્પાદક ધ્વનિઓ ઉત્પન્ન કરનાર વાજંત્રોથી વીરોને હર્ષિત કરવા જોઈએ.

જે દીર્ઘકાલીન બ્રહ્મચર્ય અને અધિક વિદ્યાથી શરીર તથા આત્માના બલથી યુક્ત છે, તેને યુદ્ધ કરનારી સેનાઓમાં અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૪૧)

ઉદ્દર્ષય મઘવન્નાયુધાન્યુત્સત્વનાં મામકાનાં મનાંશ્સિ ।

ઉદ્વૃત્રહન્ વાજિનાં વાજિનાન્યુદ્રથાનાં જયતાં યન્તુ ઘોષાઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : સેનાનાજનો પોતાના સેનાપતિને કહે-**વૃત્રહન્-મેઘનાશક સૂર્ય સમાન શત્રુઓના નાશક, મઘવન્-ઉત્તમ ધનયુક્ત સેનાપતિ ! આપ મામકાનામ્-અમારી સત્વનામ્-સેનાના વીર પુરુષોના આયુધાનિ-જેથી સારી રીતે યુદ્ધ કરે છે તે શસ્ત્રોને ઉદ્દર્ષય-ઉત્કૃષ્ટ બનાવો.**

અમારી સેનાના વીરોને **મનાંસિ-મનોને ઉત્-ઉત્તમ હર્ષયુક્ત કરો તથા મામકાનામ્-અમારા વાજિનામ્-ઘોડાઓની વાજિનાનિ-શીઘ્રગતિની ઉત્-વૃદ્ધિ કરો;** અને

આપની કૃપાથી **મામકાનામ્-અમારો જયતામ્-વિજય કરાવનારા સ્થાનામ્-સ્થાનોના ઘોષાઃ-શબ્દ ઉદ્યન્તુ-ઉઠે.** (૪૨)

ભાવાર્થ : સેનાપતિઓ અને શિક્ષકોએ યોદ્ધાઓનાં મનને સદા હર્ષિત કરવા જોઈએ. તથા સેનાના અંગોની સારી રીતે ઉન્નતિ કરીને શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. (૪૨)

અસ્માકમિન્દ્રઃ સમૃતેષુ ધ્વજેષ્વસ્માકં યાઽઙ્ઘવસ્તા જયન્તુ ।

અસ્માકં વીરા ઉત્તરેઽભવન્ત્વસ્માંરઽઽં દેવા અવતા હવૈષુ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે **દેવાઃ-વિજયના ઈચ્છુક વિદ્વાનો ! તમે અસ્માકમ્-અમારા સમૃતેષુ-સમ્યક્ સત્ય અને ન્યાયના પ્રકાશક ચિહ્ન જેમાં હોય તે ધ્વજેષુ-પોતાના વીરજનોને નિશ્ચય માટે રથ આદિ વાહનોની ઉપર એક-બીજાથી જુદા પડે તે માટે યડાવવામાં આવેલા ધ્વજ વગેરેની ચિહ્નોની નીચે અર્થાત્ તેની છાયામાં વિદ્યમાન જે **ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સેનાપતિ છે, તથા અસ્માકમ્-અમારી યાઃ-જે ઙ્ઘવઃ-સેના છે તે ઈન્દ્ર-સેનાપતિ અને તાઃ-સેના હવેષુ-જેમા ઈર્ષાથી શત્રુઓને બોલાવે તે સંગ્રામોમાં જયન્તુ-જીતે.****

અસ્માકમ્-અમારા વીરાઃ-વીરો ઉત્તરે-વિજય પછી પ્રસન્નતાપૂર્વક જીવિત ભવન્તુ-રહે.

અસ્માન્-અમારી ડ-સર્વ સ્થાનોમાં અને યુદ્ધ સમયમાં અવત-રક્ષા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : સૈનિકો અને સેનાપતિ આદિએ પોતાના રથ આદિ પર અલગ-અલગ ચિહ્નો રાખવા જોઈએ એ રથ તેનો છે તેમ સર્વ જાણી શકે.

જેમ વીરો અને ઘોડાઓનો અધિક વિનાશ ન થાય, તેમ અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. કારણકે, પરસ્પરના

પરાક્રમના નાશથી સ્થાયી વિજય થતો નથી, એમ માનવું જોઈએ. (૪૩)

અમીષાં ચિત્તં પ્રતિલોભયન્તી ગૃહાણાઙ્ગાન્યપ્વે પરેહિ ।

અભિ પ્રેહિ નિર્દેહ હૃત્સુ શોકૈરન્ધેનામિત્રાસ્તમસા સચન્તામ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે અપ્વે-શત્રુઓના પ્રાણોને દૂર કરનારી શૂરવીર ક્ષત્રિયાણી ! અમીષામ્-તે સેનાઓના ચિત્તમ્-ચિત્તને પ્રતિલોભયન્તી-પ્રત્યક્ષ મોહિત કરનારી જે પોતાની સેના છે, તેના અઙ્ગાનિ-અંગોને તું ગૃહાણ-ગ્રહણ કર, અધર્મથી પરેહિ-દૂર રહે, પોતાની સેનાને અભિ, પ્રેહિ-પોતાનો અભિપ્રાય બતાવ, અને શત્રુઓને નિર્દેહ-નિરંતર ભસ્મ કર.

જેથી એ અમિત્રાઃ-શત્રુઓ હૃત્સુ-પોતાના હૃદયમાં શોકૈઃ-વિવિધ શોકના કારણે અન્ધેન-પ્રકાશથી આચ્છાદિત બનીને તમસા-રાત્રિના અંધકારથી સચન્તામ્-સંયુક્ત રહે. (૪૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ દ્વારા જેમ અતિ પ્રશંસિત, હષ્ટ-પુષ્ટ અને અંગો તથા ઉપાંગો સહિત પોતાની પુરુષસેના બનાવવામાં આવે, તેમ સ્ત્રી સેના પણ [બનાવવી જોઈએ].

જેમાં વ્યભિચાર દોષથી રહિત સ્ત્રીઓ રહે તે સેના દ્વારા શત્રુઓને વશમાં રાખવા જોઈએ. (૪૪)

અવસૃષ્ટા પરાં પત્ શરવ્યે બ્રહ્મસંશિતે ।

ગચ્છામિત્રાન્ પ્ર પદ્યસ્વ મામીષાં કઞ્ચનોચ્છિષઃ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : શરવ્યે-બાણ વિદ્યામાં કુશલ બ્રહ્મસંશિતે-વેદવેતા વિદ્વાન્ પાસેથી પ્રશંસા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત સેનાધિપતિની સ્ત્રી ! તું અવસૃષ્ટાઃ-પ્રેરણા પામીને પરા, પત-દૂર જા, અમિત્રાન્-શત્રુઓને ગચ્છ-પ્રાપ્ત કર, અને તેને મારીને વિજય પ્ર પદ્યસ્વ-પ્રાપ્ત કર.

અમીષામ્-તે દૂર દેશમાં સ્થિત શત્રુઓને માર્યા વિના કં, ચન-કોઈને મા + ડચ્છિષઃ-છોડ નહિ. (૪૫)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ જનો જેમ યુદ્ધ વિદ્યાથી પુરુષોને શિક્ષિત કરે, તેમ સ્ત્રીઓને પણ શિક્ષિત કરે. જેમ વીર પુરુષો યુદ્ધ કરે, તેમ સ્ત્રીઓ પણ યુદ્ધ કરે.

જે શત્રુ યુદ્ધમાં માર્યા જાય તેમાંથી બચેલા શત્રુઓને નિરંતર કારાગૃહ-જેલમાં રાખે. (૪૫)

પ્રેતા જયતા નરડ્ઙ્દ્રો વઃ શર્મ યચ્છતુ ।

ઉગ્રા વઃ સન્તુ બાહવોઽનાધૃષ્ટ્યા યથાસંથ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે નરઃ-અનેક પ્રકારના વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરનાર મનુષ્યો ! તમે યથા-જેમ શત્રુઓને ઇત-પ્રાપ્ત કરીને તેને જયત-જીતો, ઙ્દ્રઃ-શત્રુઓના વિદારક સેનાપતિ વઃ-તમારા માટે શર્મ-ઘર પ્ર + યચ્છતુ-આપે વઃ-તમારી બાહવઃ-ભુજાઓ ઉગ્રાઃ-દેહ સન્તુ-બને, તમે અનાધૃષ્ટ્યાઃ-શત્રુઓથી ડરો નહિ તેવા અસંથ-બનો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે શત્રુઓને જીતનાર વીર હોય, તેનો સેનાપતિ ધન, અન્ન, ઘર અને વસ્ત્રાદિથી નિરંતર

સત્કાર કરે.

જેમ સેનાના જન બળવાન હોય, તેવો વ્યવહાર આચરણ કરે. (૪૬)

અસૌ યા સેના મરુતઃ પરેષામભ્યૈતિ નઽઓર્જસા સ્પર્દ્ધમાના ।

તાં ગૂહત તમસાપવ્રતેન યથામીઽઅન્યોઽઅન્યન્ન જાનન્ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-પ્રત્યેક ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનો ! તમે યા-જે અસૌ-બે પરેષામ-શત્રુઓની સ્પર્દ્ધમાના-ઈર્ષા કરનારી સેના-સેના ઓર્જસા-બલથી નઃ-અમારી અભિ + આ + એતિ-સન્મુખ સર્વથી પ્રાપ્ત થાય છે તામ્-તે અપવ્રતેન-છેદન રૂપ કઠોર કર્મથી અને તમસા-તોપ આદિ શસ્ત્રોથી ઉઠેલા ધૂમાડા અથવા મેઘ અને પર્વતાકાર અસ્ત્ર આદિથી થતા ધૂમાડાથી તેને ગૂહત-ઢાંકી દો.

અમી-એ શત્રુસેનાના લોકો યથા-જેમ અન્યઃ + અન્યમ્-પરસ્પર ન-જાણી ન શકે એવું પરાક્રમ કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે યુદ્ધ માટે શત્રુ સેનાઓ આવી જતાં [રાજા] યુદ્ધ કરે, ત્યારે સેનાપતિ આદિએ સર્વત્રથી શસ્ત્ર-અસ્ત્રોના પ્રહારોથી ઉઠેલા ધૂમાડાથી અને ધૂળથી તે [શત્રુ સેનાઓ]ને એવી રીતે ઢાંકી દેવી જોઈએ, જેથી પરસ્પર એક-બીજાને જાણી-ઓળખી પણ શકે નહિ. (૪૭)

યત્ર બાણાઃ સમ્પતન્તિ કુમારા વિશિખાઽઙ્ગવ ।

તન્નઽન્દ્રો બૃહસ્પતિરદિતિઃ શર્મ યચ્છતુ વિશ્વાહા શર્મ યચ્છતુ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જે સંગ્રામમાં વિશિખાઃ ઙ્ગવ-ચોટલીવાળા અથવા ચોટલી રહિત કુમારાઃ-બાળકો સમાન બાણાઃ-બાણ આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોનો સમૂહ સમ્પતન્તિ-એક સાથે પડે છે તત્-ત્યાં બૃહસ્પતિઃ-મોટી સભા વા સેનાના પાલક ઇન્દ્રઃ-સેનાપતિ શર્મ-આશ્રય વા સુખ યચ્છતુ-આપે, અને અદિતિઃ-નિત્ય સભાસદોથી શોભાયમાન સભા વિશ્વાહા-સર્વ દિવસ નઃ-અમને શર્મ-સુખદાયક ઘર યચ્છતુ-આપે. (૪૮)

ભાવાર્થ : જેમ બાળક આમ-તેમ દોડે છે, તેમ યુદ્ધ સમયે યોદ્ધાઓ પણ ચેષ્ટા કરે.

જે યુદ્ધમાં ઘાયલ, નિર્બળ, થાકેલા, વ્યાકુળ, કપાયેલા અંગોવાળા અને મૂર્છિત હોય, તેને યુદ્ધ ભૂમિમાંથી તત્કાળ ઉપાડીને સુખાલયમાં લઈ જઈને, ઔષધ આદિથી સ્વસ્થ બનાવે અને જે મૃત્યુ પામે તેની વિધિવત્ અન્ત્યેષ્ટિ કરે.

રાજા તેના માતા, પિતા, સ્ત્રી અને બાળકો આદિની સદા રક્ષા કરે. (૪૮)

મર્મીણિ તે વર્મીણા છાદયામિ સોમસ્ત્વા રાજામૃતેનાનુ વસ્તામ્ ।

ઊરોર્વરીયો વરુણસ્તે કૃણોતુ જયન્તં ત્વાનુ દેવા મંદન્તુ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે યોદ્ધા શૂરવીર ! હું તે-તારા મર્મીણિ-મર્મ સ્થાન અર્થાત્ જેના તાડનથી શીઘ્ર મૃત્યુ થાય છે તે અંગને વર્મીણા-દેહની રક્ષા કરનાર કવચ-બખ્તર છાદયામિ-ઢાંકું છું.

એ સોમ:-સોમ્યાદિ ગુણોથી યુક્ત રાજા-વિદ્યા, ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન રાજા અમૃતેન-સર્વરોગ નિવારક અમૃતરૂપ ઔષધિથી ત્વા-તને અનુ + વસ્તામ્-પાછળથી ઢાંકે.

વસ્તા:-સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત રાજા તે-તારા ઊરો:-અનેક ગુણો અને ઐશ્વર્યથી પણ વરીય:-અત્યંત ઐશ્વર્યને કૃણોતુ-ઉત્પન્ન કરે.

જયન્તામ્-દુષ્ટોને પરાજિત કરતા ત્વા-તને દેવા:-વિદ્વાનો અનુ + મદન્તુ-અનુમોદિત કરે અર્થાત્ ઉત્સાહિત કરે. (૪૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ સર્વ યોદ્ધાઓનાં શરીર આદિની સર્વત્રથી રક્ષા કરે તથા તેને સદા પ્રોત્સાહિત અને અનુમોદિત કરે, જેથી નિશ્ચય કરીને સર્વથી વિજય પ્રાપ્ત કરે. (૪૯)

उदै॑नमु॒त्तरां॑ न॒याग्ने॑ घृ॒તેनाहु॑त ।

रा॒यस्पोषे॑ण॒ सꣳ સૃજ॑ પ્રજયાં ચ બહું કૃધિ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે ઘૃતેન + આહુત-ઘી થી તૃપ્ત થયેલ અગ્ને-પ્રકાશયુક્ત સેનાપતિ ! તું એનમ્-એ વિજેતા વીરને ઉત્તરામ્-જેનાથી સારી રીતે વિજય પ્રાપ્ત કરેલી સેનાને ઉત્ + નય-ઉન્નત કર, રાયઃ + પોષેણ-રાજલક્ષ્મીની પુષ્ટિથી સમ્ + સૃજ-સારી રીતે યુક્ત કર, ચ-અને પ્રજયા-અનેક સંતાનોથી બહુમ્-અધિક કર્મને પ્રાપ્ત કૃધિ-કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે સેનાના અધિકારી અથવા સૈનિક ધર્મપૂર્વક યુદ્ધથી દુષ્ટોને જીતે, તેનો સભાપતિ તથા સેનાપતિજનો ધન આદિથી અનેક પ્રકારથી સત્કાર કરે. (૫૦)

इन्द्रे॑मं પ્રતરાં નય સજાતાનામસદ્વશી ।

સમેનું વર્ચસા સૃજ દેવાનાં ભાગદાઽઅસત્ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સુખોને ધારણ કરનાર સેનાપતિ ! તું સજાતાનામ્-સમાન આયુવાળા દેવાનામ્-વિદ્વાન્ યોદ્ધાઓની મધ્યમાં ઇમમ્-વિજેતા વીરજનને પ્રતરામ્-શત્રુ સેનાને પાર કરનારી નીતિને નય-પ્રાપ્ત કર, જેથી એ વશી-જિતેન્દ્રિય અસત્-બને.

એનમ્-એને વર્ચસા-વિદ્યાના પ્રકાશથી સંસૃજ-સંયુક્ત કર, જેથી એ ભાગદાઃ-અલગ-અલગ યથાયોગ્ય ભાગોનો દાતા અસત્-બને. (૫૧)

ભાવાર્થ : યુદ્ધમાં સૈનિક-ગણ શત્રુઓથી જે પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે, તે સર્વ સભાપતિ રાજા સ્વયં ન લઈ લે. પરન્તુ તેમાંથી યથોચિત રૂપમાં સોળમો ભાગ યોદ્ધાઓના તેઓના સત્કાર રૂપમાં આપે. જેટલા પદાર્થો કર્મચારી-સૈનિકો પ્રાપ્ત કરે તેનો સોળમો ભાગ રાજાને આપે.

જો સભાપતિ આદિ સર્વ લોકો જિતેન્દ્રિય હોય તો તેનો કદી પણ પરાજય થાય નહિ.

જો સભાપતિ પોતાનું હિત કરવા ઈચ્છે, તો યોદ્ધાઓના ભાગનો સ્વયં સ્વીકાર ન કરે. (૫૧)

यस्य॑ कु॒र्मो गृ॒हे ह॒विस्तम॑ग्ने वर्द्ध्या॒ त्वम् ।

તસ્મૈં દેવાઽઅધિં બ્રુવન્નયં ચ બ્રહ્મણસ્પતિઃ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ પુરોહિત ! અમે યસ્ય-જે રાજાના ગૃહે-ઘરમાં હવિઃ-હોમ કુર્મઃ-કરીએ, તમ્-તેને ત્વમ્-તું વર્દ્ધય-ઉત્સાહિત કર.

દેવાઃ-દિવ્ય ગુણોયુક્ત ઋત્વિજ લોકો તસ્મૈં-તેને અધિ, બ્રુવન્-અધિક ઉપદેશ કરે.

ચ-અને અયમ્-એ બ્રહ્મણઃ-વેદોનું પતિઃ-પાલન કરનાર યજમાન પણ તેને શિક્ષણ આપે. (૫૨)

ભાવાર્થ : પુરોહિતનું એ કાર્ય છે, જેથી યજમાનની ઉન્નતિ થાય.

જે જેનું જેવું અને જેટલું કામ કરે, તેને તેવું અને તેટલું માસિક વેતન આપવું જોઈએ.

સર્વ વિદ્વાનો અને રાજાઓ સર્વને સત્યનો ઉપદેશ કરે. (૫૨)

ઉદું ત્વા વિશ્વેં દેવાઽઅગ્ને ભરન્તુ ચિત્તિભિઃ ।

સ નોં ભવ શિવસ્ત્વઃ સુપ્રતીકો વિભાવસુઃ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ સભાપતિ ! જેમ ત્વા-તને વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાનો ચિત્તિભિઃ-ઉત્તમ જ્ઞાનથી ઉદ્ભરન્તુ-ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક ધારણ અને ઉદ્ધાર કરે અર્થાત્ પોતાની શિક્ષાથી તારું અજ્ઞાન દૂર કરે, સઃ, ડ-તે વિચારપૂર્વક ત્વમ્-તું નઃ-અમારા માટે શિવઃ-મંગલકારી, સુપ્રતીકઃ-સુપ્રસિદ્ધિકારક જ્ઞાનથી યુક્ત, વિભાવસુઃ-વિવિધ દીપ્તિ વા વિદ્યા પ્રકાશોમાં રહેનાર ભવ-બન. (૫૩)

ભાવાર્થ : જે જેને વિદ્યા પ્રદાન કરે, તે તેનો સેવક બની રહે. (૫૩)

પચ્ચ દિશો દૈવીર્યજ્ઞમવન્તુ દેવીરપામતિં દુર્મતિં બાધમાનાઃ ।

રાયસ્પોષેં યજ્ઞપતિમાભજન્તી રાયસ્પોષેઽઅધિં યજ્ઞોઽઅસ્થાત્ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : અપ + અમતિમ્-અત્યંત અજ્ઞાન અને દુર્મતિમ્-દુષ્ટ બુદ્ધિને બાધમાના-અલગ કરતી દૈવીઃ-વિદ્વાનોની એ દેવીઃ-દિવ્યગુણોયુક્ત પંડિતા બ્રહ્મચારિણી સ્ત્રી-વિદુષી, પંચ + દિશઃ-પૂર્વ આદિ ચાર અને એક મધ્યસ્થ પાંચ દિશાઓની સમાન પૃથક્-પૃથક્ કાર્યોમાં ઉન્નત રાયઃ + પોષે-ધનની પુષ્ટિ કરવામાં યજ્ઞપતિમ્-ઘરકામ વા રાજ્યપાલન કરનાર પોતાના સ્વામીને આભજન્તીઃ-સર્વ સેવા કરતી યજ્ઞમ્-સંગ વા સત્કાર કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમની અવન્તુ-કામના કરે.

જેથી એ યજ્ઞઃ-ગૃહાશ્રમ રાયઃ-ધનની પોષે-પુષ્ટિમાં અધિ + અસ્થાત્-અધિકતાથી સ્થિત રહે. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે ગૃહાશ્રમમાં ધાર્મિક, વિદ્વાન્ અને પ્રશંસિત સ્ત્રીઓ હોય છે, ત્યાં દુર્વ્યસન ઉત્પન્ન થતાં નથી.

જો સર્વ દિશાઓમાં પ્રશંસનીય પ્રજાઓ હોય, તો રાજાની પાસે બીજાથી અધિક ઐશ્વર્ય હોય. (૫૪)

સમિદ્ધેઽઅગ્નાવધિં મામહાનઽઉવથપત્રઽઈંડ્યોં ગૃમીતઃ ।

તસં ઘર્મ પરિગૃહ્યાયજન્તોર્જા યદ્યજ્ઞમયજન્ત દેવાઃ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ દેવાઃ-વિદ્વાનો સમિદ્ધે-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત અગ્નૌ-અગ્નિમાં યત્-જે યજ્ઞમ્-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ અયજન્ત-કરે છે, તેમ જે અધિ-મામહાનઃ-અત્યંત મહાન અને પૂજનીય, ઉક્થપત્રઃ-ઉપદેશને યોગ્ય વેદ-સ્તોત્રોથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવનાર, ઈન્દ્ર્યઃ-જે સ્તુતિ અને સત્કારને યોગ્ય, ગૃભીતઃ-વા જેને સજ્જનોએ ગ્રહણ કરેલ છે તે તપ્તમ્-તાપથી યુક્ત ધર્મમ્-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞને ઊર્જા-બળથી પરિગૃહ્ય-ગ્રહણ કરીને અયજન્ત-યજ્ઞ કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ સંસારના ઉપકાર માટે વિદ્વાનો અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરે છે, તેમ એનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૫૫)

દૈવ્યાય ધર્ત્તે જોષ્ટ્રે દેવશ્રીઃ શ્રીમનાઃ શ્તપયાઃ ।

પરિગૃહ્ય દેવા યજ્ઞમાયન્ દેવા દેવેભ્યોઽઅધ્વર્યન્તોઽઅસ્થુઃ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અધ્વર્યન્તઃ-પોતાની યજ્ઞની ઈચ્છા કરનાર દેવાઃ-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોની પ્રસન્નતા માટે ગૃહાશ્રમ વા અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞમાં અસ્થુઃ-સ્થિર બને-બેસે.

જેમ દૈવ્યાય-દિવ્યગુણોમાં પ્રસિદ્ધ, ધર્ત્તે-ધારણશીલ, જોષ્ટ્રે-પ્રીતિ કરનાર હોતા માટે દેવશ્રીઃ-વિદ્વાનોમાં શ્રી-લક્ષ્મીવાન્, શ્રીમનાઃ-શ્રી-લક્ષ્મીમાં મનવાળા, શ્તપયાઃ-સેંકડો દૂધ આદિ વસ્તુઓવાળા યજ્ઞમાન છે, તેમ દેવાઃ-વિદ્યાના દાતા તમે વિદ્યાને પરિગૃહ્ય-ગ્રહણ કરીને યજ્ઞમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વા અગ્નિહોત્ર આદિને આયન્-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ માટે નિરંતર પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. જેમ વિદ્વાનો ધન પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ અન્યોએ પણ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૫૬)

વીતઃ હ્રવિઃ શમિતઃ શમિતા યજધ્યૈ તુરીયો યજ્ઞો યત્ર હ્રવ્યમેતિ ।

તતો વાકાઽઆશિષો નો જુષન્તામ્ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ શમિતા-શાન્તિ આદિ ગુણોથી યુક્ત ગૃહાશ્રમી યજધ્યૈ-યજ્ઞ કરવા માટે વીતમ્-ગમનશીલ, શમિતમ્-દુર્ગુણોની શાન્તિ કરનાર, હ્રવિઃ-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમે છે, જે તુરીયઃ-ચોથા યજ્ઞ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય યજ્ઞ છે તથા યત્ર-જ્યાં હ્રવ્યમ્-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થો ઈતિ-પ્રાપ્ત થાય છે-પહોંચે છે, તતઃ-તેથી વાકાઃ-વેદની વાણીઓ અને આશિષઃ-ઈચ્છા સિદ્ધિઓ નઃ-અમારી જુષન્તામ્-સેવા કરે-અમને પ્રાપ્ત થાય, એવી ઈચ્છા કરો. (૫૭)

ભાવાર્થ : અગ્નિહોત્ર આદિમાં ચાર પદાર્થ છે-(૧) પુષ્કળ માત્રામાં પુષ્ટિકારક, સુગંધિત, મધુર ગુણયુક્ત, રોગનાશક હ્રવિ, (૨) તેની શુદ્ધિ, (૩) યજ્ઞકર્તા-યજ્ઞમાન, અને (૪) વેદી તથા અગ્નિ આદિ.

યથોક્ત હોમ કરેલા પદાર્થો આકાશમાં જઈને, પછી ત્યાંથી પરત થઈને અભીષ્ટને સિદ્ધ કરનારા બને છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૫૭)

સૂર્યૌરશ્મિર્હરિકેશઃ પુરસ્તાત્સવિતા જ્યોતિરુદ્રયાંરઽઅજન્મ્ ।

તસ્ય પૂષા પ્રસવે યાતિ વિદ્વાન્ત્સમ્પશ્યન્વિશ્વા ભુવનાનિ ગોપાઃ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પુસ્તાત્-પ્રથમથી સવિતા-સૂર્યલોક જ્યોતિઃ-પ્રકાશ પ્રદાન કરે છે, જેમાં હરિકેશઃ-હરિત વર્ણના સૂર્યરશ્મિઃ-સૂર્યના કિરણો વિદ્યમાન છે, જે પ્રસવે-ઉત્પન્ન થયેલ જગતમાં અજન્મ્-નિરંતર પૂષા-પુષ્ટિકર્તા છે, જેને વિદ્વાન્-વિદ્યાયુક્ત પુરુષ સંપશ્યન્-સમ્યક્ જોતા તેની વિદ્યાને યાતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તસ્ય-તેથી તેના સાનિધ્યથી ગોપાઃ-સંસારની રક્ષા કરનાર પૃથિવી આદિ લોક અને તારાગણ પણ વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાનિ-લોક-લોકાન્તરોને ઝૂ + અયાન્-પ્રકાશિત કરે છે, તે સૂર્યમંડલ અત્યંત પ્રકાશમય છે, એમ તમે જાણો. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે આ સૂર્યલોકમાં છે, તેના પ્રકાશમાં શ્વેત અને હરિત આદિ રંગના અનેક કિરણો છે, જે સર્વ લોકોની રક્ષા કરે છે. તેથી સર્વની સર્વ રીતે રક્ષા થાય છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૫૮)

વિમાનઽણ દિવો મધ્યઽઆસ્તઽઆપ્પ્રિવાત્રોદસીઽઅન્તરિક્ષમ્ ।

સ વિશ્વાચીર્ભિચ્છે ઘૃતાચીરન્તરા પૂર્વમપરં ચ કેતુમ્ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષ-જે ણઃ-એ સૂર્ય મંડળ દિવઃ-પ્રકાશના મધ્યે-મધ્યમાં વિમાનઃ-વિમાન અર્થાત્ આકાશ આદિ માર્ગોમાં ચાલનારની સમાન સ્થિત, રોદસી-પ્રકાશ અને ભૂમિને તથા અન્તરિક્ષમ્-અવકાશને આપ્પ્રિવાન્-પોતાના તેજથી વ્યાપ્ત આસ્તે-કરી રહેલ છે, સઃ-તે વિશ્વાચીઃ-સંસારને પ્રાપ્ત કરનાર અર્થાત્ પોતાના ઉદયથી પ્રકાશિત કરનાર વા ઘૃતાચીઃ-જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી તે પોતાની દ્યુતિ-જ્યોતિઓનો વિસ્તાર કરે છે, પૂર્વમ્-આગલા દિવસે અપરમ્-પાછળ રાત્રિ ચ-અને અન્તરા-તેના મધ્યમાં કેતુમ્-સર્વ લોકોના પ્રકાશક તેજને અભિચ્છે-પ્રકાશિત કરે છે, તેને જાણો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યલોક ધ્રુવાંડના મધ્યમાં રહીને પોતાના પ્રકાશથી સર્વને વ્યાપ્ત કરી લે છે, તે સર્વનો આકર્ષણકર્તા છે, એમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૫૯)

ઊક્ષા સમુદ્રોઽઅરુણઃ સુપર્ણઃ પૂર્વસ્ય યોનિં પિતુરાવિવેશ ।

મધ્યે દિવો નિહિતઃ પૃશ્નિરશ્મા વિ ચક્રમે રજસસ્પાત્યન્તૌ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે દિવઃ-પ્રકાશમય દુલોકના મધ્યે-મધ્યમાં નિહિતઃ-સ્થાપિત કરેલ, ઊક્ષા-વૃષ્ટિજલ સિંચનારા, સમુદ્રઃ-જેનાથી સારી રીતે જલ પડે, અરુણઃ-થોડા લાલ રંગ વાળા, સુપર્ણઃ-ઉત્તમ પાલનના હેતુ, પૃશ્નિઃ-તે વિચિત્ર રંગવાળા સૂર્ય રૂપ તેજ અને અશ્મા-મેઘ રજસઃ-લોકોને અન્તૌ-બંધનમાં વિ, ચક્રમતે-અનેક રીતે ગતિ આપે છે તથા પાતિ-રક્ષા કરે છે, તથા પૂર્વસ્ય-જે પૂર્ણ પિતુઃ-સૂર્યમંડળના તેજ ને ઉત્પન્ન કરનાર વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિના યોનિમ્-કારણમાં આ, વિવેશ-પ્રવેશ કરે છે, તે સૂર્ય અને મેઘનો સમ્યક્ ઉપયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરને અનેક ધન્યવાદ આપવા જોઈએ, કારણ કે જે ઈશ્વરે પોતાની જાણ માટે જગતના પાલનના નિમિત્ત સૂર્ય આદિ દેહાન્તરૂપ બતાવેલ છે, તે સર્વશક્તિમાન કેમ ન હોઈ શકે ? (૬૦)

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।

रथीतमꣳ रथीनां वाजानाꣳ सत्वतिं पतिम् ॥ ६१ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સમુદ્રવ્યચસમ્-અન્તરિક્ષની વ્યાપ્તિની સમાન વ્યાપ્તિવાળા, રથીનામ્-પ્રશંસાયુક્ત સુખથી યુક્ત પદાર્થોમાં રથીતમમ્-અત્યંત પ્રશંસિત સુખદાયક પદાર્થોથી યુક્ત, વાજાનામ્-જ્ઞાની આદિ ગુણીજનોના પતિમ્-સ્વામી સત્વતિમ્-અવિનાશી અથવા અવિનાશી કારણ અને જીવોના પાલક ઇન્દ્રમ્-પરમાત્માને વિશ્વાઃ-સમસ્ત ગિરઃ-વાણીની અવિવૃધન્-વૃદ્ધિ અર્થાત્ વિસ્તારથી સ્તુતિ કરે છે, તે પરમાત્માની નિરંતર ઉપાસના કરો. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેની સર્વ વેદો પ્રશંસા કરે છે, જેની યોગીજન ઉપાસના કરે છે, જેને પ્રાપ્ત કરીને મુક્ત લોકો-મોક્ષાત્માઓ આનંદનો ઉપભોગ કરે છે, તે જ ઈશ્વર સર્વ લોકો માટે ઉપાસનીય ઈષ્ટ દેવ માનવા યોગ્ય છે. (૬૧)

देवहूर्यज्ञऽआ च वक्षत्सुम्नहूर्यज्ञऽआ च वक्षत् ।

यक्षदग्निर्देवो देवाँऽऽआ च वक्षत् ॥ ६२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવહૂઃ-વિદ્વાનોને આહ્વાન કરનાર યજ્ઞઃ-પૂજનીય ઈશ્વર અમને સત્યનો આ-વક્ષત્-ઉપદેશ કરે, ચ-અને અસત્યથી અમને બચાવે.

જે સુમ્નહૂઃ-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞઃ-પૂજનીય ઈશ્વર અમને સુખ આ, વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરાવે, ચ-અને દુઃખોનો વિનાશ કરે.

જે અગ્નિઃ-આપ પ્રકાશમાન દેવઃ-સકલ સુખદાતા ઈશ્વર અમને દેવાન્-ઉત્તમ ગુણો વા ભોગોને યક્ષત્-પ્રદાન કરે, ચ-અને આ-વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરાવે; તેનું આપ નિરંતર સેવન કરો. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેની આપ વિદ્વાનો દ્વારા ઉપાસના કરવામાં આવે છે અને જે સુખ સ્વરૂપ તથા મંગલપ્રદાતા પરમેશ્વર છે, તેની મનુષ્યો સમાધિ યોગ દ્વારા ઉપાસના કરે. (૬૨)

वाजस्य मा प्रसवऽउद्ग्राभेणोद्ग्रभीत् ।

अर्धा सपत्नानिन्द्रो मे निग्राभेणाधरौऽऽअकः ॥ ६३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇન્દ્રઃ-પાલક વાજસ્ય-વિજ્ઞાનના પ્રસવઃ-ઉત્પાદક ઈશ્વર મા-અને ઉદ્ગ્રાભેણ-ગ્રહણ કરવાના ઉત્તમ સાધનથી ઉદ્ગ્રાભીત્-ગ્રહણ કરે છે, તેમ જે અધ-એની પશ્ચાત્ તેનું પાલન કરનાર અને વિજ્ઞાનદાતા પુરુષ મે-મારા સપત્નાન્-શત્રુઓને નિગ્રાભેણ-પરાજયથી અધરાન્-નીચે પાડ્યા અકઃ-કરે, તેને તમે સેનાપતિ બનાવો. (૬૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર છે, તેમ જો મનુષ્ય; પાલન માટે ધાર્મિક મનુષ્યોનું ગ્રહણ કરે છે અને તાડના માટે દુષ્ટોનો નિગ્રહ-વશમાં કરે છે, તે જ રાજ્ય કરી શકે છે. (૬૩)

ઉદ્ગ્રાભં ચ નિગ્રાભં ચ બ્રહ્મ દેવાઽઅવીવૃધન્ ।

અર્ધા સપ્તાનિન્દ્રાગ્ની મે વિષૂચીનાન્વ્યસ્યતામ્ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : દેવા:-વિદ્વાનો ઉદ્ગ્રાભમ્-અત્યંત ઉત્સાહથી ધાર્મિકોનું ગ્રહણ ચ-અને નિગ્રાભં ચ-દુષ્ટોનો નિગ્રહ કરીને બ્રહ્મ-ધનની અવીવૃધન્-વૃદ્ધિ કરે.

અર્ધ-પશ્ચાત્ ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને અગ્નિ સમાન બે સેનાપતિ મે-મારા વિષૂચીનાન્-વિરુદ્ધ આચરણ કરનાર સપ્તાન્-શત્રુઓને વ્યસ્યતામ્-સારી રીતે ઊંચકીને પછાડે-દૂર ફેંકી દે. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સજ્જનોનો સત્કાર અને દુષ્ટોનો વિનાશ કરીને તથા વેદ વિદ્યા અને ધનની વૃદ્ધિ કરીને રાજ્યને નિષ્કંટક બનાવે છે, તે જ પ્રશંસિત બને છે.

જે રાજા રાષ્ટ્રવાસી સજ્જનોનો સત્કાર કરીને તથા દુષ્ટોનો બહિષ્કાર કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેના જ સભાપતિ અને સેનાપતિ શત્રુઓનો નાશ કરી શકે છે. (૬૪)

ક્રમધ્વમ્ગ્નિના નાકમુખ્યઃ હસ્તેષુ બિભ્રતઃ ।

દિવસ્પૃષ્ઠઃ સ્વર્ગત્વા મિશ્રા દેવેભિરાધ્વમ્ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! અગ્નિના-વિદ્યુત્થી નાકમ્-અત્યંત સુખકારક ઉચ્ચમ્-પાત્રમાં પકાવેલ દાળ, ભાત, શાક અને કઢી આદિ ભોજનને હસ્તેષુ-હાથોમાં બિભ્રતઃ-ધારણ કરતાં ક્રમધ્વમ્-પરાક્રમ કરો.

દેવેભિઃ-વિદ્વાનોથી મિશ્રાઃ-મળીને દિવઃ-ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોના પ્રકાશથી ઉત્પન્ન દિવ્ય પૃષ્ઠમ્-જાણવા યોગ્ય સ્વઃ-સુખને ગત્વા-પ્રાપ્ત કરીને આધ્વમ્-સ્થિત બનો-બેસો. (૬૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ વિદ્વાનોની સાથે સમ્યક્ પ્રયોગ દ્વારા આગ્નેયાસ્ત્ર આદિથી શત્રુઓ પર આક્રમણ કરે અને સ્થિર સુખ પ્રાપ્ત કરીને ફરી-ફરી પ્રયત્નશીલ બને. (૬૫)

પ્રાચીમનું પ્રદિશં પ્રેહિં વિદ્વાનગ્નેરગ્ને પુરોઽઅગ્નિર્ભવેહ ।

વિશ્વાઽઆશા દીદ્યાનો વિ ભાહ્યૂર્જી નો ધેહિ દ્વિપદે ચતુષ્પદે ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-શત્રુઓને બાળનાર સભાપતિ ! તું પ્રાચીમ્-પૂર્વ પ્રદિશમ્-દિશાની તરફ અનુ + પ્ર + ઇહિ-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત થા.

તું ઇહ-એ રાજ્યકર્મમાં અગ્નેઃ-આગ્નેયાસ્ત્ર આદિના યોગથી પુરોઅગ્નિઃ-અગ્રગામી અગ્નિની સમાન વિદ્વાન્-કાર્યને જાણનાર વિદ્વાન્ ભવ-બન.

વિશ્વાઃ-સમસ્ત આશાઃ-દિશાઓને દીદ્યાનઃ-નિરંતર પ્રકાશિત કરનાર સૂર્ય સમાન નઃ-અમને દ્વિપદે-

મનુષ્યાદિ અને ચતુષ્પદે-ગાય આદિ પશુઓ માટે ઋર્જમ્-અન્નાદિ પદાર્થોને ધેહિ-ધારણ કર તથા વિદ્યા, વિનય અને પરાક્રમથી અભયનો વિ, ભાહિ-પ્રકાશ કર. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાઓનો અભ્યાસ કરીને તથા યુદ્ધ વિદ્યાને જાણીને સર્વ દિશાઓમાં પ્રશંસિત બને છે, તે મનુષ્યોના ભક્ષ્ય પદાર્થો અને પશુઓના ભોજ્ય પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરીને તથા રક્ષા કરીને આનંદિત રહે. (૬૬)

પૃથિવ્યાઽઅહમુદ્નન્તરિક્ષમારુહમન્તરિક્ષાદિવમારુહમ્ ।

દિવો નાકસ્ય પૃષ્ઠાત્ સ્વર્જ્યોતિરગામહમ્ ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ યોગના અંગોના અનુષ્ઠાન અને સંયમસિદ્ધ અર્થાત્ ધારણા, ધ્યાન અને સમાધિથી પરિપૂર્ણ અહમ્-હું પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીની મધ્યમાં અન્તરિક્ષમ્-આકાશમાં ઉદ્ + આ + અસ્તમ્-આરોહણ કરું, અન્તરિક્ષાત્-આકાશથી દિવમ્-પ્રકાશમાન સૂર્યલોકમાં આ + અસ્તમ્-આરોહણ કરું છું; વા નાકસ્ય-સુખ કરાવનાર દિવઃ-પ્રકાશમાન તે સૂર્યલોકના પૃષ્ઠાત્-સમીપથી સ્વઃ-અત્યંત સુખ અને જ્યોતિઃ-જ્ઞાનના પ્રકાશને અહમ્-હું અગામ્-પ્રાપ્ત કરું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૬૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પોતાના આત્માની સાથે પરમાત્માને યુક્ત કરે છે-જોડે છે, ત્યારે અણિમા આદિ સિદ્ધિઓ ઉત્પન્ન-પ્રકટ થાય છે, ત્યારે તે અવ્યાહતગતિ-કોઈ રોક-ટોક વિના અભીષ્ટ-ઈચ્છિત સ્થાનોમાં જઈ શકે છે; અન્યથા નહીં. (૬૭)

સ્વર્યન્તો નાર્પેક્ષન્ત્ઽઆ દ્યાઞ્ઞ રોહન્તિ રોદસી ।

યજ્ઞં યે વિશ્વતોધાર્ઃસુવિદ્વાઞ્ઞસો વિતેનિરે ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : યે-જે સુવિદ્વાંસઃ-ઉત્તમ પંડિત યોગીજન યન્તઃ-યોગાભ્યાસના પૂર્ણ નિયમોનું પાલન કરનારની ન-સમાન સ્વઃ-અત્યંત સુખની અપ + ઈચ્છન્તે-અપેક્ષા કરે છે, વા રોદસી-આકાશ-દ્યુલોક અને પૃથિવી લોક પર આ + રોહન્તિ-આરોહણ કરે છે-ચડી જાય છે અર્થાત્ લોકાન્તરોમાં ઈચ્છાપૂર્વક ગતિ કરે છે, વા દ્યામ્-પ્રકાશમય યોગવિદ્યાને તથા વિશ્વતોધારમ્-સર્વત્ર સુશિક્ષાયુક્ત વાણી છે જેમાં યજ્ઞમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય તે યજ્ઞાદિ કર્મનો વિતેનિરે-વિસ્તાર કરે છે, તેઓ અવિનાશી સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૮)

ભાવાર્થ : જેમ સારથિ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને તેને ઈચ્છિત માર્ગમાં ચલાવીને સુખપૂર્વક ઈચ્છિત સ્થાન પર શીઘ્ર પહોંચી જાય છે, તેમજ ઉત્તમ વિદ્વાન્ યોગીજન જિતેન્દ્રિય બનીને સંયમ દ્વારા પોતાના ઈષ્ટ પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને આનંદનો વિસ્તાર કરે છે. (૬૮)

અગ્ને પ્રેહિ પ્રથમો દેવયતાં ચક્ષુર્દેવાનામુત મર્ત્યાનામ્ ।

ઇર્યક્ષમાણા ભૃગુભિઃ સ્જોષાઃ સ્વર્યન્તુ યર્જમાનાઃ સ્વસ્તિ ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ દેવયતામ્-તું કામના કરવા યોગ્ય વિદ્વાનોની મધ્યમાં પ્રથમ:-પ્રથમ પ્રેહિ-પ્રાપ્ત થા, જેથી દેવાનામ્-વિદ્વાનો ઉત્-અને મર્त्याનામ્-અવિદ્વાનોનો તું ચક્ષુ:-વ્યવહાર જોનાર-નેત્ર છે.

જેથી ઇયક્ષમાણા:-યજ્ઞ કરવાના ઈચ્છુક, સજોષા:-સમાન રૂપથી પ્રીતિયુક્ત યજમાના:-સર્વને સુખ આપનાર ભૃગુભિ:-પરિપૂર્ણ વિજ્ઞાનવાળા વિદ્વાનોની સાથે સ્વસ્તિ-સામાન્ય સુખ અને સ્વ:-અત્યંત સુખને યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે; તેમ તું પણ પ્રાપ્ત કર. (૬૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમે વિદ્વાન્ અને અવિદ્વાનોની સાથે પ્રીતિપૂર્વક ઉપદેશથી સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૬૯)

નક્તોષાસા સમનસા વિરૂપે ધાપયેતે શિશુમેકઃ સમીચી ।

દ્યાવાક્ષામા રુક્મોઽઅન્તર્વિભાતિ દેવાઽઅગ્નિં ધારયન્ દ્રવિણોદાઃ ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સમનસા-એક સમાન યુક્ત, સમીચી-એકતા ચાહનારી, વિસ્મે-જુદા-જુદા સ્વરૂપવાળી ધાત્રી અને માતા બન્ને એકમ્-એક શિશુમ્-બાળકને નક્તોષાસા-રાત્રિ અને ઉષાના જગતનું, ધાપયેતે-દૂધપાન કરાવે છે, અર્થાત્ અત્યંત આનંદ આપે છે.

અથવા જેમ રુક્મ:-પ્રકાશમાન અગ્નિ દ્યાવાક્ષામા + અન્ત:-બ્રહ્માંડ- દુલોક અને પૃથિવીની મધ્યમાં વિ, ભાતિ-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશ કરે છે, તે અગ્નિમ્-અગ્નિને દ્રવિણોદા:-દ્રવ્ય આપનાર દેવા:-શાસ્ત્ર ભણેલ-વિદ્વાનો ધારયન્-ધારણ કરે છે, તેવો વર્તાવ કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : સંસારમાં જેમ રાત્રિ અને ઉષા વિપરીત રૂપોથી વિદ્યમાન છે, જેમ વિદ્યુત્ સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત છે, અથવા જેમ દુલોક અને પૃથિવીલોક અત્યંત સહનશીલ છે; તેમજ વિવેકશીલ મનુષ્યોએ શુભગુણોમાં વ્યાપક બનીને પુત્રની સમાન સર્વ જગતનું પાલન કરવું જોઈએ. (૭૦)

અગ્નેં સહસ્ત્રાક્ષ શતમૂર્દ્ધઞ્ચત્તં તે પ્રાણાઃ સહસ્ત્રં વ્યાનાઃ ।

ત્વઃસાહસ્ત્રસ્ય રાયઽઈશિષે તસ્મૈં તે વિધેમ્ વાજાય સ્વાહા ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે સહસ્ત્રાક્ષ-હજારો અસંખ્ય વ્યવહારોમાં વિશેષ વિજ્ઞાનવાળા, શતમૂર્દ્ધન્-સેંકડો અસંખ્ય પ્રાણીઓમાં મસ્તકવાળા, અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમય યોગીરાજ ! જે તે-આપના શતમ્-સેંકડો-અસંખ્ય પ્રાણા:-જીવના સાધન, સહસ્ત્રમ્ વ્યાના:-સર્વ ક્રિયાઓના નિમિત્ત શરીરસ્થ વાયુ તથા જે ત્વમ્-આપ સાહસ્ત્રસ્ય-હજારો જીવ તથા પદાર્થોના આધાર જે જગત્ તેના રાય:-ધનના ઈશિષે-સ્વામી છે; તસ્મૈં-તે વાજાય-વિશેષ જ્ઞાન-વિજ્ઞાનવાન્ તે-આપને માટે અમે સ્વાહા-સત્ય વાણીથી વિધેમ-સત્કારપૂર્વક વ્યવહાર કરીએ. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે યોગી તપ આદિ સાધનોથી યોગબળને પ્રાપ્ત કરીને અસંખ્ય પ્રાણીઓના શરીરમાં પ્રવિષ્ટ થઈને અનેક નેત્રો આદિ અંગોથી દર્શન આદિ કાર્ય કરી શકે છે.

અનેક પદાર્થો અને ધનોના સ્વામી બને છે, તેની આપણે અવશ્ય સેવા કરવી જોઈએ. (૭૧)

જગતને ઉત્પન્ન કરનારી પ્રણીનામ્-અત્યંત ઉન્નતિથી વૃદ્ધિ પામેલ સહસ્રધારામ્-હજારો-અસંખ્ય પદાર્થોને ધારણ કરનારી સુમતિમ્-તથા તથ્યાતથ્યને વિષયોનો પ્રકાશ કરનારી ઉત્તમ બુદ્ધિ તથા પયસા-અન્નાદિ પદાર્થોથી; મહીમ્-મહાન્ ગામ્-વેદવાણીને અદુહત્-પરિપૂર્ણ કરે છે અર્થાત્ કમથી જાણીને પોતાના જ્ઞાન વિષયક કરે છે, તેમ તામ્-તેને અહમ્-હું આવૃણે-શ્રેષ્ઠતાથી સ્વીકાર કરું છું. (૭૪).

ભાવાર્થ : જેમ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય જગદીશ્વરની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને ઉન્નત બને છે, તેમજ તેને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોએ પણ વિદ્યા અને યોગની વૃદ્ધિ માટે [તત્પર] બનવું જોઈએ. (૭૪)

વિધેમ્ તે પરમે જન્મન્નગ્ને વિધેમ્ સ્તોમૈરવરે સ્ધસ્થૈ ।

યસ્માદ્યોનેરુદારિથા યજે તં પ્ર ત્વે હવીંષિંષિં જુહુરે સમિદ્ધે ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-યોગીજન ! તે-તારા પરમે-યોગ સંસ્કારોથી સર્વોત્કૃષ્ટ ઉત્પન્ન પૂર્વ જન્મન્-જન્મમાં અથવા ત્વે-તારા વર્તમાન જન્મમાં અવરે-નવીન સ્ધસ્થે-લોકમાં વર્તમાન અમે સ્તોમૈઃ-સ્તુતિઓ દ્વારા વિધેમ્-સત્કારપૂર્વક તારી સેવા કરીએ.

યસ્માત્-જે યોનેઃ-સ્થાનથી ઉદારિથિ-ઉત્તમ સાધનો સહિત તું પ્રાપ્ત થાય છે, તમ્-તે સ્થાનને હું પ્રાયજે-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

જેમ હવન કરનારા જનો સમિદ્ધે-પ્રદીપ્ત અગ્નિમાં હવીંષિ-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનો જુહુરે-હોમ કરે છે, તેમ યોગ-અગ્નિમાં અમે દુઃખોના હોમનું વિધેમ્-વિધાન કરીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં યોગના સંસ્કારોથી સંપન્ન જે જીવનો પવિત્ર અને સન્માનીય જન્મ થાય છે, તે સંસ્કારોની પ્રબળતાથી યોગનો જિજ્ઞાસુ બને છે.

જે લોકો તે [યોગી]ની સેવા કરે છે તેઓ પણ યોગના જિજ્ઞાસુ બને છે. તેઓ સર્વે જેમ અગ્નિ લાકડાને બાળી નાખે છે, તેમ સમસ્ત અશુદ્ધિઓને યોગ દ્વારા બાળી નાખે છે. (૭૫)

પ્રેદ્ધૌઽઅગ્ને દીદિહિ પુરો નોઽજસ્રયા સૂમ્યા યવિષ્ઠ ।

ત્વાંશ્ચ શશ્વન્તઽપયન્તિ વાજાઃ ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ-અત્યંત યુવક ! અગ્ને-અગ્નિસમાન દુઃખોનો વિનાશ કરનાર યોગીજન ! આપ પુરઃ-પહેલાં પ્રેદ્ધઃ-પ્રદીપ્ત બનીને અજસ્રયા-નાશરહિત નિરંતર સૂમ્યા-ઐશ્વર્યના પ્રવાહથી નઃ-અમને દીદિહિ-ચાહો. શશ્વન્તઃ-નિરંતર વિદ્યમાન વાજાઃ-વિજ્ઞાનવાન લોકો ત્વામ્-આપને ઉપ, યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય. (૭૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય શુદ્ધ-પવિત્ર આત્મા બનીને અન્યોનો ઉપકાર કરે છે, ત્યારે તેઓ પણ સર્વત્ર ઉપકારને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૬)

અગ્ને તમદ્યાશ્વન્ન સ્તોમૈઃ ક્રતુન્ન ભદ્રઃહૃદિસ્પૃશામ્ ।

ऋध्यामां तऽओहैः ॥ ७७ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન પરાક્રમી વિદ્વાન્ ! જે અશ્વમ્-ઘોડાઓની ન-સમાન, વા ક્રતુમ્-બુદ્ધિની ન-સમાન, ભદ્રમ્-કલ્યાણકારી અને હૃદિસ્મૂશમ્-હૃદયમાં સ્પર્શ કરનાર છે, તમ્-તે પૂર્વ મંત્રમાં કથિત તને સ્તોમૈઃ-સ્તુતિઓથી અદ્ય-આજ પ્રાપ્ત કરીને તે-આપના ઓહૈઃ-પાલન આદિ ગુણોથી ઋધ્યામ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરમાં વિદ્યમાન વિદ્યુત્ આદિ દ્વારા વૃદ્ધિ, વેગ અને પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ સંબંધી સુખની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ વિદ્વાનોની શિક્ષા અને રક્ષા આદિ દ્વારા મનુષ્ય આદિ વૃદ્ધિ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૭)

चित्ति जुहोमि मनसा घृतेन यथा देवाऽइहागमन्वीतिहोत्राऽऋतावृधः ।

पत्ये विश्वस्य भूमनो जुहोमि विश्वकर्मणे विश्वाहादाभ्यः हविः ॥ ७८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જેમ હું મનસા-વિજ્ઞાન વા ઘૃતેન-ઘી થી ચિત્તિમ્-જે ક્રિયાથી સંચય કરે છે અર્થાત્ કાષ્ઠોમાં ચયન કરેલી અગ્નિને જુહોમિ-ગ્રહણ કરું છું.

યથા-જેમ ઇહ-આ જગતમાં વીતિહોત્રાઃ-જેનો યજ્ઞ સર્વથી પ્રકાશમાન છે, તેઓ ઋતાવૃધઃ-સત્યવૃદ્ધિ પામનાર, દેવાઃ-કામના કરવા યોગ્ય વિદ્વાનો ભૂમનઃ-અનેક રૂપવાળા વિશ્વસ્ય-સમસ્ત સંસારના વિશ્વકર્મણે-સર્વ ક્રિયામાણ કર્મને કરનાર પત્યે-પાલક પરમેશ્વરને માટે અદાભ્યમ્-નાશ ન કરવા અને હવિઃ-હોમ કરવા યોગ્ય, શુદ્ધ, સુખકારી પદાર્થોનો વિશ્વાહા-હંમેશા હોમ કરવા માટે આગમન્-આવે છે; અને-હું હવિઃ-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું જુહોમિ-દાન કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૭૮)

ભાવાર્થ : જેમ કાષ્ઠોમાં ચયન કરેલો અગ્નિ ઘૃતથી વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ વિજ્ઞાનથી હું વધુ-ઉન્નત બનું. જેમ ઈશ્વરના ઉપાસક જનો અને વિદ્વાનો સંસારના કલ્યાણ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેમ હું પણ પ્રયત્ન કરું. (૭૮)

सप्त तैऽअग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि ।

सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥ ७९ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જેમ અગ્નેઃ-અગ્નિના સપ્ત-ગાયત્રી છન્દ સમિધઃ-પ્રદીપ્ત છે વા સપ્ત જિહ્વાઃ-સાત કાલી, કરાલી જવાલારૂપ જીભ છે, વા સપ્ત, ઋષયઃ-પ્રાણ, અપાન, સમાન, ઉદાન, વ્યાન, દેવદત્ત અને ધનંજય સાત ઋષિઓ છે, વા સપ્ત, ધામ પ્રિયાણિ-સપ્ત પ્રિય-ધામ અર્થાત્ જન્મ, સ્થાન, નામ, ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ છે, વા સપ્ત, હોત્રાઃ-સાત ઋત્વિક-ઋતુ ઋતુમાં યજ્ઞ કરનારા છે; તેમ તે-તારા બને.

જેમ વિદ્વાન્ તે અગ્નિને સપ્તધા-સાત પ્રકારથી યજન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે-સંગ કરે છે, તેમ ત્વા-તને પ્રાપ્ત થાય.

જેમ અગ્નિ ઘૃતેન-ઘૃતથી અને સ્વાહા-ઉત્તમવાણીથી સપ્ત, યોનીઃ-સાત સંચયોને સુખ આપે છે,

તેમ તું આ, પૃળસ્વ-સુખી થા.

ભાવાર્થ : જેમ કાષ્ઠ-બળતણથી અગ્નિ વધે છે, તેમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી સર્વ મનુષ્યો વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય.

જેમ વિદ્વાનો અગ્નિમાં ઘૃત આદિ પદાર્થોનો હોમ કરીને જગતનો ઉપકાર કરે છે, તેમ અમે પણ કરીએ. (૭૯)

શુક્રજ્યોતિશ્ચ ચિત્રજ્યોતિશ્ચ સત્યજ્યોતિશ્ચ જ્યોતિષ્માંશ્ચ ।

શુક્રશ્ચઽઋતપાશ્ચાત્યઃહાઃ ॥ ૮૦ ॥

હે મનુષ્યો ! જેમ શુક્રજ્યોતિઃ-શુદ્ધ જ્યોતિવાળા, ચ-અને ચિત્રજ્યોતિઃ-અદ્ભૂત જ્યોતિવાળા, ચ-અને સત્યજ્યોતિઃ-અવિનાશી જ્યોતિ-પ્રકાશવાળા, ચ-અને જ્યોતિષ્માન્-અનેક પ્રકાશવાળા, ચ-અને શુક્રઃ-શીઘ્રકારી વા શુદ્ધ સ્વરૂપ, ચ-અને અત્યંહાઃ-દુષ્ટ અર્થાત્ પાપકર્મથી દૂર, ચ-અને ઋતપાઃ-સત્યની રક્ષા કરનાર ઈશ્વર છે, તેમ તમે પણ બનો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ આ સંસારમાં વિદ્યુત્, સૂર્ય આદિ પ્રકાશક અને શુદ્ધિ કરનાર પદાર્થોને રચીને ઈશ્વરે જગતને શુદ્ધ કરેલ છે, તેમ પવિત્રતા, સત્ય, વિદ્યા, ઉપદેશ અને ક્રિયાઓ-આચરણો દ્વારા વિદ્વાનો મનુષ્યોને શુદ્ધ કરે.

આ મંત્રમાં અને 'ચ-' કારોના પાઠનો એ અભિપ્રાય છે, કે સર્વ મનુષ્યો પર પ્રીતિ આદિ પણ રાખવી જોઈએ. (૮૦)

ઈદૃઙ્ ચાન્યાદૃઙ્ ચ સદૃઙ્ ચ પ્રતિસદૃઙ્ ચ ।

મિતશ્ચ સમ્મિતશ્ચ સભરાઃ ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : જે પુરુષ ઈદૃઙ્-એના સમાન ચ-પણ અન્યાદૃઙ્-અન્યની સમાન ચ-પણ સદૃઙ્-સમાન જોનાર, ચ-પણ પ્રતિસદૃઙ્-તેના-તેના પ્રત્યે સમાન જોનાર, ચ-પણ મિતઃ-માનને પ્રાપ્ત થયેલ, ચ-પણ સમ્મિતઃ-સારી રીતે પરિમાણ કરેલ-પરિમિત ચ-અને જે સભરાઃ-સમાન ધારણ કરનાર વિદ્યમાન છે, તે વ્યવહારિક કાર્ય સિદ્ધિ કરી શકે છે. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરની સમાન ઉત્તમ છે, તેનું અનુકરણ કરીને સત્ય ધારણ કરી અસત્યનો ત્યાગ કરે તે યોગ્ય છે. (૮૧)

ઋતશ્ચ સત્યશ્ચ ધ્રુવશ્ચ ધ્રુવશ્ચ । ધૃત્તા ચ વિધૃત્તા ચ વિધાર્યઃ ॥ ૮૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઋતઃ-સત્ય જ્ઞાન યુક્ત ચ-પણ સત્યઃ-શ્રેષ્ઠોમાં શ્રેષ્ઠ ચ-પણ ધ્રુવઃ-દૃઢ નિશ્ચયયુક્ત. ચ-પણ ધરમ્નઃ-સર્વના આધાર ચ-પણ ધર્તા-ધારણ કરનાર ચ-પણ વિધર્તા-ધારકોના ધારક ચ-પણ અને વિધાર્યઃ-વિશેષ કરીને સર્વ વ્યવહારોને ધારણ કરનાર છે; તેની સર્વ ઉપાસના કરે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્યા, ઉત્સાહ, સત્સંગ અને પુરુષાર્થથી સત્ય અને વિજ્ઞાનને ધારણ કરીને

સુશીલતાને ધારણ કરે છે, તે જ સ્વયં સુખી બની શકે છે તથા અન્યોને પણ સુખી કરી શકે છે. (૮૨)

ઋત્તજિચ્ચ સત્યજિચ્ચ સેનજિચ્ચ સુષેણશ્ચ ।

અન્તિમિત્રશ્ચ દૂરેઽમિત્રશ્ચ ગુણઃ ॥ ૮૩ ॥

પદાર્થ : જે ઋત્તજિત્-વિજ્ઞાનને ઉન્નત કરનાર ચ-અને સત્યજિત્-કારણ અને ધર્મને ઉન્નત કરનાર ચ-અને સેનજિત્-સેનાને જીતનાર ચ-અને સુષેણઃ-સુંદર સેનાવાળા ચ-અને અન્તિમિત્રઃ-સહાયકોને સમીપ રાખનાર ચ-અને દૂરે અમિત્રઃ-શત્રુઓથી દૂર રહેનાર ચ-અને અન્ય પણ એ રીતે હોય, તે ગુણઃ-પ્રશંસનીય હોય છે. (૮૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા અને સત્ય આદિ કર્મોને ઉન્નત કરે છે તથા મિત્રોની સેવા અને શત્રુઓનો દ્વેષ કરે છે, તે જ લોકમાં પ્રશંસનીય છે. (૮૩)

ઈદૃક્ષાસઽણ્ણાદૃક્ષાસઽઙ્ગુ ષુ ણઃ સદૃક્ષાસઃ પ્રતિસદૃક્ષાસઽણ્ણતન ।

મિતાસશ્ચ સમ્મિતાસો નોઽઅદ્ય સમ્ભરસો મરુતો યજ્ઞેઽસ્મિન્ ॥ ૮૪ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-ઋત્વિક-ઋતુ ઋતુમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનો ! જે ઈદૃક્ષાસઃ-એ લક્ષણોથી યુક્ત ણ્ણાદૃક્ષાસઃ-એ પૂર્વોક્તની સમાન, સદૃક્ષાસઃ-પક્ષપાત રહિત સમાન દૃષ્ટિવાળા, આપ્રતિસદૃક્ષાસઃ-આપ્ત-શાસ્ત્રજ્ઞ, સત્યવાદી અને ધર્માત્માઓની સમાન, તે આપ નઃ-અમને સુ + આ ઇતન-ઉત્તમ રીતિથી સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાવ છો, ઙ-વિચારપૂર્વક મિતાસઃ-પરિમિત વિજ્ઞાનવાળા, સમ્મિતાસઃ-ત્રાજવા સમાન સત્યના વિવેચક ચ-અને અસ્મિન્-આ યજ્ઞે-યજ્ઞમાં સમ્ભરસઃ-પોતાની સમાન પ્રાણીઓની પુષ્ટિ-પાલન કરનાર બનો, અદ્ય-આજ નઃ-અમારી રક્ષા કરો અને અમે પણ આપનો સદા સત્કાર કરીએ. (૮૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે ધાર્મિક વિદ્વાનજન ક્યાંય પણ મળે, અને જેની સમીપ આવે, જેને ભણાવે અને સુશિક્ષા આપે, ત્યારે સર્વેએ તેનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૮૪)

સ્વતવાંશ્ચ પ્રઘાસી ચ સાન્તપનશ્ચ ગૃહમેધી ચ ।

ક્રીડી ચ શાકી ચૌજ્જેષી ॥ ૮૫ ॥

પદાર્થ : જે સ્વતવાન્-પોતાનાની વૃદ્ધિ કરનાર, ચ-અને પ્રઘાસી-જેના બહુજ ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થો વિદ્યમાન છે એવા ચ-અને સાન્તપનઃ-શત્રુઓને સારી રીતે તપાવનાર ચ-અને ગૃહમેધી-ઘરમાં ઉત્તમ સંગવાળા, ચ-અને ક્રીડી-ખેલાડી સ્વભાવવાળા, ચ-અને શાકી-સર્વદા સમર્થ સ્વભાવવાળા ચ-પણ હોય, તે ઝજ્જેષી-મનથી અત્યંત જીતનાર હોય છે. (૮૫)

ભાવાર્થ : જે અધિક બળ, અન્ન અને સામર્થ્યયુક્ત ગૃહસ્થ છે, તે સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૫)

ઈન્દ્રં દૈવીર્વિશોં મરુતોઽનુવર્ત્માનોઽભવન્વથેન્દ્રં દૈવીર્વિશોં મરુતોઽનુવર્ત્માનોઽ-

ભવન્ । એવમિમં યજમાનં દૈવીશ્ચ વિશો માનુષીશ્ચાનુવર્તાનો ભવન્તુ ॥ ૮૬ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ એવો વર્તાવ કરો યથા-જેમ દૈવી:-વિદ્વાન્ જનોના એ વિશ:-પ્રજાજન મસ્ત:-ઋતુ-ઋતુમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાન્-ઋત્વિક ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધાર્મિક રાજાની અનુવર્તાન:-અનુકૂળ માર્ગ ચાલનાર અભવન્-બને.

યથા-જેમ મસ્ત:-પ્રાણોની સમાન પ્રિય દૈવી:-વિદ્વાનોની વિશ:-પ્રજાજનો ઇન્દ્રમ્-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વરને અનુવર્તાન:-અનુકૂળ આચરણ કરનાર અભવન્-બને.

એવમ્-આ રીતે દૈવી:-વિદ્વાનો ચ-અને માનુષી:-મૂર્ખ ચ-એ બન્ને વિશ:-પ્રજાજન ઇમમ્-એ યજમાનમ્-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સુખદાતા સજ્જનને અનુવર્તાન:-અનુકૂળ આચરણ ભવન્તુ-કરે. (૮૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રજાજનો રાજા આદિ રાજપુરુષોને અનુકૂળ બનીને વર્તાવ કરે, તેમ રાજા આદિ સર્વ-પ્રજાજનોને અનુકૂળ વર્તાવ કરે.

જેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક સર્વના સુખ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ સર્વજન તેના સુખ માટે પ્રયત્ન કરે. (૮૬)

દ્વમશ્ચ સ્તનમૂર્જસ્વન્તં ધયાપાં પ્રપીનમગ્ને સરિરસ્ય મધ્યે ।

ઉત્સં જુષસ્વ મધુમન્તમર્વન્ત્સમુદ્રિયઃ સદનમાવિશસ્વ ॥ ૮૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષ ! તું પ્રપીનમ્-સારી રીતે દૂધ ભરેલ સ્તનમ્-સ્તનની સમાન ઇમમ્-આ ઋર્જસ્વન્તમ્-પ્રશંસિત બળકારક અપામ્-જલના રસોનું ધય-પાન કર. સરિરસ્ય-અનેકોની મધ્યે-મધ્યમાં મધુમન્તમ્-પ્રશસ્ત મધુરતા આદિ ગુણયુક્ત ઉત્સમ્-જેથી પદાર્થો ભીના થાય છે તે કૂવાનું જુષસ્વ-સેવન કર.

હે અર્વન્-ઘોડાની સમાન વર્તાવ રાખનાર જન ! તું સમુદ્રિયમ્-સમુદ્રમાં વિદ્યમાન સદનમ્-ઘર-નાવ આદિમાં આવિશસ્વ-સારી રીતે પ્રવેશ કર. (૮૭)

ભાવાર્થ : જેમ બાળકો અને વાછરડાઓ સ્તનોથી દૂધ પાન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે અથવા જેમ ઘોડા શીઘ્ર દોડે છે, તેમ મનુષ્ય યુક્ત આહાર-વિહાર કરીને વૃદ્ધિ પામીને વેગથી ગતિ કરે.

જેમ જલથી પરિપૂર્ણ સમુદ્રમાં નાવમાં બેસીને જતાં લોકો સુખપૂર્વક સામે પાર અને આ પાર પહોંચે છે, તેમ જ મનુષ્ય ઉત્તમ સાધનોના વ્યવહાર દ્વારા આ પાર-પેલી પાર પ્રાપ્ત કરે. (૮૭)

ઘૃતં મિમિક્ષે ઘૃતમસ્ય યોનિર્ઘૃતે શ્રિતો ઘૃતમ્વસ્ય ધામ ।

અનુષ્વધમાર્વહ માદયસ્વ સ્વાર્હાકૃતં વૃષભ વક્ષિ હૃવ્યમ્ ॥ ૮૮ ॥

પદાર્થ : હે સમુદ્રની યાત્રા કરનાર મનુષ્ય ! તું ઘૃતમ્-જલને મિમિક્ષે-સિંચવાની ઇચ્છા કર, ડ-

વા અસ્ય-એ અગ્નિનું ઘૃતમ્-ધી યોનિઃ-ઘર છે જે ઘૃતે-ધી માં શ્રિતઃ-આશ્રિત છે, વા ઘૃતમ્-જલ અસ્ય-તે અગ્નિનું ધામ-ધામ-સ્થાન છે, તે અગ્નિને તું અનુષ્વધમ્-અન્નની અનુકૂળતાને આ + વહ-પ્રાપ્ત કર.

હે વૃષભ-વર્ષાવનાર જન ! તું જે કારણે સ્વાહાકૃતમ્-વેદવાણીથી સિદ્ધ કરેલ હવ્યમ્-લેવા યોગ્ય પદાર્થોને વક્ષિ-કામના કરે છે વા પ્રાપ્ત કરે છે, એ માટે અમને માદયસ્વ-આનંદિત કર. (૮૮)

ભાવાર્થ : જેટલો અગ્નિ જલમાં છે, તેટલો સમુદ્રમાં બતાવવામાં આવે છે. જેમ ઘૃતથી અગ્નિની વૃદ્ધિ-પ્રદીપ્ત થાય છે, તેમ જલથી સર્વ પદાર્થોની વૃદ્ધિ થાય છે. અન્ન અનુકૂળ અને ઘૃત આનંદકારક છે માટે સર્વ તેની કામના કરે. (૮૮)

સમુદ્રાદૂર્મિર્મધુમાર્ડુદાર્દુપાંથ્શુના સમમૃતત્વમાનદ્ ।

ઘૃતસ્ય નામ ગુહ્યં યદસ્તિ જિહ્વા દેવાનામમૃતસ્ય નાભિઃ ॥ ૮૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે સમુદ્રાત્-અન્તરિક્ષથી અંશુના-કિરણસમૂહ દ્વારા મધુમાન્-મધુરગુણથી યુક્ત ઝર્મિઃ-જલતરંગ ઉદારત્-ઉપર પહોંચે છે; તે સમ્ + અમૃતત્વમ્-ઉત્તમ અમૃતરૂપ સ્વાદની ઉપાનદ્-સમીપમાં વ્યાપ્ત કરે છે અર્થાત્ અતિ સ્વાદને પ્રાપ્ત કરે છે, યત્-જે ઘૃતસ્ય-જલનું ગુહ્યમ્-ગુપ્ત નામ-નામ અસ્તિ-છે; જે દેવાનામ્-વિદ્વાનોની જિહ્વા-વાણી અમૃતસ્ય-મોક્ષનો નાભિઃ-સ્તંભ અર્થાત્ પ્રબંધ કરનારી છે, તે સર્વનું સેવન કરો. (૮૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ મળેલા જલ અને ભૂમિનો વિભાગ કરીને [જલને] મેઘમંડળ સુધી પહોંચાડીને મધુર જલનું નિર્માણ કરે છે.

જે કારણરૂપ જલોના નામ ગુપ્ત છે અને મોક્ષ પણ ગૂઢ-ગુપ્ત છે, એ સર્વે ઉપદેશ દ્વારા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છે; એમ જાણો. (૮૯)

વયં નામ પ્ર બ્રવામા ઘૃતસ્યાસ્મિન્ યજ્ઞે ધારયમા નમોભિઃ ।

ઉપં બ્રહ્મા શૃણવચ્છસ્યમાનં ચતુઃશૃઙ્ગોઽવમીદ્ ગૌરઽત્ ॥ ૯૦ ॥

પદાર્થ : જેને ચતુઃશૃંગઃ-ચારે વેદ શિંગ સમાન ઉત્તમ છે, તે. ગૌરઃ-વેદવાણીમાં રમણ કરનાર વા વેદવાણીના આપનાર, બ્રહ્મા-ચારે વેદોના વેતા-બ્રહ્મા અવમીત્-ઉપદેશ કરે, વા ઉપશૃણવત્-સંભળાવે, તે ઘૃતસ્ય-ઘૃત વા જલનું શસ્યમાનમ્-પ્રશંસિત ગુપ્ત નામ-નામ છે.

દાત્-એ નામનો વયમ્-અમે અન્યોને પ્ર, બ્રવામ-ઉપદેશ કરીએ, અસ્મિન્-એ યજ્ઞે-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારમાં નમોભિઃ-અન્નાદિ પદાર્થોની સાથે ધારયામ્-ધારણ કરીએ. (૯૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ માનવ શરીરને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પદાર્થોના નામો અને અર્થો અધ્યાપકો દ્વારા શ્રવણ કરીને અન્યોને ઉપદેશ કરવો જોઈએ અને આ સૃષ્ટિના પદાર્થોથી સર્વ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા

જોઈએ. (૯૦)

ચત્વારિ શૃઙ્ગા ત્રયોઽસ્ય પાદા દ્વે શીર્ષે સપ્ત હસ્તાસોઽસ્ય ।

ત્રિધાં બદ્ધો વૃષભો રોરવીતિ મહો દેવો મર્त्याંરઽઆવિવેશ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે અસ્ય-શબ્દના ત્રય:-પ્રાત:સવન, મધ્યસવન અને સાયંસવન એ ત્રણ પાદા:-પ્રાપ્તિના સાધન છે, ચત્વારિ શૃઙ્ગા:-શૃંગોની સમાન ચાર વેદો છે, દ્વેશીર્ષે-અસ્તકાલ અને ઉદયકાલ બે શિર છે, વા જે અસ્ય-એ યજ્ઞના સપ્ત હસ્તાસ:-સાત ગાયત્રી આદિ છંદ હાથ સમાન છે, વા જે ત્રિધા-મંત્ર, બ્રાહ્મણ અને કલ્પ ત્રણ પ્રકારથી બદ્ધ:-બંધાયેલ મહ:-મહાન દેવ:-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વૃષભ:-સર્વત્રથી સુખની વર્ષા કરનાર યજ્ઞ રોરવીતિ-પ્રાત:, મધ્ય અને સાયમ્ સવન ક્રમશ: શબ્દ કરે છે અને મર્त्याન્-મનુષ્યોમાં આ + વિવેશ-ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે છે, તેનું અનુષ્ઠાન કરીને સુખી બનો.

દ્વિતીય પક્ષ : હે મનુષ્યો ! તમે જે અસ્ય-એ શબ્દથી ત્રય:-ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણ કાલ પાદા:-પ્રાપ્તિના સાધન છે, ચત્વારિ શૃઙ્ગા-શિંગોની સમાન ચાર-નામ, આખ્યાત, ઉપસર્ગ અને નિયાત છે, દ્વે શીર્ષે-બે શિર નિત્ય અને કાર્ય શબ્દના સ્વરૂપ છે, જે અસ્ય-એ શબ્દની સપ્ત-સાત વિભક્તિઓ હસ્તાસ:-હાથ સમાન છે, જે ત્રિધા-ત્રણ પ્રકારથી હૃદય, કંઠ અને શિરમાં બદ્ધ:-બંધાયેલા મહ:-મહાન દેવ:-શુદ્ધ-અશુદ્ધના પ્રકાશક વૃષભ:-સુખોની વર્ષા કરનાર શબ્દશાસ્ત્ર રોરવીતિ-ઋક્, યજુઃ, સામ અને અથર્વવેદથી શબ્દ કરે છે, મર્त्याન્-મનુષ્યોમાં આવિવેશ-પ્રવેશ કરે છે; તેનો અભ્યાસ કરીને સુખી વિદ્વાન્ બનો. (૯૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય યજ્ઞવિદ્યા અને શબ્દ વિદ્યાને જાણે છે, તે મહાશય વિદ્વાન્ બને છે. (૯૧)

ત્રિધાં હિતં પ્ણિભિર્ગુહ્યમાનં ગવિં દેવાસૌઃ ઘૃતમન્વવિન્દન્ ।

ઇન્દ્રઽએકઃ સૂર્ય એકઞ્જજાન વેનાદેકંઽસ્વધયા નિષ્ટતક્ષુઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેવાસ:-વિદ્વાન્જન પ્ણિભિ:-વ્યવહારના જ્ઞાતા, સ્તુતિકર્તાઓ દ્વારા ત્રિધા-ત્રણ પ્રકારથી હિતમ્-સ્થિત, ગવિ-વાણીમાં ગુહ્યમાનમ્-છુપાયેલા ઘૃતમ્-પ્રકાશિત જ્ઞાનને અનુ + અવિન્દન્-શોધવા પછી પ્રાપ્ત કરે છે, ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ એકમ્-એક વિજ્ઞાનને, સૂર્ય:-સૂર્ય એકમ્-એક વિજ્ઞાનને જજાન-પ્રકટ કરે છે. તથા વેનાત્-અતિ સુંદર મનોહર બુદ્ધિમાનથી તથા સ્વધયા-સ્વયં ધારણ કરેલી ક્રિયાથી એકમ્-એક વિજ્ઞાનને નિ:-નિરંતર તતક્ષુ:-અતિ તીક્ષ્ણ-સૂક્ષ્મ કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૯૨)

ભાવાર્થ : ત્રણ પ્રકારના સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને કારણનું જ્ઞાન કરાવનાર, વિદ્યુત્ તથા સૂર્યપ્રકાશની સમાન પ્રકાશિત તે વિજ્ઞાનને આપ્તજનોથી જે મનુષ્ય પ્રાપ્ત કરે છે, તે પોતાના જ્ઞાનને વ્યાપક બનાવે છે. (૯૨)

ए॒ताऽअ॑र्ष॒न्ति ह॒द्यात्समु॒द्राच्छ॒तव्र॑जा रि॒पुणा॑ नाव॒चक्षे॑ ।

घृ॒तस्य॑ धाराऽअ॒भिचा॑कशीमि हि॒रण्ययो॑ वे॒तसो॑ म॒ध्यऽआ॑साम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : જે રિપુણા-શત્રુ અને ચોર દ્વારા ન + અવચક્ષે-ન કાપવા યોગ્ય-અખંડ્ય શતવ્રજા:-સેંકડો માર્ગોવાળી એતા:-એ વાણીઓ હૃદ્યાત્, સમુદ્રાત્-હૃદયાકાશમાં અર્ષન્તિ-નીકળે છે, આસામ્-એ વેદ અને ધર્મયુક્ત વાણીઓ ના મધ્યે-મધ્ય જે અગ્નિમાં ઘૃતસ્ય-ઘીની ધારા:-ધારાઓ સમાન મનુષ્યોમાં પડીને પ્રકાશિત થાય છે, તે વાણીઓની હિરણ્યયઃ-તેજસ્વી વેતસઃ-અતિસુંદર હું અભિ, ચાકશીમિ-સર્વત્રથી ઉપદેશ-શિક્ષા કરું છું. (૯૩)

ભાવાર્થ : જે પવિત્ર, વિજ્ઞાનયુક્ત, અનેક માર્ગોવાળી, શત્રુઓ દ્વારા અકાટ્ય વાણીઓ, જેમ ઘૃતના પ્રવાહ અગ્નિને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ શ્રોતાઓને પ્રસન્ન કરે છે, તે વાણીઓને જેમ ઉપદેશક વિદ્વાન જન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો પ્રાપ્ત કરે. (૯૩)

स॒म्यक् स्र॑वन्ति स॒रितो॑ न धे॒नाऽअ॒न्तर्हृ॒दा मन॑सा पू॒यमा॑नाः ।

ए॒तेऽअ॑र्ष॒न्त्यूर्મ॑यो घृ॒तस्य॑ मृ॒गाऽइ॒व क्षि॑પ॒णोરી॑ष॒माणाः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અન્તઃ હૃદા-શરીરની મધ્યમાં મનસા-શુદ્ધ અન્તઃકરણથી પૂયમાના:-પવિત્ર થયેલી ધેના:-વાણી સરિતઃ-નદીઓના ન-સમાન સમ્યક્-ઉત્તમ રીતિથી સ્રવન્તિ-પ્રવૃત્ત થાય છે, તેને જે એતે-એ વાણી દ્વારા ઘૃતસ્ય-પ્રકાશિત આન્તરિક જ્ઞાનના ઊર્મયઃ-તરંગો ક્ષિપણો:-હિંસક જનના ભયથી ઈષમાણા:-પલાયન કરનાર મૃગા ઇવ-હરણોની સમાન અર્ષન્તિ-ઉઠે છે તથા સર્વને પ્રાપ્ત થાય છે; તેને તમે જાણો. (૯૪)

ભાવાર્થ : જેમ નદીઓ સમુદ્રમાં જાય છે, તેમ અન્તરિક્ષમાં રહેલ શબ્દસમુદ્રથી વાણીઓ વિચરણ કરે છે.

જેમ સમુદ્રના તરંગો ઉછળે છે અને જેમ શિકારીના ભયથી હરણ ભાગે છે, તેમ સર્વ વાણીઓના શરીરમાં સ્થિત વિજ્ઞાનથી પવિત્ર થતી વાણીઓ તીવ્રતાથી વિચરણ કરે છે.

જે લોકો શાસ્ત્રોના અભ્યાસ અને સત્યભાષણ આદિથી વાણીઓને પવિત્ર કરે છે, તેઓ શુદ્ધ બને છે. (૯૪)

सिन्धो॑रिव प्रा॒ध्वने॑ शू॒घना॑सो वा॒तप्र॑मियः प॒तय॑न्ति य॒ह्वाः ।

घृ॒तस्य॑ धाराऽअ॒रुषो॑ न वा॒जी का॒ष्ठा भि॑न्दन्नु॒र्मिमिः॑ पि॒न्व॑मानः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! પ્રાધ્વને-ઉત્તમ જળના માર્ગમાં સિન્ધોરિવ-નદીઓની સમાન શૂઘનાસઃ-શીઘ્રગામી, વાતપ્રમિયઃ-વાયુના દ્વારા જાણવા યોગ્ય તરંગો ઉઠે અને ન-જેમ કાષ્ઠા:-સંગ્રામના પ્રદેશોનું ભિન્દન્-

વિદીર્ણ કરતાં ઝર્મિભિઃ-શત્રુઓના મારવાના શ્રમથી નીકળેલા પરસેવા રૂપ જલથી પૃથિવીને પિન્વમાનઃ-સીંચતા અસ્મઃ-ચાલક વાજી-વેગવાન ઘોડા ન-સમાન જે યહ્વાઃ-મહાન્ ગંભીર ઘૃતસ્ય-વિજ્ઞાનની ધારાઃ-વાણી પતયન્તિ-ઉપદેશકના મુખથી નીકળીને શ્રોતાઓ પર પડે છે; તેને તમે જાણો. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે કાર્યની સિદ્ધિ માટે નદી સમાન શીઘ્રગામી, ઘોડા સમાન વેગવાન અને સર્વ દિશાઓમાં પ્રસિદ્ધ યશવાળા લોકો પરોપકાર માટે ઉપદેશના કારણે મહાન્ દુઃખોને સહન કરે છે, તેઓ અને તેના શ્રોતાઓ સંસારના સ્વામી બને છે, અન્ય નહિ. (૯૫)

અભિપ્રવન્ત્ સમનેવ યોષાઃ કલ્યાણ્યુઃ સ્મયમાનાસોઽઅગ્નિમ્ ।

ઘૃતસ્ય ધારાઃ સમિધૌ નસન્ત તા જુષાણો હર્યતિ જાતવેદાઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : સ્મયમાનાસઃ-અલ્પ હસીને પ્રસન્નતા ઉત્પન્ન કરનારી, કલ્યાણ્યુઃ-કલ્યાણમયી આચરણવાળી, સમનેવ યોષા-એક ચિત્તવાળી સ્ત્રીઓ જેમ પતિઓને પ્રાપ્ત થાય, તેમ જે સમિધઃ-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધોથી સમ્યક્ પ્રકાશિત, ઘૃતસ્ય-શુદ્ધ જ્ઞાનની ધારાઃ-વાણી અગ્નિમ્-તેજસ્વી વિદ્વાનોની પાસે અભિ + પ્રવન્ત-સર્વત્રથી જાય છે અને નસન્ત-પ્રાપ્ત થાય છે તાઃ-તે વાણીઓનું જુષાણઃ-સેવન કરતાં જાતવેદાઃ-જ્ઞાની વિદ્વાન્ હર્યતિ-કાન્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રસન્ન ચિત્તવાળી, હર્ષને પ્રાપ્ત, સૌભાગ્યવતી સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્યા અને વિજ્ઞાનના આભૂષણોથી વિભૂષિત વાણીઓ વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત થાય છે. (૯૬)

કન્યાઽઙ્ગવ વહતુમેત્વા ડઽઅઙ્ગ્યઙ્ગાનાઽઅભિ ચાકશીમિ ।

યત્ર સોમઃ સૂયતે યત્ર યજ્ઞો ઘૃતસ્ય ધારાઽઅભિ તત્પવન્તે ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : અઙ્ગિ-સુંદર રૂપનું અઙ્ગાનાઃ-દર્શન કરાવતી, વહતુમ્-પ્રાપ્ત થનાર પતિને એતવૈ-પ્રાપ્ત કરવા માટે કન્યા ઙ્ગવ-જેમ કન્યા શોભે છે, તેમ યત્ર-જ્યાં સોમઃ-ઐશ્વર્યનો સમૂહ સૂયતે-ઉત્પન્ન થાય છે, ડ-અને યત્ર-જ્યાં યજ્ઞઃ-યજ્ઞ થાય છે, તત્-ત્યાં જે ઘૃતસ્ય-જ્ઞાનની ધારાઃ-વાણી અભિ, પવન્તે-સર્વત્રથી પવિત્ર થાય છે, તેને હું અભિચાકશીમિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું છું. (૯૭)

ભાવાર્થ : જેમ કન્યાઓ સ્વયંવર વિધિથી પોતાના ઇચ્છિત પતિઓનો સ્વીકાર કરીને શોભિત થાય છે, તેમ ઐશ્વર્યની ઉત્પત્તિના અવસર પર અને યજ્ઞની સમૃદ્ધિમાં વિદ્વાનોની વાણીઓ પવિત્ર બનીને શોભિત બને છે. (૯૭)

અભ્યર્ષત સુષ્ટુતિં ગવ્યમાજિમસ્માસુ ભદ્રા દ્રવિણાનિ ધત્ત ।

દ્વમં યજ્ઞં નયત દેવતાં નો ઘૃતસ્ય ધારા મધુમત્પવન્તે ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે ઉત્તમ આચારથી સુષ્ટુતિમ્-સુંદર પ્રશંસાને, આજિમ્-સુકર્મોને

જણાવનાર સંગ્રામને અને ગવ્યમ્-વાણીમાં વિદ્યમાન બોધને અથવા ગાયમાં વિદ્યમાન દૂધ આદિને અભ્યર્ષત-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો.

દેવતા-વિદ્વાન્જન અસ્માસુ-અમારામાં ભદ્રા-અતિ આનંદદાતા દ્રવિણાનિ-ધનોને ધત્ત-સ્થાપિત કરે. ન:-અમને ઇમમ્-એ યજ્ઞમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વ્યવહારને નયત-પ્રાપ્ત કરાવો.

જે ઘૃતસ્ય-પ્રકાશિત વિજ્ઞાનથી સંબંધિત ધારા:-સુશિક્ષિત વાણીઓ વિદ્વાનોને મધુમત્-અત્યંત મધુમતી બનીને પવન્તે-પ્રાપ્ત થાય છે; તે વાણીઓ અમને પણ પ્રાપ્ત કરાવો. (૯૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ મિત્ર બનીને સંસારમાં પ્રસિદ્ધ બનવું જોઈએ.

જેમ પોતાના માટે, તેમ અન્યોને માટે પણ કલ્યાણકારી પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

પરમ પુરુષાર્થથી ગૃહાશ્રમની શોભાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને વેદવિદ્યાનો નિરંતર પ્રચાર કરવો જોઈએ. (૯૮)

ધામન્તે વિશ્વં ભુવન્મધિં શ્રિતમન્તઃ સમુદ્રે હૃદ્યન્તરાયુષિ ।

અપામનીકે સમિથે યઽઆભૃતસ્તમશ્યામ મધુમન્તં તઽઋર્મિમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે તે-આપના ધામન્-સૃષ્ટિ-જેમાં સમસ્ત પદાર્થોને આપ ધારણ કરો છો, અન્તઃ, સમુદ્રે-તે આકાશ સમાન સર્વના મધ્યમાં વ્યાપ્ત સ્વરૂપમાં વિશ્વમ્-સર્વ ભુવનમ્-સંસાર પ્રાણિયોના ઉત્પત્તિ સ્થાન અધિ, શ્રિતમ્-આશ્રિત બનીને વિદ્યમાન છે, તેને અમે અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે સભાપતિ ! તે-તારા અપામ્-પ્રાણોની અન્તઃ-મધ્યમાં, હૃદિ-હૃદયમાં તથા આયુષિ-જીવનના હેતુ અપામ્-પ્રાણધારીઓની અનીકે-સેનામાં તથા સમિથે-સંગ્રામમાં યઃ-જે સંભાર-સામગ્રી આભૃતઃ-સર્વત્ર વિદ્યમાન છે તમ્-તેને તથા મધુમન્તમ્-પ્રશંસાયુક્ત મધુર ગુણોથી સભર ઋર્મિમ્-બોધને-જ્ઞાનને અશ્યામ્-અમે પ્રાપ્ત કરીએ. (૯૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં પ્રયત્નપૂર્વક મિત્રોની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ.

સંપૂર્ણ સામગ્રીઓ-સાધન ઉપસાધન ધારણ કરીને યુક્ત આહાર-વિહાર દ્વારા શરીરના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને પોતાનો તથા અન્ય મનુષ્યોનો ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૯૯)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સૂર્ય, મેઘ, ગૃહાશ્રમ, ગણિત વિદ્યા તથા ઈશ્વર આદિ પદાર્થ વિદ્યાના વર્ણનથી આ અધ્યાયની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; એમ સમજવું જોઈએ.

॥ ઇતિ સપ્તદશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથાષ્ટાદશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

વાજ્શ્ચ મે પ્રસવ્શ્ચ મે પ્રયતિશ્ચ મે પ્રસિતિશ્ચ મે ધીતિશ્ચ મે ક્રતુશ્ચ
મે સ્વરશ્ચ મે શ્લોકશ્ચ મે શ્રવશ્ચ મે શ્રુતિશ્ચ મે જ્યોતિશ્ચ મે સ્વશ્ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : મે-મારું વાજઃ-અન્ન ચ-વિશેષ જ્ઞાનથી, મે-મારાં પ્રસવઃ-ઐશ્વર્ય ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારા પ્રયતિઃ-જે વ્યવહારથી ઉત્તમ પ્રયત્ન બને છે. ચ-અને તેના સાધન, મે-મારો પ્રસિતિઃ-પ્રબંધ ચ-અને રક્ષા, મે-મારી ધીતિઃ-ધારણા ચ-અને ધ્યાન, મે-મારી ક્રતુઃ-શ્રેષ્ઠબુદ્ધિ ચ-અને ઉત્સાહ, મે-મારી સ્વરઃ-સ્વતંત્રતા ચ-અને ઉત્તમ તેજ, મે-મારી શ્લોકઃ-પદ રચના કરનારી પ્રશંસિત શિક્ષિત વાણી ચ-અને વક્તૃતા, મે-મારી શ્રવઃ-સાંભળવી ચ-અને સાંભળાવવી, મે-મારી શ્રુતિઃ-જેનાથી સમસ્ત વિદ્યા સાંભળવામાં આવે છે તે વેદવિદ્યા ચ-અને તેને અનુકૂળ સ્મૃતિ અર્થાત્ ધર્મશાસ્ત્ર, મે-મારી જ્યોતિઃ-વિદ્યાનો પ્રકાશ થવો ચ-અને અન્યોના માટે વિદ્યાનો પ્રકાશ કરવો, મે-મારું સ્વઃ-સુખ ચ-અને અન્યોનું સુખ યજ્ઞેન-સેવન કરવા યોગ્ય-પૂજનીય પરમેશ્વર વા જગતના ઉપકારક વ્યવહાર દ્વારા કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૧)

ભાવાર્થ : ઓ મનુષ્યો ! તમોએ અન્ન આદિથી સર્વના સુખ માટે યજ્ઞની ઉપાસના કરવી જોઈએ અને જગતના ઉપકારક વ્યવહારની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ, જેથી સર્વ મનુષ્યો આદિની ઉન્નતિ થાય. (૧)

પ્રાણશ્ચ મેઽપાનશ્ચ મે વ્યાનશ્ચ મેઽસુશ્ચ મે ચિત્તં ચ મ્ ઽઆધીતં ચ મે
વાક્ ચ મે મનશ્ચ મે ચક્ષુશ્ચ મે શ્રોત્રં ચ મે દક્ષશ્ચ મે બલં ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : મે-મારા પ્રાણઃ-હૃદયમાં રહેલ જીવનમૂલ વાયુ ચ-અને કંઠદેશમાં રહેનાર વાયુ મે-મારો અપાનઃ-નાભિથી નીચે જનાર-અધોગામી ચ-અને સમાન નાભિમાં સ્થિત વાયુ, મે-મારો વ્યાનઃ-શરીરની સર્વ સંધિઓમાં વ્યાપ્ત વાયુ, ચ-અને ધનંજય જે શરીરના રક્ત આદિની વૃદ્ધિ કરે છે તે વાયુ, મે-મારો અસુઃ-નાગ આદિ પ્રાણનો ભેદ વાયુ ચ-તથા અન્ય વાયુ, મે-મારી ચિત્તમ્-સ્મૃતિ ચ-અને બુદ્ધિ, મે-મારું આધીતમ્-સારી રીતે મેળવેલ નિશ્ચિત જ્ઞાન ચ-અને રક્ષા કરેલો વિષય, મે-મારી વાક્-વાણી ચ-અને તેને સાંભળવી, મે-મારી મનઃ-સંકલ્પ-વિકલ્પ રૂપ અન્તઃકરણની વૃત્તિ ચ-અને અહંકાર વૃત્તિ, મે-મારા ચક્ષુઃ-જેનાથી હું દેખું છું તે નેત્રો ચ-અને પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ, મે-મારા શ્રોત્રમ્-જેના દ્વારા હું સાંભળું છું તે કાન ચ-અને આગમ-પ્રત્યેક વિષય પર વેદોનું પ્રમાણ, મે-મારી દક્ષઃ-ચતુરતા ચ-અને સામયિક પ્રતિભા-તત્કાળ ભાન થવું તથા મે-મારા બલમ્-બળ ચ-અને પરાક્રમ એ સર્વ યજ્ઞેન-ધર્મના અનુષ્ઠાનથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો સાધનો સહિત પોતાના પ્રાણ આદિને ધર્મનું આચરણ કરવામાં સંયુક્ત કરે. (૨)

ઓજશ્ચ મે સહશ્ચ મ ઽ આત્મા ચ મે તનૂશ્ચ મે શર્મ ચ મે વર્મ ચ મે ઽઙ્ગાનિ ચ મે ઽસ્થીનિ ચ મે પસ્તુષ્ઠિ ચ મે શરીરાણિ ચ મે ઽઆયુશ્ચ મે જરા ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : મે-મારા ઓજ:-શરીરમાં રહેલ તેજ ચ-અને મારી સેના, મે-મારા સહ:-શરીરનું બળ ચ-તથા મનનું બળ, મે-મારું આત્મા-સ્વરૂપ ચ-અને મારું સામર્થ્ય, મે-મારું તનૂ:-શરીર ચ-અને સંબંધીજનો, મે-મારું શર્મ-ઘર ચ-અને ઘરનાં પદાર્થો, મે-મારી વર્મ-રક્ષા જેનાથી થાય તે કવચ ચ-અને શસ્ત્ર-અસ્ત્ર, મે-મારા અઙ્ગાનિ-શિર આદિ અંગો ચ-અને આંગળીઓ આદિ પ્રત્યંગો, મે-મારા અસ્થીનિ-હાડકાં ચ-અને શરીરની અંદરના અંગ-પ્રત્યંગો અર્થાત્ હૃદય, માંસ, નાડીઓ આદિ, મે-મારા પસ્તુષ્ઠિ-મર્મસ્થાન ચ-અને જીવનનાં કારણ, મે-મારા શરીરાણિ-સંબંધીઓનાં શરીરો ચ-અને સૂક્ષ્મ અવયવો, મે-મારું આયુ:-જીવન ચ-અને જીવનનાં સાધનો અર્થાત્ જેના દ્વારા જીવું છું, મે-મારી જરા-વૃદ્ધાવસ્થા ચ-અને યુવાવસ્થા એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-સત્કારને યોગ્ય પરમેશ્વરથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ બળવાન સેના આદિને, ધાર્મિક જનોની રક્ષા અને દુષ્ટોની તાડના ઠંડ આપવામાં પ્રવૃત્ત કરવી જોઈએ. (૩)

જ્યૈષ્ઠ્યં ચ મ ઽ આધિપત્યં ચ મે મન્યુશ્ચ મે ભામશ્ચ મે ઽમશ્ચ મે ઽમ્ભશ્ચ મે જેમા ચ મે મહિમા ચ મે વરિમા ચ મે પ્રથિમા ચ મે વર્ષિમા ચ મે દ્રાધિમા ચ મે વૃદ્ધં ચ મે વૃદ્ધિશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : મે-મારી જ્યૈષ્ઠ્યમ્-પ્રશંસા ચ-અને ઉત્તમ પદાર્થ, મે-મારું સ્વામીપણું ચ-અને આધિપત્યમ્-અધિપતિ-સ્વકીય દ્રવ્ય, મે-મારું મન્યુ:-અભિમાન ચ-અને શાન્તિ, મે-મારો ભામ:-ક્રોધ ચ-અને સુશીલતા, મે-મારા અમ:-ન્યાયથી મેળવેલા ઘર આદિ પદાર્થો ચ-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો, મે-મારું અમ્ભ:-જળ ચ-અને દૂધ, દહીં, ઘી આદિ પદાર્થો, મે-મારી જેમા-જીત થવી ચ-અને વિજય, મે-મારો મહિમા-મહિમા ચ-અને પ્રતિષ્ઠા, મે-મારી વરિમા-શ્રેષ્ઠતા ચ-અને શ્રેષ્ઠ આચરણ મે-મારી પ્રથિમા-વિશાળતા ચ-અને વિસ્તૃત પદાર્થો, મે-મારું વર્ષિમા-ઘડપણ ચ-અને બાળપણ, મે-મારી દ્રાધિમા-દીર્ઘતા ચ-અને લૂસ્વતા, મે-મારા વૃદ્ધમ્-પ્રભુતાને પ્રાપ્ત અનેક પ્રકારનાં ધન આદિ પદાર્થો ચ-અને અલ્પધન આદિ પદાર્થો તથા મે-મારી વૃદ્ધિ:-વૃદ્ધિનું કારણ સત્ક્રિયા ચ-અને તેથી ઉત્પન્ન થયેલા સુખદાયક સમસ્ત પદાર્થો યજ્ઞેન-ધર્મની રક્ષા અર્થાત્ પાલન કરવાથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૪)

ભાવાર્થ : હે મિત્રજનો ! તમે યજ્ઞની સિદ્ધિ માટે અને સમસ્ત જગતનાં હિત માટે પ્રશંસિત-શ્રેષ્ઠ

પદાર્થોને સંયુક્ત કરો. (૪)

સત્યં ચ મે શ્રદ્ધા ચ મે જગત્ચ મે ધનં ચ મે વિશ્વં ચ મે મહશ્ચ મે ક્રીડા
ચ મે મોદશ્ચ મે જાતં ચ મે જનિષ્યમાણં ચ મે સૂક્તં ચ મે સુકૃતં ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : મે-મારો સત્યમ્-યથાર્થ વિષય ચ-અને સર્વનું ભલું કરવું, મે-મારી શ્રદ્ધા-અર્થાત્ જેથી સત્યને ધારણ કરીએ છીએ ચ-અને તે શ્રદ્ધાથી સિદ્ધિ આપનારા પદાર્થો, મે-મારા જગત્-ચેતન સંતાન આદિ વર્ગ ચ-અને તે જગતમાં રહેલાં સર્વ પદાર્થો, મે-મારું ધનમ્-સુવર્ણ આદિ ધન ચ-અને ધાન્ય અર્થાત્ અનાજ આદિ, મે-મારું વિશ્વમ્-સર્વસ્વ ચ-અને સર્વ પર ઉપકાર [સર્વ ઉપકરણો], મે-મારી મહઃ-મહત્વથી યુક્ત પ્રશંસા કરવા યોગ્ય પદાર્થો ચ-અને સત્કાર, મે-મારી ક્રીડા-વિહાર ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો મોદઃ-હર્ષ ચ-અને પરમ આનંદ, મે-મારા જાતમ્-જેટલા ઉત્પન્ન થયેલાં ચ-અને જેટલા ઉત્પન્ન થઈ રહ્યા છે, મે-મારા જનિષ્યમાણમ્-જેટલાં ઉત્પન્ન થનારા ચ-અને જેટલાં તે સંબંધી પદાર્થ સમૂહ, મે-મારા સૂક્તમ્-ઉત્તમ વચનો ચ-અને ઉત્તમ વિચારો, મે-મારા સુકૃતમ્-પુણ્યરૂપ ઉત્તમ રીતિથી કરેલા કર્મ ચ-અને તેના સાધનો એ ઉક્ત સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-સત્ય અને ધર્મની ઉન્નતિ કરનાર ઉપદેશથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યાનું અધ્યયન, અધ્યાપન, શ્રવણ અને ઉપદેશ કરે છે તથા કરાવે છે, તેઓ નિત્ય ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ઋતં ચ મેઽમૃતં ચ મેઽયક્ષ્મં ચ મેઽનામયચ્ચ મે જીવાતુશ્ચ મે દીર્ઘાયુત્વં
ચ મેઽનમિત્રં ચ મેઽભયં ચ મે સુખં ચ મે શયનં ચ મે સૂષાશ્ચ મે સુદિનં ચ
મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : મે-મારું ઋતમ્-યથાર્થ વિજ્ઞાન ચ-અને તેની સિદ્ધિ કરનાર પદાર્થ, મે-મારું અમૃતમ્-આત્મ સ્વરૂપ, [મુક્તિ સુખ] અને યજ્ઞથી બચેલું અન્ન ચ-અને પીવા યોગ્ય રસ, મે-મારું અયક્ષ્મમ્-યક્ષ્મા-ક્ષય આદિ રોગોથી રહિત શરીર આદિ ચ-અને રોગ વિનાશક કર્મ, મે-મારી અનામયત્-રોગ આદિ રહિત આયુ ચ-અને તેની સિદ્ધિ કરનારી ઔષધિઓ, મે-મારો જીવાતુઃ-જેનાથી જીવું છું અને જિવાતું છું, તે મારો વ્યવહાર ચ-અને પથ્ય ભોજન, મે-મારી દીર્ઘાયુત્વમ્-દીર્ઘ આયુ ચ-અને બ્રહ્મચર્ય તથા જિતેન્દ્રિયતા આદિ કર્મ, મે-મારા અનમિત્રમ્-અવિદ્યમાન શત્રુ અર્થાત્ મિત્ર ચ-અને પક્ષપાત રહિત કર્મ, મે-મારી અભયમ્-નિર્ભયતા, ચ-અને વીરતા, મે-મારો સુખમ્-અતિ ઉત્તમ આનંદ તથા પ્રસન્નતા ચ-અને તેને સિદ્ધ કરનાર કર્મ, મે-મારું શયનમ્-સૂવું ચ-અને તેની સિદ્ધિ કરનારા પદાર્થો, મે-મારો સૂષાઃ-સુમધુર પ્રાતઃકાલ-ઉષા ચ-અને તે સંબંધી કર્મ તથા મે-મારો સુદિનમ્-સુંદર દિવસ ચ-અને તેને ઉપયોગી

કર્મ એ સર્વ યજ્ઞેન-સત્ય ભાષણ આદિ વ્યવહારોથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાષણ આદિ કર્મ કરે છે, તેઓ સર્વદા સુખી રહે છે. (૬)

યન્તા ચ મે ધર્તા ચ મે ક્ષેમશ્ચ મે ધૃતિશ્ચ મે વિશ્વં ચ મે મહશ્ચ મે
સંવિચ્ચં મે જ્ઞાત્રં ચ મે સૂશ્ચં મે પ્રસૂશ્ચં મે સીરં ચ મે લયશ્ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : મે-મારો યન્તા-નિયમ કરનાર ચ-અને નિયમિત પદાર્થ, મે-મને ધર્તા-ધારણ કરનાર
ચ-અને ધારણ કરેલ પદાર્થ, મે-મારી ક્ષેમ:-રક્ષા ચ-અને રક્ષા કરનાર, મે-મારી ધૃતિ:-ધારણા ચ-
અને સહનશીલતા, મે-મારા સંબંધનું વિશ્વમ્-જગત ચ-અને તેને અનુકૂળ મર્યાદા, મે-મારા મહ:-મહાન
કર્મ ચ-અને મહાન વ્યવહાર, મે-મારી સંવિત્-પ્રતિજ્ઞા ચ-અને વિષયનું જ્ઞાન, મે-મારું જ્ઞાત્રમ્-જ્ઞાનનું
સાધન ચ-અને જાણવા યોગ્ય અર્થાત્ જ્ઞેય પદાર્થ, મે-મારી સૂ:-પ્રેરણા કરનારી ચિત્તની વૃત્તિ ચ-અને
પ્રેરણાથી ઉત્પન્ન કર્મ, મે-મારી પ્રસૂ:-જે ઉત્પત્તિ કરાવનારી વૃત્તિ ચ-અને ઉત્પત્તિનો વિષય, મે-મારા
સીરમ્-ખેતીના સાધક હળ આદિ ચ-અને ખેડૂત તથા મે-મારો લય:-લય અર્થાત્ જેમાંથી એકતા પ્રાપ્ત
થાય તે વિષય ચ-અને જે મારી એકતા સાધે તે વિદ્યાદિ ગુણ તે ઉક્ત સર્વ યજ્ઞેન-ઉત્તમ નિયમોનાં
આચરણ રૂપ યજ્ઞથી કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ થાય. (૭)

ભાવાર્થ : જે શમ, દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ નિયમોનું પાલન કરે છે, તે પોતાના
ઈચ્છિત કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૭)

શં ચ મે મયશ્ચ મે પ્રિયં ચ મેઽનુકામશ્ચ મે કામશ્ચ મે સૌમનસશ્ચ મે
ભગશ્ચ મે દ્રવિણં ચ મે ભદ્રં ચ મે શ્રેયશ્ચ મે વસીયશ્ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : મે-મારું શમ્-સર્વ સુખ ચ-અને સુખની સર્વ સામગ્રી, મે-મારો મય:-પ્રત્યક્ષ આનંદ ચ-
અને તેના સાધનો, મે-મારા પ્રિયમ્-પ્રીતિ કરનાર ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારી અનુકામ:-ધર્મને
અનુકૂળ કામના ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો કામ:-કામ અર્થાત્ જેનાથી વા જેમાં કામના કરાય
ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારું સૌમનસ:-ઉત્તમ મન ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો ભગ:-ઐશ્વર્યનો
સમૂહ ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારું દ્રવિણમ્-બળ ચ-અને તેના સાધનો, મે-મને ભદ્રમ્-અતિ આનંદ
આપનાર સુખ ચ-અને સુખનાં સાધનો, મે-મારું શ્રેય:-મુક્તિ સુખ ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારા
વસીય:-અત્યંત વસનારા ચ-અને તેની સામગ્રી મે-મારી યજ્ઞ:-કીર્તિ ચ-અને તેના સાધનો યજ્ઞેન-સુખની
સિદ્ધિ કરાવનાર ઈશ્વર દ્વારા કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે કર્મથી સુખની વૃદ્ધિ થાય, તે કર્મનું નિરંતર સેવન કરવું જોઈએ. (૮)

ઊર્ક ચ મે સૂનૃતા ચ મે પર્યશ્ચ મે રસશ્ચ મે ઘૃતં ચ મે મધુ ચ મે સઘ્નિશ્ચ

**મે સર્પીતિશ્ચ મે કૃષિશ્ચ મે વૃષ્ટિશ્ચ મે જૈત્રં ચ મઽઔદ્ભિદ્ધં ચ મે યજ્ઞેન
કલ્પન્તામ્ ॥ ૯ ॥**

પદાર્થ : મે-મારું ઝર્ક-ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કાર કરેલ અથવા બનાવેલ અન્ન-ભોજન ચ-અને સુગંધી આદિ પદાર્થોથી યુક્ત વ્યંજન-મસાલાવાળા પદાર્થો, મે-મારી સૂનૃતા-પ્રિયવાણી ચ-અને સત્યવચન, મે-મારું પયઃ-દૂધ ચ-અને ઉત્તમ રીતે પકાવેલ ઔષધિ, મે-મારા રસઃ-સર્વ પદાર્થોનો સાર ચ-અને મહા ઔષધિઓથી તૈયાર કરેલો રસ, મે-મારું ઘૃતમ્-ઘી ચ-અને તેના સંસ્કારોથી તૈયાર કરેલા પકવાન, મે-મારાં મધુ-મધ ચ-અને ખાંડ, ગોળ આદિ મે-મારું સઘ્નિઃ-સમાન ભોજન ચ-અને ઉત્તમ ભોગ સાધન, મે-મારું સર્પીતિઃ-સમાન પાન ચ-અને ચૂસવા યોગ્ય પદાર્થ, મે-મારી કૃષિઃ-ભૂમિની ખેતી ચ-અને ઘઉં આદિ અન્ન, મે-મારી વૃષ્ટિઃ-વરસાદ ચ-અને હવન આહુતિઓથી વાયુ આદિની શુદ્ધિ કરવી, મે-મારો જૈત્રમ્-જીતવાનો સ્વભાવ ચ-અને સુશિક્ષિત સેના આદિ તથા મે-મારા ઔદ્ભિદ્ધમ્-પૃથિવીને ફાડીને નીકળનારા વૃક્ષ અને વનસ્પતિનુ ઉત્પન્ન થવું ચ-અને ફૂલ, ફળ આદિ એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-સમસ્ત રસ અને પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરનાર કર્મથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થોનો સંગ્રહ કરીને, તેને યથા સમય હવન આદિ ઉત્તમ વ્યવહારોમાં પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૯)

**રયિશ્ચ મે રાયશ્ચ મે પુષ્ટં ચ મે પુષ્ટિશ્ચ મે વિભુ ચ મે પ્રભુ ચ મે પૂર્ણ ચ મે
પૂર્ણતરં ચ મે કુર્યવં ચ મેઽક્ષિતં ચ મેઽન્નં ચ મેઽક્ષુચ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૦ ॥**

પદાર્થ : મે-મારી રયિઃ-વિદ્યાની કાંતિ ચ-અને પુરુષાર્થ, મે-મારા રાયઃ-પ્રશંસિત ધન ચ-અને પકવાન આદિ, મે-મારા પુષ્ટમ્-પુષ્ટ પદાર્થ ચ-અને આરોગ્ય, મે-મારી પુષ્ટિઃ ચ-અને પથ્ય ભોજન, મે-મારું વિભુ-સર્વ વિષયોમાં વ્યાપ્ત મન આદિ ચ-અને પરમાત્માનું ધ્યાન, મે-મારો પ્રભુ-સમર્થ વ્યવહાર ચ-અને સર્વ સામર્થ્ય, મે-મારું પૂર્ણમ્-કાર્યનું પૂર્ણ કરવું ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારા પૂર્ણતરમ્-આભૂષણ, ગાય, ભેંસ, ઘોડા, બકરી તથા અન્નાદિ પદાર્થો ચ-અને સર્વનો ઉપકાર કરવો, મે-મારા કુર્યવમ્-નિંદિત જવથી પૃથક્ અન્ન ચ-અને ધાન્ય ચોખા આદિ અન્ન, મે-મારાં અક્ષિતમ્-અક્ષય પદાર્થ ચ-અને તૃપ્તિ, મે-મારું અન્નમ્-ભોજન યોગ્ય અન્ન ચ-અને વ્યંજન-મસાલા આદિ તથા મે-મારી અક્ષુત્-ક્ષુધાની તૃપ્તિ ચ-અને તરસની તૃપ્તિ એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-પ્રશંસિત ધન આદિના આપનાર ઈશ્વરથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમ પુરુષાર્થ દ્વારા, ઈશ્વરની ભક્તિ તથા પ્રાર્થના દ્વારા વિદ્યા આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને સર્વનો ઉપકાર સિદ્ધ કરવો જોઈએ. (૧૦)

**વિત્તં ચ મે વેદ્યં ચ મે ભૂતં ચ મે ભવિષ્યચ્ચ મે સુગં ચ મે સુપથ્યં ચ
મઽઋદ્ધંઽચ મેઽઋદ્ધિશ્ચ મે ક્લૃત્તં ચ મે ક્લૃપ્તિશ્ચ મે મતિશ્ચ મે સુમતિશ્ચ**

મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : મે-મારો વિક્તમ્-વિચાર કરેલો વિષય ચ-અને વિચાર, મે-મારો વેદ્યમ્-વિચારવા યોગ્ય વિષય ચ-અને વિચાર કરનાર, મે-મારો ભૂતમ્-વ્યતીત થયેલો વિષય ચ-અને વર્તમાન, મે-મારો ભવિષ્યત્-થનાર ચ-અને સર્વ સમયનો ઉત્તમ વ્યવહાર, મે-મારો સુગમ્-સુગમ માર્ગ ચ-અને ઉચિત્ કર્મ, મે-મારો સુપથ્યમ્-સુગમ યુક્ત આહાર અને વિહાર ચ-અને સર્વ કાર્યોમાં પ્રથમ કારણ, મે-મારો ઋદ્ધમ્-સમૃદ્ધ પદાર્થ ચ-અને સિદ્ધિઓ, મે-મારી ઋદ્ધિઃ-યોગથી પ્રાપ્ત સમૃદ્ધિ ચ-અને તુષ્ટિ અર્થાત્ સંતોષ, મે-મારા ક્લૃપ્તમ્-સામર્થ્યને પ્રાપ્ત થયેલ કામ ચ-અને કલ્પના, મે-મારી ક્લૃપ્તિઃ-સામર્થ્યની કલ્પના ચ-અને તર્ક, મે-મારા મત્તિઃ-વિચારો અર્થાત્ મનન ચ-અને પદાર્થોનું વિવેચન કરવું, મે-મારી સુમત્તિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ ચ-અને ઉત્તમ નિષ્ઠા એ સર્વ યજ્ઞેન-શમ, દમ આદિ નિયમોથી યુક્ત યોગાભ્યાસ દ્વારા કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે શમ, દમ આદિથી યુક્ત અને સંયમને પ્રાપ્ત કરીને યોગાભ્યાસ કરે છે, તે ઋદ્ધિ અને સિદ્ધિથી યુક્ત બનેલ છે, તેઓ અન્યોને પણ શિદ્ધિ અને સિદ્ધિ રૂપ સમૃદ્ધિ યુક્ત કરી શકે છે. (૧૧)

ત્રીહયશ્ચ મે યવાશ્ચ મે માષાશ્ચ મે તિલાશ્ચ મે મુદ્ગાશ્ચ મે ખલ્વાશ્ચ મે પ્રિયઙ્ગુવશ્ચ મે ડણવશ્ચ મે શ્યામાકાશ્ચ મે નીવારાશ્ચ મે ગોધૂમાશ્ચ મે મસૂરાશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : મે-મારા ત્રીહયઃ-ચોખા ચ-સાઠીનું ધાન્ય મે-મારા યવાઃ-જવ ચ-અને તુવેર મે-મારા માષાઃ-અડદ ચ-અને વટાણાં, મે-મારા તિલાઃ-તલ ચ-અને નારિયેળ, મે-મારા મુદ્ગાઃ-મગ ચ-અને તેને સંસ્કાર-બનાવવા, મે-મારા ખલ્વાઃ-ચણા ચ-અને તેને બનાવવા મે-મારા પ્રિયઙ્ગુ-ડાંગર ચ-અને તેને બનાવવા, મે-મારા અણવઃ-ઝીણા ચોખા ચ-અને તેનો પાક, મે-મારો શ્યામાકાઃ-સામો ચ-અને તેનો સંસ્કાર-બનાવવા, મે-મારા નીવારાઃ-વાવ્યા અને ખેડ્યા વિના ઊગેલા ચોખા ચ-અને તેના સંસ્કાર, મે-મારા ગોધૂમાઃ-ઘઉં ચ-અને તેના સંસ્કાર, મે-મારા મસૂરાઃ-મસૂર ચ-અને તેના સંબંધી અન્ય અન્ન એ સર્વ યજ્ઞેન-સર્વ અન્ન પ્રદાતા પરમાત્માથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ચોખા આદિથી સુસંકૃત ભાત આદિ તૈયાર કરીને તેનો અગ્નિમાં હોમ કરવો જોઈએ, સ્વયં ખાવા જોઈએ તથા અન્યોને ખવડાવવા જોઈએ. (૧૨)

અશ્મા ચ મે મૃત્તિકા ચ મે ગિર્યશ્ચ મે પર્વીતાશ્ચ મે સિકૃતાશ્ચ મે વનસ્પર્તયશ્ચ મે હિરણ્યં ચ મે ડર્યશ્ચ મે શ્યામં ચ મે લોહઞ્ચ મે સીસં ચ મે ત્રપુ ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : મે-મારા અશ્મા-પથ્થર ચ-અને હીરા આદિ રત્નો, મે-મારી મૃત્તિકા-સારી માટી ચ-

અને સાધારણ માટી, મે-મારા ગિર્યઃ-મેઘ, વાદળાં ચ-અને અન્ન આદિ, મે-મારા પર્વતાઃ-નાના-મોટાં પર્વતો ચ-અને પર્વતોમાં થનારા પદાર્થો [અથવા સર્વ ધન], મે-મારી સિક્તાઃ-મોટી રેતી ચ-અને ઝીણી રેતી, મે-મારા વનસ્પતયઃ-વડ આદિ વૃક્ષ ચ-અને આંબા આદિ વૃક્ષ, મે-મારું હિરણ્યમ્-સર્વ પ્રકારનું ધન ચ-અને ચાંદી આદિ, મે-મારું અયઃ-લોખંડ ચ-અને શસ્ત્ર, મે-મારા શ્યામમ્-નીલમણિ ચ-અને શુક્તિ [અને ચંદ્રકાન્તમણિ] મે-મારું લોહમ્-સોનું ચ-અને કાંતિસાર આદિ, મે-મારું સીસમ્-સીસું ચ-અને લાખ, મે-મારું ત્રપુ-જસત ચ-અને પીત્તળ આદિ એ સર્વ યજ્ઞેન-સંગતિ કરવા યોગ્ય યજ્ઞથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પૃથિવી પર રહેલાં પદાર્થોની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેનાથી રત્નો અને ધાતુઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેનો સર્વના હિત માટે ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૧૩)

અગ્નિશ્ચ મ્આપશ્ચ મે વીરુધશ્ચ મ્ઓષધયશ્ચ મે કૃષ્ટપ્ચ્યાશ્ચ મેડકૃષ્ટપ્ચ્યાશ્ચ મે ગ્રામ્યાશ્ચ મે પ્શવ્ડઆરણ્યાશ્ચ મે વિક્ત્ત્વ્ મે વિક્તિશ્ચ મે ભૂત્ત્વ્ મે ભૂતિશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : મે-મારો અગ્નિઃ-અગ્નિ ચ-અને વીજળી આદિ, મે-મારું આપઃ-જળ ચ-અને જળમાં થનાર રત્ન મોતી આદિ, મે-મારી વીસ્થઃ-લતા, ગુલ્મ-ઝાડી આદિ, ચ-અને તૃણ-શાક આદિ, મે-મારી ઓષધયઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિ ચ-અને ફલ, પુષ્પ આદિ મે-મારું કૃષ્ટપ્ચ્યાઃ-ખેતરમાં પાકતું અન્ન ચ-અને ઉત્તમ અન્ન, મે-મારું અકૃષ્ટપ્ચ્યાઃ-જંગલમાં પાકેલ અન્ન ચ-અને પર્વત આદિમાં પાકેલ અન્ન, મે-મારા ગ્રામ્યાઃ-ગામમાં વિદ્યમાન ગાય આદિ ચ-અને નગરમાં વિદ્યમાન તથા મે-મારા આરણ્યાઃ-વનમાં વિદ્યમાન હરણ આદિ ચ-અને સિંહ આદિ પશવઃ-પશુઓ, મે-મારું વિક્તમ્-પ્રાપ્ત પદાર્થો ચ-અને સર્વ ધન, મે-મારી વિક્તિઃ-પ્રાપ્તિ ચ-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો, મે-મારું ભૂતમ્-રૂપ ચ-અને અનેક પ્રકારના પદાર્થો તથા મે-મારા ભૂતિઃ-ઐશ્વર્ય ચ-અને તેના સાધનો એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-સંગતિને યોગ્ય યજ્ઞથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. [સિદ્ધ થાય]. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ-પાક આદિ વિદ્યાની સંગતિ કરીને શિલ્પયજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૪)

વસુ ચ મે વસતિશ્ચ મે કર્મ ચ મે શક્તિશ્ચ મેડર્થશ્ચ મ્આમ્શ્ચ મ્આટ્વા ચ મે ગતિશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : મે-મારી વસુ-વસ્તુ ચ-અને પ્રિય વસ્તુ વા પ્રિય કામ, મે-મારી વસતિઃ-પાડોશની વસ્તી ચ-અને સેવકો, મે-મારું કર્મ-ઈચ્છિત કામ ચ-અને કર્તા, મે-મારું શક્તિઃ-સામર્થ્ય ચ-અને પ્રેમ, મે-

મારો અર્થ:-સકલ પદાર્થોનો સંચય ચ-અને સંચયકર્તા, મે-મારો એમ:-સુપ્રયત્ન ચ-અને બુદ્ધિ, મે-મારી ઇત્યા-સર્વ વ્યવહારો જાણવાની રીતિ, ચ-અને યુક્તિ તથા મે-મારી ગતિ:-ગતિ ચ-ઉછળવા આદિ ક્રિયા એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-પુરુષાર્થના અનુષ્ઠાનથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો પોતાના સામર્થ્ય આદિ સર્વ કાંઈ અન્ય સર્વના હિત માટે પ્રયુક્ત કરે છે. તે પ્રશંસાને પામે છે. (૧૫)

અગ્નિશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે સોમશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે સવિતા ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે સરસ્વતી ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે પૂષા ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે બૃહસ્પતિશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : મે-મારો અગ્નિ:-પ્રસિદ્ધ સૂર્યરૂપ અગ્નિ ચ-અને પૃથિવી પરનો ભૌતિક અગ્નિ, મે-મારો ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ ચ-અને વાયુ, મે-મારા સોમ:-શાન્ત કે સૌમ્ય ગુણયુક્ત મનુષ્ય વા પદાર્થ ચ-અને વર્ષા, મેઘજળ. મે-મારા ઇન્દ્ર:-અન્યાયને દૂર કરનાર સભાપતિ ચ-અને સભાસદ, મે-મારું સવિતા-ઐશ્વર્યયુક્ત કામ ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો ઇન્દ્ર:-સમસ્ત અવિદ્યાનો નાશ કરનાર અધ્યાપક ચ-અને વિદ્યાર્થી, મે-મારી સરસ્વતી-પ્રશસ્ત બોધ-જ્ઞાન વા શિક્ષાયુક્ત વાણી ચ-અને સત્ય વક્તા, મે-મારો ઇન્દ્ર:-વિદ્યાર્થીની જડતાનો વિનાશ કરનાર ઉપદેશક ચ-અને શ્રોતાઓ, મે-મારી પૂષા-પુષ્ટિ કરનાર ચ-અને યોગ્ય આહાર-ભોજન, વિહાર-નિદ્રા આદિ, મે-મારો ઇન્દ્ર:-જે પુષ્ટિકારક વિદ્યામાં રમણ કરનાર પુરુષ ચ-અને વૈદ્ય, મે-મારો બૃહસ્પતિ:-મોટા વ્યવહારોનો રક્ષક પુરુષ ચ-અને રાજા તથા મે-મારો ઇન્દ્ર:-સમસ્ત ઐશ્વર્યનો વર્ધક પુરુષ ચ-અને સેનાપતિ એ સર્વ યજ્ઞેન-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરવાથી કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ/સમર્થ બને. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો-તમોએ ઉત્તમ વિચારપૂર્વક પોતાના સમસ્ત પદાર્થો શ્રેષ્ઠોના પાલનમાં અને દુષ્ટોના શિક્ષણમાં નિરંતર પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૧૬)

મિત્રશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ ચ મે વરુણશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે ધાતા ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે ત્વષ્ટા ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે મરુતશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે વિશ્વે ચ મે દેવાઃ મ્હન્દ્રશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : મે-મારા મિત્ર:-પ્રાણ અર્થાત્ હૃદયમાં રહેનાર વાયુ ચ-અને નાભિસ્થ સમાન વાયુ, મે-મારો ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ ચ-અને તેજ, મે-મારો વરુણ:-ઉદાન અર્થાત્ કંઠસ્થ વાયુ ચ-અને સર્વ શરીરમાં ગતિ કરનાર વ્યાનવાયુ, મે-મારો ઇન્દ્ર:-સૂર્ય ચ-અને ધારણ-આકર્ષણ, મે-મારો ધાતા-ધારણ કરનાર ચ-અને ધૈર્ય, મે-મારો ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર ચ-અને ન્યાયયુક્ત પુરુષાર્થ, મે-મારો ત્વષ્ટા-પદાર્થોને ઇન્ન-ભિન્ન કરનાર અગ્નિ ચ-અને શિલ્પ અર્થાત્ કારીગરી, મે-મારો ઇન્દ્ર:-

શત્રુઓને વિદીર્ષા કરનાર રાજા **ચ**-અને કારીગરી, **મે**-મારો **મસ્ત**:-બ્રહ્માંડમાં રહેલ વાયુ **ચ**-અને શરીરની ધાતુઓ, **મે**-મારી **ઇન્દ્ર**:-સર્વત્ર વ્યાપક વિદ્યુત્ **ચ**-અને તેનો પ્રયોગ, **મે**-મારા **વિશ્વે**-સમસ્ત પદાર્થો **ચ**-અને સર્વસ્વ, **દેવા**:-ઉત્તમ ગુણયુક્ત પૃથિવી આદિ **મે**-મારા માટે **ઇન્દ્ર**:-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા **ચ**-અને તેનો ઉપયોગ એ સર્વ **યજ્ઞેન**-વાયુની વિદ્યાના વિધાનથી **કલ્પન્તામ્**-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણવિદ્યા અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને અને તે બન્નેની સર્વત્ર વ્યાપકતા સમજીને દીર્ઘ જીવનનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. (૧૭)

પૃથિવી ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મેન્તરિક્ષં ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે દ્યૌશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે સમાશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે નક્ષત્રાણિ ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે દિશશ્ચ મ્હન્દ્રશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : **મે**-મારી **પૃથિવી**-વિસ્તારયુક્ત ભૂમિ **ચ**-અને તેમાં સ્થિત પદાર્થો, **મે**-મારી **ઇન્દ્ર**:-વિદ્યુત્ રૂપ ક્રિયા **ચ**-અને બળદાયક વ્યાયામ આદિ ક્રિયા, **મે**-મારું **અન્તરિક્ષમ્**-વિનાશરહિત આકાશ **ચ**-અને તેમાં સ્થિત પદાર્થો, **મે**-મારા **ઇન્દ્ર**:-સમસ્ત ઐશ્વર્યનો આધાર **ચ**-અને તેનો પ્રયોગ, **મે**-મારી **દ્યૌઃ**-પ્રકાશમાં કામ કરનારી વિદ્યા **ચ**-અને તેના સાધક પદાર્થો, **મે**-મારા **ઇન્દ્ર**:-સર્વ પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્ય આદિ **ચ**-અને છેદક પદાર્થો, **મે**-મારા **સમા**:-વર્ષ **ચ**-અને ક્ષણ, પલ, વિપલ, ઘટી, મુહૂર્ત, દિવસ વગેરે, **મે**-મારા **ઇન્દ્ર**:-કાલ-સમય જ્ઞાનનો નિમિત્ત સૂર્ય **ચ**-અને ગણિત વિદ્યા, **મે**-મારા **નક્ષત્રાણિ**-નક્ષત્રો અર્થાત્ જે કારણ રૂપે સ્થિર રહે છે, પરન્તુ નાશ પામતાં નથી તે લોક **ચ**-અને તેની સાથે સંબંધ રાખનારા પ્રાણી આદિ, **મે**-મારી **ઇન્દ્ર**:-લોક-લોકાન્તરોમાં સ્થિત વિદ્યુત્ **ચ**-અને વિદ્યુતના સંયોગથી તેમાં રહેનારા પદાર્થો, **મે**-મારી **દિશઃ**-પૂર્વ આદિ દિશાઓ **ચ**-અને તેમાં રહેલી વસ્તુઓ તથા **મે**-મારી **ઇન્દ્ર**:-દિશાઓનું જ્ઞાન કરાવનાર **ચ**-અને ધ્રુવનો તારો એ સર્વ પદાર્થ **યજ્ઞેન**-પૃથિવી અને કાલ વિશેષ જ્ઞાન આપનાર કામથી **કલ્પન્તામ્**-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યાં સુધી પૃથિવી આદિ પદાર્થો અને તેમાં રહેલા વિદ્યુતને જાણતા નથી, ત્યાં સુધી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૮)

અન્શુશ્ચ મે રશ્મિશ્ચ મેડાભ્યશ્ચ મેડધિપતિશ્ચ મ્હપાન્શુશ્ચ મેન્તર્યામશ્ચ મ્હન્દ્રવાયવશ્ચ મે મૈત્રાવરુણશ્ચ મ્હઆશ્વિનશ્ચ મે પ્રતિપ્રસ્થાનશ્ચ મે શુક્રશ્ચ મે મન્થી ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : **મે**-મારો **અન્શુઃ**-વ્યાપક સૂર્ય **ચ**-અને તેનો પ્રતાપ, **મે**-મારો **રશ્મિઃ**-ભોજનનો વ્યવહાર-સાધન **ચ**-અને વિવિધ ભોજન, **મે**-મારો **અદાભ્યઃ**-વિનાશ રહિત **ચ**-અને રક્ષક, **મે**-મારા **અધિપતિઃ**-સ્વામી **ચ**-અને તેનું સ્થાન, **મે**-મારા **અપાન્શુઃ**-મનનો જપ **ચ**-અને એકાન્તનો વિચાર, **મે**-મારો **અન્તર્યામઃ**-મધ્યમાં ગતિ કરનાર વાયુ **ચ**-અને બળ, **મે**-મારા **એન્દ્રવાયવઃ**-વિદ્યુત્ અને વાયુ સંબંધી અગ્નિ **ચ**-

અને જળ, મે-મારા મૈત્રાવસ્થા:-પ્રાણ અને ઉદાન સાથે ચાલનાર વાયુ ચ-અને વ્યાનવાયુ, મે-મારું આશ્વિન:-સૂર્ય અને ચંદ્રમા વચ્ચે રહેનાર તેજ ચ-અને પ્રભાવ, મે-મારો પ્રતિપ્રસ્થાન:-પ્રસ્થાન = ગમન પ્રતિ વિદ્યમાન અર્થાત્ ગતિશીલ વાયુ ચ-અને ભ્રમણ, મે-મારું શુક્ર:-શુદ્ધ સ્વરૂપ ચ-અને વીર્યજનક-બળકારી પદાર્થો, મે-મારા મન્થી-મંથનશીલ સ્વભાવવાળા ચ-અને દૂધ વા કાષ આદિ એ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-અગ્નિના ઉપયોગથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સૂર્ય-પ્રકાશ આદિથી પણ ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ વિદ્વાન બનીને ક્રિયા-કૌશલને કેમ પ્રાપ્ત ન કરી શકે ? (૧૯)

આગ્રયણશ્ચ મે વૈશ્વદેવશ્ચ મે ધ્રુવશ્ચ મે વૈશ્વાનરશ્ચ મડાએન્દ્રાગ્નશ્ચ મે મહાવૈશ્વદેવશ્ચ મે મરુત્વતીયાશ્ચ મે નિષ્કેવલ્યાશ્ચ મે સાવિત્રશ્ચ મે સારસ્વતશ્ચ મે પાલીવતશ્ચ મે હારિયોજનશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : મે-મારો આગ્રયણ:-માગસર આદિ મહિનામાં નિષ્પન્ન યજ્ઞ વિશેષ ચ-અને તેની સામગ્રી, મે-મારો વૈશ્વદેવ:-સમસ્ત વિદ્વાનોથી સંબંધ કરનાર વિચાર ચ-અને તેનું ફળ, મે-મારો ધ્રુવ:-નિશ્ચલ વ્યવહાર ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો વૈશ્વાનર:-સર્વ મનુષ્યનો સત્કાર ચ-અને સત્કાર કરનાર, મે-મારા એન્દ્રાગ્ન:-વાયુ અને વિદ્યુત્થી સિદ્ધ કામ ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો મહાવૈશ્વદેવ:-સમસ્ત મહાન વિદ્વાનોનો વ્યવહાર ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારો મરુત્વતીયા:-વાયુ સંબંધી વ્યવહાર ચ-અને તેનું ફળ, મે-મારા નિષ્કેવલ્યા:-નિરંતર કેવલ સુખ થાય તેવા કાર્ય ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારા સાવિત્ર:-સૂર્યનો એ પ્રભાવ ચ-અને તેનો ઉપકાર, મે-મારો સારસ્વત:-વાણી સંબંધી વ્યવહાર ચ-અને તેનું ફળ મે-મારા પાલીવત:-પ્રશંસિત યજ્ઞ સંગિની પત્ની વાળાનો વ્યવહાર ચ-અને તેના સાધનો, મે-મારા હારિયોજન:-ધોડાઓને રથ આદિમાં જોડનારનો અનુક્રમ ચ-અને તેની સામગ્રી યજ્ઞેન-પદાર્થોની સંગતિ કરવાથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સમયોપયોગી ક્રિયાનો તથા વિદ્વાનોની સંગતિનો આશ્રય કરીને વિવાહિત સ્ત્રીના વ્રત-પત્નીવ્રતવાળા હોય, તેઓ પદાર્થ વિદ્યાને કેમ ન જાણી શકે ? (૨૦)

સ્તુચશ્ચ મે ચમસાશ્ચ મે વાયવ્યાનિ ચ મે દ્રોણકલ્પશ્ચ મે ગ્રાવાણશ્ચ મેઽધિષ્ઠવણે ચ મે પૂત્ત્વશ્ચ મેઽઆધવનીયશ્ચ મે વેદિશ્ચ મે બર્હિશ્ચ મેઽવભૃથશ્ચ મે સ્વગાકારશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : મે-મારા સ્તુચ:-સુવા આદિ ચ-અને તેની શુદ્ધિ, મે-મારું ચમસા:-યજ્ઞ વા પાક બનાવવાનું પાત્ર ચ-અને તેના પદાર્થો, મે-મારા વાયવ્યાનિ-વાયુઓમાં સુખદ ચ-અને વાયુઓની શુદ્ધિ કરનાર પદાર્થ, મે-મારો દ્રોણકલ્પશ્ચ:-યજ્ઞની ક્રિયાનો કળશ ચ-અને પરિમાણ વિશેષ, મે-મારા ગ્રાવાણ:-

શિલાફલક = પથ્થર આદિ ચ-અને ખાંડણિયો તથા સાંબેલું, મે-મારી અધિષ્ઠવણે-સોમવલ્લી આદિ ઔષધિઓનાં સાધક પદાર્થો ચ-અને કુંટવું, પીસવું, મે-મારી પૂતભૂત-પૂત = શુદ્ધને ધારણ કરનાર શુદ્ધિ-કર સૂપ-આદિ ચ-અને સાવરણી આદિ, મે-મારા આધવનીય:-સારી રીતે ધોવાના પાત્રો ચ-અને નલિકા આદિ યંત્ર અર્થાત્ તારાગણ જોવાનું યંત્ર, મે-મારી વેદિ:-હોમ કરવાની વેદી ચ-અને ચતુષ્કાદિ-ચાર સ્તંભ યુક્ત યજ્ઞશાલા, મે-મારી બર્હિ:-સમીપમાં વૃદ્ધિ કરનાર વા કુશ સમૂહ ચ-અને યજ્ઞ સમયનાં યોગ્ય પદાર્થો, મે-મારી અવભૃથ:-યજ્ઞ સમાપ્તિ સમયનું સ્નાન ચ-અને ચંદનાદિનું અનુલેપન કરવું તથા મે-મારા સ્વગાકાર:-જેથી મારા પદાર્થો પ્રાપ્ત થાય છે, તે કર્મને જે કરે તે ચ-અને પદાર્થોની પવિત્રતા એ સર્વ યજ્ઞેન-હોમ કરવાની ક્રિયાથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૨૧)

ભાવાર્થ : તે મનુષ્યો જ યજ્ઞ કરવાને સમર્થ બને છે, જે સાધન-ઉપસાધન સામગ્રીથી અલંકૃત હોય. (૨૧)

અગ્નિશ્ચ મે ધર્મશ્ચ મેઽર્કશ્ચ મે સૂર્યશ્ચ મે પ્રાણશ્ચ મેઽશ્વમેધશ્ચ મે પૃથિવી ચ મેઽદિતિશ્ચ મે દિતિશ્ચ મે દ્યૌશ્ચ મેઽઙ્ગુલયઃ શક્વરયો દિશશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : મે-મારો અગ્નિ:-અગ્નિ ચ-અને તેના પ્રયોગ, મે-મારો ધર્મ:-તાપ ચ-અને શાન્તિ, મે-મારી અર્ક:-સત્કાર કરવા યોગ્ય વિશેષ સામગ્રી ચ-અને તેને શુદ્ધ કરવાનો વ્યવહાર, મે-મારો સૂર્ય:-સૂર્ય ચ-અને જીવિકાનો હેતુ, મે-મારા પ્રાણ:-જીવનનો હેતુ વાયુ ચ-અને બહારનો વાયુ, મે-મારો અશ્વમેધ:-રાજ્યદેશ ચ-અને રાજનીતિ, મે-મારી પૃથિવી-ભૂમિ ચ-અને તેમાં રહેલા સર્વ પદાર્થો, મે-મારી અદિતિ:-અખંડ નીતિ ચ-અને જિતેન્દ્રિયતા, મે-મારી દિતિ:-ખંડિત સામગ્રી ચ-અને અનિત્ય જીવન વા શરીર આદિ, મે-મારો દ્યૌઃ-ધર્મનો પ્રકાશ ચ-અને દિવસ-રાત, મે-મારી અઙ્ગુલયઃ-આંગળીઓ, શક્વરયઃ-શક્તિઓ, દિશઃ-દિશાઓ ચ-અને ઉપદિશાઓ એ સર્વ યજ્ઞેન-સંગતિ કરવા યોગ્ય પરમાત્માથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો પ્રાણીઓના સુખ માટે યજ્ઞ કરે છે, તેઓ મહાશય છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૨)

વ્રતં ચ મઽઋતવશ્ચ મે તપશ્ચ મે સંવત્સરશ્ચ મેઽહોરાત્રેઽઠ્ઠીવે બૃહદ્રથન્તરે ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : મે-મારું વ્રતમ્-સત્યાચરણ અને નિયમ પાલન ચ-સત્ય ભાષણ અને સત્ય ઉપદેશ, મે-મારી ઋત્વઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ ચ-અને ઉત્તરાયન/દક્ષિણાયન, મે-મારો તપઃ-પ્રાણાયામ તથા ધર્મનું આચરણ ચ-અને શીત, ઉષ્ણ આદિ દ્વન્દ્વોનું સહન, મે-મારું સંવત્સરઃ-વર્ષ ચ-અને કલ્પ, મહાકલ્પ આદિ, મે-મારા અહોરાત્રે-દિવસ અને રાત, ઠ્ઠીવે-જંઘા અને ગળું, બૃહદ્રથન્તરે-મહાન પદાર્થ અને અત્યંત સુંદર રથ ચ-અને ઘોડા તથા બળદો આદિ યજ્ઞેન-ધર્મજ્ઞાન આદિના આચરણ તથા કાલચક્રના ભ્રમણના અનુષ્ઠાનથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો નિયત સમય પર કાર્ય અને નિરંતર ધર્માચરણ કરે છે, તે લોકો અભીષ્ટ સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૩)

एकां च मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे सप्त च मे
सप्त च मे नव च मे नव च म्एकादश च म्एकादश च मे त्रयोदश च
मे त्रयोदश च मे पञ्चदश च मे पञ्चदश च मे सप्तदश च मे सप्तदश च
मे नवदश च मे नवदश च म् एकविंशतिश्च म् एकविंशतिश्च मे
त्रयोविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च
मे सप्तविंशतिश्च सप्तविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च
म् एकत्रिंशच्च म् एकत्रिंशच्च मे त्रयस्त्रिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ २४ ॥

પદાર્થ : યજ્ઞેન-સંગતિકરણ અર્થાત્ યોગ કરવાથી મે-મારી એકા-એક સંખ્યા ચ-અને બે, મે-મારી તિસ્ર:-ત્રણ સંખ્યા ચ-અને બે મે-મારી પચ્ચ-પાંચ ચ-અને મે-મારી પચ્ચ-પાંચ ચ-અને બે મે-મારી સપ્ત-સાત, ચ-અને મે-મારી સપ્ત-સાત ચ-અને બે મે-મારી નવ, ચ-અને મે-મારી નવ ચ-અને બે મે-મારી એકાદશ-અગિયાર, ચ-અને મે-મારી એકાદશ-અગિયાર ચ-અને બે મે-મારી ત્રયોદશ-તેર, ચ-અને મે-મારી ત્રયોદશ-તેર ચ-અને બે મે-મારી પંદર, ચ-અને મે-મારી પંદર ચ-અને બે મે-મારી સપ્તદશ-સત્તર, ચ-અને મે-મારી સપ્તદશ-સત્તર ચ-અને બે નવદશ-ઓગણીશ, ચ-અને મે-મારી નવદશ-ઓગણીશ ચ-અને બે મે-મારી એકવિંશતિ:-એકવીસ, ચ-અને મે-મારી એકવિંશતિ:- એકવીસ ચ-અને બે મે-મારી ત્રયોવિંશતિ:-તેવીસ, ચ-અને મે-મારી ત્રયોવિંશતિ:-તેવીસ ચ-અને બે મે-મારી પચ્ચવિંશતિ:-પચીસ, ચ-અને મે-મારી પચ્ચવિંશતિ:-પચીસ ચ-અને બે મે-મારી સપ્તવિંશતિ:-સત્તાવીસ, ચ-અને મે-મારી સપ્તવિંશતિ:-સત્તાવીસ ચ-અને બે મે-મારી નવવિંશતિ:-ઓગણત્રીસ, ચ-અને મે-મારી નવવિંશતિ:-ઓગણત્રીસ ચ-અને બે મે-મારી એકત્રિંશત્-એકત્રીસ, ચ-અને બે મે-મારી એકત્રિંશત્-એકત્રીસ ચ-અને બે મે-મારી ત્રયસ્ત્રિંશત્-તેત્રીસ ચ-અને આગળ પણ એ રીતે સંખ્યાઓને કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ કરવી. આ યોગ પક્ષમાં મંત્રનો પ્રથમ અર્થ છે.

દ્વિતીય પક્ષ : યજ્ઞેન-યોગથી વિપરીત દાન રૂપ વિયોગ માર્ગથી વિપરીત સંગ્રહિત ચ-અને સંખ્યા બે ના વિયોગ અર્થાત્ અન્તરથી મે-મારી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને તેમ મે-મારી ત્રયસ્ત્રિંશત્-તેત્રીસ સંખ્યા ચ-બે ના આપવા અર્થાત્ વિયોગથી મે-મારી એકત્રિંશત્-એકત્રીસ, ચ-ફરી મે-મારી એકત્રિંશત્-એકત્રીસ ચ-અને બેના વિયોગથી મે-મારી નવવિંશતિ:-ઓગણત્રીસ, ચ-અને મે-મારી નવવિંશતિ:-ઓગણત્રીસ ચ-અને બે ના વિયોગથી મે-મારી સપ્તવિંશતિ:-સત્તાવીસ સંખ્યા સમર્થ બને છે, આમ સર્વ સંખ્યાઓમાં જાણવું જોઈએ. આ વિયોગ પક્ષમાં મંત્રનો બીજો અર્થ છે.

તૃતીયપક્ષ : મે-મારી એકા-એક સંખ્યા ચ-અને મે-મારી તિસ્ર:-ત્રણ સંખ્યા, ચ-પરસ્પર ગુણી, મે-મારી તિસ્ર:-ત્રણ સંખ્યા ચ-અને મે-મારી પચ્ચ-પાંચ સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણતાં, મે-મારી પચ્ચ-

પાંચ સંખ્યા ચ-અને મે-મારી સપ્ત-સાત સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણતાં, મે-મારી સપ્ત-સાત સંખ્યા ચ-અને મે-મારી નવ-નવ સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણતાં, મે-મારી, નવ-નવ સંખ્યા ચ-અને મે-મારી એકાદશ-અગિયાર સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણતાં, આ રીતે અન્ય સંખ્યા યજ્ઞેન-તેના વારંવાર યોગ = ગુણવાથી કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને/સિદ્ધ બને છે. આ ગુણન પક્ષમાં મંત્રનો ત્રીજો અર્થ છે. [અર્થાત્ ૩ × ૩, ૫ × ૫, ૭ × ૭, ૯ × ૯] (૨૪)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં યજ્ઞેન-પદથી યોગ = જોડવું અને વિયોગ = બાદ કરવું અર્થ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, કારણકે ‘ યજ-’ ધાતુનો જે સંગતિકરણ અર્થ છે, તેનાથી કોઈ સંખ્યાને કોઈ સંખ્યાથી યોગ = જોડવી છે.

યજ-ધાતુનો બીજો અર્થ દાન કરવું = વ્યય કરવો છે. અર્થાત્ કાઠી નાખવું. એ બન્નેમાં અન્તર છે.

આ રીતે ગુણવા, ભાગવા, વર્ગ, વર્ગમૂલ આદિ ધન, ધનમૂલ, ભાગજાતિ અને પુભાગજાતિ આદિ જે ગણિતના ભેદ છે તે યોગ = જોડવા અને વિયોગ = ઘટાડવાથી ઉત્પન્ન થાય છે.

કારણકે કોઈ સંખ્યાને કોઈ સંખ્યાથી એકવાર જોડીએ-મેળવીએ તો યોગ કહેવાય છે. જેમ કે - ૨ + ૪ = ૬ અર્થાત્ બે માં ચાર જોડતાં છ થાય છે, આ રીતે અનેકવાર જો સંખ્યામાં સંખ્યા જોડાય = ઉમેરાય તેને ગુણા કહે છે જેમકે ૨ × ૪ = ૮ અર્થાત્ બેની સંખ્યા ચાર વાર અલગ અલગ જોડાય અથવા બે ને ચારથી ગુણા કરતાં આઠ થાય છે. એજ રીતે ચારને ચાર વાર જોડતા અથવા ગુણા કરતાં ચારનો વર્ગ સોળ બને છે. આ રીતે અન્તરથી ભાગ, વર્ગમૂલ અને ધનમૂલ આદિ ક્રિયાઓ બને છે.

અર્થાત્-જે કોઈ સંખ્યામાં કોઈ સંખ્યા જોડે અથવા કોઈ રીતે ઘટાડે તો એ યોગ જમા અથવા વિયોગ = ઘટાડવાથી બુદ્ધિમાનોની યથામતિ કલ્પનાર વ્યક્ત અને અવ્યક્તતર [અંકગણિત અને બીજગણિત] સમસ્ત ગણિત ક્રિયાઓ સિદ્ધ થાય છે.

એ કારણે આ મંત્રમાં બે સંખ્યાના યોગથી ઉત્તરોત્તર સંખ્યા અથવા બે સંખ્યાના વિયોગ-ઘટાડવાથી પૂર્વ પૂર્વની વિષમ સંખ્યા બતાવી છે. એ જ રીતે ગુણા કરવાનો પણ કોઈ એક પ્રકાર બતાવેલ છે. એમ જાણવું જોઈએ. (૨૪)

ચત્ત્વરશ્ચ મેઽષ્ટૌ ચ મેઽષ્ટૌ ચ મે દ્વાદશ ચ મે દ્વાદશ ચ મે ષોડશ ચ મે ષોડશ ચ મે વિઃશ્વતિશ્ચ મે વિઃશ્વતિશ્ચ મે ચતુર્વિઃશ્વતિશ્ચ મે ચતુર્વિઃશ્વતિશ્ચ મેઽષ્ટાવિઃશ્વતિશ્ચ મેઽષ્ટાવિઃશ્વતિશ્ચ મે દ્વાત્રિઃશ્વતિશ્ચ મે દ્વાત્રિઃશ્વતિશ્ચ મે ષટ્ત્રિઃશ્વતિશ્ચ મે ષટ્ત્રિઃશ્વતિશ્ચ મે ચત્વારિઃશ્વતિશ્ચ મે ચત્વારિઃશ્વતિશ્ચ મે ચતુશ્ચત્વારિઃશ્વતિશ્ચ મે ચતુશ્ચત્વારિઃશ્વતિશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : યજ્ઞેન-સંગતિકરણ=યોગ કરવાથી મે-મારી ચત્ત્વર:-ચાર સંખ્યા ચ-અને ચાર સંખ્યા મે-મારી અષ્ટૌ-આઠ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી અષ્ટૌ-આઠ સંખ્યા ચ-અને ચાર મે-મારી દ્વાદશ-બાર સંખ્યા,

ચ-અને ચાર મે-મારી દ્વાદશ-બાર ચ-અને ચાર મે-મારી ષોડશ-સોળ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ષોડશ-સોળ ચ-અને ચાર મે-મારી વિંશતિ:-વીસ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી વિંશતિ:-વીસ ચ-અને ચાર મે-મારી ચતુર્વિંશતિ:-ચોવીસ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ચતુર્વિંશતિ:-ચોવીસ ચ-અને ચાર મે-મારી અષ્ટાવિંશતિ:-અઠાવીસ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી અષ્ટાવિંશતિ:-અઠાવીસ ચ-અને ચાર મે-મારી દ્વાત્રિંશત્-બત્રીસ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી દ્વાત્રિંશત્-બત્રીસ ચ-અને ચાર મે-મારી ષટ્ત્રિંશત્-છત્રીસ સંખ્યા, ચ-અને મે-મારી ષટ્ત્રિંશત્-છત્રીસ ચ-અને ચાર મે-મારી ચત્વારિંશત-ચાલીશ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ચત્વારિંશત્-ચાલીસ ચ-અને ચાર મે-મારી ચતુશ્ચત્વારિંશત્-ચુમાળીશ સંખ્યા, ચ-અને મે-મારી ચતુશ્ચત્વારિંશત્-ચુમાળીશ ચ-અને ચાર મે-મારી અષ્ટાચત્વારિંશત્-અડતાલીશ સંખ્યા બને છે. ચ-પદથી આગળ પણ પૂર્વોક્ત વિધિથી સંખ્યાઓ કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ કરવી. આ યોગપક્ષમાં પ્રથમ અર્થ છે.

દ્વિતીય પક્ષ : યજ્ઞેન-યોગથી વિપરીત દાન રૂપ વિયોગના માર્ગથી વિપરીત અને સંગૃહીત ચ-અન્ય અન્ય સંખ્યાઓ ચારના વિયોગથી જેમ કે મે-મારી કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ થાય/સમર્થ બને, તેમ મે-મારી અષ્ટાચત્વારિંશત્-અડતાલીસ ચ-અને ચારના દાન = વિયોગથી મે-મારી ચતુશ્ચત્વારિંશત્-ચુમાળીશ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ચતુશ્ચત્વારિંશત્-ચુમાળીશ ચ-ચારના વિયોગથી મે-મારી ચત્વારિંશત્-ચાલીશ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ચત્વારિંશત્-ચાલીશ ચ-ચારના વિયોગથી મે-મારી ષટ્ત્રિંશત્-છત્રીસ સંખ્યા, ચ-ફરી મે-મારી ષટ્ત્રિંશત્-છત્રીસ ચ-ચારના વિયોગથી મે-મારી દ્વાત્રિંશત્-બત્રીસ સંખ્યા બને છે. આ રીતે સર્વ સંખ્યાઓને જાણવી જોઈએ. આ વિયોગ પક્ષમાં મંત્રનો બીજો અર્થ છે.

તૃતીયપક્ષ : મે-મારી ચતસ્ર:-ચાર સંખ્યા ચ-અને મે-મારી અષ્ટૌ-આઠ સંખ્યા, ચ-પરસ્પર ગુણી મે-મારી અષ્ટૌ-આઠ ચ-અને મે-મારી દ્વાદશ-બાર સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણી, મે-મારી દ્વાદશ-બાર ચ-અને મે-મારી ષોડશ-સોળ સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણી, મે-મારી ષોડશ-સોળ ચ-અને મે-મારી વિંશતિ:-વીસ સંખ્યા ચ-પરસ્પર ગુણી, આ રીતે સંખ્યા આગળ પણ યજ્ઞેન-ઉક્ત વારંવાર ગુણાથી કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ થાય છે/સમર્થ બને છે. આ ગુણન પક્ષમાં મંત્રનો ત્રીજો અર્થ છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : પૂર્વોક્ત (૨૪) મંત્રમાં એક સંખ્યાને લઈને બે ના યોગ અને વિયોગથી વિષમ સંખ્યા પ્રતિપાદન કરેલ છે. તેથી પૂર્વ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત ક્રમથી એક, બે અને ત્રણ સંખ્યાઓ છોડીને પ્રસ્તુત મંત્રમાં ચારના યોગ = જોડવા અને વિયોગ = ઘટાડવા ચારની સંખ્યાથી લઈને સમ સંખ્યાઓ પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

આ બન્ને મંત્રોથી વિષમ સંખ્યાઓ અને સમ સંખ્યાઓના ભેદોને જાણીને બુદ્ધિ અનુસાર કલ્પનાથી સમસ્ત ગણિત વિદ્યાઓ જાણી લેવી જોઈએ. (૨૫)

ત્ર્યવિંશ્ચ મે ત્ર્યવી ચ મે દિત્ય્વાટ્ ચ મે દિત્યૌહી ચ મે પજ્વાવિશ્ચ મે પજ્વાવી ચ મે ત્રિવત્સશ્ચ મે ત્રિવત્સા ચ મે તુર્ય્વાટ્ ચ મે તુર્યૌહી ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : મે-મારા ત્ર્યવિ:-ત્રણ પ્રકારના ઘેટાવાળા ચ-અને તેથી ભિન્ન સામગ્રી, મે-મારી ત્ર્યવી-

ત્રણ પ્રકારની ઘેટીવાળી સ્ત્રી ચ-અને તેનું ઘી આદિ, મે-મારો દિત્યવાટ્-ખંડિત ક્રિયાઓમાં આવેલાં વિધોને પૃથક્ કરનાર, ચ-અને તેના સંબંધી, મે-મારી દિત્યૌહી-તે ક્રિયાઓને પ્રાપ્ત કરાવનારી ગાય આદિ ચ-અને તેની રક્ષા, મે-મારા પચ્છાપિ:-પાંચ પ્રકારના ઘેટાવાળા ચ-અને તેના ઘી આદિ, મે-મારી પચ્છાવી-પાંચ પ્રકાર ઘેટાવાળી સ્ત્રી ચ-અને તેના ઉદ્યોગ આદિ, મે-મારા ત્રિવત્સ:-ત્રણ વાછરડાવાળા ચ-અને તેના વાછરડા આદિ, મે-મારી ત્રિવત્સા-ત્રણ વાછરડાવાળી ગાય ચ-અને તેના ઘી આદિ, મે-મારો તુર્યવાટ્-ત્રણવર્ષ પૂરા કરીને ચોથા વર્ષને પ્રાપ્ત બળદ આદિ ચ-અને તેનો ઉપયોગ કરવો, મે-મારી તુર્યૌહી-ચોથા વર્ષને પ્રાપ્ત ગાય ચ-અને તેની કેળવણી આ સર્વ પદાર્થો યજ્ઞેન-પશુઓના પાલનનાં વિધાનથી કલ્પન્તામ્-સિદ્ધ થાય/સમર્થ બને. (૨૬)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ગાય, બકરી અને ઘેટાનું ગ્રહણ ઉપલક્ષણ માટે છે. જે મનુષ્યો પશુઓનું પાલન-વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ રસોથી આઢ્ય સંપન્ન રહે છે. (૨૬)

પ્ષ્ટવાટ્ ચ મે પષ્ટૌહી ચ મડુક્ષા ચ મે વ્શા ચ મડ્રઘ્ભશ્ચ મે વેહચ્ મેડનડ્વાંશ્ચ મે ધેનુશ્ચ મે યજ્ઞેન કલ્પન્તામ્ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : મે-મારા પ્ષ્ટવાટ્-પીઠથી ભાર વહન કરનારા હાથી, ઊંટ આદિ ચ-અને તેના સંબંધી પદાર્થો મે-મારી પષ્ટૌહી-પીઠથી ભાર વહન કરનારી ઘોડી, સાંઢણી આદિ ચ-અને તેને ઊંચકેલા પદાર્થો, મે-મારા ડક્ષા-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ વૃષભ = સાંઢ ચ-અને વીર્યને ધારણ કરનારી ગાય આદિ, મે-મારી વ્શા-વંધ્યા ગાય ચ-અને વીર્યહીન સાંઢ, મે-મારા ઋઘ્ભ:-સમર્થ બળદ ચ-અને બળવાન ગાય, મે-મારી વેહત્-વીર્યપાત વાળા સાંઢ અથવા ગર્ભપાતવાળી ગાય ચ-અને સામર્થ્યહીન ગાય, મે-મારા અનડ્વાન્-હળ અને ગાડી આદિ વહનમાં સમર્થ બળદ ચ-અને ગાડીવાન આદિ, મે-મારી ધેનુ:-નવી દૂધ આપનારી ગાય ચ-અને તેને દોહનાર એ સર્વ યજ્ઞેન-પશુ કેળવણી રૂપ યજ્ઞ કર્મમાં કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે પશુઓને સુશિક્ષિત કરીને-કેળવીને કાર્યોમાં લગાવે છે, તે પોતાના પ્રયોજનને સિદ્ધ કરીને સુખી બને છે. (૨૭)

વાજાય સ્વાહા પ્રસવાય સ્વાહાપિજાય સ્વાહા ક્રતવે સ્વાહા વસવે સ્વાહાઽહર્પતયે સ્વાહાઠ્ઠૈ મુગ્ધાય સ્વાહા મુગ્ધાય વૈનશિનાય સ્વાહા વિનશિન ઽઆન્ત્યાયનાય સ્વાહાન્ત્યાય ભૌવનાય સ્વાહા ભુવનસ્ય પતયે સ્વાહાધિપતયે સ્વાહા પ્રજાપતયે સ્વાહા । ડ્યં તે રાગ્મિત્રાય યન્તાસિ યમન ઽ ઋર્જે ત્વા વૃષ્ટ્યૈ ત્વા પ્રજાનાં ત્વાધિ-પત્યાય ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનમાં વાજાય-સંગ્રામને માટે સ્વાહા-સત્યાચરણ, પ્રસવાય-ઐશ્વર્ય વા સંતાનની ઉત્પત્તિ માટે સ્વાહા-પુરુષાર્થ અને બલયુક્ત સત્યવાણી, અપિજાય-ગ્રહણ કરવા માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ક્રતવે-વિજ્ઞાન માટે સ્વાહા-યોગાભ્યાસાદિનું અનુષ્ઠાન, વસવે-નિવાસ માટે સ્વાહા-ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર

આચરણ, અહર્પતયે-દિવસોના પાલન કરનાર માટે સ્વાહા-કાલ-વિજ્ઞાન આપનારી ક્રિયા, અહ્ને-પ્રતિદિન વા મુગ્ધાય-મૂઢજનને માટે સ્વાહા-વૈરાગ્યયુક્ત આચરણ, મુગ્ધાય-મોહને પ્રાપ્ત વૈનંશિને-વિનાશીના બોધ માટે સ્વાહા-સત્ય હિતોપદેશ કરનારી વાણી, વૈનંશિને-વિનાશી સ્વભાવને માટે વા આન્ત્યાયનાય-અન્તમાં ઘર જેનું હોય તેને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી, આન્ત્યાય-નીચવર્ણમાં ઉત્પન્ન થયેલા [અન્તમાં વિદ્યમાન] ભૌવનાય-ભુવનોવાળા માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ઉપદેશ, ભુવનસ્ય-જે સંસારમાં સર્વ પ્રાણી માત્ર હોય છે તેના પતયે-સ્વામીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ વાણી, અધિપતયે-પાલકોના અધિષ્ઠાતાને માટે સ્વાહા-રાજ્ય વ્યવહારના સૂચક આચરણ, પ્રજાપતયે-પ્રજાના પાલક-રક્ષક માટે સ્વાહા-રાજધર્મની પ્રકાશક નીતિનો સ્વીકાર કરે છે તથા જે તે-આપની ઇચ્છા-એ જે રાટ્-વિશેષ પ્રકાશમાન નીતિનો સ્વીકાર કરે છે અને જે યમન:-સદ્ગુણોના ગ્રહણકર્તા આપ મિત્રાય-મિત્રને માટે યન્તા-ઉચિત સત્કાર કરનાર અસિ-છે તે ત્વા-આપને ઋર્જે-પરાક્રમ માટે ત્વા-આપને, વૃષ્ટયૈ-વર્ષા માટે અને ત્વા-આપને પ્રજાનામ્-પાલનને યોગ્ય પ્રજાઓના આધિપત્યાય-અધિપતિ થવા અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત વાણી અને ક્રિયા-આચરણથી પ્રવૃત્ત થાય છે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ જિતેન્દ્રિય છે, તેઓ રાજ્યની રક્ષા કરી શકે છે. (૨૮)

આયુર્યજ્ઞેન કલ્પતાં પ્રાણો યજ્ઞેન કલ્પતાં ંચક્ષુર્યજ્ઞેન કલ્પતાં ંશ્રોત્રં યજ્ઞેન કલ્પતાં વાગ્યજ્ઞેન કલ્પતાં મનો યજ્ઞેન કલ્પતામાત્મા યજ્ઞેન કલ્પતાં બ્રહ્મા યજ્ઞેન કલ્પતાં જ્યોતિર્યજ્ઞેન કલ્પતાં સ્વર્યજ્ઞેન કલ્પતાં પૃષ્ઠં યજ્ઞેન કલ્પતાં યજ્ઞો યજ્ઞેન કલ્પતામ્ । સ્તોમશ્ચ યજુશ્ચ ઽ ઋક્ ચ સામં ચ બૃહચ્ચ રથન્તરજ્વં । સ્વર્દેવાઽ-અગન્મામૃતા ઽ અભૂમ પ્રજાપતેઃ પ્રજા ઽ અભૂમ વેદ્ સ્વાહા ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તે-તારી પ્રજાના સ્વામી થવા માટે આયુઃ-જેનાથી જીવન મળે છે તે આયુર્દા યજ્ઞેન-પરમેશ્વર અને શ્રેષ્ઠ મહાત્મા-વિદ્વાનોના સત્કારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, પ્રાણઃ-જીવનનો હેતુ પ્રાણવાયુ યજ્ઞેન-સંગ કરવાથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, ચક્ષુઃ-નેત્ર, યજ્ઞેન-પરમેશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, શ્રોત્રમ્-કાન યજ્ઞેન-ઈશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, વાક્-વાણી યજ્ઞેન-ઈશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને.

મનઃ-સંકલ્પ-વિકલ્પ કરનાર મન-અન્તઃકરણ યજ્ઞેન-સંગતિથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, આત્મા-શરીર, ઈન્દ્રિય તથા પ્રાણ આદિ વાયુને કરનાર આત્મા યજ્ઞેન-સંગતિથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને.

બ્રહ્મા-ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન યજ્ઞેન-સંગતિથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, જ્યોતિઃ-ન્યાયનો પ્રકાશ યજ્ઞેન-સંગતિથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, સ્વઃ-સુખ યજ્ઞેન-સંગતિથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, પૃષ્ઠમ્-જાણવાની ઈચ્છા યજ્ઞેન-પઠનરૂપ યજ્ઞથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, યજ્ઞઃ-સંગ કરવા યોગ્ય ધર્મ યજ્ઞેન-સત્ય વ્યવહારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને, સ્તોમઃ-જેનાથી સ્તુતિ થાય છે તે અથર્વવેદ ચ-અને યજુઃ-જેનાથી જીવસત્કાર

આદિ કરે છે તે યજુર્વેદ ચ-અને ઋક્-સ્તુતિનો સાધક ઋગ્વેદ ચ-અને સામ-સામવેદ ચ-અને બૃહદ્-અત્યંત મહાન વસ્તુ, ચ-અને સામવેદનો રથન્તરમ્-રથન્તર નામક સ્તોત્ર ચ-પણ ઈશ્વર વા વિદ્વાનના યજ્ઞન-સત્કારથી કલ્પતામ્-સમર્થ બને.

હે દેવા:-વિદ્વાનો ! જેમ અમે લોકો અમૃતા:-જન્મ મરણના દુઃખથી રહિત બનીને સ્વ:-મોક્ષ સુખને અગ્નિ-પ્રાપ્ત કરીએ, પ્રજાપતે:-સમસ્ત સંસારના સ્વામી જગદીશ્વરની પ્રજા:-પાલન કરવા યોગ્ય પ્રજા અભૂમ-બનીએ તથા વેદ્-ઉત્તમ ક્રિયા અને સ્વાહા-સત્યવાણીથી યુક્ત અભૂમ-બનીએ, તેમ તમે પણ બનો. (૨૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ધાર્મિક વિદ્વાનોનાં અનુકરણથી યજ્ઞને માટે સર્વસ્વ સમર્પિત કરીને પરમેશ્વરને ન્યાયાધીશ અને રાજા માનીને નિરંતર ન્યાય પરાયણ બનીને સુખી રહે. (૨૯)

વાજસ્ય નુ પ્રસવે માતરં મહીમદિતિં નામ વચસા કરામહે । યસ્યામિદં વિશ્વં ભુવનમાવિવેશ તસ્યાં નો દેવઃ સવિતા ધર્મ સાવિષત્ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : વાજસ્ય-વિવિધ ઉત્તમ અન્નની પ્રસવે-ઉત્પત્તિમાં નુ-જ વિદ્યમાન અમે માતરમ્-માન્ય કરેલા હેતુ અદિતિમ્-કારણ રૂપે નિત્ય મહીમ્-ભૂમિને નામ-પ્રસિદ્ધિપૂર્વક વચસા-વાણી દ્વારા કરામહે-યુક્ત અર્થાત્ સ્વીકાર કરીએ.

યસ્યામ્-જે પૃથિવીમાં ઇદમ્-એ પ્રત્યક્ષ વિશ્વમ્-સમસ્ત ભુવનમ્-સ્થૂલ જગત આવિવેશ-વ્યાપ્ત છે, તસ્યામ્-તે પૃથિવીમાં સવિતા-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત દેવઃ-શુદ્ધ સ્વરૂપ ઈશ્વર નઃ-અમારી ધર્મ-ઉત્તમ કર્મોની ધારણાને સાવિષત્-ઉત્પન્ન કરે. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે સર્વના આધારરૂપ જે ભૂમિ બનાવી છે, તે સર્વને ધારણ કરે છે, તે જ પરમેશ્વર સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૦)

વિશ્વે ઽ અદ્ય મરુતો વિશ્વ ઽ ઋતી વિશ્વે ભવન્ત્વગ્નયઃ સમિદ્ધાઃ ।

વિશ્વે નો દેવા ઽ અવસાગમન્તુ વિશ્વમસ્તુ દ્રવિણં વાજો ઽ અસ્મે ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : આ પૃથિવીમાં અદ્ય-આજ વિશ્વે-સર્વ મસ્તઃ-વાયુ, વિશ્વે-સર્વ પ્રાણી અને પદાર્થ, વિશ્વે-સર્વ સમિદ્ધાઃ-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત અગ્નયઃ-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન નઃ-અમારી ઋતી-રક્ષા આદિથી યુક્ત ભવન્તુ-પ્રસિદ્ધ બનો.

વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાન લોકો અવસા-પાલન આદિના નિમિત્ત આ + ગમન્તુ-આવે અર્થાત્ આવીને અમારી રક્ષા કરે, જેથી અસ્મે-અમારા માટે વિશ્વમ્-સમસ્ત દ્રવિણમ્-ધન અને વાજઃ-અન્ન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આજ સ છોડીને, વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, પૃથિવી પર પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ

સમગ્ર ઉત્તમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૧)

વાજોં નઃ સ્મ પ્રદિશ્ચત્ત્સ્રો વા પરાવતઃ ।

વાજોં નો વિશ્વૈર્દેવૈર્ધનસાતાવિહાવતુ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વિશ્વૈઃ-સર્વ દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાથે વાજઃ-અન્નાદિ ઇહ-આ લોકમાં ધનસાતૌ-ધનનો વિભાગ કરવામાં નઃ-અમને અવતુ-પ્રાપ્ત થાય. વા-અથવા નઃ-અમારા વાજઃ-શાસ્ત્ર જ્ઞાન અને વેગ સ્મ-સાત પ્રદિશ્ઃ-જેનો સારી રીતે ઉપદેશ કરવામાં આવે, તે લોક-લોકાન્તરો વા પરાવતઃ-દૂર-દૂર જે ચત્ત્સ્રઃ-પૂર્વ આદિ ચાર દિશાનું અવતુ-પાલન અર્થાત્ ઉક્ત સર્વ પદાર્થોની રક્ષા કરે વા તેને પ્રાપ્ત કરે, તેમ તમે પણ તેની નિરંતર રક્ષા કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પુષ્કળ અન્નથી પોતાના લોકોનું પાલન [કરવું જોઈએ] અને આ પૃથિવી પર સર્વ દિશાઓમાં સત્કીર્તિ-સુયશ ફેલાય, તે માટે સજ્જનોનો આદર કરવો જોઈએ [અર્થાત્ સત્પુરુષોનો સત્કાર કરવો જોઈએ.] (૩૨)

વાજોં નો ઽ અઘ પ્રસુવાતિ દાનં વાજોં દેવાંર ઽ ઋતુભિઃ કલ્પયાતિ ।

વાજોં હિ મા સર્વૌવીરં જ્જાન વિશ્વા ઽ આશા વાજપતિર્જયેયમ્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અઘ-આજ જે વાજઃ-અન્ન નઃ-અમારા માટે દાનમ્-દાન કરવા પ્રસુવાતિ-પ્રેરિત કરે, જે વાજઃ-વેગરૂપ ગુણ ઋતુભિઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ દ્વારા દેવાન્-વિદ્વાનો વા દિવ્ય ગુણોને કલ્પયાતિ-પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બનાવે, અથવા જે હિ-જ વાજઃ-અન્ન સર્વવીરમ્-સર્વ વીરોના હેતુ મા-મને જ્જાન-પ્રસિદ્ધ કરે, એ સર્વથી હું વાજપતિઃ-અન્નાદિનો અધિષ્ઠાતા બનીને વિશ્વાઃ-સમસ્ત આશાઃ-દિશાઓને જયેયમ્-જીતું અને ઉત્કૃષ્ટ બનાવું, તેમ તમે પણ જીતો. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ પૃથિવી પર જેટલા પદાર્થો છે, તે સર્વમાં અન્ન જ શ્રેષ્ઠ છે, જેથી અન્નવાન-અન્નપતિ સર્વત્ર વિજયને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૩)

વાજઃ પુસ્તાદુત મંધ્યતો નો વાજોં દેવાન્ હવિષા વર્દ્યાતિ ।

વાજો હિ મા સર્વૌવીરં ચકાર્ સર્વા ઽ આશા વાજપતિર્ભવેયમ્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : જે વાજઃ-અન્ન હવિષા-આપવા લેવા અને ખાવાથી પુસ્તાત્-પ્રથમથી ઊત-તથા મંધ્યતઃ-મંધ્યથી નઃ-અમારી વર્દ્યાતિ-વૃદ્ધિ કરે છે તથા જે વાજઃ-અન્ન દેવાન્-દિવ્યગુણોની વર્દ્યાતિ-વૃદ્ધિ કરે છે, જે હિ-જ વાજઃ-અન્ન મા-મને સર્વવીરમ્-જેથી સમસ્ત વીર પુરુષો બને છે એવો ચકાર્-બનાવે છે, તેથી હું વાજપતિઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોની રક્ષા કરનાર ભવેયમ્-બનું અને સર્વાઃ-સર્વ દિશઃ-દિશાઓને જીતું. (૩૪)

ભાવાર્થ : અન્ન જ સર્વ પ્રાણીઓની વૃદ્ધિ કરે છે. અન્નથી જ પ્રાણીઓ સર્વ દિશાઓમાં ભ્રમણ

કરે છે.

અન્ન વિના કાંઈપણ કરી શકાતું નથી. (૩૪)

**સં માં સૃજામિ પયસા પૃથિવ્યાઃ સં માં સૃજામ્યદ્ભિરોષધીભિઃ ।
સોઽહં વાજઃ સનેયમગ્ને ॥ ૩૫ ॥**

પદાર્થ : હે અગ્ને-રસવિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! જે હું પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીના પયસા-રસની સાથે મા-સ્વયંને સંસૃજામિ-સંયુક્ત કરું છું, અથવા અદ્ભિઃ-ઉત્તમ શુદ્ધ જલ અને ઓષધીભિઃ-સોમલતા આદિ ઓષધિઓની સાથે મા-સ્વયંને સંસૃજામિ-સંયુક્ત કરું છું, સઃ-તે અહમ્-હું વાજમ્-અન્નનું સનેયમ્-સેવન કરું, તેમ તું પણ કર. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ હું વેદક શાસ્ત્રની રીતિથી અન્ન, પાન આદિ કરીને સુખી રહું છું, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૩૫)

**પયઃ પૃથિવ્યાં પયઃ ૬ ઓષધીષુ પયો દિવ્યન્તરિક્ષે પયો ધાઃ ।
પયસ્વતીઃ પ્રદિશઃ સન્તુ મહ્યમ્ ॥ ૩૬ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર જે પયઃ-જલ વા દૂધ આદિના રસ ઓષધીષુ-ઓષધિઓમાં જે પયઃ-રસ દિવિ-શુદ્ધ, નિર્મળ પ્રકાશ વા અન્તરિક્ષે-સૂર્ય અને પૃથિવીના મધ્યવર્તી આકાશમાં જે પયઃ-રસને ધાઃ-ધારણ કરે છે, તે સર્વ પયઃ-જલ વા દૂધના રસને હું પણ ધારણ કરું.

જે પ્રદિશઃ-ઉત્તમ દિશાઓ વિદિશાઓ પયસ્વતીઃ-અત્યંત રસયુક્ત તારા માટે સન્તુ-થાય, તે મહ્યમ્-મારા માટે પણ થાય.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો જલ આદિ પદાર્થોથી સંયુક્ત પૃથિવી આદિથી ઉત્તમ અન્નોનો તથા રસોનો સંગ્રહ કરીને ખાય અને પીએ છે, તેઓ નીરોગી રહીને, સર્વ દિશાઓમાં કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે અથવા આવી જઈ શકે છે અને દીર્ઘાયુ બને છે. (૩૬)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ ।

સરસ્વત્યૈ વાચો યન્તુર્યન્ત્રેણાગ્નેઃ સામ્રાજ્યેનાભિષિજ્વામિ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ રાજન્ ! જેમ હું ત્વા-આપને સવિતુઃ-સકલ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર, દેવસ્ય-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ ઈશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલ જગતમાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાના પ્રતાપ અને શીતલતાની સમાન બાહુભ્યામ્-ભુજાઓથી પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિ કરનાર પ્રાણના ધારણ-આકર્ષણની સમાન હસ્તાભ્યામ્-હાથોથી સરસ્વત્યૈ-વિજ્ઞાનયુક્ત વાચઃ-વાણી યન્તુઃ-નિયંતાના અગ્ને-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિની યન્ત્રેણ-કલા-કૌશલથી ઉત્પાદિત યંત્રથી, સામ્રાજ્યેન-સર્વ ભૂમિના રાજમાન સમ્રાટની સાર્વભૌમતાથી અભિષિજ્વામિ-અભિષેક

કરું છું અર્થાત્ અધિકાર આપું છું, તેમ આપ પણ સુખથી મારો અભિષેક કરો-સીંચો. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા બનીને સૂર્ય આદિના ગુણ અને કર્મ સમાન સ્વભાવવાળા પુરુષને રાજા માનવો જોઈએ. (૩૭)

ઋતાષાઙ્ગૃતધામાગ્નિર્ગન્ધર્વસ્તસ્યૌષધયોઽપ્સરસો મુદો નામં ।

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઋતાષાઙ્ગ-સત્ય વ્યવહાર કરનાર, ઋતાધામા-યથાર્થ ધામ અને સ્થાનવાળો, ગન્ધર્વઃ-પૃથિવીને ધારણ કરનાર, અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન છે, તે તસ્ય-તેની ઔષધયઃ-ઔષધિ અપ્સરસઃ-જલમાં ગતિ કરનારી, મુદઃ-આનંદ પ્રદાન કરનારી નામ-નામવાળી-ખ્યાતિ રૂપ છે.

સઃ-તે નઃ-અમારા ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-બ્રહ્મને જાણનારા કુળ અને ક્ષત્રમ્-રાજ્ય વા ક્ષત્રિય કુળની પાતુ-રક્ષા કરે. તસ્મૈ-તે આપને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી, વાટ્-જેનાથી વ્યવહારોને યથાયોગ્ય વર્તનમાં લાવે છે અને તાભ્યઃ-તે ઔષધિઓના માટે સ્વાહા-સત્ય ક્રિયા-આચરણ કરે. (૩૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિની સમાન શત્રુઓનાં દાહક તથા ઔષધિઓની સમાન આનંદદાયક હોય તે જ સમસ્ત રાજ્યની રક્ષા કરી શકે છે. (૩૮)

સંહિતો વિશ્વસામા સૂર્યો ગન્ધર્વસ્તસ્ય મરીચયોઽપ્સરસ ઽ આયુવો નામં ।

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે સંહિતઃ-સર્વ મૂર્તિમાન-ભૌતિક દ્રવ્યો વા સત્પુરુષની સાથે મળેલા સૂર્યઃ-સૂર્ય ગન્ધર્વઃ-પૃથિવીને ધારણ કરનાર છે, તસ્ય-તેના મરીચયઃ-કિરણો અપ્સરસઃ-જે અન્તરિક્ષમાં જાય છે, તે આયુવઃ-સર્વત્રથી સંયોગ અને વિયોગ કરાવનાર નામ-પ્રસિદ્ધ છે અર્થાત્ જલ આદિ પદાર્થોનો સંયોગ કરે છે અને છોડે છે-સંયોજક અને વિયોજક છે, તાભ્યઃ-તે અન્તરિક્ષમાં જનારાં-આવનારાં કિરણો માટે વિશ્વસામા-જેની પાસે સામવેદ વિદ્યમાન છે તે આપ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી કાર્ય સિદ્ધિ કરો, જેથી તે યથાયોગ્ય કામમાં આવે.

જે આપ તસ્મૈ-તે સૂર્યને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા-આચરણને સારી રીતે યુક્ત કરો છો, સઃ-તે આપ નઃ-અમારા ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-વિદ્વાનો અને ક્ષત્રમ્-શૂરવીરોના કુળ તથા વાટ્-કામો નિર્વાહ કરવા પાતુ-રક્ષા કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સૂર્યના કિરણોનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરીને વિદ્યા અને શૂરવીરતાની વૃદ્ધિ કરીને પોતાના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૩૯)

સુષુમ્ણઃ સૂર્યરશ્મિશ્ચન્દ્રમા ગન્ધર્વસ્તસ્ય નક્ષત્રાણ્યપ્સરસો ભેકુરંયો નામં ।

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સૂર્યરશ્મિઃ-સૂર્યનાં કિરણોવાળા સુષુમ્ણાઃ-ઉત્તમ સુખના હેતુ, ગન્ધર્વઃ-ગૌ = સૂર્યના કિરણોને ધારણ કરનાર ચન્દ્રમાઃ-સર્વને આનંદયુક્ત કરનાર ચંદ્રલોક છે, તસ્ય-તેના જે નક્ષત્રાણિ-અશ્વિની આદિ નક્ષત્રો અને અપ્સરસઃ-આકાશમાં વિદ્યમાન કિરણો ભેકુરયઃ-પ્રકાશ કરનાર તરીકે નામ-પ્રસિદ્ધ છે, તે ચન્દ્રની અપ્સરા છે.

સઃ-તે જેમ નઃ-અમારી ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-ભણાવનાર બ્રાહ્મણ-અધ્યાપક કુળની અને ક્ષત્રમ્-દુષ્ટોનો નાશ કરનાર ક્ષત્રિય કુળની પાતુ-રક્ષા કરે. તસ્મૈ-તે રીતે ચંદ્રલોક માટે વાટ્-કાર્યનિર્વાહ પૂર્વક સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા કરું અને તાભ્યઃ-તે કિરણો માટે સ્વાહા-તમારે ઉત્તમ ક્રિયા [પ્રયોગ]કરવો જોઈએ.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ચન્દ્રમા આદિથી પણ તેની વિદ્યા દ્વારા સુખ સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૪૦)

ઙ્ઘિરો વિશ્વવ્યચા વાતૌ ગન્ધર્વસ્તસ્યાપૌ ઽ અપ્સરસ ઽ ઋર્જૌ નામ ॥

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઙ્ઘિરઃ-જે ઈચ્છા = કામના કરવા યોગ્ય, વિશ્વવ્યચાઃ-વા સમસ્ત સંસારમાં વ્યાપ્ત, ગન્ધર્વઃ-ગૌ = પૃથિવી અને કિરણોને ધારણ કરનાર વાતઃ-સર્વ સ્થાનમાં ગતિશીલ વાયુ છે, તસ્ય-તેના જે આપઃ-જલ અને પ્રાણ, અપાન, ઉદાન, સમાન, વ્યાન આદિ પ્રકાર છે, તે અપ્સરસઃ-અન્તરિક્ષ અને જલમાં ગતિ કરનાર તથા ઋર્જઃ-બળ અને પરાક્રમ આપનાર નામ-પ્રસિદ્ધ છે.

જેમ સઃ-તે નઃ-અમારા માટે ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-સત્ય ઉપદેશથી સર્વની ઉન્નતિ કરનાર બ્રાહ્મણ કુળ તથા ક્ષત્રમ્-વિદ્યાવર્ધક રાજકુળની પાતુ-રક્ષા કરે. તેમ તમે પણ આચરણ કરો. તસ્મૈ-અને તે વાયુ માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી વાટ્-પ્રાપ્તિ તથા તાભ્યઃ-તે જલ આદિ માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા વા વાણીને યુક્ત કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : શરીરમાં જેટલી ચેષ્ટા, બળ અને પરાક્રમ ઉત્પન્ન થાય છે, તે સર્વ વાયુથી જ ઉત્પન્ન થાય છે. વાયુ જ પ્રાણ રૂપ, ગન્ધર્વ અર્થાત્ સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૪૧)

ભુજ્યુઃ સુપર્ણૌ યજ્ઞો ગન્ધર્વસ્તસ્ય દક્ષિણા ઽ અપ્સરસ સ્તાવા નામ ॥

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ભુજ્યુઃ-સુખોના ભોગના નિમિત્ત, સુપર્ણઃ-ઉત્તમ પાલનનો હેતુ, ગન્ધર્વઃ-વાણીને ધારણ કરનાર, યજ્ઞઃ-સંગતિ કરવા યોગ્ય યજ્ઞ કર્મ આદિ છે, તસ્ય-તેની દક્ષિણાઃ-સુપાત્ર શ્રેષ્ઠ ધર્માત્મા વિદ્વાનોને દક્ષિણા અપાય છે, તે અપ્સરસઃ-પ્રાણોમાં પ્રાપ્ત થનારી સ્તાવાઃ-પ્રશંસાને યોગ્ય નામ-પ્રસિદ્ધ છે.

સ:-તે જેમ ન:-અમારા માટે ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-વિદ્વાન બ્રાહ્મણ તથા ક્ષત્રમ્-ચક્રવર્તી રાજાની પાતુ-રક્ષા કરે, તેમ તમે પણ અનુષ્ઠાન-આચરણ કરો. તસ્મૈ-તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાની પ્રાપ્તિ તથા વાટ-સુખ પ્રાપ્તિના નિમિત્ત તાભ્ય:-ઉક્ત દક્ષિણાઓ માટે સ્વાહા-ઉત્તમ રીતિથી સત્ય આચરણનો પ્રયોગ-વ્યવહાર કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ પ્રતિદિન કરે છે, તેઓ સમસ્ત સંસારના સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૪૨)

પ્રજાપતિર્વિશ્વર્કર્મા મનો ગન્ધર્વસ્તસ્ય ઽ ઋક્સામાન્યપ્સરસ્ઽણ્ઠયો નામ્ ।

સ ન ઽ ઇદં બ્રહ્મ ક્ષત્રં પાતુ તસ્મૈ સ્વાહા વાટ્ તાભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે વિશ્વર્કર્મા-સમસ્ત કર્મોના હેતુ, પ્રજાપતિ:-પ્રજાનું પાલન કરનાર સ્વામી મનુષ્ય છે, તસ્ય-તેના ગન્ધર્વ:-વાણી આદિને ધારણ કરનાર, મન:-જ્ઞાનનું સાધન અન્ત:કરણ, ઋક્સામાનિ-ઋગ્વેદ અને સામવેદના મંત્રો, અપ્સરસ:-હૃદયાકાશમાં વ્યાપ્ત પ્રાણ આદિ પદાર્થોની ગતિ કરનાર, ણ્ઠયઃ-જે સર્વત્રથી વિદ્વાનોનો સત્કાર, સત્સંગ અને વિદ્યાદાન કરનાર નામ-પ્રસિદ્ધ છે.

જેમ સ:-તે ન:-અમારા માટે ઇદમ્-એ બ્રહ્મ-વેદ અને ક્ષત્રમ્-ધનુર્વેદની પાતુ-રક્ષા કરે, તેમ તસ્મૈ-તેને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી વાટ્-ધર્મપ્રાપ્તિપૂર્વક તાભ્ય:-તે ઉક્ત પદાર્થો માટે સ્વાહા-સત્ય આચરણથી ઉપકાર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થી, વિચારશીલ અને વેદવિદ્યાના જાણનારા હોય છે, તેઓ જ સંસારના ભૂષણ રૂપ છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૩)

સ નૌ ભુવનસ્ય પતે પ્રજાપતે યસ્ય ત ઽ ઉપરિ ગૃહા યસ્ય વેહ ।

અસ્મૈ બ્રહ્મણેઽસ્મૈ ક્ષત્રાય મહિ શર્મ યચ્છ સ્વાહા ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે ભુવનસ્ય-ધરના પતે-સ્વામી પ્રજાપતે-પ્રજાના રક્ષક પુરુષ ! ઇહ-આ સંસારમાં યસ્ય-જે તે-તારા ઉપરિ-ઉત્કૃષ્ટ વ્યવહારમાં ગૃહા:-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર ગૃહસ્થ મનુષ્ય આદિ વા-અથવા યસ્ય-જેની સર્વ ક્રિયા ઉત્તમ છે, સ:-તે તું ન:-અમારા અસ્મૈ-એ બ્રહ્મણે-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા તથા અસ્મૈ-એ ક્ષત્રાય-રાજધર્મમાં નિરંતર રહેનાર ક્ષત્રિય માટે સ્વાહા-સત્ય આચરણથી મહિ-મહાન શર્મ-ધર અને સુખને યચ્છ-પ્રદાન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનો અને ક્ષત્રિયોનાં કુળની ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

સમુદ્ગોઽસિ નભસ્વાનાર્દ્રદાનુઃ શમ્ભૂર્મયોભૂરભિ મા વાહિ સ્વાહા મારુતોઽસિ મરુતાં ગુણઃ શમ્ભૂર્મયોભૂરભિ મા વાહિ સ્વાહા અવસ્યૂરસિ દુર્વસ્વાઞ્છમ્ભૂર્મયોભૂરભિ

માં વાહિ સ્વાહાં ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું નભસ્વાન્-જેની સમીપ બહુ જલ આર્દ્રદાનુઃ-અને શીતલ-આર્દ્રતા આદિ ગુણોના દાતા. સમુદ્રઃ-જેમાં ઉલટા-સુલટું જલ પડે છે તે સમુદ્ર સમાન અસિ-છે, તે સ્વાહા-સત્ય આચરણથી શમ્ભૂઃ-ઉત્તમ સુખ અને મયોભૂઃ-સામાન્ય સુખના ઉત્પાદક બનીને મા-મને અભિવાહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

જે તું માસ્તઃ-વાયુના જ્ઞાતા, મસ્તામ્-વિદ્વાનોના ગણઃ-સમૂહની સમાન અસિ-છે, તે સ્વાહા-સત્ય આચરણથી શમ્ભૂઃ-વિશેષ પર જન્મનું સુખ અને મયોભૂઃ-આ જન્મમાં સામાન્ય સુખને ઉત્પન્ન કરનાર બનીને મા-મને અભિવાહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

જે તું દુવસ્વાન્-પ્રશંસિત સત્કારથી યુક્ત અવસ્યૂઃ-પોતાની રક્ષાના ઈચ્છુક પુરુષની સમાન અસિ-છે, તે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ આચરણથી શમ્ભૂઃ-વિશેષ સુખ અને મયોભૂઃ-સામાન્ય પોતાના સુખને ઉત્પન્ન કરનાર બનીને મા-મને અભિવાહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સમુદ્રની સમાન ગંભીર, રત્નોથી સંપન્ન, ઋજુ = સરળ, વાયુ સમાન બળવાન, વિદ્વાન્ સમાન પરોપકારી અને પોતાના આત્મા સમાન સર્વના રક્ષક છે; તેઓ જ સર્વનું કલ્યાણ અને સુખ કરી શકે છે. (૪૫)

યાસ્તૈ ઽ અગ્ને સૂર્યે રુચો દિવમાતન્વન્તિ રશ્મિભિઃ ।

તાભિર્નો ઽ અદ્ય સર્વાંભી રુચે જનાય નસ્કૃધિ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! યાઃ-જે સૂર્યે-સૂર્ય વા પ્રાણમાં સ્વઃ-દીપ્તિ વા પ્રીતિ છે અને જે રશ્મિભિઃ-પોતાના કિરણોથી દિવમ્-પ્રકાશને આતન્વન્તિ-સર્વત્ર ફેલાવે છે, તામિઃ-તે સર્વાંભિઃ-સર્વ તે-પોતાની દીપ્તિ અને પ્રીતિથી અદ્ય-આજે નઃ-અમને સંયુક્ત કરો અને સ્વે-પ્રીતિ કરનારા જનાય-મનુષ્યને માટે નઃ-અમને કૃધિ-નિયત કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર સૂર્ય આદિ પ્રકાશકોના પણ પ્રકાશક છે, તેમ અનૂચાન-ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન વિદ્વાનોને પણ વિદ્યા પ્રદાન કરનાર છે.

જેમ ઈશ્વર આ સંસારમાં સર્વની સત્યમાં રુચિ અને અસત્યમાં અરુચિ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ પણ આચરણ કરે. (૪૬)

યા વૌ દેવાઃ સૂર્યે રુચો ગોષ્વશ્વેષુ યા રુચઃ ।

ઇન્દ્રાગ્ની તાભિઃ સર્વાંભી રુચં નો ધત્ત બૃહસ્પતે ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : બૃહસ્પતે-મોટા પદાર્થોના પાલક ઈશ્વર અને દેવાઃ-વિદ્વાન મનુષ્યો ! યાઃ-જે વઃ-તમારી સૂર્યે-ચરાચરમાં વ્યાપ્ત પરમેશ્વરમાં અર્થાત્ ઈશ્વરની પોતાનામાં અને તમે વિદ્વાનોની ઈશ્વરમાં સ્વઃ-

રુચિ અર્થાત્ પ્રીતિ છે, વા યા:-જે એ ગોષુ-કિરણ, ઈન્દ્રિયો અથવા દૂધ આપનારી ગાયોમાં તથા અશ્વેષુ-અગ્નિ અને ઘોડાઓ આદિમાં સ્વ:-પ્રીતિ છે, અથવા જે એમાં ઇન્દ્રાગ્ની-પ્રસિદ્ધ વિદ્યુત્ અને અગ્નિ વિદ્યમાન છે, તે પણ તાભિ:-તે સર્વાભિ:-સર્વ પ્રીતિઓથી ન:-અમારામાં સ્વમ્-પ્રીતિનું ધત્ત-સ્થાપન કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર ગાય આદિના પાલનમાં અને પદાર્થ વિદ્યામાં સર્વ મનુષ્યોને પ્રેરિત કરે છે, તેમ જ વિદ્વાનો પણ આચરણ કરે. (૪૭)

રુચં નો ધેહિ બ્રાહ્મણેષુ રુચ્ઃ રાજસુ નસ્કૃધિ ।

રુચં વિશ્યેષુ શૂદ્રેષુ મયિ ધેહિ રુચા રુચમ્ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! આપ ન:-અમારા બ્રાહ્મણેષુ-બ્રહ્મવેત્તા બ્રાહ્મણો-વિદ્વાનોમાં સ્વા-પ્રેમથી સ્વમ્-પ્રીતિનું ધેહિ-સ્થાપન કરો, ન:-અમારા રાજસુ-ક્ષત્રિય રાજપુત્રોમાં સ્વા-પ્રીતિનું પ્રીતિથી સ્વમ્-પ્રીતિનું કૃધિ-સ્થાપન કરો વિશ્યેષુ-પ્રજાજનોમાં વિદ્યમાન વૈશ્યોમાં તથા શૂદ્રેષુ-શૂદ્રોમાં સ્વા-પ્રેમથી સ્વમ્-પ્રીતિનું સ્થાપન કરો, અને મયિ-મારામાં પણ પ્રેમથી સ્વમ્-પ્રીતિને ધેહિ-સ્થાપિત કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર પક્ષપાત રહિત બ્રાહ્મણ આદિ વર્ણો પ્રત્યે સમાન પ્રેમ કરે છે, તેમ જ વિદ્વાન પણ સમાન રૂપથી પ્રેમ કરે.

જેઓ ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી વિરુદ્ધ છે, તેઓ નીચ અને તિરસ્કારને યોગ્ય છે. (૪૮)

તત્ત્વાં યામિ બ્રહ્મણા વન્દમાનસ્તદાશાસ્તે યજમાનો હવિર્ધિઃ ।

અહેડમાનો વરુણેહ બોધ્યુરુશ્સ મા ન્ 5 આયુઃ પ્રમોષીઃ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે ઉક્ષાંસ-અનેકની પ્રશંસા કરનારા વરુણ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ! બ્રહ્મણા-વેદ દ્વારા વન્દમાન:-સ્તુતિ કરતાં યજમાન:-યજ કરનાર અહેડમાન:-સત્કારાયેલા પુરુષ હવિર્ધિઃ-હોમ કરવા યોગ્ય સારા બનાવેલા પદાર્થોથી જે આશાસ્તે-આશા કરે છે તત્-તેને હું યામિ:-પ્રાપ્ત કરું.

જે ઉત્તમ આયુઃ-સો વર્ષની આયુને ત્વા-તારો આશ્રય કરીને પ્રાપ્ત કરું, તત્-તેને તું પણ પ્રાપ્ત કર, તું ઇહ-આ સંસારમાં ઉક્ત આયુને બોધિ-જાણ અને તું ન:-અમારી તે આયુની મા + પ્ર + મોષી:-ચોરી નહિ કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : આપ્ત વિદ્વાન જનો જેની ઈચ્છા કરે, તેની મનુષ્યો પણ કામના કરે. કોઈ પણ મનુષ્યે કોઈ વિદ્વાનનો અનાદર ન કરવો જોઈએ.

સ્ત્રી અને પુરુષ-અબ્રહ્મચર્ય, અયુક્ત આહાર-વિહાર, વ્યભિચાર અને અત્યંત વિષયાશક્તિ આદિથી આયુનો કદીપણ ઘટાડા ન કરે. (૪૯)

સ્વર્ણ ઘર્મઃ સ્વાહા સ્વર્ણાર્કઃ સ્વાહા । સ્વર્ણ શુક્રઃ સ્વાહા । સ્વર્ણ જ્યોત્તિઃ

સ્વાહા । સ્વૂર્ણ સૂર્યઃ સ્વાહા ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સ્વાહા-સત્ય ક્રિયા =આચરણથી સ્વઃ-સુખની ન-સમાન અર્કઃ-અગ્નિ હોય, સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી સ્વઃ-સુખની ન-સમાન શુક્રઃ-વાયુ હોય, સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી સ્વઃ-સુખની ન-સમાન જ્યોતિઃ-વિદ્યુત્ની ચમક હોય, સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી સ્વઃ-સુખની ન-સમાન સૂર્ય હોય, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : યજ્ઞ કરનારા મનુષ્યો સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોના હોમથી સર્વ વાયુ આદિ પદાર્થોને શુદ્ધ કરી શકે છે, જેથી નીરોગતા-રોગરહિતથી સર્વની દીર્ઘ આયુ થાય. (૫૦)

અગ્નિં યુનંજિમ્ શવસા ઘૃતેન દિવ્યઃ સુપર્ણ વયસા બૃહન્તમ્ ।

તેન વયં ગમેમ બ્રહ્નસ્ય વિષ્ટપથ્સ્વો રુહાણા ઽ અધિ નાકમુત્તમમ્ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હું વયસા-આયુની બૃહન્તમ્-મહાન, દિવ્યમ્-શુભગુણોમાં પ્રસિદ્ધ થનાર, સુપર્ણમ્-ઉત્તમ પાલન અને પૂર્તિ કરનાર, અગ્નિમ્-અગ્નિને શવસા-બળદાયક ઘૃતેન-ઘી આદિ સુગંધિત પદાર્થોથી યુનંજિમ્-યુક્ત કરું છું.

તેન-તેથી સ્વઃ-સુખથી સ્નાણાઃ-આરૂઢ થયેલા વયમ્-અમે અધ્નસ્ય-મહાન વિષ્ટપમ્-જેથી સામાન્ય અને ભાવથી પ્રવિષ્ટ થયેલા જીવોનું પાલન થાય છે, તે વ્યવહારને અને ઉત્તમમ્-શ્રેષ્ઠ નાકમ્-દુઃખરહિત એવું સુખ રૂપ સ્થાન =મોક્ષને અધિગમેમ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિમાં સંસ્કૃત-વિશુદ્ધ, સુગંધિત આદિથી યુક્ત દ્રવ્યોને નાખીને, વાયુ આદિની શુદ્ધિ દ્વારા સર્વને સુખી કરે છે, તેઓ અતિ ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૧)

ઙ્મૌ તે પક્ષાવજરૌ પતત્રિણૌ યાભ્યાંસ્વ રક્ષાંસ્વપહંસ્વગ્ને ।

તાભ્યાં પતેમ સુકૃતામુ લોકં યત્ર ઽ ઋષયો જગ્મુઃ પ્રથમજાઃ પુરાણાઃ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! તે-આપના જે ઙ્મૌ-એ પતત્રિણૌ-ઉચ્ચશ્રેણીને પ્રાપ્ત થયેલા અજરૌ-અવિનાશી પક્ષૌ-કાર્ય-કારણરૂપ સમીપના પદાર્થ છે, યાભ્યામ્-જેનાથી આપ રક્ષાંસિ-દુષ્ટ પ્રાણીઓ વા દોષોને અપહંસિ-દૂર કરો છો, તાભ્યામ્-તેથી ડ-વિચારપૂર્વક તે સુકૃતામ્-શુભ કર્મો કરનાર સજ્જનોના લોકમ્-જોવા યોગ્ય આનંદને અમે પતેમ-પ્રાપ્ત કરીએ.

યત્ર-જે આનંદમાં પ્રથમજાઃ-સર્વ વ્યાપ્ત પરમેશ્વરમાં પ્રસિદ્ધ વા અતિ વિસ્તૃત વેદમાં પ્રસિદ્ધ અર્થાત્ તેને જાણવાથી કીર્તિ પ્રાપ્ત કરેલ પુરાણાઃ-પ્રથમ અધ્યયન સમયમાં નવીન ઋષયઃ-વેદાર્થ વેતા ઋષિઓ જગ્મુઃ-પહોંચ્યા છે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ આપ વિદ્વાનજનો દોષોનો નાશ કરીને, ધર્મ આદિ ઉત્તમ ગુણોને શ્રદ્ધા કરીને તથા ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરીને આનંદયુક્ત બને છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ તેને પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનવું

જોઈએ. (૫૨)

इन्दुर्दक्षः श्येन ऽ ऋतावा हिरण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः ।

महान्तस्रधस्थे ध्रुव ऽ आ निषत्तो नमस्तेऽअस्तु मा मा हिंसीः ॥ ५३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન સભાપતિ ! જે આપ **इन्दुः**-ચન્દ્રમાની સમાન શીતલ-આદ્ર સ્વભાવ યુક્ત, **दक्षः**-બળ અને ચતુરતાયુક્ત, **श्येनः**-બાજ પક્ષી સમાન પરાક્રમી, **ऋतावा**-સત્યથી સંબંધ રાખનાર, **हिरण्यपक्षः**-સુવર્ણનો સ્વીકાર કરનાર, **शकुनः**-શક્તિમાન, **भुरण्युः**-સર્વના પાલક, **महान्**-મહાન છો, **स्रधस्थे**-સભા સ્થાનમાં **आनिषत्तः**-નિરંતર વિરાજમાન **ध्रुवः**-નિશ્ચલ બનીને **मा**-મને **हिंसीः**-મારો **मा**-નહિ, **ते**-આપને માટે અમારો **नमः**-સત્કાર-નમસ્કાર **अस्तु**-મળે. (૫૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં વિદ્વાનજનો સ્થિર બનીને સર્વ વિદ્યાર્થીઓને સુશિક્ષિત કરે, જેથી તેઓ હિંસક બને નહીં. (૫૩)

दिवो मूर्द्धासिं पृथिव्या नाभिरूर्गुपामोषधीनाम् ।

विश्वायुः शर्म सप्रथा नमस्पथे ॥ ५४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ **दिवः**-પ્રકાશ અર્થાત્ પ્રતાપના **मूर्द्धा**-શિર સમાન છો, **पृथिव्याः**-પૃથિવીની **नाभिः**-નાભિ-બંધન સમાન છો, **अपाम्**-જલો તથા **ओषधीनाम्**-ઔષધિઓનાં **ऊर्कः**-રસ સમાન છો, **विश्वायुः**-પૂર્ણ આયુ-સો વર્ષ જીવનાર અને **सप्रथाः**-કીર્તિયુક્ત **असि**-છો, તે આપ પથે-સન્માર્ગના માટે **नमः**-અન્ન, **शर्म**-શરણ અને સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાયવાન, ક્ષમાવાન, ઔષધોનું સેવન કરનારા, યુક્ત આહાર-વિહારવાળા અને જિતેન્દ્રિય હોય છે, તેઓ સો વર્ષની આયુ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૪)

विश्वस्य मूर्द्धन्नधिं तिष्ठसि श्रितः समुद्रे ते हृदयमप्स्वायुरपो दत्तौदधिं भिन्त । दिवस्पृज्न्यादन्तरिक्षात्पृथिव्यास्ततो नो वृष्ट्याव ॥ ५५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ **विश्वस्य**-સમસ્ત સંસારના **मूर्द्धन्**-શિર પર **श्रितः**-વિરાજમાન બનીને સૂર્ય સમાન અધિ + **तिष्ठसि**-અધિકાર પ્રાપ્ત છો, જે તે-આપના **समुद्रे**-અન્તરિક્ષ સમાન વ્યાપક પરમેશ્વરમાં **हृदयम्**-મન અપ્સુ-પ્રાણોમાં **आयुः**-જીવન છો, તે આપ **अपः**-પ્રાણોને **दत्त**-આપો છો, **उदधिम्**-સમુદ્રનું **भिनत्सि**-ભેદન કરો છો.

જેથી સૂર્ય **दिवः**-પ્રકાશથી **अन्तरिक्षात्**-આકાશથી **पृज्न्यात्**-વર્ષાના યોગથી સર્વ ચરાચર પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે **ततः**-તેથી અર્થાત્ સૂર્યની સમાન **नः**-અમારી **अव**-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન સુખોની વર્ષા કરનાર અને ઉત્તમ આચરણવાળા હોય છે, તેઓ સર્વને સુખી કરી શકે છે. (૫૫)

इष्टो यज्ञो भृगुभिराशीर्दा वसुभिः । तस्य नऽइष्टस्य प्रीतस्य द्रविणेहागमेः ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે ભૃગુભિઃ-પરિપૂર્ણ વિજ્ઞાનયુક્ત તથા વસુભિઃ-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાનો દ્વારા આશીર્દાઃ-ઈચ્છા સિદ્ધિને આપનાર યજ્ઞઃ-યજ્ઞ ઇષ્ટઃ-કાર્યો છે, તસ્ય-તે ઇષ્ટસ્ય-કરેલ પ્રીતસ્ય-મનોહર યજ્ઞના સાનિધ્યથી ઇહ-આ સંસારમાં આપ નઃ-અમારા દ્રવિણ-ધનને આ + ગમેઃ-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની સમાન શ્રેષ્ઠ પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં પુષ્કળ શ્રી = ધનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૬)

इष्टोऽअग्निराहुतः पिपर्त्तुं नऽइष्टःहविः । स्वगेदं देवेभ्यो नमः ॥ ५७ ॥

પદાર્થ : હવિઃ-સંસ્કાર કરેલ પદાર્થો દ્વારા આહુતઃ-સારી રીતે તૃપ્ત વા હવન કરેલ ઇષ્ટઃ-સત્કાર કરેલા વા આહુતિઓથી વૃદ્ધિ પામેલ અગ્નિઃ-એ સભા આદિના અધ્યક્ષ વિદ્વાન્ વા અગ્નિ નઃ-અમારા ઇષ્ટમ્-સુખ વા સુખના સાધનોને પિપર્ત્તુ-પૂર્ણ કરે વા અમારી રક્ષા-પાલન કરે ઇદમ્-એ સ્વગા-પોતાના જનોને પ્રાપ્ત થનાર નમઃ-અન્ન વા સત્કાર દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનનાં માટે અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા અગ્નિમાં જે સંસ્કૃત-ઉત્તમ પ્રકારથી તૈયાર કરેલ દ્રવ્ય હોમવામાં આવે છે, તે આ લોકમાં અધિક અન્ન ઉત્પન્ન કરનાર બને છે. તેથી તે અન્ન દ્વારા વિદ્વાનોનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૫૭)

यदाकूतात्समसुस्त्रोद्धदो वा मनसो वा सम्भृतं चक्षुषो वा ।

तदनु प्रेतं सुकृतांमु लोकं यत्रऽऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः ॥ ५८ ॥

પદાર્થ : હે સત્ય અને અસત્યના જિજ્ઞાસુ જનો ! તમે યત્-જે આકૂતાત્-ઉત્સાહથી, હૃદઃ-હૃદયથી, વા-અથવા પ્રાણથી, મનસઃ-મનથી, વા-અથવા બુદ્ધિ આદિથી, ચક્ષુષઃ-નેત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી વા-અથવા શ્રોત આદિ ઇન્દ્રિયોથી સમ્ભૃતમ્-સારી રીતે ધારણ કરેલ છે અર્થાત્ નિશ્ચય પૂર્વક ઠીક જોયેલું, સાંભળેલું તથા અનુમાન કરેલું છે, તત્-તે સમસુસ્ત્રોત્-ઉત્તમ રીતિથી પ્રાપ્ત કરો.

તેથી અમારા પ્રથમજાઃ-અમારી અપેક્ષા પ્રથમ ઉત્પન્ન થયેલાં પુરાણાઃ-અમારાથી પ્રાચીન ઋષયઃ-વેદ વિદ્યાના વેતા પરમ યોગી ઋષિજન યત્ર-જ્યાં જગ્મુઃ-પહોંચ્યા છે, તે સુકૃતામ્-સુકૃતિ મોક્ષ ઇચ્છુક સજજનોને ડ-જ લોકમ્-પ્રત્યક્ષ સુખ સમૂહ વા મોક્ષપદને અનુપ્રેત-સુખપૂર્વક પ્રાપ્ત કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય જાણવા ઇચ્છે, ત્યારે (૧) ઇશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ, (૨) સૃષ્ટિક્રમ, (૩) પ્રત્યક્ષ આદિ પ્રમાણો, (૪) આપ્તજનોનું આચરણ અને (૫) આત્મા તથા મનને અનુકૂળ હોય, તે તે સત્ય અને [તેથી વિપરીત] અન્ય જે હોય તે અસત્ય છે, તેવો નિશ્ચય કરે.

જેઓ આ રીતે ધર્મની પરીક્ષા કરીને આચરણ કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૮)

एतः सधस्थ परि ते ददामि यमावहाच्छेवधिं जातवेदाः ।

अन्वागन्ता यज्ञपतिर्वोऽअत्र तथः स्म जानीत परमे व्योमन् ॥ ५९ ॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વરના જ્ઞાનના જિજ્ઞાસુ જનો ! અને હે સધસ્થ-સમાન સ્થાનમાં રહેનારા સજજનો ! જાતવેદા:-જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત છે, તે વેદાર્થનાં જ્ઞાતા, યજ્ઞપતિ:-યજ્ઞનું પાલન કરનારા સમાન વિદ્યમાન પુરુષ યમ્-જે શેવધિમ્-સુખનિધિ પરમેશ્વરને આવહાત્-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કરે, એતમ્-એને અત્ર-અહીં પરમે-વિશાળ વ્યોમન્-આકાશમાં વ્યાપ્ત પરમાત્માને હું તે-તારા માટે જેમ પરિ + દદામિ-સર્વ રીતે પ્રદાન કરું છું, ઉપદેશ કરું છું તથા અન્વાગન્તા-ધર્મનો અનુગામી હું વ:-તમારા બધાને માટે જે પરમેશ્વરનો સ્મ-ઉપદેશ કરું છું, તમ-તેને તમે જાનીત-જાણો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોને અનુકૂળ આચરણ કરે છે, તેઓ સર્વ વ્યાપક, અન્તર્યામી ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

एतं जानाथ परमे व्योमन्देवाः सधस्था विद रूपमस्य ।

यदागच्छात्पथिभिर्देवयानैरिष्टापूर्ते कृणवाथाविरस्मै ॥ ६० ॥

પદાર્થ : હે સધસ્થા:-સાથે બેઠેલાં દેવા:-વિદ્વાનો તમે પરમે-વિશાળ વ્યોમન-આકાશમાં વ્યાપ્ત એતમ્-એ પરમાત્માને જાનાથ-જાણો. અસ્ય-એના સ્વપ્ન-સત્ય, ચૈતન્યમાત્ર, આનંદમય સ્વરૂપને વિદ-જાણો.

યત્-જે સચ્ચિદાનંદ-લક્ષણ પરમેશ્વરને દેવયાનૈ:-ધાર્મિક વિદ્વાનોના પથિભિ:-માર્ગોથી પુરુષ આગચ્છાત્-પ્રાપ્ત થાય છે, અસ્મૈ-એ પરમાત્મા માટે ઇષ્ટાપૂર્તે-વેદોક્ત યજ્ઞાદિ કર્મ અને તેના સાધક સ્માર્ત કર્મને આવિ:-પ્રકાશિત-પ્રસિદ્ધ કૃણવાથ-કર્યા કરો. (૬૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો વિદ્વાનોનો સંગ, યોગાભ્યાસ અને ધર્માચરણથી પરમેશ્વરને અવશ્ય જાણે, અન્યથા તેઓ યજ્ઞ આદિ ઇષ્ટ તથા સર્વજનોપયોગી નિર્માણ આદિ 'પૂર્ત' ને સિદ્ધ કરી શકતા નથી અને મોક્ષને પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૬૦)

उद् बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सःसृजेथामयं च ।

अस्मिन्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥ ६१ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન ઋત્વિક પુરુષ ! ત્વમ્-તું ઉદ + બુદ્ધ્યસ્વ-ઉઠ, પ્રબોધને પ્રાપ્ત કર, પ્રતિ + જાગૃહિ-યજમાનને અવિદ્યા રૂપ નિદ્રાથી છોડાવીને વિદ્યામાં જાગરુક્ કર, તું ચ-અને અયમ્-એ બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ કરનાર યજમાન બન્ને ઇષ્ટાપૂર્તે-યજ્ઞ સિદ્ધિ કર્મ અને તેની સામગ્રીને સંસૃજેથામ્-ઉત્પન્ન કરો.

હે વિશ્વે-સમગ્ર દેવા:-વિદ્વાનો ચ-અને યજમાન:-વિદ્યા આપનારા તથા યજ્ઞ કરનારા યજમાનો !

તમે સર્વ અસ્મિન્-એ સઘસ્થે-એક સ્થાન સભા ભવનમાં ઉત્તરસ્મિન્-ઉત્તમ આસન પર અધિ + સીદત-બેસો. (૬૧)

ભાવાર્થ : જે ચૈતન્યવાળા બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થી હોય, તેને અધ્યાપકોએ ઉત્તમ રીતિથી ભણાવવા જોઈએ.

જે વિદ્યા પ્રાપ્તિના ઇચ્છુક હોય, જે અધ્યાપક પદને યોગ્ય આચરણયુક્ત [પ્રધાન અધ્યાપક] હોય અને જે તેને આધીન અધ્યાપકો હોય, તેઓ પરસ્પર પ્રેમથી નિરંતર વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે.

જેઓ તેથી ભિન્ન અન્ય પ્રશંસનીય વિદ્વાન્ હોય, તેઓ તેની નિરંતર પરીક્ષા કરતા રહે, જેથી એ વિદ્યાની વૃદ્ધિમાં નિરંતર પ્રયત્નશીલ રહે.

ઋત્વિક્ અને યજમાન આદિ પણ તેવા જ હોય. (૬૧)

येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम् ।

तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥ ६२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી ! તું येन-જે ભણવાથી સહસ્રમ્-હજારો-અસંખ્ય પ્રકારના અતુલ બોધને તથા સર્વવેદસમ્-સર્વ વેદોને જણાવનાર વિદ્વાનને વહસિ-પ્રાપ્ત કરે છે અને येन-જે ભણાવવાથી બીજાને પ્રાપ્ત થાય છે તેન-તેથી ઇમમ્-એ યજ્ઞમ્-અધ્યયન-અધ્યાપન રૂપ યજ્ઞને ન:-અમને દેવેષુ-દિવ્યગુણો વા વિદ્વાનોમાં સ્વ:-સુખને ગન્તવે-પ્રાપ્ત કરવા માટે નય-પ્રાપ્ત કર અથવા પ્રાપ્ત કરાવ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો ધર્મના આચરણથી તથા કપટરહિત બનીને વિદ્યા આપે તથા શ્રદ્ધા કરે છે, તેઓ સુખના ભાગી બને છે. (૬૨)

प्रस्तरेण परिधिना स्रुचा वेद्यां च बर्हिषा ।

ऋचेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे ॥ ६३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ વેદ્યા-જેમાં હોમ કરવામાં આવે છે. તે વેદીથી, સ્રુચા-હોમનાં સાધનોથી, બર્હિષા-ઉત્તમ ક્રિયાથી, પ્રસ્તરેણ-આસનથી, પરિધિના-જે સર્વત્રથી ધારણ કરવામાં આવે તે યજુર્વેદથી ચ-તથા ઋચ્ચા-સ્તુતિ વા ઋગ્વેદ આદિથી ઇમમ્-એ પદાર્થમય અર્થાત્ જેમાં શ્રેષ્ઠ ભોજનને યોગ્ય પદાર્થો હોમવામાં આવે છે તે યજ્ઞમ્-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞને દેવેષુ-દિવ્ય પદાર્થો વા વિદ્વાનોમાં ગન્તવે-પ્રાપ્ત થવા માટે સ્વ:-સાંસારિક સુખ ન:-અમને નય-પ્રાપ્ત કરાવો. (૬૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો ધર્મથી પ્રાપ્ત પદાર્થો તથા વેદની રીતિથી સાંગોપાંગ યજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સર્વ પ્રાણીઓનાં ઉપકારી બને છે. (૬૩)

यद्दत्तं यत्परादानं यत्पूर्त्तं याश्च दक्षिणाः ।

तदग्निर्वैश्वकर्मुणः स्वर्देवेषु नो दधत् ॥ ६४ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ વિદ્વાન્ ! આપે યત્-જે દત્તમ્-ઉત્તમ ધર્માત્માઓને પદાર્થોનું સમર્પણ, વા યત્-જે પરાદાનમ્-અન્યોથી શ્રદ્ધા, યત્-જે પૂર્તમ્-પૂર્ણ સામગ્રી યાશ્ચ-અને જે કર્મ અનુસાર દક્ષિણા:-દક્ષિણા

=દાન આપવામાં આવે છે, તત્-તે સર્વને તથા સ્વ:-ઈન્દ્રિયોના સુખોને, વૈશ્વકર્મણ:-જેના સમગ્ર કર્મ વિદ્યમાન છે, તે અગ્નિ:-અગ્નિ સમાન ગૃહસ્થ વિદ્વાન્ આપ દેવેષુ-દિવ્ય ધર્મ સંબંધી વ્યવહારોમાં ન:-અમને દધત્-સ્થાપિત કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ અને સ્ત્રી ગૃહાશ્રમ કરવાની ઈચ્છા કરે, તેઓ વિવાહથી પૂર્વે પ્રગલ્ભતા અર્થાત્ પોતાનામાં પ્રૌઢતા-બળ અને પરાક્રમ આદિ સામગ્રી સિદ્ધ કરીને, યુવાવસ્થામાં સ્વયંવર વિધિથી અનુકૂળ વિવાહ કરીને, ધર્મપૂર્વક દાન, આદાન = લેવું, માન, સન્માન આદિ વ્યવહારો કરે. (૬૪)

યત્ર ધારાઽઅનપેતા મધોઽર્ઘ્નસ્ય ચ યાઃ ।

તદ્ગ્નિર્વૈશ્વકર્મણઃ સ્વર્દેવેષુ નો દધત્ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જે યજ્ઞમાં મધો:-મધુરાદિ ગુણયુક્ત સુગંધિત દ્રવ્યોની ચ-અને ઘૃતસ્ય-ઘૃતની યા:-જે અનપેતા:-પૃથક્-પૃથક્ ધારા:-ધારા-પ્રવાહને વિદ્વાન્ લોકો કરે છે, તત્-તે ધારાઓથી વૈશ્વકર્મણ:-સર્વ કર્મોના નિમિત્ત અગ્નિ:-અગ્નિ ન:-અમારા માટે દેવેષુ-દિવ્ય વ્યવહારોમાં સ્વ:-સુખને દધત્-ધારણ કરે છે. (૬૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વેદી આદિ બનાવીને, સુગંધિત અને મિષ્ટાદિથી યુક્ત ખૂબજ ઘી નો અગ્નિમાં હોમ કરે છે, તેઓ સર્વ રોગોનું નિવારણ કરીને, અતુલ સુખને ઉત્પન્ન કરે છે. (૬૫)

અગ્નિરસ્મિ જન્મના જાતવેદા ઘૃતં મે ચક્ષુરમૃતં મઽઆસન્ ।

અર્કસ્ત્રિધાતૂ રજસો વિમાનોઽજસ્રો ઘર્મો હવિરસ્મિ નામ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : હું જન્મના-જન્મથી જાતવેદા:-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન અસ્મિ-હું.

જેમ અગ્નિના ઘૃતમ્-ઘૃત આદિ ચક્ષુ:-પ્રકાશક છે, તેમ મે-મારા માટે બનો.

જેમ અગ્નિમાં, સુસંસ્કૃત-શુદ્ધ હવિ:-હોમ યોગ્ય દ્રવ્યો હોમાતાં અમૃતમ્-સર્વ રોગનાશક આનંદપ્રદ બને છે અર્થાત્ અમૃતરૂપ ભોજ્ય પદાર્થ બની જાય છે, તેમ મે-મારા આસન્-મુખમાં અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

જેમ ત્રિધાતુ:-સત્વ, રજ અને તમો ગુણ તત્વ જેમાં છે, તે રજસ:-લોક-લોકાન્તરોને વિમાન:-વિમાન-યાનની સમાન ધારણ કરીને, અજસ્ર:-નિરંતર ગમનશીલ, ધર્મ:-પ્રકાશની સમાન યજ્ઞ કે જેથી સુગંધનું ગ્રહણ થાય છે, અર્ક:-જે સત્કાર-પૂજાના સાધન તરીકે નામ-પ્રસિદ્ધ છે, તે સંશોધિત હવિ:-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ છે, તેમ હું અસ્મિ-હું. (૬૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ હોમવામાં આવેલ હવિને વાયુમાં ફેલાવીને, દુર્ગંધને દૂર કરીને, સુગંધને પ્રકટ કરીને તથા રોગોનો મૂળ સહિત નાશ કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૬૬)

ઋચો નામાસ્મિ યજૂઃષિ નામાસ્મિ સામાન્નિ નામાસ્મિ । યેઽઅગ્નયઃ પાઞ્ચજન્યાઽઅસ્યાં પૃથિવ્યામધિ । તેષામસિ ત્વમુત્તમઃ પ્ર નો જીવાતવે સુવ ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે હું ઋચઃ-ઋચાઓ [ઋગ્વેદ]ના નામ-નામથી પ્રસિદ્ધકર્તા છું, યજૂષિ-યજુર્વેદના નામ-નામથી પ્રખ્યાતિકર્તા અસ્મિ-છું, સામાન્નિ-સામવેદના મંત્રગાનના નામ-નામથી પ્રકાશકર્તા અસ્મિ-છું, એથી તે વેદવિદ્યાનું મારાથી ગ્રહણ કર.

યે-જે અસ્યામ્-આ પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં પાઞ્ચજન્યાઃ-મનુષ્યોને હિતકારી અગ્નયઃ-અગ્નિ અધિ-સર્વોપરિ છે, તેષામ્-તેમાં ત્વમ્-તું ઉત્તમઃ-અતિ શ્રેષ્ઠ અસિ-છે, તે તું નઃ-અમારા જીવાતવે-જીવન માટે સત્કર્મોમાં પ્ર + સુવ-પ્રેરિત કર. (૬૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઋગ્વેદ ભણે છે તે ઋગ્વેદી, જે યજુર્વેદ ભણે છે તે યજુર્વેદી, જે સામવેદ ભણે છે તે સામવેદી અને જે અથર્વવેદ ભણે છે તે અથર્વવેદી નામથી પ્રસિદ્ધ થાય છે.

જે બે વેદોને ભણે છે તે દિવેદી, જે ત્રણ વેદોને ભણે છે તે ત્રિવેદી અને જે ચારે વેદોને ભણે છે તે ચતુર્વેદી કહેવાય છે.

જે કોઈપણ વેદને ભણતો નથી તે કોઈપણ સંજ્ઞા = ઉપાધિને પ્રાપ્ત કરતો નથી.

જે વેદજ્ઞાતા છે, તે અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞો દ્વારા સર્વનું હિત કરે જેથી ઉત્તમ યશવાન બને અને સર્વ પ્રાણીઓ દીર્ઘાયુ બને. (૬૭)

વાર્ત્રહત્યાય શર્વસે પૃતનાષાહ્યાય ચ । ઇન્દ્ર ત્વાર્ત્તયામસિ ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ ! જેમ અમે વાર્ત્રહત્યાય-વિરુદ્ધ ભાવથી વર્તમાન શત્રુને મારવામાં કુશળ, શર્વસે-શ્રેષ્ઠ બળ, પૃતનાષાહ્યાય-જેનાથી શત્રુ સેનાનું બળ સહન કરવામાં આવે તેથી ચ-અને અન્ય યોગ્ય સાધનોથી યુક્ત ત્વા-તને આવર્ત્તયામસિ-ચારે બાજુથી યથાયોગ્ય પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ તું યથાયોગ્ય પ્રવૃત્ત થા. (૬૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ પુરુષ-મેઘ નાશક સૂર્ય સમાન શત્રુઓને હણવા માટે શૂરવીર સેનાનો સત્કાર કરે છે, તે સદા વિજયી બને છે. (૬૮)

સહદાનુમ્પુરુહૂત ક્ષિયન્તમહસ્તમિન્દ્ર સમ્પિણક્ કુર્નારુમ્ ।

અભિ વૃત્રં વર્દ્ધમાનં પિયારુમ્પાદમિન્દ્ર ત્વસાં જઘન્થ ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે પુસ્તૂત-અનેક વિદ્વાનોના સત્કારને પ્રાપ્ત ઇન્દ્ર-શત્રુનાશક સેનાપતિ ! જેમ સૂર્ય સહદાનુમ્-સાથ આપનાર, ક્ષિયન્તમ્-આકાશમાં નિવાસ કરનાર, કુર્નારુમ્-શબ્દ કરનાર, અહસ્તમ્-હાથ રહિત પિયારુમ્-પાન કરનાર, અપાદમ્-પાદેન્દ્રિય રહિત અભિવર્દ્ધમાનમ્-સર્વત્ર ગતિ કરનાર, વૃત્રમ્-મેઘને-વાદળાંઓને સમ્પિણક્-સારી રીતે ઇન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! આપ શત્રુઓને ત્વસા-

બળથી જઘન્ય-મારો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્ય સમાન પ્રતાપી હોય છે, તે અજાતશત્રુ-શત્રુરહિત બને છે. (૬૯)

વિ નંડન્દ્ર મૃધો જહિ નીચા યચ્છ પૃતન્યતઃ ।

યોઽઅસ્માંરઽઅભિદાસત્યધરં ગમયા તમઃ ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ બળયુક્ત સેનાપતિ ! તું મૃધઃ-સંગ્રામોને વિ + જહિ-વિશેષ કરીને જીત, પૃતન્યતઃ-સેનાયુક્ત નઃ-અમારા શત્રુઓને નીચા-નીચ ગતિને યચ્છ-પ્રાપ્ત કરાવ, યઃ-જે અસ્માન્-અમારો અભિદાસતિ-નાશ કરવાની ઈચ્છા કરે છે, તેને અધરમ્-અધોગતિ રૂપ તમઃ-અંધકારને ગમય-પ્રાપ્ત કર.

ભાવાર્થ : સેનાપતિએ સંગ્રામ જીતવો જોઈએ, નીચકર્મ કરનારને પકડવા જોઈએ અને રાજા તથા પ્રજાનો વિરોધ કરનારને કઠોર દંડ આપવો જોઈએ. (૭૦)

મૃગો ન ભીમઃ કુચરો ગિરિષ્ઠાઃ પરાવતઽઆજગન્થા પરસ્યાઃ ।

સૃકઃસંશાય પવિર્મિન્દ્ર તિગ્મં વિ શત્રૂન્તાહિ વિ મૃધો નુદસ્વ ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાપતિ ! તું કુચરઃ-કુટિલ ગતિ ચાલનારા, ગિરિષ્ઠાઃ-પર્વતોમાં રહેનારા, ભીમઃ-ભયંકર મૃગઃ-સિંહની ન-સમાન પરાવતઃ-દૂર દેશનાં શત્રુઓને આજગન્થ-ચારે બાજુથી ઘેરી, પરસ્યાઃ-શત્રુની સેનાપર તિગ્મમ્-અતિ તીવ્ર પવિર્મ-દુષ્ટોને દંડથી પવિત્ર કરનારા સૃકમ્-વજ્ર સમાન શસ્ત્રને સંશાય-સમ્યક્ તીવ્ર કરીને શત્રુન્-શત્રુઓને વિતાહિ-ફટકારીને અને મૃધઃ-સંગ્રામોને જીતીને વિ + નુદસ્વ-જીતીને શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં પ્રેરિત કર. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે સેનાના પુરુષ = સૈનિક સિંહ સમાન પરાક્રમ કરીને તીક્ષ્ણ શસ્ત્રોથી શત્રુસેનાના અંગોને કાપીને સંગ્રામોને જીતે છે, તે અનુપમ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નીચ હૃદયવાળા ભીરુ લોકો વિજય સુખને કદીપણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૭૧)

વૈશ્વાનરો નંડકૃતયઽઆ પ્રયાતુ પરાવતઃ ।

અગ્નિર્નિઃ સુષ્ટુતીરુપ ॥ ૭૨ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ તથા સભાપતિ ! જેમ વૈશ્વાનરઃ-સંપૂર્ણ નરોમાં વિરાજમાન અગ્નિઃ-સૂર્યરૂપ અગ્નિ પરાવતઃ-દૂર દેશસ્થ સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ આપ કૃતયે-રક્ષા આદિ માટે નઃ-અમારી સમીપ આ + પ્ર + યાતુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ.

જેમ અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ સર્વમાં વ્યાપક થઈને સમીપસ્થ રહે છે, તેમ તું નઃ-અમારી સુષ્ટુતીઃ-ઉત્તમ

સ્તુતિઓને ઉપશ્રવણુ-સારી રીતે સાંભળ. (૭૨)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન દૂર રહીને પણ ન્યાયથી સર્વ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે. અને જેમ દૂર રહેલા સદ્ગુણોથી સંપન્ન પુરુષ પ્રશંસિત બને છે, તેમ રાજપુરુષે પણ બનવું જોઈએ. (૭૨)

પૃષ્ઠો દિવિ પૃષ્ઠોઽઅગ્નિઃ પૃથિવ્યાં પૃષ્ઠો વિશ્વાઽઓષધીરાવિવેશ ।

વૈશ્વાનરઃ સહસા પૃષ્ઠોઽઅગ્નિઃ સ નો દિવા સ રિષસ્પાતુ નક્તમ્ ॥ ૭૩ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોથી જે દિવિ-પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યમાં પૃષ્ઠઃ-જાણવા યોગ્ય અગ્નિઃ-અગ્નિ, પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં પૃષ્ઠઃ-જાણવા યોગ્ય અગ્નિ, જલ અને વાયુમાં પૃષ્ઠઃ-જાણવા યોગ્ય અગ્નિઃ-વિદ્યુત્, સહસા-બળાદિ ગુણોથી યુક્ત, વૈશ્વાનરઃ-વિશ્વમાં પ્રકાશમાન પૃષ્ઠઃ-જાણવા યોગ્ય અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ વિશ્વાઃ-સમગ્ર ઓષધીઃ-ઔષધિઓમાં આ + વિવેશ-પ્રવિષ્ટ પામે છે.

સઃ-તે અગ્નિ દિવા-દિવસ અને સઃ-તે અગ્નિ નક્તમ્-રાત્રિમાં જેમ રક્ષા કરે છે, તેમ સેનાના પતિ આપ નઃ-અમારી રિષઃ-હિંસક પુરુષથી નિરંતર પાતુ-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આકાશમાં સ્થિત સૂર્યને, પૃથિવીમાં રહેલ અગ્નિને અને સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને વિદ્વાનો દ્વારા નિશ્ચિત જાણીને કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેઓ શત્રુઓથી નિર્ભય રહે છે. (૭૩)

અશ્યામ તં કામમગ્ને તવોતીઽઅશ્યામ રચિઃરચિવઃ સુવીરમ્ ।

અશ્યામ વાજમ્ભિ વાજયન્તોઽશ્યામ દ્યુમ્નમ્જરાજરં તે ॥ ૭૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-યુદ્ધ વિદ્યા વિશારદ સેનાપતિ ! અમે તવ-તારી કૃતી-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી તમ્-તે કામમ્-કામનાને અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે રચિવઃ-પ્રશસ્ત ધનયુક્ત ! સુવીરમ્-ઉત્તમ વીરોની પ્રાપ્તિના નિમિત્ત રચિમ્-રાજ્ય લક્ષ્મીને અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ.

વાજયન્તઃ-સંગ્રામ કરતા કરાવતા અમે વાજમ્-સંગ્રામના વિજયને સારી રીતે અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે અજર-વૃદ્ધત્વથી રહિત સેનાપતિ ! અમે તે-તારા પ્રતાપથી અજરમ્-અક્ષય દ્યુમ્નમ્-ધન અને કીર્તિને અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૭૪)

ભાવાર્થ : પ્રજાના મનુષ્યોએ રાજપુરુષોની રક્ષાથી અને રાજપુરુષ પ્રજાજનોની રક્ષાથી પરસ્પર સર્વ કામનાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૭૪)

વ્યં તૈઽઅઘ રરિમા હિ કામમુત્તાનહસ્તા નમસોપસઘ્વા ।

યજિષ્ઠેન્ મનસા યક્ષિ દેવાનસ્ત્રેઘતા મન્મના વિપ્રોઽઅગ્ને ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ઉત્તાનહસ્તા:-ઉત્કૃષ્ટતાથી અભય આપનાર હાથવાળા વયમ્-અમે તે-આપના નમસા-સત્કારથી ઉપસઘ્વા-સમીપ પ્રાપ્ત થઈને અઘ-આજે કામમ્-કામનાને હિ-નિશ્ચયથી રરિમ-પ્રદાન કરીએ છીએ.

જેમ વિપ્ર:-બુદ્ધિમાન અસ્ત્રેઘતા-આવાગમન અર્થાત્ ચંચળતા રહિત-સ્થિર, મન્મના-બળ અને યજિષ્ઠેન-અત્યંત સંયમયુક્ત મનસા-ચિત્તથી દેવાન્-વિદ્વાનો અને શુભગુણોને યજતિ-પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ તું યક્ષિ-શુભ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ અમે પણ પ્રવૃત્ત બનીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થ દ્વારા કામના-ઈચ્છા પૂર્ણ કરનારા હોય, તેઓ વિદ્વાનોના સંગથી તેને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૭૫)

ધામ્ચ્છદ્ગ્નિરિન્દ્રો બ્રહ્મા દેવો બૃહસ્પતિઃ ।

સચૈતસો વિશ્વૈ દેવા યજ્ઞં પ્રાવન્તુ નઃ શુભે ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! દેવ:-વિદ્વાન્ ધામ્ચ્છદ્-જન્મસ્થાન નામનો વિસ્તાર કરનાર, અગ્નિ:-પાવક, ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ની સમાન મંત્રી અને રાજા, બ્રહ્મા-ચારે વેદોને જાણનારા, બૃહસ્પતિ:-વેદવાણીનું પઠન-પાઠનથી પાલન કરનારા, સચૈતસઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત, વિશ્વૈ, દેવા:-સર્વ વિદ્વાનો નઃ-અમારા શુભે-કલ્યાણને માટે યજ્ઞમ્-વિજ્ઞાન યોગરૂપ ક્રિયાને પ્ર, અવન્તુ-સારી રીતે કામના કરે. (૭૬)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓના કલ્યાણ-સુખ માટે નિરંતર ઉપદેશ કરે. (૭૬)

ત્વં યવિષ્ઠ દાશુષો નૃંઃ પાહિ શૃણુધી ગિરઃ ।

રક્ષાં તોકમુત ત્મના ॥ ૭૭ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ-અત્યંત યુવક રાજન્ ! ત્વમ્-તું દાશુષઃ-વિદ્યાદાતા નૃન્-મનુષ્યોની પાહિ-રક્ષા કર; તેની ગિરઃ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીઓને શૃણુધિ-સાંભળ.

જે વીર પુરુષ યુદ્ધમાં મૃત્યુ પામે તેના તોકમ્-નાના બાળકોની ઉત્-તથા સ્ત્રી આદિની પણ ત્મના-આત્મીયતાથી રક્ષ-રક્ષા કર. (૭૭)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિએ બે કામ અવશ્ય કરવા જોઈએ. એક વિદ્વાનોનું પાલન અને તેના ઉપદેશોનું શ્રવણ કરવું.

બીજુ યુદ્ધમાં માર્યા ગયેલાઓનાં સંતાનો અને સ્ત્રી આદિનું પાલન કરે. આ રીતે આચરણ કરનાર

લોકોને સદા વિજય, લક્ષ્મી અને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. તેમ વિદ્વાનોએ ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ. (૭૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ગણિત-વિદ્યા, રાજા-પ્રજા, પઠન-પાઠન કરાવનારનાં કર્મ આદિનાં વર્ણનથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થોની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થોની સાથે સંગતિ છે; એમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ અષ્ટાદશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથૈકોનવિંશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સ્વાદ્વીં ત્વાં સ્વાદુનાં તીત્રાં તીત્રેણામૃતામૃતૈન । મધુમતીં મધુમતા સૃજામિ
સસોમૈન । સોમોઽસ્યશ્વિભ્યાં પચ્યસ્વ સરસ્વત્યૈ પચ્યસ્વેન્દ્રાય સુત્રામ્ણો પચ્યસ્વ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વૈદ્યરાજ ! જે તું સોમ:-સોમ સમાન ઐશ્વર્યથી યુક્ત અસિ-છે. તે ત્વા-તને ઔષધિઓની વિદ્યામાં સમ્-સૃજામિ-સારી રીતે ઉત્તમ શિક્ષાવાન બનાવું છું.

જેમ હું જે સ્વાદુના-મધુર આદિ રસોની સાથે સ્વાદ્વીમ્-ઉત્તમ સ્વાદથી યુક્ત તીત્રેણ-શીઘ્રકારી તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત તીત્રામ્-તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળી, અમૃતૈન-સર્વ રોગોના નાશક ગુણથી યુક્ત, અમૃતામ્-નાશરહિત, મધુમતા-સ્વાદિષ્ટ ગુણયુક્ત, સોમેન-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ સહિત મધુમતીમ્-પ્રશસ્ત મધુર ગુણ યુક્ત ઔષધિને સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું; તેમ તું એને અશ્વિભ્યામ્-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષોના માટે પચ્યસ્વ-પકાવીને, સરસ્વત્યૈ-વિદ્યા અને સુશિક્ષિત વાણી યુક્ત સ્ત્રીને માટે પચ્યસ્વ-પકાવ, સુત્રામ્ણો-સર્વની દુઃખોથી રક્ષા કરનાર, ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યથી યુક્ત પુરુષ માટે પચ્યસ્વ-પકાવ. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વૈદ્યકશાસ્ત્રની રીતિથી અનેક મધુર આદિ પ્રશસ્ત સ્વાદોથી યુક્ત અનેક ઔષધોનું નિર્માણ કરીને, તેના સેવનથી સ્વાસ્થ્ય બનાવીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧)

પરીતો ષિઞ્ચતા સુતસોમો ય ઽ ઉત્તમઃ હ્રિવિઃ ।

દ્ધન્વાન્ યો નર્યોઽપ્સ્વન્તરા સુષાવ્ સોમમદ્રિભિઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે ઉત્તમમ્-ઉત્તમ હ્રિવિઃ-બાવાને યોગ્ય પદાર્થને સોમ:-શુભ કર્મોમાં પ્રેરણા કરનાર વિદ્યાન્ ઇતઃ-પ્રાપ્ત થાય, ય:-જે નર્યઃ-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ દધન્વાન્-ધારણ કરતા અપ્સુ-જલોની અન્તઃ-મધ્યમાં આસુષાવ્-સિદ્ધ કરે, તે અદ્રિભિઃ-મેઘોમાં સુતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ સોમમ્-ઔષધિગણને તમે પરિ + સિઞ્ચત-સર્વ બાજુથી સીંચીને વૃદ્ધિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ ઔષધિઓને જલમાં રાખીને, તેનું મંથન કરીને, આસવ કાઢીને, એ [આસવ]થી યથોચિત રૂપથી જઠરાગ્નિને પ્રદીપ્ત કરીને, બળ અને આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨)

વાયોઃ પૂતઃ પવિત્રેણ પ્રત્યઙ્ સોમોઽતિદ્રુતઃ । ઇન્દ્રસ્ય યુજ્યઃ સર્વા ॥

વાયોઃ પૂતઃ પવિત્રેણ પ્રાઙ્ સોમોઽતિદ્રુતઃ । ઇન્દ્રસ્ય યુજ્યઃ સર્વા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સોમ:-સોમલતાદિ ઔષધિગણ પ્રાઙ્-જે પ્રકૃષ્ટતાથી અતિદ્રુતઃ-શીઘ્રગામી, વાયોઃ-વાયુથી પવિત્રેણ-શુદ્ધ કરનાર કર્મથી પૂતઃ-શુદ્ધ-પવિત્ર, ઇન્દ્રસ્ય-ઈન્દ્રિયોના અધિષ્ઠાતા જીવના યુજ્યઃ-યોગ્ય સર્વા-મિત્રની સમાન રહે છે.

જે સોમ:-સિદ્ધ કરેલી ઔષધિઓનો રસ પ્રત્યઙ્-પ્રત્યક્ષ શરીરોથી યુક્ત થઈને, અતિદ્રુતઃ-અત્યંત

શીઘ્રગામી, વાયોઃ-વાયુથી પવિત્રેણ-પવિત્રતા કરીને પૂતઃ-શુદ્ધ, ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાના યુજ્યઃ-અતિ યોગ્ય સરખા-મિત્રની સમાન છે, તેનું તમે નિરંતર સેવન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે ઔષધિઓ શુદ્ધ સ્થાનમાં, જલમાં અને વાયુમાં ઉત્પન્ન થાય છે, જે જૂના અને નવા રોગોને શીઘ્ર દૂર કરે છે, તેનું મનુષ્યોએ મિત્રની સમાન સેવન કરવું જોઈએ. (૩)

પુનાતિ તે પરિસ્ત્રુતઃ સોમઃ સૂર્યસ્ય દુહિતા । વારેણ શશ્વતા તના ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે તના-વિસ્તૃત પ્રકાશથી સૂર્યસ્ય-સૂર્યની દુહિતા-પુત્રીની સમાન ઉષા શશ્વતા-અનાદિરૂપ વારેણ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ગુણથી તે-તારા પરિસ્ત્રુતમ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત સોમમ્-ઔષધિઓના રસને પુનાતિ-પવિત્ર કરે છે, તે ઉષાકાલમાં તું ઔષધિના રસનું સેવન કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યોદયથી પૂર્વ શૌચ-શુદ્ધિ કરીને અનુકૂળતા અનુસાર ઔષધિનું સેવન કરે છે, તેઓ નીરોગ રહીને સુખી થાય છે. (૪)

બ્રહ્મ ક્ષત્રં પવતે તેજઽન્દ્રિયઃ સુર્યા સોમઃ સુતઽઆસુતો મદાય ।

શુક્રેણ દેવ દેવતાઃ પિપૃઘિ રસેનાન્નં યજમાનાય ધેહિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સુખદાતા વિદ્વાન્ ! જે શુક્રેણ-શીઘ્ર શુદ્ધિ કરનાર વ્યવહારથી મદાય-આનંદ માટે સુર્યા-ઉત્પન્ન થતી ક્રિયાથી સુતઃ-સંપાદિત કરેલ, આસુતઃ-સારી રીતે રોગનિવારણ માટે સેવન કરેલી સોમઃ-ઔષધિઓનો રસ, તેજઃ-પ્રગલ્ભતા, ઇન્દ્રિયમ્-મન આદિ ઇન્દ્રિયને, બ્રહ્મ-વિદ્વાનોના કુળને તથા ક્ષત્રમ્-ન્યાયકારી ક્ષત્રિયકુળને પવતે-પવિત્ર કરે છે, તે રસેન-રસથી યુક્ત અન્નમ્-ભોજનને યજમાનાય-ધર્માત્મા યજમાનને માટે ધેહિ-ધારણ કર, દેવતાઃ-વિદ્વાનોને પિપૃઘિ-તૃપ્ત કર અર્થાત્ પ્રસન્ન કર. (૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં કોઈ મનુષ્યે નીરસ અન્નનું સેવન ન કરવું જોઈએ, પરંતુ સદા વિદ્યા, વીરતા, બળ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરનાર મહા ઔષધિઓનાં સારભાગોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

**કુવિદુઙ્ગ યવમન્તો યવં ચિદ્વથા દાન્ત્યનુપૂર્વ વિયૂયં ઇહેઠૈષાં કૃણુહિ ભોજનાનિ
યે બર્હિષો નમઽક્તિં યજન્તિ । ઉપયામગૃહીતોઽસ્યશ્વિભ્યાં ત્વા સરસ્વત્યૈ ત્વેન્દ્રાય
ત્વા સુત્રામ્ણાંઽણ તે યોનિસ્તેજસે ત્વા વીર્યાય ત્વા બલાય ત્વા ॥ ૬ ॥**

પદાર્થ : હે અહગ-મિત્ર ! યે-જે બર્હિષઃ-અન્ન આદિની પ્રાપ્તિ કરાવનારા યવમન્તઃ-જવ આદિ ધાન્યવાળા ખેડૂતો નમઽક્તિમ્-અન્નાદિની ઉચિત વૃદ્ધિને માટે ઉપદેશ યજન્તિ-આપે છે, ણ્યામ્-તેના પદાર્થો અને ખેડૂતોના ઇહેઠ-આ સંસારમાં અને વ્યવહારમાં તું ભોજનાનિ-પાલન વા ભોજન-પાન આદિ કૃણુહિ-કર.

યથા-જેમ એ ખેડૂતો યવમ્-જવને ચિત્-પણ વિયૂય-કણસલાથી જુદા કરવા અનુપૂર્વમ્-અનુકૂળતાથી પ્રથમ દાન્તિ-કાપે છે, તેમ તું એના વિભાગથી-ધનથી કુવિત્-શ્રેષ્ઠ બળ પ્રાપ્ત કર.

જે તે-તારી ઉન્નતિનું **एषः-એ યોનિः**-કારણ છે, તે ત્વા-તને **अश्विभ्याम्-પ્રકાશ-દ્યુલોક** અને પૃથિવીની વિદ્યા માટે ત્વા-તને **सरस्वत्यै-ખેતી** કાર્યની પ્રચારક ઉત્તમ વાણી માટે, ત્વા-તને **इन्द्राय-શત્રુઓનાં** વિદારણ માટે તથા **सुत्राम्णो-શ્રેષ્ઠ રક્ષક** માટે, ત્વા-તને **तेजसे-પ્રગલ્ભતા** માટે, ત્વા-તને **वीर्याय-પરાક્રમ** માટે, ત્વા-તને **बलाय-બળ** માટે જે પ્રસન્ન કરે છે, અથવા જે ખેડૂત આદિથી તું **उपयामगृहीतः-શ્રેષ્ઠ** વ્યવહારોથી સ્વીકાર પામેલ **असि-એ**, તેની સાથે તું વિહાર કર. (૬)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ ખેતી આદિ કાર્ય કરનારા, રાજ્યમાં કર આપનારા, પરિશ્રમી લોકોની પ્રેમપૂર્વક રક્ષા કરે છે અને સત્ય ઉપદેશ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સૌભાગ્યશાળી બને છે. (૬)

नाना हि वां देवहितं सदस्कृतं मा ससृक्षाथां परमे व्योमन् । सुरा त्वमसि शुष्मिणी सोमंऽएष मा मा हिंसीः स्वां योनिमाविशन्ती ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો ! નાના-અનેક પ્રકારથી **सदः-સ્થાન કૃતમ્-બનાવેલ દેવહિતમ્**-જે વિદ્વાનોને પ્રિય છે, તે **वाम्-તમને બન્નેને** પ્રાપ્ત થાય.

જે **हि-નિશ્ચયથી** **स्वाम्-પોતાના** **योनिम्-કારણમાં** **आविशन्ती-સારી** રીતે પ્રવેશ કરતી **शुष्मिणी-**બહુ જ બળ આપનારી **सुरा-સોમવલ્લી** આદિ લતા છે, **त्वम्-તે પરમે-ઉત્કૃષ્ટ વ્યોમન્-બુદ્ધિરૂપ** અવકાશમાં વિદ્યમાન **असि-એ**, તેને તમે બન્ને પ્રાપ્ત કરો. માદક દ્રવ્યોનો **संसृक्षाथाम्-સંસર્ગ** મા-કરો નહિ.

હે વિદ્વાનુ પુરુષ ! જે **एषः-એ** **सोमः-સોમ** આદિ મહા ઔષધિઓના ગણ છે, તેને તથા **मा-મને** તું **हिंसीः-નષ્ટ** મા-કર નહિ. (૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો બુદ્ધિ, બળ, આરોગ્ય અને આયુને વધારનારી ઔષધિ રસોનું નિરંતર સેવન કરે છે. તથા માદક દ્રવ્યોનો ત્યાગ કરે છે, તેઓ આ લોક અને પરલોકમાં ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરનારા બને છે. (૭)

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः सारस्वतं वीर्यमैन्द्रं बलम् ।

एष ते योनिर्मोदाय त्वानन्दाय त्वा महसे त्वा ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન ! જે તું **उपयामगृहीतः-ધર્મયુક્ત** યમ સંબંધી નિયમોથી યુક્ત **असि-એ**, જે તે-તારું **एषः-એ યોનિः-ઘર** છે, તે તારા જે **आश्विनम्-સૂર્ય** અને ચન્દ્રમાના રૂપની સમાન **तेजः-તીક્ષ્ણ** અને મૃદુ પ્રકાશ, **सारस्वतम्-વિજ્ઞાનયુક્ત** વાણીની સમાન **वीर्यम्-પરાક્રમ**, **ऐन्द्रम्-વિદ્યુતની** સમાન **बलम्-બળ** છે, તે ત્વા-તને **मोदाय-હર્ષને** માટે ત્વા-તને **आनन्दाय-પરમ સુખને** માટે અને ત્વા-તને **महसे-મહાન પરાક્રમને** માટે સર્વ મનુષ્યો સ્વીકાર કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન તેજસ્વી, વિદ્યામાં પરાક્રમી અને વિદ્યુતની સમાન બળવાન બનીને સ્વયં આનંદમગ્ન રહે છે તથા અન્યોને આનંદ પ્રદાન કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં પરમાનંદનો ભોગ કરનારા બને છે. (૮)

તેજોઽસિ તેજો મયિ ધેહિ વીર્યમસિ વીર્યું મયિ ધેહિ બલમસિ બલું મયિ
ધેહ્યોજોઽસ્યોજો મયિ ધેહિ મન્યુરંસિ મન્યું મયિ ધેહિ સહોઽસિ સહો મયિ ધેહિ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સમગ્ર શુભ ગુણોને ઉત્પન્ન કરનાર રાજન્ ! જે તારામાં તેજ:-તેજ અસિ-છે તે-તેજ:-
તેજને મયિ-મારામાં ધેહિ-ધારણ કર.

જે તારામાં વીર્યમ્-પરાક્રમ અસિ-છે, તે વીર્યમ્-પરાક્રમને મયિ-મારામાં ધેહિ-ધારણ કર.

જે તારામાં બલમ્-બળ અસિ-છે, તે બલમ્-બળને મયિ-મારામાં ધેહિ-ધારણ કર.

જે તારામાં ઓજ:-પ્રાણનું સામર્થ્ય અસિ-છે, તે ઓજ:-સામર્થ્યને મયિ-મારામાં ધેહિ-ધારણ કર.

જે તારામાં મન્યુ:-દુષ્ટો પર ક્રોધ અસિ-છે, તે મન્યુમ્-ક્રોધને મયિ-મારામાં ધેહિ-ધારણ કર.

જે તારામાં સહ:-સહનશીલતા અસિ-છે, તે સહ:-સહનશીલતા મયિ-મારામાં પણ ધેહિ-ધારણ
કર.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો માટે ઈશ્વરની એ આજ્ઞા છે કે, જે શુભ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોને વિદ્વાનો
ધારણ કરે, તેને [તેઓ] અન્યોમાં પણ ધારણ કરાવે.

જેમ દુષ્ટ આચરણ કરનારા પર ક્રોધ કરે, તેમ ધર્માત્માઓ પ્રત્યે નિરંતર પ્રેમ કરે. (૯)

યા વ્યાઘ્રં વિષૂચિકોભૌ વૃકં ચ રક્ષતિ ।

શ્યેનં પંત્રિણં સિંહં સેમં પાત્વંહંસઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : યા-જે વિષૂચિકા-વિવિધ અર્થોને સૂચિત કરનારી રાજાની રાણી વ્યાઘ્રમ્-જે છલાંગ મારીને
મારે છે, તે વાઘ અને વૃકમ્-બકરા આદિને મારનાર વરુ ડમ્બૌ-એ બન્નેને, પંત્રિણમ્-શીઘ્ર ગતિ કરનાર
પક્ષીને, શ્યેનમ્-શીઘ્ર ગતિ કરીને અન્ય પશુઓને મારનાર બાજ પક્ષીને ચ-તથા સિંહમ્-હાથી આદિને
પણ મારનાર દુષ્ટ પશુ-સિંહને મારીને પ્રજાની રક્ષતિ-રક્ષા કરનારી છે, સા-તે રાણી ઇમ્મ-એ રાજાની
અંહસ:-અપરાધથી પાતુ-રક્ષા કરે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે શૂરવીર રાજા સ્વયં વાઘ આદિને મારીને, ન્યાયપૂર્વક પ્રજાની રક્ષા કરીને તથા પોતાની
સ્ત્રીને પ્રસન્ન કરવામાં સમર્થ હોય છે, તેમ રાણી પણ બને.

જેમ ઉત્તમ પ્રિય આચરણથી રાણી પોતાના પતિને પ્રમાદથી છોડાવીને તેને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ
રાજા પણ તેણીને પ્રસન્ન રાખે. (૧૦)

યદાપિપેષ માતરં પુત્રઃ પ્રમુદિતો ધયન્ । એતત્તદગ્નેઽનૃણો ભવામ્યહંતૌ પિતરૌ
મયા । સમ્પૃચ્ સ્થ સં મા ભદ્રેણ પૃઙ્ક્ત વિપૃચ્ સ્થ વિ મા પાપ્મના પૃઙ્ક્ત ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અને-વિદ્વાન્ ! યત્-જે પ્રમુદિત:-અત્યંત આનંદયુક્ત પુત્ર:-પુત્ર દૂધ ધયન્-દૂધ પીતાં
માતરમ્-માતાને આપિપેષ-સર્વત્રથી પીડિત કરે છે, તે પુત્રથી હું અનૃણ:-ઋણરહિત ભવામિ-બનું છું.
જેથી મારા પિતરૌ-માતા અને પિતા બન્ને અહંતૌ-હનન રહિત બનીને મયા-મારાથી ભદ્રેણ-કલ્યાણની

સાથે વ્યવહારપૂર્વક વર્તન કરનાર બને.

હે મનુષ્યો ! તમે સંપૃચ્ઠ:-સત્ય સંબંધી અર્થાત્ ધર્મથી સંયુક્ત સ્થ-રહો, મા-મને કલ્યાણની સાથે સમ્પૃચ્ઠ-સંયુક્ત કરો. પાપ્મના-પાપથી વિપૃચ્ઠ:-પૃથક્ રહેનાર સ્થ-બનો. એથી મા-મને પણ પાપથી વિપૃચ્ઠ-પૃથક્ કરો અને તદેતત્-પરજન્મ અને વર્તમાન જન્મમાં સુખને પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા પુત્રનું પાલન કરે છે, તેમ પુત્રે માતા-પિતાની સેવા કરવી જોઈએ. સર્વેએ એ વાત પર ધ્યાન રાખવું જોઈએ કે, અમે માતા-પિતાની સેવા કરીને પિતૃઋણથી મુક્ત બનીએ.

જેમ વિદ્વાન ધાર્મિક માતા-પિતા પોતાના સંતાનોને પાપાયરણથી પૃથક્ કરીને ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ સંતાનોએ પણ માતા-પિતા પ્રત્યે એ રીતે વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૧૧)

દેવા યજ્ઞમતન્વત ભેષજં ભિષજાશ્વિનાં ।

વાચા સરસ્વતી ભિષગિન્દ્રાયેન્દ્રિયાણિ દર્ધતઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇન્દ્રિયાણિ-ઉત્તમ રીતે વિષય ગ્રહણ કરનારી નેત્ર આદિ ઈન્દ્રિયો અથવા ધનોને દર્ધતઃ-ધારણ કરનાર ભિષક્-ચિકિત્સા આદિ વૈદ્યકશાસ્ત્રના અંગોના જ્ઞાતા વૈદ્ય, સરસ્વતી-આયુર્વેદનું પ્રશસ્ત જ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી સ્ત્રી અને ભિષજા-આયુર્વેદને જાણનાર અશ્વિના-ઔષધ વિદ્યામાં વ્યાપ્તબુદ્ધિ બે ઉત્તમ વિદ્વાન વૈદ્ય એ ત્રણે અને દેવાઃ-ઉત્તમ જ્ઞાનીજન વાચા-વાણીથી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્ય માટે ભેષજમ્-રોગવિનાશક ઔષધરૂપ યજ્ઞમ્-સુખદાયક યજ્ઞને અતન્વત-વિસ્તૃત કરે, તેમ તમે પણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો પથ્ય, ઔષધિ અને બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરીને શરીરનું સ્વાસ્થ્ય, બળ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરતાં નથી, ત્યાં સુધી તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૨)

દીક્ષાયૈ રૂપઃ શઘ્વાણિ પ્રાયણીયસ્ય તોક્માનિ ।

ક્રયસ્ય રૂપઃ સોમસ્ય લાજાઃ સોમાશ્વો મધુ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રાયણીયસ્ય-ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરાવનાર વ્યવહારમાં વિદ્યમાન પુરુષના દીક્ષાયૈ-યજ્ઞના સાધનો અને નિયમોના પાલન માટે સ્વમ્-સુંદર રૂપ છે, તોક્માનિ-સંતાન છે, ક્રયસ્ય-દ્રવ્યોને વેચવાનું સ્વમ્-રૂપ છે, શઘ્વાણિ-શુદ્ધ કરીને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ધાન્ય છે, સોમસ્ય-ઔષધિઓના રસથી યુક્ત લાજાઃ-ફૂલેલા ચોખાના મમરા છે, સોમાશ્વઃ-સોમના અંશ અને મધુ-મધ છે, તેને તમે વિસ્તૃત કરો અર્થાત્ વૃદ્ધિ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞને યોગ્ય સંતાન તથા પદાર્થોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

આતિથ્યરૂપં માસરં મહાવીરસ્ય નગ્નહુઃ ।

રૂપમુપસદામેતત્તિસ્ત્રો રાત્રીઃ સુરાસુતા ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે માસર્મ-જેથી અતિથિજનો મહિનાઓ સુધી રમણ કરે છે, તેવા આતિથ્યસ્ત્રમ્-અતિથિઓનું હોવું વા તેના સત્કારરૂપ વ્યવહાર વા મહાવીરસ્ય-મહાન વીર પુરુષના નગ્નહુઃ-નગ્ન અકિંચનને વસ્ત્રો આદિ આપીને સ્ત્રમ્-સુરૂપ બનાવવા, ઉપસદામ્-ગૃહસ્થ આદિની સમીપ ભોજન આદિ માટે રહેનારા અતિથિઓને તિસ્ત્રઃ-ત્રણ રાત્રિઃ-રાત્રિ નિવાસ કરાવવો. એતત્-એ રૂપ વા સુરા-સોમરસ આસુતા-સર્વ રીતે સિદ્ધ કરેલી ક્રિયા છે, તે સર્વને તમે ગ્રહણ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધાર્મિક વિદ્વાન્ અતિથિઓનો સત્કાર, સંગ અને ઉપદેશોનું શ્રવણ, વીરોનું સન્માન, દરિદ્રોને વસ્ત્ર આદિનું દાન, પોતાના સેવકોને ઉત્તમ નિવાસનું દાન તથા સોમરસની નિરંતર સિદ્ધિ કરે છે. તેઓ “યશસ્વી” બને છે. (૧૪)

સોમસ્ય રૂપં ક્રીતસ્ય પરિસ્તુત્પરિષિચ્યતે ।

અશ્વિભ્યાં દુગ્ધં ભૈષજમિન્દ્રાયૈન્દ્રઃસરસ્વત્યા ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ સરસ્વત્યા-પ્રશસ્ત વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી પત્ની દ્વારા ક્રીતસ્ય-ગ્રહણ કરેલા સોમસ્ય-સોમલતા આદિ ઔષધિગણનું પરિસ્તુત્-સર્વત્રથી સ્તવિત થનાર રસ સ્ત્રમ્-ઉત્તમ સ્વરૂપ, અશ્વિભ્યામ્-વેદ્યક વિદ્યામાં પૂર્ણ બે વિદ્વાનો માટે દુગ્ધમ્-દોહવામાં આવેલા ભૈષજમ્-ઔષધરૂપ દૂધ તથા ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક માટે એન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ સંબંધી વિજ્ઞાન પરિ + શિચ્યતે-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરવામાં આવે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ કન્યાઓ-કુમારીઓએ બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક વ્યાકરણ, વિદ્યા, ધર્મશાસ્ત્ર અને આયુર્વેદ ભણીને સ્વયંવર વિવાહ કરીને, ઉત્તમ ઔષધ તથા ઔષધ સમાન ગુણકારી અન્ન તથા વ્યંજનોને પકાવીને, તેને ઉત્તમ રસોથી સંયુક્ત કરીને, પતિ વગેરેને ભોજન કરાવીને તથા સ્વયં ભોજન કરીને બળ તથા આરોગ્યની નિરંતર ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૧૫)

આસન્દી રૂપઃ રાજાસન્દૈ વેદૈઃ કુમ્ભી સુરાધાની ।

અન્તરઽઉત્તરવેદ્યા રૂપં કારોતરો ભિષક્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યજ્ઞના માટે આસન્દી-સર્વ તરફથી સેવન કરવા યોગ્ય ચોકી, સ્ત્રમ્-ઉત્તમ ક્રિયા, રાજાસન્દૈ-રાજા જેના પર બેસે છે તે વેદૈઃ-સુખદ વેદીના માટે કુમ્ભી-ધાન્ય આદિ પદાર્થો રાખવાની કોઠી, સુરાધાની-સોમરસ રાખવાની સુરાહી, અન્તરઃ-પ્રાણ હેતુ અન્નાદિ પદાર્થો, ઉત્તરવેદ્યાઃ-ઉત્તરની વેદીના સ્ત્રમ્-રૂપને કારોતરઃ-કર્મચારી અને ભિષક્-વૈદ્ય એ સર્વનો સંગ્રહ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે-જે કાર્ય કરવાની ઈચ્છા કરે, તેના સર્વ સાધનોનો સંચય કરે. (૧૬)

વેદ્યા વેદિઃ સમાપ્યતે બર્હિષાં બર્હિરિન્દ્રિયમ્ ।

યૂપેન યૂપ આપ્યતે પ્રણીતોઽઅગ્નિરગ્નિના ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાન્ વેદ્યા-યજ્ઞની સામગ્રીથી વેદિઃ-યજ્ઞભૂમિને, બર્હિષા-મહાન પુરુષાર્થથી બર્હિઃ-વૃદ્ધિ પામેલ ઇન્દ્રિયમ્-ધનને સમાપ્યતે-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે, યૂપેન-મિશ્રિત અથવા પૃથક્-પૃથક્ વ્યવહારથી યૂપઃ-મિશ્રિત રૂપ વ્યવહારના યત્નના ઉદયને, અગ્નિના-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિથી પ્રણીતઃ-અત્યંત સંમિલિત અગ્નિઃ-અગ્નિને આપ્યતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ સાધનોથી સાધનો મિશ્રિત કરીને સમગ્ર સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સાધકતમ સાધનોથી સાધ્ય કાર્યને સિદ્ધ કરવા ઈચ્છે છે, તેઓ જ સાધ્યને સિદ્ધ કરી શકે છે. (૧૭)

હવિર્ધાનં યદશ્વિનાગ્નીંધં યત્સરસ્વતી ।

ઇન્દ્રાયૈન્દ્રઃસદસ્કૃતં પત્નીશાલં ગાર્હપત્યઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ વિદ્વાન્ અશ્વિના-સ્ત્રી અને પુરુષોને યત્-જે હવિર્ધાનમ્-લેવા અને દેવા યોગ્ય શુદ્ધ પદાર્થોના પાત્રોને રચેલ છે, અને યત્-જે સરસ્વતી-વિદ્યુષી સ્ત્રીને આગ્નીધ્રમ્-ઋત્વિજ્ઞને શરણ કરતી તથા વિદ્વાનોને ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્ય અને સુખ પ્રદાન કરનાર પતિના માટે એન્દ્રમ્-ઐશ્વર્ય-સંપન્ન સદઃ-જેમાં રહે છે તે સભા અને પત્નીશાલમ્-પત્ની શાલા-ઘરને વિદ્વાનોએ કૃતમ્-તૈયાર કરેલ છે, તે સર્વ ગાર્હપત્યઃ-ગૃહસ્થ સંયોગી-સંબંધી ધર્મ છે, તેમ તે સર્વ કર્તવ્યને તમે પણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ ઋત્વિક્ષ્જનો સામગ્રીનો સંચય કરીને યજ્ઞને સુશોભિત કરે છે, તેમ પ્રેમથી યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ ઘરના કાર્યોને નિત્ય સિદ્ધ કર્યા કરે. (૧૮)

પ્રૈષેભિઃ પ્રૈષાનાંજોત્યાપ્રીભિરાપ્રીર્યજ્ઞસ્ય ।

પ્રયાજેભિરનુયાજાન્વષટ્કારેભિરાહુતીઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ પ્રૈષેભિઃ-આજ્ઞા આપવા જેવા કર્મોથી પ્રૈષાન્-આજ્ઞા આપવા યોગ્ય સેવકોને, આપ્રીભિઃ-સર્વ તરફથી તૃપ્ત-પ્રસન્ન કરનારી ક્રિયાઓથી આપ્રીઃ-સર્વથા પ્રીતિને ઉત્પન્ન કરનારી સેવિકાઓને પ્રયાજેભિઃ-ઉત્તમ યજ્ઞ સાધનોથી અનુયાજાન્-અનુકૂળ યજ્ઞ પદાર્થોને અને યજ્ઞસ્ય-યજ્ઞની વષટ્કારેભિઃ-ક્રિયાઓથી આહુતિઃ-અગ્નિમાં આપવા યોગ્ય આહુતિઓને આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તે સુખી રહે છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ સુશિક્ષિત સેવક અને સેવિકાઓવાળા, સાધનો અને ઉપસાધનોથી યુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ કાર્યો કરે છે, તે સર્વને સુખી કરી શકે છે. (૧૯)

પશુભિઃ પશૂનાંજોતિ પુરોડાશૈર્હવીંશ્ઞ્યા ।

છન્દોભિઃ સામિધેનીર્યાજ્યાભિર્વષટ્કારાન્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સદ્ગૃહસ્થ પશુભિઃ-ગાય આદિ પશુઓથી પશૂન્-ગાય આદિ પશુઓને, પુરોહાણૈઃ-પચન ક્રિયાઓથી સંસ્કૃત-શુદ્ધ કરેલા ઉત્તમ પદાર્થોથી હવીષિ-હવન કરવા યોગ્ય ઉત્તમ પદાર્થોને, છન્દોભિઃ-ગાયત્રી આદિ છંદોની વિદ્યાથી સામિધેનીઃ-અગ્નિ પ્રદીપક ઉત્તમ સમિધાઓને, યાજ્યાભિઃ-યજ્ઞની ક્રિયાઓથી વષટ્કારાન્-ધર્મયુક્ત આચરણ કરનારાઓને આ + આજ્ઞોતિ-સર્વથા પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે આ સંસારમાં અનેક પશુઓવાળા, હોમ કરીને ભોજન કરનારાઓ, વેદવિત્ અને શ્રેષ્ઠ આચરણવાળા મનુષ્યો હોય છે તેઓ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૦)

ધાનાઃ કર્મ્ભઃ સક્તવઃ પરીવાપઃ પયો દધિઃ ।

સોમસ્ય રૂપઃ હવિષ્ઽઆમિક્ષા વાજિનં મધુ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે હવિષઃ-હોમ કરવા યોગ્ય સોમસ્ય-ચંત્ર દ્વારા ખેંચવા યોગ્ય ઔષધિરૂપ રસના સ્વપ્-રૂપને ધાનાઃ-શેકેલા યવ આદિ અન્ન, કર્મ્ભઃ-મંથનનું સાધન, સક્તવઃ-સાથવો, પરીવાપઃ-જેમાં સર્વત્ર બીજ વાવવામાં આવે છે તે ક્ષેત્ર, પયઃ-દૂધ, દધિ-દહી, આમિક્ષા-દહીદૂધ અને મધુરથી બનેલ પદાર્થ વિશેષ, વાજિનમ્-પ્રશસ્ત અન્નોના સંબંધી સાર વસ્તુ અને મધુ-મધ એ પદાર્થોના ગુણોને જાણો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ પુષ્ટિકારક, સુગંધિત, મધુર અને રોગનાશક છે, તે હવન કરવા યોગ્ય 'હવિઃ' કહેવાય છે. (૨૧)

ધાનાનાંશ્ચ રૂપં કુવલં પરીવાપસ્ય ગોધૂમાઃ ।

સક્તૂનાંશ્ચ રૂપં બદરમુપવાકાઃ કર્મ્ભસ્ય ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ધાનાનામ્-શેકેલા જવ આદિ અન્નોનું કુવલમ્-બોર સમાન કોમળ રૂપ છે, પરીવાપસ્ય-ચૂર્ણ-લોટ આદિનું ગોધૂમાઃ-ઘઉં સ્વપ્-રૂપ છે, સક્તૂનામ્-સાથવાનું બદરમ્-બોર ના રંગ સમાન સ્વપ્-રૂપ છે, કર્મ્ભસ્ય-દહી મેળવેલ સાથવાનું ઉપવાકાઃ-સમીપ પ્રાપ્ત જવ સ્વપ્-રૂપ છે, તેમ જાણો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો અન્નોનું સુંદર રૂપ બનાવીને ભોજન કરે છે અને કરાવે છે, તેઓ આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૨)

પયસો રૂપં યદ્યવાં દ્ધનો રૂપં કર્કન્ધૂનિ ।

સોમસ્ય રૂપં વાજિનઃ સૌમ્યસ્ય રૂપમામિક્ષા ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યત્-જે યવાઃ-જવ છે તેની સમાન, પયસઃ-પાણી અથવા દૂધના સ્વપ્ન-રૂપને કર્કન્ધૂનિ-પાકેલાં મોટાં બોર સમાન, દધ્નઃ-દહીના સ્વપ્ન-રૂપને વાજિનમ્-બહુ અન્નના સારની સમાન, સોમસ્ય-સોમ ઔષધિનાં સ્વપ્ન-રૂપને આમિક્ષા-દૂધ અને દહીનાં સંયોગથી બનેલ અથવા મધુર અને અમ્લ આદિના સંયોગથી બનેલ પદાર્થની સમાન, સૌમ્યસ્ય-સોમ આદિ ઔષધિઓનો સાર હોવાથી સ્વપ્ન-સ્વરૂપને સિદ્ધ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જે - જે અન્નનું સુંદર રૂપ જે રીતે બને, તે તેના રૂપને તે રીતે સદા સિદ્ધ કરે. (૨૩)

આ શ્રાવયેતિ સ્તોત્રિયાઃ પ્રત્યાશ્રાવોઽનુરૂપઃ ।

યજેતિ ધાય્યાસ્વપ્ન પ્રગાથા યૈયજામહાઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું વિદ્યાર્થીઓને આ + શ્રાવય-સમસ્ત વિદ્યાનો ઉપદેશ કર.

જે સ્તોત્રિયાઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્યને પ્રત્યાશ્રાવઃ-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય વિદ્યા વિષય અનુસ્મરઃ-અનુકૂળ જેમ યજ્ઞ છે, તેમ યૈયજામહાઃ-જે અધિક યજ્ઞ કરે છે, ઙ્ગિતિ-એ રીતે અર્થાત્ તેની સમાન પ્રગાથાઃ-ઉત્તમ રીતે ગાન કરે, તેની યજેતિ-સંગત કર. આ રીતે ધાય્યાસ્વપ્ન-ધારણ કરવા યોગ્ય રૂપને યથાવત જાણ. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેઓ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક વિદ્યાના વિષયો સાંભળે અને સંભળાવે છે, તેઓ વિદ્વાન્ બની જાય છે. (૨૪)

અર્દ્ધઽઋચૈરુક્થાનાંશ્ચ રૂપં પદૈરાંજોતિ નિવિદઃ ।

પ્રણવૈઃ શસ્ત્રાણાંશ્ચ રૂપં પયસા સોમઽઆપ્યતે ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! અર્દ્ધ ઋચૈઃ-અર્ધ ઋચાઓ અર્થાત્ મંત્ર ભાગો દ્વારા ઉક્થાનામ્-કથન કરવા યોગ્ય વૈદિક સ્તોત્રોના સ્વપ્ન-સ્વરૂપને, પદૈઃ-પદોથી સુબન્ત-વિભક્તિ પદો તથા તિઙ્ન્ત-ક્રિયાપદોથી અને પ્રણવૈઃ-ઓમકારોથી શસ્ત્રાણામ્-શસ્ત્રોના સ્વપ્ન-સ્વરૂપને, તથા નિવિદઃ-નિશ્ચયથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરનાર જિજ્ઞાસુઓને આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, અને જે વિદ્વાન્ દ્વારા પયસા-જલની સાથે સોમઃ-સોમ ઔષધિનો રસ આપ્યતે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તે વિદ્વાન વેદના જ્ઞાતા-જાણનાર કહેવાય છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનની પાસે ભણીને વેદોના પદ, વાક્ય, મંત્રવિભાગ, શબ્દ, અર્થ અને સંબંધને યથાર્થ જાણી લે છે, તેઓ સંસારમાં અધ્યાપક બને છે. (૨૫)

અશ્વિભ્યાં પ્રાતઃસવનમિન્દ્રેણૈન્દ્રં માધ્યન્દિનમ્ ।

વૈશ્વદેવઃ સરસ્વત્યા તૃતીયમાસઃ સર્વનમ્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યોએ અશ્વિભ્યામ્-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા પ્રથમ પ્રાતઃ સવનમ્-પ્રાતઃકાલ યજ્ઞકર્મની પ્રેરણાને ઇન્દ્રેણ-વિદ્યુતના દ્વારા ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યકારક, દ્વિતીય માધ્યન્દિનમ્-મધ્યાહ્નના સવનમ્-આરોગ્યકારી

હોમ આદિ કર્મને, સસ્વત્યા-સત્યવાણી દ્વારા વૈશ્વદેવમ્-સંપૂર્ણ વિદ્વાનોના સત્કાર રૂપ તૃતીયમ્-ત્રીજા સવન અર્થાત્ સાયંકાલની ક્રિયાને યથાવત્ આપ્તમ્-પ્રાપ્ત કરેલ છે, તેઓ જગતના ઉપકારક છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જેઓ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણેય કાલોમાં સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનું હિત કરે છે, તેઓ જગતમાં સત્પુરુષ બને છે. (૨૬)

વાયવ્યૈર્વાયવ્યાન્યાજ્નોતિ સતેન દ્રોણકલશમ્ ।

કુમ્ભીભ્યામ્ભૃગૌ સુતે સ્થાલીભિઃ સ્થાલીરાજ્નોતિ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ વાયવ્યૈઃ-વાયુમાં વિદ્યમાન વા વાયુ દેવતા વાળા દિવ્ય ગુણોત્પાદક છે, તે પદાર્થોથી વાયવ્યાનિ-વાયુમાં વિદ્યમાન વા વાયુ દેવતા ગુણો અને કર્મોને, સતેન-વિભાગ યુક્ત કર્મથી દ્રોણકલશમ્-દ્રોણ પરિમાણ [માપ] અથવા કલશને આજ્નોતિ-પ્રાપ્ત થાય છે.

કુમ્ભીભ્યામ્-ધાન્ય અને જલના પાત્રોથી અમ્ભૃગૌ-જલને ધારણ કરનારા બે પાત્રો તથા સુતે-તૈયાર કરેલા બે પ્રકારના રસોને સ્થાલીભિઃ-પદાર્થોને રાખવા અને પકાવવાની સ્થાલીઃ-થાળીઓને આજ્નોતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ ધનાઢ્ય બને છે. (૨૭)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વાયુના કાર્યોને ન જાણીને, તેના જ્ઞાન વિના પરિમાણ-માપ વિદ્યાને, એના વિના પાક વિદ્યાને અને તેના વિના અન્નના સંસ્કારની ક્રિયાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૨૭)

યજુર્ભિરાપ્યન્તે ગ્રહા ગ્રહૈઃ સ્તોમાશ્ચ વિષ્ટુતીઃ ।

છન્દોંભિરુક્થાશ્સ્ત્રાણિ સામ્નાવભૃથઽઆપ્યતે ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને જે યજુર્ભિઃ-યજુર્વેદોક્ત વિદ્યાના અવયવોથી ગ્રહાઃ-સર્વ ક્રિયાકાંડના ગ્રહણ કરનારા વ્યવહાર, ગ્રહૈઃ-ગ્રહોથી સ્તોમાઃ-પદાર્થોના ગુણોની પ્રશંસા ચ-અને વિષ્ટુતીઃ-વિવિધ સ્તુતિઓ; છન્દોંભિઃ-ગાયત્રી આદિ છન્દ વા વિદ્વાન્ અને ગુણોની સ્તુતિ કરનારાઓથી ઉક્થાશ્સ્ત્રાણિ-કથન કરવા યોગ્ય વેદના સ્તોત્ર અને શસ્ત્ર આપ્યન્તે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે; તથા સામ્ના-સામવેદથી અવભૃથઃ-શોધન આપ્યન્તે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તેનો ઉપયોગ યથાવત્ કરવો જોઈએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વેદાભ્યાસ વિના સર્વ સાંગોપાંગ વેદ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૨૮)

ઇડાંભિર્ભક્ષાનાજ્નોતિ સૂક્તવાકેનાશિષઃ ।

શંયુના પત્નીસંયાજાન્ત્સમિષ્ટયજુષા સ્સ્થામ્ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ ! ઇડાંભિઃ-પૃથિવીથી ભક્ષાન્-ભક્ષણ કરવા યોગ્ય અન્નાદિ પદાર્થોને સૂક્તવાકેન-જે ઉત્તમ વચનથી આશિષઃ-ઈચ્છાઓ-સિદ્ધિઓને શંયુના-સુખમય વ્યવહારથી પત્નીસંયાજાન્-જે પત્નીની સાથે મળે છે તેને સમિષ્ટયજુષા-ઉત્તમ ઈષ્ટ સિદ્ધિ કરનાર યજુર્વેદના કર્મથી સ્સ્થામ્-સારી રીતે રહેવાના સ્થાનને આજ્નોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે. તે સુખી કેમ ન બને ? (૨૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થજનો વેદ વિજ્ઞાનથી જ પૃથિવીનાં રાજ્યને ભોગવવાની ઈચ્છા, તેની સિદ્ધિને તથા સંસ્થિતિને પ્રાપ્ત કરે. (૨૯)

વ્રતેન દીક્ષામાજ્ઞોતિ દીક્ષ્યાજ્ઞોતિ દક્ષિણામ્ ।

દક્ષિણા શ્રદ્ધામાજ્ઞોતિ શ્રદ્ધ્યા સત્યમાપ્યતે ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : જે બાળક, કન્યા વા મનુષ્ય વ્રતેન-બ્રહ્મચર્ય આદિ નિયમો દીક્ષામ્-બ્રહ્મચર્ય આદિ સત્કર્મોના આરંભ રૂપ દીક્ષાને આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, દીક્ષ્યા-તે દીક્ષાથી દક્ષિણામ્-પ્રતિષ્ઠા અને ધનને આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, દક્ષિણા-તે પ્રતિષ્ઠા અને ધનથી શ્રદ્ધામ્-સત્યના ધારણામાં પ્રીતિરૂપ શ્રદ્ધાને આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે. વા તે શ્રદ્ધ્યા-શ્રદ્ધાથી જેને સત્યમ્-નિત્ય પદાર્થ વા વ્યવહારોમાં ઉત્તમ પરમેશ્વર વા ધર્મની આપ્યતે-પ્રાપ્તિ કરી છે, તે સુખી થાય છે. (૩૦)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વિદ્યા, સુશિક્ષા અને શ્રદ્ધા વિના સત્ય વ્યવહારોને પ્રાપ્ત તથા અસત્ય વ્યવહારોનો ત્યાગ કરી શકતો નથી. (૩૦)

एतावद्रूपं यज्ञस्य यद्देवैर्ब्रह्मणा कृतम् ।

तदेतत्सर्वमाज्ઞોતિ યજ્ઞે સૌત્રામણી સુતે ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યે યત્-જે દેવૈઃ-વિદ્વાનો દ્વારા બ્રહ્મણા-પરમેશ્વર વા ચારે વેદોથી યજ્ઞસ્ય-યજ્ઞકર્મનાં એટલા સ્વમ્-સ્વરૂપને કૃતમ્-સિદ્ધ કરેલ છે વા પ્રકાશિત કરેલ છે, તત્-તે એતત્-એ સર્વમ્-સર્વને સૌત્રામણી-જેમાં જનોઈ આદિ ગ્રંથિયુક્ત સૂત્ર ધારણ કરવામાં આવે છે, તે સુતે-સિદ્ધ કરેલ યજ્ઞે-યજ્ઞમાં આજ્ઞોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તે દ્વિજ થવાનો આરંભ કરે છે. (૩૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ મનુષ્યોએ જેટલું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાનનું અનુસંધાન કરી શકાય, તેટલું કરીને યજ્ઞના મહાન ઉત્તમ ફળને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૧)

सुरावन्तं बर्हिषदः सुवीरं यज्ञः हिन्वन्ति महिषा नमोभिः ।

दधानाः सोमं दिवि देवतासु मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે મહિષાઃ-મહાન્ પૂજનીય, સ્વર્કાઃ-ઉત્તમ અન્ન આદિ પદાર્થોવાળા, યજમાનાઃ-યજ્ઞ કરનારા વિદ્વાનો નમોભિઃ-અન્નાદિથી સુરાવન્તમ્-ઉત્તમ સોમરસયુક્ત, બર્હિષદમ્-પ્રશસ્ત આકાશમાં સ્થિત થનાર, સુવીરમ્-ઉત્તમ શરીર તથા આત્માના બળથી યુક્ત વીરોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા યજ્ઞમ્-યજ્ઞની હિન્વન્તિ-વૃદ્ધિ કરે છે; તેઓ દિવિ-શુદ્ધ વ્યવહારોમાં દેવતાસુ-વિદ્વાનોમાં સોમમ્-ઐશ્વર્ય અને ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષને દધાનાઃ-ધારણ કરતાં અમે મદેમ-આનંદિત બનીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અન્ન આદિ ઐશ્વર્યનો સંચય કરીને, તેથી વિદ્વાનોને સંતુષ્ટ કરીને, ઉત્તમ વિદ્યા અને સુશિક્ષાઓનો સંગ્રહ કરીને સર્વના હિતેષી હોય છે, તેઓ આ ગૃહાશ્રમમાં પુત્ર અને સ્ત્રીના આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૨)

યસ્તે રસઃ સમ્ભૃતઃઓષધીષુ સોમસ્ય શુષ્મઃ સુરયા સુતસ્ય ।

તેન જિન્વ યજમાનં મદેન સરસ્વતીમશ્વિનાવિન્દ્રમગ્નિમ્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યઃ-જે તે-આપના ઓષધીષુ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન સુતસ્ય-સિદ્ધ કરેલ સોમસ્ય-અંશુમાન આદિ ચોવીસ પ્રકારના સોમના સુરયા-ઉત્તમ દાનશીલ સ્ત્રીના દ્વારા સમ્ભૃતઃ-સારી રીતે રાખેલા શુષ્મઃ-બળકારી રસઃ-આનંદદાયક રસ છે; તેન-તે મદેન-આનંદદાયક રસથી યજમાનમ્-સુખદાતા યજમાનને, સરસ્વતીમ્-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીને, અશ્વિનૌ-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકને, ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ અને સેનાપતિને તથા અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન શત્રુઓને બાળનારા યોદ્ધાઓને જિન્વ-પ્રસન્ન કરો. [અર્થાત્ તૃપ્ત કરો.] (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ મનુષ્યો મહા ઔષધિઓના સારનું સ્વયં સેવન કરીને તથા અન્યોને સેવન કરાવીને નિરંતર આનંદની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ ધન્યવાદને યોગ્ય છે. (૩૩)

યમશ્વિના નમુચેરાસુરાદધિ સરસ્વત્યસુનોદિન્દ્રિયાય ।

इमं तं शुक्रं मधुमन्तमिन्दुः सोमं राजानमिह भक्षयामि ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઇહ-આ સંસારમાં ઇન્દ્રિયાય-ધન અને ઇન્દ્રિયના બળ માટે યમ્-જે નમુચેઃ-જળને મુક્ત ન કરનાર આસુરાત્-તે મેઘ વ્યવહારથી અધિ-અધિક શુક્રમ્-શીઘ્ર બલકારી મધુમન્તમ્-ઉત્તમ, મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત ઇન્દુમ્-પરમ ઐશ્વર્ય કરનાર રાજાનમ્-પ્રકાશમાન સોમમ્-પુરુષાર્થમાં પ્રેરક સોમ ઔષધિને સરસ્વતી-વિદુષી સ્ત્રી અસુનોત્-સિદ્ધ કરે છે, અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ પણ સિદ્ધ કરે છે, તમ્ + ઇમમ્-તે એને હું ભક્ષયामિ-ભક્ષણ કરું અને ભક્ષણ કરાવું છું. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સાર, અન્ન અને રસનુ ભોજન કરનાર હોય છે, તેઓ બળવાન ઇન્દ્રિઓ યુક્ત બનીને સદા આનંદ ભોગવે છે. (૩૪)

यदत्र रिप्तः रसिनः सुतस्य यदिन्द्रोऽपिबच्छचीभिः ।

अहं तदस्य मनसा शिवेन सोमं राजानमिह भक्षयामि ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અહમ્-હું ઇહ-આ સંસારમાં અસ્ય-એ સુતસ્ય-તૈયાર કરેલ રસિનઃ-ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થનો યત્-જે ભાગ અત્ર-આ સંસારમાં જ રિપ્તમ્-પ્રાપ્ત છે, વા ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય શ્ચીભિઃ-આકર્ષણ આદિ ક્રિયાઓથી યત્-જે અપિબત્-પાન કરે છે, તત્-તેને તથા રાજાનમ્-પ્રકાશમાન સોમમ્-ઔષધિઓના રસને શિવેન-કલ્યાણકારક મનસા-મનથી મક્ષયामિ-ભક્ષણ તથા પાન કરું છું, તેમ તમે પણ ભક્ષણ અને પાન કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સૂર્ય પોતાના કિરણોથી જલનું આકર્ષણ-ખેંચીને તથા વરસાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમજ તમે અનુકૂળ ક્રિયાઓથી રસોનું સેવન કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને, કીર્તિની વર્ષાથી સર્વને આનંદિત કરો. (૩૫)

પિતૃભ્યઃ સ્વધાયિભ્યઃ સ્વધા નમઃ પિતામહેભ્યઃ સ્વધાયિભ્યઃ સ્વધા નમઃ પ્રપિતામહેભ્યઃ સ્વધાયિભ્યઃ સ્વધા નમઃ । અક્ષન્ પિતરોઽમીમદન્ત પિતરોઽતીતૃપન્ત પિતરઃ પિતરઃ શુન્ધધ્વમ્ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : અમે પુત્ર, શિષ્ય આદિ મનુષ્ય સ્વધાયિભ્યઃ-જલ અને અન્નને પ્રાપ્ત કરાવનારા પિતૃભ્યઃ-જ્ઞાની જનોને સ્વધા-અન્ન પ્રદાન અને નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ; સ્વધાયિભ્યઃ-વિપુલ અન્નના ઇચ્છુક પિતામહેભ્યઃ-પિતાના પિતા અર્થાત્ દાદાઓને સ્વધા-સુંદર અન્ન આપતાં તથા નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ, સ્વધાયિભ્યઃ-ઉત્તમ અન્નના ઇચ્છુક પ્રપિતામહેભ્યઃ-પિતામહના પિતાઓને અર્થાત્ પરદાદાને સ્વધા-અન્ન પ્રદાન તથા નમઃ-સત્કાર કરીએ છીએ.

હે પિતરઃ-પિતા આદિ જ્ઞાનીજનો ! આપ અમે સારી રીતે બનાવેલ અન્ન આદિનું અક્ષન્-ભોજન કરો.

હે પિતરઃ-અધ્યાપકજનો ! આપ આનંદિત બનીને અમને અમીમદન્ત-અત્યંત આનંદયુક્ત કરો.

હે પિતરઃ-ઉપદેશકજનો ! આપ તૃપ્ત બનીને અમને અતીતૃપન્ત-તૃપ્ત કરો.

હે પિતરઃ-વિદ્વાનો ! આપ શુદ્ધ બનીને અમને શુન્ધધ્વમ્-શુદ્ધ કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : હે પુત્રો, શિષ્યો તથા પુત્રવધૂ આદિ આત્મીયજનો ! તમે ઉત્તમ અન્ન આદિ પદાર્થો દ્વારા પિતા આદિ વૃદ્ધોની નિરંતર સેવા કરો. પિતૃજનો પણ તમોને આનંદિત કરે.

જેમ માતા-પિતા આદિ બાળપણમાં તમારી સેવા કરે છે, તેમ તમે વૃદ્ધાવસ્થામાં તેઓની યથોચિત સેવા કરો. (૩૬)

પુનન્તુ મા પિતરઃ સોમ્યાસઃ પુનન્તુ મા પિતામહાઃ । પુનન્તુ પ્રપિતામહાઃ પવિત્રેણ શ્તાયુષા । પુનન્તુ મા પિતામહાઃ પુનન્તુ પ્રપિતામહાઃ । પવિત્રેણ શ્તાયુષા વિશ્વમાયુર્વ્યશ્નવૈ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : સોમ્યાસઃ-ઐશ્વર્યથી યુક્ત અથવા ચન્દ્રમા સમાન શાન્ત, પિતરઃ-જ્ઞાન પ્રદાન કરનાર પાલન કરનાર પિતર લોકો પવિત્રેણ-શુદ્ધ આચરણથી યુક્ત શ્તાયુષા-સો વર્ષની આયુથી મા-મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે.

અતિ બુદ્ધિમાન, ચન્દ્રમા સમાન, આનંદકર્તા પિતામહાઃ-પિતાના પિતા-દાદા તે અણીશુદ્ધ સો વર્ષયુક્ત આયુથી મા-મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે.

ઐશ્વર્યદાતા, ચન્દ્રમા સમાન શીતલ સ્વભાવવાળા પ્રપિતામહાઃ-પરદાદા શુદ્ધ સો વર્ષ સુધી જીવનથી મા-મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે. વિદ્યાદિ ઐશ્વર્યયુક્ત વા શાન્ત સ્વભાવ પિતામહાઃ-દાદા પવિત્રેણ-અત્યંત શુદ્ધ આનંદયુક્ત શ્તાયુષા-સો વર્ષ પર્યન્ત આયુથી મને પુનન્તુ-પવિત્ર આચરણયુક્ત કરે.

સુંદર ઐશ્વર્યદાતા વા શાન્તિયુક્ત પ્રપિતામહાઃ-પરદાદા પવિત્ર ધર્માચરણયુક્ત સો વર્ષ સુધી મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે, જેથી હું વિશ્વમ્-સંપૂર્ણ આયુઃ-જીવનને વ્યશ્નવૈ-પ્રાપ્ત કરું. (૩૭)

ભાવાર્થ : પિતા, દાદા, પરદાદા આદિએ પોતાની પુત્રીઓ અને પુત્રોને બ્રહ્મચર્ય, સુશિક્ષા અને ધર્મના ઉપદેશથી સંપન્ન કરીને વિદ્યાવાન તથા સુશીલ બનાવવા જોઈએ.

સંતાનોએ પણ સેવા અને અનુકૂળ આચરણ દ્વારા પિતા આદિ સર્વની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. આ રીતે સર્વએ પરસ્પર ઉપકાર દ્વારા ગૃહસ્થાશ્રમમાં આનંદપૂર્વક રહેવું જોઈએ. (૩૭)

અગ્નૃઆયૂંષ્ઠ્ષિ પવસૃઆ સુવોર્જમિષં ચ નઃ ।

આરે બાધસ્વ દુચ્છુનામ્ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન પિતા, દાદા અને પરદાદા ! જે આપ નઃ-અમારી આયૂંષિ-આયુને આપનાર-અન્ન આદિને પવસે-પવિત્ર કરો, તે આપ ઋર્જમ્-પરાક્રમ ચ-અને ઇષમ્-ઈચ્છા-સિદ્ધિને આ + સુવ-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરો.

તેમજ આરે-દૂર અથવા નજીક વસનારા દુચ્છુનામ્-દુષ્ટ કૂતરાં સમાન વર્તાવ કરનારા મનુષ્યોના સંગથી બાધસ્વ-મુક્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : પિતા આદિજનો, સંતાનોમાં દીર્ઘ આયુ, પરાક્રમ અને શુભ ઈચ્છાને ધારણ કરાવીને પોતાનાં સંતાનોને દુષ્ટોના સંગથી છોડાવીને શ્રેષ્ઠોના સંગમાં પ્રવૃત્ત કરીને ધાર્મિક તથા દીર્ઘાયુ બનાવે, જેથી તેઓ વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ કદી અપ્રિય આચરણ કરે નહિ. (૩૮)

પુનન્તુ મા દેવજનાઃ પુનન્તુ મનસા ધિયઃ ।

પુનન્તુ વિશ્વા ભૂતાનિ જાતવેદઃ પુનીહિ મા ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્યોમાં જ્ઞાની વિદ્વાન્ ! જેમ દેવજનાઃ-વિદ્વાનો મનસા-વિજ્ઞાન અને પ્રેમથી મા-મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે, અમારી ધિયઃ-બુદ્ધિઓને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે, વિશ્વા-સંપૂર્ણ ભૂતાનિ-પ્રાણી માત્ર મને પુનન્તુ-પવિત્ર કરે, તેમ આપ મા-મને પુનીહિ-પવિત્ર કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષો અને વિદુષી સ્ત્રીઓનું એ મુખ્ય કર્તવ્ય છે કે, પુત્રો અને પુત્રીઓને નિરંતર બ્રહ્મચર્ય તથા સુશિક્ષા દ્વારા સુશીલ, વિદ્વાન્ અને વિદુષી બનાવે, (૩૯)

પવિત્રેણ પુનીહિ મા શુક્રેણ દેવ દીઘત્ । અગ્ને ક્રત્વા ક્રતૂંરઽરનુ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે દીઘત્-પ્રકાશમાન દેવ-વિદ્યાના આપનાર અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ પવિત્રેણ-શુદ્ધ શુક્રેણ-વીર્ય-પરાક્રમથી સ્વયં પવિત્ર બનીને મા-મને આનાથી અનુ + પુનીહિ-પછી પવિત્ર કર, પોતાની ક્રત્વા-બુદ્ધિ વા કર્મથી પોતાની પ્રજ્ઞા અને કર્મને પવિત્ર કરીને અમારી ક્રતૂન-બુદ્ધિઓ તથા કર્મોને પવિત્ર કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : પિતા, અધ્યાપક અને ઉપદેશક સ્વયં ધાર્મિક વિદ્વાન્ બનીને પોતાના સંતાનોને પણ એવા

જ યોગ્ય ધાર્મિક અને વિદ્યાનું બનાવે. (૪૦)

યત્તે પવિત્રમર્ચિષ્યગ્ને વિતતમન્તરા । બ્રહ્મ તેન પુનાતુ મા ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ જગદીશ્વર ! તે-તમારા અર્ચિષિ-સત્કાર કરવા યોગ્ય તેજ:-સ્વરૂપમાં અન્તરા-સર્વથી ભિન્ન યત્-જે વિતતમ્-વિસ્તૃત સર્વમાં વ્યાપ્ત પવિત્રમ્-શુદ્ધ સ્વરૂપ બ્રહ્મ-ઉત્તમ વેદ વિદ્યા છે, તેન-તેના દ્વારા મા-મને આપ પુનાતુ-પવિત્ર કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે દેવોના દેવ, પવિત્રોમાં પવિત્ર, વ્યાપ્તોમાં વ્યાપ્ત અન્તર્યામી ઈશ્વર છે, અને તેની વિદ્યા વેદ છે, તેને અનુકૂળ આચરણ કરીને નિરંતર પવિત્ર રહો. (૪૧)

પવમાનુઃ સોઽઅદ્ય નઃ પવિત્રેણ વિચર્ષણિઃ । યઃ પોતા સ પુનાતુ મા ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે જગદીશ્વર નઃ-અમારી મધ્યમાં પવિત્રેણ-શુદ્ધ આચરણથી પવમાનુઃ-પવિત્ર વિચર્ષણિઃ-વિવિધ વિદ્યાઓના દાતા છે, સઃ-તે અદ્ય-આજે અમને પવિત્ર કરનાર અને અમારા ઉપદેશક છે, સઃ-તે પોતા-પવિત્ર સ્વરૂપ પરમાત્મા મા-મને પુનાતુ-પવિત્ર કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરની સમાન ધાર્મિક બનીને પોતાના સંતાનોને ધર્માત્મા બનાવે. એવા [સંતાનો] વિના તેઓ અન્યોને પણ પવિત્ર કરી શકતા નથી. (૪૨)

ઉમાભ્યાં દેવ સવિતઃ પવિત્રેણ સ્વેન ચ । માં પુનીહિ વિશ્વતઃ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સુખોના દાતા સવિતઃ-સત્કર્મોના પ્રેરક જગદીશ્વર ! આપ પવિત્રેણ-પવિત્ર આચરણથી અને સ્વેન-સમગ્ર ઐશ્વર્ય તથા ઉમાભ્યામ્-વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી મામ્-મને પુનીહિ-પવિત્ર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વર સર્વને શુદ્ધિ અને ધર્મ ગ્રહણ કરાવે છે, તેનો આશ્રય કરીને તમે અધર્માચરણથી સદા ડરો. (૪૩)

વૈશ્વદેવી પુનતી દેવ્યાગાદ્યસ્યામિમા બ્રહ્મ્યસ્તન્વો વીતપૃષ્ઠાઃ ।

તયા મદન્તઃ સધ્માદેષુ વયંઽઽ સ્યામ્ પતયો રયીણામ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વૈશ્વદેવી-સર્વ વિદુષી સ્ત્રીઓમાં ઉત્તમ, પુનતી-સર્વની પવિત્રતા કરનારી, દેવી-સકલ વિદ્યા અને ધર્મના આચરણથી પ્રકાશમાન વિદ્યાઓને ભણાવનારી બ્રહ્મચારિણી કન્યા અમને આ + અગાત્-પ્રાપ્ત થાય.

જેના હોવાથી ઇમાઃ-એ બ્રહ્મ્યઃ-અનેક તન્વઃ-વિસ્તૃત વિદ્યા યુક્ત વીતપૃષ્ઠાઃ-વિવિધ પ્રશ્નોને જાણનારી હોય, તયા-તેના દ્વારા સુશિક્ષિત ભાર્યાઓને [પત્નીઓને] પ્રાપ્ત કરીને વયમ્-અમે સધ્માદેષુ-સમાન સ્થાનોમાં મદન્તઃ-આનંદયુક્ત બનીને રયીણામ્-ધન આદિ ઐશ્વર્યના પતયઃ-સ્વામી સ્યામ્-બનીએ.

ભાવાર્થ : જેમ રાજા સર્વ કન્યાઓને ભણાવવા માટે પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીઓની નિયુક્તિ કરીને સર્વ બાળાઓને પૂર્ણ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત કરે, તેમ બાળકોને પણ કરે.

જ્યારે તે યુવાનીથી પૂર્ણ બને, ત્યારે સ્વયંવર વિવાહ કરાવે. આ રીતે રાજ્યની નિરંતર વૃદ્ધિ કરે. (૪૪)

યે સમાનાઃ સર્મનસઃ પિતરો યમરાજ્યૈ ।

તેષાં લોકઃ સ્વધા નમો યજ્ઞો દેવેષુ કલ્પતામ્ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : યે-જે સમાનાઃ-એક સમાન સર્મનસઃ-સમાન વિજ્ઞાનયુક્ત પિતરઃ-પ્રજાનાં પાલક / રક્ષક જનો યમરાજ્યૈ-યથાવત્ ન્યાયકારી સભાધીશ રાજાના રાજ્યમાં છે, તેષામ્-તેની લોકઃ-સભા વા દર્શન, સ્વધા-અન્ન, નમઃ-સત્કાર અને યજ્ઞઃ-સંગ કરવા યોગ્ય ન્યાય દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં કલ્પતામ્-સમર્થ બને. (૪૫)

ભાવાર્થ : જ્યાં વિશાળ દૃષ્ટિવાળા, અન્ન આદિ ઐશ્વર્યથી સંપન્ન, સજ્જનોથી સત્કાર પામેલા અને એક માત્ર ધર્મમાં જ નિષ્ઠા રાખનારા વિદ્વાનોની સભા સાચો ન્યાય કરે છે, ત્યાં સર્વ મનુષ્યો ઐશ્વર્ય અને સુખમાં નિવાસ કરે છે. (૪૫)

યે સમાનાઃ સર્મનસો જીવા જીવેષુ મામ્કાઃ ।

તેષાંશ્ચ શ્રીર્મયિ કલ્પતામસ્મિલ્લોકે શ્વતઃ સમાઃ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : યે-જે અસ્મિન્-આ લોકે-લોકમાં જીવેષુ-જીવોમાં સમાનાઃ-સમાન ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા, સર્મનસઃ-સમાન ધર્મમાં મન રાખનારા, મામ્કાઃ-મારા જીવાઃ-જિવિત પિતા આદિ છે, તેષામ્-તેની શ્રીઃ-લક્ષ્મી મયિ-મારી સમીપ શ્વતઃ-સો સમાઃ-વર્ષ સુધી કલ્પતામ્-સમર્થ બને. (૪૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી માતા-પિતા આદિ જીવે, ત્યાં સુધી સંતાનો તેની સેવા કરે.

સંતાન જ્યાં સુધી માતા-પિતા આદિની સેવા કરવામાં તત્પર રહે, ત્યાં સુધી તે સત્કારને યોગ્ય છે.

માતા-પિતા આદિના જે ધનાદિ પદાર્થો છે, તે સર્વ સંતાનોની અને જે સંતાનોના પદાર્થો છે તે માતા-પિતા આદિના રહે. (૪૬)

દ્વે સૃતીઽઅશ્રુણવં પિતૃણામહં દેવાનામુત મર્ત્યાનામ્ ।

તાભ્યામિદં વિશ્વમેજ્ત્સમેતિ યદન્તરા પિતરં માતરં ચ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અહમ્-હું જે પિતૃણામ્-પિતા આદિ મર્ત્યાનામ્-મનુષ્યોની ચ-અને દેવાનામ્-વિદ્વાનોની દ્વે-બે ગતિઓ સૃતી-જેમાં જન્મ મરણને પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ આવાગમન થાય છે એવા માર્ગોને અશ્રુણવમ્-સાંભળું છું, તાભ્યામ્-તે બે ગતિઓથી ઇદમ્-આ વિશ્વમ્-સર્વ જગત્ એજત્-ચલાયમાન બનીને સમેતિ-ગતિ કરી રહેલ છે. ઉત-અને યત્-જે પિતરમ્-પિતા અને માતરમ્-માતાથી અન્તરા-પૃથક્

થઈને બીજા શરીરથી અન્ય માતા અને પિતાને પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જીવોની બે પ્રકારની ગતિ છે. એક માતા-પિતાથી જન્મ પ્રાપ્ત કરીને સંસારનાં વિષય સુખોનો ભોગ કરવો.

બીજી-વિદ્વાનોના સંગ આદિથી મુક્તિ સુખને ભોગવવું.

આ બન્ને ગતિઓની સાથે જ સર્વ પ્રાણીઓ વિચરણ કરે છે. (૪૭)

**इदं हविः प्रजननं मेऽस्तु दशवीरुः सर्वगणश्च स्वस्तये । आत्मसनि प्रजासनि
पशुसनि लोकसन्धभयसनि । अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतोऽस्मासु
धत्त ॥ ४८ ॥**

પદાર્થ : અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન પ્રકાશમાન પતિ મે-મારા માટે બહુલામ્-બહુ જ સુખ આપનારી પ્રજામ્-પુત્ર-પૌત્ર આદિ પ્રજાને કરોતુ-ઉત્પન્ન કરે.

મે-મારો જે ઇદમ્-આ પ્રજનનમ્-ઉત્પત્તિ કરવાનો હેતુ, હવિઃ-લેણ-દેણ યોગ્ય દશવીરુમ્-દશ સંતાનોને ઉત્પન્ન કરનારા, સર્વગણમ્-સર્વ સમુદાયોથી સહિત આત્મસનિ-જેનાથી આત્માનું સેવન, પ્રજાસનિ-પ્રજાનું સેવન, પશુસનિ-પશુઓનું સેવન, લોકસનિ-લોકોનું ઉત્તમ રીતે સેવન અને અભયસનિ-નિર્ભયતાથી દાનરૂપ કર્મ થાય છે, તે સંતાનને ઉત્પન્ન કરે, તે સ્વસ્તયે-સુખના માટે અસ્તુ-થાય.

હે માતા-પિતા આદિ લોકો ! આપ અસ્માસુ-અમારામાં પ્રજા, અન્નમ્-અન્ન, પયઃ-દૂધ અને રેતઃ-વીર્યને ધત્ત-ધારણ કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સર્વ વિદ્યાઓ અને શિક્ષાઓને ગ્રહણ કરીને, પરસ્પર પ્રેમથી સ્વયંવર વિવાહ કરીને, ઋતુગામી બનીને, વિધિપૂર્વક સંતાન ઉત્પન્ન કરે છે, તેઓના તે સંતાનો શુભ ગુણોથી સંપન્ન બનીને પિતૃજનોને નિરંતર સુખી કરે છે. (૪૮)

उदीरतामवरऽउत्परांस उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः ।

असुं यऽईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥ ४९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યે-જે અવૃકા:-ચોરી આદિ દોષોથી રહિત, ઋત્તજ્ઞા:-સત્યને જાણનારા, પિતરઃ-પિતા આદિ પાલક, હવેષુ-સંગ્રામ આદિ વ્યવહારોમાં અસુમ્-પ્રાણને ઉદીયુઃ-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરે છે, તે-તેઓ નઃ-અમારી ઉત્ + અવન્તુ-ઉત્કૃષ્ટતાથી રક્ષા કરે.

યે-જે સોમ્યાસઃ-શાન્તિ આદિ ગુણોથી સંપન્ન અવરે-પ્રથમ અવસ્થા યુક્ત-નવીન, પરાસઃ-ઉત્કૃષ્ટ અવસ્થાવાળા, મધ્યમાઃ-મધ્યમ વિદ્વાન પિતરઃ-પિતા આદિ જનો છે, તેઓ અમને સંગ્રામ આદિ વ્યવહારોમાં ઉદીરતામ્-સારી રીતે પ્રેરિત કરે. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે જીવિત સાધારણ, મધ્યમ અને ઉત્તમ [કોટિના], ચોરી આદિ દોષોથી રહિત, સર્વ જાણવા યોગ્યને જાણેલા અને સર્વ સત્યાસત્ય-યથાર્થ ભાવને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાન્ છે, તેઓ વિદ્યાભ્યાસ અને ઉપદેશ દ્વારા સત્યધર્મને ગ્રહણ કરાવવા તથા બાળલગ્નનો નિષેધ કરીને, સર્વ પ્રજાઓનું પાલન કરે. (૪૯)

અઙ્ગિરસો નઃ પિતરો નવગ્વા અથર્વાણો ભૃગવઃ સોમ્યાસઃ ।

તેષાં વચઃ સુમતૌ યજ્ઞિયાનામપિ ભદ્રે સૌમનસે સ્યામ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે નઃ-અમારી અઙ્ગિરસઃ-સર્વ વિદ્યાઓ સિદ્ધાન્તોને જાણનારા, નવગ્વાઃ-નવીન વિજ્ઞાનનો ઉપદેશ કરનારા, અથર્વાણઃ-અહિંસક, ભૃગવઃ-પરિપક્વ વિજ્ઞાનયુક્ત, સોમ્યાસઃ-ઐશ્વર્ય સંપન્ન, પિતરઃ-પિતા આદિ પાલક જ્ઞાની જનો છે, તેષામ્-તે યજ્ઞિયાનામ્-ઉત્તમ વ્યવહાર કરનારાઓની સુમતૌ-સુમતિમાં અને ભદ્રે-કલ્યાણકારક સૌમનસે-ઉત્તમ મન વિજ્ઞાનમાં વચમ્-પ્રવૃત્ત સ્યામ્-બનીએ, તેમ તમે અપિ-પણ બનો. (૫૦)

ભાવાર્થ : સંતાનોએ પિતા આદિના જે-જે ધર્મયુક્ત કર્મ હોય, તે-તેનું સેવન કરવું જોઈએ અને જે-જે ધર્મ વિરુદ્ધ હોય તેનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. પિતા આદિ વડીલોએ પણ તેમ વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૫૦)

યે નઃ પૂર્વે પિતરઃ સોમ્યાસોઽનૂહિરે સોમપીથં વસિષ્ઠાઃ ।

તેભિર્યમઃ સંસરાણો હવીઙ્ઞષ્યુશન્નુશદ્ધિઃ પ્રતિકામમત્તુ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : યે-જે નઃ-અમારા સોમ્યાસઃ-સૌમ્ય ગુણોવાળા વસિષ્ઠાઃ-અત્યંત ધનવાન, પૂર્વે-પૂર્વજ પિતરઃ-પાલક જ્ઞાની પિતા આદિ સોમપીથમ્-સોમપાનને અનૂહિરે-પ્રાપ્ત કરે છે અને કરાવે છે; તેભિઃ-તેઓ ઝશદ્ધિઃ-અમારા પાલનની કામના કરનારા પિતૃજનોની સાથે હવીંષિ-લેવા-દેવા યોગ્ય પદાર્થોની ઝશન્-કામના કરનારા, સંસરાણઃ-સમ્યક્ સુખોના દાતા, યમઃ-ન્યાયકારી, સંયમી સંતાન પ્રતિકામમ્-પ્રત્યેક કામનાનો અત્તુ-ભોગ કરે. (૫૧)

ભાવાર્થ : પિતા પુત્રોની સાથે અને પુત્ર પિતાની સાથે સર્વ સુખ-દુઃખોનો ભોગ કરે, પ્રતિ ક્ષણ સુખને વધારે અને દુઃખોનો ઘ્રાસ કરે. (૫૧)

ત્વઃસૌમ પ્ર ચિકિતો મનીષા ત્વઃ રજિષ્ઠમનું નેષિ પન્થામ્ ।

તવ પ્રણીતી પિતરૌ નઙ્દો દેવેષુ રત્નમભજન્ત ધીરાઃ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-વિવિધ ઐશ્વર્યથી યુક્ત પ્રચિકિત્ઃ-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત પિતા ! ત્વમ્-તું મનીષા-ઉત્તમ બુદ્ધિથી જે રજિષ્ઠમ્-અત્યંત કોમળ અને સુખદાયક પન્થામ્-માર્ગને નેષિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને ત્વમ્-તું મને પણ અનુ-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કર.

હે ઇન્દો-આનંદકારક ચન્દ્રમા સમાન પિતા ! જે તવ-તારી પ્રણીતિ-ઉત્તમ નીતિથી ધીરા:-ધીર અર્થાત્ યોગીરાજ પિતર:-પિતા આદિ જ્ઞાની લોકો દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં ન:-અમારા માટે રત્નમ્-ઉત્તમ ધનનું અભજન્ત-સેવન કરે છે, તે અમને નિત્ય સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જે સંતાનો પિતાના સેવક બનીને વિદ્યા અને વિનયથી ધર્મનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ પોતાના જન્મને સફળ કરે છે. (૫૨)

ત્વયા હિ ન: પિતર: સોમ પૂર્વે કર્માણિ ચક્રુ: પવમાન ધીરા: ।

વન્વન્નવાત: પરિધીઃ રુપોર્ણુ વીરેભિરશ્વૈર્મઘવા ભવા ન: ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે પવમાન-પવિત્ર સ્વરૂપ, પવિત્ર કર્મ કરનારા અને પવિત્ર કરનારા સોમ-ઐશ્વર્યયુક્ત સંતાન ! ત્વયા-તારી સાથે ન:-અમારા પૂર્વે-પૂર્વજ ધીરા:-બુદ્ધિમાન પિતર:-પિતા આદિ જ્ઞાનીજન જે ધર્મયુક્ત કર્માણિ-કર્મોને ચક્રુ:-કરતાં હતાં હિ-તેનું સેવન અમે પણ કરીએ.

અવાત:-હિંસાથી રહિત વન્વન્-ધર્મનું સેવન કરતાં સંતાન તું વીરેભિ:-વીરો અને અશ્વૈ:-ઘોડા આદિની સાથે ન:-અમારા શત્રુઓની પરિધીન્-સર્વ બાજુથી પકડવા યોગ્ય શત્રુઓને અપોર્ણુ-આસ્થાદન કર અને અમારી મધ્યમાં મઘવા-ધનવાન ભવ-બન. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના ધાર્મિક પિતા આદિનું અનુકરણ કરીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, પોતાની સેનાના અંગોની પ્રશંસાયુક્ત બનીને સુખી થવું જોઈએ. (૫૩)

ત્વઃ સોમ પિતૃભિ: સંવિદાનોઽનુ દ્યાવાપૃથિવીઽઆ તતન્થ ।

તસ્મૈ તઽઇન્દો હૃવિષા વિધેમ વ્યથ્ઞ સ્યામ પતયો રયીણામ્ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ચન્દ્રમા સમાન આનંદકારક ઉત્તમ સંતાન ! પિતૃભિ:-જ્ઞાનયુક્ત પિતરજનોની સાથે સંવિદાન:-પ્રતિજ્ઞા કરતાં જે ત્વમ્-તું અનુ, દ્યાવા-પૃથિવી-સૂર્ય અને પૃથિવીના મધ્યમાં ધર્માનુકૂળ આચરણથી સુખનો આ, તતન્થ-વિસ્તાર કર.

હે ઇન્દો-ચન્દ્રમા સમાન પ્રિયદર્શન ! તસ્મૈ-તે તે-તારા માટે વ્યમ્-અમે હૃવિષા-લેવા-દેવા યોગ્ય વ્યવહારથી સુખનું વિધેમ-વિધાન કરીએ જેથી અમે રયીણામ્-ધનોના પતય:-પાલન કરનારા સ્વામી સ્યામ-બનીએ. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે સંતાનો ! તમે જેમ ચન્દ્રલોક પૃથિવીની ચારે તરફ ભ્રમણ કરતાં સૂર્યની પરિક્રમા કરે છે, તેમજ પિતા અને અધ્યાપક આદિનું અનુચરણ કરો. (૫૪)

બર્હિષદ: પિતર ઋત્યુર્વાગિમા વો હૃવ્યા ચક્રમા જુષધ્વમ્ ।

તઽઆગતાવસા શન્તમેનાથા ન: શંયોરરુપો દધાત ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે બર્હિષદ:-ઉત્તમ સભામાં વિરાજમાન, પિતર:-ન્યાયથી પાલન કરનાર પિતર લોકો ! અમે અર્વાક્-પશ્ચાત્ જે વ:-તમારા માટે ઋતી-રક્ષણ આદિ ક્રિયાથી ઇમા-એ હૃવ્યા-ભોજન યોગ્ય

પદાર્થોનો ચક્રમ-સંસ્કાર કરીએ છીએ, તેનું તમે જુષધ્વમ્-સેવન કરો, શન્તમેન-અત્યંત કલ્યાણકારક અવસા-રક્ષણ આદિ કર્મની સાથે આ-ગત-આવો.

અથ-એ પછી ન:-અમારા માટે શમ્-સુખ અને અરપ:-સત્યાચરણને દધાત-ધારણ કરો તથા દુઃખને યો:-અમારાથી દૂર કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે પિતૃ-જનોની સેવા સંતાનો કરે તેઓ પોતાના સંતાનોને સુશિક્ષાથી સુશીલતાને ધારણ કરે. (૫૫)

આહં પિતૃન્સુવિદત્રૌં૨ઽઅવિત્સિ નપાતં ચ વિક્રમણં ચ વિષ્ણોઃ ।

બર્હિષદો યે સ્વધયા સુતસ્ય ભજન્ત પિત્વસ્તઽહાગમિષ્ઠાઃ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : યે-જે બર્હિષદ:-ઉત્તમ આસન પર વિરાજમાન પિતર લોકો ઇહ-આ વર્તમાન કાલમાં સ્વધયા-અન્ન આદિથી તૃપ્ત સુતસ્ય-શુદ્ધ કરેલ પિત્વ:-સુગંધિત પાનનું ચ-પણ આ-ભજન્ત-સેવન કરે છે તે-તેઓ આગમિષ્ઠા:-અમારી પાસે આવે.

જે આ સંસારમાં વિષ્ણો:-વ્યાપક પરમાત્માના નપાતમ્-નાશરહિત વિક્રમણમ્-વિવિધ સૃષ્ટિક્રમને ચ-પણ જાણે છે, તે સુવિદત્રાન્-ઉત્તમ સુખાદિનું દાન આપનારા પિતૃન્-પિતરોને અહમ્-હું અવિત્સિ-જાણું છું. (૫૬)

ભાવાર્થ : જે પિતર લોકો વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા કરે છે અને કરાવે છે, તેઓની પુત્ર અને કન્યાઓ સમ્યક્ સેવા કરે. (૫૬)

ઉપહૂતાઃ પિતરઃ સોમ્યાસૌં બર્હિષ્ષેષુ નિધિષુ પ્રિયેષુ ।

તઽઆગમન્તુ તઽહુ શ્રુવન્ત્વધિં બ્રુવન્તુ તેઽવન્ત્વસ્માન્ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : જે સોમ્યાસ:-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પિતર:-પિતરો બર્હિષ્ષેષુ-ઉત્તમોમાં શ્રેષ્ઠ, પ્રિયેષુ-પ્રીતિકારક નિધિષુ-રત્નાદિથી પૂર્ણ કોશોને માટે ઉપહૂતા:-બોલાવેલા છે, તે-તેઓ ઇહ-એ અમારી સમીપના સ્થાનમાં આ-ગમન્તુ-આવે, તે-તેઓ અમારા વચનો-વાતોને શ્રુવન્તુ-સાંભળે, તે-તેઓ અસ્માન્-અમને અધિ-બ્રુવન્તુ-અધિક ઉપદેશથી બોધયુક્ત કરે, તે-તેઓ અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થી અધ્યાપકોને સમીપ બોલાવીને, તેઓનો સત્કાર કરીને તેઓ દ્વારા વિદ્યા ગ્રહણ કરવા ઈચ્છે, તેને તેઓ પ્રેમથી ભણાવે.

તેમજ તેમને વિષયાસક્તિ આદિ દુષ્ટ કર્મોથી સર્વ રીતે દૂર રાખે. (૫૭)

આ યન્તુ નઃ પિતરઃ સોમ્યાસૌંઽગ્નિષ્વાન્તાઃ પૃથિભિર્દેવ્યાનૈઃ ।

અસ્મિન્ યજ્ઞે સ્વધયા મદન્તોઽધિં બ્રુવન્તુ તેઽવન્ત્વસ્માન્ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : જે સોમ્યાસ:-ચન્દ્રમાની સમાન શાન્ત, શમ-દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત, અગ્નિષ્વાન્તાઃ-અગ્નિ આદિ પદાર્થવિદ્યામાં નિપુણ, નઃ-અમારા પિતર:-અન્ન અને વિદ્યાના દાનથી રક્ષક, જનક =પિતા,

અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે તે-તેઓ દેવયાનૈઃ-આપ્ત-વિદ્વાન્ લોકો જે માર્ગોથી જાય છે તે પથિભિઃ-ધર્મયુક્ત માર્ગોથી આ + યન્તુ-આવે.

અસ્મિન્-એ યજ્ઞે-અધ્યાપન અને ઉપદેશ રૂપ યજ્ઞ-વ્યવહારમાં વિદ્યમાન રહીને સ્વધયા-અન્ન આદિથી મદન્તઃ-આનંદિત બનીને અસ્માન્-અમને અધિ + બ્રુવન્તુ-અધિષ્ઠાતા બનીને ઉપદેશ કરે અને ભણાવે, અમારી અવન્તુ-સદા રક્ષા કરે. (૫૮)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓએ વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ પિતર લોકોથી વિદ્યા અને રક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને આપ્તજનો [સત્યવાદી, નિષ્કપટી અને પરોપકારી] ના માર્ગથી ચાલીને સર્વની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૫૮)

અગ્નિષ્વાત્તાઃ પિતર ઽ એહ ગચ્છત્ સદઃસદઃ સદત સુપ્રણીતયઃ ।

અત્તા હવીશ્ષિ પ્રયતાનિ બર્હિષ્યથા રયિઃ સર્વવીરં દધાતન ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : સુપ્રણીતયઃ-અત્યુત્તમ ન્યાયમાર્ગથી યુક્ત, અગ્નિષ્વાત્તાઃ-અગ્નિ આદિ વિદ્યાના જ્ઞાતા પિતરઃ-પાલક પિતરઃ-આપ ઇહ-આ સમયે વિદ્યા પ્રચાર માટે આ-ગચ્છત-આવો.

સદઃ સદઃ-પ્રત્યેક ઘરમાં સદત-બેસો, પ્રયતાનિ-પ્રયત્નથી સિદ્ધ કરેલ હર્વીષિ-ભોજનને યોગ્ય અન્ન આદિ પદાર્થોનો અન્ન-ભોગ કરો.

અથ-ત્યાર પછી બર્હિષિ-વિદ્યા પ્રચારરૂપ વ્યવહારમાં સ્થિત બનીને અમારા માટે સર્વવીરમ્-સર્વ વીર પુરુષોને કરાવનારા રયિમ્-ધનને દધાતન-ધારણ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ઉપદેશ માટે પ્રત્યેક ઘરમાં આવાગમન કરીને સત્યધર્મનો પ્રચાર કરે છે, તેઓ ગૃહસ્થો દ્વારા શ્રદ્ધાપૂર્વક આપેલા અન્ન-પાન આદિનું સેવન કરે.

સર્વને શરીર અને આત્માના બળને યોગ્ય અને પુરુષાર્થી બનાવીને ધનવાન બનાવે. (૫૯)

યેઽઅગ્નિષ્વાત્તા યેઽઅનગ્નિષ્વાત્તા મધ્યે દિવઃ સ્વધયા માદયન્તે ।

તેભ્યઃ સ્વરાડસુનીતિમેતાં યથાવશં તન્વં કલ્પયાતિ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : યે-જે અગ્નિષ્વાત્તાઃ-ઉત્તમ રીતિથી અગ્નિવિદ્યાના જ્ઞાતા, યે-જે અનગ્નિષ્વાત્તાઃ-અગ્નિ વિદ્યાથી ભિન્ન અન્ય પદાર્થ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા વા જ્ઞાની પિતરો દિવઃ-વા વિજ્ઞાન આદિ પ્રકારના મધ્યે-મધ્યમાં સ્વધયા-પોતાના પદાર્થોની ધારણ ક્રિયાથી માદયન્તે-આનંદિત થાય છે, તેભ્યઃ-તે પિતરો માટે સ્વરાટ્-સ્વયં પ્રકાશ સ્વરૂપ પરમાત્મા એતામ્-એ અસુનીતિમ્-પ્રાણોને પ્રાપ્ત કરનારા તન્વમ્-શરીરને યથાવશમ્-કામના અનુસાર કલ્પયાતિ-સમર્થ બનાવે. (૬૦)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જે અગ્નિ આદિ પદાર્થ વિદ્યાને જાણીને તેનો પ્રસાર કરે છે અને જે જ્ઞાની વિદ્વાનો પોતાના જ પદાર્થોથી સંતુષ્ટ રહે છે, તેઓનાં શરીરોને આપ દીર્ઘાયુ બનાવો, એ [વિષય આપથી] પ્રાર્થના યોગ્ય છે. (૬૦)

અગ્નિષ્વાત્તાનૃતુમતૌ હવામહે નારાશ્સે સૌમપીથં યઽઆશુઃ ।

તે નો વિપ્રાસઃ સુહવાં ભવન્તુ વયથ્ઃ સ્યામ્ પતયો રયીણામ્ ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : એ-જે સોમપીથમ્-સોમ આદિ ઉત્તમ ઔષધિ રસનું આશુઃ-સેવન કરે છે, જે ઋહુમતઃ- પ્રશંસિત વસંત આદિ ઋતુઓમાં ઉત્તમ કર્મ કરનારા, અગ્નિષ્વાત્તાન્-ઉત્તમ રીતે અગ્નિ વિદ્યાના જ્ઞાતા, પિતા આદિ જ્ઞાનીઓને અમે નારાણંસે-મનુષ્યોમાં પ્રશંસારૂપ સત્કાર પૂર્ણ વ્યવહારથી હવામહે-બોલાવીએ છીએ, તે-તેઓ વિપ્રાસઃ-મેધાવી લોકો નઃ-અમારા માટે સુહવાઃ-ઉત્તમ પદાર્થોના દાતા ભવન્તુ-બને અને વયમ્-તેઓની કૃપાથી રયીણામ્-ધનોના પતયઃ-સ્વામી સ્યામ-બનીએ. (૬૧)

ભાવાર્થ : સંતાનોએ પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા, દેશકાલના જાણકાર, પ્રશસ્ત ઔષધિઓના રસનું સેવન કરનારા, વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ પિતા આદિને સત્કાર માટે બોલાવીને, તેઓના સહયોગથી ધન આદિ અશ્વર્યથી સંપન્ન બને. (૬૧)

આચ્યા જાનું દક્ષિણતો નિષદ્યેમં યજ્ઞમ્ભિગૃણીત્ વિશ્વેં ।

મા હિંસિષ્ટ પિતરઃ કેન ચિન્નો યદ્ આગઃ પુરુષતા કરામ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વે-સર્વ પિતરઃ-પિતૃલોકો ! તમે કેનચિત્-કોઈ કારણે નઃ-અમારી જે પુસ્મતા-પુરુષતા છે. તેનો મા હિંસિષ્ટ-નાશ ન કરો, જેથી અમે સુખને કરામ-પ્રાપ્ત કરીએ.

યત્-જે વઃ-તમારા આગઃ-અપરાધને અમે છોડાવીએ.

તમે ઇમમ્-આ યજ્ઞમ્-સત્કાર ક્રિયારૂપ વ્યવહારને અભિ-ગૃણીત્-અમારી સમક્ષ પ્રશંસિત કરો.

અમે જાનુ-ગોઠણને આચ્ય-નીચે રાખીને દક્ષિણતઃ-તમારી જમણી બાજુમાં નિષદ્ય-બેસીને તમારો નિરંતર સત્કાર કરીએ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેના પિતૃજનો જ્યારે તેઓની સમીપ આવે અથવા તેઓ સ્વયં તેઓની સમીપ જાય, ત્યારે તેઓ સંતાન ભૂમિ પર ગોઠણ ટેકવીને, પ્રણામ કરીને તેઓને પ્રસન્ન કરે,

પિતૃજનો આશીર્વાદ, વિદ્યા તથા સુશિક્ષામય ઉપદેશના દાનથી પોતાના સંતાનોને પ્રસન્ન કરીને તેઓની સદા રક્ષા કરે. (૬૨)

આસીનાસોઽઅરુણીનામુપસ્થેં રયિં ધત્ત દાશુષે મર્ત્યાય ।

પુત્રેભ્યઃ પિતરસ્તસ્ય વસ્વઃ પ્રયચ્છત્ તઽહુર્જી દધાત ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે પિતરઃ-પિતૃઓ ! તમે ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં અરુણીનામ્-ગૌરવર્ણયુક્ત સ્ત્રીઓની ઉપસ્થે-સમીપમાં આસીનાસઃ-બેઠેલાં પુત્રેભ્યઃ-પુત્રોને તથા દાશુષે-દાતા મર્ત્યાય-મનુષ્ય માટે રયિમ્-ધનને ધત્ત-ધારણ કરો, તસ્ય-તે વસ્વઃ-ધનના ભાગોને પ્ર-યચ્છત્-પ્રદાન કરો, જેથી તે-તેઓ સ્ત્રી આદિ સર્વે ઋર્જમ્-પરાક્રમને દધાત-ધારણ કરે. (૬૩)

ભાવાર્થ : તે જ વૃદ્ધ પિતર છે, જે સ્વપત્નીના વ્રતધારી, સ્વપત્નીનો સત્કાર કરનારા બનીને, પોતાના

સંતાનોનો દાયભાગ તથા સત્પાત્રોને સદા દાન આપે છે. તેઓ સંતાનોના માટે માનનીય છે. (૬૩)

યમંગ્ને કવ્યવાહન્ ત્વં ચિન્મન્યસે રયિમ્ ।

તન્નો ગીર્ભિઃ શ્રવાચ્યં દેવત્રા પનયા યુજમ્ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે કવ્યવાહન-બુદ્ધિમાનોની સમીપ ઉત્તમ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્ને-અગ્નિની સમાન પ્રકાશયુક્ત વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ ગીર્ભિઃ-મૃદુ વાણીઓથી શ્રવાચ્યમ્-સંભળાવા યોગ્ય, દેવત્રા-વિદ્વાનોમાં યુજમ્-યુક્ત કરવા યોગ્ય યમ્-જે રયિમ્-ઐશ્વર્યને મન્યસે-જાણે છે, તમ્-તેને ચિત્-પણ નઃ-અમારા માટે પનય-પ્રદાન કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : પિતરોએ પુત્રો તથા સત્પાત્રોના માટે પ્રશંસનીય ધનનો સંચય કરવો જોઈએ, તેથી તેઓને વિદ્વાન્ બનાવીને, સત્યધર્મના ઉપદેશકો બનાવીને, વિદ્યા અને ધર્મનો પ્રચાર કરાવવો જોઈએ. (૬૪)

યોઽઅગ્નિઃ કવ્યવાહનઃ પિતૃન્યક્ષદૃતાવૃધઃ ।

પ્રેદુ હવ્યાનિ વોચતિ દેવેભ્યશ્ચ પિતૃભ્ય આ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે કવ્યવાહનઃ-વિદ્વાનોના શ્રેષ્ઠ કર્મોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન વિદ્યાઓમાં પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ઋઘ્નાવૃધઃ-વેદ વિદ્યાથી વૃદ્ધ પિતૃન્-પિતરોનો યક્ષત્-સત્કાર કરે છે, તે ઙ્ઙ્ઙ્ઙ-વિચારપૂર્વક દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો ચ-તથા પિતૃભ્યઃ-જનક આદિ પિતરોને માટે હવ્યાનિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનોનો પ્રાવોચતિ-સારી રીતે સર્વ પ્રકારે ઉપદેશ કરે છે. (૬૫)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચર્યથી પૂર્ણ વિદ્યાવાન હોય છે, તેઓ વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન્ અને પિતરોમાં પિતર માનવામાં આવે છે. (૬૫)

ત્વમંગ્નઽઈંદ્રિતઃ કવ્યવાહનાવાહૃવ્યાનિ સુરભીણિ કૃત્વી ।

પ્રાદાઃ પિતૃભ્યઃ સ્વધયા તેઽઅક્ષન્નદ્ધિ ત્વં દેવ પ્રયતા હવીંષિ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : હે કવ્યવાહન-કવિઓનાં પ્રશસ્ત કર્મોને પ્રાપ્ત કરનાર અગ્ને-અગ્નિની સમાન પવિત્ર વિદ્વાન્ પુત્ર ! ઈંદ્રિતઃ-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત ત્વમ્-તું સુરભીણિ-સુગંધ આદિ યુક્ત હવ્યાનિ-ખાવા યોગ્ય પદાર્થો કૃત્વી-બનાવીને અવાટ્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને પિતૃભ્યઃ-પિતરોને માટે પ્રાદાઃ-પ્રદાન કર, તે-તે પિતરો સ્વધયા-અન્ન આદિ એ પદાર્થોનો અક્ષન્-ભોગ કરે.

હે દેવ-વિદ્વાન્ દાતા ! ત્વમ્-તું પ્રયતા-પ્રયત્નથી પ્રાપ્ત હવીંષિ-ખાવાં યોગ્ય પદાર્થોનું-અન્નોનું અદ્ધિ-ભોજન કર. (૬૬)

ભાવાર્થ : પુત્ર આદિ ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કૃત, સુગંધ આદિથી યુક્ત, અન્ન અને પાનોથી પિતૃજનોને ભોજન કરાવીને સ્વયં ઉક્ત પદાર્થોનું ભોજન કરે, એ જ પુત્રોની યોગ્યતા છે.

જે ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કૃત અન્ન-પાનનું સેવન કરે છે, તેઓ નીરોગ અને શતાયુ બને છે. (૬૬)

યે ચેહ પિતરો યે ચ નેહ યાંશ્ચ વિદ્વા યાંરડ્ડ ચ ન પ્રવિદ્વા ।

ત્વં વૈત્થ યતિ તે જાતવેદઃ સ્વધાભિર્યજ્ઞઃ સુકૃતં જુષસ્વ ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-નવીન તીક્ષ્ણ બુદ્ધિવાળા વિદ્વાન્ ! યે-જે ઇહ-અહીં ચ-જ પિતરઃ-પિતા આદિ જ્ઞાનીજનો છે, ચ-અને યે-જે ઇહ-અહીં ન-નથી ચ-અને અમે યાન્-જેને વિદ્વા-જાણીએ છીએ ચ-અને યાન્-જેને ન-પ્રવિદ્વા-જાણતા નથી, તે યતિ-જેટલાને ત્વમ્-આપ વૈત્થ-જાણો છો ડ-અને તે-તેઓ આપને પણ જાણે છે, તેનું સેવારૂપ સુકૃતમ્-પુણ્યજનક યજ્ઞમ્-સત્કાર રૂપ વ્યવહારને સ્વધાભિઃ-અન્નાદિથી જુષસ્વ-સેવન કરો. (૬૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રત્યક્ષ અથવા અપ્રત્યક્ષ વિદ્વાન્, અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે, તે સર્વને બોલાવીને અન્નાદિથી સદા સત્કાર કરો. જેથી આપ-સ્વયં પણ સર્વત્ર સત્કારને પ્રાપ્ત કરો. (૬૭)

દ્વદં પિતૃભ્યો નમોઽસ્ત્વદ્ય યે પૂર્વાસો યડપરાસ ડ્યુઃ ।

યે પાર્થિવે રજસ્યા નિષત્તા યે વા નૂનઃ સુવૃજનાસુ વિક્ષુ ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : યે-જે પિતરો પૂર્વાસઃ-અમારાથી વિદ્યા વા વયમાં વૃદ્ધ છે, યે-જે ઉપરાસઃ-વાનપૃસ્થ વા સંન્યાસ આશ્રમને પ્રાપ્ત, ગૃહાશ્રમના વિષય ભોગોથી ઉદાસીન ચિત્ત પિતરજનો ડ્યુઃ-પ્રાપ્ત થાય ;

યે-જે પાર્થિવે-પૃથિવી પર પ્રસિદ્ધ રજસિ-લોકમાં-સ્થાનમાં આ-નિષત્તાઃ-નિવાસ કરનારા છે, વા-અથવા યે-જે નૂનમ્-નિશ્ચિત રૂપથી સુવૃજનાસુ-ઉત્તમ ગતિવાળી વિક્ષુઃ-પ્રજાઓમાં પ્રયત્ન કરે છે; તે પિતૃભ્યઃ-પિતરોને માટે અદ્ય-આ જ ઇદમ્-આ નમઃ-સુગંધિત અન્ન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે પ્રજાને શુદ્ધ કરનાર, મારાથી શ્રેષ્ઠ, વિરક્ત આશ્રમ[વાનપ્રસ્થ, સંન્યાસ]ને પ્રાપ્ત પિતા આદિ છે, તેની પુત્ર આદિ મનુષ્યોએ સદા સેવા કરવી જોઈએ, અન્યથા કેટલીય હાનિ થાય છે. (૬૮)

અધા યથા નઃ પિતરઃ પરાસઃ પ્રત્નાસોઽગ્નઽઋતમાશુષાણાઃ ।

શુચીદ્યન્દીર્ઘિતિમુક્થશાસઃ ક્ષામા ભિન્દન્તોઽઅરુણીરપ વ્રન્ ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! યથા-જેમ નઃ-અમારા પરાસઃ-ઉત્તમ, પ્રત્નાસઃ-પ્રાચીન, ઉક્થશાસઃ-ઉત્તમ શિક્ષા કરનારા, શુચિ-પવિત્ર ઋત્તમ્-સત્યને આશુષાણાઃ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરનાર પિતરઃ-પિતા આદિ જ્ઞાનીજન દીર્ઘિતમ્-વિદ્યા-પ્રકાશ, અરુણીઃ-સુશીલતાથી પ્રકાશમય સ્ત્રીઓ અને ક્ષામા-નિવાસ ભૂમિને અચન્-પ્રાપ્ત કરે છે.

અદ્ય-તદનન્તર અવિદ્યાનું ભિન્દન્તઃ-વિદારણ કરતાં ઇત્-જ અંધકારરૂપ આવરણોને અપ-વ્રન્-દૂર

કરે છે, તેની તું એ પ્રકારે સેવા કર. (૬૯)

ભાવાર્થ : જેઓ જનક-પિતા આદિ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવીને અવિદ્યાનું નિવારણ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સર્વ લોકો દ્વારા સત્કાર કરવા યોગ્ય બને છે. (૬૯)

उशन्तस्त्वा नि धीमह्युशन्तः समिधीमहि ।

उशन्नुशतऽआ वह पितृन्हविषेऽअत्तवे ॥ ७० ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! વા પુત્ર ! તારી **उशन्तः**-કામના કરતાં અમે **त्वा**-તને **नि-धीमहि**-વિદ્યાનિધિ રૂપ બનાવીએ.

उशन्तः-કામના કરતાં અમે તને **समिधीमहि**-ઉત્તમ વિદ્યાથી પ્રકાશિત કરીએ.

उशन्-કામના કરતાં તું **हविषे**-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થને **अत्तवे**-ખાવા માટે **उशतः**-કામના કરનારા અમે **पितृन्**-પિતરોને **आ-वह**-સારી રીતે પ્રાપ્ત કર. (૭૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાનું લોક; બુદ્ધિમાન, જિતેન્દ્રિય કૃતજ્ઞ-ઉપકાર માનનારા, પરિશ્રમી અને વિચારશીલ વિદ્યાર્થીઓની નિત્ય કામના કરે.

તેમજ વિદ્યાર્થી પણ એવા અધ્યાપક વિદ્યાનોની સેવા કરીને વિદ્યાનું બને. (૭૦)

अपां फेनेन नमुचेः शिरऽइन्द्रोदवर्तयः । विश्वा यदजयः स्पृधः ॥ ७१ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી સેનાપતિ ! જેમ સૂર્ય **अपाम्**-જલોની **फेनेन**-વૃદ્ધિથી **नमुचेः**-પોતાના જલ-સ્વરૂપને ન છોડનાર વાદળોનાં **शिरः**-ઘનાકાર ઉપરના ભાગને વિખેરી નાખે છે, તેમ તું પોતાની સેનાઓને **उदवर्तयः**-ઉન્નત કર, **यत्**-જે **विश्वाः**-સર્વ **स्पृधः**-સ્પર્ધા કરનારી શત્રુઓની સેના છે, તેને **अजयः**-જીત. (૭૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દ્વારા [તેના પ્રકાશથી] ઢંકાયેલ વાદળાંઓ ઉમડે છે, તેમજ તે શત્રુ પણ વારંવાર ઊઠે છે. તે જ્યાં સુધી પોતાના બળને અલ્પ તથા અન્યોના બળને અધિક જુએ છે, ત્યાં સુધી શાન્ત રહે છે. (૭૧)

सोमो राजामृतं सुत ऋजीषेणाजहान्मृत्युम् ।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥ ७२ ॥

પદાર્થ : જે **ऋतेन**-સત્ય બ્રહ્મના સંગથી **अन्धसः**-સુસંસ્કૃત અન્નાદિના સંબંધી **सत्यम्**-વિદ્યમાન દ્રવ્યોમાં ઉત્તમ પદાર્થ, **विपानम्**-વિવિધ પાન કરવામાં સાધન, **शुक्रम्**-શીઘ્ર કાર્ય કરાવનાર **इन्द्रियम्**-ધન, **इन्द्रस्य**-પરમ ઐશ્વર્ય વાળા જીવના **इन्द्रियम्**-શ્રોત આદિ ઈન્દ્રિય, **इदम्**-જલ, **पयः**-દૂધ, **अमृतम्**-અમૃતરૂપ બ્રહ્મ વા ઔષધિનો સાર અને **मधु**-મધનું ગ્રહણ કરે છે; તે **अमृतम्**-અમૃતરૂપ આનંદને પ્રાપ્ત

થઈને સુતઃ-સંસ્કાર યુક્ત સોમઃ-ઐશ્વર્યવાન પ્રેરક રાજા-ન્યાય વિદ્યાથી પ્રકાશમાન રાજા ઋક્ષીષેણ-સરળ ભાવથી મૃત્યુમ્-મૃત્યુ દુઃખને અજહાત્-છોડી દે છે. (૭૨)

ભાવાર્થ : જેઓ સુશીલ બનીને વિદ્વાનોના સંગથી સર્વ શુભ લક્ષણોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ મૃત્યુ-દુઃખને છોડીને મોક્ષ-સુખને ગ્રહણ કરે છે. (૭૨)

અદ્ભ્યઃ ક્ષીરં વ્યપિબત્ ક્રુઙ્કાઙ્ગિરસો ધિયા ।

ઋતેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનં શુક્રમન્ધસુઙ્ગ્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદંપયોઽમૃતં મધુ ॥ ૭૩ ॥

પદાર્થ : જે આઙ્ગિરસઃ-અંગિરા વિદ્વાનથી બનેલા વિદ્વાન્ ધિયા-કર્મના દ્વારા અદ્ભ્યઃ-જલોથી ક્ષીરમ્-દૂધને ક્રુઙ્ક-કૌંચ પક્ષીની સમાન થોડું-થોડું વ્યપિબત્-પાન કરે છે, સઃ-તે ઋત્નેન-યથાર્થ યોગા-ભ્યાસથી ઙ્ગ્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યયુક્ત જીવના અન્ધસઃ-અન્નાદિના યોગથી ઙ્ગ્દ્રમ્-એ પ્રત્યક્ષ સત્યમ્-સત્ય પદાર્થોમાં અવિનાશી વિપાનમ્-વિવિધ શબ્દ, અર્થ, સંબંધયુક્ત શુક્રમ્-પવિત્ર ઙ્ગ્દ્રિયમ્-દિવ્ય વાણીને, પયઃ-ઉત્તમ રસ, અમૃતમ્-રોગનાશક ઔષધિ, મધુ-મધુરતા અને ઙ્ગ્દ્રિયમ્-દિવ્ય શ્રોતને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૩)

ભાવાર્થ : જેઓ સત્ય આચરણ આદિ કર્મોથી વેદકશાસ્ત્રની વિધિથી યુક્ત આહાર-વિહાર કરે છે, તેઓ સત્ય બોધ અને સત્ય વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૩)

સોમમદ્ભ્યો વ્યપિબ્છન્દસા હ્સઃ શુચિષત્ ।

ઋતેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનં શુક્રમન્ધસુઙ્ગ્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં મધુ ॥ ૭૪ ॥

પદાર્થ : જે શુચિષત્-પવિત્ર વિદ્વાનોમાં બેસનાર, હ્સઃ-દુઃખનાશક વિવેકીજન છન્દસા-સ્વચ્છંદતાથી અદ્ભ્યઃ-ઉત્તમ સંસ્કારયુક્ત જલોથી સોમમ્-સોમલતા આદિ મહોષધિઓના સાર રસને વ્યપિબત્-વિવિધ પ્રકારથી પાન કરે છે, તે ઋત્નેન-સત્યવેદ વિજ્ઞાનથી અન્ધસઃ-સુગંધિત અન્નના દોષ નિવારક, શુક્રમ્-શુદ્ધિ કરનાર, વિપાનમ્-વિવિધ રક્ષાથી યુક્ત ગુણ, સત્યમ્-પરમેશ્વર આદિ સત્ય પદાર્થોમાં ઉત્તમ, ઙ્ગ્દ્રિયમ્-પ્રજ્ઞાનરૂપ, ઙ્ગ્દ્રસ્ય-યોગવિદ્યાથી ઉત્પન્ન પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર, ઙ્ગ્દ્રમ્-એ પ્રત્યક્ષ પ્રતીતિના આશ્રય પયઃ-ઉત્તમ જ્ઞાન રસવાળા, અમૃતમ્-મોક્ષ, મધુ-મધુ વિદ્યા અને ઙ્ગ્દ્રિયમ્-જીવથી સેવન કરવા યોગ્ય શુભકર્મને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તે જ અખિલ આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઉચિત આહાર-વિહાર કરનારા બનીને વેદોને ભણીને, યોગાભ્યાસ કરીને, અવિદ્યા આદિ કલેશને હટાવીને, યોગની સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેના અભિમાનનો ત્યાગ કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ બ્રહ્માનંદને ભોગવે છે. (૭૪)

અન્નાત્પરિસ્તુતો રસં બ્રહ્મણા વ્યપિબત્ ક્ષત્રં પયઃ સોમં પ્રજાર્પતિઃ ।

ઋતેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનં શુક્રમન્ધસુઙ્ગ્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં

મધુ' ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : જે બ્રહ્મણા-ચારે વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્મા સાથે પ્રજાપતિ:-પ્રજાના રક્ષક સભાપતિ રાજા, પરિસ્ત્રુત:-સર્વત્રથી પાકેલા અન્નાત્-જવ આદિ અન્નથી નીકળેલા પય:-દૂધ સમાન પદાર્થ, સોમમ્-ઐશ્વર્યયુક્ત રસમ્-સારરૂપ રસ અને ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિય કુળને વ્યપિબત્-ગ્રહણ કરે છે; તે ઋત્ને-વિદ્યા તથા વિનયથી યુક્ત ન્યાયથી અન્ધસ:-અંધકાર રૂપ અન્યાયના નિવારક પુરુષ, શુક્રમ્-પરાક્રમી, વિપાનમ્-વિવિધ રક્ષણના હેતુ, સત્યમ્-સત્ય વ્યવહારોમાં શ્રેષ્ઠ, ઇન્દ્રિયમ્-ઈન્દ્રનામક પરમાત્મા પ્રદત્ત પદાર્થ, ઇન્દ્રસ્ય-સમગ્ર ઐશ્વર્યના પ્રદાતા રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવનારા, ઇદમ્-એ પ્રત્યક્ષ પય:-પીવા યોગ્ય દૂધ, અમૃતમ્-અમૃત સમાન સુખદાયક રસ અને મધુ-મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત ઇન્દ્રિયમ્-રાજા આદિથી સેવિત ન્યાયાચરણને પ્રાપ્ત કરે છે, તે સદા સુખી બને છે. (૭૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની અનુમતિથી રાજ્યની વૃદ્ધિ ઈચ્છે છે, તેઓ અન્યાયની નિવૃત્તિ કરવા અને રાજ્યની વૃદ્ધિમાં સમર્થ બને છે. (૭૫)

રેતો મૂત્રં વિજહાતિ યોનિં પ્રવિશદિન્દ્રિયમ્ । ગર્ભો જરાયુણાવૃત્ત ઽ ઉલ્વં જહાતિ જન્મના । ઋતેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનં શુક્રમન્ધસુઽન્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં મધુ' ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્રિયમ્-પુરુષનું લિંગ ઈન્દ્રિય યોનિમ્-સ્ત્રીની યોનિમાં પ્રવિશત્-પ્રવિષ્ટ થઈને રેત:-વીર્યને વિ-જહાતિ-વિશેષ કરીને છોડે છે, તેથી અન્યત્ર મૂત્રમ્-પ્રસ્રાવને છોડે છે.

તે વીર્ય જરાયુણા-જરાયુથી આવૃત:-આચ્છાદિત ગર્ભ:-ગર્ભ ઉત્પન્ન થાય છે. જન્મના-જન્મ થતાં ઉલ્વમ્-આવરણને જહાતિ-છોડી દે છે.

તે ઋત્ને-બહારના વાયુની સાથે અન્ધસ:-આવરણને દૂર કરનારા પદાર્થો, વિપાનમ્-વિવિધ પ્રકારના પાન, શુક્રમ્-પવિત્રતા, સત્યમ્-વર્તમાનમાં શ્રેષ્ઠ પદાર્થ ઇન્દ્રસ્ય-જીવના સંબંધી ઇન્દ્રિયમ્-ધનને તથા ઇદમ્-એ પય:-રસ સમાન, અમૃતમ્-નાશ રહિત મધુ-પ્રત્યક્ષ આદિ જ્ઞાનના સાધન ઇન્દ્રિયમ્-ચક્ષુ આદિ ઈન્દ્રિયોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૬)

ભાવાર્થ : પ્રાણી જે કાંઈ આહાર કરે છે, તે પરંપરા ક્રમથી વીર્ય બનીને [બીજા આત્માના] શરીરનું કારણ બને છે. પુરુષની ઉપસ્થ-ઈન્દ્રિય સ્ત્રી-સંગથી વીર્યનો ત્યાગ કરે છે. અન્ય કાલમાં તે મૂત્રનો ત્યાગ કરે છે. આથી પ્રતીત થાય છે કે, શરીરમાં મૂત્રના સ્થાન [મૂત્રાશય]થી વીર્ય અન્ય સ્થાન પર રહે છે.

તે વીર્ય કારણ કે સર્વ અંગોથી ઉત્પન્ન થાય છે, એથી જ સર્વ અંગોની આકૃતિવાળું હોય છે. એટલા માટે શરીરથી વીર્ય ઉત્પન્ન થાય છે, તેની આકૃતિયુક્ત જ સંતાન ઉત્પન્ન થાય છે. (૭૬)

દૃષ્ટ્વા રૂપે વ્યાકરોત્સત્યાનૃતે પ્રજાપતિ: । અશ્રંદ્ધામનૃતેઽદધાચ્ચૃદ્ધાંસત્યે પ્રજાપતિ: । ઋતેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનં શુક્રમન્ધસુઽન્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં

મધુ ॥ ૭૭ ॥

પદાર્થ : જે પ્રજાપતિ:-પ્રજાના પાલક/રક્ષક ઈશ્વર ઋત્ને-પોતાના સત્ય વિજ્ઞાનથી સત્યાનૃતે-સત્ય અને અસત્યનું જે સ્ત્રે-નિરૂપણ કરેલ છે તેને દૃષ્ટવા-જ્ઞાન દૃષ્ટિથી જોઈને વ્યાકરોત્-વિવિધ પ્રકારથી ઉપદેશ કરે છે; જે અનૃતે-મિથ્યા ભાષણ આદિમાં અશ્રદ્ધામ્-અપ્રીતિને અદધાત્-ધારણ કરે છે અને સત્યે-સત્પુરુષોમાં વિદ્યમાન સત્યમાં શ્રદ્ધામ્-પ્રીતિને ધારણ કરે છે.

જે અન્ધસ:-અધર્માચરણના નિવર્તક, શુક્રમ્-શુદ્ધિ કરનારા, વિપાનમ્-વિવિધ રક્ષાના સાધન, સત્યમ્-સત્યસ્વરૂપ, ઇન્દ્રિયમ્-ચિત્તને તથા જે ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધર્મના પ્રાપક, ઇદમ્-એ પય:-અમૃતરૂપ સુખદાતા, અમૃતમ્-મૃત્યુ, રોગ નિવારક, મોક્ષ મધુ-મન્તવ્ય અને ઇન્દ્રિયમ્-વિજ્ઞાનના સાધનને ધારણ કરે છે; તે પ્રજાપતિ:-પરમેશ્વર સર્વની ઉપાસના કરવા યોગ્ય દેવ છે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરના ઉપદેશોલા ધર્મનું આચરણ કરે છે, અધર્મનું સેવન કરતા નથી, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. જો ઈશ્વર ધર્મ અને અધર્મનું જ્ઞાન ન કરાવે, તો તેના સ્વરૂપનું જ્ઞાન કોઈને પણ થાય નહીં.

જેઓ આત્માને અનુકૂળ આચરણ કરે છે અને પ્રતિકૂળનો ત્યાગ કરે છે, તેઓ જ ધર્મ અને અધર્મના જ્ઞાનમાં યુક્ત થાય છે, અન્ય નહીં. (૭૭)

વેદેન રૂપે વ્યપિબત્સુતાસુતૌ પ્રજાપતિઃ । ઋત્નેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનઃ શુક્ર-મન્ધસઽન્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં મધુ ॥ ૭૮ ॥

પદાર્થ : જે પ્રજાપતિ:-પ્રજાના પાલક જીવ ઋત્ને-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત, વેદેન-ઈશ્વર પ્રકાશિત ચારેય વેદો દ્વારા સુતાસુતૌ-ધર્મ પ્રેરિત અને અધર્મ અપ્રેરિત સ્ત્રે-સ્વરૂપને વ્યપિબત્-ગ્રહણ કરે છે, તે ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યયુક્ત જીવના અન્ધસ:-અન્ન આદિના વિપાનમ્-વિવિધ પ્રકારના પાનના નિમિત્ત, શુક્રમ્-પરાક્રમ પ્રદાતા વીર્ય, સત્યમ્-સત્યધર્માચરણમાં શ્રેષ્ઠ કર્મ, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, ઇદમ્-જલ આદિ, પય:-દૂધ આદિ, અમૃતમ્-મૃત્યુધર્મરહિત વિજ્ઞાન, મધુ-મધુરાદિ ગુણયુક્ત પદાર્થ અને ઇન્દ્રિયમ્-ઈશ્વર દ્વારા પ્રદત્ત જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭૮)

ભાવાર્થ : વેદોના જ્ઞાતા જ ધર્મ-અધર્મને જાણવા તથા ધર્મના આચરણ અને અધર્મના ત્યાગથી સુખી થાય છે. (૭૮)

દૃષ્ટ્વા પરિસ્તુતો રસઃ શુક્રેણ શુક્રં વ્યપિબત્ પયઃ સોમં પ્રજાપતિઃ ।

ઋત્નેન સત્યમિન્દ્રિયં વિપાનઃ શુક્રમન્ધસઽન્દ્રસ્યેન્દ્રિયમિદં પયોઽમૃતં મધુ ॥ ૭૯ ॥

પદાર્થ : જે પરિસ્તુત:-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત પ્રજાપતિ:-પ્રજાના સ્વામી રાજા આદિ ઋત્ને-યથાર્થ વ્યવહારથી સત્યમ્-ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન રસને દૃષ્ટ્વા-વિચારપૂર્વક જોઈને શુક્રેણ-શુદ્ધ ભાવથી શુક્રમ્-શીઘ્ર સુખકારી પદાર્થ, પયઃ-પાનને યોગ્ય સોમમ્-મહૌષધિના રસનું તથા રસમ્-વિદ્યાના આનંદરૂપ રસનું

વ્યપિબત્-પાન કરે છે વા ગ્રહણ કરે છે, તે-તે અન્ધસઃ-શુદ્ધ અન્નાદિના પ્રાપક, વિપાનમ્-વિશેષ પાનથી યુક્ત, શુક્રમ્-બલકારી-વીર્યવાન, ઇન્દ્રિયમ્-વિદ્વાનથી સેવિત ઇન્દ્રિયને તથા ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષના ઇદમ્-આ પયઃ-ઉત્તમ રસયુક્ત અમૃતમ્-મૃત્યુકારક રોગના નિવારક મધુઃ-મધુરાદિ ગુણયુક્ત અને ઇન્દ્રિયમ્-ઈશ્વર રચિત ધનને-જગતને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વૈદ્યકશાસ્ત્રની રીતિથી ઉત્તમ ઔષધિઓના રસોનું નિર્માણ કરીને યથાસમય, યથાયોગ્ય પાન કરે છે, તે રોગોથી દૂર રહીને શરીર તથા આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૭૯)

સીસેન તન્ત્રં મનસા મનીષિણં ઊર્ણાસૂત્રેણં કવયો વ્યન્તિ ।

અશ્વિનાં યજ્ઞઃ સવિતા સરસ્વતીન્દ્રસ્ય રૂપં વરુણો ભિષ્વજ્યન્ ॥ ૮૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કવયઃ-વિદ્વાન, મનીષિણઃ-બુદ્ધિમાન, સીસેન-સીસાની ધાતુના પાત્ર સમાન મૃદુ, ઊર્ણાસૂત્રેણ-ઊનના દોરાના ધાબળા સમાન પ્રયોજન સાધક, મનસા-અન્તઃકરણથી તન્ત્રમ્-કુટુંબના ધારણની સમાન યન્ત્રકલાઓનું વ્યન્તિ-નિર્માણ કરે છે.

જેમ સવિતા-અનેક વિદ્યા-વ્યવહારોમાં પ્રેરણા કરનાર વિદ્વાન્ સરસ્વતી-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી અને અશ્વિના-વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક બે પુરુષ યજ્ઞમ્-સંગતિ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર કરે છે.

જેમ ભિષ્વજ્યન્-ચિકિત્સાના ઇચ્છુક વસ્તુઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યના સ્ત્રમ્-સ્વરૂપને ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અનેક ધાતુઓ અને સાધન-વિશેષો દ્વારા વસ્ત્ર આદિ બનાવીને કુટુંબનું પાલન કરે છે.

તેમજ યજ્ઞ કરીને તથા ઔષધિ આપીને રોગનું નિવારણ કરે છે તથા શિલ્પ ક્રિયાઓથી પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૮૦)

તદસ્ય રૂપમમૃતઃ શચીભિસ્તિસ્ત્રો દધુર્દેવતાઃ સંસરાણાઃ ।

લોમાન્નિ શષ્પૈર્બહુધા ન તોક્મ્મભિસ્ત્વર્ગસ્ય માશ્સમર્મભવન્ન લાજાઃ ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સંસરાણાઃ-ઉત્તમ દાતા તિસ્ત્રઃ-અધ્યાપક, વિદ્યાર્થી અને પરીક્ષક-ત્રણ દેવતાઃ-વિદ્વાન્, શચીભિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોના દ્વારા બહુધા-અનેક પ્રકારથી જે યજ્ઞને શષ્પૈઃ-દીર્ઘ લોમો-રૂંવાડાઓની સાથે લોમાન્નિ-રૂંવાડાઓને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તત્-જે અસ્ય-યજ્ઞના અમૃતમ્-નાશરહિત સ્ત્રમ્-સ્વરૂપને તમે જાણો.

જે યજ્ઞ તોક્મ્મભિઃ-બાળકોથી અનુષ્ઠાન ન-કરવા યોગ્ય નથી. અસ્ય-એના મધ્યમાં ત્વક્-ત્વયા, માંસમ્-માંસ અને લાજાઃ-શેકેલું સૂકું અને હોમ કરવા યોગ્ય નઅભવત્-હોતું નથી, તેમ પણ તમે જાણો. (૮૧)

ભાવાર્થ : જે લાંબા સમય સુધી જટાધારી બનીને અથવા બ્રહ્મચારી રહીને પૂર્ણ વિદ્યાવાળા, જિતેન્દ્રિય

અને શ્રેષ્ઠ મનુષ્ય છે, તે જ 'યજ-' ધાતુનો અર્થ જાણી શકે છે, બાળક અને અવિદ્વાન નહીં.

તે જ હોમ નામક યજ્ઞ છે કે, જેમાં માંસ, ક્ષાર, ખાટા અને કડવા વગેરે ગુણોથી રહિત પરંતુ સુગંધિત, પુષ્ટિ, મધુર અને રોગનાશક આદિ ગુણોથી યુક્ત હવિ આપવામાં આવે છે, અને સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થો જ હોમને યોગ્ય છે. (૮૧)

તદશ્વિનાં ભિષજાં રુદ્રવર્તનીં સરસ્વતી વયતિ પેશોઽઅન્તરમ્ ।

અસ્થિં મજ્જાનું માસૈરૈઃ કારોત્તરેણ દધતો ગવાં ત્વચિ ॥ ૮૨ ॥

પદાર્થ : જેને સરસ્વતી-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન યુક્ત પત્ની વયતિ-વિસ્તૃત કરે છે-તત્-તે પેશઃ-સુંદર સ્વરૂપ, અસ્થિ-હાડકાં, મજ્જાનમ્-મજ્જા, અન્તરમ્-શરીરના મધ્યભાગમાં સ્થિત અન્ય અવયવોને માસૈરૈઃ-પરિપકવ ઔષધિઓના સારથી કારોત્તરેણ-કૂવાથી સર્વ કામોને, તેમ ગવામ્-પૃથિવી આદિની ત્વચિ-ત્વચા રૂપ ઉપરના ભાગમાં રુદ્રવર્તની-પ્રાણના માર્ગ સમાન માર્ગથી યુક્ત ભિષજા-વૈદ્યક શાસ્ત્રનાં જ્ઞાતા અશ્વિના-વિદ્યાઓમાં પૂર્ણ બે પુરુષ દધતઃ-ધારણ કરે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જેમ વૈદ્યકશાસ્ત્રનાં જાણનારા પતિઓ શરીરનું આરોગ્ય આદિ કરીને સ્ત્રીઓને નિરંતર સુખી રાખે, તેમજ વિદુષી સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને રોગ-રહિત કરે. (૮૨)

સરસ્વતી મનસા પેશલં વસુ નાસત્યાભ્યાં વયતિ દર્શતં વપુઃ ।

રસં પરિસ્ત્રુતા ન રોહિતં નગ્નહુર્ધીરસ્તસરું ન વેમ ॥ ૮૩ ॥

પદાર્થ : સરસ્વતી-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી મનસા-વિજ્ઞાનથી વેમ-નવજાતની ન-સમાન જે પેશલમ્-ઉત્તમ અંગોથી યુક્ત દર્શતમ્-દર્શનીય, વપુઃ-શરીર જલને તથા તસરમ્-દુઃખનાશક, રોહિતમ્-ઉન્નત, પરિસ્ત્રુતા-સર્વ તરફથી પ્રાપ્ત રસમ્-આનંદદાયક રસની ન-સમાન વસુ-દ્રવ્યને વયતિ-બનાવે છે, જે નાસત્યાભ્યામ્-અસત્ય વ્યવહારથી રહિત માતા-પિતા બન્નેને નગ્નહુઃ-શુદ્ધને ગ્રહણ કરનાર ધીરઃ-ધ્યાનવાન તારો પતિ છે, તે બન્નેને અમે પ્રાપ્ત કરીએ. (૮૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાર-સાર વસ્તુને ગ્રહણ કરે છે, તેમ જ સર્વ સ્ત્રી-પુરુષો ગ્રહણ કરે. (૮૩)

પયસા શુક્રમમૃતં જનિત્રઃ સુરયા મૂત્રાજ્જનયન્ત રેતઃ ।

અપામતિં દુર્મતિં બાધમાના ઋવધ્યં વાતઃ સ્બ્વું તદારાત્ ॥ ૮૪ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનો અમતિમ્-નષ્ટ બુદ્ધિ દુર્મતિમ્-વા દુષ્ટબુદ્ધિને અપ બાધમાનાઃ-હઠાવતાં જે ઋવધ્યમ્-જેનાથી આંગળા વગેરે કપાઈ જાય અર્થાત્ અધિક નાશ કરવાનું સાધન વાતમ્-પ્રાપ્ત સ્બ્વમ્-સર્વ પદાર્થોથી સંબંધ રાખનાર, પયસા-જલ વા દૂધથી તથા સુરયા-સોમલતા આદિ ઔષધિના રસથી ઉત્પન્ન થયેલ, મૂત્રાત્-મૂત્રાધાર ઈન્દ્રિયથી જનિત્રમ્-સંતાનોત્પત્તિનું નિમિત્ત અમૃતમ્-અલ્પ વયમાં મૃત્યુ, રોગ નિવારક,

શુક્રમ્-શુદ્ધ રેતઃ-વીર્ય છે, તત્-તેના આરાત્-સમીપથી જનયન્ત-ઉત્પન્ન કરે છે, તે પ્રજાવાન થાય છે. (૮૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુર્ગુણો અને દુષ્ટોનો સંગ ત્યાગ કરીને, વ્યભિચારથી દૂર રહીને અને વીર્યની વૃદ્ધિ કરીને સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેઓ પોતાના કુળને પ્રશંસિત કરે છે. (૮૪)

इन्द्रः सुत्रामा हृदयेन सत्यं पुरोडाशेन सविता जजान ।

यकृत् क्लोमानं वरुणो भिषज्यन् मतस्ने वायव्यैर्न मिनाति पित्तम् ॥ ८५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સુત્રામા-રોગથી શરીરની ઉત્તમ રીતે રક્ષા કરનાર, સવિતા-પ્રેરક, ઇન્દ્રઃ-રોગનાશક વસ્તુઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ભિષજ્યન્-ચિકિત્સા કરીને હૃદયેન-પોતાના આત્માથી સત્યમ્-યથાર્થ ભાવને જજાન-પ્રસિદ્ધ કરે છે અને પુરોડાશેન-સુગંધિત અન્નથી તથા વાયવ્યૈઃ-પ્રાણોમાં શ્રેષ્ઠ-માર્ગોથી યકૃત્-હૃદયથી જમણી બાજુ રહેલ માંસપિંડને ક્લોમાનમ્-કંઠનાડી મતસ્ને-હૃદયની બન્ને તરફની અસ્થિઓ અને પિત્તમ્-પિત્તનો ન + મિનાતિ-નાશ નથી કરતા, તેમ એ સર્વનો તમે નાશ ન કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ વૈદ્યજનો સ્વયં નીરોગ બનીને અન્યોના શરીરના રોગોને જાણીને તેને સદા નીરોગ કરે. (૮૫)

आन्त्राणि स्थालीर्मधु पिन्वमाना गुदाः पात्राणि सुदुघा न धेनुः ।

श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शचीभिरासन्दी नाभिरुदरं न माता ॥ ८६ ॥

પદાર્થ : યુક્તિવાન પુરુષને યોગ્ય છે કે, શચીભિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોથી સ્થાલીઃ-અન્ન પકાવવાના પાત્રોને અગ્નિ પર રાખીને ઔષધિઓનો પાક બનાવીને મધુ-તેમાં મધ નાખી, ભોજન કરીને, આન્ત્રાણિ-ઉદરસ્થ અન્ન પાકની આધારભૂત નાડીઓને, પિન્દમાનાઃ-સેવન અને પ્રીતિના હેતુ ગુદાઃ-ગુદેન્દ્રિયને, પાત્રાણિ-ભોજનના પાત્રોને સુદુઘા-સુખથી દૂધ આપનારી ધેનુઃ-ગાયત્રી ન-સમાન, પ્લીહા-રક્તશોધક માંસપિંડને શ્યેનસ્ય બાજ પક્ષીની પત્રમ્-પાંખની ન-સમાન, માતા-માતાની ન-સમાન આસન્દી-સર્વત્રથી રસ પ્રાપ્ત કરાવનારી નાભિઃ-નાભિ નાડી ઉદરમ્-ઉદરને પુષ્ટ કરે છે. (૮૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ, સુગંધિત અન્નો અને રસોથી શરીરને નીરોગ રાખીને પુરુષાર્થ કરે છે, તેઓ ઈચ્છિત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૬)

कुम्भो वनिष्ठुर्जनिता शचीभिर्यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भोऽअन्तः ।

प्लाशिव्यक्तः शतधार उत्सो दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः ॥ ८७ ॥

પદાર્થ : જે કુમ્ભઃ-કળશની સમાન વીર્ય આદિ ધાતુઓથી પૂર્ણ વનિષ્ઠુઃ-સમાનભાગ કરનાર જનિતા-સંતાનોનાં ઉત્પાદક, પ્લાશિઃ-ઉત્તમ ભોજન કરનાર, વ્યક્તઃ-વિવિધ પુષ્ટિઓથી પ્રસિદ્ધ, શચીભિઃ-ઉત્તમ કર્મો કરીને શતધારઃ-સેંકડો વાણીઓથી યુક્ત, ઉત્સઃ-આર્દ્ર કરનાર કૂવા સમાન, દુહે-પૂર્તિ કરનાર

વ્યવહારમાં સ્થિત ન: સમાન પુરુષ છે-અને જે કુમ્ભી-કુંભીની સમાન સ્ત્રી છે-તે બન્ને પિતૃભ્યઃ-પિતરોને સ્વધામ્-અન્ન પ્રદાન કરે, યસ્મિન્-જે અગ્રે-નવીન યોન્યામ્-ગર્ભાશયની અન્તઃ-અંદર ગર્ભઃ-ગર્ભ ધારણ કરવામાં આવે છે, તેની નિરંતર રક્ષા કરે. (૮૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ વીર્યવાન તથા પુરુષાર્થી બનીને, અન્ન આદિથી વિદ્વાનોને સંતુષ્ટ કરીને, ધર્મપૂર્વક સંતાનોની ઉત્પત્તિ કરે. (૮૭)

મુખ્ઃ સદસ્ય શિર્ ઇત્ સતૈન જિહ્વા પ્વિત્રમશ્વિનાસન્ત્સરસ્વતી ।

ચપ્યં ન પાયુર્ભિષગસ્ય બાલો વસ્તિર્ન શેપો હરસા તરસ્વી ॥ ૮૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જિહ્વા-રસગ્રહણ કરનારી, સરસ્વતી-વાણીની સમાન સ્ત્રી, અસ્ય-એ પતિના સતૈન-સુંદર અવયવોથી વિભક્ત શિરની સાથે શિરઃ-શિરને રાખે, આસન્-મુખની સમીપ પવિત્રમ્-શુદ્ધ મુખમ્-મુખને રાખે, આ રીતે અશ્વિના-ગૃહાશ્રમના વ્યવહારમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષ બન્ને ઇત્-રહે/વર્તે.

જે અસ્ય-એ રોગથી પાયુઃ-રક્ષક, ભિષક્-વૈદ્ય, બાલઃ-બાળકની ન-સમાન વસ્તિઃ-વાસ કરવાના હેતુ પુરુષ શેપઃ-ઉપસ્થ ઈન્દ્રિયને હરસા-બળથી તરસ્વી-કરનાર હોય છે, તે ચપ્યમ્-શાન્તિ કરવાના ન-સમાન સત્-વર્તમાનમાં સંતાનોત્પત્તિના હેતુ બને, તે સર્વને યથાવત્ કરે. (૮૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ ગર્ભાધાનના સમયે પરસ્પર અંગોને પોતાના અંગોને આચ્છાદિત કરીને મુખથી મુખ, નેત્રોથી નેત્ર, મનથી મન અને શરીર સાથે શરીરનું અનુસંધાન કરી ગર્ભાધાન કરે જેથી કુરૂપ અથવા વકાંગ સંતાન ઉત્પન્ન થાય નહિ. (૮૮)

અશ્વિભ્યાં ચક્ષુર્મૃતં ગ્રહાભ્યાં છાગેન તેજો હ્વિષા શૃતેન ।

પક્ષ્માણિ ગોધૂમૈઃ કુવલૈરુતાનિ પેશો ન શુક્રમસિતં વસાતે ॥ ૮૯ ॥

પદાર્થ : જેમ ગૃહાભ્યામ્-ગ્રહણ કરનારા અશ્વિભ્યામ્-બહુભોજી સ્ત્રી-પુરુષોની સાથે કોઈ વિદુષી સ્ત્રી અને વિદ્વાન્ પુરુષ ઉતાનિ-વણેલાં વિસ્તૃત વસ્ત્રો પક્ષ્માણિ-ગ્રહણ કરેલા અન્ય રેશમી અને દુપટ્ટા આદિને વસાતે-ઓઢે, પહેરે અર્થાત્ ધારણ કરે છે, અથવા જેમ આપ પણ છાગેન-બકરી આદિના દૂધની સાથે શૃતેન-પકાવેલ હ્વિષા-હવિની સાથે તેજઃ-પ્રકાશયુક્ત, અમૃતમ્-અમૃતરૂપ ચક્ષુઃ-નેત્રને કુવલૈઃ-સારા શબ્દોવાળા તથા ગોધૂમૈઃ-ઘઉંની સાથે શુક્રમ્-શુદ્ધ અસિતમ્-કાળા પેશઃ-રૂપને ન-સમાન સ્વીકાર કરે, તેમ અન્ય ગૃહસ્થો પણ કરે. (૮૯)

ભાવાર્થ : જેમ ક્રિયા કરેલ સ્ત્રી-પુરુષ પ્રિય દર્શનવાળા, પ્રિય ભોજન કરવાવાળા અને પૂર્ણ સામગ્રીને સંગ્રહણ કરનારા હોય છે, તેમ અન્ય ગૃહસ્થો પણ બને. (૮૯)

અવિર્ન મેષો નસિ વીર્યાય પ્રાણસ્ય પન્થા અમૃતો ગ્રહાભ્યામ્ ।

સરસ્વત્યુપવાકૈવ્યાનં નસ્યાનિ બર્હિર્બદરૈર્જજાન ॥ ૯૦ ॥

પદાર્થ : જેમ ગ્રહાભ્યામ્-ગ્રહણ કરનારાની સાથે સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી-બદરૈઃ-બોરની સમાન ઉપવાકૈઃ-સમીપતા ઉત્પન્ન કરનારા કર્મોથી, જજાન-સંતાનોત્પત્તિ કરે છે, તેમ-જે વીર્યાય-વીર્યને માટે નસિ-નાકમાં પ્રાણસ્ય-પ્રાણનું અમૃતઃ-નિત્ય પન્થાઃ-માર્ગ, વા મેષઃ-અન્યથી સ્પર્ધા કરનારી, અવિઃ-જે રક્ષા કરે છે, તેની નઃ-સમાન, વ્યાનમ્-સર્વ શરીરમાં વ્યાપ્ત વાયુ નસ્યાનિ-નાકની હિતકારક ધાતુ અને બર્હિઃ-વૃદ્ધિ કરનારનો ઉપયોગ કરવામાં આવે છે. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ ધાર્મિક ન્યાયાધીશ પ્રજાનું રક્ષણ કરે છે, તેમ પ્રાણાયામ આદિથી સિદ્ધ કરેલા પ્રાણ યોગીનું સર્વ દુઃખોથી રક્ષણ કરે છે.

જેમ વિદ્યુષી માતા વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી પોતાના સંતાનોને પ્રગતિશીલ બનાવે છે, તેમ વિધિવત્ અનુષ્ઠાન કરનાર યોગ-કર્મ યોગીઓની પ્રગતિ કરાવે છે. (૮૦)

इन्द्रस्य रूपमृषभो बलाय कर्णाभ्यांश्च श्रोत्रममृतं ग्रहाभ्याम् ।

यवा न बर्हिर्भ्रुवि केसराणि कर्कन्धु जज्ञे मधु सारघं मुखात् ॥ ९१ ॥

પદાર્થ : જેમ ગ્રહાભ્યામ્-ગ્રહણ કરનારા હાથોની સાથે ઋષભઃ-જ્ઞાની પુરુષ બલાય-યોગ-સામર્થ્ય માટે યવાઃ-યવોની ન-સમાન કર્ણાભ્યામ્-કાનોથી શ્રોત્રમ્-શબ્દ વિષય, અમૃતમ્-અમૃતરૂપ જલ, કર્કન્ધુ-કર્મને ધારણ કરનારી ઈન્દ્રિયો, સારઘમ્-સમાન રૂપથી સ્વાદથી યુક્ત પદાર્થ, મધુ-મધ બર્હિઃ-વૃદ્ધિકારક વ્યવહાર, ભ્રુવિ-નેત્ર અને લલાટની મધ્યમાં કેસરાણિ-વિજ્ઞાન અર્થાત્ સુષુપ્તમાં પ્રાણવાયુનો નિરોધ કરીને ઈશ્વર વિષયક વિશેષ જ્ઞાનને મુખાત્-મુખથી પ્રકટ કરે છે, તેમ એ સર્વ ઇન્દ્રસ્ય-પરમૈશ્વર્યનું સ્વપ્ન-સ્વરૂપ જજ્ઞે-પ્રકટ થાય છે. (૮૧)

ભાવાર્થ : જેમ નિવૃત્તિ માર્ગમાં પરમ યોગી યોગબળથી સર્વ સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જ ગૃહસ્થે પણ પ્રવૃત્તિ માર્ગમાં સર્વ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૮૧)

आत्मन्नुपस्थे न वृकस्य लोम मुखे श्मश्रूणि व्याघ्रलोम ।

केशा न शीर्षन्यशसे श्रियै शिखा सिंहस्य लोम त्विषिरिन्द्रियाणि ॥ ९२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના આત્મન્-આત્મામાં ઉપસ્થે-સમીપ થવામાં વૃકસ્ય-વરુના લોમ-વાળની ન-સમાન વા વ્યાઘ્રલોમ-વાઘના વાળની ન-સમાન મુખે-મુખ પર શ્મશ્રૂણિ-દાઢી અને મૂંછ, શીર્ષન-શિરમાં કેશાઃ-બાલની ન-સમાન શિખા-લાંબી ચોટલી, સિંહસ્ય-સિંહના લોમ-રૂંવાડા-લોમ સમાન ત્વિષિઃ-ચમકદાર ઇન્દ્રિયાણિ-શ્રોત્રાદિ શુદ્ધ ઈન્દ્રિયો છે, તે યશસે-યશ અને શ્રિયૈ-લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બને છે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જે પરમાત્માની ઉપાસના કરે છે, તે કીર્તિમાન બને છે.

જે યોગનો અભ્યાસ કરે છે, તે વડુ, વાઘ અને સિંહ સમાન એકાન્ત સ્થાનનું સેવન કરીને પરાક્રમી બને છે. જે પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરે છે, તે ક્ષત્રિય પૂર્ણ ઉપમા યોગ્ય બને છે. (૮૨)

અઙ્ગાન્યાત્મન્ ભિષજા તદ્શ્વિનાત્માનમઙ્ગૈઃ સમઘાત્ સરસ્વતી ।

ઇન્દ્રસ્ય રૂપ્શ્ચતમાનમાયુશ્ચન્દ્રેણ જ્યોતિરમૃતં દધાનાઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ભિષજા-શ્રેષ્ઠ વેદ સમાન નીરોગ, અશ્વિના-સિદ્ધ અને સાધક બે વિદ્વાન્ જેમ-સરસ્વતી-યોગિની સ્ત્રી આત્મન્-પોતાના આત્મામાં સ્થિર બનીને અઙ્ગાનિ-યોગના અંગોનું અનુષ્ઠાન કરીને આત્માનમ્-પોતાના આત્માનું સમઘાત્-સમાધાન કરે છે, તે રીતે અઙ્ગૈઃ-યોગના અંગોના દ્વારા જે ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યનું સ્વપ્-રૂપ છે તત્-તેને ધારણ કરે.

જેમ યોગને દધાનાઃ-ધારણ કરતાં યોગીજનો શતમાનમ્-સો વર્ષથી અધિક આયુઃ-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ ચન્દ્રેણ-આનંદથી અમૃતમ્-અવિનાશી જ્યોતિઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્માને ધારણ કરે. (૯૩)

ભાવાર્થ : જેમ રોગી લોકો શ્રેષ્ઠ વેદને પ્રાપ્ત કરીને ઔષધ અને પથ્યનું સેવન કરીને નીરોગ અને આનંદિત બને છે.

તે રીતે યોગના જિજ્ઞાસુ યોગી લોકો એ યોગને પ્રાપ્ત કરીને, યોગના અંગોનું અનુષ્ઠાન કરીને, ક્લેશોથી રહિત બનીને, નિરંતર સુખી બને છે. (૯૩)

સરસ્વતી યોન્યાં ગર્ભમન્તરશ્ચિભ્યાં પત્ની સુકૃતં વિભર્તિ ।

અપાશ્ચ રસેન વરુણો ન સામ્નેન્દ્રશ્ચ શ્રિયૈ જનયન્નપ્સુ રાજા ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે યોગી ! જેમ સરસ્વતી-વિદુષી પત્ની-સ્ત્રી પોતાના પતિથી યોન્યામ્-યોનિની અન્તઃ-અંદર સુકૃતમ્-પુણ્યરૂપ ગર્ભમ્-ગર્ભને વિભર્તિ-ધારણ કરે છે.

અથવા જેમ વસ્ત્રાઃ-ઉત્તમ રાજા-રાજા અશ્ચિભ્યામ્-અધ્યાપક અને ઉપદેશકના દ્વારા અપામ્-જલોના રસેન-રસથી અપ્સુ-પ્રાણોમાં સામ્ના-સંધિની ન-સમાન સુખથી ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને શ્રિયૈ-લક્ષ્મી માટે જનયન્-પ્રકટ કરતાં વિરાજમાન થાય છે, તેમ તું બન. (૯૪)

ભાવાર્થ : જેમ ધર્મપત્ની પતિની આજ્ઞા સાંભળવા તત્પર રહે છે અને તેની સારી રીતે સેવા કરે છે.

જેમ રાજા સામ આદિ દ્વારા રાજ્યના ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ મનુષ્ય યોગના ઉપદેશકની યોગ્ય સેવા કરીને યોગના અંગોના અનુષ્ઠાનથી યોગ સિદ્ધિની ઉન્નતિ કરે. (૯૪)

તેજઃ પશૂનાશ્ચ હૃવિરિન્દ્રિયાવત્ પરિસ્ત્રુતા પયસા સારઘં મધુ ।

અશ્ચિભ્યાં દુઘં ભિષજા સરસ્વત્યા સુતાસુતાભ્યામમૃતઃ સોમઽઙ્ગન્દુઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સુતાસુતાભ્યામ્-સિદ્ધ અને અસિદ્ધ ભિષજા-વેદક વિદ્યાના જ્ઞાતા, અશ્ચિભ્યામ્-વિદ્યામાં વ્યાપક બે વિદ્વાનો પશૂનામ્-ગાય આદિ પશુઓના સંબંધથી પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થનાર પયસા-દૂધથી તેજઃ-પ્રકાશરૂપ ઇન્દ્રિયાવત્-ઇન્દ્રિયોને પ્રશસ્ત કરનાર સારઘમ્-ઉત્તમ સ્વાદયુક્ત મધુ-મધુર હૃવિઃ-ખાવા-પીવા યોગ્ય દુઘમ્-દૂધ આદિ પદાર્થો તથા સરસ્વત્યા-વિદુષી સ્ત્રીથી અમૃતઃ-મૃત્યુધર્મથી રહિત

નિત્ય રહેનાર સોમઃ-ઐશ્વર્ય અને ઇન્દુઃ-ઉત્તમ સ્નેહ યુક્ત પદાર્થ ઉત્પન્ન કરવામાં આવે છે, તે બન્ને યોગ સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૫)

ભાવાર્થ : જેમ ગોપાલક ગાય આદિ પશુઓની સારી રીતે રક્ષા કરીને દૂધ આદિથી સંતુષ્ટ રહે છે, તેમ મન આદિ ઈન્દ્રિયોને દુષ્ટાચારથી પૃથક્ રાખીને યોગીઓએ આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૯૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સોમ આદિ પદાર્થોના ગુણ-વર્ણન કરવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે એમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ઈકોનવિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ વિશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

ક્ષત્રસ્ય યોનિરસિ ક્ષત્રસ્ય નાભિરસિ । મા ત્વા હિંસીન્મા માં હિંસીઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! જેનાથી તું ક્ષત્રસ્ય-રાજ્યનું યોનિ:-કારણ અસિ-છે, ક્ષત્રસ્ય-રાજકુલની નાભિ:-નાભિની સમાન જીવન હેતુ અસિ-છે, એથી ત્વા-તને કોઈ પણ મા-હિંસીત્-મારે નહિ, તું મા-મને મા-હિંસી:-માર નહિ. (૧)

ભાવાર્થ : સ્વામી અને સેવકજનો પરસ્પર એવી પ્રતિજ્ઞા કરે કે, રાજપુરુષો પ્રજાજનોની અને પ્રજાજનો રાજપુરુષોની સદા રક્ષા કરે, જેથી સર્વળ સુખની ઉન્નતિ થાય. (૧)

નિષંસાદ ધૃતવ્રતો વરુણઃ પસ્ત્યાસ્વા । સામ્રાજ્યાય સુક્રતુઃ । મૃત્યોઃ પાહિ વિદ્યોત્પાહિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! આપ સુક્રતુઃ:-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને કર્મવાળા, ધૃતવ્રતઃ:-સત્યને ધારણ કરનાર, વસ્ત્રઃ:-ઉત્તમ સ્વભાવયુક્ત બનીને સામ્રાજ્યાય-ભૂગોળ પર ચક્રવર્તી રાજ્ય કરવા માટે પસ્ત્યાસુ-ન્યાયાલયોમાં આ-નિ-ષસાદ-સર્વત્ર નિત્ય બેસો તથા અમારા વીરોનું મૃત્યોઃ-મૃત્યુથી પાહિ-રક્ષણ કરો; વિદ્યોત્-પ્રકાશમાન અસ્ત્રાદિથી પાહિ-રક્ષા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે ધર્મયુક્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા ન્યાયાધીશ સભાપતિ હોય છે, તે ચક્રવર્તી રાજ્ય તથા પ્રજાની રક્ષા કરી શકે છે; અન્ય નહિ. (૨)

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । અશ્વિનોર્ભૈષજ્યેન તેજસે બ્રહ્મવર્ચસાયાભિ ષિજ્વામિ સરસ્વત્યૈ ભૈષજ્યેન વીર્યાયાન્નાદ્યાયા-ભિષિજ્વામીન્દ્રસ્યેન્દ્રિયેણ બલાય શ્રિયૈ યજ્ઞસેઽભિષિજ્વામિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે શુભ લક્ષણોથી યુક્ત પુરુષ ! સવિતુઃ:-સકલ ઐશ્વર્યના અધિષ્ઠાતા દેવસ્ય-સર્વત્ર પ્રકાશમાન ઈશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા જગતમાં અશ્વિનો:-સંપૂર્ણ વિદ્યામાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકોનાં બાહુભ્યામ્-બળ અને પરાક્રમથી, પૂષ્ણઃ-પૂર્ણ બળવાન વાયુ સમાન વિદ્યમાન પુરુષના હસ્તાભ્યામ્-ઉત્સાહ અને પુરુષાર્થથી, અશ્વિનોઃ વેદક વિદ્યાને પ્રાપ્ત અધ્યાપન અને ઔષધિ કરનારાઓના ભૈષજ્યેન-વેદકથી, તેજસે-પ્રગલ્ભતા માટે બ્રહ્મવર્ચસે-વેદોના અધ્યયન માટે ત્વા-તને હું રાજપુરુષ અને પ્રજાજનમાં અભિ-ષિજ્વામિ-સર્વત્રથી અભિષેક પૂર્વક સભાપતિ સ્વીકાર કરું છું.

ભૈષજ્યેન-ઔષધિઓથી સરસ્વત્યૈ-સુશિક્ષિત વાણી, વીર્યાય-પરાક્રમ અને અન્નાદ્યાય-અન્ન આદિની પ્રાપ્તિ માટે અભિ-ષિજ્વામિ-અભિષેક કરું છું.

इन्द्रस्य-परम ऐश्वर्यवान् पुरुषानां इन्द्रियेण-धनथी बलाय-पुष्टि, श्रियै-सुशोभित राजलक्ष्मी अने यशसे-पुष्टय कीर्तिने माटे अभि-षिञ्चामि-सर्वथा सत्मापति स्वीकार करुं છું. (૩)

ભાવાર્થ : લોકોએ-આ જગતમાં ધર્મયુક્ત કર્મોનો પ્રકાશ કરવા માટે શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા પુરુષોને રાજ્ય પાલન માટે અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૩)

कौंसि कतमोंसि कस्मै त्वा कार्यं त्वा ।

सुश्लोक सुमङ्गल सत्यराजन् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે સુશ્લોક-શુભ કીર્તિ અને સત્ય વાણીવાળા, સુમંગલ-પ્રશસ્ત મંગલ આચરણવાળા, સત્યરાજન્-સત્ય ન્યાયના પ્રકાશક સભાપતિ ! જે તું ક:-સુખસ્વરૂપ અસિ-છે, કતમ:-અત્યંત સુખકારી અસિ-છે, એથી કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ પરમેશ્વરના માટે ત્વા-તને, કાય-બ્રહ્મ દેવતાવાળા વેદમંત્ર માટે ત્વા-તને હું અભિષિજ્ચામિ-અભિષેકયુક્ત કરું છું. અર્થાત્ સભાપતિ સ્વીકાર કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે સર્વ મનુષ્યોમાં અત્યંત પ્રશંસનીય હોય, તે સભાપતિ બની શકે છે. (૪)

शिरो मे श्रियंशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि ।

राजा मे प्राणोऽमृतश्सम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! રાજ્યમાં અભિષેકને પ્રાપ્ત થયેલ મે-મારી સભાપતિની શ્રી:-શોભા અને ધન, શિર:-શિરસ્થાની યશ:-સત્કીર્તિ, મુખમ્-મુખ સ્થાની ત્વિષિ:-ન્યાયના પ્રકાશની સમાન કેશા:-કેશ ચ-અને શ્મશ્રૂણિ-દાઢી, મૂઠ્ઠા રાજા-પ્રકાશમાન છે.

મે-મારા પ્રાણ:-પ્રાણ આદિ વાયુ અમૃતમ્-મરણધર્મથી રહિત-ચેતન બ્રહ્મ સમ્રાટ્-સમ્યક્ પ્રકાશમાન ચક્ષુ:-નેત્ર વિરાટ્-વિવિધ શાસ્ત્રોના શ્રવણથી યુક્ત શ્રોત્રમ્-શ્રવણેન્દ્રિય છે; એમ તમે જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યમાં અભિષેક સભાપતિ-રાજા હોય, તેણે પોતાના શિર આદિ અવયવોને શુભ કર્મોમાં પ્રેરિત રાખવા જોઈએ. (૫)

जिह्वा मे भद्रं वाङ् महो मनो मन्युः स्वराङ् भामः ।

मोदाः प्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानि मित्रं मे सहः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મે-મારી જિહ્વા-જીભ ભદ્રમ્-કલ્યાણકારી અન્ન આદિનો ભોગ કરનારી વાક્-વાણી મહ:-મહાન પૂજનીય વેદશાસ્ત્રના બોધથી યુક્ત, મન:-વિચાર કરનાર અન્ત:કરણ, મન્યુ:-દુષ્ટાચારી પર ક્રોધ કરનાર, સ્વરાટ્-સ્વયં પ્રકાશમાન બુદ્ધિ, ભામ:-જ્ઞાન-પ્રકાશવાળી, મોદા:-હર્ષ, ઉત્સાહ, પ્રમોદા:-ઉત્તમ આનંદ, અઙ્ગુલી:-આંગળીઓ, અઙ્ગાનિ-અન્ય સર્વ અંગો, મિત્રમ્-મિત્ર ચ-અને સહ:-સહન શક્તિ મે-મારી સહાયક બને.

ભાવાર્થ : જે રાજા લોકો બ્રહ્મચર્ય, જિતેન્દ્રિયતા અને ધર્માચરણ દ્વારા પથ્ય આહારવાળા, સત્યવાદી, દુષ્ટો પર ક્રોધ પ્રકટ કરનારા, સ્વયં આનંદિત રહેનારા, અન્યોને આનંદિત કરનારા, પુરુષાર્થી, સર્વથી મિત્રતા રાખનારા અને બળવાન બને, તેઓ સર્વદા સુખી રહી શકે છે. (૬)

બાહૂ મે બલમિન્દ્રિહસ્તૌ મે કર્મ વીર્યમ્ । આત્મા ક્ષત્રમુરો મમ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મે-મારું બલમ્-બળ, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, બાહૂ-ભુજાઓ, કર્મ-કર્મ, વીર્યમ્-પરાક્રમ, હસ્તૌ-હાથ મમ્-મારું આત્મા-સ્વયંભૂઃ સ્વરૂપ અને ઊરઃ-હૃદય ક્ષત્રમ્-ક્ષતિ-અતિ દુઃખથી રક્ષા કરનારું અસ્તુ-બને. (૭)

ભાવાર્થ : રાજાએ આત્મા, અન્તઃકરણ અને બાહુબળને ઉત્પન્ન કરીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૭)

પૃષ્ઠીર્મે રાષ્ટ્રમુદરમસૌ ગ્રીવાશ્ચ શ્રોણી ।

ઊરુઽઅરત્લી જાનુની વિશો મેઽઙ્ગાનિ સર્વતઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મે-મારું રાષ્ટ્રમ્-રાજ્ય પૃષ્ઠીઃ-પીઠ, ઊદરમ્-પેટ, અસૌ-ખભા, ગ્રીવાઃ-કંઠપ્રદેશ, શ્રોણી-કટિપ્રદેશ ઊરુજાંઘ, અરત્લી-ભુજાઓનો મધ્યપ્રદેશ, જાનુની-ગોઠણ તથા સર્વતઃ-સર્વત્રથી અન્ય અઙ્ગાનિ-અંગો મે-મારા વિશઃ-પ્રજાજનો છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે પોતાના અંગોની સમાન પ્રજાને જાણે છે, તે રાજાની સદા ઉન્નતિ થાય છે. (૮)

નાભિર્મે ચિત્તં વિજ્ઞાનં પાયુર્મેઽપચિતિર્ભસત્ । આનન્દનન્દાવાણ્ડૌ મે ભગઃ
સૌભાગ્યં પસઃ । જઙ્ઘાભ્યાં પદ્ભ્યાં ધર્મોઽસ્મિ વિશિ રાજા પ્રતિષ્ઠિતઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મે-મારી ચિત્તમ્-સ્મરણ કરનારી વૃત્તિ, નાભિઃ-શરીરનો મધ્યપ્રદેશ નાભિ, વિજ્ઞાનમ્-સમ્યક્ જ્ઞાન વા વિવિધ જ્ઞાન, પાયુઃ-મૂલેન્દ્રિય, મે-મારી અપચિતિઃ-પ્રજાજનક ભસદ્-યોનિ, આણ્ડૌ-અંડાકાર વૃષણ, આનંદનન્દૌ-સંભોગજન્ય સુખથી આનંદકારક, મે-મારું ભગઃ-ઐશ્વર્ય, પસઃ-લિંગ અને સૌભાગ્યમ્-પુત્ર-પૌત્રાદિ યુક્ત હોય; એ રીતે જઙ્ઘાભ્યામ્-જાંઘ અને પદ્ભ્યામ્-પગોની સાથે વિશિ-પ્રજામાં પ્રતિષ્ઠિતઃ-સન્માનિત, ધર્મઃ-પક્ષપાતરહિત ન્યાયધર્મની સમાન, રાજા-રાજા અસ્મિ-છું, જેથી તમે મારા અનુકૂળ બનો. (૯)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ સર્વ અંગોથી શુભ કર્મ કરે છે, તે ધર્માત્મા બનીને પ્રજામાં પ્રતિષ્ઠિત-સન્માનિત રાજા બને છે. (૯)

પ્રતિ ક્ષત્રે પ્રતિ તિષ્ઠામિ રાષ્ટ્રે પ્રત્યશ્વૈષુ પ્રતિ તિષ્ઠામિ ગોષુ । પ્રત્યઙ્ગૈષુ પ્રતિ
તિષ્ઠામ્યાત્મન્ પ્રતિ પ્રાણેષુ પ્રતિ તિષ્ઠામિ પુષ્ટે પ્રતિ દ્યાવાપૃથિવ્યોઃ પ્રતિ તિષ્ઠામિ
યજ્ઞે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : પ્રજાજનોમાં પ્રતિષ્ઠિત હું રાજા ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી ક્ષત્રે-ક્ષતિથી રક્ષા કરનાર ક્ષત્રિય કુળમાં

પ્રતિ-પ્રતિષ્ઠા પામી રાષ્ટ્ર-રાજ્યમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, અશ્વેષુ-ઘોડા આદિ વાહનોમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, ગોષુ-ગાય અને પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, અદ્ભેષુ-રાજ્યના અંગોમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, આત્માન-આત્મામાં પ્રતિષ્ઠા પામું છું, પ્રાણેષુ-પ્રાણોમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, પુષ્ટે-પુષ્ટિમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, દ્યાવાપૃથિવ્યોઃ-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાની સમાન ન્યાય-પ્રકાશ અને પૃથિવીમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, યજ્ઞે-વિદ્વાનોની સેવા, સંગ અને વિદ્યા-દાન આદિ કર્મમાં પ્રતિ + તિષ્ઠામિ-પ્રતિષ્ઠા પામું છું. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા પ્રિય અને અપ્રિય [નો વિચાર] છોડીને ન્યાયધર્મથી પ્રજાઓ પર પ્રશાસન કરીને, સર્વ રાજ્ય કાર્યોમાં ગુપ્તચરો દ્વારા દંષ્ટિ રાખીને [ચાર આંખોવાળો બનીને], મધ્યસ્થ વૃત્તિથી સર્વ પ્રજાઓનું પાલન કરીને, નિરંતર વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરે છે, તે સર્વનો પૂજ્ય બની શકે છે. (૧૦)

ત્રયા દેવાઽેકાદશ ત્રયસ્ત્રિંશાઃ સુરાધસઃ ।

બૃહસ્પતિપુરોહિતા દેવસ્ય સવિતુઃ સવે । દેવા દેવૈરવન્તુ મા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે ત્રયાઃ-વસુ, રુદ્ર, આદિત્ય ત્રણ પ્રકારના દેવાઃ-દિવ્યગુણવાળા બૃહસ્પતિ પુરોહિતાઃ-બૃહસ્પતિ = સૂર્ય જેમાં પ્રમુખ છે, સુરાધસઃ-જેથી ઉત્તમ કાર્યોની સિદ્ધિ થાય છે, એકાદશ-દશ પ્રાણ અને અગિયારમો જીવાત્મા, ત્રયસ્ત્રિંશાઃ-તેત્રીસ દિવ્યગુણવાળા પદાર્થો-દેવો સવિતુઃ-સકલ જગતના ઉત્પાદક દેવસ્ય-પ્રકાશમાન ઈશ્વરના સવે-પરમેશ્વર્યથી યુક્ત ઉત્પન્ન થયેલા જગતમાં છે, તે દેવૈઃ-પૃથિવી આદિ તેત્રીસ પદાર્થો સહિત મા-મારી દેવાઃ-વિદ્વાનો રક્ષા અને અવન્તુ-ઉન્નતિ કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૃથિવી, જલ, અગ્નિ, વાયુ, આકાશ, દુલોક, ચન્દ્રમા તથા નક્ષત્ર એ આઠ, પ્રાણ આદિ દશ વાયુ, અગિયારમો જીવાત્મા, બાર મહિનાઓ, વિદ્યુત્ અને યજ્ઞ એ તેત્રીસ પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવના ઉપદેશથી સર્વ મનુષ્યોને ઉન્નત કરે છે, તેઓ સર્વના ઉપકારક હોય છે. (૧૧)

પ્રથમા દ્વિતીયૈર્દ્વિતીયાસ્તૃતીયૈસ્તૃતીયાઃ સત્યેન સત્યં યજ્ઞેન યજ્ઞો યજુર્ભિર્યજૂંષિ સામૈભિઃ સામાન્યૈર્ઋષિર્ઋષિઃ પુરોઽનુવાક્યાભિઃ પુરોઽનુવાક્યા યાજ્યાભિર્યાજ્યા વષટ્કારૈર્વૈષટ્કારા ઽ-આહૃતિભિરાહૃતયો મે કામાન્ત્સમર્ધયન્તુ ભૂઃ સ્વાહા ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ પ્રથમાઃ-પ્રથમ પૃથિવી આદિ આઠ વસુ, દ્વિતીયૈઃ-બીજા અગિયાર પ્રાણ આદિ રુદ્રોથી, દ્વિતીયાઃ-બીજા રુદ્ર તૃતીયૈઃ-ત્રીજા બાર મહિનાઓથી, તૃતીયાઃ-ત્રીજા બાર મહિનાઓ સત્યેન-કારણ = પ્રકૃતિથી, સત્યમ્-કારણ = પ્રકૃતિ યજ્ઞેન-શિલ્પ ક્રિયાથી, યજ્ઞઃ-શિલ્પ ક્રિયા યજુર્ભિઃ-યજુર્મંત્રોની ક્રિયાથી યુક્ત, યજૂંષિ-યજુર્વેદોક્ત ક્રિયા સામૈભિઃ-સામવેદોક્ત વિદ્યાથી, સામાનિ-સામવેદસ્થ ક્રિયા આદિ ઋષિઃ-ઋગ્વેદસ્થ વિદ્યા ક્રિયાઓથી, ઋષિઃ-ઋગ્વેદનો વ્યવહાર પુરોઽનુવાક્યાભિઃ-અથર્વવેદોક્ત પ્રકરણોથી, પુરોઽનુવાક્યાઃ-અથર્વવેદનો વ્યવહાર યાજ્યાભિઃ-યજ્ઞ સંબંધી ક્રિયાઓથી, યાજ્યાઃ-યજ્ઞક્રિયાઓ

વષટ્કારૈઃ-ઉત્તમ કર્મોથી, વષટ્કારાઃ-ઉત્તમ કર્મ આહુતિભિઃ-આહુતિઓથી, આહુતયઃ-આહુતિઓ સ્વાહા-સત્ય આચરણથી એ સર્વ ભૂઃ-ભૂમિમાં મે-મારી કામાન્-ઈચ્છાઓને સમર્થયન્તુ-શ્રેષ્ઠ રીતે સિદ્ધ કરે, તેમ આપ મને ઉપદેશ આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકો પ્રથમ વેદોને ભણાવીને, પૃથિવી અને પદાર્થોની વિદ્યાને બતાવીને, કારણ-કાર્ય સંબંધથી તેના ગુણોનો સાક્ષાત્ કરાવીને, હસ્તક્રિયાથી સર્વ મનુષ્યોને નિપુણ બનાવે. (૧૨)

લોમાન્નિ પ્રયત્તિર્મમ ત્વઙ્ મ્-આનતિરાગતિઃ ।

માંસમ્ મ્-ઉપનતિર્વસ્વસ્થિ મ્-જ્ઞા મ્-આનતિઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! જેમ મમ્-મારા લોમાન્નિ-રૂંવાડાં, પ્રયત્તિઃ-મારો પ્રયત્ન, મે-મારી ત્વક્-ત્વચા, આનતિઃ-મારી નમ્રતા, માંસમ્-મારું માંસ, આગતિઃ-આગમન, મે-મારા વસુ-ધન, ઉપનતિઃ-ઉપનમન જેથી નમ્ર થાય છે, મે-મારા અસ્થિ-અસ્થિ, મજ્જા-મજ્જા અને આનતિઃ-સારી રીતે સત્કાર પામે તેમ તમે પ્રયત્ન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોએ એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે, જેથી સુશિક્ષાથી યુક્ત સર્વ પુરુષો અને સર્વ કન્યાઓ સુંદર અંગો અને સ્વભાવથી યુક્ત, દૃઢ બળથી યુક્ત ધાર્મિક અને વિદ્યાથી સંપન્ન બને. (૧૩)

યદૈવા દેવહેડનં દેવાસશ્ચક્રમા વ્યમ્ ।

અગ્નિર્મા તસ્માદેનસો વિશ્વાન્મુઞ્ચત્વઃહસઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યત્-જે વ્યમ્-અમે દેવાઃ-અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ તથા અન્ય દેવાસઃ-વિદ્વાનો પરસ્પર દેવહેડનમ્-વિદ્વાનોનો અનાદર ચક્રમ-કરે, તસ્માત્-તે વિશ્વાત્-સમસ્ત એનસઃ-અપરાધ અને અંહસઃ-દુષ્ટ વ્યસનથી અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન સર્વ વિદ્યાઓમાં પ્રકાશમાન આપ મા-મને મુઞ્ચતુ-પૃથક્ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જો ક્યારેક અચાનક ભ્રમથી કોઈ પણ વિદ્વાનનો કોઈ અનાદર કરે, તો તેને તે જ સમયે ક્ષમા કરાવે.

જેમ અગ્નિ સર્વમાં પ્રવિષ્ટ રહીને સર્વને પોતાના સ્વરૂપમાં સ્થિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ સત્ય ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને અસત્ય આચરણથી પૃથક્ કરીને, સત્ય આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરીને સર્વને ધાર્મિક બનાવવા જોઈએ. (૧૪)

યદિ દિવા યદિ નક્તમેનાંશસિ ચક્રમા વ્યમ્ ।

વાસુર્મા તસ્માદેનસો વિશ્વાન્મુઞ્ચત્વઃહસઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યદિ-જે દિવા-દિવસે યદિ-જે નક્તમ્-રાતે એનાંસિ-અપરાધ વ્યમ્-અમે

ચક્રમ-કરીએ તસ્માત્-તે વિશ્વસ્માત્-સમગ્ર એનસ:-પાપ અને અંહસ:-દુષ્ટ વ્યસનથી મા-મને વાયુ:-વાયુની સમાન વર્તાવવાળા આપ્ત વિદ્વાન મુચ્ચતુ-પૃથક્ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે દિવસ અને રાત્રિમાં અજ્ઞાનથી પાપ કરે, તે પાપથી સર્વ શિષ્યોને શિક્ષકો પૃથક્ કરે. (૧૫)

યદિ જાગ્રદ્યદિ સ્વપ્નઽણાંશ્સિ ચક્રમા વ્યમ્ ।

સૂર્યો મા તસ્માદેનસો વિશ્વાન્મઞ્ચત્વઃહસઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યદિ-જે જાગ્રત્-જાગૃત અવસ્થા અને યદિ-જે સ્વપ્ને-નિદ્રામાં એનાંસિ-અપરાધો વ્યમ્-અમે ચક્રમ-કરીએ, તસ્માત્-તે વિશ્વાત્-સમગ્ર એનસ:-પાપ અને અંહસ:-પ્રમાદથી સૂર્ય:-સૂર્યની સમાન વર્તાવવાળા આપ મા-મને મુચ્ચતુ-પૃથક્ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે કોઈ લોકો દુષ્ટ યેષ્ટા કરે, વિદ્વાન્ મનુષ્ય તેનાથી તે સર્વને શીઘ્ર દૂર કરે. (૧૬)

યદ્ ગ્રામે યદરણ્યે યત્સભાયાં યદિન્દ્રિયે । યચ્છૂદ્રે યદર્યે

યદેનંશ્ચક્રમા વ્યં યદેકસ્યાધિધર્મીણિ તસ્યાવ્યજનમસિ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! વ્યમ્-અમે યત્-જે ગ્રામે-ગામમાં, યત્-જે અરણ્યે-વનમાં, યત્-જે સભાયામ્-સભામાં, યત્-જે ઇન્દ્રિયે-મનમાં, યત્-જે શૂદ્રે-શૂદ્રમાં, યત્-જે અર્યે-સ્વામી વા વૈશ્યમાં, યત્-જે એકસ્ય-એક વ્યક્તિનાં, અધિ-અધિકૃત ધર્માર્ણિ-ધર્મમાં યત્-જે એન:-અપરાધ-પાપ ચક્રમ-કરીએ છીએ અથવા કરવાના છીએ, તસ્ય-તે સર્વથી આપ અવ્યજનમ્-દૂર કરવાના સાધન છો, તેથી મહાશય અસિ-છો. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ક્યાંય ક્યારેક પણ પાપનું આચરણ ન કરવું જોઈએ. જો ક્યારેક થઈ જાય તો પણ કુટુંબની, વિદ્વાનોની સામે અને રાજસભામાં સત્ય બોલવું જોઈએ.

જે અધ્યાપક અને ઉપદેશક સ્વયં ધાર્મિક બનીને અન્યોને ધાર્મિક બનાવે છે, તેનાથી વધીને સુભૂષિત કરનાર અન્ય કોણ [હોઈ શકે છે] ? (૧૭)

યદાપોઽઅઘ્ન્યાઽઈતિ વરુણોતિ શપામહે તતો વરુણ નો મુઞ્ચ । અવભૃથ નિચુમ્પુણ નિચેરુરસિ નિચુમ્પુણઃ । અવ દેવૈર્દેવકૃતમેનોઽયક્ષ્યવ મર્ત્યૈર્મર્ત્યૈકૃતં પુરુરાવ્ગો દેવ રિષસ્પાહિ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વરુણ:-ઉત્તમ પ્રાપ્તિ કરાવનાર, દેવ-દિવ્ય બોધના દાતા, તું યા:-જે આપ:-પ્રાણ અઘ્ન્યા:-ગાય હત્યા માટે અયોગ્ય છે ઇતિ-એ રીતે, વરુણ:-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ છે ઇતિ-એમ અમે શપામહે-શપથપૂર્વક કહીએ છીએ, તત:-અવિદ્યા આદિ કલેશ તથા અધર્માચરણથી ન:-અમને મુચ્ચ-દૂર કરો.

હે અવભૃથ-બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યાવ્રત સ્નાતક નિચુમ્પુણ-મંદગામી ! તું નિચેરુ-નિશ્ચિત આનંદદાતા,

નિચુમ્પુણ:-નિશ્ચિત આનંદયુક્ત અસિ-છે, એથી પુસ્તાવ્ગ:-અત્યંત દુઃખદાયક રિષ:-હિંસાથી પાહિ-રક્ષા કર.

જે દેવકૃતમ્-વિદ્વાનોએ કરેલ એન:-પાપ છે, તેને દેવૈ:-વિદ્વાનોથી અવાયક્ષિ-નાશ કરે છે, જે મર્ત્યકૃતમ્-મનુષ્યોએ કરેલ અપરાધ એન:-પાપ છે, તેને મર્ત્યૈ:-અવિદ્વાન મનુષ્યોની સાથે અવાયક્ષિ-નાશ કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોએ શિષ્યોને એવા સત્યવાદી બનાવવા જોઈએ કે તેને કદી શપથ ન લેવા પડે.

મનુષ્યો દ્વારા જે જે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું આચરણ કરવામાં આવેલ હોય, તેનું સર્વેએ આચરણ કરવું જોઈએ. અને જે જે પાપકર્મ હોય, તેનું કદીપણ આચરણ કરવું નહિ. (૧૮)

સમુદ્રે તે હૃદયમપ્સ્વન્તઃ સં ત્વા વિશન્ત્વોષધીરુતાપઃ । સુમિત્રિયા ન્ડઆપ્ડ-ઓષધયઃ સન્તુ દુર્મિત્રિયાસ્તસ્મૈ સન્તુ યોડ્સ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્યં દ્વિષ્મઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! તે-તારું હૃદયમ્-હૃદય સમુદ્રે-આકાશમાં, અપ્સુ-પ્રાણોની અન્તઃ-મધ્યમાં હોય, ત્વા-તારામાં ઓષધી:-ઔષધિઓ સંવિશન્તુ-પ્રવેશ કરે, ઉત-અને આપ:-પ્રાણ વા જલ સંવિશન્તુ-ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે, જેથી ન:-અમારા માટે આપ:-જલ અને ઓષધયઃ-ઔષધિઓ સુમિત્રિયા:-શ્રેષ્ઠ મિત્રની સમાન સુખદાયક સન્તુ-બને, ય:-જે અસ્માન્-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે. યં-ચ-તથા જેનો વ્યમ્-અમે દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ તસ્મૈ-તેના માટે એ સર્વ દુર્મિત્રિયા:-શત્રુની સમાન સન્તુ-બને. (૧૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકોએ એમ કરવાની ઈચ્છા કરવી જોઈએ કે, જેથી શિક્ષા યોગ્ય મનુષ્ય-શિષ્ય અવકાશ પ્રાપ્ત કરીને, પ્રાણ અને ઔષધિઓની વિદ્યાનો જ્ઞાતા શીઘ્ર બને.

ઔષધિઓ, જલ અને પ્રાણનું ઉત્તમ રીતે સેવન કરેલ મિત્રની સમાન વિદ્વાનોનું પાલન કરે. અવિદ્વાનોને શત્રુ સમાન પીડિત કરે. તેનું સેવન અને તેનો ન્યાય અવશ્ય કરવો જોઈએ. (૧૯)

દ્વુપદાદિવ મુમુચ્ચાનઃ સ્વિન્નઃ સ્નાતો મલાદિવ ।

પૂતં પવિત્રેણેવાજ્યમાપઃ શુન્ધન્તુ મૈનસઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે આપ:-પ્રાણ વા જલની સમાન વિદ્વાનો ! આપ દ્વુપદાદિવ-મુમુચ્ચાનઃ-વૃક્ષના ફળ, રસ, પુષ્પ અને પત્ર આદિ સમાન પૃથક્ થઈને, વા જેમ સ્વિન્નઃ-સ્વેદયુક્ત મનુષ્ય સ્નાતઃ-સ્નાન કરીને મલાદિવ-મળથી મુક્ત થાય છે, વા પવિત્રેણેવ-પવિત્ર કરનારા પદાર્થોથી પૂતમ્-શુદ્ધ આજ્યમ્-ઘૃત થાય છે, તેમ મા-મને એનસઃ-અપરાધ-પાપથી પૃથક્ કરી શુન્ધન્તુ-શુદ્ધ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો સર્વને એ રીતે સુશિક્ષિત કરે કે, જેથી તેઓ પવિત્ર આત્મા, નીરોગ શરીરવાળા તથા ધર્મયુક્ત કર્મ કરનારા બને. (૨૦)

उद्धयं तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म् ज्योतिरुत्तमम् ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે તમસઃ-અંધકારથી દૂર જ્યોતિઃ-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ સૂર્યમ્-સૂર્ય વા ચરાચરના આત્મા પરમેશ્વરને પરિ-સર્વત્રથી પશ્યન્તઃ-જોતાં; દેવત્રા-દિવ્યગુણોવાળા દેવોમાં દેવમ્-ઉત્તમ સુખદાતા, સ્વઃ-સુખ સ્વરૂપ ઉત્તરમ્-સર્વથી સૂક્ષ્મ, ઉત્તમમ્-ઉત્કૃષ્ટ જ્યોતિઃ-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ પરમેશ્વરને ઉદગમ્-પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સ્વપ્રકાશમાન, સર્વ આત્માઓના પ્રકાશક, મહાદેવ, જગદીશ્વર છે, તેની સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૧)

अपोऽअद्यान्वचारिषःसेन समसृक्षमहि ।

पर्यस्वानग्नऽआगमं तं मा सःसृज वर्चसा प्रजया च धनेन च ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વિદ્વાન્ ! જે પ્રયસ્વાન્-પ્રશંસિત જલની વિદ્યાથી યુક્ત હું તને આગમમ્-પ્રાપ્ત કરું, અદ્ય-આજ રસેન-મધુર આદિ રસોથી યુક્ત અપઃ-જલોનું અન્વચારિષમ્-અનુકૂળતાથી પાન કરું, તમ્-તે મા-મને વર્ચસા-સાંગોપાંગ વેદાધ્યયન, પ્રજયા-ઉત્તમ સંતાન ચ-અને ધનેન-ધનથી સંસૃજ-સારી રીતે સંયુક્ત કરે, જેથી એ લોકો તથા હું અર્થાત્ અમે સર્વે સુખના માટે સમસૃક્ષમહિ-સંયુક્ત બનીએ.-સુખી બનીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો અધ્યયન અને ઉપદેશ દ્વારા અન્યોને વિદ્વાન બનાવે છે, તો તેઓ પણ પ્રતિદિન અધિક વિદ્યાવાન બનતા જાય છે. (૨૨)

एधोऽस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि । समावर्ति
पृथिवी समुषाः समु सूर्यः । समु विश्वमिदं जगत् । वैश्वानरज्योतिर्भूयासं
विभून्कामान्व्यश्नवै भूः स्वाहा ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ એધઃ-વૃદ્ધિ કારક અસિ-છો, સમિત્-જેમ અગ્નિનું પ્રકાશક ઈંધન-બળતણ છે, તેમ મનુષ્યોના આત્માઓના પ્રકાશક અસિ-છો, તેજઃ-તીવ્ર બુદ્ધિવાળા અસિ-છો, તેથી તેજઃ-જ્ઞાનના પ્રકાશને મયિ-મારામાં ધેહિ-સ્થાપિત કરો.

જે આપ સર્વત્ર સમાવર્તિ-સમ્યક્ વ્યાપ્ત છો, આપે પૃથિવી-ભૂમિ અને ઊષાઃ-પ્રભાત સમ્-સારી રીતે ઉત્પન્ન કર્યા છે, સૂર્યઃ-સૂર્ય સમ્-સારી રીતે ઉત્પન્ન કરેલ છે, ઇદમ્-આ વિશ્વમ્-સર્વ જગત્ સમ્-ઉત્પન્ન કરેલ છે, ડ-તે વૈશ્વાનરજ્યોતિઃ-વિશ્વના નાયક પ્રકાશ સ્વરૂપ બ્રહ્મને પ્રાપ્ત કરીને અમે એધિષીમહિ-નિત્ય ઉન્નતિ કરીએ.

જેમ હું સ્વાહા-સત્યવાણી અને કર્મથી ભૂઃ-સત્તાત્મક પ્રકૃતિ, વિભૂન્-આકાશ આદિ વ્યાપક પદાર્થો તથા કામાન્-કામનાઓ વ્યશ્નવૈ-પ્રાપ્ત કરું અને સુખી ભૂયાસમ્-રહું; ઉ-તેમ તમે પણ સિદ્ધ કામ અને સુખી રહો. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શુદ્ધ, સર્વત્ર વ્યાપક, સર્વના પ્રકાશકર્તા, જગતની રચના, પાલન-ધારણ અને પ્રલયકર્તા પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને જેમ તમે આનંદિત બનો છો, તેમ અમે તેને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત બનીએ. એમ આકાશ, કાલ તથા દિશાઓને વિભુ-વ્યાપક જાણીએ. (૨૩)

અભ્યાદધામિ સમિધમગ્ને વ્રતપતે ત્વયિં ।

વ્રતં ચ શ્રદ્ધાં ચોપૈમીન્ધે ત્વા દીક્ષિતોઽઅહમ્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વ્રતપતે-સત્ય ભાષણ આદિ કર્મોના પાલક અગ્ને-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! ત્વપિ-તારામાં સ્થિર થઈને અહમ્-હું સમિધમ્-અગ્નિમાં સમિધાની સમાન ધ્યાનને અભ્યાદધામિ-ધારણ કરું છું. જેથી વ્રતમ્-સત્ય ભાષણ આદિ વ્યવહાર ચ-અને શ્રદ્ધામ્-સત્યને ધારણ કરનારા નિયમોને ચ-પણ ઉપૈમિ-પ્રાપ્ત કરું છું દીક્ષિતઃ-બ્રહ્મચર્ય આદિ દીક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્યાવાન્ બનીને ત્વા-તને ઇન્ધે-પ્રકાશિત કરું છું. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરની આજ્ઞા અનુસાર સત્ય ભાષણ આદિ વ્રતોને ધારણ કરે છે, તેઓ અતુલ શ્રદ્ધાને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ કરી શકે છે. (૨૫)

યત્ર બ્રહ્મં ચ ક્ષત્રં ચ સમ્યજ્ઞૌ ચરતઃ સહ ।

તં લોકં પુણ્યં પ્રજ્ઞેષં યત્ર દેવાઃ સહાગ્નિનાં ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું યત્ર-જે પરમાત્મામાં બ્રહ્મ-બ્રાહ્મણકુળ અર્થાત્ વિદ્વાનોનું કુળ ચ-અને ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિય કુળ અર્થાત્ વિદ્યા, શૌર્ય આદિ ગુણયુક્ત એ બન્ને કુળ સહ-મળીને સમ્યજ્ઞૌ-સારી રીતે પ્રેમપૂર્વક ચ-તથા વૈશ્ય આદિ કુળ ચરતઃ-મળીને વ્યવહાર કરે છે.

યત્ર-જે બ્રહ્મમાં દેવાઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત પૃથિવી આદિ અથવા વિદ્વાનો અગ્નિના-વિદ્યુત્ની સહ-સાથે વિદ્યમાન છે; તમ્-તે લોકમ્-દર્શનીય પુણ્યમ્-સુખ સ્વરૂપ, નિષ્પાપ પરમાત્માને પ્રજ્ઞેષમ્-જાણું, તેમ તમે પણ તેને જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે એક, ચેતન માત્ર, સર્વના અધિકારી, પાપરહિત, જ્ઞાનના દ્વારા સાક્ષાત્ કરવા યોગ્ય, સર્વત્ર પૂર્ણતયા વ્યાપ્ત છે અને સર્વ પદાર્થોની સાથે સંયુક્ત છે, તે જ સર્વના દ્વારા ઉપાસનીય છે. (૨૫)

યત્રેન્દ્રશ્ચ વાયુશ્ચ સમ્યજ્ઞૌ ચરતઃ સહ ।

તં લોકં પુણ્યં પ્રજ્ઞેષં યત્ર સેદિર્ન વિદ્યતે ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું યત્ર-જે ઈશ્વરમાં ઇન્દ્ર:-સર્વત્ર વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ ચ-અને વાયુ:-ધનંજય આદિ વાયુ સહ-સાથે સમ્યજ્ઞૌ-સારી રીતે મળીને ચરત:-વિચરણ કરે છે; યત્ર-જે બ્રહ્મમાં સેદિ:-નાશ વા ઉત્પતિ ન-વિદ્યતે-વિદ્યમાન નથી; તમ્-તે પુણ્યમ્-પુણ્યથી ઉત્પન્ન જ્ઞાન દ્વારા જાણવા યોગ્ય લોકમ્-સર્વના દ્રષ્ટા ઈશ્વરને પ્રજ્ઞેષમ્-જાણું; તેમ તમે પણ તેને જાણો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જો કોઈ વિદ્વાન્ વાયુ, વિદ્યુત્ અને આકાશ આદિનું પરિમાણ-સીમા જાણવા ઇચ્છે, તો તે તેનો અન્ત જાણી શકતો નથી, તો જે બ્રહ્મમાં એ વ્યાપ્ય છે, તે બ્રહ્મનો અન્ત જાણવા કોણ સમર્થ બની શકે છે ? (૨૬)

અંશુનાં તે અંશુઃ પૃચ્ચતાં પરુષા પરુઃ ।

ગન્ધસ્તે સોમમવતુ મદાય રસોઽઅચ્યુતઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તે-તારા અંશુના-ભાગની સાથે અંશુઃ-ભાગ, પસ્ત્રા-મર્મની સાથે પરુ-મર્મ પૃચ્ચતામ્-સંબંધ છે.

તે-તારા અચ્યુતઃ-નાશરહિત ગન્ધઃ-ગંધ અને રસઃ-પદાર્થનો સાર મદાય-આનંદ માટે સોમમ્-ઐશ્વર્યની અવતુ-રક્ષા કરે. (૨૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે ધ્યાનમાં નિમગ્ન મનુષ્યની મનસહિત ઈન્દ્રિયો અને પ્રાણ બ્રહ્મમાં સ્થિર બની જાય છે, ત્યારે તે નિત્ય આનંદમાં રહે છે. (૨૭)

સિજ્વન્તિ પરિષિજ્વન્ત્યુત્સિજ્વન્તિ પુનન્તિ ચ ।

સુરાયૈ બ્રૂવૈ મદે કિન્ત્વો વદતિ કિન્ત્વઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : જે બ્રૂવૈ-બળના ધારક સુરાયૈ-સોમ અને મદે-આનંદના માટે મહૌષધિઓના રસને સિજ્વન્તિ-જઠરાગ્નિમાં સિંચન-સેવન કરે છે, પરિ + સિજ્વન્તિ-સર્વ તરફથી પાન કરે છે, ઉત્સિજ્વન્તિ-ઉત્કૃષ્ટતાથી ગ્રહણ કરે છે. ચ-અને પુનન્તિ-પવિત્ર કરે છે, તેઓ શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે કિન્ત્વઃ-તે શું છે ? કિન્ત્વઃ-તે શું છે ? એમ વદતિ-કહે છે, તે કાંઈ પણ પ્રાપ્ત કરતો નથી.

ભાવાર્થ : જેઓ અન્નાદિને પવિત્ર કરીને અર્થાત્ સુસંસ્કૃત કરીને, ઉત્તમ રસોથી સિંચન કરીને, યુક્ત આહારપૂર્વક સેવન કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ મૂર્ખતાવશ એમ કરતા નથી, તેઓ બળ અને બુદ્ધિથી હીન રહી સદા દુઃખ ભોગવે છે. (૨૮)

ધાનાવન્તં કરમ્ભિર્ણમપૂવન્તમુક્થિનમ્ । ઇન્દ્રં પ્રાતર્જુષસ્વ નઃ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સુખના ઇચ્છુક, વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી યુક્ત મનુષ્ય ! તું નઃ-અમારા ધાનાવન્તમ્-સુગંધિત ધાન્ય-અન્નોથી યુક્ત, કરમ્ભિર્ણમ્-શ્રેષ્ઠ ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ, અપૂવન્તમ્-ઉત્તમ રીતિથી એકત્ર

કરેલ માલપુવા આદિથી યુક્ત, **ઝક્ષિયનમ્**-ઉત્તમ વચનથી ઉત્પન્ન બોધથી સિદ્ધ કરેલાં ભોજ્ય પદાર્થોથી યુક્ત ભોજ્ય અન્ન, રસ આદિને **પ્રાતઃ**-પ્રાતઃકાલ **જુષસ્વ**-સેવન કર. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાના અધ્યાપનથી તથા ઉપદેશોથી સર્વને અલંકૃત કરનારા, સંસારના ઉદ્ધારક વિદ્વાનો-સુગંધિત રસ આદિથી યુક્ત અન્ન-પાન આદિનું યથા સમય સેવન કરે છે. તેઓ તથા જે તેને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી વાણીનું ગ્રહણ કરાવે છે, તેઓ ધન્યવાદને યોગ્ય બને છે. (૨૯)

બૃહદિન્દ્રાય ગાયત્ મરુતો વૃત્રહન્તમમ્ ।

યેન જ્યોતિરજનયન્નૃતાવૃધો દેવં દેવાય જાગૃવિ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-વિદ્વાનો ! **ઋહાવૃધઃ**-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા આપ લોકો **યેન**-જેનાથી **દેવાય**-દિવ્ય ગુણવાળા **ઇન્દ્રાય**-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત ઈશ્વરને માટે **દેવમ્**-દિવ્ય સુખના દાતા, **જાગૃવિ**-જાગરુક અથવા અતિ પ્રસિદ્ધ, **જ્યોતિઃ**-તેજ-પરાક્રમને **અજનયન્**-ઉત્પન્ન કરો; તે **વૃત્રહન્તમમ્**-અતિશય રીતે મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન **બૃહદ્**-મહાન સામગાનનું **તસ્ય**-ઉક્ત ઈશ્વરને માટે **ગાયત્**-ગાન કરો, તેની પ્રશંસા-સ્તુતિ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વદા યુક્ત આહાર-વિહારથી શરીર અને આત્માના રોગોનું નિવારણ કરીને, પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ કરીને, પરમેશ્વરનું પ્રતિપાદન કરનાર ગાન કરવું જોઈએ. (૩૦)

અધ્વર્યોઽઅદ્રિભિઃ સુતઃસોમં પવિત્રઽઆનય । પુનીહીન્દ્રાય પાતવે ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે **અધ્વર્યો**-યજ્ઞને યુક્ત કરનાર મનુષ્ય ! તું **ઇન્દ્રાય**-પરમેશ્વર્યવાન્ મનુષ્યને **પાતવે**-પીવા માટે **અદ્રિભિઃ**-મેઘ વાદળાંઓથી **સુતમ્**-ઉત્પન્ન થયેલ **સોમમ્**-સોમવલ્લી આદિ ઔષધિઓના સાર રૂપ રસને **પવિત્રે**-શુદ્ધ વ્યવહારમાં **આનય**-લાવ, તેનાથી તું **પુનીહિ**-સર્વને પવિત્ર કર. (૩૧)

ભાવાર્થ : વેદ રાજાએ શુદ્ધ દેશમાં ઉત્પન્ન ઔષધિઓના સારભૂત રસનું નિર્માણ કરીને, તેના દાનથી સર્વ મનુષ્યોના રોગોની નિરંતર નિવૃત્તિ કરવી જોઈએ. (૩૧)

યો ભૂતાનામધિપતિર્યસ્મિલ્લોકાઽઅધિશ્રિતાઃ ।

યઽઈશે મહતો મહાસ્તેન ગૃહ્ણામિ ત્વામહં મયિ ગૃહ્ણામિ ત્વામહમ્ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે સર્વના હિતના ઈચ્છુક પરમેશ્વર ! **યઃ**-જે આપ **ભૂતાનામ્**-પૃથિવી આદિ તત્ત્વો અને તેનાથી ઉત્પન્ન કાર્યરૂપ લોકોના **અધિપતિઃ**-અધિષ્ઠાતા છો; **મહતઃ**-આકાશ આદિ મહાન પદાર્થોથી પણ **મહાન્**-મહાન છો; **યઃ**-જે **ઈશે**-સર્વના ઈશ્વર છે; **યસ્મિન્**-જેમાં સર્વ **લોકાઃ**-લોકો **અધિશ્રિતાઃ**-આશ્રિત છે; **તેન**-તેથી **ત્વામ્**-તને **અહમ્**-હું **ગૃહ્ણામિ**-ગ્રહણ કરું છું; **મયિ**-મારા હૃદયમાં **ત્વા**-તને **અહમ્**-હું **ગૃહ્ણામિ**-ગ્રહણ કરું છું. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે ઉપાસક મનુષ્ય અનન્ત પરમેશ્વરમાં નિષ્ઠાવાન બનીને ઈશ્વરથી ભિન્ન કોઈ અન્ય

વસ્તુને ઉપાસના યોગ્ય સમજતો નથી, તેને જ સંસારમાં વિદ્વાન્ માનવો જોઈએ. (૩૨)

ઉપયામર્ગૃહીતોઽસ્યશ્વિભ્યાં ત્વા સરસ્વત્યૈ ત્વેન્દ્રાય ત્વા સુત્રામ્ણઽ

ઘ્ણ તે યોનિરશ્વિભ્યાં ત્વા સરસ્વત્યૈ ત્વેન્દ્રાય ત્વા સુત્રામ્ણો ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું અશ્વિભ્યામ્-પૂર્ણ વિદ્યાવાળા અઘાપક અને ઉપદેશકથી ઉપયામ્ ગૃહીત:- ઉત્તમ નિયમોથી ગ્રહણ કરેલ અસિ-છે, જે તે-તારો ઘ્ણ:-એ અશ્વિભ્યામ્-અઘાપક અને ઉપદેશકની સાથે યોનિ:-વિદ્યા-સંબંધ છે, તે ત્વા-તને સરસ્વત્યૈ-સુશિક્ષિત વાણી માટે, ત્વા-તને ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યના માટે તથા ત્વા-તને સુત્રામ્ણો-ઉત્તમ રક્ષક બનવા માટે ગ્રહણ કરું છું.

સરસ્વત્યૈ-પ્રશસ્ત ગુણવાળી વિદુષી સ્ત્રી માટે ત્વા-તને, ઇન્દ્રાય-પરમ ઉત્તમ વ્યવહાર માટે ત્વા-તને સુત્રામ્ણો-ઉત્તમ રક્ષા માટે ત્વા-તને ગ્રહણ કરું છું. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો દ્વારા શિક્ષિત, સ્વયં શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન, જિતેન્દ્રિય, વિવિધ વિદ્યાઓનાં જ્ઞાતા અને વિદ્વાનોને પ્રિય હોય, તે જ વિદ્યા અને ધર્મના પ્રચાર માટે અધિષ્ઠાતા બનવા યોગ્ય છે. (૩૩)

પ્રાણપા મેઽઅપાનપાશ્ચક્ષુષ્ઠ્યાઃ શ્રોત્રપાશ્ચ મે ।

વાચો મે વિશ્વભૈષજો મનસોઽસિ વિલાયકઃ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેથી તું મે-મારા પ્રાણપા:-પ્રાણના રક્ષક, અપાનપા:-અપાનના રક્ષક, મે-મારા ચક્ષુષ્ઠ્યા:-નેત્રોના રક્ષક, શ્રોત્રપા:-શ્રોતોના રક્ષક ચ-અને મે-મારી વાચ:-વાણીના વિશ્વભૈષજ:-સર્વની ઔષધિ રૂપ, મનસ:-વિજ્ઞાનનું સાધક મનનો વિલાયક:-વિવિધ પ્રકારથી સંબંધ કરનાર અસિ-છે, એથી તું અમારા પિતાની સમાન સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બાળપણથી લઈને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા જિતેન્દ્રિયતા, વિદ્યા તથા સત્પુરુષોના સંગથી પ્રેમ તથા ધર્માત્મા અને પરોપકારિતા ગ્રહણ કરાવે છે. તેને માતા સમાન અને મિત્ર સમાન જાણવા જોઈએ. (૩૪)

અશ્વિનકૃતસ્ય તે સરસ્વતિકૃતસ્યેન્દ્રેણ સુત્રામ્ણા કૃતસ્ય ।

ઉપહૂતઽઉપહૂતસ્ય ભક્ષયામિ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ઉપહૂત:-સત્કારપૂર્વક બોલાવેલ હું તે-તારા અશ્વિનકૃતસ્ય-જે સદ્ગુણોથી વ્યાપ્ત વિદ્વાનો માટે, સરસ્વતિકૃતસ્ય-વિદુષી સ્ત્રી માટે, સુત્રામ્ણા-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રેણ-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી યુક્ત રાજાથી કૃતસ્ય-બનાવેલા ઉપહૂતસ્ય-સમીપમાં લાવેલ અન્ન આદિનું ભક્ષયામિ-ભક્ષણ કરું છું. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનો અને ઐશ્વર્યયુક્ત લોકો દ્વારા કરેલાં કર્મોનું આચરણ કરવું જોઈએ, ઉત્તમ રીતિથી શિક્ષિત રસોયા દ્વારા બનાવેલ ભોજન કરવું જોઈએ અને સત્કાર કરનારનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૩૫)

સમિદ્ધઽન્દ્રઽઉષસામનીકે પુરોરુચાં પૂર્વકૃદ્વાવૃધાનઃ ।

ત્રિભિર્દેવૈસ્ત્રિંશતા વજ્રબાહુર્જઘાનં વૃત્રં વિ દુરોં વવાર ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! પૂર્વકૃત્-પૂર્વ દિશાના બનાવનાર વાવૃધાનઃ-વૃદ્ધિ પામતાં, વજ્રબાહુઃ-હાથમાં વજ્ર ધારણ કરેલ ઉષસામ્-પ્રભાતવેળાની અનીકે-સેનામાં જેમ પુરોસ્ત્વા-પ્રથમ પ્રકટેલી તેજ રેખાથી સમિદ્ધઃ-પ્રકાશિત થયેલો ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય ત્રિભિઃ-ત્રણ અધિક ત્રિંશતા-ત્રીસ દેવૈઃ-પૃથિવી આદિ દિવ્ય પદાર્થોની સાથે રહેલા વૃત્રમ્-મેઘને જઘાન્-મારે છે, દુરઃ-દ્વારોને વિવવાર-પ્રકાશિત કરે છે-ખોલે છે; તેમ અતિ બળવાન યોદ્ધાઓની સાથે શત્રુઓને મારીને વિદ્યા અને ધર્મના દ્વારોને પ્રકાશિત કર. (૩૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન લોક સૂર્યની સમાન વિદ્યા અને ધર્મના પ્રકાશક બને, તેઓ અન્ય વિદ્વાનોની શાન્તિ અને પ્રીતિપૂર્વક સત્ય-અસત્યના વિવેક માટે સંવાદ કરીને તથા ઉત્તમ નિશ્ચય કરીને સર્વ લોકોને સંશય રહિત કરે. (૩૬)

નરાશંસઃ પ્રતિ શૂરો મિમાનસ્તનૂનપાત્પ્રતિ યજ્ઞસ્ય ધામં ।

ગોભિર્વપાવાન્મધુના સમઞ્જન્દિરંણયૈશ્ચન્દ્રી યજતિ પ્રચેતાઃ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! નરાશંસઃ-મનુષ્યોથી પ્રશંસા કરવા યોગ્ય, યજ્ઞસ્ય-સત્ય વ્યવહારના ધામ-સ્થાનના પ્રતિ + મિમાનઃ-અનેક ઉત્તમ પદાર્થોના નિર્માતા, શૂરઃ-સર્વત્રથી નિર્ભય, તનૂનપાત્-શરીરનો પાત-નાશ ન કરનાર, ગોભિઃ-ગાય અને બળદોથી વપાવાન્-ખેતર વાવવામાં આવે છે તે પ્રશંસિત ઉત્તમ ક્રિયા યુક્ત, મધુના-મધુર આદિ રસથી સમઞ્જન્-ખેતીને ઉત્પન્ન કરતાં, હિરણ્યૈઃ-સુવર્ણ આદિ પદાર્થોથી ચન્દ્રી-બહુ જ સુવર્ણવાન, પ્રચેતાઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિયુક્ત વિદ્વાન્ પ્રતિ + યજતિ-પ્રતિદિન યજ કરે છે-કરાવે છે, તેનો અમે આશ્રય-સંગ કરીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કોઈ નિન્દિત, ડરપોક, પોતાના શરીરનાં નાશક, પુરુષાર્થહીન, આળસુ, મૂઠ અને દરિદ્ર મનુષ્યનો સંગ કદી ન કરવો. (૩૭)

ઈંડિતો દેવૈર્હરિવાંર ઽ અભિષ્ટિરાજુહ્વાનો હૃવિષા શર્દ્દમાનઃ ।

પુરન્દ્રો ગોત્રિભિદ્વજ્રબાહુરાયાતુ યજ્ઞમુપ્ નો જુષાણઃ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ હરિવાન્-ઉત્તમ ઘોડાવાળા, વજ્રબાહુઃ-હાથમાં વજ્ર રાખનાર, પુરન્દ્રઃ-શત્રુઓના નગરોનું વિદારણ કરનાર સેનાપતિ ગોત્રિભિત્-મેઘનું ભેદન કરનાર સૂર્ય જેમ રસ-સેવન કરે છે તેની સમાન પોતાની સેનાનું સેવન કરે છે, તેમ દેવૈઃ-વિદ્વાનોથી ઈંડિતઃ-પ્રશંસિત, અભિષ્ટિઃ-સર્વત્ર યજ કરનાર, આજુહ્વાનઃ-વિદ્વાનોથી સત્કાર પૂર્વક નિમંત્રિત, હૃવિષા-સદ્વિદ્યાના આદાન-પ્રદાનથી શર્દ્દમાનઃ-સહનશીલ, જુષાણઃ-પ્રસન્ન થઈને આપ નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-યજ્ઞમાં ઉપ + આ + યાતુ-ઉત્તમ રીતે

આવો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિ સેનાને અને સૂર્ય મેઘની વૃદ્ધિ કરીને સંસારની રક્ષા કરે છે, તેમ ધાર્મિક અધ્યાપકોએ અધ્યયન કરનારા વિદ્યાર્થીઓની સાથે અધ્યયન અને અધ્યાપન કરીને વિદ્યા દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩૮)

જુષાણો બર્હિર્હરિવાન્નડ્વન્દ્રઃ પ્રાચીનઃસીદત્પ્રદિશાં પૃથિવ્યાઃ ।

ઉરુપ્રથાઃ પ્રથમાનઃસ્યોનમાદિત્યૈરક્તં વસુભિઃ સ્વજોષાઃ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ બર્હિઃ-અન્તરિક્ષનું જુષાણઃ-સેવન કરનાર હરિવાન્-હરણશીલ અનેક કિરણોવાળા, ઉસ્મથાઃ-બહુજ વિસ્તાર યુક્ત, આદિત્યૈઃ-મહિનાઓ, વસુભિઃ-પૃથિવી આદિ આઠ વસ્તુઓની સ્વજોષાઃ-સાથે વિદ્યમાન ઇન્દ્રઃ-જલોને ધારણ કરનાર સૂર્ય પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીની પ્રદિશા-ઉપદિશાની સાથે પ્રથમાનમ્-વિસ્તૃત, અક્તમ્-પ્રસિદ્ધ, પ્રાચીનમ્-પ્રાચીન તથા સ્યોનમ્-સુખકારક સ્થાનમાં સીદત્-સ્થિર થાય છે; તેમ તું અમારી મધ્યમાં રહે. (૩૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દિવસ અને રાત પ્રયત્નપૂર્વક સૂર્યની સમાન અવિદ્યા રૂપી અંધકારનું નિવારણ કરીને સંસારમાં મહાન સુખ ઉત્પન્ન કરવું જોઈએ.

જેમ પૃથિવીથી સૂર્ય મોટો છે, તેમ અવિદ્યાનોની મધ્યમાં વિદ્યાન મહાન્ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૯)

ઇન્દ્રં દુરઃ કવષ્યો ધાવમાના વૃષાણં યન્તુ જનયઃ સુપત્નીઃ ।

દ્વારો દેવીરભિતો વિ શ્રયન્તાઃસુવીરા વીરં પ્રથમાના મહોભિઃ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કવષ્યઃ-બોલવામાં ચતુર વૃષાણમ્-અતિ વીર્યવાન, ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યવાન, વીરમ્-વીર પુરુષના પ્રતિ ધાવમાનાઃ-દોડતી જનયઃ-સંતાનોને જન્મ આપનારી સ્ત્રીઓ દુરઃ-દ્વાર-ધરને યન્તુ-પ્રાત થાય છે.

જેમ પ્રથમાનાઃ-પ્રખ્યાત, સુવીરાઃ-અતિ ઉત્તમ વીર પુરુષ મહોભિઃ-સુપૂજિત ગુણોથી દ્વારઃ-દ્વારની સમાન વિદ્યમાન દેવીઃ-વિદ્યા આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન, જનયઃ-સંતાન ઉત્પન્ન કરનાર સુપત્નીઃ-ઉત્તમ સ્ત્રીઓને અભિતઃ-સર્વત્રથી વિ + શ્રયન્તામ્-વિશેષ કરીને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે કુળ અને દેશમાં લોકો પરસ્પરની પ્રીતિથી સ્વયંવર વિવાહ કરે છે, ત્યાં મનુષ્ય સદા આનંદમાં રહે છે. (૪૦)

ઉષાસાનક્તાં બૃહતી બૃહન્તં પયસ્વતી સુદુષ્ટે શૂરમિન્દ્રમ્ ।

તન્તું તતં પેશાસા સંવયન્તી દેવાનાં દેવં યજતઃ સુરુક્મે ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પેશાસા-રૂપથી સંવયન્તી-પ્રાપ્ત કરનારા, પયસ્વતી-રાતના અંધકારથી

યુક્ત, સુદુધે-સારી રીતે પૂરણ કરનાર, બૃહતી-વૃદ્ધિ પામતાં, સુસ્વમે-સારા પ્રકાશવાળા ઊષાસાનક્તા-રાત અને દિવસ તતમ્-વિસ્તૃત, દેવાનામ્-પૃથિવી આદિ લોકોના દેવમ્-પ્રકાશક, બૃહન્તમ્-મહાન ઇન્દ્રમ્-સૂર્યમંડળનો યજતઃ-સંગ કરે છે, તેમ તન્તુમ્-વિસ્તાર કરનાર શૂરમ્-શૂરવીર પુરુષનો તમે સંગ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ લોક સર્વથી મહાન સૂર્ય લોકનો આશ્રય કરે છે, તેમ સર્વ લોકોએ અત્યંત શ્રેષ્ઠ પુરુષનો આશ્રય કરવો જોઈએ. (૪૧)

દૈવ્યા મિમાના મનુષઃ પુરુત્રા હોતારાવિન્દ્રં પ્રથમા સુવાચા ।

મૂર્દ્ધન્યજ્ઞસ્ય મધુના દધાના પ્રાચીનં જ્યોતિર્હવિષા વૃધાતઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : જે દૈવ્યા-દિવ્ય પદાર્થો અને વિદ્વાનોમાં વિદ્યમાન, મિમાના-નિર્માણકર્તા, હોતારૌ-દાતા સુવાચા-સુશિક્ષિત વાણીથી યુક્ત વિદ્વાન, યજ્ઞસ્ય-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારથી મૂર્દ્ધન્-ઉપર પ્રથમા-પ્રથમ વિદ્યમાન, પુસ્ત્રાઃ-અનેક મનુષઃ-મનુષ્યોને દધાના-ધારણ કરનાર મધુના-મધુર હવિષા-હોમ યોગ્ય પદાર્થોથી પ્રાચીનમ્-પ્રાચીન જ્યોતિઃ-પ્રકાશ અને ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યની વૃધાતઃ-વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ સર્વ મનુષ્યોથી સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો અધ્યાપન અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને ઉન્નત કરે છે, તે સર્વ મનુષ્યોને સુભૂષિત કરનારા છે. (૪૨)

તિસ્રો દેવીર્હવિષા વર્દ્ધમાનાઽઇન્દ્રં જુષાણા જનયો ન પત્નીઃ ।

અચ્છિન્નં તન્તું પયસા સરસ્વતીઢા દેવી ભારતી વિશ્વતૂર્તિઃ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિશ્વતૂર્તિઃ-વિશ્વમાં શીઘ્રતા ઉત્પન્ન કરનારી, દેવીઃ-પ્રકાશમાન, સરસ્વતી-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત સરસ્વતી, ઇઢા-શુભગુણોના કારણે સ્તુતિ કરવા યોગ્ય તથા ભારતી-ધારણ અને પોષણ કરનારી એ તિસ્રઃ-ત્રણ દેવ્યઃ-પ્રકાશમાન શક્તિઓ પયસા-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ રૂપ રસથી હવિષા-આદાન-પ્રદાનનો વ્યવહાર વા પ્રાણથી વર્દ્ધમાનાઃ-વૃદ્ધિવાન જનયઃ-સંતાન ઉત્પન્ન કરનારી પત્નીઃ-સ્ત્રીઓની ન-સમાન, અચ્છિન્નમ્-છેદન-ભેદન રહિત, તન્તુમ્-વિસ્તીર્ણ, ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્તનું જુષાણાઃ-સેવન કરી રહી છે; તેનું તમે પણ સેવન કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનોથી સંયુક્ત વાણી, નાડી અને ધારણશક્તિરૂપ ત્રણ પ્રકારની શક્તિઓ સર્વેમાં અભિવ્યાપ્ત અને સદા ઉત્પન્ન થતી વ્યવહારની હેતુ છે, તેને મનુષ્યોએ વ્યવહારમાં યથોચિત સંયોગ કરવો જોઈએ. (૪૩)

ત્વષ્ટા દધ્ચ્છુષ્મિન્દ્રાય વૃષ્ણેઽપાકોઽચિષ્ટુર્યશસૈ પુરુણિ ।

વૃષા યજન્વૃષણં ભૂરિરેતા મૂર્દ્ધન્યજ્ઞસ્ય સર્મનક્તુ દેવાન્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ ત્વષ્ટા-વિદ્યુત્ની સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન વૃષા-સેચનકર્તા ઇન્દ્રાય-પરમ

ઐશ્વર્ય વૃષ્ણો-બીજાની શક્તિને રોકનાર માટે શુભમ્-બળને, અપાકઃ-અપ્રશંસનીય, અચિષ્ટઃ-પ્રાપ્ત થનાર યજ્ઞસે-કીર્તિ માટે પુસ્ત્રિણિ-અનેક પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતાં, ભૂરિતાઃ-અત્યંત પરાક્રમી વૃષ્ણમ્-મેઘની યજન્-સંગત કરતાં, યજ્ઞસ્ય-સંગતિથી ઉત્પન્ન થયેલ જગતના મૂર્દ્ધન્-મૂર્દ્ધન્ય દેવાન્-વિદ્વાનોની સમનક્તુ-કામના કરે છે; તેમ તું પણ કામના કર. (૪૪)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્ય શુદ્ધ અન્તઃકરણવાળો ન બની જાય, ત્યાં સુધી તે વિદ્વાનોનો સંગ, સત્યશાસ્ત્રોનો તથા પ્રાણાયામનો અભ્યાસ કરતો રહે. જેથી તે શીઘ્ર શુદ્ધ અન્તઃકરણવાળો બની શકે. (૪૪)

વનસ્પતિરવસૃષ્ટો ન પાશૈસ્ત્મન્યાં સમઞ્જઞ્છમિતા ન દેવઃ ।

ઇન્દ્રસ્ય હૃવ્યૈર્જઠરં પૃણાનઃ સ્વદાતિ યજ્ઞં મધુના ઘૃતેન ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : જે પાશૈઃ-દેહ બંધનોથી વનસ્ય-વનનો પાલક, અવસૃષ્ટઃ-આજ્ઞા આપેલા પુરુષની ન-સમાન, ત્મન્યા-આત્માથી સમઞ્જન્-સંયુક્ત દેવઃ-દિવ્ય સુખોના દાતા શમિતા-યજ્ઞની ન-સમાન; ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યના જઠરમ્ દેવઃ-દિવ્ય સુખોના દાતા ઉદર સમાન કોશને પૃણાનઃ-પૂર્ણ કરતાં, હૃવ્યૈઃ-ખાવા યોગ્ય મધુના-મધ અને ઘૃતેન-ધી આદિ પદાર્થોથી યજ્ઞમ્-અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય યજ્ઞ કરતાં સ્વદાતિ-ઉત્તમ પદાર્થોનું આસ્વાદન કરે છે, તે રોગરહિત રહે છે. (૪૫)

ભાવાર્થ : જેમ વનસ્પતિ વધીને ફળ આપે છે, જેમ બંધનોથી બંધાયેલો ચોર પાપથી છૂટી જાય છે.

અથવા જેમ યજ્ઞ સર્વ જગતની રક્ષા કરે છે, તેમ યજ્ઞનું સેવન કરનાર અને યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર મનુષ્ય ઉપકારકર્તા બને છે. (૪૫)

સ્તોકાનામિન્દું પ્રતિ શૂરઽઇન્દ્રો વૃષાયમાણો વૃષભસ્તુરાષાટ્ ।

ઘૃતપ્રુષા મનસા મોદમાનાઃ સ્વાહા દેવાઽમૃતા માદયન્તામ્ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : જેમ વૃષાયમાણઃ-બળવાન બનીને, વૃષભઃ-ઉત્તમ, તુરાષાટ્-હિંસક શત્રુઓનું મર્ષણ કરનાર, શૂરઃ-શૂરવીર, ઇન્દ્રઃ- ઐશ્વર્યવાન સ્તોકાનામ્-અલ્પ લોકોમાં ઇન્દુમ્-કોમળ સ્વભાવવાળા મનુષ્યના પ્રત્યાઽઽનન્દતિ-પ્રતિ આનંદિત બને છે, તેમ ઘૃતપ્રુષા-પ્રકાશનું સેવન કરનાર મનસા-વિજ્ઞાનથી અને સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી મોદમાનાઃ-આનંદિત બનીને અમૃતાઃ-આત્મસ્વરૂપથી, મૃત્યુ ધર્મ રહિત દેવાઃ-વિદ્વાનો માદયન્તામ્-સ્વયં તૃપ્ત બનીને અમને આનંદિત કરે. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અલ્પગુણવાળા મનુષ્યને જોઈને આદ્રચિત્ત દયાવાન બને છે, તેઓ સર્વત્ર સર્વને સુખી કરે છે. (૪૬)

આયાત્વિન્દ્રોઽવસઽપ નઽહ સ્તુતઃ સંધમાદસ્તુ શૂરઃ ।

વાવૃધાનસ્તવિષીર્યસ્ય પૂર્વીદ્યૌર્ન ક્ષત્રમભિભૂતિ પુષ્યાત્ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યને ધારણ કરનાર હહ-આ વર્તમાન સમયમાં સ્તુતઃ-પ્રશંસિત, શૂરઃ-

નિર્ભય વીર પુરુષ પૂર્વીઃ-પૂર્વ વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષાથી ઉત્તમ કરેલી તવિષીઃ-સેનાઓની વાવૃધાનઃ- અત્યંત વૃદ્ધિ કરનાર, યસ્ય-જેના અભિભૂતિ-શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરનારાં ક્ષત્રમ્-રાજ્ય ઘૌઃ-સૂર્યના પ્રકાશની ન-સમાન છે, જે નઃ-અમને પુષ્યાત્-પુષ્ટ કરે, તે અમારી અવસે-રક્ષા આદિ માટે ઉપ + આ + યાતુ-સમીપ આવે અને સધમાત્-સમાન સ્થાનવાળા અસ્તુ-બને. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય અને વિદ્યા બંનેના પ્રકાશક, સત્કૃત અને હૃષ્ટ-પુષ્ટ સેનાયુક્ત, પ્રજાના પોષક અને દુષ્ટોનો નાશ કરનાર હોય, તેઓ રાજ્ય અધિકારી બનવાને યોગ્ય છે. (૪૭)

આ ન્ડન્દ્રો દૂરાદા ન્ડઆસાદ્ભિષ્ટિકૃદવસે યાસદુગ્રઃ ।

ઓજિષ્ટેભિર્નૃપતિર્વજ્રબાહુઃ સ્જ્ઞે સ્મત્સુ તુર્વણિઃ પૃતન્યૂન્ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : જે અભિષ્ટિકૃત્-સર્વત્રથી ઈચ્છિત સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, વજ્રબાહુઃ-વજ્રસમાન દંઢ ભુજાઓ વાળા, નૃપતિઃ-નરોના પાલક, ઓજિષ્ટેભિઃ-બલિષ્ઠ યોદ્ધાઓના કારણે ઝગ્રઃ-દુષ્ટોપર ક્રોધ કરનાર, તુર્વણિઃ-શત્રુઓને શીઘ્ર મારનાર ઇન્દ્રઃ-શત્રુ વિદારક સેનાપતિ નઃ-અમારી અવસે-રક્ષા માટે સમત્સુ-અનેક સંગ્રામોમાં સ્જ્ઞે-સાથ દૂરાત-દૂર દેશથી અને આસાત્-સમીપ દેશથી આ + યાસત્-આવે અને નઃ-અમારી પૃતન્યૂન્-સેના તથા સંગ્રામના ઈચ્છુકની આ-સદા રક્ષા અને માન કરે, તેનું અમે પણ માન કરીએ. (૪૮)

ભાવાર્થ : તે પુરુષો જ રાજ્ય કરી શકે છે કે, જેઓ દૂર દેશ સ્થિત તથા સમીપદેશ સ્થિત સર્વ પ્રજાઓની નિરીક્ષણ અને દૂત વ્યવસ્થા દ્વારા રક્ષા કરે છે અને શૂરવીરોનો સદા સત્કાર કરે છે. (૪૮)

આ ન્ ઇન્દ્રો હરિભિર્યાત્વચ્છાર્વાચીનોઽવસે રાધસે ચ ।

તિષ્ઠાતિ વ્જી મ્ઘવા વિર્ણીમં ય્જ્ઞમનું નો વાજસાતૌ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : જે મઘવા-પરમ પ્રશંસિત ધનથી યુક્ત, વિર્ણી-મહાન બળવાન, અર્વાચીનઃ-વિદ્યા આદિ બળથી સન્મુખ જનાર, વ્જી-પ્રશસ્ત શસ્ત્ર વિદ્યામાં શિક્ષિત ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યના દાતા સેનાપતિ છે-તે હરિભિઃ-સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી નઃ-અમારી અવસે-રક્ષા આદિ માટે ચ-અને રાધસે-ધનને માટે વાજસાતૌ-સંગ્રામમાં અનુ, તિષ્ઠાતિ-અનુકૂળ સ્થિર રહે, તે નઃ-અમારા ઇમ્-આ ય્જ્ઞમ્-સત્ય ન્યાય પાલન કરવા રૂપ રાજ્ય વ્યવહારને અચ્છ + આ + યાતુ-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે યુદ્ધ વિદ્યામાં નિપુણ, મહા બળવાન, પ્રજાના ધનની વૃદ્ધિ કરનાર, સુશિક્ષિત ઘોડાઓ અને હાથીઓવાળા અને મંગલકારી લોકો છે, તે જ રાજપુરુષ [રાજકર્મચારી] બને. (૪૯)

ત્રાતાર્મિન્દ્રમવિતાર્મિન્દ્રઃ હવે હવે સુહવઃ શૂરમિન્દ્રમ્ ।

હ્વામિ શ્ક્રં પુરુહૂતમિન્દ્રંઽસ્વસ્તિ નો મ્ઘવા ધાત્વિન્દ્રઃ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! રાજન્ ! જે હવે હવે-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં ત્રાતાર્મ્-રક્ષક, ઇન્દ્રમ્-દુષ્ટોના નાશક,

અવિતારમ્-પ્રીતિ કરનાર-તૃપ્ત કરનાર, ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા, સુહવમ્-સારી રીતે આહ્વાન કરનાર, શૂરમ્-શત્રુઓના નાશક, ઇન્દ્રમ્-રાજ્યના ધારક, શુક્રમ્-શીઘ્રકારી, પુસ્તમ્-અનેકોથી સત્કાર પામેલા, ઇન્દ્રમ્-શત્રુ સેનાના વિદારક તને હ્વામિ-સત્કાર પૂર્વક બોલાવું છું, તે મઘવા-બહુ ધનયુક્ત ઇન્દ્ર:-ઉત્તમ સેનાના ધારક તું ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-સુખને ધાતુ-ધારણ કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય તેનો સદા સત્કાર કરે, જે વિદ્યા, ન્યાય તથા ધર્મનો સેવક હોય અને જે સુશીલ અને જિતેન્દ્રિય રહીને સર્વનાં સુખની વૃદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરે. (૫૦)

ઇન્દ્રઃ સુત્રામા સ્વવાંર ઽ અવોભિઃ સુમૃડીકો ભવતુ વિશ્વવેદાઃ ।

બાધતાં દ્વેષોઽઅભયં કૃણોતુ સુવીર્યસ્ય પતયઃ સ્યામ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : જે સુત્રામા-સારી રીતે રક્ષા કરનાર, સ્વવાન્-પોતાના અનેક ઉત્તમ માણસોવાળા, વિશ્વવેદાઃ-સમસ્ત ધનવાન, સુમૃડીકઃ-અત્યંત સુખકારી અને ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર રાજા, અવોભિઃ-ન્યાયપૂર્વક રક્ષા આદિથી પ્રજાની રક્ષા કરે; તે દ્વેષઃ-શત્રુઓને બાધતામ્-હટાવે, અભયમ્-સર્વને નિર્ભય કૃણોતુ-કરે, અને સ્વયં પણ તેમ નિર્ભય ભવતુ-બને; જેથી અમે સુવીર્યસ્ય-ઉત્તમ પરાક્રમના પતયઃ-પાલક સ્યામ-બનીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ વિદ્યા અને વિનયથી યુક્ત બનીને પ્રજાના રક્ષક ન હોય, તો સુખની વૃદ્ધિ પણ થાય નહિ. (૫૧)

તસ્ય વચ્ચ સુમતૌ યજ્ઞિયસ્યાપિ ભદ્રે સૌમનસે સ્યામ ।

સ સુત્રામા સ્વવાંર ઽ ઇન્દ્રોઽઅસ્મેઽઆરાચ્ચિદ્ દ્વેષઃ સનુતર્યુયોતુ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : જે સુત્રામા-સારી રીતે રક્ષા કરનાર, સ્વવાન્-પ્રશસ્ત પોતાના કુળ અને ધનવાળા, ઇન્દ્રઃ-પિતા સમાન વિદ્યમાન સભાપતિ રાજા અસ્મે-અમારા દ્વેષઃ-શત્રુઓને આરાત્-દૂર વા સમીપ દેશથી ચિદ્-પણ સનુતઃ-સદા યુયોતુ-દૂર કરે.

તસ્ય-તે પૂર્વોક્ત યજ્ઞિયસ્ય-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર રાજાની સુમતૌ-સુંદર મનમાં અને ભદ્રે-કલ્યાણ કરનાર સૌમનસે-સુંદર મનમાં ઉત્પન્ન થયેલા વ્યવહારમાં અપિ-પણ અમે રાજાને અનુકૂળ વર્તનારા સ્યામ-બનીએ અને સઃ-તે અમારા રાજા અને વચમ્-અમે તેની પ્રજા અર્થાત્ તેના રાજ્યમાં રહીએ. (૫૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ તેની સંમતિથી રહેવું જોઈએ, જે પક્ષપાત રહિત, ધાર્મિક અને ન્યાયથી પ્રજાનું પાલન કરે. (૫૨)

આ મન્દ્રૈરિન્દ્ર હરિભિર્યાહિ મયૂરોમભિઃ ।

મા ત્વા કેચિન્નિ યમન્વિં ન પાશિનોઽતિ ધન્વેવ તાંર ॥ઽઈહિ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યના વર્ધક સેનાપતિ ! તું મન્દ્રૈઃ-પ્રશંસિત મયૂરોમભિઃ-મોરના રોમ

સમાન કોમળ રોમવાળા હરિભિઃ-ઘોડાઓથી તાન્-તે શત્રુઓને જીતવા માટે યાહિ-પ્રસ્થાન કર.

ત્યાં ત્વા-તને પાશિનઃ-જાળ રાખનાર શિકારી વિં, ન-પક્ષીને બાંધે તે ન-સમાન કેચિત્-કોઈપણ નિયમન્-બાંધે મા-નહિ, તું અતિધન્વેવ-મહાન ધનુર્ધારીની સમાન ઇહિ-સારી રીતે ગમન કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે વીરો શત્રુઓ પર વિજય માટે જાય, ત્યારે સર્વત્રથી પોતાની શક્તિની સમીક્ષા કરીને, પર્યાપ્ત સામગ્રીથી યુક્ત બનીને, શત્રુઓ સાથે યુદ્ધ કરીને, પોતાનો વિજય કરે અને જેમ શત્રુ તેને વશમાં ન કરી શકે, તેમ કાર્ય કરે. (૫૩)

एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासोऽअभ्यर्चन्त्यर्कैः ।

स न स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ५४ ॥

પદાર્થ : હે વસિષ્ઠાસઃ-અત્યંત વાસ કરનારા પ્રજાજનો ! જે વૃષણમ્-બળવાન, વજ્રબાહુમ્-શસ્ત્રધારી, ઇન્દ્રમ્-શત્રુનાશકનાં અર્કૈઃ-પ્રશંસિત કર્મોથી વિદ્વાનો અભ્યર્ચન્તિ-યથાવત્ સત્કાર કરે છે, એવ-એનો યૂયમ્-તમે ઇત્-પણ સત્કાર કરો.

સઃ-તે સ્તુતઃ-સ્તુતિને પ્રાપ્ત થઈને નઃ-અમને તથા ગોમત્-ઉત્તમ ગાય આદિ પશુઓથી યુક્ત વીરવત્-શૂરવીરોથી યુક્ત રાજ્યને ધાતુ-ધારણ કરે.

યૂયમ્-તમે લોકો સ્વસ્તિભિઃ-સુખોથી અર્થાત્ કલ્યાણકારક કર્મોથી નઃ-અમારી સદા-સર્વ કાલમાં પાત-રક્ષા કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ રાજપુરુષો પ્રજાની રક્ષા કરે, તેમ પ્રજાજનો પણ રાજપુરુષોની રક્ષા કરે. (૫૪)

समिद्धोऽअग्निरश्विना तप्तो घर्मो विराट् सुतः ।

दुहे धेनुः सरस्वती सोमःशुक्रमिहेन्द्रियम् ॥ ५५ ॥

પદાર્થ : જેમ ઇહ-આ સંસારમાં ધેનુઃ-દૂધ આપનારી ગાયની સમાન સરસ્વતી-શાસ્ત્ર વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણી શુક્રમ્-શુદ્ધ સોમમ્-ઐશ્વર્ય અને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને પરિપૂર્ણ કરે છે, તેમ તેને હું દુહે-પરિપૂર્ણ કરું.

હે અશ્વિનૌ-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! તપ્તઃ-તાપથી યુક્ત, વિરાટ્-વિવિધ પ્રકારથી પ્રકાશમાન, સુતઃ-પ્રેરણાને પ્રાપ્ત સમિદ્ધઃ-પ્રદીપ્ત ઘર્મઃ-યજ્ઞની સમાન સંગતિથી યુક્ત, અગ્નિઃ-અગ્નિ જેમ વિશ્વની રક્ષા કરે છે, તેમ હું એ સર્વ જગતની રક્ષા કરું. (૫૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા સ્ત્રી-પુરુષો સૂર્ય સમાન સત્કીર્તિથી પ્રકાશમાન અને પુરુષાર્થી બનીને, ધર્મયુક્ત ઐશ્વર્યને સદા સંચિત કરે. (૫૫)

तनूपा भिषजा सुतेऽश्विनोभा सरस्वती ।

मध्वा रजाःसीन्द्रियमिन्द्राय पथिभिर्वहान् ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેમ ભિષજા-વૈદક વિદ્યાના જ્ઞાતા, તનૂપા-શરીરના રક્ષક, ઊષ્મા-બન્ને, અશ્વિના-શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં વ્યાપ્ત, વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ અને સરસ્વતી-અનેક વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, મધ્વા-મધુર ગુણથી યુક્ત, સુતે-ઉત્પન્ન થયેલ જગતમાં સ્થિર થઈને પથિભિઃ-ધર્મ-માર્ગોથી ઇન્દ્રાય-રાજાને માટે રજાંસિ-લોકો અને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને ધારણ કરે, તેમ તેને આપ વહાન્-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી-પુરુષ વૈદક વિદ્યાને જાણે નહિ, તો રોગોથી નિવૃત્તિ તથા આરોગ્યની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી અને ધર્મ વ્યવહારમાં નિરંતર ચાલવાને સમર્થ બની શકતાં નથી. (૫૬)

ઇન્દ્રાયેન્દુઃસરસ્વતી નરાશંસેન નગ્નહુમ્ ।

અઘાતામશ્વિના મધુ ભેષજં ભિષજા સુતે ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : અશ્વિના-વૈદક વિદ્યામાં વ્યાપક, ભિષજા-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો ઇન્દ્રાય-દુઃખનાશન માટે સુતે-ઉત્પન્ન થયેલાં આ જગતમાં મધુ-જ્ઞાન વર્ધક મધુર-કોમળતા આદિ ગુણોથી યુક્ત ભેષજમ્-ઔષધને અઘાતામ્-ધારણ કરે.

નરાશંસેન-મનુષ્યોથી સ્તુતિ કરેલ વચનોથી સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત વાણી નગ્નહુમ્-આનંદને આપનાર ઇન્દુમ્-પરમ ઐશ્વર્યને આદધાતુ-ધારણ કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : વૈદ્ય બે પ્રકારના હોય છે-એક જ્વર આદિ શરીરના રોગોનું હરણ કરનાર ચિકિત્સક છે; બીજા જે મનના અવિદ્યા આદિ ક્લેશ રોગોના વિનાશક અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે.

જ્યાં એ [વૈદ્યો] રહે છે, ત્યાં રોગોના વિનાશથી પ્રાણીઓ આધિ અને વ્યાધિથી મુક્ત થઈને સુખી બને છે. (૫૭)

આજુહ્વાના સરસ્વતીન્દ્રાયેન્દ્રિયાણિ વીર્યમ્ ।

ઇડાભિરશ્વિનાવિષ્સમૂર્જસર્ચિં દધુઃ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : આજુહ્વાના-સર્વત્રથી પ્રશંસિત, સરસ્વતી-ઉત્તમ જ્ઞાનવતી સ્ત્રી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પતિ માટે ઇન્દ્રિયાણિ-શ્રોત આદિ ઇન્દ્રિયો વા ઐશ્વર્ય ઉત્પાદક સુવર્ણ આદિ પદાર્થો તથા વીર્યમ્-શરીરમાં બળ પેદા કરનાર ઘૃત આદિ પદાર્થોને ધારણ કરે.

અશ્વિનૌ-વૈદક વિદ્યાનાં કાર્યોમાં સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન પ્રકાશમાન બે વૈદ્યો ઇડાભિઃ-અતિ ઉત્તમ ઔષધિઓથી ઇષમ્-અન્ન આદિ પદાર્થો, સમૂર્જમ્-ઉત્તમ પરાક્રમ અને રચિમ્-ઉત્તમ ધર્મ દ્વારા પેદા કરેલ ધનને સંદધ્યુઃ-ધારણ કરે. (૫૮)

ભાવાર્થ : તે જ ઉત્તમ વિદ્યાવાન છે, જે મનુષ્યોના રોગોનો નાશ કરીને શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે.

તે જ પતિવ્રતા સ્ત્રી છે, જે પતિનાં સુખ માટે ધન અને ઘૃત આદિ વસ્તુઓને સુરક્ષિત રાખે છે. (૫૮)

અશ્વિના નમુચેઃ સુતઃસોમઃશુક્રં પરિસ્ત્રુતાં ।

સરસ્વતી તમાભરદ્ બર્હિષેન્દ્રાય પાતવે ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વ તરફથી અવ્યાહત ગતિયુક્ત અશ્વિના-શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં વ્યાપક, સરસ્વતી-પ્રશંસિત સ્ત્રી તથા પુરુષ બર્હિષા-સુખવર્ધક કર્મથી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યના સુખના માટે અને નમુચેઃ-ન મટનાર અસાધ્ય રોગના નિવારણ માટે શુક્રમ્-વીર્ય વર્ધક, સુતમ્-ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરેલ સોમમ્-સોમ આદિ ઔષધિઓના સમૂહની પાતવે-રક્ષા માટે તમ્-તે રસને આભરત્-સર્વત્રથી ધારણ કરે છે; તે જ સદા સુખી રહે છે. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે અંગ અને ઉપાંગો સહિત વેદોને ભણીને, હસ્ત-ક્રિયાને જાણે છે, તે અસાધ્ય રોગો નિવારણ કરી શકે છે. (૫૯)

કવષ્યો ન વ્યચસ્વતીરશ્વિભ્યાં ન દુરો દિશઃ ।

ઇન્દ્રો ન રોદસીઽઉભે દુહે કામાન્ત્સરસ્વતી ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : સરસ્વતી-અતિ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનવતી હું ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત્ અશ્વિભ્યામ્-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા વ્યચસ્વતીઃ-વ્યાપ્તિવાળી કવષ્યઃ-અત્યંત પ્રશંસિત દિશઃ-દિશાઓની ન-સમાન; દુરઃ-દ્વારોની ન-સમાન ઉભે-બન્ને રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીની ન-સમાન, કામાન્-ઈચ્છાઓને દુહે-પૂર્ણ કરું છું. (૬૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઈન્દ્ર = પરમેશ્વર સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા દિશાઓ અને દ્વારોના અંધકારનો નાશ કરે છે. અથવા જેમ ભૂમિ અને પ્રકાશને ધારણ કરે છે. તેમ વિદ્યુથી સ્ત્રી પુરુષાર્થથી ઈચ્છાઓને પૂર્ણ કરે. (૬૦)

ઉષાસાનક્તમશ્વિના દિવેન્દ્રઃસાયમિન્દ્રિયૈઃ ।

સંજાનાને સુપેશાસા સમઙ્જાતે સરસ્વત્યા ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ સુપેશાસા-સુંદર રૂપવાળા અશ્વિના-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન બે વિદ્વાનો સરસ્વત્યા-પ્રશસ્ત સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીથી ઉષાસા-પ્રભાત નક્તમ્-રાત્રિ સાયમ્-સંધ્યાકાલ અને દિવા-દિવસે ઇન્દ્રિયૈઃ-જીવના લક્ષણો ઈન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ને સંજાનાને-સારી રીતે પ્રકટ કરતાં સમઙ્જાતે-પ્રસિદ્ધ કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રસિદ્ધ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ ઉષા રાત્રિને અને સાયંકાલ દિવસને નિવૃત્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ અવિદ્યા અને કુશિક્ષાનું નિવારણ કરીને સર્વને વિદ્યા તથા સુશિક્ષાથી યુક્ત કરવા જોઈએ. (૬૧)

પાતં નૌઽશ્વિના દિવા પાહિ નક્તઃસરસ્વતિ ।

દૈવ્યાં હોતારા ભિષજા પાતમિન્દ્રઃસર્ચાસુતે ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે દૈવ્યા-દિવ્યગુણોથી સંપન્ન અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો ! તમે બન્ને-દિવા-દિવસે નક્તમ્-રાત્રિએ ન:-અમારી પાતમ્-રક્ષા કરો.

હે સરસ્વતી-અનેક વિદ્યાથી યુક્ત માતા ! તું ન:-અમારી પાહિ-રક્ષા કર.

હે હોતારા-સર્વના સુખદાતા સચા-મળીને કાર્ય કરનારા ભિષજા-બે વેદો તમે-સુતે-ઉત્પન્ન થયેલા આ જગતમાં ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારી સોમલતાના રસની પાતમ્-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વેદ રોગ નિવારક ઔષધ જાણે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો તથા માતા-પિતા અવિદ્યા નિવારક ઉપાયોને જાણે. (૬૨)

તિસ્રસ્ત્રેધા સરસ્વત્યશ્વિના ભારતીડાં ।

તીવ્રં પરિસ્ત્રુતા સોમમિન્દ્રાય સુષુવુર્મદમ્ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સરસ્વતી-સુશિક્ષિત વાણી, ભારતી-ધારણ કરનારી માતા, ઇન્દ્રા-સ્તુતિને યોગ્ય ઉપદેશિકા તિસ્ર:-એ ત્રણેય; અને અશ્વિનો-બે શ્રેષ્ઠ વેદો ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યના માટે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી સ્તવનારા યંત્રથી તીવ્રમ્-તીવ્રગુણ અને સ્વભાવવાળા, મદમ્-હર્ષકારક સોમમ્-ઔષધિઓનો રસ વા પ્રેરણા નામક વ્યવહારને ત્રેધા-ત્રણ પ્રકારથી સુષુવુ:-ઉત્પન્ન કરે, તેમ તમે પણ સારી રીતે ઉત્પન્ન કરો. (૬૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સોમ આદિ ઔષધિઓનો રસ નિર્માણ કરીને, તેનું પાન કરીને તથા સ્વાસ્થ્ય બનાવીને વાણી, બુદ્ધિ અને વક્તૃત્વ-શક્તિની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૬૩)

અશ્વિનાં ભેષજં મધુ ભેષજં ન: સરસ્વતી ।

ઇન્દ્રે ત્વષ્ટા યશ: શ્રિયંરૂપંરૂપમધુ: સુતે ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : ન:-અમારા માટે અશ્વિના-વિદ્યાના શિક્ષક-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, સરસ્વતી-વિદુષી શિક્ષિત માતા અને ત્વષ્ટા-બુદ્ધિને સૂક્ષ્મ કરનાર વિદ્વાનો સુતે-ઉત્પન્ન થયેલા ઇન્દ્રે-પરમ ઐશ્વર્યમાં ભેષજમ્-સામાન્ય અને મધુ-મેષજમ્-મધુરાદિ ગુણયુક્ત ઔષધને યશ:-કીર્તિ, શ્રિયમ્-લક્ષ્મી અને સ્ત્રંસ્ત્રમ્-પ્રત્યેક રૂપને અધુ:-ધારણ કરે. (૬૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે એ ઉત્તમ ઔષધિઓ, યશ અને સુશોભાને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૪)

ઋતુથેન્દ્રો વનસ્પતિ: શશમાન: પરિસ્ત્રુતા ।

કીલાલમશ્વિભ્યાં મધુ દુહે ધેનુ: સરસ્વતી ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : જેમ ધેનુ:-દૂધ આપનારી ગાયની સમાન સરસ્વતી-પ્રશસ્ત શિક્ષાથી યુક્ત વાણી પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી ઝરાવનારી જલાદિ પદાર્થોની સાથે ઋતુથા-ઋતુ અનુસાર શશમાન:-વૃદ્ધિ પામતા ઇન્દ્ર:-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર વનસ્પતિ:-વડ આદિ વૃક્ષ મધુ-મધુર આદિ રસ તથા કીલાલમ્-અન્નને અશ્વિભ્યામ્-

વેદો દ્વારા કામનાઓને પૂર્ણ કરે છે, તેમ હું **દુહે**-કામનાઓને પૂર્ણ કરું. (૬૫)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વેદજન શુદ્ધ વનસ્પતિઓથી સારને ગ્રહણ કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેમ સર્વેએ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૬૫)

ગોભિર્ન સોમમશ્વિના માસરેણ પરિસ્ત્રુતાં ।

સમઘાત્સરસ્વત્યા સ્વાહેન્દ્રે સુતં મધુ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સુશિક્ષિત વેદો ! તમે બન્ને પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી મધુર આદિ રસોથી યુક્ત માસરેણ-પરિમિત માંડથી, સસ્વત્યા-સુશિક્ષા અને જ્ઞાનથી યુક્ત વાણીથી સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાઓથી **ઇન્દ્રે**-પરમ ઐશ્વર્ય હોવાથી **ગોભિઃ**-ગાયોથી દોહેલા દૂધ આદિની ન-સમાન સુતમ્-તૈયાર કરેલ મધુ-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત સોમમ્-ઔષધિઓના રસને તમે સમઘાતમ્-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરો. (૬૬)

ભાવાર્થ : વેદારાજોએ, શ્રેષ્ઠ હસ્તક્રિયાથી સમસ્ત ઔષધિઓના રસનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૬૬)

અશ્વિનાં હવિરિન્દ્રિયં નમુચેધિયા સરસ્વતી ।

આ શુક્રમાસુરાદ્વસુ મઘમિન્દ્રાય જઘિરે ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : અશ્વિના-ઉત્તમ વેદ અને સસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી ધિયા-બુદ્ધિથી નમુચેઃ-નાશરહિત કારણથી ઉત્પન્ન થયેલ કાર્યથી અર્થાત્ પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન કાર્યથી **હવિઃ**-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય **ઇન્દ્રિયમ્**-મન આદિને, આસુરાત્-મેઘથી શુક્રમ્-પરાક્રમ અને મઘમ્-પૂજ્ય વસુ-ધનને **ઇન્દ્રાય**-ઐશ્વર્યને માટે આ + જઘિરે-ધારણ કરે. (૬૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષોએ ઐશ્વર્યથી સુખની પ્રાપ્તિ માટે ઔષધોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૬૭)

યમશ્વિના સરસ્વતી હવિષેન્દ્રમવર્દ્યન્ ।

સ વિભેદ બલં મઘં નમુચાવારેસુ સર્ચા ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : સર્ચા-સંયુક્ત અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા સસ્વતી-વિદુષી સ્ત્રી નમુચૌ-અવિનાશી કારણથી ઉત્પન્ન, આસુરે-મેઘમાં વિદ્યમાન જલમાં **હવિષા**-સુગંધિત હોમ સામગ્રીથી, યમ્-જે **ઇન્દ્રમ્**-ઐશ્વર્યની **અવર્દ્યન્**-વૃદ્ધિ કરે, સઃ-તે મઘમ્-પરમ પૂજ્ય બલમ્-બળનું **વિભેદ**-ભેદન કરે. (૬૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઔષધિઓના રસને યજ્ઞ આદિ ક્રિયાજન્ય ગુણોથી ઉત્તમ બનાવે, તો તે રસ રોગનાશક બને છે. (૬૮)

તમિન્દ્રં પશવઃ સચાશ્વિનોભા સરસ્વતી ।

દધાનાઽઅભ્યૂનૂષત હવિષા યજ્ઞઽઈન્દ્રિયૈઃ ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સચા-વિદ્યાથી સંયુક્ત અશ્વિના-વેદક વિદ્યામાં નિપુણ અધ્યાપક અને

ઉપદેશક ઉમા-બન્ને ઇન્દ્રિયૈઃ-ધનોથી જે ઇન્દ્રમ્-બળ આદિ ગુણોને ધારણ કરનાર સોમને ધારણ કરે, તમ્-તેને સસ્વતી-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી ધારણ કરે અને જેને પશવઃ-ગાય આદિ પશુઓ ધારણ કરે, તે સોમને હવિષા-ઉત્તમ સામગ્રીથી દધાનાઃ-ધારણ કરતાં યજ્ઞે-યજ્ઞમાં અભ્યનૂષત-સર્વત્રથી પ્રશંસા કરો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ધર્માચરણ પૂર્વક ધનથી ધનની વૃદ્ધિ કરે છે, તે પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૯)

યઽન્દ્રઽન્દ્રિયં દધુઃ સવિતા વરુણો ભગઃ ।

સ સુત્રામા હવિષ્પતિર્યજમાનાય સશ્ચત ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! યઃ-જે લોકો ઇન્દ્રે-ઐશ્વર્યમાં ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તે સુખી થાય છે, એથી જે ભગઃ-સેવા કરવા યોગ્ય, વસ્મઃ-શ્રેષ્ઠ, સવિતા-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક, સુત્રામા-સારી રીતે રક્ષક, હવિષ્પતિઃ-હોમના પાલક પુરોહિત, યજમાનાય-યજમાનના માટે ધનની સશ્ચત-સેવા કરે છે, સઃ-તે પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૦)

ભાવાર્થ : જેમ પુરોહિત યજમાનનાં ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ યજમાન પણ પુરોહિતનાં ધનની વૃદ્ધિ કરે. (૭૦)

સવિતા વરુણો દધુઃચર્જમાનાય દાશુષૈ ।

આદત્ત નમુચેર્વસુ સુત્રામા બલમિન્દ્રિયમ્ ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : વસ્મઃ-ઉત્તમ, સવિતા-પ્રેરક, સુત્રામા-શ્રેષ્ઠ રક્ષકજન, દાશુષૈ-દાતા, યજમાનાય-યજમાનના માટે વસુ-દ્રવ્યને દધત્-ધારણ કરતાં નમુચેઃ-ધર્મને ન છોડનાર ધાર્મિક મનુષ્યના બલમ્-બળ અને ઇન્દ્રિયમ્-સુશિક્ષિત મનને આ + અદત્ત-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરે. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે દાતા પુરુષની સારી રીતે સેવા કરીને, તેનાથી પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, સર્વના બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તે બળવાન બને છે. (૭૧)

વરુણઃ ક્ષુત્રમિન્દ્રિયં ભગેન સવિતા શ્રિયમ્ ।

સુત્રામા યશસા બલં દધાના યજ્ઞમાશત ॥ ૭૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વસ્મઃ-ઉત્તમ પુરુષ, સવિતા-ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક, સુત્રામા-સારી રીતે રક્ષા કરનાર તથા અતિ પુરુષાર્થી સભાપતિ ભગેન-ઐશ્વર્યની સાથે રહેલાં ક્ષુત્રમ્-રાજ્ય, ઇન્દ્રિયમ્-મન આદિ શ્રિયમ્-રાજ્ય લક્ષ્મી અને યજ્ઞમ્-યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યશસા-કીર્તિથી બલમ્-બળને દધાનાઃ-ધારણ કરતાં તમે આશત-રાજ્ય આદિને પ્રાપ્ત કરો. (૭૨)

ભાવાર્થ : ઐશ્વર્ય વિના રાજ્ય, રાજ્ય વિના રાજ્યલક્ષ્મી, લક્ષ્મી વિના ઉપભોગ પ્રાપ્ત થતો નથી. તેથી નિત્ય પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૭૨)

અશ્વિના ગોભિરિન્દ્રિયમશ્વેંભિર્વીર્યું બલમ્ ।

હવિષેન્દ્રઃસરસ્વતી યજમાનમવર્દ્યન્ ॥ ૭૩ ॥

પદાર્થ : અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા સરસ્વતી-સુશિક્ષિત વિદુષી સ્ત્રી ગોભિઃ-સુશિક્ષિત વાણી વા પૃથિવી અને ગાયોથી, અશ્વેભિઃ-સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી અને હવિષા-સ્વીકૃત પુરુષાર્થથી ઇન્દ્રિયમ્-ધન, વીર્યમ્-પરાક્રમ, બલમ્-બળ, ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યથી યુક્ત યજમાનમ્-સત્યાચરણરૂપ યજ્ઞ કરનાર અવર્દ્યન્-ઉન્નતિ પામે. (૭૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો જેની સમીપ રહે તેને યોગ્ય છે કે, તેઓ તેને શુભ ગુણ, કર્મોથી અને ઐશ્વર્ય આદિથી ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરાવે. (૭૩)

તા નાસત્યા સુપેશાસા હિરણ્યવર્ત્તની નરા ।

સરસ્વતી હવિષ્મતીન્દ્ર કર્મસુ નોઽવત ॥ ૭૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! તા-તે બન્ને નાસત્યા-અસત્ય આચરણથી રહિત, સુપેશાસા-સુંદર રૂપ યુક્ત, હિરણ્યવર્ત્તની-સુવર્ણનો વર્તાવ કરનારી, નરા-સર્વ ગુણોના નેતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા હવિષ્મતી-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પ્રશસ્ત પદાર્થોવાળી સરસ્વતી-વિજ્ઞાનવતી વિદુષી સ્ત્રી અને આપ કર્મસુ-શુભ કર્મોમાં નઃ-અમારી અવત-રક્ષા કરો. (૭૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અધ્યાપન અને ઉપદેશોથી સર્વ મનુષ્યોને દુષ્ટ કર્મોથી નિવૃત્ત કરીને તથા શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત કરીને રક્ષા કરે છે, તેમ તે સર્વ વિદ્વાનોની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૭૪)

તા ભિષજા સુકર્મણા સા સુદુઘા સરસ્વતી ।

સ વૃત્રહા શતક્રતુરિન્દ્રાય દધુરિન્દ્રિયમ્ ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ તૌ-તે બન્ને ભિષજા-શરીર અને આત્માના રોગોનું નિવારણ કરનારા વૈદ્ય તથા અધ્યાપક-ઉપદેશક લોકો સુકર્મણા-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત આચરણથી સુદુઘા-કામનાઓને સારી રીતે પૂરણ કરનારી સરસ્વતી-પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત વિદુષી-સ્ત્રી અને સઃ-તે વૃત્રહા-મેઘનો નાશ કરનાર સૂર્યની સમાન શતક્રતુઃ-અત્યંત બુદ્ધિમાન વિદ્વાન એ સર્વ ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુઃ-ધારણ કરે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૭૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેમ વિદ્વાન લોકો શ્રેષ્ઠ-આચરણ-શીલ મનુષ્યની સમાન વિદ્યા અને ધનની સમ્યક્ વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો કરે. (૭૫)

યુવઃસુરામમશ્વિના નમુચાવાસુરે સર્વા ।

વિપિપાનાઃ સરસ્વતીન્દ્રં કર્મસ્વાવત ॥ ૭૬ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-પાલન આદિ કર્મ કરનારા અધ્યાપક અને ઉપદેશક ! સચા-સંયુક્ત યુવમ્-તમે બન્ને તથા હે સસ્વતિ-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત પ્રજા ! તું જેમ નમુચૌ-પ્રવાહથી નિત્ય સ્વરૂપ આસુરે-મેઘમાં અને કર્મસુ-કર્મોમાં વિદ્યમાન સુગમમ્-અતિ સુંદર ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યનું આવત્-પાલન/રક્ષા કરો; તેમ વિપિપાના:-વિવિધ રક્ષા કરનારા અન્ય પુરુષો પણ આચરણ કરે. (૭૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થથી મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, ધનને સુરક્ષિત કરીને આનંદ ભોગવે છે, તેઓ નિરંતર ઉન્નતિ કરે છે. (૭૬)

પુત્રમિવ પિતરાવશ્વિનોભેન્દ્રાવથુઃ કાવ્યૈર્દંસનાભિઃ ।

યત્સુરામં વ્યપિબઃ શર્ચીભિઃ સરસ્વતી ત્વા મઘવન્નભિષ્ણક્ ॥ ૭૭ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ ધન, ઇન્દ્ર-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! તું શર્ચીભિઃ-બુદ્ધિથી યત્-જે સુરામમ્-અતિ રમણીય મહૌષધિના રસનું વ્યપિબઃ-પાન કરે છે, તેથી સરસ્વતી-સુશિક્ષિત વિદુષી સ્ત્રી ત્વા-તારી અભિષ્ણક્-સેવા કરે.

ઉમા-બન્ને અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક કાવ્યૈઃ-કવિઓએ કરેલા દંસનાભિઃ-કર્મોથી જેમ પિતરૌ-માતા-પિતા પુત્રમિવ-પુત્રનું પાલન કરે છે, તેમ તારી આવથુઃ-રક્ષા કરે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા પોતાના સંતાનોની રક્ષા કરીને તેની નિત્ય ઉન્નતિ કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશકોએ શિષ્યોની સુરક્ષા કરીને તેઓની વિદ્યા દ્વારા ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૭૭)

યસ્મિન્નશ્વાસઽઋષભાસઽઽક્ષણો વશા મેષાઽઅવસૃષ્ટાસઽઆહુતાઃ ।

કીલાલપે સોમપૃષ્ઠાય વેધસે હૃદા મતિં જનય ચારુમ્ગનયે ॥ ૭૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! અશ્વાસઃ-ઘોડાઓ, ઋષભાસઃ-ઉત્તમ બળદો, ઽક્ષણઃ-વીર્યનું સિંચન કરનાર સાંઢ. વશાઃ-વંધ્યા ગાયો, મેષાઃ-ઘેટાં, એ અવસૃષ્ટાસઃ-સુશિક્ષિત અને આહુતાઃ-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરેલ યસ્મિન્-જે વ્યવહારમાં કામ કરનાર હોય તેમાં તું હૃદાઃ-અન્તઃકરણથી સોમપૃષ્ઠાય-સોમ વિદ્યાને પૂછનારા, કીલાલપે-ઉત્તમ અન્નના રસનું પાન કરનાર વેધસે-બુદ્ધિમાન અગ્નયે-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન મનુષ્યનાં માટે ચાસ્મ્-અતિ શ્રેષ્ઠ મતિમ્-બુદ્ધિને જનય-પ્રકટ કર. (૭૮)

ભાવાર્થ : પશુઓ પણ સુશિક્ષા-કેળવવાથી ઉત્તમ કાર્ય કરે છે, તો પછી શું વિદ્યા અને શિક્ષાથી યુક્ત મનુષ્ય ઉત્તમ કાર્યોને સિદ્ધ ન કરી શકે ? (૭૮)

અહાવ્યગ્ને હવિરાસ્યૈ તે સ્ત્રુચીવ ઘૃતં ચમ્વીવ સોમઃ ।

વાજસનિર્ચયિમસ્મે સુવીરં પ્રશસ્તં ઘેહિ યશસં બૃહન્તમ્ ॥ ૭૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ઉત્તમ વિદ્યાવાન પુરુષ ! જે તે સોમઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત હવિઃ-હોમ યોગ્ય પદાર્થો તે-તારા આસ્યે-મુખમાં ઘૃતમ્, સ્ત્રુચીવ-જેમ ઘૃત સુવાના મુખમાં અને ચમ્વીવ-યજ્ઞપાત્રમાં હોમ યોગ્ય

વસ્તુની સમાન અહાવિ-ગ્રહણ કરે છે, તે તું અસ્મે-અમારામાં પ્રશસ્તમ્-અતિ ઉત્તમ, સુવીરમ્-શ્રેષ્ઠ વીરોને ઉપયોગી, વાજસનિમ્-અન્ન વિજ્ઞાન આદિના ગુણોના વિભાગ, યશસમ્-કીર્તિ કરનારી બૃહન્તમ્-મહાન રયિમ્-રાજ્યલક્ષ્મી ને ધેહિ-ધારણ-સ્થાપિત કર. (૭૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ લોકોએ તેનો જ ભોજન આદિથી સત્કાર કરવો જોઈએ કે, જે અધ્યાપન, ઉપદેશ અને શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને જગતમાં બળ, વીર્ય, કીર્તિ, ધન અને વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરે. (૭૯)

અશ્વિના તેજસા ચક્ષુઃ પ્રાણેન સરસ્વતી વીર્યમ્ ।

વાચેન્દ્રો બલેનેન્દ્રાય દધુરિન્દ્રિયમ્ ॥ ૮૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સરસ્વતી-વિદ્યાવતી સ્ત્રી, અશ્વિના-અધ્યાપક, ઉપદેશક અને ઇન્દ્ર:-સભાપતિ એ સર્વે ઇન્દ્રાય-જીવને માટે પ્રાણેન-પ્રાણથી વીર્યમ્-પરાક્રમને, તેજસા-પ્રકાશથી ચક્ષુઃ-નેત્રને, વાચા-વાણીથી અને બલેન-બળથી ઇન્દ્રિયમ્-ઈન્દ્રિયોને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તેમ આપ ધારણ કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ-જેમ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ-તેમ વિજ્ઞાનમાં રુચિ રાખવાવાળા બને છે. (૮૦)

ગોમદૂ ષુ ણાસત્યાશ્વાવદ્યાતમશ્વિના । વર્ત્તી રુદ્રા નૃપાય્યમ્ ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્ય વ્યવહારથી યુક્ત સ્ત્રા-દુષ્ટોને રડાવનાર અશ્વિના-વિદ્યાવૃદ્ધ અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ તમે બન્ને ગોમત્-ગાયોનાં વર્ત્તિ:-માર્ગે ડ-અને અશ્વાવત્-પ્રશસ્ત ઘોડાઓનાં નૃપાય્યમ્-નર પરિણામને સુયાતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ અમે પણ પ્રાપ્ત કરીએ. (૮૧)

ભાવાર્થ : ગાય, ઘોડા, અને હાથી આદિ પાળેલા પશુઓથી મનુષ્ય પોતાનું અને અન્યોનું પાલન કરે. (૮૧)

ન યત્પરો નાન્તરડઆદ્ધર્ષદ્ વૃષણ્વસૂ । દુઃશંસો મર્ત્યો રિપુઃ ॥ ૮૨ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણ્વસૂ-શ્રેષ્ઠોને વાસ કરાવનાર સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને યત્-જેથી દુઃશંસ:-દુઃખથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય પર:-અન્ય મર્ત્ય:-મનુષ્ય રિપુઃ-શત્રુ ન-ન હોય અને ન-ન અન્તર:-મધ્યસ્થ હોય, જે અમને આદધર્ષત્-સર્વત્રથી ઘર્ષિત કરે, તેને પ્રયત્નથી વશમાં કરો. (૮૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે અતિ બળવાન અને અત્યંત દુષ્ટ શત્રુ હોય તેને પ્રયત્નથી જીતવા જોઈએ અને પોતાના વશમાં કરવા જોઈએ. (૮૨)

તા નડઆ વૌઠમશ્વિના રયિં પિશઙ્ગસન્દૃશમ્ । ધિષ્ણ્યા વરિવોવિદમ્ ॥ ૮૩ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! ધિષ્ણ્યા-બુદ્ધિથી તૌ-તે તમે બન્ને ન:-અમને વરિવોવિદમ્-સેવા પ્રાપ્તિના હેતુ પિશઙ્ગસન્દૃશમ્-જે સુવર્ણ સમાન જોવામાં આવે છે તે રયિમ્-ધનને આવોઢમ્-સર્વ બાજુથી પ્રાપ્ત કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિએ રાજ્ય સુખને માટે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ, જેથી સત્ય

ધર્મનાં આચરણની વૃદ્ધિ થાય. (૮૩)

પાવ્કા નઃ સરસ્વતી વાજેંભિર્વાજિનીવતી । યજ્ઞં વષ્ટુ ધિયાવસુઃ ॥ ૮૪ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ વાજેભિઃ-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી વાજિનીવતી-પ્રશસ્ત વિદ્યાથી યુક્ત, પાવ્કા-પવિત્ર કરનારી ધિયાવસુઃ-બુદ્ધિ સાથે જેથી ધન હોય તે સરસ્વતી-ઉત્તમ સંસ્કાર યુક્ત વાણી નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-યજ્ઞને વષ્ટુ-સુશોભિત કરે છે, તેમ તમે બન્ને અમને શિક્ષા કરો. (૮૪)

ભાવાર્થ : માણસ-ધાર્મિક અધ્યાપક અને ઉપદેશકોથી વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને નિત્ય વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરે. (૮૪)

ચોદયિત્રી સૂનૃતાનાં ચેતન્તી સુમતીનામ્ । યજ્ઞં દધે સરસ્વતી ॥ ૮૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ સૂનૃતાનામ્-સુશિક્ષિત વાણીઓનો ચોદયિત્રી-ઉપદેશ કરનારી, [અર્થાત્ પ્રેરણા કરનારી], સુમતીનામ્-શુભ બુદ્ધિઓને ચેતન્તી-સારી રીતે બતાવનારી સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત હું વિદુષી યજ્ઞમ્-યજ્ઞને દધે-ધારણ કરું છું, તેમ તેનું તમે પણ અનુષ્ઠાન કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓની વચ્ચે વિદુષી સ્ત્રી હોય, તે સર્વ સ્ત્રીઓને સદા ઉત્તમ શિક્ષા આપે, જેથી સ્ત્રીઓમાં વિદ્યાની વૃદ્ધિ થાય. (૮૫)

મહોઽર્ણઃ સરસ્વતી પ્ર ચેતયતિ કેતુનાં । ધિયો વિશ્વા વિરાજતિ ॥ ૮૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ સરસ્વતી-વાણી કેતુના-ઉત્તમ જ્ઞાનથી મહઃ-મહાન અર્ણઃ-અન્તરિક્ષમાં શબ્દરૂપ સમુદ્રને પ્રચેતયતિ-ઉત્તમ રીતે પ્રકટ કરે છે, વિશ્વાઃ-સર્વ ધિયઃ-બુદ્ધિઓને વિરાજતિ-પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્યાઓમાં તમે પ્રવૃત્ત રહો. (૮૬)

ભાવાર્થ : કન્યાઓએ બ્રહ્મચર્યથી પૂર્ણ વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને બુદ્ધિઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮૬)

ઇન્દ્રાયાહિ ચિત્રભાનો સુતાઽઙ્ગમે ત્વાયવઃ । અણ્વીભિસ્તના પૂતાસઃ ॥ ૮૭ ॥

પદાર્થ : હે ચિત્રભાનો-વિચિત્ર વિદ્યા પ્રકાશવાળા ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! આપ જે ઙ્ગમે-એ અણ્વીભિઃ-આંગળીઓથી સુતાઃ-તૈયાર કરેલા, તના-વિસ્તૃત ગુણથી પૂતાસઃ-પવિત્ર, ત્વાયવઃ-તને મળનારા પદાર્થો છે; તેને આયાહિ-પ્રાપ્ત કર; તેનું સેવન કર. (૮૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શ્રેષ્ઠ ક્રિયાથી પદાર્થોને શુદ્ધ કરીને ભોજન કરવું જોઈએ. (૮૭)

ઇન્દ્રાયાહિ ધિયેષિતો વિપ્રજૂતઃ સુતાવતઃ । ઉપ્ બ્રહ્માણિ વાઘતઃ ॥ ૮૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી સંપન્ન ! ઙ્ગિષિતઃ-પ્રેરણાથી યુક્ત, વિપ્રજૂતઃ-બુદ્ધિમાનોથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને વેગયુક્ત, વાઘતઃ-સુશિક્ષિત વાણીથી જાણનાર તું ધિયા-સમ્યક્ બુદ્ધિથી સુતાવતઃ-સિદ્ધ કરેલાં બ્રહ્માણિ-અન્ન અને ધનોને ઉપ-આ-યાહિ-સર્વ પ્રકારથી સમીપ ગ્રહણ કર. (૮૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્ય જિજ્ઞાસુ લોકોનો સંગ કરીને-મળીને તેમાં વિદ્યાના કોષ-નિધિને સ્થાપિત

કરે. (૮૮)

इन्द्रायाहि तूतुजानुउप ब्रह्माणि हरिवः । सुते दधिष्व नश्चनः ॥ ८९ ॥

પદાર્થ : હે હરિવઃ-પ્રશસ્ત ઘોડાઓવાળા **इन्द्र**-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર વિદ્વાન્ ! આપ **उपायाहि**-અમારા નજીક આવો, **तूतुजानः**-શીઘ્ર કાર્યકારી બનીને **नः**-અમારા માટે **सुते**-ઉત્પન્ન થયેલાં વ્યવહારમાં **ब्रह्माणि**-ધર્મયુક્ત કર્મથી પ્રાપ્ત ધનને અને **चनः**-ભોગ્ય અન્નને **दधिष्व**-ધારણ કર. (૮૯)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને ધર્મની વૃદ્ધિને માટે કોઈએ પણ આળસ ન કરવી જોઈએ. (૮૯)

अश्विनां पिबतां मधु सरस्वत्या सजोषसा ।

इन्द्रः सुत्रामा वृत्रहा जुषन्तांशसोम्यं मधु ॥ ९० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **सजोषसा**-સમાન સેવન કરનારા **अश्विना**-અધ્યાપક અને ઉપદેશક **सरस्वत्या**-અતિ શુદ્ધ વાણીથી **मधु**-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત વિજ્ઞાનનું **पिबताम्**-પાન કરે.

જેમ **इन्द्रः**-ઐશ્વર્યવાન **सुत्रामा**-શ્રેષ્ઠ રક્ષક રાજા અને **वृत्रहा**-મેઘનાશક સૂર્ય સમાન વર્તાવવાળા વિદ્વાન્ **सोम्यम्**-સોમલતા આદિ ઔષધિગુણમાં ઉત્પન્ન **मधु**-મધુરાદિ ગુણયુક્ત અન્નનું **जुषन्ताम्**-સેવન કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૯૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકોએ પોતાના આત્મા સમાન સર્વની વિદ્યા અને સુખની વૃદ્ધિની ઈચ્છા કરે, જેથી સર્વ સુખી બને. (૯૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં-રાજા અને પ્રજાનો ધર્મ (૧-૪). અંગ અને અંગી (૫-૧૧), ગૃહાશ્રમનો વ્યવહાર (૨૨), બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય (૨૫), સત્યવ્રત (૨૪), દેવ-ગુણ (૧૧, ૧૨), પ્રજારક્ષક (૫૦-૫૨), અભય (૫૧), પરસ્પર સંમતિ (૫૨) સ્ત્રીના ગુણ (૮૫), ધન આદિની વૃદ્ધિ (૮૯) ના વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति विश्वोऽध्यायः ॥



॥ અથૈકવિંશતિતમોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

ઙ્મં મૈ વરુણ શ્રુધી હવમ્દ્યા ચ મૃડય । ત્વામવસ્યુરા ચક્રે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વસ્મ-ઉત્તમ વિદ્વાન્ ! જે અવસ્યુ:-પોતાની રક્ષાનો ઇચ્છુક હું ઙ્મ-એ ત્વામ-તને આ, ચક્રે-ચાહું છું, તે તું મે-મારી હવમ્-સ્તુતિને શ્રુધિ-સાંભળ, ચ-અને અદ્ય-આજે મને મૃડય-સુખી કર. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્યાઓની ઇચ્છા કરનારાઓએ ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ની કામના કરવી જોઈએ. તે વિદ્યાર્થીઓના સ્વાધ્યાયને સાંભળીને, સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, સર્વને આનંદિત કરે. (૧)

તત્ત્વાં યામિ બ્રહ્મણા વન્દમાનસ્તદાશાસ્ત્રે યજમાનો હવિર્ધિઃ ।

અહેડમાનો વરુણેહ બોધ્યુરુશ્સ મા ન્ ઽ આયુઃ પ્ર મૌષીઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વસ્મ-અતિ ઉત્તમ વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ યજમાન:-યજમાન હવિર્ધિઃ:-આપવા યોગ્ય પદાર્થોથી તદ્-તને આ + શાસ્ત્રે-ચાહે છે, તેમ બ્રહ્મણા-વેદવિજ્ઞાનથી વન્દમાન:-સ્તુતિ કરતાં હું તત્-ઉક્ત ગુણોથી યુક્ત ત્વા-તને યામિ-પ્રાપ્ત કરું છું.

હે ઉક્ષાંસ-અનેક લોકોથી પ્રશંસિત વિદ્વાન્ ! મારાથી અહેડમાન:-સંસ્કારને પામી તું ઙ્મ-આ સંસારમાં ન:-અમારા આયુઃ-જીવન વા વિજ્ઞાનને મા, પ્રમૌષીઃ-ચોરીશ નહિ, અને શાસ્ત્રનો બોધિ-બોધ આપ્યા કર. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જેના દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરે, તે તેને પ્રથમ પ્રણામ કરે.

જે જેનો અધ્યાપક હોય, તે તેને વિદ્યા આપવામાં કપટ ન કરે. કોઈએ કદી પણ આચાર્યનું અપમાન ન કરવું જોઈએ. (૨)

ત્વં નૌ ઽ અગ્ને વરુણસ્ય વિદ્વાન્ દેવસ્ય હેડો ઽ અવ યાસિસીષ્ઠાઃ ।

યજિષ્ઠો વહ્નિતમઃ શોશુચાનો વિશ્વા દ્વેષાંશ્સિ પ્ર મુમુગ્ધ્યસ્મત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, યજિષ્ઠ:-અત્યંત યજ કરનાર, વહ્નિતમ:-અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરનાર, શોશુચાન:-શુદ્ધ કરનાર વિદ્વાન્-વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-તું વસ્મ-તું વસ્મ-શ્રેષ્ઠ દેવસ્ય-વિદ્વાનોનો હેડ:-અનાદર અવ-યાસિસીષ્ઠાઃ:-કર નહિ.

હે તેજસ્વી ! તું જે ન:-અમારો અનાદર થાય તેનો સ્વીકાર ન કર.

હે શિક્ષક ! તું અસ્મત્-અમને વિશ્વા-સર્વ દ્વેષાંસિ-દ્વેષ આદિથી યુક્ત કર્મોથી પ્રમુમુગ્ધિ-મુક્ત

કર. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્વાનોનો અનાદર (અપમાન) ન કરે, કોઈ પણ વિદ્વાન્ વિદ્યાર્થીઓનો તિરસ્કાર ન કરે.

સર્વે મળીને, ઈર્ષ્યા, ક્રોધ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને સર્વના મિત્ર બને. (૩)

સ ત્વં નો ઽ અગ્નેઽવમો ભવોતી નેદિષ્ઠો ઽ અસ્યાઽષસો વ્યુષ્ઠૌ ।

અવં યક્ષ્વ નો વરુણઃ રરાણો વીહિ મૃડીકઃ સુહવો ન ઽ એધિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન્ ! જેમ અસ્યા:-આ ઁષસ:-પ્રભાતવેળામાં વ્યુષ્ઠૌ-વિવિધ પ્રકાશમાં અગ્નિ નેદિષ્ઠ:-અત્યંત સમીપ અને રક્ષણ કરનાર છે, તેમ સ:-તે ત્વમ્-તું ઁતી-પ્રેમથી ન:-અમારી અવમ્-રક્ષા કરનાર ભવ-બન.

ન:-અમને વસ્ત્રમ્-ઉત્તમ ગુણ, ઉત્તમ વિદ્વાન્ અથવા ઉત્તમ ગુણીજનનો અવ, યક્ષ્વ-સંગ કરાવ, રાણ:-રમણ કરતાં તું મૃડીકમ્-સુખદાયક વિદ્યાદિ પદાર્થો વીહિ-પ્રદાન કર. ન:-અમને સુહવ:-શુભ દાન આપનાર એધિ-બન. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાતઃકાલમાં સૂર્ય સમીપ સ્થિત થઈને, સર્વ ઉપસ્થિત મૂર્ત પદાર્થોને વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ શિષ્યોની સમીપ અધ્યાપક રહીને તેઓને પોતાની વિદ્યાથી વ્યાપ્ત કરે. (૪)

મહીમૂ ષુ માતરં સુવ્રતાનામૃતસ્ય પત્નીમવસે હુવેમ ।

તુવિક્ષત્રામજરંતીમુરુચીઃ સુશર્માણમદિતિઃ સુપ્રણીતિમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે માતરમ્-માતાની સમાન, સુવ્રતાનામ્-ઉત્તમ સત્યાચરણરૂપ વ્રતોમાં વ્રહ્મસ્ય-સત્યને પ્રાપ્ત થયેલ મનુષ્યની પત્નીમ્-પત્નીની સમાન, તુવિક્ષત્રામ્-અતિ ધનવાળી, અજરંતીમ્-વૃદ્ધત્વથી રહિત, ઉરુચીમ્-અનેક પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનારી, સુશર્માણમ્-સુંદર ઘરોવાળી, સુપ્રણીતિમ્-ઉત્તમ નીતિઓથી યુક્ત, ઁ-ઉત્તમ, અદિતિમ્-અખંડિત મહીમ્-પૃથિવીની અવસે-રક્ષા માટે સુહુવેમ-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ માતા સંતાનોનું અને પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિનું પાલન કરે છે, તેમ આ પૃથિવી સર્વનું રક્ષણ-પાલન કરે છે. (૫)

સુત્રામાણં પૃથિવીં દ્યામનેહસઃ સુશર્માણમદિતિઃ સુપ્રણીતિમ્ ।

દૈવીં નાવંઃ સ્વરિત્રામનાગસમસ્ત્રવંતીમા રુહેમા સ્વસ્તયૈ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીજનો ! જેમ અમે સ્વસ્તયે-સુખને માટે સુત્રામાણમ્-ઉત્તમ રક્ષણ આદિના સાધનોથી યુક્ત, પૃથિવીમ્-વિસ્તૃત, દ્યામ્-શુભ પ્રકાશવાળી, અનેહસમ્-હિંસાથી રહિત, સુશર્માણમ્-સુશોભિત ઘરોવાળી, અદિતિમ્-અખંડિત, સુપ્રણીતિમ્-અનેક રાજા અને પ્રજાજનોની અખંડિત નીતિથી યુક્ત, સ્વરિત્રામ્-ઉત્તમ

હલેસાંવાળી, અનાગસમ્-દોષરહિત, અસ્ત્રવન્તીમ્-છિદ્રરહિત, દૈવીમ્-વિદ્વાન પુરુષોની નાવમ્-પ્રેરણા કરનારી નૌકામાં, આ, સ્ત્રેમ-બેસીએ છીએ, તેમ તમે પણ બેસો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય, જે નૌકામાં અનેક ઘર, અનેક સાધન, અનેક રક્ષણ, અનેક પ્રકારનો પ્રકાશ અને અનેક વિદ્વાનો હોય, તે છિદ્રરહિત વિશાળ નૌકામાં બેસીને, સમુદ્ર આદિ જલાશયોમાં આરપાર તથા અન્ય દેશો અને દ્વીપોમાં આવાગમન કરીને, ભૂગોળના દેશો અને દ્વીપોને જાણીને, શ્રીમાન્ બને. (૬)

સુનાવમા રુંહેયમસ્ત્રવન્તીમનાગસમ્ । શ્તારિત્રાંશ્ સ્વસ્તયે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું સ્વસ્તયે-સુખને માટે અસ્ત્રવન્તીમ્-છિદ્રાદિ દોષોથી અથવા અનાગસમ્-રચનાદિ દોષોથી રહિત, શ્તારિત્રામ્-અનેક લંગરોવાળી સુનાવમ્-ઉત્તમ નૌકામાં આસ્ત્રેયમ્-હું બેસું છું, તેમ તમે પણ બેસો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિશાળ નૌકાઓની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેમાં બેસીને સમુદ્ર આદિ જલાશયોની આરપાર જાય.

જેમાં અનેક અરિત્ર = હલેસાં વગેરે હોય, તે નૌકા અત્યંત ઉત્તમ હોય છે. (૭)

આ નૌ મિત્રાવરુણા ઘૃતૈર્ગવ્યૂતિમુક્ષતમ્ । મધ્વા રજાંશ્સિ સુક્રતૂ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવરુણા-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન વર્તનાર સુક્રતૂ-શુભ બુદ્ધિ વા ઉત્તમ કર્મયુક્ત બે શિલ્પીજનો ! તમે ઘૃતૈઃ-જલોથી નઃ-અમારા ગવ્યૂતિમ્-બે કોશનું ઉક્ષતમ્-સિંચન કરો અને આ-મધ્વા-સર્વત્રથી મધુર જલથી રજાંસિ-લોકો ઉર્ધ્વમાર્ગોનું ઉક્ષતમ્-સિંચન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પી લોકો યાનોને જલ આદિમાં ચલાવે, તો તેઓ ઉપર અને નીચેના માર્ગોમાં ગતિ કરી શકે છે. (૮)

પ્ર બાહવા સિસૃતં જીવસે ન ઽ આ નો ગવ્યૂતિમુક્ષતં ઘૃતેન ।

આ મા જને શ્રવયતં યુવાના શ્રુતં મે મિત્રાવરુણા હવેમા ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : મિત્રાવરુણા-મિત્ર અને વરુણ ઉત્તમ જન બાહવા-બંને ભુજાઓ સમાન યુવાના-સંયુક્ત અને અલગ કરનાર તમે નઃ અમારા જીવસે-જીવનને માટે મા-મને પ્રસિસૃતમ્ - પ્રાપ્ત થાઓ. ઘૃતેન-જલથી નઃ-અમારા ગવ્યૂતિમ્-બે કોશ સુધી આ, ઉક્ષતમ્-સર્વત્રથી સિંચન કરો, અનેક પ્રકારની કીર્તિ આશ્રવયતમ્-સારી રીતે સંભળાવો, મે-મારા જને-મનુષ્યગણમાં ઇમા-આ હવા-સંવાદોને શ્રુતમ્-સાંભળો. (૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશક પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન સર્વના જીવનના આધાર બને. વિદ્યા અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વના આત્માઓને, જલથી વૃક્ષોની સમાન સિંચન કરે. (૯)

શન્નો ભવન્તુ વાજિનો હવેષુ દેવતાતા મિત્રદ્રવઃ સ્વર્કાઃ ।

જમ્ભયન્તોઽહિં વૃક્ઃ રક્ષાંસિ સનેમ્યસ્મદ્યુયવન્નમીવાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સ્વર્કાઃ-ઉત્તમ અન્ન વા વજૂવાળા, મિતદ્રવઃ-પરિમિત ગતિવાળા, દેવતાતા-વિદ્વાનોની સમાન વર્તન કરનારા વાજિનઃ-અતિ ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત, હવેષુ-આદાન-પ્રદાનમાં ચતુર આપ અહિમ્-જેમ સૂર્ય મેઘનું હનન કરે છે, તેમ વૃક્મ્-ચોર અને રક્ષાંસિ-દુષ્ટ જીવોનો જમ્ભયન્તઃ-વિનાશ કરતાં નઃ-અમારા માટે સનેમિ-સદા-સનાતન શમ્-સુખકારક ભવન્તુ-બનો અને અસ્મત્-અમારા અમીવાઃ-રોગોને યુગ્વન્-દૂર કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અંધકારને દૂર કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાનો પ્રાણીઓનાં શરીર અને આત્માના સર્વ રોગો દૂર કરીને આનંદિત કરે. (૧૦)

વાજૈવાજેઽવત વાજિનો નો ધનેષુ વિપ્રા અમૃતા ઋહ્તજ્ઞાઃ ।

અસ્ય મધ્વઃ પિબત માદયધ્વં તૃપ્તા યાત પૃથિભિર્દેવયાનૈઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અમૃતા-આત્મા સ્વરૂપથી અવિનાશી, ઋહ્તજ્ઞાઃ-સત્યને જાણનારા, વાજિનઃ-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિપ્રાઃ-બુદ્ધિમાન જનો ! તમે વાજેવાજે-પ્રત્યેક યુદ્ધમાં અને ધનેષુ-ધનોમાં નઃ-અમારી અવત-રક્ષા કરો.

અસ્ય-એ મધ્વઃ-મધુર રસનું પિબત-પાન કરો, તેથી માદયધ્વમ્-વિશેષ આનંદને પ્રાપ્ત કરો, તેથી તૃપ્તાઃ-તૃપ્ત થઈને દેવયાનૈઃ-વિદ્વાનોના જવા યોગ્ય પૃથિભિઃ-માર્ગોથી યાત-ગમન કરો.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વિદ્યાદાન અને ઉપદેશથી સર્વને સુખી કરે છે, તેમ રાજપુરુષ રક્ષા અને અભયદાનથી સર્વને સુખી કરે. તથા ધર્મયુક્ત માર્ગોમાં ચાલીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે. (૧૧)

સમિદ્ધો ઽ અગ્નિઃ સમિધા સુસમિદ્ધો વરેણ્યઃ ।

ગાયત્રી છન્દ ઽ ઇન્દ્રિયં ત્ર્યવિર્ગૌર્વયૌ દધુઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જેમ સમિદ્ધઃ-સારી રીતે પ્રદીપ્ત અગ્નિઃ-અગ્નિ, સમિધા-ઉત્તમ પ્રકાશથી સુસમિદ્ધઃ-અત્યંત પ્રકાશમાન સૂર્ય, વરેણ્યઃ-અંગીકાર કરવા યોગ્ય જન અને ગાયત્રી, છન્દઃ-ગાયત્રી છંદ ઇન્દ્રિયમ્-મનને પ્રાપ્ત થાય છે; જેમ ત્ર્યવિઃ શરીર, ઇન્દ્રિય અને આત્મા એ ત્રણેયની રક્ષા કરનાર ગૌઃ-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનાર જન વયઃ-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ વિદ્વાન લોકો દધુઃ-ધારણ કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો વિદ્યાથી સર્વના આત્માઓને પ્રકાશિત કરીને તથા સર્વને જિતેન્દ્રિય બનાવીને દીર્ઘાયુ કરે. (૧૨)

તનૂનપાચ્છુચિંત્રતસ્તનૂપાશ્ચ સરંસ્વતી ।

उष्णिहा छन्दऽ इन्द्रियं दित्यवाद् गौर्वयो दधुः ॥ १३ ॥

પદાર્થ : જેમ શુચિવ્રત:-પવિત્ર ધર્માચરણ કરનાર, તનૂનપાત્-શરીરનું પતન ન કરનાર, તનૂપા:-શરીરની રક્ષા કરનાર, ચ-અને સરસ્વતી-વાણી ઉષ્ણિહા છંદ:-ઉષ્ણિક્ષ્ ઇંદ્ર ઇન્દ્રિયમ્-જીવના ચિહ્નરૂપ ઇન્દ્રિયોને ધારણ કરે છે; વા જેમ દિત્યવાદ્-ખંડનીય પદાર્થને માટે હિત પ્રાપ્ત કરાવનાર, ગૌ:-સ્તુતિ કરનાર જન વય:-ઈચ્છા-કામનાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તે સર્વને વિદ્વાનો દધુ:-ધારણ કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો પવિત્ર આચરણયુક્ત છે, જેની વાણી વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત છે, તેઓ પૂર્ણ જીવન ધારણ કરવાને યોગ્ય છે. (૧૩)

इडाभिरग्निरीड्यः सोमो देवोऽ अमर्त्यः ।

अनुष्टुप् छन्दऽ इन्द्रियं पञ्चाविर्गौर्वयो दधुः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : જેમ અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, અમર્ત્ય:-પોતાના આત્મ સ્વરૂપથી નાશરહિત, સોમ:-ઐશ્વર્યવાન, ઈંડ્ય:-સ્તુતિ અથવા અન્વેષણ કરવા યોગ્ય, દેવ:-દિવ્ય ગુણયુક્ત, પજ્ઞાવિ:-પાંચથી રક્ષા કરવા યોગ્ય, ગૌ:-વિદ્યાથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વિદ્વાન ઈડાભિ:-પ્રશંસાઓથી અનુષ્ટુપ છંદ:-અનુષ્ટુપ ઇંદ્ર ઇન્દ્રિયમ્-જ્ઞાન આદિ વ્યવહાર કરનાર મન અને વય: તૃપ્તિને ધારણ કરે છે, તેમ એ ઇંદ્ર આદિને સર્વ દધુ:-ધારણ કરે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ધર્મપૂર્વક વિદ્યા અને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા અને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૧૪)

सुबर्हिर्ग्निः पूषण्वान्त्स्तीर्णबर्हिरमर्त्यः ।

बृहती छन्दऽ इन्द्रियं त्रिवत्सो गौर्वयो दधुः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : જેમ પૂષણવાન્-પુષ્ટિકારક ગુણોથી યુક્ત, સ્તીર્ણબર્હિ:-આકાશમાં વ્યાપ્ત, અમર્ત્ય:-પોતાના સ્વરૂપથી નાશરહિત, સુબર્હિ:-આકાશને શુદ્ધ કરનાર અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન વિદ્વાનજન અને બૃહતી, છંદ:-બૃહતી ઇંદ્ર ઇન્દ્રિયમ્-જીવના ચિહ્નરૂપ મન આદિ ઇન્દ્રિયોને ધારણ કરે છે; અને ત્રિવત્સ:-દેહ, ઇન્દ્રિય અને મન એ ત્રણેય જેના વાઇરડાં સમાન અનુગામી છે તે ગૌ:-ગાયની સમાન વિદ્વાન્ વય:-તૃપ્તિને પ્રાપ્ત કરે, તેમ તેને સર્વ દધુ:-ધારણ કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ અન્તરિક્ષમાં વિચરણ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સૂક્ષ્મ નિરાકાર પદાર્થ વિદ્યામાં વિચરણ કરે છે.

જેમ ગાયની પાછળ વાઇરડું ચાલે છે, તેમ અવિદ્વાન લોકો વિદ્વાનોની પાછળ ચાલે અને ઇન્દ્રિયોને વશમાં કરે. (૧૫)

दुरो देवीर्दिशो महीर्ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः ।

પૃક્તિશ્ચન્દ્ ઇહેન્દ્રિયં તુર્યવાડ્ ગૌર્વયોં દધુઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇહ-અહીં દેવીઃ-પ્રકાશમાન મહીઃ-મહાન દુરઃ-દ્વાર, દિશઃ-દિશાઓ, બ્રહ્મા-અન્તરિક્ષસ્થ પવન દેવઃ-પ્રકાશમાન બૃહસ્પતિઃ-મહાનનો પાલક સૂર્ય, પંક્તિશ્ચન્દઃ-પંક્તિ છંદ, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, તુર્યવાડ્-ચતુર્થ અવસ્થાને પ્રાપ્ત સંન્યાસી તથા ગૌઃ-દૂધારી ગાય વયઃ-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ જીવનને દધુઃ-ધારણ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ પ્રાણી આકાશમાં સ્થિત વાયુ આદિ વિના જીવિત રહી શકતો નથી. (૧૬)

ઉષે યહ્ની સુપેશાસા વિશ્વેં દેવા ઽ અમર્ત્યાઃ ।

ત્રિષ્ટુપ્ છન્દ્ ઽ ઇહેન્દ્રિયં પષ્ટવાડ્ ગૌર્વયોં દધુઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇહ-આ સંસારમાં સુપેશાસા-સ્વરૂપવાન અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા યહ્ની-મહાન ઉષે-અંધકારનો નાશ કરનારી પ્રભાતવેળા સમાન બે સ્ત્રીઓ, અમર્ત્યાઃ-તત્ત્વ સ્વરૂપથી નિત્ય વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-પ્રકાશમાન પૃથિવી આદિ લોક, ત્રિષ્ટુપ છન્દઃ-ત્રિષ્ટુપ છંદ અને પષ્ટવાડ્-પીઠથી વહન કરનાર ગૌઃ-બળદ વયઃ-ઉત્પત્તિ અને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને ધારણ કરે છે, તેમ દધુઃ-તમે પણ આચરણ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો પરોપકારી છે, તેમ આ લોકમાં મનુષ્યોએ પણ પરોપકારી બનવું જોઈએ. (૧૭)

દૈવ્યા હોતારા ભિષજેન્દ્રેણ સયુજાં યુજા ।

જગતી છન્દ્ ઽ ઇન્દ્રિયમનૃદ્વાન્ ગૌર્વયોં દધુઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇન્દ્રેણ-ઐશ્વર્યથી સયુજા-ઔષધિ આદિને સમાનરૂપથી યુક્ત કરનાર, યુજા-સાવધાન ચિત્તવાળા, દૈવ્યા-વિદ્વાનોમાં નિપુણ, હોતારા-વિદ્યાદિના દાતા, ભિષજા-બે ઉત્તમ વૈદ્ય, અનૃદ્વાન્-બળદ, ગૌઃ-ગાય અને જગતી છન્દઃ-જગતી છંદ, વયઃ-સુંદર ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ ધારણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જેમ વૈદ્યો પોતાના તથા અન્યોના રોગોનું નિવારણ કરીને, સ્વયં તથા અન્ય લોકોને ઐશ્વર્યવાન બનાવે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૮)

તિસ્ર ઽ ઇડા સરસ્વતી ભારતી મરુતો વિશઃ ।

વિરાટ્ છન્દ્ ઽ ઇહેન્દ્રિયં ધેનુર્ગૌર્ન વયોં દધુઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : જેમ ઇહ-આ જગતમાં ઇડા-પૃથિવી, સરસ્વતી-વાણી અને ભારતી-ધારણાવતી બુદ્ધિ, તિસ્રઃ-એ ત્રણેય; મસ્તઃ-વાયુ, વિશઃ-મનુષ્ય આદિ પ્રજા, વિરાટ્-વિવિધ પ્રકારથી પ્રકાશમાન છન્દઃ-બળ ઇન્દ્રિયમ્-

ધન, ધેનુઃ-દૂધારી ગાય અને ગૌઃ-બળદની ન-સમાન વયઃ-પ્રાપ્તવ્ય વસ્તુને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેમ સર્વ મનુષ્યો તેને ધારણ કરીને વર્તાવ કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો સુશિક્ષિત વાણી, વિદ્યા, પ્રાણ અને પશુઓથી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અન્ય લોકોએ પણ પ્રાપ્ત કરવા કરાવવા જોઈએ. (૧૯)

ત્વષ્ટા તુરીપો ઽ અદ્ભુત ઽ ઇન્દ્રાગ્ની પુષ્ટિવર્ધના ।

દ્વિપદા છન્દ ઽ ઇન્દ્રિયમુક્ષા ગૌર્ન વયો દધુઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અદ્ભુતઃ-અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળો, પ્રસિદ્ધ અગ્નિ તુરીપઃ-શીઘ્ર પહોંચનાર વિદ્યુત્, ત્વષ્ટા-સૂક્ષ્મ કરનાર જઠરાગ્નિ, પુષ્ટિવર્ધના-પુષ્ટિવર્ધક ઇન્દ્રાગ્નિ-પવન અને વડવાનલ-અગ્નિ, દ્વિપદા, છન્દઃ-બે પાદવાળા છંદ, ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયો, ઉક્ષા-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ ગૌઃ-સાંઠની સમાન વયઃ-જીવનને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેને જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રસિદ્ધ અગ્નિ, વિદ્યુત્, જઠરાગ્નિ, વડવાનલ એ ચાર તથા પ્રાણ, ઈન્દ્રિયો અને ગાય આદિ પશુઓ સર્વ જગતની પુષ્ટિ કરે છે; તેમ મનુષ્યોએ બ્રહ્મચર્ય આદિથી પોતાનાં તથા અન્યોનાં બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

શમિતા નો વનસ્પતિઃ સવિતા પ્રસુવન્ ભગમ્ ।

કકુપ્ છન્દ ઽ ઇહેન્દ્રિયં વશા વેહદ્વયો દધુઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શમિતા-શાન્તિદાતા, વનસ્પતિઃ-ઔષધિઓનો રાજા અને વૃક્ષોનો પાલક સવિતા-સૂર્ય ભગમ્-ધનને પ્રસુવન્-ઉત્પન્ન કરે છે; કકુપ્, છન્દઃ-કકુપ છંદ, ઇન્દ્રિયમ્-જીવના ચિહ્નરૂપ ઈન્દ્રિયો, વશા-અપ્રસુતા અને વેહત્-ગર્ભપતિની ઇહ-આ સંસારમાં નઃ-અમારા વયઃ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેને તમે જાણીને ઉપકાર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સર્વ રોગોની નાશક ઔષધિઓ અને ધારણ કરવા યોગ્ય વસ્તુનું સેવન કરે છે, તે ચિરંજીવી બને છે. (૨૧)

સ્વાહા યજ્ઞં વરુણઃ સુક્ષત્રો ભેષજં કરત્ ।

અતિચ્છન્દા ઽ ઇન્દ્રિયં બૃહદૃષ્ણભો ગૌર્વયો દધુઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ વસુઃ-શ્રેષ્ઠ સુક્ષત્રઃ-ઉત્તમ ધનવાન મનુષ્ય સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી યજ્ઞમ્-સંગમમય ભેષજમ્-ઔષધને કરત્-બનાવે છે; જે અતિચ્છન્દાઃ-અતિછંદ તથા ઋણમ્-ઉત્તમ ગૌઃ-બળદ બૃહત્-મહાન ઇન્દ્રિયમ્-ઐશ્વર્ય અને વયઃ-કામના કરવા યોગ્ય પોતાના વ્યવહારને ધારણ કરે છે, તેમ સર્વ દધુઃ-ધારણ કરે, તેને જાણો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુખ્ય અને ઔષધ સેવનથી રોગોનું નિવારણ કરે છે, પુરુષાર્થથી ધન અને આયુને ધારણ કરે છે, તેઓ અતુલ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૨)

વસન્તેન ઽ ઋતુનાં દેવા વસવસ્ત્રિવૃતાં સ્તુતાઃ ।

રથન્તરેણ તેજસા હવિરિન્દ્રે વયોં દધુઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વસવઃ-પૃથિવી આદિ આઠ વસુઓ વા પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ દેવાઃ-દિવ્યગુણોથી યુક્ત સ્તુતાઃ-સ્તુતિને પ્રાપ્ત, ત્રિવૃતા-ત્રણે કાળમાં વિદ્યમાન, વસન્તેન-જેમાં મનુષ્ય સુખથી રહે છે તે વસંત, ઋતુના-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઋતુની સાથે, વર્તમાન રહીને રથન્તરેણ-રથથી પાર કરવા યોગ્ય તેજસા-તીક્ષ્ણ સ્વરૂપથી ઇન્દ્રે-સૂર્યના પ્રકાશમાં વયઃ-આયુવર્ધક હવિઃ-દાન કરવા યોગ્ય વસ્તુને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તેને સ્વરૂપથી જાણીને તેનો સંગ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો રહેવા માટે દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત પૃથિવી આદિ લોક અથવા વિદ્વાનોનો વસંત ઋતુમાં સંગ કરે છે, તેઓ વસંત ઋતુનાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૩)

ગ્રીષ્મેણ ઋતુનાં દેવા રુદ્રાઃ પંચદશે સ્તુતાઃ ।

બૃહતા યશસા બલં હવિરિન્દ્રે વયોં દધુઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્તુતાઃ-પ્રશસ્ત રુદ્રાઃ-દશ પ્રાણ અગિયારમો જીવાત્મા વા મધ્યમ કોટિના દેવાઃ-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનો પંચદશે-પંદરમાં વ્યવહારમાં ગ્રીષ્મેણ-સર્વ રસોને આકર્ષીને ઋતુના-ઉષ્ણતા આપનારી ગ્રીષ્મ ઋતુ વા બૃહતા મહાન યશસા-કીર્તિથી ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં હવિઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય બલમ્-બળ અને વયઃ-જીવનને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેને તમે જાણો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે યુમાળીસ વર્ષો સુધી બ્રહ્મચર્ય-પાલન કરીને વિદ્વાન્ બનીને અન્યોના શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તે ભાગ્યશાળી હોય છે. (૨૪)

વર્ષાભિર્ઋતુનાંદિત્યા સ્તોમે સપ્તદશે સ્તુતાઃ ।

વૈરૂપૈણ વિશૌજસા હવિરિન્દ્રે વયોં દધુઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વર્ષાભિઃ-જેમાં વાદળાં વર્ષા કરે છે તે વર્ષા ઋતુના-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ઋતુ, વૈરૂપૈણ-વિવિધ રૂપોવાળા ઓજસા-બળ તથા વિશા-પ્રજાની સાથે રહેનારા આદિત્યાઃ-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ કોટિના વિદ્વાન્ સપ્તદશે-સત્તરમા સ્તોમે-સ્તુતિના વ્યવહારમાં સ્તુતાઃ-પ્રશંસિત બનીને ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં હવિઃ-આપવા યોગ્ય વયઃ-કાળના જ્ઞાનને દધુઃ-ધારણ કરે છે, તેને તમે જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગ દ્વારા કાળની સૂક્ષ્મ અને સ્થૂલ ગતિને જાણીને એક ક્ષણ પણ

વ્યર્થ ગુમાવતાં નથી, તેઓ અનેક ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

શારદેન ઽ ઋતુનાં દેવા ઽ એકવિંશ ઽ ઋભવં સ્તુતાઃ ।

વૈરાજેન શ્રિયા શ્રિયઃ હવિરિન્દ્રે વયો દધુઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એકવિંશે-એકવીસમાં વ્યવહારમાં સ્તુતાઃ-સ્તુતિને પ્રાપ્ત ઋભવઃ-બુદ્ધિમાન દેવાઃ-વિદ્વાન્ - દેવગુણયુક્ત શારદેન-શરદ ઋતુના-ઋતુ, વા વૈરાજેન-વિરાટ છંદમાં વિદ્યમાન અર્થની સાથે, શ્રિયા-શોભા અને લક્ષ્મીની સાથે વિદ્યમાન રહીને ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં શ્રિયમ્-લક્ષ્મી અને હવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય વયઃ-ઈચ્છિત સુખને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેની તમે સેવા કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : સુપથ્ય સેવન કરનારા જે મનુષ્યો શરદઋતુમાં રોગરહિત રહે છે, તેઓ શ્રી-લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૬)

હેમન્તેન ઽ ઋતુનાં દેવાસ્ત્રિણવે મરુતઃ સ્તુતાઃ ।

બલેન શક્વરીઃ સહો હવિરિન્દ્રે વયો દધુઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ત્રિણવે-સત્તાવીસમા વ્યવહારમાં હેમન્તેન-જેમાં દેહ વધે છે તે ઋતુના-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય હેમન્ત ઋતુની સાથે વિદ્યમાન સ્તુતાઃ-પ્રશંસાને યોગ્ય દેવાઃ-દિવ્યગુણયુક્ત મસ્તઃ-મનુષ્ય છે, તે બલેન-મેઘથી શક્વરીઃ-શક્તિ માટે ગાય, સહઃ-બળ, હવિઃ આદાન પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થો અને વયઃ-ઈષ્ટ સુખને ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં દધુઃ-ધારણ કરે છે; તમે એની સેવા કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ રસોનો પરિપાક કરનાર હેમન્ત ઋતુમાં યથાયોગ્ય વ્યવહાર કરે છે, તે બળવાન બને છે. (૨૭)

શૈશિરેણ ઽ ઋતુનાં દેવાસ્ત્રયસ્ત્રિંશુઽમૃતાં સ્તુતાઃ ।

સત્યેન રેવતીઃ ક્ષત્રઃ હવિરિન્દ્રે વયો દધુઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અમૃતાઃ-પોતાના સ્વરૂપથી નિત્ય સ્તુતાઃ-પ્રશંસિત, શૈશિરેણ-શિશિર ઋતુના-ઋતુની સાથે, દેવાઃ-દિવ્ય ગુણ - કર્મ - સ્વભાવયુક્ત, સત્યેન-સત્યની સાથે ત્રયસ્ત્રિંશે-તેત્રીસ વસુ આદિ સમુદાયમાં વિદ્યમાન વિદ્વાનો છે, તેઓ રેવતીઃ-શત્રુ સેનાનું ઉલ્લંઘન કરનારી ધનવાન પ્રજાને ઇન્દ્રે-જીવમાં હવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થ, ક્ષત્રમ્-ધન વા રાજ્ય અને વયઃ-ઈષ્ટ સુખને દધુઃ-ધારણ કરે છે; તેનાથી પૃથિવી આદિની વિદ્યાઓને ગ્રહણ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૂર્વોક્ત - આઠ વસુઓ, અગિયાર રુદ્ર, બાર આદિત્ય, વિદ્યુત અને યજ્ઞ એ તેત્રીસ દિવ્ય પદાર્થોને જાણે છે, તેઓ અક્ષય સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૮)

હોતાં યક્ષત્સમિધાગ્નિમિડસ્પદ્દેઽશ્વિનેન્દ્રઃ સરસ્વતીમજો ધૂમ્રો ન ગોધૂમૈઃ

કુવલૈર્ભેષજં મધુ શષ્ઠૈર્ન તેજ ઽ ઇન્દ્રિયં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતાઃ ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય
હોતર્યજં ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે યાજ્ઞિક ! જેમ હોતા-દાતા, ઇન્દ્રસ્પદે-પૃથિવી અને અન્નના સ્થાનમાં સમિધા-બળતણ આદિ સાધનોથી અગ્નિમ્-અગ્નિને, અશ્વિનૌ-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્ય વા જીવને; તથા સરસ્વતીમ્-સુશિક્ષિત વાણીને; ધૂમ્નઃ-ધૂમ્નવર્ણવાળા અજઃ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બકરાંની ન-સમાન કોઈ જીવ ગોધૂમૈઃ-ઘઉં અને કુવલૈઃ-બળનાશક બોરફળની ભેષજમ્-ઔષધને યક્ષત્-ભેળવે છે; તેમ શષ્ઠૈઃ-હિંસાઓની ન-સમાન સાધનોથી જે તેજઃ-પ્રગલ્ભતા, મધુ-મધુર જલ, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, પયઃ-દૂધ વા અન્નને પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે તે સોમઃ-ઔષધિગણ ઘૃતમ્-ઘૃત મધુ-મધને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે, તેની સાથે તું આજ્યસ્ય-ઘૃતનો યજ-હોમ કર. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં સાધન અને ઉપસાધનોથી પૃથિવી આદિની વિદ્યાને જાણે છે, તેઓ સર્વ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૯)

હોતા યક્ષત્તનૂનપાત્સરસ્વતીમવિર્મેષો ન ભેષજં પથા મધુમતા ભરન્નશ્વિનેન્દ્રાય
વીર્યું બદરૈરુપવાકાભિર્ભેષજં તોક્મભિઃ પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતાઃ ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય
હોતર્યજં ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-હવન કરનાર પુરુષ ! જેમ - તનૂનપાત્-શરીરથી નિર્બળની રક્ષા કરનાર, હોતા-ગ્રહણ કરનાર જન સરસ્વતીમ્-અનેક જ્ઞાનવાળી વાણીને, અવિઃ-ઘેટાં અને મેષઃ-બકરાંની ન-સમાન મધુમતા-અધિક જલયુક્ત પથા-માર્ગથી ભેષજમ્-ઔષધને ભરન્-ગ્રહણ કરતાં, ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે અશ્વિના-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા અને વીર્યમ્-પરાક્રમને, બદરૈઃ-બોરફળથી તથા ઉપવાકાભિઃ-ઉપદેશાત્મક ક્રિયાઓથી ભેષજમ્-ઔષધનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, તેમ જો તોક્મભિઃ-સંતાનોની સાથે પયઃ-જલ, પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે સોમઃ-ઔષધિઓનો સમૂહ, ઘૃતમ્-ઘી અને મધુ-મધને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે, તેની સાથે તું આજ્યસ્ય-ધીનો યજ-હવન કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે સંગ કરનારા મનુષ્યો વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીને પ્રાપ્ત કરીને, પથ્ય આહાર-વિહારથી વીર્યની વૃદ્ધિ કરીને, પદાર્થ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ જગતમાં અલંકૃત બને છે. (૩૦)

હોતા યક્ષન્નરાશઃસં ન નગ્નહું પતિઃ સુરયા ભેષજં મેષઃ સરસ્વતી ભિષગ્રથો
ન ચન્દ્ર્યશ્વિનોર્વપા ઇન્દ્રસ્ય વીર્યું બદરૈરુપવાકાભિર્ભેષજં તોક્મભિઃ પયઃ સોમઃ
પરિસ્ત્રુતાઃ ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-હવન કરનાર મનુષ્ય ! જેમ હોતા-દાતા નરાશંસમ્-મનુષ્યોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય

મનુષ્યની ન-સમાન નગ્નહુમ્-દુષ્ટ પુરુષોને જેલમાં નાખનાર પતિમ્-સ્વામીનો, સુર્યા-જલની સાથે વિદ્યમાન ભેષજમ્-ઔષધને ઇન્દ્રસ્ય-દુષ્ટોનું વિદારણ કરનાર પુરુષ વીર્યમ્-શૂરવીરમાં ઉત્તમ બળનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, તે મેષઃ-ઉપદેશક, સરસ્વતી-વિદ્યા સંબંધી વાણી, ભિષક્-વૈદ્ય, રથઃ-રથની ન-સમાન ચન્દ્રી-અનેક પ્રકારના સુવર્ણવાળા બનીને, અશ્વિનોઃ-આકાશ અને પૃથિવીની વપાઃ-ક્રિયાઓ, વા બદરૈઃ-બોરની સમાન ઉપવાકાભિઃ-સમીપ પ્રાપ્ત વાણીઓથી ભેષજમ્-ચિકિત્સકનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; તથા જેને તોક્મભિઃ-સંતાનોની સાથે પયઃ-દૂધ તથા પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે સોમઃ-ઔષધિગણ, ઘૃતમ્-ઘી અને મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ઘી નો યજ-હવન કર. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય નિર્લજ્જોને દંડ આપે છે, પ્રશંસનીયોની પ્રશંસા કરે છે, જલની સાથે ઔષધનું સેવન કરે છે, તેઓ બળ અને આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યવાન બને છે. (૩૧)

હોતા યક્ષદિઙ્દેઙિત ઽ આજુહ્વાનઃ સરસ્વતીમિન્દ્રં બલેન વર્ધયન્નૃષભેણ ગવેન્દ્રિયમશ્વિનેન્દ્રાય ભેષજં યવૈઃ કર્કન્ધુભિર્મધુ લાજૈર્ન માસરં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-હવન કરતા મનુષ્ય ! જે ઇન્દ્ર-પ્રશંસિત વાણીથી ઈન્દ્રિતઃ-પ્રશંસિત આજુહ્વાનઃ-સત્કારપૂર્વક નિમંત્રિત હોતા-પ્રશંસા યોગ્ય મનુષ્ય છે, તે બલેન-બળથી સરસ્વતીમ્-વાણી અને ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યને ર્ણભેણ-ચાલવા યોગ્ય ઉત્તમ ગવા-બળદથી ઇન્દ્રિયમ્-ધન તથા અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનો યવૈઃ જવ આદિ અન્નોથી, ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે ભેષજમ્-ઔષધની વર્ધયન્-વૃદ્ધિ કરતાં, કર્કન્ધુભિઃ-બોરની ક્રિયાને ધારણ કરનારાઓથી મધુ-મીઠા લાજૈઃ-ફૂલેલાં અન્નોની ન-સમાન માસરમ્-ભાતનો યક્ષત્-સંગત કરે, તેમ જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલા રસની સાથે સોમઃ-ઔષધિગણ પયઃ-રસ, ઘૃતમ્-ઘી અને મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ઘી નો યજ-હોમ કર. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય બ્રહ્મચર્યથી શરીર અને આત્માનાં બળને, વિદ્વાનોની સેવાથી વિદ્યાને તથા પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, પથ્ય તથા ઔષધનાં સેવનથી રોગોનો નાશ કરીને, આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરે. (૩૨)

હોતા યક્ષદ્ બર્હિરૂર્ણમ્રદા ભિષદ્ નાસંત્યા ભિષજાશ્વિનાશ્વા શિશુમતી ભિષગધેનુઃ સરસ્વતી ભિષગ્દુહ ઽ ઇન્દ્રાય ભેષજં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-હવન કરનાર મનુષ્ય ! જેમ હોતા-દાતા, ઊર્ણમ્રદાઃ-સુખને ઢાંકનારનું મર્દન કરનાર મનુષ્ય, ભિષક્-વૈદ્ય અને શિશુમતી-પ્રશંસિત બાળકો વાળી અશ્વા-શીઘ્ર ચાલનારી ઘોડી દુહે-સુખને

પરિપૂર્ણ કરવા માટે **બર્હિઃ**-અન્તરિક્ષનો **યક્ષત્**-સંગ કરે છે; જેમ **નાસત્યા**-સત્ય વ્યવહાર કરનારાઓ **અશ્વિના**-વૈદ્યક વિદ્યામાં વ્યાપક **ભિષજા**-બે ઉત્તમ વૈદ્ય **ભિષક્**-રોગ નિવારક સામાન્ય વૈદ્ય **ધેનુઃ**-દુધારી ગાય **સરસ્વતી**-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી તથા **ભિષક્**-રોગ નિવારક સામાન્ય વૈદ્ય પદાર્થોનો સંયોગ કરે છે; જેમ **ભિષક્**-વૈદ્ય, **ઇન્દ્રાય**-જીવને માટે **યક્ષત્**-પ્રદાન કરે છે, તેમ જેને **પરિસ્ત્રુતા**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે **સોમઃ**-ઔષધિગણ **પયઃ**-રસ, **ઘૃતમ્**-ઘી અને **મધુ**-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તેની સાથે રહીને તું **આજ્યસ્ય**-ઘીનો **યજ**-હવન કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા અને સંગતિ દ્વારા સર્વ પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ વાયુ અને અગ્નિની સમાન સમસ્ત વિદ્યાઓ અને સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૩)

હોતા યક્ષદુરો દિશઃ કવૃષ્યો ન વ્યચસ્વતીરશ્વિભ્યાં ન દુરો દિશ્ ૽ ઇન્દ્રો ન રોદસી દુઘે દુહે ધેનુઃ સરસ્વત્યશ્વિનેન્દ્રાય ભેષજશ્શુક્રં ન જ્યોતિરિન્દ્રિયં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે **હોતઃ**-દાતા મનુષ્ય ! જેમ **હોતા**-લેનાર મનુષ્ય **કવૃષ્યઃ**-છિદ્રોવાળી વસ્તુઓને **દુરઃ**-દારોની ન-સમાન **વ્યચસ્વતીઃ**-વ્યાપક **દિશઃ**-દિશાઓને **અશ્વિભ્યામ્**-ઈન્દ્ર અને અગ્નિની ન-સમાન **દુરઃ**-દારો **દિશઃ**-દિશાઓને **ઇન્દ્રઃ**-વિદ્યુત્ની ન-સમાન **દુઘે**-પૂર્ણ **રોદસી**-આકાશ અને પૃથિવીને **ધેનુઃ**-ગાયની સમાન, **સરસ્વતી**-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, **ઇન્દ્રાય**-જીવને માટે **અશ્વિના**-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાને **શુક્રમ્**-બળકારી જલની ન-સમાન, **ભેષજમ્**-ઔષધ, **જ્યોતિઃ**-પ્રકાશક **ઇન્દ્રિયમ્**-મન આદિને **દુહે**-પરિપૂર્ણતા માટે **યક્ષત્**-સંગત કરે છે; તેમ જે **પરિસ્ત્રુતા** સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે **પયઃ**-દૂધ, **સોમઃ**-ઔષધિગણ, **ઘૃતમ્**-ઘી અને **મધુ**-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય; તેની સાથે રહીને તું **આજ્યસ્ય**-ઘી નો **યજ**-હવન કર. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ દિશાઓમાં દ્વારવાળા, સર્વ ઋતુઓમાં સુખકારક ઘર બનાવે છે, તેઓ પૂર્ણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૪)

હોતા યક્ષત્સુપેશસોષે નક્તં દિવાશ્વિના સમઞ્જાતે સરસ્વત્યા ત્વિષ્મિન્દ્રે ન ભેષજશ્શ્યેનો ન રજસા હૃદા શ્રિયા ન માસરં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે **હોતઃ**-દાતા મનુષ્ય ! જેમ **સુપેશસા**-સુંદર સ્વરૂપવતી **ઉષે**-કામને દગ્ધ કરનારી સ્ત્રીઓ છે તથા **નક્તમ્**-રાત્રિ અને **દિવા**-દિવસે **અશ્વિના**-વ્યાપ્ત થનાર સૂર્ય અને ચન્દ્રમા **સરસ્વત્યા**-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીથી **ઇન્દ્રે**-પરમ ઐશ્વર્યવાન પ્રાણીમાં **ત્વિષ્મિ**-પ્રકાશ તથા **ભેષજમ્**-જલને **સમઞ્જાતે**-સારી રીતે પ્રકાશિત કરે છે, તેની ન-સમાન અને **રજસા**-લોકોની સાથે રહેલા **શ્યેનઃ**-વિશેષ જ્ઞાનદાતા વિદ્વાનની

ન-સમાન, હોતા-જ્ઞાન લેનાર મનુષ્ય શ્રિયા-લક્ષ્મી વા શોભાની ન-સમાન હ્રદા-મનથી માસરમ્-ભાત વા સુસંસ્કૃત ભોજનના પદાર્થોનો યક્ષત્-યજ્ઞ કરે છે, તેમ જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે પયઃ-સર્વ ઔષધિઓનો રસ, સોમઃ-સર્વ ઔષધિગણ, ઘૃતમ્-જલ મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય ધી નો યજ-હોમ કર.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દિવસ, રાત, સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સર્વને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ રૂપ અને યૌવનથી સંપન્ન પત્નીઓ પોતાના પતિઓની સેવા કરે છે.

અથવા જેમ પાક ક્રિયાનો જ્ઞાતા પાક ક્રિયાનો ઉપદેશ કરે છે, તેમ તમે સર્વને પ્રકાશિત કરો અને સર્વની સેવા કરો તથા ભોજનના પદાર્થો ઉત્તમ રીતે બનાવો. (૩૫)

હોતા યક્ષદૈવ્યા હોતારા ભિષજાશ્વિનેન્દ્રં ન જાગૃવિ દિવા નક્તં ન ભૈષજૈઃ શૂષ્ઃ સરસ્વતી ભિષક્ સીસેન દુહ ઽ ઇન્દ્રિયં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-લેવાવાળા દૈવ્યા-દિવ્ય ગુણવાળાઓમાં પ્રાપ્ત, હોતારા-ગ્રહણ કરનાર, ભિષજા-વૈદ્યની સમાન રોગનું હરણ કરનાર અશ્વિના-અગ્નિ અને વાયુ તથા ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ની ન-સમાન યક્ષત્-યજ્ઞ કરે છે, દિવા-દિવસ નક્તમ્-રાત્રિમાં જાગૃવિ-જાગૃત અર્થાત્ કાર્ય કરવામાં પ્રમાદ રહિત સરસ્વતી-વૈદ્યકશાસ્ત્ર જાણનારી અને પ્રશસ્ત જ્ઞાનવાળી સ્ત્રી ભિષક્-વૈદ્ય ભૈષજૈઃ-જલોથી તથા સીસેન-ધનુષ્ય વિશેષથી શૂષમ્-બળની ન-સમાન ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દુહે-પરિપૂર્ણ કરે છે, તેમ જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે પયઃ-દૂધ, સોમઃ-ઔષધિગણ, ઘૃતમ્-ધી અને મધુ-મધ પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ધીનો યજ-હવન કર. (૩૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય સ્ત્રીઓ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા માટે દિવસ અને રાત પ્રયત્ન કરે છે, અથવા જેમ વૈદ્યો રોગોનું નિવારણ કરીને શરીરનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તેવો વર્તાવ કરીને સર્વ આનંદિત રહે. (૩૬)

હોતા યક્ષત્તિસ્ત્રો દેવીર્ન ભૈષજં ત્રયસ્ત્રિધાતવોઽપસો રૂપમિન્દ્રે હિરણ્યયમશ્વિનેદા ન ભારતી વાચા સરસ્વતી મહુ ઇન્દ્રાય દુહ ઽ ઇન્દ્રિયં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ ! જેમ હોતા-વિદ્યા લેનાર તિસ્ત્રઃ-ત્રણ દેવીઃ-દેદીપ્યમાન્ નીતિઓની ન-સમાન ભૈષજમ્-ઔષધને યક્ષત્-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરે છે; જેમ અપસઃ-કર્મ કરનાર ત્રિધાતવઃ, ત્રયઃ-સર્વ વિષયોને ધારણ કરનારા સત્ત્વ, રજ અને તમ ત્રણેય ગુણોથી યુક્ત એ ત્રણ અર્થાત્

તત્-તે, અસ્મત્-અમે, યુષ્મત્-તમે એ ત્રણ પદોથી વાચ્ય જીવ હિરણ્યમ્-જ્યોતિર્મય સ્ત્રમ્-નેત્રના વિષય રૂપને ઇન્દ્રે-વિદ્યુત્માં યજેન્-પ્રાપ્ત/સંગત કરે છે;

અશ્વિના-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા તથા ઇંડા-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ભારતી-ધારણાવાળી બુદ્ધિની ન-સમાન સરસ્વતી-પરમ વિદુષી વાચા-વિદ્યા અને સુશિક્ષા યુક્ત વાણીથી ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યવાનને માટે મહઃ-મહાન ઇન્દ્રિયમ્-ધનની દુહે-પરિપૂર્ણતા કરે છે; તેમ જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ રસની સાથે પયઃ-દૂધ, સોમઃ-ઔષધિગણ, ઘૃતમ્-ઘી અને મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ધીનો યજ-હવન કર. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અસ્થિ, મજ્જા અને વીર્ય શરીરમાં કાર્યનાં સાધન છે; જેમ સૂર્ય આદિ તથા વાણી સર્વના જ્ઞાપક છે, તેમ બનીને તમે સૃષ્ટિવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને શ્રી-લક્ષ્મીવાનુ બનો. (૩૭)

હોતા યક્ષત્સુરેતસમૃષ્ભં નર્યાપસં ત્વષ્ટાર્મિન્દ્રમશ્વિના ભિષજં ન સરસ્વતીમોજો ન જૂતિરિન્દ્રિયં વૃકો ન રભસો ભિષગ્ યશઃ સુર્યા ભેષજશ્શ્રિયા ન માસરં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વા-જ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ સુરેતસમ્-ઉત્તમ પરાક્રમી ત્રણમ્-બળદ, નર્યાપસમ્-મનુષ્યોમાં સારા કર્મ કરનાર ત્વષ્ટારમ્-દુઃખોને કાપનારા ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યવાનુ મનુષ્યને અશ્વિના-વાયુ અને વિદ્યુત્ ભિષજમ્-શ્રેષ્ઠ વૈદની ન-સમાન સરસ્વતીમ્-અતિ વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીને ઓજઃ-બળની ન-સમાન યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે.

ભિષક્-વૈદ, વૃકઃ-વજૂની ન-સમાન જૂતિઃ-વેગ ઇન્દ્રિયમ્-મન, રભસઃ-વેગ, યશઃ-ધન વા અન્ન સુર્યા-જલની સાથે ભેષજમ્-ઔષધ, શ્રિયા-ધનની ન-સમાન ક્રિયાથી માસરમ્-સારી રીતે પકવ અન્નને યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત પુરુષાર્થથી પયઃ-પીવા યોગ્ય રસ, સોમઃ-ઐશ્વર્ય, ઘૃતમ્-ઘી અને મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે વર્તમાન તું આજ્યસ્ય-ધી નો યજ-હવન કર. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો બ્રહ્મચર્ય, ધર્મચરણ, વિદ્યા અને સત્સંગ આદિથી સમસ્ત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો પુરુષાર્થથી લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે. (૩૮)

હોતા યક્ષદ્વનસ્પતિઃ શમિતારઃ શતક્રતું ભીમં ન મન્યુઃ રાજાનં વ્યાઘ્રં નમસાશ્વિના ભામઃ સરસ્વતી ભિષગિન્દ્રાય દુહઽન્દ્રિયં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ ભિષક્-વૈદ હોતા-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ ઇન્દ્રાય-ધનને માટે વનસ્પતિમ્-કિરણોના પાલકની સમાન, શમિતારમ્-શાન્તિદાયક, શતક્રતુમ્-અનંત બુદ્ધિ અને અનેક કર્મ કરનાર ભીમમ્-ભયંકર મનુષ્યની ન-સમાન, મન્યુમ્-ક્રોધ તથા નમસા-વજૂથી વ્યાઘ્રમ્-સિંહની

ન-સમાન રાજાનમ્-દેદીપ્યમાન રાજાને યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી, અશ્વિના-સભાપતિ તથા સેનાપતિ ભામમ્-ક્રોધને દુહે-પરિપૂર્ણ કરે, તેમ પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ પુરુષાર્થની સાથે ઇન્દ્રિયમ્-ધન, પયઃ-રસ, સોમઃ-ચન્દ્ર, ઘૃતમ્-ધી અને મધુ-મધુર વસ્તુ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ધીનો યજ-હવન કર. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યાથી અગ્નિને, શાન્તિથી વિદ્વાનને, પુરુષાર્થથી બુદ્ધિને અને ન્યાયથી રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ લૌકિક અને પારમાર્થિક સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૯)

હોતા યક્ષદગ્નિઃ સ્વાહાજ્યસ્ય સ્તોકાનાઃ સ્વાહા મેદસાં પૃથક્ સ્વાહા છાગમશ્વિભ્યાઃ સ્વાહા મેષઃ સરસ્વત્યૈ સ્વાહાઽન્નૃષભમિન્દ્રાય સિંહાય સહસ-ઽન્દ્રિયઃ સ્વાહાગ્નિં ન ભેષજઃ સ્વાહા સોમમિન્દ્રિયઃ સ્વાહેન્દ્રઃ સુત્રામાણઃ સવિતારં વરુણં ભિષજાં પતિઃ સ્વાહા વનસ્પતિં પ્રિયં પાથો ન ભેષજઃ સ્વાહા દેવા ઽ આજ્યપા જુષાણો ઽ અગ્નિભેષજં પયઃ સોમઃ પરિસ્ત્રુતા ઘૃતં મધુ વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ આજ્યસ્ય-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ધી, સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી સ્તોકાનામ્-સ્વલ્પ મેદસામ્-સ્નિગ્ધ પદાર્થોની સ્વાહા-સારી રીતે રક્ષણ ક્રિયાથી, અગ્નિમ્-અગ્નિને પૃથક્-વિભિન્ન સ્વાહા-ઉત્તમ રીતિથી, અશ્વિભ્યામ્-રાજ્યના સ્વામી અને પશુપાલનના દ્વારા છાગમ્-દુઃખનો નાશ કરનાર દ્રવ્યને સરસ્વત્યૈ-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી, મેષમ્-સેવન કરનાર મેધને ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે સ્વાહા-પરમ ઉત્તમ ક્રિયાથી, ન્નૃષભમ્-શ્રેષ્ઠ પુરુષાર્થને સહસે-બળને માટે તથા સિંહાય-શત્રુઓના હનનકર્તા માટે સ્વાહા-પરમ ઉત્તમ ક્રિયાથી, ઇન્દ્રિયમ્-ધનને સ્વાહા-ઉત્તમ વાણીથી, અગ્નિમ્-અગ્નિની ન-સમાન ભેષજમ્-ઔષધ, સોમમ્, સોમલતા આદિ ઔષધિગણ તથા ઇન્દ્રિયમ્-મન આદિ ઇન્દ્રિયોને સ્વાહા-ઉત્તમ શાન્તિ આદિ ક્રિયા અને વિદ્યાથી, સૂત્રામાણમ્-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રમ્-સેનાપતિને, ભિષજામ્-વૈદ્યોના પતિમ્-પાલક, સવિતારમ્-ઐશ્વર્યના કર્તા વસ્ત્રામ્-શ્રેષ્ઠ પુરુષને સ્વાહા-નિદાન આદિ વિદ્યાથી, વનસ્પતિમ્-વનોના પાલકને સ્વાહા-ઉત્તમ વિદ્યાથી, પ્રિયમ્-પ્રીતિ કરવા યોગ્ય પાથઃ-પાલક અન્નની ન-સમાન ભેષજમ્-ઉત્તમ ઔષધને યક્ષત્-સંગત કરે છે.

અથવા જેમ આજ્યપાઃ-વિજ્ઞાનના રક્ષક/પાલક દેવાઃ-વિદ્વાનો તથા ભેષજમ્-ચિકિત્સાને યોગ્ય રોગોની જુષાણઃ-સેવા કરનાર અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રદીપ્ત વિદ્વાન્ યક્ષત્-યજ કરે છે/સંગત કરે છે; તેમ જે પરિસ્ત્રુતા-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ રસની સાથે પયઃ-દૂધ, સોમઃ-ઔષધિઓનો સમૂહ, ઘૃતમ્-ધી અને મધુ-મધ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય; તેની સાથે રહીને તું આજ્યસ્ય-ધી નો યજ-હવન કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા, ક્રિયાકુશળતા તથા પ્રયત્નથી અગ્નિ આદિને જાણીને, ગાય આદિ પશુઓનું પાલન કરીને સર્વનો ઉપકાર કરે છે, તેઓ વૈદ્યોની સમાન પ્રજાનાં દુઃખોનો વિધ્વંસ કરનારા હોય છે. (૪૦)

હોતાં યક્ષદશ્વિનૌ છાગસ્ય વપાયા મેદસો જુષતાંશ્ચ હૃવિર્હોતર્યજં । હોતાં યક્ષત્સરસ્વતીં મૈષસ્ય વપાયા મેદસો જુતાષ્ચંશ્ચ હૃવિર્હોતર્યજં । હોતાં યક્ષદિન્દ્રમૃષભસ્ય વપાયા મેદસો જુષતાંશ્ચ હૃવિર્હોતર્યજં ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! હોતા-તું જેમ હોતા-વિદ્યાનું દાન કરનાર વિદ્વાન્ યક્ષત્-અનેક પ્રકારના વ્યવહારની સંગતિ કરે છે તથા અશ્વિનૌ-પશુપાલક અને ખેડૂત છાગસ્ય-બકરાં, ગાય, ભેંસ આદિ પશુ સંબંધી વપાયાઃ-બીજ વાવવા વા તંતુઓથી વસ્ત્રાદિ બનાવવાની ક્રિયા તથા મેદસઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થની હૃવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય વ્યવહારનું જુષતામ્-સેવન કરે છે, તેમ યજ-વ્યવહારોની સંગતિ કર.

હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ હોતા-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ મૈષસ્ય-ઘેટાંથી વપાયાઃ-બીજની વૃદ્ધિ કરનારી ક્રિયા અને મેદસઃ-સ્નેહયુક્ત પદાર્થ હૃવિઃ-સુગંધિત અન્ન આદિની હવિ તથા સરસ્વતીમ્-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીનું જુષતામ્-સેવન કરે છે, યક્ષત્-તે પદાર્થોની યથાયોગ્ય યજ-સંગતિ કર-હોમ કર.

હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ હોતા-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ ઋષભસ્ય-બળદને વપાયાઃ-વધારવાની રીતિ તથા મેદસઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થની હૃવિઃ-આપવા યોગ્ય હવિ અને ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારનું જુષતામ્-સેવન કર, વા યક્ષત્-ઉક્ત પદાર્થોની યથાયોગ્ય સંગતિ કરે તેમ યજ-યથાયોગ્ય પદાર્થોની સંગતિ કર/હોમ કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પશુઓની સંખ્યા અને બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ સ્વયં પણ બળવાન બને છે. જેઓ પશુઓથી ઉત્પન્ન દૂધ, દૂધથી ઉત્પન્ન ઘી અને સ્નિગ્ધ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેઓ મૃદુ-કોમળ પ્રકૃતિના હોય છે.

જેઓ ખેતી કરવા આદિ કાર્યોના માટે એ બળદોને યુક્ત કરે છે. તેઓ ધન-ધાન્યથી યુક્ત બને છે. (૪૧)

હોતાં યક્ષદશ્વિનૌ સરસ્વતીમિન્દ્રં સુત્રામાણમિમે સોમાઃ સુરામાણશ્ચાગૈર્ન મૈષૈર્ઋષૈર્મૈષઃ સુતાઃ શષ્ઠૈર્ન તોક્મભિર્લાજૈર્મહસ્વન્તો મદા માસરેણ પરિષ્કૃતાઃ શુક્રાઃ પર્યસ્વન્તોઽમૃતાઃ પ્રસ્થિતા વો મધુશ્ચુતસ્તાન્શ્વિના સરસ્વતીન્દ્રઃ સુત્રામા વૃત્રહા જુષન્તાંશ્ચ સોમ્યં મધુ પિબન્તુ મદન્તુ વ્યન્તુ હોતર્યજં ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ અશ્વિનૌ-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, સરસ્વતીમ્-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, સુત્રામાણમ્-પ્રજાના ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, અને એ જે સુરામાણઃ-ઉત્તમ દાતા, સોમાઃ-ઐશ્વર્યવાન સભાસદ્ સુતાઃ-અભિષેક ક્રિયાથી

બનેલ છે; તે છાગૈઃ-વિનાશ કરનાર પદાર્થ વા બકરાં આદિ પશુઓની ન-સમાન, મૈષૈઃ-જોવા યોગ્ય પદાર્થ વા ઘેટાં ઋક્ષમૈઃ-શ્રેષ્ઠ પદાર્થ વા બળદો અને શઘૈઃ-હિંસક પશુઓની સમાન, તોક્મભિઃ-સંતાનો અને લાજૈઃ-શેકેલાં અન્નોથી મહસ્વન્તઃ-પૂજા સત્કારવાળા ; મદાઃ-આનંદ, માસરેણ-ભાતથી પરિષ્કૃતાઃ શોભાયમાન, શુક્રાઃ-શુદ્ધ પયસ્વન્તઃ-પ્રશસ્ત જળ અને દૂધ આદિથી યુક્ત અમૃતાઃ-અમૃતાત્મક એક રસવાળા, મધુશ્ચુતઃ-મધુર ગુણ ટપકતાં, પ્રસ્થિતાઃ-પ્રસ્થાન કરનાર, વઃ-તમારા માટે પદાર્થ બનાવેલ છે તાન્-તેની યક્ષત્-સંગત કરે છે; જેમ અશ્વિનૌ-ઉત્તમ રીતિથી સત્કૃત બે પુરુષ, સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી, સુત્રામા-ઉત્તમ રક્ષક અને વૃત્રહા-મેઘને ઇન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્યની સમાન ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન સજ્જન સૌમ્યમ્-શીત ગુણથી યુક્ત મધુ-મધુર રસનું જુષન્તામ્-સેવન કરે છે, પિબન્તુ-પાન કરે છે, મદન્તુ-આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે અને સમસ્ત વિદ્યાઓને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું યજ-સર્વ પદાર્થોની યથાયોગ્ય સંગતિ કર. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૃષ્ટિના પદાર્થોની વિદ્યા, સત્યવાણી અને ઉત્તમ રક્ષક રાજાને પ્રાપ્ત કરીને, પશુઓનાં દૂધ વગેરેથી પુષ્ટ થાય છે, તેઓ [તથા જે] ઉત્તમ રસયુક્ત તથા સુગંધિત અન્ન આદિ તથા સુપરીક્ષિત ભોગોને યુક્તિપૂર્વક ભોગવીને, રસોનું પાન કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ સુખી રહે છે. (૪૨)

હોતાં યક્ષદશ્વિનૌ છાગસ્ય હૃવિષ ઽ આત્તામદ્ય મધ્યતો મેદ ઽ ઉદ્દૃતં પુરા દ્વેષોભ્યઃ પુરા પૌરુષેય્યા ગૃભો ઘસ્તાં નૂનં ઘાસે ઽ અંજાણાં યવસપ્રથમાનાંઽ સુમત્ક્ષરાણાંઽ શતરુદ્રિયાણામગ્નિષ્વાત્તાનાં પીવૌપવસનાનાં પાર્શ્વતઃ શ્રોણિતઃ શિતામત ઽ ઉત્સાદતોઽઙ્ગાદઙ્ગાદવત્તાનાં કરત ઽ એવાશ્વિનાં જુષેતાંઽ હૃવિર્હોતર્યજ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ - હોતા-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ અશ્વિનૌ-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; અને તે બન્ને અદ્ય-આજે છાગસ્ય-બકરી આદિ પશુઓની મધ્યતઃ-મધ્યથી હૃવિષઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય મેદઃ-દૂધ, ઘી આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોને ઉદ્દમૃતમ્-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરીને આત્તામ્-સેવન કરે.

અથવા જેમ દ્વેષોભ્યઃ-દુષ્ટોથી પુરા-પ્રથમ ગૃભઃ-પડાવવા જેવું પૌસ્ત્રેય્યાઃ-પુરુષના સમૂહમાં ઉત્તમ સ્ત્રીની પુરા-પહેલાં નૂનમ્-નિશ્ચય કરીને ઘસ્તામ્-ખાવું.

અથવા જેમ યવસપ્રથમાનામ્-જે અન્નને પ્રથમ માનનાર, ઘાસે અંજાણામ્-ભોજનમાં પ્રથમ પહોંચનાર, સુમત્ક્ષરાણામ્-ઉત્તમ આનંદનું કંપન-ચાલન કરનાર, શતરુદ્રિયાણામ્-દુષ્ટોને રડાવનાર સેંકડો દેવતાવાળા, પીવૌપવસનાનામ્-સ્થૂલ વસ્ત્રોને ધારણ કરનાર, અગ્નિષ્વાત્તાનામ્-અગ્નિ વિદ્યાને ઉત્તમ રીતે ગ્રહણ કરનાર તે સર્વ પ્રાણીઓના પાર્શ્વતઃ-પાર્શ્વભાગ, શ્રોણિતઃ-કટિ પ્રદેશ શિતામતઃ-તીક્ષ્ણ અને અપરિપકવ સ્થાનથી ઉત્સાદતઃ-ઉખાડતા અંગ અને અંજાદઙ્ગાત્-પ્રત્યેક અંગથી વ્યવહાર વા અવત્તાનામ્-નમ્ર અને ઉત્કૃષ્ટ અંગોની એવ-જ અશ્વિના-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો કરતઃ-ચિકિત્સા કરે, હૃવિઃ-ઉત્તમ ભોજન યોગ્ય પદાર્થોનું જુષેતામ્-સેવન કરે, તેમ તું યજ-યજ કર અર્થાત્ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો બકરી આદિ પશુઓની રક્ષા કરીને, તેના દૂધ આદિને સુગંધિત કરીને, તેનું સેવન કરીને, દ્વેષપૂર્ણ દોષોથી યુક્ત પુરુષોને દૂર કરીને, શ્રેષ્ઠ વૈદ્યોનો સંગ કરીને, ઉત્તમ ભોજન કરે છે તથા ઉત્તમ વસ્ત્ર ધારણ કરે છે, તેઓ પ્રત્યેક અંગોથી રોગોને દૂર કરીને સુખી રહે છે. (૪૩)

હોતાં યક્ષત્ સરસ્વતીં મેષસ્ય હવિષ્ ઽ આર્વયદ્વ મધ્યતો મેદ્ ઽ ઉદ્દૃતં પુરા દ્વેષોભ્યઃ પુરા પૌરુષેય્યા ગૃભો ઘસન્નૂનં ઘાસે ઽ અંજ્રાણાં યવસપ્રથમાનાંઽ સુમત્ક્ષરાણાંઽ શતરુદ્રિયાણામગ્નિષ્વાત્તાનાં પીવોપવસનાનાં પાર્શ્વતઃ શ્રોણિતઃ શિતામત્ ઽ -ઉત્સાદતો ઽઙ્ગાદઙ્ગાદવત્તાનાં કરદેવઃ સરસ્વતી જુષતાંઽ હવિર્હોતર્યજ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યાના દાતા વિદ્યાન્ - અદ્ય-આજે મેષસ્ય-ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરેલ મનુષ્યના શિતામતઃ-તીક્ષ્ણ સ્વભાવથી હવિષઃ-આપવા યોગ્ય પદાર્થના મધ્યતઃ-મધ્યમાં પ્રસિદ્ધ વ્યવહારથી જે મેદઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થને ઉદ્ભૂતમ્-ગ્રહણ કરેલ છે તેને તથા સરસ્વતીમ્-વાણીને, આર્વયત્-પ્રાપ્ત કરે છે અને યક્ષત્-સત્કાર કરે છે. તેમજ દ્વેષોભ્યઃ-શત્રુઓથી પુરા-પ્રથમ ગૃભઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પૌસ્ત્રેય્યાઃ-પુરુષ સંબંધી સ્ત્રીથી પુરા-પ્રથમ નૂનમ્-નિશ્ચયથી ઘસત્-ભોજન કરે છે.

અથવા ઘાસે અંજ્રાણામ્-જે ભોજનમાં સુંદર યવસપ્રથમાનામ્-મિશ્રિત-અમિશ્રિત આદિ સુમત્ક્ષરાણામ્-શ્રેષ્ઠ આનંદની વર્ષા કરનાર, પીવોપવસનાનામ્-જાડાં વસ્ત્રો પહેરનાર, અગ્નિષ્વાત્તાનામ્-અગ્નિ વિદ્યાને ઉત્તમ રીતે ગ્રહણ કરનાર, શતરુદ્રિયાણામ્-અનેક વિદ્યાનોનો અભિપ્રાય રાખનારાની પાર્શ્વતઃ-સમીપ, શ્રોણિતઃ-કટિભાગથી ઉત્સાદતઃ-શરીરને ઉખેડીને અઙ્ગાદઙ્ગાત્-પ્રત્યેક અંગથી અવત્તાનામ્-ગ્રહણ કરેલ વ્યવહારોની વૈદ્યકવિદ્યાને કરત્-ગ્રહણ કરે છે, એવમ્-એ રીતે એ સરસ્વતી-વિદુષી સ્ત્રી તેનું જુષતામ્ સેવન કરે છે; તેમ તું પણ હવિઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ વા વ્યવહારની યજ્-સંગતિ કર. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સજ્જનોનો સંગ કરીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, યુક્ત આહાર-વિહારથી આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મનું સેવન કરે છે, તેઓ કૃતકૃત્ય બની જાય છે. (૪૪)

હોતાં યક્ષદિન્દ્રમૃષભસ્ય હવિષ્ ઽ આર્વયદ્વ મધ્યતો મેદ્ ઽ ઉદ્દૃતં પુરા દ્વેષોભ્યઃ પુરા પૌરુષેય્યા ગૃભો ઘસન્નૂનં ઘાસે ઽ અંજ્રાણાં યવસપ્રથમાનાંઽ સુમત્ક્ષરાણાંઽ શતરુદ્રિયાણામગ્નિષ્વાત્તાનાં પીવોપવસનાનાં પાર્શ્વતઃ શ્રોણિતઃ શિતામત્ ઽ -ઉત્સાદતો ઽઙ્ગાદઙ્ગાદવત્તાનાં કરદેવમિન્દ્રો જુષતાંઽ હવિર્હોતર્યજ્ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્યાન્ ઘાસે અંજ્રાણામ્-ભોજનમાં પ્રથમ પ્રાપ્ત થનાર, યવસપ્રથમાનામ્-જવ આદિ અન્ન વા મિશ્રિત-અમિશ્રિત પદાર્થોનો વિસ્તાર કરનાર,

સુમત્ક્ષરાણામ્-સારી રીતે પ્રમાદનો નાશ કરનાર, અગ્નિષ્વાન્તાનામ્-જઠરાગ્નિથી સારી રીતે ગ્રહણ કરનાર, પીવોપવસનાનામ્-જાડાં વસ્ત્રો પહેરનાર- ઓઢનાર, શતસદ્રિયાણામ્-સેંકડો દુષ્ટોને રડાવનાર, અવત્તાનામ્- ઉદાર ચિત્ત વિદ્વાનોનાં પાર્શ્વતઃ-સમીપનાં અંગોથી, શ્રોણિતઃ-ક્રમશઃ શિતામતઃ-તીક્ષ્ણતા યુક્ત છિન્ન-ભિન્ન થયેલા રોગોના તે અંગનો ઉત્સાદતઃ-ત્યાગથી અને અઙ્ગાદઙ્ગાત્-પ્રત્યેક અંગથી હ્રિવિઃ-રોગનાશક વસ્તુ અને ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને કુર્યાત્-સિદ્ધ કરે છે; ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા જુષતામ્-સેવન કરે છે; તેમ તે રાજા જેમ અદ્ય-આજે ઋણભસ્ય-ઉત્તમ હ્રિવિષઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થની મધ્યતઃ-મધ્યમાં વિદ્યમાન મેદઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થને ઉદ્ભૂતમ્-ઉત્કૃષ્ટતાથી પોષિત કરીને આ + અવયત્-વ્યાપ્ત થાય - સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય, દ્વેષોભ્યઃ-વિરોધીઓમાં પુરા-પ્રથમ ગૃભઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પૌસ્ત્રેચ્યાઃ-પુરુષ સંબંધી વિદ્યાના સંબંધથી પુરા-પહેલાં નૂનમ્-નિશ્ચયથી યક્ષત્-સત્કાર કરે છે, વા એવમ્-એ રીતે ઘસત્-ભોજન કરે છે; તેમ તું યજ-યજ કર - સર્વ વ્યવહારની સંગતિ કર. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગથી દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરીને, ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું સ્વયં ગ્રહણ કરે છે તથા અન્યોને ગ્રહણ કરાવીને સર્વને ઉન્નત કરે છે, તેઓ પૂજ્ય-સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૫)

હોતા યક્ષદ્વનસ્પતિમ્ભિ હિ પિષ્ટતમયા રભિષ્ઠયા રશ્નયાધિત । યત્રાશ્વિનો-
શ્છાગસ્ય હ્રિવિષઃ પ્રિયા ધામાન્નિ યત્ર સરસ્વત્યા મેષસ્ય હ્રિવિષઃ પ્રિયા ધામાન્નિ
યત્રેન્દ્રસ્ય ઽ ઋણભસ્ય હ્રિવિષઃ પ્રિયા ધામાન્નિ યત્રાગ્નેઃ પ્રિયા ધામાન્નિ યત્ર સોમસ્ય
પ્રિયા ધામાન્નિ યત્રેન્દ્રસ્ય સુત્રામ્ણઃ પ્રિયા ધામાન્નિ યત્ર સવિતુઃ પ્રિયા ધામાન્નિ
યત્ર વરુણસ્ય પ્રિયા ધામાન્નિ યત્ર વનસ્પતેઃ પ્રિયા પાર્થાંશસિ યત્ર દેવાનામાજ્ય-
પાનાં પ્રિયા ધામાન્નિ યત્રાગ્નેર્હોતુઃ પ્રિયા ધામાન્નિ તત્રૈતાન્ પ્રસ્તુત્યૈવોપસ્તુત્યૈવો-
પાર્વસ્ત્રક્ષદ્રભીયસઽઙ્ગવ કૃત્વી કરદેવં દેવો વનસ્પતિર્જુષતાંશ્ચ હ્રિવિર્હોતર્યજ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ - પિષ્ટતમયા-ખૂબ પીસેલ અર્થાત્ સૂક્ષ્મ, રભિષ્ઠયા-અતિ શીઘ્રતાથી વૃદ્ધિ પામનારી વા ઉત્તમ રીતિથી બનેલ વસ્તુ રશ્નયા-રશ્મિની સાથે યત્ર-જ્યાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાના સંબંધથી પાલિત, શ્છાગસ્ય-ઘાસને છેદનાર વા બકરાં આદિ પશુઓ તથા હ્રિવિષઃ-આપવા યોગ્ય પદાર્થ સંબંધી પ્રિયા-મનોહર, ધામાન્નિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; વા યત્ર-જ્યાં સરસ્વત્યાઃ નદી, મેષસ્ય-ઘેટાં તથા હ્રિવિષઃ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ સંબંધી પ્રિયા-મનોહર ધામાન્નિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે ; યત્ર-જ્યાં ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યથી યુક્ત મનુષ્ય, ઋણભસ્ય-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય તથા હ્રિવિષઃ-આપવા યોગ્ય પદાર્થોના પ્રિયા-મનોહર ધામાન્નિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; યત્ર-જ્યાં અગ્નેઃ-પ્રસિદ્ધ અને વિદ્યુત્રૂપી અગ્નિના પ્રિયા-મનોહર ધામાન્નિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; યત્ર-જ્યાં સોમસ્ય-ઔષધિઓના પ્રિયા-મનોહર ધામાન્નિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે.

યત્ર-જ્યાં સુત્રામ્ણઃ-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્ય યુક્ત ઉત્તમ પુરુષનાં પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; યત્ર-જ્યાં સવિતુઃ-પ્રેરક વાયુના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; યત્ર-જ્યાં વસ્મગસ્ય-શ્રેષ્ઠ પદાર્થના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; યત્ર- જ્યાં વનસ્પતેઃ-વડ આદિ વૃક્ષોના પ્રિયા-ઉત્તમ પાથાંસિ-અન્ન અને તેને પીવાના જળ છે' યત્ર-જ્યાં આજ્યપાનામ્-ગતિથી પાલન કરનારી અર્થાત્ પોતાની કક્ષામાં ધૂમનારી જીવોનું પાલન કરનારી દેવાનામ્-પૃથિવી આદિ દિવ્ય લોકોના પ્રિયા-ઉત્તમ ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે.

યત્ર-જ્યાં હોતુઃ-શ્રેષ્ઠ સુખદાયક અને અગ્નેઃ-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન થનાર અગ્નિના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; તત્ર-ત્યાં એતાન્-એ પદાર્થોની પ્રસ્તુત્યેવ-પ્રકરણથી પ્રશંસા અને ઉપસ્તુત્યેવ-સમીપતાથી સ્તુતિ કરીને ઉપાવસ્ત્રક્ષત્-તેને ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યથાયોગ્ય કામોમાં ઉપાર્જન કરે અથવા ઉક્ત પદાર્થોનો સંચય કરે છે; રમ્ભીયસ ઇવ-અનેક પ્રકારથી અત્યંત આરંભની સમાન કૃત્વી-કરીને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરી શકે એ રીતે કરત્-તેનો વ્યવહાર કરે.

જેમ વનસ્પતિઃ-સૂર્ય આદિ લોકોની કિરણોનું પાલન કરનાર, દેવઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત અગ્નિ હવિઃ-સુગંધિત અન્ન આદિ હવિ પદાર્થોનું જુષતામ્-સેવન કરે છે, હિ-નિશ્ચયથી વનસ્પતિમ્-વડ આદિ વૃક્ષોને અભિયક્ષત્-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે અર્થાત્ વિદ્યુત્ રૂપથી પ્રાપ્ત થાય છે અને અધિત-તેને ધારણ કરે છે; તેમ તું યજ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઈશ્વરના રચેલા પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને જાણીને, તેનો કાર્ય સિદ્ધિ માટે પ્રયોગ કરે, તો પોતાના ઈચ્છિત સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪૬)

હોતા યક્ષદ્ગ્નિઃ સ્વિષ્ટકૃતમયાડ્ગ્નિર્શ્વિનોશ્છાગસ્ય હવિષઃ પ્રિયા ધામાન્યયાટ્ સરસ્વત્યા મેષસ્ય હવિષઃ પ્રિયા ધામાન્યયાડિન્દ્રસ્ય ઽ ઋષભસ્ય હવિષઃ પ્રિયા ધામાન્યયાડ્ગ્નેઃ પ્રિયા ધામાન્યયાટ્ સોમસ્ય પ્રિયા ધામાન્યયાડિન્દ્રસ્ય સુત્રામ્ણઃ પ્રિયા ધામાન્યયાટ્ સવિતુઃ પ્રિયા ધામાન્યયાડ્ વરુણસ્ય પ્રિયા ધામાન્યયાડ્ વનસ્પતેઃ પ્રિયા પાથાંસ્યયાડ્ દેવાનામાજ્યપાનાં પ્રિયા ધામાનિ યક્ષદ્ગ્નેર્હોતુઃ પ્રિયા ધામાનિ યક્ષત્ સ્વં મહિમાનમાયજતામેજ્યા ઽ ઇષઃ કૃણોતુ સો ઽ અધ્વરા જાતવેદા જુષતાંશ્ હવિર્હોતર્યજ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ - સ્વિષ્ટકૃતમ્-ઉત્તમ ઈચ્છિત પદાર્થથી પ્રાપ્ત કરેલ અગ્નિમ્-અગ્નિનો યક્ષત્-સંગ કરે છે અર્થાત્ પ્રાપ્ત કરે છે; વા જેમ અગ્નિઃ-અગ્નિ અશ્વિનોઃ-વાયુ તથા વિદ્યુત્, છાગસ્ય-છેદક વા બકરાં આદિ પશુઓ, હવિષઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામને અયાટ્-પ્રાપ્ત થાય છે; સરસ્વત્યાઃ-વાણી

મેષસ્ય-સિંચવા વા અન્યને જીતવાના ઈચ્છુક પ્રાણી, હવિષ:-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થનાં પ્રિયા-પ્રિય મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે;

અથવા ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ઋણભસ્ય-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવવાળા રાજા અને પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે; વા અગ્ને:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિનાં પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે; વા સોમસ્ય-ઐશ્વર્યના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે વા સુત્રામ્ણ:-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રસ્ય-સેનાપતિના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે.

સવિતુ:-સમસ્ત ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર ઉત્તમ પદાર્થજ્ઞાનનાં પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે; વા વસ્યાસ્ય-સર્વ શ્રેષ્ઠ પુરુષ અને જલના પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની અયાદ્-પ્રશંસા કરે છે; વા વનસ્પતે:-વડ આદિ વૃક્ષોને પ્રિયા-તૃપ્ત કરાવનાર પાથાંસિ-ફલોને અયાદ્-પ્રાપ્ત થાય છે; વા આજ્યપાનામ્-જ્ઞાતવ્ય રક્ષકો વા રસોનું પાન કરનાર દેવાનામ્-વિદ્વાનોનાં પ્રિયા-પ્રિય મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની યક્ષત્-પ્રશંસા કરે છે, વા હોતુ:-જલ આદિ ગ્રહણ કરનાર તથા અગ્ને:-પ્રકાશક સૂર્યનાં પ્રિયા-મનોહર ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામની યક્ષત્-પ્રશંસા કરે છે; સ્વમ્-પોતાનાં મહિમાનમ્-મહત્વને આ + યજતામ્-ગ્રહણ કરે છે; વા જેમ જાતવેદા:-ઉત્તમ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત વિદ્વાન્ જે ઈજ્યા:-સારી રીતે સંગ કરવા યોગ્ય ઉત્તમ ક્રિયાઓ અને ઙ્ઘ:-ઈચ્છાઓને કૃણોતુ-સિદ્ધ કરે છે; સ:-તે અધ્વરા:-હિંસા રહિત યજ્ઞો અને હવિ:-સંગ કરવા યોગ્ય પદાર્થનું જુષતામ્-સેવન કરે છે; તેમ તું યજ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાની ઈચ્છાને સિદ્ધ કરનારા અગ્નિ આદિ સૃષ્ટિના પદાર્થોને સારી રીતે જાણીને પ્રિય સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ પોતાની મહિમાનો વિસ્તાર કરે છે. (૪૭)

દેવં બર્હિઃ સરસ્વતી સુદેવમિન્દ્રે ઽ અશ્વિનાં ।

તેજો ન ચક્ષુરક્ષ્યોર્બર્હિષાં દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ સરસ્વતી-પ્રશંસિત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી ઇન્દ્રે-પરમ ઐશ્વર્યને માટે દેવમ્-દિવ્યગુણ યુક્ત સુદેવમ્-સુંદર વિદ્વાન્ પતિની બર્હિઃ-અન્તરિક્ષ, અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકના તથા ચક્ષુ:-નેત્રરૂપ તેજ:-તેજની ન-સમાન યજ-પ્રશંસા વા સંગતિ કરે છે; જેમ વિદ્વાન્ લોકો વસુધેયસ્ય-ધનને ધારણ કરનારાઓને વસુવને-ધનની પ્રાપ્તિ કરાવવા માટે અક્ષ્યો:-આંખોનાં બર્હિષા-અન્તરિક્ષ - અવકાશથી અર્થાત્ દૃષ્ટિથી જોઈને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુ:-ધારણ કરે છે અને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ એને તું ધારણ અને પ્રાપ્ત કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો વિદુષી બ્રહ્મચારિણી કુમારી પોતાના માટે પ્રિય પતિને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ વિદ્વા અને સૃષ્ટિના પદાર્થોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને તમે પણ આનંદિત રહો. (૪૮)

દેવીદ્વારો ઽ અશ્વિના ભિષજેન્દ્રે સરસ્વતી ।

પ્રાણં ન વીર્યં નસિ દ્વારો દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અશ્વિના-વાયુ અને સૂર્ય સરસ્વતી-વિજ્ઞાનવાણી સ્ત્રી, ભિષજા-બે વૈદ્ય ઇન્દ્રે-ઐશ્વર્યને માટે દેવી: દેદીપ્યમાન દ્વાર:-પ્રવેશ અને બહાર નીકળવા માટે બનેલા દ્વારોને પ્રાપ્ત કરતા પ્રાણીઓનાં નસિ-નસકોરાંમાં પ્રાણમ્-અન્ત: શ્વસનની ન-સમાન વીર્યમ્-વીર્યને તથા દ્વાર:-દ્વારો-શરીરનાં પ્રસિદ્ધ નવ છિદ્રોને દધુ:-ધારણ કરે છે, વા વસુવને-ધનનું સેવન કરવા માટે વસુધેયસ્ય-ધનકોશના ઇન્દ્રિયમ્-ધનને વિદ્વાન્ લોકો વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું યજ્ઞ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચન્દ્રનો પ્રકાશ દ્વારોથી ઘરમાં દાખલ થઈને અંદર પ્રકાશ કરે છે, તેમ વિદ્વાનોનો ઉપદેશ કાનોમાં દાખલ થઈને હૃદયમાં પ્રકાશ કરે છે. (૪૯)

દેવી ઽ ઉષાસાવશ્વિના સુત્રામેન્દ્રે સરસ્વતી ।

બલં ન વાચમાસ્ય ઽ ઉષાભ્યાં દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ દેવી-દેદીપ્યમાન ઉષાસૌ-સાંજ અને સવારની સંધિવેળા, સુત્રામા-બે ઉત્તમ રક્ષક, સરસ્વતી-વિજ્ઞાનની હેતુ સ્ત્રી અશ્વિના-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા વસુવને-ધનનું સેવન કરનારા માટે વસુધેયસ્ય-ધનકોશના ઇન્દ્રે-પરમ ઐશ્વર્યમાં વિદ્યમાન બલમ્-બળની ન-સમાન આસ્યે-મુખમાં વાચમ્-વાણીને તથા ઉષાભ્યામ્-સાંજ અને સવારની વેળાએ ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુ:-ધારણ કરે છે અને સર્વને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ તું યજ્ઞ-સર્વને વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે પુરુષાર્થી મનુષ્યો સૂર્ય, ચન્દ્ર, પ્રાતઃકાલ અને સાંધકાલની-સંધ્યાની સમાન પ્રયત્ન કરે છે; સંધિ સમયમાં શયન અને આળસનો ત્યાગ કરીને ધ્યાન કરે છે; તેઓ પર્યાપ્ત શ્રી-ધનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૦)

દેવી જોષ્ટ્રી સરસ્વત્યશ્વિનેન્દ્રમવર્ધયન્ । શ્રોત્રં ન કર્ણયોર્યશો જોષ્ટ્રીભ્યાં દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ દેવી-પ્રકાશ આપનારી જોષ્ટ્રી-સેવન કરવા યોગ્ય સરસ્વતી-વિજ્ઞાનની નિમિત્ત સ્ત્રી, અશ્વિના-વાયુ અને વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની અવર્ધયન્-વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ કરે છે, અથવા મનુષ્ય જોષ્ટ્રીભ્યામ્-સંસારની સેવા કરતી પ્રાતઃ-સાંધ બન્ને વેળાએ કર્ણયો: કાનોમાં યશઃ-કીર્તિ વચનો શ્રોત્રમ્-સાંભળવાનું સાધન શ્રોત્રેન્દ્રિયની ન-સમાન દધુ:-ધારણ કરે છે; વસુધેયસ્ય-ધનકોશના વસુવને-ધનનું સેવન કરનારા માટે ઇન્દ્રિયમ્-ધનને વ્યન્તુ-વિશેષતાથી પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું યજ્ઞ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યનાં કારણોને જાણે છે, તેઓ યશસ્વી બનીને ધનવાન, કાન્તિમાન અને

શોભાયમાન બને છે. (૫૧)

દેવી ઽ ઋર્જાહૃતી દુઘે સુદુઘેન્દ્રે સરસ્વત્યશ્વિના ભિષજાવતઃ । શુક્રં ન જ્યોતિસ્તનયોરાહૃતી ધત્ત ઽ ઙ્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે જેમ દેવી-મનોહર દુઘે-સુખને પૂર્ણ કરનારી પ્રાતઃ અને સાયં વેળાઓ, ઙ્દ્રે-પરમ ઐશ્વર્યના માટે ઋર્જાહૃતિ-અન્નની આહુતિ, સરસ્વતી-વિશેષજ્ઞાન કરાવનારી સ્ત્રી, સુદુઘા-સુખથી પૂર્ણ કરનારા ભિષજા-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય વા અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક શુક્રમ્-શુદ્ધ જળની ન-સમાન જ્યોતિઃ-પ્રકાશની અવતઃ-રક્ષા કરે છે; તેમ સ્તનયોઃ-શરીરમાં સ્તનોની જે આહુતી-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ક્રિયા છે તેને ધત્ત-ધારણ કરો; વસુધેયસ્ય-ધનના આધાર સંસારના મધ્યમાં વસુવને-ધનનું સેવન કરનારા માટે ઙ્દ્રિયમ્-ધનને ધત્ત-ધારણ કરો; જેથી તે ઉક્ત પદાર્થોને સાધારણ સર્વ મનુષ્યો વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે. હે ગુણગ્રાહીજન ! તેમ તું સર્વ વ્યવહારોની યજ્ઞ-સંગતિ કર. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય પોતાના અને બીજાઓનાં શરીરોની રક્ષા કરીને વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ ધનની રક્ષા કરીને વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૫૨)

દેવા દેવાનાં ભિષજા હોતારાવિન્દ્રમશ્વિના । વષ્ટકારૈઃ સરસ્વતી ત્વિષિં ન હૃદયે મતિઃ હોતૃભ્યાં દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ જેમ દેવાનામ્-સુખ આપનાર વિદ્વાનોની મધ્યમાં, હોતારૈ-શરીર સુખ આપનારા, દેવા-વૈદ્ય-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, ભિષજા-વૈદ્યજનો, અશ્વિના-વિદ્યામાં વ્યાપક બે વિદ્વાનો વષ્ટકારૈઃ-શ્રેષ્ઠ કામોથી ઙ્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને ધારણ કરે છે.

સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીવાળી સ્ત્રી ત્વિષિમ્-પ્રકાશની ન-સમાન હૃદયે-અન્તઃકરણમાં મતિમ્-બુદ્ધિને ધારણ કરે છે; તેમ હોતૃભ્યામ્-બે દાતા પુરુષોની સાથે ઉક્ત સદ્વૈદ્ય અને વાણીયુક્ત સ્ત્રીને વસુધેયસ્ય-કોશના વસુવને-ધનનો વિભાગ કરનાર માટે ઙ્દ્રિયમ્-શુદ્ધ મનને દધુઃ-ધારણ કરતી અને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, હે મનુષ્ય ! તેમ તું પણ યજ્ઞ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો ઉત્તમ ક્રિયાઓથી સર્વને નીરોગ કરીને શ્રીમાન્-કાન્તિમાન કે ધનવાન બનાવે છે; અથવા જેમ વિદ્વાનોની વાણી વિદ્યાર્થીઓનાં અન્તઃકરણમાં બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ અન્યોએ વિદ્યા અને ધનનો સંચય કરવો જોઈએ. (૫૩)

દેવીસ્તિસ્ત્રસ્તિસ્ત્રો દેવીરશ્વિનેડા સરસ્વતી । શૂષં ન મધ્યે નાભ્યામિન્દ્રાય દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થિની ! જેમ તિસ્ત્રઃ-માતા, અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા એ ત્રણ દેવીઃ-નિરંતર

વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન દેવીઓ, વસુધેયસ્ય-જેમાં ધનને ધારણ કરવા યોગ્ય આ સંસારમાં મધ્યે-મધ્યમાં વસુવને-ઉત્તમ ધનના ઈચ્છુક ઇન્દ્રાય-જીવને માટે તિસ્રઃ-ઉત્તમ, મધ્યમ, નિકૃષ્ટ ત્રણ દેવીઃ-વિદ્યાથી પ્રકાશિત કન્યાઓને દધુઃ-ધારણ કરે છે.

અથવા અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, ઇડા-સ્તુતિ કરનારી અને સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી નાભ્યામ્-નાભિમાં વિદ્યમાન્ શુષમ્-બળ વા સુખની ન-સમાન ઇન્દ્રિયમ્-અન્તઃકરણ - મનને દધુઃ-ધારણ કરે છે; જેમ એ સર્વ ઉક્ત પદાર્થોને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું સર્વ વ્યવહારોની યજ-સંગતિ કર. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ માતા, અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા એ ત્રણ વિદુષીઓ કન્યાઓને વિદુષી બનાવીને તેને સુખી કરે છે; તેમ પિતા, અધ્યાપક અને ઉપદેશક કુમાર અર્થાત્ વિદ્યાર્થીઓને વિદ્વાન્ બનાવીને તેને સુસભ્ય બનાવે. (૫૪)

દેવઽઇન્દ્રો નરાશઃસસ્ત્રિવસ્થઃ સરસ્વત્યાશ્વિભ્યામીયતે રથઃ । રેતો ન રૂપમમૃતં જનિત્રમિન્દ્રાય ત્વષ્ટા દર્ધદિન્દ્રિયાણિ વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ ત્રિવસ્થઃ-ભૂમિ, પાતાળ અને અન્તરિક્ષ ત્રણેય સ્થાનોમાં ઘરોવાળા, ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ દેવઃ-વિદ્વાન્ સરસ્વત્યા-સુશિક્ષિત વાણીથી નરાશંસઃ-સુશિક્ષા આપનાર નરોને અશ્વિભ્યામ્-અગ્નિ અને વાયુ જેમ રથઃ-રમણીય રથયાનને ઈંચતે-સન્માર્ગ પર લઈ જાય છે.

જેમ જનિત્રમ્-પિતા અથવા ઉત્તમ સુખ ઉત્પન્ન કરનાર અમૃતમ્-જળ, રેતઃ-વીર્યની ન-સમાન સ્ત્રમ્-આકારને તથા વસુધેયસ્ય-સંસારની મધ્યમાં વસુવને-ધનનું સેવન કરનારા ઇન્દ્રાય-જીવને માટે ઇન્દ્રિયાણિ-કર્ણ-નેત્ર આદિ ઈન્દ્રિયોને ત્વષ્ટા-દુઃખોનો વિનાશ કરવાવાળા ઈશ્વર દધત્-ધારણ કરે છે; જેમ તે ઉક્ત પદાર્થોને એ સર્વ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે, તેમ તું યજ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો તમે ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી શ્રી-લક્ષ્મીનો સંચય કરી લો, તો જળ અને અગ્નિ દ્વારા સંચાલિત રથની સમાન તમે શીઘ્ર સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૫૫)

દેવો દેવૈર્વનસ્પતિર્હિરણ્યવર્ણો ઽ અશ્વિભ્યાઃ સરસ્વત્યા સુપિપ્પલ ઽ ઇન્દ્રાય પચ્યતે મધુ । ઓજો ન જૂતિર્ઋષભો ન ભામં વનસ્પતિર્નો દર્ધદિન્દ્રિયાણિ વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અશ્વિભ્યામ્-જળ અને વિદ્યુત્સ્વપ અગ્નિથી દેવૈઃ પ્રકાશક ગુણોની સાથે દેવઃ-પ્રકાશમાન હિરણ્યવર્ણઃ-તેજ સ્વરૂપ વનસ્પતિઃ-કિરણોનો રક્ષક સૂર્ય છે, તે સરસ્વત્યા-ગતિમાન નીતિથી સુપિપ્પલઃ-સુંદર ફળોવાળા પીપળો આદિ વૃક્ષો ઇન્દ્રાય-પ્રાણીઓ માટે મધુ-મધુર ફળો જેમ પચ્યતે-પાકે તેમ પકાવે અને પ્રાપ્ત થાય છે.

જૂતિ:-વેગને ઓજ:-જલની ન-સમાન, ભામમ્-ક્રોધને ઋણભ:-બળવાન પ્રાણીની ન-સમાન, વનસ્પતિ: વડ આદિ વૃક્ષો વસુધેયસ્ય-પદાર્થોના આધાર સંસાર ન:-અમે મનુષ્યો માટે તથા વસુવને-ધનના ઈચ્છુક માટે ઇન્દ્રિયાણિ-ધનોને દધત્-ધારણ કરે છે; જેમ એ સર્વ પદાર્થોને એ સર્વ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે, તેમ તું યજ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય વર્ષાથી અને નદી પોતાના જળથી વૃક્ષોનું સંરક્ષણ કરીને મધુર ફળોને ઉત્પન્ન કરે છે; તેમ સર્વના માટે સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરો.

જેમ ધાર્મિક રાજા દુષ્ટ પર ક્રોધ કરે છે, તેમ દુષ્ટો પ્રત્યે અપ્રીતિ કરીને શ્રેષ્ઠોના પ્રત્યે પ્રેમ ધારણ કરે. (૫૬)

દેવં બર્હિર્વારિતીનામધ્વરે સ્તીર્ણમશ્વિભ્યામૂર્ણમ્નદાઃ સરસ્વત્યા સ્યોનમિન્દ્ર તે સદઃ । ઈશાયૈ મન્યુઃરાજાનં બર્હિષાં દધુરિન્દ્રિયં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઈન્દ્રિયોના સ્વામી જીવ ! જે તે-તારી સરસ્વત્યા-ઉત્તમ વાણીની સાથે સ્યોનમ્-સુખદાયક અને સદઃ-જેમાં બેઠા છીએ તે નૌકા આદિ યાન છે; જેમ ઊર્ણમ્નદાઃ-આચ્છાદિત પદાર્થોથી શિલ્પના દ્રવ્યોનું મર્દન કરનાર વિદ્વાન્ - અશ્વિભ્યામ્-વાયુ અને વિદ્યુત્થી અધ્વરે-હિંસારહિત શિલ્પયજ્ઞમાં વારિતીનામ્-જલમાં ગતિ કરનાર પદાર્થોને સ્તીર્ણમ્-આચ્છાદિત કરનાર, દેવમ્-દિવ્ય, બર્હિઃ-અન્તરિક્ષને, ઈશાયૈ-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિને માટે મન્યુમ્-મનનશીલ રાજાનમ્-પ્રકાશમાન રાજાની સમાન; બર્હિષા-અન્તરિક્ષથી વસુધેયસ્ય-પૃથિવી આદિના આધાર જગતમાં વસુવને-પૃથિવી આદિના લોકોની સેવા કરનારા જીવને માટે ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધુઃ-ધારણ કરે છે અને તેને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું સર્વ પદાર્થોની યજ-સંગતિ કર. (૫૭)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો આકાશની સમાન ચંચળતા રહિત, આનંદદાતા, એકમાત્ર, પ્રસન્ન સ્વભાવવાળા, આજ્ઞાનું અવશ્ય પાલન કરનારા અને પુરુષાર્થી હોય, તો આ સંસારમાં તેઓ લક્ષ્મીવાન કેમ ન બને ? (૫૭)

દેવો ઽ અગ્નિઃ સ્વિષ્ટકૃદ્દેવાન્યક્ષદ્વથાયથઃ હોતારાવિન્દ્રમશ્વિના વાચા વાચઃ સરસ્વતીમગ્નિઃસોમથઃ સ્વિષ્ટકૃત્ સ્વિષ્ટ ઽ ઇન્દ્રઃ સુત્રામા સવિતા વરુણો ભિષગિષ્ટો દેવો વનસ્પતિઃ સ્વિષ્ટા દેવા ઽ આજ્યપાઃ સ્વિષ્ટો ઽ અગ્નિરગ્નિના હોતા હોત્રે સ્વિષ્ટકૃદ્દશો ન દર્ધદિન્દ્રિયમૂર્જમર્ષચિતિથઃ સ્વધાં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ વસુધેયસ્ય-સંસારના વસુવને-ઐશ્વર્યના સેવક પુરુષને માટે સ્વિષ્ટકૃત્-

ઉત્તમ ઈચ્છિત સુખકારી, દેવ:-દિવ્ય-સુંદર, અગ્નિ:-અગ્નિ દેવાન્-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા પૃથિવી આદિ ભૂતોને યથાયથમ્-યથાયોગ્ય ચક્ષત્-પ્રાપ્ત થાય છે - સંગત કરે છે.

જેમ હોતરૌ-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારા અશ્વિના-વાયુ અને વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિ ઇન્દ્રમ્-સૂર્યને; વાચા-વાણીથી સરસ્વતીમ્-વિજ્ઞાન યુક્ત વાચમ્-વાણીને તથા અગ્નિમ્-અગ્નિ અને સોમમ્-ચંદ્રને યથાયથમ્-યથાયોગ્ય ચલાવે છે.

જેમ સ્વિષ્ટકૃત્-ઉત્તમ સુખકારી, સ્વિષ્ટ:-અત્યંત ઈષ્ટ-પ્રિય, સુત્રામા-ઉત્તમ પાલક ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત રાજા, સવિતા-સૂર્ય, વસગ:-જળનો સમુદાય, ભિષક્-રોગ વિનાશક વૈદ્ય, ઇષ્ટ: સંગ કરવા યોગ્ય દેવ:-દિવ્ય સ્વભાવવાળા વનસ્પતિ:-પીપળ આદિ વૃક્ષ, સ્વિષ્ટા:-ઉત્તમ અભીષ્ટનાં નિમિત્ત આજ્યપા:-પેય રસનું પાન કરનાર દેવા:-દિવ્યસ્વરૂપ વિદ્વાન્ અગ્નિના-વિદ્યુત્થી સ્વિષ્ટ:-ઉત્તમ અભીષ્ટના હેતુ હોતા-દાતા મનુષ્ય, સ્વિષ્ટકૃત્-ઉત્તમ અભીષ્ટકારી અગ્નિ:-અગ્નિ હોત્રે-દાતા મનુષ્યને માટે યજ:-કીર્તિકર ધનની ન-સમાન ઇન્દ્રિયમ્-જીવના ચિહ્ન કાન આદિ ઈન્દ્રિયો તથા ઊર્જમ્-બળ, અપચિતિમ્-સત્કાર અને સ્વધામ્-અન્નને યથાયથમ્-યથાયોગ્ય દધત્-પ્રત્યેકને ધારણ કરે છે; જેમ તેને એ ઉક્ત પદાર્થોને એ સર્વ વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તું યથાયથમ્-યથાયોગ્ય યજ-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરકૃત અને આ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત યજ આદિ પદાર્થોને વિદ્યાથી ઉપયોગના માટે ધારણ કરે છે, તેઓ ઉત્તમ અભીષ્ટ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૮)

અગ્નિમદ્ય હોતારમવૃણીતાયં યજમાનઃ પચન્ પક્તીઃ પચન્ પુરોડાશાન્ બધ્નન્-શ્વિભ્યાં છાગ્ઃ સરસ્વત્યૈ મેષમિન્દ્રાયઽઋષભ્ઃસુન્વન્નશ્વિભ્યાંઃ સરસ્વત્યાઽન્દ્રાય સુત્રામ્ણૌ સુરાસોમાન્ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અયમ્-એ પક્તીઃ પાકોને પચન્-પકાવતાં અર્થાત્ સિદ્ધ કરતાં, પુરોડાશાન્-યજ આદિ કર્મમાં પાક વિશેષોને પચન્-પકાવતાં યજમાનઃ-યજ કરનાર હોતારમ્-સુખોના દાતા અગ્નિમ્-અગ્નિનો અવૃણીત-સ્વીકાર કરે છે.

જેમ અશ્વિભ્યામ્-પ્રાણ અને અપાનના માટે છાગમ્-બકરાંથી, સરસ્વત્યૈ વિજ્ઞાન યુક્ત વાણીને માટે મેષમ્-ઘેટાંથી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે ઋષભમ્-બળદને બધ્નન્-બાંધે છે; અશ્વિભ્યામ્-પ્રાણ અને અપાનને માટે, સરસ્વત્યૈ-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીને માટે સુત્રામ્ણૌ-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્રાય-રાજાને માટે, સુરાસોમાન્-ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થોનો સુન્વન્-સાર કાઢે છે; તેમ તમે અદ્ય-આજે = હમણાં કરો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંગતિ કરનારા વૈદ્યો અપાન [ને બળવાન બનાવવા] માટે બકરીનું દૂધ, વાણીની વૃદ્ધિ માટે ઘેટીનું દૂધ, ઐશ્વર્ય માટે ગાયનું દૂધ અને રોગ નિવારણ માટે ઔષધિઓનો રસ તૈયાર કરીને [તથા તેનું સેવન કરીને] સુસંસ્કૃત સારી રીતે બનાવેલા અન્નનું સેવન કરીને, બળવાન બનીને, દુષ્ટ શત્રુઓને બાંધી દે છે, તેઓ પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

સૂપસ્થાઽઅદ્ય દેવો વનસ્પતિરભવદ્શિવભ્યાં છાગેન સરસ્વત્યૈ મેષેણેન્દ્રાયઽ
ઋષભેણાક્ષ્સ્તાન્ મેદસ્તઃ પ્રતિપચતાગૃભીષતાવીવૃધન્ત પુરોડાશૈરપુરશ્વિના
સરસ્વતીન્દ્રઃ સુત્રામા સુરાસોમાન્ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ અદ્ય-આજે સૂપસ્થા:-સારી રીતે સમીપ રહેલા મનુષ્ય - દેવ:-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વનસ્પતિ:-વડ આદિ વૃક્ષોની સમાન જે-જે સાધનથી અને અશ્વિભ્યામ્-પ્રાણ અને અપાનને માટે છાગેન-દુઃખનાશક બકરાં આદિ પશુઓથી સરસ્વત્યૈ-વાણીને માટે મેષેણ-ઘેટાંથી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે ઋષભેણ-બળદથી અક્ષન્-પદાર્થોનો ઉપભોગ કરે છે; તાન્-તે મેદસ્તઃ-સુંદર સ્નિગ્ધ પશુઓના પ્રતિપચતા-પકાવવા યોગ્ય પદાર્થોને અગૃભીષત-ગ્રહણ કરે છે; પુરોડાશૈ:-પ્રથમ ઉત્પન્ન સંસ્કાર કરેલા અન્ન વિશેષોથી અવીવૃધન્ત-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે; અશ્વિના-પ્રાણ અને અપાન, સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વાણી, સુત્રામા-ઉત્તમ રક્ષક ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા સુરાસોમાન્-અર્ક કાઢેલા ઔષધિરસોનું અપુ:-પાન કરે છે; તેમ આપ અભવત્-બનો. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો બકરી આદિના દૂધ વગેરેથી પ્રાણ અને અપાનની રક્ષા માટે સ્નિગ્ધ પક્વ પદાર્થોનું સેવન કરીને, ઉત્તમ રસોનું પાન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે તેઓ ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૦)

ત્વામદ્યઽઋષઽઆર્ષેયઽઋષીણાં નપાદવૃણીતાયં યજમાનો બ્રહુભ્ય ઽ આ સદ્ગતેભ્યઃ
ઽ ણ્ષ મૈ દેવેષુ વસુ વાર્યાયક્ષ્યત્ઽઈતિ તા યા દેવા દૈવ દાનાન્યદુસ્તાન્યસ્માઽઆ
ચ શાસ્વા ચ ગુરસ્વેષિતશ્ચ હોતરસિં ભદ્રવાચ્યાય પ્રેષિતો માનુષઃ સૂક્તાવાકાય
સૂક્તા બ્રૂહિ ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : હે ઋષ્ણે-મંત્રોના અર્થના જ્ઞાતા વા આર્ષેય-મંત્રાર્થ જાણનારા-ઋષિઓમાં શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ! ઋષીણામ્-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા ઋષિઓની નપાત્-સંતાન યજમાન:-યજમાન, અયમ્-એ અદ્ય-આજે બ્રહુભ્ય:- અનેક સદ્ગતેભ્યઃ-સંગત લોકોમાંથી ત્વા-તને આ + અવૃણીત-સ્વીકાર કરે, ણ્ષ:-એ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં મે-મારા વસુ-ધન ચ-અને વારિ-જલનો અવૃણીત-સ્વીકાર કરે.

હે દેવ:-વિદ્વાન ! જે આયક્ષ્યતે-સર્વત્રથી સંગત કરતાં ચ-અને દેવા:-વિદ્વાન્ જન યા-જે દાનાનિ-આપવા યોગ્ય પદાર્થોને અદુ:-આપે છે; તાનિ-તે પદાર્થોને અસ્મૈ-એ યજમાનને આશાસ્વ-સારી રીતે શીખવો; અને પ્રેષિતઃ-પ્રેરિત થઈને તું આગુસ્વ-સારી રીતે પુરુષાર્થ કર.

હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! તું ઇષિતઃ-સર્વનો પ્રિય માનુષઃ-મનુષ્ય છે; તે ભદ્રવાચ્યાય-ભદ્ર - સારું કહેવા યોગ્ય અને સૂક્તવાકાય-જેના વચનોમાં ઉત્તમ કથન અને ઉત્તમ વ્યાખ્યાન છે, તે ભદ્ર પુરુષને માટે સૂક્તા-ઉત્તમ વચન બ્રૂહિ-બોલ; ઇતિ-એ રીતે તા-તે ઉત્તમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનાર અસિ-બને છે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અનેક વિદ્વાનોની પાસેથી વિદ્વાનનું વરણ-સ્વીકાર કરીને, વેદ આદિ વિદ્યાઓનું અધ્યયન કરીને, મહર્ષિ બને છે, તેઓ અન્યોને ભણાવવામાં સમર્થ બની શકે છે.

જે દાની અને પુરુષાર્થી હોય, તેઓ વિદ્યા ગ્રહણ કરીને, અવિદ્વાનો પર દયા કરીને, વિદ્યા ગ્રહણ કરાવવા માટે રોષપૂર્વક તાડના કરીને તેને સુસભ્ય બનાવે છે, તેઓ આ સંસારમાં સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૬૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વરુણ (૧-૪), અગ્નિ (૯-૧૨), વિદ્વાન્ (૧૧-૧૩), રાજાપ્રજા - (૨૫), શિલ્પ (૮), વાણી (૩૨), ઘર (૩ ૪), અશ્વી (૨૯, ૩૦, ૩૧, ૩૩-૪૦), ઋતુ (૨૩-૨૮), હોતા (૨૯-૪૭) આદિના પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति एकविंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ દ્વાવિંશોઽધ્યાય આરમ્ભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

તેજોઽસિ શુક્રમમૃતમાયુષ્ણા ઽ આયુર્મે પાહિ ।

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામાદદે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું દેવસ્ય-સર્વના પ્રકાશક સવિતુઃ-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક સર્જનહાર જગદીશ્વરે પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલ પ્રાણી આદિના સંસારમાં અશ્વિનોઃ-વાયુ અને વિદ્યુતના અને ધારણ આકર્ષણના ગુણ સમાન બાહુભ્યામ્-ભુજાઓથી તથા પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિકર્તા સૂર્યનાં કિરણોની સમાન હસ્તાભ્યામ્-હાથોથી ત્વા-તને આ-દદે ગ્રહણ કરું છું.

જે તું અમૃતમ્-સ્વસ્વરૂપથી વિનાશરહિત, શુક્રમ્-વીર્યવાન, તેજઃ-પ્રકાશમાન, આયુષ્ણાઃ-આયુની રક્ષા કરનાર અસિ-છે, તે તું પોતાની આયુ દીર્ઘ કરીને મે-મારી આયુઃ-આયુ-જીવનની પાહિ-રક્ષા કર. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરમાં રહેલી વિદ્યુત્ શરીરની રક્ષા કરે છે, જેમ બાહ્ય સૂર્ય અને વાયુ જીવનના હેતુ છે, તેમ ઈશ્વર રચિત આ જગતમાં આપ્ત વિદ્વાન્ હોય છે. એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૧)

इमामगृष्णन् रशनामृतस्य पूर्वं ઽ આયુષિ વિદથેષુ કવ્યા ।

सा नो ઽ અસ્મિનન્ત્સુત ઽ આબ્ભૂવઽઋતસ્ય સામન્ત્સરમારપન્તી ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઋત્ત્વસ્ય-સત્ય - કારણથી સમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય આરપન્તી-વ્યક્તરૂપમાં શબ્દને બોલતી આબ્ભૂવ-ઉત્તમ રીતે વિખ્યાત છે; જે ઇમામ્-એ અમૃતસ્ય-સત્ય કારણની રશનામ્-વ્યાપક દોરીની સમાન આયુને વિદથેષુ-યજ્ઞ આદિમાં પૂર્વે-પહેલી આયુષિ-પ્રાણ ધારણ કરનારી આયુમાં કવ્યા-કવિ મેધાવી લોકો અગૃષ્ણન્-ગ્રહણ કરે છે; સા-તે બુદ્ધિ અસ્મિન્-આ સુતે-ઉત્પન્ન જગતમાં નઃ-અમારા સામન્-અન્તિમ કાર્યમાં આબ્ભૂવ-વિદ્યમાન રહે છે. અર્થાત્ કાર્યની સમાપ્તિ સુધી રહે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ લગામ-દોરીથી બાંધેલ પ્રાણી જ્યાં-ત્યાં ભાગી શકતું નથી, તેમ યુક્તિપૂર્વક ધારણ કરેલી આયુ અકાલમાં ભાગી શકતી નથી. (૨)

अभिधा ઽ અસિ ભુવનમસિ યન્તાસિ ધર્તા ।

स त्वमग्निं वैश्वानरꣳ सप्रथसं गच्छ स्वाहाकृतः ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું ભુવનમ્-જળની સમાન શીતળ અસિ-છે, અભિધાઃ-ઉપદેશ કરનાર અસિ-છે, યન્તા-નિયમ કરનાર અસિ-છે, સઃ-તે સ્વાહાકૃતઃ-સત્યક્રિયાથી યુક્ત ધર્તા-સર્વ વ્યવહારોને

ધારણ કરનાર ત્વમ્-તું સપ્રથમ્-વિખ્યાતની સાથે વર્તમાન વૈશ્વાનરમ્-સમસ્ત પદાર્થોમાં નાયક અગ્નિમ્-અગ્નિને ગચ્છ-જાણ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પ્રાણી અને અપ્રાણીઓનાં જીવનનાં મૂળ જળ અને અગ્નિ છે, તેમ વિદ્વાનને સર્વ લોકો જાણે. (૩)

સ્વગા ત્વા દેવેભ્યઃ પ્રજાપતયે બ્રહ્મન્નશ્વં ભન્ત્સ્યામિ દેવેભ્યઃ

પ્રજાપતયે તેનં રાધ્યાસમ્ । તં બંધાન દેવેભ્યઃ પ્રજાપતયે તેનં રાધ્નુહિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મન્-વિદ્યાથી વૃદ્ધ વિદ્વાન્ ! હું ત્વા-તને સ્વગા-સ્વયં ગતિવાળો બનાવું છું, દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો તથા પ્રજાપતયે-સંતાનોની રક્ષા કરનાર ગૃહસ્થને માટે અશ્વમ્-મહાન સર્વવ્યાપી ઉત્તમ ગુણને ભન્ત્સ્યામિ-બાંધીશ - સુરક્ષિત કરીશ, તેન-તેથી દેવેભ્યઃ-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનોને માટે અને પ્રજાપતયે-સંતાનોનાં પાલક ગૃહસ્થને માટે રાધ્યાસમ્-સારી રીતે સિદ્ધ - તૈયાર બનું, તમ્-તેને તું બંધાન-બાંધ, તેન-તેથી દેવેભ્યઃ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા વિદ્વાનોને માટે તથા પ્રજાપતયે-પ્રજાના પાલક ગૃહસ્થને માટે રાધ્નુહિ-સારી રીતે તૈયાર બને. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યા, સુશિક્ષા, બ્રહ્મચર્ય અને સત્સંગથી શરીર અને આત્માનાં મહાન બળની વૃદ્ધિ કરીને, દિવ્યગુણોને ગ્રહણ કરીને તથા વિદ્વાનોને સુખ આપીને પોતાની તથા અન્યોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪)

પ્રજાપતયે ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામીન્દ્રાગ્નિભ્યાં ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ વાયવે ત્વા જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ વિશ્વેભ્યસ્ત્વા દેવેભ્યો જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ સર્વેભ્યસ્ત્વા દેવેભ્યો જુષ્ટં પ્રોક્ષામિ । યો ઽ અર્વન્તં જિઘાંશ્ઃ સત્તિ તમ્ભ્યમીતિ વરુણઃ । પ્રો મર્ત્તઃ પ્રઃ શ્વા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યઃ-જે પરઃ-ઉત્તમ વસ્તુઃ-શ્રેષ્ઠ મર્ત્તઃ-મનુષ્ય અર્વન્તમ્-શીઘ્રગામી ઘોડાને જિઘાંસતિ-ફટકારવા વા દોડાવવા ઈચ્છે છે તમ્-તેને અભિ, અમીતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; જે પરઃ-અન્ય મનુષ્ય શ્વા-કૂતરાં સમાન વિદ્યમાન અર્થાત્ દુષ્કર્મી છે તેને જે રોકે છે, તે પ્રજાપતયે-પ્રજાના પાલક બનવા માટે જુષ્ટમ્-પ્રીતિપૂર્વક ત્વા-તને પ્રોક્ષામિ-સારી રીતે સિંચુ છું.

ઇન્દ્રાગ્નિભ્યામ્-જીવ અને અગ્નિના માટે જુષ્ટમ્-પ્રીતિપૂર્વક ત્વા-તને પ્રોક્ષામિ-સારી રીતે સિંચુ છું; વાયવે-વાયુના માટે ત્વા-તને જુષ્ટમ્-પ્રીતિપૂર્વક ત્વા-તને પ્રોક્ષામિ-સારી રીતે સિંચુ છું; વિશ્વેભ્યઃ-સમસ્ત દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોના માટે જુષ્ટમ્-પ્રીતિપૂર્વક ત્વા-તને પ્રોક્ષામિ-સારી રીતે સિંચુ છું; સર્વેભ્યઃ-સમસ્ત દેવેભ્યઃ-દિવ્ય પૃથિવી આદિ પદાર્થોને માટે જુષ્ટમ્-પ્રીતિપૂર્વક ત્વા-તને પ્રોક્ષામિ-સારી રીતે સિંચુ છું અર્થાત્ અભિષિક્ત કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઉત્તમ પશુઓને મારવાની ઈચ્છા કરે તેનું સિંહ સમાન હનન કરવું જોઈએ

અને જે એ પશુઓની રક્ષા કરવા ઈચ્છે તેને સર્વની રક્ષા કરવા માટે અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૫)

અગ્નયે સ્વાહા સોમાય સ્વાહાપાં મોદાય સ્વાહા સવિત્રે સ્વાહા વાયવે સ્વાહા વિષ્ણવે સ્વાહેન્દ્રાય સ્વાહા બૃહસ્પતયે સ્વાહા મિત્રાય સ્વાહા વરુણાય સ્વાહા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જો મનુષ્ય અગ્નયે-અગ્નિને માટે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, સોમાય-ઔષધિઓના શોધન માટે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, અપામ્-જલોના મોદાય-આનંદને માટે સ્વાહા-સુખદાયક ક્રિયા, સવિત્રે-સૂર્યના માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વાયવે વાયુના માટે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, વિષ્ણવે-વ્યાપક વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને માટે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, ઇન્દ્રાય-જીવને માટે સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, બૃહસ્પતયે-મોટાના પાલક બૃહસ્પતિને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, મિત્રાય-મિત્રને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વરુણાય-શ્રેષ્ઠ પુરુષને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા કરે તો શું શું સુખ પ્રાપ્ત ન થઈ શકે ? (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિમાં સંસ્કારયુક્ત ઘી વગેરે ઉવિનો હોમ કરવામાં આવે છે, તે ઔષધિ, જલ, સૂર્યકિરણ, વાયુ અને વિદ્યુતને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ, પ્રાણ, અપાન તથા પ્રજાઓની રક્ષા અને શ્રેષ્ઠોના સત્કારની નિમિત્ત બને છે.

કોઈપણ પદાર્થ સ્વરૂપથી નાશ પામતો નથી, પરંતુ અન્ય અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરીને સર્વત્ર પરિણામયુક્ત રહે છે.

એટલા માટે સુગંધ, માધુર્ય, પુષ્ટિકારક અને રોગનાશક આદિ ગુણોથી યુક્ત દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, ઔષધિ આદિની શુદ્ધિ દ્વારા સંસારનું સ્વાસ્થ્ય સિદ્ધ કરવું જોઈએ - નીરોગ બનાવવું જોઈએ. (૬)

હિંકારાય સ્વાહા હિંકૃતાય સ્વાહા ક્રન્દતે સ્વાહા ઽ વક્રન્દાય સ્વાહા પ્રોથતે સ્વાહા પ્રપ્રોથાય સ્વાહા ગન્ધાય સ્વાહા ઘ્રાતાય સ્વાહા નિર્વિષ્ટાય સ્વાહોર્પવિષ્ટાય સ્વાહા સન્દિતાય સ્વાહા વલ્ગતે સ્વાહાસીનાય સ્વાહા શયાનાય સ્વાહા સ્વપતે સ્વાહા જાગ્રતે સ્વાહા કૂર્જતે સ્વાહા પ્રબુદ્ધાય સ્વાહા વિજૃમ્ભમાણાય સ્વાહા વિચૃતાય સ્વાહા સંહાનાય સ્વાહોર્પસ્થિતાય સ્વાહા ઽ ચનાય સ્વાહા પ્રાયણા સ્વાહા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય હિંકારાય-‘હિં’ શબ્દ કરનાર માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, હિંકૃતાય-‘હિં’ શબ્દ બોલ્યો તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ક્રન્દતે-બોલાવનાર તથા રડનાર માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, અવક્રન્દાય-નીચા સ્વરથી બોલનાર માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, પ્રોથતે-સર્વ કાર્યોમાં પરિપૂર્ણ માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, પ્રપ્રોથાય-અત્યંત પરિપૂર્ણને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ગન્ધાય-સુગંધને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઘ્રાતાય-

સૂંઘવામાં આવેલને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, નિવિષ્ટાય-નિરંતર પ્રવેશ કરીને બેસે છે તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉપવિષ્ટાય-બેસનાર માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, સંદિતાય-ખંડિત થનાર માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વલ્ગતે-જનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, આસીનાય-બેઠેલાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, શયનાય-સૂતેલાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા સ્વપતે-નિદ્રાધીનને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, જાગ્રતે-જાગતાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, કૂજતે-અસ્પષ્ટ શબ્દ ઉચ્ચારણ કરનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, પ્રબુદ્ધાય-શ્રેષ્ઠ શાનીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિજૃમ્ભમાણાય-બગાસું ખાનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિચૃતાય-વિશેષ રચના કરનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, સંહાનાય-સંઘાત - સમૂહને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉપસ્થિતાય-સમીપસ્થને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, અચનાય-સર્વત્રથી વિજ્ઞાનને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, પ્રાયણાય-પ્રકૃષ્ટ વિજ્ઞાનને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા કરે છે, તે મનુષ્યોના દુઃખો નાશ પામે છે અને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞમાં જે હોમ કરે છે, તે સર્વ પ્રાણીઓ માટે સુખદાયક બને છે. (૭)

યતે સ્વાહા ધાવતે સ્વાહોદ્દ્રાવાય સ્વાહોદ્દ્રુતાય સ્વાહા શૂકારાય સ્વાહા શૂકૃતાય સ્વાહા નિષળ્ણાય સ્વાહોત્થિતાય સ્વાહા જવાય સ્વાહા બલાય સ્વાહા વિવર્ત્તમાનાય સ્વાહા વિવૃત્તાય સ્વાહા વિધૂન્વાનાય સ્વાહા વિધૂતાય સ્વાહા શુશ્રૂષમાણાય સ્વાહા શૃણવતે સ્વાહેક્ષમાણાય સ્વાહેક્ષિતાય સ્વાહા વીક્ષિતાય સ્વાહા નિમેષાય સ્વાહા યદત્તિ તસ્મૈ સ્વાહા યત્ પિબતિ તસ્મૈ સ્વાહા યન્મૂત્રં કુરોતિ તસ્મૈ સ્વાહા કુર્વતે સ્વાહા કૃતાય સ્વાહા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યતે-શ્રેષ્ઠ પ્રયત્ન કરનારને માટે સ્વાહા-સત્કાર - ઉત્તમ ક્રિયા, ધાવતે-દોડનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉદ્દ્રાવાય-ઉપર ચઢેલા ભીના પદાર્થ માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉદ્દ્રુતાય-ઉત્કર્ષને પ્રાપ્તને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, શૂકારાય-શીઘ્રકારીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, નિષળ્ણાય-નિશ્ચયથી બેઠેલાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉત્થિતાય-ઉઠેલાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, જવાય-વેગને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, બલાય-બળને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિવર્ત્તમાનાય-વિશેષતાથી વર્તમાનને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિવૃત્તાય-વિવિધતાથી વર્તમાનને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિધૂન્વાનાય-વિવિધ કંપનવાળાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વિધૂતાય-વિવિધ કંપને પ્રાપ્તને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, શુશ્રૂષમાણાય-સાંભળવા ઈચ્છુકને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, શૃણવતે-સાંભળનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઈક્ષમાણાય-દર્શકને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઈક્ષિતાય-અન્ય દ્વારા દુષ્ટને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વીક્ષિતાય-વિશેષતાથી દર્શનને પ્રાપ્તને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, નિમેષાય-નિમેષ - આંખ બંધ કરવાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, યત્-જે અત્તિ-ખાય છે તસ્મૈ-તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, યત્-જે પિબતિ-

પીવે છે તસ્મૈ-તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, યત્-જે મૂત્રમ્-મૂત્ર કરોતિ-કરે છે તસ્મૈ-તેને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, કુર્વતે-કાર્ય કરનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા તથા કૃતાય-કરેલા કાર્યને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા કરે છે; તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે પ્રયત્ન અને દોડવા આદિ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનાર તથા સુગંધિ આદિના હોમ આદિ કર્મો કરે છે, તે સર્વ ઈચ્છિત પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

તત્સવિતુર્વરેણ્યં ભર્ગો દેવસ્ય ધીમહિ । ધિયો યો નઃ પ્રચોદયાત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સવિતુઃ-સકલ જગતના ઉત્પાદક, દેવસ્ય-સ્વ પ્રકાશ સ્વરૂપ, સર્વ કામના કરવા યોગ્ય, સર્વ સુખોના દાતા પરમાત્માનું જે વરેણ્યમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ ભર્ગઃ-સર્વ દોષોનું દહન કરનાર તેજોમય શુદ્ધ સ્વરૂપ છે, તેને અમે ધીમહિ-ધારણ કરીએ છીએ, તત્-તેને તમે ધારણ કરો.

યઃ-જે પરમાત્મા નઃ-અમારાં સર્વની ધિયઃ-બુદ્ધિઓને પ્રચોદયાત્-ધર્માચરણમાં પ્રેરિત કરે છે, તે અન્તર્યામી પરમાત્માની સર્વએ ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, નિત્ય, શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્ત સ્વભાવયુક્ત અને સર્વના અન્તર્યામી પરમેશ્વરને છોડીને, તેના સ્થાનમાં અન્ય કોઈ પદાર્થની ઉપાસના અને સ્થાપના કદી પણ કરવી નહિ. કયા પ્રયોજનને માટે ?

જેથી તે અમારા દ્વારા ઉપાસના કરેલા, અમારી બુદ્ધિઓને અધર્માચરણથી હટાવીને ધર્માચરણમાં પ્રેરિત કરે, જેથી શુદ્ધ બનેલાં અમે લોકો તે પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને સાંસારિક અને પારમાર્થિક - આધ્યાત્મિક સુખનો ઉપભોગ કરીએ એ પ્રયોજન માટે. (૯)

હિરણ્યપાણિમૂતયૈ સવિતારમુષ્પં હ્યયે । સ ચેત્તા દેવતા પદમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું જે ઋતયે-રક્ષા આદિ માટે હિરણ્યપાણિમ્-જેની સ્તુતિ કરવામાં હિરણ્ય-સૂર્ય આદિ તેજોમય પદાર્થ છે, જે પદમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય સવિતારમ્-સમસ્ત ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર જગદીશ્વરને ઉપહ્યયે-ધ્યાન યોગથી બોલાવું છું. સઃ-તે ચેત્તા-સમ્યક્ જ્ઞાનસ્વરૂપ હોવાથી સત્ય અને અસત્યનાં જ્ઞાપક દેવતા-ઉપાસના કરવા યોગ્ય ઈષ્ટ દેવ છે એ તેમ જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અહીંથી લઈને પૂર્વોક્ત [તત્સવિતુ..] મંત્રનું વિવરણ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

ચેતન સ્વરૂપ પરમાત્માની ઉપાસનાનો ત્યાગ કરીને અન્ય કોઈપણ જડ પદાર્થની ઉપાસના કદી પણ ન કરવી જોઈએ. ઉપાસના કરેલ તે જડ પદાર્થ હાનિ અથવા લાભ કરનાર તથા રક્ષા કરનાર હોતો નથી.

એટલા માટે સર્વ ચેતન જીવાત્માઓ ચેતન જગદીશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. અન્ય જડતા આદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થની નહિ. (૧૦)

દેવસ્ય ચેતતો મહીંપ્ર સવિતુર્હવામહે । સુમતિઃ સત્યરાધસમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે સવિતુઃ-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, ચેતતઃ-ચેતન સ્વરૂપ, દેવસ્ય-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને મહીમ્-મહાન્ સત્યરાધસમ્-સત્યને સિદ્ધ કરનારી સુમતિમ્-ઉત્તમ બુદ્ધિને પ્રહવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તે પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને તે બુદ્ધિને તમે પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ચેતનસ્વરૂપ ઈશ્વરે સમસ્ત સંસારને ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેની આરાધના-ભક્તિથી સત્ય વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિને તમે પ્રાપ્ત કરી શકો છો, અન્ય જડ પદાર્થની ભક્તિથી નહિ. (૧૧)

સુષ્ટુતિઃ સુમતીવૃધો રાતિઃ સવિતુરીમહે । પ્ર દેવાય મતીવિદે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે સુમતીવૃધઃ ઉત્તમ મતિની વૃદ્ધિ કરનાર, સવિતુઃ-સર્વના ઉત્પાદક ઈશ્વરની સુષ્ટુતિમ્-શ્રેષ્ઠ સ્તુતિ કરીને તેથી મતીવિદે-જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારા અને દેવાય-વિદ્યાદિ ગુણોની કામના કરનારા મનુષ્યોને માટે રાતિમ્-દાન પ્રેમહે-સારી રીતે માગીએ છીએ, તેમ તે દાનને તમે પણ પરમાત્માથી માગો.

ભાવાર્થ : જ્યારે-જ્યારે પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરો, ત્યારે - ત્યારે પોતાના માટે અથવા અન્યોને માટે સર્વ શાસ્ત્રોના વિજ્ઞાનથી યુક્ત બુદ્ધિની જ યાચના કરવી જોઈએ, જેની પ્રાપ્તિથી જીવ સર્વ સુખનાં સાધનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૨)

રાતિઃ સત્પતિં મહે સવિતાર્મુપ્ત્વ્યે । આસવં દેવવીતયે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું મહે-મહાન દેવવીતયે-દિવ્યગુણ અને વિદ્વાનોની પ્રાપ્તિ માટે રાતિમ્-દાતા, આસવમ્-સર્વત્રથી ઐશ્વર્યયુક્ત સત્યતિમ્-સત્ય વા જીવો વા પદાર્થોના પાલક સવિતાર્મ્-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક ઈશ્વરની ઉપહ્યે-ધ્યાન યોગથી સ્તુતિ કરું છું. તેમ તમે પણ તેની પ્રશંસા કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ધર્મ, અર્થ, કામની સિદ્ધિ ઈચ્છે, તો પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, તે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે. (૧૩)

દેવસ્ય સવિતુર્મતિમાસવં વિશ્વદેવ્યમ્ । ધિયા ભગં મનામહે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે સવિતુઃ-સકલ ઐશ્વર્યના દાતા, દેવસ્ય-સકલ સુખદાયક પરમાત્માની સમીપથી મતિમ્-બુદ્ધિ અને આસવમ્-સકલ ઐશ્વર્યના હેતુને પ્રાપ્ત કરીને, તે ધિયા-બુદ્ધિથી વિશ્વદેવ્યમ્-સર્વ વિદ્વાનો માટે હિતકારી ભગમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને મનામહે-માગીએ છીએ. તેમ તમે પણ માગો. (૧૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, પરમેશ્વરની ઉપાસનાથી બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને, એથી પૂર્ણ ઐશ્વર્યને સિદ્ધ કરીને સર્વ પ્રાણીઓનું હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૧૪)

અગ્નિઃ સ્તોમેન બોધય સમિધાનો ઽ અમર્ત્યમ્ । હૃવ્યા દેવેષુ નો દધત્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! સમિધાન:-પ્રદીપ્ત થયેલ અગ્નિમ્-અગ્નિ દેવેષુ-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વાયુ આદિમાં હૃવ્યા-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને ન:-અમારા માટે દધત્-ધારણ કરે છે; તે અમર્ત્યમ્-કારણરૂપથી મરણ ધર્મથી રહિત અગ્નિમ્-અગ્નિને સ્તોમેન-ઈધન અર્થાત્ બળતણ સમૂહથી બોધય-પ્રદીપ્ત કર. (૧૫)

ભાવાર્થ : જો અગ્નિમાં સમિધાઓ નાખીને સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરવામાં આવે, તો એ અગ્નિ તેને વાયુ આદિમાં ફેલાવીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૧૫)

સ હૃવ્યવાડમર્ત્ય ઽ ડશિગદૂતશ્ચનોહિતઃ । અગ્નિર્ધિયા સમૃણવતિ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અમર્ત્ય:-મૃત્યુ-ધર્મરહિત હૃવ્યવાડ્-હોમ દ્રવ્યોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર, ડશિક્-પ્રકાશમાન, દૂતઃ-દૂતની સમાન વર્તનાર, ચનોહિતઃ-અન્નોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિઃ-અગ્નિ છે, સઃ-તે ધિયા-કર્મ અર્થાત્ તેના ઉપયોગી શિલ્પ આદિ કામથી સમૃણવતિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ કાર્ય માટે મોકલવામાં આવેલ દૂત કાર્યસાધક હોય છે, તેમ સારી રીતે પ્રયુક્ત કરેલ અગ્નિ સુખનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારો બને છે. (૧૬)

અગ્નિં દૂતં પુરો દધે હૃવ્યવાહમુપ્ બ્રુવે । દેવાં ઽ આ સાદયાદિહ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઇહ-આ સંસારમાં દેવાન્-દિવ્ય ભોગોને આ-સાદયાત્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, તે હૃવ્યવાહમ્-ભોજન યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર દૂતમ્-દૂતની સમાન કાર્યસાધક અગ્નિમ્-અગ્નિને પુરઃ-પ્રથમ દધે-ધારણ કરું છું; અને તમારા માટે તેનો ઉપબ્રુવે-ઉપદેશ કરું છું કે, તમે પણ એમ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ દિવ્ય સુખોનો દાતા છે, તેમ વાયુ પણ છે, તેમ તમે જાણો. (૧૭)

અજીજનો હિ પવમાન્ સૂર્ય વિધારે શક્મના પયઃ ।

ગોજીરયા ર્હમાણઃ પુરન્ધ્યા ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે પવમાન-પવિત્ર કરનાર તથા અગ્નિની સમાન પવિત્ર મનુષ્ય ! તું જે અગ્નિ પુરન્ધ્યા-પુર-નગરને ધારણ કરનારી વિદ્યુત્થી ર્હમાણઃ-જઈને સૂર્યમ્-સૂર્યમંડળને અજીજનઃ-ઉત્પન્ન કરે છે, તે અગ્નિને અને શક્મના-કર્મ વા ગોજીરયા-ગાય આદિ પશુઓની જીવન ક્રિયાથી પયઃ-જળને હું વિધારે-વિશેષ રૂપથી ધારણ કરું હિ-જ છું.

ભાવાર્થ : જો વિદ્યુત્ સૂર્યનું કારણ ન હોય, તો સૂર્યની ઉત્પત્તિ કેમ થાય ? જો સૂર્ય ન હોય, તો ભૂગોળનું ધારણ અને વર્ષાથી ગાય આદિ પશુઓના જીવન કેવી રીતે સંભવી શકે ? (૧૮)

**વિભૂર્માત્રા પ્રભૂઃ પિત્રાશ્વૌઽસિ હયોઽસ્યત્યૌઽસિ મયોઽસ્યર્વાસિ સત્તિરસિ
વાજ્યસિ વૃષાસિ નૃમણા ઽ અસિ । યયુર્નામાસિ શિશુર્નામાસ્યાદિત્યાનાં પત્વાન્વિહિ**

દેવા ઽ આશાપાલા ઽ એતં દેવેભ્યોઽશ્વં મેધાય પ્રોક્ષિતઃ રક્ષતેહ રન્તિરિહ રમતામિહ
ધૃતિરિહ સ્વધૃતિઃ સ્વાહા ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે આશાપાલા:-દિશાઓના પાલક દેવા:-વિદ્વાનો ! તમે જે માત્રા-માતા સમાન વિદ્યમાન પૃથિવીથી વિભૂ:-વ્યાપક, પિત્રા-પિતારૂપ વાયુથી પ્રભૂ:-સમર્થ અશ્વ:-માર્ગોનો વ્યાપ્ત કરનાર અગ્નિ અસિ-છે, હય:-ઘોડાઓની સમાન શીઘ્રગામી અસિ-છે, અત્ય:-નિરંતર ગમનશીલ અસિ-છે, મય:-સુખકારી અસિ-છે, અર્વા-સર્વને કરનાર અસિ-છે, સપ્તિ:-મૂર્ત દ્રવ્યોથી સંબંધિત અસિ-છે, વાજી-વેગવાન અસિ-છે, વૃષા-વર્ષા કરનાર અસિ-છે, નૃમણા: સર્વ પ્રકારના વ્યવહારો પ્રાપ્ત કરાવનાર પદાર્થોમાં મનની સમાન શીઘ્રગામી અસિ-છે, યયુ:-પ્રાપ્તિ વા ગતિ કરનાર તથા નામ-અભ્યાસને યોગ્ય અસિ-છે, શિશુ:-વ્યવહારને યોગ્ય વિષયને સૂક્ષ્મ કરતી નામ-ઉત્તમ વાણી અસિ-છે, આદિત્યાનામ્-મહિનાઓને પત્વા-પાડનાર બનીને અન્વિહિ-પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે. એતમ્-એ અશ્વમ્-વ્યાપક અગ્નિને સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી દેવેભ્ય:-દિવ્ય ભોગોને માટે તથા મેધાય-સંગમ, બુદ્ધિની પ્રાપ્તિ વા દુષ્ટોને મારવા માટે પ્રોક્ષિતમ્-જળથી સિક્ત કરીને રક્ષત-રાખો; જેથી રન્તિ:-રમણ, ઉત્તમ સુખમાં ઇહ-અહીં રમતામ્-રમણ કરે, ઇહ-અહીં ધૃતિ:-ઘૈર્ય અને ઇહ-અહીં સ્વધૃતિ:-પોતાના પદાર્થોનું ધારણ થાય. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૃથિવી આદિમાં વ્યાપક, સર્વ વેગવાનોમાં અત્યંત વેગવાન અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને જાણે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખપૂર્વક વિહાર કરે છે. (૧૯)

કાય સ્વાહા કસ્મૈ સ્વાહા કતમસ્મૈ સ્વાહા સ્વાહાધિમાધીતાય સ્વાહા મનઃ
પ્રજાપતયે સ્વાહા ચિત્તં વિજ્ઞાતાયાદિત્યૈ સ્વાહાદિત્યૈ મહૈ સ્વાહાદિત્યૈ સુમૃડીકાયૈ
સ્વાહા સરસ્વત્યૈ સ્વાહા સરસ્વત્યૈ પાવકાયૈ સ્વાહા સરસ્વત્યૈ બૃહત્યૈ સ્વાહા પૂષ્ણે
સ્વાહા પૂષ્ણે પ્રપશ્યાય સ્વાહા પૂષ્ણે નરાન્ધિષાય સ્વાહા ત્વષ્ટ્રે સ્વાહા ત્વષ્ટ્રે તુરીપાય
સ્વાહા ત્વષ્ટ્રે પુરુરૂપાય સ્વાહા વિષ્ણવે સ્વાહા વિષ્ણવે નિભૂયપાય સ્વાહા વિષ્ણવે
શિપિવિષ્ટાય સ્વાહા ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યો - કાય-સુખોના સાધક વિદ્વાનને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, કસ્મૈ-સુખ સ્વરૂપને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, કતમસ્મૈ-અનેકોની મધ્યમાં વર્તમાન મનુષ્યને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, આધિમ્-સર્વત્રથી ધારણ કરનાર વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને સ્વાહા-સત્યક્રિયા, આધીતાય-સર્વત્રથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, પ્રજાપતયે-પ્રજાપાલકને માટે મન:-મનની સ્વાહા-સત્યક્રિયા, વિજ્ઞાતાય-વિજ્ઞાનને માટે ચિત્તમ્-સ્મૃતિ સાધક અર્થાત્ ચૈતન્ય મન-ચિત્ત અને અદિત્યૈ-પૃથિવીને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, મહૈ-મહાન અદિત્યૈ-વિનાશરહિત વાણીને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, સુમૃડીકાયૈ-ઉત્તમ સુખકારક અદિત્યૈ-જનની માતાને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, સરસ્વત્યૈ-નદીને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, પાવકાયૈ-પવિત્રકારક

સસ્વત્યૈ-વિદ્યાયુક્ત વાણીને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, બૃહત્યૈ-મહાન સસ્વત્યૈ-વિદ્વાનોની વાણીને માટે તથા પૂષ્ણો-પુષ્ટિકર્તા વાયુના માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, પ્રપથ્યાય-અત્યંત પથ્ય પાલન કરવા માટે તથા પૂષ્ણો-પુષ્ટિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, નરન્ધિષાય-નરોને ઉપદેશ કરનાર પૂષ્ણો-પોષક વિદ્વાનને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, ત્વષ્ટ્રે-વિદ્યાના પ્રકાશને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, તુરીપાય-નોંકાઓના પાલક અને ત્વષ્ટ્રે-વિદ્યાના પ્રકાશકને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, પુસ્ત્રાય-અનેકરૂપ અને ત્વષ્ટ્રે-પ્રકાશક સૂર્યને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, વિષ્ણવે-વ્યાપક અગ્નિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, નિભૂયપાય-નિરંતર સ્વયં રક્ષિત બનીને અન્યોનું પાલન કરનાર વિષ્ણવે-વ્યાપક અગ્નિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, શિપિવિષ્ટાય-આકોશ કરનારા ચેતન પ્રાણીઓમાં વ્યાપ્તિમાં પ્રવિષ્ટ વિષ્ણવે-વ્યાપક ઈશ્વરને માટે સ્વાહા-યજ્ઞરૂપ સત્યક્રિયા કરે છે તેઓ સુખી કેમ ન બને ? (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સુખ, અધ્યયન, અન્તઃકરણ, વિજ્ઞાન, વાણી અને વાયુ આદિની શુદ્ધિ માટે યજ્ઞ કર્મ કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૦)

વિશ્વો દેવસ્ય નેતુર્મત્તો વુરીત સ્વચ્ચમ્ ।

વિશ્વો રાયઽઙ્ઘ્યતિ દ્યુમ્નં વૃણીત પુષ્યસે સ્વાહા ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : જેમ વિશ્વઃ-સર્વ મર્ત્તઃ-મનુષ્ય નેતુઃ-નાયક અર્થાત્ સર્વ વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા દેવસ્ય-વિદ્વાનની સ્વચ્ચમ્-મિત્રતાનો વુરીત-સ્વીકાર કરે છે; અથવા જેમ વિશ્વઃ-સર્વ મર્ત્યઃ-મનુષ્યો રાયે-ધનને માટે ઙ્ઘ્યતિ-યાચના કરે છે અથવા બાણોને પોતાના ધનુષ્ય પર ધારણ કરે છે; તેમ સ્વાહા-સત્ય-ક્રિયાથી પુષ્યસે-પુષ્ટિને માટે દ્યુમ્નમ્-ધન વા યજ્ઞનો વૃણીત-સ્વીકાર કરે.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનો સાથે મિત્રતા કરીને, વિદ્યા અને યજ્ઞને ગ્રહણ કરીને, શ્રીમાન અને કાન્તિમાન બનીને સુપથ્ય આચરણથી પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

આ બ્રહ્મન્ બ્રાહ્મણો બ્રહ્મવર્ચસી જાયતામા રાષ્ટ્રે રાજન્યુઃ શૂરઽઙ્ઘ્યવ્યોઽતિવ્યાધી મહારથો જાયતાં દોઘ્ધીં ધેનુર્વોઢાનઙ્ઘવાનાશુઃ સપ્તિઃ પુરન્ધિર્યોષા જિષ્ણૂ રથેષ્ટાઃ સ્મભેયો યુવાસ્ય યજ્ઞમાનસ્ય વીરો જાયતાં નિકામે નિકામે નઃ પર્જન્યો વર્ષતુ ફલવત્યો ન્ ઽ ઓષ્ઠધયઃ પચ્યન્તાં યોગક્ષેમો નઃ કલ્પતામ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મન્-વિદ્યા આદિના કારણે સર્વથી મહાન પરમેશ્વર ! જેમ અમારા રાષ્ટ્રે-રાજ્યમાં બ્રહ્મવર્ચસી-વેદ વિદ્યાથી પ્રકાશિત બ્રાહ્મણઃ-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા વિદ્વાન - બ્રાહ્મણ આજાયતામ્-ઉત્પન્ન થાય; ઙ્ઘ્યવ્યઃ-બાણ ચલાવવામાં ઉત્તમ ગુણવાન, અતિવ્યાધી-શત્રુઓનું અત્યંત તાડન કરનાર, મહારથઃ-મહાન રથ વા વીરો વાળા, શૂરઃ-નિર્ભય, રાજન્યુઃ-રાજપુત્ર - ક્ષત્રિય આ જાયતામ્-ઉત્પન્ન થાય.

દોઘ્ધી-દૂધારી વા કામના પૂર્ણ કરનારી ધેનુઃ-વાણી અથવા ગાય વોઢા-ભાર વહન કરવામાં સમર્થ અનઙ્ઘવાન્-મહાન બળવાન બળદ, આશુઃ-શીઘ્રગામી સપ્તિઃ-ઘોડા, પુરન્ધિઃ-અનેક વ્યવહારોને ધારણ

કરનારી યોષા-સ્ત્રી, સ્થેષ્ઠા:-રથ પર બેસનાર જિષ્ણુ:-વિજેતા સભેય:-સભામાં ઉત્તમ સભ્ય યુવા-યૌવનને પ્રાપ્ત યુવક પુરુષ આજાયતામ્-ઉત્પન્ન થાય.

અસ્ય, યજમાનસ્ય-એ વિદ્વાનોનો સત્કાર અને સુખોનો સંગ કરનાર વા સુખદાયક રાજાના રાજ્યમાં વીર:-વિજ્ઞાનવાન, શત્રુઓને હરાવનાર વીર પુરુષ જાયતામ્-ઉત્પન્ન થાય,

ન:-અમારા માટે નિકામે નિકામે-નિશ્ચિત રૂપથી પ્રત્યેક કામનામાં પર્જન્ય:-વાદળ વર્ષતુ-વરસે, ઓષધય:-ઔષધિઓ ફલવત્ય:-ઉત્તમ ફળવાળી ન:-અમારા માટે પચ્યન્તામ્-પાકે; ન:-અમારા માટે યોગ-અપ્રાપ્ત વસ્તુની પ્રાપ્તિ, ક્ષેમ:-પ્રાપ્તની રક્ષા કલ્પતામ્-સમર્થ બને એવું વિધાન કરો અર્થાત્ તેવા વ્યવહારને પ્રકટ કરાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થના સાથે એવું કર્મ કરવું જોઈએ કે, જેથી પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત અને શૂરવીર મનુષ્ય તથા સ્ત્રીઓ, સુખદાયક પશુ, સભ્ય મનુષ્ય, ઈચ્છાનુસાર વરસાદ, મધુર ફળોથી યુક્ત અન્ન તથા ઔષધિઓ થાય, તથા કામના પૂર્ણ થાય. (૨૨)

પ્રાણાય સ્વાહાપાનાય સ્વાહા વ્યાનાય સ્વાહા ચક્ષુષે સ્વાહા શ્રોત્રાય સ્વાહા વાચે સ્વાહા મનસે સ્વાહા ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રાણાય-અંદરથી બહાર નીકળનાર પ્રાણ-વાયુને માટે સ્વાહા-યોગયુક્ત ક્રિયા, અપાનાય-બહારથી અંદર જનાર અપાનને માટે સ્વાહા-યોગયુક્ત ક્રિયા, વ્યાનાય-વિવિધ અંગોમાં વ્યાપક વ્યાનને માટે સ્વાહા-વૈદક વિદ્યાથી યુક્ત વાણી, ચક્ષુષે-જોવાના નેત્રને માટે સ્વાહા-પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી યુક્તવાણી, શ્રોત્રાય-સાંભળવાના કર્ણને માટે સ્વાહા-આપ્ત ઉપદેશથી યુક્ત વાણી, વાચે-બોલવાની વાણીને માટે સ્વાહા-સત્ય ભાષણયુક્ત વાણી તથા મનસે-વિચારનું નિમિત્ત અને સંકલ્પ વિકલ્પ આત્મક મનને માટે સ્વાહા-વિચારયુક્ત વાણીનો પ્રયોગ કરે છે અર્થાત્ સારી રીતે ઉચ્ચારણ કરે છે; તેઓ વિદ્વાન બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જળ, ઔષધિ, વાયુ, અન્ન, પત્ર, પુષ્પ, ફળ, રસ અને કંદ આદિનું ભોજન કરે છે, તેઓ નીરોગ બનીને બુદ્ધિમાન, બળવાન, આરોગ્યવાન અને આયુષ્યમાન બને છે. (૨૩)

પ્રાચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહા દક્ષિણાયૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહા પ્રતીચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહોદીચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહોર્ધ્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહાર્વાચ્ચૈ દિશે સ્વાહા ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ પ્રાચ્ચૈ-જે પ્રથમ સૂર્યના સંયોગથી પ્રાપ્ત થનારી પૂર્વ દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-જ્યોતિ:શાસ્ત્રની વિદ્યાયુક્ત વાણી, અર્વાચ્ચૈ- જે નીચેથી સૂર્યમંડળને પ્રાપ્ત અર્થાત્ જ્યારે વિષુવમાન-રેખાથી ઉત્તરનો સૂર્ય નીચે ઉતરે છે તે નીચેની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-પૂર્વોક્ત - જ્યોતિ:શાસ્ત્ર વિદ્યાયુક્ત

વાણી, દક્ષિણાયૈ-જે પૂર્વાભિમુખ પુરુષની જમણી બાજુ વિદ્યમાન દક્ષિણ દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-પૂર્વોક્ત વાણી અર્વાચ્ચૈ-નીચે વિદ્યમાન અર્થાત્ નીચેની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, પ્રતીચ્ચૈ-જે સૂર્યમંડળની સામે અર્થાત્ ફરતી વેળાએ પ્રાપ્ત અને પૂર્વાભિમુખ પુરુષની પીઠ પાછળ પશ્ચિમ દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, અર્વાચ્ચૈ-નીચેની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, ઉદીચ્ચૈ-પૂર્વાભિમુખ પુરુષની ડાબી બાજુની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, અર્વાચ્ચૈ-પૃથિવી ગોળામાં જે ઉત્તર દિશાની નીચે દિશા છે તે દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, ઋર્ધ્વાચ્ચૈ-ઉપરની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, અર્વાચ્ચૈ-વિરુદ્ધ પ્રાપ્ત થનારી અર્થાત્ કદી પૂર્વ, કદી ઉત્તર, કદી દક્ષિણ, કદી પશ્ચિમ માનવામાં આવે છે તે દિશે-ઉપદિશાઓને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી, અર્વાચ્ચૈ-સર્વથી નીચેની દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણી અને અર્વાચ્ચૈ-પૃથિવી ગોળામાં જે પ્રત્યેક ખૂણે દિશાઓની નીચેની ઉપ-દિશાઓ છે તે દિશે-ઉપદિશાઓ માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણીનો ઉપદેશ કરે છે, તે સર્વત્રથી કુશળતાયુક્ત અર્થાત્ આનંદિત રહે છે. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ચાર મુખ્ય દિશાઓ છે, તેમ ચાર ઉપદિશાઓ પણ છે. એ જ રીતે ઉપરની અને નીચેની દિશાઓ છે. તે બધી મળીને દશ દિશાઓ થાય છે તેમ સમજવું જોઈએ.

એ દિશાઓ અનિશ્ચિત અને વ્યાપક સ્વરૂપવાળી છે. જ્યાં મનુષ્ય સ્વયં સ્થિત હોય, તે સ્થાનથી આરંભ કરીને સર્વ દિશાઓની કલ્પના કરવામાં આવે છે, તેમ તમે જાણો. (૨૪)

અદ્ભ્યઃ સ્વાહા વાર્ભ્યઃ સ્વાહોદ્કાય સ્વાહા તિષ્ઠન્તીભ્યઃ સ્વાહા સ્રવન્તીભ્યઃ સ્વાહા સ્યન્દમાનાભ્યઃ સ્વાહા કૂપ્યાભ્યઃ સ્વાહા સૂદ્યાભ્યઃ સ્વાહા ધાર્યાભ્યઃ સ્વાહાર્ણવાય સ્વાહા સમુદ્રાય સ્વાહા સરિરાય સ્વાહા ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય યજ્ઞોમાં સુગંધ આદિ દ્રવ્યોનો હવન કરવા માટે અદ્ભ્યઃ-સામાન્ય જલોને માટે સ્વાહા-તેને શુદ્ધ કરવાની ક્રિયા, વાર્ભ્યઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ જલોને માટે સ્વાહા-શુદ્ધ કરવાની ક્રિયા, ઉદકાય-આર્દ્ર કરનાર વા સૂર્યના કિરણોથી ઉપર જતા જલોને માટે સ્વાહા-શુદ્ધ કરનારી ક્રિયા, તિષ્ઠન્તીભ્યઃ-સ્થિર જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, સ્રવન્તીભ્યઃ-શીઘ્ર વહેતાં જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, સ્યન્દમાનાભ્યઃ- મંદ ગતિએ વહેતાં જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, કૂપ્યાભ્યઃ-કૂવાના જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, સૂદ્યાભ્યઃ-સારી રીતે ભીંજાવે અર્થાત્ વર્ષાથી ભીંજાવે તે જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, ધાર્યાભ્યઃ-ધારણ કરવા યોગ્ય જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, અર્ણવાય-જેમાં પુષ્કળ જળ છે તે આકાશ - સાગરને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, સમુદ્રાય-જેમાં સર્વ નદીઓ, ઝરણાંઓ, સરોવર વગેરેનું જળ મળે છે તે પૃથિવી સ્થ-સમુદ્રને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા અને સરિરાય-કામના કરવા યોગ્ય અતિ સુંદર જલોને માટે સ્વાહા-ઉક્ત વાણીનો ઉપદેશ કરે છે, અર્થાત્ તેની રક્ષા કરનારી ક્રિયાનું વિધાન કરેલ છે, તે સર્વને સુખદાયક બને છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિમાં સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરે છે, તેઓ જળ આદિની શુદ્ધિ કરનારા પુણ્ય આત્માઓ હોય છે.

જળની શુદ્ધિથી જ સર્વની શુદ્ધિ થાય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૫)

વાતાયૃ સ્વાહા ધૂમાયૃ સ્વાહાભ્રાયૃ સ્વાહા મેઘાયૃ સ્વાહા વિદ્યોત્માનાયૃ સ્વાહા
સ્તનયતેૃ સ્વાહાવસ્ફૂર્જતેૃ સ્વાહા વર્ષતેૃ સ્વાહાવર્ષતેૃ સ્વાહોગ્રં વર્ષતેૃ સ્વાહા
શીઘ્રં વર્ષતેૃ સ્વાહોદ્ગૃહ્ણતેૃ સ્વાહોદ્ગૃહીતાયૃ સ્વાહા પ્રુષ્ણતેૃ સ્વાહા શીકાયતેૃ સ્વાહા
પ્રુષ્વાભ્યઃૃ સ્વાહા હ્રાદુનીભ્યઃૃ સ્વાહા નીહારાયૃ સ્વાહા ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય વાતાય-વહેતા વાયુને માટે સ્વાહા-શુદ્ધિકારક યજ્ઞ ક્રિયા, ધૂમાય-ધુમાડાને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અભ્રાય-મેઘનાં કારણને માટે સ્વાહા-યજ્ઞ ક્રિયા, મેઘાય-મેઘને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વિદ્યોતમાનાય-વિદ્યુતના પ્રવર્તક મેઘને વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞ ક્રિયા, સ્તનયતે-ઉત્તમ શબ્દ કરતી વિદ્યુતને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અવસ્ફૂર્જતે-એકબીજાના ઘર્ષણથી વજૂ સમાન નીચે પડતી વિદ્યુતને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વર્ષતે-વરસતા વાદળ માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અવર્ષતે-નીચે ઉપર મળેલા વાદળાંથી નીચેવાળા વરસનાર વાદળાને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઊગ્રમ્-અતિ તીવ્ર વર્ષતે-વરસનાર વાદળ માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, શીઘ્રમ્-પવનવેગી વર્ષતે-આપટાં વરસાવતા વાદળ માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઉદ્ગૃહ્ણતે-ઉપર જળને ધારણ કરનાર વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઉદ્ગૃહીતાય-ઉપર જળને ગ્રહણ કરનાર વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, પ્રુષ્ણતે-પુષ્ટિને પૂરણ કરનાર વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, શીકાયતે-સિંચન કરનાર - રહી-રહીને વરસનાર વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, પ્રુષ્વાભ્યઃ-પૂર્ણ ધનધોર વરસનાર વાદળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, હ્રાદુનીભ્યઃ-અવ્યક્ત ગડગડાટ ગાજતાં વાદળોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા અને નીહારાય-આકળને માટે સ્વાહા-તેની શુદ્ધિ કરનારી યજ્ઞક્રિયાનો પ્રયોગ કરે છે, તેઓ પ્રાણોની સમાન પ્રિય બને છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યથાવિધિ અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરે છે, તેઓ વાયુ આદિની શુદ્ધિ કરનાર બનીને સર્વનું હિત કરનાર બને છે. (૨૬)

અગ્નયેૃ સ્વાહા સોમાયૃ સ્વાહેન્દ્રાયૃ સ્વાહા પૃથિવ્યૈૃ સ્વાહાન્તરિક્ષાયૃ સ્વાહા
દિવેૃ સ્વાહા દિગ્ભ્યઃૃ સ્વાહાઽઽ શાંભ્યઃૃ સ્વાહોર્વ્યૈૃ દિશેૃ સ્વાહાર્વાચ્યૈૃ દિશેૃ
સ્વાહા ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ અગ્નયે-જઠરાગ્નિને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, સોમાય-ઉત્તમ રસને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઇન્દ્રાય-જીવ, વિદ્યુત્ વા પરમ ઐશ્વર્યને માટે સ્વાહા-ઉક્ત ક્રિયા, પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, અન્તરિક્ષાય-આકાશને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, દિવે-પ્રકાશને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, દિગ્ભ્યઃ-પૂર્વાદિ દિશાઓને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા આશાભ્યઃ-વ્યાપક અર્થાત્ ઈશાન આદિ ઉપદિશાઓને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ઉર્વ્યૈ-અનેક રૂપ દર્શાવનારી અર્થાત્ વર્ષા, ગરમી, ઠંડી સમય અનુરૂપ વિભિન્ન પ્રતીતિ કરાવનાર દિશે-દિશાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા અને અર્વાચ્યૈ-નીચેની દિશાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાનું વિધાન અવશ્ય કરવું જોઈએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ દ્વારા ઔષધિ આદિ પદાર્થો સુગંધ આદિ ચાર દ્રવ્યોને ફેલાવે છે,

તેઓ સંસારનું હિત કરનારા હોય છે. (૨૭)

નક્ષત્રેભ્યઃ સ્વાહા નક્ષત્રિયેભ્યઃ સ્વાહાહોરાત્રેભ્યઃ સ્વાહાર્દ્દમાસેભ્યઃ સ્વાહા
માસેભ્યઃ સ્વાહાઋતુભ્યઃ સ્વાહાર્ત્તવેભ્યઃ સ્વાહા સંવત્સરાય સ્વાહા દ્યાવાપૃથિવીભ્યા-
ંઽ સ્વાહા ચન્દ્રાય સ્વાહા સૂર્યાય સ્વાહા રશ્મિભ્યઃ સ્વાહા વસુભ્યઃ સ્વાહા રુદ્રેભ્યઃ
સ્વાહાદિત્યેભ્યઃ સ્વાહા મરુદ્ભ્યઃ સ્વાહા વિશ્વેભ્યો દેવેભ્યઃ સ્વાહા મૂલેભ્યઃ સ્વાહા
શાખાભ્યઃ સ્વાહા વનસ્પતિભ્યઃ સ્વાહા પુષ્પેભ્યઃ સ્વાહા ફલેભ્યઃ સ્વાહૌષધીભ્યઃ
સ્વાહા ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : મનુષ્ય નક્ષત્રેભ્યઃ-ક્ષીણ ન થનાર નક્ષત્રોને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ યજ્ઞ ક્રિયા, નક્ષત્રિયેભ્યઃ-
નક્ષત્ર સમૂહને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અહોરાત્રેભ્યઃ દિવસ અને રાત્રિને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અર્દ્દમાસેભ્યઃ
અર્ધમાસ - સુદ-વદ પક્ષોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, માસેભ્યઃ-મહિનાઓને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઋતુભ્યઃ-
વસંત આદિ છ ઋતુઓને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, આર્ત્તવેભ્યઃ-ઋતુઓમાં ઉત્પન્ન તેના પદાર્થોને માટે
સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સંવત્સરાય-વર્ષને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-પ્રકાશ અને ભૂમિને માટે
સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ચન્દ્રાય-ચન્દ્રલોકને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સૂર્યાય-સૂર્ય લોકને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા,
રશ્મિભ્યઃ-સૂર્યાદિના કિરણોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વસુભ્યઃ પૃથિવી આદિ લોકોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા
સ્ત્રેભ્યઃ-દશ પ્રાણોને માટે અથવા પ્રાણધારી જીવોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, આદિત્યેભ્યઃ-અવિનાશી
કાલના અવયવોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, મરુદ્ભ્યઃ-વાયુઓને માટે સ્વાહા-તેને અનુકૂળ ક્રિયા, વિશ્વેભ્યઃ-
સમસ્ત દેવેભ્યઃ-દિવ્યગુણોને માટે સ્વાહા-સુંદર ક્રિયા, મૂલેભ્યઃ-મૂળોને માટે સ્વાહા-તે અનુસાર ક્રિયા,
શાખાભ્યઃ-શાખાઓને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, વનસ્પતિભ્યઃ-વનસ્પતિઓને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા,
પુષ્પેભ્યઃ-ફૂલોને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ફલેભ્યઃ-ફળોને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા અને ઔષધિભ્યઃ-
ઔષધિઓને માટે સ્વાહા-નિત્ય ઉત્તમ ક્રિયા અવશ્ય કરવી જોઈએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પ્રતિદિન સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, તેને વાયુ અને કિરણો
દ્વારા વનસ્પતિ, ઔષધિ, મૂળ, શાખા, પુષ્પ અને ફળ આદિમાં પ્રવિષ્ટ કરાવીને સર્વ પદાર્થોની શુદ્ધિ
કરીને સ્વાસ્થ્યને પ્રાપ્ત કરે. (૨૮)

પૃથિવ્યૈ સ્વાહાન્તરિક્ષાય સ્વાહા દિવે સ્વાહા સૂર્યાય સ્વાહા ચન્દ્રાય સ્વાહા
નક્ષત્રેભ્યઃ સ્વાહાર્દ્દ્યઃ સ્વાહૌષધીભ્યઃ સ્વાહા વનસ્પતિભ્યઃ સ્વાહા પરિપ્લવેભ્યઃ
સ્વાહા ચરાચરેભ્યઃ સ્વાહા સરીસૃપેભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : જો મનુષ્ય પૃથિવ્યૈ-વિસ્તૃત ધરતીને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, અન્તરિક્ષાય-આકાશને

માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, દિવે-વિદ્યુત્ની શુદ્ધિ માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા સૂર્યાય-સૂર્યમંડળની ઉત્તમતાને માટે સ્વાહા-તદનુરૂપ યજ્ઞક્રિયા, ચન્દ્રાય-ચંદ્રમંડળને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, નક્ષત્રેભ્યઃ-અશ્વિની આદિ નક્ષત્રોની ઉત્તમતાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, અદ્ભ્યઃ-જલોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઓષધીભ્યઃ-વડ આદિ વૃક્ષોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વનસ્પતિભ્યઃ-વનસ્પતિઓને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા પરિપ્લવેભ્યઃ-ગતિશીલ તારાઓને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ચરાચરભ્યઃ-સ્થાવર જંગમ પદાર્થોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સરીસૃપેભ્યઃ-સર્પ આદિને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયાને સારી રીતે કરે તો, તેઓ સર્વને શુદ્ધ કરવામાં સમર્થ બને છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુગંધ આદિ દ્રવ્યોને પૃથિવી આદિમાં અગ્નિ દ્વારા ફેલાવીને, તેને વાયુ અને જળ દ્વારા ઔષધિઓમાં પ્રવિષ્ટ કરીને, સર્વને શુદ્ધ કરીને સર્વના આરોગ્યનું નિર્માણ કરે છે, તેઓ આયુની વૃદ્ધિ કરનારા હોય છે. (૨૯)

અસવે સ્વાહા વસવે સ્વાહા વિભુવે સ્વાહા વિવસ્વતે સ્વાહા ગણશ્રિયે સ્વાહા ગણપતયે સ્વાહાભિભુવે સ્વાહાધિપતયે સ્વાહા શૂષાય સ્વાહા સંસર્પાય સ્વાહા ચન્દ્રાય સ્વાહા જ્યોતિષે સ્વાહા મલિમ્લુચાય સ્વાહા દિવા પતયે સ્વાહા ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અસવે-પ્રાણોને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, વસવે-આ શરીરમાં વસનાર જીવને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વિભુવે-વ્યાપક વાયુને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, વિવસ્વતે-સૂર્યને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ગણશ્રિયે-સમૂહોની શોભા રૂપ વિદ્યુત્ને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ગણપતયે-પદાર્થોના સમૂહોના પાલક વાયુને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અભિભુવે-સન્મુખ રહેનાર અગ્નિને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, અધિપતયે-સર્વના સ્વામી રાજાને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, શૂષાય-બળ અને તીક્ષ્ણતાને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સંસર્પાય-સરકીને ચાલનાર જીવને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ચન્દ્રાય-સુવર્ણને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, જ્યોતિષે-જ્યોતિઃ અર્થાત્ સૂર્ય, ચંદ્ર અને તારાગણોના પ્રકાશને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, મલિમ્લુચાય-ચોરને માટે સ્વાહા-તેનો પ્રબંધ કરવાની ક્રિયા તથા દિવા, પતયે-દિવસના પાલક સૂર્યને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ યજ્ઞ ક્રિયાને સારી રીતે યુક્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણ આદિની શુદ્ધિ માટે અગ્નિમાં, પુષ્ટિકારક આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરવો જોઈએ. (૩૦)

મધવે સ્વાહા માધવાય સ્વાહા શુક્રાય સ્વાહા શુચયે સ્વાહા નભસે સ્વાહા નભસ્યાય સ્વાહેષાય સ્વાહોર્જાય સ્વાહા સહસે સ્વાહા સહસ્યાય સ્વાહા તપસે સ્વાહા તપસ્યાય સ્વાહાઽહસસ્પતયે સ્વાહા ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ મધવે-મધુર આદિ ગુણોના ઉત્પાદક ચૈત્ર માસને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, માધવાય-મધુરપણામાં ઉત્તમ વૈશાખને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, શુક્રાય-જલ આદિને પવનના વેગથી

નિર્મળ કરનાર જેઠને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, શુચયે-વર્ષાથી ભૂમિ આદિને પવિત્ર કરનાર અષાઢને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, નભસે-શ્રેષ્ઠ ઘટાટોપ વાદળાંનો ગડગડાટ સંભળાવનાર શ્રાવણને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, નભસ્યાય-આકાશમાં વર્ષાથી પ્રસિદ્ધ ભાદરવા માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઙ્ઘાય-અન્નના ઉત્પાદક આસોને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, ઋર્જાય-બળ અને અન્નના ઉત્પાદક વા બળયુક્ત અન્ન અર્થાત્ ક્યારામાં પાકેલા બાજરા આદિ અન્નને પકાવીને પુષ્ટ કરનાર કારતકને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સહસે-બળદાયક માગસરને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, સહસ્યાય-બળમાં શ્રેષ્ઠ પોષને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, તપસે-ઋતુ પરિવર્તનથી ધીરે-ધીરે ઠંડીની નિવૃત્તિ અને જીવોના શરીરમાં ગરમીની પ્રવૃત્તિ કરાવનાર મહા માસને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા, તપસ્યાય-જીવોના શરીરમાં ગરમીની પ્રવૃત્તિ કરાવનાર ઉત્તમ ફાગણ મહિનાને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયા અને અંહસસ્પતયે-મહિનાઓમાં શ્લિષ્ટ મળેલ, પાલક અધિક માસને માટે સ્વાહા-યજ્ઞક્રિયાનું અનુષ્ઠાન કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રતિદિન અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ અને યુક્ત આહાર-વિહાર કરે છે, તેઓ નીરોગી રહીને દીર્ઘાયુ પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૧)

વાજાય સ્વાહા પ્રસવાય સ્વાહાપિજાય સ્વાહા ક્રતવે સ્વાહા સ્વઃ સ્વાહા મૂર્ધ્ને
સ્વાહા વ્યશ્નુવિને સ્વાહાન્ત્યાય સ્વાહાન્ત્યાય ભૌવનાય સ્વાહા ભુવનસ્ય પતયે
સ્વાહાધિપતયે સ્વાહા પ્રજાપતયે સ્વાહા ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વાજાય-અન્નને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, પ્રસવાય-પદાર્થોની ઉત્પત્તિ કરનારને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, અપિજાય-ઘરને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા ક્રતવે-બુદ્ધિ વા કર્મને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, સ્વઃ-અત્યંત સુખને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, મૂર્ધ્ને-શિરની શુદ્ધિને માટે સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયા, વ્યશ્નુવિને-વ્યાપ્ત વીર્યને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, આન્ત્યાય-વ્યવહારોના અન્તમાં થનાર વ્યવહાર [અથવા અન્તમાં વિદ્યમાન ઈશ્વર]ને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, આન્ત્યાય-અન્તમાં વિદ્યમાન, ભૌવનાય-લોકરૂપમાં વિદ્યમાન પ્રકૃતિને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા, ભુવનસ્ય-સંસારના પતયે-પાલક સ્વામી-ઈશ્વરને માટે સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયા, અધિપતયે-સર્વના અધિષ્ઠાતા ઈશ્વરને માટે અર્થાત્ સર્વના શિક્ષા પ્રદાતાને માટે સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયા, પ્રજાપતયે-સર્વ પ્રજાના પાલક પુરુષને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાનો સારી રીતે સદા પ્રયોગ કરે. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અન્ન, સંતાન, ઘર, બુદ્ધિ અને મસ્તક આદિના શોધનથી સુખની વૃદ્ધિ માટે સત્ય ક્રિયા કરે છે, તેઓ પરમાત્માની ઉપાસના કરીને પ્રજાના અધિપતિ બને છે. (૩૨)

આયુર્યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા પ્રાણો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહાઽપાનો યજ્ઞેન
કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા વ્યાનો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહોદાનો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા
સમાનો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા ચક્ષુર્યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા શ્રોત્રં યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ

સ્વાહા વાગ્યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા મનો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહાઽઽત્મા યજ્ઞેન
કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા બ્રહ્મા યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા જ્યોતિર્યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા
સ્વૃર્યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા પૃષ્ઠં યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ સ્વાહા યજ્ઞો યજ્ઞેન કલ્પતાંશ્ચ
સ્વાહા ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે એવી કામના કરો કે, અમારી આયુઃ-આયુ સ્વાહા-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા-યજ્ઞ અને યજ્ઞેન-પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોનો સત્કાર, સંગ, કર્મ અને વિદ્યા આદિના દાનની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત્ હોય, પ્રાણઃ-જીવનનો મૂલ પ્રાણવાયુ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયા અને યજ્ઞેન-યોગાભ્યાસ આદિની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, અપાનઃ-દુઃખને દૂર કરનાર અપાન વાયુ સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયાથી યજ્ઞેન-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, વ્યાનઃ-સર્વ સંધિઓમાં વ્યાપ્ત અર્થાત્ શરીરની ચેષ્ટાનો નિમિત્ત વ્યાન વાયુ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, ઉદાનઃ-બળ આપનાર ઉદાનવાયુ સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયાથી યજ્ઞેન-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, સમાનઃ-રસને સમાન કરનાર સમાનવાયુ સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયાથી યજ્ઞેન-યજ્ઞની = શ્રેષ્ઠ કામની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય.

ચક્ષુઃ-નેત્ર સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન સત્કર્મની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, શ્રોત્રમ્-જ્ઞાનેન્દ્રિયના ઉપલક્ષણ કર્ણ સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયાથી યજ્ઞેન-સત્કર્મની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, વાક્-વાણી આદિ કર્મેન્દ્રિયો સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, મનઃ-અન્તઃકરણ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-સત્કર્મની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય.

આત્મા-જીવ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-સત્કર્મની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય. બ્રહ્મા-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-યજ્ઞ આદિ સત્કર્મની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય.

જ્યોતિઃ-જ્ઞાનનો પ્રકાશ સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-યજ્ઞની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય.

પૃષ્ઠમ્-પ્રશ્ન-જિજ્ઞાસા તથા જે શેષ રહેલ છે તે સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી યજ્ઞેન-યજ્ઞની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય.

યજ્ઞઃ-વ્યાપક પરમેશ્વર સ્વાહા-ઉત્તમક્રિયાથી યજ્ઞેન-પોતાની સાથે કલ્પતામ્-સમર્પિત હોય, એવી કામના છે. (૩૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જીવન પર્યન્ત શરીર, પ્રાણ, અન્તઃકરણ, ઈન્દ્રિયો અને સર્વોત્તમ સામગ્રી યજ્ઞને માટે સમર્પિત કરવી જોઈએ, જેથી તેઓ પાપરહિત અને કૃતકૃત્ય બનીને પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને લોક અને પરલોકમાં સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે. (૩૩)

एकस्मै स्वाहा द्वाभ्यांश्च स्वाहा शताय स्वाहैकशताय स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहा
स्वर्गाय स्वाहा ॥ ३४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **એકસ્મૈ**-એક અદ્વિતીય પરમાત્માને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયા, **દ્વાભ્યામ્**-બે અર્થાત્ કાર્ય અને કારણને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયા, **શતાય**-અસંખ્ય પદાર્થોને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયા, **એકશતાય**-એકસો એક પદાર્થો વા વ્યવહારોને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયા, **વ્યુષ્ટ્યૈ**-પ્રકાશિત થયેલા પદાર્થોની દાહ ક્રિયાને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયા અને **સ્વર્ગાય**-સુખ પ્રાપ્ત કરવા પુરુષાર્થને માટે **સ્વાહા**-સત્યક્રિયાનો પ્રયોગ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ભક્તિ વિશેષથી અદ્વિતીય ઈશ્વરને તથા પ્રેમ અને પુરુષાર્થથી અસંખ્ય જીવોને પ્રસન્ન કરવા જોઈએ, જેથી સાંસારિક અને મોક્ષ સંબંધી સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકે. (૩૪)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં વરુણ (૬), અગ્નિ (૧૬), વિદ્વાન્ (૨૧) રાજા-પ્રજા (૨૨), શિલ્પ (૧૯), વાણી (૨૦), ઘર (૩૨), અશ્વી (૧), ઋતુ (૩૧), હોતા (૩૩) આદિ ગુણોનાં વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ દ્વાવિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ત્રયોવિશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

હિરણ્યગર્ભઃ સર્મવર્ત્તાગ્રે ભૂતસ્ય જાતઃ પતિરેકઽઆસીત્ ।

સ દાધાર પૃથિવીં દ્યામુતેમાં કસ્મૈ દેવાય હ્રવિષા વિધેમ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ભૂતસ્ય-ઉત્પન્ન કાર્યરૂપ જગતના અગ્રે-પૂર્વ હિરણ્યગર્ભઃ-સૂર્ય, ચન્દ્ર, તારા આદિ જ્યોતિઓને ગર્ભમાં ધારણ કરનાર છે, તે સૂર્ય આદિ કારણરૂપ પદાર્થોમાં ગર્ભ સમાન વ્યાપક સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સર્મવર્ત્ત-સારી રીતે વિદ્યમાન અને આ જગતના એકઃ-એક-અદ્વિતીય ઈશ્વર જાતઃ-પ્રસિદ્ધ પતિઃ-સ્વામી આસીત્-છે.

સઃ-તે ઇમામ્-આ પૃથિવીમ્-વિસ્તીર્ણ ભૂમિ ઉત્-અને દ્યામ્-સૂર્ય આદિ સૃષ્ટિને રચીને તેને દાધાર-ત્રણેય કાળમાં ધારણ કરે છે; તે કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ દેવાય-સર્વ સુખોના દાતા પરમાત્માને માટે જેમ અમે હ્રવિષા-આત્મા આદિ સર્વ સ્વદાનથી તેની વિધેમ-સેવા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે સૃષ્ટિ પ્રલયને પ્રાપ્ત થઈને પ્રકૃતિ રૂપ બની જાય છે [પ્રકૃતિમાં સ્થિત બને છે] તથા ફરી ઉત્પન્ન [કાર્યરૂપ] બને છે, તેના પહેલાં જે એક પરમાત્મા જાગતા રહે છે, તે સમયે સર્વ જીવ મૂર્છિતની સમાન હોય છે. તે કલ્પ [મિત કાલ] કાલના અન્તમાં પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ અને પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય આદિ સૃષ્ટિને રચીને તથા ધારણ કરીને, સર્વને કર્માનુસાર જન્મ આપીને, સર્વના નિર્વાહ માટે સર્વ પદાર્થોની રચના કરે છે, તે જ સર્વના ઉપાસ્ય દેવ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧)

ઉપયામગૃહીતોઽસિ પ્રજાપતયે ત્વા જુષ્ટં ગૃહ્ણામ્યેષ તે યોનિઃ સૂર્યસ્તે મહિમા ।
યસ્તેઽહન્ત્સંવત્સરે મહિમા સમ્બભૂવ યસ્તે વાયાવન્તરિક્ષે મહિમા સમ્બભૂવ યસ્તે
દિવિ સૂર્યે મહિમા સમ્બભૂવ તસ્મૈ તે મહિમ્ને પ્રજાપતયે સ્વાહા દેવેભ્યઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ! જગદીશ્વર ! જે આપ ઉપયામગૃહીતઃ-યમ જે યોગાભ્યાસ સંબંધી કર્મો દ્વારા હૃદયાકાશમાં સાક્ષાત્ કરેલા અસિ-છો, તે જુષ્ટમ્-પ્રીતિ વા સેવાપૂર્વક ત્વા-આપને પ્રજાપતયે-પ્રજાના પાલક રાજાની રક્ષા માટે હું ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું.

જે તે-આપની ણ્ઃ-એ યોનિઃ-જગતનું કારણ = પ્રકૃતિ છે, જે તે-આપનું સૂર્યઃ-સૂર્યમંડળ મહિમા-મહિમા રૂપ છે, જે તે-આપના અહન્-દિવસ અને સંવત્સરે-વર્ષમાં નિયમ બંધન દ્વારા મહિમા-મહિમાવંત સમ્બભૂવ-સંભવિત છે, યઃ-જે તે-આપનો વાયૌ-વાયુ અને અન્તરિક્ષે-અન્તરિક્ષમાં મહિમા-મહિમા સમ્બભૂવ-પ્રસિદ્ધ છે, યઃ-જે તે-આપનો દિવિ-વિદ્યુત્ વા સૂર્યપ્રકાશ અને સૂર્યે-સૂર્યમાં મહિમા-મહિમા સમ્બભૂવ-પ્રત્યક્ષ છે, તસ્મૈ-તે મહિમ્ને મહિમા તથા પ્રજાપતયે-પ્રજાપાલક તે આપને માટે અને દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે સ્વાહા-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિને સર્વેએ ગ્રહણ કરવી જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરના મહિમાને આ સમસ્ત સંસાર પ્રકાશિત કરે છે, તેની ઉપાસનાને છોડીને કોઈ અન્યની અથવા તેના સ્થાને કોઈ અન્યની ઉપાસના ન કરવી જોઈએ.

જો કોઈ કહે કે, પરમેશ્વરની સત્તા-હોવામાં શું પ્રમાણ છે ? તો તેને એ ઉત્તર આપવો જોઈએ કે, આ જે સંસાર છે, તે સર્વ પરમેશ્વરને પ્રમાણિત કરી રહેલ છે. (૨)

યઃ પ્રાણતો નિમિષતો મહિત્વૈકઽદ્રાજા જગતો બભૂવ ।

યઽઈશૈઽઅસ્ય દ્વિપદ્શ્ચતુષ્પદઃ કસ્મૈ દેવાય હૃવિષા વિધેમ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે યઃ-જે એક-એક ઇત-જ મહિત્વા-પોતાના મહિમાથી નિમિષતઃ-નેત્ર આદિથી ચેષ્ટા કરનાર પ્રાણતઃ-પ્રાણીરૂપ, દ્વિપદઃ-બે પગા મનુષ્ય આદિ ચતુષ્પદઃ-ચોપગા ગાય આદિ અસ્ય-આ જગતઃ-સંસારના રાજા-અધિષ્ઠાતા બભૂવ-છે.

જે અસ્ય-આ સંસારના ઈશૈ-સર્વોપરી સ્વામી છે; તે કસ્મૈ-આનંદસ્વરૂપ દેવાય-કામના કરવા યોગ્ય ઈશ્વરની હૃવિષા-ભક્તિ વિશેષથી વિધેમ-સેવા કરીએ છીએ, તેમ વિશેષ ભક્તિ આપ પણ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એક જ સમસ્ત સંસારના મહારાજાધિરાજ, સંપૂર્ણ જગતના રચયિતા, સકળ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, મહાત્મા અને ન્યાયાધીશ છે, તેની ઉપાસનાથી ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષરૂપ ફળોને પ્રાપ્ત કરીને આપ સર્વ લોકો સંતુષ્ટ રહો. (૩)

ઉપયામગૃહીતોઽસિ પ્રજાપતયે ત્વા જુષ્ટં ગૃહ્ણામ્યેષ તે યોનિશ્ચન્દ્રમાસ્તે મહિમા । યસ્તે રાત્રૌ સંવત્સરે મહિમા સંમ્બભૂવ યસ્તૈ પૃથિવ્યામગ્નૌ મહિમા સંમ્બભૂવ યસ્તે નક્ષત્રેષુ ચન્દ્રમસિ મહિમા સંમ્બભૂવ તસ્મૈ તે મહિમ્ને પ્રજાપતયે દેવેભ્યઃ સ્વાહા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ ઉપયામગૃહીતઃ-સત્કર્મરૂપ અર્થાત્ યોગાભ્યાસ આદિ ઉત્તમ કામથી સ્વીકૃત અસિ-છો, તે ત્વા, જુષ્ટમ્-આપને સેવાપૂર્વક પ્રજાપતયે-પ્રજાપાલક રાજાની રક્ષા માટે હું ગૃહ્ણામિ-ગ્રહણ કરું છું.

જે તે-આપના સંસારમાં એષઃ-આ યોનિઃ જળ છે, જે તે-આપના સંસારમાં ચન્દ્રમાઃ-ચંદ્રલોક રૂપ મહિમા-મહિમા છે, જે તે-આપનો યઃ-જે રાત્રૌ-રાત્રિ અને સંવત્સરે-વર્ષમાં મહિમા-મહિમા સંમ્બભૂવ-છે, હતો અને થશે; જે તે-આપની સૃષ્ટિમાં પૃથિવ્યામ્-અન્તરિક્ષ અને ભૂમિમાં તથા અગ્નૌ-વિદ્યુત્માં મહિમા-મહિમા સંમ્બભૂવ-છે, હતો અને થશે; જે તે-આપની સૃષ્ટિમાં યઃ-જે નક્ષત્રેષુ-કારણરૂપથી નાશરહિત લોક-લોકાન્તરોમાં તથા ચન્દ્રમસિ-ચંદ્રલોકમાં મહિમા-મહિમા સંમ્બભૂવ-છે, હતો અને થશે; તે તે-આપનો તસ્મૈ-તે મહિમ્ને-મહિમા, પ્રજાપતયે-પ્રજાપાલક રાજા અને દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે સ્વાહા-સત્ય આચરણયુક્ત યજ્ઞ-ક્રિયાનું અમે અનુષ્ઠાન કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેના મહિમારૂપ સામર્થ્યથી સર્વ જગત્ વિરાજમાન છે, જેનો અનંત મહિમા છે, જેની સિદ્ધિમાં રચના-વિશેષ સર્વ જગત્ દંષ્ટાન્તરૂપ છે, તે જ ઈશ્વરની સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૪)

યુજ્જન્તિ બ્રહ્મનમરૂષં ચરન્તં પરિ તસ્થુષઃ । રોચન્તે રોચના દિવિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે પુરુષો પરિ-સર્વત્રથી તસ્થુષઃ-સ્થાવર પદાર્થોમાં ચરન્તમ્-વિદ્યુત્ની સમાન વિદ્યમાન અને પ્રાપ્ત, અસ્મમ્-જેમાં ઘાત થતા પ્રાણીઓનું શીઘ્ર મૃત્યુ થાય છે તે મર્મસ્થાનોની રક્ષા કરવા સ્થિત બ્રહ્મનમ્-મહાન સર્વોપરિ વિરાજમાન પરમાત્માને પોતાના આત્માની સાથે યુજ્જન્તિ-યુક્ત કરે છે, તેઓ દિવિ-સૂર્યમાં રહેલ રોચનાઃ-કિરણો અને પ્રકાશની સમાન રોચન્તે-પરમાત્મામાં પ્રકાશમાન બને છે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પ્રત્યેક બ્રહ્માંડમાં સૂર્ય પ્રકાશિત થાય છે, તેમ સમસ્ત સંસારમાં પરમાત્મા પ્રકાશિત થાય છે.

જો યોગાભ્યાસથી અન્તર્યામી પરમાત્માને પોતાના આત્મામાં યુક્ત કરે છે, તેઓ સર્વત્રથી પ્રકાશિત થાય છે. (૫)

યુજ્જન્ત્યસ્ય કામ્યા હરી વિપક્ષસા રથૈ । શોળા ધૃષ્ણૂ નૃવાહસા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ શિક્ષકજનો કામ્યા-કામના કરવા યોગ્ય, હરી-હરણશીલ વિપક્ષસા-વિવિધ પ્રકારોથી સારી રીતે ગ્રહણ કરેલ શોળા-લાલ રંગથી યુક્ત ધૃષ્ણૂ-અતિ પુષ્ટ નૃવાહસા-નરોના વાહક બે ઘોડાને રથે-યાનમાં - રથમાં યુજ્જન્તિ-જોડે છે; તેમ યોગીજનો અસ્ય-એ પરમેશ્વર વા જીવના મધ્યમાં ઈન્દ્રિયો, મન અને પ્રાણોને યુક્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી યુક્ત યાન દ્વારા બીજા સ્થાનમાં શીઘ્ર ગતિ કરે છે, તેમજ વિદ્યા, સત્સંગ અને યોગાભ્યાસથી પરમાત્માને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

યદ્વાતોઽઅપોઽઅગનીગન્પ્રિયામિન્દ્રસ્ય તન્વમ્ ।

એતંઽસ્તોતરનેન પથા પુનરશ્વમાર્વર્તયાસિ નઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સ્તોતઃ-સ્તુતિ કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ શિલ્પી લોકો ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્ના પ્રિયામ્-અતિ સુંદર તન્વમ્-વિસ્તૃત શરીરને વાતઃ-વાયુની સમાન પ્રાપ્ત કરીને યત્-જે કલાયંત્રથી યુક્ત ઘોડાઓ તથા અપઃ-જલોને અગનીગન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ એતમ્-એ અશ્વમ્-શીઘ્રગામી કલાયંત્રરૂપ ઘોડાઓને અનેન-ઉક્ત વિદ્યુત્રૂપ પથા-માર્ગથી આપ પ્રાપ્ત કરીને પુનઃ-ફરી નઃ-અમને આ-વર્તયાસિ-સારી રીતે ભ્રમણ કરાવે છે, તે આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમને સન્માર્ગથી લઈ જાય છે, તેના સંગથી તમે વાયુ અને વિદ્યુત્

આદિની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

વસવસ્ત્વાઞ્જન્તુ ગાયત્રેણ છન્દસા રુદ્રાસ્ત્વાઞ્જન્તુ ત્રૈષ્ટુભેન છન્દસા-
દિત્યાસ્ત્વાઞ્જન્તુ જાગતેન છન્દસા । ભૂર્ભુવઃ સ્વૃર્લાજીઝ્ઞાચીઝ્ન્યવ્યે
ગવ્યઽપ્તદન્નમત્ત દેવાઽપ્તદન્નમદ્ધિ પ્રજાપતે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાપતે-પ્રજાના રક્ષક રાજન્ ! વસવઃ-પ્રથમ કક્ષાના વિદ્યાન્ ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છન્દસા-
છંદથી પ્રતિપાદિત અર્થના દ્વારા ત્વામ્-આપની અઞ્જન્તુ-કામના કરે; સ્દાઃ-મધ્યમ કક્ષાના વિદ્યાન્ ત્રૈષ્ટુભેન-
ત્રિષ્ટુપ છન્દસા-છંદથી પ્રકાશિત અર્થ દ્વારા ત્વા-આપની અઞ્જન્તુ-કામના કરે; આદિત્યાઃ-ઉત્તમ કક્ષાના
વિદ્યાન્ જાગતેન-જગતી છન્દસા-છંદથી પ્રકાશિત સ્વચ્છંદ અર્થ દ્વારા ત્વા-આપની અઞ્જન્તુ-કામના કરે;
તે આપ એતત્-એ અન્નમ્-અન્નને અદ્ધિ-આરોગો.

હે દેવાઃ-વિદ્યાનો ! તમે યવ્યે-જવનાં ખેતરમાં ઉત્પન્ન અન્ન અને ગવ્યે-ગાયનાં દૂધ, દહીં આદિ
ઉત્તમ પદાર્થોમાં મિશ્ર કરીને એતત્-એ અન્નમ્-અન્નને અત્ત-આરોગો.

લાજીન્-પોત-પોતાની કક્ષામાં ધૂમનારા શાચીન્-પ્રકટ ભૂઃ-આ પ્રત્યક્ષ-ભૂલોક, ભુવઃ-અન્તરિક્ષસ્થ
લોક અને સ્વઃ-પ્રકાશમાં સ્થિર સૂર્યાદિ લોકોને પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાનો સાંગોપાંગ-અંગો-ઉપાંગો સહિત ચારેય વેદો મનુષ્યોને ભણાવે છે, તેઓ
ધન્યવાદને યોગ્ય બને છે. (૮)

કઃ સ્વિદેકાકી ચરતિ કઽઽ સ્વિજાયતે પુનઃ ।

કિઽઽસ્વિદ્ધિમસ્ય ભેષજં કિમ્વાવપનં મહત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાનો ! અમે તમને પૂછીએ છીએ કે, કઃ સ્વિત્-કોણ એકલો વિચરે છે ? ક-અને
કઃ સ્વિત્-કોણ પુનઃ-વારંવાર જાયતે-પ્રકટ - ઉત્પન્ન થાય છે ? હિમસ્ય-શીતનું ભેજષમ્-ઔષધ કિમ્-
સ્વિત્-કયું ? અને મહત્-મહાન - વિસ્તૃત આવપનમ્-બીજ વાવવાનું સ્થાન કિમ્-કયું ?

ભાવાર્થ : આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં કહેલ છે તેમ જાણવું જોઈએ. મનુષ્યોએ આમ
પ્રશ્નો કરવા જોઈએ. (૯)

સૂર્યઽપ્તકાકી ચરતિ ચન્દ્રમા જાયતે પુનઃ ।

અગ્નિર્હિમસ્ય ભેષજં ભૂમિરાવપનં મહત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! સૂર્યઃ-સૂર્ય એકાકી-કોઈની સહાય વિના પોતાની કક્ષામાં એકલો
ચરતિ-વિચરે છે, પુનઃ-ફરી એ સૂર્યના પ્રકાશથી ચન્દ્રમાઃ-ચંદ્રલોક પ્રકાશિત જાયતે-થાય છે, અગ્નિઃ-

અગ્નિ હિમસ્ય-શીતનું ભેષજમ્-ઔષધ છે, ભૂમિ:-ભૂમિ મહત્-મહાન આવપનમ્-બીજ વાવવાનું ક્ષેત્ર-સ્થાન છે, તેમ તમે જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સૂર્ય પોતાનાં આકર્ષણથી પોતાની કક્ષામાં રહે છે, તેના પ્રકાશ દ્વારા ચન્દ્રમા આદિ લોકો પ્રકાશિત થાય છે. અગ્નિની સમાન શીત નિવારક વસ્તુ અને પૃથિવી-ભૂમિની સમાન મહાન ક્ષેત્ર અન્ય કોઈ નથી, તેમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૧૦)

કા સ્વિદાસીત્પૂર્વચિત્તિઃ કિંચ્ચસ્વિદાસીદ્ બૃહદ્વયઃ ।

કા સ્વિદાસીત્પિલિપ્પિલા કા સ્વિદાસીત્પિશઙ્ગિલા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! અમે તમને પૂછીએ છીએ કે, કા, સ્વિત્-કોણ પૂર્વચિત્તિઃ-પ્રથમ સ્મૃતિનો વિષય આસીત્-છે ? કિમ્, સ્વિત્-કોણ બૃહત્-મહાન વયઃ-ઉડનાર પક્ષી આસીત્-છે ? કા, સ્વિત્-કોણ પિલિપ્પિલા-વર્ષાથી ભીની, ચીકણી અને શોભાયમાન્ વસ્તુ આસીત્-તથા સ્વીત્-કોણ પિશઙ્ગિલા-પ્રકાશને ગળી જનાર વસ્તુ આસીત્ છે ?

ભાવાર્થ : આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં છે. જો કોઈ વિદ્વાનોને પ્રશ્નો ન કરે તો વિદ્વાન બની શકતા નથી. (૧૧)

દ્વૌરાસીત્પૂર્વચિત્તિરશ્વઽઆસીદ્ બૃહદ્વયઃ ।

અવિરાસીત્પિલિપ્પિલા રાત્રિરાસીત્પિશઙ્ગિલા ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ જનો ! પૂર્વચિત્તિઃ-પ્રથમ સ્મૃતિનો વિષય દ્વૌઃ-દિવ્ય ગુણ પ્રદાન કરનારી વર્ષા આસીત્-છે; બૃહત્-મહાન વયઃ-ગતિ કરનાર -ઉડનાર અશ્વઃ-અને માર્ગોને વ્યાપ્ત કરનાર પક્ષીની સમાન અગ્નિ આસીત્-છે; પિલિપ્પિલા-વર્ષાથી ભીની, ચીકણી અને શોભાયમાન અવિઃ-અન્નાદિથી રક્ષા આદિ ઉત્તમ ગુણ પ્રકટ કરનારી પૃથિવી આસીત્-છે અને પિશઙ્ગિલા-પ્રકાશને ગળી જનાર અર્થાત્ અંધકાર કરનારી રાત્રિઃ-રાત્રિ આસીત્-છે; એમ તમે જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હવન અને સૂર્ય આદિની અગ્નિના તાપથી સર્વગુણોથી સંપન્ન, અન્ન આદિ દ્વારા સંસારની સ્થિતિની નિમિત્તભૂતા વર્ષા હોય છે, તેથી ભૂમિ સર્વ રત્નોથી સંપન્ન બને છે, સૂર્ય રૂપી અગ્નિના કારણે જ પ્રાણીઓને સૂવા માટે રાત્રિ હોય છે. (૧૨)

વાયુષ્ટ્વા પચતૈરવત્વસિંતગ્રીવશ્છાગૈર્ન્યગ્રોધશ્ચમસૈઃ શલ્મલિર્વૃદ્ધ્યા । ણ્ણ સ્ય રાશ્યો વૃષા ષ્ઙ્ભિશ્ચતુર્ભિરેદગન્બ્રહ્માકૃષ્ણશ્ચ નોઽવતુ નમોઽગ્નયૈ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! પચતૈઃ-પરિપાક રૂપ પરિણામોથી વાયુઃ-સ્થૂલ કાર્ય રૂપ વાયુ; છાગૈઃ-કાપવાની ક્રિયાઓથી અસિંતગ્રીવઃ-કાળી ચોટલીવાળો અગ્નિ, ચમસૈઃ-વાદળોથી ન્યગ્રોધઃ-વડ વૃક્ષ વૃદ્ધ્યા-વૃદ્ધિની

સાથે શલ્મલિઃ-શીમળાનું વૃક્ષ ત્વા-તારું અવતુ-પાલન - રક્ષણ કરે.

જે ઈષઃ-એ રાથ્યઃ-માર્ગોમાં ચાલવામાં કુશળ વૃષા-સુખોની વર્ષા કરનાર સ્યઃ-તે ચતુર્ભિઃ-ચાર ઘડ્ઙ્ઙિઃ-છ પગોથી ઇત્-જ ત્વા-તને આ + અગન્-પ્રાપ્ત થાય.

જે અકૃષ્ણઃ-અવિદ્યારૂપ અંધકારથી રહિત બ્રહ્મા-ચારે વેદોના ઉત્તમ વિદ્વાન છે તે નઃ-અમને સર્વ ગુણોમાં અવતુ-પ્રવિષ્ટ કરે, તે અગ્નયે-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાનને માટે નમઃ-અન્ન આપવું જોઈએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! વાયુ પ્રાણના દ્વારા, અગ્નિ પાચનના દ્વારા, સૂર્ય વર્ષાના દ્વારા, વૃક્ષ ફળ આદિના દ્વારા, ઘોડા આદિ ગતિ દ્વારા અને વિદ્વાન લોકો શિક્ષણથી તમારી રક્ષા કરે છે, તેને તમે જાણો અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરો. (૧૩)

સંશિતો રશ્મિના રથઃ સંશિતો રશ્મિના હ્યઃ ।

સંશિતો અપ્સુસુજા બ્રહ્મા સોમપુરોગવઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યોથી રશ્મિના-કિરણ સમૂહથી રથઃ-આનંદનું સાધન યાન-રથને સંશિતઃ-સારી રીતે સૂક્ષ્મ કારીગરી બનાવેલી રશ્મિના-લગામની દોરી આદિથી હ્યઃ-ઘોડા સંશિતઃ-સારી રીતે ચાલે છે, અપ્સુ-પ્રાણોમાં અપ્સુજાઃ-જે પ્રાણવાયુરૂપ સંચાર કરનાર પવન વા વરાળ સોમ પુરોગવઃ-ઔષધિગણનો બોધ અને ઐશ્વર્યનો યોગ જેથી પ્રથમ પ્રાપ્ત થનાર છે તે બ્રહ્મા-મહાન યોગી વિદ્વાનને સંશિતઃ-અતિ પ્રશંસિત કરવામાં આવે તો કયું સુખ ન મળે ? (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પદાર્થ વિજ્ઞાનથી વિદ્વાન બને છે, તેઓ અન્યોને વિદ્વાન બનાવીને પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરે. (૧૪)

સ્વયં વાજિસ્ત્નં વૃં કલ્પયસ્વ સ્વયં યજસ્વ સ્વયં જુષસ્વ ।

મહિમા તેડન્યેન ન સન્નશે ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-જિજ્ઞાસુ ! તું સ્વયમ્-તારા પોતાનાં તન્વમ્-શરીરને કલ્પયસ્વ-સમર્થ બનાવ, સ્વયમ્-સ્વયં ઉત્તમ વિદ્વાનોનો યજસ્વ-સંગ કર અને સ્વયમ્-સ્વયં તેની જુષસ્વ-સેવા કર, જેથી તે-તારી મહિમા-મહિમા અને પ્રતાપ અન્યેન-બીજાની સાથે ન-સન્નશે-નષ્ટ ન થાય. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ સ્વયં પ્રકાશરૂપ, સંગત અને સેવા કરનાર છે, તેમ જિજ્ઞાસુ સ્વયં પુરુષાર્થ યુક્ત હોય છે, તેનો મહિમા કદી નાશ થતો નથી. (૧૫)

ન વાડડૅતન્મિયસે ન રિષ્યસિ દેવાંર ડૅદૅષિ પૅથિભિઃ સુગેભિઃ ।

યત્રાસંતે સુકૃતો યત્ર તે યયુસ્તત્ર ત્વા દેવઃ સંવિતા દધાતુ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! યત્ર-જ્યાં તે-તે યોગી વિદ્વાન્ સુકૃતઃ-ધર્માત્મા આસતે-બેસે છે અને સુખને યયુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે.

યત્ર-જ્યાં સુગોભિઃ-સુગમ પથિભિઃ-માર્ગોથી તું દેવાન્-દિવ્ય શ્રેષ્ઠ ગુણો વા વિદ્વાનોને એષિ-પ્રાપ્ત કરે છે.

યત્ર-જ્યાં એતત્, ડ-પૂર્વોક્ત સર્વ છે અને જ્યાં સ્થિત થઈને તું ન-મ્નિયસે-મરતો નથી અને ન, વૈ, રિષ્યસિ-અન્યોનો નાશ કરતો નથી, તત્ર-ત્યાં ઇત્-જ ત્વા-તને સવિતા-સકળ જગતના ઉત્પાદક દેવઃ-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમેશ્વર દધાતુ-ધારણ અર્થાત્ સ્થાપન કરે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો પોતાના સ્વરૂપને જાણી લે, તો તેઓ અવિનાશીપણાને જાણી શકે. જો તેઓ ધર્મયુક્ત માર્ગથી ચાલે, તો ધર્માત્માઓના - પુણ્યકર્મ - કર્તાઓના આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. જો પરમાત્માની સેવા-ઉપાસના કરે, તો સત્ય માર્ગમાં જીવોને સ્થાપિત કરી શકે. (૧૬)

અગ્નિઃ પશુરાંસીત્તેનાયજન્ત્ સડ્દત્તં લોકમજયદ્વાસ્મિન્નગ્નિઃ સ તે લોકો ભવિષ્યતિ તં જૈષ્યસિ પિબૈતાડઅપઃ । વાયુઃ પશુરાંસીત્તેનાયજન્ત્ સડ્દત્તં લોકમજયદ્વાસ્મિન્વાયુઃ સ તે લોકો ભવિષ્યતિ તં જૈષ્યસિ પિબૈતાડઅપઃ । સૂર્યઃ પશુરાંસીત્તેનાયજન્ત્ સડ્દત્તં લોકમજયદ્વાસ્મિન્ત્સૂર્યઃ સ તે લોકો ભવિષ્યતિ તં જૈષ્યસિ પિબૈતાડઅપઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! યસ્મિન્-જે લોકમાં સઃ-તે અગ્નિઃ-અગ્નિ પશુઃ-જોવા યોગ્ય આસીત્-છે, તેન-તેનાથી યજમાન અયજન્ત-યજ કરે છે, તે રીતે તું યજ કર. જેમ સઃ-તે વિદ્વાન એતમ્-એ લોકમ્-દર્શનીય લોકોને અજયત્-જીતે છે, તેમ તું એને જીત. જો તમ્-તેને જૈષ્યસિ-જીતશે તો તે અગ્નિઃ-અગ્નિ તે-તારા લોકઃ-દર્શન યોગ્ય ભવિષ્યતિ-થશે. એથી તું એતાઃ-એ યજથી શુદ્ધ કરેલા અપઃ-જળનું પિબ-પાન કર.

યસ્મિન્-જે લોકમાં સઃ-તે વાયુઃ-વાયુ પશુઃ-જોવા યોગ્ય આસીત્-છે, તેન-તેથી યજમાન અયજન્ત-યજ કરે છે, તેન-તેનાથી તું યજ કર. જેમ સઃ-તે વિદ્વાન્ એતમ્-એ વાયુમંડળમાં રહેવાને લોકમ્-દર્શનીય લોકને અજયત્-જીતે છે, તેમ તું જીત. જો તમ્-તેને જૈષ્યસિ-જીતશે તો તે વાયુઃ-વાયુ તે-તારા લોકઃ-દર્શનીય ભવિષ્યતિ-બની જશે, એથી તું એતાઃ-એ અપઃ-યજથી શુદ્ધ કરેલા પ્રાણરૂપી વાયુનું પિબ-પાન કર.

યસ્મિન્-જે લોકમાં સઃ-તે સૂર્યઃ-સૂર્યમંડળ પશુઃ-જોવા યોગ્ય આસીત્-છે તેન-તેથી યજમાન અયજન્ત-યજ કરે છે, જેમ સઃ-તે વિદ્વાન્ એતમ્-એ સૂર્યમંડળમાં અધિષ્ઠિત લોકમ્-લોકને અજયત્-જીતે છે, તેમ તું જીત. જો તું તમ્-તેને જૈષ્યસિ-જીતીશ તો સઃ-તે સૂર્યઃ-સૂર્યમંડળ તે તારા લોકઃ-દર્શનીય ભવિષ્યતિ-બની જશે, એથી તું એતાઃ-યજથી શુદ્ધ કરેલા અપઃ-સંસારમાં વ્યાપ્ત સૂર્યપ્રકાશોનું પિબ-

પાન કર. અર્થાત્ ગ્રહણ કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! સર્વ યજ્ઞોમાં અગ્નિ આદિને જ સર્વ લોકોએ પશુ નામથી જાણવા જોઈએ. યજ્ઞમાં પ્રાણીઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ. તેમજ યજ્ઞમાં તે પ્રાણીઓ હોમવા યોગ્ય નથી. જે આ રીતે જાણીને સુગંધિત આદિ પદાર્થોને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને અગ્નિમાં હોમે છે, [ત્યારે તે પદાર્થો] વાયુ અને સૂર્યને પ્રાપ્ત થઈને, વર્ષા દ્વારા ત્યાંથી પાછા ફરીને, ઔષધિ, પ્રાણ, શરીર અને બુદ્ધિને ક્રમથી પ્રાપ્ત થઈને સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરે છે. આ યજ્ઞ કર્મને કરનારા લોકો પુણ્યના મહત્ત્વથી -કારણે પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને મહિમાવાળા અર્થાત્ પૂજ્ય કે સત્કાર યોગ્ય બની જાય છે. (૧૭)

પ્રાણાય સ્વાહાપાનાય સ્વાહા વ્યાનાય સ્વાહા । અમ્બેઽઅમ્બિકેઽમ્બાલિકે ન માં નયતિ કશ્ચન । સસસ્ત્યશ્વકઃ સુભદ્રિકાં કામ્પીલવાસિનીમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે અમ્બે-માતા ! અમ્બિકે-દાદી ! અમ્બાલિકે-પરદાદી ! કશ્ચન-કોઈ અશ્વકઃ-ઘોડાની સમાન શીઘ્રગામી મનુષ્ય જે કામ્પીલવાસિનીમ્-સુખને પ્રાપ્ત કરનારા મનુષ્યને વસાવનારી સુભદ્રિકામ્-અત્યંત કલ્યાણકારી લક્ષ્મીને ગ્રહણ કરીને સસસ્તિ-સૂએ છે; આળસુ બની જાય છે. તે મા-મને ન નયતિ-વશમાં રાખતી નથી. તેથી હું પ્રાણાય-પ્રાણનાં પોષણને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી, અપાનાય-દુઃખ દૂર કરવા માટે સ્વાહા-સુશિક્ષિત વાણી, વ્યાનાય-સર્વ શરીરમાં વ્યાપ્ત થનાર પોતાના આત્માને માટે સ્વાહા-સત્ય વાણી યુક્ત-ભાષણ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ માતા, દાદી અને પરદાદી પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ તમારે પણ પોતાના સંતાનોને શિક્ષિત કરવા જોઈએ.

ધનનો એ સ્વભાવ છે કે, જ્યાં તે સંચય પામે છે - એકત્ર થાય છે, ત્યાં તે લોકોને નિદ્રાળુ, આળસુ અને નકામા-કર્મહીન બનાવી દે છે, તેથી ધન પ્રાપ્ત કરીને પણ પુરુષાર્થ જ કરવો જોઈએ. (૧૮)

ગુણાનાં ત્વા ગુણપતિશ્ચ હવામહે પ્રિયાણાં ત્વા પ્રિયપતિશ્ચ હવામહે નિધીનાં ત્વા નિધિપતિશ્ચ હવામહે વસો મમ । આહર્મજાનિ ગર્ભધમા ત્વર્મજાસિ ગર્ભધમ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! અમે ગણાનામ્-ગણોની મધ્ય ગુણપતિમ્-ગણોના પાલક ત્વા-આપનો હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. પ્રિયાણામ્-અતિ સુંદર પ્રિયજનોની મધ્ય પ્રિયપતિમ્-અતિ સુંદર પ્રિયપતિ અર્થાત્ પાલક ત્વા-આપની હવામહે-પ્રશંસા કરીએ છીએ, નિધીનામ્-વિદ્યા આદિ પદાર્થોની પુષ્ટિ કરનારાઓની મધ્ય નિધિપતિમ્-વિદ્યા આદિ પદાર્થોના રક્ષક ત્વા-આપનો હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ.

હે વસો-સર્વ ભૂતોમાં વાસ-સ્થાન પરમાત્મન ! આપ મમ-મારા ન્યાયાધીશ બનો જે ગર્ભધમ્-ગર્ભની સમાન સંસારને ધારણ કરનારી પ્રકૃતિને ધારણ કરનાર ત્વમ્-આપ આ, અજાસિ-જન્મ આદિ દોષ રહિત સારી રીતે પ્રાપ્ત થાવ છો, તે ગર્ભધમ્-પ્રકૃતિના ધારણકર્તા આપને અહમ્-હું આ, અજાનિ-

સારી રીતે જાણું. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વ જગતના રક્ષક, ઈષ્ટ પદાર્થોના વિધાન કર્તા, ઐશ્વર્યોના પ્રદાતા, પ્રકૃતિના સ્વામી અને સર્વ બીજોને પ્રકટ કરનાર છે, તે જગદીશ્વરની સર્વ લોકો ઉપાસના કરે. (૧૯)

તાડ્ઙ્ઙમૌ ચતુરઃ પદઃ સમ્પ્રસારયાવ સ્વર્ગે લોકે

પ્રોર્ણુવાથાં વૃષાં વાજી રેતાધા રેતો દધાતુ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : તાડ્ઙ્ઙમૌ-હે રાજા અને પ્રજાજનો ! તમે **ઉમૌ**-બન્ને **તૌ**-રાજા અને પ્રજા - જેમ **સ્વર્ગે**-સુખમય **લોકે**-જોવા યોગ્ય વ્યવહાર વા પદાર્થમાં **ચતુરઃ**-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એ ચારેય **પદઃ**-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો છે તેને **પ્રોર્ણુવાથામ્**-પ્રાપ્ત કરો, તેમ એનો અમે અધ્યાપક અને ઉપદેશક બન્ને **સમ્પ્રસારયાવ**-વિસ્તાર કરીએ.

જેમ **રેતોધાઃ**-આલિંગન અર્થાત્ બીજાને મળીને ધારણ કરનાર, **વૃષા**-દુષ્ટોના સામર્થ્યના બંધક અર્થાત્ તેની શક્તિને રોકનાર, **વાજી**-વિજ્ઞાનવાન રાજા, પ્રજામાં **રેતઃ**-પોતાના પરાક્રમને સ્થાપિત કરે તેમ પ્રજા પણ રાજામાં પરાક્રમને **દધાતુ**-સ્થાપિત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને પ્રજા પિતા અને પુત્ર સમાન વર્તાવ કરે, તો ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ રૂપ ફલોની સિદ્ધિને યથાવત્ પ્રાપ્ત થાય.

જેમ રાજા પ્રજાઓનાં સુખ તથા બળની વૃદ્ધિ કરે, તેમ પ્રજાઓ પણ રાજાનાં સુખ અને બળની વૃદ્ધિ કરે. (૨૦)

ઉત્સવ્થ્યાઽઅવ ગુદં ધેહિ સમ્ઙ્ઙિં ચારયા વૃષન્ ।

ય સ્ત્રીણાં જીવભોજનઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે **વૃષન્**-શક્તિમાન રાજન્ **યઃ**-જે **સ્ત્રીણામ્**-સ્ત્રીઓના **જીવભોજનઃ**-પ્રાણોનું ભક્ષણ કરનાર અર્થાત્ વ્યભિચારી પુરુષ વા વ્યભિચારિણી સ્ત્રી હોય, તે પુરુષ અને સ્ત્રીને પકડીને-બાંધીને **ઉત્સવ્થ્યાઃ**-ઉપર પગ અને નીચે માથું રાખી ફટકારીને, પોતાની પ્રજામાં **ગુદમ્**-વિષય કીડાને **અવ**, **ધેહિ**-સમાપ્ત કર અર્થાત્ ઉત્તમ સુખને ધારણ કર અને **અઙ્ઙિમ્**-પ્રસિદ્ધ ન્યાયનો **સમ + ચારય**-સંચાર કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જે વિષયસેવનમાં ખેલનાર પુરુષ વા સ્ત્રીઓ વ્યભિચારને વધારે છે, તે પુરુષો અને સ્ત્રીઓને તીવ્ર દંડ આપીને શાસન કર. (૨૧)

યુકાસકૌ શકુન્તિકાહલગિતિ વઙ્ચતિ ।

આહન્તિ ગુભે પસો નિર્ગલ્ગલીતિ ધારકા ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : જે **ગુભે**-પ્રજામાં રાજા **પસઃ**-રાજ્યની રક્ષા કરતો નથી, તે **ધારકા**-સુખને ધારણ કરનારી પ્રજા **નિર્ગલ્ગલીતિ**-નિરંતર સુખથી અત્યંત ક્ષીણ થતી જાય છે; કારણ કે **યુકા**-જે **અસકૌ**-તે પ્રજા

શકુન્તિકા-નાની ચકલીની સમાન નિર્બળ બની જાય છે. તેથી તે પ્રજાનો આહલક્-સર્વથી ખેતી કરેલી અર્થાત્ હળ ખેડેલી જમીન પર કર લેનાર રાજા ઇતિ-એવી રીતે વચ્ચતીતિ-ઠગે છે. અર્થાત્ રાજા એ રીતે કર-ધન લે કે જેથી પ્રજાને સુખ પ્રાપ્ત થાય. (૨૨)

ભાવાર્થ : જો રાજા ન્યાયપૂર્વક પ્રજાની રક્ષા ન કરે અને પ્રજા પાસેથી કર લે, તો પ્રજા ક્રમશઃ ક્ષીણ બનતી જાય છે અને રાજા પણ નાશ પામે છે.

જો રાજા વિદ્યા અને વિનયથી પ્રજાનું સારી રીતે રક્ષણ કરે, તો રાજા અને પ્રજાની સર્વત્ર ઉન્નતિ થાય છે. (૨૨)

યક્રોઽસકૌ શકુન્તકઽઆહલગિતિ વચ્ચતિ ।

વિવક્ષતઽઙ્ગવ તે મુખમધ્વર્યો મા નસ્ત્વમભિભાષથાઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે અધ્વર્યો-યજ્ઞની સમાન શ્રેષ્ઠ આચરણ કરનાર રાજાન્ ! ત્વમ્-તું નઃ-અમારી સામે મા, અમિભાષથાઃ-અસત્ય ન બોલ, વિવક્ષતઃ-મિથ્યા ભાષણ કરનારની સમાન તે-તારું મુખમ્-મુખ મા-ન ચાલે. જો એ રીતે ચક્રઃ-જો અસકૌ-તે રાજા કરશે શકુન્તકઃ-નિર્બળ પક્ષીની સમાન તે રાજા આહલક્-સર્વત્રથી હળ ચલાવેલ ખેતરની ઇતિ-સમાન ન વચ્ચતિ-પ્રજાથી વંચિત બનતો નથી. (૨૩)

ભાવાર્થ : રાજા કદી અસત્ય પ્રતિજ્ઞા અને કઠોર વચન બોલનાર ન હોવો જોઈએ તથા કોઈને ઠગે નહિ. જો રાજા અન્યાય કરે, તો સ્વયં પણ પ્રજા દ્વારા વંચિત બની અને ઠગાશે. (૨૩)

માતા ચ તે પિતા ચ તેઽગ્રૈ વૃક્ષસ્ય રોહતઃ ।

પ્રતિલામીતિ તે પિતા ગૃભે મુષ્ટિમતઃસયત્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે રાજાન્ ! જો તે-આપની માતા-પૃથિવીની સમાન સહનશીલ માન કરનારી માતા, ચ-અને તે-આપના પિતા-સૂર્ય સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત પાલક પિતા ચ-પણ વૃક્ષસ્ય-છેદન કરવા યોગ્ય સંસાર રૂપ વૃક્ષ રાજ્યની અગ્રમ્-મુખ્ય શ્રી શોભા વા લક્ષ્મી પર રોહતઃ-આરૂઢ થાય છે - પ્રાપ્ત કરે છે.

તે-આપના પિતા-પિતા ગૃભે-પ્રજામાં મુષ્ટિમ્-મુટ્ટીથી ધનને ગ્રહણ કરનાર રાજ્યને, ધન લઈને અતંસયત્-પ્રકાશિત કરે-અલંકૃત કરે તો હું ઇતિ-એ રીતે પ્રજાજન પણ પ્ર, તિલામિ-સારી રીતે પ્રેમ કરું. (૨૪)

ભાવાર્થ : જો [રાજા અને રાણીરૂપ] માતા-પિતા પૃથિવી અને સૂર્ય સમાન ધૈર્ય અને વિદ્યાથી પ્રકાશિત થઈને, ન્યાયથી રાજ્યનું પાલન કરીને, ઉત્તમ લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાને સુભૂષિત કરીને તથા પોતાના પુત્રને રાજનીતિથી સંપન્ન બનાવે, તે બન્ને રાજ્ય કરી શકે છે. (૨૪)

માતા ચ તે પિતા ચ તેઽગ્રૈ વૃક્ષસ્ય ક્રીડતઃ ।

વિવક્ષતઽઙ્ગવ તે મુખં બ્રહ્મન્મા ત્વં વંદો બહુ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મન્-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્મન્ ! જે તે-આપની માતા-પૃથિવી સમાન માતા ચ-

અને જે તે-આપના પિતા-સૂર્ય સમાન પિતા ચ-પણ વૃક્ષસ્ય-સંસાર રૂપ રાજ્યના મધ્યમાં અગ્રે-વિદ્યા અને રાજ્યની શોભામાં ક્રીડતઃ-વિહાર કરે છે; તે-આપના વિવક્ષત ઇવ-બહુ બોલવાને ઈચ્છુક પુરુષનાં મુખની સમાન મુખમ્-મુખ છે, તેથી ત્વમ્-તું બહુ-મા વદઃ-બહુ બોલ નહીં.

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા સુશીલ, ધર્માત્મા, શ્રીમાન અને કુલીન હોય છે, તેના દ્વારા શિક્ષિત પુત્ર મિતભાષી-ઓછું બોલનાર બનીને યશ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

ઋર્ધ્વામૈનામુચ્છ્રાપય ગિરૌ ભારઃ હરન્નિવ ।

અર્થાસ્યૈ મધ્યમેધતાશ્ચ શીતે વાતૈ પુનન્નિવ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું ગિરૌ-પર્વત પર ભારમ્-ભારને હસ્-પહોંચાડનાર પુરુષની ઇવ-સમાન એનામ્-એ રાજ લક્ષ્મીયુક્ત ઉત્તમ કક્ષાવાળી પ્રજાને ઋર્ધ્વામ્-ઉન્નતિના ઉચ્છ્રાપય-શિખર પર પહોંચાડ અર્થાત્ ઉન્નતિ કર.

અથ-અને અસ્યૈ-એ પ્રજાના મધ્યમ્-મધ્ય ભાગમાં લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને શીતે-શીતળ વાતે-પવનમાં પુનન્નિવ-ખેતી કરનારાઓની ક્રિયાથી જેમ અન્ન આદિ શુદ્ધ થાય વા પવનના યોગથી જળ સ્વચ્છ બને, તેમ આપ એધતામ્-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ ભાર વહન કરનાર શિર પર અથવા પીઠ પર ભારને ઉપાડીને પર્વત પર ચઢીને તેના પર ભારને રાખી દે, તેમ રાજા લક્ષ્મીને ઉન્નત કરે.

અથવા જેમ ખેડૂત ભૂસા આદિથી અન્નને જુદું પાડીને તથા તેનું ભોજન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ સત્ય ન્યાયથી સત્ય અને અસત્યને જુદા પાડીને ન્યાયકારી રાજા નિત્ય ઉન્નતિને પામે છે. (૨૬)

ઋર્ધ્વામૈનમુચ્છ્રયતાદ ગિરૌ ભારઃ હરન્નિવ ।

અર્થાસ્ય મધ્યમેજતુ શીતે વાતૈ પુનન્નિવ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાસ્થ વિદ્વાન્ ! આપ ગિરૌ-પર્વત પર ભારમ્-ભારને હરન્નિવ પહોંચાડનાર સમાન એનામ્-એ રાજાને ઋર્ધ્વામ્-સર્વ વ્યવહારોમાં અગ્રગામી બનાવીને ઉચ્છ્રયતાત્-ઉન્નતિ યુક્ત કરો, અથ-એ પછી જેમ અસ્ય-એ રાજ્યના મધ્યમ્-મધ્યભાગ લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને શીતે-શીતળ વાતે-પવનમાં પુનન્નિવ-શુદ્ધ થતાં અન્ન આદિની સમાન એજતુ-ઉત્તમ કર્મોમાં પ્રયત્ન કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય વાદળોમાં જળ ભારને લઈ જઈને, વર્ષા કરીને, સર્વને ઉન્નત કરે છે; તેમ પ્રજા રાજપુરુષોને ઉન્નત કરે અને અધર્માચરણથી ડરે. (૨૭)

યદસ્યાઽઅહુભેદ્યાઃ કૃધુ સ્થૂલમુપાતસત્ ।

મુષ્કાવિદસ્યા એજતો ગોશ્ફે શકુલાવિવ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : યત્-જે રાજા અને રાજપુરુષ અસ્યાઃ-આ અહુભેદ્યાઃ-પાપ વા અપરાધનો વિનાશ કરનારી પ્રજાના કૃધુ-અલ્પ અને સ્થૂલમ્-મહાન ઉત્તમ કર્મની ઉપાતસત્-પ્રશંસા કરે છે; તે બન્ને અસ્યાઃ-એને

એજતઃ-કર્મ કરાવે છે; અને તે આપ ગોશ્વે-ગાયત્રી ખરીથી ભૂમિમાં થયેલ ખાબોચિયામાં શકુલાવિવ-પ્રસન્ન બે નાની માછલીઓની સમાન અને મુષ્કૌ-ઉંદરોની સમાન પ્રજા પાસેથી મેળવેલ કરની ચોરી કરતા કંપે છે.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રીતિયુક્ત બે માછલીઓ નાનાં જળાશયમાં પણ નિવાસ કરે છે તેમ રાજા અને રાજપુરુષ થોડો કર મળે તો પણ ન્યાયપૂર્વક પ્રીતિથી વર્તન કરે. જો દુઃખછેદક પ્રજાના થોડા અને મહાન ઉત્તમ કર્મની પ્રશંસા કરે તો તેઓ પ્રજાને ઉપરકત કરીને પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિવાન બનાવે. (૨૮)

યદ્દેવાસૌ લલામગું પ્રવિષ્ટીમિનમાવિષુઃ ।

સુવજ્ઞા દૈદિશ્યતે નારી સત્યસ્યાક્ષિભુવૌ યથા ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! યથા-જેમ સત્યસ્ય સત્ય અક્ષિભુવઃ-નેત્રની સામે પ્રકટ થયેલ પ્રત્યક્ષ વ્યવહારની મધ્યમાં વર્તમાન દેવાસઃ-વિદ્વાન્ લોકો સુવજ્ઞા-જાંઘ અથવા પોતાના શરીરનાં અંગથી નારી-સ્ત્રીની સમાન યત્-જે વિષ્ટીમિનમ્-વિશેષ ભીના કોમળ પદાર્થોવાળા લલામગુમ્-ઈચ્છિત ફળને પ્રાપ્ત કરાવનાર ન્યાયને પ્રાવિષુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે; વા જેમ આપ વિદ્વાન્ સત્યનો જ દૈદિશ્યતે-નિરંતર ઉપદેશ કરે, તેમ આપ આચરણ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરનાં અંગોથી સ્ત્રી અને પુરુષને ઓળખી શકાય છે; તેમ પ્રત્યક્ષ આદિ પ્રમાણોથી સત્ય જાણી શકાય છે. તે સત્યથી જેમ વિદ્વાન્ લોકો પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય દયા અને કડુણાના ભાવને - કોમળ સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અન્ય રાજા અને પ્રજાના સ્ત્રી-પુરુષો વિદ્યાથી વિનયને પ્રાપ્ત કરીને સુખની કામના કરે. (૨૯)

યદ્દરિણો યવમત્તિ ન પુષ્ટં પશુ મન્યતે ।

શૂદ્રા યદર્યજારા ન પોષાય ધનાયતિ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : યત્-જે રાજા હરિણઃ-હરણ જેમ યવમ્-ખેતરમાં ઊગેલા જવ આદિને અત્તિ-ખાય છે; તેમ પુષ્ટમ્ પશુ-પ્રજાને ન, મન્યતે-માનતો નથી અર્થાત્ પ્રજાને પુષ્ટ કરતો નથી, તે યત્-જે અર્યજારા-સ્વામી વા વૈશ્યકુળને અવસ્થાથી વૃદ્ધ કરનારી દાસી શૂદ્રા-શૂદ્રની સ્ત્રીની સમાન પોષાય-પુષ્ટિને માટે ન-ધનાયતિ-કદી ધનવાન થતો નથી. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા પશુની સમાન વ્યભિચારમાં રાચીને પ્રજાની પુષ્ટિ કરતો નથી, તે ધનાઢ્ય શૂદ્રા વ્યભિચારિણી દાસીની સમાન શીઘ્ર રોગી બનીને તથા પુષ્ટિનો નાશ કરીને, ધનહીનતાના કારણે દરિદ્ર બનીને મરી જાય છે, એટલા માટે રાજા કદીપણ ઈર્ષ્યા અને વ્યભિચાર કરે નહીં. (૩૦)

યદ્દરિણો યવમત્તિ ન પુષ્ટં બહુ મન્યતે ।

શૂદ્રો યદર્યજારૈ જારો ન પોષમનું મન્યતે ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : યત્-જે શૂદ્રઃ-મૂર્ખકુળમાં ઉત્પન્ન મનુષ્ય અચ્યાચૈ-સ્વામી વા વૈશ્યની સ્ત્રીનો જારઃ-જાર અર્થાત્ વ્યભિચારથી આયુનો નાશ કરનાર છે, તે જેમ પોષમ્-પુષ્ટિને ન + અનુ + મન્યતે-માનતો નથી; વા યત્-જે રાજા હરિણઃ-પશુ અર્થાત્ હરણની સમાન યવમ્-ઉગેલા જવ આદિને અત્તિ-ખાય છે, તેમ પુષ્ટમ્-ધન, સંતાન, સ્ત્રી, સુખ, ઐશ્વર્ય આદિથી પુષ્ટ પોતાની પ્રજાને બહુ-અધિક ન + મન્યતે-માનતો નથી, તે સર્વત્રથી ક્ષીણ, નષ્ટ અને ભ્રષ્ટ બને છે. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને રાજપુરુષ પરસ્ત્રીગમન અને વેશ્યાગમન કરવા માટે પશુઓની સમાન આચરણ કરે છે, તેને સર્વ વિદ્વાનો શૂદ્રની સમાન માને છે.

જેમ શૂદ્ર શ્રેષ્ઠકુળમાં વ્યભિચારી બનીને સર્વને વર્ણશંકર બનાવી દે છે, તેમ બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય વગેરે શૂદ્રકુળમાં વ્યભિચાર કરીને તથા વર્ણસંકરતાનું કારણ બનીને નાશ પામે છે. (૩૧)

દ્ધિક્રાવ્ગોઽઅકારિષં જિષ્ણોરશ્વસ્ય વાજિનઃ ।

સુરભિ નો મુખા કરત્ત્વ ણ્ઽઆયૂંઽષિ તારિષત્ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ હું દ્ધિક્રાવ્ગઃ-ધારણ અને પોષણ કરનારાઓને, વાજિનઃ-અત્યંત વેગવાન, જિષ્ણોઃ-જયશીલ, અશ્વસ્ય-શીઘ્રગામી ઘોડાની ઇવ-સમાન વીર્ય-પરાક્રમની રક્ષા અકારિષમ્-કરું છું; તેમ આપ નઃ-અમારા સુરભિ-પ્રશસ્ત સુગંધીથી યુક્ત મુખા-મુખોની સમાન વીર્ય-પરાક્રમની રક્ષા પ્રકરત્-કરો; નઃ-અમારી આયૂંષિ-આયુઓને તારિષત્-તેની અવધિથી પાર કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડાના શિક્ષક-અશ્વપાલ ઘોડાઓને વીર્ય રક્ષાના નિયમથી બળવાન તથા યુદ્ધમાં વિજય કરાવનાર બનાવે છે; તેમજ અધ્યાપક અને ઉપદેશક બાળકો અને કન્યાઓને પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યનાં સેવનથી વિદ્વાન્ અને વિદ્વૃષી બનાવીને, શરીર અને આત્માનાં બળને માટે, પ્રવૃત્ત કરીને દીર્ઘાયુ અને યુદ્ધ-નિપુણ બનાવે. (૩૨)

ગાયત્રી ત્રિષ્ટુબ્જગત્યનુષ્ટુપ્પ્ઙ્ક્ત્યા સહ ।

બૃહત્યુષ્ણિહા ક્કુપ્સૂચીભિઃ શમ્યન્તુ ત્વા ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે વિદ્વાન્ પ્ઙ્ક્ત્યા-વિસ્તૃત ક્રિયારૂપ પંક્તિ છંદની સહ-સાથે ગાયત્રી ગાયકની રક્ષા કરનારી ગાયત્રી, ત્રિષ્ટુપ્-આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક એ ત્રણેય સુખોને સ્થિર રોકનારી ત્રિષ્ટુપ, જગતી-જગતની સમાન વિસ્તીર્ણ જગતી, અનુષ્ટુપ્-દુઃખોને રોકનારી અનુષ્ટુપ, ઊષ્ણિહા-ઉષાઓથી સ્નેહ કરનારી ઉષ્ણિક્ની સાથે બૃહતી-મહાન અર્થવાળી બૃહતી અને ક્કુપ્-લાલિત્યથી યુક્ત ઋચાથી સૂચીભિઃ-સોયથી જેમ વસ્ત્ર સીવવામાં આવે છે, તેમ ત્વા-તને શમ્યન્તુ-શાન્તિયુક્ત કરે વા સર્વ વિદ્યાઓનો બોધ કરાવે તેનું સેવન કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ જન ગાયત્રી આદિ છંદોના અર્થ બતાવીને મનુષ્યોને વિદ્વાન્ બનાવે છે; તથા સોય દ્વારા ફાટેલા વસ્ત્રોની સમાન ભિન્ન મતોને અન્વય = સમાન ગુણોના આધાર પર જોડે છે અર્થાત્

એકમતમાં સ્થાપિત કરે છે, તે સંસારનું કલ્યાણ કરનારા હોય છે. (૩૩)

દ્વિપદા યાશ્ચતુષ્પદાસ્ત્રિપદા યાશ્ચ ષટ્પદાઃ ।

વિચ્છન્દા યાશ્ચ સચ્છન્દાઃ સૂચીભિઃ શમ્યન્તુ ત્વા ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ સૂચીભિઃ-સંધિઓને જોડનારી ક્રિયાઓથી યાઃ-જે દ્વિપદાઃ-બે પદો-ચરણોવાળી, યાઃ-જે ચતુષ્પદાઃ-ચાર પદોવાળી, યાઃ-જે ત્રિપદાઃ-ત્રણ પદોવાળી યાઃ , ચ-અને જે ષટ્પદાઃ ૬ પદોવાળી યાઃ-જે વિચ્છન્દાઃ-વિવિધ છંદોવાળી યાઃ, ચ-અને જે સચ્છન્દાઃ-સમાન છંદોવાળી ઋચાઓને ત્વા-તને ગ્રહણ કરાવીને શમ્યન્તુ-શાન્તિ અને સુખને પ્રાપ્ત કરાવે, તેનું નિત્ય સેવન કર. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ મનુષ્યોને બ્રહ્મચર્યના નિયમ દ્વારા વીર્યને પ્રાપ્ત કરાવીને, તેને નીરોગ, જિતેન્દ્રિય અને વિષયાસક્તિથી રહિત કરીને ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં ચલાવે છે, તેઓ સર્વના પૂજ્ય બને છે. (૩૪)

મહાનામ્ન્યો રેવત્યો વિશ્વા આશાઃ પ્રભૂવરીઃ ।

મૈઘીર્વિદ્યુતો વાચઃ સૂચીભિઃ શમ્યન્તુ ત્વા ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! સૂચીભિઃ-સંધાન કરનારી ક્રિયાઓ-આચરણોથી યાઃ-જે મહાનામ્ન્યઃ-મહાન નામ-કીર્તિવાળી, રેવત્યઃ-અનેક પ્રકારના ધનથી યુક્ત, પ્રભૂવરીઃ-પ્રભુતાથી યુક્ત, વિશ્વાઃ-સમસ્ત આશાઃ-દિશાઓની સમાન મૈઘી-મેઘ સંબંધી વિદ્યુતઃ-વિદ્યુતોની સમાન વાચઃ-વાણીઓ ત્વા-તને શમ્યન્તુ-શાન્તિ યુક્ત કરે, તેને તું ગ્રહણ કર. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેની વાણીઓ દિશાઓની સમાન સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અને વાદળોમાં સ્થિત વિદ્યુતની સમાન સંપૂર્ણ અર્થોને પ્રકાશિત કરનારી છે, તે લોકો શાન્તિપૂર્વક જિતેન્દ્રિયત્વને પ્રાપ્ત કરીને મહા યશસ્વી બને છે. (૩૫)

નાર્યસ્તે પત્ન્યો લોમ વિચિન્વન્તુ મનીષયાં ।

દેવાનાં પત્ન્યો દિશઃ સૂચીભિઃ શમ્યન્તુ ત્વા ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી અધ્યાપિકા ! જે કુમારીઓ મનીષયા-તીક્ષ્ણ બુદ્ધિથી તે-તારી લોમ-અનુકૂળ વચન વા આજ્ઞાને વિચિન્વન્તુ-સંચિત કરે છે, તે દેવાનામ્-વિદ્વાનોની - પંડિતોની નાર્યઃ-પત્નીઓ બનીને સૂચીભિઃ-જોડવાની ક્રિયાઓ અર્થાત્ આચરણોથી દિશઃ-દિશાઓની સમાન શુદ્ધ વિદુષીઓ બને છે, તે ત્વા-તને શમ્યન્તુ-શાન્તિ અને જ્ઞાન આપે.

ભાવાર્થ : જે કન્યાઓ પ્રથમ આયુમાં સોળથી ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક [અનેક] વિદ્યાઓ અને સુશિક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરીને પોતાની સમાન વિદ્વાનોની પત્નીઓ બને છે, તે દિશાઓની સમાન સુપ્રકાશિત કીર્તિવાળી બને છે. (૩૬)

રજતા હરિણીઃ સીસા યુજો યુજ્યન્તે કર્મભિઃ ।

અશ્વસ્ય વાજિનસ્ત્વચિ સિમાઃ શમ્યન્તુ શમ્યન્તીઃ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : જેમ સ્વયંવરથી વિવાહ કરેલી સ્ત્રીઓ વાજિનઃ-પ્રશસ્ત બળયુક્ત, અશ્વસ્ય-ઉત્તમ ગુણોમાં વ્યાપ્ત પતિની ત્વચિ-ત્વચામાં સંયુક્ત બને છે, [અર્થાત્ યુજ્યન્તે-પતિને વસ્ત્ર ઓઢાડવામાં આદિ સેવામાં સંયુક્ત બને છે.] તેમ કર્મભિઃ-ધર્મયુક્ત આચરણો - ક્રિયાઓથી રજતાઃ-અનુરક્ત અર્થાત્ પ્રીતિથી પ્રાપ્ત થયેલી હરિણીઃ-મનનું પ્રશસ્ત હરણ કરનારી, સીસાઃ-પ્રેમથી બાંધનારી, યુજઃ-સ્થિર ચિત્તથી કામ કરનારી શમ્યન્તીઃ-શાન્તિને પ્રાપ્ત કરનારી વા કરાવનારી સિમાઃ-પ્રેમથી બંધાયેલી સ્ત્રી પોતાના હૃદયથી પ્રિય પતિઓને પ્રાપ્ત કરીને શમ્યન્તુ-આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્ત્રી અને પુરુષ સુશિક્ષિત બનીને, સ્વયંવર કરીને, સ્વેચ્છાથી પરસ્પર પ્રેમયુક્ત બનીને, વિવાહ કરે છે, તે કલ્યાણમય સૌંદર્ય, ગુણ, સ્વભાવથી યુક્ત સંતાનોને જન્મ આપીને સદા આનંદિત રહે છે. (૩૭)

કુવિદ્ઙ્ઙ યવમન્તો યવઞ્ચિદ્વથા દાન્ત્યનુપૂર્વ વિચૂય ।

ઙ્ઙહેઠૈષાં કૃણુહિ ભોજનાનિ યે બર્હિષો નમઽઙ્ઙક્તિં યજન્તિ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ઙ-મિત્ર કુવિત્-અનેક વિજ્ઞાનથી યુક્ત તું ઙ્ઙહે-એ વિદ્યા વ્યવહારમાં ણ્ઙામ્-એ અધ્યાપક મનુષ્યોનાં યથા-જેમ યવમન્તઃ-બહુ જ જવ આદિ અન્નયુક્ત ખેડૂત યવમ્-જવ વગેરે ધાન્યોને ભૂસા આદિથી વિચૂય-જુદા કરવા ચિત્-અને અનુપૂર્વમ્-ક્રમથી દાન્તિ-કાપણી કરે છે; યે-જે અધ્યાપકો બર્હિષઃ-જલ અને નમઽઙ્ઙક્તિમ્-ભોજનના વચનનો યજન્તિ-સ્વીકાર કરે છે, તેનો ભોજનાનિ-ભોજન આદિથી કૃણુહિ-સત્કાર કર. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે અધ્યાપકો અને વિદ્યાર્થીઓ ! તમે જેમ ખેડૂતો એક બીજાના ખેતરોમાં પર્યાય-વારાફરતી કાપે છે - લણણી કરે છે, ભૂસા આદિથી અન્નને જુદુ પાડીને, અન્યોને ખવડાવીને સ્વયં ખાય છે, તેમજ એ વિદ્યા-વ્યવહારમાં કપટ રહિત બનીને વિદ્યાર્થીઓ અધ્યાપકોની સેવા કરે અને અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓની વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરીને પરસ્પર ભોજન આદિથી સત્કાર કરીને સર્વ આનંદિત રહે. (૩૮)

કસ્ત્વાછ્યતિ કસ્ત્વા વિશાસ્તિ કસ્તે ગાત્રાણિ શમ્યતિ ।

કઽઽ તે શમિતા ક્વિઃ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યેતા વિદ્યાર્થી ત્વા-તને (૧) કઃ-કોણ આછ્યતિ-કાપે છે ? (૨) કઃ-કોણ ત્વા-તને વિ + શાસ્તિ-વિશેષ ઉપદેશ આપે છે ? (૩) કઃ-કોણ તે-તારા ગાત્રાણિ-અંગોને શમ્યતિ-શાન્ત કરે છે ? (૪) કઃ-કોણ ઽ-વિચારપૂર્વક તે-તારા શમિતા-અધ્યયન યજ્ઞના કર્તા ક્વિઃ-સમસ્ત શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અધ્યાપક છે ? (૩૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓને પરીક્ષામાં આ રીતે પ્રશ્ન પૂછે - તમારા અધ્યયનને કોણ હાનિ પહોંચાડે છે ? કોણ તમને ભણવા માટે કહે છે ? કોણ તમને અંગોની શુદ્ધિ અને ઉત્તમ વ્યવહાર સમજાવે છે ? અધ્યાપક કોણ છે ? તમે શું ભણ્યા છો ? શું ભણવાનું છે ? વગેરે પ્રશ્નો પૂછીને, સારી રીતે પરીક્ષા લઈને, ઉત્તમ વિદ્યાર્થીઓને ઉત્સાહિત કરીને તથા નિમ્ન સ્તરના વિદ્યાર્થીઓને ધિક્કાર-ફટકાર આપીને વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે. (૩૯)

ઋતવસ્તઽઋતુથા પર્વ શમિતારો વિશાસતુ ।

સંવત્સરસ્ય તેજસા શમીભિઃ શમ્યન્તુ ત્વા ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! જેમ તે-તારું ઋતુઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ ઋતુથા-ઋતુ અનુસાર પર્વ-પાલન કરે છે, તેમ શમિતારઃ-અધ્યયન-અધ્યાપન નામક યજ્ઞમાં શમ-દમ આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અધ્યાપકજનો વિદ્યાર્થીને વિશાસતુ-વિશેષ ઉપદેશ કરે, સંવત્સરસ્ય-વર્ષનાં તેજસા-જળથી શમીભિઃ-શાન્તિદાયક કર્મોથી ત્વા-તને શમ્યન્તુ-શાન્તિ પ્રદાન કરે છે, તું તેની સદા સેવા કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઋતુઓ વારાફરતી પોતાના લક્ષણોને પ્રકટ કરે છે, તેમજ સ્ત્રી-પુરુષ ક્રમશઃ બ્રહ્મચર્ય, ગૃહસ્થ, વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમોને ધારણ કરીને, બ્રાહ્મણ અને બ્રાહ્મણ-સ્ત્રીઓ ભણાવે, ક્ષત્રિય પ્રજાની રક્ષા કરે, વૈશ્ય ખેતીની વૃદ્ધિ કરે અને શૂદ્ર તેઓની સેવા કરે. (૪૦)

અર્દ્ધમાસાઃ પરૂંઞ્ઞિ તે માસાઽઆ ચ્છ્યન્તુ શમ્યન્તઃ ।

અહોરાત્રાણિ મરુતો વિલિષ્ટઃ સૂદયન્તુ તે ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! જેમ અહોરાત્રાણિ-દિવસ-રાત, અર્દ્ધમાસાઃ-શુકલપક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ તથા માસાઃ-ચૈત્ર આદિ મહિનાઓ આયુને કાપે છે - ઘટાડે છે, તેમ તે-તારા પરૂંઞ્ઞિ-કઠોર વચનોને શમ્યન્તઃ-શાન્ત કરનાર મસ્તઃ-ઉત્તમ મનુષ્ય દુષ્ટ કર્મોનો આ + ચ્છ્યન્તુ સર્વત્રથી વિનાશ કરે, તથા તે-તારા વિલિષ્ટમ્-લેશ માત્ર દુર્વ્યસનને પણ સૂદયન્તુ-દૂર કરે. (૪૧)

ભાવાર્થ : જો માતા, પિતા, અધ્યાપક, ઉપદેશક અને અતિથિ લોકો બાળકોના દુર્ગુણોને દૂર ન કરે, તો તે કદી પણ શ્રેષ્ઠ બની શકતા નથી. (૪૧)

દૈવ્યાઽઅધ્વર્યવસ્ત્વાચ્છ્યન્તુ વિ ચ શાસતુ ।

ગાત્રાણિ પર્વશસ્તે સિમાઃ કૃણવન્તુ શમ્યન્તીઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી અને વિદ્યાર્થિની ! દૈવ્યાઃ-વિદ્વાનોમાં કુશળ અધ્વર્યવઃ-પોતાની રક્ષારૂપ યજ્ઞના ઈચ્છુક અધ્યાપક - ઉપદેશક લોકો - ત્વા-તને વિ + શાસતુ-વિશેષ ઉપદેશ કરે; ચ-અને તે-તારા દોષોનો આ + ચ્છ્યન્તુ-સર્વત્રથી વિનાશ કરે, પર્વશઃ-પ્રત્યેક સંધિ અને ગાત્રાણિ-અંગોની પરીક્ષા કરે; તથા સિમાઃ-પ્રેમથી બંધાયેલી શમ્યન્તીઃ-દુષ્ટ સ્વભાવને દૂર કરતી માતા આદિ સતી સ્ત્રીઓ પણ એ રીતે શિક્ષા કૃણવન્તુ-

કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક, ઉપદેશક અને અતિથિજન જ્યારે બાળકોને શિક્ષિત કરે, ત્યારે તેના દુર્ગુણોનો વિનાશ કરીને તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે.

એ જ રીતે અધ્યાપિકા, ઉપદેશિકા વિદુષી સ્ત્રીઓ પણ કન્યાઓ પ્રત્યે આચરણ કરે.

વેદકશાસ્ત્રની રીતિથી શરીરના અવયવોની યોગ્ય પરીક્ષા કરીને ઔષધ પણ પ્રદાન કરે. (૪૨)

દ્યૌસ્તૈ પૃથિવ્યુન્તરિક્ષં વાયુશ્ચિદ્રં પૃણાતુ તે ।

સૂર્યસ્તૈ નક્ષત્રૈઃ સહ લોકં કૃણોતુ સાધુયા ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે શિષ્યા વા અધ્યાપિકા ! જેમ દ્યૌઃ-પ્રકાશરૂપ વિદ્યુત્, પૃથિવી-ભૂમિ, અન્તરિક્ષમ્-આકાશ, વાયુઃ-પવન, સૂર્યઃ-સૂર્યલોક અને નક્ષત્રૈઃ-તારા ગણોની સહ-સાથે ચન્દ્રલોક તે-તારી છિદ્રમ્-પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયોને પૃણાતુ-સુખ આપે; તે-તારા વ્યવહારને સિદ્ધ કરે; તે-તારા સાધુયા-ઉત્તમ સત્ય લોકમ્-દર્શનીય વિદ્યાપ્રકાશને કૃણોતુ-સિદ્ધ કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ સુખપ્રદ અને સૂર્ય આદિ પ્રકાશક પદાર્થ છે, તેમ જ અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા પણ સર્વને સન્માર્ગમાં સ્થિત કરીને વિદ્યાપ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે. (૪૩)

શં તે પરેભ્યો ગાત્રેભ્યઃ શમસ્ત્વર્વરેભ્યઃ ।

શમસ્થભ્યો મજ્જભ્યઃ શમ્વસ્તુ તન્વૈ તર્વ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાના ઇચ્છુક ! જેમ પૃથિવી આદિ તત્ત્વ તવ-તારા તન્વૈ-શરીરને માટે શમ્ સુખદાયક અસ્તુ-થાય, પરેભ્યઃ-અત્યંત ઉત્તમ ગાત્રેભ્યઃ-શરીરના અંગને માટે શમ્-સુખદાયક થાય, ડ-અને અવરેભ્યઃ-મધ્યસ્થ અને નિકૃષ્ટ અંગોને માટે શમ્-સુખદાયક અસ્તુ-થાય, અસ્થભ્યઃ-હાડકાં અને મજ્જભ્યઃ-મજ્જાને માટે શમ્-સુખદાયક અસ્તુ-થાય, તેમ પોતાના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ દ્વારા અધ્યાપક લોકો તે-તારા માટે સુખકારી થાય. (૪૪)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા, અધ્યાપક, ઉપદેશક જનોએ એ રીતે ભણાવવા જોઈએ અને ઉપદેશ આપવો જોઈએ કે, જેથી સંતાનોનાં અંગ અને ધાતુ દૃઢ બને, જેથી તેઓ કલ્યાણ કરી શકે. (૪૪)

કઃ સ્વિદેકાકી ચરતિ કડ઼ સ્વિજાયતે પુનઃ ।

કિંઃ સ્વિદ્ધિમસ્ય ભેષજં કિમ્વાવપનં મહત્ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ સંસારમાં (૧) કઃ સ્વિત્-કોણ એકાકી-એકલો ચરતિ-ભ્રમણ કરે છે અને પ્રાપ્ત થાય છે ? (૨) કઃ ડ-સ્વિત્-અને કોણ પુનઃ-ફરી જાયતે-ઉત્પન્ન થાય છે ? (૩) કિં સ્વિત્-કયું હિમસ્ય-ઠંડીનું ભેષજમ્-ઔષધ છે ? (૪) કિમ, ડ-અને કોણ મહત્-મહાન આવપનમ્-

સર્વાધાર છે ? અર્થાત્ સારી રીતે બીજ વાવવાનો આધાર છે ? તે સર્વ આપ બતાવો. (૪૫)

ભાવાર્થ : કોણ એકલો ભ્રમણ કરે છે ? કોણ ઠંડી નિવારક છે ? કોણ વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે ? મહાન ઉત્પત્તિ સ્થાન કયું છે ? આ પ્રશ્નોનું સમાધાન આગળના મંત્રમાં છે, તેમ સમજવું. (૪૫)

સૂર્યૅઽેકાકી ચરતિ ચન્દ્રમા જાણ્તે પુનઃ ।

અગ્નિર્હિમસ્યૅ ભેષજં ભૂમિરાવર્પનં મહત્ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) સૂર્યઃ-સૂર્યલોક એકાકી-એકલો ચરતિ-પોતાની પરિધિમાં ભ્રમણ કરે છે. (૨) ચન્દ્રમાઃ-આનંદ આપનાર ચંદ્રમા પુનઃ-ફરી-ફરી જાયતે-પ્રકાશિત થાય છે. (૩) અગ્નિઃ અગ્નિ હિમસ્ય-શીતનું ભેષજમ્-ઔષધ છે. (૪) મહત્-મહાન - વિસ્તૃત આવપનમ્-બીજ વાવવાનું ક્ષેત્ર ભૂમિઃ-પૃથિવી છે, તેમ સમજો. (૪૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! સૂર્ય પોતાની પરિધિમાં ભ્રમણ કરે છે, કોઈ લોકના ચારે બાજુ ફરતો નથી. ચન્દ્રલોક આદિ તેનાથી-સૂર્યના પ્રકાશથી પ્રકાશિત છે. અગ્નિ જ શીત નિવારક છે અને સર્વ બીજ વાવવાનું મહાન ક્ષેત્ર ભૂમિ જ છે. એમ તમે જાણો. (૪૬)

કિંઽસ્વિત્સૂર્યસમં જ્યોતિઃ કિંસમુદ્રસમંસરઃ ।

કિંઽસ્વિત્પૃથિવ્યૈ વર્ષીયઃ કસ્ય માત્રા ન વિદ્યતે ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) કિં સ્વિત્-કોણ સૂર્યસમમ્-સૂર્યની સમાન જ્યોતિઃ-પ્રકાશ સ્વરૂપ છે ? (૨) કિમ્-કોણ સમુદ્રસમમ્-સમુદ્રસમાન સરઃ-તળાવ છે ? (૩) કિં-સ્વિત્-કોણ પૃથિવ્યૈઃ-પૃથિવીથી વર્ષીયઃ-મોટો અધિક છે ? (૪) કસ્ય-કોનું માત્રા-પરિમાણ ન, વિદ્યતે-વિદ્યમાન નથી ? તે બતાવો. (૪૭)

ભાવાર્થ : સૂર્યસમાન તેજસ્વી, સમુદ્રની સમાન તળાવ અને ભૂમિથી અધિક કોણ છે ? અને કોનું પરિમાણ અર્થાત્ માપ નથી ? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણવા જોઈએ. (૪૭)

બ્રહ્મ સૂર્યસમં જ્યોતિઃૃઃ સમુદ્રસમંસરઃ ।

ઇન્દ્રઃ પૃથિવ્યૈ વર્ષીયાન્ ગોસ્તુ માત્રા ન વિદ્યતે ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! તું (૧) સૂર્યસમમ્-સૂર્યની સમાન જ્યોતિઃ-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ બ્રહ્મ-સર્વથી મહાન અનંત બ્રહ્મ, (૨) સમુદ્રસમમ્-સમુદ્રની સમાન સરઃ-તળાવ - સરોવર (૩) દ્યૌઃ-અન્તરિક્ષ, પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીથી વર્ષીયાન્-મોટો ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય, (૪) ગોઃ-વાણીનું તુ-તો માત્રા-માપ કે પરિમાણ ન-વિદ્યતે-વિદ્યમાન નથી, તેમ જાણ. (૪૮)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મની સમાન સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ અન્ય કોઈ જ્યોતિ નથી. સૂર્ય-પ્રકાશથી યુક્ત મેઘ-વાદળની સમાન કોઈ જલાશય-તળાવ નથી. સૂર્યની સમાન કોઈ લોકોનો સ્વામી નથી અને વાણીની

સમાન વ્યવહાર સાધક કોઈ વસ્તુ નથી, એવો સર્વ લોકો નિશ્ચય કરે. (૪૮)

પૃચ્છામિ ત્વા ચિતયે દેવસઽત્રુ યદિ ત્વમત્ર મનસા જગન્થાં ।

યેષુ વિષ્ણુસ્ત્રિષુ પદેષ્વેષ્ટેષુ વિશ્વં ભુવનમાવિવે શાં૩૬ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે દેવસઽત્રુ-વિદ્વાનોના મિત્ર ! યદિ-જો ત્વમ્-તું અત્ર-અહીં મનસા-અન્તઃકરણથી જગન્થ-જાણતો હો તો ત્વા-તને ચિતયે-ચેતનના વિષયમાં પૃચ્છામિ-પૂછું છું. જે વિષ્ણુઃ-વ્યાપક ઈશ્વર યેષુ-જે ત્રિષુ-ત્રણ પદેષુ-નામ, સ્થાન અને જન્મ નામક ધામોમાં-સ્થાનોમાં એષ્ટઃ-પૂજ્ય છે, તેષુ-તેમાં વ્યાપ્ત થઈને વિશ્વમ્-સર્વ ભુવનમ્-પૃથિવી આદિ લોકોમાં આવિવેશ-વ્યાપક થઈ રહેલ છે, તે પરમાત્માના વિષયમાં પૂછું છું. (૪૯)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે ચેતન, સર્વવ્યાપક અને પૂજાને યોગ્ય પરમેશ્વર છે, તેનો મને ઉપદેશ કર. (૪૯)

અપિ તેષુ ત્રિષુ પદેષ્વાસ્મિ યેષુ વિશ્વં ભુવનમા વિવેશાં ।

સદ્યઃ પર્યેમિ પૃથિવીમુત દ્યામેકેનાઙ્ગેન દિવોઽસ્ય પૃષ્ઠમ્ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગતનો રચનાર હું ઈશ્વર - યેષુ-જે ત્રિષુ-ત્રણ પદેષુ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય નામ, સ્થાન અને જન્મ નામક ધામોમાં વિશ્વમ્-સમસ્ત ભુવનમ્-જગત્ આવિવેશ-પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છું, તેષુ-તે નામ, સ્થાન, જન્મ નામક ધામોમાં અપિ-પણ હું વ્યાપ્ત અસ્મિ-છું.

અસ્ય-આ દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ લોકોનો પૃષ્ઠમ્-આધાર પૃથિવીમ્-ભૂમિ વા અન્તરિક્ષ ઉત્ત-અને દ્યામ્-સર્વના પ્રકાશક દુલોકને એકેન-એક અઙ્ગેન-કમનીય-અતિ મનોહર પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વ્યવહાર વા અંગ-દેશથી સદ્યઃ-તત્કાળ પરિ-એમિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત છું, તે તમે સર્વ મારી ઉપાસના કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ કે સર્વ જીવોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે “હું કાર્ય-કારણયુક્ત સંસારમાં વ્યાપ્ત છું. મારા વિના એક પરમાણુ અવ્યાપ્ત [હોય એવું] નથી, [એક પરમાણુ પણ મારી વ્યાપ્તિથી રહિત નથી] તે હું, જ્યાં જગત્ નથી, ત્યાં પણ હું પોતાના અનંત સ્વરૂપથી પરિપૂર્ણ છું. જે અતિ વિસ્તીર્ણ આ જગતને આપ જોઈ રહ્યા છો, તે એ મારી સામે એક અણુ માત્ર પણ નથી.” તેમ વિદ્વાનો સર્વને સમજાવે. (૫૦)

કેષ્વન્તઃ પુરુષેઽઆ વિવેશ કાન્યન્તઃ પુરુષેઽર્પિતાનિ ।

एतद् ब्रह्मन्नुप वल्हामसि त्वा किंस्विन्नः प्रति वोचास्यत्र ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મન્-વેદજ - બ્રહ્મના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! કેષુ-કોના અન્તઃ-મધ્યમાં પુરુષઃ-સર્વત્ર પૂર્ણ પરમેશ્વર અન્તઃ-અંદર આ + વિવેશ-પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છે ? કાનિ-કોણ પુરુષે-પૂર્ણ પરમેશ્વરના અન્ત-મધ્ય-અંદર અર્પિતાનિ-સ્થાપિત છે ? જેથી જ્ઞાનથી અમે ઉપ, વલ્હામસિ-પ્રધાન પુરુષ બનીએ. એતત્-એ ત્વા-આપને પૂછીએ છીએ તે કિં સ્વિન્-શું છે ? અત્ર-એ વિષયમાં નઃ, પ્રતિ-અમને વોચાસિ-

બતાવો. (૫૧)

ભાવાર્થ : ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્-બ્રહ્માને અન્ય લોકોએ એ રીતે પૂછવું જોઈએ કે, હે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! પૂર્ણ પરમેશ્વર કોનામાં પ્રવિષ્ટ છે ? કોણ પદાર્થ તેની [વ્યાપ્તિની] અન્તર્ગત છે, એ વાત આપને પૂછીએ છીએ, તે યથાર્થ રૂપમાં બતાવો, જેથી અમે પ્રધાન-મુખ્ય પુરુષ બનીએ. (૫૧)

પૃચ્ચસ્વન્તઃ પુરુષ્ઽઆવિવેશ્ તાન્યન્તઃ પુરુષ્ઽઅર્પિતાનિ ।

ૐત્ત્વાત્ર પ્રતિમન્વાનોઽસ્મિ ન માયયા ભવસ્યુત્તરો મત્ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! પૃચ્ચસુ-પાંચ ભૂતો વા તેની તન્માત્રાઓની અન્તઃ-મધ્ય-અંદરમાં પુસ્મઃ-પૂર્ણ પરમાત્મા આ+વિવેશ-પોતાની વ્યાપ્તિથી સારી રીતે પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છે; તાનિ-તે પંચભૂત વા તન્માત્રા પુસ્મ્હે-પૂર્ણ પરમાત્મા પુરુષની અન્તઃ-મધ્યમાં અર્પિતાનિ-સ્થાપિત છે; ૐત્-એ અત્ર-આ જગતમાં [વિષયમાં] ત્વા-આપને પ્રતિમન્વાનાઃ-પ્રત્યક્ષ જ્ઞાતા એવો હું - સમાધાન કર્તા અસ્મિ-છું.

જો માયયા-પ્રજ્ઞા - ઉત્તમ બુદ્ધિથી યુક્ત તું ભવસિ-છો, તો મત-મારાથી ઉત્તરઃ-ઉત્તમ સમાધાન કરનાર કોઈ ન-નથી, એમ તું જાણ. (૫૨)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે, હે મનુષ્યો ! મારાથી વધીને બીજો કોઈ નથી. હું જ સર્વનો આધાર છું અને સર્વને વ્યાપ્ત કરીને ધારણ કરું છું. મારા વ્યાપ્ત હોવાના કારણે સર્વ પદાર્થો પોત-પોતાના નિયમમાં રહેલ છે.

હે સર્વોત્તમ યોગી વિદ્વાનો ! આપ લોકો મારા એ વિજ્ઞાનને [સર્વ મનુષ્યોને] બતાવો. (૫૨)

કા સ્વિદાસીત્પૂર્વચિત્તિઃ કિંચ્ચસ્વિદાસીદ્ બૃહદ્વયઃ ।

કા સ્વિદાસીત્પિલિપ્પિલા કા સ્વિદાસીત્ પિશાઙ્ગિલા ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ જગતમાં (૧) કા સ્વિત્-કોણ પૂર્વચિત્તિઃ-અનાદિ સમયમાં સંચિત થનારી આસીત્-છે ? (૨) કિં,-સ્વિત્-કઈ બૃહત્-મહાન વયઃ-પ્રજનન - ઉત્પન્ન રૂપ વસ્તુ આસીત્-છે ? (૩) કા, સ્વિત્-કઈ વસ્તુ પિલિપ્પિલા-ભીની કે ચીકણી આસીત્-છે ? (૪) કા, સ્વિત્-કોણ પિશાઙ્ગિલા-અવયવોને અંદર કરનારી-ગળી જનારી વસ્તુ આસીત્-છે ? એ આપને પૂછું છું. (૫૩)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ચાર પ્રશ્નો છે તેનો ઉત્તર આગલા મંત્રમાં દ્રષ્ટવ્ય છે. (૫૩)

દ્યૌરાસીત્પૂર્વચિત્તિરશ્વઽઆસીદ્ બૃહદ્વયઃ ।

અવિરાસીત્પિલિપ્પિલા રાત્રિરાસીત્પિશાઙ્ગિલા ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) દ્યૌઃ-વિદ્યુત્ પૂર્વચિત્તિઃ-પ્રથમ સંચિત વસ્તુ આસીત્-છે, (૨) અશ્વઃ-મહત્તત્ત્વ બૃહત્-મહાન વયઃ-પ્રજનન આત્મક - ઉત્પત્તિ સ્વરૂપ આસીત્-છે, (૩) અવિઃ-રક્ષક પ્રકૃતિ પિલિપ્પિલા-આર્દ્ર કે ચીકણી વસ્તુ આસીત્-છે, (૪) રાત્રિઃ-રાત્રિની સમાન પ્રલય પિશાઙ્ગિલા-સર્વ અવયવોને

ગળી જનારી આસીત્-છે, એમ તું જાણ. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અતિ સૂક્ષ્મ વિદ્યુત્ છે, તે પ્રથમ પરિણામ છે. મહત્ નામક દ્વિતીય પરિણામ છે. પ્રકૃતિ મૂલ કારણ રૂપ પરિણામ છે અને પ્રલય સર્વ સ્થૂલ સર્વ પદાર્થોનો વિનાશક છે, તેમ તમે જાણો. (૫૪)

કાઽઈમરે પિશઙ્ગિલા કાઽઈ કુરુપિશઙ્ગિલા ।

કઽઈમાસ્કન્દમર્ષતિ કઽઈ પન્થાં વિસર્પતિ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : અરે-હે વિદુષી સ્ત્રી ! (૧) કા ઈમ્-કોણ વારંવાર પિશઙ્ગિલા-રૂપનું આવરણ કરનારી છે ? (૨) કા, ઈમ્-કોણ વારંવાર કુરુપિશઙ્ગિલા-યવ આદિ અન્નના અવયવોને ગળી જનારી છે ? (૩) કઃ, ઈમ્-કોણ વારંવાર આસ્કન્દમ્-જુદી જુદી ગતિથી શીઘ્ર અર્ષતિ-પહોંચે છે ? (૪) કઃ, કોણ ઈમ્-જળના પન્થામ્-માર્ગમાં વિ+સર્પતિ-વિશેષ ગતિ કરે છે ? આ પ્રશ્નોનું સમાધાન કર. (૫૫)

ભાવાર્થ : કોણ રૂપનું આવરણ કરે છે ? કોણ ખેતી આદિને નષ્ટ કરે છે ? કોણ શીઘ્ર દોડે છે ? કોણ માર્ગમાં ચાલે છે ? આ ચાર પ્રશ્નો છે, તેનો ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણો. (૫૫)

અજારે પિશઙ્ગિલા શ્વાવિત્કુરુપિશઙ્ગિલા ।

શ્શઽઆસ્કન્દમર્ષત્યહિઃ પન્થાં વિ સર્પતિ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : અરે- હે મનુષ્યો ! (૧) અજા-જન્મરહિત પ્રકૃતિ પિશઙ્ગિલા-વિશ્વના રૂપનું પ્રલય સમયે આવરણ કરનારી છે. (૨) શ્વાવિત્-કુરુપિશઙ્ગિલા-સાહુડી-પશુની સમાન ખેતી આદિના અવયવોનો નાશ કરનારી છે. (૩) શ્શઃ-સસલા સમાન વેગયુક્ત વાયુ આસ્કન્દમ્-સર્વત્ર ઉછળીને અર્ષતિ-પહોંચે છે. (૪) અહિઃ-વાદળ પન્થામ્-માર્ગમાં વિ + સર્પતિ-વિવિધ ગતિ કરે છે એમ તમે જાણો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અજન્મા પ્રકૃતિ છે, તે સર્વ કાર્યરૂપ જગતનો પ્રલય કરનારી, કાર્યકારણરૂપ, પોતાના કાર્યને [જગતને] પોતાની અંદર લીન કરનારી છે; જે સાહુડી ખેતીનો નાશ કરે છે, જે વાયુ સસલાની સમાન ચાલતો સર્વને સૂકવી નાખે છે; જે વાદળ સાપની સમાન ગતિ કરે છે, તે સર્વને તમે જાણો. (૫૬)

કત્યસ્ય વિષ્ઠાઃ કત્યક્ષરાણિ કતિ હોમાસઃ કતિધા સમિદ્ધઃ ।

યજ્ઞસ્ય ત્વા વિદથા પૃચ્છમત્ર કતિ હોતારઽત્રહુશો યજન્તિ ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) અસ્ય-આ યજ્ઞસ્ય-સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ સંસારરૂપ યજ્ઞના કતિ-કેટલાં વિષ્ઠાઃ-વિશેષ સ્થિતિમાં આધાર છે ? (૨) કતિ-કેટલાં અક્ષરાણિ-જલ આદિ નિર્માણનાં સાધન છે ? (૩) કતિ-કેટલાં હોમાસઃ-આદાન-પ્રદાન અર્થાત્ વ્યાપાર છે ? (૪) કતિધા-કેટલા પ્રકારના સમિદ્ધઃ-સમિધાની સમાન જ્ઞાન આદિના પ્રકાશક છે ? (૫) કતિ-કેટલાં હોતારઃ-આદાન-

પ્રદાન આદિ વ્યવહાર કરનાર ઋહુશઃ-વસંતાદિ પ્રત્યેક ઋતુમાં યજન્તિ-સંગ કરે છે ? આ રીતે અન્ન-આ વિષયમાં વિદથા-વિજ્ઞાનોને ત્વા-આપને હું પૃચ્છમ્-પૂછું છું. (૫૭)

ભાવાર્થ : આ જગત્ ક્યાં સ્થિત છે ? એના નિર્માણ સાધન કેટલાં છે ? કેટલી વ્યાપાર યોગ્ય વસ્તુ છે ? કેટલા જ્ઞાન આદિના પ્રકાશક છે ? અને કેટલાં વ્યવહારકર્તા છે ? આ પાંચ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણવા જોઈએ. (૫૭)

ષડ્સ્ય વિષ્ઠાઃ શતમક્ષરાણ્યશીતિર્હોમાઃ સમિધો હ તિસ્રઃ ।

યજ્ઞસ્ય તે વિદથા પ્ર બ્રવીમિ સપ્ત હોતાર ઋતુશો યજન્તિ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુઓ ! (૧) અસ્ય-આ યજ્ઞસ્ય-સંગત જગતની ષટ્-છ ઋતુઓ વિષ્ઠાઃ-વિશેષ સ્થિતિનો આધાર છે; (૨) શતમ્-અસંખ્ય અક્ષરાણિ-જળ આદિ ઉત્પત્તિનાં સાધન છે; (૩) અશિતિઃ-અસંખ્ય હોમાઃ લેવા-દેવાનો વ્યવહાર છે; (૪) તિસ્રઃ-આધ્યાત્મિક, આધિદેવિક અને આધિભૌતિક એ ત્રણ વિદ્યાઓ હ-પ્રસિદ્ધ સમિધઃ-જ્ઞાન આદિની પ્રકાશક છે; (૫) સપ્ત-પાંચ પ્રાણ, મન અને આત્મા એ સાત હોતારઃ-લેણ-દેણના વ્યવહારનો કર્તા ઋહુશઃ-પ્રત્યેક વસંત આદિ ઋતુમાં યજન્તિ-સંગ કરે છે; તે યજ્ઞ = જગતનું વિદથા-વિજ્ઞાન તે-તારા માટે હું પ્ર + બ્રવીમિ-કહું છું. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે જિજ્ઞાસુજનો ! જે યજ્ઞમાં છ ઋતુઓ સ્થિતિની સાધક છે, અસંખ્ય જળ વસ્તુઓ વ્યવહારની સાધક છે, બહુ જ વ્યવહારને યોગ્ય પદાર્થ છે, સર્વ પ્રાણી અને અપ્રાણી હોતા આદિ રૂપમાં સંગ કરે છે અને જ્યાં જ્ઞાન આદિની પ્રકાશિકા ત્રણ પ્રકારની વિદ્યાઓ છે, તે યજ્ઞને તમે સર્વ જાણો. (૫૮)

કોઽસ્ય વેદ ભુવનસ્ય નાભિં કો દ્યાવાપૃથિવીઽઅન્તરિક્ષમ્ ।

કઃ સૂર્યસ્ય વેદ બૃહતો જનિત્રં કો વેદ ચન્દ્રમસં યતોજાઃ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! (૧) અસ્ય-આ ભુવનસ્ય-સર્વના આધારભૂત સંસારના નાભિમ્-મધ્યમ અંગ વા બંધન સ્થાનને કઃ-કોણ વેદ-જાણે છે ? (૨) કઃ-કોણ દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને પૃથિવી તથા અન્તરિક્ષમ્-આકાશને વેદ-જાણે છે ? (૩) કઃ-કોણ બૃહતઃ-મહાન સૂર્યસ્ય-સૂર્યમંડળના જનિત્રમ્-ઉપાદાન વા નિમિત્ત કારણને વેદ-જાણે છે ? (૪) અને યતોજાઃ-જેનાથી ઉત્પન્ન થનાર તે ચંદ્રમાના ઉત્પાદકને ચન્દ્રમસમ્-ચંદ્રલોકને કઃ-કોણ વેદ-જાણે છે ? તેનું સમાધાન કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : આ જગતના ધારણકર્તા બંધનને, ભૂમિ, સૂર્ય તથા અન્તરિક્ષને, મહાન સૂર્યના કારણને તથા જેથી ચંદ્રમા ઉત્પન્ન થયેલ છે, તેને કોણ જાણે છે ? આ ચાર પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં છે તેમ જાણવું જોઈએ. (૫૯)

વેદાહમસ્ય ભુવનસ્ય નાભિં વેદ દ્યાવાપૃથિવીઽઅન્તરિક્ષમ્ ।

વેદ સૂર્યસ્ય બૃહતો જનિત્રમથો વેદ ચન્દ્રમસં યતોજાઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) અસ્ય-આ ભુવનસ્ય-સંસારની નાભિમ્-બંધનનાં સ્થાન કારણરૂપ મધ્યભાગ પરબ્રહ્મને અહમ્-હું વેદ-જાણું છું; (૨) દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને અપ્રકાશરૂપ લોક સમૂહો તથા અન્તરિક્ષમ્-આકાશને પણ વેદ-હું જાણું છું; (૩) બૃહતઃ-મહાન સૂર્યસ્ય-સૂર્યલોકના જનિત્રમ્-ઉપાદાન તેજસ્ કારણ અને નિમિત્ત કારણ બ્રહ્મને વેદ-હું જાણું છું. (૪) અથો-તદનન્તર યતોજાઃ-જે પરમાત્માથી ઉત્પન્ન થયેલ તે ચન્દ્રમસમ્-ચંદ્રને વેદ-હું જાણું છું. (૬૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન ઉત્તર આપે કે, હે જિજ્ઞાસુ ! આ જગતના બંધન અને સ્થિતિના કારણ, ત્રણેય લોકોનું કારણ, સૂર્ય અને ચંદ્રમાના ઉપાદાન કારણ અને નિમિત્ત કારણ એ સર્વને હું જાણું છું.

બ્રહ્મ-ઈશ્વર એ જ સર્વના નિમિત્ત કારણ છે અને પ્રકૃતિ ઉપાદાન કારણ છે, એમ જાણો. (૬૦)

પૃચ્છામિ ત્વા પરમન્તં પૃથિવ્યાઃ પૃચ્છામિ યત્ર ભુવનસ્ય નાભિઃ ।

પૃચ્છામિ ત્વા વૃષ્ણોઽઅશ્વસ્ય રેતઃ પૃચ્છામિ વાચઃ પરમં વ્યોમ ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! (૧) હું ત્વા-આપને પૃથિવ્યાઃ પૃથિવીની, અન્તમ્, પરમ્-પરભાગ સીમા કે અવધિને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. (૨) યત્ર-જ્યાં ભુવનસ્ય-સંસારની નાભિઃ-નાભિ અર્થાત્ મધ્ય-આકર્ષણથી બંધન કરે છે તેને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. (૩) જે વૃષ્ણઃ-સેચન કરનાર અશ્વસ્ય-બળવાન પુરુષનું રેતઃ-પરાક્રમ [વીર્ય]છે તેને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. (૪) વાચઃ-ત્રણ વેદ રૂપ વાણીના પરમમ્-ઉત્તમ વ્યોમ-આકાશ રૂપ સ્થાનને ત્વા-આપને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. આપ તેના ઉત્તર આપો. (૬૧)

ભાવાર્થ : પૃથિવીની સીમા, લોકનું આકર્ષણથી બંધન, બળવાન પુરુષનું પરાક્રમ અને વાણીમાં પારંગત કોણ છે ? એ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણો. (૬૧)

ઙ્ઙયં વેદિઃ પરોઽઅન્તઃ પૃથિવ્યાઽઅયં યજ્ઞો ભુવનસ્ય નાભિઃ ।

અયઃ સોમો વૃષ્ણોઽઅશ્વસ્ય રેતોઃ બ્રહ્માયં વાચઃ પરમં વ્યોમ ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) ઙ્ઙયમ્-આ વેદિઃ-મધ્યરેખા પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના પરઃ-પરભાગની અન્તઃ-સીમા છે; (૨) અયમ્-એ પ્રત્યક્ષ ગુણોવાળા યજ્ઞઃ-સર્વના પૂજ્ય જગદીશ્વર ભુવનસ્ય-સંસારની નાભિઃ-નિયત સ્થિતિના બંધક છે; (૩) અયમ્-એ સોમઃ-ઔષધિઓમાં શ્રેષ્ઠ અંશુમાન નામક સોમ વૃષ્ણઃ-પરાક્રમ કરનાર અશ્વસ્ય-બળવાન પુરુષનું રેતઃ-પરાક્રમ-વીર્ય છે અને (૪) અયમ્-એ બ્રહ્મા-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વાચઃ-ત્રણ વેદરૂપ વાણીના પરમમ્-ઉત્તમ વ્યોમ-સ્થાન છે; તું એને જાણ. (૬૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો આ ભૂગોળની મધ્યરેખા ખેંચવામાં આવે, તો તે ઉપરથી ભૂમિના અન્ત-સીમાને પ્રાપ્ત કરતી [તેની] વ્યાસ સંજ્ઞાને પ્રાપ્ત કરે છે. એ જ ભૂમિનો અન્ત-સીમા છે. સર્વનું મધ્ય આકર્ષણ-નાભિ જગદીશ્વર છે. સર્વ પ્રાણીઓના પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરનારી સર્વોત્તમ ઔષધિ સોમ છે અને વેદોના પારંગત વિદ્વાન્-બ્રહ્મા વાણીના પારંગત છે, તેમ તમે જાણો. (૬૨)

સુભૂઃ સ્વયમ્ભૂઃ પ્રથમોઽન્તર્મહત્વર્ણવે ।

દ્વથે હ ગર્ભમૃત્વિયં યતો જાતઃ પ્રજાપતિઃ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! યતઃ-જે જગદીશ્વરથી પ્રજાપતિઃ-પ્રજાનો રક્ષક-પાલક સૂર્ય જાતઃ-ઉત્પન્ન થયેલ છે; જે સુભૂઃ-સુંદર વિદ્યમાન, સ્વયમ્ભૂઃ-સ્વયં પ્રસિદ્ધ અને ઉત્પત્તિ તથા નાશ રહિત, પ્રથમઃ-સર્વથી પ્રથમ જગદીશ્વર મહત્તિ-મહાન વિસ્તૃત અર્ણવે-જળ આદિ પદાર્થોથી સંબંધિત સંસારના અન્તઃ-મધ્યમાં ઋત્વિયમ્-ઋતુ અનુકૂળ પ્રાપ્ત ગર્ભમ્-બીજને દ્વથે-ધારણ કરે છે; તેની હ-જ સર્વ લોકોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૬૩)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય સૂર્ય આદિના પરમ કારણ મૂલ ઉપાદાન કારણ પ્રકૃતિને તથા તેમાં બીજ ધારણ કરાવનાર પરમાત્માને જાણી લે, તો તેઓ આ સંસારમાં વિસ્તૃત સુખવાળા બને. (૬૩)

હોતા યક્ષત્પ્રજાપતિઃ સોમસ્ય મહિમ્નઃ । જુષતાં પિબતુ સોમઃ હોતર્યજ ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા પુરુષ ! જેમ હોતા-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ સોમસ્ય-સકળ ઐશ્વર્યથી યુક્ત પરમાત્માના મહિમ્નઃ-મહિમાથી પ્રજાપતિમ્-વિશ્વના પાલક ઈશ્વરની યક્ષત્-પૂજા કરે છે; વા જુષતામ્-સેવાથી પ્રસન્ન કરે છે અને સોમમ્-સર્વ ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પિબતુ-પાન કરે છે; તેમ તું યજ-તેની પૂજા કર અને રસનું પાન કર. (૬૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન્ જન આ જગતમાં રચના આદિ વિશેષ કારણોથી પરમાત્માની મહિમાને જાણીને તેની ઉપાસના કરે છે, તેમ તમે પણ એની ઉપાસના કરો. (૬૪)

પ્રજાપતે ન ત્વદેતાન્યન્યો વિશ્વા રૂપાણિ પરિ તા બંભૂવ ।

યત્કામાસ્તે જુહુમસ્તન્નોઽસ્તુ વ્યથંઽ સ્યામ્ પતયો રયીણામ્ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાપતે-સર્વ પ્રજાના રક્ષક-સ્વામી પરમાત્મન્ । કોઈ ત્વત્-આપનાથી અન્યઃ-ભિન્ન તા-તેના એતાનિ-એ પૃથિવી આદિ ભૂતો તથા વિશ્વા-સર્વ સ્ત્રાણિ-રૂપ યુક્ત વસ્તુઓ ન + પરિ + બંભૂવ-બળવાન નથી.

યત્કામાઃ-જે-જે પદાર્થની કામના કરનારા વ્યમ્-અમે આપની જુહુમઃ-પ્રશંસા કરીએ તત્-તે-તે કામના યોગ્ય વસ્તુ નઃ-અમને અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય. તે-આપની કૃપાથી અમે રયીણામ્-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનોના પતયઃ-રક્ષક-સ્વામી સ્યામ્-બનીએ. (૬૫)

ભાવાર્થ : જો પરમેશ્વરથી ઉત્તમ, મહાન, ઐશ્વર્યયુક્ત, સર્વ શક્તિમાન પદાર્થ કોઈ નથી, અને ન તો તેની સમાન-તુલ્ય પણ કોઈ છે.

જે વિશ્વના આત્મા-સર્વાત્મા, સર્વનિર્માતા, સમસ્ત ઐશ્વર્ય પ્રદાતા ઈશ્વર છે, તેની જ વિશેષ ભક્તિથી

અને પુરુષાર્થથી સાંસારિક ઐશ્વર્ય અને યોગાભ્યાસથી પારમાર્થિક સામર્થ્ય અમે પ્રાપ્ત કરી શકીએ છીએ. (૬૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમાત્માનો મહિમા (૧-૩), સૃષ્ટિના ગુણોનું વર્ણન (૪), યોગની પ્રશંસા (૫-૬), પ્રશ્ન અને ઉત્તર (૮-૧૨), સૃષ્ટિના પદાર્થોની પ્રશંસા (૧૪), રાજા અને પ્રજાના ગુણોનું વર્ણન (૨૦-૨૩), શાસ્ત્ર આદિનો ઉપદેશ (૨૫-૨૯), પઠન-પાઠન (૩૨, ૩૩), સ્ત્રી-પુરુષના ગુણોનું વર્ણન (૩૬, ૩૭), પુનઃ પ્રશ્ન અને ઉત્તર (૪૫ - ૬૨), પરમેશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૬૪, ૬૫), યજ્ઞની વ્યાખ્યા (૫૭, ૫૮), રેખા ગણિત (૬૨) વગેરેનો ઉપદેશ કરેલ છે. એથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति त्रयोविंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ ચતુર્વિંશોઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અશ્વસ્તૂપરો ગૌમૃગસ્તે પ્રાજાપત્યાઃ કૃષ્ણગ્રીવઽઆગ્નેયો રરાટે પુરસ્તાત્સારસ્વતી મેષ્યુધસ્તાબ્દન્વૌરાશ્વિનાવધોરામૌ બાહ્નોઃ સૌમાપૌષ્ણઃ શ્યામો નાભ્યાઃ૪ સૌર્યયામૌ શ્વેતશ્ચ કૃષ્ણશ્ચ પાર્શ્વયોસ્ત્વાષ્ટ્રૌ લોમશસઘ્થૌ સઘ્થ્યોર્વાયઽવ્યઃ શ્વેતઃ પુચ્છઽન્દ્રાય સ્વપસ્યાય વેહદ્વૈષ્ણવો વામનઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે અશ્વઃ-શીઘ્રગામી ઘોડા, તૂપરઃ-હિંસક પશુ, ગોમૃગઃ-ગાય સમાન નીલગાય, તે-તેઓ પ્રાજાપત્યાઃ-પ્રજાપાલક સૂર્ય દેવતાવાળા અર્થાત્ સૂર્યમંડળના ગુણોથી યુક્ત પશુઓ, કૃષ્ણગ્રીવઃ-કાળી ડોકવાળા પશુઓ, આગ્નેયઃ અગ્નિ દેવતાવાળા પશુઓ, પુરસ્તાત્-આદિમાં - પ્રથમથી રાટે-લલાટના નિમિત્ત મેષી-શબ્દ કરનારી ઘેટી અને સારસ્વતી-સરસ્વતી દેવતાવાળી પશુ સ્ત્રી, અધસ્તાત્-નીચેથી હન્વોઃ-ડાબી અને જમણી હડપથી બાહ્નોઃ-ભુજાઓથી અધોરામૌ-નીચે રમણ કરનાર આશ્વિનૌ-અશ્વિદેવતા વાળા બે પશુઓ, સૌમાપૌષ્ણઃ-સોમ અને પૂષા દેવતાવાળા શ્યામઃ-કાળા રંગનાં પશુઓ, નાભ્યામ્-નાભિની નિમિત્ત પાર્શ્વયોઃ-ડાબી અને જમણી બાજુનાં નિમિત્ત શ્વેતશ્ચ-સફેદ અને કૃષ્ણશ્ચ-કાળા રંગના સૌર્યયામૌ સૂર્ય અને યમથી સંબંધિત પશુઓ, સઘ્થ્યોઃ-જાંઘને નિમિત્ત લોમશસઘ્થૌ-રૂંવાડા યુક્ત જાંઘવાળા ત્વાષ્ટ્રૌ-ત્વષ્ટા દેવતાવાળા પશુઓ, પુચ્છે-પૂંછના નિમિત્ત શ્વેતઃ - સફેદ રંગવાળા વાયઽવ્યઃ-વાયુ દેવતાવાળા પશુ, વેહત્-અસમયમાં સાંઠના સંગથી ગર્ભપાત કરનારી ગાય, વૈષ્ણવઃ વિષ્ણુ દેવતાવાળા પશુઓ અને વામનઃ-વાંકા અંગોવાળા પશુઓ છે, તે સર્વને સ્વપસ્યાય-સુંદર કે ઉત્તમ કર્મોવાળા ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્ય યુક્ત પુરુષને માટે સંયુક્ત કરો. અર્થાત્ તે પ્રત્યેક અંગના આનંદ માટે ઉક્ત ગુણવાળા પશુઓને નિયત કરો. (૧)..

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડા વગેરે પશુઓથી કાર્ય સિદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરીને ધર્મયુક્ત કાર્ય કરે છે, તેઓ સૌભાગ્યશાળી હોય છે.

અહીં દેવતા શબ્દથી તે-તે ગુણથી યુક્ત પશુઓ સમજવા જોઈએ. (૧)

રોહિતો ધૂમ્રરોહિતઃ કર્કન્ધુરોહિતસ્તે સૌમ્યા બભ્રુરુણબભ્રુઃ શુક્રબભ્રુસ્તે વારુણાઃ શિત્તિરન્ધ્રોઽન્યતઃશિત્તિરન્ધ્રઃ સમન્તશિત્તિરન્ધ્રસ્તે સાવિત્રાઃ શિત્તિબાહુ-રન્યતઃશિત્તિબાહુઃ સમન્તશિત્તિબાહુસ્તે બાર્હસ્પત્યાઃ પૃષ્ઠતી ક્ષુદ્રપૃષ્ઠતી સ્થૂલપૃષ્ઠતી

તા મૈત્રાવરુણ્યઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે રોહિતઃ-સામાન્ય લાલ રંગવાળા, ધૂમ્મરોહિતઃ-ધૂમાડા સમાન લાલ રંગવાળા અને કર્કન્ધુરોહિતઃ-પાકા બોર સમાન લાલ રંગવાળા પશુઓ છે. તે-તેઓ સૌમ્યાઃ-સોમ-ચંદ્ર દેવતાવાળા; જે બમ્બુઃ-નોળીયા સમાન ભૂખરા રંગવાળા, અસ્મગ્બમ્બુઃ-લાલ રંગથી યુક્ત ભૂખરા રંગવાળા શુક્રબમ્બુઃ-તોતા સમાન ભૂખરા રંગવાળા પશુઓ છે, તે- તેઓ વાસ્મગ્નાઃ-દેવતાવાળા અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ; જે શિતિરન્ધ્રઃ-છિદ્રોમાં સફેદ રંગવાળા, અન્યતઃશિતિરન્ધ્રઃ-એક બાજુ ઉક્ત છિદ્રોની સમાન સફેદ ચિહ્નવાળા, સમન્તશિતિરન્ધ્રઃ સર્વત્ર ઉક્ત છિદ્રોની સમાન સફેદ ચિહ્નવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ સર્વ સાવિત્રાઃ-સૂર્ય દેવતાવાળા; જે શિતિબાહુઃ ભુજાઓમાં સફેદ ચિહ્નવાળા, અન્યતઃ શિતિબાહુઃ-એક બાજુ ભુજામાં સફેદ ચિહ્નવાળા અને સમન્તશિતિબાહુઃ-સર્વત્ર ભુજાઓમાં સફેદ ચિહ્નવાળા પશુઓ છે તે-તેઓ બાઈસ્પત્યાઃ-બૃહસ્પતિ દેવતાવાળા હોય છે; અને જે પૃષ્ઠતી-અંગોમાં છાંટ-ટપકાં વાળી, ક્ષુદ્રપૃષ્ઠતી-નાના ટપકાંવાળી અને સ્થૂલપૃષ્ઠતી-મોટાં ટપકાંવાળી ગાયો છે, તા-તે સર્વ મૈત્રાવરુણ્યઃ-મિત્ર =પ્રાણ અને વરુણ-ઉદાન દેવતાવાળી હોય છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ ચન્દ્રમા આદિના ગુણોથી યુક્ત છે, તેનાથી તે-તે કાર્યો મનુષ્યોએ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૨)

શુદ્ધવાલઃ સર્વશુદ્ધવાલો મણિવાલસ્તઽઆશ્વિનાઃ શ્યેતઃ શ્યેતાક્ષોઽરુણસ્તે રુદ્રાર્ય પશુપતયે કર્ણા યામાઽઅવલિપ્તા રૌદ્રા નભોરૂપાઃ પાર્જન્યાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે શુદ્ધવાલઃ-શુદ્ધવાળવાળા, સર્વશુદ્ધવાલઃ-સર્વ શુદ્ધવાળવાળા, મણિવાલઃ-મણિ સમાન સ્વચ્છ કોમળ અને ચળકતા વાળવાળા પશુઓ છે, તે તેઓ આશ્વિનાઃ-સૂર્ય અને ચંદ્રના દેવતાવાળા અર્થાત્ સૂર્ય-ચન્દ્ર સમાન દિવ્ય ગુણવાળા; જે શ્યેતઃ-સફેદ રંગવાળા, શ્યેતાક્ષઃ-સફેદ આંખોવાળા અને અસ્મગ્નાઃ-લાલ રંગવાળા છે; તે-તેઓ પશુપતયે-પશુઓના પાલક-રક્ષક સ્વાય-દુષ્ટોને રડાવનાર તે રુદ્રને માટે છે; જે કર્ણાઃ-વિશેષ કાર્ય કરનાર છે, તે-તેઓ યામાઃ-વાયુ દેવતાવાળા, જે અવલિપ્તાઃ દંઢ અંગ અને સ્થૂલ શરીરવાળા છે, તેઓ રૌદ્રાઃ-પ્રાણ આદિ દેવતાવાળા; જે નભોસ્ત્રાઃ-જે આકાશની સમાન નીલ રૂપવાળા છે, તેઓ પાર્જન્યાઃ-મેઘ-વાદળ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે જે પશુઓના દેવતા છે, તે તે ગુણવાળા છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૩)

પૃશ્નિન્સ્તિરશ્ચીનપૃશ્નિરુર્ધ્વપૃશ્નિસ્તે મારુતાઃ ફલ્ગૂર્લોહિતોર્ણી પલક્ષી તાઃ સારસ્વત્યઃ પ્લીહાકર્ણા શુણ્ઠાકર્ણોઽધ્યાલોહકર્ણસ્તે ત્વાષ્ટ્રાઃ કૃષ્ણાગ્રીવઃ શિતિક્ષોઽજ્જિસવ્થસ્તઽએન્દ્રાગ્નાઃ કૃષ્ણાજ્જિરલ્પાજ્જિર્મહાજ્જિસ્તઽઉષ્સ્યાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃશ્નિનઃ-સ્પર્શવાળા, તિરશ્ચીનપૃશ્નિનઃ-નિકૃષ્ટ સ્પર્શવાળા, ઊર્ધ્વપૃશ્નિનઃ-ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ માસ્તાઃ-વાયુ દેવતાવાળા; જે ફલ્ગૂઃ-ફળોને પ્રાપ્ત કરનારી,

લોહિતોર્ણી-લાલ રંગવાળી અને પલક્ષી-ચંચળ આંખોવાળી ગાયો છે તા:-તે સર્વ સારસ્વત્ય:-સરસ્વતી દેવતાવાળી; જે પ્લીહાકર્ણ:-બરોળ સમાન કાનોવાળા શુળ્ઠાકર્ણ:-સૂકા કાનોવાળા અને અધ્યાલોહકર્ણ:- ઉત્તમ સુવર્ણ સમાન કાનોવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ ત્વાષ્ટ્રા:-ત્વષ્ટા દેવતાવાળા; જે કૃષ્ણગ્રીવ:-કાળી ડોકવાળા, શિતિકક્ષ:-સફેદ પાર્શ્વવાળા અને અબ્જિસકથ:-પ્રસિદ્ધ જાંઘવાળા સ્થૂલ હોવાથી જુદી તરી આવે તેવા પશુઓ છે, તે-તેઓ એન્દ્રાગ્ના:-ઈન્દ્ર = વાયુ અને અગ્નિ = વિદ્યુત્ દેવતાવાળા; જે કૃષ્ણાઙ્ગિ:- સાધારણ ગતિવાળા, અલ્પાઙ્ગિ:-ધીમી ગતિવાળા અને મહાઙ્ગિ:-તે જ ગતિવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ ઊષ્ણ્યા:-ઉષ્ણ દેવતાવાળા હોય છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ અને પક્ષીઓ વાયુના ગુણોવાળા, જે નદીના ગુણોવાળા, જે સૂર્યના ગુણોવાળા, જે વાયુ તથા વિદ્યુત્ના ગુણોવાળા અને ઉષ્ણના ગુણોવાળા છે, તેઓ દ્વારા તેને અનુકૂળ કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

શિલ્પા વૈશ્વદેવ્યો રોહિણ્યસ્ત્ર્યવયો વાચેઽવિજ્ઞાતાઽઅદિત્યૈ સરૂપા ધાત્રે વત્સતર્ણો દેવાનાં પત્નીભ્યઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને શિલ્પા: જે સુંદર રૂપવાન અને શિલ્પ કાર્ય સિદ્ધ કરનારી વૈશ્વદેવ્ય:- વિશ્વદેવ દેવતાવાળી વિદ્યાઓ વાચે-વાણીને માટે; રોહિણ્ય:-પર્વત આદિ પર ચડવાવાળા ત્ર્યવય:-ત્રણ પ્રકારનાં ઘેટાં આદિત્યૈ:-પૃથિવીને માટે, અવિજ્ઞાતા:-વિશેષરૂપથી અજ્ઞાત પશુઓ ધાત્રે-ધારક વાયુના માટે સરૂપા:-સમાન રૂપવાળા પશુઓ દેવાનામ્-દિવ્યગુણોવાળા વિદ્વાનોની પત્નીભ્યઃ-પત્નીઓ માટે અને વત્સતર્ણઃ-અલ્પ આયુવાળી ગાયો; વત્સતરી = વાછરડી છે; તેને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જે સર્વ વિદ્વાનો શિલ્પ વિદ્યા દ્વારા અનેક યાન આદિની રચના કરે અને પશુઓનું પાલન કરીને તેનો ઉપયોગ કરે, તો તેઓ ધન સંપન્ન-શ્રીમાન બની શકે છે. (૫)

કૃષ્ણગ્રીવા આગ્નેયાઃ શિતિભ્રવો વસૂનાંશ્ચ રોહિતા રુદ્રાણાંશ્ચ શ્વેતાઽ- અવરોક્ષિણા આદિત્યાનાં નભોરૂપાઃ પાર્જન્યાઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કૃષ્ણગ્રીવા:-ડોકથી ખેંચવા વાળા પશુઓ છે, તેઓ આગ્નેયા:-અગ્નિ દેવતાવાળા છે; જે શિતિભ્રવ:-સફેદ ભમરવાળા છે, તેઓ વસુનામ્-પૃથિવીની વસુ-ધારણક્રિયાવાળા છે; જે રોહિતા:-લાલ રંગવાળા છે, તેઓ સ્દ્રાણામ્-પ્રાણ આદિ અગિયાર રુદ્રના અર્થાત્ વાયુઓની પ્રરોહણ = ઊંચા ચડવાની ક્રિયાવાળા છે; જે શ્વેતા:-સફેદ રંગવાળા અવરોક્ષિણા:-અવરોધક છે, તેઓ આદિત્યાનામ્-સૂર્ય સંબંધી મહિનાઓની અવરોધક ક્રિયાવાળા છે; જે નભોસ્થ્યા:-જળની સમાન રૂપવાળા છે, તેને પાર્જન્યાઃ મેઘ દેવતાવાળા અર્થાત્ મેઘ સમાન ગુણવાળા જાણવા જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અગ્નિની આકર્ષણ ક્રિયા, પૃથિવી આદિની ધારણ ક્રિયા, વાયુઓની પ્રરોહણક્રિયા, આદિત્ય-મહિનાઓની અવરોધક ક્રિયા અને મેઘોની જલવર્ષક ક્રિયાને જાણીને તેના કાર્યોનો ઉપયોગ

કરવો જોઈએ. (૬)

**ઉન્નત ઋષભો વામનસ્તઽએન્દ્રાવૈષ્ણવા ઉન્નતઃ શિતિબાહુઃ શિતિ-
પૃષ્ઠસ્તઽએન્દ્રાબાર્હસ્પત્યાઃ શુક્રરૂપા વાજિનાઃ કલ્માષા આગ્નિમારુતાઃ શ્યામાઃ
પૌષ્ણાઃ ॥ ૭ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે ઉન્નતઃ ઊંચા, ઋષભઃ-શ્રેષ્ઠ અને વામનઃ-વાંકાં અંગોવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ એન્દ્રાવૈષ્ણવાઃ-વિદ્યુત્ અને વાયુ દેવતાવાળા છે; જે ઉન્નતઃ-ઊંચા શિતિબાહુઃ-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનારી ભુજાઓની સમાન બળવાળા અને શિતિપૃષ્ઠઃ-સૂક્ષ્મ પીઠવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ એન્દ્રાબાર્હસ્પત્યાઃ-વાયુ અને સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે શુક્રસ્વાઃ-તોતાની સમાન રૂપવાળા, વાજિનાઃ-વેગવાન કલ્માષાઃ-સફેદ અને કાળા રંગવાળા પશુઓ છે, તે-તેઓ આગ્નિમાસ્તાઃ-અગ્નિ અને વાયુદેવતાવાળા છે; જે શ્યામાઃ-કાળા રંગવાળા છે, તેઓ પૌષ્ણાઃ-પુષ્ટિના કારણે મેઘ-વાદળ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પશુઓની ઉન્નતિ અને પુષ્ટિ કરે છે, તેઓ અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

**एता ऐन्द्राग्ना द्विरूपा अग्नीषोमीया वामना अनड्वाह आग्नावैष्णवा वशा
मैत्रावरुण्योऽन्यतऽएन्यो मैत्र्यः ॥ ८ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે જે એતાઃ-એ પૂર્વોક્ત દ્વિસ્ત્રાઃ બે રૂપોવાળા છે, તેઓ એન્દ્રાગ્નાઃ-વાયુ અને વિદ્યુત્ના સંગી છે; જે વામનાઃ-વાંકાં અંગોવાળા અનડ્વાહઃ-બળદો છે, તેઓ અગ્નિષોમીયાઃ-અગ્નિ અને સોમ દેવતાવાળા તથા આગ્નાવૈષ્ણવાઃ-અગ્નિ અને વાયુ દેવતાવાળા છે; જે વશાઃ-વંધ્યા ગાયો છે, તે સર્વ મૈત્રાવરુણ્યઃ-પ્રાણ અને ઉદાન દેવતાવાળી છે; જે અન્યતઃ-અન્યત્ર પ્રાપ્ત થનારા છે, તેઓ મૈત્ર્યઃ-મિત્રનું પ્રિય વ્યવહાર-આચરણ કરે છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વાયુ અને અગ્નિ આદિના ગુણવાળા પશુઓનું પાલન કરે છે, તેઓ સર્વના ઉપકારક બને છે. (૮)

**कृष्णग्रीवा आग्नेया बभ्रवः सौम्याः श्वेता वायव्या अविज्ञाता आदित्यै
सरूपा धात्रे वत्सतर्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥ ९ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે કૃષ્ણગ્રીવાઃ-કાળી ડોકવાળા પશુઓ છે, તેઓ આગ્નેયાઃ-અગ્નિ દેવતાવાળા છે; જે બભ્રવઃ-નોળીયાના રંગ સમાન રંગવાળા છે, તેઓ સૌમ્યાઃ-સોમ દેવતાવાળા છે; જે શ્વેતાઃ-સફેદ વર્ણના છે, તેઓ વાયવ્યાઃ-વાયુ દેવતાવાળા છે; જે અવિજ્ઞાતાઃ-અવિદિત-ચિહ્નથી છી ન શકાય તેવા છે, તેઓ અદિત્યૈ-અખંડિત પ્રજજન કિયાને માટે છે; જે સસ્ત્રાઃ-સમાન રૂપવાળા છે,

તેઓ ધાત્રે-ધારણ કરનાર વાયુને માટે છે અને જે વત્સતર્યઃ-નાની વયની વાછરડીઓ છે, તે સર્વ દેવાનામ્-સૂર્ય આદિની પત્નીભ્યઃ-પાલક ક્રિયાઓને માટે છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ ખેંચનારા અને ગળનારા છે, તેઓ અગ્નિની સમાન છે; જે ધારક છે, તેઓ ઔષધિની સમાન છે; જે આવરણ-ઢાંકનાર છે, તેઓ વાયુની સમાન છે; જે અવિજ્ઞાત છે, તેઓ પ્રજનન ક્રિયાને માટે છે; જે ધારક ગુણવાળા છે, તેઓ ધારણ ક્રિયાઓ માટે છે અને જે સૂર્યનાં કિરણોની સમાન પદાર્થ છે, તેને વ્યવહાર સાધન માટે પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૯)

કૃષ્ણા ભૌમા ધૂમ્ના આન્તરિક્ષા બૃહન્તો દિવ્યાઃ શબલા વૈદ્યુતાઃ સિધ્મા-સ્તાર્કાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે કૃષ્ણાઃ-જે કાળા રંગવાળા અથવા ખેતર ખેડવાના હેતુ છે, તે-તેઓ ભૌમાઃ ભૂમિ દેવતાવાળા છે; જે ધૂમ્નાઃ-ધૂમાડિયા રંગના પશુઓ છે, તેઓ આન્તરિક્ષાઃ-અંતરિક્ષ દેવતાવાળા છે; જે દિવ્યાઃ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ વાળા બૃહન્તઃ-મોટા શબલાઃ-થોડા સફેદ રંગના છે, તેઓ વૈદ્યુતાઃ-વિદ્યુત્ દેવતાવાળા છે અને જે સિધ્માઃ-મંગલકારી છે, તેઓ તાર્કાઃ-દુઃખથી પાર કરનારા છે, તેમ જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિલેખન-ખેડવા આદિ કાર્ય કરનાર પશુ આદિ પદાર્થોને ભૂમિ આદિમાં સંયુક્ત કરે, તો તેઓ મંગલને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ધૂમ્નાન્ વસન્તાયાલભતે શ્વેતાન્ ગ્રીષ્માય કૃષ્ણાન્ વર્ષાભ્યોઽરુણાઞ્ચરદ્વે પૃષતો હેમન્તાય પિશઙ્ગાઞ્ચિશિરાય ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય વસન્તાય-વસંત ઋતુમાં સુખને માટે ધૂમ્નાન્-ધૂમાડાના રંગના પદાર્થો અને પશુઓને; ગ્રીષ્માય-ગ્રીષ્મ ઋતુમાં આનંદને માટે શ્વેતાન્-સફેદ રંગના; વર્ષાભ્યઃ-વર્ષાઋતુમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે કૃષ્ણાન્-કાળા રંગના અથવા ખેતીની સિદ્ધિ કરાવનાર ; શરદે-શરદ ઋતુમાં સુખને માટે અરુણાન્-થોડા લાલ રંગના; હેમન્તાય-હેમન્ત ઋતુમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે પૃષતઃ-જાડા-મોટા; શિશિરાય-શિશિર ઋતુમાં વ્યવહાર સિદ્ધિ માટે પિશઙ્ગાન્-લાલ-પીળા રંગના પદાર્થો અને પશુઓને આ+લભતે-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; તે સદા સુખી રહે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઋતુમાં જે પદાર્થ સંચય કરવા યોગ્ય અને સેવન કરવા યોગ્ય છે, તેનો સંચય કરીને તથા સેવન કરીને, નીરોગ બનીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષના સાધનોનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧૧)

ત્ર્યવ્યો ગાયત્ર્યૈ પઞ્ચાવયસ્ત્રિષ્ટુભૈ દિત્યવાહો જગત્યૈ ત્રિવત્સાઽનુષ્ટુભૈ તુર્યવાહં ડુષ્ણિહૈ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જે ત્ર્યવયઃ-ત્રણ ઘેટાંવાળા છે, તેઓ ગાયત્ર્યૈ-ગાયકની રક્ષાને માટે; જે પજ્જાવયઃ-પાંચ ઘેટાંવાળા છે, તેઓ ત્રિષ્ટુભે-ત્રણ શારીરિક, વાચિક અને માનસિક ત્રણ સુખોને સ્થિર કરવા માટે; જે દિત્યવાહઃ-ભૂમિ આદિને ખેડનારા બળદોને પ્રાપ્ત કરનારા છે, તેઓ જગત્યૈ-જગતની રક્ષાને માટે; ત્રિવત્સાઃ-ત્રણ વાછરડાંવાળા અથવા નામ, સ્થાન અને જન્મ ત્રણેયમાં નિવાસ કરનારા છે, તેઓ અનુષ્ટુભે-અનુકૂળતા પૂર્વક સુખોને સ્થિર કરવા માટે; અને તુર્યવાહઃ-જે તુર્ય અવસ્થા અર્થાત્ પોતાના પશુઓમાં યોથાને પ્રાપ્ત કરનારા છે, તેઓ ઝષ્ણિહે-ઉત્તમ સ્નેહને માટે પ્રયત્ન કરે તો સુખી રહે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો ગાયત્રી આદિ છંદોને ભણીને અર્થો દ્વારા સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ પશુપાલક લોકો ઘી આદિ પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરે. (૧૨)

પૃષ્ઠવાહૌ વિરાજડુક્ષાણૌ બૃહત્યાડઋષ્ભાઃ કકુભૈડનુડ્વાહઃ પૃક્ત્યૈ ધેનવોડતિછન્દસે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યો વિરાજે-વિરાટ્ છંદના અર્થને માટે પૃષ્ઠવાહઃ-પીઠથી ભાર વહન કરનારા; બૃહત્યૈ-બૃહતી છંદના અર્થને ડક્ષાણઃ-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ સાંઠ, કકુભે-કકુપ્ ઉષ્ણિક્ છંદના અર્થને માટે ઋષ્ભાઃ-અતિ બળવાન બળદ, પૃક્ત્યૈ-પંક્તિ છંદના અર્થને માટે અનુડ્વાહઃ-ગાડાને ખેંચવામાં સમર્થ બળદો, અતિ છન્દસે-અતિ જગતી છંદના અર્થને માટે ધેનવઃ-દુધાળી ગાયોનો સ્વીકાર કરે છે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વિરાટ્ આદિ છંદોથી અનેક વિદ્યા કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ ગૃહસ્થોએ ઊંટ આદિ પશુઓથી સમસ્ત કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૩)

કૃષ્ણગ્રીવા આગ્નેયા બૃભ્રવઃ સૌમ્યાડપધ્વસ્તાઃ સાવિત્રા વત્સતર્યઃ સારસ્વત્યઃ શ્યામાઃ પૌષ્ણાઃ પૃશ્નયો મારુતા બહુરૂપા વૈશ્વદેવા વૃશા દ્યાવાપૃથિવીયાઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે કૃષ્ણગ્રીવાઃ-કાળી ડોકવાળા પશુઓ છે, તેઓ આગ્નેયાઃ-અગ્નિ દેવતાવાળા; જે બૃભ્રવઃ-સર્વના ધારક અને પોષક પશુઓ છે, તેઓ સૌમ્યાઃ-સોમ દેવતાવાળા; જે અપધ્વસ્તાઃ-નીચે પડનારા પશુઓ છે, તેઓ સાવિત્રાઃ-સવિતા =સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે વત્સતર્યઃ-નાના વાછરડાંવાળી ગાયો છે, તે સર્વ સારસ્વત્યઃ-વાણી દેવતાવાળી છે; જે શ્યામાઃ-કાળા રંગના છે, તેઓ પૌષ્ણાઃ-પુષ્ટિકારક મેઘ દેવતાવાળા છે; જે પૃશ્નયઃ-પૂછવા યોગ્ય =અજ્ઞાત છે, તેઓ માસ્તાઃ-મનુષ્ય દેવતાવાળા છે; જે બહુરૂપાઃ-અનેક રૂપવાળા છે, તેઓ વૈશ્વદેવાઃ-વિશ્વદેવ દેવતાવાળા છે; જે વૃશાઃ-નિરંતર પ્રકાશમાન છે, તેઓ દ્યાવાપૃથિવીયાઃ-આકાશ અને પૃથિવી દેવતાવાળા જાણવા જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ શિલ્પી લોકો અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરે છે, તેમ ખેડૂતો પશુઓથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરે. (૧૪)

ઉક્તાઃ સંજ્વરાડૅતા ઈન્દ્રાગ્નાઃ કૃષ્ણા વારુણાઃ પૃશ્નયો મારુતાઃ

કાયાસ્તૂપરાઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **એતાઃ**-એ **ઉક્તાઃ**-કહેલા **સંચરાઃ**-સારી રીતે ચરવા વાળા પશુઓને **એન્દ્રાગ્નાઃ**-ઈન્દ્ર અને અગ્નિ દેવતાવાળા; જે **કૃષ્ણાઃ**-હળને ખેંચનારા છે, તેઓ **વાસ્માઃ**-વરુણ દેવતાવાળા; જે **પૃથ્નયઃ**-ચિત્ર-વિચિત્ર ચિહ્નવાળા છે, તેઓ **માસ્તાઃ**-મનુષ્ય દેવતાવાળા અને જે **તૂપરાઃ**-હિંસક છે, તેઓ **કાયાઃ**-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિવિધ દેશોમાં વિચરનારા પ્રાણીઓ છે, તેનાથી મનુષ્યોએ યથાયોગ્ય ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૧૫)

અગ્નયેઽનીકવતે પ્રથમજાનાલભતે મરુદ્ભ્યઃ સાન્તપનેભ્યઃ સવાત્યાન્ મરુદ્ભ્યો ગૃહમેધિભ્યો બષ્કિહાન્ મરુદ્ભ્યઃ ક્રીડિભ્યઃ સંસૃષ્ટાન્ મરુદ્ભ્યઃ સ્વતવદ્ભ્યોઽનુસૃષ્ટાન્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન્ **અનીકવતે**-પ્રશંસિત સેનાવાળા **અગ્નયે**-અગ્નિની સમાન તેજસ્વી સેનાપતિને માટે **પ્રથમજાન્**-પ્રથમ વિસ્તારયુક્ત કારણથી ઉત્પન્ન વીરોને; **સાન્તપનેભ્યઃ**-ઉત્તમ તપ અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય આદિનું આચરણ કરનારા **મરુદ્ભ્યઃ**-પ્રાણની સમાન પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનારા મનુષ્યોને માટે **સવાત્યાન્**-અનુકૂળ વાયુમાં રહેનારા પશુઓને; **ગૃહમેધિભ્યઃ**-ઘરમાં જેની ધીર બુદ્ધિ છે તે **મરુદ્ભ્યઃ**-મનુષ્યોને માટે **બષ્કિહાન્**-ચિર કાલના ઉત્પન્ન પશુઓને; **ક્રીડિભ્યઃ**-પ્રશંસિત વિહાર આનંદ કરનારા **મરુદ્ભ્યઃ**-મનુષ્યોને માટે **સંસૃષ્ટાન્**-ઉત્તમ ગુણયુક્ત પશુઓને; **સ્વતવદ્ભ્યઃ**-સ્વતઃ નિવાસવાળા **મરુદ્ભ્યઃ**-મનુષ્યોને માટે **અનુસૃષ્ટાન્**-સાથ રહેનારા પશુઓને **આલભતે**-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા વિદ્યાર્થીઓ અને પશુઓને પાળવામાં આવે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ તેને પાળવા જોઈએ. (૧૬)

ઉક્તાઃ સંચરાઽએતા એન્દ્રાગ્નાઃ પ્રાશ્રૃઙ્ગા માહેન્દ્રા બહુસ્વા વૈશ્વકર્મણાઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે જે **એતાઃ**-એ **એન્દ્રાગ્નાઃ** વાયુ અને વિદ્યુત્ દેવતાવાળા, **પ્રાશ્રૃઙ્ગાઃ**-ઉત્તમ શિંગડાવાળા, **માહેન્દ્રાઃ**-મહેન્દ્ર દેવતાવાળા, **બહુસ્વાઃ**-અનેક રંગોવાળા, **વૈશ્વકર્મણાઃ**-વિશ્વકર્મા દેવતાવાળા પશુઓ અને **સંચરાઃ**-તેના પાલનનો માર્ગ **ઉક્તાઃ**-બતાવેલ છે; તે માર્ગો પર ચાલો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા પશુ આદિના પાલનના જે પ્રકારો કહેલ છે, તેમજ વેદોમાં બતાવેલ છે. (૧૭)

ધૂમ્રા બ્રહ્મનીકાશાઃ પિતૃણાંઽ સોમવતાં બ્રહ્મવો ધૂમ્રનીકાશાઃ પિતૃણાં બર્હિષદાં

કૃષ્ણા બ્રહ્મનીકાશાઃ પિતૃણામગ્નિષ્વાત્તાનાં કૃષ્ણાઃ પૃષન્તસ્ત્રૈયમ્બકાઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે સોમવતામ્-સોમ-શાન્તિ ગુણથી યુક્ત પિતૃણામ્-માતા અને પિતાને માટે બ્રહ્મનીકાશાઃ-નોળીયાની સમાન ધૂમ્રાઃ-ધૂમાડાના રંગવાળા પશુઓ, બર્હિષદામ્-સભાસદ પિતૃણામ્-પાલન કરનારા વિદ્વાનોને માટે કૃષ્ણાઃ-કાળા, ધૂમ્રનીકાશાઃ ધૂમાડિયા સમાન બ્રહ્મવઃ-પુષ્ટિ કરનારા પશુઓ; અગ્નિષ્વાત્તાનામ્-અગ્નિ વિદ્યાના જ્ઞાતા પિતૃણામ્-પાલક વિદ્વાનોને માટે બ્રહ્મનીકાશાઃ-પાલકની સમાન, કૃષ્ણાઃ-કાળા રંગવાળા, પૃષન્તઃ-સ્થૂલ અંગોવાળા ત્રૈયમ્બકાઃ-ત્રણ સ્થાનોમાં વિશેષ ચિહ્નવાળા પશુઓ વા પદાર્થ છે; તેમ જાણો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા અને વિદ્યા જન્મના દાતા પિતર-વિદ્વાનો છે, તેઓનો ધી આદિ પદાર્થો તથા ગાય આદિ પશુઓનાં દાનથી યથાયોગ્ય સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૮)

ઉક્તાઃ સંચરાડ્ઘતાઃ શુનાસીરીયાઃ શ્વેતા વાયવ્યાઃ શ્વેતાઃ સૌર્યાઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઇતાઃ-એ શુનાસીરીયાઃ સુનાશીર દેવતાવાળા, ખેતીના સાધક, સંચરાઃ-સંચરણ કરનારા, વાયવ્યાઃ-વાયુની સમાન દિવ્ય ગુણો વાળા, શ્વેતાઃ-સફેદ રંગવાળા સૌર્યાઃ-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન અને શ્વેતાઃ-સફેદ રંગવાળા પશુઓ ઉક્તાઃ-કહેલ છે; તેઓને પોતાના કાર્યોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે પશુઓના જે દેવતાઓ બતાવેલ છે, તે પશુઓ તેઓના ગુણોના શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય છે. (૧૯)

**વસન્તાય કપિઞ્જલાનાલભતે ગ્રીષ્માય કલવિઙ્કાન્વર્ષાભ્યસ્તિત્તિરીઞ્છરદે
વર્ત્તિકા હેમન્તાય કકરાઞ્છિશિરાય વિક્કરાન્ ॥ ૨૦ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! પક્ષીઓના જ્ઞાતા મનુષ્ય વસન્તાય-વસંત ઋતુને માટે કપિઞ્જલાન્-ચાતક, તેતર પક્ષી વિશેષોને; ગ્રીષ્માય-ગ્રીષ્મ ઋતુને માટે કલવિઙ્કાન્-ચકલાઓને, વર્ષાભ્યઃ-વર્ષાઋતુને માટે તિત્તિરિન્-તેતરો ને, શરદે-શરદ ઋતુને માટે વર્ત્તિકાઃ-બતક અને લાવા પક્ષી વિશેષોને, હેમન્તાય-હેમન્ત ઋતુને માટે કકરાન્-કકર નામક પક્ષી વિશેષોને, શિશિરાય-શિશિર ઋતુને માટે વિક્કરાન્-વિક્કર નામક પક્ષી વિશેષોને આ+લભતે-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે-જે ઋતુમાં જે જે પક્ષી પ્રસન્ન કે હર્ષયુક્ત હોય છે, તે-તે ગુણોવાળા જાણવા જોઈએ. (૨૦)

**સમુદ્રાય શિશુમારાનાલભતે પર્જન્યાય મણ્ડૂકાન્દ્ભ્યો મત્સ્યાન્મિત્રાય કુલીપ
યાન્વરુણાય નાક્રાન્ ॥ ૨૧ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જળના જીવ-જંતુઓનાં પાલનને જાણનાર સમુદ્રાય-મહાજલાશય - સમુદ્રને માટે શિશુમારાન્-પોતાના બચ્ચાઓને મારનારા જલચરોને, પર્જન્યાય-મેઘ-વાદળને માટે મણ્ડૂકાન્-

દેડકાંઓને; અદ્ભ્યઃ-જલોને માટે મત્સ્યાન્-માછલીઓને, મિત્રાય-મિત્રની સમાન સુખદાયક સૂર્યને માટે કુલીપયાન્-કુલીપય નામક જલજ જંતુઓને, વસ્માય-જળને માટે નાક્રાન્-મગરોને આ+લભતે-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ જલચર જંતુઓના ગુણોના જ્ઞાતા તેની વૃદ્ધિ કરી શકે છે અથવા પકડી શકે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ કરે. (૨૧)

સોમાય હ્સાનાલભતે વાયવે બલાકાઽન્દ્રાગ્નિભ્યાં ક્રુઞ્ચાન્મિત્રાય મદ્ગૂન-વરુણાય ચક્રવાકાન્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ સોમાય-ચન્દ્રમા વા ઔષધિઓમાં ઉત્તમ સોમને માટે હ્સાન્-હંસોને, વાયવે-વાયુને માટે બલાકાઃ-બગલીઓને, ઈન્દ્રાગ્નિભ્યામ્-વાયુ અને વિદ્યુત્ને માટે ક્રુઞ્ચાન્-સારસોને મિત્રાય-વાયુને [મિત્રોને] માટે મદ્ગૂન્-જલ કાગડાઓને, વસ્માય-જળને માટે ચક્રવાકાન્-ચક્રવાઓ પક્ષી આ+લભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઉત્તમ પક્ષીઓ છે, તેઓને પ્રયત્નપૂર્વક પાળીને વધારવા જોઈએ. (૨૨)

અગ્નયે કુટરૂનાલભતે વનસ્પતિભ્યઽલૂકાન્ગનીષોમાભ્યાં ચાષાન્શિવિભ્યાં મયૂરાન્મિત્રાવરુણાભ્યાં કપોતાન્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ અગ્નયે-અગ્નિને માટે કુટસ્ત્-મરઘાંઓને, વનસ્પતિભ્યઃ-વનસ્પતિ અર્થાત્ ફૂલ વિના ફળ આપનાર વૃક્ષોને માટે અલૂકાન્-ઘુવડોને, અગ્નીષોમાભ્યામ્-અગ્નિ અને સોમને માટે ચાષાન્-નીલકંઠોને, અશ્વિભ્યામ્-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાને માટે મયૂરાન્-મોરોને, મિત્રાવસ્માભ્યામ્-મિત્ર અને વરુણને માટે કપોતાન્-કબૂતરોને, આ+લભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેઓને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે ફૂકડા આદિ પક્ષીઓનાં ગુણોને જાણે છે, તેઓ સદા તેની વૃદ્ધિ કરે છે. (૨૩)

સોમાય લ્બાનાલભતે ત્વષ્ટ્રે કૌલીકાન્ ગૌષાદીર્દેવાનાં પત્નીભ્યઃ કુલીકા દેવજામિભ્યોઽગ્નયે ગૃહપતયે પારુષ્ણાન્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓનાં કામનો જ્ઞાતા પુરુષ - સોમાય-ઐશ્વર્યને માટે લ્બાન્-લાવા-બટેરોને, ત્વષ્ટ્રે-પ્રકાશક સૂર્યને માટે કૌલીકાન્-કૌલીક નામક પક્ષીઓને, દેવાનામ્-વિદ્વાનોની પત્નીભ્યઃ-પત્નીઓને માટે ગૌષાદીઃ-ગાયને મારનાર પક્ષીણીઓને, દેવજામિભ્યઃ-વિદ્વાનોની બેનોને માટે કુલિકાઃ-કુલિકા નામક પક્ષીણીઓને, અગ્નયે-અગ્નિની સમાન ગૃહપતયે-ગૃહપતિને માટે પારુષ્ણાન્-પારુષણ નામક પક્ષીઓને આ+લભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પક્ષીઓનાં સ્વાભાવિક કર્મોને જાણીને તેનું અનુકરણ કરે છે, તેઓ બહુશ્ચત લોકોની સમાન હોય છે. (૨૪)

અહ્ને પારાવતાનાલભતે રાત્ર્યૈ સીચાપૂરહોરાત્રયોઃ સન્ધિભ્યો જતૂર્માસેંભ્યો
દાત્યૌહાન્ત્સંવત્સરાય મહતઃ સુપર્ણાન્ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કાળનો જ્ઞાતા પુરુષ અહ્ને-દિવસને માટે પારાવતાન્-કલરવ કરતાં કબૂતરોને, રાત્ર્યૈ-રાત્રિને માટે સીચાપૂઃ-સીચાપૂ નામક પક્ષીઓને, અહોરાત્રયોઃ-દિવસ-રાત્રિની સન્ધિભ્યઃ-સંધિઓ અર્થાત્ સવાર-સાંજને માટે જતૂઃ-જતૂ નામક પક્ષીઓને, માસેંભ્યઃ-મહિનાઓને માટે દાત્યૌહાન્-કાળ કાગડાઓને તથા સંવત્સરાય-વર્ષને માટે મહતઃ-મહાન સુપર્ણાન્-સુંદર પાંખોવાળા ગરુડ પક્ષીઓને આલભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેઓને પ્રાપ્ત કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતપોતાના સમયને અનુકૂળ કીડા કરનારા પક્ષીઓના સ્વભાવને જાણીને પોતાનો સ્વભાવ તેવો બનાવે છે, તેઓ અનેક વિષયોના જ્ઞાતા બની શકે છે. (૨૫)

ભૂમ્યાં આખૂનાલભતેઽન્તરિક્ષાય પાઙ્ક્તાન્ દિવે કશાન્ દિગ્ભ્યો નકુલાન્
બભ્રુકાનવાન્તરદિશાભ્યઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ભૂમિનાં જન્તુઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ - ભૂમ્યૈ-ભૂમિને માટે આખૂન્-ઉંદરોને, અન્તરિક્ષાય-આકાશને માટે પાઙ્ક્તાન્-પંક્તિ રૂપમાં ચાલનાર પક્ષીઓને, દિવે-પ્રકાશને માટે કશાન્-કશ નામક પક્ષીઓને, દિગ્ભ્યઃ-પૂર્વ આદિ દિશાઓને માટે નકુલાન્-નોળિયાઓને, અવાન્તરદિશાભ્યઃ-ઉપદિશાઓને માટે બભ્રુકાન્-ભૂરા રંગના નોળિયાઓને, આલભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ભૂમિ આદિની સમાન ઉંદર આદિના ગુણોને જાણીને ઉપકાર કરે છે, તેઓ અનેક વિજ્ઞાનવાન બની શકે છે. (૨૬)

વસુભ્યઃઽઋશ્યાનાલભતે રુદ્રેભ્યો રુરૂનાદિત્યેભ્યો ન્યઙ્કૂન્ વિશ્વેંભ્યો દેવેભ્યઃ
પૃષ્તાન્ત્સાધ્યેભ્યઃ કુલુઙ્ગાન્ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પશુઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ - વસુભ્યઃ-અગ્નિ આદિ વસુઓને માટે ઋશ્યાન્-ઋષ્ય જાતિના હરણોને, સ્ત્રેભ્યઃ-પ્રાણ આદિ રુદ્રોને માટે સ્તૂન્-રોજ નામક મૃગ વિશેષોને, આદિત્યેભ્યઃ-બાર મહિનાઓને માટે ન્યઙ્કૂન્-ન્યંકુ નામક પશુઓને વિશ્વેંભ્યઃ-સમસ્ત દેવેભ્યઃ-દિવ્ય પદાર્થો વા વિદ્વાનોને માટે પૃષ્તાન્-પૃષત્ જાતિના મૃગોને, સાધ્યેભ્યઃ-સાધ્ય લોકોને માટે કુલુઙ્ગાન્-કુલુંગ નામક પશુ વિશેષને આલભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો હરણ આદિ પશુઓના વેગમય ગુણોને જાણીને તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૨૭)

ઈશાનાય ત્વા પરસ્વતઆ લભતે મિત્રાય ગૌરાન્ વરુણાય મહિષાન્ બૃહસ્પતયે
ગવ્યાંસ્ત્વષ્ટ્ર ઉષ્ટ્રાન્ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જે મનુષ્ય - ઈશાનાય-સમર્થ જનને માટે ત્વા-આપ અને પરસ્વતઃ-પરસ્વાન નામક મૃગ વિશેષોને, મિત્રાય-મિત્રને માટે ગૌરાન્-ગૌર વર્ણના પશુઓને, વસ્ત્રાયાય-અતિ શ્રેષ્ઠને માટે મહિષાન્-ભેંસોને, બૃહસ્પતયે-બૃહસ્પતિ અર્થાત્ મહાત્માઓના રક્ષકને માટે ગવયાન્-નીલગાયોને તથા ત્વષ્ટ્રે-ત્વષ્ટા અર્થાત્ પદાર્થ વિદ્યાથી પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનારા માટે ઉષ્ટ્રાન્-ઊંટોને આલભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તે ધન-ધાન્યથી યુક્ત બને છે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે પશુઓથી યથાવત્ ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સમર્થ બને છે. (૨૮)

**પ્રજાપતયે પુરુષાન્ હસ્તિન્ આલભતે વાચે પ્લુષીં શ્ચક્ષુષે મશકાઞ્છ્રોત્રાય
ભૃજ્ઞાઃ ॥ ૨૯ ॥**

પદાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રજાપતયે-પ્રજાપાલ રાજાને માટે પુસ્ત્રાન્-પુરુષ =પુલિંગ હસ્તિનઃ-હાથીઓને, વાચે-વાણીને માટે પ્લુષીન્-પ્લુષી નામક જંતુઓને, ચક્ષુષે-નેત્રને માટે મશકાન્-મચ્છરોને, શ્રોતાય-કાનને માટે ભૃજ્ઞાઃ-ભમરાઓને આલભતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તે બળવાન અને દૃઢ ઈન્દ્રિયોવાળો બને છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રજાની રક્ષાને માટે ચતુરંગિણી સેના તથા જિતેન્દ્રિયતાને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ શ્રીમાન અર્થાત્ ધનવાન અને કાંતિમાન બને છે. (૨૯)

**પ્રજાપતયે ચ વાયવે ચ ગોમૃગો વરુણાયાર્ણયો મેષો યમાય કૃષ્ણો મનુષ્યરાજાય
મર્કટઃ શાર્દૂલાય રોહિદૃષભાય ગવયી ક્ષિપ્રશ્યેનાય વર્તિકા નીલઙ્ગોઃ કૃમિઃ
સમુદ્રાય શિશુમારૌ હિમવતે હસ્તી ॥ ૩૦ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે - પ્રજાપતયે-પ્રજાપતિ ચ-અને તેના સંબંધીઓને માટે તથા વાયવે-વાયુ ચ-અને તેના સંબંધી પદાર્થોને માટે ગોમૃગઃ-નીલગાય, વસ્ત્રાયાય-શ્રેષ્ઠ પુરુષને માટે આરણ્યઃ-જંગલી મેષઃ-ઘેટાં, યમાય-ન્યાયાધીશને માટે કૃષ્ણઃ-કાળું હરણ, મનુષ્યરાજાય-રાજાને માટે મર્કટઃ-વાનર, શાર્દૂલાય-મોટા સિંહ અર્થાત્ કેસરીને માટે રોહિત્-લાલ હરણ, વ્રહ્મભાય-શ્રેષ્ઠ અને સભ્ય પુરુષને માટે ગવયી-નીલગાય, ક્ષિપ્રશ્યેનાય-શીઘ્રગામી અને શ્યેન-બાજ પક્ષીની સમાન પુરુષને માટે વર્તિકા-બતક નીલઙ્ગોઃ-નીલ રંગના પ્રાણી-નાના કીટને માટે કૃમિઃ-નાનું જંતુ, સમુદ્રાય-સમુદ્રને માટે શિશુમારઃ-બચ્ચાઓને મારનાર શિશુમાર-જલજંતુ અને હિમવતે-જેના અનેક હિમખંડ વિદ્યમાન છે, તે પર્વતને માટે હસ્તી-હાથીનો પ્રયોગ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો-મનુષ્યોથી સંબંધ રાખનારા ઉત્તમ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે, તેઓ સાંગોપાંગ બળવાન બને છે. (૩૦)

**મયુઃ પ્રાજાપત્ય ડલો હલિક્ષ્ણૌ વૃષદ્શસ્તે ધાત્રે દિશાં કઙ્કો ધુઙ્ક્ષાગ્નેયી
કલ્વિક્કૌ લોહિતાહિઃ પુષ્કરસાદસ્તે ત્વાષ્ટ્રા વાચે ક્રુઙ્ચઃ ॥ ૩૧ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે પ્રાજાત્યઃ-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા મયુઃ-કિન્નર નિંદિત મનુષ્ય, ડલઃ-નાનું

જંતુ હલિક્ષણ:-સિંહ વિશેષ અને વૃષદંશ:-બિલાડો છે તે-તેઓ ધાત્રે-ધારક વાયુને માટે કઙ્ક:-કઠોર પીઠવાળા બગલા દિશામ્-દિશાઓને માટે, ધુઙ્ક્ષા-ધુંક્ષા નામક પક્ષીણી આગ્નેયી-અગ્નિ દેવતાવાળી, કલવિઙ્ક:-ચકલો, લોહિતાહિ-લાલ સર્પ અને પુષ્કરસાદ:-તળાવમાં રહેનારુપ્રાણી છે, તે-તે સર્વ ત્વાષ્ટ્રા: સૂર્ય દેવતાવાળા છે અને વાચે-વાણીને માટે ક્રુચ્ચ:-સારસ પક્ષી છે, તેને જાણવા જોઈએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેઓ શિયાળ અને સર્પને વશમાં કરી લે છે, તેઓ ધુરંધર છે. (૩૧)

સોમાય કુલુઙ્ગ આરુણ્યોઽજો નકુલઃ શકા તે પૌષ્ણાઃ ક્રોષ્ટા માયોરિન્દ્રસ્ય ગૌરમૃગઃ પિદ્વો ન્યઙ્કુઃ કક્કટસ્તેઽનુમત્યૈ પ્રતિશ્રુત્કાયૈ ચક્રવાકઃ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમે - સોમાય-સોમના માટે કુલુઙ્ગ:-કુલુંગ નામક પશુ વિશેષ, આરુણ્ય:- જંગલી અજ:-બકરો, નકુલ:-નોળિયો અને શકા-શક્તિમાન પશુ છે, તે-તેઓ પૌષ્ણા:-પુષ્ટિકારકના સંબંધી છે; માયો:-વિશેષ પ્રકારનું શિયાળ ક્રોષ્ટા સામાન્ય શિયાળ છે; ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્ય પુરુષના સંબંધી ગૌરમૃગ:-ગોરા રંગનું હરણ છે; જે પિદ્વ:-‘પિદ્વ’ નામક મૃગ વિશેષ, ન્યઙ્કુઃ -ન્યંકુ નામક મૃગ વિશેષ અને કક્કટ:-કક્કટ નામક મૃગ વિશેષ છે, તે-તેઓ અનુમત્યૈ-અનુમતિને માટે અને પ્રતિશ્રુત્કાયૈ-પ્રતિધ્વનિને માટે ચક્રવાક:-ચાતક પક્ષી વિશેષનો પ્રયોગ કરો તો અનેક કાર્ય કરી શકો છો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે જંગલી પશુ આદિથી ઉપકાર લેવા જાણે, તે સફળ કાર્યોવાળા બને છે. (૩૨)

સૌરી બલાકા શાર્ગઃ સૃજયઃ શયાણકસ્તે મૈત્રાઃ સરસ્વત્યૈ શારિઃ પુરુષવાક્ શ્વાવિદ્ભૌમી શાર્દૂલો વૃકઃ પૃદાકુસ્તે મન્યવે સરસ્વતે શુકઃ પુરુષવાક્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સૌરી-સૂર્ય દેવતા વાળી બલાકા-બગલી, જે શાર્ગઃ-ચાતક, સૃજયઃ- સૃજય નામક પક્ષી વિશેષ અને શયાણકઃ-શયાંડક નામક પક્ષી વિશેષ છે, તે-તેઓ મૈત્રાઃ-પ્રાણ દેવતાવાળા છે; શારિઃ-મેના, પુસ્ત્રવાક્-તોતા સરસ્વત્યૈ-નદીને માટે છે; શ્વાવિત્-સાહુડી ભૌમી-ભૂમિ દેવતાવાળી છે; શાર્દૂલઃ-કેસરી સિંહ વૃકઃ-વરુ અને પૃદાકુઃ-સર્પ છે, તે-તેઓ મન્યવે-ક્રોધને માટે છે; શુકઃ-શુદ્ધિ કરનાર પુસ્ત્રવાક્-મનુષ્ય સમાન વાણીવાળા તોતા સરસ્વતે-સમુદ્રને માટે છે, તેમ જાણો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે બગલાં આદિ પશુ-પક્ષી છે, તેમાંથી કોઈ પાળવા યોગ્ય અને કોઈ તાડન યોગ્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૩)

સુપર્ણઃ પાર્જન્ય આતિર્વાહસો દર્વિદા તે વાયવે બૃહસ્પતયે વાચસ્પતયે પૈઙ્ગરાજો- ઽલજ આન્તરિક્ષઃ પ્લવો મદ્ગુર્મત્સ્યસ્તે નદીપતયે દ્યાવાપૃથિવીયઃ કૂર્મઃ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સુપર્ણઃ-સુંદર પાંખોવાળા પક્ષીઓ છે, તે પાર્જન્યઃ-વાદળ સમાન ગુણોવાળા છે; જે આતિઃ-આતિ નામક પક્ષી, વાહસઃ-અજગર, સર્પ અને દર્વિદા-લક્કડખોદ પક્ષી વિશેષ છે, તે-તેઓ વાયવે-વાયુને માટે છે; પૈઙ્ગરાજઃ-પૈંગરાજ નામક પક્ષી બૃહસ્પતયે-મોટા પદાર્થો તથા વાચસ્પતયે-વાણીના પાલકને માટે અલજઃ-અલજ નામક પક્ષી આન્તરિક્ષઃ-અન્તરિક્ષ દેવતાવાળા છે;

પ્લવઃ-જલ બતક મદ્ગુઃ-જલ કાગડો અને મત્સ્યઃ-માછલી છે, તે સર્વ નદીપતયે-સમુદ્રને માટે છે અને જે કૂર્મઃ-કાચબો છે, તે દ્યાવાપૃથિવીયઃ-પ્રકાશ અને ભૂમિ દેવતાવાળા છે, તેમ જાણો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મેઘ-વાદળાં આદિના સમાન ગુણવાળા પશુ અને પક્ષીઓ વિશેષ છે, તેને ઉપયોગ-કાર્ય માટે પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૩૪)

**પુરુષમૃગશ્ચન્દ્રમસો ગોધા કાલકા દાર્વાઘાટસ્તે વનસ્પતીનાં કૃકવાકુઃ સાવિત્રો
હંસો વાતસ્ય નાક્રો મકરઃ કુલીપયસ્તેઽકૂપારસ્ય હિયૈ શલ્યકઃ ॥ ૩૫ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે પુરુષમૃગઃ-પુરુષોને શુદ્ધ કરનાર પશુ વિશેષ છે, તે ચન્દ્રમસઃ-ચન્દ્રમાનાં ગુણોવાળા છે; જે ગોધા-ચંદન ઘો, કાલકા-કાલકા નામક પક્ષી અને દાર્વાઘાટઃ-લક્કડખોદ છે, તે-તેઓ વનસ્પતીનામ્-વનસ્પતિઓના ગુણોવાળા છે; કૃકવાકુઃ-કૂકડાં સાવિત્રઃ-સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે હંસઃ-વાતસ્ય-વાયુના ગુણોવાળા છે; જે નાક્રઃ-મગરનાં બચ્ચાં, મકરઃ-મગર મચ્છ અને કુલીપયઃ-કુલીપય નામક જલ જંતુઓ છે, તે-તેઓ અકૂપારસ્ય-સમુદ્રના ગુણોવાળા છે; જે શલ્યકઃ-કાંટોની પાંખોવાળી સાહુડી છે, તે હિયૈ-લજ્જાને માટે છે, તેમ જાણો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે ચન્દ્રમા આદિના ગુણવાળા પશુ વિશેષ અને પક્ષી વિશેષ છે, તેને મનુષ્યોએ જાણવા જોઈએ. (૩૫)

**एण्यह्नौ मण्डूको मूषिका तित्तिरिस्ते सर्पाणां लोपाश आश्विनः कृष्णो
रात्र्या ऋक्षौ जतूः सुषिलीका त इतरजनानां जहका वैष्णवी ॥ ३६ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ણી-હરિણી છે, તે અહ્નઃ-દિવસના ગુણોવાળી છે; જે મણ્ડૂકઃ-દેડકો, મૂષિકા-ઉંદરડી અને તિત્તિરિઃ-તેતર છે, તે-તેઓ સર્પાણામ્-સર્પના ગુણોવાળા છે; લોપાશઃ-વનચર પશુ વિશેષ છે, તે આશ્વિનઃ-અશ્વિન દેવતાવાળું છે; જે કૃષ્ણઃ-કાળા રંગનું પશુ છે, તે રાત્ર્યૈ-રાત્રિના ગુણોવાળું છે; જે ઋક્ષઃ-રીંછ, જતૂઃ-જતૂ નામક પક્ષી અને સુષિલીકા-સુષિલીકા પક્ષી છે, તે-તેઓ ઇતરજનાનામ્-અન્ય મનુષ્યોના ગુણોવાળા છે તથા જહકા-અંગોનો સંકોચ કરનારી પક્ષિણી છે, તે વૈષ્ણવી-વિષ્ણુ દેવતાવાળી છે; એમ જાણો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે દિવસ આદિના ગુણવાળા પશુ-પક્ષીઓ વિશેષ છે, તેઓને તે-તે ગુણોથી જાણવા યોગ્ય છે. (૩૬)

**अन्यवापोऽर्द्धमासानामृश्यों मयूरः सुपर्णस्ते गन्धर्वाणाम्पामुद्रो मासान् कश्यपो
रोहित्कुण्डूणाची गोलत्तिका त्तेऽप्सरसां मृत्यवैऽसितः ॥ ३७ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે-જે અન્યવાપઃ-કોયલ પક્ષી છે, તે અર્ધમાસાનામ્-અર્ધમાસ-પાક્ષિક ગુણોવાળા છે; જે ઋશ્યઃ-ઋષ્ય નામક મૃગ, મયૂરઃ-મોર અને સુપર્ણઃ-સુંદર પાંખોવાળા ગરુડ પક્ષીઓ છે, તે-તેઓ ગન્ધર્વાણામ્-ગાયકોના ગુણોવાળા છે; અપામ્-ગુણોનાં અર્થ જે ઉદ્રઃ-જળચર કરચલો છે, તે માસાન્-

મહિનાઓના ગુણોવાળો છે; જે કશ્યપ:-કાયબો, રોહિત્-મૃગ વિશેષ, કુણ્ડુણાચી-કુંડુણાચી નામક વનચરી અને ગોલત્તિકા-ગોલત્તિકા નામક વનચરી વિશેષ છે, તે-તેઓ અપ્સરસામ્-કિરણ આદિના ગુણોવાળા છે તથા જે અસિત:-કાળા રંગનું પશુ વિશેષ છે, તે મૃત્યવે-મૃત્યુને માટે છે; તેમ જાણો. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે કાલ આદિ ગુણવાળા પશુ-પક્ષી છે તેઓ ઉપકારવાળા છે, તેમ તમે જાણો. (૩૭)

**વર્ષાહૂર્ત્રૈતૂનામાર્ખુઃ કશો માન્થાલસ્તે પિતૃણાં બલાયાજગરો વસૂનાં કપિઞ્જલઃ
કપોત્ત્ ઝલૂકઃ શશસ્તે નિર્ઋત્યૈ વરુણાયારણ્યો મેષઃ ॥ ૩૮ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - વર્ષાહૂઃ-વર્ષાને બોલવનારી દેડકી છે, તે ઋતુનામ્-વસંત આદિના ગુણોવાળી છે; આર્ખુઃ-ઉંદર, કશઃ-શાસનમાં રાખવા યોગ્ય ઘોડા આદિ તથા માન્થાલઃ-માન્થાલ નામક જન્તુ વિશેષ છે, તે-તેઓ પિતૃણામ્-પાલકના ગુણોવાળા છે; બલાય-બળને માટે અજગરઃ-અજગર - મોટો સર્પ, વસૂનામ્-અગ્નિ આદિ વસુઓના ગુણોને માટે કપિઞ્જલઃ-ચાતક, કપોતઃ-કબૂતર, ઝલૂકઃ-ઘૂવડ અને શશઃ-સસલા છે; તે-તેઓ નિર્ઋત્યૈ-વિનાશને માટે છે તથા જે આરણ્યઃ-જંગલી મેષઃ-ઘેટાં છે, તે વસુણાય-વરુણને માટે છે; તેમ જાણો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જે ઋતુ આદિના ગુણોથી યુક્ત પશુ-પક્ષીઓ છે, તેને તે-તે ગુણોવાળા જાણવા જોઈએ. (૩૮)

**શ્વિત્ર આદિત્યાનામુષ્ટ્રો ઘૃણીવાન્ વાર્ધ્નીનસસ્તે મત્યાઽરણ્યાય સૂમરો રુરૂ
રૌદ્રઃ ક્વયિઃ કુટરુર્દાત્યૌહસ્તે વાજિનાં કામાય પિકઃ ॥ ૩૯ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - જે શ્વિત્રઃ-રંગ-બેરંગી પશુ વિશેષ છે, તે આદિત્યાનામ્-કાલ-અવયવોના ગુણવાળું છે; જે ઉષ્ટ્રઃ-ઊંટ ઘૃણીવાન્-તેજસ્વી પશુ વિશેષ અને વાર્ધ્નીનસઃ-ગળે આંચળ ધરાવતો મોટો બોકડો છે, તે-તેઓ મત્યૈ-બુદ્ધિને માટે છે; જે સૂમરઃ-નીલગાય છે, તે અરણ્યાય-વનને માટે છે; જે રુરૂ-મૃગ વિશેષ છે, તે રૌદ્રઃ-રુદ્ર દેવતાવાળું છે; જે ક્વયિઃ-કવયિ નામક પક્ષી વિશેષ, કુટરુ-કૂકડો અને દાત્યૌહઃ-કાગડો છે, તે-તેઓ વાજિનામ્-ઘોડાઓના ગુણોવાળા છે; જે પિકઃ-કોયલ છે, તે કામાય-કામને માટે છે; એમ જાણો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય આદિના ગુણોવાળા પશુ-પક્ષીઓ છે, તેઓ તે તે સ્વભાવ વાળા છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૯)

**ખડ્ગો વૈશ્વદેવઃ શ્વા કૃષ્ણઃ કર્ણો ગર્દભસ્તરક્ષુસ્તે રક્ષાસામિન્દ્રાય
સૂકરઃ સિંહો મારુતઃ કૃકલાસઃ પિપ્પકા શકુનિસ્તે શરવ્યાયૈ વિશ્વૈષાં દેવાનાં
પૃષ્ઠતઃ ॥ ૪૦ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - ખડ્ગઃ-ઊંચા અને તીણાં સીંગડાવાળો ગેંડો છે, તે વૈશ્વદેવઃ-સર્વ વિદ્વાનોના ગુણોવાળો છે; જે કૃષ્ણઃ-કાળા રંગનો શ્વા-કૂતરો, કર્ણઃ-લાંબા કાનવાળો ગર્દભઃ-ગધેડો અને તરક્ષુઃ-વાઘ છે, તે-તેઓ રક્ષાસામ્-રાક્ષસ - દુષ્ટ હિંસક ગુણોવાળા છે; જે સૂકરઃ-ઉત્તમ શુદ્ધિ કરનાર

બળવાન સુવર-ડુક્કર છે, તે **इन्द्राय-शत्रु** વિદારક રાજાને માટે છે; જે **सिंहः**-હિંસક વાઘ અથવા સિંહ છે, તે **मास्तः**-મરુત દેવતાવાળો છે; જે **कृकलासः**-કરચલો, **पिप्पका-पिप्पका** નામક પક્ષિણી અને **शकुनिः**-પક્ષી માત્ર છે, તે-તેઓ **शरव्यायै-शर-शिक्षामां** કુશળ સ્ત્રીને માટે છે તથા જે **पृषतः**-છાંટ-ટપકાંદાર મૃગ વિશેષ છે, તે **विश्वेषाम्-सर्व देवानाम्-विद्वानोनां** ગુણોવાળા છે; તેમ જાણો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે સમસ્ત પશુ-પક્ષીઓ સર્વ ગુણોવાળા છે, તેઓને જાણીને વ્યવહારની સિદ્ધિને માટે સર્વ મનુષ્યો તેને નિયુક્ત કરે એ ઉપદેશ છે. (૪૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પશુ પક્ષી, મૃગ, સર્પ, જલજંતુઓ અને કૃમિ આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति चतुर्विंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ પञ્ચવિંશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

શાદં દુદ્ધિરવકાં દન્તમૂલૈર્મૃદં બર્સ્વૈસ્તે ગાન્દશ્ચષ્ટ્રાભ્યાશ્ચ સરસ્વત્યા ઽ અગ્રજિહ્વં
જિહ્વાયા ઉત્સાદર્મવક્રન્દેન તાલુ વાજ્ઞ હનુભ્યામપ આસ્યેન વૃષણમાણ્ડાભ્યા-
મ્દિત્યાં શ્મશ્રુભિઃ પન્થાનં ભ્રૂભ્યાં દ્યાવાપૃથિવી વર્તોભ્યાં વિદ્યુતં કનીનકાભ્યા-
શ્ચ શુક્રાય સ્વાહા કૃષ્ણાય સ્વાહા પાર્યાણિ પક્ષ્માણ્યવાર્યા ઙ્ક્ષવોઽવાર્યાણિ
પક્ષ્માણિ પાર્યા ઙ્ક્ષવઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ વિદ્યાર્થી ! તે-તારા દુદ્ધિઃ-દાંતોથી શાદમ્-લક્ષ્ય પદાર્થોનું છેદક મુખ, દન્તમૂલૈઃ-
દાંતોનાં મૂળ અને બર્સ્વૈઃ-દાંતોના પાછળના ભાગોથી અવકામ્-રક્ષક મૃદમ્-માટી, દંષ્ટાભ્યામ્-દાઢ અને
સરસ્વત્યૈ-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનવાળી વાણીથી ગામ્-વાણી, જિહ્વાયાઃ-જીભથી અગ્રજિહ્વમ્-જીભનો અગ્રભાગ,
અવક્રન્દેન-વિકળતા રહિત વ્યવહારથી ઉત્સાદમ્-વર્ણોનું ઊર્ધ્વ સ્થાન તાલુ, હનુભ્યામ્-જડબાના બે
ભાગોથી વાજમ્-અન્ન, આસ્યેન-ભક્ષ્ય પદાર્થોને ભીના કરનાર મુખથી અપઃ-જળ, આણ્ડાભ્યામ્-વીર્યના
આધાર રૂપ અંડકોષોથી વૃષણમ્-વીર્યની વર્ષા કરનાર અંગ, શ્મશ્રુભિઃ-દાઢી અને મૂછના વાળથી આદિત્યાન્-
મુખ્ય વિદ્વાનો ભ્રૂભ્યામ્-નેત્ર ગોલકનો ઉપરનો ભાગ અર્થાત્ ભ્રમરથી પન્થાનમ્-માર્ગ, વર્તોભ્યામ્-જવા-
આવવાથી દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિ, કનીનકા ભ્યામ્-તેજોમય કૃષ્ણ ગોલકનાં તારક-દૃષ્ટિથી વિદ્યુતમ્-
વિદ્યુતનો હું બોધ કરું છું.

તું શુક્રાય-વીર્યને માટે સ્વાહા-બ્રહ્મચર્યનું આચરણ, કૃષ્ણાય-વિદ્યાનાં આકર્ષણને માટે સ્વાહા-
સુંદરશીલતા યુક્ત આચરણ-ક્રિયા, પાર્યાણિ-પૂર્ણ કરવા યોગ વચન, પક્ષ્માણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય
કર્મ વા નેત્રોનાં ઉપરનાં પોષણ-વાળ, અવાર્યાઃ નદી આદિના નીચેના ભાગમાં થનાર ઙ્ક્ષવઃ-શેરડી,
અવાર્યાણિ-નીચેનાં પક્ષ્માણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય કર્મ વા પાંપણ તથા પાર્યાઃ-પાલન કરવા યોગ્ય ઙ્ક્ષવઃ-
શેરડી છે, તેને ગ્રહણ કર. (૧)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકોએ પોતાના શિષ્યોના અંગોના ઉપદેશથી પુષ્ટ બનાવીને, આહાર-વિહાર આદિ
સારી રીતે બોધ કરાવીને, સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવીને, અખંડિત બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરાવીને તથા
એશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવીને સુખી બનાવવા જોઈએ. (૧)

વાતં પ્રાણેનાપાનેન નાસિકેઽપયામમધરેણૌષ્ટ્રેન સદુત્તરેણ પ્રકાશેનાન્તર-
મનૂકાશેન બાહ્યં નિવેષ્ય મૂર્ધ્ના સ્તનયિત્વું નિર્બાધેનાશનિં મસ્તિષ્કેણ વિદ્યુતં
કનીનકાભ્યાં કર્ણાભ્યાશ્ચ શ્રોત્રશ્ચ શ્રોત્રાભ્યાં કર્ણૌ તેદનીમધરકૃણ્ઠેનાપઃ

શુષ્કકણ્ઠેન ચિત્તં મન્યાભિરદિતિઃ શીર્ષ્ણાં નિર્ઋતિં નિર્જર્જલ્પેન શીર્ષ્ણાં સંક્રોશૈઃ
પ્રાણાન્ રેષ્માર્ણંશ્ચ સ્તુપેન ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મારા ઉપદેશના ગ્રહણથી તું પ્રાણેન-પ્રાણ અને અપાનેન-અપાનથી વાતમ્-વાયુ, નાસિકે-નાકના બે છિદ્રો તથા ઉપચામમ્-સ્વીકૃત નિયમને; અધરેણ-મુખની નીચે ઓષ્ઠેન-હોઠથી અને ઉત્તરેણ-ઉપરના પ્રકાશેન-પ્રકાશરૂપ હોઠથી સદન્તરમ્-મધ્યમાં રહેલ મુખ આદિ સ્થાનને, અનુકાશેન-અનુકૂળ પ્રકાશથી બાહ્યમ્-બહારનાં અંગને મૂર્ધ્ના-શિરથી નિવેષ્યમ્-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય જ્ઞાનને; નિર્બાધેન-નિરંતર તાડનાના કારણે સ્તનચિત્તુમ્-શબ્દ કરનારી અશનિમ્-વ્યાપક વિદ્યુત્ને, મસ્તિષ્કેણ-શિરમાં સ્થિત મજ્જાના તંતુ સમૂહથી વિદ્યુતમ્-અતિ પ્રકાશમાન વિદ્યુત્ને; કનીનકાભ્યામ્-પ્રદીપ્ત અને કમનીય કર્ણાભ્યામ્-શબ્દોને સાંભળવાનાર વાયુથી કર્ણો-કાનોને; શ્રોતાભ્યામ્-સાંભળવાનાં સાધન કાનોનાં ગોલકોથી શ્રોત્રમ્-શ્રવણેન્દ્રિય તથા તેદનીમ્-શ્રવણ ક્રિયાને, અધરકણ્ઠેન-કંઠના નીચેના ભાગથી અપઃ-જલોને, શુષ્કકણ્ઠેન-શુષ્ક કંઠથી ચિત્તમ્-વિજ્ઞાનની સાધક અન્તઃકરણની વૃત્તિને, મન્યાભિઃ-વિજ્ઞાનની ક્રિયાઓથી અદિતિમ્-અવિનાશક શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને, શીર્ષ્ણાં-શિરથી નિર્ઋતિમ્-ભૂમિને, નિર્જર્જલ્પેન-નિરંતર જર્જરી ભૂત શીર્ષ્ણાં-શિરથી અને સંક્રોશૈઃ-ઉત્તમ આત્માનોથી પ્રાણાન્-પ્રાણોને પ્રાપ્ત કર. સ્તુપેન-હિંસાથી રેષ્માર્ણમ્-હિંસક અવિદ્યા આદિ રોગોનો હિન્ધિ-વિનાશ કર. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પ્રથમ વયમાં શરીર આદિ સાધનોથી શરીર અને આત્માનાં બળને સારી રીતે પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. અવિદ્યા, કુશિક્ષા તથા દુષ્ટચરણ આદિ રોગોનો સર્વથા નાશ કરવો જોઈએ. (૨)

મશકાન્કેશૈરિન્દ્રંશ્ચ સ્વપ્સા વહેન બૃહસ્પતિઃ શકુનિસાદેન કૂર્માઞ્ચૃષ્ટૈરા-
ક્રમ્ભણ- ઇંસ્થૂરાભ્યામૃક્ષલાભિઃ કૃપિ ઝ્જલાજ્વં જઙ્ઘાભ્યામધ્વાનં બાહુભ્યાં
જામ્બીલેના-રંણ્યમગ્નિમતિરુગ્મ્ભ્યાં પૂષણં દોર્ભ્યામશ્વિનાવઃસાંભ્યાંશ્ચ રુદ્રઃ
રોરાંભ્યામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે કેશૈઃ-શિરના વાળથી ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યને, શકુનિસાદેન-પક્ષીઓને પ્રાપ્ત કરવાના સાધનથી કૂર્માન્-કાચબાને તથા મશકાન્-મચ્છરોને સ્વપ્સા-ઉત્તમ કર્મ અને વહેન-દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર વાહનથી બૃહસ્પતિમ્-મહાન વાણીના સ્વામી વિદ્વાનને, સ્થૂરાભ્યામ્-સ્થૂલ ઋક્ષલાભિઃ ગતિ અને ગ્રહણ કરવા આદિ ક્રિયાઓથી કૃપિઞ્જલાન્-કૃપિંજલ નામક પક્ષીઓને જઙ્ઘાભ્યામ્-જાંઘોથી અધ્વાનમ્-માર્ગ અને જવમ્-વેગને; અંસાભ્યામ્-ખંભા, બાહુભ્યામ્-ભુજાઓ તથા શૃષ્ટૈઃ-ખરીથી આક્રમણમ્-આક્રમણને-ગતિને; જામ્બીલેન-ચકોતરો - મોટા લીંબુ આદિ ફળથી અરણ્યમ્-વનને, અગ્નિમ્-અગ્નિને અતિસ્થાભ્યામ્-અત્યંત રુચિ, પ્રીતિ અને ઇચ્છાથી પૂષણમ્-પુષ્ટિને, દોર્ભ્યામ્-હાથોથી અશ્વિનૌ-પ્રજા અને રાજાને પ્રાપ્ત કરો અને રોરાંભ્યામ્-કહેવા અને સાંભળવાથી સ્ત્વમ્-રડાવનાર વિધનને દૂર કરો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનેક ઉપાયો દ્વારા ઉત્તમ ગુણોની પ્રાપ્તિ તથા વિઘ્નોનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૩)

**અગ્નેઃ પંક્ષતિર્વાયોર્નિપંક્ષતિરિન્દ્રસ્ય તૃતીયા સોમસ્ય ચતુર્થ્યદિત્યૈ પઞ્ચમીન્દ્રાણ્યૈ
ષષ્ઠી મરુતાંશ્ચ સપ્તમી બૃહસ્પતેરષ્ટમ્યર્યમ્ણો નવમી ધાતુર્દશમીન્દ્રસ્યૈકાદશી વરુણસ્ય
દ્વાદશી યમસ્ય ત્રયોદશી ॥ ૪ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અગ્નેઃ-અગ્નિની પંક્ષતિઃ-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર =ક્રિયા કરવાનું મૂળ, વાયોઃ-વાયુની નિપંક્ષતિઃ-નિશ્ચિત વિષયનું મૂળ, ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યની તૃતીયા-ત્રણને પૂરી કરવાની ક્રિયા, સોમસ્ય-ચંદ્રમાની ચતુર્થી-ચોથી, અદિત્યૈ-અન્તરિક્ષની પંચમી-પાંચમી, ઇન્દ્રાણ્યૈ-વિદ્યુત્ની સ્ત્રીની સમાન દીપ્તિની ષષ્ઠી-છટ્ટી, મસ્તામ્-પવનની સપ્તમી-સાતમી, બૃહસ્પતેઃ-મોટાનું પાલન કરનાર મહત્ત્વની અષ્ટમી-આઠમી, અર્યમ્ણઃ-સ્વામી જનોનો સત્કાર કરનારની નવમી-નવમી, ધાતુઃ-ધારણ કરનારની દશમી-દશમી, ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યવાનની એકાદશી-અગિયારમી, વસુસ્ય-શ્રેષ્ઠ પુરુષની દ્વાદશી-બારમી અને યમસ્ય-ન્યાયાધીશની ત્રયોદશી-તેરમી ક્રિયાઓને કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે ક્રિયા, વિજ્ઞાન અને સાધનોથી અગ્નિ આદિના ગુણોને જાણીને સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

**ઇન્દ્રાગ્ન્યોઃ પંક્ષતિઃ સરસ્વત્યૈ નિપંક્ષતિર્મિત્રસ્ય તૃતીયાઽપાં ચતુર્થી નિર્ઋત્યૈ
પઞ્ચમ્યુગ્નીષોમયોઃ ષષ્ઠી સર્પાણાંશ્ચ સપ્તમી વિષ્ણોરષ્ટમી પૂષ્ણો નવમી
ત્વષ્ટુર્દશમીન્દ્રસ્યૈકાદશી વરુણસ્ય દ્વાદશી યમ્યૈ ત્રયોદશી દ્યાવાપૃથિવ્યોર્દક્ષિણં
પાર્શ્વં વિશ્વેષાં દેવાનામુત્તરમ્ ॥ ૫ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઇન્દ્રાગ્ન્યોઃ-વાયુ અને અગ્નિની પંક્ષતિઃ-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારની મૂળ પહેલી, સરસ્વત્યૈ-વાણીને માટે નિપંક્ષતિઃ-નિશ્ચિત પક્ષનું મૂળ બીજી, મિત્રસ્ય-મિત્રની તૃતીયા-ત્રીજી, અપામ્-જલોની ચતુર્થી-ચોથી, નિર્ઋત્યૈ-ભૂમિની પંચમી-પાંચમી, અગ્નીષોમયોઃ-ઉષ્ણ અને શીતકારક અગ્નિ અને જલની ષષ્ઠી-છટ્ટી, સર્પાણામ્-સર્પોની સપ્તમી-સાતમી, વિષ્ણોઃ-વ્યાપક ઈશ્વરની અષ્ટમી-આઠમી, પૂષ્ણઃ-પોષકની નવમી-નવમી, ત્વષ્ટુઃ-પ્રદીપ્ત સૂર્યની દશમી-દશમી, ઇન્દ્રસ્ય-જીવની એકાદશી-અગિયારમી, વસુસ્ય-શ્રેષ્ઠજનની દ્વાદશી-બારમી અને યમ્યૈ-ન્યાયકર્તા સ્ત્રીની ત્રયોદશી-તેરમી ક્રિયા છે, તે સર્વને તથા દ્યાવાપૃથિવ્યોઃ-પ્રકાશ અને ભૂમિના દક્ષિણમ્-જમણા પાર્શ્વમ્-ભાગને અને વિશ્વેષામ્-સર્વ દેવાનામ્-વિદ્વાનોના ઉત્તરમ્-ઉત્તર ભાગને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ મંત્રોક્ત-વાયુ, અગ્નિ આદિના વિજ્ઞાનને માટે અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓ કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫)

મરુતાંશ્ચ સ્કન્ધા વિશ્વેષાં દેવાનાં પ્રથમા કીકસા રુદ્રાણાં દ્વિતીયાદિત્યાનાં

તૃતીયા વાયોઃ પુચ્છમગ્નીષોમયોર્ભાસદૌ ક્રુઞ્ચૌ શ્રોણિભ્યામિન્દ્રાબૃહસ્પતીં ઋરુભ્યાં મિત્રાવરુણાવલ્ગાભ્યામાક્રમણશ્ચ સ્થૂરાભ્યાં બલં કુષ્ઠાભ્યામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે મસ્તામ્-મનુષ્યોના સ્કન્ધાઃ-ખંભા વિશ્વેષામ્-સર્વ દેવાનામ્-વિદ્વાનોની પ્રથમા-પહેલી ક્રિયા ક્વીકસા-અત્યંત શાસન, સ્દાણામ્-રડાવનાર વિદ્વાનોની દ્વિતીયા-બીજી તાડન ક્રિયા, આદિત્યાનામ્-અખંડિત ન્યાય કરનારા વિદ્વાનોની તૃતીયા-ત્રીજી ન્યાય ક્રિયા, વાયોઃ-વાયુ સંબંધી પુચ્છમ્-પશુનું પૂછડું અગ્નિષોમયોઃ-અગ્નિ-સૂર્ય અને જલ-ચન્દ્ર સંબંધી ભાસદૌ-પ્રકાશ આપનાર ક્રુઞ્ચૌ-બે સારસ પક્ષી, શ્રોણિભ્યામ્-કટિ પ્રદેશોને માટે ઇન્દ્રાબૃહસ્પતી-વાયુ અને સૂર્ય, ઋસ્યામ્-સાથળને માટે મિત્રાવરુણૌ-પ્રાણ અને ઉદાન, અલ્ગાભ્યામ્-અત્યંત ગતિ કરનારી ઉરુ સંધિઓને માટે આક્રમણમ્-ગતિ વિશેષ, સ્થૂરાભ્યામ્-સ્થૂલ કુષ્ઠાભ્યામ્ નિતંબના કૂપકોને માટે બલમ્-બળને સિદ્ધ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બાહુબળ, પોતાનાં શરીરની પુષ્ટિ, દુષ્ટોનું તાડન અને ન્યાયના પ્રકાશ આદિના કર્મો સદા કરવા જોઈએ. (૬)

પૂષણં વનિષ્ઠુનાન્ધાહીન્સ્થૂલગુદયા સર્પાન્ ગુદાભિર્વિહૃત આન્ત્રૈરપો વસ્તિના વૃષણમાણ્ડાભ્યાં વાજિનઃ શેપેન પ્રજાઃ રેતસા ચાષાન્ પિત્તેન પ્રદરાન્ પાયુના કૂશ્માઞ્ઠકપિણ્ડૈઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે - વનિષ્ઠુના-માગવાથી પૂષણમ્-પુષ્ટિ કરનારને, સ્થૂલગુદયા-સ્થૂલગુદાથી યુક્ત અન્ધાહીન્-આંધળા સર્પોને, ગુદાભિઃ-ગુદાસહિત વિહૃતઃ-વિશેષ કુટિલ સર્પાન્-સર્પોને, આન્ત્રૈઃ-આન્ત્રોથી અપઃ-જલોને, વસ્તિના-મૂત્રાશયથી વૃષણમ્-અંડકોષને, આણ્ડાભ્યામ્-અંડોથી વાજિનમ્-ઘોડાના શેપેન-લિંગ અને રેતસા-વીર્યથી પ્રજામ્-સંતાનને, પિત્તેન-પિત્તથી ચાષાન્-ભોજનોને પ્રદરાન્-ઉદરનાં અવયવોની પાયુના-ગુદેન્દ્રિયથી, શકપિણ્ડૈઃ-શક્તિઓથી કૂશ્માન્-શાસનને ગ્રહણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે-જે અંગ અથવા પદાર્થથી જે-જે કાર્ય સિદ્ધ થાય, તે-તે અંગ અથવા પદાર્થથી તે-તે કાર્યો સિદ્ધ કરો. (૭)

ઇન્દ્રસ્ય ક્રોડોઽદિત્યૈ પાજસ્યં દિશાં જત્રવોઽદિત્યૈ ભસજ્જીમૂતાન્ હૃદયૌ-પ્શેનાન્તરિક્ષં પુરીતતા નર્ભં ઉદર્યેણ ચક્રવાકૌ મતસ્નાભ્યાં દિવં વૃક્કાભ્યાં ગિરીન્ પ્લાશિભિરુર્પલાન્ પ્લીહ્વા વ્લ્મીકાન્ વ્લોમભિર્ગ્લૌર્ભિર્ગુલ્માન્ હિરાભિઃ સ્ત્રવન્તીર્હૃદાન્ કુક્ષિભ્યાશ્ચ સમુદ્રમુદરેણ વૈશ્વાનરં ભસ્મના ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઉત્તમ પ્રયત્નથી ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્તનું ક્રોડઃ-ડૂબવું, અદિત્યૈ-પૃથિવીને માટે પાજસ્યમ્-અન્નોની શ્રેષ્ઠતા, દિશામ્-દિશાઓની જત્રવઃ-સંધિઓ અને અદિત્યૈ-પ્રકાશની ભસત્-દીપ્તિને

જાણો.

જીમૂતાન્-મેઘોને હૃદયૌપશેન-હૃદયમાં શયન કરનાર જીવથી; પુરીતતા-હૃદયમાં રહેલી નાડીથી અન્તરિક્ષમ્-હૃદયાકાશને ઉદર્યેણ-ઉદરમાં થતા વ્યવહારથી નભઃ-જલને, ચક્રવાકૌ-પક્ષી સમાન જે પદાર્થને માટે મતસ્નાભ્યામ્-ગળાના બન્ને ભાગોથી; દિવમ્-પ્રકાશને વૃક્ષાભ્યામ્-જે ક્રિયાઓથી અવગુણોનો ત્યાગ થાય છે, તેથી ગિરીન્-પર્વતોને પ્લાશિભિઃ-ઉત્તમ ભોજન આદિ ક્રિયાઓથી, . ઉપલાન્-અન્ય પ્રકારના મેઘોને પ્લીહ્ના-હૃદયસ્થ પ્લીહા (બરોળ) નામક અવયવથી વલ્મીકાન્ -માર્ગોને ક્લોમભિઃ-ભીનાશ કરવા અને ગ્લૌભિઃ-હર્ષના ક્ષયથી, ગુલ્માન્-ઉદરમાં દક્ષિણ ભાગમાં સ્થિત ગુલ્મ નામક અંગની હિરાભિઃ-વૃદ્ધિથી, સ્રવન્તીઃ-નદીઓ અને હૃદાન્-નાના તળાવોને કુક્ષિભ્યામ્-કાંખોથી, સમુદ્રમ્-સમુદ્રને ઉદરેણ-ઉદરથી; ભસ્મના-બળેલ પદાર્થના શેષભાગ રાખથી, વૈશ્વાનરમ્-સર્વના પ્રકાશક અગ્નિને તમે જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો અનેક વિદ્યા સંબંધી બોધોને પ્રાપ્ત કરીને તથા ઉચિત આહાર-વિહારથી સર્વ અંગોની પુષ્ટિ કરીને રોગોનું નિવારણ કરે, તો તેઓ ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૮)

વિઘૃતિં નાભ્યાઃ ઘૃતઃ રસેનાપો યૂષ્ણા મરીચીર્વિપ્રુઙ્ઘિર્નીહારમૂષ્મણા શીનં વસયા પ્રુષ્વાઽઅશ્રુભિર્હાદુનીર્દૂષીકાભિર્સ્ના રક્ષાંશ્ચિત્રાણ્યઙ્ઘૈર્નક્ષત્રાણિ રૂપેણ પૃથિવીં ત્વચા જુમ્બકાય સ્વાહા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - નાભ્યા-શરીરના મધ્યભાગ નાભિથી વિઘૃતિમ્-વિશેષ કરીને ધારણાને ઘૃતમ્-ઘૃતને, રસેન-રસથી અપઃ-જલોને, યૂષ્ણા-કવાથ રૂપ રસથી, મરીચીઃ-કિરણોને; વિપ્રુઙ્ઘિઃ-વિશેષ પૂર્ણ બિન્દુઓથી નીહારમ્-સવારના સમયે ચંદ્રસમાન ઝાકળને, ઝમ્મણા-ગરમીથી શીનમ્-જામેલા ઘી ને, વસયા-નિવાસના હેતુ જીવનથી પ્રુષ્વાઃ-પોષક અને સિંચન ક્રિયાઓને, અશ્રુભિઃ-આંસુઓથી હાદુનીઃ-શબ્દોની અસ્પષ્ટ ઉચ્ચારણ ક્રિયાઓને, દૂષિકાભિઃ-વિકારોથી ચિત્રાણિ-ચિત્ર-વિચિત્ર અર્થાત્ અદ્ભુત રક્ષાંસિ-પાલન કરવા યોગ્ય અસ્ના-રક્ત આદિ પદાર્થોને, અઙ્ઘૈઃ-અંગો અને સ્ત્રેણ-રૂપથી નક્ષત્રાણિ-નક્ષત્રોને, ત્વચા-માંસ અને રક્ત આદિનું આચ્છાદન કરનાર ત્વચા ઈન્દ્રિયથી પૃથિવીમ્-ભૂમિને જાણીને જુમ્બકાય-અતિ વેગવાન દુર્વ્યસનોનાં નિવારણને માટે સ્વાહા-સત્યવાણીનો પ્રયોગ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધારણા આદિ કર્મો દ્વારા દુર્વ્યસનો અને રોગોનું નિવારણ કરીને સત્ય ભાષણ આદિ ધર્મનાં લક્ષણોને વિચાર પૂર્વક સર્વત્ર પ્રવૃત્ત કરવા જોઈએ. (૯)

હિરણ્યગર્ભઃ સર્મવર્ત્તાગ્રે ભૂતસ્ય જાતઃ પતિરેક આસીત્ ।

સ દાધાર પૃથિવીં દ્યામુતેમાં કસ્મૈ દેવાય હૃવિષા વિધેમ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે હિરણ્યગર્ભઃ-સૂર્ય આદિ તેજોમય પદાર્થ જેના ગર્ભમાં છે તે પરમાત્મા જાતઃ-પ્રકટ અને ભૂતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલા જગતના એકઃ-એક અન્ય સહાય વિના અગ્રે-ભૂમિ

આદિ સૃષ્ટિથી પૂર્વ પણ પતિ:-પાલક આસીત્-છે, અને સર્વના પ્રકાશક અવર્તત-વિદ્યમાન હતા.

સ:-તે પૃથિવીમ્-પોતાની આકર્ષણ શક્તિથી ભૂમિને ઉત્ત-અને દ્યામ્-પ્રકાશને સમ્ દાધાર-સારી રીતે ધારણ કરી રહેલ છે. જેણે ઇમામ્-આ સૃષ્ટિને રચેલ છે, તે કસ્મૈ-સુખકારક દેવાય-પ્રકાશમાન પરમાત્માને માટે હવિષા-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોથી વિદ્યેમ-પરિચર્યા અર્થાત્ સેવા કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સેવા કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે સૂર્ય આદિ સંપૂર્ણ જગતને બનાવેલ છે અને પોતાના સામર્થ્યથી ધારણ કરેલ છે, તેની ઉપાસના કરો. (૧૦)

યઃ પ્રાણતો નિમિષ્ણતો મહિત્વૈક્ ઇદ્રાજા જગતો બભૂવ ।

ય ઈશૈઽઅસ્ય દ્વિપદ્શ્ચતુષ્પદ્ઃ કસ્મૈ દેવાય હવિષા વિદ્યેમ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ય:-જે સૂર્ય પ્રાણત:-શ્વાસ લેનાર પ્રાણી અને નિમિષ્ણત:-ચેષ્ટા કરનાર જગત:-સંસારની મહિત્વા-પોતાના મહિમાથી એક:-એક અન્યની સહાય વિના ઇત્-જ રાજા-પ્રકાશ કરનાર બભૂવ-છે.

ય:-જે અસ્ય-એ દ્વિપદ:-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ અને ચતુષ્પદ:-ચાર પગવાળા ગાય આદિ પશુરૂપ જગત્નો ઈશૈ-પ્રકાશ કરે છે, તે કસ્મૈ-સુખકારક દેવાય-પ્રકાશક જગદીશ્વરને માટે હવિષા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ વા વ્યવહારથી વિદ્યેમ-સેવન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સેવન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જો સૂર્ય ન હોય તો સ્થાવર-જડ અને જંગમ-ચેતન જગત્ પોતાનું કાર્ય કરી શકે નહિ. જે સર્વથી મહાન, સર્વનો પ્રકાશક અને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિનો હેતુ છે, તેનું સર્વ મનુષ્યોએ યુક્તિથી સેવન કરવું જોઈએ. (૧૧)

યસ્યેમે હિમવન્તો મહિત્વા યસ્ય સમુદ્રઃ સરયા સહાહુઃ ।

યસ્યેમાઃ પ્રદિશો યસ્ય બાહૂ કસ્મૈ દેવાય હવિષા વિદ્યેમ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્ય-જે સૂર્યના મહિત્વા-મહિમાથી ઇમે-એ હિમવન્ત:-હિમાલય આદિ પર્વત આકર્ષિત છે; યસ્ય-જેના સરયા-સ્નેહની સહ-સાથે સમુદ્રમ્-જેમાં જલ રહે છે તે અન્તરિક્ષને આહુ:-કહે છે.

યસ્ય-જેની ઇમા:-દિશાઓ અને યસ્ય-જેની પ્રદિશઃ-ઉપદિશાઓ બાહૂ-ભુજાઓ સમાન વિદ્યમાન આહુઃ કહે છે; તસ્મૈ-તે કસ્મૈ-સુખરૂપ દેવાય-કામના કરવા યોગ્ય સૂર્યમંડળનું હવિષા-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોથી અમે વિદ્યેમ-સેવન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વથી મહાન, સર્વનો પ્રકાશકર્તા, બધાથી રસને ખેંચનારો છે તથા જેના પ્રતાપથી દિશાઓ અને ઉપદિશાઓનો વિભાગ થાય છે, તે સૂર્યલોકનું યુક્તિથી સેવન કરવું

યોગ્ય છે. (૧૨)

ય આત્મદા બલદા યસ્ય વિશ્વઽપાસતે પ્રશિષ્ઠં યસ્ય દેવાઃ ।

યસ્ય છાયામૃતં યસ્ય મૃત્યુઃ કસ્મૈ દેવાય હવિષા વિધેમ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે આત્મદા:-આત્માનો દાતા તથા બલદા:-બળનો દાતા છે અને યસ્ય-જેની પ્રશિષ્ઠમ્-ઉત્તમ શિક્ષાની વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાનો ડપાસતે-ઉપાસના - સેવન કરે છે; યસ્ય-જેના સાનિધ્યથી સર્વ વ્યવહાર ઉત્પન્ન થાય છે; યસ્ય-જેની છાયા-આશ્રય અમૃતમ્-અમૃત સ્વરૂપ છે; યસ્ય-જેની આજ્ઞાનો ભંગ કરવો એ મૃત્યુ:-મૃત્યુ સમાન છે; તે કસ્મૈ-સુખરૂપ દેવાય-સ્તુતિને યોગ્ય પરમાત્માને માટે અમે હવિષા-હોમ યોગ્ય પદાર્થોથી વિધેમ-સેવા કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરનાં અનુશાસનમાં તથા તેના દ્વારા સ્થાપિત મર્યાદામાં સૂર્ય આદિ લોક નિયમથી ચાલે છે, જે સૂર્ય વિના વર્ષા અને આયુનો ક્ષય થતો નથી, તે સૂર્ય જેણે રચેલ છે, તે [પરમેશ્વર]ની જ ઉપાસના અમે મળીને કરીએ. (૧૩)

આ નૌ ભદ્રાઃ ક્રતવો યન્તુ વિશ્વતોઽદબ્ધાસો અપરીતાસ ડદ્ધિદઃ ।

દેવા નો યથા સદમિદ્વૃધેઅસન્નપ્રાયુવો રક્ષિતારૌ દિવેદિવે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ ન:-અમે વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી ભદ્રાઃ-કલ્યાણકારી અદબ્ધાસઃ-હિંસા રહિત અપરીતાસઃ-અન્યોથી અવ્યાપ્ત અર્થાત્ સર્વ કાર્યોમાં શ્રેષ્ઠ, ડદ્ધિદઃ-દુઃખોનું ભેદન કરનાર ક્રતવઃ-યજ્ઞ વા બુદ્ધિ આ + યન્તુ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય.

યથા-જેમ ન:-અમારી સદમ્-સભામાં પ્રાપ્ત થયેલ અપ્રાયુવઃ-અનષ્ટ આયુવાળા - યુવક, દેવાઃ-પૃથિવી આદિની સમાન વિદ્વાન્ ડદ્ધિ-જે દિવે દિવે-પ્રતિદિન વૃધે-વૃદ્ધિને માટે રક્ષિતારઃ-રક્ષક અસન્-બને; એવું આચરણ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરનાં વિજ્ઞાનથી અને વિદ્વાનોના સંગથી પુષ્કળ બુદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરીને તથા સર્વ પ્રકારે ધર્મનું આચરણ કરીને સર્વના નિત્ય રક્ષક બનવું જોઈએ. (૧૪)

દેવાનાં ભદ્રા સુમતિર્ઋજૂયતાં દેવાનાંઽ રાતિર્ભિ નો નિવર્તતામ્ ।

દેવાનાંઽ સઘ્યમુપસેદિમા વયં દેવા ન આયુઃ પ્રતિરન્તુ જીવસે ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેવાનામ્-વિદ્વાનોની ભદ્રા-કલ્યાણકારી સુમતિઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ અમને પ્રાપ્ત થાય; ઋજૂયતામ્-સરળ વ્યવહાર કરનારા દેવાનામ્-દાતા વિદ્વાનોનું રાતિઃ-વિદ્યા આદિ દાન ન:-અમને અભિ+નિવર્તતામ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય; વયમ્-અમે દેવાનામ્-વિદ્વાનોની સઘ્યમ્-મિત્રતાને ઉપ+આસેદિમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ; દેવાઃ-વિદ્વાનો ન:-અમારા જીવસે-જીવનને માટે આયુઃ-આયુને પ્રતિરન્તુ-પૂર્ણ ભોગવે; તેમ તમારા પ્રત્યે વર્તાવ કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આપત વિદ્વાનોથી પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને, બ્રહ્મચર્યથી આયુની વૃદ્ધિ કરીને સદા ધાર્મિક જનોની સાથે મિત્રતા રાખવી જોઈએ. (૧૫)

તાન્પૂર્વયા નિવિદાં હૂમહે વયં ભગં મિત્રમદિતિં દક્ષમસ્ત્રિધમ્ ।

અર્યમણં વરુણઃ સોમમશ્વિના સરસ્વતી નઃ સુભગા મયસ્કરત્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે પૂર્વયા-પૂર્વજોથી સ્વીકૃત નિવિદા-વેદવાણીનાં કારણે દક્ષમ્-ચતુર, અર્યમણમ્-પ્રજ્ઞાના પાલક, અસ્ત્રિધમ્-હિંસાને અયોગ્ય, ભગમ્-ઐશ્વર્યકારક, મિત્રમ્-સર્વના મિત્ર, અદિતિમ્-અખંડિત બુદ્ધિવાળા, વરુણમ્-શ્રેષ્ઠ, સોમમ્-ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન અશ્વિના-તથા અધ્યાપક અને ઉપદેશકની હૂમહે સ્પર્ધા = કામના કરીએ છીએ; જેમ સુભગા-સુંદર ઐશ્વર્યવાળી સરસ્વતી-સર્વ વિદ્યાઓથી પૂર્ણ માતા-વેદવાણી નઃ-અમારા અને તમારા માટે મયઃ-સુખ કરત્-આપે છે; તેમ તાન્-પૂર્વોક્ત વિદ્વાનોને તેમ પણ બોલાવો અને સુખ પ્રદાન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે-જે વેદોક્ત કર્મો છે, તે-તે કરવા જોઈએ. જેમ ઉત્તમ વિદ્યાર્થી સ્પર્ધાથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જ સર્વેએ વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જેમ પૂર્ણ વિદ્યાર્થી યુક્ત માતા પોતાના સંતાનોને સુશિક્ષા દ્વારા વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરાવીને તેની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વેએ સર્વને સુખ આપીને સર્વની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

તન્નો વાતોં મયોભુ વાતુ ભેષજં તન્માતા પૃથિવી તત્પિતા દ્યૌઃ ।

તદગ્રાવાણઃ સોમસુતોં મયોભુવસ્તદશ્વિના શૃણુતં ધિષ્ણયા યુવમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક ધિષ્ણયા-ભૂમિની સમાન ધારણ કરનારા યુવમ્-તમે બન્ને અમે જે ભણ્યા છીએ તેને શૃણુતમ્-સાંભળો ! જેમ નઃ-અમારા માટે વાતઃ-વાયુ તત્-તે મયોભુ-સુખકારી ભેષજમ્-ઔષધને વાતુ-પ્રાપ્ત કરાવે છે; તત્-તેને માતા-માનનીયા માતા પૃથિવી-વિસ્તારયુક્ત ભૂમિ અને તત્-તેને પિતા-પાલક પિતા દ્યૌઃ-સૂર્ય વાતુ-પ્રાપ્ત કરાવે છે, તત્-તેને સોમસુતઃ-ઔષધિ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક મયોભુવઃ-સુખકારક ગ્રાવાણઃ-મેઘ વાન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે; તત્-તે ઔષધ તમારા માટે પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેના પૃથિવીની સમાન માતા અને દ્યૌઃ-સૂર્યસમાન પિતા હોય, તે સર્વત્રથી કુશળ બનીને સર્વને નીરોગ અને ચતુર બનાવે. (૧૭)

તમીશાનં જગતસ્તસ્થુષ્પતિં ધિયજ્જિન્મવસે હૂમહે વયમ્ ।

પૂષા નો યથા વેદસામસદ્વૃધે રક્ષિતા પાયુરદ્બ્ધઃ સ્વસ્તયે ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો વયમ્-અમે અવસે-રક્ષા આદિને માટે જગતઃ-ચર અને તસ્થુષ્ઃ-અચર જગતના પતિમ્-પાલક/રક્ષક, ધિયં જિન્વમ્-બુદ્ધિને દીપ્ત કરાવનાર તમ્-તે અખંડ જ્ઞાનમ્-સર્વને વશમાં રાખનાર,

સર્વના સ્વામી પરમેશ્વરની હૂમહે-સ્તુતિ કરીએ છીએ; તે યથા-જેમ ન:-અમારા વેદસામ્-ધનોની વૃદ્ધે-વૃદ્ધિને માટે પૂષા-પુષ્ટિકર્તા તથા રક્ષિતા-રક્ષક સ્વસ્તયે-સુખ માટે પાયુ:-બધાનો રક્ષક અને અદબ્ધ:-અહિંસક અસત્-બને; તેમ તમે તેની સ્તુતિ કરો અને તે તમારા માટે પણ રક્ષા આદિ કરનાર બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યોને આ રીતે ઉપદેશ આપે કે - “જે સર્વશક્તિમાન, નિરાકાર અને સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરની અમે ઉપાસના કરીએ છીએ અને તેને જ સુખ તથા ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર જાણીએ છીએ, તેની ઉપાસના તમે પણ કરો અને તેને જ સર્વની ઉન્નતિ કરનાર જાણો.” (૧૮)

સ્વસ્તિ ન્ ઇન્દ્રો વૃદ્ધશ્રવાઃ સ્વસ્તિ નઃ પૂષા વિશ્વવેદાઃ ।

સ્વસ્તિ ન્સ્તાક્ષ્યોઽરિષ્ટનેમિઃ સ્વસ્તિ નો બૃહસ્પતિર્દધાતુ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વૃદ્ધશ્રવાઃ-મહાન શ્રવણ વિજ્ઞાન ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન ઈશ્વર ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-ઉત્તમ સુખ ધારણ કરે છે; જે વિશ્વવેદાઃ-સમસ્ત જગતમાં વેદરૂપ ધનવાળા, પૂષા-સર્વત્રથી પુષ્ટિ કરનાર ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-સુખને ધારણ કરે છે.

જે તાક્ષ્યઃ-ઘોડાની સમાન અરિષ્ટનેમિઃ-સુખોને કરાવતા ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-ઉત્તમ સુખને ધારણ કરે છે; જે બૃહસ્પતિઃ-મહત્તત્ત્વ આદિના સ્વામી અને પાલક પરમેશ્વર ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-ઉત્તમ સુખને દધાતુ-ધારણ કરે છે; તે તમારા માટે પણ સુખને ધારણ કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પોતાનાં માટે સુખ ઈચ્છે, તેમ અન્યોને માટે પણ સુખની કામના કરે. જેમ કોઈપણ મનુષ્ય પોતાના માટે દુઃખ નથી ઈચ્છતો, તેમ અન્યોને માટે પણ દુઃખની કામના કરે નહિ. (૧૯)

પૃષદશ્વા મરુતઃ પૃશ્નિમાતરઃ શુભંયાવાનો વિદથેષુ જગમયઃ ।

અગ્નિજિહ્વા મનવઃ સૂરચક્ષસો વિશ્વે નો દેવા અવસાર્ગમન્નિહ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : જે પૃશ્નિમાતરઃ-અન્તરિક્ષ જેની માતા છે, તે વાયુઓની સમાન, પૃષદશ્વાઃ-પરિપુષ્ટ ઘોડાઓ વાળા મરુતઃ-મનુષ્ય છે તથા વિદથેષુ-સંગ્રામોમાં શુભંયાવાનઃ શુભ-કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરાવનારા, જગમયઃ-સંગ કરનારા અગ્નિજિહ્વાઃ-અગ્નિ સમાન સુપ્રકાશિત વાણીવાળા, સૂરચક્ષસઃ-ઐશ્વર્ય વા પ્રેરણામાં દૃષ્ટિ રાખનારા વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાનો મનવઃ-મનનશીલ મનુષ્યો અવસા-રક્ષા આદિની સાથે રહેલા છે; તેઓ ઇહ-આ સંસારમાં વા આ સમયમાં ન:-અમને આ+અગમન્-પ્રાપ્ત થાય. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના સંગની સદા યાચના કરવી જોઈએ. જેમ આ સંસારમાં સર્વ વાયુ સર્વનાં જીવનનો હેતુ છે, તેમ અહીં ચેતન [મનુષ્યોમાં] વિદ્વાનો છે. (૨૦)

ભદ્રં કર્ણેભિઃ શૃણુયામ દેવા ભદ્રં પશ્યેમાક્ષર્ભિર્યજત્રાઃ ।

સ્થિરૈરઙ્ગૈસ્તુષ્ટુવાઙ્સસ્તનૂભિર્વ્યશ્મેમહિ દેવહિતં યદાયુઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે યજ્ઞત્રા:-સંગ કરવાવાળા દેવા:-વિદ્વાનો ! આપના સંગથી અમે કર્ણેભિઃ:-કાનોથી ભદ્રમ્-સત્ય લક્ષણયુક્ત વચનને શ્રુણુયામ-સાંભળીએ; અક્ષભિઃ:-આંખોથી ભદ્રમ્-કલ્યાણ પશ્યેમ્-નિહાળીએ; સ્થિરૈઃ:-દૃઢ અઙ્ગૈઃ:-અંગોથી તુષ્ટુવાંસ:-સ્તુતિ કરતા તનૂભિઃ:-શરીરોથી યત્-જે દેવહિતમ્-વિદ્વાનોને હિતકારી આયુઃ:-આયુ છે; તે વિ+અશ્મેમહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્વાન બનીને સત્ય સાંભળે, સત્ય દેખે અને ઈશ્વરની સ્તુતિ કરે, તો તેઓ દીર્ઘાયુ બને. મનુષ્યોએ અસત્ય શ્રવણ, ખરાબ દર્શન, ખોટી પ્રશંસા અને વ્યભિચાર કદી પણ ન કરવા જોઈએ. (૨૧)

શ્તમિન્નુ શ્વરદો અન્તિ દેવા યત્રા નશ્ચક્રા જ્વરસં તનૂનામ્ ।

પુત્રાસો યત્ર પિતરો ભવન્તિ મા નો મધ્યા રીરિષ્તાયુર્ગન્તોઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! આપના અન્તિ-સમીપમાં રહેલ ન:-અમારા યત્ર-જે વ્યવહારમાં તનૂનામ્-શરીરોની જરસમ્-વૃદ્ધાવસ્થા શ્તમ્-સો શ્વરદઃ-વર્ષો સુધી રહે એ વ્યવહારને નુ-શીઘ્ર ચક્ર-સિદ્ધ કરો.

યત્ર-જેથી પુત્રાસઃ:-વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુઃખોથી રક્ષા કરનાર સંતાનો ઇત્-જ પિતરઃ:-પિતાની સમાન ભવન્તિ-હોય છે, તેને ન:-અમારા ગન્તોઃ:-માર્ગ, આયુઃ:-જીવન અને મધ્યા-પૂર્ણ આયુના ભોગની વચ્ચેથી મા; રીરિષ્તા-નષ્ટ ન કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દીર્ઘ અડતાળીસ વર્ષની આયુના બ્રહ્મચર્યનું સદા સેવન કરવું જોઈએ, જેથી સો વર્ષની આયુ વ્યતીત થાય ત્યારે શરીરોની વૃદ્ધાવસ્થા હોય. જેથી પિતાની વિદ્યમાનતામાં પુત્ર પણ પિતા બની જાય [અર્થાત્ પુત્રને ત્યાં પણ પુત્ર થઈ જાય].

જો બ્રહ્મચર્યની સાથે ઓછામાં ઓછા પચ્ચીસ વર્ષ વ્યતીત થઈ જાય ત્યારપછી પણ જે અતિ મૈથુનથી જો વીર્યનો ક્ષય કરે છે, તો તે રોગગ્રસ્ત અને બુદ્ધિહીન બનીને દીર્ઘાયુ કદીપણ બની શકતો નથી. (૨૨)

અદિતિઘૌરદિતિરન્તરિક્ષમદિતિર્માતા સ પિતા સ પુત્રઃ ।

વિશ્વે દેવા અદિતિઃ પઞ્ચ જના અદિતિર્જાતમદિતિર્જનિત્વમ્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઘૌઃ:-કારણરૂપથી પ્રકાશ અદિતિઃ:-અખંડિત છે; અન્તરિક્ષમ્-અન્તરિક્ષ અદિતિઃ:-અવિનાશી છે; માતા-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનારી પ્રકૃતિ સઃ:-તે પરમેશ્વર પિતા-નિત્ય પાલક અને સઃ:-તે પુત્રઃ:-ઈશ્વરના પુત્ર સમાન અવિનાશી જીવ અદિતિઃ:-વિનાશ રહિત છે; વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ:-દિવ્ય ગુણવાળા પૃથિવી આદિ પદાર્થો અદિતિઃ:-કારણરૂપથી નાશરહિત છે; પઞ્ચ-પાંચ જનાઃ:-મનુષ્ય વા પ્રાણ અદિતિઃ:-પોતાના રૂપથી-કારણરૂપથી નિત્ય છે; જાતમ્-જે કાંઈ ઉત્પન્ન થયેલ કાર્ય રૂપ જગત અને જનિત્વમ્ ઉત્પન્ન થનાર એ સર્વ અદિતિઃ:-કારણરૂપથી નિત્ય છે; એમ જાણો. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે કાંઈ કાર્ય રૂપ જગત જોઈ રહ્યા છો, તેને અદૃષ્ટ-નેત્રોથી અદર્શનીય કારણવાળું જાણો. જગતના રચયિતા પરમાત્મા અને જીવને [અવિનાશી જાણો]. પૃથિવી આદિ તત્ત્વ, જે ઉત્પન્ન જગત છે અને જે ઉત્પન્ન થશે તથા જે પ્રકૃતિ છે, તે સર્વ [કારણ] સ્વરૂપથી નિત્ય છે. એ સર્વનો કદીપણ અભાવ થતો નથી તેમજ અભાવની સાથે ઉત્પત્તિ થતી નથી. એમ જાણો. (૨૩)

મા નો મિત્રો વરુણો અર્યમાયુરિન્દ્રઃ ઋષુક્ષા મરુતઃ પરિચ્ચન્ ।

યદ્વાજિનો દેવજાતસ્ય સપ્તેઃ પ્રવક્ષ્યામો વિદથે વીર્યાણિ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ મિત્રઃ-પ્રાણની સમાન મિત્ર, વરુણઃ-ઉદાનની સમાન શ્રેષ્ઠ, અર્યમા-ન્યાયાધીશની સમાન નિયંતા, ઇન્દ્રઃ-રાજા તથા ઋષુક્ષાઃ-મહાન મસ્તઃ-મનુષ્ય નઃ-અમારી આયુઃ-આયુને મા; પરિચ્ચન્-નષ્ટ ન કરે; જેથી અમે દેવજાતસ્ય-દિવ્યગુણોથી પ્રસિદ્ધ વાજિનઃ-વેગવાન સપ્તેઃ-ઘોડાની સમાન ઉત્તમ વીર પુરુષના વિદથે-યુદ્ધમાં યત્-જે વીર્યાણિ-બળોને પ્રવક્ષ્યામઃ-બતાવીએ; તેને મા, પરિચ્ચન્-નષ્ટ ન કરે; તેવો તમે ઉપદેશ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ મનુષ્યો પોતાના જનોનાં બળને વધારવા ઈચ્છે છે, તેમ અન્યોનાં બળને વધારવાની ઈચ્છા કરે. (૨૪)

યન્નિર્ણિજા રેક્ષણસા પ્રાવૃતસ્ય રાતિં ગૃભીતામુખૃતો નયન્તિ ।

સુપ્રાહ્જો મેમ્યદ્વિશ્વરૂપ ઇન્દ્રાપૂષ્ણોઃ પ્રિયમપ્યેતિ પાથઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે મનુષ્ય નિર્ણિજા-સુંદર રૂપ તથા રેક્ષણસા-ધનથી પ્રાવૃતસ્ય-યુક્ત મનુષ્યની રાતિમ્-દાનને ગૃભીતામ્-ગ્રહણ કરીને મુખૃતઃ-આગળ નયન્તિ-પહોંચાડે છે; જે મેમ્યત્-પ્રાપ્ત થનાર, સુપ્રાહ્-સારી રીતે પૂછનાર, વિશ્વરૂપઃ-અનેક રૂપવાળા, અજઃ-જન્મ આદિથી રહિત છે, તે ઇન્દ્રાપૂષ્ણોઃ-વિદ્યુત્ અને વાયુના પ્રિયમ્-પ્રિય પાથઃ-અન્નને પણ અપ્યેતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે, તે મનુષ્ય અને તે જીવ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધનને પ્રાપ્ત કરીને શુભ કર્મોમાં વ્યય કરે છે, તેઓ સર્વ કામનાઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

एष छागः पुरो अश्वेन वाजिना पूषणो भागो नीयते विश्वदेव्यः ।

अभिप्रियं यत्पुरोडाशमर्वीता त्वष्टेदेनः सौश्रवसाय जिन्वति ॥ २६ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોથી જે ઇષઃ-એ પુરઃ-પ્રથમ વિશ્વદેવ્યઃ-સર્વ વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ, પૂષ્ણઃ-પોષક મનુષ્યના ભાગઃ-સેવવા યોગ્ય છાગઃ-બકરાં [અર્થાત્ છેદક પ્રાણી]વાજિના-વેગવાન અશ્વેન-ઘોડાઓની સાથે નીયતે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે; યત્-જે અભિપ્રિયમ્-અતિ પ્રિય પુરોડાશમ્-પુરોડાશ નામક યજ્ઞ ભાગને અર્વતા-ઉક્ત ઘોડાઓની સાથે ત્વષ્ટા-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનાર મનુષ્ય એનમ્-એ પૂર્વોક્ત

પુરોડાશને સૌશ્રવસાય-ઉત્તમ કીર્તિમાન બનવા માટે ઇત્-જ જિન્વતિ-પામીને પ્રસન્ન થાય છે; તે સદા પાલન કરવા યોગ્ય છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જો ઘોડા આદિની સાથે અન્ય બકરી આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ કરવામાં આવે, તો તે મનુષ્યો સુખની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૨૬)

યદ્દ્વિષ્ણમૃતુશો દેવયાનં ત્રિર્માનુષાઃ પર્યશ્વંનયન્તિ ।

અત્રા પૂષ્ણઃ પ્રથમો ભાગ એતિ યજ્ઞદેવેભ્યઃ પ્રતિવેદયન્નજઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : યત્-જે માનુષાઃ-મનુષ્યો ઋતુશઃ-ઋતુ અનુસાર હવિષ્યમ્-હવિ માટે હિતકારી ઉત્તમ પદાર્થ તથા દેવયાનમ્-દિવ્યગુણવાળા વિદ્વાનોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર અશ્વમ્-શીઘ્રગામી ઘોડાઓને ત્રિઃ-ત્રણવાર પરિ, નયન્તિ-સર્વત્ર લઈ જાય છે; જે અત્ર-આ સંસારમાં પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિ સંબંધી પ્રથમઃ-પ્રથમ ભાગઃ-સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે યજ્ઞમ્-યજ્ઞને-સત્કારને પ્રતિવેદયન્-જણાવનાર અજઃ-બકરાં એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે સદા રક્ષા કરવા યોગ્ય છે. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઋતુ અનુસાર આહાર-વિહાર કરે છે, ઘોડાં, બકરાં આદિ પશુઓથી ઉચિત કાર્ય લે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૭)

હોતાધ્વર્યુરાવયા અગ્નિમિન્ધો ગ્રાવગ્રાભ ઉત શશ્ઠસ્તા સુવિપ્રઃ ।

તેન યજ્ઞેન સ્વરઙ્કૃતેન સ્વિષ્ટેન વક્ષણા આડપૂણધ્વમ્ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હોતા-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર, આવયાઃ-યજ્ઞ અને દાન કરનાર, અગ્નિમિન્ધઃ-અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરનાર, ગ્રાવગ્રાભઃ-મેઘને ગ્રહણ કરનાર, શશ્ઠા-પ્રશંસા કરનાર ઉત્-અને સુવિપ્રઃ-ઉત્તમ મેઘાવી વિદ્વાનો યુક્ત, અધ્વર્યુઃ-અહિંસા યજ્ઞનો ઈચ્છુક ઉત્તમ વિદ્વાન્ જે સ્વરઙ્કૃતેન-સુંદર, સુશોભિત કરેલ =અલંકૃત સ્વિષ્ટેન-અતિ પ્રિય યજ્ઞેન-મળેલા યજ્ઞ આદિ ઉત્તમ કામથી વક્ષણાઃ-નદીઓને અલંકૃત કરે છે અર્થાત્ યજ્ઞ દ્વારા પાણી વરસાવી તે વરસાવેલા જળથી નદીઓને વહાવે છે, તેમ તેન-તે કામથી આ, પૂણધ્વમ્-સર્વત્રથી સુખી રહો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુગંધિત આદિ સારી રીતે સંસ્કૃત કરેલ હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમીને વાયુ અને વર્ષા-જળને શુદ્ધ કરીને નદી આદિના જલોને શુદ્ધ કરે છે, તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૨૮)

યૂપવ્રસ્કાડુત યે યૂપવાહાશ્ચઘાલં યેઅશ્વયૂપાય તક્ષતિ ।

યે ચાર્વૈતે પર્ચનઃ સમ્ભરન્ત્યુતો તેષામ્ભિર્ગૂર્તિન્નડ્ઙ્વતુ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : યે-જે યૂપવ્રસ્કાઃ-યૂપ = યજ્ઞ સ્તંભનું છેદન તથા બનાવનાર ઉત્-અને યે-જે યૂપવાહાઃ-

યજ્ઞ સ્તંભને પહોંચાડનાર અશ્વયૂપાય-ઘોડાને બાંધવા માટે ચષાલમ્-સ્તંભના ખંડને તક્ષતિ-છોલે છે; યે ચ-અને જે અર્વતે-ઘોડાને માટે પચનમ્-પાકના સાધનને સમ્ભરન્તિ-સારી રીતે ધારણ વા પુષ્ટ કરે છે; ઉત્તો-અને જે ઉત્તમ પ્રયત્ન કરે છે; તેષામ્-તેઓનો અભિગૂર્ત્તિ:-પુરુષાર્થ ન:-અમને ઇન્વતુ-વ્યાપ્ત અને પ્રાપ્ત થાય. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પી જનો ઘોડાને બાંધવા માટે ઉપયોગી લાકડા વિશેષથી બનનારી વસ્તુઓનું નિર્માણ કરે છે અને જે વૈદ્ય ઘોડા આદિના ઔષધો તથા સાજ-સામાનોનો સંગ્રહ કરે છે, તેઓ સદા પુરુષાર્થો બનીને અમને પ્રાપ્ત થાય. (૨૯)

उप प्रागात्सुमन्मैधायि मन्म देवानामाशाऽउप वीतपृष्ठः ।

अन्वेनं विप्रा ऋषयो मदन्ति देवानां पुष्टे चकृमा सुबन्धुम् ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : જો સુમત્-સ્વયં દેવાનામ્-વિદ્વાનોના વીતપૃષ્ઠ:-યજ્ઞને - ઉત્તમ વ્યવહારને અધાયિ-ધારણ કરે છે; જે એ વિદ્વાનો તથા મે-મારા મન્મ-વિજ્ઞાનને તથા આશા:-દિશાઓ-દિશાન્તરોને ઉપ, પ્ર, અગાત્-પ્રાપ્ત કરે છે; એનમ્-એ પ્રત્યક્ષ વ્યવહારને અનુ-અનુકૂળ દેવાનામ્-વિદ્વાનોની મધ્યમાં પુષ્ટે-પુષ્ટ બળવાન જનની નિમિત્ત ઋષયઃ-મંત્રોના અર્થ જાણનાર વિપ્રા:-ધીર બુદ્ધિ પુરુષ ઉપ, મદન્તિ-સમીપ રહીને આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે; તેને અમે સુબન્ધુમ્ ઉત્તમ બંધુ ચક્રમ-બનાવીએ. (૩૦)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોથી વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને ઋષિ બને છે; તેઓ સર્વને વિજ્ઞાનનાં દાનથી પુષ્ટ કરે છે.

જેઓ પરસ્પર ઉન્નતિ કરીને કામનાઓને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સંસારનાં હિતેથી બને છે. (૩૦)

यद्वाजिनो दामं सन्दानमर्वतो या शीर्षण्या रशना रज्जुरस्य ।

यद्वा घास्य प्रभृतमास्ये तृणः सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! વાજિનઃ-પ્રશસ્ત વેગવાળા અસ્ય-અર્વતઃ-બળવાન ઘોડાને યત્-જે દામ-ઉદર બંધન-તંગ, સંદાનમ્-આગળ-પાછળ પગ આદિનું બંધન, યા-જે શીર્ષण्या-શિરની રશના-મુખમાં વ્યાપક રજ્જુઃ-દોરી લગામ આદિ, યત્, વા-અથવા જે અસ્ય-એ ઘોડાનાં આસ્યે-મુખમાં તૃણમ્-ઘાસ પ્રભૃતમ્-રાખેલું છે તા-તે સર્વા-સર્વ તે-તારે આધીન હોય એ સર્વ ઘ-જ દેવેષુ-અન્ય વિદ્વાનોને અપિ-પણ અસ્તુ-આધીન હોય. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડાઓને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને તેના સર્વ અંગોના બંધનોને સુંદર; શ્રેષ્ઠ આહાર-પાન અને ઉત્તમ ઔષધ કરે છે, તેઓ વિજય કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે. (૩૧)

यदश्वस्य क्रविषो मक्षिकाश यद्वा स्वरौ स्वधितौ रिप्तमस्ति ।

यद्धस्तयोः शमितुर्यन्नखेषु सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે મક્ષિકા-માખી ક્રવિષઃ-ચાલનારા અશ્વસ્ય-શીઘ્રગામી ઘોડાના અંગોનું આશ-ભોજન કરે છે અર્થાત્ મલ, રક્તાદિ ખાય છે, વા-અથવા યત્-જે સ્વરૌ-સ્વર સ્વધિતૌ-વજૂની સમાન છે; શ્મિતુઃ-યજ્ઞકર્તાના હસ્તયોઃ-હાથોમાં યત્-જે રિપ્તમ્-હવિ ચોટેલી છે, અને જે યત્-નચ્છેષુ-નખોમાં ભરાયેલી અસ્તિ-છે, તાઃ-તે સર્વાઃ-સર્વ પદાર્થ તે-તમારે આધીન રહે તથા એ સર્વ વ્યવહાર દેવેષુ-વિદ્વાનોના અધિકારમાં અપિ-પણ અસ્તુ-રહે. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો એવી અશ્વશાલામાં ઘોડાઓને બાંધે, જ્યાં તેના રક્ત આદિનું માખીઓ આદિ પાન ન કરે. જેમ યજ્ઞકર્તા મનુષ્ય હાથોમાં લાગેલ હવિને ધોવા વગેરેથી દૂર કરે છે, તેમજ ઘોડા આદિના શરીરમાં ચોટેલ ધૂળ આદિનું નિત્ય નિવારણ કરવું જોઈએ. (૩૨)

યદૂર્વધ્યમુદરંસ્યાપ્વાતિ ય આમસ્યં ક્રવિષો ગન્ધોઽસ્તિ ।

સુકૃતા તચ્છમિતારઃ કૃણવન્તુત મેઘઃ શ્રૃતપાકં પચન્તુ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઉદસ્ય-ઉદરના કોષ્ઠથી યત્-જે ઊવધ્યમ્-મલીનમલ અપવાતિ-નીકળે છે; અને યઃ-જે આમસ્ય-ન પચેલ કાચા ઋવિષઃ-ખાધેલા આહારની ગન્ધઃ-ગંધ અસ્તિ-છે તત્-તેને શ્મિતારઃ-શમાવનાર સુકૃતા-સારી રીતે સુગંધિત કૃણવન્તુ-કરે; ઉત-અને મેઘમ્-પવિત્ર શ્રૃતપાકમ્-ઉત્તમપાક પચન્તુ-બનાવે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞ કરવા ઈચ્છે, તેઓ દુર્ગન્ધ યુક્ત દ્રવ્યોને છોડીને સુગંધ આદિથી યુક્ત, શુદ્ધ પાક બનાવીને અગ્નિમાં હોમ કરે. જે તેમ કરે છે, તેઓ જગત્ના હિતેથી બને છે. (૩૩)

યત્તે ગાત્રાદ્ગ્નિનાં પચ્યમાનાદ્ભિ શૂલં નિહતસ્યાવધાવતિ ।

મા તદ્ભૂમ્યામાશ્રિષન્મા તૃણેષુ દેવેભ્યસ્તદુશદ્ભ્યો રાતમસ્તુ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! નિહતસ્ય-નિશ્ચયથી શ્રમ કરેલ અર્થાત્ થાકેલ તે-તારા અગ્નિના-અન્તઃકરણ રૂપ તેજથી પચ્યમાનાત્-પકાવવામાં આવતા ગાત્રાત્-અંગથી યત્-જે શૂલમ્-શીઘ્ર બોધ કરાવનાર વચન અભિઃ-અવધાવતિ-સર્વત્રથી નીકળે છે; તત્-તે ભૂમ્યામ્-ભૂમિ પર મા, આ, શ્રિષત્-આવતા નથી, તત્-તે તૃણેષુ-ઘાસ પર મા-આવતા નથી; પરન્તુ તત્-તે ડુશદ્ભ્યઃ-સત્પુરુષો અને દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે રાતમ્-દાન અસ્તુ-હોય. (૩૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમારા જે અંગો જવર આદિથી પીડિત હોય, તેઓને વેદ્યોના સહયોગથી નીરોગ બનાવવા જોઈએ; તેઓ જે ઔષધ આપે છે, તે રોગીઓને માટે હિતકારી હોય છે. (૩૪)

યે વાજિનં પરિપશ્યન્તિ પ્વવં ય ઈમાહુઃ સુરભિર્નિર્હરેતિ ।

યે ચાર્વતો માઁસમ્ભિક્ષામુપાસત ઉતો તેષામ્ભિર્ગૂર્તિર્ન ઇન્વતુ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : યે-જે અર્વતઃ-ઘોડાનું માંસમ્ભિક્ષામ્-માંસ માંગવાની ઉપાસતે-ઉપાસના-યાચના કરે છે; ચ-

અને યે-જે ઈમ્-પ્રાપ્ત થયેલ ઘોડાને મારવા યોગ્ય આહુઃ-કહે છે; તેને નિઃ, હસ-નિરંતર ફેંકો, સર્વથા કાઢી મૂકો.

યે-જે વાજિનમ્-વેગવાન ઘોડાને પક્વમ્-પરિપક્વ સ્વભાવની પરિપ્શ્યન્તિ-પરીક્ષા કરે છે; ઉત્તો-અને તેષામ્-તેની સારી સુરભિઃ-સુગંધ અને અભિગૂર્તિઃ-પુરુષાર્થ નઃ-અમને ઇન્વતુ-પ્રાપ્ત થાય ઇતિ-એવી કામના છે. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઘોડા આદિ શ્રેષ્ઠ પશુઓનું માંસ ખાવાની ઇચ્છા કરે તેને રાજા વગેરે શ્રેષ્ઠ પુરુષો રોકે, જેથી મનુષ્યના પુરુષાર્થની સિદ્ધિ થાય. (૩૫)

યન્નીક્ષણં માંસ્પચન્યા ઉઝાયા યા પાત્રાણિ યૂષ્ણ આસેચનાનિ ।

ઊષ્મણ્યાડપિધાનાં ચરૂણામ્ઢ્ઢાઃ સૂનાઃ પરિ ભૂષ્ણન્ત્યશ્વમ્ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : યા-જે ઉષ્મણ્યા-ઉષ્ણતામાં ઉપયોગી અપિધાના-ઢાંકણું, આસેચનાનિ-સર્વત્ર જલ આદિ સિંચનનાં પાત્રાણિ-પાત્રો, યત્-જે માંસ્પચન્યાઃ-માંસ રાંધવાની ઉઝાયાઃ-તપેલીને નીક્ષણમ્-ઘૃણાથી જોવા, ચરૂણામ્-પાત્રોનાં અઢ્કાઃ-વિશેષ ચિહ્નો સૂનાઃ-પ્રસિદ્ધ છે તથા યૂષ્ણઃ-શુભ કર્મની વૃદ્ધિ કરનારા પુરુષના અશ્વમ્-ઘોડાને પરિભૂષન્તિ-સર્વથી સુશોભિત કરે છે; તે સર્વ સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે કોઈ ઘોડા આદિ ઉપકારી પશુઓ અને ઉત્તમ પક્ષીઓનાં માંસનો આહાર કરે, તો તેને યથા અપરાધ દંડ આપવો જોઈએ. (૩૬)

મા ત્વાગ્નિધ્વનીયીદ્ ધૂમગન્ધિર્મોંઘા ભ્રાજન્ત્યભિ વિક્ત જઘ્નિઃ ।

હૃષ્ટં વીતમભિગૂર્ત્તં વષટ્કૃતં તં દેવાસઃ પ્રતિ ગૃભ્ણન્ત્યશ્વમ્ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેવાસઃ-વિદ્વાન લોકો જે હૃષ્ટમ્-પ્રિય વીતમ્-પ્રાપ્ત, અભિગૂર્તમ્-સર્વત્રથી ઉદ્ધમી, વષટ્કૃતમ્-એવી ક્રિયાથી સિદ્ધ-સીધા કરેલ અશ્વમ્-વેગવાન ઘોડાને પ્રતિગૃભ્ણન્તિ-પ્રતીતિથી ગ્રહણ કરે છે, તેને તમે અભિ-સર્વત્રથી વિક્ત-જાણો. ત્વા-તે ઘોડાને ધૂમગન્ધિઃ-ગંધથી યુક્ત ધૂમાડાવાળો અગ્નિઃ-અગ્નિ મા, ધ્વનયીત્-શબ્દયુક્ત ન કરે. તમ્-તેને જઘ્નિઃ-ગંધવાળી ભ્રાજન્તી-ચમકતી ઉઝા-તપેલી મા, ધ્વનીયત્-શબ્દયુક્ત ન કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો માંસાહારી લોકોનું નિવારણ કરીને ઘોડા આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ અને રક્ષા કરે છે, તેમ તમે પણ કરો, તથા તેને અગ્નિ આદિના વિદ્વનોથી પૃથક્ રાખો. (૩૭)

નિક્રમણં નિષદનં વિવર્તનં યચ્ચ પડ્વીશમર્વતઃ ।

યચ્ચ પપૌ યચ્ચ ઘાસિં જઘાસુ સર્વા તા તે અપિ દેવેષ્વસ્તુ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તે-તારા અર્વતઃ-ઘોડાનું નિક્રમણમ્-નિરંતર ગતિ કરવાનું સ્થાન, નિષદનમ્-

બેસવાનું સ્થાન, વિવર્તનમ્-વિશેષ વર્તાવનું સ્થાન છે, યચ્ચ-તથા જે પઙ્ક્વીશમ્-પગમાં પ્રવિષ્ટ થનારી પછાડી છે, યત્, ચ-અને જે પપૌ-પાણી પીવે છે, યત્-ચ-અને જે ઘાસિમ્-ઘાસ જઘાસ-ખાય છે, તા-તે સર્વા-સર્વ કામ યુક્તિ પૂર્વક થાય અને એ સર્વ દેવેષુ-દિવ્ય ઉત્તમ ગુણવાળાઓમાં અપિ-પણ અસ્તુ-થાય. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ લોકો ઘોડા આદિને ઉત્તમ શિક્ષણથી અને તેને ખાવા-પીવા યોગ્ય પદાર્થો આપવાથી સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરો. (૩૮)

યદશ્વાયુ વાસં ઉપસ્તૃણન્ત્યધીવાસં યા હિરણ્યાન્યસ્મૈ ।

સન્દાનમર્વન્તં પઙ્ક્વીશં પ્રિયા દેવેષ્વા યામયન્તિ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ અસ્મૈ-આ અશ્વાય-ઘોડાને માટે યત્-જે વાસ:-વસ્ત્ર, અધિવાસમ્-જીન પલાણ, સન્દાનમ્-શિર બંધન - મુહેરા આદિ છે - તથા તેને યા-જે હિરણ્યાનિ-સુવર્ણના આભૂષણોથી ઉપસ્તૃણન્તિ-શણગારવામાં આવે છે, જે પઙ્ક્વીશમ્-પગથી પ્રવેશ કરતાં અર્વન્તમ્-ગતિશીલ ઘોડાનું આ + યામયન્તિ-સારી રીતે નિયમન કરે છે; તે સર્વ પદાર્થ અને કામ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં પ્રિયા-પ્રીતિકારક છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઘોડા આદિ પશુઓની યથાવત્ રક્ષા કરીને તેનો ઉપકાર શ્રદ્ધ કરે, તો તે અનેક કાર્યોની સિદ્ધિમાં ઉપકારક બને છે. (૩૯)

યત્તે સાદે મહસા શૂકૃતસ્ય પાષ્ણ્યાં વા કશ્યા વા તુતોદ ।

સ્તુચેવ તા હવિષો અધ્વરેષુ સર્વા તા તે બ્રહ્મણા સૂદયામિ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તે-આપના સાદે-ઘરમાં મહસા-મહત્તાથી વા-અથવા શૂકૃતસ્ય-શીઘ્ર કેળવેલા ઘોડાને કશ્યા-ચાબુકથી યત્-જે કારણે પાષ્ણ્યાં-પાંસળી આદિ સ્થાન વા-અથવા કક્ષા-પાર્શ્વ ભાગોમાં ઉપયુક્ત વસ્તુથી સારી રીતે અથવા તુતોદ-સાધારણ રીતે ફટકારવામાં આવે છે, તા-તે સર્વને અધ્વરેષુ-હિંસા રહિત યજ્ઞોમાં હવિષ:-હોમને યોગ્ય પદાર્થોને સ્તુચેવ-જેમ સ્તુવાથી હલાવવામાં આવે છે, તેમ બનાવે છે. તા-તે સર્વા-સર્વ વસ્તુઓ તે-તારા માટે બ્રહ્મણા-ધનથી હું સૂદયામિ-પ્રાપ્ત કરું છું. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ યજ્ઞના સાધન સ્તુવા આદિથી હવિષોને અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, તેમ જ ઘોડા આદિને સુશિક્ષાથી કેળવીને ચલાવવા જોઈએ. (૪૦)

ચતુસ્ત્રિંશદ્વાજિનો દેવબન્ધોર્વઙ્ક્રીરશ્વસ્યસ્વધિં તિસ્સમેતિ ।

અચ્છિદ્રા ગાત્રા વયુના કૃણોતુ પરુષ્પરુરનુઘુષ્યા વિ શસ્ત ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અશ્વપાલ દેવબન્ધો: વિદ્વાન્ જેના બંધુ સમાન છે, તે વાજિન:-વેગવાન

અશ્વસ્ય-ઘોડાની ચતુર્વિંશત-ચોત્રીસ-૩૪ વઙ્ક્રીઃ-વાંકી-ચૂકી ચાલોને સમ્, એતિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે/જાણે છે; તથા અચ્છિદ્રા-દોષ અર્થાત્ છેદ-ભેદ રહિત ગાત્રા-અંગોને તથા વયુના-ઉત્તમ જ્ઞાનોને કૃણોત્-સિદ્ધ કરે છે; તેમ તેના પસ્પર-પ્રત્યેક મર્મસ્થાનને અનુષ્ટુષ્ય-અનુકૂળ ઘોષિત કરીને સ્વધિતિઃ-વજૂની સમાન વિદ્યમાન તમે વિ, શસ્ત-વિશેષ રૂપથી કાર્યો કરો-છિન્ન-ભિન્ન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ નિપુણ અથ્થ શિક્ષક અર્થાત્ અથ્થપાલ ચોત્રીસ-૩૪ વિચિત્ર ગતિઓથી ઘોડાઓને ચલાવે છે અને વૈદ નીરોગ કરે છે, તેમ જ અન્ય પશુઓની રક્ષાથી ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૪૧)

एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथऽऋतुः ।

या ते गात्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्નौ ॥ ४२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એક-ઋતુઃ-વસંત આદિ ઋતુ ત્વષ્ટુઃ-સુશોભિત અશ્વસ્ય-ઘોડાના વિશસ્તા-વિશેષ રૂપને જુદુ પાડનાર છે; જે દ્વા-બે ઋતુઓ યન્તારા-ઘોડાનું નિયમન કરનારી ભવતઃ-હોય છે; તથા-તેમ યા-જે તે-તમારા ગાત્રાણામ્-અંગો વા પિણ્ડાનામ્-પિંડોને ઋતુથા-ઋતુ સંબંધી પદાર્થોને હું કૃણોમિ-બનાવું છું; તાતા-તે-તે વસ્તુઓને અગ્નૌ-અગ્નિમાં પ્ર, જુહોમિ-હોમું છું. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ અથ્થપાલ પ્રત્યેક ઋતુમાં ઘોડાને સુશિક્ષિત કરે છે-કેળવે છે, તેમ ગુરુજન વિદ્યાર્થીઓને વિવિધ ઉત્તમ યેષ્ટા કર્મ શીખવે છે.

જેમ અગ્નિમાં હવિઓના પિંડ હોમીને વાયુને શુદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્યા રૂપી અગ્નિમાં અવિદ્યારૂપી ભ્રમોને હોમીને આત્માઓને શુદ્ધ કરે છે. (૪૨)

मा त्वा तपत्रियऽआत्मापियन्तं मा स्वधितिस्तन्वु आतिष्ठिपत्ते ।

मा तै गृध्नुरविशस्तातिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः ॥ ४३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તે-આપના પ્રિયઃ-કામના કરવા યોગ્ય અથવા આનંદદાયક આત્મા-આત્મા અર્થાત્ પોતાનું સ્વરૂપ અપિયન્તમ્-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત થતાં ત્વા-આપને અતિહાય-અત્યંત છોડીને મા, તપત્-કષ્ટ અર્થાત્ સંતાપ ન આપો.

સ્વધિતિઃ વજૂ તે-આપના તન્વઃ-શરીરનાં મધ્યમાં મા, આતિષ્ઠિપત્-સ્થાપિત ન થાય.

તે-આપના છિદ્રા-દોષયુક્ત કે છિન્ન-ભિન્ન ગાત્રાણિ-અંગોને અવિશસ્તા-ન કાપનાર ગૃધ્નુઃ-લાલચુ મનુષ્ય મા, અતિષ્ઠિપત્-સ્થાપિત ન કરે તથા અસિના-તલવારથી મિથૂ-કઃ-પરસ્પર યેષ્ટા ન કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોત-પોતાના આત્માને શોકમાં નિમગ્ન ન કરવો જોઈએ, કોઈના પર પણ વજૂનો પાત ન કરવો જોઈએ તથા કોઈના ઉપકારને ભૂલવો ન જોઈએ. (૪૩)

न वाऽऽतन्त्रियसे न रिष्यसि देवाँर इदैषि पृथिभिः सुगेभिः ।

હરી તે યુજ્જા પૃષ્ઠતીઽઅભૂતામુપાસ્થાદ્વાજી ધુરિ રાસંભસ્ય ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જો તું એતત્-એ પૂર્વોક્ત વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે, તો તું ન, મ્નિયસે-મરતો નથી; ન, વૈ, રિષ્યસિ-નિશ્ચયથી મારતો નથી; પરન્તુ સુગેભિઃ-સુગમ પથિભિઃ-માર્ગોથી દેવાન્-વિદ્વાનોને ઇત્-જ એષિ-પ્રાપ્ત કરે છે. જો તે-તારા પૃષ્ઠતી-સ્થૂળ શરીરયુક્ત યંજા-રથમાં જોડાનાર હરી-બે ઘોડા પહોંચાડનાર અભૂતામ્-છે; ડ-તો વાજી-વેગવાન એક ઘોડો રાસંભસ્ય-ઘોડાની જાતથી સંબંધિત ખચ્ચર ધુરિ-રથ આદિના ધારણ કરવામાં ઉપ, અસ્થાત્-ઉપસ્થિત થાય. (૪૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાપૂર્વક સંયુક્ત કરેલા વાયુ, જલ અને અગ્નિથી યુક્ત રથમાં બેસીને મનુષ્ય માર્ગોમાં સુખપૂર્વક જાય છે, તેમ જ [સર્વ લોકો] આત્મજ્ઞાન દ્વારા પોતાનાં - આત્માનાં નિત્ય સ્વરૂપને જાણીને મૃત્યુ અને હિંસાના ભયનો ત્યાગ કરીને દિવ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરે. (૪૪)

સુગવ્યં નો વાજી સ્વશ્વ્યં પુસઃ પુત્રાંર ડત વિશ્વાપુષ્ઠરયિમ્ ।

અનાગાસ્ત્વં નોઽઅદિતિઃ કૃણોતુ ક્ષુત્રં નોઽઅશ્વો વનતાથ્ઃ હવિષ્માન્ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : જે નઃ-અમારા વાજી-ઘોડા સુગવ્યમ્-ઉત્તમ ગાયોને માટે હિતકારી તથા સ્વશ્વ્યમ્-ઉત્તમ ઘોડાઓમાં વિદ્યમાન કામોને કરે છે; જે વિદ્વાન્ પુસઃ-પુસ્તવથી યુક્ત અને પુરુષાર્થી પુત્રાન્-પુત્રોને ઉત્ત-અને વિશ્વાપુષમ્-સમસ્ત પુષ્ટિ કરનાર રયિમ્-ધનને પ્રાપ્ત કરે છે, વા જેમ અદિતિઃ-કારણરૂપથી અવિનાશી ભૂમિ નઃ-અમારા માટે અનાગાસ્ત્વમ્-અપરાધ રહિત કરે છે; તેમ આપ કૃણોતુ-કરો, જેમ હવિષ્માન્-પ્રશસ્ત સુખદાયક અશ્વઃ-વ્યાપ્તિશીલ ઘોડા નઃ-અમારા ક્ષત્રમ્-રાજ્યની વનતામ્-સેવા કરે છે; તેમ આપ પણ સેવા કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે જિતેન્દ્રિય પુરુષ બ્રહ્મચર્યથી વીર્યવાન ઘોડાની સમાન અમોઘવીર્ય હોય છે તથા પુરુષાર્થથી ધનને પ્રાપ્ત કરીને ન્યાયપૂર્વક રાજ્યને ઉન્નત કરે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૪૫)

इमा नु कं भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ।

आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् ।

यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चादित्यैरिन्द्रः सह सीषधाति ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ રાજા ચ-અને વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્વાનો ચ-પણ ઇમા-આ સમસ્ત ભુવના-લોકોને ધારણ કરે છે; તેમ અમે કમ્-સુખને નુ-શીઘ્ર સીષધામ્-સિદ્ધ કરીએ.

જેમ સગણઃ-પોતાના સહચારી આદિ ગણો સહિત વિદ્યમાન ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય આદિત્યૈઃ-મહિનાઓ સહિત સર્વ લોકોને પ્રકાશિત કરે છે; જેમ મરુદ્ભિઃ-મનુષ્યો સહિત વૈદ્ય અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે ભેષજા-ઔષધિઓ કરત્-બનાવે.

જેમ આદિત્યૈઃ-ઉત્તમ વિદ્વાનો સહ-સહિત ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-વિદ્વાનોના સત્કાર આદિ ઉત્તમ કાર્ય રૂપ યજ્ઞને ચ-અને તન્વમ્-શરીરને ચ-અને પ્રજામ્-સંતાન આદિને ચ-પણ સીષધાતિ-સિદ્ધ કરે છે, તેમ અમે પણ તેને સિદ્ધ કરીએ. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્ય સમાન નિયમપૂર્વક પ્રવૃત્ત રહીને શરીરને નીરોગ અને આત્માને વિદ્વાન્ બનાવીને, પૂર્ણ બ્રહ્મચર્ય કરીને, સ્વયં વરણ કરેલી પ્રિય સ્ત્રીનો સ્વીકાર-વિવાહ કરીને, તેમાં સંતાન ઉત્પન્ન કરીને તથા તેને સુશિક્ષિત કરીને વિદુષી બનાવે છે તેઓ ધનના પતિ બને છે. (૪૬)

અગ્ને ત્વન્નો અન્તમ ઉત ત્રાતા શિવો ભવા વસ્તુથ્યઃ ।

વસુરગ્નિર્વસુશ્રવા અચ્છા નક્ષિ દ્યુમત્તમઃ રયિંદાઃ ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વેદના જ્ઞાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! આપ અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન નઃ-અમારી અન્તમઃ-નજીક રહેનાર, ત્રાતા-રક્ષક/પાલક, શિવઃ-કલ્યાણકારી ઉત-અને વસ્તુથ્યઃ-ધરોમાં શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર કરનાર, વસુશ્રવાઃ-ધનને સાંભળનાર અને વસુઃ-વિદ્યાઓમાં વાસ કરનાર ભવ-બનો. જે દ્યુમત્તમમ્-અત્યંત પ્રકાશમાન રયિમ્-ધન અમારા માટે અચ્છ-સારી રીતે દાઃ-આપે છે, અમને નક્ષિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે ત્વમ્-આપ અમારાથી સત્કાર પામવા યોગ્ય છો. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વના ઉપકારક, વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનોનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ અને તેઓ સત્કારને પ્રાપ્ત કરીને સર્વને સત્ય ઉપદેશ આદિ ઉત્તમ ગુણ અને ધન આદિ સદા પ્રદાન કરે. જેથી પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક ઉપકારથી મહાન-સુખનો લાભ પ્રાપ્ત થાય. (૪૭)

તં ત્વા શોચિષ્ઠ દીદિવઃ સુમ્નાય નૂનમીમહે સખિંભ્યઃ ।

સ નોં બોધિ શ્રુધી હવમુરુષ્યા ણોં અઘાયતઃ સમસ્માત્ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે શોચિષ્ઠ-સદ્ગુણોથી પ્રકાશમાન દીદિવઃ-વિદ્યા આદિ ગુણોથી શોભાયુક્ત વિદ્વાન્ ! જે આપ નઃ-અમને બોધિ-બોધ = જ્ઞાન પ્રદાન કરો છો, તમ્-તે ત્વા-આપને સુમ્નાય-સુખ આપવા માટે તથા સખિંભ્યઃ-મિત્રોને માટે પણ નૂનમ્-નિશ્ચિત રૂપથી અમે ઈમહે-ઈચ્છીએ છીએ-પ્રાર્થના કરીએ છીએ, સઃ-તે આપ નઃ-અમારી હવમ્-પ્રાર્થનાને શ્રુધી-સાંભળો; સમસ્માત્-અધર્મ-પાપાયરણ કરવાના ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા અઘાયતઃ-પાપાયરણ અર્થાત્ આત્માના અપરાધનું આચરણ કરનારા દુષ્ટાચારી ડાકુ અને લંપટથી અમારી ઝસ્ત્ર્ય-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓ અધ્યાપકોને આ રીતે કહે- આપ લોકો, જે અમે ભણ્યા છીએ, તેની પરીક્ષા કરો, અમને દુષ્ટ આચરણથી દૂર રાખો, જેથી અમે સર્વની સાથે મિત્રની સમાન વ્યવહાર કરીએ. (૪૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સૃષ્ટિના પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન (૧-૯), પશુ આદિ પ્રાણીઓની શિક્ષા અને રક્ષા (૨૬, ૨૭), પોતાનાં અંગોની રક્ષા (૩૪), પરમેશ્વરથી પ્રાર્થના (૧૦-૧૩), યજ્ઞની પ્રશંસા (૧૪), પ્રજ્ઞા-સુમતિની પ્રાપ્તિ (૧૫), ધર્મની ઈચ્છા (૨૧), ઘોડાના ગુણોનું

કથન (૩૫ - ૪૦), ઘોડાઓને કેળવવા-શિક્ષણ (૪૧), આત્મજ્ઞાન (૪૩) અને ધન પ્રાપ્તિ (૪૬) નું વિધાન કરવામાં આવેલ છે, એથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ પચ્ચવિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ષડ્વિંશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઽમ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અગ્નિશ્ચ પૃથિવી ચ સન્નતે તે મે સન્નમતામદો વાયુશ્ચાન્તરિક્ષં ચ સન્નતે તે મે સન્નમતામદઽઆદિત્યશ્ચ દ્યૌશ્ચ સન્નતે તે મે સન્નમતામદઽઆપશ્ચ વરુણશ્ચ સન્નતે તે મે સં નમતામદઃ । સપ્ત સસદો અષ્ટમી ભૂતસાધની । સકામાં ૨ ॥ ઽઅધ્વનસ્કુરુ સંજ્ઞાનમસ્તુ મેઽમુના ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ-જે મે-મારા માટે અગ્નિ:-અગ્નિ ચ-અને પૃથિવી-(ભૂમિ ચ-પણ સન્નતે-અનુકૂળ છે; તે-તેઓ અદ:-એ વર્તમાન સુખને સન્નમતામ્-અનુકૂળ કરે. જે મે-મારા માટે વાયુ:-વાયુ ચ-અને અન્તરિક્ષમ્-આકાશ ચ-પણ સન્નતે-અનુકૂળ છે; તે-તેઓ અદ:-એ વર્તમાન સુખને સન્નમતામ્-અનુકૂળ કરે. જે મે-મારા માટે આદિત્ય:-સૂર્ય ચ-અને દ્યૌઃ-તેનો પ્રકાશ ચ-પણ સન્નતે-અનુકૂળ છે; તે-તેઓ અદ:-એ વર્તમાન સુખને સન્નમતામ્-અનુકૂળ કરે. જે મે-મારા માટે આપ:-જળ ચ-અને વરુણ:-જળના અવયવી ચ-પણ સન્નતે-અનુકૂળ છે; તે-તેઓ અદ:-એ વર્તમાન સુખને સન્નમતામ્-અનુકૂળ કરે. જે મે-મારા માટે અષ્ટમી-આઠમી ભૂતસાધની-પ્રાણીઓનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારી વા સપ્ત-સાત સંસદ:-સભાઓ તથા સકામાન્-સમાન કામનાવાળા અધ્વન:-માર્ગોને સિદ્ધ કરે; તેમ તમે કુરુ-આચરણ કરો. અમુના-આ રીતે મે-મારા માટે સંજ્ઞાનમ્-ઉત્તમ જ્ઞાન અસ્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેમ એ સર્વ તમારા માટે પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જો અગ્નિ આદિ પંચભૂતોને યથાવત જાણીને પ્રયોગ કરવામાં આવે, તો તેઓ આ વર્તમાન સુખને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧)

યથેમાં વાચં કલ્યાણીમાવદાનિ જનેભ્યઃ । બ્રહ્મરાજન્યાભ્યાઃશૂદ્રાય ચાર્ય્યાય ચ સ્વાય ચારણાય । ચ પ્રિયો દેવાનાં દક્ષિણાયૈ દાતુરિહ ભૂયાસમયં મે કામઃ સમૃદ્ધ્યતામુપં માદો નમતુ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જેમ હું ઈશ્વર બ્રહ્મરાજન્યાભ્યામ્-બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, અર્યાય-વૈશ્ય, શૂદ્રાય-ચતુર્થ વર્ણ-શૂદ્ર, ચ-અને સ્વાય-પોતાનાં સ્ત્રી, સેવક આદિ ચ-અને અરણાય-ઉત્તમ લક્ષણવાળા, સમીપ પ્રાપ્ત અંત્યજને માટે ચ-પણ જનેભ્યઃ-એ ઉક્ત સર્વ મનુષ્યોને માટે ઇહ-આ સંસારમાં ઇમામ્-એ પ્રકાશિત કલ્યાણીમ્-કલ્યાણ કરનારી/સુખદાત્રી વાચમ્-ચાર વેદ રૂપ વાણીનો આવદાનિ-ઉપદેશ કરું છું; તેમ

તમે પણ સારી રીતે ઉપદેશ કરો.

જેમ હું દાતુ:-દાન આપનારના સંસર્ગી દેવાનામ્-વિદ્વાનોની દક્ષિણાયૈ-દક્ષિણા અર્થાત્ દાન આદિને માટે પ્રિય:-પ્રિય ભૂયાસમ્-બનું છું; તથા મે-મારી અયમ્-આ કામ:-કામના સમૃદ્ધતામ્-શ્રેષ્ઠતાથી વૃદ્ધિ પામે છે; મા-મને અદ:-તે પરોક્ષ સુખ ઉપ, નમતુ-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ આપ લોકોને પણ પ્રાપ્ત થાય; તે પરોક્ષ સુખ અને કામના આપને પણ પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યોની પ્રત્યે ઉપદેશ આપે છે કે - ચારે વેદોની એ વાણીનો સર્વ મનુષ્યોનાં હિતને માટે મેં ઉપદેશ કરેલ છે, તેમાં કોઈનો અનધિકાર નથી. [સર્વ અધિકારી છે.] જેમ હું પક્ષપાત રહિત સર્વ મનુષ્યોમાં વર્તમાન રહીને પ્રિય બનું છું, તેમ તમે પણ બનો. તેમ કરવાથી તમારી સર્વ કામનાઓ સિદ્ધ થશે એમ નિશ્ચિત છે. (૨)

**બૃહસ્પતે અતિ યદ્યૌ અર્હાદ્ દ્યુમદ્વિ ભાતિ ક્રતુમજ્જનેષુ । યદ્દીદયચ્છવસઽ
ઋતપ્રજાત તદસ્માસુ દ્રવિણં ધેહિ ચિત્રમ્ । ઉપયામગૃહીતોઽસિ બૃહસ્પતયે ત્વૈષ તે
યોનિર્બૃહસ્પતયે ત્વા ॥ ૩ ॥**

પદાર્થ : હે બૃહસ્પતે-પ્રકૃતિ આદિ મહાન પદાર્થો તથા જીવોના પાલક ઈશ્વર ! જે આપ ઉપયામગૃહીત:-યમ-નિયમ આદિ યોગ સાધનોથી ઓળખાયા અસિ-છો; તે ત્વા-આપને બૃહસ્પતયે-મહાન વેદવાણીના પાલન માટે ણ્ષ:-આ તે-આપના યોનિ:-પ્રમાણ છે. તે બૃહસ્પતયે-મહાન આપ જનોના પાલક ત્વા-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ.

હે ઋતપ્રજાત-શ્રેષ્ઠતાથી સત્યને ઉત્પન્ન કરનાર અર્ચ:-સ્વામી અને ઈશ્વર આપ જનેષુ-મનુષ્યોમાં અર્હાત્-યોગ્ય કામથી યત્-જે દ્યુમત્-પ્રશસ્ત પ્રકાશથી યુક્ત મન ક્રતુમત્-પ્રશસ્ત બુદ્ધિ અને કર્મથી યુક્ત મન અતિ વિભાતિ-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશ કરી રહેલ છે; યત્-જે શવસા-બળથી દીદયત્-પ્રકાશિત થતું વર્તમાન છે તત્-ચિત્રમ્-વિચિત્ર વિજ્ઞાનમય મનને અને દ્રવિણમ્-ધન અને યશને અસ્માસુ-અમારામાં ધેહિ-સ્થાપિત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેથી મહાન, દયાળુ, ન્યાયકારી અને સૂક્ષ્મ અન્ય કોઈ પદાર્થ નથી, જેઓએ વેદોના આવિર્ભાવ-પ્રકાશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને સુશોભિત કરેલ છે. જેઓએ અદ્ભુત વિજ્ઞાન અને ધનનો વિસ્તાર કરેલ છે, જે યોગાભ્યાસ દ્વારા જાણવા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છે, તે જ ઈશ્વર આપણા સર્વના સર્વાધિક ઉપાસનીય છે; એમ તમે જાણો. (૩)

**इन्द्र गोमन्निहा याहि पिबा सोमः शतक्रतो विद्यद्विर्ग्रावभिः सुतम् ।
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा गोमत एष ते योनिरिन्द्राय त्वा गोमते ॥ ४ ॥**
પદાર્થ : હે શતક્રતો-અસંખ્ય બુદ્ધિયુક્ત, ગોમન્-પ્રશસ્ત વાણીયુક્ત, ઇન્દ્ર-વિદ્વાન્ પુરુષ ! આપ

इह-आ संसारमां आ+याहि-आवो, प्राप्त थाओ; अने विद्यभ्दिः-विद्यमान ग्रावभिः-मेघोथी सुतम्-उत्पन्न सोमम्-रसनं पिब-पान करो.

જેથી આપ ઉપયામગૃહીતઃ-યમ-નિયમોનાં અનુષ્ઠાનથી ઈન્દ્રિયોને જીતનાર - જિતેન્દ્રિય અસિ-છો, તેથી ગોમતે-પ્રશસ્ત પૃથિવીનાં રાજ્યથી યુક્ત પુરુષને માટે ઇન્દ્રાય-ઉત્તમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપના ણ્ષઃ-આ યોનિઃ-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય છે, તે ગોમતે-પ્રશસ્ત વેદવાણીવાળા તથા ઇન્દ્રાય-પ્રશસ્ત ઐશ્વર્યવાળા ત્વા-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વેદકશાસ્ત્રની વિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ, મેઘથી ઉત્પન્ન ઔષધોનું સેવન કરે છે અને યોગનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ સુખ અને ઐશ્વર્ય સંપન્ન બને છે. (૪)

इन्द्राय॑हि वृ॒त्रह॑न् पि॒बा॒ सोमं॑ शतक्रतो । गोम॑द्धिर्ग्रा॒वभिः॑ सु॒तम् ।

उ॒प॒या॒म॒गृ॒ही॒तो॒ऽसी॒न्द्राय॑ त्वा॒ गोम॑त॒ऽण्ષ ते॒ યોનિ॑રિન્દ્રાય ત્વા ગોમતે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-શત = અસંખ્ય બુદ્ધિ અને કર્મયુક્ત વૃત્રહન્-મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન શત્રુઓનું હનન કરનાર ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્ય યુક્ત વિદ્વાન્ આપ ગોમદ્ધિઃ-જેમાં ખૂબજ કિરણોથી વિદ્યમાન પદાર્થો ગ્રાવભિઃ-ગર્જનાયુક્ત વાદળોની સાથે આ+યાહિ-આવો; તથા મેઘોથી સુતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ સોમમ્-ઐશ્વર્યકારક રસનું પિબ-પાન કરો.

જે કારણે આપ ગોમતે-ખૂબ દૂધ આપતી ગાયોથી યુક્ત ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે ઉપયામગૃહીતઃ-ઉત્તમ નિયમોના અનુષ્ઠાનથી આત્માને વશમાં કરેલ અસિ-છો. તે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપના ણ્ષઃ-એ ગોમતે-પ્રશસ્ત ભૂમિના રાજ્યથી યુક્ત ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યનાં ઇચ્છુક માટે યોનિઃ-ઘર છે, તે ત્વા-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ મેઘનાશક સૂર્ય સમસ્ત સંસારના રસનું પાન કરીને [અને પછી] તેને વરસાવીને સંપૂર્ણ સંસારને તૃપ્ત કરે છે, તેમ જ તું પણ મહાઔષધિઓના રસનું પાન કરીને ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ માટે પ્રયત્ન કર. (૫)

ऋ॒तावा॑नं वै॒श्वान॒र॒मृत॑स्य॒ ज्योति॑ष॒स्पति॑म् । अज॑स्रं घ॒र्ममी॑महे ।

उ॒प॒या॒મ॒ગૄહી॑તોઽસિ વૈશ્વાનરાય ત્વૈષ તે યોનિવૈશ્વાનરાય ત્વા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ઋતાવાનમ્-ઋત = જળને વિભક્ત કરનાર, વૈશ્વાનરમ્-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન ઋતાસ્ય-જળ અને જ્યોતિષઃ-પ્રકાશના પતિમ્-પાલક ધર્મમ્-પ્રતાપ = અગ્નિની અજસ્રમ્-નિરંતર ઈમહે-કામના કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ તેની કામના કરો.

જે આપ વૈશ્વાનરાય-સંસારના નાયકને માટે ઉપયામગૃહીતઃ-ઉત્તમ નિયમોના અનુષ્ઠાનથી મનને વશમાં કરેલ અસિ-છો; તે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપના ણ્ષઃ-એ યોનિઃ-ઘર છે, તે ત્વા-આપને વૈશ્વાનરાય-સમસ્ત સંસારના નાયકનો સંસારના હિત માટે સત્કાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ, જળ આદિ મૂર્તિમાન પદાર્થોને પોતાના તેજથી છિન્ન-ભિન્ન કરે છે અને નિરંતર જળનું આકર્ષણ કરે છે, તેને જાણીને મનુષ્ય સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયી ઘરને સુશોભિત બનાવે. (૬)

વૈશ્વાનરસ્ય સુમતૌ સ્યામ રાજા હિ કં ભુવનાનામભિશ્રીઃ । ડૃતો જાતો વિશ્વમિદં વિ ચષ્ટે વૈશ્વાનરો યતતે સૂર્યેણ । ઉપયામગૃહીતોઽસિ વૈશ્વાનરાય ત્વૈષ તે યોનિર્વૈશ્વાનરાય ત્વા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જેમ અમે રાજા-પ્રકાશમાન ભુવનાનામ-લોકોની મધ્યમાં અભિશ્રીઃ-સર્વથી સુશોભિત કરનાર સૂર્ય કમ્-સુખને હિ-નિશ્ચયથી સિદ્ધ કરે છે; ડૃતઃ-એ કારણે જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થઈને ડૃદમ્-આ વિશ્વમ્-વિશ્વને વિ, ચષ્ટે-પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ સૂર્યેણ-સૂર્યમંડળની સાથે વૈશ્વાનરઃ-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિ યતતે-ચેષ્ટા કરે છે, તેમ અમે વૈશ્વાનરસ્ય-સંસારના નાયક પરમેશ્વર વા ઉત્તમ સભાપતિની સુમતૌ-અત્યુત્તમ દેશ-કાલને જાણનારી છળ-કપટ આદિ દોષ રહિત સુમતિમાં = બુદ્ધિમાં સ્યામ-સ્થિત રહીએ.

હે વિદ્વાન્ ! જેથી આપ ઉપયામગૃહીતઃ-શ્રેષ્ઠ નિયમોથી સ્વીકૃત અસિ-છે; એથી વૈશ્વાનરાય-અગ્નિને માટે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપનું ણ્ષઃ-એ યોનિઃ-ઘર છે, તે ત્વા-આપને પણ વૈશ્વાનરાય-અગ્નિથી સાધ્ય કાર્યના સાધન માટે આપનો સત્કાર કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના સંપર્કના કારણે ચંદ્રમા રાત્રિને સુશોભિત કરે છે, તેમ ઉત્તમ રાજા દ્વારા પ્રજા પ્રકાશિત થાય છે અને વિદ્વાન શિલ્પી અગ્નિ દ્વારા સર્વોપયોગી કાર્યો સિદ્ધ કરે છે. (૭)

વૈશ્વાનરો ન ઋતયઽઽપ્ર યાતુ પરાવતઃ । અગ્નિરુક્થેન વાહસા ।

ઉપયામગૃહીતોઽસિ વૈશ્વાનરાય ત્વૈષ તે યોનિર્વૈશ્વાનરાય ત્વા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જેમ વૈશ્વાનરઃ-નાયક જનોમાં પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ પરાવતઃ-દૂર દેશથી નઃ-અમારી ઋતયે-રક્ષાને માટે આ + પ્ર + યાતુ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી મનુષ્ય ઉક્થેન-પ્રશંસનીય વાહસા-વ્યવહારની સાથે પ્રાપ્ત થાય.

જે આપ વૈશ્વાનરાય-પ્રકાશમાન જિજ્ઞાસુને માટે ઉપયામગૃહીતઃ-વિદ્યાના વિચારથી યુક્તઅસિ-છે, તે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપના ણ્ષઃ-આ વૈશ્વાનરાય-સમસ્ત નાયકોમાં ઉત્તમને માટે [અર્થાત્ પ્રકાશમાન જિજ્ઞાસુને માટે] યોનિઃ-ઘર છે; તે ત્વા-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દૂર દેશથી પોતાના પ્રકાશ દ્વારા દૂર રહેલા પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો પોતાના ઉત્તમ ઉપદેશ દ્વારા દૂર રહેલા જિજ્ઞાસુઓને પ્રકાશિત કરે છે. (૮)

અગ્નિર્ઋષિઃ પર્વમાનઃ પાઙ્ચજન્યઃ પુરોહિતઃ । તર્મીમહે મહાગયમ્ ।

ઉપયામગૃહીતોઽસ્યગ્નયૈ ત્વા વર્ષસ ણ્ષ તે યોનિર્ગ્નયૈ ત્વા વર્ષસે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! પાઞ્ચજન્યઃ-પાંચ જનો વા પ્રાણોની ક્રિયામાં ઉત્તમ પુરોહિતઃ-પ્રથમથી હિતકારી, પવમાનઃ-પવિત્ર, ઋષિઃ-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા, અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન તમ્-તે મહાગયમ્-મહાન ગય = ઘર સંતાન વા ધનવાળા ઉક્ત વિદ્વાનની જેમ અમે ઈમહે-કામના કરીએ છીએ; તેમ આપ વર્ચસે-અધ્યાપક અને અગ્નયે-વિદ્વાનના માટે ઉપયામગૃહીતઃ-ઉત્તમ નિયમોથી સ્વીકૃત અસિ-છો. તેથી ત્વા-આપને તથા જે તે-આપનો ણ્ષઃ-એ યોનિઃ-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય વર્ચસે-વિદ્યા પ્રકાશ અને અગ્નયે-વિદ્વાનના માટે છે. તે ત્વા-આપની અમે યાચના-કામના કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા વિદ્વાનોથી સદા વિદ્યા પ્રાપ્તિની યાચના કરવી જોઈએ, જેથી સર્વ મનુષ્યો મહત્વને પ્રાપ્ત કરે. (૯)

મહાંરઽન્દ્રો વજ્રહસ્તઃ ષોડશી શર્મં યચ્છતુ । હન્તુ પાપ્માનં યોઽસ્માન્દ્વેષ્ટિ ।

ઉપયામગૃહીતોઽસિ મહેન્દ્રાય ત્વૈષ તે યોનિર્મહેન્દ્રાય ત્વા ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! વજ્રહસ્તઃ-બન્ને હાથોમાં વજ્રધારી ષોડશી-સોળ કળાથી યુક્ત, મહાન્-મહાન અને ઈન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા શર્મ-દુઃખ વિનાશક ઘર અર્થાત્ સ્થાન યચ્છતુ-પ્રદાન કરે.

યઃ-જે અસ્માન્-અમારો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે તે પાપ્માનમ્-દુષ્ટ કર્મ કરનાર પાપીને હન્તુ-મારે. જે આપ મહેન્દ્રાય-મહાન ગુણોયુક્ત વિશિષ્ટ મનુષ્યને માટે ઉપયામગૃહીતઃ-ઉત્તમ નિયમોથી સ્વીકૃત અસિ-છો; તે ત્વા-આપને તથા જે તે-આપના ણ્ષઃ-એ મહેન્દ્રાય-મહાન ગુણોયુક્ત મનુષ્યને માટે યોનિઃ-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય છે, તે ત્વા-આપનો પણ અમે સત્કાર કરીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે પ્રજાજનો ! જે તમને સુખ આપે, દુષ્ટોનો નાશ કરે અને મહાન ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે; તેનો તમોએ સદા સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

તં વૌ દ્વસ્મર્મૃતીષહં વસોર્મન્દાનમન્ધસઃ ।

અભિ વત્સં ન સ્વસરેષુ ધેનવઽન્દ્રં ગીર્ભિર્નિવામહે ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે સ્વસરેષુ-પ્રતિદિન ધેનવઃ-ગાયો જેમ વત્સમ્-વાછરડાને યાહે ન-તેની સમાન જે દ્વસ્મમ્-દુઃખવિનાશક, ઋષીષહમ્-ગતિને સહન કરનારાઓ, વસોઃ-ધન અને અન્ધસઃ-અન્નના મન્દાનમ્-આનંદને પ્રાપ્ત કરનાર ઈન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા-સભાપતિની વઃ-તમારે માટે ગીર્ભિઃ-વાણીઓથી અભિ, નવામહે-સર્વત્રથી સ્તુતિ કરીએ છીએ; તેમ તમ્-તે રાજાની આપ પણ સદા પ્રીતિ ભાવથી સ્તુતિ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગાયો પોત-પોતાના વાછરડાઓનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રજારક્ષક પુરુષ-રાજા પ્રજાની નિત્ય રક્ષા કરે અને પ્રજાનાં માટે ધન-ધાન્યથી સુખની વૃદ્ધિ કરે. (૧૧)

યદ્વાહિષ્ટું તદ્ગનયૈ બૃહદર્ચ વિભાવસો ।

મહિષીવ ત્વદ્રયિસ્ત્વદ્વાજા ઉદીરતે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિભાવસો-પ્રકાશિત ધનવાળા વિદ્વાન્ ! અગ્નયે-અગ્નિને માટે યત્-જે બૃહત્-મહાન અને વાહિષ્ઠમ્-દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે તેનો અર્ચ-સત્કાર કરો, તત્-તેનો અમે પણ સત્કાર કરીએ. મહિષીવ-રાણીની સમાન ત્વત્-તમારાથી રયિઃ-ધનને તથા ત્વત્-તમારી પાસેથી વાજાઃ-અન્ન આદિ પદાર્થ ઉત્, ઈરતે-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તે આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ રાણી સુખોને આપનારી તથા ખૂબજ ધન પ્રદાન કરનારી હોય છે, તેમ રાજાની પાસેથી પણ સર્વ લોકો ધન અને અન્ય શ્રેષ્ઠ વસ્તુઓને પ્રાપ્ત કરે. (૧૨)

एहृषु ब्रवाणि तेज्जन इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्द्धासु इन्दुभिः ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પ્રકાશિત બુદ્ધિવાળા વિદ્વાન્ ! હું ઇત્થા-એ કારણે તે-આપના માટે ઇતરાઃ-આપનાથી અજ્ઞાત ગિરઃ-વાણીઓનો સુ, બ્રવાણિ-સારી રીતે ઉપદેશ કરું છું; જેથી આપ એ વાણીઓને આ, ઇહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો, ડ-અને એભિઃ-એ ઇન્દુભિઃ-જળ આદિ પદાર્થોથી વર્દ્ધાસે-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે શિક્ષાથી વિદ્યાર્થીઓ વિજ્ઞાન સાથે વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે, તે શિક્ષાનો વિદ્વાનો ઉપદેશ કરે. (૧૩)

ऋतवस्ते यज्ञं वितन्वन्तु मासां रक्षन्तु ते हविः।

संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः प्रजां च परि पातु नः ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! તે-આપના યજ્ઞમ્-સત્કાર આદિ વ્યવહારને ઋત્તવઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ વિ + તન્વન્તુ-વિસ્તૃત કરે-ફેલાવે; તે-આપની હવિઃ-હોમવા યોગ્ય વસ્તુની માસાઃ-કારતક આદિ મહિનાઓ રક્ષન્તુ-રક્ષા કરે; તે-આપના યજ્ઞમ્-યજ્ઞને-સત્કાર આદિ વ્યવહારને નઃ-અમારા સંવત્સરઃ-વર્ષ દધાતુ-ધારણ-પુષ્ટ કરે ચ-અને નઃ-અમારી પ્રજામ્-પ્રજાની પરિ, પાતુ-સર્વત્રથી આપ રક્ષા કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સમસ્ત સામગ્રીઓ દ્વારા વિદ્યાપૂર્વક વ્યવહારની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને ન્યાયપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૧૪)

उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ગિરીણામ્-પર્વતોની ઉપહ્વરે-સમીપ ચ-અને નદીનામ્-નદીઓના સંગમે-સંગમ સ્થાન પર યોગાભ્યાસથી ઈશ્વરની અને વિચારથી વિદ્યાની ઉપાસના કરે છે; તે ધિયા-ઉત્તમ બુદ્ધિ વા કર્મથી યુક્ત વિપ્રઃ-મેધાવી - વિચારશીલ બુદ્ધિમાન અજાયત-બની જાય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો વિદ્યા અધ્યયન કરીને એકાન્તમાં વિચાર કરે છે, તેઓ યોગીઓની સમાન પ્રાજ્ઞ = વિદ્વાન બની જાય છે. (૧૫)

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्याददे। उग्रः शर्म महि श्रवः॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! હું તે-આપના જે ઉચ્ચા-ઊંચા અન્ધસ:-અન્નથી જાતમ્-પ્રસિદ્ધ થયેલ દિવિ-પ્રકાશમાં સત્-વર્તમાન ઉગ્રમ્-ઉત્તમ મહિ-મહાન શ્રવ:-પ્રશંસનીય શર્મ-ધરને આ, દદે-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું; તે ભૂમિ-ભૂમિની સમાન દેહ અર્થાત્ સુખદાયક બને. (૧૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ સૂર્યનાં કિરણો, પુષ્કળ વાયુ અને અન્ન આદિ સામગ્રીથી ભરપૂર વિશાળ અને ઊંચા ઘરો બનાવીને, તેમાં નિવાસ કરીને સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૧૬)

स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः। वरिवोवित्परि स्रव॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! સ:-તે ઉક્ત ગુણોથી યુક્ત આપ મરુદ્ભ્ય:-મનુષ્યોને માટે ન:-અમારા ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્ય યજ્યવે-સંગત વ્યવહાર તથા વસ્માય-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યને માટે વરિવોવિત્-સેવાના જ્ઞાતા બનીને પરિ, સ્રવ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થતા રહો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન જેટલા સામર્થ્યને પ્રાપ્ત કરે, તે એટલા સામર્થ્યથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરે. (૧૭)

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम्। सिषासन्तो वनामहे॥ १८॥

પદાર્થ : જે અર્ય:-ઈશ્વર માનુષાણામ્-મનુષ્યોની એના-આ વિશ્વાનિ-સર્વ દ્યુમ્નાનિ-શોભાયમાન કીર્તિનું શિક્ષણ આપે છે તેની સિષાસન્તો-સેવા કરવાની ઈચ્છા કરતા અમે આ, વનામહે-સુખોની કામના કરીએ છીએ. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે મનુષ્યોના સુખને માટે ધન, વેદ અને ખાવા-પીવાની વસ્તુઓ ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેની જ સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૮)

अनु वीरैरनु पुष्यास्म गोभिरन्वश्वैरनु सर्वेण पुष्टैः।

अनु द्विपदानु चतुष्पदा वयं देवा नो यज्ञमृतुथा नयन्तु॥ १९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વયમ્-અમે પુષ્ટૈ:-પુષ્ટ વીરૈ:-પ્રશસ્ત બલવાળા વીરપુરુષોની અનુ, પુષ્યાસ્મ્-પુષ્ટિથી પુષ્ટ બનીએ; બળવાન ગોભિ:-ગાયોની પુષ્ટિથી અનુ-પુષ્ટ બનીએ, બળવાન અશ્વૈ:-ઘોડાઓની પુષ્ટિથી અનુ-પુષ્ટ બનીએ સર્વેણ-સર્વની પુષ્ટિથી અનુ-પુષ્ટ બનીએ. દ્વિપદા-બે પગવાળા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓની પુષ્ટિથી અનુ-પશ્ચાત્ પુષ્ટ બનીએ, ચતુષ્પદા-ચાર પગવાળા ગાય આદિની પુષ્ટિથી અનુ-પુષ્ટ બનીએ; તેમ દેવા:-વિદ્વાનો ન:-અમારા યજ્ઞમ્-ધર્મયુક્ત વ્યવહારને ઋતુથા-ઋતુ અનુસાર નયન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વીર પુરુષો અને પશુઓને સમ્યક્ પુષ્ટિ કરીને ત્યારપછી પણ તેઓને પુષ્ટ કરતા રહેવું જોઈએ અને સદા ઋતુથી અનુકૂળ વ્યવહાર-આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૯)

અગ્ને પત્નીરિહા વહ દેવાનામુશ્તીરુપં । ત્વષ્ટાર્ઃ સોમપીતયે ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અધ્યાપક વા અધ્યાપિકા ! તું ઇહ-આ ગૃહાશ્રમમાં સમાન ગુણયુક્ત પતિઓ વા **ઉશ્તી:-**કામના કરનારી **દેવાનામ્-વિદ્વાનોની પત્ની:-**પત્નીઓને તથા **સોમપીતયે-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પાન કરવા માટે ત્વષ્ટાર્મ્-તેજસ્વી પુરુષને ઉપ+આ+વહ-સારી રીતે સમીપ પ્રાપ્ત કર, કરાવ. (૨૦)**

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કન્યાઓને સુશિક્ષિત કરીને, તેને વિદુષી બનાવીને, સ્વયં વરણ કરેલ પ્રિય પતિઓને પ્રાપ્ત કરાવીને સંતાનોને ઉત્પન્ન કરાવે, તો સંતાન અત્યંત પ્રશંસનીય થાય છે. (૨૦)

અભિ યજ્ઞં ગૃણીહિ નો ગ્નાવો નેષ્ટઃ પિબ ઋતુનાં । ત્વઃ હિ રત્નધા અસિં ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે **ગ્નાવઃ-પ્રશસ્ત વાણીવાળા નેષ્ટઃ-નેતા !** આપ ઋતુના-વસંત આદિ ઋતુઓની સાથે **નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-ઉત્તમ વ્યવહારની અભિ+ગૃણીહિ-મુખ્ય રૂપથી સ્તુતિ કરો.**

કારણકે **ત્વમ્, હિ-તમે રત્નધાઃ-પ્રસન્નતા માટે રમણીય વસ્તુઓને ધારણ કરનાર અસિ-છો;** તેથી ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું સદા **પિબ-પાન કરો. (૨૧)**

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુશિક્ષિત વાણીના સંગત વ્યવહારને જાણવા ઈચ્છે, તેઓ વિદ્વાન બને. (૨૧)

દ્રવિણોદાઃ પિપીષતિ જુહોત્ પ્ર ચં તિષ્ઠત । નેષ્ટ્રાદૃતુભિરિષ્યત ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **દ્રવિણોદાઃ-ધન વા યશને પ્રદાન કરનાર વૈદ્ય ઋતુભિઃ-વસંત આદિ ઋતુઓની સાથે નેષ્ટ્રાત્-વિનયથી રસને પિપીષતિ-પીવા ઈચ્છે છે;** તેમ તમે રસને **ઇષ્યત-પ્રાપ્ત કરો; જુહોત-ગ્રહણ વા હવન કરો. ચ-અને પ્ર,તિષ્ઠત-પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત કરો. (૨૨)**

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો પથ્ય અને ઉત્તમ વિદ્યાથી સ્વયં નીરોગ રહીને અન્યનાં રોગને દૂર કરીને પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૨૨)

તવાયઃ સોમસ્ત્વમેહ્યર્વાઙ્ શશ્વત્તમઃ સુમનાં અસ્ય પાહિ ।

અસ્મિન્યજ્ઞે બર્હિષ્યાનિષદ્યાં દધિષ્વેમં જઠરઽન્દુમિન્દ્ર ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક વિદ્વાન !** જે તવ-આપના **અયમ્-આ સોમઃ-ઐશ્વર્યનો યોગ છે;** તેને ત્વમ્-આપ આ, **ઇહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો. સુમનાઃ-ધર્મ કાર્યોમાં પ્રસન્નચિત્ત અર્વાઙ્-સર્વની સન્મુખ થઈને અસ્ય-એ પોતાના આત્માના શશ્વત્તમમ્-અધિકતર અનાદિ ધર્મની પાહિ-રક્ષા કરો. અસ્મિન્-આ બર્હિષિ-ઉત્તમ યજ્ઞે-પ્રાપ્ત થનાર વ્યવહારમાં નિષદ્યા-નિરંતર સ્થિત બનીને જઠરે-જઠરાગ્નિમાં ઇમમ્-આ પ્રત્યક્ષ ઇન્દુમ્-રોગનાશક ઔષધિઓના રસને આ, દધિષ્વ-ધારણ કરો. (૨૩)**

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વની સન્મુખ આવીને તથા પ્રસન્ન મનવાળા થઈને, સનાતન-શાશ્વત ધર્મ અને વિજ્ઞાનનો ઉપદેશ કરવો જોઈએ, હિતકારી અન્ન આદિનું સેવન-પથ્ય પાલન કરવું જોઈએ અને

સર્વદા પુરુષાર્થમાં પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. (૨૩)

અમેવ નઃ સુહવા આ હિ ગન્તન નિ બર્હિષિ સદતના રણિષ્ટન ।

અથા મદસ્વ જુજુષાણો અન્ધસસ્ત્વષ્ટર્દેવભિર્જનીભિઃ સુમદ્ગણઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે ત્વષ્ટઃ-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદ્વાન્ ! જુજુષાણઃ-પ્રસન્નચિત્ત ગુરુ આદિની સેવા કરતાં સુમદ્ગણઃ-સુંદર પ્રસન્ન મંડળીવાળા આપ દેવેભિઃ-ઉત્તમ ગુણવાળા જનિભિઃ-જન્મોની સાથે-સંતાનોની સાથે અન્ધસઃ-અન્ન આદિ ઉત્તમ પદાર્થોની પ્રાપ્તિમાં મદસ્વ-આનંદ કરો, અથ-અને અમેવ-ઉત્તમ ધરની સમાન અન્યોને પણ આનંદિત કરો.

હે વિદ્વાનો ! સુહવાઃ-ઉત્તમ નિમંત્રણવાળા તમે ઉત્તમ ધરની સમાન બર્હિષિઃ-ઉત્તમ વ્યવહારમાં નઃ-અમને આ, ગન્તન-પ્રાપ્ત થાઓ; આ સ્થાનમાં હિ-નિશ્ચિત બનીને નિ, સદતન-નિરંતર બેસો અને રણિષ્ટન-શ્રેષ્ઠ ઉપદેશ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સ્વયં ઉત્તમ વ્યવહારમાં સ્થિત બનીને અન્યોને તેમાં સ્થાપિત કરે છે, તેઓ આનંદિત રહે છે.

સ્ત્રી પુરુષ પ્રેમથી સંયુક્ત બનીને જે સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તે સંતાનો દિવ્ય ગુણવાળા બને છે. (૨૪)

સ્વાદિષ્ટયા મદિષ્ટયા પવસ્વ સોમ ધારયા । ઇન્દ્રાય પાતવે સુતઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ જે ઇન્દ્રાય-સંપત્તિની પાતવે-રક્ષા કરવા માટે સુતઃ-તૈયાર કરેલા ઉત્તમ રસની સ્વાદિષ્ટયા-અત્યંત સ્વાદયુક્ત મદિષ્ટયા-અત્યંત આનંદ પ્રદાન કરનારી, ધારયા-ધારણ કરનારી ધારાથી પવસ્વ-પવિત્ર બનો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન મનુષ્યો સર્વ રોગનાશક, આનંદ પ્રદાન કરનાર ઔષધિરસનું પાન કરીને પોતાના શરીર અને આત્માને પવિત્ર કરે છે, તેઓ ધનાઢ્ય બને છે. (૨૫)

રક્ષોહા વિશ્વર્ષણિર્ભિ યોનિમપોહતે । દ્રોણે સુધસ્થમાસદત્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જે રક્ષોહા-દુષ્ટ પ્રાણીઓનું હનન કરનાર, વિશ્વર્ષણિઃ-સમસ્ત સંસારના પ્રકાશક વિદ્વાન અયોહતે-અપ=સુવર્ણથી પ્રાપ્ત દ્રોણે-દ્રોણ નામક અન્ન રાખવાના પાત્ર વિશેષમાં સુધસ્થમ્-સમાન સ્થિતિવાળા યોનિમ્-ધરમાં અભિ, આ, અસદત્-સારી રીતે સ્થિત થાય છે; તે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે અવિદ્યાનો નાશ કરનારા, વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાનો, સર્વ ઋતુઓમાં સુખકારક, સુવર્ણ આદિથી યુક્ત ઘરોમાં રહીને વિચાર કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પુરુષાર્થ ફળનું વર્ણન (૧), સર્વ મનુષ્યોને વેદ ભણવા અને સાંભળવાનો અધિકાર (૨), પરમેશ્વર, વિદ્વાન અને સત્યનું નિરૂપણ (૩, ૯, ૧૩), અગ્નિ આદિ પદાર્થોનું કથન (૬-૮), યજ્ઞનું વર્ણન (૧૪), સુંદર ઘરોનું નિર્માણ (૧૬) અને ઉત્તમ સ્થાનમાં સ્થિતિનો

ઉપદેશ કરવામાં આવેલ છે; તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ષઙ્ઘ્વિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ સપ્તવિંશોઽધ્યાયઃ આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સમાસ્ત્વાઽગ્ન ઋતવો વર્દ્યન્તુ સંવત્સરાઽઋષયો યાનિ સત્યા ।

સં દિવ્યેન દીદિહિ રોચનેન વિશ્વા આ ભાહિ પ્રદિશ્ચત્ત્સ્રઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! સમા:-વર્ષ, ઋત્વ:-શરદ આદિ ઋતુઓ, સંવત્સરા:-પ્રભવ આદિ સંવત્સર, ઋષય:-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વાનો-ઋષિઓ અને યાનિ-જે સત્યા-સત્ય ત્રણે કાળમાં અબાધ્ય કર્મ છે, તે ત્વા-આપની વર્દ્યન્તુ-વૃદ્ધિ કરે.

જેમ અગ્નિ દિવ્યેન-અતિ શુદ્ધ રોચનેન-પ્રકાશથી વિશ્વા:-સર્વ ચત્ત્સ્રઃ-ચાર પ્રદિશ:-ઉત્તમ ગુણયુક્ત દિશાઓને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ વિદ્વાની સં, દીદિહિ-સારી રીતે કામના કર તથા ન્યાયયુક્ત ધર્મને આ+ભાહિ-સર્વત્ર પ્રકાશિત કર. (૧)

ભાવાર્થ : આપ વિદ્વાન સર્વદા સત્ય વિદ્યા અને કર્મોનો ઉપદેશ કરીને સર્વ પ્રાણીઓનાં આરોગ્ય, પુષ્ટિ, વિદ્યા અને સુશીલતાની વૃદ્ધિ કરે.

જેમ સૂર્ય પોતાના સન્મુખ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ સુશિક્ષા દ્વારા સર્વને સદા આનંદિત કરવા જોઈએ. (૧)

સં ચેધ્યસ્વાગ્ને પ્ર ચ્ બોધયૈનમુચ્ચં તિષ્ઠ મહતે સૌભગાય ।

મા ચ્ રિષ્ઠદુપસૃત્તા તેં અગ્ને બ્રહ્માણસ્તે યશસઃ સન્તુ માઽન્યે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ ! આપ સમ્, ઇધ્યસ્વ-વિદ્યાથી સારી રીતે પ્રકાશિત બનો; ચ-અને એનમ્-એ જિજ્ઞાસુને પ્રબોધય-શિક્ષિત કરો; ચ-અને મહતે-મહાન સૌભગાય-ઉત્તમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિને માટે ઉત્, તિષ્ઠ-ઊભા થાઓ - પ્રયત્ન કરો. ઉપસૃત્તા-શ્રેષ્ઠ જનોની સમીપ રહેનારા આપ ઉત્તમ ઐશ્વર્યની મા, રિષ્ઠ-હિંસા ન કરો. અર્થાત્ બગાડો નહિ.

હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ ! તે-આપ બ્રહ્માણ:-ચારે વેદોના જ્ઞાતા હોય, અન્યે-અન્ય ભિન્ન બુદ્ધિવાળા ચ-પણ મા, સન્તુ-ન બની જાય; ચ-અને તે-આપ પોતાની યશસઃ-કીર્તિ-યશની ઉન્નતિનો નાશ ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોથી ભિન્ન લોકોને ઉત્તમ અધિકારમાં નિયુક્ત કરતા નથી, સદા ઉન્નતિને માટે પ્રયત્ન કરે છે તથા અન્યાયથી કોઈની હિંસા-નાશ કરતા નથી, તેઓ કીર્તિ પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યયુક્ત બને છે. (૨)

ત્વામગ્ને વૃણતે બ્રાહ્મણા ડ્રુમે શિવો અગ્ને સંવરણે ભવા નઃ ।

સપત્નહા નોં અભિમાતિજિચ્ચ સ્વે ગયેં જાગૃહ્યપ્રયુચ્છન્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વર્તમાન વિદ્વાન્ ! જે ડ્રુમે-આ બ્રાહ્મણા:-
બ્રહ્મજ્ઞાની ત્વામ્-આપનું વૃણતે-વરણ-સ્વીકાર કરે છે, તેના પ્રતિ આપ સંવરણે-સમ્યક્ વરણ-સ્વીકાર
થતાં શિવઃ-મંગલકારી ભવ-બનો; તથા નઃ-અમારા સપત્નહા-શત્રુરૂપ દોષોના હનનકર્તા બનો.

હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ! અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદ ન કરતા ચ-અને અભિમાતિજિત્-
અભિમાનને જીતનારા આપ સ્વે-પોતાના ગયે-ઘરમાં જાગૃહિ-જાગો અર્થાત્ ગૃહકાર્ય કરવામાં નિદ્રા,
આળસ્ય આદિને છોડો અને નઃ-અમને શીઘ્ર જાગૃત કે ચેતન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો બ્રહ્મનો સ્વીકાર કરીને મંગલને પ્રાપ્ત કરે છે, દોષોનો નાશ કરે છે, તેમ
જિજ્ઞાસુ બ્રહ્મજ્ઞાનીઓને પ્રાપ્ત કરીને, મંગલ આચરણવાળા બનીને, કુશીલતાનો નાશ કરીને તથા આળસ્યને
છોડીને વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે. (૩)

इहैवाग्नेऽ अधि धारया रयिं मा त्वा नि क्रन्पूर्वचितो निकारिणः ।

ક્ષત્રમગ્ને સુયમમસ્તુ તુભ્યમુપસત્તા વર્દ્ધતાં તેઽઅનિષ્ટૃતઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યુત્ની સમાન પ્રકાશમાન રાજન્ - વિદ્વાન્ ! આપ ડ્રુહ-આ સંસારમાં રયિમ્-
લક્ષ્મીને ધારય-ધારણ કરો, પૂર્વચિતઃ-પૂર્વ પ્રાપ્તવિજ્ઞાન આદિથી શ્રેષ્ઠજન જે નિકારિણઃ-નિરંતર શુભ
કર્મ કરવાના સ્વભાવવાળા છે, તેઓ ત્વા-આપને મા, નિ, ક્રન્-નીચા ન કરે-અર્થાત્ માન કરે.

હે અગ્ને-વિનયથી શોભાયમાન રાજન્-સભાપતિ ! તે-આપના સુયમમ્-નિયમિત અર્થાત્ સુંદર
નિયમ જેનાથી ચાલે તે ક્ષત્રમ્-ધન વા રાજ્ય અસ્તુ-થાય; જેથી ઉપસત્તા-સર્વોપરિ વિરાજમાન તથા
અનિષ્ટૃતઃ-હિંસા વા વિઘ્નરહિત બનીને એવ-જ આપ અધિ, વર્દ્ધતામ્-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત
કરો; તથા તુભ્યમ્-આપના માટે રાજ્ય વા ધન સુખદાયક બને. (૪)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! આપ એવો વિનય ધારણ કરો કે, જેથી પૂર્વજ વૃદ્ધજન આપનું બહુમાન
કરે. રાજ્યમાં ઉત્તમ નિયમોને પ્રવૃત્ત કરો, કે જેથી આપ અને આપનું રાજ્ય વિઘ્ન રહિત બનીને સર્વથી
ઉન્નત બને અને પ્રજા આપને સર્વોપરિ માને. (૪)

ક્ષત્રેणाग्ने स्वायुः सश्रभस्व मित्रेणाग्ने मित्रधेये यतस्व ।

સજાતાનાં મધ્યમસ્થા એધિ રાજ્ઞામગ્ને વિહૃવ્યો દીદિહીહ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! રાજન્ ! આપ ડ્રુહ-આ સંસારમાં વા રાજ્યાધિકારમાં
ક્ષત્રેણ-રાજ્ય વા ધનની સાથે સ્વાયુઃ-ઉત્તમ યુવાવસ્થાનો સમ્, રશ્મસ્વ-સારી રીતે પ્રારંભ કરો-પ્રાપ્ત કરો.

હે અગ્ને-વિદ્યા અને વિનયથી સુશોભિત રાજન્ ! મિત્રેણ-ધાર્મિક વિદ્વાન મિત્રોની સાથે મિત્રધેયે-
મિત્રોને ધારણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં યતસ્વ-પ્રયત્ન કરો.

હે અગ્ને-ન્યાયના પ્રકાશક સભાપતિ - રાજન્ ! સજાતાનામ્-સમાન જન્મવાળા રાજામ્-ધર્માત્મા રાજાધિરાજાઓમાં મધ્યમસ્થા:-મધ્યસ્થ અર્થાત્ પક્ષપાત રહિત ણ્ધિ-બનો, તથા વિહવ્ય:-વિશેષ સ્તુતિને યોગ્ય બનીને દીદિહિ-પ્રકાશિત બનો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજા સદા બ્રહ્મચર્યથી દીર્ઘાયુ, સત્ય, ધર્મના પ્રિય મંત્રીઓની સાથે મંત્રણા કરનાર, અન્ય રાજાઓ સાથે શ્રેષ્ઠ સંધિ કરનાર, પક્ષપાત રહિત ન્યાયાધીશ તથા સર્વ ઉત્તમ લક્ષણોથી યુક્ત અને દુષ્ટ વ્યસનોથી રહિત બનીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને ધૈર્ય, શાન્તિ અને અપ્રમાદથી ધીરે-ધીરે સિદ્ધ કરે. (૫)

અતિ નિહો અતિ સ્ત્રિધોઽત્યર્ચિત્તિમત્યરાતિમગ્ને ।

વિશ્વા હ્યગ્ને દુરિતા સહસ્વાથાઽસ્મભ્યઃ સહવીરાશ્ચ રયિં દાઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી સભાપતે ! આપ અતિ-અત્યંત નિહ:-અસત્યનો ત્યાગ કરનાર બનીને સ્ત્રિધ:-દુષ્ટાચારિઓનો અતિ-સર્વથા સહસ્વ-નાશ કરો, અર્ચિત્તિમ્-અત્યંત અજ્ઞાન, અતિ-અત્યંત અરાતિમ્-અદાન-દાનના નિષેધનો નાશ કરો.

હે અગ્ને-દેઠ વિદ્યાવાળા સભાપતે ! આપ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક વિશ્વા-સર્વ દુરિતા-દુષ્ટ આચરણોનો અતિ-અત્યંત નાશ કરો; અથ-તદનન્તર અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે સહવીરામ્-વીરપુરુષોથી યુક્ત સેના તથા રયિમ્-ધનને દા:-પ્રદાન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટ આચરણનો ત્યાગ કરનાર, કુત્સિત-નિંદનીય કાર્યોને રોકનાર, અજ્ઞાન અને અદાનને દૂર કરનાર, દુર્વ્યસનોથી પૃથક્, સુખ-દુઃખને સહન કરનાર, વીર સેનાનાં પ્રિય, ગુણ અનુસાર લોકોનો યોગ્ય સત્કાર કરતા ન્યાયપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે છે, તે સદા સુખી રહે. (૬)

અનાઘૃષ્યો જાતવેદા અનિષ્ટતો વિરાડગ્ને ક્ષત્રભૃદ્દીદિહીહ ।

વિશ્વા આશાઃ પ્રમુઞ્ચન્માનુષીર્ભિયઃ શિવેભિર્દ્ય પરિ પાહિ નો વૃધે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-રાજનીતિના સારી રીતે સંગ્રહ કરનાર રાજન્ ! જે આપ અદ્ય-આ સમયે ઇહ-આ રાજ્ય વ્યવહારમાં માનુષી:-મનુષ્ય સંબંધી ભિયઃ-રોગ, દોષ આદિ ભયોનો નાશ કરો છો; શિવેભિઃ-કલ્યાણકારી સભ્યજનોની સાથે અનિષ્ટત:-દુઃખથી પૃથક્ અનાઘૃષ્યઃ-અન્યોથી ઘર્ષણને અયોગ્ય, જાતવેદા:-વિદ્યાથી યુક્ત, વિરાટ્-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશમાન ક્ષત્રભૃત્-રાજ્યનું ધારણ-પોષણ કરો છો, તે આપ ન:-અમારી દીદિહિ-કામના કરો. વિશ્વાઃ-સર્વ આશાઃ-દિશાઓને પ્રમુઞ્ચન્-સારી રીતે મુક્ત કરતાં આપ અમારી વૃધે-વૃદ્ધિ માટે પરિ, પાહિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને રાજપુરુષો પ્રજાને સંતોષ આપીને મંગલ આચરણ કરનાર, સર્વ વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રેમી બનીને પ્રજાનું પાલન કરે છે, તે સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિમાન બને છે. (૭)

बृहस्पते सवितर्बोधयैनं संशितं चित्सन्तराथं संशिशधि ।

वर्धयैनं महते सौभगाय विश्वेऽएनुमनु मदन्तु देवाः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે **बृहस्पते**-મહાન સજ્જનોના રક્ષક-પાલક, **सवितः**-પૂર્ણ વિદ્યાના ઉપદેશક તથા વિદ્યા-
ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન ! આપ **एनुम्**-આ રાજાને **संशितम्**-તીક્ષ્ણ બુદ્ધિ અને સ્વભાવવાળા બનાવીને
बोधय-સચેતન કરો; અને **सम**, **शिशधि**-સમ્યક્ શિક્ષણ આપો, **चित्**-અને **सन्तराम्**-પ્રજાને સર્વથા ઉત્તમ
રીતિથી શિક્ષણ આપો, **एनुम्**-આ રાજાની **महते**-મહાન **सौभगाय**-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય માટે **वर्धय**-વૃદ્ધિ કરો.

विश्वे-સર્વ **देवाः**-સુસભ્ય વિદ્વાન **एनुम्**-આ રાજાને **अनु**, **मदन्तु**-અનુકૂળ પ્રસન્ન-આનંદિત કરે. (૮)

भावार्थ : જે રાજસભ્યાના ઉપદેશક હોય તે તે રાજા આદિને દુર્વ્યસનોથી પૃથક્ કરીને, સુશીલ બનાવીને
મહાન-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ માટે પ્રવૃત્ત કરે. (૮)

अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः ।

प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद्देवानामने भिषजा शचीभिः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે **बृहस्पते**-મહાન રક્ષક-પાલક વિદ્વાન ! આપ **अमुत्रभूयात्**-પરજન્મમાં થનારા **अभिशस्तेः**-
સર્વ પ્રકારના અપરાધોથી **अमुञ्चः**-મુક્ત કરો.

अध-તદનંતર **यत्**-જે **यमस्य**-ધર્માત્મા, નિયંતાજનની શિક્ષામાં રહે તેના **मृत्युम्**-મૃત્યુથી છોડાવો-
મુક્ત કરો.

હે **अग्ने**-શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય ! આપ જેમ **अश्विना**-અધ્યાપક અને ઉપદેશક **शचीभिः**-કર્મ વા બુદ્ધિઓથી
भिषजाः-રોગનાશક પદાર્થો-ઔષધોને પ્રતિ, **औहताम्**-વિશેષ તર્કથી સિદ્ધ કરો છો; તેમ **अस्मात्**-એનાથી
देवानाम्-વિદ્વાનોના આરોગ્યને સિદ્ધ કરો. (૯)

भावार्थ : તે જ શ્રેષ્ઠ અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે, જે આ જન્મ અને પરજન્મમાં સુખ માટે સર્વને
સુશિક્ષિત કરે છે, જેમાં બ્રહ્મચર્ય આદિ કર્મોનું સેવન કરીને મનુષ્ય અલ્પ વયમાં મૃત્યુ અને આનંદની
હાનિને પ્રાપ્ત કરે નહિ. (૯)

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **वयम्**-અમે **तमसः**-અંધકારથી પૃથક્ રહેનારા **ज्योतिः**-પ્રકાશમાન
સૂર્યમંડળને **पश्यन्तः**-જોતાં, **स्वः**-સુખનાં સાધક **उत्तम**-સર્વ લોકોને દુઃખથી પાર કરનાર **देवत्रा**-દિવ્ય
પદાર્થો વા વિદ્વાનોમાં વિદ્યમાન **उत्तमम्**-અતિશ્રેષ્ઠ **सूर्यम्**-ચરાચરના આત્મા જગદીશ્વર **देवम्**-દેવને **परि**,
उत्, **अगन्म**-સર્વત્રથી ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તે ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન અવિદ્યારૂપ અંધકારથી પૃથક્, સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ, મહાદેવ, સર્વથી ઉત્તમ અને સર્વાન્તર્યામી પરમાત્માની જ ઉપાસના કરે છે, તેઓ મુક્તિસુખને અવશ્ય નિર્વિઘ્ન પ્રીતિપૂર્વક પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ઋધ્વાં અસ્ય સમિધો ભવન્ત્યૂધ્વાં શુક્રા શોચીંશ્ચ્યગ્નેઃ ।

દ્યુમત્તમા સુપ્રતીકસ્ય સૂનોઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અસ્ય-આ સુપ્રતીકસ્ય-ઉત્તમ પ્રતીતિ-પ્રસિદ્ધિકારક કર્મોથી યુક્ત, સૂનોઃ-પ્રાણીઓને ગર્ભોથી મુક્ત કરાવનાર અગ્નેઃ-અગ્નિની ઋધ્વાંઃ-ઉત્તમ સમિધઃ-સમ્યક્ પ્રકાશ કરનારી સમિધાઓ; ઋધ્વાં-ઉપર જનારી દ્યુમત્તમા-અત્યંત પ્રશસ્ત પ્રકાશથી યુક્ત શુક્રા-શુદ્ધ શોચીંષિ-તેજ ભવન્તિ-થાય છે, તે અગ્નિને તમે જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એ ઉપર જનાર, સર્વ પદાર્થોનાં દર્શનનું કારણ અને સર્વના પાલનનો નિમિત્ત અગ્નિ છે, તેને જાણીને કાર્યોને સદા સિદ્ધ કરો. (૧૧)

તનૂનપાદસુરો વિશ્વવેદા દેવો દેવેષુ દેવઃ । પૃથો અનક્તુ મધ્વા ઘૃતેન ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવેષુ-ઉત્તમ ગુણવાળા પદાર્થોમાં દેવઃ-દિવ્યગુણવાળા, અસુરઃ-પ્રકાશરહિત વાયુ, વિશ્વવેદાઃ-સર્વને પ્રાપ્ત થનાર, તનૂનપાત્-શરીરોમાં પતિત ન થનાર, દેવઃ-કામના કરવા યોગ્ય મધ્વા-મધુર ઘૃતેન-જળની સાથે પથઃ-શ્રોત્રાદિના માર્ગોને અનક્તુ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વર મહાદેવ, વિશ્વવ્યાપી, સર્વના સુખકારી છે, તેમ વાયુ પણ છે. કારણ કે તેના વિના કોઈ પણ ક્યાંય ગતિ કરી શકતા નથી. (૧૨)

મધ્વા યજ્ઞં નક્ષસે પ્રીણાનો નરાશ્સૌઽઅગ્ને ।

સુકૃદ્દેવઃ સવિતા વિશ્વવારઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જે નરાશ્સઃ-નરોની પ્રશંસા કરનાર, સુકૃત્-ઉત્તમ કામ કરનાર, વિશ્વવારઃ-વિશ્વનું વરણ-સ્વીકાર કરનાર, પ્રીણાનઃ-કામના કરનાર, સવિતા-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક દેવઃ-શુદ્ધ વ્યવહાર કરનાર છે, તે મધ્વા-મધુર વચનથી યજ્ઞમ્-યજ્ઞરૂપ સંગત વ્યવહારને નક્ષસે-પ્રાપ્ત કરે છે, તે આપને અમે પ્રસન્ન કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞમાં સુગંધ આદિ પદાર્થોના હોમથી વાયુ અને જલને શુદ્ધ કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

અચ્છાયમેતિ શર્વસા ઘૃતેનેઙ્ઞાનો વહ્નિર્નમસા ।

અગ્નિંશ્ચુચૌ અધ્વરેષુ પ્રયત્સુ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અયમ્-આ ઈન્દ્રાનઃ-સ્તુતિને યોગ્ય, વહ્નિઃ-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન

પ્રયત્સુ-પ્રયત્નથી સાધ્ય અધ્વરેષુ-હિંસા-વિઘ્નોથી રહિત યજ્ઞોમાં શવસા-બળ ઘૃતેન-જળ અને નમસા-પૃથિવી આદિના અન્નની સાથે વિઘ્નમાન અગ્નિમ્-અગ્નિને તથા સ્ત્રુચઃ-હોમના સાધન સ્ત્રુવા આદિને અચ્છ-સારી રીતે એતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો તમે સત્કાર કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિ બળતણ અને જળથી યુક્ત વાહનોમાં પ્રયુક્ત થઈને બળથી શીઘ્ર દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેને જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરો. (૧૪)

સ યક્ષદસ્ય મહિમાનમગ્નેઃ સ ઈં મન્દ્રા સુપ્રયસઃ ।

વસુશ્ચેતિષ્ઠો વસુધાતમશ્ચ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : સઃ-તે પૂર્વોક્ત વિદ્વાન્ મનુષ્ય સુપ્રયસઃ-ઉત્તમ પ્રસન્નતાકારક અન્ન આદિ પદાર્થોનો હેતુ અસ્ય-આ અગ્નેઃ-અગ્નિનાં મહિમાનમ્-મહત્ત્વને યક્ષત્-સારી રીતે સમજે છે; સઃ-તે વસુઃ-અન્યોને વસાવનાર, ચેતિષ્ઠઃ-અત્યંત સચેત ચ-અને વસુધાતમઃ-અત્યંત ધનોને ધારણ કરનારા બનીને ઈંમ્-જલ તથા મન્દ્રા-આનંદદાયક હોમ વા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આ રીતે અગ્નિના મહત્ત્વને જાણે છે, તે અતિ ધનવાન બને છે. (૧૫)

દ્વારોં દેવીરન્વસ્ય વિશ્વેં વ્રતા દદન્તે અગ્નેઃ ।

ઊરુવ્યચસો ધામ્ના પત્યમાનાઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જે વિશ્વે-સર્વ પત્યમાનાઃ-સ્વામીત્વ કરનાર વિદ્વાન છે, તે ઊરુવ્યચસઃ-અનેકોમાં વ્યાપક અસ્ય-આ અગ્નેઃ-અગ્નિના ધામ્ના-સ્થાનથી દેવીઃ-પ્રકાશિત દ્વારઃ-દારો તથા વ્રતા-સત્ય ભાષણાદિ વ્રતોનો અનુ, દદન્તે-અનુકૂળતાપૂર્વક ઉપદેશ આપે છે, તેઓ ઉત્તમ ઐશ્વર્યવાન બને છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો-વિદ્વાનો અગ્નિની વિદ્યાનાં દારોને જાણે છે, તેઓ સત્ય આચરણવાળા બનીને પ્રસન્ન રહે છે. (૧૬)

તે અસ્ય યોષણે દિવ્યે ન યોનાં ઉષાસાનક્તા । ડ્રમં યજ્ઞમવતામધ્વરં નઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તે-તેઓ ઉષાસાનક્તા-રાત અને દિવસ અસ્ય-એ પુરુષને યોનો-ઘરમાં દિવ્યે-ઉત્તમ રૂપવાળી યોષણે-બે સ્ત્રીઓની ન-સમાન વિઘ્નમાન નઃ-અમારા જે ડ્રમમ્-એ અધ્વરમ્-હિંસા-વિનાશ રહિત યજ્ઞમ્-યજ્ઞની અવતામ્-રક્ષા કરે છે, તે અગ્નિને તમે જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદુષી સ્ત્રી-પત્ની ગૃહકાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અગ્નિથી ઉત્પન્ન રાત અને દિવસ સર્વ વ્યવહારને સિદ્ધ કરે છે. (૧૭)

દૈવ્યાં હોતારા ઋર્ધ્વમધ્વરં નોઽગ્નેર્જિહ્વામભિ ગૃણીતમ્ ।

કૃણુતં નઃ સ્વિષ્ટિમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : જે દૈવ્યા-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ બે વિદ્વાનો, હોતારા-સુબદાતા જિજ્ઞાસુ અને અધ્યાપક ન:- અમારી ઉર્ધ્વમ્-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત અધ્વર્મ્-હિંસા રહિત વ્યવહારની અભિ, ગૃણીતમ્-સર્વત્રથી પ્રશંસા કરે છે, તે બન્ને ન:-અમારી સ્વિષ્ટિમ્-સુંદર અગ્નિનાં નિમિત્ત અગ્ને:-અગ્નિની જિહ્વામ્-જવાળાને કૃણુતમ્-સિદ્ધ કરે. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો જિજ્ઞાસુ અને અધ્યાપક બન્ને અગ્નિની વિદ્યાને જાણે, તો વિશ્વની ઉન્નતિ કરી શકે છે. (૧૮)

તિસ્રો દેવીર્બર્હિરેદઃ સદન્ત્વિડા સરસ્વતી ભારતી । મહી ગૃણાના ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે મહી-મહાન ગૃણાના-સ્તુતિ કરનારી ઇડા-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, સરસ્વતી-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત અને ભારતી-સર્વ શાસ્ત્રોને ધારણ કરનારી જે તિસ્ર:-ત્રણ દેવી-કામનાને યોગ્ય વાણીઓ ઇદમ્-આ બર્હિ:-અન્તરિક્ષને આ, સદન્તુ-સર્વત્ર પ્રાપ્ત થાય છે, તે ત્રણેય પ્રકારની વાણીઓને સમ્યક્ રીતે જાણો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વ્યવહારમાં કુશળ, સર્વ શાસ્ત્રોની વિદ્યાથી યુક્ત અને સત્ય આદિ વ્યવહારને ધારણ કરનારી વાણીને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સ્તુતિ યોગ્ય બનીને મહાન બને છે. (૧૯)

તન્નસ્તુરીપમદ્ભુતં પુરુક્ષુ ત્વષ્ટાં સુવીર્યમ્ । રાયસ્પોષં વિષ્યંતુ નાભિમસ્મે ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : ત્વષ્ટા-વિદ્યાથી પ્રકાશિત ઈશ્વર અસ્મે-અમારા નાભિમ્-મધ્યપ્રદેશના પ્રતિ તુરીપમ્-શીઘ્ર પ્રાપ્ત થનાર અને શીઘ્રકારી, અદ્ભુતમ્-આશ્ચર્યરૂપ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત, પુસ્ક્ષુ-અનેકોમાં વ્યાપક, સુવીર્યમ્-ઉત્તમ બળયુક્ત તથા તમ્-તે પ્રસિદ્ધ રાય:-ધનની પોષમ્-પુષ્ટિને પ્રદાન કરે, તથા ન:-અમને દુઃખથી વિ,સ્યતુ-વિમુક્ત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શીઘ્રકારી, આશ્ચર્યરૂપ, અનેકોમાં વ્યાપક ધન અને બળ છે, તેને તમે ઈશ્વરની પ્રાર્થનાથી પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહો. (૨૦)

વનસ્પતેઽવં સૃજા રરાણસ્ત્મનાં દેવેષુ । અગ્નિર્હવ્યઃ શમિતા સૂદયાતિ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે વનસ્પતે-વન = સેવન કરવા યોગ્ય શાસ્ત્રના રક્ષક જિજ્ઞાસુ પુરુષ ! જેમ શમિતા-યજ્ઞ સંબંધી અગ્નિ:-અગ્નિ હવ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોમના દ્રવ્યોને સૂદયાતિ-સૂક્ષ્મ કરીને વાયુમાં ફેલાવે છે, તેમ ત્મના-પોતાના આત્માથી દેવેષુ-દિવ્યગુણોની સમાન વિદ્વાનોમાં રાણ:-રમણ કરતાં ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોમ પદાર્થોને અવ, સૃજ-ઉત્તમ રીતે તૈયાર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ દિવ્ય અન્તરિક્ષ આદિમાં અગ્નિ પ્રકાશમાન-શોભાયમાન છે, તેમ વિદ્વાનોમાં સ્થિત જિજ્ઞાસુ પુરુષ પણ સારી રીતે પ્રકાશિત આત્માવાળા બની જાય છે. (૨૧)

અગ્ને સ્વાહાં કૃણુહિ જાતવેદ્ ઇન્દ્રાય હવ્યમ્ ।

વિશ્વે દેવા હવિરિદં જુષન્તામ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદ:-વિદ્યામાં પ્રસિદ્ધ અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી અને હૃવ્યમ્-ગ્રહણ યોગ્ય હોમ દ્રવ્યોને કૃણુહિ-પ્રાપ્ત કર અને બનાવ.

વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાન ઇદમ્-એ હવિ:-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હવિનું જુષન્તામ્-સેવન કરે. (૨૨)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરે, તો સત્ય, પરમાત્મા અને વિદ્વાનોની સેવા કરે. (૨૨)

પીવોં અન્ના રયિવૃધઃ સુમેધાઃ શ્વેતઃ સિષક્તિ નિયુતામભિશ્રીઃ ।

તે વાયવે સમનસો વિતસ્થુર્વિશ્વેન્નરઃ સ્વપત્યાનિ ચક્રુઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : જે સમનસઃ-સમાન વિજ્ઞાનવાળા, રયિવૃધઃ-ધનની વૃદ્ધિ કરનાર, સુમેધાઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિમાન નરઃ-નાયક, પીવોઅન્ના-પુષ્ટિકારક અન્નવાળા વિદ્વાન વિશ્વા-સર્વ સ્વપત્યાનિ-શ્રેષ્ઠ સંતાનોને ચક્રુઃ-ઉત્પન્ન કરે છે; તે-તેઓ ઇત્-જ વાયવે-વાયુની વિદ્યા માટે વિ, તસ્થુઃ-વિશેષ રૂપથી સ્થિત થાય છે.

જ્યારે નિયુતામ્-નિશ્ચિત ગતિમાન મનુષ્યોને અભિશ્રીઃ-સર્વત્રથી શોભાયુક્ત, શ્વેતઃ-ગતિશીલ વા વર્ધક વાયુ સર્વને સિષક્તિ-સિંચન-અભિષેક કરે છે, ત્યારે તે શ્રીમાન-શોભાયમાન બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વનાં જીવનનું મૂળ છે, તેમ ઉત્તમ સંતાન સર્વનાં સુખોનાં નિમિત્ત હોય છે. (૨૩)

રાયે નુ યં જઙ્ગતૂ રોદસીમે રાયે દેવી ધિષણા ધાતિ દેવમ્ ।

અધ વાયું નિયુતઃ સશ્ચત્ સ્વા ઉત શ્વેતં વસુધિતિં નિરેકે ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઇમે-આ રોદસી-આકાશ અને ભૂમિ રાયે-ધનને માટે યમ્-જે વાયુને જઙ્ગતુઃ-ઉત્પન્ન કરે છે; દેવી-ઉત્તમ ગુણોવાળી ધિષણા-બુદ્ધિની સમાન વર્તાવ કરનારી સ્ત્રી જે દેવમ્-ઉત્તમ પતિને રાયે-ધનને માટે નુ-શીઘ્ર ધાતિ-ધારણ કરે છે; અધ-તદનન્તર નિરેકે-નિઃશંક સ્થાનમાં સ્વાઃ-પોતાના સંબંધી નિયુતઃ-નિશ્ચયથી મેલ-મિલાપ કરનાર બનીને શ્વેતમ્-વૃદ્ધ પુરુષને ઉત-અને વસુધિતિમ્-પૃથિવી આદિ વસુઓને ધારણ કરનાર વાયુમ્-વાયુને સશ્ચત-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને તમે જાણો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ બળ આદિ ગુણોથી યુક્ત, સર્વને ધારણ કરનાર વાયુને જાણીને ધન અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરો.

જો એકાન્તમાં સ્થિત બનીને એ પ્રાણના દ્વારા પોતાના આત્મા અને પરમાત્માને જાણવા ઇચ્છે, તો તે બન્નેનો-આત્મા અને પરમાત્માનો સાક્ષાત્કાર થાય છે. (૨૪)

આપોં હુ યદ્બૃહતીર્વિશ્વમાયન્ ગર્ભં દધાના જનયન્તીરગ્નિમ્ ।

તતોં દેવાનાશ્ચ સમવર્ત્તાસુરેકઃ કસ્મૈં દેવાયં હુવિષાં વિધેમ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : બૃહતીઃ-મોટાં પરિમાણવાળી, જનયન્તીઃ-પૃથિવી આદિ જગતને પ્રકટ કરનારી યત્-જે

વિશ્વમ્-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ ગર્ભમ્-મૂળરૂપ પ્રધાન-પ્રકૃતિને દધાના:-ધારણ કરતી આપ:-વ્યાપક જલોની સૂક્ષ્મમાત્રા - તન્માત્રાઓ આચન્-પ્રાપ્ત થાય છે; તત:-તેનાથી અગ્નિમ્-સૂર્ય આદિ નામક અગ્નિ તથા દેવાનામ્-ઉત્તમ પૃથિવી આદિમાંથી એક:-એક અસહાય અસુ:-પ્રાણ = વાયુ સમ્, અવર્ત્ત-સમ્યક્ પ્રવૃત્ત કરે છે, તે હ-જ કસ્મૈ-સુખનાં નિમિત્ત દેવાય-દિવ્યગુણયુક્ત ઈશ્વરને માટે અમે હવિષા-ધારણાપૂર્વક વિધેમ-સેવન કરીએ. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્થૂલ પાંચ તત્ત્વ જોવામાં આવે છે, તેને સૂક્ષ્મ, પ્રકૃતિનાં કાર્ય, પંચ તન્માત્રા નામક તત્ત્વથી ઉત્પન્ન થયેલા જાણો.

તેની મધ્યમાં એક સૂક્ષ્મ વાયુ છે, તે સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ જાણો.

જો તમે તે વાયુ = પ્રાણના દ્વારા યોગાભ્યાસથી પરમાત્માને જાણવા ઈચ્છો, તો તેને સાક્ષાત્ જાણો. (૨૫)

યજ્ઞિદાપો મહિના પર્યપશ્યદક્ષ્ણં દધાના જનયન્તીર્યજ્ઞમ્ ।

યો દેવેષ્વધિં દેવ એક આસીત્કસ્મૈ દેવાય હવિષા વિધેમ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : ય:-જે પરમેશ્વર મહિના-પોતાની વ્યાપકતાના મહિમાથી દક્ષમ્-બળને દધાના:-ધારણ કરનારી, યજ્ઞમ્-સંગત સંસારને જનયન્તી:-ઉત્પન્ન કરનારી આપ:-વ્યાપ્તશીલ સૂક્ષ્મ જળની તન્માત્રા છે; તેને પર્યપશ્યત્-સર્વત્રથી નિહાળે છે.

ય:-જે પરમેશ્વર દેવેષુ-ઉત્તમ ગુણવાળા પ્રકૃતિ આદિ તથા જીવોમાં એક:-એક દ્વિતીય અધિ, દેવ:-સર્વની ઉપર દિવ્યગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા આસીત્-છે; તે ચિત્-જ કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ દેવાય-સર્વ સુખોના દાતા ઈશ્વરની અમે હવિષા-તેની આજ્ઞાપાલન તથા યોગાભ્યાસના ધારણથી વિધેમ-સેવા કરીએ. (૨૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે આપ સર્વના દ્રષ્ટા, ધર્તા, કર્તા અદ્વિતીય, અધિષ્ઠાતા પરમાત્માને જાણવા નિત્ય યોગાભ્યાસ કરો છો, તો આનંદને પ્રાપ્ત કરો છો. (૨૬)

પ્ર યાભિર્યાસિં દાશ્વાઙ્સમચ્છાં નિયુદ્ધિર્વાયવિષ્ટયૈ દુરોણે ।

નિ નો રયિઃ સુભોજસં યુવસ્વ નિ વીરં ગવ્યમશ્વ્યં ચ રાઘઃ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વિદ્વાન્ ! વાયુની સમાન વર્તાવ કરનાર આપ પ્રયાભિ:-કામના કરવા યોગ્ય નિયુદ્ધિ:-નિયત ગુણોથી ઇષ્ટયે-અભીષ્ટ સુખને માટે અચ્છ-સારી રીતે યાસિ-પ્રાપ્ત થાય છે; દુરોણે-ધરમાં ન:-અમારા સુભોજસમ્-ઉત્તમ ભોજનના હેતુ, દાશ્વાઙ્સમ્-સુખના દાતા, રયિમ્-ધનને નિ, યુવસ્વ-સર્વથા પ્રાપ્ત કરો; વીરમ્-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનારા, ગવ્યમ્-ગાયના હિતકારી ચ-તથા અશ્વમ્-ઘોડાને માટે હિતકારી રાઘ:-ધનને નિ-સર્વથા પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ જીવન આદિ સર્વ ઈષ્ટ કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાન આ સંસારમાં વર્તન કરે. (૨૭)

આ નો નિયુદ્ધિઃ શતિનીંભિરધ્વરઃ સહસ્ત્રિણીંભિરુપં યાહિ યજ્ઞમ્ ।

વાયો અસ્મિન્ત્સવને માદયસ્વ યૂયં પાત સ્વસ્તિભિઃ સદા નઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુની સમાન બળવાન વિદ્વાન્ ! જેમ વાયુ નિયુદ્ધિઃ-નિશ્ચિત મિશ્રિત-અમિશ્રિત ગમનાગમનરૂપ, શતિનીંભિઃ-અનેક કર્મોવાળો સહસ્ત્રિણીંભિઃ અસંખ્ય વેગોથી યુક્ત ગતિઓથી અસ્મિન્-આ સવને-ઉત્પત્તિના આધાર જગતમાં નઃ-અમારા અધ્વરમ્-હિંસા રહિત યજ્ઞમ્-સંગતિ યોગ્ય વ્યવહારને ઉપ-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ આપ આયાહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો; અને માદયસ્વ-આનંદ કરો.

હે વિદ્વાનો ! યુયમ્-આપ આ વિદ્યાથી સ્વસ્તિભિઃ-સુખોથી સદા-સર્વ કાળમાં નઃ-અમારી પાત-રક્ષા કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ વાયુ વિવિધ ગતિઓથી સર્વને પુષ્ટ કરે છે, તેમ જ સુશિક્ષાથી સર્વની પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૮)

નિયુત્વાન્વાયુવા ગહ્યયઃ શુક્રો અંયામિ તે । ગન્તાસિ સુન્વતો ગૃહમ્ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુની સમાન શીઘ્ર ગતિમાન નિયુત્વાન્-નિયન્તા ઈશ્વર ! આપ જેમ અયમ્-આ શુક્રઃ-પવિત્રકર્તા, ગન્તા-ગતિશીલ વાયુ સુન્વતઃ-સોમ-રસ કાઠનારના ગૃહમ્-ઘર જાય છે; તેમ મને આ, ગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

કારણ કે આપ ઈશ્વર અસિ-છો, તેથી તે-આપના સ્વરૂપને હું અંયામિ-પ્રાપ્ત કરું છું. (૨૯)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વનો શોધક, સર્વત્ર ગતિશીલ અને સર્વનો પ્રિય છે, તેમ ઈશ્વર પણ છે. (૨૯)

વાયો શુક્રોઽઅંયામિ તે મધ્વોઽઅગ્રં દિવિષ્ટિષુ ।

આ યાહિ સોમપીતયે સ્પાર્હો દૈવ નિયુત્વતા ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-જે વાયુની સમાન વર્તન કરનાર વિદ્વાન્ ! શુક્રઃ-આપ શુદ્ધિકારક છો, તે-આપના મધ્વઃ-મધુર વચનથી અગ્રમ્-ઉત્તમ ભાગને દિવિષ્ટિષુ-દિવ્ય સંગતિઓમાં હું અંયામિ-પ્રાપ્ત કરું છું.

હે દેવ-દિવ્ય ગુણ સંપન્ન વિદ્વાન્ ! સ્પાર્હઃ-ઉત્તમ ગુણોની અભિલાષાથી યુક્તના પુત્ર આપ નિયુત્વતા-વાયુની સાથે સોમપીતયે-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પાન કરવા માટે આ, યાહિ-સારી રીતે આવો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ વાયુ સર્વ પ્રકારના રસ, ગંધ આદિનું પાન કરીને સર્વને પુષ્ટ કરે છે, તેમ તું પણ સર્વને પુષ્ટ કર. (૩૦)

વાયુરંગ્રેગા યજ્ઞપ્રીઃ સાકં ગન્મનસા યજ્ઞમ્ । શિવો નિયુદ્ધિઃ શિવાભિઃ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ વાયુ:-વાયુ નિયુદ્ધિ:-નિશ્ચિત શિવાભિ:-મંગલકારી ક્રિયાઓથી યજ્ઞમ-યજ્ઞને ગન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ શિવ:-મંગલસ્વરૂપ અગ્રેગા:-અગ્રગામી અને યજ્ઞપ્રી:-યજ્ઞને પૂર્ણ કરનાર બનીને આપ મનસા-મનની વૃત્તિની સાકમ્-સાથે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અનેક પદાર્થોની સાથે ગમનાગમન કરે છે, તેમ વિદ્વાનજનો ધર્મયુક્ત કર્મોને વિજ્ઞાનથી પ્રાપ્ત કરે. (૩૧)

વાયો યે તેં સહસ્ત્રિણો રથાસસ્તેભિરા ગૃહિ । નિયુત્વાન્ત્સોમપીતયે ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુની સમાન વર્તાવ કરનાર વિદ્વાન્ ! યે-જે તે-આપના સહસ્ત્રિણ:-પ્રશસ્ત હજારો મનુષ્યોથી યુક્ત સ્થાસ:-રમણીય વાહન છે, તેભિ:-તેનાથી નિયુત્વાન્-સમર્થ બનીને આપ સોમપીતયે-સોમ ઔષધિના રસનું પાન કરવા માટે આ, ગૃહિ-આવો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુની અસંખ્ય રમણીય ગતિઓ છે, તેમ વિવિધ ગતિઓથી સમર્થ બનીને તમે ઐશ્વર્યનો ભોગ કરો. (૩૨)

એકયા ચ દશભિશ્ચ સ્વભૂતે દ્વાભ્યામિષ્ટયે વિશ્વતી ચ ।

તિસૃભિશ્ચ વહસે ત્રિશતા ચ નિયુદ્ધિર્વાયવિહ તા વિ મુઞ્ચ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્વભૂતે-પોતાના ઐશ્વર્યથી શોભાયમાન વાયો-વાયુની સમાન વિદ્વાન્ ! જેમ પવન ઇહ-આ જગતમાં ઇષ્ટયે-વિદ્યાની સંગતિને માટે એકયા-એક પ્રકારની ગતિથી, ચ-અને દશભિ:-દશ પ્રકારની ગતિઓથી, ચ-અને દ્વાભ્યામ્-વિદ્યા અને પુરુષાર્થ બન્નેથી ઇષ્ટયે-વિદ્યાની સંગતિને માટે વિશ્વતી-૨૦ X ૨ = ૪૦ - ચાળીસ, ચ-અને તિસૃભિ:-ત્રણ પ્રકારની ગતિઓથી ચ-અને ત્રિશતા-ત્રીસ અર્થાત્ તેત્રીસ ચ-અને નિયુદ્ધિ:-નિશ્ચિત ગતિઓની સાથે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપ વહસે-પ્રાપ્ત કરો અને આપ તા-તે સર્વને વિ + મુઞ્ચ-વિમુક્ત કરો અર્થાત્ તેને ઉપદેશ આપો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ-ઈન્દ્રિય, પ્રાણ; અનેક ગતિઓ તથા પૃથિવી આદિ લોકોની સાથે સર્વના ઈષ્ટને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાન પણ સિદ્ધ કરે. (૩૩)

તવ વાયવૃતસ્પતે ત્વષ્ટુર્જામાતરદ્ભુત । અવાશ્વસ્યા વૃણીમહે ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે વ્રહ્મસ્પતે-સત્યના રક્ષક, જામાત:-જમાઈની સમાન વર્તાવ કરનાર, અદ્ભુત-આશ્ચર્યરૂપ કર્મ કરનાર વાયો-અત્યંત બળવાન વિદ્વાન્ ! અમે ત્વષ્ટુ:-વિદ્યાથી પ્રદીપ્ત તવ-આપના અવાશ્વસિ-રક્ષા આદિ કર્મોનો આ, વૃણીમહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેનો તમે પણ સ્વીકાર કરો.

ભાવાર્થ : જેમ જમાઈ અદ્ભુત ગુણોવાળો, સત્ય ઈશ્વરનો સેવક તથા સ્વીકાર કરવા યોગ્ય હોય છે, તેમ વાયુ પણ વરણ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે. (૩૪)

અભિ ત્વા શૂર નોનુમોડુઘ્વા ઇવ ધેનવઃ ।

ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥ ३५ ॥

પદાર્થ : હે શૂર-નિર્ભય ઇન્દ્ર-સભાપતે ! અદુગ્ધા ઇવ-દૂધ વગરની ધેનવઃ-ગાયોની સમાન અમે અસ્ય-આ જગતઃ-જંગમ તથા તસ્થુષઃ-સ્થાવર જગતના ઈશાનમ્-નિયંતા સ્વર્દૃશમ્-સુખપૂર્વક જોવા લાયક ઈશ્વરની સમાન ઈશાનમ્-સમર્થ ત્વા-આપનો અભિ, નોનુમઃ-સન્મુખથી સત્કાર કરીએ છીએ, પ્રશંસા કરીએ છીએ. (૩૫)

ભાવાર્થ : જો આપ પક્ષપાત રહિત ઈશ્વરની સમાન ન્યાયધીશ રહો, જો કદાચ અમે કર પણ ન આપીએ, છતાં પણ અમારી રક્ષા કરો, તો અમે સદા આપને અનુકૂળ બની રહીએ. (૩૫)

न त्वावाँ २॥५ अ॒न्यो दि॒व्यो न पार्थि॒वो न जा॒तो न ज॑निष्यते ।

अ॒श्व॒अ॒य॒न्तो म॒घव॒न्निन्द्र॑ वा॒जिनो॑ ग॒व्यन्त॑સ્त्वा हवामहे ॥ ३६ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ પૂજિત ઐશ્વર્યથી યુક્ત ઇન્દ્ર-સર્વ દુઃખોના વિનાશક પરમેશ્વર ! વાજિનઃ-વેગવાન, ગવ્યન્તઃ-ઉત્તમ વાણીથી ઉપદેશ કરનાર અશ્વાયન્તઃ-પોતાને શીઘ્રતાથી ચાહનાર અમે ત્વા-આપની હવામહે-સ્તુતિ કરીએ છીએ.

કારણ કે કોઈ અન્યઃ-અન્ય પદાર્થ ન, ત્વાવાન્-આપની સમાન દિવ્યઃ-શુદ્ધ નથી, ન, પાર્થિવઃ-પૃથિવીમાં પ્રસિદ્ધ નથી, ન, જાતઃ-ઉત્પન્ન થયેલ નથી ન, જનિષ્યતે-થશે નહિ, તેથી આપ જ અમારા ઉપાસ્ય દેવ છો. (૩૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની સમાન કોઈ શુદ્ધ નથી, કોઈ ઉત્પન્ન થયેલ નથી અને કોઈ ઉત્પન્ન થશે નહિ અને વર્તમાન પણ નથી.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ તે પરમેશ્વરને છોડીને અન્ય કોઈની પણ ઉપાસના તેના સ્થાનમાં ન કરવી જોઈએ.

આ કર્મને આ લોક અને પરલોકમાં આનંદદાયક માનવું જોઈએ. (૩૬)

त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।

त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वातः ॥ ३७ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સૂર્યની સમાન જગતના પાલક સેનાપતિ ! વાજસ્ય-વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન કાર્યના હિ-જ કારવઃ-કરનારા નરઃ-નાયક અમે સાતૌ-રણમાં ત્વામ્-આપને જેમ વૃત્રેષુ-મેઘોમાં સૂર્યની સમાન સત્પતિમ્-સત્યના પ્રચારના રક્ષક ત્વામ્-આપને, અર્વતઃ-શીઘ્રગામી ઘોડાની સમાન સેનામાં નિહાળીએ છીએ, કાષ્ઠાસુ-દિશાઓમાં ત્વામ્-આપને ઇત્-જ હવામહે-સેનાપતિ સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે સેનાપતિ અને સભાપતિ ! તમે બન્ને-સૂર્યની સમાન ન્યાય અને અભયના પ્રકાશક,

શિલ્પીઓને ગ્રહણ કરનારા તથા સત્યના પ્રચારક બનો. (૩૭)

સ ત્વં નશ્ચિત્ર વજ્રહસ્ત ધૃષ્ણુયા મહ સ્તવાનોઽઅદ્રિવઃ ।

ગામશ્વઃ રથ્યમિન્દ્ર સં કિર સત્રા વાજં ન જિગ્યુષે ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે ચિત્ર-આશ્ચર્યસ્વરૂપ વજ્રહસ્ત-હાથમાં વજ્રધારી, અદ્રિવઃ-પ્રશસ્ત પથ્થરથી નિર્મિત વસ્તુઓથી યુક્ત, ઇન્દ્ર-શત્રુનાશક વિદ્વાન્ ! ધૃષ્ણુયા-દૃઢતાથી મહઃ-મહાન સ્તવાનઃ-સ્તુતિવાળા સઃ-તે પૂર્વોક્ત ત્વમ્-આપ જિગ્યુષે-જયશીલ થવા માટે નઃ-અમારે માટે સત્રા-સત્ય વાજમ્-વિજ્ઞાનની ન-સમાન ગામ્-બળદ તથા રથ્યમ્-રથને યોગ્ય અશ્વમ્-ઘોડાઓને સં કિર-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ સંબંધી સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વથી સંબંધો રાખે છે, તેમ વિદ્વાન સત્ય વિજ્ઞાનથી સર્વ ઐશ્વર્યને પ્રકાશિત કરે છે. (૩૮)

કયાં નશ્ચિત્ર આ ભુવદૂતી સદાવૃધઃ સખાં । કયાં શચિષ્ઠયા વૃતા ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ચિત્રઃ-અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા સદાવૃધઃ-જે સદા વૃદ્ધિ પામનારા પુરુષના સખા-મિત્ર આ, ભુવત્-બનો. કયા-કોઈ ઋતી-રક્ષણ આદિ ક્રિયાથી નઃ-અમારી રક્ષા કરો. કયા-કોઈ શચિષ્ઠયા-અત્યંત નિકટનો સંબંધ રાખનાર વૃતા-વર્તાવરૂપ ક્રિયાથી અમને નિયુક્ત કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા વિદ્વાન સર્વના મિત્ર બનીને, કુકર્મોની નિવૃત્તિ કરીને, અમને સુકર્મોમાં યુક્ત કરે છે, તે અમારા માટે સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૯)

કસ્ત્વા સત્યો મદાનાં મંહિષ્ઠો મત્સદન્ધસઃ । દૃઢા ચિદારુજે વસુ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે કઃ-સુખદાયક, સત્યઃ-શ્રેષ્ઠોમાં ઉત્તમ, મંહિષ્ઠઃ-અત્યંત મહત્વથી નિયુક્ત વિદ્વાન ! ત્વા-આપને અન્ધસઃ-અન્ન-ભોજનથી મદાનામ્-આનંદોમાં મત્સત્-પ્રસન્ન કરે છે; આરુજે-અતિ રોગના માટે ઔષધોને જેમ એકત્ર કરે છે, ચિત્-તેમ દૃઢા-દૃઢ વસુ-દ્રવ્યોને સંચય કરે છે, તે અમારા પૂજનીય-સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે સત્યમાં પ્રીતિ રાખનાર, આનંદદાયક વિદ્વાન પરોપકારને માટે, રોગ નિવારણને માટે ઔષધની સમાન વસ્તુઓનો સંચય કરે છે, તે જ સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૦)

અભી ષુ ણઃ સખીનામવિતા જરિતૃણામ્ । શતં ભવાસ્યૂતયૈ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ નઃ-અમારા સખીનામ્-મિત્રો તથા જરિતૃણામ્-સ્તુતિ કરનારાઓના અવતા-રક્ષક છો; ઋતયે-પ્રીતિ આદિને માટે શતમ્-સેંકડો પ્રકારથી સુ,ભવાસિ-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરો છો, તે આપ અભિ-સર્વત્રથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાના મિત્રોના રક્ષક, અત્યંત સુખ પ્રદાન કરનાર તથા અનાથોની રક્ષામાં પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ અસંખ્ય ધન પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૧)

યજ્ઞાયજ્ઞા વોઽઅગ્નયૈ ગિરાગિરા ચ દક્ષસે ।

પ્રપ્ર વયમમૃતં જાતવેદસં પ્રિયં મિત્રં ન શંસિષમ્ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અગ્નયે-અગ્નિને માટે ચ-અને ગિરાગિરા-પ્રત્યેક વાણીથી, દક્ષસે-બળને માટે યજ્ઞાયજ્ઞા-પ્રત્યેક યજ્ઞમાં વ:-તમારી પ્રપ્ર, શંસિષમ્-અત્યંત પ્રશંસા કરું છું; વયમ્-અમે જાતવેદસમ્-વિજ્ઞાનથી યુક્ત અમૃતમ્-આત્મરૂપથી અવિનાશી, પ્રિયમ્-પ્રીતિયુક્ત મિત્રમ્-મિત્રની ન-સમાન તમારી પ્રશંસા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુશિક્ષિત વાણીથી યજ્ઞોનું અનુષ્ઠાન કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને, મિત્રોની સમાન વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને તેનો સંગ કરે છે, તેઓ અત્યંત જ્ઞાની અને ધન્ય બને છે. (૪૨)

પાહિ નોં અગ્નુ એકયા પાહ્યુત દ્વિતીયયા ।

પાહિ ગીર્ભિસ્તિસૃષ્ટિર્ઋર્જા પતે પાહિ ચતસૃષ્ટિર્વસો ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે વસો-ઉત્તમ નિવાસ આપનાર અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ એકયા-સુશિક્ષાથી ન:-અમારી પાહિ-રક્ષા કરો, દ્વિતીયયા-અધ્યાપન ક્રિયાથી પાહિ-રક્ષા કરો, તિસૃષ્ટિ:-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની જ્ઞાપક ગીર્ભિ:-વાણીઓથી પાહિ-રક્ષા કરો.

હે ઋર્જામ્-બળોના પતે-રક્ષક આપ અમારી ચતસૃષ્ટિ:-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની વિજ્ઞાપક ચાર પ્રકારની વાણીઓથી ઉત-પણ પાહિ-રક્ષા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : આપ વિદ્વાન્ ઉપદેશ અને અધ્યાપન સિવાય અન્ય કોઈ સાધનને મનુષ્યના કલ્યાણકારક માનતા નથી. જેથી તેઓ દિવસ અને રાત અજ્ઞાનીઓ પર કૃપા કરી સદા ઉપદેશ કરે છે અને ભણાવે છે. (૪૩)

ઋર્જો નપાત્સઃ સ હિનાયમસ્મયુર્દાશેમ હૃવ્યદાતયે ।

ભુવદ્વાજેષ્વવિતા ભુવદ્વૃધઽઉત ત્રાતા તનૂનામ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! સઃ-તે આપ ઋજઃ-પરાક્રમને નપાતમ્-નષ્ટ ન કરનાર વિદ્યાબોધની હિન-વૃદ્ધિ કરો, જેથી અયમ્-આ પ્રત્યક્ષ આપ અસ્મયુઃ-અમારી કામનાવાળા બનીને વાજેષુ-સંગ્રામોમાં અવિતા-રક્ષક ભુવત્-બને.

ઉત-અને તનૂનામ્-શરીરોની વૃદ્ધે-વૃદ્ધિને માટે ત્રાતા-રક્ષક-પાલક ભુવત્-બને; એથી આપને હૃવ્યદાતયે-આપવા યોગ્ય પદાર્થોનાં દાન માટે અમે દાશેમ-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થી પોતાના પરાક્રમ અને વીર્યનો નાશ ન કરે, શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરનાર બનીને રક્ષક બને, આપ વિદ્વાન તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે.

જો આથી વિપરીત અજિતેન્દ્રિય, દુષ્ટાચારી અને નિંદક હોય, તે વિદ્યા ગ્રહણ કરવાનો અધિકારી બનતો નથી. તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૪)

સંવત્સરોઽસિ પરિવત્સરોઽસીદાવત્સરોઽસીદ્વત્સરોસિ વત્સરોઽસિ । ઉષસંસ્તે કલ્પન્તામહોરાત્રાસ્તૈ કલ્પન્તામર્દ્ધમાસાસ્તૈ કલ્પન્તાં માસાસ્તે કલ્પન્તામૃતવસ્તે કલ્પન્તાંઽ સંવત્સરસ્તૈ કલ્પતામ્ । પ્રેત્યાઽણ્યૈ સં ચાઞ્ચ પ્ર ચ સારય । સુપર્ણાચિદસિ તયા દેવતયાઽઙ્ગિસ્વદ્ ધ્રુવઃ સીદ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા જિજ્ઞાસુ પુરુષ ! જેથી તું સંવત્સરઃ-વર્ષની સમાન નિયમથી વર્તન કરનાર અસિ-છે, પરિવત્સરઃ-ત્યાજ્ય વર્ષની સમાન દુષ્ટ આચરણનો ત્યાગ કરનાર અસિ-છે, ઇદાવત્સરઃ-નિશ્ચિત વર્ષની સમાન અસિ-છે, ઇદ્વત્સરઃ-નિશ્ચિત સંવત્સરની સમાન અસિ-છે, વત્સરઃ-વર્ષની સમાન અસિ-છે તેથી તે-તારા માટે કલ્યાણકારી ઉષસઃ-પ્રભાતવેળા કલ્પન્તામ્-સમર્થ ઉત્તમ બને, તે-તારા માટે અહોરાત્રાઃ-દિવસ-રાત મંગલદાયક કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને, તે-તારા માટે અર્દ્ધમાસાઃ-શુક્લ-કૃષ્ણપક્ષ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને, તે-તારા માટે માસાઃ-ચૈત્ર આદિ મહિનાઓ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને, તે-તારા માટે ઋત્વઃ-વસંત આદિ ઋતુઓ કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને, તે-તારા માટે સંવત્સરઃ-વર્ષ કલ્પતામ્-સમર્થ બને, ચ-અને તું પ્રેત્યૈ-ઉત્કૃષ્ટ પ્રાપ્તિને માટે સમ્, અંચ-પ્રયત્ન કર. ચ-અને તું એત્યૈ-સર્વત્ર ગતિને માટે પ્ર, સારય-પોતાના પ્રભાવનો પ્રસાર કર. કારણ કે તું સુપર્ણાચિત્-સુંદર રક્ષાના સાધનોનો સંચયકર્તા અસિ-છે, એથી તયા-તે દેવતયા-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત સમયરૂપ દેવતાની સાથે અઙ્ગિસ્વત્-સૂત્રાત્મા-સૂક્ષ્મ પ્રાણવાયુની સમાન ધ્રુવઃ-દૈઠ નિશ્ચલ સીદ-સ્થિર રહે. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે આપ્ત મનુષ્ય વ્યર્થ સમય નષ્ટ કરતા નથી, ઉત્તમ નિયમોની સાથે કર્તવ્ય કર્મોને કરે છે અને ત્યાજ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરે છે; તેઓના ઉત્તમ પ્રાતઃકાલ, દિવસ-રાત, પક્ષ-શુક્લ અને કૃષ્ણપક્ષ, મહિનાઓ અને ઋતુઓ સારી રીતે વ્યતીત થાય છે. એથી મનુષ્યની ઉન્નતિના માટે પ્રયત્ન કરીને, સુમાર્ગમાં ચાલીને, શુભ ગુણોનો અને સુખોનો પ્રસાર કરે. ઉત્તમ લક્ષણોવાળી વાણી અને પત્નીની સાથે ધર્મના ગ્રહણમાં અને અધર્મના ત્યાગમાં સદા દૈઠ ઉત્સાહી રહે. (૪૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં - સત્યની પ્રશંસાને જણાવવા (૧), સદ્ગુણોનો સ્વીકાર કરવો (૩), રાજ્ય વૃદ્ધિ (૪), અનિષ્ટનું નિવારણ (૬), જીવનની વૃદ્ધિ (૮), મિત્રનો વિશ્વાસ (૫), સર્વત્ર કીર્તિ ફેલાવવી (૮), ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ (૮), અલ્પ મૃત્યુનું નિવારણ (૮), શુદ્ધિ કરવી (૧૧), સુકર્મનું અનુષ્ઠાન (૧૩), યજ્ઞ કરવો (૧૪), અધિક ધનનું ધારણ કરવું (૧૫), સ્વામીત્વનું પ્રતિપાદન (૧૬), ઉત્તમવાણીનું ગ્રહણ (૧૮), સદ્ગુણોની ઈચ્છા (૨૦), અગ્નિની પ્રશંસા (૨૧), વિદ્યા અને ધનની વૃદ્ધિ કરવી (૨૪), કારણનું વર્ણન (૨૫), ધનનો ઉપયોગ (૨૭), પરસ્પરની રક્ષા (૨૮), વાયુના ગુણોનું વર્ણન (૨૮-૩૫), આધાર અને આધેયનું વર્ણન (૨૪), ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૩૬), શૂરવીરનાં કૃત્યોનું વર્ણન (૩૭), પ્રસન્નતાને પ્રાપ્ત કરવી (૪૦), મિત્રોની રક્ષા (૪૧), વિદ્વાનોનો

આશ્રય (૪૨), પોતાના આત્માનું પાલન (૪૩), વીર્ય રક્ષા (૪૪) અને યુક્ત આહાર-વિહાર (૪૫)નો ઉપદેશ છે, તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ સપ્તવિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથાષ્ટાવિંશોઽધ્યાય આરમ્ભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ। યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

હોતા યક્ષત્સમિધેન્દ્રમિડ્સ્પદે નાભા પૃથિવ્યા અધિ।

દિવો વર્ષન્ત્સમિધ્યત્ઽઓજિષ્ઠ્ઠચર્ષણીસહાં વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! તું જેમ હોતા-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોના ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન સમિધા-જ્ઞાનના પ્રકાશથી, ઇન્દ્રઃ-વાણીથી પદે-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં, પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના નાભા-મધ્યમાં વર્તમાન, દિવઃ-પ્રકાશની અધિ-ઉપર વર્ષન્-વર્ષા કરનાર મેઘમંડળમાં સ્થિત ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ નામક અગ્નિમાં યક્ષત્-સંગત/યજ્ઞ કરે છે, તેથી ઓજિષ્ઠઃ-અત્યંત બળવાન બનીને ચર્ષણીસહામ્-મનુષ્યોના સમૂહોમાં સહન કરનાર યોદ્ધાઓમાં સમ્, ઇધ્યતે-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; આજ્યસ્ય-ઘી આદિને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કર, વિદ્વાનોનો સંગ કર. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદના મંત્રો દ્વારા સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, તેને મેઘમંડળમાં પહોંચાડીને, જળને શુદ્ધ કરીને, સર્વના બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

હોતા યક્ષત્તનૂનપાતમૂતિભિર્જેતારમપરાજિતમ્। ઇન્દ્રં દેવશ્ચ સ્વર્વિદં પૃથિભિ-
ર્મધુમત્તમૈર્નરાશશ્સૈન્ તેજસા વેત્સાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પુરુષ - યજમાન ! આપ જેમ હોતા-સુખના દાતા વિદ્વાન ઋતિભિઃ-રક્ષા આદિ તથા મધુમત્તમૈઃ-અત્યંત મધુર જળ આદિથી યુક્ત પૃથિભિઃ-ધર્મયુક્ત માર્ગોથી તનૂનપાતમ્-શરીરોના રક્ષક, જેતારમ્-જયશીલ, અપરાજિતમ્-શત્રુઓથી પરાજય ન પામનાર, સ્વર્વિદમ્-સુખને પ્રાપ્ત, દેવમ્-વિદ્યા અને વિનયથી સુશોભિત ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યકારક રાજાનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, નરાશંસેન-મનુષ્યોથી પ્રશંસિત તેજસા-પ્રગલ્ભતાથી આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય વિષય-જ્ઞાનને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-સંગ કર.

ભાવાર્થ : જો રાજા સ્વયં ન્યાયના માર્ગો પર ચાલીને પ્રજાઓની રક્ષા કરે, તો તેઓ અપરાજિત બનીને શત્રુઓને જીતનાર બને છે. (૨)

હોતા યક્ષદિડાભિરિન્દ્રમીડિતમાજુહ્વાનમમર્ત્યમ્।

દેવો દેવૈઃ સર્વીર્યો વજ્રહસ્તઃ પુરન્દ્રો વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-ગ્રહીતા પુરુષ ! આપ જેમ હોતા-સુખના દાતા રાજપુરુષ ઇડાભિઃ-સુશિક્ષિત વાણીઓથી અમર્ત્યમ્-સાધારણ મનુષ્યોથી વિલક્ષણ, આજુહ્વાનમ્-સ્પર્ધા કરનાર, ઈન્દિતમ્-પ્રશંસિત, ઇન્દ્રમ્-

ઉત્તમ વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત રાજપુરુષનો યક્ષત્-સંગ કરે છે.

જેમ એ વજ્રહસ્ત:-હાથોમાં શસ્ત્ર-અસ્ત્રને ધારણ કરેલ, પુરન્દર:-શત્રુઓના નગરોના નાશક, સવીર્ય:-બળવાન, દેવ:-વિદ્વાન રાજા દેવૈ:-વિદ્વાનોની સાથે આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનથી રક્ષા કરવા યોગ્ય રાજ્યના અવયવોને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-સંગ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષો પ્રજાનું પિતા સમાન પાલન કરે છે, તેમ પ્રજા તેઓની પિતા સમાન સેવા કરે.

જેઓ આપ્ત વિદ્વાનોની અનુમતિથી સર્વ કાર્યો કરે છે, તેઓ ભ્રમને પ્રાપ્ત થતા નથી. (૩)

હોતા યક્ષદ્ બર્હિષીન્દ્રં નિષદ્વરં વૃષભં નર્યાપસમ્ ।

વસુભી રુદ્રૈરાદિત્યૈઃ સયુગ્મિર્બર્હિરાસદ્દ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-ઉત્તમ દાનના દાતા પુરુષ ! જેમ હોતા-સુખના ઈચ્છુક પ્રજાજન સયુગ્મિઃ-સંયુક્ત રહેનારા, વસુભિઃ-પ્રથમ કક્ષાના, સ્દૈઃ-મધ્યમ કક્ષાના તથા આદિત્યૈઃ-ઉત્તમ કક્ષાના વિદ્વાનોની સાથે બર્હિષિ-ઉત્તમ વિદ્વાનોની સભામાં નિષદ્વરમ્-જેની સમીપ શ્રેષ્ઠ મનુષ્ય બેસે છે, તે વૃષભમ્-સર્વોત્કૃષ્ટ, બળવાન, નર્યાપસમ્-સર્વ મનુષ્યોમાં ઉત્તમ કર્મ કરનારા ઇન્દ્રમ્-નીતિથી સુશોભિત રાજાનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, આજ્યસ્ય-કરવા યોગ્ય ન્યાયની બર્હિઃ-ઉત્તમ સભામાં આસદત્-બેસે છે; તથા સુખને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કરો, પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ લોક, પ્રાણ આદિ વાયુ, કાલના અવયવ મહિનાઓ સર્વની સાથે વર્તમાન છે, તેમ જે રાજા અને પ્રજાજન પરસ્પર અનુકૂળ વર્તાવ કરીને સભા દ્વારા પ્રજાનું પાલન કરે છે. તેઓ શ્રેષ્ઠ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

હોતા યક્ષદોજો ન વીર્યઃ સહો દ્વાર ઇન્દ્રમવર્દ્યન્ । સુપ્રાયણા અસ્મિન્ યજ્ઞે વિ શ્રયન્તામૃતાવૃધો દ્વાર ઇન્દ્રાય મીદુષે વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-યજમાન ! જેમ જે સુપ્રાયણાઃ-સુંદર અવકાશયુક્ત દ્વારઃ-દ્વાર ઓજઃ-જળના વેગની ન-સમાન વીર્યમ્-બળ, સહઃ-સહનશીલતા અને ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યની અવર્દ્યન્-વૃદ્ધિ કરે છે. તે ઋઘ્નાવૃધઃ-સત્યની વૃદ્ધિ કરનાર, દ્વારઃ-વિદ્યા અને વિનયરૂપ દ્વારોને મીદુષે-સ્નિગ્ધ=પ્રિય અને વીર્ય સેચનમાં સમર્થ ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાને માટે અસ્મિન્-આ યજ્ઞે-સંગતિને યોગ્ય સંસારમાં વિદ્વાન, લોકો વિ, શ્રયન્તામ્-વિશેષ સેવન કરે છે, આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનને યોગ્ય રાજ્યના વિષયને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે; અને હોતા-સુખદાતા મનુષ્ય યક્ષત્-તેનો સંગ કરે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં વિદ્યા અને ધર્મનાં દ્વારોને ખોલીને, પદાર્થવિદ્યાનું સેવન કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ પુષ્કળ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

હોતા યક્ષદુષે ઇન્દ્રસ્ય ધેનૂ સુદુઘે માતરા મહી ।

સુવાતરૌ ન તેજસા વત્સમિન્દ્રમવર્દ્ધતાં વીતામાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-સુખદાતા પુરુષ ! આપ જેમ **ઇન્દ્રસ્ય**-વિદ્યુતની **સુદુધે**-સુંદર કામનાઓની પૂરક માતરા-માતાની સમાન વિદ્યમાન **મહી**-મહાન ધેનૂ-બે દુધાળી ગાયોની **ન**-સમાન **સવાતરૌ**-વાયુની સાથે વિદ્યમાન **ઊષે**-પ્રતાપથી યુક્ત બંને ઉધાવેળા, **ઇન્દ્રસ્ય**-ભૌતિક અગ્નિ અને સૂર્યરૂપ અગ્નિના **તેજસા**-તેજથી **ઇન્દ્રમ્**-પરમ ઐશ્વર્યરૂપ **વત્સમ્**-વાછરડાને **વીતામ્**-પ્રાપ્ત કરે.

હોતા-સુખના દાતા પુરુષ **આજ્યસ્ય**-હોમમાં પ્રક્ષેપને યોગ્ય પદાર્થનો **યક્ષત્**-હોમ કરે અને **અવર્દ્ધતામ્**-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે, તેમ **યજ**-યજ્ઞ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ વાયુથી પ્રેરિત ભૂમિ સંબંધી અગ્નિ અને વિદ્યુતરૂપ અગ્નિ સૂર્યલોકના તેજની વૃદ્ધિ કરે છે, જેમ દૂધાળી ગાયની સમાન બંને ઉધાકાળ સર્વ વ્યવહારોનો આરંભ અને નિવૃત્તિ કરનાર હોય છે. તેમ પ્રયત્ન કરો. (૬)

હોતા યક્ષદૈવ્યા હોતારા ભિષજા સઘાયા હવિષેન્દ્રં ભિષજ્યતઃ ।

કવી દેવૌ પ્રચેતસાવિન્દ્રાય ધત્ત ઇન્દ્રિયં વીતામાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર વૈદ્યજન ! જેમ **હોતા**-સુખના દાતા આપ-વૈદ્ય **આજ્યસ્ય**-જાણવા યોગ્ય નિદાન આદિ વિષયનો **યક્ષત્**-સંગ કરે છે, **દૈવ્યા**-વિદ્વાનોમાં શ્રેષ્ઠ, **હોતારા**-રોગનિવૃત્તિ કરીને સુખ પ્રદાતા, **સઘાયા**-પરસ્પર મિત્ર, **કવી**-બુદ્ધિમાન, **પ્રચેતસૌ**-ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત, **દેવૌ**-વૈદ્યક વિદ્યાથી પ્રકાશમાન **ભિષજા**-બે ચિકિત્સકો **હવિષા**-યથાયોગ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારથી **ઇન્દ્રમ્**-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક જીવની **ભિષજ્યતઃ**-ચિકિત્સા કરે છે, **ઇન્દ્રાય**-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે **ઇન્દ્રિયમ્**-ધનને **ધત્તઃ**-ધારણ કરે છે અને આયુને **વીતામ્**-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ **યજ**-આયુને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય લોકો રોગીઓ પર અનુકંપા કરીને, ઔષધ આદિથી રોગોનું નિવારણ કરીને, ઐશ્વર્ય અને આયુની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તમે લોકો સર્વ પ્રાણીઓની મિત્રતા કરીને સર્વનાં સુખ અને આયુની વૃદ્ધિ કરો. (૭)

હોતા યક્ષતિસ્ત્રો દેવીર્ન ભેષજં ત્રયસ્ત્રિધાતવોઽપસ ઇડા સરસ્વતી ભારતી મહીઃ । ઇન્દ્રપત્નીર્હવિષ્મતીર્વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-સુખના ઈચ્છુક જન ! જેમ **હોતા**-વિદ્યાના દાતા વા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન **આજ્યસ્ય**-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ભણવા-ભણાવવા રૂપ વ્યવહારનો **યક્ષત્**-સંગ કરે છે; જેમ **ત્રિધાતવઃ**-અસ્થિ, મજ્જા અને વીર્ય એ ત્રણ ધાતુઓના વર્ધક, **અપસઃ**-કર્મ લોકો, **ત્રયઃ**-ત્રણ - અધ્યાપક, ઉપદેશક અને વૈદ્ય, **તિસ્ત્રઃ**-ત્રણ **દેવીઃ**-સકલ વિદ્યાની પ્રકાશક દેવીઓની **ન**-સમાન **ભેષજમ્**-ઔષધને **મહીઃ**-મોટી પૂજાને યોગ્ય, **ઇડા**-પ્રશંસાને યોગ્ય, **સરસ્વતી**-અતિ વિજ્ઞાનથી યુક્ત અને **ભારતી**-ઉત્તમ વિદ્યાની ધારક વા પોષક

વાણી હવિષ્મતી:-વિવિધ વિજ્ઞાનોથી યુક્ત ઇન્દ્રપત્ની:-જીવાત્માની પત્ની-સ્ત્રી સમાન વર્તાવ કરનારી દેવીઓને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત થાય; તેમ યજ-સંગ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રશંસનીય, વિજ્ઞાનવતી અને ઉત્તમ મેધાવાળી સ્ત્રીઓ પોતાની સમાન પતિઓને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે, તેમ અધ્યાપક, ઉપદેશક અને વૈદ્ય લોકો સ્તુતિ, વિજ્ઞાન, યોગ ધારણથી યુક્ત વાણીઓને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહે છે. (૮)

હોતાં યક્ષત્ત્વષ્ટાર્મિન્દ્રં દેવં ભિષજઃ સુયજં ઘૃતશ્રિયમ્ । પુરુરૂપઃ સુરેતસં મઘોનમિન્દ્રાય ત્વષ્ટા દર્ધદિન્દ્રિયાણિ વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-શુભ ગુણોના દાતા ! જેમ હોતા-પથ્ય આહાર-વિહાર કરતા ત્વષ્ટાર્મ-ધાતુઓની વિષમતાથી થયેલા દોષોનો નાશ કરનાર સુરેતસમ્-સુંદર પરાક્રમયુક્ત, મઘોનમ્-પરમ પ્રશસ્ત ધનવાન, પુસ્ત્રમ્-અનેક રૂપયુક્ત, ઘૃતશ્રિયમ્-જળથી શોભાયમાન, સુયજમ્-સુંદર સંગ કરનાર, ભિષજમ્-વૈદ્ય દેવમ્-શુભ ગુણોથી દેદીપ્યમાન ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યવાન પુરુષનો યક્ષત્-સંગ કરે છે, આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય વચનના ઇન્દ્રાય-પ્રેરક જીવને માટે ઇન્દ્રિયાણિ-કર્ણ આદિ ઈન્દ્રિયો વા ધનને દધત્-ધારણ કરતાં ત્વષ્ટા-વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાન વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું પણ યજ-સંગ કર. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આપ્ત, રોગ નિવારક, શ્રેષ્ઠ ઔષધ આપનાર, ધન અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર વૈદ્યની સેવા કરીને, શરીર, આત્મા, અન્તઃકરણ અને ઈન્દ્રિયોનાં બળની વૃદ્ધિ કરીને, પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરો. (૯)

હોતાં યક્ષદ્વનસ્પતિઃ શમિતારઃ શતક્રતું ધિયો જોષ્ટાર્મિન્દ્રિયમ્ । મધ્વા સમઙ્ગન પ્થિભિઃ સુગેભિઃ સ્વદાતિ યજ્ઞં મધુના ઘૃતેન વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજં ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-યજ્ઞ કરતા પુરુષ વનસ્પતિમ્-વન =કિરણોના સ્વામી સૂર્યની સમાન શમિતારમ્-યજમાન શતક્રતુમ્-અસંખ્ય બુદ્ધિયુક્ત ધિયઃ-બુદ્ધિ વા કર્મને જોષ્ટાર્મ-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરનાર વિદ્વાનનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; મધ્વા-મધુર વિજ્ઞાનથી સુગેભિઃ-સુખપૂર્વક ગમનનો આધાર પ્થિભિઃ-માર્ગોથી આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય સંસારના ઇન્દ્રિયમ્-ધનને સમઙ્ગન-સમ્યક્ પ્રકટ કરતા સ્વદાતિ-સ્વાદ લે છે; મધુના-મધુર ઘૃતેન-ધી, વા જળથી યજ્ઞમ્-સંગતિ યોગ્ય વ્યવહારને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યજ-તું પણ પ્રાપ્ત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન વિદ્યા, બુદ્ધિ, ધર્મ અને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર, ધર્મયુક્ત માર્ગોથી ચાલીને સુખોને ભોગવે છે, તેઓ અન્યોને પણ સુખ પ્રદાન કરાવનાર બને છે. (૧૦)

હોતાં યક્ષદિન્દ્રઃ સ્વાહાજ્યસ્ય સ્વાહા મેદસઃ સ્વાહા સ્તોકાનાઃ સ્વાહા સ્વાહાકૃતીનાઃ સ્વાહા હૃવ્યસૂક્તીનામ્ । સ્વાહા દેવા આજ્યપા જુષાણા ઇન્દ્ર-આજ્યસ્ય વ્યન્તુ હોતર્યજં ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-વિદ્યાદાતા મનુષ્ય ! જેમ ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા, હોતા-વિદ્યોન્નતિને ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય શાસ્ત્રની સ્વાહા-સત્યવાણીથી, મેદસઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થની સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી, સ્તોકાનામ્-સંતાનોની સ્વાહા-ઉત્તમ પ્રિય વાણીથી, સ્વાહાકૃતીનામ્-સત્ય વાણી તથા સત્યાચરણના અનુષ્ઠાનોની સ્વાહા-હોમ ક્રિયાને, હવ્યસૂક્તીનામ્-અનેક ગ્રહણ કરવા યોગ્ય શાસ્ત્રોના સુંદર વચનોથી યુક્ત બુદ્ધિઓની સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી, ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને યજ્ઞત્-પ્રાપ્ત થાય છે; અને જેમ સ્વાહા-સત્ય વાણી તથા આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય શાસ્ત્રને જુષાણાઃ-પ્રસન્ન કરેલ આજ્યપાઃ-ધૃતનું પાન કરનારા વા રાજ્યની રક્ષા કરનારા દેવાઃ-વિદ્વાન ઐશ્વર્યને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે પુરુષો શરીર, આત્મા, સંતાન, સત્ય આચરણ અને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવા ઇચ્છે છે, તેઓ સર્વત્રથી સુખયુક્ત બને છે. (૧૧)

**દેવં બર્હિરિન્દ્રઃ સુદેવં દેવૈર્વીરવત્ સ્તીર્ણં વેદ્યામવર્દ્યત્ । વસ્તોર્વૃતં પ્રાક્તોર્ભૃતઃ
રાયા-બર્હિષ્મતોઽત્યગાદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ઞ ॥ ૧૨ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ બર્હિષ્મતઃ-અન્તરિક્ષથી સંબંધિત વાયુ, જળ આદિનું અતિ, અગાત્-ઉલ્લંઘન કરે છે, વસુધેયસ્ય-જેમાં ધનોનું ધારણ થાય છે તે જગતમાં વસુવને-ધનના સેવનમાં, વેદ્યામ્-હવનના કુંડમાં સ્તીર્ણમ્-સમિધા અને ધૃતાદિથી રક્ષા કરવા યોગ્ય, વસ્તોઃ-દિવસમાં વૃતમ્-સ્વીકૃત, અક્તોઃ-રાત્રિમાં ભૃતમ્-ધારણ કરેલ હોમ દ્રવ્ય આરોગ્યની પ્રાવર્દ્યત્-વૃદ્ધિ કરે છે, સુખ વેતુ-પહોંચાડે છે, તેમ બર્હિઃ-અન્તરિક્ષની સમાન રાયા-ધનની સાથે દેવમ્-દિવ્યગુણવાળા દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાથે વીરવત્-વીરોની સમાન વર્તાવ કરનારા ઇન્દ્રમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય કરનારા સુદેવમ્-સુંદર વિદ્વાનનો યજ-સંગ કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ યજમાન વેદીમાં સમિધાઓમાં સુંદર રીતે યયન કરેલ-રાખેલ અને ધૃતનો હોમ કરીને, અગ્નિની વૃદ્ધિ કરીને, અન્તરિક્ષમાં રહેલ વાયુ અને જળ આદિને શુદ્ધ કરીને, રોગ નિવારણ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ જ સજ્જન લોકો ધન આદિથી સર્વને સુખી કરે છે. (૧૨)

**દેવીર્દ્વાર ઇન્દ્રઃ સઙ્ઘાતે વીઙ્વીર્યામન્નવર્દ્યન્ । આ વત્સેન્ તરુણેન કુમારેણ
ચ મીવતાપાર્વાણઃ રેણુકકાટં નુદન્તાં વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૧૩ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ વીઙ્વીઃ-વિશેષ સ્તુતિને યોગ્ય, દેવીઃ-પ્રકાશમાન દ્વારઃ-દ્વાર રેણુકકાટમ્-ધૂળવાળા કૂવા અર્થાત્ આંધળા કૂવાને ચામન્-માર્ગમાં છોડીને, તરુણેન-યુવાન મીવતા-દુષ્ટોની હિંસા કરનારા, ચ-અને કુમારેણ-બ્રહ્મચારી વત્સેન-વાઇરડા સમાન વર્તમાનવાળા અર્વાણમ્-ગતિશીલ ઘોડા જેમ ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યની આ, અવર્ધ્યન્-વૃદ્ધિ કરે છે, વસુવને-ધનના સેવનરૂપ સઙ્ઘાતે-સંબંધમાં વસુધેયસ્ય-ધનધારક સંસારના વિઘ્નને અપ, નુદન્તામ્-દૂર કરે છે, વ્યન્તુ-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ યાત્રી માર્ગમાં વિદ્યમાન કૂવાને દૂર કરીને, શુદ્ધ માર્ગ બનાવીને પ્રાણીઓને

સુખથી પહોંચાડે છે, તેમ બાલ્યાવસ્થામાં વિવાહ આદિ વિધનોને દૂર કરીને, વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવીને, પોતાના સંતાનોને સુખના માર્ગ પર ચલાવે. (૧૩)

દેવી ઉષાસાનક્તેન્દ્રં યજ્ઞે પ્રયત્પ્રહેતામ્ ।

દૈવીર્વિશ્નુઃ પ્રાયાસિષ્ટાંશ્ચ સુપ્રીતે સુધિતે વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ સુપ્રીતે-ઉત્તમ પ્રીતિ માટે સુધિતે-ઉત્તમ હિતકારી, દેવી-પ્રકાશમાન ઉષાસાનક્ત-રાત-દિવસ પ્રયતિ-પ્રયત્નને માટે, યજ્ઞે-સંગતિને યોગ્ય યજ્ઞાદિ વ્યવહારમાં ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત યજ્ઞમાનને અહેતામ્-બોલાવે છે, વસુધેયસ્ય-કોષના વસુવને-ધનના વિભાગમાં દૈવીઃ-ન્યાયકારી વિદ્વાનોની આ વિશ્નુઃ-પ્રજાને પ્ર, અયાસિષ્ટામ્-પ્રાપ્ત કરાવે છે, સર્વ જગતને વીતામ્-વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ યજ્ઞ-યજ્ઞ કર. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દિવસ-રાત નિયમથી પ્રવૃત્ત થઈને પ્રાણીઓને વ્યવહારમાં જોડે છે, તેમ તમે નિયમથી વર્તાવ કરીને, પ્રજાને આનંદિત કરીને સુખી કરો. (૧૪)

દેવી જોષ્ટ્રી વસુધિતી દેવમિન્દ્રમવર્દ્ધતામ્ । અયાવ્યન્યાઘા દ્વેષાંશ્ચસ્યાન્યા વક્ષદ્વસુ વાર્યાંણિ યજ્ઞમાનાય શિક્ષિતે વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ વસુધિતી-દ્રવ્યોને ધારણ કરનારા, જોષ્ટ્રી-સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરવા યોગ્ય, દેવી-પ્રકાશમાન દિવસ-રાત દેવમ્-પ્રકાશસ્વરૂપ ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની અવર્દ્ધતામ્-વૃદ્ધિ કરે છે, તે દિવસ-રાતની મધ્યમાં અન્યા-એક અઘા-અંધકારરૂપ રાત્રિ દ્વેષાંસિ-દ્વેષયુક્ત જંતુઓને આ + અયાવિ-સારી રીતે પૃથક્ કરે છે અને અન્યા-તે બન્નેમાંથી એક પ્રાતઃકાલ રૂપ ઉષા વસુ-ધન તથા વાર્યાંણિ-જળ સંબંધી વ્યવહારને વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; યજ્ઞમાનાય-પુરુષાર્થી મનુષ્યને માટે વસુધેયસ્ય-આકાશની મધ્યમાં વસુવને-પૃથિવી આદિના સંવિભાગરૂપ જગતમાં શિક્ષિતે-શિક્ષણ માટે કરેલા દિવસ-રાત વીતામ્-વ્યાપ્ત થાય; તેમ યજ્ઞ-યજ્ઞ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રાત અને દિવસ વિભક્ત બનીને, મનુષ્ય આદિના સમસ્ત વ્યવહારની વૃદ્ધિ કરે છે. તેમાં રાત્રિ પ્રાણીઓને સુવડાવીને દ્વેષ આદિથી નિવૃત્ત કરે છે અને દિવસ એ દ્વેષ આદિને પ્રાપ્ત કરાવે છે અને સર્વ વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ તમે લોકો યોગાભ્યાસથી રાગ આદિનો ત્યાગ કરીને, શાન્તિ આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરો. (૧૫)

દેવીઽઋર્જાહૃતી દુઘે સુદુઘે પયસેન્દ્રમવર્દ્ધતામ્ । ઇષમૂર્જમન્યા વક્ષત્સગ્ધિઃ સપીંતિમન્યા નવેનૂ પૂર્વ દર્યમાને પુરાણેનૂ નવમધાતામૂર્જમૂર્જાહૃતી ઋર્જયમાને વસુ વાર્યાંણિ યજ્ઞમાનાય શિક્ષિતે વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ વસુધેયસ્ય-ઐશ્વર્યને ધારણ કરનાર ઈશ્વરનાં વસુવને-ધન-દાનના આધાર જગતમાં વિદ્વાનના દ્વારા વાર્યાણિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય કર્મ વસુ-ધનની શિક્ષિતે-વિદ્વાનોની શિક્ષામાં રાત-દિવસ યજમાનાય-સંગતિને માટે પ્રવૃત્ત જીવને માટે વ્યવહારને વીતામ્-વ્યાપ્ત કરે છે; તેમ ઋર્જાહુતી-બળ તથા પ્રાણને ધારણ કરનારી આહુતિઓ દેવી-દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરનાર દિવસ-રાત, પયસા-જળથી હુધે-સુખોને પૂર્ણ અને સુદુઘે-ઉત્તમ કામનાઓની વર્ધક બનીને ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યની અવધેતામ્-વૃદ્ધિ કરે છે; તેમાંથી અન્યા-એક રાત્રિ ઇષમ્-અન્ન અને ઋર્જમ્-બળને વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; અન્યા-બીજો દિવસ સપીતિમ્-પાનની સહિત સન્ધિમ્-સમાન ભોજનને વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; દયમાને-આવાગમન ગુણવાળી આગળ-પાછળની બે રાત્રિ પ્રવૃત્ત થઈને નવેન-નવા પદાર્થ સાથે પૂર્વમ્-પ્રાચીન અને પુરાણેન-પુરાણા સ્વરૂપ સાથે નવમ્-નવીન સ્વરૂપને અધાતામ્-ધારણ કરે છે; ઋર્જયમાને-બળની વૃદ્ધિ કરતા ઋર્જાહુતી-બળ અને પ્રાણને ધારણ કરનારી બનીને ઋર્જમ્-પ્રાણ = જીવનને ધારણ કરે છે; તેમ આપ યજ-સંગ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રાત અને દિવસ વર્તમાન સ્વરૂપ દ્વારા પૂર્વાપરના સ્વરૂપને બતાવનાર તથા આહાર-વિહારને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે, તેમ અગ્નિમાં હોમવામાં આવેલી આહુતિઓ સમસ્ત સુખો પૂર્ણ કરનારી છે.

જો મનુષ્યો સમયના અત્યલ્પ ભાગને પણ વ્યર્થ વિતાવે, વાયુ આદિ પદાર્થોને શુદ્ધ ન કરે, અદૃષ્ટ (ભવિષ્ય આદિ)ને અનુમાનથી ન જાણે, તો સુખને કદી પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૬)

દેવા દૈવ્યા હોતારા દેવમિન્દ્રમવર્દ્ધતામ્ । હતાઘશંસૌવાભાર્ષ્ટા વસુ વાર્યાણિ યજમાનાય શિક્ષિતૌ વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દૈવ્યા-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત, હોતારા-જગતના ધર્તા, દેવા-સુખ પ્રદાન કરનારા વાયુ અને અગ્નિ દેવમ્-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની અવર્દ્ધતામ્-વૃદ્ધિ કરે છે; હતાઘશંસૌ-ચોરોને મારનારા તે રોગોને આ, અભાર્ષ્ટામ્-સારી રીતે નષ્ટ કરે છે; યજમાનાય-કર્મ પ્રવૃત્ત થયેલ જીવને માટે શિક્ષિતૌ-વિજ્ઞાપિત બનીને વસુધેયસ્ય-સર્વ ઐશ્વર્યના આધાર ઈશ્વરનાં વસુવને-ધન દાનના સ્થાન જગતમાં વસુ-ધન અને વાર્યાણિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય જલોને વીતામ્-વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ આપ યજ-યજ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય વાયુ અને વિદ્યુત્ને સૂર્યનાં નિમિત્ત માનીને, ધનોનો સંચય કરે તો સ્તેન-ચોરોના નાશક બને. (૧૭)

દેવીસ્તિસ્ત્રસ્ત્રો દેવીઃ પતિમિન્દ્રમવર્દ્ધયન્ । અસ્પૃક્ષદ્ધારતી દિવઃ રુદ્રૈર્યજ્ઞઃ સરસ્વતીઙ્ઞા વસુમતી ગૃહાન્વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જે સ્દૈઃ-પ્રાણોના દ્વારા ભારતી-ધારણ કરનારી વાણી દિવમ્-પ્રકાશને, સરસ્વતી-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણી યજ્ઞમ્-સંગતિને યોગ્ય વ્યવહારને, વસુમતી-અનેક દ્રવ્યોવાળી ઙ્ઞા-પ્રશંસનીય

વાણી ગૃહાન્-ઘરો વા ગૃહસ્થોને ધારણ કરતી દેવી: તિસ્રઃ-એ ત્રણ દિવ્ય વાણીઓ તિસ્રઃ દેવીઃ-ત્રણ દિવ્ય ક્રિયાઓને [અહીં પુનરુક્તિ આવશ્યકતા બતાવવા માટે છે.] તથા પતિમ્-પાલક ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની સમાન તેજસ્વી જીવની અવર્ધયન્-વૃદ્ધિ કરે છે; વસુધેયસ્ય-સર્વ ધન કોષનાં વસુવને-ધન દાનમાં ઘરોને વ્યન્તુ-વ્યાપ્ત કરે છે; તેને આપ યજ-પ્રાપ્ત કરો અને આપ તેની અસ્પૃક્ષત્-સ્પૃહા=કામના કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જેમ જળ, અગ્નિ અને વાયુની ગતિઓ દિવ્ય ક્રિયાઓ તથા સૂર્યના પ્રકાશની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જે મનુષ્યો સમસ્ત વિદ્યાઓને ધારણ કરનારી, સર્વ ક્રિયાઓનો હેતુ, સર્વ ગુણ-દોષોની જ્ઞાપક, ત્રણ પ્રકારની વાણીને જાણે છે, તેઓ એ સર્વ દ્રવ્યોના આધાર સંસારમાં શ્રી = લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૮)

**દેવ ઇન્દ્રોઽનરાશઃસંસ્ત્રિવરૂથસ્ત્રિબન્ધુરો દેવમિન્દ્રમવર્ધયત્ । શૃતેન શિતિ-
પૃષ્ઠાનામાર્હિતઃ સહસ્ત્રેણ પ્રવર્ત્તંતે મિત્રાવરુણેદસ્ય હોત્રમર્હતો બૃહસ્પતિ સ્તોત્રમ્-
શ્વિનાઽધ્વર્યવં વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ ॥ ૧૯ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ ત્રિબન્ધુરઃ-ઋષિ આદિ રૂપ ત્રણ બંધનોવાળા, ત્રિવસ્થ્યઃ-ત્રણ સુખદાયક ઘરોના સ્વામી, નરાશંસઃ-મનુષ્યોની સ્તુતિ કરનાર, ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યના ઇચ્છુક દેવઃ-જીવ શૃતેન-સેંકડો પ્રકારનાં કર્મોથી દેવમ્-પ્રકાશમાન ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિની અવર્ધયત્-વૃદ્ધિ કરે.

જે શિતિપૃષ્ઠાનામ્-જેની પીઠ પર સવાર થવાથી શીઘ્રગમન થાય છે તે પશુઓની મધ્યમાં આહિતઃ-વિદ્યમાન જીવ સહસ્ત્રેણ-અસંખ્ય પુરુષાર્થથી પ્રવર્ત્તંતે-પ્રવૃત્ત થાય છે, મિત્રાવરુણા-પ્રાણ અને ઉદાન અસ્ય-એ જીવના ઇત્-જ હોત્રમ્-ભોજનની અર્હતઃ-યોગ્ય છે; વસુધેયસ્ય-સંસારના બૃહસ્પતિઃ-મહાન પદાર્થોના રક્ષક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ સ્તોત્રમ્-સ્તુતિના સાધન છે; અશ્વિના-સૂર્ય અને ચંદ્રમા અધ્વર્યવમ્-પોતાના યજ્ઞના ઇચ્છુકને તથા વસુવને-વસુ =ધનની યાચના કરનારાઓ માટે વેતુ-પ્રાપ્ત થાય; તેમ યજ-સંગ કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ત્રણ પ્રકારના સુખોને પ્રદાન કરનારા, ત્રણ કાલોના પ્રબંધથી યુક્ત ઘરોનું નિર્માણ કરીને, અસંખ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરીને, ભોજન કરીને યાચકને માટે યથોચિત વસ્તુ આપે છે, તેઓ કીર્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૯)

દેવો દેવૈર્વનસ્પતિર્હિરણ્યપર્ણો મધુશાખઃ સુપિપ્પલો દેવમિન્દ્રમવર્ધયત્ ।

દિવમગ્રેણાસ્પૃક્ષદાન્તરિક્ષં પૃથિવીમદૃઃહીદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દેવૈઃ-દિવ્ય પ્રકાશમાન ગુણોની સાથે વિદ્યમાન, હિરણ્યપર્ણઃ-સુવર્ણ સમાન ચળકતા પાનવાળા, મધુશાખઃ-મીઠી ડાળીઓવાળા, સુપિપ્પલઃ-સુંદર ફળોવાળા, દેવઃ-દિવ્યગુણ પ્રદાન કરનાર વનસ્પતિઃ-સૂર્યનાં કિરણોમાં જળ પહોંચાડી ઉષ્ણતાની શાંતિ દ્વારા કિરણોની રક્ષક વનસ્પતિ ઇન્દ્રમ્-દરિદ્રતાનાશક દેવમ્-દિવ્યગુણોવાળા લોકોની વા મેઘની અવર્ધયત્-વૃદ્ધિ કરે છે.

પદાર્થ : હે ઋણે-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વન્ ! જેમ અયમ્-આ યજમાન:-યજમાન અદ્ય-આજ ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિને માટે પક્તી:-પાકોને પચન્-પકાવતા, પુરોહાણમ્-હોમને માટે પાક-વિશેષને પચન્-પકાવતા, છાગમ્-રોગ છેદક શાકને બધ્નન્-બાંધતા હોતારમ્-હોમ કરવામાં કુશળ અગ્નિમ્-તેજસ્વી વિદ્વાનનો અવૃણીત-વરણ-સ્વીકાર કરે છે.

જેમ વનસ્પતિ:-કિરણ સમૂહનો રક્ષક દેવ:-પ્રકાશયુક્ત સૂર્યમંડળ ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે છાગેન-છેદનથી અદ્ય-આ સમયે અભવત્-પ્રસિદ્ધ થાય, મેદસ્ત:-સ્નિગ્ધ હોવાથી તમ્-તે હુત પદાર્થને અદ્યત્-ખાય છે; પચતા-પાક કર્તા વા સૂર્ય દ્વારા સુપસ્થા:-શાક વગેરે સારી રીતે ઉપસ્થિત થાય છે, તેમ પ્રતિ, અગ્રમીત-સર્વને ગ્રહણ કરે છે, પકાવે છે. પુરોહાણેન-હોમ માટે પકાવેલ પદાર્થ વિશેષથી અવીવૃધત્-અધિક વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ થાય છે; તેમ ત્વામ્-આપની અદ્ય-આજ હું ઉન્નતિ કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ રસોયાઓ શાક આદિને છોલીને, કાપીને, અન્ન અને શાક વગેરે પકાવે છે, જેમ સૂર્ય સર્વને પકાવે છે. જેમ સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વની વૃદ્ધિ/ઉન્નતિ કરે છે, તેમ સેવા આદિ દ્વારા મંત્રાર્થના દ્રષ્ટા વિદ્વાનોની સર્વેએ વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૨૩)

હોતાં યક્ષત્સમિધાનં મહદ્યજ્ઞઃ સુસમિદ્ધં વરેણ્યમ્નિમિન્દ્રં વયોધસમ્ ।

ગાયત્રીં છન્દં ઇન્દ્રિયં ત્ર્યવિં ગાં વયો દધ્વદ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ્ઞ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-વિદ્યાદિના ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય ! આપ જેમ હોતા-વિદ્યાદિના દાતા વિદ્વાન અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન સમિધાનમ્-વિદ્યાદિથી સમ્યક્ પ્રકાશમાન, સુસમિદ્ધમ્-સુંદર શોભાયમાન - પ્રદીપ્ત, વરેણ્યમ્-વરણ કરવા યોગ્ય, મહત્-મહાન યજ્ઞ:-કીર્તિને; વયોધસમ્-કામના કરવા યોગ્ય આયુને ધારણ કરનારા, ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા પદાર્થોને, ગાયત્રીમ્-સત્ય અર્થોનો પ્રકાશ કરનારી ગાયત્રીને છન્દ:-સ્વતંત્રતાને, ઇન્દ્રિયમ્-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઈન્દ્રિયોને ત્ર્યવિમ્-ત્રણ પ્રકારથી રક્ષા કરનારી ગામ્-પૃથિવીને અને વય:-જીવનને દધત્-ધારણ કરતા યક્ષત્-સંગ કરે છે; આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનના રસને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપ પણ યજ-યજ્ઞ - સમાગમ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય શ્રેષ્ઠ વિદ્યા આદિ પદાર્થોનું દાન કરે છે, તેઓ અતુલ કીર્તિને પ્રાપ્ત કરીને સુખી થાય છે, [તથા અન્યોને સુખી કરે છે.] (૨૪)

હોતાં યક્ષત્તનૂનપાતમુદ્ધિદં યં ગર્ભમદિતિર્દધે શુચિમિન્દ્રં વયોધસમ્ ।

ઉષ્ણિહં છન્દં ઇન્દ્રિયં દિત્યવાહં ગાં વયો દધ્વદ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ્ઞ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે હોત:-જ્ઞાનયજ્ઞના કર્તા ! જેમ હોતા-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનો ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન તનૂનપાતમ્-શરીર આદિના રક્ષક ઉદ્ધિદમ્-શરીરનું ભેદન કરીને નીકળનાર ગર્ભમ્-ગર્ભની સમાન અદિતિ:-માતા

યમ્-જેમ દધે-ધારણ કરે છે; તે વયોધસમ્-આયુના વર્ધક શુચિમ્-પવિત્ર ઇન્દ્રમ્-સૂર્યનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાન, ઝઘ્ણાહમ્-ઉષ્ણિક ઇંદ્રથી પ્રતિપાદિત અર્થ, છન્દઃ-બળકારક પદાર્થ, ઇન્દ્રિયમ્-જીવના ચિહ્નરૂપ શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો, દિત્યવાહમ્-દિત્ય = ખંડિત (ઇન્દ્રિયોને પ્રાપ્ત કરાવનાર (શરીર), ગામ્-વાણી અને વયઃ-સુંદર પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતા વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે. તેમ તે સર્વનો આપ યજ-સંગ કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેમ માતા ગર્ભની અને ઉત્પન્ન થયેલ બાળકની રક્ષા કરે છે, તેમ શરીર અને ઇન્દ્રિયોની રક્ષા કરીને વિદ્યા અને આયુની વૃદ્ધિ કરો. (૨૫)

હોતા યક્ષદીડેન્યમીડિતં વૃત્રહન્તમ્મિડાભિરીડ્યઃ સહઃ સોમમિન્દ્રં વયોધસમ્ ।

અનુષ્ટુભં છન્દ ઇન્દ્રિયં પઞ્ચાવિં ગાં વયો દધદ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! જેમ હોતા-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનું ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન વૃત્રહન્તમ્-વૃત્ર = મેઘ હન્તા-સૂર્ય સમાન અર્થાત્ મેઘનાશક સૂર્યની સમાન, ઇડાભિઃ-સુશિક્ષિત વાણીઓથી ઇંડેન્યમ્-સ્તુતિને યોગ્ય, ઇંડિતમ્-પ્રશંસિત સહઃ-બળ, ઇંડ્યમ્-પ્રશંસાને યોગ્ય સોમમ્-સોમ આદિ ઔષધિગણ, વયોધસમ્-મનોહર પ્રાણોના ધારક ઇન્દ્રમ્-જીવાત્માને યક્ષત્-સંગ કરે છે.

ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિય અનુષ્ટુભમ્-સ્તુતિને યોગ્ય છન્દઃ-સ્વતંત્રતા, પઞ્ચાવિમ્-પાંચ પ્રાણોની રક્ષા કરનારી ગામ્-પૃથિવી અને વયઃ-અભીષ્ટ વસ્તુ આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય જગતનાં મધ્યમાં દધત્-ધારણ કરતા વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ આપ એ સર્વનો યજ-સંગ કરો - પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાયથી પ્રશસ્ત ગુણવાળા સૂર્યની સમાન પ્રશસ્ત બનીને, જાણવા યોગ્ય પદાર્થોને જાણીને, સ્તુતિ, બળ, જીવન, ધન, જિતેન્દ્રિયતા અને રાજ્યને ધારણ કરે છે, તેઓ પ્રશંસાને યોગ્ય બને છે. (૨૬)

હોતા યક્ષત્સુબર્હિષં પૂષ્ણવન્તમમર્ત્યઃ સીદન્તં બર્હિષિ પ્રિયેઽમૃતેન્દ્રં વયોધસમ્
બૃહતીં છન્દ ઇન્દ્રિયં ત્રિવત્સં ગાં વયો દધદ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ તે હોતા-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનું ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન અમૃતા-નાશકર્મથી રહિત બર્હિષિ-આકાશની સમાન વ્યાપ્ત, પ્રિયે-કમનીય પરમેશ્વરનાં સ્વરૂપમાં સીદન્તમ્-સ્થિત, અમર્ત્યમ્-શુદ્ધ સ્વરૂપથી મૃત્યુરહિત, પૂષ્ણવન્તમ્-ખૂબ જ પુષ્ટિથી યુક્ત, સુબર્હિષમ્-સુંદર આકાશ વા જળવાળા, વયોધસમ્-કમનીય પ્રાણોને ધારણ કરનાર ઇન્દ્રમ્-પોતાના જીવ સ્વરૂપને યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે.

તે આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનની બૃહતીમ્-બૃહતી છન્દઃ-ઇંદ્ર ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો વા ધન, ત્રિવત્સમ્-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન જેને પુત્ર સમાન છે તે વેદ સંબંધી ગામ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બોધ તથા વયઃ-મનોહર સુખને દધત્-ધારણ કરતા કલ્યાણને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ એને યજ-સંગત-પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વેદપાઠી, બ્રહ્મનિષ્ઠ અને યોગીની સેવા કરે છે, તેઓ ઈષ્ટ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૭)

હોતા યક્ષદ્વચસ્વતીઃ સુપ્રાયણા ઋતાવૃધો દ્વારો દેવીર્હિરણ્યયૌર્બ્રહ્માણ-
મિન્દ્રૈ વયોધસમ્ । પૈક્તિં છન્દ્ ઇહેન્દ્રિયં તુર્યવાહં ગાં વયો દધદ્વચન્ત્વાજ્યસ્ય
હોતુર્યજં ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! તું જેમ ઇહ-આ સંસારમાં હોતા-વિદ્વાન વ્યચસ્વતીઃ-ગમનના અવકાશથી યુક્ત, સુપ્રાયણાઃ-ઉત્તમ પ્રયાણ = ગમનવાળા, ઋતાવૃધઃ-ઋત = યથાયોગ્ય સત્યની વૃદ્ધિ કરનાર, હિરણ્યયૌઃ-સુવર્ણ આદિથી અનુલિપ્ત, દેવીઃ-દિવ્યગુણવાળા દ્વારઃ-દ્વારોને વયોધસમ્-કામનાને યોગ્ય વિદ્યા તથા બોધને ધારણ કરનારા, બ્રહ્માણમ્-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્માને, ઇન્દ્રમ્-વિદ્યારૂપી ઐશ્વર્યવાળા વિદ્વાનને, પૈક્તિમ્-પૈક્તિ છન્દઃ-છંદ, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, તુર્યવાહમ્-તુર્ય = ચાર ગણા ભારને વહન કરનારા, ગામ્-બળદને તથા વયઃ-ગતિને દધત્-ધારણ કરતા આજ્યસ્ય-ઘૃત આદિ પદાર્થોને યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે. તથા જેમ અન્ય મનુષ્ય વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેને યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અતિ ઉત્તમ, સુંદર દ્વારોવાળા, સુવર્ણ આદિથી યુક્ત ઘર બનાવીને, તેમાં નિવાસ અને વેદાભ્યાસ કરે છે, તેઓ નીરોગ રહે છે. (૨૮)

હોતા યક્ષત્સુપેશાસા સુશિલ્પે બૃહતી ડમ્બે નક્તોષાસા ન દર્શતિ વિશ્વમિન્દ્રૈ
વયોધસમ્ । ત્રિષ્ટુભં છન્દ્ ઇહેન્દ્રિયં પૈષ્ઠવાહં ગાં વયો દધદ્વીતામાજ્યસ્ય
હોતુર્યજં ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! તું જેમ ઇહ-આ સંસારમાં બૃહતી-મોટા ડમ્બે-બે સુશિલ્પે-સુંદર શિલ્પયુક્ત, દર્શતિ-દર્શનીય નક્તોષાસા-રાત અને દિવસની ન-સમાન સુપેશાસા-સુંદર સ્વરૂપવાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક બે વિદ્વાન વિશ્વમ્-સર્વ વયોધસમ્-કામનાને ધારણ કરનારા ઇન્દ્રમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને, ત્રિષ્ટુભમ્-ત્રિષ્ટુપ્ નામક છંદના અર્થને, છન્દઃ-બળ, વયઃ-અવસ્થા અર્થાત્ ગતિ ઇન્દ્રિયમ્-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો, પૈષ્ઠવાહમ્-પીઠ પર ભાર વહન કરનારા ગામ્-બળદની સમાન વીતામ્-પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આજ્યસ્ય-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઘૃતાદિ પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતા હોતા-વિદ્વાન તેને યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સકલ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા શિલ્પ-કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૯)

હોતા યક્ષત્પ્રચૈતસા દેવાનામુત્તમં યશો હોતારા દૈવ્યા કવી સયુજેન્દ્રૈ વયોધસમ્ ।
જગતીં છન્દ્ ઇન્દ્રિયમનૈવાહં ગાં વયો દધદ્વીતામાજ્યસ્ય હોતુર્યજં ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! તું જેમ દેવાનામ્-વિદ્વાનોમાં પ્રચેતસા-ઉત્કૃષ્ટ વિજ્ઞાનવાળા, સયુજા-સાથે સંબંધ રાખનારા, દૈવ્યા-દિવ્ય કર્મોમાં શ્રેષ્ઠ, હોતારા-વિદ્યા આદિના દાતા કવી-અધ્યાપક-અધ્યેતા અથવા સાંભળવા-સંભળાવનાર મેધાવી વિદ્વાન ઉત્તમમ્-ઉત્તમ યજઃ-કીર્તિ, વયોધસમ્-ઈષ્ટ સુખના ધારક ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્ય, જગતીમ્, છન્દઃ-જગતી ઇંદ્ર વયઃ-વિજ્ઞાન, ઇન્દ્રિયમ્-ધન, અનહ્વાહમ્-ગાડી વહન કરનાર ગામ્-બળદને વીતામ્-પ્રાપ્ત કરે છે; જેમ આજ્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય પદાર્થોની મધ્યમાં એ ઉક્ત સર્વનું દધત્-ધારણ કરતા હોતા-ગ્રહણ કરતા વિદ્વાન્ યક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય પુરુષાર્થ કરે, તો વિદ્યા, કીર્તિ અને ધનને પ્રાપ્ત કરીને માનનીય બને. (૩૦)

હોતા યક્ષત્પેશસ્વતીસ્તિસ્ત્રો દેવીર્હિરણ્યયી ભારતીર્બૃહતીર્મહીઃ પતિમિન્દ્રં વયો-ધસમ્ । વિરાજં છન્દ્ ઇન્દ્રિયં ધેનું ગાં ન વયો દધદ્વેન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! જેમ ઇહ-આ સંસારમાં જે હોતા-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન તિસ્ત્રઃ-ત્રણ હિરણ્યયીઃ-સુવર્ણ સમાન પ્રિય, પેશસ્વતીઃ-સુંદર રૂપોવાળી, ભારતીઃ-ધારણ કરનારી, બૃહતીઃ-મોટી મહીઃ-મહત્વપૂર્ણ દેવીઃ-દાનશીલ સ્ત્રીઓ, ત્રણ પ્રકારની વાણીઓ તથા વયોધસમ્-ચિર આયુને ધારણ કરનારા પતિમ્-રક્ષક ઇન્દ્રમ્-રાજાના વિરાજમ્-વિવિધ પદાર્થોના પ્રકાશક વિરાટ્ નામક ઇંદ્ર, છન્દઃ-બળકારી પદાર્થ, વયઃ-કામના યોગ્ય વસ્તુ અને ઇન્દ્રિયમ્-જીવોથી સેવિત સુખનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; તે ધેનુમ્-દૂધાળી ગામ્-ગાયોની ન-સમાન વ્યન્તુ-એને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ તે પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતા આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનના ફળને યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કર્મ, ઉપાસના વિજ્ઞાનની જ્ઞાપક વાણીને જાણે છે, તેઓ મહાન કીર્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. જેમ ગાય વાછરડાને તૃપ્ત કરે છે, તેમ અહીં વિદ્વાનો અજ્ઞાન બાળકોને તૃપ્ત કરે છે. (૩૧)

હોતા યક્ષત્સુરેતસં ત્વષ્ટારં પુષ્ટિવર્દ્ધનઃ રૂપાણિ બિભ્રતં પૃથક્ પુષ્ટિમિન્દ્રં વયોધસમ્ । દ્વિપદં છન્દ્ ઇન્દ્રિયમુક્ષાણં ગાં ન વયો દધદ્વેન્ત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-દાતા મનુષ્ય ! જેમ હોતા-વિદ્વાન સુરેતસમ્-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમયુક્ત, ત્વષ્ટારમ્-પ્રકાશમાન, પુષ્ટિવર્ધનમ્-પુષ્ટિવર્ધક, રૂપાણિ-રૂપોને પૃથક્-પૃથક્ બિભ્રતમ્-ધારણ કરનારા, વયોધસમ્-ચિર આયુને ધારણ કરનારા પુષ્ટિમ્-પુષ્ટિકારક ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને તથા દ્વિપદમ્-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ છન્દઃ-સ્વતંત્રતા ઇન્દ્રિયમ્-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો, ઊક્ષાણમ્-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ ગામ્-જીવાન આખલાની ન-સમાન વયઃ-ગતિને દધત્-ધારણ કરતા આજ્યસ્ય-વિજ્ઞાનનો યક્ષત્-સંગ કરે છે; વેતુ-તેને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યજ-સંગ કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આખલો-સાંઠ ગાયોને ગર્ભીણી કરીને પશુઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ ગુહસ્થો સ્ત્રીઓ-પત્નીઓને ગર્ભવતી કરીને પ્રજાની વૃદ્ધિ કરે.

જો સંતાનોની કામના હોય તો [શરીરની] પુષ્ટિને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. જેમ સૂર્ય રૂપનો જ્ઞાપક

છે, તેમ વિદ્વાન્ વિદ્યા અને સુશિક્ષાને પ્રકાશિત કરે છે. (૩૨)

હોતા યક્ષુદ્વનસ્પતિઃ શમિતારઃ શતક્રતુઃ હિરણ્યપર્ણમુક્થિનઃ રશનાં વિભ્રતં
વશિં ભગમિન્દ્રં વયોધસમ્ । કકુભં છન્દ્ ઇહેન્દ્રિયં વશાં વેહતં ગાં વયો
દધદ્વેત્વાજ્યસ્ય હોતર્યજ્ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! જેમ ઇહ-આ સંસારમાં આજ્યસ્ય-ઘૃત આદિ ઉત્તમ પદાર્થોનો હોતા-
હોમ કરનાર શમિતારમ્-શાન્તિકારક, હિરણ્યપર્ણમ્-તેજરૂપ રક્ષક, વનસ્પતિમ્-કિરણોના પાલક સૂર્યની
સમાન, શતક્રતુમ્-અધિક બુદ્ધિમાન, ઉક્થિનમ્-પ્રશસ્ત કહેવા યોગ્ય વચનોથી યુક્ત, રશનામ્-આંગળીને
વિભ્રતમ્-ધારણ કરનાર, વશિમ્-વશમાં કરનાર, ભગમ્-સેવનીય ઐશ્વર્યને તથા વયોધસમ્-આયુને ધારણ
કરનાર ઇન્દ્રમ્-જીવને, કકુભમ્-અર્થના રોધક, છન્દઃ-પ્રસન્નતાકારક ઇન્દ્રિયમ્-ધનને, વશામ્-વંધ્યા તથા
વેહતમ્-ગર્ભપાતિની ગામ્-ગાયોને તથા વયઃ-અભીષ્ટ વસ્તુને દધત્-ધારણ કરતા યક્ષત્-તેનો સંગ કરે
છે; વેતુ-તેને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-યજ્ઞ કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાના પ્રકાશક, બુદ્ધિમાન, પોતાના અંગોને
ધારણ કરતા વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોને પ્રદાન કરે છે, તેઓ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૩)

હોતા યક્ષત્ સ્વાહાકૃતીરગ્નિં ગૃહપતિં પૃથગ્વરુણં ભેષજં કવિં ક્ષત્રમિન્દ્રં-
વયોધસમ્ । અતિછન્દસં છન્દ્ ઇન્દ્રિયં બૃહદૃષ્ભં ગાં વયો દધદ્વ્યન્ત્વાજ્યસ્ય
હોતર્યજ્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-યજમાન ! તું જેમ હોતા-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન સ્વાહાકૃતીઃ-વાણી આદિથી સિદ્ધ
કરેલ, અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વિદ્યામાન તેજસ્વી ગૃહપતિમ્-ઘરના રક્ષક વસ્ત્રમ્-શ્રેષ્ઠ પૃથક્-પૃથક્
ભેષજમ્-ઔષધ, કવિમ્-મેધાવી-બુદ્ધિમાન, વયોધસમ્-સુંદર જીવનને ધારણ કરનાર ઇન્દ્રમ્-રાજા, ક્ષત્રમ્-
રાજ્ય, અતિછન્દસમ્-અતિ જગતી આદિ ઇંદોથી પ્રતિપાદિત અર્થ, છન્દઃ-ગાયત્રી આદિ ઇંદ બૃહત્-
મોટી ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયો ત્રણમ્-અતિ શ્રેષ્ઠ ગામ્-બળદ અને વયઃ-જીવનને દધત્-ધારણ
કરતા આજ્યસ્ય-ઘૃતની આહુતિનો યક્ષત્-હોમ કરે છે [અથવા વિજ્ઞાનની આહુતિનો સંગ કરે છે.] અને
જેમ લોકો એ સર્વને વ્યન્તુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યજ-હોમ કરો. [સંગતિ કરો.] (૩૪)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વેદસ્થ ગાયત્રી આદિ ઇંદો તથા અતિજગતી આદિ અતિ ઇંદોને ભણીને
અર્થના જ્ઞાતા બને છે, તેઓ સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૪)

દેવં બૃહિર્વયોધસં દેવમિન્દ્રમવર્દ્યત્ । ગાયત્ર્યા છન્દસેન્દ્રિયં ચક્ષુરિન્દ્રે વયો
દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દેવમ્-ઉત્તમ ગુણવાળા બર્હિઃ-અન્તરિક્ષ વયોધસમ્-આયુ વર્ધક દેવમ્-ઉત્તમ સ્વરૂપયુક્ત ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની અવર્ધયત્-વૃદ્ધિ કરે છે અર્થાત્ ગતિનો અવકાશ આપે છે.

જેમ ગાયત્ર્યા-ગાયત્રી છન્દસા-છંદથી ચક્ષુઃ-નેત્ર, ઇન્દ્રિયમ્-ઇન્દ્ર = જીવના ચિહ્નરૂપ ઇન્દ્રિયો અને વયઃ-જીવનને ઇન્દ્રે-જીવમાં દધત્-ધારણ કરતા વસુધેયસ્ય-દ્રવ્યોના આધાર સંસારનાં વસુવને-ધનનો વિભાગ કરનાર મનુષ્યને માટે વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ યજ-સંગતિ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેમ આકાશમાં સૂર્યનો પ્રકાશ વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ વેદોનો અભ્યાસ કરવાથી પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય છે. જે આ સંસારમાં વેદ દ્વારા સર્વ સત્ય વિદ્યાઓને જાણે છે, તેઓ સર્વત્રથી ઉન્નતિ પામે છે. (૩૫)

દેવીર્વારો વયોધસઃ શુચિમિન્દ્રમવર્ધયન્ । ડ્વિહા છન્દસેન્દ્રિયં પ્રાણમિન્દ્રં વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દેવીઃ-પ્રકાશમાન, દ્વારઃ-ગમન-આગમનના માટે બનેલ દ્વાર, વયોધસમ્-જીવનના આધાર, શુચિમ્-પવિત્ર, ઇન્દ્રમ્-શુદ્ધ વાયુને ઇન્દ્રિયમ્-જીવથી સેવિત ઇન્દ્રિય તથા પ્રાણમ્-પ્રાણને ઇન્દ્રે-જીવમાં વસુધેયસ્ય-ધનના આધાર કોષને વસુવને-ધનના યાચકને માટે અવર્ધયત્-વધારે છે; વ્યન્તુ-તેને પ્રાપ્ત કરાવે છે. તેમ ડ્વિહા-છન્દસા-ઉષ્ણિક છંદથી એ પૂર્વોક્ત પદાર્થો તથા વયઃ-પ્રિય પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતા યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે ઘરના દ્વારના સામેના દ્વારથી વાયુ સંચાર કરે છે, તે ઘરમાં નિવાસ કરવાથી જીવન, પવિત્રતા, બળ અને આરોગ્યની વૃદ્ધિ થાય છે, એટલા માટે અનેક દ્વારોવાળું મોટું ઘર બનાવવું જોઈએ. (૩૬)

દેવી ડ્વિહાસાનક્તા દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવી દેવમવર્ધતામ્ । અનુષ્ટુભા છન્દ-સેન્દ્રિયં બલમિન્દ્રં વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ ડ્વિહાસાનક્તા-રાત અને દિવસની સમાન દેવી-વિદ્યાદિ ગુણોમાં દેદીપ્યમાન અધ્યાપિકા અને અધ્યેત્રી સ્ત્રીઓ વયોધસમ્-જીવનને ધારણ કરનાર દેવમ્-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત ઇન્દ્રમ્-જીવને; જેમ દેવી-દિવ્ય પતિવ્રતા સ્ત્રી દેવમ્-દિવ્ય સ્ત્રીવ્રત પતિ-લંપટતા આદિથી રહિત પતિની ઉન્નતિ કરે તેમ અવર્ધતામ્-ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરે.

જેમ વસુધેયસ્ય-ધનના આધાર કોષનો વસુવને-ધનના યાચકને માટે વીતામ્-ઉત્પત્તિ કરે છે; તેમ વયઃ-પ્રાણોના ધારણને દધત્-પુષ્ટ કરતા અનુષ્ટુભા, છન્દસા-અનુષ્ટુપ છંદથી ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં ઇન્દ્રિયમ્-જીવથી સેવિત ઇન્દ્રિય અને બલમ્-બળને યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! પ્રેમપૂર્વક સ્ત્રી-પુરુષ અને વ્યવસ્થાથી દિવસ-રાત વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ પ્રીતિ અને ધર્મ-વ્યવસ્થાથી આપ લોકો વૃદ્ધિ પામો. (૩૭)

દેવી જોષ્ટ્રી વસુધિતી દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવી દેવમવર્ધતામ્ । બૃહત્યા

છન્દસેન્દ્રિયં શ્રોત્રમિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દેવી-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન, જોષ્ટ્રી-પ્રીતિથી યુક્ત, વસુધિતી-વિદ્યાને ધારણ કરનારી ભણવા-ભણાવવાવાળી બે સ્ત્રીઓ વયોધસમ્-જીવન ધારક ઇન્દ્રમ્-અન્નદાતા દેવમ્-દિવ્યગુણયુક્ત સંતાનને, દેવી-ધર્માત્મા સ્ત્રીની જેમ દેવમ્-ધર્માત્મા પતિને પ્રાપ્ત કરીને અવર્ધતામ્-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે.

બૃહત્યા, છન્દસા-બૃહતી છંદથી ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં શ્રોત્રમ્-શબ્દ સાંભળવા માટે શ્રોત્રનામક ઇન્દ્રિયમ્-ઈન્દ્ર = ઈશ્વરે રચેલ ઈન્દ્રિયને વીતામ્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વસુધેયસ્ય-ધનના આધાર કોષનો વસુવને-ધનના યાચકને માટે વયઃ-ઉત્તમ મનોહર સુખને દધત્-ધારણ કરતા યજ્ઞ-પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા સ્ત્રીઓ-પોતાનાં સંતાનો, અન્ય કન્યાઓ અને સ્ત્રીઓને વિદ્યા અને શિક્ષાથી ઉન્નત કરે છે; તેમ સ્ત્રી અને પુરુષ પરમ પ્રીતિથી વિદ્યા-વિચારના દ્વારા પોતાનાં સંતાનોને ઉન્નત કરે અને સ્વયં ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૮)

દેવી ઋર્જાહુતી દુઘે સુદુઘે પયસેન્દ્રં વયોધસં દેવી દેવમવર્ધતામ્ । પઙ્ક્ત્યા છન્દસેન્દ્રિયં શુક્રમિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ દુઘે-સુખથી પૂરણ કરનારી, સુદુઘે-ઉત્તમ રીતે કામનાઓને પૂરણ કરનારી દેવી-સુખદાત્રી ઋર્જાહુતી-સુગંધિત અન્નની બે આહુતિઓ પયસા-જળની વર્ષાથી વયોધસમ્-પ્રાણધારી ઇન્દ્રમ્-જીવને; દેવી-પતિવ્રતા વિદુષી સ્ત્રી દેવમ્-વ્યભિચાર આદિ દોષથી રહિત - સ્ત્રીવ્રત પતિની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ અવર્ધતામ્-ઉન્નતિ કરે.

પંક્ત્યા, છન્દસા-પંક્તિ છંદથી ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં શુક્રમ્-વીર્ય-પરાક્રમ અને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને વીતામ્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ વસુધેયસ્ય-કોષના વસુવને-ધન-સેવકને માટે વયઃ-સુંદર ગ્રાહ્ય સુખને દધત્-ધારણ કરતાં યજ્ઞ-પ્રાપ્ત કરો - યજ્ઞ કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિમાં આપેલી આહુતિ, મેઘમંડલમાં પહોંચીને ત્યાંથી ફરી આવીને શુદ્ધ જળ દ્વારા સર્વ જગતને પુષ્ટ કરે છે, તેમ વિદ્યાનાં ગ્રહણ અને દાનથી સર્વને પુષ્ટ કરો. (૩૯)

દેવા દૈવ્યા હોતારા દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવૌ દેવમવર્ધતામ્ । ત્રિષ્ટુભા છન્દસેન્દ્રિયં ત્વિષ્મિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વીતાં યજ્ઞ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે હોતારા-વિદ્યા આદિના દાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ દૈવ્યા-સુંદર વિદ્વાનોમાં કુશળ દેવા-મનોહર વિદ્વાન વયોધસમ્-આયુના ધારક, દેવમ્-કામના કરનાર, ઇન્દ્રમ્-જીવાત્માને; દેવૌ-શુભ ગુણોની કામના કરનારા માતા-પિતા તથા દેવમ્-સુંદર પુત્રની સમાન અવર્ધતામ્-ઉન્નતિ કરાવે છે, તેમ વસુધેયસ્ય-ધન કોષના વસુવને-ધન યાચકને માટે વીતામ્-પ્રાપ્ત કરે છે.

હે વિદ્વન્ ! ત્રિષ્ટુભા, છન્દસા-ત્રિષ્ટુભ છંદથી ઇન્દ્રે-પોતાના આત્મામાં ત્વિષ્મિ-પ્રકાશથી યુક્ત

ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિય તથા વયઃ-સુખને દધત્-ધારણ કરતા તું યજ-યજ્ઞાદિ ઉત્તમ કર્મ કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્યાર્થી અને શિષ્યોને, માતા-પિતા પોતાના સંતાનોની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન સ્ત્રી-પુરુષ વેદ વિદ્યા દ્વારા સર્વની ઉન્નતિ કરે. (૪૦)

**દેવીસ્તિસ્ત્રસ્ત્રો દેવીર્વ્યોધસં પતિમિન્દ્રમવર્દ્યન્ । જગત્યા છન્દસેન્દ્રિયઃ-
શૂષમિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વ્યન્તુ યજ્ઞ ॥ ૪૧ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ તિસ્ત્રઃ-ત્રણ દેવીઃ-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષીઓ, તિસ્ત્રઃ-અધ્યાપિકા, ઉપદેશિકા અને પરીક્ષા લેનારી ત્રણ દેવીઃ-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષીઓ વયોધસમ્-જીવન ધારણ કરનાર, પતિમ્-રક્ષક સ્વામી, ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યવાન સમ્રાટની અવર્દ્યન્-વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરે છે, વ્યન્તુ-તેને પ્રાપ્ત કરે છે.

તેમ જગત્યા, છન્દસા-જગતી ઇંદથી ઇન્દ્રે-પોતાના આત્મામાં શૂષમ્, વયઃ-શત્રુ સેનામાં વ્યાપક થનાર પોતાના બળ તથા ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયને દધત્-ધારણ કરતા વસુધેયસ્ય-ધનકોષના વસુવને-ધનના યાચકને માટે યજ-પ્રાપ્ત કરો - અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપક, ઉપદેશક અને પરીક્ષક સ્ત્રી-પુરુષ પ્રજામાં વિદ્યા અને સદુપદેશોનો પ્રચાર કરે છે, તેમ રાજા તેઓની યથાવત્ રક્ષા કરે, આ રીતે રાજા અને પ્રજાજનો પરસ્પર પ્રસન્ન બનીને સર્વત્રથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. (૪૧)

**દેવો નરાશઃસૌ દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવો દેવમવર્દ્યન્ । વિરાજા છન્દસેન્દ્રિયઃ
રૂપામિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ઞ ॥ ૪૨ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ નરાશઃસઃ-મનુષ્યોમાં પ્રશંસા કરવા યોગ્ય, દેવઃ-વિદ્વાન્, વયોધસમ્-ચિરંજીવ દેવમ્-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત ઇન્દ્રમ્-રાજાને; જેમ દેવઃ-વિદ્વાન્ દેવમ્-વિદ્વાનની સમાન અવર્ધ્યન્-ઉન્નતિ કરે છે.

વિરાજા, છન્દસા-વિરાટ્ નામક ઇંદથી ઇન્દ્રે-જીવાત્મામાં સ્વમ્-સુંદર રૂપ તથા ઇન્દ્રિયમ્-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયોને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ વસુધેયસ્ય-ધનકોષના વસુવને-ધનના યાચકને માટે વયઃ-અભીષ્ટ સુખને દધત્-ધારણ કરતા તું યજ-પ્રાપ્ત કર. [સંગત વા દાન કર.] (૪૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ કદીપણ પરસ્પર ઈર્ષ્યાથી એકબીજાની હાનિ ન કરવી જોઈએ, પરંતુ સદૈવ પ્રેમપૂર્વક ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

દેવો વનસ્પતિર્દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવો દેવમવર્દ્યન્ ।

દ્વિપદા છન્દસેન્દ્રિયં ભગમિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ઞ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ વનસ્પતિઃ-વનના રક્ષક વડ આદિ વૃક્ષો દેવઃ-દિવ્યગુણયુક્ત છે; તે વયોધસમ્-ચિર આયુવાળા દેવમ્-ઉત્તમ ગુણયુક્ત ઇન્દ્રમ્-ઐશ્વર્યને જેમ દેવઃ-દિવ્ય, સત્ય દેવમ્-દિવ્ય સ્વભાવવાળા વિદ્વાનની સમાન અવર્ધયત્-ઉન્નતિ કરે છે.

દ્વિપદા-બે પગવાળા છન્દસા-છંદથી ઇન્દ્રે-જીવમાં ભગમ્-ઐશ્વર્ય તથા ઇન્દ્રિયમ્-ધનને વેતુ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વસુધેયસ્ય-ધનકોષના વસુવને-ધનના યાચકને માટે વયઃ-અભીષ્ટ સુખને દધત્-પ્રાપ્ત કરતા તું યજ-પ્રાપ્ત કર - યજ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! તમે જેમ વનસ્પતિઓ નીચેથી-મૂળથી પુષ્કળ જળને ખેંચીને, વાયુ અને મેઘમંડળમાં ફેલાવીને સર્વ વૃક્ષોની રક્ષા કરે છે; જેમ રાજપુરુષ રાજપુરુષોની રક્ષા કરે છે, તેમ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરો. (૪૩)

દેવં બર્હિર્વારિતીનાં દેવમિન્દ્રં વયોધસં દેવં દેવમવર્ધયત્ ।

કક્કુભા છન્દસેન્દ્રિયં યશ ઇન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ઞ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ વારિતીનામ્-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત સમુદ્રનાં દેવમ્-દિવ્ય બર્હિઃ-જળ વયોધસમ્-અધિક આયુ ધારણ કરનાર, દેવમ્-દિવ્ય ઇન્દ્રમ્-રાજાને અને દેવમ્-ઉત્તમ ગુણવાળા દેવમ્-પ્રકાશમાન પ્રત્યેક જીવની અવર્ધયત્-ઉન્નતિ કરે છે.

કક્કુભા, છન્દસા-કકુપ નામ છંદથી ઇન્દ્રે-રાજા યશઃ-કીર્તિ તથા ઇન્દ્રિયમ્-ઇન્દ્ર = જીવનાં ચિહ્ન ઇન્દ્રિયને વેતુ-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ વસુધેયસ્ય-ધનકોષના વસુવને-ધનના યાચકને માટે વયઃ-અભીષ્ટ સુખને દધત્-ધારણ કરતા યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ જળ સમુદ્રોનું પૂરણ કરીને, જંતુઓનું સંરક્ષણ કરીને, મોતી આદિ રત્નોને ઉત્પન્ન કરે છે. તેમ ધર્મ દ્વારા ધનકોષને પૂરણ કરીને, અન્ય દરિદ્રોનું સંરક્ષણ કરીને કીર્તિની વૃદ્ધિ કરો. (૪૪)

**દેવો અગ્નિઃ સ્વિષ્ટકૃત્ત્વમિન્દ્રં વયોધસં દેવો દેવમવર્ધયત્ । અતિછન્દસા
છન્દસેન્દ્રિયં ક્ષત્રમિન્દ્રે વયો દધદ્વસુવને વસુધેયસ્ય વેતુ યજ્ઞ ॥ ૪૫ ॥**

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ સ્વિષ્ટકૃત્-ઉત્તમ ઈષ્ટને સિદ્ધ કરનાર, દેવઃ-સર્વજ્ઞ, અગ્નિઃ-સ્વયં પ્રકાશમાન ઈશ્વર - વયોધસમ્-આયુના ધારક, દેવમ્-ધાર્મિક ઇન્દ્રમ્-જીવને જેમ દેવઃ-વિદ્વાન્ દેવમ્-વિદ્યાર્થીની સમાન અવર્ધયત્-વૃદ્ધિ કરે છે.

અતિછન્દસા; છન્દસા-આહ્લાદકારક છંદથી ઇન્દ્રે-વિદ્યા અને વિનયથી યુક્ત રાજાને માટે વસુધેયસ્ય-ધનકોષના વસુવને-ધનદાતાને માટે વયઃ-મનોહર વસ્તુ ક્ષત્રમ્-રાજ્ય અને ઇન્દ્રિયમ્-જીવથી સેવિત ઇન્દ્રિયને દધત્-ધારણ કરતા વેતુ-તેને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ પરમેશ્વરે પોતાની દયા કરીને સર્વ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરીને,

જીવોને સમર્પણ કરીને, જગતની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરી છે, તેમ તમે વિદ્યા, વિનય, સત્સંગ, પુરુષાર્થ અને ધર્મનાં અનુષ્ઠાનોથી રાજ્યની ઉન્નતિ કરો. (૪૫)

અગ્નિમદ્ય હોતારમવૃણીતાયં યજમાનઃ પચન્ પક્તીઃ પચન્ પુરોડાશં બ્રહ્મન્નિન્દ્રાય વયોધસે છાગમ્ । સૂપસ્થા અદ્ય દેવો વનસ્પતિરભવદિન્દ્રાય વયોધસે છાગેન । અઘત્તં મૈદસ્તઃ પ્રતિપચતાઽગ્રમ્હીદવીવૃધત્પુરોડાશેન ત્વામદ્યઋષે ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે ઋષ્ણે-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ અયમ્-આ યજમાનઃ-યજ્ઞકર્તા યજમાન અદ્ય-આજ પક્તીઃ-જાત-જાતના પાકોને પચન્-પકાવતા પુરોડાશમ્-યજ્ઞમાં હોમવાના પદાર્થને અર્થાત્ પુરોડાશ નામક પાકવિશેષને પચન્-પકાવતા અગ્નિમ્-તેજસ્વી હોતારમ્-હોતા-વિદ્વાનને અદ્ય-આજ અવૃણીત્-વરણ-સ્વીકાર કરે છે; તેમ વયોધસે-સર્વના જીવનની ઉન્નતિ કરનાર, ઇન્દ્રાય-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે છાગમ્-છેદક ગુણથી યુક્ત બકરી આદિ પશુને બ્રહ્મન્-બાંધતા વૃણુહિ-વરણ-સ્વીકાર કરો.

જેમ અદ્ય-આજ વનસ્પતિઃ-વનોના રક્ષક દેવઃ-વિદ્વાન્ વયોધસે-સર્વના જીવનની વૃદ્ધિ કરનાર ઇન્દ્રાય-શત્રુ વિનાશક રાજાને માટે છાગેન-છેદક ગુણથી યુક્ત બકરી આદિ પશુને માટે ઉદત અભવત્-થાય છે; તેમ સુપસ્થાઃ-સારી રીતે સમીપ રહેનાર રસોઈયા કાર્યમાં ઉદત રહે.

જેમ પચતા-સારી રીતે પકવ થયેલ પુરોડાશેન-પુરોડાશ નામક યજ્ઞ પાક વિશેષથી તથા મૈદસ્તઃ-સ્નિગ્ધ પદાર્થના કારણે ત્વામ્-આપને યજમાન પ્રતિ, અગ્રમ્હીત્-સ્વીકાર-ગ્રહણ કરે છે; અને અવીવૃધત્-વધે તેમ હે યજમાન અને હોતા ! તમે બન્ને પણ પુરોડાશમ્-પુરોડાશ નામક યજ્ઞપાકના શેષ ભાગને અઘત્તમ્-ખાઓ.

ભાવાર્થ : જેમ રસોયાઓ ઉત્તમ અન્નો અને વ્યંજનોને પકાવીને ભોજન કરાવે, તેમ તેનું સેવન કરનાર - ખાનાર વિદ્વાન્ તેનું માન કરે.

જેમ બકરી આદિ પશુ ઘાસ આદિને ખાઈને સમ્યક્ પચાવે છે, તેમ મનુષ્યોએ ખાધેલા ખોરાકને સારી રીતે પચાવવો જોઈએ. (૪૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં હોતાના ગુણોનું વર્ણન, વાણી (૩૧), અને અશ્વિનો = અધ્યાપક અને ઉપદેશક, માતા અને પિતા (૪૦), ગુણોનું પ્રતિપાદન, પુનઃ હોતાનું પ્રતિપાદન, યજ્ઞનું વર્ણન અને વિદ્વાનોની પ્રશંસાનું વર્ણન (૪૨-૪૬)માં કરવામાં આવેલ છે. તેથી આ અધ્યાયના અર્થની સાથે પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ અષ્ટાવિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથૈકોનત્રિંશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સમિદ્ધોઽઅઙ્ગન્ કૃદરં મતીનાં ઘૃતમગ્ને મધુમત્ પિન્વમાનઃ ।

વાજી વહન્વાજિનં જાતવેદો દેવાનાં વક્ષિ પ્રિયમા સ્ધસ્થમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-ઉત્પન્ન બુદ્ધિમાન, અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જેમ સમિદ્ધઃ-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત, અઙ્ગન્-પ્રકટ થતો અગ્નિ-અગ્નિ મતીનામ્-મનુષ્યોનાં કૃદરમ્-ઉદર તથા મધુમત્-અતિ મધુરગુણવાળા ઘૃતમ્-જળ વા ઘૃતનું પિન્વમાનઃ-સેવન કરતાં; જેમ વાજી-વેગવાન મનુષ્ય વાજિનમ્-શીઘ્રગામી ઘોડાને વહન્-ચલાવતાં દેવાનામ્-વિદ્વાનોની સ્ધસ્થમ્-સભાને અર્થાત્ સાથેના સ્થાનને આપ્રાપ્ત કરે છે, તેમ પ્રિયમ્-પ્રીતિ માટે સ્થાનને વક્ષિ-પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જઠરાગ્નિને પ્રદીપ્ત રાખે તથા બહારના અગ્નિનો [કલા-કોશલમાં] સમ્યક્ પ્રયોગ કરે, તો તે ઘોડાની સમાન વાહનોને દેશાન્તરમાં શીઘ્ર પહોંચાડી શકે છે. (૧)

ઘૃતેનાઙ્ગન્તસં પથો દૈવયાનાન્ પ્રજાનન્વાઙ્ગ્યષ્યૈતુ દેવાન્ ।

અનુ ત્વા સપ્તે પ્રદિશઃ સચન્તાઞ્સ્વધામસ્મૈ યજમાનાય ધેહિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સપ્તે-ઘોડાની સમાન વેગવાન વિદ્વાન્ ! જેમ વાજી, અપિ-વેગવાન અગ્નિ પણ ઘૃતેન-જળ અથવા ઘૃતથી અઙ્ગન્-સમ્યક્ પ્રકટ થતા દેવયાનાન્-જેમાં વિદ્વાનો ચાલે છે તે પથઃ-માર્ગોને સમ, એતુ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરે છે, તેને પ્રજાનન્-સારી રીતે જાણતાં આપ દેવાન્-વિદ્વાનોને એહિ-પ્રાપ્ત કરો; જેથી ત્વા-આપને અનુ-અનુકૂળ પ્રદિશઃ-સર્વ દિશાઓ સચન્તામ્-પ્રાપ્ત થાય. આપ અસ્મૈ-આ યજમાનાય-યજમાનના માટે સ્વધામ્-અન્નને ધેહિ-ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ અને જળ આદિના પ્રયોગથી યુક્ત બાષ્પયાન્તે - વરાળથી ચાલતાં વાહનોથી શીઘ્ર માર્ગોમાં આવાગમન કરીને સમસ્ત દિશાઓમાં ભ્રમણ કરે છે, તેઓ ત્યાં પુષ્કળ અન્ન આદિ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરીને, બુદ્ધિથી કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે. (૨)

ઈન્દ્યૃશ્ચાસિ વન્દ્યૃશ્ચ વાજિન્નાશુશ્ચાઽસિ મેધ્યૃશ્ચ સપ્તે ।

અગ્નિષ્ટ્વા દેવૈર્વસુભિઃ સજોષાઃ પ્રીતં વહ્નિં વહતુ જાતવેદાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-પ્રશસ્ત વેગવાન્ સપ્તે-ઘોડાની સમાન પુરુષાર્થ, ઉત્સાહી શિલ્પી વિદ્વાન્ ! જે કારણે જાતવેદાઃ-ઉત્પન્ન ધનવાળા સજોષાઃ-સમાન પ્રીતિયુક્ત થયેલા આપ, વસુભિઃ-પૃથિવી આદિ દેવૈઃ-દિવ્ય ગુણોવાળા પદાર્થોની સાથે પ્રીતમ્-પ્રશસ્ત વહ્નિમ્-યજ્ઞમાં હોમેલા પદાર્થોને મેધમંડળમાં પહોંચાડનાર અગ્નિને વહતુ-પ્રાપ્ત કરો.

જે ત્વા-આપને અગ્નિ:-પ્રાપ્ત થાય છે; તેથી આપ ઈંદ્રચ:-સ્તુતિને યોગ્ય ચ-પણ અસિ-છો; વન્દ્ય:-નમસ્કાર કરવા યોગ્ય ચ-પણ છો; ચ-અને આશુ:-શીઘ્રગામી ચ-તથા મેઘ્ય:-સંગમને યોગ્ય અસિ-છો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૃથિવી આદિથી બનેલા પદાર્થોથી વાહન આદિ બનાવીને, તેમાં વેગવાન, તથા ભાર વહન કરનાર અગ્નિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, તેઓ પ્રશંસનીય અને માનનીય બને છે. (૩)

સ્તીર્ણં બર્હિઃ સુષ્ટ્રીમા જુષાણોરુ પૃથુ પ્રથમાનં પૃથિવ્યામ્ ।

દેવેભિર્યુક્તમર્દિતિઃ સ્વજોષાઃ સ્યોનં કૃણ્વાના સુવિતે દધાતુ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! અમે પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર ઉરુ-બહુ જ પૃથુ-વિસ્તૃત પ્રથમાનમ્-પ્રખ્યાત, સ્તીર્ણમ્-સર્વત્રથી અંગ-ઉપાંગોથી આચ્છાદિત વાહન તથા બર્હિઃ-અન્તરિક્ષ વા જળનું જુષાણા-સેવન કરતી, સ્વજોષાઃ-સમાન રૂપોથી સેવિત, દેવેભિઃ-દિવ્ય પદાર્થોથી યુક્તમ્-યુક્ત સ્યોનમ્-સુખને કૃણ્વાના-સિદ્ધ કરનારી અદિતિઃ-નાશરહિત વિદ્યુત્ સુવિતે-સર્વથી પ્રેરિત વાહનમાં સર્વને દધાતુ-ધારણ કરે છે; તેને સુષ્ટ્રીમા-સારી રીતે વિસ્તાર-આચ્છાદિત કરે, તેમ આપ પણ પ્રયત્ન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથિવી આદિમાં વ્યાપ્ત, અખંડિત વિદ્યુત્ છે; તે મહાન કાર્યોને સિદ્ધ કરીને સુખને ઉત્પન્ન કરે છે, તેને કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરીને પ્રયોજનોની સિદ્ધિ કરો. (૪)

एता ऽ उ वः सुभगा विश्वरूपा वि पक्षोभिः श्रयमाणा उदातैः ।

ऋष्वाः सतीः कवषाः शुम्भमाना द्वारौ देवीः सुप्रायणा भवन्तु ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વઃ - તમારા માટે એતાઃ-એ દીપ્તિ સુભગાઃ-ઉત્તમ ઐશ્વર્યદાયક, વિશ્વસ્ત્રાઃ-વિવિધરૂપ અને ગુણોવાળા, ઋષ્વાઃ-મહાન કવષાઃ-શબ્દ કરનાર - પ્રતિધ્વનિ કરનાર, શુમ્ભમાનાઃ-સુંદર સુશોભિત, સતીઃ-વિદ્યમાન રહેનાર દેવીઃ-દેદીપ્યમાન દ્વારઃ-ગૃહદ્વાર ઉત્ + આતૈઃ-ઉત્તમ રીતિથી નિરંતર ગમનશીલ પક્ષોભિઃ-ડાબા-જમણા ભાગથી-પક્ષોથી શ્રયમાણાઃ-સેવિત પક્ષીઓની પંક્તિઓની સમાન સુપ્રાયણાઃ-સુખપૂર્વક ગમનના સ્થાન વિ, ભવન્તુ-વિશેષરૂપથી થાય, તેમ ગૃહદ્વારોને ઉ-વિચારપૂર્વક આપ પણ બનાવો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવા ગૃહ દ્વારો બનાવવા જોઈએ કે તેમાં વાયુનો અવરોધ ન હોય. જેમ આકાશમાં રોકાયા-અવરોધ વિના પક્ષી ગમનાગમન કરે છે, તેમ દ્વારોમાં ગમન-આગમન થાય. (૫)

अन्तरा मित्रावरुणा चरन्ती मुखं यज्ञानामभि संविदाने ।

उषासा वाथ सुहिरण्ये सुशिल्पे ऋतस्य योनाविह सादयामि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પ વિદ્યામાં પ્રચારક બે વિદ્વાનો ! જેમ હું અન્તરા-શરીરમાં-ભિન્ન-ભિન્ન, મિત્રાવરુણા-

પ્રાણ અને ઉદાનને **ચરન્તી-પ્રાપ્ત** કરાવનારી, **યજ્ઞાનામ્-સંગતિ**ને યોગ્ય પદાર્થોના **મુખમ્-મુખ્ય** ભાગને **અભિ, સંવિદાને-સર્વત્રથી સમ્યક્ બતાવનારી, સુહિરણ્યે-સુંદર** તેજથી યુક્ત, **સુશિલ્યે-ઉત્તમ શિલ્પ ક્રિયાવાળી** **ઝાસા-પ્રાતઃ** અને **સાયંકાળની વેળાઓને ઋત્ત્વસ્યઃ-સત્યના યોનૌ-માટે** **ઙ્હ-આ ઘરમાં સાદ્યામિ-સ્થાપિત** કરું છું, તેમ **વામ્-તમે** બન્ને મારા માટે તેને સ્થાપિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાતઃ અને સાયંકાળની વેળાઓ શુદ્ધ સ્થાનમાં સેવન કરેલી મનુષ્યોના પ્રાણ તથા ઉદાનની સમાન સુખકારક બને છે, તેમ શુદ્ધ દેશમાં બનાવેલ, ખૂબ જ વિસ્તૃત દ્વારવાળું ઘર સર્વ પ્રકારથી સુખદાયક બને છે. (૬)

પ્રથમા વાંઠ્ઠ સરથિનાં સુવર્ણાં દેવૌ પશ્યન્તૌ ભુવનાનિ વિશ્વાં ।

અપિપ્રયં ચોદના વાં મિમાનાં હોતારા જ્યોતિઃ પ્રદિશાં દિશન્તાં ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે બે વિદ્યાર્થીઓ ! જે **પ્રથમા-પહેલાં સરથિના-રથવાળાની** સાથે રહેલા, **સુવર્ણાં-સુંદર** ગોરા વર્ણવાળા બે વિદ્વાનો, **વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-નિવાસસ્થાનરૂપ ભુવનોને** **પશ્યન્તૌ-નિહાળતાં, વામ્-તમે** બન્નેને **ચોદના-પ્રેરણારૂપ** કર્મોને **મિમાના-નિશ્ચય** કરનારા, **જ્યોતિઃ-પ્રકાશને પ્રદિશા-સારી રીતે** જણાવનારા, **દિશન્તા-નિર્દેશ** કરનારા, **હોતારા-વિદ્યાના દાતા, દેવૌ-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન** બે વિદ્વાનો આચરણ કરે છે, જેમ તેને હું **અપિપ્રયમ્-તૃપ્ત** અર્થાત્ પ્રસન્ન કરું છું, તેમ **વામ્-તમે** બન્ને તે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થીઓ નિષ્કપટતાથી વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ વિદ્યાના પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરે છે. જો વિદ્વાનો કપટ અને આળસ રહિત બની તે સર્વને સત્યનો ઉપદેશ કરે, તો તેઓ સુખી કેમ ન બને ? (૭)

આદિત્યૈર્નો ભારતી વષ્ટુ યજ્ઞઃ સરસ્વતી સહ રુદ્રૈર્નઽઆવીત્ ।

ઇડોપહૂતા વસુભિઃ સજોષા યજ્ઞં નોં દેવીરમૃતૈષુ ધત્ત ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! આપ જે **આદિત્યૈઃ-પૂર્ણ** વિદ્યાવાળા વિદ્વાનોના ઉપદેશની, **ઉપહૂતા-યથાવત્ કામના** કરેલી, **ભારતી-સર્વ વિદ્યાઓને ધારણ** કરનારી તથા સર્વ રીતે પુષ્ટિ કરનારી વાણી **નઃ-અમારા માટે** **યજ્ઞમ્-સંગત, યોગ્ય બોધને સિદ્ધ** કરે છે, તે વાણીની **સહ-સાથે નઃ-અમારી વષ્ટુ-કામના** કરો.

જે **સ્ટૈઃ-મધ્યમ કક્ષાના** વિદ્વાનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ **સરસ્વતી-પ્રશસ્ત** વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી છે, તે **નઃ-અમને આવીત્-પ્રાપ્ત** કરાવો.

જે **સજોષાઃ-સમાન વિદ્વાનોથી સેવિત ઇડા-સ્તુતિ** કરવા યુક્ત વાણી **વસુભિઃ-પ્રથમ કક્ષાના** વિદ્વાનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ છે, તે **યજ્ઞમ્-પ્રાપ્ત** કરવા યોગ્ય આનંદને સિદ્ધ કરે છે.

હે મનુષ્યો ! એ **દેવીઃ-દિવ્યરૂપ** ત્રણ પ્રકારની વાણીઓ અમને **અમૃતૈષુ-નાશરહિત જીવ** આદિ

પદાર્થોમાં સ્થાપિત કરે, તેને તમે પણ અમારા માટે ધત્ત-ધારણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ, મધ્યમ અને સામાન્ય વિદ્વાનો પાસેથી સાંભળેલી અથવા ભણેલી વિદ્યાવાણીનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. મુખર્ષીઓ પાસેથી નહિ. તે વાણી મનુષ્યોનાં સુખની સદા સિદ્ધિ કરનારી હોય છે. (૮)

ત્વષ્ટા વીરં દેવકામં જજાન ત્વષ્ટુર્વી જાયતઽઆશુરશ્વઃ ।

ત્વષ્ટેદં વિશ્વં ભુવનં જજાન બ્રહોઃ કૃત્તારમિહ યક્ષિ હોતઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ ! તું જેમ ત્વષ્ટા-વિદ્યાદિ ઉત્તમ ગુણોથી પ્રકાશમાન વિદ્વાન દેવકામમ્-વિદ્વાનોની કામના કરનારા વીરમ્-વીર પુરુષને જજાન-ઉત્પન્ન કરે છે; જેમ ત્વષ્ટુઃ-પ્રકાશમાન શિક્ષાથી આશુઃ-તીવ્ર વેગવાળા અર્વા-શીઘ્રગામી અશ્વઃ-ઘોડા જાયતે-બને છે.

જેમ ત્વષ્ટા-પોતાના આત્મામાં પ્રકાશિત ઈશ્વર ઇદમ્-આ વિશ્વમ્-સર્વ ભુવનમ્-લોક સમૂહને જજાન-ઉત્પન્ન કરે છે તે બ્રહોઃ-અનેક પ્રકારના સંસારના કૃત્તારમ્-કર્તા ઈશ્વરનો ઇહ-આ સંસારમાં યક્ષિ-સંગ કરે છે, તેમ અમે પણ કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાની કામના કરનારા મનુષ્યોને વિદ્વાન બનાવે (તે અધ્યાપક) છે, જે શીઘ્ર શિક્ષિત ઘોડાની સમાન તીવ્ર વેગથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી લે છે, (તે વિદ્યાર્થી હોય છે.) જેમ અનેક પ્રકારનાં જગતના રચયિતા પરમેશ્વર સર્વને વ્યવસ્થિત કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી હોય છે. (૯)

અશ્વોઃ ઘૃતેન ત્મન્યા સમક્તઽઉપ દેવાઃ૨ઽઋતુશઃ પાથઽણુ ।

વનસ્પતિર્દેવલોકં પ્રજાનન્નગ્નિના હૃવ્યા સ્વદિતાનિ વક્ષત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! દેવલોકમ્-સર્વના માર્ગદર્શક વિદ્વાનોના માર્ગને પ્રજાનન્-સારી રીતે જાણતા હોવાથી, જેમ ઘૃતેન-જળની સાથે સંયુક્ત કરેલ અશ્વઃ-શીઘ્રગામી અગ્નિ ત્મન્યા-આત્મા=સ્વસ્વરૂપથી ઋતુશઃ-પ્રત્યેક ઋતુમાં દેવાન્-ઉત્તમ વ્યવહારોને સમક્તઃ-સમ્યક્ પ્રકટ કરતાં પાથઃ-અન્નને ઉપ, ણુ-નજીકથી પ્રાપ્ત કરે છે; અગ્નિના-અગ્નિની સાથે વનસ્પતિઃ-કિરણોનો રક્ષક સૂર્ય સ્વદિતાનિ-સ્વાદિષ્ટ, હૃવ્યા-ભોજનને યોગ્ય અન્નોને વક્ષત્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ત્મન્યા-આત્માથી વર્તાવ કરો.

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય ઋતુઓનો વિભાગ કરીને ઉત્તમ અને સેવન કરવા યોગ્ય વસ્તુઓને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ આપ લોકો ઉત્તમ અને નિમ્ન કોટિના વિદ્યાર્થીઓને વિદ્યા અને અવિદ્યાની પૃથક્-પૃથક્ પરીક્ષા કરાવીને, તેમને સુશિક્ષિત બનાવો અને અવિદ્યાનું નિવારણ કરાવો. (૧૦)

પ્રજાપતેસ્તપ્સા વાવૃધાનઃ સદ્યો જાતો દધિષે યજ્ઞમર્ગને ।

સ્વાહાકૃતેન હૃવિષા પુરોગા યાહિ સાધ્યા હૃવિરદન્તુ દેવાઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ સદ્યઃ-શીઘ્ર જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થઈને પ્રજાપતેઃ-

પદાર્થ : હે અર્વન્-વેગવાન અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન મનુષ્ય ! જેથી તું ગુહ્યોન-ગુપ્ત વ્રતેન-સ્વભાવ તથા ત્રિતઃ-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનથી યુક્ત યમઃ-નિયમન કર્તા, ન્યાયાધીશની સમાન અસિ-છે, આદિત્યઃ-સૂર્યની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાનની સમાન અસિ-છે, વિદ્વાન સદૃશ અસિ-છે, સોમેન-ઐશ્વર્યની સમયા-સમીપ વિપૃક્તઃ-વિશેષરૂપથી સંબદ્ધ અસિ-છે, તે તે-તારા દિવિ-પ્રકાશમાં ત્રીણિ-ત્રણ બન્ધનાનિ-બંધનો અર્થાત્ ઋષિ, દેવ અને પિતૃઋણોના બંધનોને આહુઃ-કહે છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે ન્યાયાધીશ, આદિત્ય = સૂર્ય અને સોમ = ચંદ્રમાની સમાન ગુણોવાળા બનવું જોઈએ.

જેમ આ સંસારમાં વાયુ અને સૂર્યનાં આકર્ષણોથી બંધન છે, તેમ જ પરસ્પરના શરીર, વાણી અને મનનાં આકર્ષણોથી પ્રેમ બંધનો કરવા જોઈએ. (૧૪)

ત્રીણિં તઽઆહુર્દિવિ બન્ધનાનિ ત્રીણ્યપ્સુ ત્રીણ્યન્તઃ સમુદ્રે ।

ઉતેવ મે વરુણશ્છન્ત્સ્યર્વન્યત્રાં તઽઆહુઃ પરમં જનિત્રમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! યત્ર-જે જન્મમાં દિવિ-વિદ્યાના પ્રકાશમાં તે-આપના ત્રીણિ-ત્રણ બંધનાનિ-બંધનો વિદ્વાન્ લોકો આહુઃ-બતાવે છે, યત્ર-જન્મમાં અપ્સુ-પ્રાણોમાં ત્રીણિ-ત્રણ બંધનો, યત્ર-જે જન્મમાં અન્તઃ-મધ્યમાં અને સમુદ્રે-અન્તરિક્ષમાં ત્રીણિ-ત્રણ બન્ધનાનિ-બંધનો આહુઃ-બતાવે છે; અને તે-આપના પરમમ્-ઉત્તમ જનિત્રમ્-જન્મ આહુઃ-બતાવે છે, જેથી વસ્ત્માઃ-શ્રેષ્ઠ બનીને વિદ્વાનોનો છન્ત્સિ-સત્કાર કરો છો, ઉતેવ-તેમજ તેઓ મે-મારા બને. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આત્મા, મન અને શરીરના બ્રહ્મચર્યની સાથે વિદ્યાઓમાં સ્થિર બનીને વિદ્યા અને સુશિક્ષાનો સંચય કરો. દ્વિતીય વિદ્યાજન્મને પ્રાપ્ત કરીને પૂજિત બનો, જેની-જેની સાથે જેટલો પોતાનો સંબંધ છે, તેને જાણો. (૧૫)

ઙ્મા તે વાજિન્નવમાર્જનાનીમા શ્પાનાંશ્ચ સનિતુર્નિધાનાં ।

અત્રાં તે ભદ્રા રશ્નાઽઅપશ્યમૃતસ્ય યાઽઅભિરક્ષન્તિ ગોપાઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-ઘોડાની સમાન વેગ આદિ ગુણોની સમાન સેનાધીશ ! જેમ હું તે-આપના ઙ્મા-એ પ્રત્યક્ષ ઘોડાનાં અવમાર્જનાનિ-શુદ્ધિ કરનારા જળ આદિ, ઙ્મા-એ શ્પાનામ્-ખરીની રક્ષા કરનાર લોખંડની નાળ આદિ, સનિતુઃ-નિયંતાનાં નિધાના-સ્થાનોને અપશ્યમ્-નિહાળું છું; અત્ર-એ સેનામાં તે-આપના ઘોડાની જે ભદ્રાઃ-સુંદર કલ્યાણકારી ગોપાઃ-ઉપદ્રવથી રક્ષા કરનારી રશ્નાઃ-દોરી-લગામ ત્રહ્ણસ્ય-યથાર્થમાં અભિરક્ષન્તિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તેને હું અપશ્યમ્-નિહાળું છું તેમ તમે પણ નિહાળો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો સ્નાનથી ઘોડા આદિ પશુઓની શુદ્ધિ, તેની ખરીની રક્ષા માટે લોઢાની નાળ

તથા અન્ય દોરી-લગામ આદિથી સંયુક્ત કરીને સુશિક્ષિત કરીને રક્ષા કરે છે, તે યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૬)

આત્માને તે મનસારાદજાનામવો દિવા પતયન્તં પતન્નમ્।

શિરોઽપશ્યં પૃથિભિઃ સુગેભિરરેણુભિર્જેહમાનં પતત્રિ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! હું જેમ મનસા-વિજ્ઞાનથી આરાત્-સમીપ અને અવઃ-નીચે, દિવા-આકાશની સાથે પતન્નમ્-સૂર્યના પ્રતિ પતયન્તમ્-ગતિ કરનાર તે-આપના [પતત્રિ-પતનશીલ, શિરઃ-દૂરથી શિરની સમાન જોવામાં આવતા] આત્માનમ્-આત્મસ્વરૂપને અજાનામ્-જાણું છું; અને અરેણુભિઃ-ધૂળરહિત નિર્મળ સુગેભિઃ-સુખપૂર્વક પૃથિભિઃ-માર્ગોથી જેહમાનમ્-પ્રયત્નપૂર્વક ચાલનાર પતત્રિ-પક્ષી સમાન ઉડનારા શિરઃ-દૂરથી શિરની સમાન ગોળ દેખાતા વિમાન આદિ યાનને અપશ્યમ્-નિહાળું છું, તેમ તમે પણ નિહાળો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સર્વથી વેગવાન, શીઘ્ર ગમનશીલ અને અગ્નિની સમાન આત્માને જુઓ. તમે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરવામાં આવેલ અગ્નિ આદિ [પદાર્થોથી] યુક્ત વાહનોમાં બેસીને જળ, સ્થળ અને અન્તરિક્ષમાં પ્રયત્નપૂર્વક આવાગમન કરો. જેમ શિર સર્વથી ઉત્તમ અંગ છે, તેમ વિમાનને સર્વોત્તમ યાન માનવું જોઈએ. (૧૭)

અત્રા તે રૂપમુત્તમમપશ્યં જિગીષમાણમિષઽઆપદે ગોઃ।

યદા તે મર્ત્તોઽનુ ભોગમાનુડાદિદ્ ગ્રસિષ્ઠઽઓષધીરજીગઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વીરપુરુષ ! તે-આપના જિગીષમાણમ્-શત્રુઓને જીતનારા, ઉત્તમમ્-ઉત્તમ સ્વપ્ન-રૂપને તથા ગોઃ-પૃથિવીને પદે-પ્રાપ્ત કરવા માટે અત્ર-આ વ્યવહારમાં ઇષઃ-અન્નોને આ, અપશ્યમ્-સારી રીતે જોઉં.

તે-આપના મર્ત્તઃ મનુષ્ય યદા-જ્યારે ભોગમ્-ભોગને આનન્દ-પ્રાપ્ત કરે છે; ત્યારે આત્-ત્યાર પછી ઇત્-જ ગ્રસિષ્ઠઃ-અત્યંત ખાનાર આપ ઓષધીઃ-ઔષધિઓને અનુ, અજીગઃ-અનુકૂળતાપૂર્વક ભોગવો છો. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઉત્તમ પશુ-ઘોડા આદિ સેનાનાં અંગ વિજય કરનાર હોય છે, તેમ શૂરવીર વિજયનાં કારણ બનીને ભૂમિ-રાજ્યમાં ભોગોને પ્રાપ્ત કરે. (૧૮)

અનુ ત્વા રથોઽનુ મર્યોઽર્વન્નનુ ગાવોઽનુ ભર્ગઃ કૃનીનામ્।

અનુ વ્રાતાસસ્તવ સૃખ્યમીયુરનુ દેવા મમિરે વીર્યં તે ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-ઘોડાની સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! તે-આપના કનીનામ્-શોભાયમાન મનુષ્યોની મધ્યમાં વર્તમાન દેવાઃ-વિદ્વાનો તથા વ્રાતાસઃ-મનુષ્યો અનુ, વીર્યમ્-અનુકૂળ બળ તથા પરાક્રમને અનુ + મમિરે-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કરે; તવ-આપની સખ્યમ્-મિત્રતાને અનુ, ઈયુઃ-ત્યારપછી પ્રાપ્ત કરે.

ત્વા-આપના અનુ-અનુકૂળ રથઃ-વિમાન આદિ યાન, ત્વા-આપના અનુ-અનુકૂળ વા પાછળ મર્યઃ-મનુષ્ય, ત્વા-આપને અનુ-અનુકૂળ વા પાછળ ગાવઃ-ગાય અને ત્વા-આપને અનુ-અનુકૂળ ભગઃ-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થાય. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુશિક્ષિત બનીને અન્યોને સુશિક્ષિત કરે, તે [સુશિક્ષિતો] માંથી ઉત્તમોને સભાસદ બનાવીને, સભાસદોનાં મધ્યમાંથી અત્યુત્તમ સભાપતિ બનાવીને, રાજા, પ્રજા અને પ્રધાન પુરુષોની એક અનુમતિથી રાજ્ય-કાર્યોને સિદ્ધ કરે, તો તેઓ સર્વને અનુકૂળ બનીને સર્વ કાર્યોને સુસંપન્ન કરી શકે. (૧૯)

હિરણ્યશ્રૃઙ્ગોઽ યોઽસ્ય પાદા મનોજવાઽઅવરઽઙ્દ્રઽઆસીત્ ।

દેવાઽઙ્દસ્ય હવિરદ્યમાયન્યોઽઅર્વન્તં પ્રથમોઽઅધ્યતિષ્ઠત્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે અવરઃ-નવીન હિરણ્યશ્રૃઙ્ગઃ-શિંગડા સમાન વિવિધ તેજવાળા, ઙ્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યના હેતુ વિદ્યુત્ની સમાન સભાપતિ આસીત્-હોય, જે પ્રથમઃ-પ્રથમ સભાપતિ અર્વન્તમ્-ઘોડાની સમાન પ્રાપ્ત થનાર અગ્નિ તથા અયઃ-સુવર્ણના અધ્યતિષ્ઠત્-અધિષ્ઠાતા અર્થાત્ અગ્નિ પ્રયુક્ત યાન પર બેસીને ચલાવનાર હોય, અસ્ય-એના પાદાઃ-પગો મનોજવાઃ-મનની સમાન વેગવાળા હોય અર્થાત્ પગના ચાલવાનું કામ વિમાનાદિથી લે. દેવાઃ-વિદ્વાન સભાસદજનો અસ્ય-એ રાજાનાં હવિરદ્યમ્-આપવા અને ભોજન કરવા યોગ્ય અન્નને ઙ્દ્ર-જ આયન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો તમે આશ્રય કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને યથાવત્ જાણે છે, તેઓ અનેક અદ્ભુત કાર્યોને સિદ્ધ કરી શકે છે.

જેઓ પ્રીતિપૂર્વક રાજ્ય કાર્યોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સત્કારને [પ્રાપ્ત કરે છે] અને જે તેને નષ્ટ કરે છે, તેઓ અવશ્ય દંડને પ્રાપ્ત થાય. (૨૦)

ઈર્માન્તાસઃ સિલિકમધ્યમાસઃ સઃ શૂરંગાસો દિવ્યાસોઽઅત્યાઃ ।

હઃસાઽઙ્દવ શ્રેણિશો યતન્તે યદાક્ષિષુદિવ્યમજ્મમશ્વાઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે અગ્નિ આદિ પદાર્થોની સમાન ઈર્માન્તાસઃ-ઈર્મ = પ્રેરિત સ્થિતિપ્રાન્ત= પીઠવાળા, સિલિકમધ્યમાસઃ-ગદા આદિથી સંલગ્ન મધ્ય દેશવાળા, શૂરંગાસઃ-શીઘ્ર રણ=યુદ્ધમાં વિજય કરનારા, દિવ્યાસઃ-ઉત્તમ શિક્ષિત, અત્યાઃ-નિરંતર ગતિમાન, અશ્વાઃ-શીઘ્રગામી ઘોડાઓ છે, તેઓ શ્રેણિશઃ-પંક્તિબદ્ધ હંસાઃ-હંસોની ઙ્દવ-સમાન યતન્તે-પ્રયત્ન કરે છે; દિવ્યમ્-શુદ્ધ અજ્મમ્-માર્ગને

સમ્, આક્ષિણુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે; તેને તમે પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષોની પાસે સુશિક્ષિત, દિવ્ય ગતિવાળા, વિજયનાં કારણ, શીઘ્રગામી, પ્રેરણા અનુસાર ચાલનારા, હંસની સમાન ગતિવાળા ઘોડાઓ અગ્નિ આદિ પદાર્થોની સમાન કાર્યના સાધક હોય છે, તેઓ સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૧)

તવ શરીરં પતયિષ્ણવૃવન્તવ ચિત્તં વાતંઽઙ્ગવ ધ્રજીમાન્ ।

તવ શ્રૃંગાણિ વિષ્ટિતા પુરુત્રારણ્યેષુ જર્ભુરાણા ચરન્તિ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-ઘોડાની સમાન વેગવાન વીરપુરુષ ! જે તવ-તારું પતયિષ્ણુ-નાશવાન શરીરમ્-શરીર છે; જે તવ-તારા ચિત્તમ્-અન્તઃકરણની વૃત્તિ વાતંઽઙ્ગવ-વાયુની સમાન ધ્રજીમાન્-વેગવાન છે. અર્થાત્ દૂરની વસ્તુને ઝડપથી જાણી લેનાર છે; તવ-તારા પુસ્ત્રા-અનેક અરણ્યેષુ-વનોમાં જર્ભુરાણા-શીઘ્ર ધારણ અને પોષણ કરનારા, વિષ્ટિતા-વિશેષરૂપમાં સ્થિત, શ્રૃંગાણિ-શ્રૃંગોની સમાન ઊંચા સેનાનાં અંગ ચરન્તિ-વિચરે છે; તે તું ધર્મનું આચરણ કર. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અનિત્ય શરીરોમાં રહીને નિત્ય કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તેઓ અનુપમ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ વનમાં રહેલ પશુઓની સમાન કર્મચારી લોકો તથા સેનાઓ છે, તેઓ ઘોડાઓની સમાન શીઘ્રગામી બનીને શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૨૨)

ઉપપ્રાગાચ્છસનં વાજ્યર્વા દેવદ્રીચા મનસા દીધ્યાનઃ ।

અજઃ પુરો નીયતે નાભિરસ્યાનું પશ્ચાત્કવયોં યન્તિ રેભાઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : જે દીધ્યાનઃ-સુંદર પ્રકાશમાન થતા - ચમકતા, અજઃ-ફેંકનાર, વાજી-વેગવાન, અર્વા-ચાલાક ઘોડો છે; તે દેવદ્રીચા-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત મનસા-મનથી-વિચારથી શસનમ્-હિંસાના સ્થાન યુદ્ધને ઉપ, પ્ર, અગાત્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે; વિદ્વાનોથી અસ્ય-એના નાભિઃ-મધ્યભાગ-પીઠને પુરઃ-આગળ નીયતે-લઈ જાય છે; પશ્ચાત્-ત્યારપછી રેભાઃ-સર્વ વિદ્યાઓની સ્તુતિ કરનારા કવયઃ-મેધાવી-બુદ્ધિમાન લોકો અનુ, યન્તિ-અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ઉત્તમ વિચારથી ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને, અગ્નિ આદિ પદાર્થોને સિદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ જગતનાં હિતકારી હોય છે. (૨૩)

ઉપપ્રાગાત્પરમં યત્સધસ્થમર્વાં ॥ઽઅચ્છાં પિતરં માતરં ચ ।

અદ્યા દેવાઙ્જુષ્ટતમો હિ ગમ્યાઽઅથાશાસ્તે દાશુષે વાર્યાણિ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યત્-જે અર્વાન્-જ્ઞાનીજન જુષ્ટતમઃ-અત્યંત સેવિત થઈને પરમમ્-ઉત્તમ સધસ્થમ્-

જન્મ પિતરમ્-જનક-પિતા, માતરમ્-માતા ચ-અને દેવાન્-વિદ્વાનોની અદ્ય-અત્યારે આ, શાસ્ત્રે-સર્વથી ઈચ્છા કરે છે; અથ-અને દાશુષે-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાનને માટે વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ભોજનને યોગ્ય વસ્તુઓને ઉપ, પ્ર, અગાત્-સમીપ પ્રાપ્ત કરે છે, તમ્-તેને હિ-નિશ્ચયથી આપ અચ્છ-સારી રીતે ગમ્યા:-પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય અને વિનય દ્વારા પરોપકાર કરે છે, તેઓ ઉત્તમ-ઉત્તમ જન્મ, શ્રેષ્ઠ પદાર્થ, વિદ્વાન પિતા અને વિદુષી માતાને પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્વાનોના ભક્ત બનીને મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. તેઓ રાજ્યનું અનુશાસન કરી શકે છે. (૨૪)

સમિદ્ભોઽઅદ્ય મનુષો દુરોણે દેવો દેવાન્યજસિ જાતવેદઃ ।

આ ચ્ વહ મિત્રમહશ્ચિકિત્વાન્ત્વં દૂતઃ ક્વિરસિ પ્રચેતાઃ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-પ્રજ્ઞા શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનારા, મિત્રમહઃ-મિત્રનો સત્કાર કરનારા વિદ્વાન્ ! જે ત્વમ્-આપ અદ્ય-આ સમયે સમિદ્ભઃ-સમ્યક્ પ્રકાશિત અગ્નિની સમાન, મનુષઃ-મનનશીલ દેવઃ-વિદ્વાન બનીને યજસિ-વિદ્વાનોનો સંગ કરે છે; ચ-અને ચિકિત્વાન્-વિજ્ઞાનવાન, દૂતઃ-દુષ્ટોને દુઃખદાયક; પ્રચેતાઃ-ઉત્તમ જ્ઞાન-ચેતનાવાળા કવિઃ-સર્વ વિષયોમાં અવ્યાહત બુદ્ધિમાન અસિ-છો; તે આપ દુરોણે-ધરમાં દેવાન્-વિદ્વાનો વા ઉત્તમ ગુણોને આ, વહ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ દીપક આદિ રૂપમાં ધરોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ધાર્મિક વિદ્વાનો પોતાનાં કુળોને પ્રકાશિત કરે છે. જેઓ સર્વની સાથે મિત્ર સમાન વર્તન કરે છે, તેઓ જ ધાર્મિક છે. (૨૫)

તનૂનપાત્પથઽઋતસ્ય યાનાન્મધ્વા સમઙ્ગન્ત્સ્વદયા સુજિહ્વ ।

મન્માનિ ધીંભિરુત યજ્ઞમૃન્ધન્દેવત્રા ચ્ કૃણુહ્યધ્વરં નઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે સુજિહ્વ-સુંદર જિહ્વા વા વાણીવાળા, તનૂનપાત્-તનુ=વિસ્તૃત પદાર્થોને પતિત ન કરનારા ધાર્મિક વિદ્વાનજન ! આપ ઋતસ્ય-સત્ય અથવા જળના યાનાન્-યાનોને પથઃ-માર્ગોને અગ્નિની સમાન મધ્વા-મધુરતા અર્થાત્ કોમળતાથી સમઙ્ગન્-સમ્યક્ પ્રકટ કરતા સ્વદય-આસ્વાદન કરો અર્થાત્ પ્રસન્ન કરો. ધીંભિઃ-બુદ્ધિ વા કર્મોના દ્વારા મન્માનિ-યાનોને ઉત-તથા નઃ-અમારા અધ્વરમ્-નષ્ટ ન કરવા અને યજ્ઞમ્-સંગત કરવા યોગ્ય વ્યવહારને ઋધ્ન-સમ્યક્ સિદ્ધ કરતા ચ-પણ દેવત્રા-વિદ્વાનોમાં બેસીને સેવન કૃણુહિ-કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક મનુષ્યોએ પથ અને ઔષધોનાં સેવન દ્વારા સુપ્રકાશિત થવું જોઈએ. આપ વિદ્વાનોમાં રહીને, બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને અહિંસા રૂપી ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨૬)

નરાશ્સસ્ય મહિમાનમેષામુષ્ સ્તોષામ યજ્ઞતસ્ય યજ્ઞૈઃ ।

યે સુક્રતવઃ શુચ્વયો ધિયન્ધાઃ સ્વદન્તિ દેવાઽઉભયાનિ હૃવ્યા ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે **યે-જે સુક્રતવ:-** સુંદર બુદ્ધિઓ અને કર્મોવાળા, **શુચય:-** પવિત્ર, **ધિયન્ધા:-** શ્રેષ્ઠ પ્રજ્ઞા = ધારણાવતી બુદ્ધિ અને ઉત્તમ કર્મને ધારણ કરનારા **દેવા:-** વિદ્વાનો **ઉભયાનિ-** શરીર અને આત્મા બન્ને સુખકારી **હવ્યા-ભોજનને** યોગ્ય પદાર્થોને **સ્વદન્તિ-ભોગવે** છે - ખાય છે;

ણ્ણામ્-એ વિદ્વાનોના **યજ્ઞૈ:-** સત્સંગ આદિ રૂપયજ્ઞો દ્વારા **નરાશંસસ્ય-મનુષ્યોથી** પ્રશંસિત **યજતસ્ય-** સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારના **મહિમાનમ્-મહત્ત્વની** **ઉપ, સ્તોષામ-પ્રશંસા** કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેઓ સ્વયં શુદ્ધ, વિદ્વાન્ અને વેદ શાસ્ત્રના જ્ઞાતા નથી હોતા, તેઓ અન્યોને પણ વિદ્વાન અને પવિત્ર કરી શકતા નથી.

જેના જેવા ગુણ અને જેવા કર્મો હોય તે કર્મોની ધર્માત્મા લોકો યથાવત્ પ્રશંસા કરે. (૨૭)

આજુહ્વાનઽઈઙ્યો વન્દ્યશ્ચાયાહ્યગ્ને વસુભિઃ સૃજોષાઃ ।

ત્વં દેવાનામસિ યહ્વા હોતા સઽર્ણાન્યક્ષીષિતો યજીયાન્ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે **યહ્વા-મહાન** ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત, **અગ્ને-અગ્નિ** સમાન પવિત્ર વિદ્વાન્ ! જે **ત્વમ્-આપ** **દેવાનામ્-વિદ્વાનોની** મધ્યમાં **હોતા-વિદ્વાના** દાતા તથા **યજીયાન્-અત્યંત** યષ્ટા = સંગ કરનાર **અસિ-** છો, **ઈષિત:-** પ્રેરિત થઈને **ણાન્-એ** વિદ્વાનોનો **યક્ષિ-સંગ** કરે છે; **સ:-** તે આપ **વસુભિઃ-નિવાસને** માટે 'વસુ' નામક વિદ્વાનોની સાથે **સજોષા:-** સમાન રૂપથી પ્રીતિ સેવા કરનારા, **આજુહ્વાન:-** સર્વત્રથી કામના કરનારા **ઈઙ્યઃ-પ્રશંસાને** યોગ્ય અને **વન્દ્યઃ-નમસ્કાર** કરવા યોગ્ય વિદ્વાન છે; તેની સમીપ **આ, યાહિ-** આવો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે લોકો, પવિત્રાત્મા અને પ્રશંસિત વિદ્વાનોના સંગથી સ્વયં પવિત્રાત્મા બને, તો તેઓ ધર્માત્મા બનીને સર્વત્ર સન્માનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૮)

પ્રાચીનં બર્હિઃ પ્રદિશાં પૃથિવ્યા વસ્તોરસ્યા વૃજ્યતેઽઅગ્રેઽઅહ્વામ્ ।

વ્યુ પ્રથતે વિત્તરં વરીયો દેવેભ્યોઽઅદિતયે સ્યોનમ્ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **અસ્યા:-** આ **પૃથિવ્યા:-** ભૂમિની મધ્યમાં **પ્રાચીનમ્-સનાતન** **બર્હિઃ-અન્તરિક્ષની** સમાન વ્યાપક બ્રહ્મ **વસ્તો:-** દિવસના પ્રકાશથી **વૃજ્યતે-અલગ** થાય **અહ્વામ્-દિવસના** **અગ્રે-પ્રાતઃકાળના** આરંભમાં **દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો** **ઝ-અને** **અદિતયે-અવિનાશી** આત્માને માટે **વિત્તરમ્-દુઃખોથી** મુક્તિ અપાવનાર **વરીયઃ-અતિ** શ્રેષ્ઠ **સ્યોનમ્-સુખને** વિ, પ્રથતે-વિશેષ રીતે પ્રકટ કરનારને તમે લોકો **પ્રદિશા-વેદ** શાસ્ત્રના નિર્દેશને જાણો અને પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનોને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેઓ સર્વોત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. જેમ આકાશ સર્વ દિશાઓ અને પૃથિવી વગેરેમાં વ્યાપ્ત છે, તેમ જગદીશ્વર સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે. જે લોકો તે પરમેશ્વરની પ્રાતઃકાલ ઉપાસના કરે છે, તે ધર્માત્મા બનીને વિસ્તૃત સુખને પામે છે. (૨૯)

વ્યચસ્વતીરુર્વિયા વિ શ્રયન્તાં પતિભ્યો ન જનયઃ શુભ્મમાનાઃ ।

દેવીર્દારો બૃહતીર્વિશ્વમિન્વા દેવેભ્યો ભવત સુપ્રાયણાઃ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઝર્વિયા-અધિકતાથી વ્યચસ્વતી:-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્તિવાળી, બૃહતી:-મહાન, વિશ્વમિન્વા:-સર્વ વ્યવહારોમાં વ્યાપક, સુપ્રાયણા:-અતિ ઉત્તમ ધરોથી યુક્ત, દેવી:-પ્રકાશથી દેદીપ્યમાન દ્વાર:-અવકાશરૂપ દિશાઓની ન-સમાન પતિભ્ય:-પાણિગ્રહણ-વિવાહ કરનારા, દેવેભ્ય:-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત પતિઓને માટે શુભ્મમાના:-સુશોભાથી યુક્ત જનય:-ભયા= પત્નીઓ પોત-પોતાના સર્વ પતિઓની વિ, શ્રયન્તામ્-સેવા કરે છે; તેમ તમે સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપક ભવત-બનો.

ભાવાર્થ : જેમ વ્યાપક દિશાઓ અવકાશ પ્રદાન દ્વારા સર્વ મનુષ્યોના વ્યવહારની સાધિકા હોવાથી આનંદદાયિની છે, તેમજ પરસ્પર પ્રેમયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ દિવ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોનાં હિતકારી બને. (૩૦)

આ સુષ્વયન્તી યજતેઽઽપાકેઽઽષાસાનક્તા સદતાં નિ યોનૌ ।

દિવ્યે યોષણે બૃહતી સુરુક્મેઽઽધિ શ્રિયઃ શુક્રપિશં દધાને ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જો દિવ્યે-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા, યોષણે-બે સ્ત્રીઓની સમાન, સુરુક્મે-સુશોભિત, બૃહતી-મહાન, અધિ-અધિક શ્રિયમ્-શોભા વા લક્ષ્મીને તથા શુક્રપિશમ્-શુક = શ્વેત અર્થાત્ પ્રકાશ તથા પિશ = કૃષ્ણ અર્થાત્ અંધકારરૂપોને દધાને-ધારણ કરતી, સુષ્વયન્તી-શયન કરેલ, સમાન ડપાકે-નિકટવર્તિની, ડષાસાનક્તા-રાત અને દિવસ યોનૌ-કાલરૂપ કારણમાં નિ, આ, સદતામ્-સર્વથા સર્વત્રથી જાય છે; તેનો આપ યજતે-સંગ કરો તો અતુલ શ્રિયમ્-શોભા વા લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કાલની સાથે વર્તમાન રાત અને દિવસ પરસ્પર સંબદ્ધ પરંતુ વિલક્ષણ સ્વભાવવાળા છે, તેમ રાજા અને પ્રજા પરસ્પર પ્રેમથી વર્તાવ કરે. (૩૧)

દૈવ્યા હોતારા પ્રથમા સુવાચા મિમાના યજ્ઞં મનુષો યજ્ઞધ્યૈ ।

પ્રચોદયન્તા વિદથૈષુ કારૂ પ્રાચીનં જ્યોતિઃ પ્રદિશાં દિશન્તાં ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દૈવ્યા-વિદ્વાનોમાં કુશળ, હોતારા-દાતા, પ્રથમા-વિખ્યાત, સુવાચા-પ્રશંસિત વાણીવાળા, મિમાના-નિર્માણ કરનારા, યજ્ઞમ્-સંગતિરૂપ યજ્ઞધ્યૈ-યજ્ઞ કરવા માટે મનુષા-મનુષ્યોને વિદથૈષુ-વિજ્ઞાનોમાં પ્રચોદયન્તા-પ્રેરણા કરનારા પ્રદિશા-વેદાદિ શાસ્ત્રોનાં પ્રમાણથી પ્રાચીનમ્-પ્રાચીન જ્યોતિઃ-શિલ્પવિદ્યાના પ્રકાશનો દિશન્તા-ઉપદેશ કરનારા કારૂ-બે શિલ્પીજનો હોય, તેની પાસેથી શિલ્પશાસ્ત્રનું અધ્યયન કરવું જોઈએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં કારૂ-શબ્દમાં જે દિવ્યનનો પ્રયોગ થયો છે તે અધ્યાપક અને હસ્તક્રિયાના

શિક્ષકના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ છે.

જે શિલ્પી લોકો છે, તેઓ જેટલું જાણે છે, તેટલું સર્વ અન્ય લોકોને શીખવે, જેથી ઉત્તરોત્તર વિદ્યાસંતતિની વૃદ્ધિ થાય. (૩૨)

આ નોં યજ્ઞં ભારતી તૂયમેત્વિડાં મનુષ્વદિહ ચેતયન્તી ।

તિસ્રો દેવીર્બર્હિરેદશ્ચ સ્યોનઃ સરસ્વતી સ્વપસઃ સદન્તુ ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ભારતી-શિલ્પવિદ્યાને ધારણ કરનારી ક્રિયા, ઇન્ડા-સુશિક્ષિત મધુર વાણી, સરસ્વતી-વિજ્ઞાનવાણી પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ ઇહ-આ શિલ્પ વિદ્યાના ગ્રહણરૂપ વ્યવહારમાં નઃ-અમારા માટે તૂયમ્-વર્ધક યજ્ઞમ્-શિલ્પવિદ્યાના પ્રકાશમય યજ્ઞને મનુષ્વત્-મનુષ્યની સમાન ચેતયન્તી-બતાવતી અમને આ, એતુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે. એ પૂર્વોક્ત તિસ્રઃ-ત્રણ દેવીઃ-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન વાણીઓ ઇદમ્-એ બર્હિઃ-વધેલ સ્યોનમ્-સુખકારી કામોને સ્વપસઃ-સુંદર કર્મોવાળા અમને આ, સદન્તુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ શિલ્પ વ્યવહારમાં ઉત્તમ ઉપદેશ, ક્રિયાવિધિનું જ્ઞાન કરાવવું અને વિદ્યાનું ધારણ કરાવવું ઈષ્ટ છે, જે એ ત્રણ રીતિઓને મનુષ્યો ગ્રહણ કરી લે, તો મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૩)

યજ્ઞમે દ્યાવાપૃથિવી જનિત્રી રૂપૈરપિંશ્શ્ચુવનાનિ વિશ્વાં ।

તમદ્ય હૌતરિષિતો યજીયાન્દેવં ત્વષ્ટારમિહ યક્ષિ વિદ્વાન્ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે હોતઃ-શિલ્પવિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ ! યઃ-જે યજીયાન્-અત્યંત સંગતિ કરનાર, ઇષિતઃ-પ્રેરણાથી યુક્ત વિદ્વાન્-સર્વત્રથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત વિદ્વાન્ - જેમ ઈશ્વર ઇહ-આ રચના વ્યવહારમાં સ્ત્વૈઃ-વિચિત્ર આહુતિઓથી ઇમે-આ જનિત્રી-અનેક કાર્યોની ઉત્પાદક દ્યાવાપૃથિવી-વિદ્યુત્ અને ભૂમિ તથા વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોકોને અપિંશત્-અવયવરૂપમાં રચે છે, તેમ તમ્-તે ત્વષ્ટારમ્-વિયોગ = પ્રલય. સંયોગ = ઉત્પત્તિ કરનારા દેવમ્-ઈશ્વરનો અદ્ય-આજ તું યક્ષિ-સંગ કરે છે, તેથી સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સૃષ્ટિમાં પરમાત્માની વિશેષ રચનાઓનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, તે રીતે શિલ્પવિદ્યાનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૩૪)

ઉપાવસૃજ્ ત્મન્યાં સમઞ્જન્દેવાનાં પાથંઽ ઋતુથા હવીંષિં ।

વનસ્પતિઃ શમિતા દેવોઽઅગ્નિઃ સ્વદન્તુ હૃવ્યં મધુના ઘૃતેન ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! દેવાનામ્-વિદ્વાનોને પાથઃ-ભોગ્ય અન્ન આદિને મધુના-મધુર આદિ રસ અને ઘૃતેન-ઘૃત આદિથી સમઞ્જન્-સમ્યક્ મેળવીને ત્મન્યા-પોતાના આત્માથી હવીંષિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હવિઓનો ઋતુથા-ઋતુ અનુસાર ઉપાવસૃજ-યથાવત્ હોમ કર, જેથી તારા આપેલા હૃવ્યમ્-ભોજન યોગ્ય

પદાર્થોને વનસ્પતિ:-કિરણોના સ્વામી સૂર્ય, શમિતા-શાન્તિકર્તા દેવ:-ઉત્તમ ગુણોવાળા મેઘ અને અગ્નિ:- અગ્નિ પણ સ્વદન્તુ-પ્રાપ્ત કરે અર્થાત્ હોમ કરેલ પદાર્થ તેને પહોંચે. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શુદ્ધ દ્રવ્યોનો પ્રત્યેક ઋતુમાં હોમ કરવો જોઈએ, જેથી તે હોમ કરેલ દ્રવ્ય સૂક્ષ્મ બનીને કમશ: અગ્નિ, સૂર્ય અને મેઘોમાં પહોંચીને વર્ષા દ્વારા સર્વના ઉપકારી બને. (૩૫)

સદ્યો જાતો વ્યમિમીત યજ્ઞમ્ગ્નિર્દેવાનામભવત્પુરોગા: ।

અસ્ય હોતુ: પ્રદિશ્યુતસ્ય વાચિ સ્વાહાકૃતઃ હવિરંદન્તુ દેવા: ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સદ્ય: -શીઘ્ર જાત:-પ્રકટ થયેલ અગ્નિ:-વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન હોતુ:- ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ઋતુસ્ય-સત્યનો પ્રદિશિ-નિર્દેશ કરનારી વાચિ-વાણીમાં યજ્ઞમ્-અનેક પ્રકારના વ્યવહારને વિ, અમિમીત-વિશેષ નિર્માણ કરે છે, દેવાનામ્-વિદ્વાનોમાં પુરોગા:-અગ્રગામી અભવત્-બને છે; અસ્ય- એના સ્વાહાકૃતમ્-સત્ય વ્યવહારથી નિષ્પાદિત કર્મ વા હોમ કરેલથી બચેલા હવિ:-ભોજન યોગ્ય અન્નાદિને દેવા:-વિદ્વાનો અદન્તુ-ભક્ષણ કરે છે; તેને સર્વોપરિ વિરાજમાન માનો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સર્વ પ્રકાશકોમાં પ્રકાશક છે; તેમ જે વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન્ સર્વનો ઉપકાર કરનાર મનુષ્ય છે, તે જ સર્વને આનંદનો ઉપભોગ કરાવનાર હોય છે. (૩૬)

કેતું કૃણવન્નકેતવે પેશોં મર્યાઽપેશસેં । સમુષદ્ધિરજાયથા: ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ મર્યા:-મનુષ્ય અપેશસે-પેશ = સુવર્ણથી રહિત મનુષ્યને માટે પેશ:- સુવર્ણ, અકેતવે-બુદ્ધિ રહિત મનુષ્યને માટે કેતુમ્-બુદ્ધિને કુર્વન્તિ-સિદ્ધ કરે છે; તે ઉષદ્ધિ:-હોમ કરનારા યજમાનોની સાથે બુદ્ધિ અને ધનને કૃણવન્-કરતાં આપ સમ્, અજાયથા:-સમ્યક્ પ્રસિદ્ધ થાઓ. (૩૭)

ભાવાર્થ : તેઓ જ આપ્ત પુરુષ છે, જે પોતાની સમાન અન્યોનું પણ સુખ ઈચ્છે છે, તેના સંગથી વિદ્યાની પ્રાપ્તિ, અવિદ્યાની હાનિ, શ્રી = લક્ષ્મીનો લાભ અને દરિદ્રતાનો નાશ થાય છે. (૩૭)

જીમૂતસ્યેવ ભવતિ પ્રતીકં યદ્વર્મી યાતિ સમદામુપસ્થેં ।

અનાવિદ્ધયા તન્વા જય ત્વઃ સ ત્વા વર્મણો મહિમા પિપર્તું ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : યત્-જે વર્મી-કવચવાળા યોદ્ધા અનાવિદ્ધયા-ક્ષત = ઘાથી રહિત તન્વા-શરીરથી સમદામ્- મદ = હર્ષયુક્ત યુદ્ધોમાં વિદ્યમાન સૈનિકોની ઉપસ્થે-સમીપ પ્રતીકમ્-પ્રતીતિકારક ચિહ્ન વિશેષને યાતિ- પ્રાપ્ત કરે છે; સ:-તે જીમૂતસ્યેવ-મેઘની નિકટ વિદ્યુત્ની સમાન ભવતિ-હોય છે.

હે વિદ્વાન્ ! જે ત્વા-આપની વર્મણ:-રક્ષાનું મહિમા-મહત્ત્વ પિપર્તું-પાળે છે તેમ ત્વમ્-આપ શત્રુઓને જય-જીતો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘની સેના સૂર્યના પ્રકાશને ઢાંકી દે છે, તેમ [યોદ્ધા મનુષ્ય] કવચ આદિથી શરીરને ઢાંકી લે.

જેમ સમીપ રહેલા સૂર્ય અને મેઘનું યુદ્ધ થાય છે, તેમ વીર રાજપુરુષોએ [યુદ્ધના વિષયમાં] જાણવું જોઈએ અને સર્વત્રથી રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩૮)

ધન્વના ગા ધન્વનાજિં જયેમ્ ધન્વના તીવ્રાઃ સમદો જયેમ ।

ધનુઃ શત્રોરપકામં કૃણોતિ ધન્વના સર્વાઃ પ્રદિશો જયેમ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જેમ અમે ધનુઃ-શસ્ત્ર-અસ્ત્ર શત્રોઃ-શત્રુની અપકામમ્-કામનાઓને નષ્ટ કૃણોતિ-કરે છે; તે ધન્વના-ધનુષ્ય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્ર વિશેષથી ગાઃ-પૃથિવી અને ધન્વના-ઉક્ત શસ્ત્રવિશેષથી આજિમ્-સંગ્રામને જયેમ્-જીતે છે; ધન્વના-તોય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી તીવ્રાઃ-તીવ્ર વેગવાળી શત્રુઓની સમદઃ-હર્ષિત સેનાઓને જયેમ્-જીતે છે; ધન્વના-ઉક્ત ધનુષ્ય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી સર્વાઃ-સર્વ પ્રદિશઃ-દિશા-ઉપદિશાઓને જયેમ્-જીતે છે; તેમ તમે પણ એ ધનુષ્ય આદિથી શત્રુઓને જીતો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ધનુર્વેદનું વિજ્ઞાન અને તેની ક્રિયાઓમાં નિપુણ હોય, તો સર્વ સ્થાનોમાં તેનો વિજય પ્રકાશિત થાય છે.

જો વિદ્યા, વિનય અને વીરતા આદિ ગુણોથી પૃથિવીનું એક છત્ર રાજ્ય ઇચ્છો, તો કંઈ પણ અસંભવ નથી. (૩૯)

વક્ષ્યન્તીવેદાગનીગન્તિ કર્ણ પ્રિયઃ સઘાયં પરિષ્વજાના ।

યોષેવ શિઙ્કે વિતતાધિ ધન્વજ્યા ડ્યયઃ સમને પાર્યન્તી ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે ડ્યયમ્-આ વિતતા-વિસ્તારયુક્ત ધન્વન્-ધનુષ્યમાં અધિ-ઉપર લગાવેલી જ્યા-પ્રત્યંયા = દોરી = પણછ વક્ષ્યન્તીવ-ઉપદેશ કરવાવાળી વિદુષી સ્ત્રી સમાન ડ્યય-જ આગનીગન્તિ-શીઘ્ર બોધને કરાવતી, કર્ણમ્-સ્તુતિયુક્ત, પ્રિયમ્-કામના કરવા યોગ્ય, સઘાયમ્-મિત્રની સમાન વર્તમાન પતિને પરિષ્વજાના-સર્વત્રથી સંગ કરતી યોષેવ-સ્ત્રીની સમાન શિઙ્કે-શબ્દ કરે છે; સમને-સંગ્રામમાં, પાર્યન્તી-વિજયને પ્રાપ્ત કરાવનારી છે; તેના નિર્માણ, બંધન અને ચલાવવાને તમે જાણો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ધનુષ્ય અને પ્રત્યંયા = દોરી = પણછ આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોની રચના, સંબંધ અને ચલાવવાની ક્રિયાને જાણી લે, તો એ ઉપદેશિકા માતાની સમાન સુખદાયિની પત્નીને અને વિજય સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪૦)

તેઽઆચરન્તી સમનેવ યોષા માતેવ પુત્રં બિભૃતામુપસ્થૈ ।

અપ શત્રૂન્વિધ્યતાઃ સંવિદાનેઽઆર્તીઽડ્યમે વિષ્ફુરન્તીઽઅમિત્રાન્ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે યોષા-વિદુષી સમનેવ-સમ્યક્ પ્રાણની સમાન પ્રિય સ્ત્રી પતિને, માતેવ-જનનીની સમાન પુત્રમ્-સંતાનને બિભૃતામ્-ધારણ કરે છે; ઉપસ્થે-સમીપમાં આચરન્તી-સારી રીતે પ્રાપ્ત થઈ શત્રૂન્-શત્રુઓને અપ, વિદ્યતામ્-દૂર કરે છે.

इमे-એ સંવિદાને-સમ્યક્ વિજ્ઞાનને નિમિત્ત આર્ત્વી-પ્રાપ્ત થનારી અમિત્રાન્-શત્રુઓને વિષ્ફુરન્તી-વિચલિત કરનારી છે; તે-તે બન્નેનો ધનુષ્યની પ્રત્યંયા અર્થાત્ પણછનો યથાવત્ સમ્યક્ પ્રયોગ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ હૃદયને પ્રિય, પત્ની પતિને અને વિદુષી માતા પુત્રને પુષ્ટ કરે છે, તેમ પ્રસિદ્ધ ક્રિયાવાળી ધનુષ્યની પ્રત્યંયા = દોરી અર્થાત્ પણછ શત્રુઓને પરાજિત કરીને વીરોને પ્રસન્ન કરે છે. (૪૧)

ब॒ह्नीनां पि॒ता ब॒हुर॑स्य पु॒त्रश्चि॒श्चा कृ॑णोति॒ सम॑नाव॒गत्य॑ ।

इ॒षुधिः स॒ङ्गाः पृ॑तनाश्च॒ सर्वाः॑ पृ॒ष्ठे नि॒नद्धो॑ जयति॒ प्रसू॑तः ॥ ४२ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે બહ્નીનામ્-અનેક પણછ = દોરીઓના પિતા-પિતાની સમાન રક્ષક અસ્ય-આ પિતાના બહુ-અનેક ગુણોવાળા પુત્ર-સંતાનની સમાન પૃષ્ઠે-પીઠ પર નિનદ્ધઃ-નિશ્ચલ બંધાયેલ ઇષુધિઃ-બાણોને ધારણ કરનારા ભાથાં પ્રસૂતઃ-ઉત્પન્ન થઈને, સમના-સંગ્રામોને અવગત્ય-પ્રાપ્ત કરીને ચિશ્ના-ચિં ચિં વગેરે વિવિધ શબ્દ કૃણોતિ-કરે છે; ચ-જેથી વીર પુરુષ સર્વાઃ-સર્વ સઙ્ગાઃ-સમવેત = એકત્ર વા વિકીર્ણ = ફેલાયેલી પૃતનાઃ-સેનાઓને જયતિ-જીતે છે; તેની યથાવત્ રક્ષા કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ અનેક કન્યાઓ અને બહુજ પુત્રોનો પિતા [પોતાના] સંતાનોના શબ્દના કારણે સંકીર્ણ-ઘેરાયેલો રહે છે; તેમ જ ધનુષ્યની પ્રત્યંયા = પણછ તથા ભાથો મળીને અનેક પ્રકારના શબ્દોને ઉત્પન્ન કરે છે.

જેમ ડાબા હાથમાં ધનુષ્ય, પીઠ પર ભાથો [હોય અને] જે જમણા હાથથી બાણ કાઢીને, તેને ધનુષ્યની પણછ = દોરી પર ચડાવીને તથા તેને છોડીને અભ્યાસ દ્વારા શીઘ્રતા પ્રાપ્ત કરી લે છે, તે જ વિજયી બને છે. (૪૨)

रथे तिष्ठन्नयति वा॒जिनः॑ पुरो यत्र॑यत्र का॒मय॑ते सुषा॒रथिः॑ ।

अ॒भीशू॑नां म॒हिमानं॑ प॒नाय॑त॒ मनः॑ प॒श्चाद॑नु॒ यच्छ॑न्ति र॒श्मयः॑ ॥ ४३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! સુષારથિઃ-ઉત્તમ સારથિ અર્થાત્ ઘોડાઓ અથવા અગ્નિ આદિને નિયમમાં રાખનાર રથે-રમણ કરવા યોગ્ય ભૂમિ, જળ અને અન્તરિક્ષમાં ચાલનાર યાનમાં તિષ્ઠન્-બેસીને, યત્રયત્ર-જે-જે સંગ્રામ વા દેશમાં કામયતે-જવા ઈચ્છે છે; તત્ર-તત્ર-ત્યાં-ત્યાં વાજિનઃ-ઘોડાઓ વા અગ્નિ આદિને પુરઃ-આગળ નચતિ-હંકારે છે.

જેનું મનઃ-મન સુશિક્ષિત છે, રશ્મયઃ-લગામ વા કિરણો હાથમાં છે, પશ્ચાત્-પાછળથી ઘોડાઓ વા અગ્નિ આદિનો અનુ, યચ્છન્તિ-અનુકૂળ નિગ્રહ કરે છે; તે અભિશૂનામ્-સર્વ બાજુથી શીઘ્ર ગતિ કરનારની મહિમાનમ્-મહત્વની તમે પનાયત-પ્રશંસા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને રાજપુરુષો સામ્રાજ્ય અને નિશ્ચિત વિજયની કામના કરે, તો તેઓ સુશિક્ષિત મંત્રી, ઘોડાઓ આદિ, અન્ય વાહન સંબંધી પર્યાપ્ત સામગ્રી, અધ્યક્ષ, શસ્ત્રાસ્ત્ર અને શરીર તથા આત્માનાં બળનો અવશ્ય વિકાસ કરે. (૪૩)

તીવ્રાન્ ઘોષાન્ કૃણવતે વૃષપાણયોઽશ્વા રથેભિઃ સહ વાજયન્તઃ ।

અવક્રામન્તઃ પ્રપદૈરમિત્રાન્ ક્ષિણન્તિ શત્રૂંઽરનપવ્યયન્તઃ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે વૃષપાણયઃ-રક્ષક, બળવાન બળદ આદિ ઉત્તમ પ્રાણી જેના પાણિ = હાથોની સમાન છે; તેઓ રથેભિઃ-રમણીય યાનોની સહ-સાથે વાજયન્તઃ-વીર આદિ જનોને શીઘ્ર પહોંચાડનારા પ્રપદૈઃ-ઉત્તમ પગોના ગમનથી અમિત્રાન્-મિત્રતારહિત દુષ્ટોને અવક્રામન્તઃ-ધમકાવતા, અશ્વાઃ-શીઘ્રગામી ઘોડાઓ તીવ્રાન્-તીક્ષ્ણ ઘોષાન્-શબ્દો = હણહણાટ કૃણવતે-કરે છે; અનપવ્યયન્તઃ-વ્યર્થ ખર્ચ ન કરાવતાં યોદ્ધાઓ શત્રૂન્-શત્રુઓને ક્ષિણન્તિ-ક્ષીણ = નષ્ટ કરે છે; તેનું તમે પ્રાણોની સમાન પાલન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો હાથી, ઘોડા, બળદ આદિ પશુઓ કર્મચારીઓ અને અધ્યક્ષોને સુશિક્ષિત કરીને તથા અનેક પ્રકારના યાનોનું નિર્માણ કરીને શત્રુઓને જીતવા ઈચ્છે છે, તો તેનો નિશ્ચિત વિજય થાય છે. (૪૪)

રથવાહનઃ હવિરસ્ય નામ યત્રાયુધં નિહિતમસ્ય વર્મ ।

તત્રા રથમુપ શમ્મઃ સદેમ વિશ્વાહા વયઃ સુમનસ્યમાનાઃ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! અસ્ય-આ યોદ્ધાના યત્ર-જે યાનમાં રથવાહનમ્-રથ ચલાવવાનાં સાધનરૂપ હવિઃ-હવિ અર્થાત્ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય અગ્નિ, બળતણ, જળ, કાષ્ઠ અને ધાતુ આદિ સામગ્રી, આયુધમ્-ભુશુંડી = બંદૂક, શતઘ્ની = તોપ, તલવાર, ધનુષ્ય, બાણ, શક્તિ અને પદ્મપાશ આદિ શસ્ત્ર તથા અસ્ય-એ યોદ્ધાનાં વર્મ-કવચ અને નામ-પ્રસિદ્ધ વસ્તુઓ નિહિતમ્-સ્થિત છે; તત્ર-તે યાનમાં સુમનસ્યમાનાઃ-સુંદર વિચાર કરતા વયમ્-અમે શમ્મમ્-સુખદાયક તથા તે રથમ્-રમણના સાધન રથને વિશ્વાહા-સર્વ દિવસ = હંમેશાં ઉપ, સદેમ-સમીપથી પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યાનમાં અગ્નિ આદિ તથા ઘોડાઓ આદિ પ્રયુક્ત થાય છે, તેમાં યુદ્ધનાં સાધન-ઉપસાધનોને રાખીને, તેનું નિત્ય નિરીક્ષણ કરીને, તેમાં બેસીને તથા વિચારપૂર્વક શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરીને તમે નિત્ય સુખ પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

સ્વાદુષ્સદઃ પિતરો વયોધાઃ કૃચ્છેશ્રિતઃ શક્તીવન્તો ગમીરાઃ ।

ચિત્રસૈનાઽઙ્ગુબલાઽઅમૃદ્ધાઃ સતોવીરાઽઙ્ગુરવો વ્રાતસાહાઃ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે યુદ્ધ કરનારા વીર પુરુષો ! તમે સ્વાદુષ્સદઃ-સ્વાદુ = ભોજન આદિ અન્નોનું સમ્યક્ સેવન કરનારા, વયોધાઃ-દીર્ઘજીવનને ધારણ કરનારા, કૃચ્છેશ્રિતઃ-કષ્ટમાં વિદ્યમાન કષ્ટ સહન કરનારા, શક્તીવન્તઃ-સામર્થ્યયુક્ત, ગમીરાઃ-અગાધ આશયવાળા, ચિત્રસૈનાઃ-અદ્ભુત સેનાવાળા, ઙ્ગુબલાઃ-ઈષુ = શસ્ત્રાસ્રો સહિત બલ = સેનાવાળા, અમૃદ્ધાઃ-અમૃદુ = દૃઢ શરીરવાળા ઙ્ગુરવઃ-વિશાળ જાંઘ અને છાતીવાળા, વ્રાતસાહાઃ-વ્રાત= વીરોના સમૂહોને સહન કરનારા, સતોવીરાઃ-વિદ્યમાન સેનાની મધ્યમાં

વીરો અને યુદ્ધની વિદ્યા તથા શિક્ષાથી યુક્ત પિતરઃ-પાલન કરનારા પિતર-પ્રાપ્ત લોકો રાજપુરુષો છે, તેનો આશ્રય કરીને યુદ્ધ કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : તેઓને જ સદા વિજય, રાજ્યલક્ષ્મી, પ્રતિષ્ઠા, દીર્ઘાયુ, બળ અને વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત થાય છે, જે પોતાના અધિષ્ઠાતા આપ્ત લોકોનાં શાસનમાં રહે છે. (૪૬)

બ્રાહ્મણાસુઃ પિતરઃ સોમ્યાસઃ શિવે નો દ્યાવાપૃથિવીઽનેહસા ।

પૂષા નઃ પાતુ દુરિતાદૃતાવૃથો રક્ષા માકિર્નોઽઅઘશંસઽઈશત ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ! જે સોમ્યાસઃ-ઉત્તમ આનંદકારક ગુણોથી યુક્ત, ઋત્વાવૃથઃ-ઋત = સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા, પિતરઃ-રક્ષક અર્થાત્ પાલક, બ્રાહ્મણાસઃ-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા વિદ્વાન છે, તેઓ નઃ-અમારા માટે કલ્યાણકારી છે; અનેહસા-કારણરૂપથી અવિનાશી દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિ શિવે-કલ્યાણકારી બને.

પૂષા-પુષ્ટિ કરનારા પરમાત્મા નઃ-અમારી દુરિતાત્-દુષ્ટ અન્યાયાચરણથી પાતુ-રક્ષા કરે, જેથી નઃ-અમને મારવામાં અઘશંસઃ-પાપના પ્રશંસક ચોર માકિઃ + ઈશત-સમર્થ ન બને. ઉક્ત વિદ્વાનોની રક્ષ-રક્ષા કરો તથા ચોરોનો નાશ કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાનો તમોને ધર્મયુક્ત કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને દુષ્ટ આચરણથી દૂર રાખે છે, દુષ્ટાચારીઓનાં બળને રોકે છે અને અમારી પુષ્ટિ કરે છે, તેઓ સત્કારને યોગ્ય-સન્માનનીય છે. (૪૭)

સુપર્ણ વસ્તે મૃગોઽસ્યા દન્તો ગોભિઃ સન્નદ્ધા પતતિ પ્રસૂતા ।

યત્રા નરઃ સં ચ વિ ચ દ્રવન્તિ તત્રાસ્મભ્યમિષ્ઠવઃ શર્મ યંસન્ ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે વીરો ! યત્ર-જે સેનામાં નરઃ-નાયક હોય, જે સુપર્ણમ્-સુંદર પર્ણ = પાલન તથા પૂરણને માટે રથ આદિને વસ્તે-ધારણ કરે છે; યત્ર-જેમાં ગોભિઃ-દૂધાળી ગાયોની સાથે દન્તઃ-જનોથી દમન કરવા યોગ્ય મૃગઃ-કસ્તૂરી મૃગની સમાન ઇષ્ઠવઃ-બાણ વગેરે શસ્ત્ર-વિશેષ દોડે છે; જે સન્નદ્ધા-સમ્યક્ બાંધેલી પ્રસૂતા-સેનાપતિથી પ્રેરિત થઈને શત્રુઓ પર પતતિ-પડે છે; ચ-અને અહીં-તહીં અસ્યાઃ-એ સેનાના વીર પુરુષ સમ્ + દ્રવન્તિ-સમ્યક્ ગતિ કરે છે; ચ-અને વિ + દ્રવન્તિ-વિશેષ ગતિ કરે છે; તત્ર-તે સેનામાં અસ્મભ્યમ્-અમારે માટે આપ શર્મ-સુખ યંસન્-પ્રદાન કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો ! તમોએ શત્રુ દ્વારા કદી પરાજય ન પામે તેવી હૃદય-પુષ્ટ સેના બનાવવી જોઈએ. તે [સેનામાં] સુપરીક્ષિત યોદ્ધાઓ અને અધ્યક્ષો રાખવા જોઈએ તથા તે શસ્ત્રાસ્ત્ર ચલાવવામાં નિપુણ લોકો દ્વારા વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૪૮)

ઋજીતે પરિ વૃદ્ધિ નોઽશ્મા ભવતુ નસ્તનૂઃ ।

સોમોઽઅધિં બ્રવીતુ નોઽદિતિઃ શર્મં યચ્છતુ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ ઋણીતે-સરળ વ્યવહારમાં ન:-અમારા શરીરથી રોગોને પરિ, વૃદ્ધિ-બધી બાજુથી દૂર કરો, જેથી ન:-અમારા તનુ:-શરીર અશ્મા-પથ્થરની સમાન દંઢ ભવતુ-બને.

જે સોમ:-ઉત્તમ ઔષધિ છે; અને જે અદિતિ:-પૃથિવી છે, તે બન્નેનો આપ ન:-અમારા માટે અધિ, બ્રવીતુ-અધિકારપૂર્વક ઉપદેશ કરો; ન:-અમારે માટે શર્મ-સુખ વા ઘર યચ્છતુ-પ્રદાન કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય બ્રહ્મચર્ય, ઔષધ, પથ્ય અને ઉત્તમ નિયમોનું પાલન કરીને શરીરની રક્ષા કરે, તો તેનાં શરીર દંઢ બને છે.

જેમ શરીરોનું પૃથિવી આદિ ઘર છે, તેમ શરીર એ જીવનું ઘર છે. (૪૯)

આ જઙ્ઘન્તિ સાન્વૈષાં જઘનાંરઽપ્ જિઘ્નતે ।

અશ્વાજનિ પ્રચૈતસોઽશ્વાન્ત્સમત્સુ ચોદય ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વાજનિ-ઘોડાઓને સુશિક્ષા આપતી વિદુષી રાણી ! જેમ વીરપુરુષ ણ્ણામ્-એ ઘોડા આદિ પશુઓના સાનુ-અવયવોને આ + જઙ્ઘન્તિ-સારી રીતે ફટકારે છે; જઘનાન્-યુવકોને અપ + જિઘ્નતે-સમીપથી યલાવે છે; તેમ તું સમત્સુ-સંગ્રામોમાં પ્રચેતસ:-શિક્ષાથી વિશેષ સુશિક્ષિત - ચેતન કરેલ અશ્વાન્-ઘોડાઓને ચોદય-પ્રેરણા કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષ યાન, ચાલન, અથ્થ સંચાલન આદિ યુદ્ધ વ્યવહારોને જાણે, તેમ તેઓની સ્ત્રીઓ પણ જાણે. (૫૦)

અહિરિવ ભોગૈઃ પર્યેતિ બાહું જ્યાયાં હેતિં પરિબાધમાનઃ ।

હસ્તઘ્નો વિશ્વાં વ્યુનાનિ વિદ્વાન્પુમાન્પુમાંશ્ચસં પરિં પાતુ વિશ્વતઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે હસ્તઘ્ન:-હાથોથી મારનારા વિદ્વાન્-વિદ્વાન પુમાન્-પુરુષાર્થી આપ જ્યાયા:-પ્રત્યંચા = પણછથી હેતિમ્-બાણ છોડીને બાહુમ્-બાધક શત્રુને પરિબાધમાન:-સર્વત્રથી નિવારણ કરતા પુમાંસમ્-પુરુષાર્થી મનુષ્યની વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી અર્થાત્ સાંસારિક વિઘ્નથી પરિ + પાતુ-સર્વથા રક્ષા કરો છો, તે અહિરિવ-મેઘની સમાન ગર્જના કરતા આપ ભોગૈઃ-સુખ ભોગોથી વિશ્વા-સર્વ વ્યુનાનિ-વિજ્ઞાનોને પરિ + ણ્ણતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો છો. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન બાહુબળવાળા, શસ્ત્ર અસ્ત્રને યલાવનાર, શત્રુઓનું નિવારણ કરતા, પુરુષાર્થ દ્વારા સર્વની રક્ષા કરતા, મેઘની સમાન સુખ ઉપભોગોની વૃદ્ધિ કરનાર હોય છે, તે સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવવામાં સમર્થ બની શકે છે. (૫૧)

વનસ્પતે વીઙ્ઘ્ણો હિ ભૂયાઽઅસ્મત્સંઘ્વા પ્રતરંઘ્ણઃ સુવીરઃ ।

ગોભિઃ સન્નદ્ધોઽસિ વીડયસ્વાસ્થાતા તે જયતુ જેત્વાનિ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે વનસ્પતે-કિરણોના રક્ષક સૂર્યની સમાન વન આદિના રક્ષક વિદ્વાન રાજન્ ! આપ અસ્મત્સખા-અમારા રક્ષક મિત્ર પ્રતરણ:-શત્રુઓનાં બળનું ઉલ્લંઘન કરનાર, સુવીર:-સુંદર વીર પુરુષોથી યુક્ત વીડ્યવઙ્ગ:-પ્રશંસિત અંગોવાળા હિ-નિશ્ચયથી ઇો; ભૂયા:-જે કારણે આપ ગોભિઃ-પૃથિવી આદિથી સન્નદ્ધ:-તત્પર અને સંબદ્ધ અસિ-ઇો; તેથી અમને વીડયસ્વ-દેહ કરો. તે-આપના આસ્થાતા-યુદ્ધમાં સર્વત્ર સ્થિર રહેનાર વીર સેનાપતિ જેત્વાનિ-જીતવા યોગ્ય શત્રુ-સૈન્યને જયતુ-જીતે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યની સાથે કિરણોનો અને કિરણોની સાથે સૂર્યનો નિત્ય સંબંધ છે, તેમ રાજ, સેના તથા પ્રજાનો સંબંધ હોવો યોગ્ય છે.

જો સેનાપતિ આદિ જિતેન્દ્રિય અને શૂરવીર હોય તો સેના અને પ્રજા પણ તેવી જ હોય છે. (૫૨)

દિવઃ પૃથિવ્યાઃ પર્યોજ્ઞઽડ્ભૂતં વનસ્પતિભ્યઃ પર્ય્યાભૂતઃસહઃ ।

અપામોઝ્માનં પરિ ગોભિરાવૃતમિન્દ્રસ્ય વજ્રઃ હવિષા રથં યજ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : આપ દિવઃ-સૂર્યથી અને પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીથી ઉદ્ભૂતમ્-ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક ધારણ કરેલ ઓજઃ-પરાક્રમને પરિ + યજ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; વનસ્પતિભ્યઃ-વડ આદિ વનસ્પતિથી આભૂતમ્-સારી રીતે પુષ્ટ કરેલ સહઃ-બળને પરિ + યજ્ઞ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; અપામ્-જલોથી ઓઝ્માનમ્-પરાક્રમવાળા રસને પરિ + યજ્ઞ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યનાં ગોભિઃ-કિરણોથી આવૃતમ્-આચ્છાદિત વજ્રમ્-વજ્રની સમાન રથમ્-યાનને હવિષા-આદાનપૂર્વક યજ-પ્રાપ્ત કરો. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પૃથિવી આદિ ભૂતો તથા તેનાથી ઉત્પન્ન સૃષ્ટિના સંબંધથી બળ અને પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને તેના યોગથી વિમાન આદિ યાનોનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. (૫૩)

ઇન્દ્રસ્ય વજ્રો મરુતામનીકં મિત્રસ્ય ગર્ભો વરુણસ્ય નાભિઃ ।

સેમાં નો હવ્યદાતિં જુષાણો દેવ રથ પ્રતિ હવ્યા ગૃભાય ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-ઉત્તમ વિદ્યાથી યુક્ત, રથ-રમણીય સ્વરૂપવાળા વીર ! જેમ ઇમામ્-આ હવ્યદાતિમ્-આપવા યોગ્ય પદાર્થોના દાનને જુષાણઃ-સેવન કરનાર છે; સઃ-પૂર્વોક્ત આપ જે ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્નું વજ્રઃ-પડવું, મસ્તામ્-મનુષ્યોની અનીકમ્-સેના, મિત્રસ્ય-મિત્રનો ગર્ભઃ-આન્તરિક અભિપ્રાય વસ્તુસ્ય-શ્રેષ્ઠ પુરુષનો નાભિઃ-આત્માનો મધ્યવર્તી વિચાર છે; તેને નઃ - અને અમને હવ્યા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વસ્તુઓને પ્રતિ + ગૃભાય-પ્રતિગ્રહ અર્થાત્ સ્વીકાર કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોને અતિ શ્રેષ્ઠ સેના, વિદ્યુત્ વિદ્યા, મિત્રભાવ, આપ્તવિચાર અને વિદ્યા આદિના દાનથી સ્વીકૃત કરે છે અને [જેની પાસે] એ અન્યોને આપવા પદાર્થો પણ છે, તેઓ સર્વત્રથી મંગલમય [પદાર્થો અને ભાવો] આવૃત રહે છે. (૫૪)

उप श्वासय पृथिवीमुत् द्यां पुरुत्रा तै मनुतां विष्टितं जगत् ।

स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैर्दूराद्वीयोऽअप सेध शत्रून् ॥ ५५ ॥

પદાર્થ : હે દુન્દુભે-નગારા સમાન ગર્જનાર વીર ! સ:-તે આપ ઇન્દ્રેણ-ઐશ્વર્યથી યુક્ત દેવૈ:-ઉત્તમ વિદ્વાનોના ગુણોની સાથે સજૂ:-સંયુક્ત બનીને દૂરાત્-દૂરથી પણ દવીય:-અતિ દૂર શત્રૂન્-શત્રુઓને અપસેધ-પૃથક્ કરો. પુસ્ત્રા-વિવિધ પૃથિવીમ્-આકાશ ઉત-અને દ્યામ્-વિદ્યુત્ના પ્રકાશને ઉપ, શ્વાસય-નિકટ જીવન ધારણ કરાવો, આપ તે અન્તરિક્ષ અને વિદ્યુત્થી વિષ્ટિતમ્-વ્યાપ્ત જગત્-સંસારને મનુતામ્-જાણો; તે તે-આપનું રાજ્ય આનંદિત બને. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન શસ્ત્રોથી શત્રુઓને દૂર ભગાવીને, ઐશ્વર્યના દ્વારા વિદ્વાનોને દૂરથી બોલાવીને તેનો સત્કાર કરે છે, અન્તરિક્ષ અને વિદ્યુત્થી વ્યાપ્ત સમસ્ત જગતને જાણીને, અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓ અને ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સંસારને આનંદિત કરનારા બની શકે છે. (૫૫)

आक्रन्दय बलमोजो नऽआधा नि ष्टनिहि दुरिता बाधमानः ।

अप प्रोथ दुन्दुभे दुच्छुनाऽइतऽइन्द्रस्य मुष्टिरसि वीडयस्व ॥ ५६ ॥

પદાર્થ : હે દુન્દુભે-નગારાની સમાન જેની સેના ગર્જતી હોય એવા સેનાપતિ ! દુસ્તિ-દુષ્ટ વ્યસનોનું બાધમાન:-નિવારણ કરતા આપ ન:-અમને બલમ્-બળ = સેનાને આ, ક્રન્દય-સર્વત્રથી બોલાવીને અથવા શત્રુ સેનાને રડાવીને, ઓજ:-પરાક્રમને આ, ધા:-સારી રીતે ધારણ કરો. સેનાનો નિ: + સ્તનિહિ-સર્વથા વિસ્તાર કરો.

જે દુચ્છુના:-દુષ્ટ શ્વાન = કૂતરાની સમાન મનુષ્ય છે; તેને અપ, આક્રન્દય-સર્વ બાજુથી રડાવો. કારણ કે આપ મુષ્ટિ: - મુઠીની સમાન દેહ પ્રબંધકર્તા અસિ-છો; એટલા માટે ઇત:-એ સેના તથા ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્ના અવયવોને વીડયસ્વ-દેહ કરો અને સુખોને પ્રોથ-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરવો જોઈએ. તથા દુષ્ટોને રડાવવા જોઈએ. તથા સર્વનાં દુર્વ્યસનોને દૂર કરાવીને સુખની પ્રાપ્તિ કરાવવી જોઈએ. (૫૬)

आमूरज प्रत्यावर्त्तयेमाः केतुमहुन्दुभिर्वीवदीति ।

समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरोऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु ॥ ५७ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજપુરુષ ! આપ અમૂ:-તે શત્રુસેનાઓને આ + અજ-સારી રીતે દૂર કરો. ઇમા:-એ પોતાની કેતુમત્-પ્રશસ્ત ધ્વજાવાળી સેનાઓને પ્રતિ + આવર્તય-પાછી લાવો.

જેમ દુન્દુભિ:-નગારા વાવદીતિ-જોરથી વાગે છે; તેમ ન:-અમારી અશ્વપર્ણા:-ઘોડાનું પાલન કરનારી સેનાઓ સમ્, ચરન્તિ-સમ્યક્ વિચરે છે.

જે અસ્માકમ્-અમારા રથિન:-પ્રશંસિત રથોવાળા વીર નર:-નાયક શત્રુઓને જયન્તુ-જીતે છે, તે સત્કારને પામે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો શત્રુઓની સેનાઓનું નિવારણ કરીને તથા પોતાની સેનાઓને યુદ્ધ કરાવવામાં સમર્થ હોય છે, તેઓ શત્રુઓને સર્વત્રથી જીતી શકે છે. (૫૭)

**આગ્નેયઃ કૃષ્ણગ્રીવઃ સારસ્વતી મેષી બ્રહ્મુઃ સૌમ્યઃ પૌષ્ણઃ શ્યામઃ શિતિપૃષ્ઠો
બાર્હસ્પત્યઃ શિલ્પો વૈશ્વદેવઽએન્દ્રોઽરુણો મારુતઃ કલ્માષઽએન્દ્રાગ્નઃ સંહિતોઽ-
ધોરામઃ સાવિત્રો વારુણઃ કૃષ્ણઽએકશિતિપાત્વેત્વઃ ॥ ૫૮ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે આગ્નેયઃ-અગ્નિ દેવતાવાળા પશુ છે અર્થાત્ અગ્નિના ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત છે, તે કૃષ્ણગ્રીવઃ-કાળી ડોકવાળા છે; જે સારસ્વતી-સરસ્વતી-વાણીના ગુણવાળી મેષી-ઘેટી છે; જે સૌમ્યઃ-ચંદ્રમાના ગુણવાળા પશુ છે, તે બ્રહ્મુઃ-ધુમાડાના વર્ણવાળા છે; જે પૌષ્ણઃ-પુષ્ટિ આદિ ગુણોવાળા પશુ છે, તે શ્યામઃ-શ્યામ વર્ણવાળા છે; જે બાર્હસ્પત્યઃ-મહાન આકાશ આદિના પાલન આદિ ગુણયુક્ત છે, તે શિતિપૃષ્ઠઃ-કાળી પીઠવાળા છે; જે વિશ્વદેવઃ-સર્વ વિદ્વાનોના ગુણવાળા છે, તે શિલ્પઃ-અનેક વર્ણવાળા છે; જે એન્દ્રઃ-સૂર્યના ગુણવાળા છે, તે અસ્મઃ-લાલ વર્ણવાળા છે; જે માસ્તઃ-વાયુના ગુણવાળા છે, તે કલ્માષઃ-સફેદ અને કાળા વર્ણવાળા છે; જે એન્દ્રાગ્નઃ-સૂર્ય અને અગ્નિના ગુણવાળા છે, તે સંહિતઃ-દૃઢ અંગોવાળા છે; જે સાવિત્રઃ-સૂર્યના ગુણવાળા છે, તે અધોરામઃ-નીચે કીડા કરનારા છે; જે એકશિતિપાત્-એક પગવાળા છે, તે પેત્વઃ-પતનશીલ છે અને જે કૃષ્ણઃ-કાળા રંગવાળા છે, તે વાસ્મઃ-જળના શાન્ત આદિ ગુણવાળા પશુઓ છે, એ સર્વને જાણો. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે દેવતાવાળા જે જે પશુઓ વિખ્યાત છે, તે તે ગુણવાળા બતાવેલ છે, તેમ જાણો. (૫૮)

**અગ્નયેઽનીકવતે રોહિતાઞ્જિરનૃદ્વાનૃધોરામૌ સાવિત્રૌ પૌષ્ણૌ રંજતનામ્બી
વૈશ્વદેવૌ પિશઙ્ગૌ તૂપરૌ મારુતઃ કલ્માષઽઆગ્નેયઃ કૃષ્ણોઽજઃ સારસ્વતી મેષી
વારુણઃ પેત્વઃ ॥ ૫૯ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અનીકવતે-પ્રશસ્ત સેનાવાળા અગ્નયે-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોના પ્રકાશક સેનાપતિને માટે રોહિતાઞ્જિઃ-રોહિત = લાલ અંજિ = લક્ષણોવાળા અનૃદ્વાનૃ-બળદ, સાવિત્રૌ-સૂર્યના ગુણવાળા, અધોરામૌ-નીચેના શ્વેત વર્ણવાળા પશુ, પૌષ્ણૌ-પુષ્ટિ આદિ ગુણવાળા રંજતનામ્બી-ચાંદીની સમાન શ્વેતનાભિયુક્ત પશુ, વૈશ્વદેવૌ-સર્વ વિદ્વાનો સંબંધી તૂપરૌ-શિંગડારહિત પિશઙ્ગૌ-પીળા રંગના બે પશુઓ, માસ્તઃ-વાયુ દેવતાવાળા કલ્માષઃ-સફેદ અને કાળા રંગવાળા પશુ, આગ્નેયઃ-અગ્નિદેવતાવાળા કૃષ્ણઃ-કાળા અજઃ-બકરાં; સારસ્વતી-વાણીના ગુણવાળી મેષી-ઘેટી અને વાસ્મઃ-જળના ગુણવાળા પેત્વ-શીઘ્રગામી પશુ છે, તે સર્વનો ગુણોને અનુકૂળ પ્રયોગ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પશુઓના જેટલા ગુણો કહેલ છે, તે સર્વ ગુણ એક અગ્નિમાં એકત્ર છે એમ જાણો. (૫૯)

અગ્નયૈ ગાયત્રાય ત્રિવૃતે રથન્તરાયાઽષ્ટાકપાલોઽન્દ્રાય ત્રૈષ્ટુભાય પઞ્ચદશાય
બાર્હતાયૈકાદશકપાલો વિશ્વેભ્યો દેવેભ્યો જાગતેભ્યઃ સપ્તદશેભ્યો વૈરુપેભ્યો
દ્વાદશકપાલો મિત્રાવરુણાભ્યામાનુષ્ટુભાભ્યામેકવિંશાભ્યાં વૈરાજાભ્યાં પયસ્યા
બૃહસ્પતયે પાઙ્ક્તાય ત્રિણવાય શાક્વરાય ચરુઃ સવિત્રઽઔષ્ણિહાય ત્રયસ્ત્રિંશાય
રૈવતાય દ્વાદશકપાલઃ પ્રાજાપત્યશ્ચરુરદિત્યૈ વિષ્ણુપત્યૈ ચરુરગ્નયૈ વૈશ્વાનરાય
દ્વાદશકપાલોઽનુમત્યાઽષ્ટાકપાલઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ત્રિવૃતે-સત્વ, ૨૪ અને તમ ગુણોથી યુક્ત રથન્તરાય-રથ = યાનોથી સમુદ્ર આદિ તરવાવાળા, ગાયત્રાય-ગાયત્રી આદિ છંદોમાં બતાવેલ અગ્નયે-અગ્નિને માટે અષ્ટાકપાલઃ-આઠ કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; પઞ્ચદશાય-પંદર પ્રકારના ત્રૈષ્ટુભાય-ત્રિષ્ટુપ છંદથી પ્રખ્યાત બાર્હતાય-મોટાની સાથે સંબંધ રાખનાર ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યને માટે એકાદશકપાલઃ-અગિયાર કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; વિશ્વેભ્યઃ-સર્વ જાગતેભ્યઃ-જગતી છંદમાં બતાવેલ સપ્તદશેભ્યઃ-સત્તર વૈસ્ત્રેભ્યઃ-વિવિધ રૂપવાળા દેવેભ્યઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત મનુષ્યને માટે દ્વાદશકપાલઃ-બાર કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; આનુષ્ટુભાભ્યામ્-અનુષ્ટુપ છંદથી પ્રકાશિત થયેલ એકવિંશાભ્યામ્-એકવીસ વૈરાજાભ્યામ્-વિરાટ્ છંદથી બતાવેલ મિત્રાવરુણાભ્યામ્-પ્રાણ અને ઉદાનને માટે પયસ્યા-જળ ક્રિયામાં કુશળ વિદ્વાન, બૃહસ્પતયે-મહાનના રક્ષક, પાઙ્ક્તાય-પંક્તિઓમાં શ્રેષ્ઠ ત્રિણવાય-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન એ ત્રણેયથી ઉપાસના કરવા યોગ્ય શાક્વરાય-શક્તિશાળી પુરુષને માટે ચરુ-પાક વિશેષ ઔષ્ણિહાય-ઉષ્ણિક્ષ્ છંદમાં બતાવેલ ત્રયસ્ત્રિંશાય-તેત્રીસ રૈવતાય-ધન સંબંધી સવિત્રે-ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરનાર પુરુષને માટે દ્વાદશકપાલઃ-બાર કપાલોમાં સંસ્કૃત પાક પ્રાજાપત્યઃ-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા ચરુ-ચરુ નામક સ્થાલી પાક અદિત્યૈ-અખંડિત અન્તરિક્ષ રૂપવાળી વિષ્ણુપત્યૈ-વિષ્ણુ = વ્યાપક ગુણથી પાલિત વિદ્યુત્ને માટે ચરુ-પાક, વૈશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન અગ્નયે-વિદ્યુત્સ્પી અગ્નિને માટે દ્વાદશકપાલઃ-બાર કપાલોમાં પકાવેલ પાક અને અનુમત્યૈ-પાછળ માનનારા માટે અષ્ટાકપાલઃ-આઠ કપાલોમાં સિદ્ધ કરેલ પાક બનાવવો જોઈએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે લોકો અગ્નિ આદિના પ્રયોગ માટે આઠ આદિ પ્રકારોનાં યન્ત્રોને બનાવી શકે, તેઓએ રચેલ વ્યક્ત પદાર્થોથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે. (૬૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અગ્નિ (૧-૩), વિદ્વાન્ (૪), ઘર (૫), પ્રાણ-અપાન (૬), અધ્યાપક-ઉપદેશક (૭), વાણી (૮), અશ્વ (૯), અગ્નિ (૧૦), વિદ્વાનોથી પ્રશસ્ત પદાર્થો (૧૧), ગૃહદ્વાર (૩૦), રાત-દિવસ (૩૧), શિલ્પી (૩૨), શ્રી (૩૧), શસ્ત્ર-અસ્ત્ર (૩૯-૪૫), સેના (૪૬),

જ્ઞાની (૪૭), રક્ષા (૪૮), સૃષ્ટિના ઉપકાર ગ્રહણ (૫૩), વિઘ્નનિવારણ (૫૬), શત્રુસેનાનો પરાજય અને પોતાની સેનાનાં અંગોની રક્ષા (૫૭), પશુ ગુણ (૫૮-૫૯) અને યજ્ઞ(૬૦)નાં નિરૂપણથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણો.

॥ ઇતિ એકોત્ત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ત્રિંશોઽધ્યાય આરમ્ભ્યતે ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

દેવ સવિત્ : પ્ર સુવ યજ્ઞં પ્ર સુવ યજ્ઞપતિં ભગાય ।

દિવ્યો ગન્ધર્વઃ કેતપૂઃ કેતં નઃ પુનાતુ વાચસ્પતિર્વાચં નઃ સ્વદતુ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય સ્વરૂપ, સવિતઃ-સકલ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, જગતના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! જે આપ દિવ્યઃ-શુદ્ધ સ્વરૂપમાં વિદ્યમાન ગન્ધર્વઃ-ગૌ = પૃથિવીને ધારણ કરનારા, કેતપૂઃ-કેત = વિજ્ઞાનને પવિત્ર કરનાર રાજા નઃ-અમારી કેતમ્-બુદ્ધિને પુનાતુ-પવિત્ર કરો.

જે વાચઃ-વાણીના પતિઃ-રક્ષક નઃ-અમારી વાચમ્-વાણીને સ્વદતુ-વિદ્યાથી મધુર, સ્નિગ્ધ, મૃદુ અને પ્રિય બનાવો; તે યજ્ઞપતિમ્-યજ્ઞ - રાજ્યના રક્ષક રાજાને ભગાય-ઐશ્વર્યયુક્ત ધનને માટે પ્ર + સુવ-ઉત્તમ રીતિથી ઉત્પન્ન કરો અને યજ્ઞમ્-રાજધર્મરૂપ યજ્ઞને પણ પ્ર + સુવ-ઉત્તમ રીતિથી ઉત્પન્ન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યા અને શિક્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર, શુદ્ધ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત, રાજ્યના પાલન માટે યથાયોગ્ય ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર, ધાર્મિકોનું પાલન કરનાર, પરમેશ્વરનો ઉપાસક અને સમસ્ત ગુણોથી સંપન્ન હોય, તે જ રાજા બનવા માટે યોગ્ય છે. (૧)

તત્સવિતુર્વરેણ્યં ભર્ગો દેવસ્ય ધીમહિ । ધિયો યો નઃ પ્રચોદયાત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે નઃ-અમારી ધિયઃ-બુદ્ધિ વા કર્મોને પ્રચોદયાત્-પ્રેરિત કરે છે, તે સવિતુઃ-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક, સમગ્ર ઐશ્વર્યના દાતા દેવસ્ય-સુખ પ્રદાન કરનારા પરમેશ્વરના જે વરેણ્યમ્-ગ્રહણ-વરણ કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ ભર્ગઃ-દુઃખોને ભસ્મ કરનાર શુદ્ધ સ્વરૂપ છે; તેને જેમ અમે ધીમહિ-ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તત્-તે ઈશ્વરના શુદ્ધ સ્વરૂપને તમે પણ ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર જીવોને અશુભ આચરણથી નિવૃત્ત કરીને શુભ આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ રાજા પણ કરે.

જેમ પરમેશ્વર પ્રત્યે [પ્રજા] પિતાનો ભાવ રાખે છે, તેમ રાજા પ્રત્યે પણ રાખે. જેમ પરમેશ્વર જીવો પ્રત્યે પુત્ર ભાવથી વ્યવહાર કરે છે, તેમ રાજા પણ પ્રજા પ્રત્યે પુત્ર ભાવથી વ્યવહાર કરે.

જેમ પરમેશ્વર સર્વ દોષો, ક્લેશો અને અન્યાયોથી રહિત છે, તેમ જ રાજા પણ રહે. (૨)

વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત સવિતઃ-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં પ્રેરણા કરનારા પરમેશ્વર ! આપ અમારા વિશ્વાનિ-સર્વ દુરિતાનિ-દુષ્ટ આચરણો વા દુઃખોને પરા + સુવ-દૂર કરો અને યત્-જે ભદ્રમ્-ધર્માચરણ વા સુખ છે તત્-તેને નઃ-અમારા માટે આ + સુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઉપાસના કરેલા પરમેશ્વર પોતાના ભક્તોને દુષ્ટ આચરણથી નિવૃત્ત કરીને શ્રેષ્ઠ આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરાવે છે, તેમ રાજા પણ પ્રજાને અધર્મથી નિવૃત્ત કરીને ધર્મમાં પ્રવૃત્ત કરે અને સ્વયં પણ તેમ જ કરે. (૩)

વિભક્તારઃ હવામહે વસોશ્ચિત્રસ્ય રાધસઃ । સ્વિતારં નૃચક્ષસમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વસોઃ-સુખોના નિવાસ માટે, ચિત્રસ્ય-અદ્ભુત રાધસઃ-ધનનો વિભક્તારમ્-વિભાગ કરનારા, સ્વિતારમ્-સર્વના ઉત્પાદક નૃચક્ષસમ્-સર્વ મનુષ્યોના અન્તર્યામી સ્વરૂપથી સર્વ કાર્યોને જોનારા પરમાત્માની અમે હવામહે-પ્રશંસા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પ્રશંસા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર સર્વ જીવોને તેઓના પોત-પોતાના કર્મોના અનુસાર ફળ આપે છે, તેમ આપ પણ પ્રદાન કરો.

જેમ જગદીશ્વર જેવા જેના કર્મ અને જેટલા પાપ તથા પુણ્ય છે તેટલું જ તેનું ફળ આપે છે, તેમ આપ પણ જેની જેટલી વસ્તુ અને જેવા કર્મ છે, તેટલી અને તેટલું જ ફળ તેને પ્રદાન કરો.

જેમ પરમેશ્વર પક્ષપાત રહિત સર્વ જીવો પ્રત્યે વર્તાવ કરે છે, તેમ આપ પણ કરો. (૪)

બ્રહ્મણે બ્રાહ્મણં ક્ષત્રાય રાજન્યં મરુદ્ભ્યો વૈશ્યં તપસે શૂદ્રં તમસે તસ્કરં નારકાય વીરહણં પાપ્મને ક્લીબમાક્રયાયાઽઅયોગું કામાય પુંશ્ચલૂમતિક્રુષ્ટાય માગધમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ આ જગતમાં બ્રહ્મણે-વેદ, ઈશ્વર અને વિજ્ઞાનના પ્રચારને માટે બ્રાહ્મણં-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા બ્રાહ્મણને, ક્ષત્રાય-રાજ્ય વા રક્ષાને માટે રાજન્યમ્-રાજપુત્ર = ક્ષત્રિયને મસ્દ્ભ્યઃ-પશુ આદિ પ્રજાને માટે વૈશ્યમ્-પ્રજામાં વર્તમાન વૈશ્યને, તપસે-સંતાપજન્ય સેવાને માટે શૂદ્રમ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવા કરનારા અને શુદ્ધિ કરનારા શૂદ્રને સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

તમસે-અંધકારમાં પ્રવૃત્ત તસ્કરમ્-ચોરને, નારકાય-દુઃખરૂપ બંધન અર્થાત્ જેલને માટે વીરહણમ્-વીરોને મારનારાને, પાપ્મને-પાપાચરણમાં પ્રવૃત્ત, ક્લીબમ્-નપુંસકને, આક્રયાયૈ-પ્રાણીઓના આક્રમણરૂપ હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત અયોગમ્-શસ્ત્ર-વિશેષની સાથે ગતિ કરનારાઓને કામાય-વિષય સેવન માટે પ્રવૃત્ત, પુંશ્ચલૂમ્-પુરુષોની સાથે ચલચિત્તવાળી વ્યભિચારિણી સ્ત્રીને, અતિક્રુષ્ટાય-અત્યંત નિદાન માટે પ્રવૃત્ત માગધમ્-નીચ મનુષ્યને દૂર કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ જગદીશ્વર પરોપકારને માટે જગતમાં પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરે છે અને દોષોને દૂર કરે છે, તેમ તું આ રાજ્યમાં સજ્જનોની વૃદ્ધિ અને દુષ્ટોનો નિકાલ કર; દંડ આપ તથા તાડન કર. જેથી શુભ ગુણોની પ્રવૃત્તિ અને દુર્વ્યસનોની નિવૃત્તિ થાય. (૫)

નૃત્તાર્ય સૂતં ગીતાર્ય શૈલૂષં ધર્માય સભાચરં નૃરિષ્ઠાયૈ ભીમલં નર્માય રેભઃ હસાય કારિમાનન્દાય સ્ત્રીષ્ઠં પ્રમદૈ કુમારીપુત્રં મેધાયૈ રથકારં ધૈર્યાય તક્ષાણમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ નૃત્તાય-નૃત્યને માટે સૂતમ્-ક્ષત્રિયથી બ્રાહ્મણીમાં ઉત્પન્ન સૂતને, ગીતાય-ગાવા માટે શૈલૂષમ્-ગાયક નટને, ધર્માય-ધર્મની રક્ષાને માટે સભાચરમ્-સભામાં વિચરણ કરનાર સભાપતિને, નર્માય-કોમળતાને માટે રેભમ્-સ્તુતિ કરનારને, આનન્દાય-આનંદ માણવા માટે સ્ત્રીષખમ્-સ્ત્રીના મિત્ર પતિને, મેધાયૈ-બુદ્ધિને માટે રથકારમ્-વિમાન આદિના રચયિતા શિલ્પીને, ધૈર્યાય-ધીરજને માટે તક્ષાણમ્-તક્ષક = સુથાર જે સૂક્ષ્મ કામ કરનારા છે તેને આ + સુવ = સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

નરિષ્ઠાયૈ-અત્યંત દુષ્ટ નર જે હિંસા માટે પ્રવૃત્ત, ભીમલમ્-ભયંકર વિષયોને ગ્રહણ કરનારાઓને, હસાય-હસવા માટે પ્રવૃત્ત થયેલા કારિમ્-ઉપહાસ કરનારા તથા પ્રમદે-પ્રમાદને માટે પ્રવૃત્ત કુમારીપુત્રમ્-વિવાહ પૂર્વ વ્યભિચારથી ઉત્પન્ન કુમારીના પુત્રને પરા + સુવ-દૂર કરો. (૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પરમેશ્વરના ઉપદેશથી અને રાજાની આજ્ઞાથી સર્વ શ્રેષ્ઠ ધાર્મિક જનોને ઉત્સાહિત કરવા જોઈએ. ઉપહાસ કરનાર [વ્યર્થ હસાવનાર] તથા ભય પેદા કરનારનું નિવારણ કરવું જોઈએ; અનેક સભાઓ બનાવીને બધી વ્યવસ્થા કરવી જોઈએ અને શિલ્પવિદ્યાની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૬)

**તપસે કૌલાલં માયાયૈ કર્મારં રૂપાય મણિકારં શુભે વપ્ શરવ્યાયાઽઙ્ગુકારં
હેત્યૈ ધનુષ્કારં કર્મણે જ્યાકારં દિષ્ટાય રજ્જુસર્જ મૃત્યવે મૃગયુમન્તકાય શ્વનિનમ્ ॥ ૭ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ તપસે-વાસણ પકવવા માટેની ભટ્ટાની ગરમી ખમવા માટે કૌલાલમ્-કુલાલ = કુંભાર પુત્રને, માયાયૈ-બુદ્ધિને માટે કર્મારમ્-ઉત્તમ સુશોભિત કામ કરનાર લુહારને, સ્વાય-સુંદર સ્વરૂપ બનાવવા માટે મણિકારમ્-ઝવેરીને શુભે-શુભ આચરણને માટે વપમ્-ખેતરોમાં વાવવાવાળા ખેડૂતની સમાન વિદ્યા શુભ ગુણોને વાવનારને, શરવ્યાયૈ-શર = બાણ બનાવવા માટે ઙ્ગુકારમ્-બાણ બનાવનારને, હેત્યૈ-વજૂ આદિ શસ્ત્રો બનાવવા માટે ધનુષ્કારમ્-ધનુષ્ય આદિના કર્તાને, કર્મણે-ક્રિયાની સિદ્ધિને માટે જ્યાકારમ્-જ્યા = પ્રત્યંચા = પણછ કર્તાને, દિષ્ટાય-અતિ રચનાને માટે રજ્જુસર્જમ્-રજ્જુ = દોરી બનાવનારને આસુવ-સર્વથી ઉત્પન્ન કરો. મૃત્યવે-મૃત્યુ કરવા માટે પ્રવૃત્ત મૃગયુમ્-શિકારીને તથા અન્તકાય-અન્ત કરનારને માટે હિતકારી શ્વનિનમ્-અનેક શ્વા = કૂતરા પાળનારાને પરા + સુવ-દૂર કરો-જુદા વસાવો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિશિષ્ટ રચનાઓ જોવામાં આવે છે, તેમ રાજપુરુષોએ શિલ્પવિદ્યા દ્વારા સૃષ્ટિનાં દંષ્ટાન્તથી વિશિષ્ટ રચનાઓ કરવી જોઈએ. હિંસક અને કૂતરાના પાળનારાઓ ચાંડાલ આદિને દૂર વસાવવા જોઈએ. (૭)

**નદીભ્યઃ પૌઙ્ગિષ્ઠમૃક્ષીકાભ્યો નૈષાદં પુરુષવ્યાઘ્રાય તુર્મદં ગન્ધર્વાપ્સરોભ્યો
ત્રાત્યં પ્રયુગભ્યઽડન્મત્તં સર્પદેવજનેભ્યોઽપ્રતિપદમયૈભ્યઃ કિત્વમીર્યતાયાઽઅકિતવં
પિશાચેભ્યો વિદલકારીં યાતુધાનેભ્યઃ કણ્ટકીકારીમ્ ॥ ૮ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ નદીભ્યઃ-નદીઓના વિનાશ કે બગાડવામાં પ્રવૃત્ત પૌઙ્ગિષ્ઠમ્-

પુકકસ = નીચ મનુષ્યને, **ઋક્ષીકાભ્યઃ** - ઋક્ષા = ગતિ કરવાવાળી રીછણીઓને માટે પ્રવૃત્ત **નૈષાદમ્** - નિષાદ = પારધીના પુત્રને, **પુસ્ત્રવ્યાઘ્રાય** - વ્યાઘ્રની સમાન હિંસક પુરુષને માટે હિતકારી, **દુર્મદમ્** - દુષ્ટ અભિમાનીને, **ગન્ધર્વાપ્સરોભ્યઃ** - ગંધર્વ = ગાવા અપ્સરા = નાયનારી સ્ત્રીઓને માટે પ્રવૃત્ત **ત્રાત્યમ્** - સંસ્કારરહિત = અશુદ્ધ મનુષ્યને, **પ્રયુગ્મ્યઃ** - હળ જોડનાર અર્થાત્ પ્રયોગશીલ માટે પ્રવૃત્ત **ઉન્મત્તમ્** - ઉન્માદના રોગી-ગાંડાને, **સર્પદેવજનેભ્યઃ** - સર્પ અને દેવજનોને માટે હિતકારી **અપ્રતિપદમ્** - અનિશ્ચિત બુદ્ધિ-સંશયાત્માવાળાને, **અયેભ્યઃ** - પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થોને માટે પ્રવૃત્ત **કિતવમ્** - જુગારીને **ઈર્ચ્યતાયૈ** - કંપન = ભયને માટે પ્રવૃત્ત **અકિતવમ્** - જુગાર ન રમનારને, **પિશાચેભ્યઃ** - પિશિત = નાશ પામી છે જેની આશા તે હતાશ જનો અથવા પિશિત = રક્તસહિત કાચું માંસ ખાવા માટે પ્રવૃત્ત પિશાચીને માટે **વિદલકારીમ્** - માંસના પૃથક્-પૃથક્ ટુકડાઓ કરનારીને, **યાતુધાનેભ્યઃ** - યાતુઃ માર્ગોમાં ધન હરણ કરનારાઓને માટે પ્રવૃત્ત **કળ્પકીકારીમ્** - માર્ગોમાં કાંટા વાવનારીને **પરા + સુવ** - દૂર કરો-પૃથક્ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર દુષ્ટોથી મહાત્માઓને દૂરવસાવે છે અને દુષ્ટ પરમેશ્વરથી દૂર રહે છે, તેમ તું દુષ્ટોથી દૂર રહે અને દુષ્ટોને પોતાથી દૂર રાખ અથવા ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા તેને સજ્જન = શ્રેષ્ઠ બનાવ. (૮)

**સન્ધયૈ જારં ગેહાયૌપપતિમાત્યૈ પરિવિત્તં નિર્ઋત્યૈ પરિવિવિદાનમરાદ્ધ્યાઽ-
 એદિધિષુઃપતિં નિષ્કૃત્યૈ પેશસ્કારીઃ સંજ્ઞાનાય સ્મરકારીં પ્રકામોદ્યાયોપસદં
 વર્ણાયानુરુધં બલાયોપદામ્ ॥ ૧ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા સભાપતિ રાજન્ ! આપ **સન્ધયે** - પરસ્ત્રી સમાગમને માટે પ્રવૃત્ત **જારમ્** - વ્યભિચારીને, **ગેહાય** - ગૃહપત્નીના સંગને માટે પ્રવૃત્ત **ઉપપતિમ્** - પતિની વિદ્યમાનમાં બીજા વ્યભિચારી પતિને **આત્યૈ** - કામકીડાને માટે પ્રવૃત્ત **પરિવિત્તમ્** - નાના ભાઈના વિવાહ કરેલ છતાં અવિવાહિત મોટાભાઈને, **નિર્ઋત્યૈ** - પૃથિવીને માટે પ્રવૃત્ત **પરિવિવિદાનમ્** - મોટાભાઈ વારસાભાગને અપ્રાપ્ત તથા વારસાભાગને પ્રાપ્ત નાનાભાઈને, **અરાધ્યૈ** - અવિદ્યમાન પદાર્થને સિદ્ધ કરવા માટે પ્રવૃત્ત **એદિધિષુઃપતિમ્** - મોટી પુત્રી અવિવાહિત રહેવા છતાં નાની પુત્રીથી વિવાહ કરનાર પતિને, **નિષ્કૃત્યૈ** - પ્રાયશ્ચિતને માટે પ્રવૃત્ત **પેશસ્કારીમ્** - રૂપ બનાવનારી વ્યભિચારિણીને **સમ્**, **જ્ઞાનાય** - ઉત્કૃષ્ટ કામના પ્રબોધનને માટે પ્રવૃત્ત **સ્મરકારીમ્** - કામને ઉત્પન્ન કરનારી દૂતિકાને, **પ્રકામોદ્યાય** - અત્યંત કામવાસનાઓથી ઉદ્ધત મનુષ્યને માટે **ઉપસદમ્** - સમીપ રહેનારા સાથીને, **વર્ણાય** - સ્વીકાર કરવા માટે પ્રવૃત્ત **અનુસ્થમ્** - પાછળથી રોકનારાને **બલાય** - બળની વૃદ્ધિ માટે **ઉપદામ્** - ઉપદા = ભેટ = લાંચને **પરાસુવ** - દૂર કરો. (૯)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર વ્યભિચારી આદિ દુષ્ટોને દંડ આપે છે, તેમ તું તેને દંડ આપ [જેમ] પરમેશ્વર પાપનો ત્યાગ કરનાર પર કૃપા કરે છે, તેમ તું ધાર્મિકો પર કૃપા કર. (૯)

**ઉત્સાદેભ્યઃ કુબ્જં પ્રમુદૈં વામનં દ્વાર્ભ્યઃ સ્ત્રામઃ સ્વજ્ઞાયાન્ધમધર્માય બધિરં
પવિત્રાય ભિષજં પ્રજ્ઞાનાય નક્ષત્રદર્શમાશિક્ષાયૈ પ્રશ્નિનમુપશિક્ષાયાઽઅભિપ્રશ્નિનં
મર્યાદાયૈ પ્રશ્નવિવાકમ્ ॥ ૧૦ ॥**

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ **ઉત્સાદેભ્યઃ**-નાશ કરવા માટે પ્રવૃત્ત **કુબ્જમ્**-વકાંગ = કૂબડાને = ઢૂંઢિયાને **પ્રમુદે**-પ્રબલ કામાદિના આનંદને માટે **વામનમ્**-ઠીંગણાને, **દ્વાર્ભ્યઃ**-સુવર્ણ આચ્છાનને માટે પ્રવૃત્ત **સ્ત્રામમ્**-જેના નેત્રથી નિરંતર જળ નીકળે તેને, **સ્વજ્ઞાય**-સૂવા માટે **અન્ધમ્**-અંધને તથા **અધર્માય**-ધર્માચરણથી રહિત **બધિરમ્**-બહેરાને **પરાસુવ**-દૂર-પૃથક્ કરો.

પવિત્રાય-રોગ નિવારણથી શુદ્ધિ કરવા માટે **ભિષજમ્**-વૈદને, **પ્રજ્ઞાનાય**-ઉત્તમ જ્ઞાનની વૃદ્ધિને માટે **નક્ષત્રદર્શમ્**-નક્ષત્રોના દેષ્ટાને અર્થાત્ તેના દ્વારા ઉત્તમ વિષયોને બતાવનાર ગણિતજ્ઞ જ્યોતિષીને, **આશિક્ષાયૈ**-સારી રીતે વિદ્યા ગ્રહણ કરવાને માટે **પ્રશ્નિનમ્**-પ્રશસ્ત પ્રશ્નકર્તાને, **ઉપશિક્ષાયૈ**-ઉપવેદ આદિની વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે **અભિ**, **પ્રશ્નિનમ્**-સન્મુખ અનેક પ્રશ્ન કરનારને, **મર્યાદાયૈ**-ન્યાય-અન્યાયની વ્યવસ્થાને માટે **પ્રશ્નવિવાકમ્**-પ્રશ્નોનું વિવેચન કરી ઉત્તર આપનારને **આસુવ**-ઉત્પન્ન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ ઈશ્વર પાપાચરણનાં ફળ પ્રદાન સ્વરૂપ મનુષ્ય આદિ કૂબડા, ઠીંગણા, ચિપડા [જલસ્રાવી નેત્રવાળા], આંધળા અને બહેરાં બનાવે છે, વૈદ, જ્યોતિષી, અધ્યાપક, પરીક્ષક, પ્રશ્નોત્તરનું વિવેચન કરનારાઓને શ્રેષ્ઠ શ્રેષ્ઠ કર્મોના ફળ પ્રદાન સ્વરૂપ પવિત્રતા, બુદ્ધિ, વિદ્યાગ્રહણ, અધ્યાપન, પરીક્ષણ તથા પ્રશ્નોત્તર કરવાનું સામર્થ્ય પ્રદાન કરે છે, તેમ તું જે-જે અંગથી મનુષ્ય કુચેષ્ટા કરે છે, તે-તે અંગ ઉપર દંડ નિપાતન કરીને તથા વૈદ આદિની પ્રતિષ્ઠા કરવા દ્વારા રાજધર્મની નિરંતર ઉન્નતિ કર. (૧૦)

**અર્મેભ્યો હસ્તિપં જ્વાયાશ્વપં પુષ્ટ્યૈં ગોપાલં વીર્યાયાવિપાલં તેજસેઽજપાલમિરાયૈ
કીનાશં કીલાલાય સુરાકારં ભદ્રાય ગૃહપઃ શ્રેયસે વિક્તધમાધ્યક્ષ્યાયાનુ-
ક્ષત્તારમ્ ॥ ૧૧ ॥**

પદાર્થ : હે ઈશ્વર વા રાજન્ ! આપ **અર્મેભ્યઃ**-દેશાન્તરને પ્રાપ્ત કરાવવા માટે **હસ્તિપમ્**-હાથીઓના પાલકને, **જવાય**-વેગને માટે **અશ્વપમ્**-ઘોડાના રક્ષક વા શિક્ષકને, **પુષ્ટ્યૈ**-પુષ્ટિને માટે **ગોપાલમ્**-ગાયોના પાલકને, **વીર્યાય**-વીર્યની વૃદ્ધિને માટે **અવિપાલમ્**-ઘેટાના રક્ષકને, **તેજસે**-તેજ વૃદ્ધિને માટે **અજપાલમ્**-બકરાઓના પાલકને, **ઝરાયૈ**-અન્ન આદિની વૃદ્ધિને માટે **કીનાશમ્**-ખેડૂતને, **કીલાલાય**-અન્નને માટે **સુરાકારમ્**-સોમ ઔષધિના રસને બનાવનારને, **ભદ્રાય**-કલ્યાણને માટે **ગૃહપમ્**-ઘરના રક્ષકને, **શ્રેયસે**-ધર્મ, અર્થ અને કામની પ્રાપ્તિને માટે **વિક્તધમ્**-ધન ધારણ કરનારને, **આધ્યક્ષ્યાય**-અધ્યક્ષોના સ્વત્વને માટે **અનુક્ષત્તારમ્**-સારથિને અનુકૂળ મનુષ્યને **આસુવ**-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ સુશિક્ષિત હાથી આદિના રક્ષક પુરુષનો સંગ્રહ કરીને તેના દ્વારા અનેક

વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

ભાયૈ દાર્વાહારં પ્રભાયાઽઅગ્ન્યેધં બ્રહ્મસ્ય વિષ્ટપાયાભિષેક્તારં વર્ષિષ્ઠાય
નાકાય પરિવેષ્ટારં દેવલોકાય પેશિતારં મનુષ્યલોકાય પ્રકરિતારં સર્વેભ્યો
લોકેભ્યઽપસેક્તારમવઽઋત્યૈ વધાયોપમન્થિતારં મેધાય વાસઃપલ્પૂલીં પ્રકામાય
રજયિત્રીમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ભાયૈ-દીપ્તિને માટે દાર્વાહારમ્-દારુ =લાકડા લાવનાર કઠિયારાને,
પ્રભાયૈ-કાન્તિ-શોભાને માટે અગ્ન્યેધમ્-અગ્નિ અને ઈંધનને, બ્રહ્મસ્ય-ઘોડાઓના વિષ્ટપાય-માર્ગને માટે
અભિષેક્તારમ્-અભિષેક-રાજતિલક અથવા છંટકાવ કરનારને, વર્ષિષ્ઠાય-અતિશ્રેષ્ઠ નાકાય-સર્વ દુઃખોથી
રહિત સુખવિશેષને માટે પરિવેષ્ટારમ્-ભોજન પીરસનારને, દેવલોકાય-વિદ્વાનોનાં દર્શનને માટે પેશિતારમ્-
વિદ્યાના અવયવના જ્ઞાતાને, મનુષ્યલોકાય-મનુષ્યતાનાં દર્શનના પ્રકરિતારમ્-દોષોના વિક્ષેપ કરનારને,
સર્વેભ્યઃ-સર્વ લોકેભ્યઃ-લોકોને માટે અપસેક્તારમ્-ઉપસેચન કરનારને, મેધાય-સંગમને માટે
વાસઃપલ્પૂલીમ્-વસ્ત્રોને શુદ્ધ કરનારી ઔષધિને પ્રકામાય-ઉત્તમ કામનાની સિદ્ધિને માટે રજયિત્રીમ્-
વિવિધ ઉત્તમ રંગ કરનારી ઔષધિને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

અવઋત્યૈ-વિરુદ્ધ પ્રાપ્તિ = અનિષ્ટને માટે વધાય-વધ કરવાને પ્રવૃત્ત અપમન્થિતારમ્-તાડન આદિથી
પીડા આપનાર દુષ્ટને અર્થાત્ સમીપમાં મંથન કરનાર મનુષ્યને પરાસુવ-દૂર કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ આદિ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાંથી સર્વ સામગ્રીઓ ગ્રહણ કરવી જોઈએ.
તેના દ્વારા શરીરબળ, વિદ્યા અને ન્યાયનો પ્રકાશ, મહાન સુખ રાજ્યાભિષેક, દુઃખનો વિનાશ, વિદ્વાનોનો
સંગ, મનુષ્ય સ્વભાવ, વસ્તુ આદિની પવિત્રતાને સિદ્ધ કરવી જોઈએ તથા વિરોધનો ત્યાગ કરવો
જોઈએ. (૧૨)

ઋતયૈ સ્તેનહૃદયં વૈરહત્યાય પિશુનં વિવિક્ત્યૈ ક્ષત્તારમૌપદ્રષ્ટ્રાયાનુક્ષત્તારં
બલાયાનુચરં ભૂમ્ને પરિષ્કન્દં પ્રિયાર્ય પ્રિયવાદિનમરિષ્ટ્યાઽઅશ્વસાદં સ્વર્ગાય
લોકાય ભાગદુઘં વર્ષિષ્ઠાય નાકાય પરિવેષ્ટારમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે પરમાત્મન્ વા રાજન્ ! આપ ઋત્યૈ-હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત સ્તેનહૃદયમ્-ચોરની સમાન
છળ-કપટી તુલ્ય હૃદયવાળા મનુષ્યને, વૈરહત્યાય-વેર હત્યા જે કર્મમાં હોય તેને માટે પ્રવૃત્ત પિશુનમ્-
વિરુદ્ધ સૂચના આપનાર નિંદક-ચાડી ખાનારને પરાસુવ-દૂર કરો.

વિવિક્ત્યૈ-વિવેક કરવા માટે પ્રવૃત્ત ક્ષત્તારમ્-ક્ષત = વિનાશના તારક ધર્માત્માને, ઔપદ્રષ્ટ્રાયા-
ઉપદ્રષ્ટાને માટે અનુક્ષત્તારમ્-ધર્માત્માનાં અનુકૂળ વર્તનારને, બલાય-બળને માટે અનુચરમ્-સેવકને,
ભૂમ્ને-બહુ સંખ્યાને માટે પરિષ્કન્દમ્-સર્વત્રથી વીર્યનું સિંચન કરનારને, પ્રિયાર્ય-પ્રીતિને માટે પ્રિયવાદિનમ્-
પ્રિયવાદીને, અરિષ્ટ્યૈ-કુશળ પ્રાપ્તિને માટે અશ્વસાદમ્-ઘોડેસવારને, સ્વર્ગાય-સુખવિશેષ લોકાય-દર્શન

વા સંચય કરવા માટે ભાગદુધમ્-ભાગોને પૂર્ણ કરનારને, વર્ષિષ્ટાય-અતિશ્રેષ્ઠ નાકાય-સર્વ દુઃખોથી રહિત આનંદને માટે પરિવેષ્ટારમ્-સર્વત્રથી વિદ્યાથી વ્યાપ્ત વિદ્વાનને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ મનુષ્યોએ દુષ્ટોનો સંગ છોડીને, શ્રેષ્ઠોનો સંગ કરીને, વિવેક આદિ ગુણોને ઉત્પન્ન કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૧૩)

મન્યવેઽયસ્તાપં ક્રોધાય નિસરં યોગાય યોક્તારઃ શોકાયાઽભિસર્તારિં ક્ષેમાય વિમોક્તા-રંમુત્કૂલનિકૂલેભ્યઃસ્ત્રિષ્ઠિનં વપુષે માનસ્કૃતઃ શીલાયાઽઞ્જનીકારીં નિર્ઋત્યૈ કોશકારીં યમાયાસૂમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ મન્યવે-આંતરિક ક્રોધને માટે પ્રવૃત્ત અયસ્તાપમ્-લોભંડ અને સુવર્ણને તપાવનારને, ક્રોધાય-બાહ્ય ક્રોધને માટે પ્રવૃત્ત નિસરમ્-નિશ્ચય યાત્રા કરનારને, શોકાય-શોકને માટે પ્રવૃત્ત અભિસર્તારમ્-અભિસારકને, યમાય-દંડ આપવા પ્રવૃત્ત થયેલા અસૂમ્-ક્રોધથી હાથ આદિ અહીં-તહીં મારનાર સ્ત્રીને પરાસુવ-દૂર કરો.

યોગાય-યોગાભ્યાસને માટે પ્રવૃત્ત યોક્તારમ્-યોગીને, ક્ષેમાય-રક્ષાને માટે પ્રવૃત્ત વિમોક્તારમ્-દુઃખથી છોડાવનારને, ઉત્કૂલનિકૂલેભ્યઃ-ઊંચા-નીચા કિનારા પર ચઢાવવા-ઉતારવા માટે ત્રિષ્ઠિનમ્-જળ, સ્થળ અને અન્તરિક્ષ ત્રણેયમાં રહેનારા વિમાનાદિ યાનોથી યુક્ત પુરુષને, વપુષે-શરીરના હિતને માટે માનસ્કૃતમ્-મનથી કરેલ વિચારોમાં કુશળ મનુષ્યને, શીલાય-જિતેન્દ્રિયતા આદિ ઉત્તમ સ્વભાવવાળાને માટે આઞ્જનીકારીમ્-પ્રસિદ્ધ ક્રિયા કરનારી સ્ત્રીને નિર્ઋત્યૈ-ભૂમિને માટે કોશકારીમ્-કોશ ઉત્પન્ન કરનારી સ્ત્રીને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! જે તપેલા લોઢાની સમાન ક્રોધી, ખીજાઓને દુઃખ આપનાર અને ધાર્મિક નિયમોનો નાશ કરનારા હોય, તેને દંડિત કરીને, યોગાભ્યાસી આદિ જનોનો સત્કાર કરીને તથા સર્વત્ર યાન ચલાવનારનો સંગ્રહ કરીને તમારે યથારીતિ સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૪)

યમાય યમસૂમર્થર્વ્ભ્યોઽવતોકાઃ સવંત્સરાય પર્યાયિણીં પરિવત્સરાયા-વિજાતામિદાવત્સરાયાતીત્વરીમિદ્વત્સરાયાતિષ્કદ્વરીં વત્સરાય વિર્જર્જરાઃ સવંત્સરાય પલિવ્નીમૃભુભ્યોઽજિનસન્ધઃ સાધ્યેભ્યઃચર્મન્મ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ યમાય-નિયમકર્તાને માટે યમસૂમ્-નિયંતાને ઉત્પન્ન કરનારી સ્ત્રીને, અર્થર્વ્ભ્યઃ-અહિંસકોને માટે અવતોકામ્-જેના સંતાન બહાર નીકળી ગયા છે તે સંતાનરહિત સ્ત્રીને, સવંત્સરાય-પ્રથમ વર્ષને માટે પર્યાયિણીમ્-સર્વત્રથી કાલ ક્રમને જાણનારીને પરિવત્સરાય-દ્વિતીયવર્ષના નિર્ણયને માટે અવિજાતામ્-અપ્રસૂતા બ્રહ્મચારિણીને, ઇદાવત્સરાય-તૃતીય વર્ષમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે અતીત્વરીમ્-અત્યંત ચાલનારીને, ઇદ્વત્સરાય-પાંચમા વર્ષને માટે અતિષ્કદ્વરીમ્-અતિજ્ઞાનવાળીને વત્સરાય-

સામાન્ય વર્ષને માટે વિજર્જરામ્-વૃદ્ધા સ્ત્રીને, સંવત્સરાય-ચોથા વર્ષને માટે પલિક્વીમ્-સફેદ વાળવાળીને, ઋષ્મુખ્યઃ-બુદ્ધિમાનોને માટે અજિનસન્ધમ્-અજેય લોકોની સાથે સંધિ કરનારને, સાધ્યેભ્યઃ-સાધ્ય યોગ્ય કાર્યોને માટે ચર્મન્મ-ચર્મ = વિજ્ઞાનનો અભ્યાસ કરનાર પુરુષને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : પ્રભવ આદિ સાઠ સંવત્સરો - વર્ષોમાં પાંચ-પાંચ કરીને બાર યુગ બને છે. પ્રત્યેક યુગમાં ક્રમથી સંવત્સર, પરિવત્સર, ઈદાવત્સર, અનુવત્સર તથા ઈદ્વત્સર એ પાંચ નામોવાળા પાંચ વર્ષના હોય છે. કાળનાં સમસ્ત અવયવોનાં મૂળભૂત તે વર્ષોને જાણીને વિશેષ રૂપથી જે સ્ત્રીઓ વ્યર્થ [સમય] ગુમાવતી નથી, તે સર્વ પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરી લે છે. (૧૫)

સરોંભ્યો ધૈવરમુપસ્થાવરાભ્યો દાશં વૈશન્તાભ્યોં બૈન્દં નંદ્વલાભ્યઃ શૌષ્કલં પારાયં માર્ગારમવારાયં કૈવર્ત્તીં તીર્થેભ્યઃ આન્દં વિષમેભ્યો મૈનાલંઃ સ્વનેંભ્યઃ પર્ણકં ગુહાંભ્યઃ કિરાતંઃ સાનુંભ્યો જમ્ભકં પર્વતેભ્યઃ કિમ્પૂરુષમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ સરોંભ્યઃ-મોટા તળાવોને પાર કરવા માટે ધૈવરમ્-ધીવર = નાવિક = ખલાસીના પુત્રને, ઉપસ્થાવરાભ્યઃ-ઉપસ્થિત અવર = નિષ્કૃટ ક્રિયાઓને માટે દાશમ્-દાસને વૈશન્તાભ્યઃ-વેશન્ત = નાના જલાશયોને માટે વૈન્દમ્-નિષાદ = ભીલના પુત્રને, નંદ્વલાભ્યઃ-નડ = ઘાસ વિશેષવાળી ભૂમિઓને માટે શૌષ્કલમ્-માઇલી પર જીવનારાને, વિષમેભ્યઃ-વિકટ દેશોને માટે મૈનાલમ્-મૈન = કામદેવને રોકનાર જિતેન્દ્રિયને, અવારાય-પોતાની તરફ આવનારને માટે કૈવર્ત્તમ્-જલમાં નાવને આરપાર લઈ જનાર-નાવિકને, તીર્થેભ્યઃ-પાર કરવાના સાધનો માટે આન્દમ્-પુલ આદિ બાંધનારાને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

પારાય-હરણ આદિની ચેષ્ટાની સમાપ્તિ માટે પ્રવૃત્ત, માર્ગારમ્-શિકારીના પુત્રને, સ્વનેંભ્યઃ-શબ્દોને માટે પર્ણકમ્-રક્ષા કરવામાં નિંદિત ભીલને, ગુહાંભ્યઃ-કંદરા-ગુફાઓને માટે કિરાતમ્-કિરાત = પહાડી જંગલી જનવિશેષને, સાનુંભ્યઃ-શિખરો પર રહેવાને માટે પ્રવૃત્ત જમ્ભકમ્-નાશ કરનારને, પર્વતેભ્યઃ-પર્વતોને માટે કિમ્પૂરુષમ્-જંગલી કુત્સિત મનુષ્યોને પરાસુવ-દૂર કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોને અનુકૂળ કર્મોથી નાવિક આદિ લોકોની રક્ષા કરીને તથા શિકારી આદિ લોકોનો પરિત્યાગ કરીને ઉત્તમ સુખ પ્રાપ્ત કરે. (૧૬)

બીભ્ત્સાયૈ પૌલ્કસં વર્ણાય હિરણ્યકારં તુલાયૈ વાણિજં પશ્ચાદોષાય ગ્લાવિનં વિશ્વેંભ્યો ભૂતેભ્યઃ સિધ્મલં ભૂત્યૈ જાગરણમભૂત્યૈ સ્વપ્નમાત્યૈ જનવાદિનં વ્યૂદ્ધ્યાઽપગલ્ભઃ સંશરાય પ્રચ્છિદમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ બીભ્ત્સાયૈ-ધમકાવવા માટે પ્રવૃત્ત પૌલ્કસમ્-અંત્યજના પુત્રને, પશ્ચાદોષાય-પાછળથી દોષ દેવામાં પ્રવૃત્ત ગ્લાવિનમ્-ગ્લાવિ કરનારાને, અભૂત્યૈ-અનૈશ્વર્યને માટે

સ્વપનમ્-નિદ્રાને વ્યૂદ્ધચૈ-સમૃદ્ધિના અભાવને માટે અપગલ્ભમ્-પ્રગલ્ભતા રહિતને, સંશરાય-સમ્યક્ હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત પ્રચ્છદમ્-અધિક છેદન કરનારને પરાસુવ-દૂર કરો.

વર્ણાય-સુરૂપ બનાવવા માટે હિરણ્યકારમ્-સોની અથવા સૂર્યને તુલાયૈ-તોલવા માટે વાણિજમ્-વાણિયાના પુત્રને, વિશ્વેભ્યઃ-સર્વ ભૂતેભ્યઃ-પ્રાણીઓને માટે સિધ્ધમલમ્-સુખસાધકવાળા જનને, ભૂત્યૈ-ઐશ્વર્યને માટે જાગરણમ્-જાગરણને, આર્ત્યૈ-પીડાની નિવૃત્તિને માટે જનવાદિનમ્-મનુષ્યોની પ્રશંસાને યોગ્ય વાદવિવાદ કરનારા ઉત્તમ મનુષ્યને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો નીચનો સંગ છોડીને ઉત્તમોનો સંગ કરે છે, તેઓ સમસ્ત વ્યવહારોની સિદ્ધિથી ઐશ્વર્યવાન બની જાય છે. જે આળસરહિત બનીને સિદ્ધિને માટે પ્રયત્ન કરે છે તે સુખને તથા જે આળસુ છે, તે દરિદ્રતાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

અક્ષરાજાય કિતવં કૃતાયાદિનવદર્શ ત્રેતાયૈ કલ્પિનં દ્વાપરાયાધિકલ્પિ-
નમાસ્કન્દાય સભાસ્થાણું મૃત્યવે ગોવ્યચ્છમન્તકાય ગોઘાતં ક્ષુધે યો ગાં વિકૃન્તન્તં
ભિક્ષમાણઽડપ્ તિષ્ઠતિ દુષ્કૃતાય ચરકાચાર્ય પાપ્મને સૈલગમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ અક્ષરાજાય-અક્ષ = પાસાથી રમનારાના રાજાને માટે હિતકારી કિતવમ્-જુગાર રમનારાઓને, મૃત્યવે-મારવા માટે ગોવ્યચ્છમ્-ગાયોમાં વિવિધ ચેષ્ટા કરનારને, અન્તકાય-નાશને માટે ગોઘાતમ્-ગાયોના ઘાતકને, ક્ષુધે-ભૂખને માટે યઃ-જે ગામ્-ગાયોને કાપે છે તે વિકૃન્તન્તમ્-કસાઈને, જે ભિક્ષમાણઃ-ભીખ માગતા ઉપતિષ્ઠતિ-ઉપસ્થિત થાય છે તે દુષ્કૃતાય-દુષ્ટ આચરણને માટે પ્રવૃત્ત ચરકાચાર્યમ્-ચરક = ભક્ષણ કરનારના ગુરુને, પાપ્મને-પાપાત્માને માટે હિતકારી સૈલગમ્-દુષ્ટનના પુત્રને પરાસુવ-દૂર કરો.

કૃતાય-કરેલાને [કૃત = સતયુગને] માટે આદિનવદર્શમ્-આદિમાં નવીન પુરુષોને જોનારને, ત્રેતાયૈ-ત્રણ હોવાને [ત્રેતાને] માટે કલ્પિનમ્-પ્રશંસનીય સામર્થ્યવાનને, દ્વાપરાય-જેના અહીં બે સંબંધી છે તેના માટે [દ્વાપરને માટે] અધિકલ્પિનમ્-અધિકતર સામર્થ્યયુક્તને, આસ્કન્દાય-દુષ્ટોના સર્વત્રથી શોષણને માટે સભાસ્થાણમ્-સભામાં સ્થિત પુરુષને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે જ્યોતિષ શાસ્ત્રના જ્ઞાતા આદિ સત્ય આચરણવાળા વિદ્વાનોનો સત્કાર કરે છે અને ગાયોના ઘાતક આદિ દુષ્ટ આચરણવાળા લોકોનું તાડન કરે છે, તેઓ રાજ્ય કરવાને સમર્થ બને છે. (૧૮)

પ્રતિશ્રુત્કાયાઽઅર્ત્તનં ઘોષાય ભુષમન્તાય बहुवादिनमन्ताय मूकꣳ शब्दाया-
डम्बराघातं महसे वीणावादं क्रोशाय तूणवध्ममवरस्पराय शङ्खध्मं वनाय
वनपमन्यतौरण्याय दावपम् ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ પ્રતિશ્રુત્કાયૈ-પ્રતિજ્ઞા કરનારી સ્ત્રીને માટે અર્ત્તનમ્-વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવનારને, ઘોષાય-ઘોષણને માટે ભષમ્-ઉદ્ઘોષકને, અન્તાય-સમીપવર્તી અથવા સસીમને માટે બહુવાદિનમ્-અધિક બોલનારને, અનન્તાય-અસીમને માટે મૂકમ્-વાણી રહિતને, મહસે-મહાનને માટે વીણાવાદં-વીણા વગાડનારને, અવસ્પરાય-અવરવર્તી લોકોથી પરવર્તી પુરુષને માટે શઙ્ઘમ્-શંખ વગાડનારને, વનાય-વનને માટે વનપમ્-વનના રક્ષકને, આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

શબ્દાય-શબ્દ કરવા માટે પ્રવૃત્ત આડમ્બરાઘાતમ્-શોરબકોર કરનારને, ક્રોશાય-રડવા માટે પ્રવૃત્ત તૂણવધ્મમ્-તૂણવ = વાજિંત્ર વિશેષ વગાડનારને, અન્યતોરણ્યાય-અન્ય અર્થાત્ ઈશ્વરીય સૃષ્ટિથી જ્યાં વન હોય તે દેશના વિનાશને માટે પ્રવૃત્ત દાવપમ્-વનના બાળનારને પરાસુવ-દૂર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના સ્ત્રી-પુરુષો આદિની સાથે અધ્યાપન અને સંવાદ આદિ વ્યવહારો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૯)

નર્માય પુંશ્ચલૂંઃ હસાય કારિં યાદસે શાબલ્યાં ગ્રામણ્યું ગર્ણકમભિક્રોશકં તાન્મહસે વીણાવાદં પાણિઘ્નં તૂણવધ્મં તાન્નૃત્તાયાનન્દાય તલવમ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ નર્માય-ક્રીડાને માટે પ્રવૃત્ત પુંશ્ચલૂમ્-વ્યભિચારિણી સ્ત્રીને, હસાય-હસવાને પ્રવૃત્ત થયેલને કારિમ્-વિક્ષિપ્ત પાગલને, યાદસે-જલ-જંતુઓને મારવાને માટે પ્રવૃત્ત શાબલ્યામ્-શબલ = કાબરા વર્ણના મનુષ્યની પુત્રીને પરાસુવ-દૂર કરો.

ગ્રામણ્યમ્-ગ્રામના નાયક, ગર્ણકમ્-ગણિતના જ્ઞાતા-જ્યોતિષી, અભિક્રોશકમ્-સર્વત્રથી આહ્વાન કરનારા તાન્-જનોને મહસે-સત્કારને માટે, વીણાવાદમ્-વીણા વગાડનાર, પાણિઘ્નમ્-બન્ને હાથોથી ઢોલક વગેરે વગાડનાર, તૂણવધ્મમ્-તૂણવ નામક વાજિંત્ર વગાડનાર તાન્-જનોને નૃત્તાય-નાચને માટે, આનન્દાય-આનંદને માટે તલવમ્-તાળી આદિ પાડનારને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન વા પ્રસિદ્ધ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ખરાબ હાસ્ય અને વ્યભિચાર આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, ગાવું, વગાડવું અને નૃત્ય આદિની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૨૦)

અગ્નયે પીવાનં પૃથિવ્યૈ પીઠસર્પિણં વાયવે ચાણ્ડાલમન્તરિક્ષાય વંશનર્ત્તિનં દિવે ર્ખલતિઃ સૂર્યાય હર્યક્ષં નક્ષત્રેભ્યઃ કિર્મિરં ચન્દ્રમસે કિલાસમહ્નૈ શુક્લં પિંઙ્ગાક્ષઃ રાત્ર્યૈ કૃષ્ણં પિંઙ્ગાક્ષમ્ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ અગ્નયે-અગ્નિને માટે પીવાનમ્-સ્થૂળ પદાર્થને, પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીને માટે પીઠસર્પિણમ્-પગ વિના ચાલનારા-પૃષ્ઠથી સરકનારા સર્પ આદિને, અન્તરિક્ષાય-સૂર્ય અને પૃથિવીની મધ્યમાં રહેલ આકાશને માટે વંશનર્ત્તિનમ્-વાંસ પર નાચનાર નટને, સૂર્યાય-સૂર્યનો તાપ

અને પ્રકાશ મળવા માટે હર્યક્ષમ્-હરિ = વાંદરાની નાની આંખોની સમાન ઠંડા પ્રદેશના મનુષ્યોને, ચન્દ્રમસે-ચંદ્રમાની સમાન આનંદ આપવા માટે કિલાસમ્-અલ્પ શ્વેત વર્ણવાળાને, અહ્ને-દિવસને માટે શુક્લમ્-શુદ્ધ = શ્વેત અને પિઙ્ગાક્ષમ્-પીંગળી આંખોવાળાને આસુવ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

વાયવે-વાયુના સ્પર્શ માટે ચાણ્ડાલમ્-ચાંડાળને, દિવે-કીડાને માટે પ્રવૃત્ત ખલતિમ્-માથામાં ટાલવાળાને, નક્ષત્રેભ્યઃ-રાજ્ય વિરોધને માટે પ્રવૃત્ત જનોને માટે કિર્મિસમ્-કાબરા રંગવાળાને, રાત્ર્યૈ-રાત્રિને માટે કૃષ્ણમ્-કાળા રંગવાળાને તથા પિઙ્ગાક્ષમ્-પીંગળી આંખોવાળાને પરાસુવ-દૂર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : અગ્નિ સ્થૂળને બાળી શકે છે, સૂક્ષ્મને નહિ. પૃથિવી પર પીઠ પર સરકનારા સર્પ આદિ નિરંતર વિચરે છે, અન્ય પક્ષી આદિ નહિ. ચાંડાલના શરીરથી આવેલો વાયુ દુર્ગંધયુક્ત હોવાથી સેવન કરવા યોગ્ય હોતો નથી. (૨૧)

અથૈતાનષ્ટૌ વિરૂપાના લભ્તેઽતિદીર્ઘં ચાતિહસ્વં ચાતિસ્થૂલં ચાતિકૃષ્ણં
ચાતિશુક્લં ચાતિકૃષ્ણં ચાતિકુલ્વં ચાતિલોમશં ચ । અશૂદ્રાઽઅબ્રાહ્મણાસ્તે
પ્રાજાપત્યાઃ । માગ્ધઃ પુંશ્ચલી કિતવઃ ક્લીબોઽશૂદ્રાઽઅબ્રાહ્મણાસ્તે પ્રાજાપત્યાઃ
॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજા લોકો ! જેમ વિદ્વાન્ અતિદીર્ઘમ્-અતિ લાંબા ચ-અને અતિહસ્વમ્-અતિ ઠીંગણા ચ-અને અતિસ્થૂલમ્-અતિ જાડા ચ-અને અતિકૃષ્ણમ્-અતિ પાતળા ચ-અને અતિશુક્લમ્-અતિ ગૌર - શ્વેતવર્ણ ચ-અને અતિકૃષ્ણમ્-અતિ કાળા ચ-અને અતિકુલ્વમ્-લોભરહિત = શરીર પર રૂંવાડા વગરના ચ-અને અતિલોમશમ્-અત્યંત લોમયુક્ત [અર્થાત્ સર્વાંગમાં તથા કર્ણ આદિ અંગ-પ્રત્યાંગો પર અતિ રૂંવાડાવાળા] ચ-પણ એતાન્-એ વિસ્થાન્-વિવિધ સ્વરૂપવાળા અષ્ટૌ-આઠ પ્રાણીઓને આલભતે-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો.

અથ-અને અશૂદ્રાઃ-શૂદ્ર નહિ, અબ્રાહ્મણાઃ-બ્રાહ્મણ નહિ તેઓ પ્રાજાપત્યાઃ-પ્રજાપતિ દેવતાના ગુણોથી યુક્ત છે તે-તેઓ પણ પ્રાપ્ત કરે.

જે માગ્ધઃ-મનુષ્યોમાં નિંદિત-નીચ પુંશ્ચલી-પુરુષોની સાથે ચંચળ ચિત્તવાળી વ્યભિચારિણી, કિતવઃ-જુગારી, ક્લીબઃ-નપુંસક છે તથા અશૂદ્રાઃ-જેનામાં શૂદ્ર નથી તથા અબ્રાહ્મણાઃ-બ્રાહ્મણ નથી. તે ચાંડાલોને દૂર વસાવવા જોઈએ. જે પ્રાજાપત્યાઃ-રાજા વા ઈશ્વરના સંબંધી અર્થાત્ પ્રજાપતિના ગુણોથી યુક્ત છે, તે-તેઓને સમીપમાં વસાવવા જોઈએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાનો સૂક્ષ્મ અને વિશાળ પદાર્થોને જાણીને યથાયોગ્ય વ્યવહારને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ સિદ્ધ કરે.

સર્વ લોકોએ પ્રજાપતિ ઈશ્વરની ઉપાસના નિત્ય કરવી જોઈએ. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વરનું સ્વરૂપ તથા રાજાના કૃત્યોનું વર્ણન હોવાથી

આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે. તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથૈકત્રિંશત્તમાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સહસ્ત્રશીર્ષા પુરુષઃ સહસ્ત્રાક્ષઃ સહસ્ત્રપાત્ ।

સ ભૂમિઃ સર્વત્ સ્પૃત્વાઽત્યતિષ્ઠદ્દશાઙ્ગુલમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સહસ્ત્રશીર્ષા-સર્વ પ્રાણીઓનાં સહસ્ર = અસંખ્ય શિર છે, સહસ્ત્રાક્ષઃ-સહસ્ર = અસંખ્ય નેત્રો છે અને સહસ્ત્રપાત્-અસંખ્ય પાદ = પગ જેની મધ્યમાં છે, તે પુસ્ત્રઃ-સર્વત્ર પરિપૂર્ણ વ્યાપક જગદીશ્વર છે.

સઃ-તે સર્વતઃ-સર્વ દેશોથી ભૂમિમ્-ભૂગોળને સ્પૃત્વા-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને દશાઙ્ગુલમ્-પાંચ સ્થૂલભૂત અને પાંચ સૂક્ષ્મભૂત અર્થાત્ દશ અંગુલિઓ = અવયવવાળા જગતનું અતિ + અતિષ્ઠત્-ઉલ્લંઘન કરીને સ્થિત છે, અર્થાત્ સર્વથી પૃથક્ પણ સ્થિર છે. તે જગદીશ્વરની ઉપાસના કરો. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે [પુરુષ =] પૂર્ણ પરમાત્મામાં અમારા સર્વનાં અસંખ્ય શિર, નેત્ર અને પગ આદિ અંગો વિદ્યમાન છે, જે ભૂમિ આદિથી સંકેતિત પાંચ સ્થૂલ અને પાંચ સૂક્ષ્મભૂતોથી યુક્ત સંસારને પોતાની સત્તાથી પરિપૂર્ણ કરીને, જ્યાં સંસાર નથી, ત્યાં પણ પૂર્ણ છે.

તે સર્વના નિર્માણકર્તા પરિપૂર્ણ, સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, નિત્ય-શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્તસ્વભાવવાળા પરમેશ્વરને છોડીને અન્યની ઉપાસના તમે કદી પણ ન કરો, પરંતુ તે ઈશ્વરની ઉપાસનાથી ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષને પ્રાપ્ત કરો. (૧)

પુરુષઽએવેદઃ સર્વં યદ્ ભૂતં યદ્દ્ ભાવ્યમ્ ।

ઉતામૃતત્વસ્યેશાનો યદન્નેનાતિરોહતિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે ભૂતમ્-ઉત્પન્ન થયેલું ચ-અને યત્-જે ભાવ્યમ્-ભવિષ્યમાં ઉત્પન્ન થશે, ઉત-અને યત્-જે અન્નેન-પૃથિવી આદિના સંબંધથી અતિરોહતિ-અત્યંત વિસ્તૃત છે, તે ઇદમ્-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષરૂપ સર્વમ્-સમસ્ત જગતને અમૃતત્વસ્ય-અવિનાશી મોક્ષસુખના તથા કારણ = પ્રકૃતિના ઈશાનઃ-અધિષ્ઠાતા પુસ્ત્રઃ-સત્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોથી પરિપૂર્ણ પરમાત્મા એવ-જ રચે છે. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે જ્યારે-જ્યારે સૃષ્ટિ બની ત્યારે-ત્યારે [તેને] રચી છે, વર્તમાનમાં તેને ધારણ કરી રહેલ છે, ફરી તેનો સંહાર કરીને રચશે, જેના આધારથી સર્વ વિદ્યમાન છે અને વૃદ્ધિ પામે છે, તે પરેશ = સર્વશ્રેષ્ઠ અધિષ્ઠાતા પરમેશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. તેના સિવાય બીજા કોઈની નહિ. (૨)

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અસ્ય-એ પરમેશ્વર જગદીશ્વરનું એતાવાન્-આ દેશ્ય-અદેશ્ય બ્રહ્માંડ મહિમા-મહિમાસૂચક છે અતઃ-એ બ્રહ્માંડથી એ પૂસ્મઃ-પરિપૂર્ણ પરમાત્મા જ્યાયાન્-અતિ પ્રશંસિત અને મહાન છે; ચ-અને અસ્ય-એ જગદીશ્વરના વિશ્વા-સર્વ ભૂતાનિ-પૃથિવી આદિ ચરાચર જગત એ પાદઃ-અંશની સમાન છે; અસ્ય-એ જગત્ સ્રષ્ટાના ત્રિપાદ્-ત્રણ પગ-અંશ અમૃતમ્-નાશરહિત છે, જે દિવિ-દ્યોતનાત્મક = પ્રકાશાત્મક સ્વસ્વરૂપમાં વિદ્યમાન રહે છે. (૩)

ભાવાર્થ : આ સમસ્ત સૂર્ય અને ચંદ્ર આદિ લોકલોકાન્તરરૂપ ચરાચર જગત છે, તે ચિત્ર-વિચિત્ર રચનાઓનાં અનુમાનથી ઈશ્વરનાં મહત્ત્વનું પ્રતિપાદન કરીને, ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલયનાં રૂપથી ત્રણેય કાળમાં ઘ્રાસ અને વૃદ્ધિ આદિના દ્વારા પરમેશ્વરના ચતુર્થ અંશમાં રહે છે; [પરંતુ] એ [ઈશ્વર]ના ચતુર્થ અંશની સીમા સુધી પણ પહોંચી શકતું નથી.

એના સામર્થ્યના ત્રણ ભાગ પોતાના અવિનાશી મોક્ષસ્વરૂપમાં સદા વર્તમાન રહે છે. આ કથનથી તે [ઈશ્વર]ની અનન્તતાની હાનિ થતી નથી. પરંતુ જગતની અપેક્ષાએ તેની મહત્તા અને [તેની અપેક્ષા] જગતની ન્યૂનતા બતાવે છે. (૩)

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानश्नेऽअभि ॥ ४ ॥

પદાર્થ : પૂર્વોક્ત ત્રિપાત્-ત્રણ અંશોવાળા પુસ્મઃ-પાલક પરમેશ્વર ઊર્ધ્વઃ-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ સંસારથી પૃથક્ મુક્તિસ્વરૂપમાં ઝત્, એત્-ઉદયને પ્રાપ્ત થાય છે.

અસ્ય-એ પુરુષનો પાદઃ-એક ભાગ ઙ્હ-આ જગતમાં પુનઃ-વારંવાર ઉત્પત્તિ અને પ્રલયનાં ચક્રથી અભવત્-પ્રકટ થાય છે. તતઃ-ત્યાર પછી સાશનાનશને-શાસન = ભોજન કરનારા ચેતન પ્રાણી, અનશન = ભોજન ન કરનારા અપ્રાણી - જડ એ બે પ્રકારનાં જગતને અભિ-પ્રતિ વિષ્વઙ્-સર્વત્ર પ્રાપ્ત થતાં વિ + અક્રામત્-તેને વિશેષરૂપથી વ્યાપ્ત થાય છે.

ભાવાર્થ : એ પરમેશ્વર કાર્યજગતથી પૃથક્ ત્રણ અંશથી પ્રકાશિત થઈને પોતાના સામર્થ્યથી એક અંશ [ચતુર્થાંશ] = સંપૂર્ણ જગતને વારંવાર ઉત્પન્ન કરે છે. તત્પશ્ચાત્ એ ચર = ચેતન અને અચર = જડ જગતમાં વ્યાપ્ત બનીને રહે છે. (૪)

ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः ।

स जातोऽ अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथौ पुरः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તતઃ-તે સનાતન પૂર્ણ પરમાત્માથી વિરાટ્-વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોથી પ્રકાશમાન

વિરાટ બ્રહ્માંડરૂપ સંસાર અજાયત-ઉત્પન્ન થાય છે. વિરાજ:-તે વિરાટ સંસારના અધિ-સર્વોપરિ અધિષ્ઠાતા પૂસ્મ:-પરિપૂર્ણ પરમાત્મા છે. અથો-અને સ:-તે પુરુષ પુર:-પ્રથમથી વર્તમાન, જાત:-પ્રાદુર્ભૂત = પ્રસિદ્ધ તથા અતિ + અરિચ્યત-જગતથી પૃથક્ રહે છે, પશ્ચાત્-પછી ભૂમિ-પૃથિવીને ઉત્પન્ન કરે છે; તેને જાણો.

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરથી જ સર્વ સમષ્ટિ = સંઘાતરૂપ જગત ઉત્પન્ન થાય છે અને તે તેનાથી પૃથક્ રહીને અર્થાત્ તેમાં વ્યાપ્ત થઈને પણ પાપવિકારથી અલિપ્ત રહીને સર્વના અધિષ્ઠાતા છે. આ રીતે સામાન્યરૂપથી સંસારની રચનાનું કથન કરીને વિશેષરૂપથી ભૂમિ આદિનો નિર્માણક્રમ કહેવામાં આવે છે. (૫)

તસ્માદ્વજ્ઞાત્સર્વહુતઃ સમ્ભૃતં પૃષદાજ્યમ્ ।

પૃશૂંસ્તાંશ્ચક્રે વાયવ્યાનારણ્યા ગ્રામ્યાશ્ચ ચે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તસ્માત્-તે પૂર્વોક્ત સર્વહુત:-સર્વથી ગ્રહણ કરવાને યોગ્ય યજ્ઞાત્-પૂજનીય પુરુષ-પરમાત્માથી સર્વ પૃષદાજ્યમ્-દહીં આદિ ભોજ્ય વસ્તુઓ સમ્ભૃતમ્-સમ્યક્ સિદ્ધ થયેલી છે.

ચે-જે આરણ્યા:-વનના સિંહ આદિ ચ-અને ગ્રામ્યા:-ગામમાં રહેનાર ગાય આદિ પશુઓ છે; તાન્-તે વાયવ્યાન્-વાયુ સમાન ગુણવાન પશૂન્-પશુઓને ચક્રે-ઉત્પન્ન કરે છે; તેને તમે જાણો.

ભાવાર્થ : સર્વના દ્વારા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય જે પૂજ્ય જગદીશ્વરે સંપૂર્ણ સંસારનાં હિતને માટે દહીં આદિ ભોજ્ય પદાર્થો તથા ગ્રામ્ય અને વન્ય પશુઓને બનાવ્યા છે, તેની સર્વ ઉપાસના કરો. (૬)

તસ્માદ્વજ્ઞાત્સર્વહુતઽઋચઃ સામાનિ જઙ્ગિરે ।

છન્દાંશ્સિ જઙ્ગિરે તસ્માદ્વજુસ્તસ્માદજાયત ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે તસ્માત્-તે પૂર્ણ, યજ્ઞાત્-અત્યંત પૂજનીય, સર્વહુત:-જેને માટે સર્વ લોકો સમસ્ત પદાર્થો આપે છે વા સમર્પણ કરે છે, તે પરમાત્માથી ઋચઃ-ઋગ્વેદ અને સામાનિ-સામવેદ જઙ્ગિરે-ઉત્પન્ન થયા છે. તસ્માત્-તે પરમાત્માથી છન્દાંસિ-અથર્વવેદ જઙ્ગિરે-ઉત્પન્ન થયેલ છે. તસ્માત્-તે પરમાત્માથી યજુઃ-યજુર્વેદ અજાયત-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તેને જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેના દ્વારા સર્વ વેદો ઉત્પન્ન પ્રકટ થયા છે; તે પરમાત્માની ઉપાસના કરો, વેદોનું અધ્યયન કરો અને તેની આજ્ઞાને અનુકૂળ વર્તન-આચરણ કરીને સુખી રહો. (૭)

તસ્માદશ્વાઽઅજાયન્ત ચે કે ચૌભયાદતઃ ।

ગાવૌ હ જઙ્ગિરે તસ્માત્તસ્માજ્ઞાતાઽઅજાવયઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારા અશ્વાઃ-ઘોડાઓ અને ચે-જે કે-કોઈ ચ-ગધેડાં આદિ ઝખયાદતઃ-ઉપર-નીચે બન્ને બાજુ દાંતોવાળા પશુઓ છે, તેઓ તસ્માત્-તે પરમેશ્વરથી અજાયન્ત-ઉત્પન્ન થયા છે. તસ્માત્-તે પરમેશ્વરથી ગાવઃ-ગાયો હ-પણ જઙ્ગિરે-ઉત્પન્ન થઈ છે. તે એક બાજુ દાંતવાળાનું ઉપલક્ષણ છે એથી અન્ય પણ એક બાજુ દાંતવાળાનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. તસ્માત્-તે પરમેશ્વરથી અજાવયઃ-

બકરીઓ અને ઘેટાંઓ પણ જાતા:-ઉત્પન્ન થયાં છે, તેમ જાણો (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ગાય, ઘોડા આદિ ગ્રામ્ય સર્વ પશુઓ જે સનાતન, પૂર્ણ પુરુષ [પરમેશ્વર] થી ઉત્પન્ન થયાં છે, તેની આજ્ઞાનું ઉલ્લંઘન કદી પણ ન કરો. (૮)

તં યજ્ઞં બર્હિષિ પ્રૌક્ષન્ પુરુષં જાતમગ્રતઃ ।

તેન દેવાઽઅયજન્ત સાધ્યાઽઋષયશ્ચ યે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ-જે દેવા:-વિદ્વાન ચ-અને સાધ્યા:-યોગાભ્યાસ આદિ સાધન કરનારા જ્ઞાની અને ઋષય:-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા ઋષિ છે; તેઓ જે અગ્રત:-સૃષ્ટિથી પૂર્વ જાતમ્-પ્રાદુર્ભૂત, જગતના કર્તા, યજ્ઞમ્-પૂજનીય પુસ્ત્રમ્-પૂર્ણ પરમાત્માને બર્હિષિ-માનસ જ્ઞાનયજ્ઞમાં પ્ર + ઔક્ષન્-ઉત્તમ રીતિથી સિંચન અર્થાત્ ધારણ કરે છે, તેઓ જ તેન-તેના ઉપદેશ કરેલા વેદથી અને અયજન્ત-તેની પૂજા કરે છે; તમ્-તેને તમે પણ જાણો. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ મનુષ્યોએ સૃષ્ટિના કર્તા ઈશ્વરનું યોગાભ્યાસ આદિ દ્વારા પોતાનાં હૃદયરૂપી અન્તરિક્ષમાં સદા ધ્યાન અને પૂજન કરવું જોઈએ. (૯)

યત્પુરુષં વ્યદધુઃ કતિધા વ્યકલ્પયન્ ।

મુખં કિમસ્યાસીત્કિં બાહૂ કિમૂરૂ પાદાઽઽચ્ચેતે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ યત્-જે પુસ્ત્રમ્-પૂર્ણ પરમેશ્વરને વિ + અદધુઃ-વિવિધ પ્રકારથી ધારણ કરો છો, તેને કતિધા-કેટલા પ્રકારથી વિ + અકલ્પયન્-વિશેષરૂપથી કહે છે; અસ્ય-એ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં મુખમ્-મુખની સમાન શ્રેષ્ઠ વસ્તુ કિમ્-કઈ આસીત્-છે ? બાહૂ-ભુજબળને ધારણ કરનાર કિમ્-કોણ કહેવાય છે ? ઊરૂ-જાનુ-ગોઠણથી ઉપર અવયવ-સ્થાનવાળા તથા પાદૌ-નીચેનાં સ્થાનવાળા કિમ્-કોણ ડચ્ચેતે-કહેવામાં આવે છે ? (૧૦)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આ સંસારમાં ઈશ્વરના અસંખ્ય સામર્થ્ય છે. તે સામર્થ્ય-સમુદાયમાં ઉત્તમાંગ મુખ અને બાહુ આદિ અંગ ક્યાં છે, તે બતાવો. (૧૦)

બ્રાહ્મણોઽસ્ય મુખમાસીદ્ બાહૂ રાજન્યઃ કૃતઃ ।

ઊરૂ તદસ્ય યદ્વૈશ્યઃ પદ્ભ્યાઽશૂદ્રોઽઅજાયત ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુજનો ! તમે અસ્ય-આ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં બ્રાહ્મણ:-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા તેના સેવક વા ઉપાસક પુરુષ મુખમ્-મુખની સમાન ઉત્તમ બ્રાહ્મણ આસીત્-છો.

બાહૂ-ભુજાઓની સમાન બલ અને પરાક્રમયુક્ત રાજન્ય:-ક્ષત્રિય કૃત-બનાવેલ છે. યત્-જે ઊરૂ-જાંઘની સમાન વેગ આદિ કર્મ કરનાર તત્-તે અસ્ય-આ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં વૈશ્ય:-સર્વ દેશમાં પ્રવેશ

કરનાર વૈશ્ય છે. પદ્ભ્યામ્-સેવાયુક્ત અને અભિમાનરહિત હોવાથી શૂદ્ર:-મૂર્ખતા આદિ ગુણોથી યુક્ત શૂદ્ર અજાયત્-ઉત્પન્ન થાય છે; એ ઉત્તર ક્રમથી જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યા શમ, દમ આદિ ઉત્તમ ગુણોમાં મુખની સમાન ઉત્તમ છે, તે બ્રાહ્મણ; જે અધિક પરાક્રમવાળા મનુષ્ય ભુજાની સમાન કાર્યસાધક છે, તે ક્ષત્રિય; જે વ્યવહારવિદ્યામાં કુશળ છે, તે વૈશ્ય અને જે સેવામાં શ્રેષ્ઠ, વિદ્યારહિત તથા પગની સમાન મૂર્ખતા આદિ હીન ગુણોથી યુક્ત છે, તે શૂદ્ર છે તેવો નિશ્ચય કરવો અને માનવું જોઈએ. (૧૧)

ચન્દ્રમા મનસો જાતશ્ચક્ષોઃ સૂર્યોઅજાયત ।

શ્રોત્રાદ્વાયુષ્ચ પ્રાણશ્ચ મુખાદગ્નિરજાયત ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ પૂર્ણ બ્રહ્મના મનસ:-જ્ઞાનસ્વરૂપ સામર્થ્યથી ચન્દ્રમા:-ચંદ્રલોક જાત:-ઉત્પન્ન થયેલ છે; ચક્ષોઃ-જ્યોતિસ્વરૂપ સામર્થ્યથી સૂર્ય:-સૂર્યમંડલ અજાયત-ઉત્પન્ન થયેલ છે; શ્રોત્રાત્-શ્રોત્ર નામક અવકાશરૂપ સામર્થ્યથી વાયુ:-વાયુ ચ-તથા આકાશ પ્રદેશ ચ-તથા પ્રાણ:-જીવનના નિમિત્ત દશ પ્રાણ તથા મુખાત્-મુખ્ય જ્યોતિર્મય ભક્ષણરૂપ સામર્થ્યથી અગ્નિ:-અગ્નિ અજાયત-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તેમ જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે આ સંપૂર્ણ સંસાર કારણ = પ્રકૃતિથી ઈશ્વરે ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેમાં ચંદ્રલોક મનરૂપ છે, સૂર્ય ચક્ષુસ્થાનીય છે, વાયુ અને પ્રાણ શ્રોત્રની સમાન, અગ્નિ મુખની સમાન, ઔષધિઓ તથા વનસ્પતિઓ રોમ-રૂંવાડાં સમાન, નદીઓ નાડીઓની સમાન તથા પર્વત આદિ અસ્થિઓની સમાન છે. એમ જાણવું જોઈએ. (૧૨)

નાભ્યાંઆસીદન્તરિક્ષઃ શીર્ષ્ણો દ્યૌઃ સર્મવર્તત ।

પદ્ભ્યાં ભૂમિર્દિશઃ શ્રોત્રાત્તથા લોકાંરઽઅકલ્પયન્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ એ પુરુષ પરમેશ્વરના નાભ્યા:-અવકાશરૂપ મધ્યમ સામર્થ્યથી અન્તરિક્ષમ્-મધ્યવર્તી આકાશ આસીત્-ઉત્પન્ન થયેલ છે; શીર્ષ્ણાઃ-શિરની સમાન ઉત્તમ સામર્થ્યથી દ્યૌઃ-પ્રકાશયુક્ત લોક તથા પદ્ભ્યામ્-પૃથિવીના કારણરૂપ સામર્થ્યથી ભૂમિ:-પૃથિવી સમ્ અવર્તત-સમ્યક્ ઉત્પન્ન થઈ છે; શ્રોત્રાત્-અવકાશરૂપ સામર્થ્યથી દિશઃ-પૂર્વ આદિ દિશાઓને ઉત્પન્ન અકલ્પયન્-બતાવે છે; તથા-એ રીતે ઈશ્વરનાં સામર્થ્યથી અન્ય લોકાન્-લોકો પણ ઉત્પન્ન થયેલાં જાણો. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જે આ સૃષ્ટિમાં કાર્યરૂપ વસ્તુ છે, તે તે સર્વ વિરાટ નામક કાર્યકારણની અવયવરૂપ વસ્તુ છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૩)

યત્પુરુષેણ હવિષા દેવા યજ્ઞમર્તન્વત ।

વસન્તોઽસ્યાસીદાજ્યં ગ્રીષ્મઽદ્ધમઃ શરન્દ્ધવિઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જ્યારે હવિષા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પુસ્ત્રેણ-પૂર્ણ પરમાત્માની સાથે દેવા:-

વિદ્વાનજન યજ્ઞમ્-માનસિક જ્ઞાનમય યજ્ઞને અતન્વત-વિસ્તૃત કરે છે; ત્યારે અસ્ય-એ યજ્ઞના વસન્તઃ-વસંતરૂપ પૂર્વાહ્ન કાલ જ આજ્યમ્-ઘૃત છે; ગ્રીષ્મઃ-મધ્યાહ્ન કાલ ઇધ્મઃ-પ્રદીપ્ત ઈધન છે; શરત્-અર્ધ રાત્રિરૂપ શરદ હવિઃ-હોમવા યોગ્ય પદાર્થ આસીત્-છે; તેમ તમે જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે બહારની સામગ્રીના અભાવમાં વિદ્વાન લોકો સૃષ્ટિના રચિયતા ઈશ્વરની ઉપાસના નામક માનસ જ્ઞાનયજ્ઞનો વિસ્તાર કરે છે, ત્યારે પૂર્વાહ્ન આદિ કાલને જ સાધન = સામગ્રીનાં રૂપમાં કલ્પિત કરવી જોઈએ. (૧૪)

સપ્તાસ્યાસન્ પરિધયસ્ત્રિઃ સપ્ત સમિધઃ કૃતાઃ ।

દેવા યદ્યજ્ઞં તન્વાનાઽઅબ્ધન્ પુરુષં પશુમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે યજ્ઞમ્-માનસજ્ઞાન યજ્ઞને તન્વાનાઃ-વિસ્તૃત કરતા દેવાઃ-વિદ્વાન્ લોકો પશુમ્-જાણવા અર્થાત્ દર્શન કરવા યોગ્ય પુસ્ત્રમ્-પરમાત્માને હૃદયમાં અબ્ધન્-બાંધે છે; અસ્ય-એ યજ્ઞને સપ્ત-સાત ગાયત્રી આદિ છંદ પરિધયઃ-સર્વત્રથી દોરાની સાત લપેટ સમાન આસન્-છે;

ત્રિઃ, સપ્ત-ત્રણ વાર સાત ૩ X ૭ = ૨૧ એકવીસ અર્થાત્ પ્રકૃતિ, મહત્તત્ત્વ, અહંકાર, પાંચ સૂક્ષ્મભૂત, પાંચ સ્થૂલભૂત, પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિય, સત્ત્વ, રજ, તમ, ત્રણ ગુણ, એકવીસ, સમિધઃ-સામગ્રીરૂપ કૃતાઃ-બનાવેલ છે; તે યજ્ઞને યથાવત્ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અનેક પ્રકારથી કલ્પિત પરિધિ આદિ સામગ્રીથી યુક્ત એ માનસયજ્ઞ કરીને, પરિપૂર્ણ પરમેશ્વરને જાણીને સર્વ પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરો. (૧૫)

યજ્ઞેન યજ્ઞમયજન્ત દેવાસ્તાનિ ધર્માણિ પ્રથમાન્યાસન્ ।

તે હ નાકં મહિમાનઃ સચન્ત યત્ર પૂર્વે સાધ્યાઃ સન્તિ દેવાઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવાઃ-વિદ્વાન્ જન યજ્ઞેન-પૂર્વોક્ત જ્ઞાનયજ્ઞથી યજ્ઞમ્-પૂજનીય, સર્વરક્ષક, અગ્નિની સમાન તેજસ્વી પરમેશ્વરની અયજન્ત-પૂજા કરે છે; તાનિ-તે ઈશ્વર પૂજન આદિ ધર્માણિ-ધારણારૂપ ધર્મ પ્રથમાનિ-અનાદિ અને મુખ્ય આસન્-છે. તે-તે વિદ્વાન મહિમાનઃ-મહત્ત્વયુક્ત બનીને યત્ર-જેના મુખમાં પૂર્વે-પૂર્વજ સાધ્યાઃ-સાધન કરનારા દેવાઃ-વિદ્યા આદિથી દેદીપ્યમાન વિદ્વાનો સન્તિ-છે; તે નાકમ્-દુઃખરહિત મુક્તિસુખને હ-જ સચન્ત-પ્રાપ્ત કરે છે; તેને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યોગાભ્યાસ આદિ દ્વારા સદા પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. એ અનાદિ-કાલીન ધર્મના દ્વારા મુક્તિસુખ = મોક્ષ પ્રાપ્ત કરીને, પૂર્વકાલના મુક્ત વિદ્વાનોની સમાન આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧૬)

અદ્ભ્યઃ સમ્ભૃતઃ પૃથિવ્યૈ રસાંચ વિશ્વકર્મણઃ સમવર્ત્તાગ્રૈ ।

તસ્ય ત્વષ્ટા વિદધદ્રૂપમેતિ તન્મર્ત્યસ્ય દેવત્વમાજાનમગ્રૈ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અદ્ભ્યઃ-જલોથી, પૃથિવ્યૈ-પૃથિવીથી ચ-અને વિશ્વકર્મણઃ-સર્વ કર્મ જેના

આશ્રયે થાય છે, તે સૂર્યથી સમ્ભૂત:-સમ્યક્ પુષ્ટ છે; તે રસાત્-જિહ્વા વિષયક રસથી અગ્રે-પ્રથમ આ સર્વ જગત સમ્ + અવર્ત્ત-વર્તમાન રહે છે; તસ્ય-તે આ જગતના તત્-તે સ્વમ્-સ્વરૂપને ત્વષ્ટા-છોલનાર-સૂક્ષ્મ કરનાર ઈશ્વર વિદધત્-બનાવતા અગ્રે-આદિમાં મર્ત્યસ્ય-મનુષ્યના આજાનમ્-સારી રીતે કર્તવ્ય કર્મ અને દેવત્વમ્-વિદ્વતાને એતિ-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંપૂર્ણ કાર્યજગતના કર્તા પરમાત્મા કારણથી કાર્યોનું નિર્માણ કરે છે અને સંપૂર્ણ સંસારનાં શરીરોનાં રૂપોની રચના કરે છે, તેનું જ્ઞાન કરવું તથા તેની આજ્ઞાનું પાલન કરવું એ જ 'દેવત્વ' છે, તેમ જાણો. (૧૭)

વેદાહમેતે પરુષં મહાન્તમાદિત્યવર્ણં તમસઃ પરસ્તાત્ ।

તમેવ વિદિત્વાતિ મૃત્યુમેતિ નાન્યઃ પન્થા વિદ્યતેઽયનાય ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! અહમ્-હું જે એતમ્-એ પૂર્વોક્ત મહાન્તમ્-મહાન ગુણોથી યુક્ત, આદિત્યવર્ણમ્-આદિત્ય = સૂર્ય સમાન પ્રકાશસ્વરૂપ છે, તે સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્માને તમસઃ-અંધકાર વા અજ્ઞાનથી પરસ્તાત્-પૃથક્ વર્તમાન પુસ્તમ્-સ્વસ્વરૂપથી સર્વત્ર પૂર્ણ પરમાત્માને વેદ-જાણું છું.

તમ્ + એવ-તેને જ વિદિત્વા-જાણીને આપ મૃત્યુમ્-દુઃખદાયક મૃત્યુનું અતિ + એતિ-ઉલ્લંઘન કરી જાઓ છો; અન્યઃ-આથી ભિન્ન પન્થાઃ-માર્ગ અયનાય-અભીષ્ટ સ્થાન મોક્ષને માટે ન, વિદ્યતે-વિદ્યમાન નથી. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સાંસારિક અને આધ્યાત્મિક સુખ ઈચ્છે, તો તેઓ સર્વથી મહત્તમ, સ્વયંપ્રકાશમાન, આનંદસ્વરૂપ તથા અજ્ઞાન અને ક્લેશથી પૃથક્ વર્તમાન પરમાત્માને જાણીને જ મૃત્યુ આદિ અગાધ દુઃખસાગરથી પૃથક્ થઈ શકે છે. આ જ સુખદાયી માર્ગ છે. આથી ભિન્ન અન્ય કોઈ મનુષ્યોની મુક્તિનો માર્ગ નથી. (૧૮)

પ્રજાપતિશ્ચરતિ ગર્ભેઽઅન્તરજાયમાનો બહુધા વિ જાયતે ।

તસ્ય યોનિં પરિ પશ્યન્તિ ધીરાસ્તસ્મિન્હ તસ્થુર્ભુવનાન્તિ વિશ્વા ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અજાયમાનઃ-પોતાના સ્વરૂપથી ઉત્પન્ન ના થનાર, પ્રજાપતિઃ-પ્રજાના રક્ષક જગદીશ્વર ગર્ભે-ગર્ભસ્થ જીવાત્મામાં અને અન્તઃ-સર્વના હૃદયમાં ચરતિ-વિચરણ કરે છે; અને બહુધા-અનેક પ્રકારથી વિ, જાયતે-વિશેષરૂપથી પ્રકટ થાય છે; તસ્ય-તે પ્રજાપતિનાં જે યોનિમ્-સ્વરૂપને ધીરાઃ-ધ્યાની = યોગી લોકો પરિ + પશ્યન્તિ-સર્વત્રથી જુએ છે.

તસ્મિન્-તે જગદીશ્વરમાં હ-જ વિશ્વા-સર્વ ભુવનાન્તિ-ભુવન = લોક-લોકાન્તર તસ્થુઃ-સ્થિત છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે એ સર્વરક્ષક ઈશ્વર સ્વયં ઉત્પન્ન ન થતાં પોતાનાં સામર્થ્યથી સંસારને ઉત્પન્ન કરીને તેની અંદર પ્રવિષ્ટ થઈને સર્વત્ર વિચરણ કરે છે.

જે અનેક પ્રકારથી પ્રસિદ્ધ ઈશ્વરને વિદ્વાનો જ જાણી શકે છે, તે સંસારના આધાર અને સર્વવ્યાપક પરમાત્માને જાણીને, મનુષ્યોએ આનંદિત થવું જોઈએ. (૧૯)

यो देवेभ्यऽआतपति यो देवानां पुरोहितः ।

पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मणे ॥ २० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે સૂર્યલોક દેવેભ્ય:-દિવ્યગુણોવાળા પૃથિવી આદિને માટે આ + તપતિ-સર્વત્રથી તપી રહેલ છે; ય:-જે દેવાનામ્-પૃથિવી આદિ લોકોના પુરોહિત:-પ્રથમથી હિતને માટે મધ્યમાં રાખેલ છે; ય:-જે દેવેભ્ય:-પૃથિવી આદિથી પૂર્વ:-પ્રથમ જાત:-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તે સ્વાય-રુચિકર બ્રાહ્મણે-બ્રહ્મ = પરમેશ્વરના પુત્રની સમાન સૂર્યથી નમ:-અન્ન ઉત્પન્ન થાય છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરે સર્વના હિત માટે અન્ન આદિની ઉત્પત્તિ નિમિત્ત સૂર્ય રચેલ છે, તે [ઈશ્વર]ની તમે નિરંતર ઉપાસના કરો. (૨૦)

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवाऽअग्ने तद्ब्रुवन् ।

यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवाऽअसन्वशौ ॥ २१ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણિષ્ઠ જિજ્ઞાસુ ! જે સ્વમ્-રુચિકારક બ્રાહ્મણ-બ્રહ્મણના ઉપાસક ત્વા-આપને જનયન્ત:-સંપન્ન કરતા = બનાવતા દેવા:-વિદ્વાનો અગ્ને-પ્રથમ તત્-બ્રહ્મ, જીવ અને પ્રકૃતિનાં સ્વરૂપનો અબ્રુવન્-ઉપદેશ કરે છે.

ય:-જે બ્રાહ્મણ:-વિદ્વાન્ એવમ્-તે પ્રકારથી વિદ્યાત્-બ્રહ્મ આદિને જાણી લે છે, તસ્ય-તેના તે દેવા:-વિદ્વાનો વશો-વશમાં - આધીન અસન્-બને છે. (૨૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોનું પ્રથમ એ જ કર્તવ્ય છે કે, વેદ, ઈશ્વર અને ધર્મ આદિમાં રુચિ, ઉપદેશ, અધ્યાપન, ધાર્મિકતા, જિતેન્દ્રિયતા, શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરવી. આ રીતે કરવાથી સર્વ દિવ્ય ગુણ અને ભોગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. (૨૧)

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।
इष्णान्निषाणामुं मंडिषाण सर्वलोकं मंडिषाण ॥ २२ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે તે-આપની શ્રી:-સમગ્ર શોભા છે ચ-અને લક્ષ્મી:-સર્વ ઐશ્વર્ય ચ-પણ છે; પત્ન્યૌ-બે સ્ત્રીઓની સમાન વિદ્યમાન અહોરાત્રે-દિવસ અને રાત પાર્શ્વે-આપના બે પાર્શ્વ ભાગ છે; તે આપની સૃષ્ટિમાં અશ્વિનૌ-સૂર્ય અને ચંદ્રમા વ્યાત્તમ્-વિકસિત મુખની સમાન છે; નક્ષત્રાણિ-નક્ષત્રો સ્વમ્-રૂપ છે.

તો આપ મે-મારા અમુમ્-પરોક્ષ સુખને ઇષ્ણાન્-ચાહતા ઇષાણા-મને પ્રાપ્ત કરાવવાની કામના કરો. મે-મારા માટે સર્વલોકમ્-સર્વના દર્શનને ઇષાણ-પ્રાપ્ત કરાવો, મારા માટે સર્વ સુખોને ઇષાણ-પ્રાપ્ત કરાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ લોકો ! જેમ ઈશ્વરના ન્યાય, વ્યાપકતા, કૃપા, પુરુષાર્થ, સત્ય રચના

અને સત્ય નિયમ છે, તેમ તમારામાં પણ હોય, જેથી તમારું સુખ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ પામે. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર, સૃષ્ટિ અને રાજાના ગુણોના વર્ણનથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ એકત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ દ્વાત્રિંશત્તમાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓ૩મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ભદ્રં તન્ન આ સુવ

તદેવાગ્નિસ્તદાદિત્યસ્તદ્વાયુસ્તદુ ચન્દ્રમાઃ ।

તદેવ શુક્રં તદ્ બ્રહ્મ તાઽઆપઃ સ પ્રજાપતિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તત્-તે સર્વજ્ઞ, સર્વ વ્યાપક, સનાતન, અનાદિ, સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, નિત્ય શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્ત સ્વભાવ, ન્યાયકારી, દયાળુ, જગતના સ્રષ્ટા, જગતના ધર્તા અને સર્વાન્તર્યામી ઈશ્વર એવ-જ અગ્નિ:-જ્ઞાન સ્વરૂપ અને સ્વ પ્રકાશ સ્વરૂપ હોવાથી અગ્નિ છે; તત્-તે આદિત્ય:-પ્રલય સમયે સર્વને શ્રહણ કરનાર - લેનાર હોવાથી આદિત્ય છે.

તત્-તે વાયુ:-અનંત બળવાન અને સર્વના ધારણકર્તા હોવાથી વાયુ છે; તત્-તે ચન્દ્રમા:-આનંદ સ્વરૂપ અને આહ્લાદક હોવાથી ચંદ્રમા છે; તત્, એવ-તે જ શુક્રમ્-શીઘ્રકારી અને શુદ્ધ ભાવ હોવાથી શુક્ર છે; તત્-તે બ્રહ્મ-સર્વથી મહાન હોવાથી બ્રહ્મ છે; તાઃ-તે આપઃ-સર્વત્ર વ્યાપક હોવાથી ડ-અને સઃ-તે પ્રજાપતિઃ-સર્વ પ્રજાના સ્વામી હોવાથી પ્રજાપતિ છે; એમ તમે જાણો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઈશ્વરના એ અગ્નિ આદિ ગૌણિક = ગુણવાચક નામ છે, તેમ અન્ય ઈન્દ્ર આદિ નામો પણ છે, એ ઈશ્વરની ઉપાસના ફળદાયક છે, તેમ જાણો. (૧)

સર્વે નિમેષા જજિરે વિદ્યુતઃ પુરુષાદધિ ।

નૈનમૂર્ધ્વં ન તિર્યજ્ઞં ન મધ્યે પરિ જગ્રભત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુતઃ-વિશેષ પ્રકાશમાન પુસ્માત્-પૂર્ણ વિભુ બ્રહ્મથી સર્વે-સર્વ નિમેષાઃ-નેત્ર ખોલવા આદિ લક્ષણવાળા, કાષ્ઠાદિ કાલના અવયવ અધિ, જજિરે-અધિકતર ઉત્પન્ન થાય છે; તે એનમ્-એ પરમાત્માને કોઈ પણ ન, ઊર્ધ્વમ્-ન ઉપરથી, ન, તિર્યજ્ઞમ્-ન તિર્યક વા ન નીચે અને ન, મધ્યે-ન મધ્યમાંથી પરિ, જગ્રભત્-શ્રહણ કરી શકે છે; તેની તમે સેવા =ઉપાસના કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના નિર્માણથી સર્વ કાલખંડ ઉત્પન્ન થયા છે, જેની ઉપર, નીચે, પાર્શ્વ = બરાબર, દૂર વા નજીકમાં [છે એમ] કહેવું સંભવ નથી અને જે સર્વત્ર પૂર્ણ બ્રહ્મ છે, તે બ્રહ્મને યોગાભ્યાસ દ્વારા જાણીને આપ સર્વે તેની ઉપાસના કરો. (૨)

ન તસ્ય પ્રતિમાઽસ્તિ યસ્ય નામ મહદ્દર્શઃ ।

હિરણ્યગર્ભઽદ્યેષ મા માં હિંસીદિત્યેષા યસ્માન્ન જાતઽદ્યેષઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્ય-જેનું મહત્-પૂજ્ય અને મહાન, યશઃ-કીર્તિ કરનાર ધર્મયુક્ત કર્મોનું

આચરણ જ નામ-નામ સ્મરણ છે; જે હિરણ્યગર્ભ:-સૂર્ય, વિદ્યુત્, આદિ પદાર્થોના આધાર, ઙ્ઙિતિ-એ રીતે ંષ:-અન્તર્યામી હોવાથી પ્રત્યક્ષ છે; જેની મા-મને જીવાત્માને મા, હિંસીત્-માર નહિ, તાડના કર નહિ, વિમુખ કર નહિ ઙ્ઙિતિ, ંષા:-એ પ્રાર્થના વા બુદ્ધિ છે.

યસ્માત્-જે કોઈ પણ કારણથી ન, જાત:-ઉત્પન્ન થયેલ નથી. ઙ્ઙિતિ, ંવ:-એ પરમાત્મા ઉપાસનાને યોગ્ય છે. તસ્ય-તે પરમેશ્વરની પ્રતિમા-પરિમાણ, તેની સમાન અવધિનું સાધન, પ્રતિકૃતિ, મૂર્તિ વા આકૃતિ ન, અસ્તિ-નથી.

દ્વિતીય પક્ષ : હિરણ્યગર્ભ:-એ ૨૫ : ૧૦-૧૩ મંત્ર સુધી ઙ્ઙિતિ-એ જ રીતે ંષા:-એ કહેલ અનુવાદમાં મા, હિંસીત્ ૧૨-૧૦૨ એ કહેલ ઋચ્યા અને યસ્માન્ન જાત:-ઙ્ઙિત્યેષ:-૮ : ૩૬, ૩૭ એ કહેલ અનુવાદ યસ્ય-જે પરમેશ્વરની નામ-પ્રસિદ્ધ મહત્-મહાન યશ:-કીર્તિ છે, તસ્ય-તેની પ્રતિમા-મૂર્તિ-પ્રતિબિંબ ન, અસ્તિ-નથી. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કદી શરીરધારી બનતો નથી, જેનું કોઈ પરિમાણ = માપ નથી, જેની આજ્ઞાનું પાલન કરવું તે જ તેના નામનું સ્મરણ કરવું છે, જે ઉપાસના કરવાથી ઉપાસકો પર અનુગ્રહ કરે છે, વેદોના અનેક સ્થાનોમાં જેનો મહિમા પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે.

જે કદી મૃત્યુ પામતો નથી, વિકારને પ્રાપ્ત થતો નથી, ક્ષીણ થતો નથી, તમે તેની નિરંતર ઉપાસના કરો. જો તેનાથી ભિન્ન - બીજા કોઈની ઉપાસના કરશો, તો મહાન પાપના ભાગી બનીને આપ લોકો દુઃખ અને ક્લેશોથી પીડિત થશો. (૩)

ંષો હ દેવઃ પ્રદિશોઙ્ઙુ સર્વાઃ પૂર્વોં હ જાતઃ સઙ્ઙુ ગર્ભોંઙ્ઙન્તઃ ।

સઙ્ઙવ્ જાતઃ સ જનિષ્વમાણઃ પ્રત્યઙ્ઙ જનાસ્તિષ્ઠતિ સ્વર્વતોંમુખઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જના:-વિદ્વાનો ! ંષ:-એ હ-જ દેવઃ-દિવ્ય સ્વરૂપ પરમાત્મા સર્વાઃ-સર્વ દિશાઓ તથા પ્રદિશઃ-ઉપદિશાઓને અનુ-અનુકૂળતાથી વ્યાપ્ત કરીને, સઃ-તે ઙ્ઙ-જ ગર્ભોંઙ્ઙન્તઃ-કરણનાં અન્તઃ-મધ્યમાં પૂર્વઃ-પ્રથમ કલ્પના આદિમાં હ-જ જાતઃ-પ્રકટ થયેલ છે; સઃ-તે ંવ-જ જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થઈને, સઃ-તે જનિષ્વમાણઃ-આગામી કલ્પોમાં પ્રથમ પ્રસિદ્ધિને પ્રાપ્ત થશે, સ્વર્વતોમુખઃ-બધી બાજુથી મુખ આદિ અવયવવાળા અર્થાત્ મુખ આદિ ઈન્દ્રિયોનાં કામ સર્વત્ર કરતા, પ્રત્યઙ્ઙ-પ્રત્યેક પદાર્થને પ્રાપ્ત થઈને તિષ્ઠતિ-અચલ-સર્વત્ર સ્થિર છે; તે જ તમારા લોકોની ઉપાસના કરવા યોગ્ય અને જાણવા યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : એ પૂર્વોક્ત ઈશ્વર જગતને ઉત્પન્ન કરીને પ્રકાશિત થઈને, સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપ્ત બનીને ઈન્દ્રિયો વિના સર્વ ઈન્દ્રિયોનાં કર્મોને, સર્વ વ્યાપક હોવાના કારણે કરતા રહીને, સર્વ પ્રાણીઓનાં હૃદયમાં રહે છે. તે અતીત = ભૂત અને અનાગત = ભવિષ્યના કલ્પોમાં જગતની ઉત્પત્તિ માટે પ્રથમ પ્રકટ = સક્રિય થાય છે. તેને ધ્યાનના અભ્યાસી મનુષ્ય જ જાણી શકે છે, અન્ય નહિ. (૪)

યસ્માઙ્ઙાતં ન પુરા કિં ચનૈવ ય આંબભૂવ્ ભુવંનાનિ વિશ્વા ।

પ્રજાર્પતિઃ પ્રજયાં સશ્શરાણસ્ત્રીણિ જ્યોતીંઙ્ઙષિ સચતે સ ષોંડુશી ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્માત્-જે પરમેશ્વરથી પુરા-પહેલાં કિઙ્ઙન-કંઈ પણ ન જાતમ્-ઉત્પન્ન થયું

નથી, ય:-જે આ + બભૂવ-સર્વત્ર વિદ્યમાન છે, જેમાં વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-વસ્તુઓના આધાર લોક સમૂહ રહેલા છે.

સ:-તે એવ-જ ષોડશી-સોળ કલાવાળા ઈશ્વર પ્રજયા-પ્રજાની સાથે સંસ્થાન:-સમ્યક્ રમણ કરતા પ્રજાપતિ:-પ્રજાના રક્ષક અને અધિષ્ઠાતા બનીને ત્રીણિ-વિદ્યુત્, સૂર્ય અને ચંદ્રરૂપ ત્રણ જ્યોતીષિ-તેજોમય પ્રકાશક જ્યોતિઓને સચ્ચતે-વ્યાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે કારણે ઈશ્વર અનાદિ છે, એથી તેના પૂર્વે કોઈ વસ્તુ થઈ શકતી નથી.

તે જ સર્વ પ્રજાઓમાં વ્યાપ્ત થઈને જીવોના કર્મોને જોઈને તેના અનુસાર ફળ આપીને ન્યાય કરે છે.

જેણે પ્રાણ આદિ ષોડશ = સોળ વસ્તુઓ રચેલ છે, તેથી તે ષોડશી કહેવાય છે. પ્રાણ, શ્રદ્ધા, આકાશ, વાયુ, અગ્નિ, જલ, પૃથિવી, ઈન્દ્રિય, મન, અન્ન, વીર્ય, તપ, મંત્ર, કર્મ લોક અને નામ એ સોળ કલાઓ પ્રશ્નોપનિષદમાં છઠ્ઠા પ્રશ્નમાં વર્ણિત છે.

આ સમસ્ત સોળ કલામય સંસાર પરમાત્મામાં રહેલ છે, તેના દ્વારા રચેલ છે અને તે જ પાલન કરી રહેલ છે. (૫)

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः ।

योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યેન-જે જગદીશ્વરે ઝગ્રા-તીવ્ર તેજવાળા દ્યૌઃ-પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય આદિ પદાર્થ, ચ-અને પૃથિવી-ભૂમિ દૃઢા-દૃઢ કરેલ છે; યેન-જેને સ્વ:-સુખને સ્તભિતમ્-ધારણ કરેલ છે; યેન-જેને નાક:-સર્વ દુઃખોથી રહિત મોક્ષને ધારણ કરેલ છે; ય:-જે અન્તરિક્ષે-મધ્યવર્તી આકાશમાં વિદ્યમાન રજસ:-લોક સમૂહનું વિમાન:-વિવિધ રીતે નિર્માણ કરનાર છે અર્થાત્ વિવિધ પરિમાણ કરનાર છે; તે કસ્મૈ-સુખસ્વરૂપ દેવાય-સ્વયં પ્રકાશમાન, સકળ સુખદાતા ઈશ્વરને માટે અને હવિષા-પ્રેમ ભક્તિભાવથી વિધેમ-સેવા કરીએ વા તેને પ્રાપ્ત પ્રાપ્ત કરીએ; એ રીતે તમે પણ એની સેવા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સમસ્ત જગતને ધારણ કરનાર, સર્વ સુખદાતા, મોક્ષના સાધક અને આકાશની સમાન વ્યાપક પરમેશ્વર છે, તેની જ ભક્તિ કરો. (૬)

यं क्रन्दसीऽअवसा तस्तभानेऽअभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने ।

यत्राधि सूरऽउदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યમ્-જે પરમાત્માને પ્રાપ્ત અર્થાત્ તેના અધિકારમાં રહેનારા, તસ્તભાને-સર્વને ધારણ કરનારા, રેજમાને-ગતિમાન ક્રન્દસી-સ્વગુણોથી પ્રશંસા કરવા યોગ્ય સૂર્ય અને પૃથિવી લોક, અવસા-રક્ષા આદિથી સર્વને ધારણ કરે છે.

યત્ર-જે ઈશ્વરમાં સૂર:-સૂર્યલોક અધિ,ઝદિત:-અધિકતર ઉદય થાય છે. યત્-જે બૃહતી:-મહાન

આપ:-વ્યાપક જળ છે; હ-નિશ્ચય જ ય:-અને જે કંઈ આપ:-આકાશ છે; તેને ચિત્-પણ વિભાતિ-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશિત કરે છે.

તે ઈશ્વર તથા ઘાવા પૃથિવીને અધ્યાપક અને ઉપદેશક મનસા-વિજ્ઞાનથી અભિ, એક્ષેતામ્-મુખ્યરૂપથી જુએ અને તે કસ્મૈ-સુખસાધક દેવાય-શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમાત્માની પ્રાપ્તિ માટે હવિષા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય યોગાભ્યાસથી અમે વિદ્યેમ-સેવા-ઉપાસના કરીએ છીએ; તમે પણ તેની ઉપાસના કરો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વવ્યાપક ઈશ્વરમાં સૂર્ય, પૃથ્વી આદિ લોક ભ્રમણ કરતા જોવામાં આવે છે, જેણે પ્રાણ અને આકાશ પણ ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે આપણા આત્મામાં રહેલ ઈશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. (૭)

વેનસ્તત્પશ્યન્નિહિતં ગુહા સદ્યત્ર વિશ્વં ભવત્યેકનીડમ્ ।

તસ્મિન્નિદઃ સં ચ વિ ચૈતિ સર્વઃ સઽઓતઃ પ્રોત્શ્ચ વિભૂઃ પ્રજાસુ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્ર-જેમાં વિશ્વમ્-સર્વ જગત એકનીડમ્-એક સ્થાન-આશ્રયની સમાન ભવતિ-છે; તત્-તે ગુહા-બુદ્ધિ વા ગુપ્ત કારણમાં નિહિતમ્-સ્થિત સત્-નિત્ય ચેતન બ્રહ્મને વેન:-પંડિત વિદ્વાન્ જન પશ્યત્-જ્ઞાન દૃષ્ટિથી જુએ છે.

તસ્મિન્-તેમાં ઇદમ્-આ સર્વમ્-સર્વ જગત સમ, એતિ, ચ-પ્રલયકાલમાં લીન બની જાય છે વ્યેતિ, ચ અને સર્ગકાલ - ઉત્પત્તિ સમયમાં વિવિધ રૂપમાં પ્રકટ થાય છે.

સ:-તે વિભૂ:-વ્યાપક ઈશ્વર પ્રજાસુ-પ્રજાઓમાં - પ્રકૃતિ, જીવ આદિમાં ઓત:-વચ્ચમાં તાણાની સમાન ચ-અને પ્રોત:-વચ્ચમાં વાણાની સમાન વ્યાપક છે; તે જ સર્વના ઉપાસ્ય છે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! વિદ્વાન જ જે સત્ = ઈશ્વરને બુદ્ધિ બળથી જાણે છે, જે આકાશ આદિ સર્વ પદાર્થોનો આધાર છે, જેમાં પ્રલયકાળમાં સમસ્ત સંસાર લીન થઈ જાય છે અને સર્ગ = સૃષ્ટિકાલમાં જેમાંથી નીકળે છે, જેની વ્યાપ્તિ વિનાની કોઈ વસ્તુ નથી, તેને છોડીને આ સૃષ્ટિમાં અન્ય કોઈને ઉપાસ્ય - ઈશ્વર જાણો નહિ. (૮)

પ્ર તદ્વોચ્ચેદમૃતં નુ વિદ્વાન્ ગન્ધર્વો ધામ વિભૃતં ગુહા સત્ ।

ત્રીણિં પદાનિ નિહિતા ગુહાસ્ય યસ્તાનિ વેદ સ પિતુઃ પિતાઽસત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે ગન્ધર્વ:-ગો =વેદવાણીને ધારણ કરનાર વિદ્વાન્-પંડિત ગુહા-બુદ્ધિમાં વિભૃતમ્-વિશેષ ધારણ કરીને અમૃતમ્-નાશરહિત, ધામ-મુક્તિ સુખનું સ્થાન, તત્-તે ચેતન બ્રહ્મ સત્-નિત્ય ઈશ્વરના નુ-શીઘ્ર પ્રવોચેત્-ગુણ - કર્મ - સ્વભાવથી ઉપદેશ કરે છે; અને જે અસ્ય-એ અવિનાશી બ્રહ્મની ગુહા-બુદ્ધિમાં-જ્ઞાનમાં નિહિતા-સ્થિત પદાનિ-જાણવા યોગ્ય ત્રીણિ-ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ, પ્રલય અથવા ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણ કાલ છે; તાનિ-તેને વેદ-જાણે છે; સ:-તે પિતુઃ-પિતા વા સર્વ ઈશ્વરના પિતા-જ્ઞાન પ્રદાનથી વા આસ્તિકતાથી રક્ષક અસત્-બને છે. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેઓ ઈશ્વરની મુક્તિ સાધક બુદ્ધિમાં સ્થિત સ્વરૂપનો ઉપદેશ કરે છે તથા યથાર્થ રૂપથી પદાર્થોના અને ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવો જાણે છે, તેઓ વયોવૃદ્ધ પિતરોના પણ પિતરો થવા યોગ્ય છે, તેમ જાણો. (૯)

સ નો બન્ધુર્જનિતા સ વિધાતા ધામાનિ વેદ્ ભુવનાનિ વિશ્વાં ।

યત્ર દેવાઃઅમૃતમાનશાનાસ્તૃતીયે ધામન્નધ્યૈર્યન્ત ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્ર-જે તૃતીયે-જીવ અને પ્રકૃતિથી વિલક્ષણ ત્રીજા ધામન્-ધામ = આધારભૂત જગદીશ્વરમાં અમૃતમ્-મોક્ષ સુખને આનશાના:-પ્રાપ્ત કરતાં દેવા:-વિદ્વાન લોકો અધ્યૈર્યન્ત-સર્વત્ર સ્વેચ્છાપૂર્વક વિચરે છે.

જે વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-લોક-લોકાન્તરો અને ધામાનિ-જન્મ, સ્થાન અને નામોને વેદ-જાણે છે; સ:-તે પરમાત્મા ન:-અમારા બન્ધુ:-ભાઈની સમાન માનનીય, સહાયક છે; જનિતા-ઉત્પન્ન કરનાર છે; સ:-તે વિધાતા-સર્વ પદાર્થો અને કર્મફલોનું વિધાન કરનાર છે; તેમ તમે નિશ્ચય કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમાત્મામાં યોગી વિદ્વાન જન મુક્તિ સુખને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે, તેને જ સર્વજ્ઞ, સર્વના ઉત્પાદક અને સહાયક = બંધુ માનવા જોઈએ. (૧૦)

પરીત્યં ભૂતાનિ પરીત્યં લોકાન્ પરીત્યં સર્વાઃ પ્રદિશો દિશંચ ।

ઉપસ્થાયં પ્રથમજામૃતસ્યાત્મનાત્માનમ્ભિ સં વિવેશ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે ભૂતાનિ-પ્રાણીઓને પરીત્ય-વ્યાપ્ત કરીને; લોકાન્-દર્શનીય પૃથિવી, સૂર્ય આદિ લોકોને પરીત્ય-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને, સર્વાઃ-સર્વ પ્રદિશઃ-આગ્નેય આદિ ઉપદિશાઓ, દિશઃ-પૂર્વ આદિ દિશાઓ, ચ-અને ઉપર તથા નીચેની દિશાઓને પરીત્ય-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને, ઋતસ્ય-સત્યના આત્માનમ્-સ્વરૂપ વા અધિષ્ઠાનમાં અભિ, સમ્, વિવેશ-મુખ્ય રૂપથી સમ્યક્ પ્રવિષ્ટ કરે છે. તેથી પ્રથમજામ્-પ્રથમ કલ્પ આદિમાં ઉત્પન્ન ચાર વેદરૂપ વાણીને ઉપસ્થાય-ભાણીને વા સમ્યક્ સેવન કરીને આત્મા-પોતાના શુદ્ધ સ્વરૂપ વા અન્તઃકરણથી તેને પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ધર્માચરણ, વેદાભ્યાસ, યોગાભ્યાસ અને સત્સંગ આદિ કર્મોથી શરીરની પુષ્ટિ, આત્મા અને અન્તઃકરણની શુદ્ધિ કરીને, સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને સુખી રહો. (૧૧)

પરિ દ્યાવાપૃથિવી સદ્યઃઙ્ઙત્વા પરિં લોકાન્ પરિં દિશઃ પરિં સ્વઃ ।

ઋતસ્ય તન્તું વિતંતું વિચૃત્ય તદપશ્યત્તદભવત્તદાસીત્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વર દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિને સદ્યઃ-શીઘ્ર ઙ્ઙત્વા-પ્રાપ્ત કરીને પરિ, અપશ્યત્-સર્વત્રથી જુએ છે; જે લોકાન્-દર્શનીય સૃષ્ટિસ્થ ભૂગોળોને સદ્યઃ-શીઘ્ર ઙ્ઙત્વા-પ્રાપ્ત કરીને

માટે મેધામ્-શુદ્ધ બુદ્ધિ વા ધનને દદાતુ-આપે અગ્નિ:-વિદ્યાથી પ્રકાશિત પ્રજાપતિ:-પ્રજાના રક્ષક વિદ્વાન મેધામ્-બુદ્ધિ આપે ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન મેધામ્-બુદ્ધિને આપે ચ-અને વાયુ:-બળદાતા અને બળવાન મેધામ્-બુદ્ધિ આપે ચ-અને ધાતા-સંસાર વા રાજ્યનું ધારણ કરનાર ઈશ્વર વા વિદ્વાન મે-મારા માટે બુદ્ધિ વા ધન દદાતુ-આપે, તેમ તમને પણ પ્રદાન કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પોતાને માટે ગુણ, કર્મ, સ્વભાવની તથા સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે. જેમ પોતાની ઉન્નતિને માટે પ્રાર્થના કરે, તેમ અન્યોની ઉન્નતિ માટે પણ પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોથી પ્રાર્થના કરે. માત્ર પ્રાર્થના જ નહિ પરંતુ સત્ય આચરણ પણ કરે. જ્યારે જ્યારે વિદ્વાનોની પાસે જાય, ત્યારે-ત્યારે સર્વના કલ્યાણને માટે પ્રયત્નોત્તર કરે. (૧૫)

इदं मे ब्रह्मं च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् ।

मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा ॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી અને હે વિદ્વાન ! તારા પુરુષાર્થથી સ્વાહા-સત્યાચરણરૂપ ક્રિયાથી મે-મારા ઇદમ્-આ બ્રહ્મ-વેદ અને ઈશ્વરનું વિજ્ઞાન વા તેના જ્ઞાતાપુરુષ = બ્રહ્મકુળ, ચ-અને ક્ષત્રમ્-રાજ્ય, ધનુર્વેદની વિદ્યા તથા ક્ષત્રિયકુળ ચ-પણ આ ઉભે-બન્ને શ્રિયમ્-રાજ્યની લક્ષ્મીને અશ્રુતામ્-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ દેવા:-વિદ્વાનો મયિ-મારામાં ઉત્તમામ્-અતિશ્રેષ્ઠ, શ્રિયમ્-શોભા અને લક્ષ્મીને દધતુ-સ્થાપિત કરે, તેમ અન્યોમાં પણ કરે.

હે જિજ્ઞાસુ ! તે-તારા માટે તસ્યૈ-ઉક્ત શ્રીની પ્રાપ્તિ માટે અમે પ્રયત્ન કરીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમાત્માની આજ્ઞાનાં પાલનથી, વિદ્વાનોની સેવા તથા સત્કારથી સર્વ મનુષ્યોમાંથી બ્રાહ્મણો અને ક્ષત્રિયોને સુરક્ષિત કરીને, તેઓને વિદ્યા આદિ સદ્ગુણોથી સંયુક્ત કરીને, સર્વની ઉન્નતિ કરીને પોતાના આત્માની સમાન સર્વની સાથે વ્યવહાર કરે છે, તેઓ સર્વના પૂજ્ય બની શકે છે. (૧૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વર, વિદ્વાન, બુદ્ધિ તથા ધનની પ્રાપ્તિના ઉપાયો અને તેના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ ત્રયસ્ત્રિંશત્તમાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભુદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અસ્યાજરાસો દ્વમમરિત્રાઽર્ચદ્ધૂમાસોઽઅગ્નયઃ પાવકાઃ ।

શ્વિતીચયઃ શ્વાત્રાસો ભુરણ્યવો વનર્ષદો વાયવો ન સોમાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અસ્ય-એ પૂર્વ અધ્યાયોક્ત જગદીશ્વર અને પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં અજરાસઃ-વયહાનિ રહિત - વૃદ્ધાવસ્થા રહિત, અરિત્રાઃ-શત્રુઓથી રક્ષા કરનારા, અર્ચદ્ધૂમાસઃ-સુગંધીથી યુક્ત ધૂમવાળા, પાવકાઃ-પવિત્રકારક, શ્વિતીચયઃ-શ્વેત વર્ણને પસંદ કરનારા, શ્વાત્રાસઃ-ધનની વૃદ્ધિ કરનારા, ભુરણ્યવઃ-ધારણ અને ગતિ કરનારા, સોમાઃ-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનારા, અગ્નયઃ-વિદ્યુત્ આદિ છે; તેઓ વનર્ષદઃ-વન = કિરણોમાં રહેનારા વાયવઃ-પવનોની ન-સમાન દમમ્-ધરોને ધારણ કરનારા પદાર્થો છે; તેને તમે જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો અગ્નિ અને વાયુ આદિ સૃષ્ટિના પદાર્થોને જાણે, તો તેના દ્વારા અનેક ઉપકારો શ્રવણ કરી શકે છે. (૧)

હરયો ધૂમકેતવો વાતજૂતાઽઽપ્ દ્યવિ । યતન્તે વૃથગ્નયઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ધૂમકેતવઃ-કેતુ = ધ્વજાની સમાન ધૂમ જેનો જ્ઞાપક છે, વાતજૂતાઃ-વાયુથી તેજને પ્રાપ્ત થનાર, હરયઃ-હરણશીલ = દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર અગ્નયઃ-અગ્નિઓ વૃથક્-પૃથક્ દ્યવિ-પ્રકાશમાં ઽપ + યતન્તે-ચેષ્ટા કરે છે; તેના કાર્યોની સિદ્ધિ માટે સમ્યક્ પ્રયોગ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેનો ધૂમ વિજ્ઞાપક છે, વાયુ પ્રદીપ્ત કરનાર છે અને જેમાં હરણશીલતા છે, તે અગ્નિઓ છે; તેમ જાણો. (૨)

યજાં નો મિત્રાવરુણા યજાં દેવાંરઽઝ્ઠતં બૃહત્ ।

અગ્ને યક્ષિ સ્વં દમમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ નઃ-અમારા મિત્રાવરુણા-મિત્ર, શ્રેષ્ઠજન અને દેવાન્-વિદ્વાનોનો યજ-સત્કાર કરો; બૃહત્-મહાન ઝ્ઠમ્-સત્ય યજ-પ્રદાન કરો અને તેનો ઉપદેશ કરો; જેથી સ્વમ્-પોતાનાં દમમ્-ધરને યક્ષિ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! અમારા મિત્રો, શ્રેષ્ઠજનો અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનારા, સત્યના ઉપદેશક તથા પોતાનાં ધરનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારા તમે બનો. (૩)

યુક્ત્વા હિ દૈવહૂતમાર્ઠ્ઠઅશ્વૌર્ઠ્ઠઅગ્ને ર્થીરિવ । નિ હોતા પૂર્વ્યઃ સદઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ ર્થીરિવ-સારથિની સમાન દેવહૂતમાન્-વિદ્વાનો દ્વારા અત્યંત સ્તુતિ પામેલ અશ્વાન્-શીઘ્રગામી અગ્નિ આદિ અથવા ઘોડાઓને યુક્ત-યુક્ત કરો; પૂર્વ્યઃ-પૂર્વજ વિદ્વાનોથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને હોતા-ગ્રહણ કરનારા હિ-જ નિ + સદઃ-કાર્યોમાં સદા સ્થિર બનો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સુશિક્ષિત સારથિ ઘોડાઓ દ્વારા અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ શિક્ષિત મનુષ્યે અગ્નિ આદિથી અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

દ્વે વિસ્ત્રુપે ચરતઃ સ્વર્થેઽઅન્યાન્યા વત્સમુપ ધાપયેતે ।

હરિરન્યસ્યાં ભવતિ સ્વધાવાઙ્ઘુક્રો ઽ અન્યસ્યાં દદૃશે સુવર્ચાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સ્વર્થે-ઉત્તમ પ્રયોજનવાળી દ્વે-બે વિસ્ત્રુપે-વિરુદ્ધ રૂપવાળી સ્ત્રીઓ ચરતઃ-ભોજનાદિ આચરણ કરે છે અને અન્યાન્યા-ભિન્ન ભિન્ન અલગ સમયમાં વત્સમ્-નિરંતર બોલનારા બાળકને ઉપ, ધાપયેતે-નજીક લાવીને દૂધપાન કરાવે છે, તે બન્નેમાંથી અન્યસ્યામ્-એકમાં સ્વધાવાન્-પ્રશસ્ત શાન્તિ આદિ સ્વધા = અમૃત સમાન ગુણ યુક્ત હરિઃ-મનોહર પુત્ર ભવતિ-ઉત્પન્ન થાય છે; અન્યસ્યામ્-બીજી સ્ત્રીમાં શુક્રઃ-શીઘ્રકારી સુવર્ચાઃ-સુંદર તેજસ્વી અન્યસ્યામ્ દદૃશે-ઉત્પન્ન થાય છે અર્થાત્ જોવામાં આવે છે.

એ જ રીતે સુંદર પ્રયોજન વાળા બે કાળા અને સફેદ ભિન્ન રૂપવાળા રાત્રિ અને દિવસ વિદ્યમાન છે, તેમાં ભિન્ન-ભિન્ન અલગ સમયમાં એક સંસારરૂપ બાળકને દૂધ વગેરે પીવડાવે છે, તે બન્નેમાંથી એક રાત્રિમાં અમૃતરૂપ ગુણવાળો, મનને પ્રસન્ન કરનાર ચંદ્રમા ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજા દિવસ રૂપ સમયમાં પવિત્રકર્તા, સુંદર તેજવાળો સૂર્યરૂપ પુત્ર દદૃશે-જોવામાં આવે છે. તેમ બન્ને રાત-દિવસ છે; તેમ તમે જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સંતાનનાં પ્રયોજનવાળી બે સ્ત્રીઓ અથવા ગાયો પૃથક્-પૃથક્ રહીને કાલભેદથી એક બાળકનું પાલન કરે છે; તેમાંથી એકમાં મનોહર, મહાન ગુણવાન અને શાન્ત સ્વભાવવાળો બાળક ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજીમાં શીઘ્રકારી અને તેજસ્વી અને શત્રુઓને તપાવનાર બાળક ઉત્પન્ન થાય છે.

એ જ રીતે રાત અને દિવસ બન્ને ભિન્ન સ્વરૂપવાળા છે, કાલભેદથી એક સંસારનું પાલન કરે છે. કેવી રીતે ? રાત અમૃતની વર્ષા કરનાર, ચિત્તને પ્રસન્ન કરનાર ચન્દ્રમાને ઉત્પન્ન કરીને તથા દિવસ અગ્નિરૂપ, સુંદર પ્રકાશવાળા સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને સંસારનું પાલન કરે છે. (૫)

અયમિહ પ્રથમો ધાયિ ધાતૃભિર્હોતા યજિષ્ઠો ઽ અધ્વરેષ્વીઙ્ઘ્યઃ ।

યમર્જવાનો ભૃગવો વિરુરુચુર્વનૈષુ ચિત્રં વિશ્વં વિશેવિશે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ધાતૃભિઃ-ધારણ કરનારાથી ઙ્ઘ-આ સંસારમાં વિશે-વિશે-પ્રત્યેક પ્રજાજનને માટે અયમ્-આ વિદ્યુત્ આદિ સ્વરૂપવાળો અગ્નિ, જે પ્રથમઃ-વિસ્તીર્ણ, હોતા-સુખદાતા, યજિષ્ઠઃ-અત્યંત

સંગમ કરાવનાર, અધ્વરેષુ-હિંસારહિત = રક્ષણીય વ્યવહારોમાં ઈંદ્ર્યઃ-સ્તુતિને યોગ્ય છે; તે ધાયિ-ધારણ કરવામાં આવે છે.

જેમ ભૃગવઃ-દેહ જ્ઞાનવાળા તથા અજ્ઞવાનઃ-ઉત્તમ સંતાનવાળા શ્રેષ્ઠ શિષ્યજન યમ્-જે વનેષુ-વનો વા કિરણોમાં ચિત્રમ્-આશ્ચર્યરૂપ ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા વિશ્વમ્-વિભુ = વ્યાપક વિદ્યુત્ નામક અગ્નિને વિ + સ્તુત્વઃ-વિશેષ રૂપથી પ્રદીપ્ત કરે છે; તેને તમે ધારણ અને પ્રકાશિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન આ સંસારમાં વિદ્યુત્ની વિદ્યાને જાણે છે, તે સર્વ પ્રજાને સમસ્ત સુખોથી યુક્ત કરી શકે છે. (૬)

ત્રીણિં શતા ત્રી સહસ્ત્રાણ્યગ્નિં ત્રિંશત્ત્વં દેવા નવં ચાસપર્યન્ ।

ઔક્ષન્ ઘૃતૈરસ્તૃણન્ બર્હિરસ્મા ઽ આદિદ્ધોતારં ન્યુસાદયન્ત ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ત્રિંશત્-પૃથિવી આદિ ત્રીસ, ત્ર-અને નવ પ્રકારના ત્ર-આ બધાં અને નવ-નવ દેવાઃ-વિદ્વાનો ત્રીણિ-ત્રણ શતા-સો ત્રી-ત્રણ સહસ્ત્રાણિ-હજાર કોશ માર્ગમાં અગ્નિમ્-અગ્નિનું અસપર્યન્-સેવન કરે છે; ઘૃતૈઃ-ઘૃત અથવા જળથી તેને ઔક્ષન્-સિંચે છે; બર્હિઃ-અન્તરિક્ષને અસ્તૃણન્-આચ્છાદિત કરે છે; અસ્મૈ-એ અગ્નિને માટે હોતારમ્-હોમ કરનારાને આત્-સર્વત્ર ઇત્-જ નિ + અસાદ્યન્ત-સર્વદા સ્થાપિત કરે છે; તેમ તમે પણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પી વિદ્વાન અગ્નિ તથા જળ આદિ પદાર્થોને યાનોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરીને ઉત્તમ, મધ્યમ તથા નિમ્ન વેગોથી અનેક સો, હજારો કોશોના માર્ગોને પાર કરી શકે છે, તેઓ આકાશ ગમનમાં પણ સમર્થ બની શકે છે. (૭)

મૂર્ધ્ધાનં દિવોઽઅરતિં પૃથિવ્યા વૈશ્વાનરમૃતઽઆ જાતમગ્નિમ્ ।

કવિઃસમ્રાજમતિથિં જનાનામાસન્ના પાત્રં જનયન્ત દેવાઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેવાઃ-શિલ્પી વિદ્વાન જન દિવઃ-આકાશના મૂર્ધ્ધાનમ્-શિરની સમાન ઉન્નત પ્રદેશમાં સૂર્યરૂપમાં વિદ્યમાન, પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીને અરતિમ્-પ્રાપ્ત, વૈશ્વાનરમ્-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી, વ્રજ્ઞે-યજ્ઞના નિમિત્ત, આ, જાતમ્-સર્વત્ર પ્રાદુર્ભૂત, કવિમ્-કાન્ત દર્શક, સમ્રાજમ્-સમ્યક્ પ્રકાશમાન, જનાનામ્-મનુષ્યોના અતિથિમ્-અતિથિની સમાન પ્રથમ ભોજનમાં ભાગ લેનાર, પાત્રમ્-રક્ષાનાં સાધન, આસન્-ઈશ્વરનાં મુખરૂપ સામર્થ્યમાં ઉત્પન્ન થયેલ અગ્નિમ્-અગ્નિને આ + જનયન્ત-સારી રીતે પ્રકટ = પ્રાદુર્ભાવ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનો પ્રાદુર્ભાવ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન પૃથિવી, જળ, વાયુ અને આકાશમાં વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ નામક અગ્નિને પ્રકટ કરીને યંત્ર આદિથી યુક્તિપૂર્વક ચલાવે છે, તે ક્યા ક્યા કાર્યોને સિદ્ધ નથી કરી શકતા ? (૮)

અગ્નિર્વૃત્રાણિં જઙ્ઘનદ્ દ્રવિણસ્યુર્વિપ્ન્યયા । સમિદ્ધઃ શુક્રઽઆહુતઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ સમિદ્ધઃ-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત, શુક્રઃ-શીઘ્રકારી, અગ્નિઃ-સૂર્યાદિરૂપ અગ્નિ

વૃત્રાણિ-મેઘનાં અંગોને-વાદળાંઓનું જઙ્ઘનત્-અત્યંત હનન કરે છે, તેમ દ્રવિણસ્યુઃ-પોતાને ધન મેળવવાની ઈચ્છા કરીને; આહુતઃ-આપને નિમંત્રિત કરે છે - બોલાવે છે, વિપન્યયા-વિશેષ વ્યવહારની યુક્તિથી દુષ્ટોનું અત્યંત હનન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ વ્યવહાર કુશળ મનુષ્ય ધન અને સત્કાર પ્રાપ્ત થતાં દોષોનો નાશ કરે છે, તેમ સૂર્ય મેઘને-વાદળાંઓને ઇન્ન-ભિન્ન કરે છે. (૯)

વિશ્વેભિઃ સોમ્યં મધ્વગ્નઽન્દ્રેણ વાયુનાં । પિબાં મિત્રસ્ય ધામભિઃ ॥ ૧૦ ।

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ જેમ સૂર્ય વિશ્વેભિઃ-સર્વ ધામભિઃ-સ્થાનોથી ઇન્દ્રેણ-ધનના ધારક વાયુના-બળવાન વાયુની સાથે સોમ્યમ્-સોમ = ઉત્તમ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન મધુ-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત રસનું પાન કરે છે; તેમ મિત્રસ્ય-મિત્રનાં સર્વ સ્થાનોથી ઉત્તમ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત રસનું પિબ-પાન કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય સર્વ પદાર્થોમાંથી રસ ચૂસીને, વર્ષા કરીને, સર્વ પદાર્થોને પુષ્ટ કરે છે, તેમ વિદ્યા અને વિનયથી સર્વને પુષ્ટ કરો. (૧૦)

આ યદિષે નૃપતિં તેજઽઆનદ્ શુચિ રેતો નિષિક્તં દ્યૌર્ભીકેં ।

અગ્નિઃ શર્દ્દીમનવદ્યં યુવાનઃસ્વાધ્યં જનયત્સૂદયચ્ચ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો યત્-જ્યારે ઇષે-વર્ષા માટે નિષિક્તમ્-અગ્નિમાં ઘૃત આદિ પડવાથી સર્વથા સિક્ત = વિસ્તૃત થઈને, શુચિઃ-પવિત્ર તેજઃ-યજ્ઞથી ઉત્પન્ન તેજ નૃપતિમ્-રાજાની સમાન સૂર્યને આ, આનદ્-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે; ત્યારે અગ્નિઃ-સૂર્યરૂપ અગ્નિ શર્દ્દમ્-બળને માટે, અનવદ્યમ્-નિર્દોષ, યુવાનમ્-યુવકતાથી સંપાદક, સ્વાધ્યમ્-ધ્યાન કરવા યોગ્ય, રેતઃ-વીર્યને ઉત્પન્ન કરનાર વર્ષા જળને દ્યૌઃ-આકાશની અભીકે-નજીક જનયત્-ઉત્પન્ન કરે છે ચ-અને સૂદયત્-વરસાવે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિમાં હોમવામાં આવેલા દ્રવ્યો તેજની સાથે સૂર્ય-કિરણોને પ્રાપ્ત થાય છે, સૂર્ય જળ આદિનું આકર્ષણ કરીને, વરસાવીને, સર્વનું પાલન કરે છે; તેમ રાજા પ્રજાઓ પાસેથી કર લઈને, જળ આદિનો સંગ્રહ કરીને, દુકાળમાં ફરી આપીને, શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરીને, દુષ્ટોનું તાડન કરીને, દંઢતા અને બળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

અગ્ને શર્દ્દી મહતે સૌભગાય તવ દ્યુમ્નાન્યુત્તમાનિ સન્તુ ।

સં જાસ્પત્યઃ સુયમમા કૃણુષ્વ શત્રૂયતામભિ તિષ્ઠા મહાંશ્સિ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! આપ મહતે-મહાન સૌભગાય-સૌભાગ્ય = ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે શર્દ્દ-દુષ્ટ ગુણો તથા શત્રુઓના નાશક બળને આકૃણુષ્વ-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો, જેથી તવ-આપના દ્યુમ્નાનિ-ધન વા યશ ઉત્તમાનિ-શ્રેષ્ઠ સન્તુ-થાય.

આપ જાસ્યત્યં-સ્ત્રી-પુરુષના ભાવને સુયમમ્-સુંદર નિયમો યુક્ત, શાસ્ત્રાનુકૂળ બ્રહ્મચર્યયુક્ત સમ,

આ-સમ્યક્ સારી રીતે બનાવો - કરો. આપ શત્રૂયતામ્-શત્રુતાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યોના મહાંસિ-તેજ અભિ, તિષ્ઠ-નષ્ટો કરો - તિરસ્કૃત કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે અત્યંત સંયમી મનુષ્ય છે, તેના મહાન ઐશ્વર્ય, બળ, કીર્તિ, સુશીલ = ઉત્તમ સ્વભાવવાળી પત્ની [પ્રાપ્ત થાય છે] અને શત્રુઓનો પરાજય થાય છે. (૧૨)

ત્વાઽહિ મન્દ્રતમમર્કશોકૈર્વૈવૃમહે મહિ નઃ શ્રોષ્યંને ।

ઇન્દ્રંન ત્વા શર્વસા દેવતા વાયું પૃણન્તિ રાધસા નૃતમાઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! હિ-જેથી આપ નઃ-અમે બ્રહ્મચર્ય આદિ સત્કર્મોમાં પ્રવૃત્ત જનોના મહિ-મહાન - ગંભીર વચનને શ્રોષિ-સાંભળો છો; તેથી મન્દ્રતમમ્-અત્યંત પ્રશંસા આદિ સત્કારને પ્રાપ્ત ત્વામ્-આપને અર્કશોકૈઃ-અર્ક = સૂર્યની સમાન શોક = પ્રકાશ યુક્ત જનોથી અથવા પદાર્થોથી અમે વૃમહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ.

નૃતમાઃ-જે અત્યંત નાયક - શ્રેષ્ઠ જન છે, તે શર્વસા-બળથી યુક્ત ઇન્દ્રમ્-સૂર્યની ન-સમાન તેજસ્વી અને વાયુમ્-વાયુની સમાન બળવાન દેવતા-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત ત્વા-આપને રાધસા-ધનથી પૃણન્તિ-પાલન વા પરિપૂર્ણ કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુઃખોને સહન કરીને, સૂર્યની સમાન તેજસ્વી અને વાયુની સમાન બળવાન બનીને વિદ્યા તથા સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ વાદળોથી સૂર્યની સમાન સર્વને આનંદિત કરનારા “પુરુષોત્તમ” બને છે. (૧૩)

ત્વેઅગ્ને સ્વાહુત પ્રિયાસઃ સન્તુ સૂર્યઃ ।

યન્તારો યે મઘવાનો જનાનામૂર્વાન્દર્યન્ત્ ગોનામ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્વાહુત-સુંદર રીતે વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર અગ્ને-વિદ્વાન્ ! યે-જે જનાનામ્-મનુષ્યોની મધ્યમાં વીર પુરુષ યન્તારઃ-જિતેન્દ્રિય, મઘવાનઃ-અતિ ધનવાન, ગોનામ્-પૃથ્વી વા ગાય આદિના ઊર્વાન્-હિંસકોનું દયન્ત-હનન કરે છે; તેઓ સૂર્યઃ-વિદ્વાન્ ત્વે-આપના પ્રિયાસઃ-પ્રિય સન્તુ-બનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અગ્નિ આદિ પદાર્થ વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, વિદ્વાનોમાં પ્રિય બનીને, દુષ્ટોનો નાશ તથા ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરીને મનુષ્યોમાં પ્રિય બને છે, તેમ તમે પણ બનો. (૧૪)

શ્રુધિ શ્રુત્કર્ણ વહ્નિભિર્દેવૈરગ્ને સયાવભિઃ ।

આ સીદન્તુ બર્હિષિ મિત્રોઽર્ચ્યમા પ્રાતર્યાવાણોઽઅધ્વરમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે શ્રુત્કર્ણ-પ્રાર્થનાં વચનને સાંભળનારા કાનોથી યુક્ત અગ્ને-અગ્નિની સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! સયાવભિઃ-સાથે ચાલનારા, વહ્નિભિઃ-કાર્યોના નિર્વાહક દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાથે અધ્વરમ્-હિંસારહિત રાજ્ય વ્યવહારને શ્રુધિ-સાંભળો.

પ્રાતર્યાવાણઃ-પ્રાતઃકાલ રાજકાર્યોને પ્રાપ્ત કરાવનારા **મિત્રઃ**-પક્ષપાત રહિત, સર્વના મિત્ર અને **અર્યમા-અર્ય** = વૈશ્ય અથવા સ્વામીજનોનું માન કરનાર ન્યાયાધીશ સર્વ **બર્હિષિ**-આકાશની સમાન વિશાળ સભામાં **આ, સીદન્તુ**-સારી રીતે બેસો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજાએ સુપરીક્ષિત મંત્રીઓની પસંદગી કરીને, તેઓની સાથે સભામાં બેસીને, વાદી - પ્રતિવાદીઓનાં વચનો સાંભળીને તથા તેની સમીક્ષા કરીને યથોચિત ન્યાય કરવો જોઈએ. (૧૫)

વિશ્વૈષામદિતિર્યજ્ઞિયાનાં વિશ્વૈષામતિથિર્માનુષાણામ્ ।

અગ્નિર્દેવાનામર્વઽઆવૃણાનઃ સુમૃડીકો ભવતુ જાતવેદાઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! આપ **વિશ્વૈષામ**-સર્વ યજ્ઞિયાનામ્-યજ્ઞ = પૂજાને યોગ્ય **દેવાનામ્**-વિદ્વાનોની મધ્યમાં **અદિતિઃ**-અખંડિત બુદ્ધિવાળા; **વિશ્વૈષામ**-સર્વ માનુષાણામ્-મનુષ્યોમાં **અતિથિઃ**-પૂજનીય અવઃ-રક્ષા આદિનો **આવૃણાનઃ**-સારી રીતે સ્વીકાર કરતા, **સુમૃડીકઃ**-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરનાર, **જાતવેદાઃ**-વિદ્યા અને યોગમાં પ્રસિદ્ધ બુદ્ધિવાળા **અગ્નિઃ**-તેજસ્વી રાજા **ભવતુ**-બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વ વિદ્વાનોમાં ગંભીર બુદ્ધિવાળા, સર્વ મનુષ્યોમાં માનનીય, પ્રજાના રક્ષા આદિ રાજકાર્યનો સ્વીકાર કરનાર, સર્વ સુખોના દાતા વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અને વીર પુરુષ હોય, તેને રાજા બનાવવો જોઈએ. (૧૬)

મહોઽઅગ્નેઃ સમિધાનસ્ય શર્મણ્યનાગા મિત્રે વરુણે સ્વસ્તર્યૈ ।

શ્રેષ્ઠૈ સ્યામ સવિતુઃ સર્વીમનિ તદ્દેવાનામર્વોઽઅઘ્વા વૃણીમહે ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : અમે રાજપુરુષો **મહઃ**-મહાન **સમિધાનસ્ય**-પ્રકાશમાન **અગ્નેઃ**-વિજ્ઞાનવાન સભાપતિના **શર્મણિ**-આશ્રયમાં વિદ્યમાન **શ્રેષ્ઠૈ**-શ્રેષ્ઠ **મિત્રે**-મિત્ર અને **વરુણે**-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય મનુષ્યના પ્રત્યે **અનાગાઃ**-અપરાધ રહિત **સ્યામ**-બનીએ.

અઘ્વા-આજ **સવિતુઃ**-સકળ જગતના ઉત્પાદક પરમેશ્વરની **સર્વીમનિ**-આજ્ઞાનું પાલન કરતા **સ્વસ્તર્યૈ**-સુખને માટે **દેવાનામ્**-વિદ્વાનોની **તત્**-વેદોક્ત **અવઃ**-રક્ષા આદિ કર્મનો **વૃણીમહે**-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૧૭)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક વિદ્વાન રાજપુરુષોએ અધર્મનો ત્યાગ કરીને, ધર્મમાં પ્રવૃત્ત થઈને, પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિવિધ રચનાઓને જોઈને, પોતાની તથા અન્યોની રક્ષા કરીને ઈશ્વરનો ધન્યવાદ કરવો જોઈએ. (૧૭)

આર્પશ્ચિત્પિષ્યુ સ્તર્યો ન ગાવો નક્ષન્નૃતં જરિતારસ્તઽઇન્દ્ર ।

યાહિ વાયુર્ન નિયુતો નોઽઅચ્છા ત્વશ્હિ ધીભિર્દયસે વિ વાજાન્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! તે-આપની **જરિતારઃ**-સ્તુતિ કરનારા **આપઃ**-જલોની

સમાન પિષ્યુઃ-વૃદ્ધિ પામે છે; સ્તર્યઃ-આચ્છાદિત કરનારા ગાવઃ-કિરણોની ન-સમાન ઋત્નમ્-સત્યને નક્ષત્ર-વ્યાપ્ત કરે છે; તેમ વાયુઃ-વાયુની ન-સમાન વાજાન્-વિજ્ઞાનવાન નઃ-અમને નિયુતઃ-વાયુના વેગ આદિ ગુણોને, ત્વમ્-આપ અચ્છ-સારી રીતે યાહિ-પ્રાપ્ત થાઓ; હિ-જે કારણે ધીમિઃ-બુદ્ધિ વા કર્મોથી વિ, દયસે-વિશેષ કૃપા કરો છો, તેથી ચિત્-પણ સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો પદાર્થોના ગુણ - કર્મ - સ્વાભાવોની સ્તુતિ કરનારા ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો હોય, તો સર્વ મનુષ્યો વિદ્યામાં વ્યાપક બનીને દયાવાન બને છે. (૧૮)

ગાવ્ડપાવતાવતં મહી યજ્ઞસ્ય ર્પ્સુદાં । ડ્ઘા કર્ણાં હિરણ્યયાં ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ગાવઃ-ગાયો વા કિરણો ડ્ઘા-બન્ને ર્પ્સુદા-રૂપ આપનારી મહી-મહાન આકાશ અને પૃથ્વીની રક્ષા કરે છે; તેમ તમે હિરણ્યયા-સુવર્ણના આભૂષણોથી યુક્ત કર્ણાં-કાનોની તથા યજ્ઞસ્ય-રક્ષા યોગ્ય યજ્ઞની અવતમ્-વેદી આદિ કુંડની ડ્ઘ + અવત-સમીપ રહીને રક્ષા કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના કિરણો તથા ગાય આદિ પશુઓ સર્વ વસ્તુઓની રક્ષા કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ સુવર્ણ આદિથી બનેલા કુંડલ આદિ આભૂષણોની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧૯)

યદ્દઘ સૂરડડદિતેડનાંગા મિત્રોડઅર્ચ્યમા । સુવાતિ સુવિતા ભગઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે અઘ-આજ સૂરે-સૂર્યનો ડ્દિતે-ઉદય થતાં અર્થાત્ પ્રાપ્તઃકાલે અનાગાઃ-અધર્માચરણથી રહિત મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર સુવિતા-રાજનિયમોથી પ્રેરણા કરનાર, ભગઃ-ઐશ્વર્યવાન, અર્ચ્યમા-ન્યાયકારી રાજા પ્રજામાં આરોગ્યને સુવાતિ-ઉત્પન્ન કરે છે, તે રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બને છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનો ઉદય થતાં અંધકારનો નાશ તથા પ્રકાશ પ્રકટ થતા સર્વ આનંદિત બને છે, તેમ ધાર્મિક રાજાના હોવાથી પ્રજામાં સર્વ પ્રકારનું આરોગ્ય રહે છે. (૨૦)

આ સુતે સિઙ્ચત શ્રિયઃ રોદસ્યોરભિશ્રિયમ્ । ર્સા દધીત વૃષભમ્ તં પ્રત્નથાં । અયં વેનઃ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ર્સા-રસ અને આનંદ પ્રદાન કરનારા તમે, સુતે-ઉત્પન્ન થયેલા જગતમાં, વૃષભમ્-અતિ બળવાન, રોદસ્યોઃ આકાશ અને પૃથ્વીને અભિશ્રિયમ્-સર્વથી શોભાયમાન કરનારા શ્રિયમ્-સ્વયં શોભાયુક્ત સભાપતિનો આ + સિઙ્ચત-સારી રીતે અભિષેક કરો; અને તે સભાપતિ તમને દધીત-ધારણ કરે. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ અધ્યાય-૭નો મંત્ર ૧૨ અને ૧૬મો. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ રાજ્યની ઉન્નતિ દ્વારા સંસારને પ્રકાશિત કરનાર, સૌંદર્ય આદિ ગુણોથી સંપન્ન, બળવાન, વિદ્વાન, શૂરવીર અને સંપૂર્ણ અંગોવાળા મનુષ્યનો જ રાજ્યમાં [રાજાના રૂપમાં] અભિષેક કરવો જોઈએ. અને તે પ્રજાજનોમાં સુખને સ્થાપિત કરે છે. (૨૧)

આતિષ્ઠન્તં પરિ વિશ્વેડઅભૂષઙ્ઘિયો વસાનશ્ચરતિ સ્વરોચિઃ ।

મહત્તદ્વૃષ્ણોડઅસુરસ્ય નામા વિશ્વરૂપોડઅમૃતાનિ તસ્થૌ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! વિશ્વે-આપ સર્વ જેમ શ્રિયઃ-ધનો વા શોભાઓને વસાનઃ-ધારણ કરનાર, સ્વરોચિઃ-સ્વયં દીપ્તિવાન, વિશ્વસ્મઃ-સમસ્ત અર્થાત્ પદાર્થોમાં તેની સમાન રૂપથી વ્યાપ્ત અગ્નિ ચરતિ-વિચરણ કરે છે; અમૃતાનિ-નાશ રહિત વસ્તુઓમાં આ, તસ્થૌ-સ્થિત છે; તેમ એ આ + તિષ્ઠન્તમ્-સારી રીતે સ્થિર અગ્નિને પરિ + અભૂષન્-સર્વત્રથી શોભાયમાન કરો.

કારણ કે જે વૃષ્ણઃ-વર્ષા કરનારા અસુરસ્ય-હિંસક, વિદ્યુત્ નામક અગ્નિનું મહત્-મહાન તત્-તે નામ-નામ છે; તેના સર્વ કાર્યોને શોભિત કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે કારણે એ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ સર્વ પદાર્થોમાં સ્થિત હોવા છતાં કોઈને પ્રકાશિત કરતો નથી, તેથી તેનું 'અસુર' યોથુ નામ છે. જેઓ એ વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણે છે, તેઓ સર્વથી શોભાયમાન બને છે. (૨૨)

પ્ર વૌ મહે મન્દમાનાયાન્ધ્વસોઽર્ચી વિશ્વાનરાય વિશ્વાભુવૈ ।

ઇન્દ્રસ્ય યસ્ય સુમર્ખઃ સહો મહિ શ્રવૌ નૃમ્ણાં ચ રોદસી સપર્યતઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું રોદસી-આકાશ અને ભૂમિ યસ્ય-જે ઇન્દ્રસ્ય-પરમેશ્વરના સુમર્ખમ્-સુંદર મખ = યજ્ઞના કારણે નૃમ્ણામ્-ધન, સહઃ-બળ અને મહિ-મહાન શ્રવઃ-યજ્ઞની સપર્યતઃ-સેવા કરે છે; તે વિશ્વાનરાય-સર્વ મનુષ્યો જેનાથી છે, તે મહે-મહાન મન્દમાનાય-આનંદ સ્વરૂપ, વિશ્વાભુવૈ-સર્વને પ્રાપ્ત વા સર્વ પૃથ્વીના સ્વામી વા જેનાથી સંસાર છે તે ઈશ્વરની પ્ર + અર્ચ-પૂજા કર.

તે વઃ-તમારા માટે અન્ધસઃ-અન્ન આદિનું સુખ પ્રદાન કરે. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેને ઉત્પન્ન કરેલા ધન અને બળ આદિનું સર્વે સેવન કરે છે, તે જ મહાન યશસ્વી, સર્વના સ્વામી, આનંદમય, સર્વ વ્યાપ્ત, ઈશ્વર તમારા પૂજ્ય અને પ્રાર્થનીય છે, તે તમને ધનાદિથી ઉત્પન્ન સુખ પ્રદાન કરશે. (૨૩)

બૃહન્નિદિધ્મઽર્ષાં ભૂરિં શસ્તં પૃથુઃ સ્વરુઃ । યેષામિન્દ્રો યુવા સર્ખા ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : યેષામ્-જેના ઇધ્મઃ-તેજસ્વી, પૃથુઃ-વિસ્તાર યુક્ત, સ્વરુઃ-પ્રતાપી, યુવા-યુવાન, બૃહન્-મહાન ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન પરમાત્મા સર્ખા-મિત્ર છે; ઈષામ્-એ મનુષ્યોનાં ઇત્-જ ભૂરિ-અતિ શસ્તમ્-સ્તુતિ યોગ્ય કર્મ હોય છે. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેના ઉત્તમ પરમેશ્વર સખા = મિત્ર છે, તે જેમ આ બ્રહ્માંડમાં સૂર્ય પ્રતાપથી યુક્ત છે, તેમ પ્રતાપી હોય છે. (૨૪)

ઇન્દ્રેહિ મત્સ્યન્ધ્વસો વિશ્વૈભિઃ સોમપર્વીભિઃ । મહાંરઽભિષ્ટિરોજસા ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનાર વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ ઓજસા-પરાક્રમની સાથે મહાન્-મહાન અભિષ્ટિઃ-સર્વત્રથી પૂજ્ય = સત્કારને યોગ્ય છો, તથા વિશ્વૈભિઃ-સર્વ સોમપર્વીભિઃ-સોમ આદિ

ઔષધિઓનાં અવયવોની સાથે અન્ધસઃ-અન્નથી મત્સિ-તૃપ્ત થાઓ છો, તે અમને આ, ઇહિ-પ્રાપ્ત થાય. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કારણે અન્ન આદિથી મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનાં શરીર આદિનો નિર્વાહ થાય છે, તેથી તેઓની વૃદ્ધિ, સેવન તથા આહાર - વિહારને યથાવત જાણો. (૨૫)

इन्द्रो वृत्रमवृणोच्छर्द्धनीतिः प्र मायिनाममिनाद्वर्षणीतिः ।

अहन् व्यसमशुशध्रग्वनेष्वविर्धेनाऽअकृणोद्राम्याणाम् ॥ २६ ॥

પદાર્થ : શર્દ્ધનીતિઃ-શર્દ્ધ = બળને પ્રાપ્ત કરાવનાર, વર્ષણીતિઃ-વર્ષ = અનેક પ્રકારના રૂપોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, ડ્વિ-પારકા ધનની ઈચ્છા કરનારનો નાશ કરનાર, ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય સમાન પ્રતાપી સભાપતિ વૃત્રમ્-પ્રકાશને રોકનાર મેઘની સમાન ધર્મના નિરોધક દુષ્ટ શત્રુઓનું અવૃણોત્-યુદ્ધને માટે વરણ કરે છે.

માયિનામ્-માયા = દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા છલી, કપટી આદિનો પ્ર, અમિનાત્-નાશ કરે છે; વનેષુ-વનોમાં રહેનારા વ્યસમ્-કપટી, અંસ = ભૂજાનાં મૂળથી રહિત ચોરનું અહન્-હનન કરે છે; રામ્યાણામ્-રમણ = આનંદિત કરનારા ઉપદેશકોની ધેનાઃ-વાણીઓને આવિઃ + અકૃણોત્-પ્રકટ કરે છે; તે જ રાજા થવાને પાત્ર છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સુશિક્ષિત વાણીઓને પ્રકટ કરે છે; જેમ અગ્નિ વનોને બાળે છે, તેમ દુષ્ટ શત્રુઓને બાળે છે; જેમ દિવસ રાત્રિને દૂર કરે છે, તેમ છળ, કપટ, અવિદ્યા આદિને દૂર કરે છે; જે બળને પ્રકટ કરે છે, તે સુપ્રતિષ્ઠિત રાજપુરુષ બને છે. (૨૬)

कुतस्त्वमिन्द्र माहिनः सन्नेकौ यासि सत्पते किं तऽइत्था ।

सं पृच्छसे समराणः शुभानैर्वोचेस्तन्नो हरिवो यत्तैऽअस्मे महाँरऽ इन्द्रो यऽओजसा । कदा च न स्तरीरसि । कदा च न प्रयुच्छसि ॥ २७ ॥

પદાર્થ : હે સત્પતે-શ્રેષ્ઠ સત્ય વ્યવહાર વા સત્પુરુષોના પાલક ઇન્દ્ર-સભાપતે ! માહિનઃ-મહત્વથી યુક્ત અને પૂજ્ય = સત્કારને યોગ્ય ત્વમ્-આપ એકઃ-અસહાયી સન્-હોવા છતાં કુતઃ-કેવી રીતે યાસિ-પ્રાપ્ત થાવ છો વા વિચરણ કરો છો ? કિમ્ + તે + ઇત્થા-આમ કરવાનું આપનું પ્રયોજન શું છે ?

હે હરિવઃ-પ્રશંસિત મનોહર ઘોડાવાળા રાજન્ ! યત્-જે કારણે અસ્મે-અમે તે-આપના છીએ; તેથી સમરાણઃ-સમ્યક્ ચાલતા આપ નઃ-અમને સમ્, પૃચ્છસે-પૂછો, સંમતિ લો; શુભાનૈઃ-મંગલમય વચનોની સાથે તત્-તે એકાકી = અસહાય રહેવાનાં કારણને વોચેઃ-કહો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૪૦; અને અધ્યાય-૮નો મંત્ર-૨ અને ૩ જુઓ. (૨૭)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોએ સભાધ્યક્ષને આ રીતે કહેવું જોઈએ - હે સભાપતે ! આપે સહાયક વિના [એકલાએ] કોઈ કાર્ય ન કરવું જોઈએ. પરંતુ સજ્જનોની રક્ષા અને દુષ્ટોનો નાશ કરવામાં અમને સહાય રૂપમાં સદા રાખવા જોઈએ. આપે શુભાચરણયુક્ત બનીને અમારી શિષ્ટ જનોની સંમતિ

અને મૃદુ વચનો દ્વારા સંપૂર્ણ પ્રજા પર શાસન કરવું જોઈએ. (૨૭)

આ તત્ત્વં ઇન્દ્રાયવઃ પનન્તાભિ યઽઊર્વ ગોમન્તં તિતૃત્સાન્ ।

સકૃત્સ્વં યે પુરુપુત્રાં મહીંઽ સહસ્ત્રધારાં બૃહતીં દુદુક્ષન્ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-રાજન્ ! જે જે આયવઃ-સત્યને પ્રાપ્ત કરનારા પ્રજાજનો - સકૃત્સ્વમ્-એક વાર ઉત્પન્ન કરનારી, પુસ્તુત્રામ્-અન્ન આદિ રૂપમાં પ્રકટ અનેક પુત્રો વાળી, સહસ્ત્રધારામ્-અસંખ્ય સુવર્ણ આદિ પદાર્થોવાળી અથવા અસંખ્ય પ્રાણીઓને ધારણ કરવાવાળી, બૃહતીમ્-વિસ્તીર્ણ મહીમ્-વિશાળ ભૂમિને દુદુક્ષન્-દોહવા ઈચ્છે અર્થાત્ તેનાથી ઈચ્છાની પૂર્તિ કરવા ઈચ્છે છે.

જે-જે મનુષ્ય ગોમન્તમ્-દુષ્ટ ઈન્દ્રિયોવાળા લંપટ ઊર્વમ્-હિંસકજનને અભિ, તિતૃત્સાન્-મુખ્ય રૂપથી તર્દન-મારવા ઈચ્છે છે; જે તે-આપના તત્-તે રાજકર્મની આ, પનન્ત-પ્રશંસા કરે છે; તેની આપ સદા ઉન્નતિ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે રાજભક્ત, દુષ્ટોના હિંસક અને એક વારમાં અનેક ફળ આપનારી તથા સર્વને ધારણ કરનારી ભૂમિને એક વારમાં દોહવાને સમર્થ હોય, તે રાજ્ય કાર્યોને કરવાને સમર્થ બની શકે છે. (૨૮)

इमां ते धियं प्र भरे महो महीमस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तऽआनजे ।

तमृत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्रं देवासः शर्वसामदन्ननु ॥ २९ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! હું મહીમ્-પૂજાને યોગ્ય વાણી તથા इमाम્-એ તે-આપની ધિયમ્-બુદ્ધિ વા કર્મને પ્ર, ભરે-ધારણ કરું છું; સ્તોત્રે-સ્તુતિમાં યસ્ય-એ મારી ધિષણા-બુદ્ધિ યત્-જે તે-આપને આનજે-પ્રકટ કરે છે ; તમ્-તે શવસા-બળથી સાસહિમ્-અત્યંત સહન કરનાર ઇન્દ્રમ્-પરમ બળના યોગથી શત્રુઓના વિદારક સભાપતિને મહઃ-મહાન કાર્યના ઉત્સવે-આનંદ સમયમાં ચ-અને પ્રસવે-ઉત્પત્તિ કાળમાં ચ-પણ દેવાસઃ-વિદ્વાન લોકો અનુ + અમદન્-અનુકૂળતાપૂર્વક આનંદિત કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જો રાજા આદિ લોકો વિદ્વાનો દ્વારા ઉત્તમ બુદ્ધિ અને વાણી ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સત્યને અનુકૂળ રહીને સ્વયં આનંદિત બનીને અન્યોને પણ આનંદિત કરે છે. (૨૯)

विभ्राड् बृहत्पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविहृतम् ।

वातजूतो योऽअभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा वि राजति ॥ ३० ॥

પદાર્થ : યઃ-જે વાતજૂતઃ-વાયુથી વેગને પ્રાપ્ત સૂર્યની સમાન વિભ્રાડ્-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશમાન રાજા - અવિહૃતમ્-અખંડિત આયુઃ-જીવનને યજ્ઞપતૌ-યજ્ઞ = યુક્ત વ્યવહારના પાલક પોતાના આત્મામાં દધત્-ધારણ કરતા ત્મના-આત્માથી પ્રજાઃ-પ્રજાની અભિરક્ષતિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો છો, પુપોષ-પોષણ કરો છો. અને પુસ્થા-અનેક પ્રકારથી વિ રાજતિ-વિશેષ કરીને પ્રકાશમાન બનો છો; તે આપ બૃહત્-મહાન સોમ્યમ્-સોમ = ઔષધિના મધુ-મધુર રસનું પિબતુ-પાન કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વને જીવન આપે છે અને સર્વનું પાલન કરે છે, તેમ તમે સદ્ગુણોથી મહાન બનીને ન્યાય અને વિનયથી પ્રજાજનોની નિરંતર રક્ષા કરો. (૩૦)

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वायु सूर्यम् ॥ ३१ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જાતવેદસમ્-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન, દેવમ્-પ્રકાશમાન જે સૂર્યમ્-સૂર્યમંડળને વિશ્વાય-વિશ્વના દૃશે-દર્શન માટે કેતવઃ-કિરણો ઝૂ + વહન્તિ-આશ્ચર્યથી વહન કરે છે; ત્યમ્-તેને ઝ-વિચારપૂર્વક તમે જાણો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય કિરણો દ્વારા સંસારના દર્શન કરાવે છે અને સ્વયં સુશોભિત બને છે, તેમ વિદ્વાન જનો સર્વ વિદ્યાઓ અને શિક્ષાઓને બતાવીને - દર્શાવીને સુશોભિત બને. (૩૧)

येनां पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँरऽअनु। त्वं वरुण पश्यसि ॥ ३२ ॥

પદાર્થ : હે પાવક-પવિત્ર કર્તા, વરુણ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન વા રાજન્ ! ત્વમ્-આપ યેન-જે ચક્ષસા-પ્રકટ દર્શન વા ઉપદેશથી ભુરણ્યન્તમ્-પાલન કરનાર મનુષ્યને અનુ, પશ્યસિ-અનુકૂળ જુઓ છો; તેથી જનાન્-અમે સર્વ મનુષ્યોને જુઓ અને અમે આપને અનુકૂળ વર્તાવ કરીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષો જેવી રીતે વ્યવહારથી પ્રજાજનોના પ્રત્યે વ્યવહાર કરે, તેમ તેવા જ ભાવથી તેઓના પ્રત્યે પ્રજાજનો પણ વર્તાવ-વ્યવહાર કરે. (૩૨)

दैव्यावध्वर्युऽआ गतःरथेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञः समञ्जाथे तं प्रत्नथा।

अयं वेनः। चित्रं देवानाम् ॥ ३३ ॥

પદાર્થ : હે દેવ્યૌ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો વા દિવ્ય ગુણોમાં ચતુર અધ્વર્યૂ-પોતાના અહિંસા રૂપ યજ્ઞના ઈચ્છુક બે રાજપુરુષો ! આપ સૂર્યત્વચા-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન ત્વચા - બાહ્ય આવરણવાળા, રથેન-તે ગમનશીલ વિમાનાદિ યાનથી આ + ગતમ્-આવો; અને મધ્વા-મૃદુ સામગ્રીથી યજ્ઞમ્-યાત્રા, સંગ્રામ વા હવન રૂપ યજ્ઞને સમ્, અજ્ઞાથે-સમ્યક્ પ્રકટ કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨; ૧૬ અને ૪૨માં જુઓ. (૩૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ મનુષ્યો સૂર્યના પ્રકાશની સમાન વિમાન આદિ યાનો, સંગ્રામ તથા હવન આદિ રથીને યાત્રા આદિ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે. (૩૩)

आ नऽइडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देवऽएतु।

अपि यथा युवानो मत्संथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा ॥ ३४ ॥

પદાર્થ : હે યુવાનઃ-બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક વિદ્યા ભણેલા યુવકો ! યથા-જેમ વિશ્વાનરઃ-સર્વના નાયક, દેવઃ-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત સવિતા-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન ઉપદેશક - ઇડાભિઃ-સુશિક્ષિત વાણીઓથી વિદથે-બતાવવા યોગ્ય વ્યવહારમાં સુશસ્તિ-સુંદર પ્રશંસાયુક્ત નઃ-અમારા વિશ્વમ્-સર્વ જગત્-જંગમ = પુત્ર અને ગાય આદિને આ + એતુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ અભિપિત્વે-તેની સન્મુખ ગમનમાં તમે મત્સથ-આનંદિત રહો; જે નઃ-અમારી મનીષા-મેધા બુદ્ધિ છે, તેને અપિ-પણ શુદ્ધ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો સૂર્યની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત આત્માવાળા, શરીર તથા આત્માથી પૂર્ણ યુવાન, સુશિક્ષિત, જિતેન્દ્રિય અને સુશીલ હોય છે, તેઓ સર્વને ઉપદેશ દ્વારા જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૩૪)

યદદ્ય કચ્ચ વૃત્રહન્નુદગાઽઅભિ સૂર્યં । સર્વં તદિન્દ્ર તે વશે ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે વૃત્રહન્-વૃત્ર = મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન, સૂર્ય-વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક
ઇન્દ્ર-વિદ્વાન્ ! તે-આપના યત્-જે અદ્ય-આજે સર્વમ્-સર્વ કંઈ વશે-વશમાં છે; તત્-તેને કત્-સર્વથા
અભિ + અગાઃ-ઉન્નત કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન અવિદ્યારૂપ અંધકાર અને દુષ્ટતાનું નિવારણ કરીને સર્વને
વશીભૂત કરે છે, તેઓ અભ્યુદયને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૫)

તરણિર્વિશ્વદર્શતો જ્યોતિષ્કૃદસિ સૂર્યં । વિશ્વમા ભાસિ રોચનમ્ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે સૂર્ય-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન રાજન્ ! જેમ તરણિઃ-સૂર્ય - વિશ્વદર્શતઃ-સર્વને જોવા
યોગ્ય, જ્યોતિષ્કૃત્-અગ્નિ, વિદ્યુત્, ચંદ્રમા , નક્ષત્ર, ગ્રહ, તારા આદિને પ્રકાશિત કરનાર સૂર્યલોક
છે; તે રોચનમ્-રુચિકારક, વિશ્વમ્-સમગ્ર રાજ્યને પ્રકાશિત કરે છે; તેવા આપ અસિ-છો. જેથી આપ
ન્યાય અને વિનયથી રાજ્યને આ, ભાસિ-સારી રીતે પ્રકાશિત કરો છો, તેથી સત્કારને પાત્ર છો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જો રાજપુરુષ વિદ્યાના પ્રકાશક હોય, તો સર્વને આનંદિત કરી શકે છે. (૩૬)

તત્સૂર્યસ્ય દેવત્વં તન્મહિત્વં મધ્યા કર્ત્તોર્વિતત્સં જંભાર ।

યદેદર્યુક્ત હરિતઃ સ્ધસ્થાદ્રાત્રી વાસસ્તનુતે સિમસ્મૈ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જગદીશ્વર આકાશનાં મધ્યા-મધ્યમાં હરિતઃ-જેમાં પદાર્થોનું હરણ થાય તે
દિશાઓ અને વિતતમ્-વિસ્તૃત કાર્ય જગતનો સમ્, જંભાર-સંહાર કરીને પોતાનામાં લીન કરે છે; સિમસ્મૈ-
સર્વને માટે રાત્રી-રાતની સમાન વાસઃ-અંધકાર રૂપ આચ્છાદનને તનુતે-ફેલાવે છે; આત્-તદનન્તર
સધસ્થાત્-એક સ્થાનથી અર્થાત્ સર્વ સાક્ષી વગેરેથી નિવૃત્ત થઈને એકાગ્ર ઇત્-જ અયુક્ત-સમાધિસ્થ
થાય છે; તત્-તે કર્ત્તોઃ-કરવાને સમર્થ સૂર્યસ્ય-ચરાચરના આત્મા - પરમાત્માના દેવત્વમ્-દેવત્વ તત્-
તથા તેના મહિત્વમ્-મહિમાને તમે જાણો. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો આપ લોકો જે ઈશ્વર સર્વ જગતની રચના, ધારણ અને વિનાશ કરે છે ,
તેના તે મહિમાને જાણીને નિરંતર તેની ઉપાસના કરો. (૩૭)

તન્મિત્રસ્ય વરુણસ્યાભિચક્ષ્ણે સૂર્યો રૂપં કૃણુતે દ્યોરુપસ્થૈ ।

અનન્તમન્યદુર્શદસ્ય પાજઃ કૃષ્ણમન્યદ્ધરિતઃ સં ભરન્તિ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! દ્યૌઃ-પ્રકાશની ઉપસ્થિતિ-સમીપમાં વિદ્યમાન સૂર્યઃ-ચરાચરના આત્મા ઈશ્વર
મિત્રસ્ય-પ્રાણ અને વસ્ત્રાસ્ય-ઉદાનના તત્-તે સ્વપ્ન-રૂપને કૃણુતે-રચે છે; જેથી મનુષ્ય અભિચક્ષ્ણે-જુએ
છે - જાણે છે; અસ્ય-તે પરમાત્માના સ્થાત્-શુદ્ધ સ્વરૂપ, પાજઃ-બળ, અનન્તમ્-અપરિમિત અન્યત્-

આપણાથી ભિન્ન છે; અને અન્યત્-બીજા કૃષ્ણમ્-અવિદ્યાદિ મલિન ગુણવાળા ભિન્ન જગતને હરિતઃ- હરણશીલ દિશાઓ સમ્, ભરન્તિ-ધારણ કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અનંત બ્રહ્મ છે, તે પ્રકૃતિ અને જીવોથી ભિન્ન છે, એ રીતે પ્રકૃતિ નામક જગતનું કારણ વિભુ [વ્યાપક - વિસ્તૃત] છે. તેનાથી જે ઉત્પન્ન થાય છે, તે - તે સમય પ્રાપ્ત કરીને ઈશ્વરીય નિયમથી વિનિષ્ઠ થઈ જાય છે.

જેમ જીવ પ્રાણ અને ઉદાન દ્વારા સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ જ ઈશ્વર પોતાના અનંત સામર્થ્યથી આ [જગત]ની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય કરે છે. (૩૮)

બળમ્હાંરઽસિ સૂર્ય બડાદિત્ય મ્હાંરઽસિ ।

મ્હસ્તે સ્તો મહિમા પનસ્યતેઽદ્ભા દેવ મ્હાંરઽસિ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે સૂર્ય-ચરાચરના અન્તર્યામી ઈશ્વર ! જેથી આપ બદ્-સત્ય જ મહાન્-મહાન છો; મહત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત અસિ-છો.

હે આદિત્ય-અવિનાશી સ્વરૂપ ઈશ્વર ! જેથી આપ બદ્-અનન્ત જ્ઞાનવાન તથા મહાન્-મહાન = મહત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત અસિ-છો; સતઃ-સત્ય સ્વરૂપવાળા મહઃ-મહાન ગુણોવાળા તે-આપના મહિમા-મહિમાની પનસ્યતે-સ્તુતિ કરવામાં આવે છે.

હે દેવ-દિવ્ય ગુણ - કર્મ - સ્વભાવયુક્ત ઈશ્વર ! જેથી આપ અદ્ભા-પ્રસિદ્ધ તથા મહાન્-મહત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત અસિ-છો; તેથી અમારા ઉપાસ્ય અસિ-છો. (૩૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરના મહિમાનુ સૂર્ય અને પૃથ્વી આદિ પદાર્થો જ્ઞાન કરાવે છે અને જે સર્વથી મહાન છે, તેને છોડીને કોઈ અન્યની ઉપાસના ન કરવી જોઈએ. (૩૯)

બદ્ સૂર્ય શ્રવસા મ્હાંરઽસિ સ્ત્રા દેવ મ્હાંરઽસિ ।

મ્હા દેવાનામસુર્યઃ પુરોહિતો વિભુ જ્યોતિરદાભ્યમ્ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે બદ્-સત્ય સૂર્ય-સૂર્ય સમાન સર્વના પ્રકાશક ઈશ્વર ! જેથી આપ શ્રવસા-યશ વા ધનથી મહાન્-મહાન અસિ-છો.

હે દેવ-દિવ્ય સુખ પ્રદાન કરનારા ઈશ્વર ! આપ સ્ત્રા-સત્યને કારણે મહાન્-મહાન અસિ-છો.

જેથી આપ દેવાનામ્-પૃથ્વી આદિ દેવો વા વિદ્વાનોનાં પુરોહિતઃ-પ્રથમથી હિતકારી છો, મ્હા-મહત્વથી અસુર્યઃ-પ્રાણોને માટે હિતૈષી થતા અદાભ્યમ્-અહિંસનીય વિભુ-વ્યાપક જ્યોતિઃ-પ્રકાશ સ્વરૂપ છો, તેથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૪૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે સર્વના પાલનને માટે અન્ન આદિને ઉત્પન્ન કરનારી ભૂમિ, મેઘ અને પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરનાર સૂર્ય બનાવેલ છે, તે જ પરમેશ્વર ઉપાસના કરવાને યોગ્ય છે. (૪૦)

શ્રાયન્તઽઙ્ગ્ સૂર્યં વિશ્વેદિન્દ્રસ્ય ભક્ષત ।

વસૂનિ જાતે જનમાનઽઓર્જસા પ્રતિ ભાગં ન દીધિમ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ઓર્જસા-ઈશ્વરના સામર્થ્યથી જાતે-ઉત્પન્ન થયેલ અને જનમાને-ઉત્પન્ન થનારા જગતમાં સૂર્યમ્-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ, સર્વના આત્મા જગદીશ્વરનો શ્રાયન્તઙ્ગ્-આશ્રય કરતાં સમાન વિશ્વા-સર્વ વસૂનિ-વસ્તુઓને પ્રતિ + દીધિમ-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તથા ભાગમ્, ન-સેવનીય અંશના સમાન સેવન કરીએ છીએ; તેમ ઙ્ગ્-જ ઙ્ગ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યના એ ભાગનું તમે ભક્ષત-સેવન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જો અમે પરમેશ્વરનું સેવન કરતા વિદ્વાનોની સમાન બની જઈએ, તો આ સંસારમાં સમસ્ત ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકીએ. (૪૧)

અદ્યા દેવાઽડદિતા સૂર્યસ્ય નિરઃહસઃ પિપૃતા નિરવદ્યાત્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવીઽઉત દ્યૌઃ ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવા-વિદ્વાનો ! જેથી સૂર્યસ્ય-સૂર્યનો ઝડિત-ઉદય થતાં અદ્યા-આજ અંહસઃ-અપરાધથી ન-અમને નિઃ-સર્વથા દૂર કરો છો; અવદ્યાત્-નિદિત દુઃખથી નિઃ + પિપૃત-સર્વથા રક્ષા કરો છો; તત્-તેથી મિત્રઃ-મિત્ર વસ્તુઃ-શ્રેષ્ઠ જન, અદિતિઃ-આકાશ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-ભૂમિ, ઉત-અને દ્યૌઃ-પ્રકાશ એ સર્વ નઃ-અમારો મામહન્તામ્-સત્કાર કરે છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન મનુષ્યો પ્રાણ આદિની સમાન સર્વને સુખ આપે છે, અપરાધથી દૂર રાખે છે, તેઓ જગતને શોભિત કરનારા છે. (૪૨)

આ કૃષ્ણોન ર્જસા વર્તમાનો નિવેશયન્નમૃતં મર્ત્યં ચ ।

હિરણ્યયેન સવિતા રથેના દેવો યાતિ ભુવનાનિ પશ્યન્ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હિરણ્યયેન-જ્યોતિર્મય રથેન-રમણીય સ્વરૂપ તથા કૃષ્ણોન-આકર્ષણથી ર્જસા-લોક સમૂહની સાથે આ, વર્તમાનઃ-પોતાના ભ્રમણની આવૃત્તિ કરતા વિદ્યમાન થઈને ભુવનાનિ-સર્વ લોકોને પશ્યન્-દેખાડતા રહી દેવઃ-પ્રકાશમાન સવિતા-સૂર્યદેવ અમૃતમ્-જળ વા મરણધર્મથી રહિત આકાશ આદિ ચ-અને મર્ત્યમ્-મરણધર્મા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને નિવેશયન્-પોત-પોતાના પ્રદેશમાં સ્થાપિત કરતાં રહી આ + યાતિ-ઉદય - અસ્ત સમયમાં આવાગમન કરે છે; તે ઈશ્વરનો રથેલો સૂર્યલોક છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આ ભૂગોળ આદિ લોકોની સાથે તે સૂર્યનું આકર્ષણ છે, જે વર્ષાના દ્વારા અમૃતમય જલ વરસાવે છે અને જે સર્વ મૂર્ત પદાર્થોનો પ્રકાશક છે, તેમ સૂર્ય આદિને પણ ઈશ્વરનાં આકર્ષણ દ્વારા ધારણ કરવામાં આવેલ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૪૩)

પ્ર વાવૃજે સુપ્રયા બર્હિરેષામા વિશ્વપતીવ બીરિટઽઙ્યાતે ।

વિશામવ્કતોરુષસઃ પૂર્વહૂતૌ વાયુઃ પૂષા સ્વસ્તયે નિયુત્વાન્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પૂર્વહૂતૌ-પૂર્વજોથી પ્રશંસિત સુપ્રયાઃ-સારી રીતે ગતિવાળા, નિયુત્વાન્-શીઘ્રકારી વેગ આદિ ગુણવાળા વાયુઃ-પવન અને પૂષા-સૂર્ય ઇષામ્-એ મનુષ્યોનાં સ્વસ્તયે-સુખને માટે પ્ર, વાવૃજે-ગતિ કરે છે; વિશામ્-પ્રજાઓની મધ્યમાં વિશ્વપતીવ-પ્રજા રક્ષક બે રાજાઓની સમાન બીરિટે-અન્તરિક્ષમાં આ + ઙ્યાતે-સર્વત્ર ચલાવે છે; તેમ અવ્કતોઃ-રાત્રિ અને ડષસઃ-દિવસનાં બર્હિઃ-જળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વાયુ અને સૂર્ય ન્યાયકારી રાજાની સમાન પાલક છે, તે બન્ને ઈશ્વરના દ્વારા રચેલ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૪)

इन्द्रवायू बृहस्पतिं मित्राग्निं पूषणं भगम् । आदित्यान्मारुतं गणम् ॥ ४५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ઇન્દ્રવાયૂ-વિદ્યુત્ અને પવન, બૃહસ્પતિમ્-મોટા લોકોના રક્ષક સૂર્ય, મિત્રા-મિત્ર = પ્રાણ, અગ્નિમ્-અગ્નિ, પૂષણમ્-પુષ્ટિકારક ભગમ્-ઐશ્વર્ય, આદિત્યાન્-બાર મહિનાઓ, માસ્તમ્-મરુત = વાયુ સંબંધી ગણમ્-ગણ = સમૂહને જાણીને ઉપયોગ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનો પ્રયોગ કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સૃષ્ટિનાં વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોને જાણીને, તેને સંયુક્ત કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪૫)

वरुणः प्राविता भुवन्मित्रो विश्वाभिरूतिभिः । करतां नः सुराधसः ॥ ४६ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! જેમ વરુણઃ-ઉદાન વાયુની સમાન ઉત્તમ વિદ્વાન અને મિત્રઃ-પ્રાણની સમાન પ્રિયમિત્ર વિશ્વાભિઃ-સર્વ ઋતિભિઃ-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી પ્રાવિતા-રક્ષક ભુવત્-બને છે; તેમ આપ બન્ને નઃ-અમને સુરાધસઃ-ઉત્તમ ધનથી યુક્ત કરતામ્-કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો પ્રાણની સમાન સર્વમાં પ્રીતિવાળા, ઉદાનની સમાન શરીર અને આત્માને બળ પ્રદાન કરનારા હોય છે, તે જ સર્વના રક્ષક બનીને, સર્વને ધનવાન બનાવી શકે છે. (૪૬)

अधिं न इन्द्रैषां विष्णो' सजात्यानाम् । इता मरुतो अश्विना तं प्रल्था । अयं वेनः । ये देवासः । आ नऽङ्गडाभिः । विश्वेभिः सोम्यं मधु । ओमांसश्चर्षणीधृतः ॥ ४७ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા વિદ્વાન્ ! હે વિષ્ણોઃ-વ્યાપક ઈશ્વર ! હે મસ્તઃ-મનુષ્યો ! હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! તમે સર્વ સજાત્યાનામ્-અમારા સહયોગી ઇષામ્-એ નઃ-અમારી

મધ્યમાં અધિ-સ્વામીત્વને ઇત-પ્રાપ્ત કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨, ૧૬ અને ૧૯; અધ્યાય-૩૩નો મંત્ર-૩૪ અને ૧૦ અને અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૩૩ જુઓ. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ ઈશ્વરની સમાન પક્ષપાત છોડીને અમારી મધ્યમાં વર્તાવ કરે છે, તેની સાથે અમે પણ તેવો વર્તાવ કરીએ. (૪૭)

અગ્નઃન્દ્ર વરુણ મિત્ર દેવાઃ શર્દ્ધઃ પ્ર યન્ત મારૂતોત વિષ્ણોઃ ।

ઉભા નાસત્યા રુદ્રોઽઅધ્ ગ્નાઃ પૂષા ભગ્નઃ સરસ્વતી જુષન્ત ॥ ૪૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાન્ ! ઇન્દ્ર-મહાન ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! વસ્ત્ર-અતિ શ્રેષ્ઠ જન મિત્ર-મિત્ર માસ્ત-મનુષ્યોની મધ્યમાં વિદ્યમાન પ્રધાન પુરુષ ! ઉત-અને વિષ્ણો-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત દેવાઃ-વિદ્વાનો ! તમે અમારા માટે શર્દ્ધઃ-શરીર અને આત્માના બળને પ્ર, યન્ત-પ્રદાન કરો.

ઉભા-બન્ને નાસત્યા-સત્ય સ્વરૂપ અધ્યાપક અને ઉપદેશક, સ્દઃ-દુષ્ટોને રડાવનાર રુદ્ર, ગ્નાઃ-સુશિક્ષિત વાણીઓ, પૂષા-પોષક, ભગ્નઃ-ઐશ્વર્યવાન્ અધ-અને ત્યારબાદ સરસ્વતી-પ્રશસ્ત જ્ઞાનથી સ્ત્રી એ સર્વે અમારી જુષન્ત-સેવા કરે. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સેવા કરીને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરીને અન્યોને પણ વિદ્વાન્ બનાવવા જોઈએ. (૪૮)

ઇન્દ્રાગ્ની મિત્રાવરુણાદિતિઃ સ્વઃ પૃથિવીં દ્યાં મરુતઃ પર્વતાંરઽઅપઃ ।

હુવે વિષ્ણુ પૂષણં બ્રહ્મણસ્પતિં ભગં નુ શ ંસં સવિતારમૂતયૈ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અધ્યાપક - ઋતયે-રક્ષા આદિને માટે ઇન્દ્રાગ્ની-સંયુક્ત વિદ્યુત્ અને અગ્નિ, મિત્રાવરુણા-મળેલા પ્રાણ અને ઉદાન, અદિતિમ્-અન્તરિક્ષ, પૃથિવીમ્-ભૂમિ, દ્યામ્-સૂર્ય, મસ્તઃ-વિચારશીલ મનુષ્યો, પર્વતાન્-વાદળો અથવા પહાડો અપઃ-જળ, વિષ્ણુમ્-વ્યાપક ઈશ્વર, પૂષણમ્-પુષ્ટિકર્તા, બ્રહ્મણસ્પતિમ્-બ્રહ્માંડ વા વેદના પાલક ઈશ્વર, ભગમ્-ઐશ્વર્ય શંસમ્-પ્રશંસાને યોગ્ય, સવિતારમ્-ઐશ્વર્યકારક રાજા વા જગતના ઉત્પાદક અને સ્વઃ-સુખની નુ-શીઘ્ર હુવે-સ્તુતિ કરું છું, તેમ તમે પણ તેની સ્તુતિ કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને અધ્યેતા = શિષ્ય લોકો પ્રકૃતિથી લઈને ભૂમિ સુધીના સર્વ પદાર્થોની રક્ષા આદિને માટે જાણો. (૪૯)

અસ્મે રુદ્રા મેહના પર્વતાસો વૃત્રહત્યે ભરહૂતૌ સજોષાઃ ।

યઃ શંસતે સ્તુવતે ધાયિં પ્ઞઽન્દ્રજ્યેષ્ઠાઽઅસ્માંરઽઅવન્તુ દેવાઃ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે પ્ઞઃ-ઐશ્વર્યને પેદા કરનાર જન જેની શંસતે-પ્રશંસા કરે છે; સ્તુવતે-સ્તુતિ કરે છે; અને જે ધનને ધાયિ-ધારણ કરે છે, તે મનુષ્યની તથા અસ્માન્-અમારી - જે અસ્મે-અમારી મધ્યમાં મેહના-ધન આદિને વેરે, સ્દાઃ-શત્રુઓને રડાવનાર, પર્વતાસઃ-પર્વ = ઉત્સવ કરનારા,

વૃત્રહત્યે-વૃત્ર = દુષ્ટને મારવા માટે **ભરહૂતૌ**-અંગામમાં આહ્વાન કરવા **સજોષા**:-સમાન રૂપમાં પ્રીતિ અને સેવા કરનારા, **ઇન્દ્રજ્યેષ્ઠા**:-ઇન્દ્ર = સભાપતિને જ્યેષ્ઠ = મોટા માનનારા **દેવા**:-વિદ્વાનો **અવન્તુ**-રક્ષા કરે છે; તેઓ તમારી પણ રક્ષા કરે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો પદાર્થોની સ્તુતિ કરનારા, શ્રેષ્ઠોના રક્ષક, દુષ્ટોની તાડના કરનારા, સંગ્રામમાં ભાગ લેનારા, મેઘની સમાન પાલન કરનારા અને પ્રશંસનીય છે, તેઓની સર્વ લોકો સેવા કરે. (૫૦)

અર્વાઙ્ચૌઽઅદ્યા ભવતા યજત્રાઽઆ વો હાર્દિ ભયમાનો વ્યયેયમ્ ।

ત્રાધ્વં નો દેવા નિજુરો વૃક્સ્ય ત્રાધ્વં કર્તાદવપદો યજત્રાઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે **યજત્રા**:-સંગતિ કરવાવાળા **દેવા**:-વિદ્વાન રાજપુરુષો ! તમે **અદ્ય**-આજ **અર્વાઙ્ચ**:-અમારા સન્મુખ **ભવત**-બને અર્થાત્ અમારી વિરુદ્ધ વિમુખ ન બનો.

ભયમાન:-ભયભીત થતાં હું **વ**:-તમારા **હાર્દિ**-હૃદયમાં વિદ્યમાન મનને **આ**, **વ્યયેયમ્**-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

ન:-અમારી **નિજુર**:-હિંસક **વૃક્સ્ય**-ચોર વા વ્યાઘ્રથી **ત્રાધ્વમ્**-રક્ષા કરો.

હે **યજત્રા**:-વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનારા રાજપુરુષો ! તમે **અવપદ**:-પડવાના સ્થાન **કર્તાત્**-કૂવા વા ખાડાથી અમારી **ત્રાધ્વમ્**-રક્ષા કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોએ રાજપુરુષોથી આ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ - હે પૂજ્ય રાજપુરુષ વિદ્વાનો ! તમે સર્વ સર્વદા અમારા અવિરોધી, કપટ આદિથી રહિત તથા ભયને દૂર કરનાર બનો. ચોર અને વ્યાઘ્ર આદિથી તથા માર્ગ આદિના શોધન [વ્યવસ્થા] દ્વારા ખાડા વગેરેથી તમે અમારી રક્ષા કરો. (૫૧)

વિશ્વેઽઅદ્ય મરુતો વિશ્વેઽઙ્ગતી વિશ્વે ભવન્ત્વગ્નયઃ સમિદ્ધાઃ ।

વિશ્વે નો દેવાઽઅવસા ગમન્તુ વિશ્વમસ્તુ દ્રવિણં વાજોઽઅસ્મે ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! **અદ્ય**-આજ જેમ **વિશ્વે**-આપ સર્વ લોકો **વિશ્વે**-સર્વ **મસ્ત**:-મરણધર્મા મનુષ્ય, **વિશ્વે**-સર્વ **સમિદ્ધા**:-પ્રદીપ્ત **અગ્નયઃ**-અગ્નિઓ **ઙ્ગતી**-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી **ન**:-અમારા રક્ષક **ભવન્તુ**-બને છે.

વિશ્વે-સર્વ **દેવા**:-વિદ્વાનો **અવસા**-રક્ષા આદિની સાથે **ન**:-અમને **આ + ગમન્તુ**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ **વિશ્વમ્**-સર્વ **દ્રવિણમ્**-ધન અને **વાજ**:-અન્ન **અસ્મૈ**-એ મનુષ્યને માટે **અસ્તુ**-પ્રાપ્ત થાય. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેવું સુખ પોતાના માટે ઈચ્છે, તેમ અન્યોને માટે પણ ઈચ્છે. આ સંસારમાં જે વિદ્વાનો છે, તેઓ અધર્માચરણથી પૃથક્ બનીને અન્યોને પણ તેવા બનાવે. (૫૨)

વિશ્વે દેવાઃ શૃણુતેમઃ હવં મે યેઽઅન્તરિક્ષે યઽઉપ દ્યવિ ષ્ઠ ।

યેઽઅગ્નિજિહ્વાઽ ઉત વા યજત્રાઽઆસદ્યાસ્મિન્ બર્હિષિ માદયધ્વમ્ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાનો ! તમે યે-જે અન્તરિક્ષે-આકાશમાં અને યે-જે દ્યવિ-પ્રકાશમાં વિદ્યમાન પદાર્થ છે; તેને સ્થ-જાણવાવાળા બનો. યે-જે અગ્નિજિહ્વા-જિહ્વાની સમાન અગ્નિવાળા ઉત- અને વા-અથવા યજત્રા:-સંગતિ અને પૂજાને યોગ્ય જે પદાર્થ છે; તેને સ્થ-જાણવાવાળા બનો. મે-મારા ઇમમ્-આ હવમ્-અધ્યયન - અધ્યાપન રૂપ વ્યવહારને ઉપ + શ્રુણુત્-સમીપથી સાંભળો. અસ્મિન્-એ બર્હિષિ-સભામાં અથવા આસન પર આસદ્ય-બેસીને માદયધ્વમ્-આનંદિત બનો. (૫૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેટલા ભૂમિ, અન્તરિક્ષ અને પ્રકાશ = દ્યુલોકમાં પદાર્થો છે, તેને જાણીને, વિદ્વાનોની સભા કરીને, વિદ્યાર્થીઓની પરીક્ષા કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરીને સ્વયં આનંદિત બનીને અન્યોને સદા આનંદિત કરો. (૫૩)

દેવેભ્યો હિ પ્રથમં યજ્ઞિયેભ્યોઽમૃતત્વઃ સુવસિ ભાગમુત્તમમ્ ।

આદિદ્વામાનઃ સવિતવ્યૂર્ણુષેઽનૂચીના જીવિતા માનુષેભ્યઃ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હે સવિત:-સકલ જગતના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! હિ-કારણ કે આપ યજ્ઞિયેભ્ય:-યજ્ઞની સિદ્ધિ કરનારા દેવેભ્ય:-વિદ્વાનોને માટે ઉત્તમમ્-શ્રેષ્ઠ પ્રથમમ્-મુખ્ય અમૃતત્વમ્-મોક્ષરૂપ ભાગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય સુખને સુવસિ-પ્રેરિત કરો છો; ઉત્પન્ન કરો છો.

આત્, ઇત્-તદનન્તર જ દામાનમ્-સુખદાયક પદાર્થ અને અનૂચીના-જાણવાના સાધન જીવિતા-જીવનના હેતુ કર્મોને માનુષેભ્ય:-મનુષ્યોને માટે વિ, ઊર્ણુષે-વિસ્તૃત કરો છો; તેથી અમારા માટે ઉપાસના યોગ્ય છે. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે પરમેશ્વરના જ યોગથી અને વિદ્વાનોના સંગથી સર્વોત્તમ સુખ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરો. (૫૪)

પ્ર વાયુમચ્છાં બૃહતી મનીષા બૃહદ્રયિં વિશ્વવારઃ રથપ્રામ્ ।

દ્યુતદ્યામા નિયુતઃ પત્યમાનઃ ક્વિઃ ક્વિમિયક્ષસિ પ્રયજ્યો ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : હે પ્રયજ્યો-અત્યંત યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાન્ ! નિયુત:-નિશ્ચિત પુરુષો - પદાર્થોને પત્યમાન:-પ્રાપ્ત કરનાર ક્વિ:-મેધાવી વિદ્વાન બનીને આપ જે આપની બૃહતી-મહાન મનીષા-પ્રજ્ઞા =બુદ્ધિ છે; તેનાથી બૃહદ્રયિમ્-બહુ જ ધનોને માટે વિશ્વવારમ્-સર્વને આસ્થાદિત કરનાર રથપ્રામ્-વિમાન આદિ યાનો વ્યાપ્ત કરનારા, દ્યુતદ્યામા-પ્રકાશમાન અગ્નિને પ્રાપ્ત થનારા વાયુમ્-પ્રાણ આદિ સ્વરૂપ વાયુ અને ક્વિમ્-મેધાવી વિદ્વાનનો અચ્છ-સારી રીતે પ્ર, ઇયક્ષસિ-સંગ કરવા ઇચ્છો છો, તેથી સર્વને માટે સત્કારને યોગ્ય છે. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિ તથા સર્વ ધનને પ્રાપ્ત કરે છે, તે સત્કારને યોગ્ય છે. (૫૫)

ઇન્દ્રવાયૂઽદ્દમે સુતાઽપ પ્રયોંભિરા ગતમ્ । ઇન્દ્રવો વામુશન્તિ હિ ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રવાયૂ-વિદ્યુત્ અને વાયુ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાનો ! તમારા માટે ઇમે-એ સુતા:-તૈયાર

કરેલા પદાર્થો વિદ્યમાન છે; હિ-કારણ કે ઇન્દ્રવ:-સોમ આદિ ઔષધિઓનો રસ વામ્-તમારી ઝ્ઞાન્તિ-કામના કરી રહેલ છે, અર્થાત્ તમારે યોગ્ય છે; તેથી પ્રયોષિ:-ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી તેને ડપ + આ + ગતમ્-સમીપથી સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે કારણે તમે અમારા પર કૃપા કરો છો, તેથી તમને સર્વ પ્રાપ્ત કરવા-મળવા ઈચ્છે છે. (૫૬)

મિત્રઃ હુવે પૂતદક્ષ્ણં વરુણં ચ રિશાદસમ્ । ધિયં ઘૃતાચીઁઽ સાધન્તા ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું ધિયમ્-બુદ્ધિ અને ઘૃતાચીમ્-ઘૃત્ = શીતલતા રૂપ જળને પ્રાપ્ત થનારી રાત્રિને સાધન્તા-સિદ્ધ કરનારા પ્રાણ અને ઉદાનને તથા પૂતદક્ષમ્-પવિત્ર બળયુક્ત, મિત્રમ્-મિત્ર, ચ-અને રિશાદસમ્-દુષ્ટ હિંસકને મારનાર, વરુણમ્-ધર્માત્મા જનોનો હુવે-સ્વીકાર કરું છું; તેમ તમે પણ તેનો સ્વીકાર કરો.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાણ અને ઉદાન બુદ્ધિ અને રાત્રિને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વ ઉત્તમ સાધનોને પ્રહણ કરીને કાર્યોની સિદ્ધિ કરે. (૫૭)

**દસ્ત્રાં યુવાકવઃ સુતા નાસત્યા વૃક્તર્બર્હિષઃ । આ યાતઃ રુદ્રવર્ત્તની તં પ્રત્નથાં ।
અયં વેનઃ ॥ ૫૮ ॥**

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અસત્ય આચરણથી રહિત, સ્ત્રવર્ત્તની-રુદ્રની સમાન અર્થાત્ દુષ્ટરોધક ન્યાયાધીશની સમાન આચરણ કરનારા, દસ્ત્રા-દુષ્ટોના નિવારક બે વિદ્વાનો ! જે વૃક્તર્બર્હિષઃ-યજ્ઞથી પૃથક્ અર્થાત્ ભોજનને માટે, યુવાકવઃ-તમને ઈચ્છનાર, સુતાઃ-સિદ્ધ કરેલા પદાર્થો છે; તેને તમે આ + યાતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદ અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨ અને ૧૬ જુઓ. (૫૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે, કે જે મનુષ્યો વિદ્યાની કામના કરે છે, તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે. (૫૮)

વિદદ્યદીં સરમા રુગ્ણમદ્રેર્મહિ પાથઃ પૂર્વ્યઃ સધ્વચ્ચક્કઃ ।

અગ્રં નયત્સુપદ્યક્ષરાણામચ્છા રવં પ્રથમા જાનતી ગાત્ ॥ ૫૯ ॥

પદાર્થ : યદિ-જો સરમા-પતિને અનુકૂળ રમણ કરનારી, પ્રથમા-પ્રખ્યાત, સુપદી-સુંદર પગોવાળી, અક્ષરાણામ્-અકાર આદિ વર્ણોના રવમ્-ઉચ્ચારણને જાનતી-જાણતી સ્ત્રી; રુગ્ણમ્-રોગી પ્રાણીને વિદત્-જાણે, અગ્રમ્-આગળ નયત્-પ્રાપ્ત થયેલ હોય, સધ્વચ્ચક્-સાથે પ્રાપ્ત થનાર, પૂર્વ્યમ્-પૂર્વ પ્રાપ્ત મહિ-મહાન ગુણયુક્ત અદ્રેઃ-મેઘથી ઉત્પન્ન થયેલ પાથઃ-અન્નને કઃ-પેદા કરે અર્થાત્ ભોજન માટે તૈયાર કરે અને પતિને અચ્છે-સારી રીતે ગાત્-પ્રાપ્ત કરે, તો તે સ્ત્રી સર્વ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી વૈદ્યની સમાન સર્વનું હિત કરનારી, ઔષધની સમાન [ગુણકારી] અન્નને તૈયાર કરી શકે તથા યથાયોગ્ય વાણી-વ્યવહારને જાણતી હોય, તે ઉત્તમ સુખને નિરંતર પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૫૯)

નહિ સ્પશમવિદન્નન્યમસ્માદ્વૈશ્વાનરાત્પુરઽણ્ણતારમગ્નેઃ ।

એમૈનમવૃધન્નમૃતાઽઅમર્ત્યૈ વૈશ્વાનરં ક્ષૈત્રજિત્યાય દેવાઃ ॥ ૬૦ ॥

પદાર્થ : જે અમૃતાઃ-આત્મ સ્વરૂપથી મરણધર્મથી રહિત, દેવાઃ-વિદ્વાનો - અમર્ત્યમ્-નિત્ય વ્યાપક રૂપ અર્થાત્ મૃત્યુધર્મથી રહિત, વૈશ્વાનરમ્-સર્વના - વિશ્વના નાયક ઈશ્વર, ક્ષૈત્રજિત્યાય-જે ક્રિયાથી ક્ષેત્રોને જીતવા માટે તે ભૂમિ રાજ્ય થવાને માટે એનમ્-એ અગ્નિને આ, અવૃધન્-સારી રીતે વધારે છે; તેઓ ઈમ્-સર્વત્રથી અસ્માત્-એ વૈશ્વાનરાત્-સર્વ મનુષ્યોના હિતકારી અગ્નેઃ-પવિત્ર કરનારા પરમેશ્વરથી પુણ્યારમ્-અગ્રગામી અને શીઘ્રકારી અન્યમ્-અન્ય કોઈને સ્પશમ્-દૂત નહિ + અવિદન્-જાણતા નથી. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે નાશ અને ઉત્પત્તિથી રહિત મનુષ્ય દેહધારી જીવ; વિજયને માટે ઉત્પત્તિ અને નાશ રહિત, સંસારના સ્વામી પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, તેથી ભિન્નની તેની સમાન ઉપાસના કરતા નથી, તેઓ બંધનો ત્યાગ કરીને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૦)

ઊગ્રા વિઘ્નિના મૃધઽન્દ્રાગ્ની હવામહે । તા નો મૃડાતઽન્દૃશો ॥ ૬૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે જે ઊગ્રા-અધિક બળવાન તેજસ્વી સ્વભાવવાળા, મૃધઃ-હિંસકોનું વિઘ્નિના-વિશેષ કરીને હનન કરનારા, ઈન્દ્રાગ્ની-સભાપતિ અને સેનાપતિ છે, તેને હવામહે-બોલાવીએ છીએ; તા-તેઓ ઈન્દ્રાગ્ની-એવા સંગ્રામ આદિ વ્યવહારમાં નઃ-અમને મૃડાતઃ-સુખી કરે છે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જે સભાપતિ અને સેનાપતિ પક્ષપાતનો ત્યાગ કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને શત્રુઓને જીતે છે, તેઓ સર્વને સુખ પ્રદાન કરનારા હોય છે. (૬૧)

ઉપાસ્મૈ ગાયતા નરઃ પર્વમાનાયેન્દવે । અભિ દેવાંરઽણ્ણયક્ષતે ॥ ૬૨ ॥

પદાર્થ : હે નરઃ-નાયક અધ્યાપક લોકો ! તમે દેવાન્-વિદ્વાનોનો અભિ-સર્વત્રથી ણ્ણયક્ષતે-સત્કાર કરવાના ઈચ્છુક અસ્મૈ-એ પર્વમાનાય-પવિત્ર કરનારા ણ્ણવે-સરળ વિદ્યાર્થીને ઉપ + ગાયન્ત-સમીપસ્થ થઈને શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરાવો. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેમ જિજ્ઞાસુ લોકો અધ્યાપકોને સંતુષ્ટ કરવા ઈચ્છે છે, તેમ અધ્યાપક લોકો પણ તેને ભણાવવાની કામના - ઈચ્છા કરે. (૬૨)

યે ત્વાહિહત્યે મઘવન્નવર્દ્ધન્યે શામ્બરે હરિવો યે ગવિષ્ઠૌ ।

યે ત્વા નૂનમનુમદન્તિ વિપ્રાઃ પિબેન્દ્ર સોમઃ સર્ગણો મરુદ્ધિઃ ॥ ૬૩ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ પૂજિત ધનથી યુક્ત સેનાપતિ ! યે-જે વિપ્રાઃ-બુદ્ધિમાન જનો અહિહત્યે-અહિ = મેઘની હત્યા કરનારા ગવિષ્ઠૌ-કિરણોની સંગતિમાં સૂર્યની સમાન ત્વા-આપને અવર્ધન્-

ઉત્સાહિત કરે છે - વૃદ્ધિ કરે છે.

હે હરિવ:-હરિ = કિરણોની સમાન ચમકતા ઘોડાવાળા સેનાપતે ! એ-જે લોકો શામ્બરે-મેઘ અને સૂર્યના સંગ્રામમાં વિદ્યુત્ની સમાન ત્વા-આપની વૃદ્ધિ કરે. એ-જે નૂનમ્-નિશ્ચિત રૂપથી [ત્વા-આપને] અનુ, મદન્તિ-અનુકૂળતાથી આનંદિત કરે છે; અને એ-જે તારી રક્ષા કરે છે.

હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ તે મર્સદ્ધિ:-વાયુની સમાન મનુષ્યોની સાથે સગળ:-ગણ સહિત વિદ્યમાન થઈને - જેમ સૂર્ય રસનું પાન કરે છે, તેમ સોમમ્-શ્રેષ્ઠ ઔષધિઓના રસનું - પિબ-પાન કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ અને સૂર્યના સંગ્રામમાં સૂર્યની જ જીત થાય છે, તેમ મૂર્ખો અને વિદ્વાનોના સંગ્રામમાં વિદ્વાનોની જીત થાય છે. (૬૩)

જનિષ્ઠાઽઽગ્રઃ સહસે તુરાય મન્દ્રઽઽઓજિષ્ઠો બહુલાભિમાનઃ ।

અવર્દ્ધન્નિન્દ્રં મરુતશ્ચિદત્ર માતા યદ્વીરં દ્ધનદ્ધનિષ્ઠા ॥ ૬૪ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! ધનિષ્ઠા-અત્યંત ધનવાળી માતા-માતાએ યત્-જે વીરમ્-શૂરતાદિ ગુણોથી યુક્ત આપ પુત્રનું દધનત્-પોષણ કરેલ છે; ઇન્દ્રમ્-સૂર્યને મસ્ત:-વાયુની ચિત્-સમાન સભાસદ લોકો જે આપની અવર્ધન્-વૃદ્ધિ કરે છે; તે આપ અત્ર-આ રાજ્યપાલન રૂપ વ્યવહારમાં સહસે-બળ અને તુરાય-વેગને માટે ઝગ્ર:-તેજસ્વી સ્વભાવવાળા મન્દ્ર:-સ્તુતિ, પ્રશંસાને પ્રાપ્ત આનંદ પ્રદાન કરનારા, ઓજિષ્ઠ:-અત્યંત પરાક્રમી બહુલાભિમાન:-અનેક પ્રકારના પદાર્થોનાં અભિમાનવાળા બનીને સુખને જનિષ્ઠા:-ઉત્પન્ન કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે [રાજા] સ્વયં, બ્રહ્મચર્ય દ્વારા શરીર અને આત્માનાં બળથી યુક્ત વિદ્વાન છે, તે દુષ્ટોના પ્રત્યે ઉગ્ર અર્થાત્ કઠોર સ્વભાવવાળા, તે શ્રેષ્ઠ પ્રત્યે મૃદુ - [શાન્ત] સ્વભાવવાળા તથા અનેક ઉત્તમ સભાસદોથી આવૃત્ થઈને, ધર્માત્મા બનીને, ન્યાય અને વિનયપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે છે, તેની સર્વત્રથી ઉન્નતિ થાય છે. (૬૪)

આ તૂ નઽઽઇન્દ્ર વૃત્રહન્નસ્માકમ્-ર્દ્ધમા ગહિ । મહાન્મહીભિરુતિભિઃ ॥ ૬૫ ॥

પદાર્થ : હે વૃત્રહન્-શત્રુઓના વિનાશક ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! આપ અસ્માકમ્-અમારી અર્દ્ધમ્-વૃદ્ધિ - ઉન્નતિને આ + ગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો. આપ મહાન્-અત્યંત પૂજ્ય બનીને મહીભિઃ મહાન ઋતિભિઃ-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી નઃ-અમને તુ-શીઘ્ર આ + દધનત્-સર્વત્રથી - સારી રીતે પુષ્ટ કરો. (૬૫)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ આપ અમારા રક્ષક અને વર્ધક છો, તેમ અમે પણ આપની વૃદ્ધિ કરીએ, આપણે સર્વ મળીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને શ્રેષ્ઠોને ધનાઢ્ય કરીએ. (૬૫)

ત્વમિન્દ્ર પ્રતૂર્તિષ્વભિ વિશ્વાઽસિ સ્પૃધઃ ।

અશસ્તિહા જનિતા વિશ્વતૂરસિ ત્વં તૂર્ય તરુષ્યતઃ ॥ ૬૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા રાજન્ ! જે કારણે ત્વમ્-આપ પ્રતૂર્તિષુ-હિંસા કર્મ કરનારા સંગ્રામોમાં વિશ્વાઃ-સર્વ સ્પૃધઃ-ઈર્ષાથી યુક્ત શત્રુઓની સેનાઓને અભિ-અસિ-અભિભૂત કરો છો; અશસ્તિહા-નિંદક શત્રુઓનું હનન કરનાર; જનિતા-સુખોને કરનાર, વિશ્વતૂઃ-સર્વ શત્રુઓનું હનન કરનાર બની ત્વમ્-આપ વિજયી અસિ-બનો છો, તેથી તસ્મ્યતઃ-હનન કરવા યોગ્ય શત્રુઓને તૂર્ય-મારો. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ અધર્મયુક્ત કર્મોના નિવારક, સુખોના ઉત્પાદક અને યુદ્ધ વિદ્યાઓમાં નિપુણ હોય છે, તેઓ શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૬૬)

અનુ તે શુષ્મં તુર્યન્તમીયતુઃ ક્ષોણી શિશું ન માતરાં ।

વિશ્વાસ્તે સ્પૃધઃ શ્નથયન્ત મન્યવે વૃત્રં યદિન્દ્ર તૂર્વસિ ॥ ૬૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-શત્રુ વિદારક રાજન્ ! તે-આપના તુર્યન્તમ્-શત્રુઓને હણી નાખતા શુષ્મ-શત્રુઓના શોષક બળને શિશુમ્-બાળકને માતરા-માતા-પિતાની ન-સમાન ક્ષોણી-પોતાની અને પારકી ભૂમિ અનુ + ઈયતુઃ-અનુગમન કરે છે; તે તે-આપના મન્યવે-ક્રોધથી વિશ્વાઃ, સ્પૃધઃ-સર્વ શત્રુઓની ઈર્ષા કરનારી સેનાઓ શ્નથયન્ત-નષ્ટ - ભષ્ટ થઈ જાય છે; યત્-જે વૃત્રમ્-ન્યાયના નિરોધક શત્રુને આપ તૂર્વસિ-મારો છો; તે પરાજિત થાય છે. (૬૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષોની જે હષ્ટ-પુષ્ટ અને યુદ્ધને માટે પ્રતિજ્ઞાબદ્ધ સેનાઓ હોય, તે સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૭)

યજ્ઞો દેવાનાં પ્રત્યેતિ સુમ્નમાદિત્યાસો ભવતા મૃડ્યન્તઃ ।

આ વોઽર્વાચીં સુમતિર્વૃત્યાદ્ઃ હોશ્ચિદ્યા વરિવોવિત્તરાસત્ ॥ ૬૮ ॥

પદાર્થ : હે આદિત્યાસઃ-સૂર્યની સમાન તેજસ્વી પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત રાજપુરુષો ! આપ જેમ દેવાનામ્-વિદ્વાનોનો યજ્ઞઃ-સંગતિ યોગ્ય સંગ્રામ આદિ વ્યવહાર સુમ્નમ્-સુખ પ્રત્યેતિ-પહોંચાડે છે, તેમ મૃડ્યન્તઃ-સુખદાતા ભવત-બનો.

જેમ વઃ-તમારી વરિવોવિત્તરા-અત્યંત સેવાને પ્રાપ્ત કરનારી અર્વાચીં-અમારી અભિમુખ - અનુકૂળ સુમતિઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ આવૃત્યાત્-છે; તે અંહોઃ-અપરાધીઓના પ્રત્યે ચિત્-તેવી સુખ આપનારી અમારે અનુકૂળ બુદ્ધિ અસત્-થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : જે દેશમાં પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત રાજકર્મચારી હોય છે, ત્યાં સર્વની એક મતિ - વિચાર થઈને અત્યંત સુખની વૃદ્ધિ થાય છે. (૬૮)

અદબ્ધેભિઃ સવિતઃ પાયુભિષ્ટ્વઃ શિવેભિર્ઘ પરિ પાહિ નો ગયમ્ ।

હિરણ્યજિહ્વઃ સુવિતાય નવ્યસે રક્ષા માર્કિનોઽઅઘશંસઽ ઈશત ॥ ૬૯ ॥

પદાર્થ : હે સવિતઃ-અનેક પદાર્થોના ઉત્પાદક તેજસ્વી વિદ્વાન રાજન્ ! ત્વમ્-આપ અદબ્ધેભિઃ-અહિંસિત શિવેભિઃ-કલ્યાણકારી પાયુભિઃ-રક્ષાઓથી અઘ-આજ નઃ-અમારા ગયમ્-પ્રશંસાને યોગ્ય સંતાન, ધન વા ઘરની પરિપાહિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો; હિરણ્યજિહ્વઃ-સર્વના હિતમાં રમણ કરનારી જિહ્વા = વાણીથી યુક્ત બનીને આપ નવ્યસે-અત્યંત નવીન સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે નઃ-અમારી રક્ષ-રક્ષા કરો જેથી અઘશંસઃ-પાપની પ્રશંસા કરનારા ચોર નઃ-અમારા પર માર્કિઃ + ઈશત-સમર્થ ન બને. (૬૯)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનો દ્વારા રાજપુરુષને આ રીતે સંબોધન કરવું જોઈએ - તમે અમારા સંતાન, ધન અને ઘર આદિ પદાર્થોની રક્ષાથી નવા નવા ઐશ્વર્ય અમને પ્રાપ્ત કરાવીને, અમને પીડા આપનારને અમારાથી દૂર રાખો. (૬૯)

પ્ર વીર્યા શુચયો દદ્રિરે વામધ્વર્યુભિર્મધુમન્તઃ સુતાસઃ ।

વહ વાયો નિયુતો યાહ્યચ્છા પિબા સુતસ્યાન્ધસો મદાય ॥ ૭૦ ॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાજનો ! જે વામ્-તમારા બન્નેના મધુમન્તઃ-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત, સુતાસઃ-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાથી નિષ્પન્ન, શુચયઃ-પવિત્ર મનુષ્ય અધ્વર્યુભિઃ-હિંસા અને અન્યાયથી વર્જિત કર્મોની સાથે વીર્યા-વીર પુરુષોથી યુક્ત સેનાથી શત્રુઓને પ્રદદ્રિરે-સારી રીતે વિદીર્ણ કરે છે; તેની સાથે - હે વાયો-વાયુની સમાન બલિષ્ઠ રાજન્ ! આપ નિયુતઃ-નિરંતર મિશ્રિત - અમિશ્રિત થનાર વાયુ આદિના ગુણોને વહ-પ્રાપ્ત કરો તથા અચ્છા-સારી રીતે સ્વયં યાહિ-પ્રાપ્ત કરો, મદાય-આનંદને માટે સુતસ્ય-સિદ્ધ કરેલ અન્ધસઃ-અન્નના રસનું પિબ-પાન કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : જે પવિત્ર આચરણવાળા, રાજા અને પ્રજાના ભક્ત, વિજ્ઞાન સંપન્ન રાજપુરુષ - વીરસેના દ્વારા શત્રુઓનો નાશ કરે છે, તેને પ્રાપ્ત કરીને રાજા આનંદિત બને.

રાજા જેમ પોતાના માટે આનંદની કામના કરે, તેમ રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોને માટે પણ આનંદની કામના કરે. (૭૦)

ગાવ્ઽપાવતાવતં મહી યજ્ઞસ્ય ર્પ્સુદા । ઉભા કર્ણા હિરણ્યયા ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ર્પ્સુદા-સુંદર રૂપ પ્રદાન કરનારી ઉભા-બન્ને કર્ણા-કાર્યસાધક હિરણ્યયા-જ્યોતિ સ્વરૂપ મહી-મહત્ પરિમાણવાળા સૂર્ય અને પૃથ્વી, યજ્ઞસ્ય-સંગત સંસારની અવતમ્-કૂવાના જળની સમાન રક્ષા કરનારી બને અને ગાવઃ-કિરણો પણ રક્ષક બને, તેમ તેની તમે ઉપ + અવત-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જેમ ખેડૂતો કૂવાના જળથી ખેતર અને બગીચાઓની રક્ષા કરીને ધનવાન બને છે, તેમ પૃથ્વી અને સૂર્ય સર્વને માટે ધનકારક બને છે. (૭૧)

કાવ્યયોરાજાનેષુ ક્રત્વા દક્ષસ્ય દુરોણે । રિશાર્દસા સ્થસ્થઽઆ ॥ ૭૨ ॥

પદાર્થ : હે રિસાદસા-અવિદ્યા આદિ દોષોના નાશક અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો ! તમે બન્ને કાવ્યયોઃ-કવિ = વિદ્વાનોના રચિત વ્યવહાર અને પરમાર્થના પ્રતિપાદક ગ્રંથો તથા આજાનેષુ-સર્વત્ર વિદ્વાનોને ઉત્પન્ન કરનારા પઠન-પાઠન આદિ વ્યવહારોમાં ક્રત્વા-બુદ્ધિ વા કર્મની સાથે દક્ષસ્ય-કુશળ જનની સઘસ્થે-સભામાં અને દુરોણે-ઘરમાં આ-આવો. (૭૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો રાજપુરુષ અને પ્રજાજનોને પ્રાણ = વિદ્વાન, બળવાન, નીરોગ, પરસ્પર પ્રીતિમાન, ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી બનાવે છે, તેઓ પિતાની સમાન સત્કારને યોગ્ય છે. (૭૨)

**દૈવ્યાવધ્વર્યૂ આ ગત્ઃ રથેન સૂર્યત્વચા । મધ્વા યજ્ઞઃ સમઙ્જાથે તં પ્રત્નથા ।
અયં વેનઃ ॥ ૭૩ ॥**

પદાર્થ : હે દૈવ્યૌ-વિદ્વાનોમાં કુશળ-પ્રવીણ અધ્વર્યૂ-પોતાની અહિંસાના ઈચ્છુક બે વિદ્વાનો ! તમે સૂર્યત્વચા-સૂર્યની સમાન પ્રદીપ્ત ત્વચાયુક્ત રથેન-રમણના સાધન યાનથી આ, ગતમ્-આવો; આવીને મધ્વા-મધુર ભાષણથી યજ્ઞમ્-ગમન નામક વ્યવહારને સમ, અઙ્જાથે-સમ્યક્ પ્રકટ કરો; બતાવો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨ અને ૧૬મો. (૭૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ - જે પૃથ્વી, જળ અને અન્તરિક્ષમાં ચાલનારા, સુશોભિત, સૂર્યની સમાન પ્રકાશિત યાન બનાવવા જોઈએ અને તેના દ્વારા અભીષ્ટ કામનાઓને સિદ્ધ કરવી જોઈએ. (૭૩)

તિરશ્ચીનો વિતતો રશ્મિરેષામધઃ સ્વિદાસીરુપરિ સ્વિદાસીરુત્ ।

રેતોધાઽઆસન્મહિમાનઽઆસન્ત્સ્વધાઽઅવસ્તાત્પ્રયતિઃ પરસ્તાત્ ॥ ૭૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ણમ્-એ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય આદિની તિરશ્ચીનઃ-તિરછી ગતિવાળા વિતતઃ-વિસ્તૃત રશ્મિઃ કિરણ વા દીપ્તિ અધઃ-નીચેની તરફ સ્વિત્-પણ આસીત્-છે; ઉપરિ-ઉપર સ્વિત્-પણ આસીત્-છે; અવસ્તાત્-અહીં અને પરસ્તાત્-તહીં પ્રયતિઃ-પ્રયત્નશીલ છે; તેના વિજ્ઞાનથી રેતોધાઃ-પરાક્રમને ધારણ કરનારા આસન્-બને તથા મહિમાનઃ-પૂજ્ય અને સ્વધા-ધનને ધારણ કરનારા બનીને આપ લોકો ઉપકારી આસન્-બનો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્ની દીપ્તિ સર્વની અંદર સ્થિત રહીને સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે, તે જ સર્વને ધારણ કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૭૪)

આ રોદસીઽઅપૂણ્ણદા સ્વર્મહજ્ઞાતં યદેનમ્પસોઽઅધારયન્ ।

સોઽઅધ્વરાય પરિ ણીયતે કવિરત્યો ન વાર્જસાતયે ચનોહિતઃ ॥ ૭૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે વિદ્યુત્રૂપી અગ્નિ રોદસી-ઘૌ, પૃથિવી અને મહત્-મહાન જાતમ્-પ્રસિદ્ધ સ્વઃ-અન્તરિક્ષને આ, અપૂણ્ણત્-સારી રીતે વ્યાપ્ત કરી રહેલ છે; ણમ્-એ અગ્નિને અપસઃ-કર્મ આ, અધારયન્-ધારણ કરે છે; તથા જે કવિઃ-શબ્દનો હેતુ અગ્નિ છે; તેને અધ્વરાય-અહિંસા નામક

શિલ્પમય યજ્ઞને માટે તથા વાજસાતયે-વેગના સમ્યક્ સેવનને માટે અત્યઃ-માર્ગને વ્યાપ્ત કરનાર ધોડાઓની નઃ-સમાન વિદ્વાનોના દ્વારા પરિ + નીચતે-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરી શકાય છે; સઃ-તે ચનોહિતઃ-ચન = પૃથ્વીનાં અન્નને માટે હિતકારી છે, તેમ તમે જાણો. (૭૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનેક પ્રકારનાં વિજ્ઞાન અને કર્મોથી વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, ભૂમિ આદિમાં વ્યાપ્ત અને વિભાગકર્તા સિદ્ધ કરેલા તથા યાન આદિને શીઘ્ર ચલાવનારા અગ્નિનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૭૫)

उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा। आङ्गूषैरविवांसतः ॥ ७६ ॥

પદાર્થ : યા-જે મન્દાના-આનંદ આપનારા વૃત્રહન્તમા-વૃત્ર = પાપીઓનું હનન કરનારા સભાધ્યક્ષ અને સેનાપતિની ચિત્-સમાન ગિરા-વાણીથી આઙ્ગૂષૈઃ-ઉદ્ઘોષો અને ઉક્થેભિઃ-પ્રશસનીય, સ્તુતિઓના સાધક, વેદના વિભાગ વિશેષ 'ઉકથ' મંત્રોથી શિલ્પ વિજ્ઞાનને આ વિવાસતઃ-સર્વથી સેવા કરે છે; તે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોની મનુષ્યોએ આ-સારી રીતે - સર્વત્રથી સેવા કરવી જોઈએ. (૭૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષની સમાન વિદ્યા આદિ કાર્યોના સાધક, ઉત્તમ ઉપદેશોથી સર્વને વિદ્વાન્ બનાવવામાં પ્રવૃત્ત હોય, તેઓનો જ સર્વ સત્કાર કરે. (૭૬)

उप नः सून्वो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृडीका भवन्तु नः ॥ ७७ ॥

પદાર્થ : યે-જે નઃ અમારા સૂન્વઃ-સંતાન અમૃતસ્ય-નાશરહિત પરમેશ્વર વા નિત્ય વેદની ગિરઃ-વાણીઓને ઉપ, શૃણવન્તુ-અધ્યાપક આદિની સમીપ સાંભળે છે; તેઓ નઃ-અમારા માટે સુમૃડીકાઃ-ઉત્તમ સુખ આપનારા ભવન્તુ-બને. (૭૭)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા પોતાના પુત્રો અને કન્યાઓને બ્રહ્મચર્ય, વેદ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત કરીને શરીર અને આત્માથી બળવાન બનાવે, તો તેને માટે - સંતાનોને માટે અત્યંત સુખકારી બને. (૭૭)

ब्रह्माणि मे मतयः शः सुतासः शुष्मं इयत्ति प्रभृतो मेऽअद्रिः।

आ शासते प्रति हर्यन्त्युक्थेमा हरी वहतस्ता नोऽअच्छ ॥ ७८ ॥

પદાર્થ : સુતાસઃ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત, ઐશ્વર્યવાન, મતયઃ-બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ - મે-મારા માટે યાનિ-જે બ્રહ્માણિ-ધનોની પ્રતિ + હર્યન્તિ-પ્રતીતિથી કામના કરે છે, ઇમા-એ ઉક્થા-પ્રશંસનીય વેદ વચનોની આ, શાસતે-આશા કરે છે; શુષ્મઃ-બલકારી, પ્રભૃતઃ-સારી રીતે હવન આદિથી પુષ્ટ કરેલ અદ્રિઃ-મેઘ મે-મારા માટે જે શમ્-સુખને ઇયત્તિ-અર્પિત કરે છે; તા-તેને નઃ-અમારે માટે હરી-હરણશીલ અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી અચ્છ-સારી રીતે વહતઃ-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૭૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે કર્મથી વિદ્યા અને મેઘા = બુદ્ધિની ઉન્નતિ થાય તેમ ક્રિયા કરો. જે તમારી વિદ્યા અને સુશિક્ષાની કામના કરે છે, તેને પ્રીતિપૂર્વક પ્રદાન કરો; જે આપનાથી અધિક વિદ્યાવાન હોય, તેનાથી તમે વિદ્યા ગ્રહણ કરો. (૭૮)

અનુત્તમા તે મઘવન્નકિર્નુ ન ત્વાવાં૨ઽસ્તિ દેવતા વિદાનઃ ।

ન જાયમાનો નશતે ન જાતો યાનિ કરિષ્યા કૃણુહિ પ્રવૃદ્ધ ॥ ૭૧ ॥

પદાર્થ : હે પ્રવૃદ્ધ-સર્વથી શ્રેષ્ઠ, સર્વપૂજ્ય, મઘવન્-વિપુલ ધનવાન ઈશ્વર ! જે તે-આપનું અનુત્તમ-અપ્રેરિત = ગતિરહિત સ્વરૂપ છે, ત્વાવાન્-આપની સમાન દેવતા-દેવતા વિદાનઃ-વિદ્વાન નુ-નિશ્ચયથી ખરેખર કોઈ ન-નથી.

આપ જાયમાનઃ-ઉત્પન્ન થનાર ન-નથી અને જાતઃ-ઉત્પન્ન થયા પણ ન-નથી. યાનિ-જગતની ઉત્પત્તિ આદિ જે કર્મોને આપ કરિષ્યા-કરશો અને કૃણુહિ-કરો છો; તેને કોઈ પણ નકિઃ-નહિ આ, નશતે-સ્મૃતિથી વ્યાપ્ત કરે છે, જેથી આપ સર્વના ઉપાસ્ય દેવ છો. (૭૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વર સમસ્ત ઐશ્વર્યવાન, અસદૃશ - કોઈની સમાન નહિ, અનંત વિદ્યાવાન, ઉત્પન્ન થયા નથી, ઉત્પન્ન થશે નહિ અને મહાન છે, તેની જ તમે નિરંતર ઉપાસના કરો. (૭૯)

તદિદાસ ભુવનેષુ જ્યેષ્ઠં યતૌ જજ્ઞ ડગ્રસ્ત્વેષનૃમ્ણઃ ।

સદ્યો જજ્ઞાનો નિરિણાતિ શત્રૂનનું યં વિશ્વે મદન્ત્યૂમાઃ ॥ ૮૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યતઃ-જેનાથી ડગ્રઃ-તેજ સ્વભાવવાળા, ત્વેષનૃમ્ણઃ-અત્યંત પ્રકાશિત ધનયુક્ત વીર પુરુષ જજ્ઞે-ઉત્પન્ન થાય છે; જે જજ્ઞાનઃ-ઉત્પન્ન થઈને શત્રૂન્-શત્રુઓને સદ્યઃ-શીઘ્ર નિરિણાતિ-નિરંતર મારે છે.

વિશ્વે-સર્વ ડમાઃ-રક્ષાદિ કર્મ કરનારા મનુષ્યો યમ્-જેના અનુ + મદન્તિ-પશ્ચાત્ આનંદિત થાય છે; તત્-તે ડગ્ર-જ બ્રહ્મ પરમાત્મા ભુવનેષુ-લોક-લોકાન્તરોમાં જ્યેષ્ઠમ્-સર્વથી મહાન અને શ્રેષ્ઠ આસ-છે, તેમ તમે જાણો. (૮૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેની ઉપાસનાથી શૂરવીર લોકો વીરતાને પ્રાપ્ત કરીને શત્રુઓનો નાશ કરી શકે છે; જેની ઉપાસના કરીને વિદ્વાન લોકો આનંદિત બનીને સર્વને આનંદિત કરે છે; તે જ પરમાત્મા સર્વથી શ્રેષ્ઠ અને સર્વના ઉપાસ્ય છે, તેમ સર્વ નિશ્ચય કરો. (૮૦)

ડમાડઽ ત્વા પુરૂવસો ગિરો વર્દ્ધન્તુ યા મમ ।

પાવકવર્ણાઃ શુચયો વિપશ્ચિતોઽભિ સ્તોમૈરનૂષત ॥ ૮૧ ॥

પદાર્થ : હે પુસ્ત્રસો-અનેક પદાર્થોમાં વાસ કરનારા પરમાત્મન્ ! યાઃ-જે ડમાઃ-એ મમ-મારી ગિરઃ-વાણીઓ ત્વા-આપની ડ-નિશ્ચય પૂર્વક વર્દ્ધન્તુ-વૃદ્ધિ કરે; તેને પ્રાપ્ત કરીને પાવકવર્ણાઃ-અગ્નિની સમાન વર્ણવાળી તેજસ્વી, શુચયઃ-પવિત્ર થયેલા વિપશ્ચિતઃ-વિદ્વાનો સ્તોમૈઃ-પદાર્થ વિદ્યાની પ્રશંસાથી અભિ, અનૂષત-સર્વત્ર પ્રશંસા કરે. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય - સદા ઈશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના દ્વારા તેની સત્તાનું પ્રતિપાદન અને

અભ્યાસ સત્યભાષણથી પોતાની વાણીઓને શુદ્ધ = પવિત્ર કરીને, વિદ્વાન બનીને, સમસ્ત પદાર્થ-વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૮૧)

યસ્યાયં વિશ્વઽઆર્યો દાસઃ શેવધિપાઽઅરિઃ ।

તિરશ્ચિદ્વ્યે રુશમે પવીરવિ તુભ્યેત્સોઽઅજ્યતે રયિઃ ॥ ૮૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! યસ્ય-જે આપના અયમ્-આ વિશ્વઃ-સર્વ આર્યઃ-ધર્મયુક્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા દાસઃ-સેવક આજ્ઞાકારી શેવધિપાઃ-શેવધિ = નિધિનો રક્ષક અર્થાત્ ધર્મ આદિ કાર્ય અને રાજના કરમાં ધન ન ખર્ચ કરનાર અરિઃ-શત્રુ છે, તે પવીરવિ-ધન આદિની રક્ષાને માટે પવીર = શસ્ત્રને પ્રાપ્ત કરનાર, રુશમે-હિંસક વ્યવહાર વા અર્યે-ધનના સ્વામી વૈશ્ય આદિના રૂપમાં તિરઃ-છુપાવનારા ચિત્-પણ તુભ્ય-આપને માટે ઇત્-નિશ્ચયથી સઃ-તે આપ રયિઃ-ધનની સમાન અજ્યતે-પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જે રાજાના સર્વ આર્ય રાજ્યના રક્ષક, સેવક છે, જે ધન આદિ કર ન આપનાર શત્રુ છે, તેનાથી પણ જો આપ ધન આદિ કર ગ્રહણ કરો છો, તેથી સર્વોત્તમ શ્રી = શોભાયમાન અર્થાત્ લક્ષ્મીવાળા છો. (૮૨)

અયઃ સહસ્રમૃષિભિઃ સહસ્કૃતઃ સમુદ્રઽઈવ પપ્રથે ।

સત્યઃ સો અસ્ય મહિમા ગૃણે શવો યજ્ઞેષુ વિપ્રરાજ્યે ॥ ૮૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અયમ્-આ સભાપતિ રાજા - ઋષિભિઃ-વેદાર્થના જ્ઞાતા રાજર્ષિઓની સાથે સહસ્રમ્-અસંખ્ય પ્રકારના જ્ઞાનને પ્રાપ્ત, સહસ્કૃતઃ-બળથી યુક્ત, સત્યઃ-સત્ = વ્યવહારો વા વિદ્વાનોમાં શ્રેષ્ઠ છે; અસ્ય-એનો મહિમા-મહિમા સમુદ્રઽઈવ-સમુદ્ર વા અન્તરિક્ષની સમાન, પપ્રથે-વિસ્તૃત થાય છે, તો સઃ-તે પૂર્વોક્ત હું પ્રજાજન એ રાજાના યજ્ઞેષુ-સંગત રાજકાર્યોમાં તથા વિપ્રરાજ્યે-વિપ્ર = મેધાવી જનોના રાજ્ય = રાષ્ટ્રમાં શવઃ-બળની ગૃણે-સ્તુતિ કરું છું. (૮૩)

ભાવાર્થ : જો રાજા આદિ રાજપુરુષો વિદ્વાનોના સંગથી પ્રીતિ કરનારા, સાહસી, સત્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા, મેધાવી જનોનાં રાજ્યમાં અધિકૃત, સંગત ન્યાય અને વિનયયુક્ત કાર્ય કરે છે, તેની કીર્તિ આકાશની સમાન વિસ્તાર પામે છે. (૮૩)

અદબ્ધેભિઃ સવિતઃ પાયુભિષ્ટ્વઃ શિવેભિર્દ્ય પરિ પાહિ નો ગયમ્ ।

હિરણ્યજિહ્વઃ સુવિતાય નવ્યસે રક્ષા માકિર્નોઽઅઘશ્સઽઈશત ॥ ૮૪ ॥

પદાર્થ : હે સવિતઃ-સમગ્ર ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! ત્વમ્-આપ અદ્ય-આજ અદબ્ધેભિઃ-અહિંસનીય શિવેભિઃ-મંગલકારી પાયુભિઃ-અનેક પ્રકારના રક્ષાના ઉપાયોથી નઃ-અમારી ગયમ્-પ્રજાની પરિ, પાહિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો.

હિરણ્યજિહ્વઃ-હિરણ્ય = હિતમાં રમણ કરનારી વાણીથી યુક્ત આપ નવ્યસે-અતિશય નવીન સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે નઃ-અમારી રક્ષ-રક્ષા કરો. જેથી અઘશ્સ-દુષ્ટ ચોર અમારા ઉપર માકિઃ + ઈશત-

સમર્થ ન બને, સ્વામી ન બને. (૮૪)

ભાવાર્થ : રાજાઓને યોગ્ય છે, કે તેઓ સર્વ પ્રજાના સંતાનોની બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા-દાન અને સ્વયંવર વિવાહ દ્વારા દસ્યુઓ - ડાકુઓથી રક્ષા કરીને ઉન્નત કરે. (૮૪)

આ નૌ યજ્ઞં દિવિસ્પૃશં વાયોં યાહિ સુમન્મભિઃ ।

અન્તઃ પવિત્રંડુપરિ શ્રીણાનોડ્યઃ શુક્રોડઅયામિ તે ॥ ૮૫ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુ સમાન વર્તમાન રાજા ! જેમ હું અન્તઃ-અન્તઃકરણમાં પવિત્રઃ-શુદ્ધાત્મા બનીને ઉપરિ-ઉત્કર્ષમાં શ્રીણાનઃ-આશ્રય કરતા, અયમ્-એ શુક્રઃ-શીઘ્રકારી અને વીર્યવાન = પરાક્રમી બનીને સુમન્મભિઃ-ઉત્તમ વિજ્ઞાનોથી તે-આપના દિવિસ્પૃશમ્-વિદ્યા પ્રકાશથી યુક્ત યજ્ઞમ્-સંગત વ્યવહારને અયામિ-પ્રાપ્ત કરું છું; તેમ આપ નઃ-અમારા વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત ઉત્તમ વ્યવહારને આ + યાહિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : જેમ વર્તમાન વર્તાવથી રાજા પ્રજામાં ચેષ્ટા કરીને, જેવા ભાવથી પ્રજા રાજામાં વર્તાવ કરે. એ રીતે બન્ને મળીને સર્વ ન્યાય - વ્યવહારને પૂર્ણ કરે. (૮૫)

इन्द्रवायू सुसन्दृशा सुहवेह हवामहे ।

यथा नः सर्वेऽइज्जनौऽनमीवः सङ्गमे सुमनाऽअसत् ॥ ८६ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને ! જે સુસન્દ્રશા-ઉત્તમ રીતિથી સમ્યક્ જોનારા સુહવા-સુંદર રીતે બોલવવા યોગ્ય ઇન્દ્રવાયૂ-રાજા અને પ્રજાજનોનો ઇહ-આ જગતમાં હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. યથા-જેમ સઙ્ગમે-સંગ્રામ વા સમાગમમાં નઃ-અમારા સર્વઃ, ઇત્-સર્વ જનઃ-મનુષ્ય અનમીવઃ-નીરોગ સુમનાઃ-પ્રસન્ન ચિત્તવાળા અસત્-બને, તેમ તેઓ રાજા અને પ્રજાજન કરે. (૮૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજન તેવો જ પ્રયત્ન કરે, જેમ સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણી નીરોગ અને પ્રસન્ન ચિત્ત થઈને પુરુષાર્થી બને. (૮૬)

ऋधंगित्था स मर्त्यैः शशमे देवतातये ।

यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टयऽआचक्रे हव्यदातये ॥ ८७ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે દેવતાતયે-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોને માટે ઋદ્ધવ્-સમૃદ્ધ મર્ત્યઃ-મનુષ્ય અભિષ્ટયે-અભીષ્ટ = ઈચ્છિત સુખની પ્રાપ્તિને માટે તથા હવ્યદાતયે-હવ્ય = ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોની પ્રાપ્તિને માટે મિત્રાવરુણૌ-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન રાજા અને પ્રજાજનોની નૂનમ્-નિશ્ચિત આચક્રે-સેવા કરે છે; સઃ-તે જન ઇત્યા-એ ઉક્ત હેતુથી શશમે-શાંત રહે છે અને ઉપદ્રવ રહિત રહે છે. (૮૭)

ભાવાર્થ : જો શમ, દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત રાજા અને પ્રજાજનો ઈષ્ટ સુખની સિદ્ધિને માટે પ્રયત્ન

કરે છે, તેઓ અવશ્ય સમૃદ્ધિવાન બને છે. (૮૭)

આ યાત્મુપ્ ભૂષત્ મધ્વઃ પિબતમશ્વિના ।

દુગ્ધં પયૌ વૃષણા જેન્યાવસૂ મા નૌ મર્ધિષ્ટમા ગતમ્ ॥ ૮૮ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-વીર્યવાન - પરાક્રમવાન, જેન્યાવસૂ-જયશીલ લોકોને વસાવનાર અથવા ધનને જીતનારા અશ્વિના-વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી વ્યાપ્ત રાજા અને પ્રજાજન ! તમે બન્ને - સુખને આ, યાતમ્-પ્રાપ્ત કરો; પ્રજાઓને ઉપ, ભૂષતમ્-સુશોભિત કરો; મધ્વઃ-વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી તૈયાર કરેલ મધુર રસનું પિબતમ્-પાન કરો; પયઃ-જળને દુગ્ધમ્-પૂર્ણ કરો; અર્થાત્ કોઈ જળ વિના દુઃખી ન રહે; નઃ-અમને મા + મર્ધિષ્ટમ્-મારો નહિ અને ધર્મથી વિજયને આ + ગતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૮૮)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને પ્રજાજનો સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સુશોભિત કરે છે, સર્વત્ર કુલ્યા-નહર આદિ દ્વારા જળ પહોંચાડે છે, શ્રેષ્ઠોની હિંસા ન કરીને દુષ્ટોની હિંસા કરે છે, તેઓ વિજેતા બનીને અતુલ શ્રી = લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૮)

પ્રૈતુ બ્રહ્મણસ્પતિઃ પ્ર દેવ્યૈતુ સૂનૃતા ।

અચ્છા વીરં નર્યૌ પઙ્ક્તિરાધસં દેવા યજ્ઞં નયન્તુ નઃ ॥ ૮૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ નઃ-અમને બ્રહ્મણઃ, પતિઃ-બ્રહ્મ = ધન વા વેદના રક્ષક અધિષ્ઠાતા વિદ્વાન પ્ર, એતુ-પ્રાપ્ત થાય; સૂનૃતા-સત્ય લક્ષણોથી ઉજ્જવળ દેવી-શુભ ગુણોથી દેદીપ્યમાન વાણી પ્ર, એતુ-પ્રાપ્ત થાય; નર્યમ્-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ પંક્તિરાધસમ્-પંક્તિ = સમૂહની સિદ્ધિ કરનારા યજ્ઞમ્-સંગત, ધર્મયુક્ત વ્યવહારવાળા વીરમ્-શૂરવીર પુરુષને દેવાઃ-વિદ્વાનો અચ્છ-સારી રીતે નયન્તુ-સ્વયં પ્રાપ્ત કરે, વા કરાવે; તેમ અમને પ્રાપ્ત થાઓ. (૮૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સત્યવાણી અને સર્વના ઉપકારક વીરોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ સારી રીતે સુખની ઉન્નતિ કરે છે. (૮૯)

ચન્દ્રમાઽઅપ્સ્વન્તરા સુપર્ણો ધાવતે દિવિ ।

રયિં પિશઙ્ગં બહુલં પુરુસ્પૃહઃ હરિરેતિ કનિક્રદત્ ॥ ૯૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સુપર્ણઃ-ઉત્તમ પર્ણ = પતન = ગતિઓવાળા ચન્દ્રમાઃ-શીતલ ચંદ્રમા કનિક્રદત્-શીઘ્ર - અત્યંત શબ્દ કરનારા હરિઃ-હણહણતા ઘોડાની સમાન - દિવિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં અપ્સુ-અન્તરિક્ષનાં અન્તઃ-મધ્યમાં આ + ધાવતે-શીઘ્ર ગતિ કરે છે; તથા પુરુસ્પૃહમ્-અનેકને ચાહવા યોગ્ય, બહુલમ્-અધિક પિશઙ્ગમ્-સુવર્ણ આદિની સમાન વર્ણયુક્ત રયિમ્-શોભા-કાંતિને એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ પુરુષાર્થી બનીને વેગથી શ્રી = લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરો. (૯૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યથી પ્રકાશિત ચંદ્રલોક અન્તરિક્ષમાં આવાગમન કરે છે, જેમ શ્રેષ્ઠ ઘોડો હણહણાટ કરતો શીઘ્ર દોડે છે, તેની સમાન બનીને તમે લોકો - અત્યુત્તમ, અપૂર્વ શ્રી-લક્ષ્મી અર્થાત્ શોભાને પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનો. (૯૦)

દેવંદેવં વોઽવસે દેવંદેવમ્ભિષ્ટયે ।

દેવંદેવઃ હુવેમ્ વાજસાતયે ગૃણન્તો દેવ્યા ધિયા ॥ ૯૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! દેવ્યા-પ્રકાશમાન ધિયા-બુદ્ધિ વા કર્મથી ગુણન્તઃ-સ્તુતિ કરતાં અમે જેમ વઃ-તમારી અવસે-રક્ષાદિને માટે દેવન્દેવમ્-પ્રત્યેક વિદ્વાન્ વા પ્રત્યેક દિવ્ય પદાર્થને હુવેમ્-બોલાવીએ છીએ, વા સ્વીકાર કરીએ છીએ; વઃ-તમારા અભિષ્ટયે-અભીષ્ટ સુખને માટે દેવન્દેવમ્-પ્રત્યેક વિદ્વાન વા દિવ્ય પદાર્થને હુવેમ્-બોલાવીએ છીએ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ. વઃ-તમારા વાજસાતયે-વાજ = વેગ આદિના સમ્યક્ સેવનને માટે દેવન્દેવમ્-પ્રત્યેક વિદ્વાન વા દિવ્ય પદાર્થને બોલાવીએ છીએ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ અમારે માટે કરો. (૯૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ - સર્વ પ્રાણીઓનાં હિતને માટે વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને, તેના દ્વારા સત્ય ઉપદેશોનો પ્રચાર કરીને, સૃષ્ટિના પદાર્થોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, સર્વની કામના સિદ્ધ કરીને સંગ્રામોને જીતે છે, તેઓ દિવ્ય કીર્તિ અને બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૧)

દિવિ પૃષ્ઠોઽરોચતાગ્નિવૈશ્વાનરો બૃહન્ ।

ક્ષમયા વૃધાનઽઓજસા ચનોહિતો જ્યોતિષા બાધતે તમઃ ॥ ૯૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જેમ દિવિ-પ્રકાશમાં પૃષ્ઠઃ-સ્થિત વૈશ્વાનરઃ-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી, ક્ષમયા-પૃથ્વીની સાથે વૃધાનઃ-વૃદ્ધિ પામેલા ઓજસા-બળથી બૃહન્-મહાન ચનોહિતઃ-ઔષધિઓને પકાવવાના સામર્થ્યથી અન્ન આદિનો હિતકારી અગ્નિઃ-સૂર્યરૂપ અગ્નિ જ્યોતિષા-પોતાના પ્રકાશથી તમઃ-રાત્રિરૂપ અંધકારને બાધતે-હટાવે છે; અને અરોચત-પ્રકાશ કરે છે; તેમ શ્રેષ્ઠ ગુણોથી અવિદ્યારૂપ અંધકારને દૂર કરીને તમે પણ પ્રકાશિત કીર્તિવાળા બનો. (૯૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો - જેમ સૂર્ય અંધકારને દૂર કરે છે, તેમ દુષ્ટ આચાર અને અવિદ્યારૂપી અંધકારને દૂર કરીને વિદ્યાને પ્રકાશિત કરે છે, તેઓ સૂર્યની સમાન સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ પ્રશંસાવાળા થાય છે. (૯૨)

ઇન્દ્રાગ્નીઽઅપાદિયં પૂર્વાગાત્પદ્વતીભ્યઃ ।

હિત્વી શિરો જિહ્વા વાવદ્ચ્ચરત્ત્રિશ્તપ્દા ન્યક્રમીત્ ॥ ૯૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રાગ્નિ-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જે ઇચમ્-આ અયાત્-પગ વગરની ઊંધા - પદ્વતીભ્યઃ-અનેક પગવાળી સૂતેલી પ્રજાને માટે પૂર્વા-પ્રથમ ઉત્પન્ન થનારી આ + અગાત્-આવે છે; શિરઃ-શિરને હિત્વી-છોડીને, અર્થાત્ શિર વિનાના પ્રાણીઓની જિહ્વા-વાણીથી વાવદત્-શીઘ્ર બોલતી અર્થાત્ કૂકડા

આદિની વાણીથી ઊષાકાલની પ્રતીતિ થાય છે; એથી બોલવાના ધર્મનું ઊષામાં આરોપણ કરવામાં આવે છે; **ચરત્**-વિચરણ કરે છે, **ત્રિંશત્**-ત્રીસ **પદા**-મુહૂર્તોની પશ્ચાત્ **નિ**, **અક્રમીત્**-પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ગતિ કરે છે; તે ઊષાને તમે જાણો. (૯૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વેગવાળી, પગ અને શિર આદિ અવયવોથી રહિત, પ્રાણીઓના જગવા પહેલાં આવનારી, જાગરણની કારણભૂતા, પ્રાણીઓના મુખોના માધ્યમથી બહુજ બોલનારી [છે.] જે ત્રીસ મુહૂર્ત [= ૬૦ ઘડી = ૨૪ કલાક]ની પશ્ચાત્ પ્રત્યેક સ્થાનમાં ગતિ કરે છે - પહોંચી જાય છે, તે ઊષા વેળા, તમારા દ્વારા નિદ્રા અને આળસનો ત્યાગ કરીને સુખને માટે સેવન કરવા યોગ્ય છે. (૯૩)

દેવાસો હિ ષ્મા મનવે સમન્યવો વિશ્વૈ સાકઃ સરાતયઃ ।

તે નૌઽઅદ્ય તે અપરં તુચે તુ નો ભવન્તુ વરિવોવિદઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે **સરાતયઃ**-સમાન રાતિ =દાન કરનારા, **સમન્યવઃ**-સમાન મન્યુ =કોધવાળા, **વિશ્વે**-સર્વ **દેવાસઃ**-વિદ્વાન લોકો - **સાકમ્**-સાથે મળીને **અદ્ય**-આજ **નઃ**-અમારે **મનવે**-મનુષ્યને માટે **સ્મ**-પ્રસિદ્ધિપૂર્વક, **વરિવોવિદઃ**-વરિવ = પરિચર્યાને જાણનારા અથવા **વરિવ** = ધનને પ્રાપ્ત કરાવનારા **ભવન્તુ**-થાય; **તુ**-અને **તે**-તેઓ **અપરમ્**-ભવિષ્ય કાલમાં **નઃ**-અમારા **તુચે**-પુત્રપૌત્રાદિ સંતાનોને માટે તથા અમારા માટે **વારિવોવિદઃ**-પરિચર્યાને જાણનારા અથવા ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર થાય. **તે, હિ**-તેઓ નિશ્ચયથી તમારા માટે પણ પરિચર્યાને જાણનારા અથવા ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર થાય. (૯૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરસ્પર સુખ આપે છે, જે એક સાથે - મળીને દુષ્ટો પર ક્રોધ કરે છે, તેઓ પુત્ર-પૌત્રવાળા બનીને, તેઓ મનુષ્યોનાં સુખની ઉન્નતિને માટે સમર્થ વિદ્વાન બની શકે છે. (૯૪)

અપાધમદ્ભિશસ્તીરશસ્તિહાથેન્દ્રો દ્યુમ્ન્યાભવત્ ।

દેવાસ્તઽન્દ્ર સુખ્યાય યેમિરે બૃહદ્ધાનો મરુદ્ગણ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે **બૃહદ્** **ધાનો**-મહાન કિરણોની સમાન પ્રકાશિત કીર્તિવાળા **મરુદ્ગણ**-મનુષ્યો વા વાયુઓના સમૂહથી કાર્યસાધક **ન્દ્ર**-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારા સભાપતિ રાજન્ ! **દેવાઃ**-વિદ્વાનો **તે**-આપની **સુખ્યાય**-મિત્રતાને માટે **યેમિરે**-સંયમ કરે છે.

અથ-અને **દ્યુમ્ની**-બહુજ પ્રશંસા અને ધનથી યુક્ત **ન્દ્રઃ**-પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ રાજા આપ - **અભિશસ્તીઃ**-સર્વત્રથી હિંસાઓને **અપાધમત્**-દૂર ભગાવો છો, **અશસ્તિહા**-અપ્રશસ્ત = દુષ્ટોનો નાશ કરનારા **આ + અભવત્**-બનો. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધાર્મિક ન્યાયાધીશોની અથવા ધનવાનોની મિત્રતા કરે છે, તેઓ યશસ્વી બનીને સર્વના દુઃખ દૂર કરવા માટે સૂર્ય સમાન હોય છે. (૯૫)

પ્ર વઽન્દ્રાય બૃહતે મરુતો બ્રહ્મર્ચત ।

વૃત્રઃ હનતિ વૃત્રહા શતક્રતુર્વજ્રૈણ શતપર્વણા ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-મનુષ્યો ! જે શતક્રતુ:-અસંખ્ય પ્રકારની બુદ્ધિ વા કર્મોવાળા સેનાપતિ - શતપર્વણા-જેનાથી અસંખ્ય જીવોનું પાલન થાય એવા વજ્રેણ-શસ્ત્ર-અસ્ત્ર વિશેષથી વૃત્રહા-મેઘનાશક સૂર્ય વૃત્રમ્-મેઘનો નાશ કરે છે - તેમ બૃહતે, ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે શત્રુઓને હનતિ-મારે છે; વ:-તમારે માટે બ્રહ્મ-ધન વા અન્નને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેનો તમે પ્ર, અર્ચત-સત્કાર કરો. (૯૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો જેમ સૂર્ય મેઘનો નાશ કરે છે, તેમ શત્રુઓનો નાશ કરીને તમારા માટે ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેનો તમે સર્વ સત્કાર કરો. સદા કૃતજ્ઞ બનીને કૃતદનતાનો ત્યાગ કરીને પ્રાજ્ઞ = વિદ્વાન બનીને મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરો. (૯૬)

અસ્યેદિન્દ્રો વાવૃથે વૃષ્ણયઃ શવો મદે સુતસ્ય વિષ્ણાવિ ।

અદ્યા તમસ્ય મહિમાનમાયવોઽનુ ષ્ટુવન્તિ પૂર્વથા ડુમા ડ ત્વા । યસ્યામ્ ।

અય ંસહસ્રમ્ । ઋર્ધ્વઽઋષુર્ણઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઇન્દ્ર:-જીવ અને પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા વિષ્ણાવિ-વ્યાપક પરમેશ્વરમાં સુતસ્ય-ઉત્પન્ન અસ્ય-આ સંસારના મદે-આનંદને માટે વૃષ્ણયમ્-પરાક્રમ શવ:-બળ અને જળની અદ્ય-આ વર્તમાન સમયમાં વાવૃથે-વૃદ્ધિ કરે છે.

અસ્ય-એ પરમાત્માનાં ઇત્-જ મહિમાનમ્-મહિમાની પૂર્વથા-પૂર્વજ લોકોની સમાન આયવ:-પોતાના કર્મ ફલોને પ્રાપ્ત કરનારા મનુષ્યો અનુ, સ્તુવન્તિ-પ્રશંસા કરે છે - અનુકૂળ સ્તુતિ કરે છે; તમ્-તમે લોકો પણ તેની સ્તુતિ કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ યજુર્વેદના અધ્યાય-૩૩ના મંત્ર-૮૧, ૮૨, ૮૩ અધ્યાય-૧૧નો મંત્ર ૪૨મો. (૯૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો તમે સર્વત્ર વ્યાપક, સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, સર્વના આધાર અને પરમ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર ઈશ્વરની આજ્ઞા અને મહિમાને જાણીને સમસ્ત સંસારનો ઉપકાર કરો, તો તમે નિરંતર આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકો. (૯૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અગ્નિ (૧-૪), પ્રાણ-ઉદ્દાન (૩), રાત-દિવસ (૫), સૂર્ય (૩૫-૩૮), અગ્નિ (૨૨), રાજા (૨૧), ઐશ્વર્ય ઉત્તમયાન (૪૩), વિદ્વાન (૪૮), શ્રી (૨૧), વૈશ્વાનર (૨૩), ઈન્દ્ર (૨૪-૨૯), પ્રજ્ઞા (૨૯), વરુણ (૩૨), અશ્વિનો (૫૮), અન્ન (૫૨), સૂર્ય (૩૧), રાજા-પ્રજા (૩૦), પરીક્ષક (૧૫), ઈન્દ્ર-વાયુ (૪૫) આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ ઇતિ ત્રયસ્ત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ ચતુસ્ત્રિંશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

યજ્ઞાગ્રતો દૂરમુદૈતિ દૈવં તદુ સુપ્તસ્ય તથૈવૈતિ ।

દૂરઙ્મં જ્યોતિષાં જ્યોતિરેકં તન્મે મનઃ શિવસંકલ્પમસ્તુ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન ! આપની કૃપાથી - યત્-જે દૈવમ્-દેવ = આત્મામાં વિદ્યમાન વા જીવાત્માનું સાધન, દૂરઙ્મમ્-દૂર જનાર અથવા અનેક પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર, જ્યોતિષામ્-શબ્દ આદિ વિષયોનું પ્રકાશક શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયોનું જ્યોતિઃ-પ્રવર્તક, એકમ્-એક જાગ્રતઃ-જાગૃત અવસ્થામાં દૂરમ્-દૂર - દૂર જત, એતિ-જાય છે, ડ-અને તત્-જે સુપ્તસ્ય-નિદ્રાવસ્થામાં તથા, એ-એ જ રીતે એતિ-અંદર અન્તઃકરણમાં જાય છે; તત્-તે મે-મારું મનઃ-સંકલ્પ-વિકલ્પાત્મક મન શિવસંકલ્પમ્-શિવ = કલ્યાણકારી, ધર્મવિષયક સંકલ્પ = ઈચ્છાવાળું અસ્તુ-થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, અનેક પ્રકારના સામર્થ્યથી સંપન્ન મનને શુદ્ધ કરે છે; જે મન જાગૃત અવસ્થામાં વિસ્તૃત વ્યવહારવાળું છે, તે સુષુપ્તિ અવસ્થામાં શાંત બની જાય છે.

જે વેગવાનોમાં અતિવેગવાન તથા જ્ઞાનનું સાધક હોવાથી ઈન્દ્રિયોનાં પણ પ્રવર્તક [મનને જે] વશમાં રાખે છે, તે અશુભ વ્યવહારને છોડીને [મનને] શુભ આચરણમાં પ્રેરિત કરી શકે છે. (૧)

येन कर्माण्यपसौ मनीषिणौ यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! જ્યારે આપના સંગથી યેન-જે મનથી અપસઃ-કર્મ, ધર્મનિષ્ઠ, મનીષિણઃ-મનનું દમન કરનારા, ધીરાઃ-ધ્યાન કરનારા, મેધાવી લોકો - યજ્ઞે-અગ્નિહોત્ર આદિ વા ધર્મયુક્ત વ્યવહાર વા યોગાભ્યાસમાં તથા વિદથેષુ-વિજ્ઞાન સંબંધી અને યુદ્ધ આદિ વ્યવહારોમાં કર્માણિ-અત્યંત ઈષ્ટ કર્મોને કૃણવન્તિ-કરે છે.

યત્-જે અપૂર્વમ્-સર્વોત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા, પ્રજાનામ્-પ્રાણીમાત્રના અન્તઃ-હૃદયમાં યક્ષમ્-પૂજનીય વા સંગત - એકીભૂત થઈ રહેલ છે; તત્-તે મે-મારું મનઃ-મનન, વિચારાત્મકરૂપ મન શિવસંકલ્પમ્-ધર્મમાં પ્રેમ કરનાર અસ્તુ-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પરમેશ્વરની ઉપાસના, ઉત્તમ વિચાર, વિદ્યા અને સત્સંગથી અન્તઃકરણ [મન]ને અધર્માચરણથી હટાવીને ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત કરવું જોઈએ. (૨)

યત્પ્રજ્ઞાનમુત ચેતો ધૃતિશ્ચ યજ્જોતિરન્તરમૃતં પ્રજાસુ ।

યસ્માન્નઽઋતે કિં ચન કર્મ ક્રિયતે તન્મે મનઃ શિવસંકલ્પમસ્તુ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા પરમ યોગી વિદ્વાન ! આપના જ્ઞાપન = બોધનથી યત્-જે પ્રજ્ઞાનમ્-વિશેષ કરીને જ્ઞાનના ઉત્પાદક અર્થાત્ બુદ્ધિરૂપ ઉત્-અને પણ ચેતઃ-સ્મૃતિનું સાધન ધૃતિઃ-ઘૈર્યસ્વરૂપ છે; ચ-અને જે લજ્જા આદિ કર્મોનું કારણ છે. પ્રજાસુ-જનોનાં અન્તઃ-અન્તઃકરણમાં આત્માનું સાથી હોવાથી અમૃતમ્-નાશરહિત જ્યોતિઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ છે.

યસ્માત્-જેના ઋત્તો-વિના કિમ્, ચન-કોઈ પણ કર્મ-કામ ન, ક્રિયતે-કરી શકાતું નથી, તત્-તે મે-મુજ જીવાત્માના મનઃ-સર્વ કર્મોનું સાધનરૂપ મન શિવસંકલ્પમ્-કલ્યાણકારી પરમાત્મામાં સંકલ્પ = ઈચ્છા રાખનારું અસ્તુ-થાય. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અન્તઃકરણ - બુદ્ધિ, ચિત્ત, મન અને અહંકારરૂપ વૃત્તિવાળું હોવાથી ચાર પ્રકારનું છે, જે આંતરિક પ્રકાશથી યુક્ત, પ્રજાઓનાં સર્વ કર્મોનું સાધક, નાશરહિત, મન છે, તેને તમે ન્યાય અને સત્ય આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરીને પક્ષપાત, અન્યાય અને અધર્માચરણથી નિવૃત્ત કરો. (૩)

યેનેદં ભૂતં ભુવનં ભવિષ્યત્પરિગૃહીતમમૃતેન સર્વમ્ ।

યેન યજ્ઞસ્તાયતે સપ્તહોતા તન્મે મનઃ શિવસંકલ્પમસ્તુ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યેન-જે અમૃતેન-નાશરહિત પરમાત્માની સાથે સંયુક્ત મનથી ભૂતમ્-ભૂત ભુવનમ્-વર્તમાન અને ભવિષ્યત્-ભવિષ્ય સર્વમ્, ઇદમ્-એ સર્વ ત્રિકાલસ્થ વસ્તુમાત્ર પરિગૃહીતમ્-સર્વત્રથી ગૃહિત = જ્ઞાત થાય છે -

યેન-જેના દ્વારા સપ્તહોતા-સાત મનુષ્ય હવન કરનારા વા પાંચ પ્રાણ, છટ્ટો જીવાત્મા અને સાતમું અવ્યક્ત એ લેવા-દેવાવાળા જેમાં છે તે યજ્ઞઃ-અગ્નિષ્ટોમાદિ વા વિજ્ઞાનરૂપ વ્યવહાર તાયતે-વિસ્તૃત કરવામાં આવે છે; તત્-તે મે-મારું મનઃ-યોગથી યુક્ત ચિત્ત શિવસંકલ્પમ્-શિવ = મોક્ષરૂપ સંકલ્પવાળું અસ્તુ-થાય. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ચિત્ત યોગાભ્યાસના સાધનો તથા ઉપસાધનોથી સિદ્ધ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનને જાણનારા, સર્વ સૃષ્ટિને જાણનારા, કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનના સાધક છે, તેને તમે સદા કલ્યાણના પ્રેમી બનાવો. (૪)

યસ્મિન્નૃચઃ સામ યજૂંષિ યસ્મિન્ પ્રતિષ્ઠિતા રથનાભાવિવારાઃ ।

યસ્મિંશ્ચિન્તઃ સર્વમોતં પ્રજાનાં તન્મે મનઃ શિવસંકલ્પમસ્તુ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યસ્મિન્-જે મનમાં રથનાભાવિવ-જેમના ચક્ર-પૈડાની વચ્ચે કાષ્ઠમાં અવયવ લાગેલા હોય

છે તે અરા:-રથના પૈડાના આરાની સમાન, ઋચ્ચ:-ઋગ્વેદ, સામ-સામવેદ અને યજૂષિ-યજુર્વેદ પ્રતિષ્ઠિતા-સર્વત્રથી પ્રતિષ્ઠિત છે, યસ્મિન્-જેમાં અથર્વવેદ પ્રતિષ્ઠિત છે; યસ્મિન્-જેમનામાં પ્રજાનામ્-પ્રાણીઓના સર્વમ્-સર્વ ચિત્તમ્-સર્વ પદાર્થસંબંધી જ્ઞાન ઓતમ્-દોરામાં મણિઓની સમાન પરોવેલા છે; તત્-તે મે-મારું મન:-મન શિવસંકલ્પમ્-કલ્યાણકારી વેદાદિ સત્યશાસ્ત્રોના પ્રચારનો સંકલ્પ રાખવાવાળું અસ્તુ-થાય. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના સ્વસ્થ રહેવાથી જ વેદાદિના પઠન-પાઠન રૂપ વ્યવહાર સંભવ બને છે, તે મન જ વેદાદિ વિદ્યાને ધારણ કરનારું છે. જેમાં સર્વ વ્યવહારોનું જ્ઞાન સંચિત થાય છે, તે અંતઃકરણ [મન]ને તમે વિદ્યા અને ધર્માચરણ દ્વારા પવિત્ર બનાવો. (૫)

સુષારથિરશ્વાનિવ યન્મનુષ્યાન્નેનીયતેઽભીશુભિર્વાજિનઽઙ્ગવ ।

હૃત્પ્રતિષ્ઠં યદ્વજિરં જવિષ્ઠં તન્મે મનઃ શિવસંકલ્પમસ્તુ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યત્-જે મન સુષારથિ:-જેમ ઉત્તમ ચતુર સારથિ અશ્વાનિવ-લગામથી ઘોડાઓને ચલાવે છે, તેમ મનુષ્યાન્-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને નેનીયતે-અત્યંત આમ - તેમ લઈ જાય છે; અને અભીશુભિ:-જેમ દોરીઓ-લગામથી વાજિન, ઙ્ગવ-વેગવાન ઘોડાઓને સારથિ વશમાં રાખે છે, બળથી - જેમ સારથિ ઘોડાઓને લઈ જાય છે, તેમ મન પ્રાણીઓને ચલાવે છે.

યત્-જે હૃત્પ્રતિષ્ઠમ્-હૃદયમાં સ્થિત, અજિરમ્-વિષયાદિમાં પ્રેરક અથવા વૃદ્ધ આદિ અવસ્થારહિત અને જવિષ્ઠમ્-અત્યંત વેગવાન છે; તત્-તે મે-મારું મન:-મન શિવસંકલ્પમ્-મંગલમય નિયમોમાં પ્રેમ કરનારું અસ્તુ-થાય. (૬)

ભાવાર્થ : [જો કો] જ્યાં આસક્ત થાય છે, જેમ લગામો દ્વારા સારથિ ઘોડાઓને વશમાં કરી લે છે, તેમ [મનુષ્યને] વશમાં કરનાર છે, સર્વ અવિદ્વાન તેનું અનુસરણ કરે છે - પાછળ ચાલે છે અને વિદ્વાન જેને પોતાના વશમાં રાખે છે, જો શુદ્ધ હોય તો સુખકારી અને અશુદ્ધ હોય તો દુઃખદાયક બને છે, જો જીતેલ હોય તો સિદ્ધિને અને ન જીતેલ હોય તો અસિદ્ધિને આપનાર છે, તે મનને મનુષ્યે સદા વશમાં રાખવું જોઈએ. (૬)

પિતું નુ સ્તૌષં મહો ધર્માણં તવિષીમ્ ।

યસ્ય ત્રિતો વ્યોજસા વૃત્રં વિપર્વમર્દયત્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હું યસ્ય-જેના પિતુમ્-અન્ન મહઃ-મહાન ધર્માણમ્-પક્ષપાતરહિત ન્યાયાચરણરૂપ ધર્મની તથા તવિષીમ્-બળયુક્ત સેનાની નુ-શીઘ્ર સ્તૌષમ્-સ્તુતિ કરું છું; તે રાજપુરુષ ત્રિતઃ-ત્રણે કાળમાં જેમ સૂર્ય ઓજસા-જળની સાથે રહેલા વિપર્વમ્-પર્વ = ગ્રંથિઓથી રહિત વૃત્રમ્-મેઘને વિ + અર્દયત્-વિશેષતઃ નષ્ટ કરે છે; તેમ શત્રુઓને જીતવાને સમર્થ બને છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે સત્ય ધર્મ, બળવાન સેના અને વિપુલ અન્ન આદિ સામગ્રીને ધારણ કરે છે, તે સૂર્ય જેમ મેઘનો નાશ કરે છે, તેમ શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૭)

અન્વિદન્મતે ત્વં મન્યાસૈ શં ચ નસ્કૃધિ ।

ક્રત્વે દક્ષાય નો હિનુ પ્ર ણ આયૂંષિ તારિષઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અનુમતે-અનુકૂળ બુદ્ધિયુક્ત સભાપતિ વિદ્વાન ! ત્વમ્-આપ જેને શમ્-સુખકારી અનુ, મન્યાસૈ-સ્વીકાર કરો; તેથી યુક્ત નઃ-અમને કૃધિ-કરો.

ક્રત્વે-બુદ્ધિ, દક્ષાય-બળ વા ચતુરાઈને માટે નઃ-અમને હિનુ-ઉન્નત કરો. ચ-અને નઃ-અમારા આયૂંષિ-જીવન આદિની ઇત્-સમાન અન્યોને પણ પ્ર, તારિષઃ-પાર કરો. [અર્થાત્ નિશ્ચયથી આયુને સારી રીતે પૂર્ણ કરો.] (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ સ્વાર્થની પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ પ્રયત્ન કરે, જેમ પોતાનું કલ્યાણ અને વૃદ્ધિ ઇચ્છે, તેમ અન્યોની પણ ઇચ્છે, આ રીતે સર્વની પૂર્ણ આયુને સિદ્ધ કરે. (૮)

અનુ નોઽદ્યાનુમતિર્યજ્ઞં દેવેષુ મન્યતામ્ ।

અગ્નિશ્ચ હવ્યવાહનો ભવતં દાશુષે મયઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે અનુમતિઃ-અનુકૂળ વિજ્ઞાનવાળા મનુષ્ય અદ્ય-આજ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં નઃ-અમારાં યજ્ઞમ્-સુખ આપવાના સાધનરૂપ વ્યવહારને અનુ, મન્યતામ્-અનુકૂળ માને છે; તે ચ-અને હવ્યવાહનઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વા અગ્નિવિદ્યાના વિદ્વાન તમે બન્ને દાશુષે-દાનશીલ મનુષ્યને માટે મયઃ-સુખકારી ભવતમ્-બનો. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શુભકર્મોના અનુષ્ઠાનમાં અનુમતિ આપનારા છે અને દુષ્ટકર્મોનાં અનુષ્ઠાનનો નિષેધ કરનારા છે, તેઓ અગ્નિ આદિ વિદ્યાના દ્વારા સર્વને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૯)

સિનીવાલિ પૃથુષ્ટુકે યા દેવાનામસિ સ્વસા ।

જુષસ્વ હવ્યમાહતં પ્રજાં દૈવિ દિદિઙ્ઠિ નઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સિનીવાલિ-સિની = પ્રેમથી બંધાયેલી અને બલકારિણી, પૃથુષ્ટુકે-જેની વિસ્તૃત સ્તુતિ, વિસ્તૃત શિરના વાળ - કેશભાર, વા અધિક કામવાળી દેવિ-વિદુષી કુમારી ! યા-જે તું દેવાનામ્-વિદ્વાનોની સ્વસા-બહેન અસિ-છે; તે તું હવ્યમ્-ગ્રહણ - સ્વીકાર કરવા યોગ્ય આહુતમ્-સર્વત્રથી વર-દીક્ષા આદિ કર્મોથી સ્વીકારાયેલા પતિનું જુષસ્વ-સેવન કર, અને નઃ-અમારે માટે પ્રજામ્-સુંદર સંતાન રૂપ પ્રજાને દિદિઙ્ઠિ-પ્રદાન કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે કુમારીઓ ! તમે બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, યુવતીઓ બનીને, પોતાને અભીષ્ટ-ઈચ્છિત, સુપરીક્ષિત વરવા યોગ્ય પતિઓનું સ્વયં વરણ કરો, તેની સાથે આનંદ કરીને પ્રજા-સંતાનોને ઉત્પન્ન કરો. (૧૦)

પञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः ।

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥ ११ ॥

પદાર્થ : મનુષ્ય - સસ્રોતસ:-એક સમાન મનરૂપ પ્રવાહો = સ્રોતોવાળી, પञ्च-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયોની વૃત્તિઓ, જે નદ્ય:-નદી સમાન પ્રવાહરૂપ છે, તે જે સરસ્વતીમ્-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી અપિ, યન્તિ-પણ પ્રાપ્ત કરે છે; સા, ડ-તે પણ સરિત્-નદીરૂપી - ચાલનારી સરસ્વતી-વાણી દેશે-પોતાના નિવાસસ્થાનમાં પञ्ચધા-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયોના શબ્દ આદિ વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવાથી પાંચ પ્રકારની તુ-જ અભવત્-થાય છે; તેને જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે વાણી પાંચ શબ્દ આદિ વિષયોના આશ્રિત નદીના રૂપમાં છે, તેને જાણીને, તેનો યથાવત્ વિસ્તાર - પ્રચાર કરીને તેનો મધુર અને સ્નિગ્ધરૂપમાં પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૧૧)

त्वमग्ने प्रथमोऽअङ्गिराऽऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा ।

तव व्रते कवयो विद्वानापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! જે કારણે ત્વમ્-આપ પ્રથમ:-પ્રખ્યાત, અઙ્ગિરા:-અંગોના રસની સમાન વા જીવાત્માઓને સુખ આપનારા, દેવાનામ્-વિદ્વાનોમાં દેવ:-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ વાળા, શિવ:-કલ્યાણકારી સખા-મિત્ર ઋષિ:-વેદાર્થના જ્ઞાતા અભવ:-છે; એથી તવ-આપના વ્રતે-સ્વભાવ વા નિયમને આધીન વિદ્વાનાપસ:-વિદિત = પ્રસિદ્ધ કર્મોવાળા, ભ્રાજદૃષ્ટય:-સુંદર ઋષિ = શસ્ત્રોવાળા કવય:-બુદ્ધિમાન મસ્ત:-મનુષ્ય અજાયન્ત-ઉત્પન્ન - પ્રકટ થાય છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સર્વના મિત્ર વિદ્વાન અને સર્વના હિતેષી પરમાત્માને મિત્ર માનીને, વિજ્ઞાન નિમિત્તનાં કર્મો કરીને, પ્રકાશિત આત્માવાળા બને, તો તેઓ વિદ્વાન બનીને પરમેશ્વરની આજ્ઞામાં રહીને વર્તી શકે છે. (૧૨)

त्वन्नोऽअग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वृश्च वन्द्य ।

त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषः रक्षमाणस्तव व्रते ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ યુક્ત અગ્ને-રાજન્ વા ઈશ્વર ! તવ-આપના વ્રતે-ઉત્તમ નિયમમાં રહેલા મઘોન:-અતિ ધનયુક્ત અમને તવ-આપના પાયુભિ:-રક્ષા આદિ હેતુ કાર્યોથી ત્વમ્-આપ રક્ષ-રક્ષા કરો; ચ-અને ન:-અમારા તન્વ:-શરીરોની રક્ષા કરો.

હે વન્દ્ય-વંદના = સ્તુતિને યોગ્ય ભગવન્ ! કારણ કે આપ - અનિમેષમ્-નિરંતર રક્ષમાણ:-રક્ષા

કરનાર તોકસ્ય-સંતાન - પુત્ર, તનયે-પૌત્ર, અને ગવામ્-ગાય આદિ પશુઓના ત્રાતા-રક્ષક અસિ-છો; તેથી અમારા માટે સર્વદા સત્કાર અને ઉપાસનાને યોગ્ય છો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ તથા તેની આજ્ઞા અનુસાર આચરણ કરે છે, જેના ઈશ્વર અને વિદ્વાન રક્ષક છે, તેઓ શ્રી = લક્ષ્મી, દીર્ઘ આયુ અને સંતાનોથી રહિત કદી થતા નથી. (૧૩)

ઉત્તાનાયામવ ભરા ચિકિત્વાન્ત્સદ્યઃ પ્રવીતા વૃષણં જજાન ।

અરુષસ્તૂપો રુશદસ્ય પાજ્ઙ્ઙાયાસ્પુત્રો વયુનેઙ્જનિષ્ટ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ ચિકિત્વાન્-જ્ઞાનવાન પ્રવીતા-કામના કરનાર વિદ્વાન ઉત્તાનાયામ્-સારી રીતે વિસ્તૃત ભૂમિ વા અન્તરિક્ષમાં વૃષણમ્-વર્ષા માટે યજ્ઞને જજાન-ઉત્પન્ન કરે છે; અને અસ્વસ્તૂપઃ-રક્ષકોની ઉન્નતિ કરનાર ઙ્ઙાયાઃ-પ્રશંસિત સ્ત્રીના - વાણીના પુત્રઃ-પુત્ર વયુને-વિજ્ઞાનમાં અજનિષ્ટ-ઉત્પન્ન કરે છે; અસ્ય-એનું સ્થાત્-સુંદર રૂપ અને પાજઃ-બળ પેદા થાય છે; તેમ એને સદ્યઃ-શીઘ્ર અવ,ભર-પોતાની તરફ પુષ્ટ કર. અર્થાત્ વિદ્વાન બનાવો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આ સૃષ્ટિમાં બ્રહ્મચર્ય આદિ દ્વારા કુમારો અને કન્યાઓને દ્વિજ બનાવે તો તેઓ શીઘ્ર વિદ્વાન બને. (૧૪)

ઙ્ઙાયાસ્ત્વા પદે વયં નાભા પૃથિવ્યાઙ્ઙઅધિ ।

જાતવેદો નિ ધીમહ્યગ્ને હૃવ્યાય વોઢવે ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-ઉત્પન્ન બુદ્ધિ - જ્ઞાનવાળા અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન વા રાજન્ ! વયમ્-અમે અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો - ઙ્ઙાયાઃ-પ્રશંસિત વાણીની પદે-પ્રતિષ્ઠામાં પૃથિવ્યાઃ-વિસ્તૃત ભૂમિની અધિ-ઉપર અને નાભા-મધ્યમાં ત્વા-આપને હૃવ્યાય-આપવા યોગ્ય પદાર્થોને વોઢવે-પ્રાપ્ત કરવા વા કરાવવા માટે નિ + ધીમહિ-નિરંતર અધિકારમાં સ્થાપિત કરીએ છીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! જે અધિકારમાં અમે આપને સ્થાપિત કરીએ, તે અધિકારને ધર્મ અને પુરુષાર્થથી યથાવત્ સિદ્ધ કરો. (૧૫)

પ્ર મન્મહે શવસાનાય શૂષમાઙ્ગૂષં ગિર્વિણસેઙ્ઙિરસ્વત્ ।

સુવૃક્તિભિઃ સ્તુવત ઋગ્મિયાયાર્ચીમાર્ક નરે વિશ્રુતાય ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે સુવૃક્તિભિઃ-નિર્દોષ ક્રિયાઓથી શવસાનાય-વિજ્ઞાનને માટે તથા ગિર્વિણસે-સુશિક્ષિત વાણીઓનું સેવન કરનારા, ઋગ્મિયાય-ઋચ્યાઓને ભણનારા, વિશ્રુતાય-વિશેષ પ્રસિદ્ધ ગુણોવાળા, સ્તુવતે-શાસ્ત્રોના અર્થોની સ્તુતિ કરનારા, નરે-નાયક મનુષ્યને માટે ઙ્ઙિરસ્વત્-

પ્રાણોની સમાન આઙ્ગૂષ્મ્-વિદ્યાશાસ્ત્રના બોધરૂપ અને શૂષ્મ્-બળને પ્ર, મન્મહે-યાચના કરીએ છીએ; તથા અર્કમ્-સત્કાર કરવા યોગ્યનો અર્ચામ્-સત્કાર કરીએ છીએ; તેમ એ વિદ્વાનો પ્રતિ તમે પણ વર્તો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સત્કાર કરવા યોગ્યનો સત્કાર અને નિરાદર કરવા યોગ્યનો નિરાદર કરીને વિદ્યા અને ધર્મની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

પ્ર વૌ મહે મહિ નમૌ ભરધ્વમાઙ્ગૂષ્મ્ શવસાનાય સામં ।

येना नः पूर्वे पितरः पद्ज्ञाऽअर्चन्तोऽअङ्गिरसो गाऽअविन्दन् ॥ १७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પદ્જ્ઞા:-પદ = જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય આત્મસ્વરૂપને જાણનારા લોકો - ન:-અમારો અર્ચન્ત:-સત્કાર કરતા, અઙ્ગિરસ:-સર્વ સૃષ્ટિની વિદ્યાનાં અંગોના જ્ઞાતા પૂર્વે-પૂર્વજ લોકો તથા ન:-અમારા પિતર:-રક્ષક જ્ઞાની લોકો યેન-જે કારણથી મહે-મહાન શવસાનાય-બ્રહ્મચર્ય અને સુશિક્ષાથી શરીર અને આત્માનાં બળથી યુક્ત પુરુષને માટે અને વ:-તમારે માટે આઙ્ગૂષ્મ્-સત્કાર વા બળને માટે હિતકારી સામ-સામવેદને તથા ગા:-સુશિક્ષિત વાણીઓને અવિન્દન્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેથી તેને માટે તમે મહિ-સત્કાર માટે મહાન નમ:-સત્કર્મ વા અન્નને પ્ર, ભરધ્વમ્-ધારણ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાનો તમને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા વિદ્વાન ધાર્મિક બનાવે, તે પ્રથમ વિદ્યા ભણેલા લોકોને જ પિતર જાણો. (૧૭)

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयांसि ।

तितिक्षन्तेऽअभिशास्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! જે સોમ્યાસ:-ઐશ્વર્ય આદિમાં શ્રેષ્ઠ સખાય:-મિત્રજન - સોમમ્-ઐશ્વર્ય આદિને સુન્વન્તિ-સિદ્ધ કરે છે; પ્રયાંસિ-કામના કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાન આદિ ગુણો દધતિ-ધારણ કરે છે; અને જનાનામ્-મનુષ્યોના અભિશાસ્તિમ્-દુર્વચન - વાદવિવાદને આ, તિતિક્ષન્તે-સારી રીતે સહન કરે છે; તેનો આપ નિરંતર સત્કાર કરો.

હિ-કારણ કે ત્વત્-આપથી પ્રકેત:-ઉત્તમ બુદ્ધિમાન ક:, ચન-કોઈ પણ નથી; તેથી ત્વા-આપને સર્વ લોકો ઇચ્છન્તિ-ચાહે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં નિંદા - સ્તુતિ, હાનિ-લાભ આદિને સહન કરનારા, પુરુષાર્થી, સર્વની સાથે મૈત્રી કરનારા આપ છે, તેઓની સર્વ સેવા કરે અને તેઓનો સત્કાર કરે, તેઓ જ સર્વના અધ્યાપક અને ઉપદેશક બને. (૧૮)

न तै दूरे परमा चिद्रजांशस्या तु प्र याहि हरिवो हरिभ्याम् ।

स्थिराय वृष्णे सर्वना कृतेमा युक्ता ग्रावाणः समिधानेऽअग्नौ ॥ १९ ॥

પદાર્થ : હે હરિવિઃ-પ્રશસ્ત ઘોડાઓવાળા રાજન્ ! જેમ સમિધાને-પ્રદીપ્ત કરેલ અગ્નૌ-અગ્નિમાં ડૂમાઃ, સવના-એ પ્રાતઃ સવન આદિ કર્મ કૃતા-કરવામાં આવે છે; તુ-તેથી ગ્રાવાણઃ-ગર્જના કરનાર મેઘ યુક્તાઃ-ભેગા થઈને આવે છે; તેમ સ્થિરાય-દૃઢ વૃષ્ણો-સુખદાયક વિદ્યા આદિ પદાર્થને માટે હરિશ્યામ્-ધારણ, આકર્ષણ અને વેગરૂપ ગુણોથી યુક્ત ઘોડાઓ વા જળ તથા અગ્નિ દ્વારા આ + પ્ર + ચાહિ-સારી રીતે આવો. આ રીતે કરવાથી પરમ-દૂરસ્થ રજાંસિ-સ્થાન ચિત્-પણ તે-આપથી દૂરે-દૂર ન-રહેતું નથી. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ અગ્નિથી ઉત્પન્ન તથા વરસેલા વાદળો પૃથિવિની સમીપ રહીને, આકર્ષણથી દૂર પણ ચાલ્યા જાય છે, તેમ અગ્નિ આદિ યાનોથી યાત્રા કરવાથી કોઈ પણ દેશ દૂર રહેતો નથી. આ રીતે પુરુષાર્થ કરીને પુષ્કળ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરો. (૧૯)

અષાઢં યુત્સુ પૃતનાસુ પપ્રિઃ સ્વર્ષામ્પ્સાં વૃજનસ્ય ગોપામ્ ।

ભ્રેષ્ણુજાઞ્ સુક્ષિતિઃ સુશ્રવસં જયન્તં ત્વામનુ મદેમ સોમ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સમસ્ત ઐશ્વર્યથી સંપન્ન રાજન્ વા સેનાપતે ! અમે જે યુત્સુ-યુદ્ધોમાં અષાઢમ્-અસહ્ય, પૃતનાસુ-મનુષ્યોની સેનાઓમાં પપ્રિમ્-પૂર્ણ બળ, વિદ્યાયુક્ત રક્ષક, સ્વર્ષામ્-સ્વ = સુખનું સેવન કરનારા, અપ્સામ્-અપ = જળ વા પ્રાણ પ્રદાન કરનારા, વૃજનસ્ય-બળના ગોપામ્-રક્ષક, ભ્રેષ્ણુજામ્-ધારણ કરવા યોગ્ય સંગ્રામોમાં જીતવાવાળા, સુક્ષિતિમ્-ક્ષિતિ = પૃથ્વીના ઉત્તમ રાજ્યવાળા, સુશ્રવસમ્-સુંદર શ્રવઃ-અન્ન વા યશવાળા જયન્તમ્-શત્રુઓના વિજેતા, ત્વામ્-આપને અનુ, મદેમ-અનુમોદિત કરે-હર્ષિત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા વા સેનાપતિના ઉત્તમ સ્વભાવથી રાજાની સેના તથા પ્રજાજનો પ્રસન્ન રહે, જેના પ્રસન્ન રહેવાથી રાજા પણ પ્રસન્ન હોય, ત્યાં નિશ્ચિત વિજય, નિશ્ચલ પરમ ઐશ્વર્ય અને વિપુલ પ્રતિષ્ઠા પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૦)

સોમો ધેનુ ઃ સોમો અર્વન્તમાશુઃ સોમો વીરં કર્મણ્યં દદાતિ ।

સાદન્યં વિદશ્યઃ સુભેયં પિતૃશ્રવણં યો દદાશદસ્મૈ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે પ્રજાસ્થ મનુષ્ય અસ્મૈ-એ સોમ = રાજા, અધ્યાપક અને ઉપદેશકને ઉચિત પદાર્થ દદાશત્-આપે છે; તેને સોમઃ-ઐશ્વર્યવાન અધ્યાપક ધેનુમ્-વિદ્યાને ધારણ કરનારી વાણી દદાતિ-આપે છે.

સોમઃ-સત્ય આચરણમાં પ્રેરણા કરનારા રાજા આદિ જન તેને અર્વન્તમ્-વેગથી ચાલનારા આશુમ્-માર્ગને શીઘ્ર વ્યાપ્ત કરનારા ઘોડાઓ દદાતિ-આપે છે.

સોમઃ-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત રાજા આદિ કર્મણ્યમ્-કર્મથી યુક્ત = પુરુષાર્થી, સાદન્યમ્-બેસાડવામાં પ્રવીણ, વિદશ્યમ્-યજ્ઞ કરવામાં કુશળ, પિતૃશ્રવણમ્-આચાર્ય - પિતાથી વિદ્યા શ્રવણ કરનાર, સુભેયમ્-સભામાં બેસવા યોગ્ય = સભ્ય વીરમ્-શત્રુઓના બળોને વ્યાપ્ત કરનાર શૂરવીર પુરુષને દદાતિ-

પ્રદાન કરે છે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે અધ્યાપક, ઉપદેશક વા રાજપુરુષ સુશિક્ષિત વાણી, અગ્નિ આદિ તત્ત્વોની વિદ્યા, પુરુષનું જ્ઞાન અને સભ્યતા સર્વને પ્રદાન કરે છે, તેઓ સર્વના સત્કારને યોગ્ય છે. (૨૧)

ત્વમિમાઽઓષધીઃ સોમ વિશ્વાસ્ત્વમપોઽઅજનયસ્ત્વં ગાઃ ।

ત્વમા તંતન્થોર્વુન્તરિક્ષં ત્વં જ્યોતિષા વિ તમો વવર્થ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઉત્તમ સોમલતાની સમાન સર્વરોગનાશક રાજન્ ! ત્વમ્-આપ ડ્રમાઃ-આ વિશ્વાઃ-સર્વ ઓષધીઃ-સોમ આદિ ઔષધિઓને; ત્વમ્-આપ સૂર્યની સમાન અપઃ-જલો વા કર્મને; તથા ત્વમ્-આપ ગાઃ-પૃથ્વી વા ગાયોને અજનયઃ-ઉત્પન્ન વા પ્રકટ કરો છો; ત્વમ્-આપ સૂર્યની સમાન ઉરુ-વિસ્તૃત અન્તરિક્ષમ્-જળ વા આકાશને આ + તતન્થ-સર્વત્ર વિસ્તૃત કરો છે; તથા ત્વમ્-આપ સૂર્ય જેમ જ્યોતિષા-પ્રકાશથી તમઃ-અંધકારને અને રાત્રિને નિવૃત્ત કરો છો; તેમ ન્યાયથી અન્યાયને વિ + વવર્થ-આચ્છાદિત વા નિવૃત્ત કરો છો; તે આપ અમારા માનનીય છો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો, જેમ ઔષધિઓ રોગોનું હરણ કરે છે, તેમ દુઃખોને હરે છે, પ્રાણોની સમાન બળને ઉત્પન્ન કરે છે; અને જે રાજપુરુષો - જેમ સૂર્ય રાત્રિને નિવૃત્ત કરે છે, તેમ અધર્મ અને અવિદ્યાના અંધકારને દૂર કરે છે તેઓ સંસારમાં પૂજ્ય કેમ ન બને ? (૨૨)

દેવેનં નો મનસા દેવ સોમ રાયો ભાગઃ સહસાવન્નભિ યુધ્ય ।

મા ત્વા તંનદીશિષે વીર્યસ્યોભયેભ્યઃ પ્ર ચિકિત્સા ગવિષ્ટૌ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે સહસાવન્-સહ = અધિક સેના આદિ બળવાળા, સોમ-સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યના પ્રાપક દેવ-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત રાજન્ ! જો આપ દેવેન-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી યુક્ત મનસા-મનથી રાયઃ-ધનના ભાગમ્-અંશને નઃ-અમારે માટે અભિ + યુધ્ય-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવો. કારણ કે આપ વીર્યસ્ય-વીરકર્મ કરવાને ઈશિષે-સમર્થ - સ્વામી છો; ત્વા-આપને કોઈ મા, આ, તનત્-સંકુચિત કરતા નથી; દબાવતા નથી.

આપ ગવિષ્ટૌ-ગૌ = સ્વર્ગ અર્થાત્ સુખ વિશેષની ઈષ્ટિ = ઈચ્છા ધરાવતા ઉભયેભ્યઃ-આ લોક અને પરલોક બન્નેનાં સુખોને માટે પ્ર, ચિકિત્સ-રોગ નિવારણની સમાન વિદ્ય નિવારણના ઉપાય કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ વિદ્વાનો - કપટ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, શુદ્ધભાવથી સર્વના સુખની અભિલાષા કરે, વીર્ય = બળની વૃદ્ધિ કરે. જેથી દુઃખની નિવૃત્તિ તથા સુખની વૃદ્ધિ આ લોકમાં અને પરલોકમાં થાય. તેવો સદા પ્રયત્ન કરે. (૨૩)

અષ્ટૌ વ્યંચ્યત્કુભઃ પૃથિવ્યાસ્ત્રી ધન્વ યોજના સ્મ સિન્ધૂન્ ।

હિરણ્યાક્ષઃ સવિતા દેવઽઆગાહધ્રત્ના દાશુષે વાર્યાણિ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હિરણ્યાક્ષ:-નેત્રોની સમાન રૂપદર્શક જ્યોતિઓવાળા, દેવ:-પ્રકાશક, સવિતા-સૂર્ય દાશુષે-દાનશીલ પ્રાણીઓને માટે વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય રત્ના-પૃથ્વીના ઉત્તમ પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતાં, ત્રી-ત્રણ ધન્વ-અવકાશરૂપ યોજના-યોજન = બાર ગાઉ, સપ્ત-સાત સિન્ધૂન્-ભૂમિના સમુદ્રથી લઈને મેઘના ઉપરનાં અવયવો સુધી સમુદ્રો, પૃથિવ્યા:-પૃથ્વી સંબંધી અષ્ટૌ-આઠ કકુભઃ-દિશાઓને વિ, અચ્ચત્-વિખ્યાત કરે છે; અને આ, અગાત્-આવે છે; તેમ તમે પણ બનો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય પૃથ્વીથી લઈને બાર ગાઉ સુધી ગુરુત્વ અને લઘુત્વથી યુક્ત સાત પ્રકારનાં જલોનાં અવયવો અને સમસ્ત દિશાઓનો વિભાગ કરે છે, વર્ષા આદિ દ્વારા સર્વને સુખ આપે છે, તેમ તમે શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિને પ્રાપ્ત કરીને, અનેક પ્રકારનાં ઐશ્વર્યોનાં દાનથી મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને નિરંતર સુખી કરો. (૨૪)

હિરણ્યપાણિઃ સવિતા વિચર્ષણિરુભે દ્યાવાપૃથિવીઽઅન્તરીયતે ।

અપામીવાં બાધતે વેતિ સૂર્યમ્ભિ કૃષ્ણેન રજસા દ્યામૃણોતિ ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હિરણ્યપાણિ:-હાથોના સમાન જળ આદિના ગ્રાહક પ્રકાશરૂપ કિરણોથી યુક્ત, વિચર્ષણિ:-વિશેષદર્શક, સવિતા-સર્વ પદાર્થોની ઉત્પત્તિના હેતુ સૂર્યમ્-સૂર્યલોક - જ્યારે ઉભે-બન્ને દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિના અન્ત:-મધ્યમાં ઈંચતે-પ્રાપ્ત થઈને ગતિ કરે છે; - ઉદય થઈને ધૂમે છે; ત્યારે અમીવામ્-વ્યાધિરૂપ અંધકારને અપ + બાધતે-દૂર કરે છે.

જ્યારે વેતિ-અસ્ત થાય છે, ત્યારે કૃષ્ણેન-કાળા રંગના રજસા-અંધકારરૂપથી દ્યામ્-પ્રકાશને અભિ + ઋણોતિ-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત - ઘેરી લે છે; તે સૂર્યને તમે જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય સમીપના લોકોને આકર્ષણ કરીને ધારણ કરે છે, તેમ જ અનેક લોકોથી શોભાયમાન સૂર્ય આદિ સમસ્ત જગતને વ્યાપ્ત કરીને તથા આકર્ષણ કરીને ઈશ્વર ધારણ કરી રહેલ છે, તેમ તમે જાણો.

ઈશ્વર સિવાય સર્વના વિધાતા - નિર્માણકર્તા અને ધારણકર્તા અન્ય કોઈ બની શકતા નથી. (૨૫)

હિરણ્યહસ્તોઽઅસુરઃ સુનીથઃ સુમૃડીકઃ સ્વવાં યાત્વર્વાઙ્ ।

અપસેધન્ રક્ષસો યાતુધાનાનસ્થાદેવઃ પ્રતિદોષં ગૃણાનઃ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હિરણ્યહસ્ત:-કિરણરૂપ હાથોવાળા, સુનીથ:-પ્રકાશ આદિને સારી રીતે પહોંચાડનાર, અસુરઃ-કિરણો વા જલોને ઈંકનાર, સુમૃડીકઃ-સુંદર - અત્યંત સુખકારી, સ્વવાન્-પોતાના પ્રકાશ આદિ ગુણોથી યુક્ત દેવ:-પ્રકાશક સૂર્યલોક, રક્ષસઃ-ચોર, ડાકુ આદિ તથા યાતુધાનાન્-અન્યાયથી પારકા પદાર્થોને ધારણ કરનારા દુષ્ટોને અપસેધન્-નિવૃત્ત કરતા અર્થાત્ ચોર ડાકુ આદિ સૂર્યોદય થતાં પોતાનું કામ કરી શકતા નથી, પરંતુ રાત્રિમાં જ પોતાનું કામ કરે છે; તથા પ્રતિદોષમ્-પ્રત્યેક જનમાં રહેલ દોષને ગૃણાનઃ-ઉચ્ચારણ = પ્રકટ કરતાં અસ્થાત્-ઉદય થાય છે. તે અર્વાઙ્-પોતાના નજીકના

પદાર્થોને પ્રાપ્ત થનાર, સૂર્ય - અમારા સુખને માટે યાતુ-પ્રાપ્ત થાય; તેમ તે જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! સદા ઉદારતાથી યાચકોને સુવર્ણ આદિ આપીને, દુષ્ટ આચરણવાળાનો તિરસ્કાર કરીને, ધાર્મિક જનોને સુખ પ્રદાન કરીને તમે દિવસ-રાત સૂર્યની સમાન પ્રશંસિત બનો. (૨૬)

યે તે પન્થાઃ સવિતઃ પૂર્વ્યાસૌરેણવઃ સુકૃતાઽઅન્તરિક્ષે ।

તેભિર્નોઽઅદ્ય પૃથિભિઃ સુગેભી રક્ષા ચ નોઽઅધિ ચ બ્રૂહિ દેવ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે સવિતઃ-સૂર્યની સમાન ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરવાવાળા, દેવ-સુખ અને વિદ્યાના દાતા આપ્ત વિદ્વાન ! તે-આપના - જેમ સૂર્યનો અન્તરિક્ષે-આકાશ ગમનમાં શુદ્ધ માર્ગ છે; તેમ - એ-જે પૂર્વ્યાસઃ-પૂર્વજ આપ્તજનોથી સેવિત અરેણવઃ-ધૂળ વગેરેથી રહિત, સુકૃતાઃ-સુંદર રીતે તૈયાર કરેલ પન્થાઃ-માર્ગ છે; તેભિઃ-તે સુગેભિઃ-સુખથી ગમન કરવા યોગ્ય પૃથિભિઃ-માર્ગોથી અદ્ય-આજ નઃ-અમને ચલાવો, તે માર્ગોથી ચાલતાં અમારી રક્ષ-રક્ષા ચ-પણ કરો; ચ-તથા નઃ-અમને અધિ + બ્રૂહિ-અધિકતર ઉપદેશ કરો. આ રીતે સર્વને બોધ કરાવો. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે જેમ સૂર્યનો આકાશમાં નિર્મળ માર્ગ છે, તેમ ઉપદેશ અને અધ્યાપનથી વિદ્યા, ધર્મ અને સુશીલતા પ્રદાન કરનારા માર્ગોનો પ્રચાર કરો. (૨૭)

ઉમા પિંબતમશ્વિનોભા નઃ શર્મ યચ્છતમ્ । અવિદ્રિયાભિસ્તુતિભિઃ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! ઉમા-બન્ને તમે - જ્યાં ઉત્તમ રસનું પિંબતમ્-પાન કરો છો, તે શર્મ-ઉત્તમ આશ્રયસ્થાન વા સુખને ઉમા-બન્ને તમે - અવિદ્રિયાભિઃ-છિદ્રરહિત કૃતિભિઃ-રક્ષા આદિથી સુરક્ષિત ધરને નઃ-અમને યચ્છતમ્-પ્રદાન કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકો સદા ઉત્તમ ધરની રચના અને નિવાસનો ઉપદેશ કરીને જ્યાં પૂર્ણ રક્ષા હોય, ત્યાં સર્વને પ્રેરિત કરે. (૨૮)

અર્જસ્વતીમશ્વિના વાચમસ્મે કૃતં નો દસ્ત્રા વૃષણા મનીષામ્ ।

અદ્યૂત્યેઽવસે નિ હ્વયે વાં વૃધે ચ નો ભવતં વાજસાતૌ ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રા-દુઃખનાશક, વૃષણા-સુખની વર્ષા કરવાવાળા, અશ્વિના-સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! તમે બન્ને - અસ્મે-અમારી વાચમ્-વાણી ચ-અને મનીષામ્-બુદ્ધિને અર્જસ્વતીમ્-પ્રશસ્ત કર્મોવાળી કૃતમ્-કરો' નઃ-અમારા અદ્યૂત્યે-દ્યુત = જુગાર આદિથી રહિત કર્મમાં અવસે-રક્ષાને માટે કોઈને સ્થાપિત કરો; અને વાજસાતૌ-વાજ = ધનના વિભાજન માટેના સંગ્રામમાં નઃ-જ અમારી વૃધે-વૃદ્ધિને માટે ભવતમ્-રહો.

જે વામ્-તમારા બન્નેની હું નિ + હ્વયે-નિરંતર સ્તુતિ કરું છું; તેથી તમે બન્ને મારી ઉન્નતિ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો નિષ્કપટ, આપ્ત, દયાળુ વિદ્વાનોનું નિરંતર સેવન કરે છે, તેઓ ચતુર, વિજયી ધાર્મિક, વિદ્વાન બનીને, સર્વત્રથી ઉન્નતિ કરતાં વિજયી બનીને સર્વને સુખ આપનારા બને છે. (૨૯)

દ્યુભિરુક્તુભિઃ પરિં પાતમસ્માનરિંષ્ટેભિરશ્વિના સૌભગેભિઃ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવીઽઉત દ્યૌઃ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! જેમ અદિતિઃ-પૃથ્વી, સિન્ધુઃ-સાત પ્રકારના સમુદ્ર પૃથિવી-આકાશ ઉત-અને દ્યૌઃ-પ્રકાશ - તત્-તેઓ નઃ-અમારો મામહન્તામ્-સત્કાર કરે છે; તેમ મિત્રઃ-મિત્ર અને વસ્તુઃ-દુષ્ટોને બાંધનારા વા રોકનાર તમે બન્ને - દ્યુભિઃ-દિવસ, અક્તુભિઃ-રાત્રિ, અરિષ્ટેભિઃ-હિંસારહિત સૌભગેભિઃ-શ્રેષ્ઠ ધનોથી અસ્માન્-અમારી પરિ + પાતમ્-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે સભાધીશ આદિ વિદ્વાનો ! જેમ પૃથ્વી આદિ તત્ત્વ સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે, તેમ ઉન્નત ઐશ્વર્યોથી દિવસ-રાત સર્વ મનુષ્યોની ઉન્નતિ કરો. (૩૦)

આ કૃષ્ણેન રજસા વર્તમાનો નિવેશયન્નમૃતં મર્ત્યં ચ ।

હિરણ્યયેન સવિતા રથેના દેવો યાતિ ભુવનાન્નિ પશ્યન્ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જે આ, કૃષ્ણેન-સર્વત્ર આકર્ષણથી રજસા-લોકસમૂહની સાથે વર્તમાનઃ-રહેલા, નિરંતર અમૃતમ્-નાશરહિત = કારણ ચ-અને મર્ત્યમ્-નાશરહિત = કાર્યને નિવેશયન્-નિત્ય પ્રવિષ્ટ કરતી, હિરણ્યયેન-તેજોમય રથેન-રમણીયસ્વરૂપથી સવિતા-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારી દેવઃ-દેદીપ્યમાન વિદ્યુત્ ભુવનાન્નિ-સંસારની સર્વ વસ્તુઓને યાતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને પશ્યન્-જોતાં સમ્યક્ રીતે તેનો પ્રયોગ કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્ કાર્ય અને કારણને પ્રકાશિત કરીને સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેજોમયી, શીઘ્રગામિની, સર્વની આકર્ષક છે, તેને જોતાં, તેનો સંપ્રયોગ કરીને ઈચ્છિત સુખોને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

આ રાત્રિ પાર્થિવૃઃ રજઃ પિતુરપ્રાયિ ધામભિઃ ।

દિવઃ સદાંશ્સિ બૃહતી વિ તિષ્ઠસ્ઽઆ ત્વેષં વર્તતે તમઃ ॥ ૩૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે બૃહતી-મહાન રાત્રિ-રાત દિવઃ-પ્રકાશના સદાંશ્સિ-સ્થાનોને વિ + તિષ્ઠસે-વ્યાપ્ત કરે છે; જે પિતુઃ-મધ્યલોકમાં ધામભિઃ-સર્વ સ્થાનોથી પાર્થિવમ્-પૃથ્વી સંબંધી રજઃ-લોકને આ + અપ્રાયિ-સર્વત્રથી પૂર્ણ કરે છે; અને જેનો ત્વેષમ્-પોતાની કાંતિથી વૃદ્ધિ પામેલો તમઃ-અંધકાર આ, વર્તતે-આવાગમન કરે છે; તે રાત્રિનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથ્વી આદિની છાયા રાતે પ્રકાશને રોકે છે, સર્વને આચ્છાદિત કરે છે,

તેનું યથાયોગ્ય સેવન કરો. (૩૨)

ઉષ્સ્તચ્ચિત્રમા ભરાસ્મભ્યં વાજિનીવતિ । યેન તોકં ચ તનયં ચ ધામહે ॥ ૩૩ ॥

પદાર્થ : હે વાજિનીવતિ-વિપુલ અન્ન આદિ ઐશ્વર્યોથી યુક્ત ઉષ્ઃ-ઉષાની સમાન કાન્તિમાન વિદ્યમાન સ્ત્રી ! જેમ - ઐશ્વર્યયુક્ત ઉષા જેમ ચિત્રમ્-અદ્ભુત સ્વરૂપને ધારણ કરે છે; તત્-તે સ્વરૂપને તું અસ્મભ્યમ્-અમારે માટે આ + ભર-સારી રીતે પુષ્ટ કર; યેન-જેથી અમે તોકમ્-સદ્ગોજાત શિશુને ચ-અને તનયમ્-કુમારને ચ-પણ ધામહે-ધારણ કરીએ. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ શોભાથી યુક્ત, મંગલપ્રદ, ઉષા = પ્રભાતવેળા સર્વ વ્યવહારોને ધારણ કરનારી હોય છે, તેમ જ જો સ્ત્રીઓ હોય, તો તે સદા પોત-પોતાના પતિને પ્રસન્ન કરીને પુત્ર-પૌત્ર આદિની સાથે આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૩૩)

પ્રાતરગ્નિં પ્રાતરિન્દ્રં હવામહે પ્રાતર્મિત્રાવરુણા પ્રાતરશ્વિનાં ।

પ્રાતર્ભગં પૂષણં બ્રહ્મણસ્પતિં પ્રાતઃ સોમમુત રુદ્રં હુવેમ ॥ ૩૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે પ્રાતઃ-પ્રાતઃકાળે અગ્નિમ્-પવિત્ર વા પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા વા અગ્નિને; પ્રાતઃ-પ્રભાતમાં ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને, પ્રાતઃ-પ્રભાત સમયે, મિત્રાવરુણા-પ્રાણ અને ઉદાનને, પ્રાતઃ-પ્રભાતમાં અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકને હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ વા બોલાવીએ છીએ.

પ્રાતઃ-પ્રભાતમાં ભગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય ભાગને, પૂષણમ્-પુષ્ટિકારક ભોગને, બ્રહ્મણસ્પતિમ્-ધનના વા વેદના પતિમ્-રક્ષકને - સ્વામીને, પ્રાતઃ-પ્રભાતમાં સોમમ્-ઔષધિગણને ઉત-અને સ્ત્રમ્-જીવને પણ હુવેમ-ગ્રહણ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રાતઃ પરમેશ્વરની ઉપાસના, હવન, ઐશ્વર્યની ઉન્નતિના ઉપાયો, પ્રાણ અને અપાનની પુષ્ટિ, અધ્યાપકો, ઉપદેશકો અને વિદ્વાનોનો [સંગ] તથા ઔષધિઓનું સેવન અને જીવાત્માને જાણવા તથા પ્રાપ્ત કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ સર્વ સુખોથી સુશોભિત બની શકે છે. (૩૪)

પ્રાતર્જિતં ભગમુગ્રંહુવેમ વયં પુત્રમદિતેર્યો વિધર્તા ।

આધ્રશ્ચિદ્વં મન્યમાનસ્તુરશ્ચિદ્રાજાં ચિદ્વં ભગં ભક્ષીત્યાહ ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે પ્રાતઃ-પ્રભાતવેળામાં યઃ-જે વિધર્તા-વિવિધ પદાર્થોને ધારણ કરનાર છીએ, આધ્રઃ-ન્યાય આદિમાં તૃપ્તિ ન કરનારાના પુત્ર [આધ્રઃ-અપુત્રનો પુત્ર] છે, ચિત્-અને યમ્-જે ઐશ્વર્યને મન્યમાનઃ-વિશેષ કરીને જાણતાં, તુરઃ-શીઘ્રકારી ચિત્-અને રાજા-શોભાયુક્ત - પ્રકાશમાન રાજા છે, યમ્-જે ઉક્ત ભગમ્-ઐશ્વર્યને ચિત્-પણ ભક્ષિ-તું સેવન કર; ઇતિ-આ રીતે આહ-પરમેશ્વર ઉપદેશ આપે છે.

તે અદિતે:-અવિનાશી કારણની સમાન માતાના પુત્રમ્-પુત્ર, જિતમ્-પોતાના પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત, ઊગ્રમ્-અત્યુત્તમ ભગમ્-ઐશ્વર્યને હુવેમ-અમે ગ્રહણ કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સ્વીકાર કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે સદા પ્રાતઃકાલથી લઈને શયન સુધી યથાશક્તિ સામર્થ્યથી વિદ્યા તથા પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને આનંદ ભોગવવો જોઈએ અને દરિદ્રોને સુખ આપવું જોઈએ, તેમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૩૫)

ભગ્ પ્રણેતૃર્ભગ્ સત્યરાધો ભગેમાં ધિયમુદવા દદન્નઃ ।

ભગ્ પ્ર નો જનય્ ગોભિરશ્વૈર્ભગ્ પ્ર નૃભિર્નૃવન્તઃ સ્યામ ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : હે ભગ:-ઐશ્વર્યયુક્ત, પ્રણેત:-પુરુષાર્થના પ્રેરક ઈશ્વર, વા હે ભગ-ઐશ્વર્યના દાતા ! સત્યરાધ:-સત્ય ધનોથી યુક્ત, ભગ-ભજનીય ઈશ્વર ! આપ ન:-અમારી ઇમામ્-આ વર્તમાન ધિયમ્-બુદ્ધિને દદત્-આપતાં ઝ્, અવ-ઉત્કૃષ્ટતાથી રક્ષા કરો.

હે ભગ-વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યને પ્રદાન કરનાર ઈશ્વર વા વિદ્વાન ! આપ ગોભિ:-ગાય આદિ પશુઓ અશ્વૈ:-ઘોડા આદિ સવારીઓ અને નૃભિ:-નાયક કુળનિર્વાહક મનુષ્યોની સાથે ન:-અમને પ્ર, જનય-પ્રકટ - પ્રસિદ્ધ કરો.

હે ભગ-સેવા કરતા વિદ્વાન ! જેથી અમે નૃવન્ત:-પ્રશસ્ત મનુષ્યોયુક્ત પ્ર + સ્યામ-સારી રીતે બનીએ; તેમ કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે - જ્યારે ઈશ્વરની પ્રાર્થના અને વિદ્વાનોનો સંગ કરે, ત્યારે - ત્યારે બુદ્ધિની જ યાચના કરે, અથવા સંત પુરુષોની કામના કરે. (૩૬)

ઉતેદાનીં ભગવન્તઃ સ્યામોત પ્રપિત્વ ઝ્ત મધ્યે અહ્નામ્ ।

ઝ્તોદિતા મઘવન્ત્સૂર્યસ્ય વ્યં દેવાનાંઽ સુમતૌ સ્યામ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ ધનયુક્ત ઈશ્વર વા વિદ્વાન ! વ્યમ્-અમે ઇદાનીમ્-વર્તમાન સમયમાં ઝ્ત-અને પ્રપિત્વે-પદાર્થોની પ્રાપ્તિમાં, ઝ્ત-અને ભવિષ્યકાળમાં ઝ્ત-અને અહ્નામ્-દિવસોની મધ્યે-મધ્યમાં ભગવન્તઃ-સમગ્ર ઐશ્વર્યથી યુક્ત સ્યામ-બનીએ.

ઝ્ત-અને સૂર્યસ્ય-સૂર્યના ઝ્તોદિતા-ઉદય સમયમાં તથા દેવાનામ્-વિદ્વાનોની સુમતૌ-ઉત્તમ બુદ્ધિમાં રહેતાં ભગવન્તઃ-સમગ્ર ઐશ્વર્યથી યુક્ત જ્ઞામ-બનીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળમાં યોગના ઐશ્વર્યની ઉન્નતિથી લૌકિક વ્યવહારની વૃદ્ધિ અને પ્રશંસામાં નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૩૭)

ભગ્ઽવ ભગવાંઽસ્તુ દેવાસ્તેન વ્યં ભગવન્તઃ સ્યામ ।

તં ત્વા ભગ્ સર્વ ઇજ્ઞોહવીતિ સ નો ભગ પુરઽતા ભવેહ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! જે ભગ-ભજનીય અને સેવનીય એવ-જ ભગવાન્-પ્રશસ્ત ઐશ્વર્યથી યુક્ત અસ્તુ-છે; તેન-તે ઐશ્વર્યયુક્ત, ઐશ્વર્યવાન પરમેશ્વરની સાથે વચમ્-અમે ભગવન્ત:-સમગ્ર શોભાથી યુક્ત સ્યામ-બનીએ.

હે ભગ-સંપૂર્ણ શોભાયુક્ત ઈશ્વર ! તમ્-તે ત્વા-આપને સર્વ:-સર્વ જનતા ઇત્-જ જોહવીતિ-અત્યંત બોલાવે છે.

હે ભગ-સકલ ઐશ્વર્યના દાતા ઈશ્વર ! સ:-તેથી આપ ઇહ-આ સંસારમાં ન:-અમારા પુર,એતા-અગ્રગામી ભવ-બનો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - જે સકળ ઐશ્વર્યથી સંપન્ન પરમેશ્વર છે; અને તેની સાથે એના ઉપાસક વિદ્વાન અને તેની સાથે સિદ્ધ અને શ્રીમાન-લોકો છે.

જે જગદીશ્વર માતા-પિતા સમાન અમારા પર કૃપા કરે છે, તેની ભક્તિપૂર્વક આ સંસારમાં મનુષ્યોને નિરંતર ઐશ્વર્યવાન કરો. (૩૮)

સમઘ્વરાયોષસોં નમન્ત દધિક્રાવેવ્ શુચ્યે પદાયં ।

અર્વાચીનં વસુવિદં ભગં નો રથમિવાશ્વા વાજિન્ આ વહન્તુ ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઊષસ:-પ્રભાત સમયે દધિક્રાવેવ-સવારને ધારણ કરીને ગતિવિશેષવાળા ઘોડાઓની સમાન, શુચ્યે-પવિત્ર પદાય-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદ તથા અઘ્વરાય-હિંસારૂપ અધર્મરહિત વ્યવહારને માટે સમ્, નમન્ત-સમ્યક્ રીતિથી નમે છે; અર્થાત્ પ્રાતઃ સમયે સત્ત્વગુણની અધિકતાથી સર્વ પ્રાણીઓનાં ચિત્ત શુદ્ધ નમ્ર હોય છે; અશ્વા:-શીઘ્રગામી વાજિન:-ઘોડાઓ જેમ રથમિવ-રમણીય યાન - રથને લઈ જાય છે - તેમ ન:-અમને અર્વાચીનમ્-નવીન - આ સમયના વસુવિદમ્-વિવિધ ધનોને પ્રાપ્ત કરાવવાવાળા ભગમ્-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ એ બન્ને ઘોડાઓને આપ આ + વહન્તુ-સારી રીતે-સર્વત્ર ચલાવો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉષાની સમાન વિદ્યા અને ધર્મને પ્રકાશિત કરે છે; અશ્વ-યાનોની સમાન શીઘ્ર સમગ્ર ઐશ્વર્ય સર્વને પહોંચાડે છે, તેઓને પવિત્ર વિદ્વાન જાણવા જોઈએ. (૩૯)

અશ્વાવતીર્ગોમતીર્નઽ ઊષાસોં વીરવતીઃ સદમુચ્છન્તુ ભદ્રાઃ ।

ઘૃતં દુહાના વિશ્વતઃ પ્રપીતા યૂયં પાત સ્વસ્તિભિઃ સદાં નઃ ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રીઓ ! જેમ અશ્વાવતી:-પ્રશસ્ત અશ્વ = વ્યાપ્તિશીલ જલોવાળી, ગોમતી:-અનેક ગૌ = કિરણોવાળી, વીરવતી:-અનેક વીરોવાળી, ભદ્રા:-કલ્યાણકારી ઘૃતમ્-શુદ્ધ, પ્રદીપ્ત જળને દુહાના:-પૂરણ કરનારી વિશ્વતઃ-સર્વત્ર પ્રપીતા:-પ્રકૃર્ષતાથી વધેલી, ઊષાસ:-પ્રભાતવેળા ન:-અમારી સદમ્-સભા વા ઘરને પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ અમારા સભા નિવાસસ્થાનમાં આપ ઉચ્છન્તુ-વિશેષરૂપથી

વાસ કરો.

ન:-અમારી યૂયમ્-તમે સ્વસ્તિભિ:-સ્વાસ્થ્યદાયક સુખોથી સદા-સદા પાત-રક્ષા કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રભાતવેળા જાગનાર મનુષ્યોને સુખ આપનારી છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રીઓ - કુમારી, વિદ્યાર્થીની કન્યાઓની વિદ્યા, સુશિક્ષા અને સૌભાગ્યની ઉન્નતિ કરી તે કન્યાઓને સદા આનંદિત કરે. (૪૦)

પૂષન્તવ વ્રતે વયં ન રિષ્યેમ કદાં ચન। સ્તોતારસ્ત ઙ્હ સ્મસિ ॥ ૪૧ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-પુષ્ટિકારક પરમેશ્વર વા આપ્ત વિદ્વાન ! વયમ્-અમે તવ-આપના વ્રતે-સ્વભાવ વા નિયમમાં એટલા માટે રહીએ કે જેથી ન + કદાચન + રિષ્યેમ-કદી પણ ચિત્ત ન બગાડીએ.

ઙ્હ-આ જગતમાં તે-આપની સ્તોતાર:-સ્તુતિ કરનારા અમે સુખી સ્મસિ-રહીએ. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વર વા આપ્ત વિદ્વાનના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને અનુકૂળ આચરણ કરે છે, તેઓ કદી પણ નષ્ટ સુખવાળા થતા નથી. (૪૧)

પથસ્પથઃ પરિપતિં વચસ્યા કામેન કૃતો અભ્યાનકર્કમ્।

સ નોં રાસચ્છુરુધ્શ્ચન્દ્રાગ્રા ધિયં ધિયઃ સીષધાતિ પ્ર પૂષા ॥ ૪૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વચસ્યા-વચન અને કામેન-ઈચ્છાથી કૃત:-સિદ્ધ પૂષા-પુષ્ટિકર્તા જગદીશ્વર વા આપ્તજન - શુસ્થ:-શીઘ્ર દુઃખોને રોકનાર, ચન્દ્રાગ્રા:-પ્રથમ જ આનંદકારી સાધનોને ન:-અમારે માટે રાસત્-આપે છે; ધિયં ધિયમ્-પ્રત્યેક બુદ્ધિ વા કર્મને પ્ર + સીષધાતિ-ઉત્તમતાથી સિદ્ધ કરે છે; સ:- તે શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોને અભિ, આનટ્-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે; તે અર્કમ્-પૂજનીય પથસ્પથઃ-પ્રત્યેક માર્ગના પરિ + પતિમ્-સ્વામીની અમે સ્તુતિ કરીએ. (૪૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વર સર્વના સુખને માટે વેદના પ્રકાશ માટેની કામના કરે છે, આપ્ત મનુષ્ય ભણાવવા ઈચ્છે છે અને જે [એ બન્ને] સર્વને શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને શુભકર્મની શિક્ષા આપે છે, તે બન્ને સર્વ સન્માર્ગોના સ્વામી સદા સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૨)

ત્રીણિં પદા વિચક્રમે વિષ્ણુર્ગોપા અદાંભ્યઃ। અતો ધર્માણિ ધારયન્ ॥ ૪૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અદાંભ્યઃ-અહિંસાધર્મવાળા હોવાથી દયાળુ, ગોપા:-રક્ષક, વિષ્ણુ:-ચરાચર જગતમાં વ્યાપ્ત પરમેશ્વર - ધર્માણિ-પુણ્યરૂપ કર્મોના ધારક પૃથ્વી આદિને ધારયન્-ધારણ કરતાં અત:- એ કારણથી ત્રીણિ-ત્રણ પદા-જાણવા વા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય કારણ, સૂક્ષ્મ અને સ્થૂલ જગત વિચક્રમે-વિશેષ રૂપથી રચે છે; તે અમારા પૂજનીય છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે ભૂમિ, આકાશ અને સૂર્યરૂપથી ત્રણ પ્રકારનું જગત રચેલ

છે, સર્વનું ધારણ અને રક્ષણ કરે છે, તે જ ઉપાસના કરવા યોગ્ય ઇષ્ટદેવ છે. (૪૩)

તદ્વિપ્રાસો વિપન્યવો જાગૃવાંસઃ સમિન્ધતે । વિષ્ણોર્યત્પરમં પદમ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જાગૃવાંસઃ-અવિદ્યારૂપ નિદ્રાથી ઊઠીને જાગરૂક થયેલા, વિપન્યવઃ-વિશેષ સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અથવા ઈશ્વરની સ્તુતિ કરવાવાળા, વિપ્રાસઃ-બુદ્ધિમાન યોગીજન - વિષ્ણોઃ-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માનું ચત્-જે પરમમ્-ઉત્તમ પદમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષદાયક સ્વરૂપ છે - તત્-તેને સમ્, ઇન્ધતે-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે છે; તેના સત્સંગથી તમે પણ એવા બનો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે યોગાભ્યાસ આદિ સત્કર્મો કરીને, શુદ્ધ અન્તઃકરણ તથા આત્માવાળા, ધાર્મિક, પુરુષાર્થી લોકો છે, તે જ વ્યાપક પરમેશ્વરનાં સ્વરૂપને જાણી શકે છે; અને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, અન્ય નહિ. (૪૪)

ઘૃતવતી ભુવનાનામભિશ્રિયોર્વી પૃથ્વી મધુદુઘે સુપેશાસા ।

દ્યાવાપૃથિવી વરુણસ્ય ધર્મણા વિષ્કભિતે અજરે ભૂરિરેતસા ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વસ્તુસ્ય-સર્વશ્રેષ્ઠ જગદીશ્વરના ધર્મણા-ધારણરૂપ સામર્થ્યથી મધુદુઘે-મધુ = જળને પૂર્ણ કરનારા, સુપેશાસા-સુંદર પેશ = રૂપયુક્ત, પૃથ્વી-વિસ્તીર્ણા ઝર્વી-વિપુલ પદાર્થોથી યુક્ત, ઘૃતવતી-વિપુલ ઘૃત જલયુક્ત અજરે-પોતાનાં સ્વરૂપથી નાશરહિત ભૂરિરેતસા-ભૂરિ = વિપુલ રેત = જળથી યુક્ત અથવા ભૂરિ = વિપુલ રેત = વીર્ય વા પરાક્રમને હેતુ ભુવનાનામ્-લોક-લોકાન્તરનાં અભિશ્રિયા-સર્વત્રથી શ્રી = શોભા અને લક્ષ્મીને માટે દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિ વિષ્કભિતે-વિશેષ રૂપથી ધારણ વા દૃઢ કરેલ છે, તેને તમે ઉપાસનાને યોગ્ય જાણો. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વર પ્રકાશરૂપ અને અપ્રકાશરૂપ બે પ્રકારના જગતને બનાવીને, ધારણ કરીને, પાલન કરે છે, તે જ મનુષ્યો માટે સર્વદા ઉપાસનીય છે. (૪૫)

યે નઃ સપ્તા અપ તે ભવન્ત્વિન્દ્રાગ્નિભ્યામવ બાધામહે તાન્ ।

વસવો રુદ્રા આદિત્યા ઉપરિસ્પૃશં મોગ્રં ચેત્તારમધિરાજમક્રન્ ॥ ૪૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યે-જે નઃ-અમારા સપ્તાઃ-શત્રુજન હોય તે-તેઓ અપ + ભવન્તુ-દૂર રહે અર્થાત્ પરાજય પામે. જેમ તાન્-તે શત્રુઓને અમે ઇન્દ્રાગ્નિભ્યામ્-વાયુ અને વિદ્યુતનાં અસ્ત્રોથી અવ + બાધામહે-પીડિત કરીએ; અને જેમ વસવઃ-પૃથ્વી આદિ વસુ સ્ત્રાઃ-દશ પ્રાણ અને અગિયારમો આત્મા અને આદિત્યાઃ-બાર મહિના ઉપરિસ્પૃશમ્-ઉચ્ચ સ્થાન પર બેસવા, ઊગ્રમ્-તેજસ્વભાવ, અને ચેત્તારમ્-સત્યાસત્યને યથાવત્ જાણવાવાળા મા-મને અધિરાજમ્-અધિપતિ, સ્વામી સમર્થ અક્રન્-બનાવે છે; તેમ તે ઉક્ત શત્રુઓનું તમે નિવારણ કરો અને મારો સત્કાર કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેના અધિકારમાં પૃથ્વી આદિ પદાર્થો હોય તે જ સર્વોપરિ રાજા બની શકે છે. જે રાજા હોય તે શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી શત્રુઓનું નિવારણ કરીને રાજ્યને નિષ્કંટક કરે. (૪૬)

આ નાસત્યા ત્રિભિરેકાદૃશૈરિહ દેવેભિર્યાતં મધુપેયમશ્વિના ।

પ્રાયુસ્તારિષ્ટં ની રપાશ્સિ મૃક્ષત્ સેધતં દ્વેષો ભવત્ સચાભુવા ॥ ૪૭ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અસત્ય આચરણથી રહિત, અશ્વિના-રાજા અને પ્રજાજન ! જેમ તમે બન્ને - ઇહ-આ જગતમાં ત્રિભિઃ-एकादशैः-તેત્રીસ દેવેભિઃ-ઉત્તમ પૃથ્વી આદિ [આઠ વસુ, પ્રાણાદિ અગિયાર રુદ્ર, બાર મહિના, વિદ્યુત્ અને યજ્ઞ] તેત્રીસ દેવતાઓની સાથે મધુપેયમ્-મધુર ગુણોથી યુક્ત પીવા યોગ્ય ઔષધિઓના રસને આ + યાતમ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો છો; રપાસિ-પાપોને મૃક્ષતમ્-શુદ્ધ કરો છો; દ્વેષઃ-દ્વેષ આદિ દોષયુક્ત પ્રાણીઓનો નિઃ + સેધતમ્-નિષેધ કરો છો; સચાભુવા-સત્ય પુરુષાર્થની સાથે કાર્યોમાં સંયુક્ત ભવતમ્-બનો છો; આયુઃ-જીવનને પ્ર + તારિષ્ટમ્-અત્યંત ઉન્નત કરો છો; તેમ અમે પણ કરીએ. (૪૭)

ભાવાર્થ : તે લોકો જ જગતના હિતેષી છે, જે પૃથ્વી આદિ સૃષ્ટિની વિદ્યાને જાણીને, અન્યોને ગ્રહણ કરાવે છે, દોષોને દૂર કરે છે અને ચિર આયુના વિધાનનો પ્રચાર કરે છે. (૪૭)

एष व स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।

एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ४८ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-મરણધર્મા મનુષ્યો ! માન્દાર્યસ્ય-પ્રશસ્ત કર્મોના સેવક ઉદાર ચિત્તવાળા માન્યસ્ય-સત્કારને યોગ્ય કારોઃ-શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા કારીગરની ઇષઃ-એ સ્તોમઃ-પ્રશંસા અને ઇયમ્-આ ગીઃ-વાણી વઃ-તમારે માટે ઉપયોગી બને.

તમે ઇષા-ઈચ્છા વા અન્નના નિમિત્તથી વયામ્-વય = અવસ્થાવાળા અથવા પ્રાણીઓની તન્વે-શરીર આદિની રક્ષાને માટે આ + યાસીષ્ટ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયા કરો; અને અમે જીરદાનુમ્-જીવનને માટે ઇષમ્-વિજ્ઞાન વા અન્ન તથા વૃજનમ્-દુઃખોને દૂર કરનાર બળને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા પ્રશંસનીય કર્મોનું સેવન કરીને, શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતાઓનો સત્કાર કરીને, જીવન, બળ તથા ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૪૮)

सहस्तोमाः सहछन्दसऽआवृतः सहप्रमाऽऋषयः सप्त दैव्याः ।

पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीरां अन्वालेभिरे रथ्यो न रश्मीन् ॥ ४९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સહસ્તોમાઃ-પ્રશંસાઓની સાથે વર્તમાન વા શાસ્ત્રોની સ્તુતિ કરવાવાળા, સહછન્દસઃ-છંદ = વેદાદિનું અધ્યયન વા સુખભોગવાળા, આવૃતઃ-બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યા ભાણીને ગુરુકૂળથી ઘરે આવેલ, સહપ્રમાઃ-યથાર્થ પ્રજ્ઞાનવાળા સપ્ત-સાત અર્થાત્ પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિય, અંતઃકરણ અને

આત્મા એ સાત, દૈવ્યાઃ-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વાભાવોમાં પ્રવીણ ધીરાઃ-ધ્યાનયોગી, ઋણ્યઃ-વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા - રથ્યઃ-રથ ચલાવવામાં કુશળ સારથિ રશ્મીન્-લગામની દોરીને ન-જેમ પકડે છે-તેમ પૂર્વેષામ્-પૂર્વજ વિદ્વાનોના પન્થામ્-માર્ગોને અનુદ્રશ્ય-અનુકૂળતાથી જોઈને અન્વાલેભિરે-પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ બનીને તમે પણ આપ્તજનોના માર્ગને પ્રાપ્ત કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે રાગ-દ્વેષ આદિ દોષોનો દૂરથી ત્યાગ કરીને, પરસ્પર પ્રીતિમાન બનીને, બ્રહ્મચર્યથી ધર્માચરણપૂર્વક સર્વ વેદોને જાણીને, સત્ય તથા અસત્યનું વિવેચન કરીને, સત્ય ગ્રહણ કરીને તથા અસત્યનો ત્યાગ કરીને, આત્મભાવથી પ્રવૃત્ત રહે છે, તેઓ સુશિક્ષિત સારથિની સમાન અભીષ્ટ ધર્મયુક્ત માર્ગ પર ચાલી શકે છે, તેઓ જ ઋષિ નામને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૯)

આયુષ્યં વર્ચ્સ્યઃ રાયસ્પોષમૌદ્ભિદમ્ ।

દ્વદ્ઃ હિરણ્યં વર્ચ્વં સ્વજૈત્રાયાવિશતાદુ મામ્ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઔદ્ભિદમ્-દુઃખોના નાશક, આયુષ્યમ્-જીવન માટે હિતકારી, વર્ચ્સ્યમ્-વર્ય = અધ્યયનને માટે હિતકારી, રાયઃ-ધનના પોષમ્-પોષક, વર્ચ્સ્વત્-પ્રશસ્ત અન્ન = ભોજન આદિના માટે હિરણ્યમ્-તેજઃ સ્વરૂપ સુવર્ણ આદિ ઐશ્વર્ય છે; તે જૈત્રાય-વિજયને માટે મામ્-મને આ, વિશતાત્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય અર્થાત્ મારી નજીક સ્થિર રહે; અને ડ-તે તમને પણ પ્રાપ્ત થાય-તમારી નજીક સ્થિર રહે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાના આત્મા સમાન સર્વને જાણે છે, વિદ્વાનોની સાથે પરામર્શ કરીને સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય કરે છે, તેઓ દીર્ઘાયુ, પૂર્ણ વિદ્યાઓ, સમસ્ત ઐશ્વર્ય અને વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૦)

ન તદ્રક્ષાંશ્સિ ન પિશાચાસ્તરન્તિ દેવાનામોજઃ પ્રથમજઃ હ્યેતત્ ।

યો વિભર્તિ દાક્ષાયણઃ હિરણ્યઃ સ દેવેષુ કૃણુતે દીર્ઘમાયુઃ સ મનુષ્યેષુ કૃણુતે દીર્ઘમાયુઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવાનામ્-વિદ્વાનોના પ્રથમજમ્-પ્રથમાવસ્થા વા બ્રહ્મચર્યાશ્રમમાં ઉત્પન્ન ઓજઃ-બળ, પરાક્રમ છે; તત્-તેને ન, રક્ષાંસિ-ન અન્યોને પીડિત કરીને પોતાની જ રક્ષા કરનારા તથા ન, પિશાચાઃ-ન પ્રાણીઓના રક્ત આદિનું આચમન = ભક્ષણ કરનારા હિંસક, સ્વેચ્છાચારી દુષ્ટજન તરન્તિ-ઉલ્લંઘન કરે છે.

યઃ-જે હિ-નિશ્ચય જ એતત્-તે દાક્ષાયણમ્-દક્ષ = ચતુરજનને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય હિરણ્યમ્-તેજઃ સ્વરૂપ બ્રહ્મચર્યને વિભર્તિ-ધારણ વા પોષણ કરે છે; સઃ-તે દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં દીર્ઘમ્-અધિક આયુઃ-આયુને કૃણુતે-પ્રાપ્ત કરે છે; અને સઃ-તે મનુષ્યેષુ-મનનશીલ મનુષ્યોમાં દીર્ઘમ્-લાંબી આયુઃ-આયુને અને કૃણુતે-પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રથમ આયુમાં દીર્ઘ ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યપૂર્વક પૂર્ણ વિદ્યા ભણે છે, તેની કોઈ ચોર ચોરી કરી શકતો નથી, કોઈ ભાઈ ભાગ માંગી શકતો નથી અને તેને વિદ્યાનો કોઈ ભાર લાગતો નથી, જે વિદ્યાનો એ રીતે ધર્મયુક્ત વ્યવહાર કરે છે, તે વિદ્યાનો અને મનુષ્યોમાં દીર્ઘાયુને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર આનંદમાં રહે છે તથા અન્યોને આનંદિત કરે છે. (૫૧)

યદાબંધનન્દાક્ષાયણા હિરણ્યઃ શ્તાનીકાય સુમનસ્યમાનાઃ ।

તન્મ આ બંધ્નામિ શ્તશારદાયાર્યુષ્માઙ્ગરદષ્ટિર્યથાસમ્ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : જે દાક્ષાયણા:-ચતુરાઈ અને વિજ્ઞાનથી યુક્ત, સુમનસ્યમાના:-સુંદર વિચાર કરનારા સજ્જનો - શ્તાનીકાય-સેંકડો સેનાઓવાળા, મે-મારા માટે યત્-જે હિરણ્યમ્-સત્ય - અસત્યનો પ્રકાશ કરનાર વિજ્ઞાનને આ, અબંધન-બાંધે છે, તત્-તે વિજ્ઞાનને હું શ્તશારદાય-સો વર્ષ જીવવા માટે આ + બંધ્નામિ-બાંધું છું.

હે વિદ્યાનો ! યથા-જેમ હું યુષ્માન્-તમને પ્રાપ્ત કરીને જરદષ્ટિ:-પૂર્ણ આયુને પ્રાપ્ત કરનાર અસમ્-બનું; તેમ તમે લોકો મારા માટે ઉપદેશ કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : એક બાજુ સેંકડો સેનાઓ અને બીજી બાજુ માત્ર એકલી વિદ્યા [હોય તો પણ] વિજય પ્રાપ્ત કરાવનારી બને છે.

જે દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યાનોથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરીને તે અનુસાર વ્યવહાર કરે છે, તેઓ અલ્પ આયુ કદીપણ બનતા નથી. (૫૨)

ઉત નોઽહિર્બુધ્ન્યઃ શૃણોત્વજ એકપાત્પૃથિવી સમુદ્રઃ ।

વિશ્વે દેવા ઋતાવૃધો હુવાનાઃ સ્તુતા મન્ત્રાઃ કવિશ્તા અવન્તુ ॥ ૫૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! બુધ્ન્યઃ-અન્તરિક્ષમાં રહેનાર અહિઃ-મેઘની સમાન પૃથિવી-પૃથિવી તથા સમુદ્રઃ-અન્તરિક્ષની સમાન એકપાત્-એક પ્રકારના પાદ = બોધ અર્થાત્ નિશ્ચલ અવ્યભિચારી બોધવાળા અજઃ-અજન્મા પરમેશ્વર નઃ- અમારા વચનોને શૃણોતુ-સાંભળો.

ઋતાવૃધઃ-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા, હુવાનાઃ-સ્પર્ધા કરનારા, વિશ્વે-સર્વ દેવાઃ-વિદ્યાનો ઉત-અને કવિશ્તાઃ-બુદ્ધિમાનોથી પ્રશંસિત સ્તુતાઃ-સ્તુતિના પ્રકાશક મન્ત્રાઃ-વિચારના સાધક મંત્ર નઃ-અમારી અવન્તુ-રક્ષા કરે. (૫૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો, મેઘ અને પરમેશ્વર સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ જ વિદ્યા અને વિદ્યાન સર્વનું પાલન કરે છે. (૫૩)

ઙ્મા ગિરં આદિત્યેભ્યો ઘૃતસ્નૂઃ સનાદ્રાજંભ્યો જુહુવા જુહોમિ ।

શૃણોતુ મિત્રો અર્યમા ભગો નસ્તુવિજાતો વરુણો દક્ષો અંશઃ ॥ ૫૪ ॥

પદાર્થ : હું આદિત્યેભ્યઃ-તેજસ્વી રાજન્યઃ-રાજાઓને માટે જે ઇમાઃ-એ સત્ય ગિરઃ-વાણીઓને જુહ્વા-ગ્રહણ કરવાનાં સાધનથી સનાત્-નિત્ય જુહોમિ-ગ્રહણ - સ્વીકાર કરું છું. તે ઘૃતસૂઃ-ઘૃત = જળની સમાન પ્રકાશિત વ્યવહારને શુદ્ધ કરનારી નઃ-અમારી ગિરઃ-વાણીઓને મિત્રઃ-મિત્ર અર્ચમા-ન્યાયકારી, ભગઃ-ઐશ્વર્યવાન, તુવિજાતઃ-અનેક જનોમાં પ્રસિદ્ધ, દક્ષઃ-ચતુર અંશઃ-વિભાગ કરનાર અને વસ્ત્રાઃ-શ્રેષ્ઠ પુરુષો શ્રૃણોતુ-સાંભળે. (૫૪)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓ દ્વારા આચાર્યોથી જે સુશિક્ષિત વાણીઓ [વિદ્યાઓ] ગ્રહણ કરેલ છે, તેની અન્ય આપ્ત વિદ્યાન ઉત્તમ રીતે સાંભળીને, પરીક્ષા કરીને [તે વિષયમાં] શિક્ષા કરે-શીખવે. (૫૪)

સપ્ત ઋષયઃ પ્રતિહિતાઃ શરીરે સપ્ત રક્ષન્તિ સદમપ્રમાદમ્ ।

સપ્તાપ્ઃ સ્વપતો લોકમીયુસ્તત્ર જાગૃતો અસ્વપ્નજૌ સત્રસદૌ ચ દેવૌ ॥ ૫૫ ॥

પદાર્થ : જે સપ્ત-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયો, મન અને બુદ્ધિ એ સાત ઋષયઃ-વિષયને પ્રાપ્ત કરાવનારાઓ, શરીરે-શરીરમાં પ્રતિહિતાઃ-પ્રતીતિપૂર્વક રાખેલ છે; તે જ સપ્ત-સાત અપ્રમાદમ્-પ્રમાદરહિત બનીને સદમ્-રહેવાના આધાર શરીરની રક્ષન્તિ-રક્ષા કરે છે.

તેઓ સ્વપતઃ-સૂતેલા મનુષ્યના આપઃ-શરીરમાં વ્યાપ્ત થનાર ઉક્ત સપ્ત-સાત લોકમ્-જીવાત્માને ઈયુઃ-પ્રાપ્ત કરે છે.

તત્ર-તે લોક પ્રાપ્તિ સમયે = સ્વપ્નાવસ્થામાં અસ્વપ્નજૌ-સ્વપ્નથી રહિત અને સત્રસદૌ-જીવાત્માના રક્ષક શરીરમાં રહેનારા ચ-અને દેવૌ-દિવ્ય સ્વરૂપવાળા પ્રાણ અને અપાન જાગૃતઃ-જાગે છે. (૫૫)

ભાવાર્થ : આ શરીરમાં સ્થિર, વ્યાપક અને વિષયનો બોધ કરાવનારી અન્તઃકરણ સહિત જ્ઞાનેન્દ્રિયો જ નિરંતર શરીરની રક્ષા કરે છે.

જ્યારે જીવ સૂઈ જાય છે, ત્યારે તેનો આશ્રય કરીને તમોગુણના પ્રભાવથી તે જ્ઞાનેન્દ્રિયો અન્તર્મુખ રહે છે અર્થાત્ બાહ્ય વિષયનું જ્ઞાન કરાવતી નથી.

શયન અવસ્થા - સ્વપ્નાવસ્થામાં જીવાત્માની રક્ષામાં તત્પર અને તમોગુણથી અપ્રભાવિત રહેલા પ્રાણ અને અપાન જાગતા રહે છે. અન્યથા જો એ બન્નેનું પણ શયન થઈ જાય, ત્યારે તો મરણ જ સંભવ છે. (૫૫)

ઉત્તિષ્ઠ બ્રહ્મણસ્પતે દેવ્યન્તસ્ત્વેમહે ।

ઉપ્ પ્ર યન્તુ મરુતઃ સુદાનવઃ ઇન્દ્ર પ્રાશૂર્ભવા સર્વા ॥ ૫૬ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણઃ-ધનના પતે-રક્ષક કે પાલક ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્યકારક વિદ્વાન ! દેવ્યન્તઃ-દિવ્ય વિદ્વાનોની કામના કરનારા અમે ત્વા-આપથી ઈમહે-વિદ્યાની યાચના કરીએ છીએ; ત્વા-આપને સુદાનવઃ-ઉત્તમ દાન આપનારા મસ્તઃ-મનુષ્ય ઉપ + પ્ર + યન્તુ-સમીપથી પ્રયત્નની સાથે પ્રાપ્ત થાય છે; તે આપ ઝ્તુ, તિષ્ઠ-ઊઠો અને સર્વા-સત્યના સંબંધથી પ્રાશૂઃ-ઉત્તમ પદાર્થોને ભોગનાર ભવ-બનો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે વિદ્યાની કામના કરનારા આપની સમીપ આવે છે, તેને વિદ્યા પ્રદાન કરવા આપ ઊઠો, ઉદ્યત બનો. (૫૬)

પ્ર નૂનં બ્રહ્મણસ્પતિર્મન્ત્રં વદત્યુક્થ્યમ્ ।

યસ્મિન્નિન્દ્રો વરુણો મિત્રો અર્યમા દેવા ઓકાંશસિ ચક્રિરે ॥ ૫૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્મિન્-જે પરમાત્મામાં ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ વા સૂર્ય, વસ્ત્રા:-જળ વા ચંદ્રમા, મિત્ર:-પ્રાણ તથા અન્ય અપાનાદિ વાયુ, અર્યમા-સૂત્રાત્મક વાયુ તથા દેવા:-એ સર્વ દિવ્ય ગુણોએ ઓકાંસિ-પોત-પોતાના નિવાસ = ઘર ચક્રિરે-બનાવ્યા છે; તે બ્રહ્મણ:-વેદવિદ્યાના પતિ:-રક્ષક જગદીશ્વર ઉક્થ્યમ્-પ્રશંસનીય પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠ મન્ત્રમ્-મન્ત્રરૂપ વેદનો નૂનમ્-નિશ્ચિત રૂપથી પ્ર + વદતિ-ઉપદેશ કરે છે; એમ જાણો. (૫૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમાત્મામાં સંસારના સમસ્ત કારણ [પ્રકૃતિ], કાર્યજગત અને જીવ નિવાસ કરે છે; અને જેણે સર્વ જીવોને હિતકારક વેદોનો ઉપદેશ કરેલ છે; તેનું તમે ભજન કરો; ઉપાસના કરો. (૫૭)

બ્રહ્મણસ્પતે ત્વમ્સ્ય યન્તા સૂક્તસ્યં બોધિ તનયં ચ જિન્વ ।

વિશ્વન્તદ્દ્રં યદર્વન્તિ દેવા બૃહદ્વદેમ વિદથે સુવીરાઃ ॥

ય ઇમા વિશ્વા । વિશ્વકર્મા । યો નઃ પિતા ।

અન્નપતેન્નસ્ય નો દેહિ ॥ ૫૮ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણ:-બ્રહ્માંડના પતે-રક્ષક ઈશ્વર ! દેવા:-વિદ્વાન લોકો વિદથે-પ્રકટ કરવા યોગ્ય વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારમાં યત્-જેની અવન્તિ-રક્ષા કરે છે, જેનો ઉપદેશ કરે છે; યત્-જેને સુવીરા:-સુંદર-ઉત્તમ વીર પુરુષ અમે લોકો બૃહત્-મહાન શ્રેષ્ઠ વદેમ-ઉપદેશ કરીએ છીએ; તે અસ્ય-એ સૂક્તસ્ય-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારના ત્વમ્-આપ યન્તા-નિયંતા બનો, ચ-અને અમારા તનયમ્-વિદ્વાનોને શુદ્ધ વિચાર કરનારા પુત્રવત્ પ્રિય પુરુષને અર્થાત્ વિદ્યા-પુત્રને બોધિ-ઉક્ત વ્યવહારનો બોધ કરાવો; તત્-તે ભદ્રમ્-કલ્યાણકારી વ્યવહારના પ્રતિ વિશ્વમ્-સર્વને - જીવમાત્રને જિન્વ-પ્રીતિયુક્ત કરો-તૃપ્ત કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ અમારી વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારના નિયંતા બનો, અમારા સંતાનોને વિદ્યાવાન બનાવો, સર્વ જગતની યથાવત્ રક્ષા કરો, સર્વત્ર ન્યાય, ધર્મ, સુશિક્ષા અને પરસ્પર પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરો. (૫૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં મનનું લક્ષણ (૧-૬), શિક્ષણ (૮), વિદ્યાની ઈચ્છા (૯), વિદ્વાનોનો સંગ (૯), કન્યાઓને પ્રબોધ (૧૦), વિદ્વાનોનું લક્ષણ (૧૨), રક્ષાની પ્રાર્થના (૧૩), બળ અને ઐશ્વર્યની ઈચ્છા (૧૪), સોમ ઔષધિનું લક્ષણ (૨૨), શુભ કર્મની ઈચ્છા (૨૩), પરમેશ્વર

અને સૂર્યનું વર્ણન (૨૪-૨૭), પોતાની રક્ષા (૨૮), પ્રાતઃકાલ ઊઠવું (૩૪-૩૮), પુરુષાર્થથી રિદ્ધિ-સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ (૩૯), ઈશ્વર દ્વારા જગતની રચના (૪૩), મહારાજાઓનું વર્ણન (૪૬), અશ્વિનોના ગુણોનું કથન (૪૭), આયુર્વૃદ્ધિ (૫૦), વિદ્વાન અને પ્રાણનું લક્ષણ (૫૫) અને ઈશ્વરનાં કાર્ય (૫૭) નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ચતુર્વિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથ પञ્ચત્રિંશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

અપેતો યન્તુ પ્ણયોઽસુમ્ના દેવપીયવઃ । અસ્ય લોકઃ સુતાવતઃ ।

દ્યુભિરહોંભિરક્તુભિર્વ્યક્તં યમો દદાત્વવસાનમસ્મૈ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે દેવપીયવઃ-વિદ્વાનોના દ્વેષી, પ્ણયઃ-વ્યવહારી લોકો અસુમ્ના-અન્યોને અસુખ = દુઃખ આપે છે, તેઓ ઇતઃ-અહીંથી અપ, યન્તુ-દૂર જાય.

લોકઃ-દર્શનને યોગ્ય યમઃ-સર્વના નિયંતા પરમાત્મા દ્યુભિઃ-પ્રકાશમાન અહોભિઃ-દિવસ અને અક્તુભિઃ-રાત્રિઓથી અસ્ય-એ સુતાવતઃ-વેદ વા વિદ્વાનોથી પ્રેરિત પ્રશસ્ત કર્મોવાળા જનોના સંબંધી અસ્મૈ-એ મનુષ્ય-જીવને માટે વ્યક્તમ્-પ્રસિદ્ધ અવસાનમ્-અવકાશને દદાતુ-પ્રદાન કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો આપ્ત વિદ્વાનોનો દ્વેષ કરે છે, તેઓ શીઘ્ર દુઃખ પ્રાપ્ત કરે છે. જે જીવ શરીર છોડીને જાય છે, તેને યથાયોગ્ય અવકાશ આપીને પરમેશ્વર તેના કર્માનુસાર સુખ-દુઃખ પ્રદાન કરે છે. (૧)

સવિતા તે શરીરેભ્યઃ પૃથિવ્યાં લોકમિચ્છતુ । તસ્મૈ યુજ્યન્તામુસ્ત્રિયાઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે જીવ ! સવિતા-પરમાત્મા જે તે-તારા શરીરેભ્યઃ-શરીરોને માટે પૃથિવ્યામ્-અન્તરિક્ષ વા ભૂમિ પર લોકમ્-કર્માનુસાર સુખ-દુઃખના સાધન પ્રાપ્ત લોકાન્તરની ઇચ્છતુ-ઈચ્છા કરે છે; તસ્મૈ-તે તારા માટે ઝસ્ત્રિયાઃ-પ્રકાશરૂપ કિરણો યુજ્યન્તામ્-યુક્ત હોય, ઉપયોગી હોય. (૨)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! જે જગદીશ્વર તમારા માટે સુખ ઈચ્છે છે અને કિરણો દ્વારા લોક-લોકાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેને જ તમે ન્યાયકારી માનો. (૨)

વાયુઃ પુનાતુ સવિતા પુનાત્વગ્નેર્ભ્રાજસા સૂર્યસ્ય વર્ચસા ।

વિ મુચ્યન્તામુસ્ત્રિયાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વાયુઃ-પવન અગ્નેઃ-વિદ્યુત્ની ભ્રાજસા-દીપ્તિથી સૂર્યસ્ય-સૂર્યનાં વર્ચસા-તેજથી અમને પુનાતુ-પવિત્ર કરો; સવિતા-સૂર્ય પુનાતુ-પવિત્ર કરો; ઝસ્ત્રિયાઃ-કિરણો વિ, મુચ્યન્તામ્-મુક્ત કરો - છોડો. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે જીવ શરીરોને છોડીને વિદ્યુત, સૂર્યનો પ્રકાશ અને વાયુ આદિને પ્રાપ્ત કરીને વિચરણ કરે છે તથા ગર્ભમાં પ્રવિષ્ટ થાય છે, ત્યારે કિરણો તેનો ત્યાગ કરે છે - છોડી દે છે. (૩)

અશ્વત્થે વોં નિષદનં પર્ણે વોં વસતિષ્કૃતા ।

ગોભાજઽ ઇત્કિલાસથ્થ યત્સનવથ્થ પૂરુષમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જીવો ! જે જગદીશ્વરે - અશ્વત્થે-કાલ રહેશે અથવા નહીં એવા અનિત્ય સંસારમાં વઃ-તમારી નિષદનમ્-સ્થિતિની પર્ણે-પાંદડા જેવા ચંચળ જીવનમાં વઃ-તમારો વસતિ:-નિવાસ કૃતા-બનાવ્યો છે; યત્-જે પૂસ્ત્રમ્-સર્વત્ર પરિપૂર્ણ પરમાત્માની કિલ-નિશ્ચયથી સનવથ-સેવા કરો; ઉપાસના કરો. તેની સાથે ગોભાજ:-ગૌ = પૃથિવી, વાણી, ઈન્દ્રિયો અથવા કિરણોનું સેવન કરવાવાળા બનીને ઇત્-જ તમે પ્રયત્નપૂર્વક ધર્મમાં સ્થિર અસથ-રહો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનિત્ય સંસારમાં અનિત્ય શરીરો અને પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, ક્ષણભંગુર જીવનમાં ધર્માચરણપૂર્વક નિત્ય પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, આત્મા અને પરમાત્મા [ના સંયોગથી] ઉત્પન્ન નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૪)

સવિતા તે શરીરાણિ માતુરુપસ્થઆ વપતુ । તસ્મૈ પૃથિવિ શં ભવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પૃથિવી-ભૂમિ સમાન સહનશીલ કન્યા ! તું જે તે-તારા શરીરાણિ-આશ્રય-શરીરોને માતુ:-માતાની સમાન માનનીય પૃથિવીની ઉપસ્થે-સમીપમાં તે સવિતા-ઉત્પત્તિકર્તા પિતા - આ + વપતુ-સ્થાપિત કરે છે; તે તું તસ્મૈ-તે માતા-પિતાને માટે શમ્-સુખકારિણી ભવ-બન. (૫)

ભાવાર્થ : હે કન્યાઓ ! તમે વિવાહ પછી પિતા અને માતાની સાથેની પ્રીતિ ન છોડો, કારણ કે તે બન્નેએ તમારા શરીરનું નિર્માણ અને પાલન કરેલ છે. (૫)

પ્રજાપતૌ ત્વા દેવતાયામુપોદકે લોકે નિ દધામ્યસૌ । અપ ન્ઃ શોશુચદ્ધમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે જીવ ! જે અસૌ-આ લોક [તે જગદીશ્વર]ન:-અમારાં અઘમ્-પાપને અપ + શોશુચત્-અત્યંત - શીઘ્ર શોષિત કરે છે; તે પ્રજાપતૌ-પ્રજાના પાલક - રક્ષક દેવતાયામ્-પૂજનીય પરમેશ્વરમાં તથા ઉપોદકે-જલના સમીપવર્તી લોકે-દર્શનીય સ્થાનમાં ત્વા-આપને નિ + દધામિ-નિરંતર ધારણ - સ્થાપિત કરું છું. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વર ઉપાસના કરવાથી પાપાચરણથી પૃથક્ કરે છે; તેની જ ભક્તિ કરવા માટે હું તમને સ્થિર કરું છું, જેથી તમે સદા શ્રેષ્ઠ સુખોનું દર્શન કરી શકો. (૬)

પરં મૃત્યો ઽ અનુ પરેહિ પન્થાં યસ્તેઽઅન્યઽઙ્ગતરો દેવયાનાત્ ।

ચક્ષુષ્મતે શૃણ્વતે તેં બ્રવીમિ મા નઃ પ્રજાઞ્છરીરિષો મોત વીરાન્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! ય:-જે તે-તારો દેવયાનાત્-વિદ્વાનોના માર્ગથી ઙ્ગતર:-ભિન્ન, અન્ય:-અન્ય માર્ગ છે; તે પન્થામ્-માર્ગને મૃત્યો-મૃત્યુ પરા, ઙ્ગહિ-દૂર કરે, જેથી તું પરમ્-ઉત્તમ દેવમાર્ગને અનુ-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કર.

તેથી ચક્ષુષ્મતે-પ્રશસ્ત નેત્રવાળા, શૃણ્વતે-સાંભળવાવાળા તે-તારા માટે હું બ્રવીમિ-ઉપદેશ કરું છું. જેથી મૃત્યુ ન:-અમારી પ્રજામ્-પ્રજાને મારે નહિ ઉત્-અને વીર પુરુષોને પણ મારે નહિ, તેમ તું

પ્રજામ્-સંતાનાદિને મા રીષિઃ-નાશ ન કર, હિંસા ન કરવા વિષય આદિથી નષ્ટ ન કર ઉત્ત-અને વીરાન્-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ શરીર બળથી યુક્ત વીર પુરુષોને પણ મારે નહિ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જ્યાં સુધી જીવન રહે, ત્યાં સુધી વિદ્યાનોના માર્ગ પર ચાલીને પરમ આયુને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. કદીપણ બ્રહ્મચર્ય વિના સ્વયંવર કરીને અલ્પ આયુના સંતાનો ઉત્પન્ન ન કરવા જોઈએ. તેમજ બ્રહ્મચર્યના અતિ પાલનથી પ્રજાઓનો ઉચ્છેદ પણ ન કરવો જોઈએ. અર્થાત્ એ પ્રજાનો બ્રહ્મચર્ય અનુષ્ઠાનથી વિયોગ ન કરવો જોઈએ. (૭)

શં વાતઃ શઃહિ તે ઘૃણિ શં તે ભવન્ત્વિષ્ટકાઃ ।

શં તે ભવન્ત્વગ્નયઃ પાર્થિવાસો મા ત્વાભિ શૂશુચન્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે જીવ તે-તારા માટે વાતઃ-વાયુ શમ્-સુખકારી થાય, ઘૃણિઃ-કિરણયુક્ત સૂર્ય શમ્; હિ-સુખકારી જ થાય; ઇષ્ટકાઃ-વેદીમાં ચયન કરેલી ઈંટો તે-તારા માટે શમ્-સુખકારી ભવન્તુ-થાય; પાર્થિવાસઃ-પૃથિવીમાં પ્રસિદ્ધ અગ્નયઃ-અગ્નિઓ તારા માટે શમ્-સુખકારી ભવન્તુ-થાય; એ સર્વ ત્વા-તને મા + અભિ + શૂશુચન્-સર્વત્રથી શીઘ્ર શોકયુક્ત કરે નહિ. (૮)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! તેમજ તમે ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં રહો, જેમ જીવવા અને મરવા પછી પણ તમને સૃષ્ટિના વાયુ આદિ પદાર્થ સુખકારી બને. (૮)

કલ્પન્તાં તે શિસ્તુભ્યમાર્પઃ દિશ્વતમાસ્તુભ્યં ભવન્તુ સિન્ધવઃ ।

અન્તરિક્ષશિવં તુભ્યં કલ્પન્તાં તે દિશઃ સર્વાઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે જીવ ! તે-તારા માટે દિશઃ-પૂર્વ આદિ દિશાઓ શિવતમા-અત્યંત સુખકારિણી થવામાં કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને; તુભ્યમ્-તારા માટે આપઃ-પ્રાણ વા જલ અતિ સુખકારી બને; તુભ્યમ્-તારા માટે સિન્ધવઃ-નદીઓ વા સમુદ્ર શિવતમાઃ-અત્યંત સુખકર ભવન્તુ-બને; તુભ્યમ્-તારા માટે અન્તરિક્ષમ્-આકાશ શિવમ્-કલ્યાણકારી બને અને તે-તારા માટે સર્વાઃ-સર્વ દિશઃ-ઈશાન આદિ દિશાઓ અત્યંત સુખકારી થવામાં કલ્પન્તામ્-સમર્થ બને. (૯)

ભાવાર્થ : જેઓ અધર્મનો ત્યાગ કરીને સર્વથા ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેના માટે પૃથિવી આદિ સૃષ્ટિના સર્વ પદાર્થો મંગલકારી બને છે. (૯)

અશ્મન્વતી રીયતે સર્શ્ભધ્વમુત્તિષ્ઠત પ્ર તરતા સઘાયઃ ।

અત્રા જહીમોઽશિવા યેઽઅસઙ્ગિવાન્વયમુત્તરેમાભિ વાજાન્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સઘાયઃ-મિત્રો ! જે અશ્મન્વતી-બહુ જ મેઘો વા પથ્થરવાળી સૃષ્ટિ વા નદી પ્રવાહથી રીયતે-ચાલે છે; તે સાથે જેમ વયમ્-અમે યે-જે અત્ર-આ જગતમાં વા સમયમાં અશિવાઃ-અકલ્યાણકારી અસન્-છે; તેને જહીમઃ-છોડીએ છીએ.

શિવાન્-સુખકારી વાજાન્-અત્યુત્તમ અન્નાદિ ભોગોને અભિ, ઉત્, તેમ-સર્વત્રથી પાર કરીએ છીએ, અર્થાત્ ભોગવી ચૂક્યા છીએ; તેમ તમે લોકો સંરમધ્વમ્-સમ્યક્ આરંભ કરો, ઉત્તિષ્ઠત-ઉદ્યમ કરો અને પ્રતરત-દુઃખોને પાર કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો મોટી નોકાથી સમુદ્ર સમાન-અશુભ આચરણો અને દુષ્ટોને પાર કરીને, પ્રયત્નપૂર્વક પુરુષાર્થી બનીને મંગલ કાર્ય કરે છે, તેઓ દુઃખસાગરને સહજભાવથી પાર કરી શકે છે. (૧૦)

અપાઘમપ્ કિલ્વિષમપ્ કૃત્યામપો રપ્ : ।

અપામાર્ગ્ ત્વમ્સ્મદર્પ દુઃષ્વન્યમ્ સુવ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અપામાર્ગ-રોગ નિવારક અપામાર્ગ નામક ઔષધિની સમાન પાપોને દૂર કરનાર વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ અસ્મત્-અમારી નજીકથી અઘમ્-પાપને અપ + સુવ-દૂર કરો; કિલ્વિષમ્-આપ મનની મલિનતાને અપ-દૂર કરો; કૃત્યામ્-દુષ્ટ ક્રિયાઓને અપ-દૂર કરો; રપ્-બાહ્ય ઈન્દ્રિયોની ચંચળતાથી ઉત્પન્ન અપરાધોને અપ-દૂર કરો; દુઃષ્વન્યમ્-દુષ્ટ નિદ્રામાં આવતા દુષ્ટ વિચારો = અપરાધને અપ-દૂર કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ અપામાર્ગ આદિ ઔષધિઓ રોગોનું નિવારણ કરીને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ સ્વયં સર્વ દોષોથી પૃથક્ બનીને, અન્યોને અશુભ આચરણથી પૃથક્ કરીને, જે સ્વયં શુદ્ધ બનીને અન્યોને શુદ્ધ કરે છે; તેઓ જ મનુષ્ય આદિને પવિત્ર કરનારા છે. (૧૧)

સુમિત્રિયા ન્ડઆપ્ડઓષ્ઠયઃ સન્તુ દુર્મિત્રિયાસ્તસ્મૈ

સન્તુ યોડ્સ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્યં દ્વિષ્મઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે આપ્-પ્રાણ વા જળ, ઓષ્ઠયઃ-સોમ આદિ ઔષધિઓ ન્-અમારે માટે સુમિત્રિયાઃ-શ્રેષ્ઠ મિત્રો સમાન હિતકારિણી સન્તુ-બને; તે તમારે માટે પણ તેમ બને.

યઃ-જે અસ્માન્-અમારો ધર્માત્માઓનો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે છે; ચ-અને યમ્-જે દુષ્ટાચારીથી વ્યમ્-અમે દ્વિષ્મઃ-અપ્રીતિ કરીએ છીએ; તસ્મૈ-તેને માટે તે પદાર્થ દુર્મિત્રિયાઃ-શત્રુઓની સમાન દુઃખદાયક સન્તુ-બને. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે રાગ, દ્વેષ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને સર્વમાં પોતાના આત્માની સમાન આચરણ કરે છે, તે ધર્માત્માઓને માટે જળ, ઔષધિ આદિ પદાર્થો સુખકર બને છે.

જે માત્ર પોતાના આત્માના પોષક = સ્વાર્થી, અન્યોથી દ્વેષ કરનારા અધર્માત્માઓને માટે ઉક્ત સર્વ પદાર્થો દુઃખદાયી બને છે.

મનુષ્યોએ ધર્માત્માઓની સાથે પ્રીતિ અને દુષ્ટ આત્માઓ સાથે સદા અપ્રીતિ કરવી જોઈએ, પરંતુ

તે દુષ્ટોનું મનથી સદા કલ્યાણ ઈચ્છવું જોઈએ. (૧૨)

અનૃવાહમન્વારભામહે સૌરભેયઃ સ્વસ્તયે ।

સ નૃન્દ્રન્દ્રૈવ દેવેભ્યો વહ્નિઃ સન્તરણો ભવ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે વહ્નિઃ-શીઘ્ર પહોંચાડનાર અગ્નિ નઃ-અમે દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનો માટે સન્તરણઃ-સમ્યક્ માર્ગથી પાર કરનાર હોય છે; તે સૌરભેયમ્-સુરભી = ગાયના સંતાન અનૃવાહમ્-ગાડી આદિને ખેંચનારા બળદની સમાન વર્તમાન અગ્નિને અમે સ્વસ્તયે-સુખને માટે અન્વારભામહે-યાનોને બનાવીને તેમાં સ્થાપિત કરીએ છીએ; સઃ-તે આપને માટે ઈન્દ્ર ઈવ-વિદ્યુત્ની સમાન ભવ-બને. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિવિદ્યાથી યાન આદિનું કાર્ય કરવું આરંભ કરે છે, તેઓ બળવાન બળદોથી ખેડૂતોની સમાન પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે અને વિદ્યુત્ની સમાન આવાગમન કરી શકે છે. (૧૩)

ઉદ્વ્યન્તમસસ્પરિ સ્વઃ પશ્યન્ત્ત્તરમ્ ।

દેવં દૈવત્રા સૂર્યમર્ગન્મ જ્યોતિરુત્તમમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! વ્યમ્-અમે જે તમસઃ-અંધકારથી પરિ-પૃથક્ સ્વઃ-સ્વયંપ્રકાશરૂપ સૂર્યની સમાન વિદ્યમાન દેવત્રા-વિદ્વાનો વા પ્રકાશમય સૂર્ય આદિ પદાર્થોમાં દેવમ્-વિજય આદિ લાભ પ્રદાન કરનારા, જ્યોતિઃ-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ, ઉત્તમમ્-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ, ઉત્તરમ્-દુઃખોથી પાર કરવાવાળા સૂર્યમ્-અન્તર્યામીરૂપથી પોતાની વ્યાપ્તિથી ચરાચરના આત્મા = સ્વામી પરમાત્માને પશ્યન્તઃ-જ્ઞાનદૃષ્ટિથી નિહાળતાં પરિ + ઉત્ + અગમ્-સર્વત્રથી ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક જાણીએ; તેને તમે પણ સર્વત્રથી જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યને જોઈને દીર્ઘાયુ ધર્માત્માજનો સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમજ ધાર્મિક યોગીજનો - મહાદેવ, સર્વના પ્રકાશક, જન્મ-મૃત્યુ આદિ કલેશથી પૃથક્ વર્તમાન, સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ પરમાત્માને સાક્ષાત્ જાણીને, મોક્ષને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર આનંદમાં રહે છે. (૧૪)

ઙ્મં જીવેભ્યઃ પરિધિં દધામિ મૈષાં નુ ગાદપરોઽર્થમેતમ્ ।

શતં જીવન્તુ શરદઃ પુરૂચીરન્તર્મૃત્યું દધતાં પર્વતેન ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હું પરમેશ્વર - ણ્મ-એ જીવોનાં ણમ્-પરિશ્રમથી પ્રાપ્ત કરેલ અર્થમ્-પદાર્થને અપરઃ-બીજા કોઈ મા + નુ + ગાત્-જલદી પ્રાપ્ત કરે નહિ; એટલા માટે ઙ્મ-એ જીવેભ્યઃ-જીવોને માટે અર્થાત્ પ્રાણીઓ અને સ્થાવર વૃક્ષાદિ શરીરોને માટે પરિધિમ્-મર્યાદાને દધામિ-વ્યવસ્થિત કરું છું.

આ રીતે આચરણ કરતાં આપ = પુરૂચીઃ-અનેક વર્ષોથી યુક્ત શતમ્-સો શરદઃ-શરદ ઋતુ સુધી જીવન્તુ-જીવો, પર્વતેન-જ્ઞાન વા ભ્રમચર્ય આદિથી મૃત્યુમ્-મૃત્યુને અન્તઃ દધતામ્-દૂર કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો પરમેશ્વર દ્વારા વ્યવસ્થાપિત - ધર્માચરણ કરે અને અધર્માચરણનો ત્યાગ કરે = તે મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરતા નથી, અન્યાયથી પારકા પદાર્થોને લેતા નથી, તેઓ નીરોગ રહીને સો વર્ષ સુધી જીવિત રહી શકે છે, ઈશ્વરની આજ્ઞાનો ભંગ કરનારાઓ નહિ.

જે પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યાઓને ભણીને ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેને વચ્ચે મૃત્યુ પ્રાપ્ત થતું નથી. (૧૫)

અગ્નિઽઆયૂંશ્ચ પવસઽઆ સુવોર્જમિષં ચ નઃ । આરે બાધસ્વ દુચ્છુનામ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! આપ આયૂંષિ-અન્ન આદિ પદાર્થો વા જીવન-આયુને પવસે-પવિત્ર કરો છો; નઃ-અમારે માટે ઋર્જમ્-બળ ચ-અને ઇષમ્-વિજ્ઞાનને આ, સુવ-સારી રીતે ઉત્પન્ન કરો. તથા દુચ્છુનામ્-કૂતરાં સમાન દુષ્ટ હિંસક પ્રાણીઓને આરે-દૂરથી વા સમીપથી બાધસ્વ-બાધિત કરો, તાડના કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુષ્ટ આચરણ અને દુષ્ટોનો સંગ છોડીને પરમેશ્વર અને આપ વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ ધન-ધાન્યથી યુક્ત બનીને દીર્ઘાયુ બને છે. (૧૬)

આયુષ્માનગ્ને હૃવિષા વૃધાનો ઘૃતપ્રતીકો ઘૃતયોનિરેધિ ।

ઘૃતં પીત્વા મધુ ચારુ ગવ્યં પિતેવ પુત્રમ્ભિ રક્ષતાદિમાન્ત્સ્વાહા ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વર્તમાન તેજસ્વી રાજન્ ! જેમ હૃવિષા-ઘૃત આદિ હૃવિથી વૃધાનઃ-વૃદ્ધિ પામતાં, ઘૃતપ્રતીકઃ-જળને પ્રસિદ્ધ કરનાર ઘૃતયોનિઃ-પ્રદીપ્ત તેજ જેનું કારણ વા ઘર છે; તે અગ્નિ વૃદ્ધિ પામે છે; તેમ આયુષ્માન્-મોટી આયુવાળા આપ અધિ-બનો. મધુ-મધુર ચારુ-સુંદર ગવ્યમ્-ગાયના ઘૃતમ્-ધીનું પીત્વા-પાન કરીને પુત્રમ્-પુત્રની પિતેવ-પિતાની સમાન સ્વાહા-સત્યાચરણથી ઇમાન્-એ પ્રજાજનોની અભિ + રક્ષતાત્-સદા-પ્રત્યક્ષરૂપમાં રક્ષા કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય આદિ રૂપથી અગ્નિ બહાર અને અંદર રહીને સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ જ રાજા પિતાની સમાન આચરણ કરનાર બનીને પુત્રની સમાન એવી પ્રજાની સદા રક્ષા કરે. (૧૭)

પરીમે ગામનેષત્ પર્યગ્નિમ્હૃષત ।

દેવેષ્વક્રત્ શ્રવઃ કઽઙ્ક્રમાંર આ દધર્ષતિ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો ! જે ઇમે-એ તમે ગામ્-વાણી વા પૃથિવીનો પરિ + અનેષત-સ્વીકાર કરો; અગ્નિમ્-અગ્નિને પરિ + અહૃષત-સર્વત્રથી હરો અર્થાત્ કાર્યમાં લાવો; એ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં શ્રવઃ-અન્નને અક્રત-ઉત્પન્ન કરો. આ રીતે આચરણ કરનારા ઇમાન્-આપ લોકોને કઃ-કોણ આ + દધર્ષતિ-દબાવી કે ધમકાવી શકે છે ?

ભાવાર્થ : જે રાજા-રાજપુરુષો પૃથિવીની સમાન ધીર, અગ્નિની સમાન તેજસ્વી, અન્નની સમાન

આયુની વૃદ્ધિ કરનાર બનીને ધર્મથી પ્રજાની રક્ષા કરે છે, તેઓ વિપુલ રાજલક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૮)

ક્રવ્યાદમગ્નિં પ્ર હિણોમિ દૂરં યમરાજ્યં ગચ્છતુ રિપ્રવાહઃ ।

ઙ્ઙૃહૈવાયમિતરો જાતવેદા દેવેભ્યો હૃવ્યં વહતુ પ્રજાનન્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : પ્રજાનન્-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન હું ક્રવ્યાદમ્-કવ્ય =કાયું માંસ ખાનાર તથા અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન બીજાને દુઃખથી તપાવનાર દુષ્ટ મનુષ્યને, દૂરમ્-દૂર પ્ર + હિણોમિ-કાઢું છું; અને જે રિપ્રવાહઃ-પાપને પ્રાપ્ત થયેલા દુષ્ટોને દૂર કાઢું છું; તે માંસ ખાનાર યમરાજ્યમ્-યમ =ન્યાયાધીશ રાજાના ન્યાયાલયમાં ગચ્છતુ-જાય, અને પાપી લોકો ઙ્ઙ્ઙ-આ સંસારમાં તથા ઙ્ઙતરઃ-તેનાથી ભિન્ન અયમ્-એ જાતવેદાઃ-પ્રજ્ઞાનવાળા વિદ્વાન દેવેભ્યઃ-ધાર્મિક વિદ્વાનોને માટે હૃવ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનને એવ-જ વહતુ-પ્રાપ્ત કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે ન્યાયાધીશ રાજપુરુષો ! તમે દુષ્ટાચારીઓને તાડન તથા પ્રાણોથી પણ છોડાવીને તેમજ શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરીને આ સૃષ્ટિમાં સામ્રાજ્ય કરો. (૧૯)

વહ વૃપાં જાતવેદઃ પિતૃભ્યો યત્રૈનાન્વેત્ય નિહિતાન્ પરાકે ।

મેદસઃ કુલ્યાડપ તાન્ત્રવન્તુ સત્યાડર્ષામાશિષઃ સં નમન્તાશ્ચ સ્વાહા ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-પ્રજ્ઞાનયુક્ત વિદ્વાન ! આપ યત્ર-જ્યાં એતાન્-એ પરાકે-દૂર નિહિતાન્-સ્થિત પિતૃજનોને વેત્ય-જાણો છે; ત્યાં પિતૃભ્યઃ-જનક વા વિદ્યા; શિક્ષાદાતા જનોને માટે વપામ્-ભૂમિને વહ-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ મેદસઃ-સ્નિગ્ધ કુલ્યાઃ-જલપ્રવાહથી યુક્ત ધારાઓ =નદી વા નહેરો તાન્-તે સજજનોને ઉપ, સ્ત્રવન્તુ-પ્રાપ્ત થાય; તેમ સ્વાહા-સત્યાચરણથી ઈષામ્-એ લોકોની સત્યાઃ-સાચી આશિષઃ-ઈચ્છાઓ સમ્ + નમન્તામ્-સમ્પક્ પ્રાપ્ત થાય અર્થાત્ સારી રીતે ફળે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે દૂર સ્થાન - દેશમાં રહેનારા પિતર જનો તથા વિદ્વાનોને બોલાવીને તેઓનો સત્કાર કરે છે, જેમ બગીચાના વૃક્ષ આદિની જલ અને વાયુ વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તેઓની ઈચ્છાઓ સત્ય અને સર્વત્રથી વધે છે. (૨૦)

સ્યોના પૃથિવિ નો ભવાનૃક્ષરા નિવેશની । યચ્છા નઃ શર્મ સપ્રથાઃ ।

અપ નઃ શોશુચદ્વઘમ્ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે પૃથિવી-ભૂમિની સમાન વિદ્યમાન ક્ષમાશીલ સ્ત્રી ! તું જેમ અનૃક્ષરા-નિષ્કંટક નિવેશની-બેસવાનો આધાર ભૂમિ સ્યોના-સુખદાયક હોય છે; તેમ નઃ-અમારે માટે ભવ-થાવ, તું સપ્રથાઃ-અત્યંત પ્રશંસા સાથે વિદ્યમાન નઃ-અમારા માટે શર્મ-સુખને યચ્છ-આપ.

જેમ ન્યાયાધીશ ન:-અમારે માટે અધમ્-પાપને અપ + શોશુચત્-શીઘ્ર દૂર કરે વા શુદ્ધ કરે, તેમ તું અપરાધને દૂર કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ધરતીની સમાન ક્ષમાશીલ, કૂરતા આદિ દોષોથી રહિત, અત્યંત પ્રશંસિત, અન્યોના દોષોનું નિવારણ કરનારી હોય છે, તે જ ધરનાં કાર્યોમાં યોગ્ય હોય છે. (૨૧)

અસ્માત્ત્વમર્ધિં જાત્તોઽસિ ત્વદ્વયં જાયતાં પુનઃ ।

અસૌ સ્વર્ગાય લોકાય સ્વાહા ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષ ! ત્વમ્-આપ અસ્માત્-આ લોકથી અર્થાત્ વર્તમાન મનુષ્યોથી અર્ધિ-સર્વોપરિ જાતઃ-પ્રસિદ્ધ વિરાજમાન અસિ-છો; એથી અયમ્-આ પુત્ર ત્વત્-આપથી ઉત્પન્ન થયા પુનઃ-પછી અસૌ-વિશેષ નામવાળો બનીને સ્વાહા-સત્ય - આચરણથી સ્વર્ગાય-વિશેષ સુખભોગવાળા લોકાય-નિહાળવા યોગ્ય લોકને માટે - જાયતામ્-ઉત્પન્ન કરે - સમર્થ બને. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આ સંસારમાં મનુષ્યનું શરીર ધારણ કરીને, વિદ્યા, સુશિક્ષા, સુશીલતા, ધર્મ, યોગ અને વિજ્ઞાનને ગ્રહણ કરીને મુક્તિસુખને માટે પ્રયત્ન કરો. તેને જ મનુષ્ય જન્મની સફળતા સમજવી જોઈએ. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વ્યવહાર (૧), જીવની ગતિ (૧), જન્મ-મૃત્યુ (૮), સત્ય (૧૬), ઈચ્છા (૧૭), અગ્નિ (૧૮-૧૯), સત્ય ઈચ્છા (૨૦) આદિનું વ્યાખ્યાન હોવાથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ પञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ ષટ્ત્રિંશાધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

ઋચ્ચં વાચ્ચં પ્ર પંદ્યે મનો યજુઃ પ્ર પંદ્યે સામ પ્રાણં પ્ર પંદ્યે

ચક્ષુઃ શ્રોત્રં પ્ર પંદ્યે । વાગોજઃ સ્હૌજો મયિ પ્રાણાપાનૌ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ મયિ-મારા આત્મામાં પ્રાણાપાનૌ-પ્રાણ = ઉચ્છ્વાસ અપાન = નિઃશ્વાસ દેહ છે; મારી વાક્-વાણી ઓજઃ-માનસિક બળને પ્રાપ્ત કરે છે; તે વાણી અને તે શ્વાસોથી હું ઓજઃ-શરીર બળને પ્રાપ્ત કરું છું; ઋચ્ચમ્-પ્રશંસનીય ઋગ્વેદ રૂપ વાચમ્-વાણીને પ્રપંદ્યે-પ્રાપ્ત કરું છું; મનઃ-મનન આત્મક ચિત્તરૂપ યજુઃ-યજુર્વેદને પ્રપંદ્યે-પ્રાપ્ત કરું છું; પ્રાણમ્-પ્રાણની ક્રિયા અર્થાત્ યોગાભ્યાસાદિક ઉપાસનાના સાધક સામ-સામવેદને પ્રપંદ્યે-પ્રાપ્ત કરું છું; ચક્ષુઃ-આંખ તથા શ્રોત્રમ્-કાનને પ્રપંદ્યે-પ્રાપ્ત કરું છું;-તેમ તમે પણ એને પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમારા સંગથી મારી વાણી ઋગ્વેદની સમાન પ્રશંસનીય, મન યજુર્વેદની સમાન, પ્રાણ સામવેદની સમાન અને સત્તર તત્ત્વોથી યુક્ત લિંગ શરીર = સૂક્ષ્મ શરીર સ્વસ્થ, ઉપદ્રવ રહિત અને સમર્થ બને. (૧)

યન્મે છિન્દ્રં ચક્ષુષો હૃદયસ્ય મનસો વાતિતૃણં બૃહસ્પતિર્મે તદ્ધાતુ ।

શં નો ભવતુ ભુવનસ્ય યસ્પતિઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યત્-જે મે-મારી ચક્ષુષઃ-નેત્રની વા હૃદયસ્ય-અન્તઃકરણની છિદ્રમ્-ન્યૂનતા વા-અથવા મનસઃ-મનની અતિતૃણમ્-અત્યંત વ્યાકુળતા છે; તત્-તેને બૃહસ્પતિઃ-મહાન આકાશ આદિના પાલક ઈશ્વર મે-મારા માટે દધાતુ-પુષ્ટ કરે - પૂર્ણ કરે; યઃ-જે ભુવનસ્ય-સર્વ સંસારના પતિઃ-પાલક, સ્વામી ઈશ્વર છે; તે નઃ-અમારે માટે શમ્-કલ્યાણકરી ભવતુ-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના અને આજ્ઞાપાલનથી અહિંસા ધર્મનો સ્વીકાર કરીને જિતેન્દ્રિયતાને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨)

ભૂર્ભુવઃ સ્વઃ । તત્સવિતુર્વરેણ્યં ભર્ગો દેવસ્ય ધીમહિ । ધિયો યો નઃ પ્રચોદયાત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ભૂઃ-કર્મકાંડની વિદ્યા ભુવઃ-ઉપાસના કાંડની વિદ્યા અને સ્વઃ-જ્ઞાનકાંડની વિદ્યાને સંગ્રહપૂર્વક ભણીને; યઃ-જે નઃ-અમારી ધિયઃ-ધારણાવતી બુદ્ધિઓને પ્રચોદયાત્-પ્રેરિત કરે છે; તે દેવસ્ય-કામના કરવા યોગ્ય સવિતુઃ-સમસ્ત ઐશ્વર્યના દાતા ઈશ્વરના તત્-તે ઈન્દ્રિયોથી ગ્રહણ ન કરવા યોગ્ય = પરોક્ષ વરેણ્યમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ભર્ગઃ-સર્વ દુઃખોના નાશક, તેજસ્વરૂપનું

ધીમહિ-ધ્યાન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ તેનું ધ્યાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની વિદ્યાઓને સારી રીતે ગ્રહણ કરીને, સમસ્ત ઐશ્વર્યોથી યુક્ત પરમેશ્વરની સાથે પોતાના આત્માઓને યુક્ત કરે છે અને અધર્મ, દરિદ્રતા તથા દુઃખોને દૂર કરીને ધર્મ, ઐશ્વર્ય અને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેને અન્તર્યામી જગદીશ્વર સ્વયમેવ ધર્મનું અનુષ્ઠાન અને અધર્મનો ત્યાગ સદા કરાવવા ઈચ્છે છે. (૩)

કયાં નશ્ચિત્રઽઆ ભુવદૂતી સદાવૃધ્ઃ સખાં । કયાં શચિષ્ઠયા વૃતા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : તે સદાવૃધ્ઃ-સદા વૃદ્ધિ પામનાર અર્થાત્ કદી ન્યૂનતા પ્રાપ્ત નહીં, ચિત્રઃ-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પરમેશ્વર નઃ-અમારી કયા-કઈ ઋતી-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી સખા-મિત્ર આ + ભુવત્-બને છે; તથા કયા-કઈ વૃતા-વર્તમાન શચિષ્ઠયા-અત્યંત પ્રજ્ઞા = શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી અમને શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવમાં પ્રેરિત કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : અમે એ યથાર્થ રૂપમાં નથી જાણતા કે તે ઈશ્વર કઈ યુક્તિથી અમને પ્રેરિત કરે છે, જેની સહાયતાથી જ અમે ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકીએ છીએ. (૪)

કસ્ત્વા સત્યો મદાનાં મંહિષ્ઠો મત્સદન્ધસઃ । દૃઢા ચિદારુજે વસુ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મદાનામ્-આનંદોની વચ્ચે મંહિષ્ઠઃ-અત્યંત વૃદ્ધિ પામેલાં, કઃ-સુખસ્વરૂપ, સત્યઃ-સર્વ પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠતમ ઈશ્વર અને પ્રજાપતિ - અન્ધસઃ-અન્નાદિ પદાર્થોથી ત્વામ્-તમને મત્સત્-આનંદિત કરે છે; અને આરુજે-દુઃખનાશક તારા માટે = જીવને માટે ચિત્-પણ દૃઢા-દૃઢ વસુ-ધન પ્રદાન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અન્ન આદિથી અને સત્યના ઉપદેશથી ધન પ્રદાન કરીને, સર્વને આનંદિત કરે છે, તે સુખસ્વરૂપ પરમાત્માની જ તમે નિત્ય ઉપાસના કરો. (૫)

અભી ષુ ણઃ સખીનામવિતા જરિતૃણામ્ । શતંભવાસ્યૂતિભિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ, શતમ્-અસંખ્ય ઐશ્વર્ય આપતાં, અભિ, ઋતિભિઃ-સર્વત્રથી રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી નઃ-અમારા સખીનામ્-મિત્રો અને જરિતૃણામ્-સત્યની સ્તુતિ કરનારા જનોના અવિતા-રક્ષક સુ + ભવાસિ-ઉત્તમ રીતિથી બને છે; એથી આપ અમારે માટે અભિ-સર્વત્રથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે રાગ-દ્વેષથી રહિત, અજાતશત્રુ = વેરભાવ રહિત, સર્વના મિત્ર જનોને અસંખ્ય ઐશ્વર્ય અને વિપુલ વિજ્ઞાન પ્રદાન કરીને સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તે પરમેશ્વરની નિત્ય સેવા = ઉપાસના કરો. (૬)

કયા ત્વં ન કૃત્યાભિ પ્ર મન્દસે વૃષન્ । કયાં સ્તોતૃભ્યઽઆ ભર ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વૃષન્-સર્વત્રથી સુખની વર્ષા કરનારા ઈશ્વર ! ત્વમ્-આપ કયા-કઈ કૃત્યા-રક્ષા આદિ

ક્રિયાથી ન:-અમને અભિ + પ્ર + મન્દસે-સર્વત્રથી આનંદિત કરો છો ? કયા-કઈ રીતે સ્તોતૃભ્ય:- પ્રશંસક જનોને માટે સુખને આ, ભર-સારી રીતે ધારણ-પાલન કરો છો ? (૭)

ભાવાર્થ : હે ભગવન્ પરમાત્મન્ ! જે યુક્તિથી આપ ધર્માત્માઓને આનંદિત કરો છો, તેનું સર્વત્રથી પાલન કરો છો, તે યુક્તિનો અમને બોધ કરાવો. (૭)

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शन्नोऽस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ ઇન્દ્ર:-વિદ્યુતની સમાન વિશ્વસ્ય-સંસારની મધ્યમાં રાજતિ-પ્રકાશમાન છો; તે આપની કૃપાથી ન:-અમારા દ્વિપદે-પુત્ર આદિને માટે શમ્-સુખરૂપ અસ્તુ-બને; ચતુષ્પદે-ગાય આદિ પશુઓને માટે શમ્-સુખરૂપ અસ્તુ-બને. (૮)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ સર્વત્ર વ્યાપક, મનુષ્ય અને પશુ આદિના સુખના ઈચ્છુક છો, તેથી સર્વના ઉપાસનીય છો. (૮)

शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्थ्यमा ।

शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ન:-અમારે માટે મિત્ર:-પ્રાણ સમાન પ્રિય મિત્ર શમ્-સુખકારી ભવતુ-બને; વસ્ત્રા:-જલની સમાન શાંતિદાતા વિદ્વાન્ શમ્-સુખકારી બને; અર્ચમા-પદાર્થોના સ્વામી વા વૈશ્યોને માનનારા ન્યાયાધીશ ન:-અમારે માટે શમ્-સુખકારી ભવતુ-બને; ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યવાન, બૃહસ્પતિ:-વેદરૂપ વાણીના રક્ષક વિદ્વાન્ - ન:-અમારે માટે શમ્-સુખકારી બને; ઉસ્ક્રમ:-સંસારની રચનામાં બહુ શીઘ્રતા કરનારા વિષ્ણુ:-વ્યાપક ઈશ્વર ન:-અમારે માટે શમ્-કલ્યાણકરી - સુખકારી બને; તેમ તમારે માટે પણ બને. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ પોતાના માટે સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે; જેમ તેઓ સ્વયં સત્સંગની ઈચ્છા કરે, તેમ તેમાં અન્યોને પણ પ્રેરિત કરે. (૯)

शन्नो वातः पवतांश्च शन्नस्तपतु सूर्यः ।

शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽभि वर्षतु ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ વાત:-વાયુ ન:-અમારે માટે શમ્-સુખકારી પવતામ્-ચાલે; સૂર્ય:-સૂર્ય ન:-અમારે માટે શમ્-સુખકારી તપતુ-તપે; કનિક્રદત્-અત્યંત શબ્દ કરનાર, દેવ:-ઉત્તમ ગુણયુક્ત વિદ્યુતરૂપ અગ્નિ ન:-અમારે માટે શમ્-સુખકારી બને; પર્જન્ય:-મેઘ = વાદળાં ન:-અમારે માટે અભિ + વર્ષતુ-સર્વત્ર વર્ષા કરે; તેવું અમને શિક્ષણ આપો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુ, સૂર્ય, વિદ્યુત્ અને મેઘ સર્વને માટે સુખકારી બને, તેમ તેવું અનુષ્ઠાન = આચરણ કરો. (૧૦)

अहानि शं भवन्तु नः शशरात्रीः प्रति धीयताम् । शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः

**શન્નઽન્દ્રાવરુણા રાતહવ્યા । શન્નઽન્દ્રાપૂષણા વાજસાતૌ શમિન્દ્રાસોમા સુવિતાય
શંયોઃ ॥ ૧૧ ॥**

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેમ અવોભિઃ-રક્ષા આદિથી શંયોઃ-સુખની સુવિતાય-પ્રેરણા માટે નઃ-અમારે માટે અહાનિ-દિવસ શમ્-સુખકારી ભવન્તુ-બને; રાત્રીઃ-રાત્રિઓ શમ્-સુખને પ્રતિધીયતામ્-ધારણ કરે; ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને અગ્નિ નઃ-અમારે માટે શમ્-સુખકારી ભવતામ્-બને; રાતહવ્યા-આપવા યોગ્ય સુખને માટે ઇન્દ્રાવસ્ત્રા-વિદ્યુત્ અને જળ નઃ-અમારે માટે શમ્-સુખકારી બને; વાજસાતૌ-અન્નોના સેવન માટે સંગ્રામમાં ઇન્દ્રાપૂષણા-વિદ્યુત્ અને પૃથિવી નઃ-અમારે માટે શમ્-સુખકારી બને તથા ઇન્દ્રાસોમા-વિદ્યુત્ અને ઔષધિઓ અમારે માટે શમ્-સુખકારી બને. તેવું અમને અનુકૂળ શિક્ષણ આપો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો આપ લોકો ઈશ્વર અને આપ્ત વિદ્વાનોની શિક્ષામાં પ્રવૃત્ત રહો, તો દિવસ અને રાત તથા ભૂમિ આદિ સર્વ પદાર્થો તમારે માટે સુખકારી બને. (૧૧)

શન્નો દેવીરભિષ્ટયઽઆપો ભવન્તુ પીતયે । શંયોરભિ સ્ત્રવન્તુ નઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેમ અભિષ્ટયે-ઈષ્ટ સુખની સિદ્ધિને માટે તથા પીતયે-પીવાને માટે દેવીઃ-દિવ્ય - ઉત્તમ આપઃ-જળ નઃ-અમારે માટે શમ્-સુખકારી ભવન્તુ-બને; નઃ-અમારે માટે શંયોઃ-સુખની વર્ષા અભિ + સ્ત્રવન્તુ-સર્વત્રથી કરો; તેમ ઉપદેશ આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પણ આદિથી શુદ્ધ જળ આદિ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેઓના ઉપર નિરંતર સુખરૂપ અમૃતની વર્ષા થાય છે.

સ્યોના પૃથિવિ નો ભવાનૃક્ષરા નિવેશની । યચ્છાં નઃ શર્મ સપ્રથાઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે ધરતીની સમાન વિદ્યમાન ક્ષમાશીલ સ્ત્રી ! જેમ અનૃક્ષરા-કાંટા, ખાડા આદિથી રહિત, નિવેશની-નિત્ય સ્થિર પદાર્થોનું સ્થાપન કરનારી પૃથિવી-ભૂમિ નઃ-અમારે માટે સુખદાયક છે; તેમ તું પણ ભવ-બન.

તે સપ્રથાઃ-વિસ્તૃત ભૂમિ નઃ-અમારે માટે શર્મ-ઘર - સ્થાન આપે, તેમ સ્યોના-સુખકારક તું નઃ-અમારે માટે ઘરનું સુખ યચ્છ-આપ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ અને ઐશ્વર્ય આપનારી પૃથિવી છે, તેમ જ વિદુષી પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિ આદિને આનંદ આપનારી હોય છે. (૧૩)

આપો હિ પ્ષા મયોભુવસ્તા નઽઋર્જે દધાતન । મહે રણાય ચક્ષસે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે આપઃ-જળની સમાન શાંતિશીલ વિદુષી શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! જેમ મયોભુવઃ-સુખને ઉત્પન્ન કરનાર જળ હિ-જે કારણે નઃ-અમને મહે-મહાન રણાય-સંગ્રામ તથા ચક્ષસે-પ્રસિદ્ધ ઋર્જે-બળ વા પરાક્રમને માટે ધારણ વા પોષણ કરે છે; તેમ તાઃ-તમે એને દધાતન-ધારણ કરો; તથા પ્યારી સ્થ-બનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ, સતી, પવિત્રતા સ્ત્રીઓ સર્વને સુખ આપે છે, તેમ જ જળ આદિ પદાર્થો સુખકારક છે. તેમ જાણો. (૧૪)

યો વઃ શિવતમો રસસ્તસ્ય ભાજયતેહ નઃ । ડશતીરિવ માતરઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! યઃ-જે વઃ-તમારા શિવતમઃ-અત્યંત કલ્યાણકારી રસઃ-આનંદવર્ધક સ્નેહ રૂપ રસ છે, તસ્ય-તેનું ડહ-આ જગતમાં નઃ-અમને ડશતીરિવ-કામના કરનારી માતરઃ-માતાઓની સમાન ભાજયત-સેવન કરાવો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જો હોમ આદિથી જળની શુદ્ધિ કરવામાં આવે, તો તે જેમ માતા પોતાનાં સંતાનો અને પવિત્રતા સ્ત્રીઓ પતિઓને સુખી કરે છે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૧૫)

તસ્માડઅરઁ ગમામ વો યસ્ય ક્ષયાય જિન્વથ । આપો જનયથા ચ નઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ તમે નઃ-અમને આપઃ-જળ સમાન શાંત જનયથ-કરો છો; તેમ વઃ-તમને અમે શાંત કરીએ છીએ; ચ-અને તમે યસ્ય-જે પતિના ક્ષયાય-નિવાસને માટે જિન્વથ-તેને તૃપ્ત કરો; તસ્મૈ-તેને માટે અમે અરમ્-પૂર્ણ સામર્થ્ય ગમામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર આનંદને માટે જળની સમાન સરળતાથી વર્તે અને શુભ આચરણોથી પરસ્પર સુશોભિત રહે. (૧૬)

**ઘૌઃ શાન્તિરન્તરિક્ષ્ઠ્ઠ શાન્તિઃ પૃથિવી શાન્તિરાપઃ શાન્તિરોષધયઃ શાન્તિઃ ।
વનસ્પતયઃ શાન્તિર્વિશ્વે દેવાઃ શાન્તિર્બ્રહ્મ શાન્તિઃ સર્વઠ્ઠ શાન્તિઃ શાન્તિરેવ
શાન્તિઃ સા મા શાન્તિરેધિ ॥ ૧૭ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઘૌઃ, શાન્તિઃ-પ્રકાશયુક્ત પદાર્થ અન્તરિક્ષમ્-બન્ને લોક વચ્ચેનું આકાશ શાન્તિઃ-શાન્તિકારી હોય, પૃથિવી-ભૂમિ શાન્તિઃ-સુખકારી નિરુપદ્રવ હોય, આપઃ-જળ વા પ્રાણ શાન્તિ-શાન્તિદાયક હોય, ઓષધયઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ શાન્તિઃ-સુખદાયી હોય, વનસ્પતયઃ-વડ આદિ વનસ્પતિઓ શાન્તિઃ-શાન્તિકારક હોય, વિશ્વે, દેવાઃ-સર્વ વિદ્વાનો શાન્તિ-ઉપદ્રવ નિવારક હોય, બ્રહ્મ-પરમેશ્વર વા વેદ શાન્તિઃ-સુખદાયી હોય, સર્વમ્-સંપૂર્ણ વસ્તુઓ શાન્તિઃ-શાન્તિકારક શાન્તિરેવ-શાન્તિ જ શાન્તિઃ-શાન્તિ મા-મને ઈધિ-પ્રાપ્ત થાય, સા-તે શાન્તિઃ-શાન્તિ તમને પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આકાશ આદિ પદાર્થો શાન્તિકારક બને, તેમ તમે પ્રયત્ન કરો. (૧૭)

**દૃતે દૃહ્ મા મિત્રસ્ય મા ચક્ષુષા સર્વીણિ ભૂતાનિ સમીક્ષન્તામ્ । મિત્રસ્યાડહં
ચક્ષુષા સર્વીણિ ભૂતાનિ સમીક્ષે । મિત્રસ્ય ચક્ષુષા સમીક્ષામહે ॥ ૧૮ ॥**

પદાર્થ : હે દૃતે-અવિદ્યા અંધકારના નિવારક જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેથી સર્વીણિ-સર્વ ભૂતાનિ-

પ્રાણીઓ મિત્રસ્ય-મિત્રની ચક્ષુષા-દૃષ્ટિથી મા-મને સમ્ + ઈક્ષન્તામ્-સમ્યક્ જુએ; અહમ્-હું મિત્રસ્ય મિત્રની ચક્ષુષા-દૃષ્ટિથી સર્વાણિ-સર્વ ભૂતાનિ-પ્રાણીઓને સમીક્ષે-સમ્યક્ દેખું - નિહાળું. આ રીતે અમે પરસ્પર મિત્રસ્ય-મિત્રની ચક્ષુષા-દૃષ્ટિથી સમીક્ષામહે-નિહાળીએ. આ વિષયમાં અમને હંહ-દૃઢ કરો-સ્થિર કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે પોતાના આત્માની સમાન સર્વ પ્રાણીઓને માને છે, કોઈથી પણ દ્વેષ કરતા નથી, મિત્ર સમાન સર્વનો સદા સત્કાર કરે છે, તે જ મનુષ્યો ધર્માત્મા છે. (૧૮)

દૃતે દૃહ્ મા । જ્યોક્તે સંદૃશિ જીવ્યાસં જ્યોક્તે સંદૃશિ જીવ્યાસમ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે દૃતે-સમગ્ર મોહના આવરણનો નાશ કરનારા ઉપદેશક વિદ્વન્ વા પરમાત્મન્ ! જેથી અમે તે-આપના સંદૃશિ-સમ્યક્ દર્શન વા જ્ઞાનમાં જ્યોક્-નિરંતર જીવ્યાસમ્-જીવીએ, તે-આપની સંદૃશિ-સમાન દૃષ્ટિ વિષયમાં જ્યોક્-નિરંતર જીવ્યાસમ્-જીવન વ્યતીત કરીએ, તે જીવન વિષયમાં મા-મને હંહ-દૃઢ કરો. - સ્થિર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને યુક્ત આહાર-વિહાર દ્વારા સો વર્ષ સુધી જીવવું જોઈએ. (૧૯)

નમસ્તે હરસે શોચિષે નમસ્તેઽસ્ત્વર્ચિષે ।

અન્યાંસ્તેઽસ્મત્તપન્તુ હેતયઃ પાવકોઽસ્મભ્યઃશિવો ભવ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ઈશ્વર ! હરસે-પાપોનું હરણ કરવાવાળા, શોચિષે-પ્રકાશમાન તે-આપને માટે નમઃ-નમસ્કાર; તથા અર્ચિષે-સ્તુતિને યોગ્ય તે-આપને માટે નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-હો; હેતયઃ, તે-આપની વજૂની સમાન વ્યવસ્થાઓ અસ્મત્-અમારાથી અન્યાન્-ભિન્ન, અન્યાથી શત્રુઓને તપન્તુ-દુઃખ આપો; આપ અસ્મભ્યમ્-અમારે માટે પાવકઃ-પવિત્ર કર્તા શિવઃ-કલ્યાણકારી ભવ-બનો. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! અમે આપના શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ સમાન અમારા ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ કરવા માટે આપને નમસ્કાર કરીએ છીએ. એ નિશ્ચિત રૂપમાં જાણીએ છીએ કે, આપનું શાસન = વ્યવસ્થા અધાર્મિકોને પીડિત કરે છે તથા ધાર્મિકોને આનંદિત કરે છે, તેથી અમે મંગલસ્વરૂપ આપની જ ઉપાસના કરીએ છીએ. (૨૦)

નમસ્તેઽસ્તુ વિદ્યતે નમસ્તે સ્તનયિત્લવે ।

નમસ્તે ભગવન્નસ્તુ યતઃ સ્વઃ સ્મીર્હસે ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે ભગવન્-અત્યંત ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર ! યતઃ-જેથી આપ અમારે માટે સ્વઃ-સુખ આપવા માટે સમ્ + ઈર્હસે-સમ્યક્ ચેષ્ટા કરો છો; તેથી વિદ્યતે-વિદ્યુત્ની સમાન વ્યાપક તે-આપ પરમેશ્વરને નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-હો; સ્તનયિત્લવે-ભયંકર ગર્જના કરતી વિદ્યુત્ની સમાન દુષ્ટોને માટે ભયંકર તે-

આપને માટે નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-હો; સર્વની સર્વ પ્રકારે રક્ષા કરનાર તે-આપને માટે નમઃ-નિરંતર નમસ્કાર કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઈશ્વર અમને સદા આનંદને માટે સર્વ સાધનો - ઉપસાધનો આપે છે, તેથી અમારા સેવ્ય = ઉપાસ્ય છે. (૨૧)

યતોયતઃ સમીહસે તતો નોઽઅભયં કુરુ ।

શં નઃ કુરુ પ્રઽજાભ્યોઽભયં નઃ પશુભ્યઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ઈશ્વર ! આપ આપની કૃપા કટાક્ષથી યતો યતઃ-જે - જે સ્થાનથી સમીહસે-સમ્યક્ ચેષ્ટા = પ્રયત્ન કરો છો; તતઃ-તે - તે સ્થાનથી નઃ-અમને અભયમ્-ભયરહિત કુરુ-કરો નઃ-અમારી પ્રજાભ્યઃ-પ્રજા અને નઃ-અમારા પશુભ્યઃ-ગાય આદિ પશુઓ માટે શમ્-સુખ અને અભયમ્-નિર્ભયતા કુરુ-ઉત્પન્ન કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ જે કારણે સર્વમાં વ્યાપક છો, તેથી અમને તથા અન્યોને પણ સર્વ કાલ અને સર્વ દેશોમાં સર્વ પ્રાણીઓથી નિર્ભય કરો. (૨૨)

સુમિત્રિયા નઽઆપઽઓષધયઃ સન્તુ દુર્મિત્રિયાસ્તસ્મૈ સન્તુ । યોઽસ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વયં દ્વિષ્મઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જે એ આપઃ-પ્રાણ વા જળ તથા ઓષધયઃ-જવ આદિ ઔષધિઓ નઃ-અમારે માટે સુમિત્રિયાઃ-શ્રેષ્ઠ મિત્ર સમાન હિતકારી સન્તુ-બને; અને તે જ યઃ-જે અધર્મી અસ્માન્-અમો ધર્માત્માઓનો દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે; ચ-અને યમ્-જેથી વયમ્-અમે દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ; તસ્મૈ-તે અધર્મિકને માટે દુર્મિત્રિયાઃ-શત્રુ સમાન વિરુદ્ધ સન્તુ-બને. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ અનુકૂળતાપૂર્વક જીતેલી ઈન્દ્રિય મિત્ર સમાન હિતકારી હોય છે, તેમ જળ આદિ પદાર્થ પણ દેશ-કાળ અનુસાર યોગ્ય રીતે સેવન કરવામાં આવે તો હિતકારી અને દેશ-કાળ વિરુદ્ધ લેવામાં આવે તો શત્રુ સમાન દુઃખદાયી નીવડે છે. (૨૩)

તચ્ચક્ષુર્દેવહિતં પુરસ્તાચ્છુક્રમુચ્ચરત્ । પશ્યેમ શરદઃ શતં જીવેમ શરદઃ શતઃ શૃણુયામ શરદઃ શતં પ્ર બ્રવામ શરદઃ શતમદીનાઃ સ્યામ શરદઃ શતં ભૂયશ્ચ શરદઃ શતાત્ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ જે દેવહિતમ્-વિદ્વાનોને માટે હિતકારી, શુક્રમ્-શુદ્ધ, ચક્ષુઃ-નેત્રની સમાન સર્વના દષ્ટા બ્રહ્મ તથા પુસ્તાત્-પૂર્વકાલ = અનાદિકાલથી ઝત્, ચરત્-ઉત્કૃષ્ટતાથી સર્વના જ્ઞાતા

છો; તત્-તે ચેતન બ્રહ્મ આપને અમે શતમ્, શરદઃ-સો વર્ષો સુધી પશ્યેમ-નિહાળીએ; શતમ્, શરદઃ-સો વર્ષો સુધી જીવેમ-જીવીએ = પ્રાણોને ધારણ કરીએ; શતમ્, શરદઃ-સો વર્ષો સુધી શ્રૃણુયામ-શાસ્ત્રો તથા મંગલ વચનોને સાંભળીએ; શતમ્, શરદઃ-સો વર્ષો સુધી પ્રબ્રવામ-વેદાદિ ભણાવીએ વા સત્યનો ઉપદેશ કરીએ શતમ્, શરદઃ-સો વર્ષો સુધી અદીનાઃ-દીનતારહિત સ્યામ-રહીએ; ચ-અને શતાત્, શરદઃ-સો વર્ષોથી ભૂયઃ-અધિક પણ નિહાળીએ, જીવીએ, સાંભળીએ, ઉપદેશ કરીએ અને અદીન રહીએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી આપના [દ્વારા પ્રદત્ત]વિજ્ઞાનના દ્વારા આપની સૃષ્ટિને નિહાળતાં તથા તેનો ઉપયોગ કરતાં, નીરોગ અને એકાગ્ર બનીને, સમસ્ત ઈન્દ્રિયોથી યુક્ત રહીને, અમે સો વર્ષોથી પણ અધિક જીવીએ, સત્ય શાસ્ત્રો તથા આપના ગુણોને સાંભળીએ, વેદ આદિને ભણાવીએ તથા સત્યનો ઉપદેશ કરીએ, કદી પણ કોઈ પણ વસ્તુના અભાવના કારણે પરાધીન ન બનીએ તથા સદા આત્મવશ = સ્વતંત્ર કે આપના વશમાં રહીને નિરંતર આનંદિત રહીએ તથા અન્યોને પણ આનંદિત કરીએ. (૨૪)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વરની પ્રાર્થના (૩), સર્વના સુખનું ભાન (૮), પરસ્પર મિત્રતાની આવશ્યકતા (૯), દિનચર્યાની શુદ્ધિ (૧૧), ધર્મનું લક્ષણ (૧૮), આયુની વૃદ્ધિ અને પરમેશ્વરના વિજ્ઞાન (૨૪)નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થ સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ અથ સપ્તત્રિંશાઽધ્યાયારમ્ભઃ ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભુદ્રં તન્ન આસુવ ॥

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આદદે
નારિરસિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે કારણે આપ નારિઃ-નાયક અસિ-છો, તેથી સવિતુઃ-જગતના ઉત્પાદક દેવસ્ય-સમસ્ત સુખના દાતા ઈશ્વરના પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા જગતમાં અશ્વિનોઃ-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનાં બાહુભ્યામ્-બળ અને પરાક્રમથી, પૂષ્ણઃ-પોષક જનના હસ્તાભ્યામ્-હાથોથી ત્વા-આપને આ + દદે-સર્વત્રથી સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને તથા તેઓની સેવા કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને આ સૃષ્ટિમાં નાયક બનો. (૧)

યુજ્જતે મનઽઉત યુજ્જતે ધિયો વિપ્રા વિપ્રસ્ય બૃહતો વિપશ્ચિતઃ ।

વિ હોત્રા દધે વયુનાવિદેકઽ ઇન્મહી દેવસ્ય સવિતુઃ પરિષ્ટુતિઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વયુનાવિત્-ઉષ્કૃષ્ટ જ્ઞાનોમાં પ્રવીણ એકઃ-અદ્વિતીય જગદીશ્વર સર્વને વિ + દધે-વિશેષ રૂપથી ધારણ કરી રહેલ છે; જે સવિતુઃ-સર્વાન્તર્યામી દેવસ્ય-સમસ્ત જગતના પ્રકાશક ઈશ્વરની આ મહી-મહાન = વિશાળ પૃથિવી પરિષ્ટુતિઃ-સર્વત્રથી સ્તુતિ = પ્રશંસા છે.

હોત્રાઃ-શુભ ગુણ ગ્રહણ કરનાર વિપ્રાઃ-વિવિધ પ્રકારની બુદ્ધિઓમાં વ્યાપ્ત મેધાવી યોગીજન જે બૃહતઃ-સર્વથી મહાન વિપશ્ચિતઃ-અનંત વિદ્યાવાન વિપ્રસ્ય-વિશેષ રૂપથી સર્વત્ર વ્યાપક ઈશ્વરના મધ્યમાં મનઃ-સંકલ્પ - વિકલ્પરૂપ મનને યુજ્જતે-સમાહિત કરે છે; ઉત-અને ધિયઃ-બુદ્ધિ વા કર્મને યુજ્જતે-યુક્ત કરે છે; ઇત્-તેની જ તમે ઉપાસના કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યોગીજનો માટે ધ્યેય = ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે, જેની પ્રશંસાને માટે સૂર્ય આદિ દૃષ્ટાન્ત રહેલાં છે, જે સર્વજ્ઞ, અસહાયી સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ છે, જેના માટે સર્વ ધન્યવાદ આપવા યોગ્ય છે, તેને જ તમે ઈષ્ટદેવ માનો. (૨)

દેવીં દ્યાવાપૃથિવી મુખસ્ય વામદ્ય શિરોં રાધ્યાસં દેવયજને પૃથિવ્યાઃ ।

મુખાય ત્વા મુખસ્ય ત્વા શીર્ષોં ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે દેવી-દિવ્ય - ઉત્તમ ગુણોથી સંપન્ન, દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિની સમાન અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા સ્ત્રીઓ ! અદ્ય-આજે પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિની મધ્યમાં રહેલા દેવયજને-વિદ્વાનોના યજ્ઞ મંદિરમાં વામ્-તમારા બન્નેના મુખસ્ય-યજ્ઞના શિરઃ-ઉત્તમાંગને રાધ્યાસમ્-સિદ્ધ કરું છું.

મગ્ધસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષ્ણો-ઉત્તમાંગને માટે ત્વા-તમને - અધ્યાપિકાને મગ્ધાય-યજ્ઞને માટે ત્વા-તમને-ઉપદેશિકાને રાધ્યાસમ્-સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જગતમાં જેમ સૂર્ય અને ભૂમિ ઉત્તમાંગ = શિરની સમાન છે, તેમ જ આપ લોક સર્વોત્તમ બનો, જેથી સર્વની સંગતિનું અધિષ્ઠાન યજ્ઞ પૂર્ણ થાય. (૩)

દેવ્યો વમ્રયો ભૂતસ્ય પ્રથમજા મગ્ધસ્ય વોઽદ્ય શિરો રાધ્યાસં દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ ।

મગ્ધાય ત્વા મગ્ધસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે પ્રથમજા:-પ્રથમથી જ ઉત્પન્ન વમ્રય:-અલ્પ આયુવાળી દેવ્ય:-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષી સ્ત્રીઓ ! ભૂતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ મગ્ધસ્ય-યજ્ઞની સંબંધિની પૃથિવ્યા:-પૃથિવીની મધ્યમાં તથા દેવયજ્ઞે-વિદ્વાનોની સંગતિ કરવામાં અદ્ય-આજે વ:-તમને શિર:-શિરની સમાન હું રાધ્યાસમ્-સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું.

મગ્ધસ્ય-યજ્ઞનું નિર્માણ કરનારી ત્વા-તને - વિદુષીને, મગ્ધાય-યજ્ઞને માટે શીર્ષ્ણો-શિરની સમાન વર્તમાન યજ્ઞને માટે ત્વા-તને હું રાધ્યાસમ્-સમ્યક્ ઉદ્યત વા સિદ્ધ કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યાં સુધી સ્ત્રીઓ વિદુષી બનતી નથી, ત્યાં સુધી ઉત્તમ શિક્ષાની પણ વૃદ્ધિ થતી નથી. (૪)

ઇત્યગ્રંઽઆસીન્મગ્ધસ્ય તેઽદ્ય શિરો રાધ્યાસં દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ ।

મગ્ધાય ત્વા મગ્ધસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું અગ્રે-પ્રથમ મગ્ધાય-સત્કાર નામક યજ્ઞને માટે ત્વા-તને તથા મગ્ધસ્ય-સંગતિકરણની શીર્ષ્ણો-ઉત્તમતાને માટે ત્વા-તને રાધ્યાસમ્-સિદ્ધ કરું છું.

જે તે-તારા મગ્ધસ્ય-યજ્ઞનો શિર:-ઉત્તમ ગુણ આસીત્-છે; તે ત્વા-તને અદ્ય-આજે પૃથિવ્યા:-પૃથિવીના ઇચ્છિ-આટલા દેવયજ્ઞે-વિદ્વાનોને પૂજવામાં સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : તે જ અધ્યાપકો શ્રેષ્ઠ છે, જેઓ પૃથિવીની મધ્યમાં સર્વને ઉત્તમ શિક્ષા અને વિદ્યાથી યુક્ત કરવામાં સમર્થ છે. (૫)

ઇન્દ્રસ્યૌજઃ સ્થ મગ્ધસ્ય વોઽદ્ય શિરો રાધ્યાસં દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ । મગ્ધાય ત્વા મગ્ધસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મગ્ધાય ત્વા મગ્ધસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મગ્ધાય ત્વા મગ્ધસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું ઇન્દ્રસ્ય-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધાર્મિક પુરુષના ઓજ:-પરાક્રમને રાધ્યાસમ્-સિદ્ધ કરું છું; તેમ અદ્ય-આજે પૃથિવ્યા:-ભૂમિના દેવયજ્ઞે-દેવ = વિદ્વાનોનાં પૂજનમાં શિર:-શિરની સમાન વ:-તમને સિદ્ધ કરું; શીર્ષ્ણો-શિર સંબંધી મગ્ધાય-ધર્માત્માઓના સત્કારના વચનને માટે ત્વા-

તને મૃચાય-પ્રિય આચરણરૂપ વ્યવહાર સંબંધી ત્વા-તને સિદ્ધ કરું; શીર્ષ્ણો-ઉત્તમ ગુણોના પ્રચારક વચનને માટે તથા મૃચાય-શિલ્પ યજ્ઞના વિધાનને માટે ત્વા-તને, તથા મૃચસ્ય-સત્ય આચરણ રૂપ વ્યવહાર સંબંધી ત્વા-તને સિદ્ધ કરું; શીર્ષ્ણો-ઉત્તમ મૃચાય-વિજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરવા માટે ત્વા-તને, મૃચસ્ય-વિદ્યા અને બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરનાર વ્યવહારને માટે ત્વા-તને સિદ્ધ કરું; તેમ તમે ઓજસ્વી = પરાક્રમી સ્થ-બનો. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત કર્મ કરે છે, તેઓ સર્વના શિરોમણિ બને છે. (૬)

પ્રૈતુ બ્રહ્મણસ્પતિઃ પ્ર દેવ્યેતુ સૂનૃતાં । અચ્છાં વીરં નયીં પઙ્ક્તિરાધસંદેવા યજ્ઞં
નયન્તુ નઃ । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો
મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે વીરમ્-સર્વ દુઃખોને દૂર કરનારા નર્યમ્-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ, પંક્તિરાધસમ્-પંક્તિ = સમુદાયને સિદ્ધ કરનારા, યજ્ઞમ્-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞને દેવાઃ-વિદ્વાન લોકો નઃ-અમને નયન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે; બ્રહ્મણઃ, પતિઃ-ધનના રક્ષક જન પ્ર, એતુ-પ્રાપ્ત કરે; સૂનૃતા-સત્ય ભાષણ આદિ સુશીલતાથી યુક્ત દેવી-વિદુષી સ્ત્રી અચ્છ + પ્ર + એતુ-સારી રીતે તે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે; તે ત્વા-તને મૃચાય-વિદ્યા વૃદ્ધિને માટે મૃચસ્ય-સુખની રક્ષાના શીર્ષ્ણો-ઉત્તમ અવયવને માટે ત્વા-તને, મૃચાય-ધર્મ રક્ષાને માટે ત્વા-તને મૃચસ્ય-ધર્મ રક્ષાને માટે શીર્ષ્ણો-શિર સમાન હોવા માટે ત્વા-તને, મૃચાય-સુખવર્ધક પુરુષને માટે ત્વા-તને મૃચસ્ય-સુખવર્ધક પુરુષને શીર્ષ્ણો-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરવા માટે ત્વા-તને અમે આશ્રિત કરીએ છીએ; તારો આશ્રય કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અને જે સ્ત્રીઓ સ્વયં વિદ્યા આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવીને વિદ્યા, સુખ અને ધર્મની વૃદ્ધિ માટે અધિક જનોને સુશિક્ષિત વિદ્વાન બનાવે છે, તે પુરુષ અને સ્ત્રીઓ સદા આનંદિત રહે છે. (૭)

મૃચસ્ય શિરોઽસિ મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મૃચસ્ય શિરોઽસિ મૃચાય
ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મૃચસ્ય શિરોઽસિ મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ।
મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો । મૃચાય ત્વા
મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણો ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્-વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ મૃચસ્ય-બ્રહ્મચર્ય નામક યજ્ઞના શિરઃ-શિરની સમાન અસિ-છો; તેથી મૃચાય-વિદ્યાગ્રહણરૂપ અનુષ્ઠાનને માટે ત્વા-આપને; તથા મૃચસ્ય-જ્ઞાન સંબંધી શીર્ષ્ણો-ઉત્તમ વ્યવહારને માટે ત્વા-આપનું સેવન કરીએ છીએ.

જે કારણે આપ મૃચસ્ય-વિચારરૂપ યજ્ઞના શિરઃ-ઉત્તમાંગ સમાન અસિ-છો; તેથી મૃચાય-ગૃહસ્થોના

વ્યવહારને માટે ત્વા-આપને; મૃગસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષો-ઉત્તમાંગને માટે ત્વા-આપનું સેવન કરીએ છીએ.

જે કારણે આપ મૃગસ્ય-ઘરના (= ગૃહાશ્રમના) શિરઃ-શિર સમાન અસિ-છો; તેથી મૃગાય-ગૃહસ્થના કાર્યોની સંગતિને માટે ત્વા-આપને; મૃગસ્ય-યજ્ઞના અર્થાત્ જ્ઞાનના શીર્ષો-ઉત્તમ વ્યવહારને માટે ત્વા-આપનું અમે સેવન કરીએ છીએ.

તેથી - મૃગાય-શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર માટે ત્વા-આપને, તથા મૃગસ્ય-શ્રેષ્ઠ - સદ્ વ્યવહારની સિદ્ધિ સંબંધી શીર્ષો-ઉત્તમાંગ સમાન થવા માટે ત્વા-આપને; મૃગાય-યોગાભ્યાસને માટે ત્વા-આપને; મૃગસ્ય-સાંગોપાંગ યોગના શીર્ષો-સર્વોપરિ વર્તમાન વિષયને માટે ત્વા-આપને; મૃગાય-ઐશ્વર્ય પ્રદાતાને માટે ત્વા-આપને; મૃગસ્ય-ઐશ્વર્ય પ્રદાતાના શીર્ષો-સર્વોત્તમ કાર્યને માટે ત્વા-આપનું અમે સેવન કરીએ છીએ; આપની અમે સેવા કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે લોકો શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં ઉત્તમ છે, તેઓ અન્યોને પણ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનારા બનાવીને મસ્તક સમાન ઉત્તમ અંગોવાળા બને છે. (૮)

અશ્વસ્ય ત્વા વૃષ્ણઃ શક્ના ધૂપયામિ દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ । મૃગાય ત્વા મૃગસ્ય ત્વા શીર્ષો । અશ્વસ્ય ત્વા વૃષ્ણઃ શક્ના ધૂપયામિ દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ । મૃગાય ત્વા મૃગસ્ય ત્વા શીર્ષો । અશ્વસ્ય ત્વા વૃષ્ણઃ શક્ના ધૂપયામિ દેવયજ્ઞે પૃથિવ્યાઃ । મૃગાય ત્વા મૃગસ્ય ત્વા શીર્ષો । મૃગાય ત્વા મૃગસ્ય ત્વા શીર્ષો । મૃગાય ત્વા મૃગસ્ય ત્વા શીર્ષો ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ હું પૃથિવ્યા-અન્તરિક્ષ સંબંધી દેવયજ્ઞે-વિદ્વાનોનાં યજ્ઞ સ્થાનમાં વૃષ્ણઃ-બલવાન અશ્વસ્ય-અગ્નિ આદિના શક્ના-દુર્ગધ આદિ નિવારણમાં સમર્થ ધૂમ આદિથી ત્વા-તને; મૃગાય-વાયુની શુદ્ધિ કરવા માટે ત્વા-તને; મૃગસ્ય-શોધક પુરુષના શીર્ષો-શિરના રોગની નિવૃત્તિ માટે ત્વા-તને ધૂપયામિ-ધૂપિત કરું છું, સમ્યક્ તપાવું છું.

પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિ સંબંધી દેવયજ્ઞે-વિદ્વાનોનાં યજ્ઞ સ્થાનમાં વૃષ્ણઃ-બળવાન અશ્વસ્ય-ઘોડાની શક્ના-શકૃત = લાદથી - મલથી ત્વા-તને; મૃગાય-પૃથિવી આદિના વિજ્ઞાનને માટે ત્વા-તને; મૃગસ્ય-તત્ત્વબોધના શીર્ષો-શિરની સમાન બનવા માટે ત્વા-તને મૃગાય-યજ્ઞની સિદ્ધિને માટે ત્વા-તને મૃગસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષો-ઉત્તમ અવયવની સિદ્ધિને માટે ત્વા-તને ધૂપયામિ-ધૂપિત કરું છું, - તપાવું છું.

પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિ સંબંધી દેવયજ્ઞે-વિદ્વાનોનાં પૂજન સ્થાનમાં વૃષ્ણઃ-બળવાન અશ્વસ્ય-શીઘ્રગામી અગ્નિનાં શક્ના-તેજ આદિથી ત્વા-તને મૃગાય-ઉપયોગને માટે ત્વા-તને; મૃગાય-ઉપયુક્ત કાર્યના શીર્ષો-શિર = ઉત્તમ અવયવ માટે ત્વા-તને; મૃગાય-યજ્ઞને માટે ત્વા-તને; મૃગસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષો-ઉત્તમ અવયવને માટે ત્વા-તને; મૃગાય-યજ્ઞને માટે ત્વા-તને તથા મૃગસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષો-ઉત્તમ અવયવને માટે ત્વા-તને ધૂપયામિ-ધૂપિત કરું છું અર્થાત્ તપાવું છું; તેમ તું પણ ધૂપિત કર, તપાવ. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો રોગ આદિ ક્લેશોની નિવૃત્તિ માટે અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો સારી રીતે પ્રયોગ કરે છે, તેઓ સુખી રહે છે. (૯)

ઋજવે ત્વા સાધવે ત્વા સુક્ષિત્યૈ ત્વા । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણે । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણે । મૃચાય ત્વા મૃચસ્ય ત્વા શીર્ષ્ણે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ઋજવે-સરળ સ્વભાવવાળા ત્વા-આપને; મૃચાય-વિદ્વાનોના સત્કાર માટે ત્વા-આપને; મૃચસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષ્ણે-ઉત્તમ અવયવ માટે ત્વા-આપને; સાધવે-પરોપકારના સાધક બનવા માટે ત્વા-આપને; મૃચાય-યજ્ઞને માટે ત્વા-આપને; મૃચસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષ્ણે-શિરને માટે ત્વા-આપને; સુક્ષિત્યૈ-ઉત્તમ ભૂમિને માટે ત્વા-આપને; મૃચાય-યજ્ઞને માટે ત્વા-આપને; મૃચસ્ય-યજ્ઞના શીર્ષ્ણે-શિરને માટે ત્વા-આપને અમે સ્થાપિત કરીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિનય અને સાધુતા - સરળતાથી યુક્ત રહીને સર્વોપકારક નામક યજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે; તેઓ મહાન રાજ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

યમાય ત્વા મૃચાય ત્વા સૂર્યસ્ય ત્વા તપસે । દેવસ્ત્વા સવિતા મધ્વાનક્તુ પૃથિવ્યાઃ સ્પૃશ્ણ સ્પૃશ્ણાસ્પાહિ । અર્ચિરસિ શોચિરસિ તપૌઽસિ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! સવિતા-ઐશ્વર્યનો ઉત્પાદક દેવ:-દાતા જન મૃચાય-ન્યાયાચરણને માટે યમાય-નિયમને માટે ત્વા-આપને; તથા સૂર્યસ્ય-પ્રેરક ઈશ્વરના તપસે-ધર્મના અનુષ્ઠાનને માટે ત્વા-આપને ગ્રહણ કરીએ છીએ; પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિના ત્વા-આપને મધ્વા-મધુર ગુણથી અનક્તુ-સંયુક્ત કરીએ છીએ; તે આપ સંસ્પૃશ્ણ:-દુઃખના સ્પર્શથી પાહિ-રક્ષા કરો.

જે કારણે આપ અર્ચિ:-તેજસ્વી અસિ-છો; શોચિ:-તેજ સમાન પવિત્ર અસિ-છો; તપ:-ધર્મમાં શ્રમ કરનારા અસિ-છો; તેથી ત્વા-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો ન્યાયવ્યવહારથી પ્રકાશિત કીર્તિવાળા હોય છે, તેઓ દુઃખના સ્પર્શથી પૃથક્ રહીને તેજસ્વી બને છે અને દુષ્ટજનોને પરિતપ્ત કરીને શ્રેષ્ઠોને સુખી કરે છે. (૧૧)

અનાધૃષ્ટા પુરસ્તાદ્ગ્નેરાધિપત્ય્ઽઆયુર્મે દાઃ । પુત્રવતી દક્ષિણત્ઽન્દ્રસ્યાધિપત્યે પ્રજાં મે દાઃ । સુષદા પશ્ચાદ્દેવસ્ય સવિતુરાધિપત્યે ચક્ષુર્મે દાઃ । આશ્રુતિરુત્તરતો ધાતુરાધિપત્યે રાયસ્પોષં મે દાઃ । વિદ્યુતિરુપરિષ્ટાદ્ બૃહસ્પતેરાધિપત્ય્ઽઓર્જો મે દાઃ વિશ્વાભ્યો મા નાષ્ટ્રાભ્યસ્પાહિ મનોરશ્વાસિ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું અનાધૃષ્ટા-અન્યોથી ન ધમકાવેલી પુરસ્તાત્-પૂર્વદેશથી અગ્ને:-અગ્નિના આધિપત્યે-

સ્વામીત્વમાં મે-મારા માટે આયુઃ-જીવન પ્રદાન કરનાર અન્ન દાઃ-આપ.

પુત્રવતી-પ્રશંસિત પુત્રોવાળી બનીને, દક્ષિણતઃ-દક્ષિણ દેશથી ઇન્દ્રસ્ય-વિદ્યુત્ વા સૂર્યના આધિપત્યે-સ્વામીત્વમાં મે-મારા માટે પ્રજામ્-પ્રજા - સંતાન દાઃ-આપ.

સુષદા-ઉત્તમ સભાની સમાન બનીને પશ્ચાત્-પશ્ચિમ દેશથી સવિતુઃ-સૂર્યમંડળના દેવસ્ય-પ્રકાશમાન આધિપત્યે-સ્વામીત્વમાં મે-મારા માટે ચક્ષુઃ-નેત્ર દાઃ-આપ.

આશ્રુતિઃ-સર્વત્રથી શ્રવણ કરનારી બનીને ઉત્તરતઃ-ઉત્તર દેશથી ધાતુઃ-ધારણકર્તા વાયુના આધિપત્યે-સ્વામીત્વમાં મે-મારા માટે રાયઃ-ધનની પોષમ્-પુષ્ટિ દાઃ-કર.

વિદ્યુતિઃ-વિવિધ ધારણ શક્તિવાળી બનીને ઉપરિષ્ટાત્-ઉર્ધ્વ દેશથી બૃહસ્પતેઃ-મોટા મોટા પદાર્થોના રક્ષક-પાલક સૂત્રાત્માના આધિપત્યે-સ્વામીત્વમાં મે-મારા માટે ઓજઃ-બળ દાઃ-આપ.

કારણ કે તું મનોઃ-મનનશીલ અન્તઃકરણને અશ્વા-વ્યાપ્ત કરનારી અસિ-છો; તેથી વિશ્વાભ્યઃ-સર્વ નાષ્ટ્રાભ્યઃ-નષ્ટ-ભ્રષ્ટ સ્વભાવવાળી વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓથી મા-મારી પાહિ-રક્ષા કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ જીવનને, જેમ વિદ્યુત પ્રજાને, જેમ સૂર્ય દર્શનને, ધાતા = ઈશ્વર [અથવા વાયુ] લક્ષ્મીને અને મહાશય = ઉદાર હૃદય મનુષ્ય બળ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ ઉત્તમ લક્ષણોવાળી પત્ની સર્વ સુખોને પ્રદાન કરે છે, તેની તમે યથાવત્ રક્ષા કરો. (૧૨)

સ્વાહા મૃદ્ધિઃ પરિ શ્રીયસ્વ દિવઃ સ્પૃશ્પાહિ । મધુ મધુ મધુ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ મર્દ્ધિઃ-મનુષ્યોની સાથે સ્વાહા-સત્ય ક્રિયા, મધુ-કર્મ, મધુ-ઉપાસના અને મધુ-વિજ્ઞાનનું શ્રીયસ્વ-સેવન કરો.

સ્પૃશ્પાહિઃ-સમ્યક્ સ્પર્શ કરનારી, દિવઃ-પ્રકાશરૂપ વિદ્યુત્થી અમારી પરિ + પાહિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેઓ પૂર્ણ વિદ્વાનોની સાથે કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની વિદ્યા તથા ઉત્તમ ક્રિયાને ગ્રહણ કરીને તેનું સેવન કરે છે, તેઓ સર્વત્રથી રક્ષિત બનીને મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

ગર્ભો દેવાનાં પિતા મતીનાં પતિઃ પ્રજાનામ્ ।

સં દેવો દેવેન સવિત્રા ગત્ સઃ સૂર્યેણ રોચતે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવાનામ્-વિદ્વાનો વા પૃથિવી આદિ તેત્રીસ દેવોની ગર્ભઃ-ગર્ભની સમાન અંદર વ્યાપ્ત, મતીનામ્-મનનશીલ મેધાવી મનુષ્યોના પિતા-પિતા સમાન, પ્રજાનામ્-ઉત્પન્ન પદાર્થોના પતિઃ-રક્ષક - સ્વામી દેવઃ-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા છે; તે સવિત્રા-ઉત્પત્તિને માટે દેવેન-વિદ્વાન તથા સૂર્યેણ-પ્રકાશક સૂર્યની સાથે સમ્ + રોચતે-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે, તેને તમે સમ્ + ગત્-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વના ઉત્પાદક પિતા = પિતાની સમાન પાલનકર્તા, સૂર્ય આદિના પણ પ્રકાશક અને સર્વત્ર વ્યાપક જગદીશ્વર છે, તે પૂર્ણ પરમાત્માની આપ લોકો સદા ઉપાસના કરો. (૧૪)

સમગ્નિરગ્નિનાં ગત્ત્વં સં દૈવેન સવિત્રા સઃસૂર્યેણારોચિષ્ટ ।

સ્વાહા સમગ્નિસ્તપ્સા ગત્ત્વં સં દૈવ્યેન સવિત્રા સઃસૂર્યેણારૂરુચત ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિના-સ્વયં પ્રકાશમાન જગદીશ્વર દ્વારા અગ્નિ:-પ્રકાશક અગ્નિ છે; દૈવેન-ઈશ્વરે રચેલ સવિત્રા-પ્રેરક સૂર્યેણ-સૂર્યની સાથે સમ્ + અરોચિષ્ટ-સારી રીતે પ્રકાશિત થાય છે; તે પરમાત્માને તમે સ્વાહા-સત્યાચરણથી સમ્ + ગત્-સમ્યક્ જાણો.

જે અગ્નિ:-પ્રકાશક ઈશ્વર દૈવ્યેન-પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન સવિત્રા-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા સૂર્યેણ-પ્રેરક સૂર્ય તથા તપ્સા-ધર્માનુષ્ઠાનથી સમ્ + અસ્ત્વત-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; તેને તમે સમ્ + ગત્-સારી રીતે જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિના અગ્નિ, સવિતાના સવિતા = પ્રેરકના પ્રેરક, સૂર્યના સૂર્ય એવા પરમાત્માને જાણે છે, તેઓને અભ્યુદય = સંસાર સંબંધી સુખ અને નિઃશ્રેયસ્ = મોક્ષ સંબંધી સુખ સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૫)

ધૃત્તાં દિવો વિ ભાતિ તપ્સસ્પૃથિવ્યાં ધૃત્તાં દેવા દેવાનામમર્ત્યસ્તપોજાઃ ।

વાચમ્સ્મે નિ ચ્ચ દેવાયુર્વમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે પૃથિવ્યામ્-આકાશમાં તપ્સ:-સર્વને તપાવનાર, દિવ:-પ્રકાશમય સૂર્ય આદિને ધૃત્તાં-ધારણ કરનાર છે; જે તપોજાઃ-તપથી પ્રકટ થનાર, અમર્ત્ય:-મરણધર્મથી રહિત, દેવ:-પ્રકાશ સ્વરૂપ દેવાનામ્-પૃથિવી આદિ તેત્રીસ દેવોના ધૃત્તાં - ધારણકર્તા જગદીશ્વર વિ + ભાતિ-વિશેષ કરીને પ્રકાશિત થાય છે; તેના વિજ્ઞાનથી અસ્મે-અમારે માટે દેવાયુર્વમ્-દેવ અર્થાત્ પૃથિવી પદાર્થો, દિવ્યગુણ વા વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરાવવાવાળી વાચમ્-સુશિક્ષિત વાણીને નિ + ચ્ચ-નિરંતર પ્રદાન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે પરમેશ્વર સર્વને ધારણ કરનાર, પ્રકાશક અને તપથી જાણવા યોગ્ય છે, તેની જ્ઞાપક = બતાવનારી વિદ્યા અમને પ્રદાન કરો. (૧૬)

અપ્શ્યં ગોપામનિપદ્યમાનમા ચ્ચ પરાં ચ પૃથિભિશ્ચરન્તમ્ ।

સ સ્ધ્રીચીઃ સ વિષૂચીર્વસાનઽઆ વરીવર્ત્તિ ભુવનેષ્વન્તઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું જે પૃથિભિઃ-શુદ્ધ જ્ઞાનના માર્ગોથી આ + ચરન્તમ્, પરાં + ચરન્તમ્-અહીં-

વિજ્ઞાનને માટે ત્વા-આપનું અમે ધ્યાન કરીએ છીએ; તે ઋર્ધ્વઃ-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ આપ દિવિ-દિવ્ય - ઉત્તમ વ્યવહારમાં તથા દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં અધ્વરમ્-અહિંસામય યજ્ઞનો ધેહિ-પ્રચાર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાવથી આત્મા અને અન્તઃકરણની શુદ્ધિ માટે તથા સૃષ્ટિવિદ્યાને માટે ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓના તે કૃપાળુ ઈશ્વર વિદ્યા અને ધર્મના દાનથી સર્વ દુઃખોથી ઉદ્ધાર કરે છે. (૧૯)

પિતા નોઽસિ પિતા નોં બોધિ નમસ્તેઽસ્તુ મા માં હિંસીઃ । ત્વષ્ટમન્તસ્ત્વા સપેમ પુત્રાન્પશૂન્ મયિં ધેહિ પ્રજામસ્માસુ ધેહારિષ્ટાહસહપત્યા ભૂયાસમ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર આપ નઃ-અમારા પિતા-પિતાની સમાન અસિ-છો; આપ પિતા-રાજાની સમાન રક્ષક બનીને નઃ-અમને બોધિ-બોધ કરાવો.

તે-આપને માટે નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-છે; આપ મા-મને મા, હિંસીઃ-હિંસાથી યુક્ત ન કરો.

ત્વષ્ટમન્તઃ-બહુ જ સ્વચ્છ પ્રકાશરૂપ પદાર્થોવાળા અમે ત્વા-આપનાથી સપેમ-સંબંધ સ્થાપિત કરીએ.

આપ પુત્રાન્-પવિત્ર ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા સંતાનોને તથા પશૂન્-ગાય પશુઓને મયિ-મારામાં ધેહિ-સ્થાપિત - ધારણ કરો, અસ્માસુ-અમારામાં પ્રજામ્-પ્રજાને ધેહિ-સ્થાપિત કરો, જેથી અહમ્-હું અરિષ્ટા-અહિંસિત બનીને સહપત્યા-પતિની સાથે ભૂયાસમ્-રહું. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ અમારા પિતા અર્થાત્ સ્વામી, બંધુ, મિત્ર અને રક્ષક છો, તેથી અમે આપની નિરંતર ઉપાસના કરીએ છીએ.

હે સ્ત્રીઓ ! તમે પરમાત્માની નિત્ય ઉપાસના કરો, જેથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરો. (૨૦)

અહઃ કેતુનાં જુષતાશ્ચ સુજ્યોતિર્જ્યોતિષા સ્વાહા ।

રાત્રિઃ કેતુનાં જુષતાશ્ચ સુજ્યોતિર્જ્યોતિષા સ્વાહા ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા વિદુષી સ્ત્રી ! આપ સ્વાહા-સત્ય આચરણથી, કેતુના-ઉત્કૃષ્ટ જ્ઞાન અને જાગૃત અવસ્થાથી, તથા જ્યોતિષા-સૂર્ય આદિના વા તડકા આદિના પ્રકાશથી અહઃ-પ્રતિદિન સુજ્યોતિઃ-વિદ્યાનું જુષતામ્-સેવન કરો.

સ્વાહા-સત્ય વાણી, કેતુના-પ્રજ્ઞા વા કર્મ તથા જ્યોતિષા-પ્રકાશની સાથે સુજ્યોતિઃ-વિદ્યા પ્રકાશને રાત્રિઃ-પ્રત્યેક રાત્રિ અમને જુષતામ્-સેવન કરાવે; વિદ્યા પ્રકાશ પ્રદાન કરે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષ દિવસે સૂવાનું અને રાત્રે અતિ જાગવું. આ બન્નેનો ત્યાગ કરીને, ઉચિત આહાર-વિહાર વાળા બનીને ઈશ્વરની ઉપાસનામાં તત્પર રહે, તો તેને દિવસ અને રાત સુખકારક વસ્તુ પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી જેમ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય, તેમ સર્વ કાર્યો કરવા જોઈએ. (૨૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર (૧), યોગી (૨), સૂર્ય અને પૃથિવી (૩), યજ્ઞ (૬-૧૦), સન્માર્ગ (૧૭), સ્ત્રી અને પતિ તથા પિતા સમાન વર્તમાન (૨૦), પરમેશ્વર (૨૧) તથા

યુક્ત આહાર-વિહારનાં અનુષ્ઠાન (૨૧)નો ઉપદેશ છે, તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વના અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ સપ્તત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથાષ્ટાત્રિંશોઽધ્યાય આરમ્ભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ । યદ્ ભદ્રં તન્ન આસુવ ॥

દેવસ્ય ત્વા સવિતુઃ પ્રસવ્વેઽશ્વિનોર્બાહુભ્યાં પૂષ્ણો હસ્તાભ્યામ્ । આ દદેઽદિત્યૈ
રાસ્નાઽસિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! જે કારણે તું અદિત્યૈ-નાશરહિત નીતિને માટે રાસ્ના-દાનશીલ અર્થાત્ સુખદાત્રી અસિ-છે; તેથી સવિતુઃ-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક દેવસ્ય-કામના કરવા યોગ્ય પરમેશ્વરના પ્રસવે-ઉત્પન્ન થનાર જગતમાં અશ્વિનોઃ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના બાહુભ્યામ્-બળ અને વીર્ય-પરાક્રમની સમાન ભુજાઓથી, પૂષ્ણઃ-પોષક વાયુના હસ્તાભ્યામ્-ગતિ અને ધારણ શક્તિની સમાન હાથોથી ત્વા-તને આ, દદે-ગ્રહણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ સૂર્ય ભૂગોળોને, પ્રાણ શરીરને તથા અધ્યાપક અને ઉપદેશકો સત્યને ગ્રહણ કરે છે, તેમ જ હું તને ગ્રહણ કરું છું. તું નિરંતર અનુકૂળ અને સુખ આપનારી બન. (૧)

इङ्ङएह्यदित्तएहि सरस्वत्येहि । असावेह्यसावेह्यसावेहि ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે ઙ્ઙ-સુશુક્ષિત વાણીની સમાન સ્ત્રી ! તું મને એહિ-પ્રાપ્ત થા; જે અસૌ-પુરુષ તને પ્રાપ્ત થાય, તેને તું એહિ-પ્રાપ્ત થા.

હે અદિતે-અખંડિત આનંદ આપનારી સ્ત્રી ! તું અખંડિત આનંદને એહિ-પ્રાપ્ત કર. જે અસૌ-પુરુષ તને અખંડિત આનંદ આપે, તેને તું એહિ-પ્રાપ્ત થા.

હે સરસ્વતિ-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી ! તું વિદ્વાનને એહિ-પ્રાપ્ત કર, જે અસૌ-એ પુરુષ ઉત્તમ શિક્ષક-સુશિક્ષિત હોય, તેને તું એહિ-પ્રાપ્ત કર. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રી-પુરુષ વિવાહ કરવાની ઈચ્છા કરે, ત્યારે બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા દ્વારા સ્ત્રી-પુરુષ અને ધર્માચરણને જાણીને જ કરે. (૨)

अदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः । पूषासि घर्माय दीष्व ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! જે તું અદિત્યૈ-નિત્ય વિજ્ઞાનને રાસ્ના-આપનારી અસિ-છે; ઉષ્ણીષઃ-શિરોવેષ્ટન = પાઘડી આદિની સમાન સુખદાયક છે; તથા ઙ્ઙ્ઙાણ્યૈ-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારી રાજનીતિને માટે પૂષા-ભૂમિની સમાન પોષિકા અસિ-છે; તે તું ઘર્માય-પ્રસિદ્ધ-અપ્રસિદ્ધ સુખદાયક યજ્ઞને માટે દીષ્વ-દાન કર. (૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ પાઘડી આદિ વસ્ત્ર સુખદાયક હોય છે, તેમ તું અપત્ય = સંતાનને સુખ પ્રદાન કર. (૩)

અશ્વિભ્યાં પિન્વસ્વ સરસ્વત્યૈ પિન્વસ્વેન્દ્રાય પિન્વસ્વ ।

સ્વાહેન્દ્રવત્સ્વાહેન્દ્રવત્સ્વાહેન્દ્રવત્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! તું ઇન્દ્રવત્-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વસ્તુને ગ્રહણ કરીને સ્વાહા-સત્ય આચરણથી અશ્વિભ્યામ્-સૂર્ય અને ચંદ્રમાને માટે પિન્વસ્વ-તૃપ્ત થા.

ઇન્દ્રવત્-ચેતન આત્માના ગુણોથી યુક્ત શરીરને પ્રાપ્ત કરીને સ્વાહા-સત્યવાણીથી સરસ્વત્યૈ-સુશિક્ષિત વાણીને માટે પિન્વસ્વ-તૃપ્ત થા.

ઇન્દ્રવત્-વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે પિન્વસ્વ-તૃપ્ત થા. (૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો વિદ્યુત્ આદિ વિદ્યા દ્વારા ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે છે; તેઓ સુખને પણ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

યસ્તે સ્તનઃ શશયો યો મયોભૂર્યો રત્નધા વસુવિદ્યઃ સુદત્રઃ । યેન વિશ્વા પુષ્યસિ વાર્યાણિ સરસ્વતિ તમિહ ધાતવેઽકઃ । ઉર્વન્તરિક્ષમન્વૈમિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સરસ્વતિ-બહુજ વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી ! યઃ-જે તે-તારા શશયઃ-જેનો આશ્રય કરીને બાળક સૂવે છે; તે સ્તનઃ-પયોધર = દૂધના આધાર સ્તન છે, તથા યઃ-જે મયોભૂઃ-મય = સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, યઃ-જે રત્નધાઃ-રત્નોને ધારણ કરનાર, વસુવિદ્યઃ-ધનને પ્રાપ્ત થનાર યઃ-જે સુદત્રઃ-ઉત્તમ દાનદાતા પતિ છે; યેન-જેના આશ્રયથી વિશ્વા-સર્વ વાર્યાણિ-વરણ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય બાળકોને પુષ્યસિ-પુષ્ટ કરે છે; તમ્-તે પતિને ઇહ-આ સંસારમાં વા ઘરમાં ધાતવે-ધારણ કરવાને માટે વા દૂધ પીવડાવવાને નિયત અકઃ-કર. તેથી હું ઊરુ-બહુ જ વિસ્તૃત અન્તરિક્ષમ્-આકાશનો અન્વૈમિ-અનુગામી બનું. (૫)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ન હોય તો બાળકોનું પાલન થઈ શકતું નથી. જે સ્ત્રીથી પુરુષ અધિક સુખ અને જે પુરુષથી સ્ત્રી અધિકતર સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે, તે બન્ને પરસ્પર વિવાહ કરે. (૫)

ગાયત્રં છન્દોઽસિ ત્રૈષ્ટુભં છન્દોઽસિ દ્યાવાપૃથિવીભ્યાન્ત્વા પરિ

ગૃહ્ણામ્યન્ત-રિક્ષેણોપ યચ્છામિ । ઇન્દ્રાશ્વિના મધુનઃ સારઘસ્ય ઘર્મ પાત વસવો

યજત વાટ્ । સ્વાહા સૂર્યસ્ય રશ્મયૈ વૃષ્ટિવનયે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્ય યુક્ત પુરુષ ! જેમ આપ ગાયત્રમ્-ગાયત્રી છંદથી પ્રકાશિત છન્દઃ-સ્વતંત્ર આનંદકારક અર્થની સમાન હૃદયને પ્રિય સ્ત્રીને પ્રાપ્ત કરી ચૂક્યા અસિ-છો; ત્રૈષ્ટુભમ્-ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી વ્યાખ્યાન છન્દઃ-સ્વતંત્ર અર્થ માત્રની સમાન પ્રશંસિત પત્નીને પ્રાપ્ત કરી ચૂક્યા અસિ-છો; તેમ હું ત્વા-તમને જોઈને દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-સૂર્ય અને ભૂમિથી અતિ શોભાયમાન પ્રિયા સ્ત્રીને સ્વીકાર કરું છું; પરિ-ગૃહ્ણામિ-સર્વત્રથી અન્તરિક્ષેણ-હાથમાં જળ = આચમનની સાથે પ્રતિજ્ઞા કરેલી સ્ત્રીને ઉપ +

યચ્છામિ-શ્રીત્વની સાથે ગ્રહણ કરું છું.

હે અશ્વિના-પ્રાણ અને અપાનની સમાન કાર્ય-સાધક સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને પણ તેમ જ વર્તાવ કરો.

હે વસવઃ-પૃથિવી આદિ વસ્તુઓની સમાન પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાનો ! તમે સ્વાહા-સત્ય ક્રિયાથી મધુનઃ, સારથસ્ય-સરથા = મધ માખીઓએ બનાવેલ મધુરાદિ ગુણયુક્ત મધ અને ધર્મમ્-સુખવર્ધક યજ્ઞની પાત-રક્ષા કરો. સૂર્યસ્ય-સૂર્યના વૃષ્ટિવનયે-વર્ષાનો વિભાગ કરનારા રશ્મયે-કિરણોની શુદ્ધિને માટે વાદ્ સારી રીતે યજત-યજ્ઞ કરો; વિદ્વાનોનો સંગ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ શબ્દોના અર્થોની સાથે વાચ્ય-વાચક સંબંધ છે, સૂર્યની સાથે પૃથિવીનો, કિરણોની સાથે વર્ષાનો યજ્ઞની સાથે યજ્ઞમાનનો અને ઋત્વિકની સાથે પણ યજ્ઞમાનનો સંબંધ છે, તેમ જ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષોનો સંબંધ રહે. (૬)

સમુદ્રાય ત્વા વાતાય સ્વાહા । સરિરાય ત્વા વાતાય સ્વાહા ।

અનાધૃષ્ઠાય ત્વા વાતાય સ્વાહા । અપ્રતિધૃષ્ઠાય ત્વા વાતાય સ્વાહા । અવસ્યવે

ત્વા વાતાય સ્વાહા । અશિમિદાય ત્વા વાતાય સ્વાહા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! હું સ્વાહા-સત્ય વાણી વા સત્યક્રિયાથી સમુદ્રાય-અન્તરિક્ષમાં ગમન માટે તથા વાતાય-વાયુ વિદ્યા વા વાયુની શુદ્ધિને માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્ય વાણી વા ક્રિયાથી સરિરાય-જલની શુદ્ધિને માટે તથા વાતાય-ઘરના વાયુની શુદ્ધિને માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અનાધૃષ્ઠાય-ભય અને ધર્ષણથી રહિત બનવા માટે તથા વાતાય-ઔષધિના વાયુ વિજ્ઞાનને માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અપ્રતિધૃષ્ઠાય-અધર્ષણને યોગ્યજનો પ્રત્યે વર્તાવને માટે તથા વાતાય-વાયુના વેગ અને ગતિને જાણવા માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અવસ્યવે-આત્મા અને મનની રક્ષાના ઈચ્છુકને માટે તથા વાતાય-પ્રાણ શક્તિને વિશેષ જાણવા માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અશિમિદાય-ભોગ્ય સ્નિગ્ધ અન્ન તથા રસને માટે અને વાતાય-ઉદાન વાયુને માટે ત્વા-તને સમીપથી ગ્રહણ વા સ્વીકાર કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષોએ સૃષ્ટિ વિદ્યાની ઉન્નતિ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૭)

ઇન્દ્રાય ત્વા વસુમતે રુદ્રવતે સ્વાહેન્દ્રાય ત્વાદિત્યવતે સ્વાહેન્દ્રાય ત્વાભિમાતિઘ્ને
સ્વાહા । સવિત્રે ત્વઽઋભુમતે વિભુમતે વાજવતે સ્વાહા બૃહસ્પતયે ત્વા વિશ્વદેવ્યાવતે
સ્વાહા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! હું સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી વસુમતે-બહુજ ધનથી યુક્ત તથા ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યવાન સંતાનને માટે ત્વા-તને; સ્ત્રી વા પુરુષને સ્વાહા-ઉત્તમ ક્રિયાથી આદિત્યવતે-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત પાંડિત્યથી યુક્ત, સ્દ્રવતે-બહુજ સ્દ્ર =પ્રાણોના બળવાળા ઇન્દ્રાય-દુઃખનાશક સંતાનને માટે ત્વા-તને;

સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અભિમાતિઘ્ને-શત્રુઓને મારનાર ઇન્દ્રાય-ઉત્તમ ઐશ્વર્યના દાતા સંતાનને માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી સવિત્રે-સૂર્ય વિદ્યાના જ્ઞાતા, ઋષ્મુમતે-અનેક મેધાવી = બુદ્ધિમાનોથી યુક્ત, વિભુમતે-આકાશ આદિ અનેક પદાર્થોના જ્ઞાતા, વાજવતે -પુષ્કળ અન્નથી યુક્ત સંતાનને માટે ત્વા-તને; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી બૃહસ્પતયે-મહાન વેદરૂપ વાણીના રક્ષક તથા વિશ્વદેવ્યાવતે-સમસ્ત વિદ્વાનોનાં હિતકારી પદાર્થોવાળા સંતાનને માટે ત્વા-તને ગ્રહણ કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પૃથિવી આદિ વસુઓ અને ચૈત્ર આદિ આદિત્યો = મહિનાઓનાં ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે; તેઓ વિદ્વાનોનો નાશ કરીને, બુદ્ધિમાન સંતાનોને પ્રાપ્ત કરીને, સર્વની રક્ષા કરી શકે છે. (૮)

યમાય ત્વાઙ્ગિરસ્વતે પિતૃમતે સ્વાહા । સ્વાહા ઘર્માય । સ્વાહા ઘર્મઃ પિત્રે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! ઘર્મઃ-યજ્ઞ સ્વરૂપ હું સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી અઙ્ગિરસ્વતે-વિદ્યુત્ આદિ વિદ્યા જાણનારા યમાય-ન્યાયાધીશને માટે, પિતૃમતે-રક્ષક જ્ઞાનીજનોથી યુક્ત સંતાનને માટે; સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી ઘર્માય-યજ્ઞને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી વા ક્રિયાના પિત્રે-રક્ષક = પાલક પિતાને માટે ત્વા-તમને સ્વીકાર કરતી/કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પ્રાણની સમાન ન્યાય, જનક-પિતરો તથા વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ બન્ને યજ્ઞની સમાન સર્વને સુખકારી બને છે. (૯)

વિશ્વાઽઆશા દક્ષિણસદ્વિશ્વાન્દેવાનયાઙ્ગિહ ।

સ્વાહાકૃતસ્ય ઘર્મસ્ય મધોઃ પિબતમશ્વિના ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ તમે બન્ને ઙ્ગિહ-આ સંસારમાં સ્વાહાકૃતસ્ય-સત્યક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ ઘર્મસ્ય-મધોઃ-મધુર આદિ ગુણયુક્ત યજ્ઞના અવશિષ્ટ ભાગનું પિબતમ્-પાન કરો છો; તેમ આ દક્ષિણસત્-વેદીની દક્ષિણ દિશામાં બેસનારા આચાર્ય = બ્રહ્મા વિશ્વાઃ-સર્વ આશાઃ-દિશાઓ તથા વિશ્વાન્-સમસ્ત દેવાન્-શુભ ગુણો વા વિદ્વાનોના અયાટ્-સંગ કરો વા તેઓની સેવા-પૂજન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો શિક્ષા આપે અને ભણાવે, તેમ જ સર્વ લોકો ગ્રહણ કરે. (૧૦)

દિવિ ધા ઙ્ગમં યજ્ઞમિમં યજ્ઞં દિવિ ધાઃ ।

સ્વાહાઽગ્નયૈ યજ્ઞિયાય શં યજુર્ભ્યઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! તું યજુર્ભ્યઃ-યજ્ઞ કરાવનાર વા યજુર્વેદના વિભાગોથી સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી અગ્નયૈ-અગ્નિ તથા યજ્ઞિયાય-યજ્ઞને યોગ્ય પુરુષને માટે દિવિ-સૂર્ય આદિના પ્રકાશમાં ઙ્ગમ્-આ યજ્ઞમ્-સંગ કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના ઉપયોગી યજ્ઞને શમ્-સુખપૂર્વક ધાઃ-ધારણ કર.

દિવિ-વિજ્ઞાનના પ્રકાશમાં ઇમમ્-આ પરમાર્થમાં સાધક સંન્યાસ આશ્રમમાં ઉપયોગી યજ્ઞમ્-વિદ્વાનોના સંગરૂપ યજ્ઞને સુખપૂર્વક ધ્યા:-ધારણ કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમગ્ર વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, વેદરીતિથી કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ અતુલ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

અશ્વિના ઘર્મ પાત્ઃ હાદ્વાનમહર્દિવાભિરૂતિભિઃ ।

તન્નાયિણે નમો દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સુશિક્ષિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને - અહ:-પ્રતિદિન દિવાભિ:-દિવસ રાત વર્તમાન રહેનારી ઋતિભિ:-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી તન્નાયિણે-શિલ્પ વિદ્યાના શાસ્ત્રોને જાણવા વા પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાનને માટે હાદ્વાનમ્-હૃદયને પ્રાપ્ત થયેલ જ્ઞાન સંબંધી ઘર્મમ્-યજ્ઞની પાતમ્-રક્ષા કરો. દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-સૂર્ય અને અન્તરિક્ષ સંબંધી શિલ્પ શાસ્ત્રજ્ઞ પુરુષને માટે નમઃ-અન્ન આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ભૂમિ અને સૂર્ય સદા પરસ્પર ઉપકારી બનીને સાથે રહે છે, તેમ સૌંદાર્ય = મિત્ર ભાવથી સ્ત્રી-પુરુષ નિરંતર વર્તાવ કરે. (૧૨)

અપાતામશ્વિના ઘર્મમનુ દ્યાવાપૃથિવી અમંસાતામ્ । ઙ્ઙૈવ રાતયઃ સન્તુ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સુરીતિથી વર્તાવ કરનારા સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને વાયુ અને વિદ્યુત્ની સમાન ઘર્મમ્-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના અનુષ્ઠાનની આપાતામ્-રક્ષા કરો. દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિની સમાન ઘર્મમ્-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના અનુષ્ઠાનનો અનુ+અમંસાતામ્-અનુકૂળતાપૂર્વક સ્વીકાર કરો. જેથી ઙ્ઙ-આ ગૃહાશ્રમમાં રાતયઃ-વિદ્યા આદિ સુખોનું દાન એ જ સન્તુ-થાય. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અને વિદ્યુત્, ભૂમિ અને સૂર્ય સાથે રહીને સુખ આપે છે, તેમ જ સ્ત્રી-પુરુષ પ્રીતિપૂર્વક રહીને સર્વને અતુલ સુખ આપે. (૧૩)

ઙ્ઙે પિન્વસ્વોર્જે પિન્વસ્વ બ્રહ્મણે પિન્વસ્વ ક્ષત્રાય પિન્વસ્વ

દ્યાવાપૃથિવીભ્યાં પિન્વસ્વ । ધર્માસિ સુધર્મામૈન્યસ્મે નૃમ્ણાનિ ધારય બ્રહ્મ ધારય

ક્ષત્રં ધારય વિશં ધારય ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે ધર્મ-સત્યના ધારક સુધર્મ-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત પુરુષ વા સ્ત્રી ! તું અમેનિ-હિંસાથી રહિત અસિ-છે; જેથી અસ્મે-અમારે માટે નૃમ્ણાનિ-ધનોને ધારય-ધારણ કર; બ્રહ્મ-વેદ વા બ્રાહ્મણને ધારય-ધારણ કર; ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિય વા રાજ્યને ધારય-ધારણ કર; વિશમ્-પ્રજાને ધારય-ધારણ કર. તેથી ઙ્ઙે-અન્ન આદિને માટે પિન્વસ્વ-સેવન કર; ઋર્જે-બળ આદિને માટે પિન્વસ્વ-સેવન કર, બ્રહ્મણે-વેદવિજ્ઞાન, પરમેશ્વર વા વેદજ્ઞ બ્રાહ્મણને માટે પિન્વસ્વ-સેવન કર, ક્ષત્રાય-રાજ્યને માટે પિન્વસ્વ-સેવન કર અને દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-ભૂમિ અને સૂર્યને માટે પિન્વસ્વ-સેવન કર. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો અહિંસક અને ધાર્મિક બનીને સ્વયં ધન, વિદ્યા, રાજ્ય અને પ્રજાને ધારણ કરીને અન્યોને ધારણ કરાવે છે; તેઓ અન્ન, બળ, વિદ્યા અને રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને ભૂમિ અને સૂર્યની સમાન પ્રત્યક્ષ સુખવાળા બને છે. (૧૪)

**સ્વાહા પૂષ્ણો શરસે સ્વાહા ગ્રાવભ્યઃ સ્વાહા પ્રતિરવેભ્યઃ । સ્વાહા પિતૃભ્યઃ ઽ-
ઋર્ધ્વર્બર્હિર્ભ્યો ઘર્મપાવભ્યઃ સ્વાહા દ્યાવાપૃથિવીભ્યાઃ સ્વાહા વિશ્વેભ્યો
દેવેભ્યઃ ॥ ૧૫ ॥**

પદાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ - પૂષ્ણો-પુષ્ટિકારક શરસે-હિંસકને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા અર્થાત્ અધર્મથી બચાવવાનો ઉપાય, પ્રતિરવેભ્યઃ-પ્રતિશબ્દ કરનારને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી, ગ્રાવભ્યઃ-ગર્જતા મેઘને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા, ઋર્ધ્વર્બર્હિર્ભ્યઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિને માટે ઘર્મપાવભ્યઃ-ધર્મ = યજ્ઞ દ્વારા સંસારને પવિત્ર કરનારા, પિતૃભ્યઃ-ઋતુઓની સમાન પાલકજનોને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી; દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-સૂર્ય અને અન્તરિક્ષને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા; વિશ્વેભ્યઃ-સર્વ દેવેભ્યઃ-દિવ્ય પૃથિવી આદિ વા વિદ્વાનોને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા વા સત્યવાણીનો સદા પ્રયોગ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ સત્યવિજ્ઞાન તથા સત્યક્રિયા દ્વારા એવો પુરુષાર્થ કરે કે, જેથી વિશ્વ = સર્વને પુષ્ટિ અને આનંદ પ્રાપ્ત થાય. (૧૫)

**સ્વાહા રુદ્રાય રુદ્રહૂતયે સ્વાહા સં જ્યોતિષા જ્યોતિઃ । અહઃ કેતુનાં જુષતાઃ
સુજ્યોતિર્જ્યોતિષા સ્વાહા । રાત્રિઃ કેતુનાં જુષતાઃ સુજ્યોતિર્જ્યોતિષા સ્વાહા । મધુ
હુતમિન્દ્રતમે ઽ અગ્નાવશ્યામ તે દેવ ઘર્મ નમસ્તેઽસ્તુ મા માં હિંસીઃ ॥ ૧૬ ॥**

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! આપ કેતુના-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ દ્વારા સ્વહૂતયે-પ્રાણ વા જીવોની સ્તુતિ કરનારા સ્ત્રાય-જીવને માટે સ્વાહા-સત્યવાણીથી, જ્યોતિષા-પ્રકાશની સાથે જ્યોતિઃ-પ્રકાશને સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી, જ્યોતિષા-સત્યવિદ્યાના ઉપદેશરૂપ પ્રકાશથી સુજ્યોતિઃ-ઉત્તમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોના પ્રકાશથી અહઃ-પ્રતિદિન સ્વાહા-સત્યવાણીથી સંજુષતામ્-સમ્યક્ સેવન કરો.

કેતુના-સંકેતરૂપ ચિહ્ન અને જ્યોતિષા-મનન આદિ રૂપ પ્રકાશથી સુજ્યોતિઃ-ધર્મ આદિ રૂપ શુભ ગુણોના પ્રકાશને તથા રાત્રિઃ-રાત્રિને સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી જુષતામ્-સેવન કરો.

હે ઘર્મ-પ્રકાશમાન દેવ-વિદ્વાન ! જેથી તે-આપને માટે ઇન્દ્રતમે-અત્યંત ઐશ્વર્યકારક વિદ્યુતરૂપ અગ્નૌ-અગ્નિમાં મધુ-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત હુતમ્-હોમને માટે ઘૃત આદિ પદાર્થોને ઘ્રાણ દ્વારા અશ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તેથી તે-આપને માટે નમઃ-નમસ્કાર અસ્તુ-છે; આપ મા-મને મા, હિંસીઃ-મારો નહિ; મારી હિંસા કરો નહિ. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણ, જીવન અને સમાજની રક્ષા માટે વિજ્ઞાનથી કર્મો અને દિવસ-રાતનું

યુક્તિથી સેવન કરવું જોઈએ.

પ્રતિદિન પ્રાતઃ - સાયં કસ્તૂરી આદિ સુગંધીથી યુક્ત ઘૃતનો અગ્નિમાં હોમ કરીને વાયુ આદિની શુદ્ધિના દ્વારા નિત્ય આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧૬)

અભીમં મહિમા દિવં વિપ્રોં બભૂવ સપ્રથાઃ । ઉત શ્રવસા પૃથિવીશ્ચ સશ્ચસીદસ્વ મહાંરઽ અસિ રોચસ્વ દેવવીતમઃ । વિ ઘૂમમર્મનેઽઅરુષં મિયેદ્ધ્ય સૃજ પ્રશસ્ત દર્શતમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે પ્રશસ્ત-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત, મિયેદ્ય-દુષ્ટોને દૂર કરનાર અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! મહિમા-મહાન, સુપ્રથઃ-પ્રસિદ્ધ ઉત્તમ કીર્તિયુક્ત વિપ્રઃ-બુદ્ધિમાન આપ ઇમમ્-દિવમ્ અવિદ્યા આદિ ગુણોના પ્રકાશને અભિ+બભૂવ-અભિભૂત કરો છો.

ઉત-અને શ્રવસા-શ્રવણ વા અન્નની સાથે પૃથિવીમ્-ભૂમિ પર સમ્ + સીદસ્વ-સારી રીતે બેસો, કારણકે આપ દેવવીતમઃ-દિવ્ય ગુણો વા વિદ્વાનોને અત્યંત પ્રાપ્ત કરનાર તથા મહાન્-મહાન અસિ-છો, જેથી રોચસ્વ-સર્વત્રથી પ્રસન્ન રહો, અસ્મમ્-અલ્પ લાલ વર્ણથી યુક્ત દર્શતમ્-દર્શનીય ઘૂમમ્-ધૂમાડાને વિ+સૃજ-વિશેષ રૂપથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનો એ જ મહિમા છે કે, બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સર્વત્ર તેનો વિસ્તાર કરીને, શુભ ગુણોનો પ્રચાર કરીને, સૃષ્ટિની વિદ્યાને ઉન્નત કરે છે. (૧૭)

યા તે ઘર્મ દિવ્યા શુગ્યા ગાયત્ર્યાશ્ચ હવિર્ધાને । સા ત્ ઽ આ પ્યાયતાન્નિષ્ટ્યાયતાં તસ્યૈ તે સ્વાહા । યા તે ઘર્માન્તરિક્ષે શુગ્યા ત્રિષ્ટુભ્યાગ્નીધ્ને । સા ત્ ઽ આ પ્યાયતાન્નિષ્ટ્યાયતાં તસ્યૈ તે સ્વાહા । યા તે ઘર્મ પૃથિવ્યાશ્ચ શુગ્યા જર્ગત્યાશ્ચસદ્સ્યા । સા ત્ ઽ આ પ્યાયતાન્નિષ્ટ્યાયતાં તસ્યૈ તે સ્વાહા ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે ઘર્મ-પ્રકાશસ્વરૂપ વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! યા-જે તે-તારી ગાયત્ર્યામ્-ભણનારા-ગાનારાઓની રક્ષકવિદ્યામાં તથા હવિર્ધાને-હોમવા યોગ્ય પદાર્થોના ધારણમાં શુક્-વિચારની સાધનરૂપ ક્રિયા અને યા-જે દિવ્યા-દિવ્ય ક્રિયા છે; સા-તે તે-તારી બુદ્ધિ તથા દિવ્ય ક્રિયા આ+પ્યાયતામ્-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ પામે તથા નિ, સ્ત્યાયતામ્-નિરંતર સંયુક્ત રહે; તસ્યૈ-તે બુદ્ધિ તથા દિવ્ય ક્રિયાની પ્રાપ્તિને માટે તે-તારા માટે સ્વાહા-સત્યવાણી બને.

હે ઘર્મ-દિવસની સમાન પ્રકાશિત વિદ્યાવાળા વિદ્વાન વા વિદુષી ! યા-જે તે-તારી અન્તરિક્ષે-આકાશમાં શુક્-સૂર્યની દીપ્તિની સમાન વિમાન આદિની ગમન ક્રિયા; યા-જે અગ્નીધ્ને-અગ્નિના આશ્રયમાં તથા ત્રિષ્ટુભિ-ત્રિષ્ટુપ ઇંદ્રથી પ્રતિપાદિત અર્થમાં વિચારરૂપ ક્રિયા છે; સા-તે તે-તારી આ+પ્યાયતામ્-સર્વત્રથી વધે અને નિ, સ્ત્યાયતામ્-નિરંતર સંયુક્ત રહે. તસ્યૈ-તે ક્રિયા અને તે-તારા માટે સ્વાહા-સત્યવાણી બને.

હે ઘર્મ-વિદ્યુતના પ્રકાશની સમાન વર્તમાન સ્ત્રી વા પુરુષ ! યા-જે તે-તારી પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર અને યા-જે સદસ્યા-સભામાં તથા જગત્યામ્-ચેતન પ્રજાયુક્ત સૃષ્ટિમાં શુક્-પ્રકાશયુક્ત ક્રિયા છે; સા-તે તે-તારી આ + પ્યાયતામ્-વધે અને નિ, સ્ત્યાયતામ્-નિરંતર સંયુક્ત રહે, તસ્યૈ-તે ક્રિયા તથા તે-તારા માટે સ્વાહા-સત્યવાણી બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો દિવ્ય ક્રિયા, શુદ્ધ ઉપાસના અને પવિત્ર વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત થાય છે, તેઓ જ મનુષ્ય જન્મના ફળને પ્રાપ્ત કરે છે. તેઓ અન્યોને પણ તેવા જ બનાવે. (૧૮)

ક્ષત્રસ્ય ત્વા પરસ્પાય બ્રહ્મણસ્તન્વં પાહિ ।

વિશસ્ત્વા ધર્મણા વ્યમનું ક્રામમ સુવિતાય નવ્યસે ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે રાજન વા રાણી ! આપ પરસ્પરાય-બીજાઓની રક્ષાનાં સાધનોની પ્રાપ્તિને માટે ક્ષત્રસ્ય-ક્ષત્રિય કુળ વા રાજ્યના તથા બ્રહ્મણ:-બ્રહ્મજ્ઞાની - વેદવિત્ બ્રાહ્મણ કુળના વિદ્વાનની તથા ત્વા-આપના તન્વમ્-શરીરની પાહિ-રક્ષા કરો.

જેમ વ્યમ્-અમે નવ્યસે-અત્યંત નવીન સુવિતાય ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિને માટે ધર્મણા-ધર્મથી અનુક્રામમ-અનુકૂળ ચાલીએ છીએ, તેમ જ ધર્મપૂર્વક વર્તાવ કરનાર ત્વા-આપને અનુકૂળ વિશ:-પ્રજાજન ચાલે. (૧૯)

ભાવાર્થ : રાજા અને રાજપુરુષોએ ધર્મથી વિદ્વાનો અને પ્રજાજનોની રક્ષા કરવી જોઈએ. એ જ રીતે પ્રજા અને રાજપુરુષોએ રાજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. આ રીતે ન્યાય અને વિનયથી વર્તાવ કરીને રાજા અને પ્રજા નવીન ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે, અને તેમાં વૃદ્ધિ કરે. (૧૯)

ચતુઃસ્રક્તિર્નાભિર્ઋતસ્ય સપ્રથાઃ સ નૌ વિશ્વાયુઃ સપ્રથાઃ સ નઃ સર્વાયુઃ સપ્રથાઃ । અપ દ્વેષોઽપ હરોઽન્યવ્રતસ્ય સશ્ચિમ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ચતુઃસ્રક્તિઃ-ચાર ખૂણાવાળી નાભિઃ-નાભિની સમાન સપ્રથાઃ-વિસ્તારથી યુક્ત સત્પુરુષ અન્યવ્રતસ્ય-અન્ય સર્વ જગતની રક્ષા કરવાના સ્વભાવવાળા ઋતસ્ય-સત્ય સ્વરૂપ પરમાત્માની સેવા = ઉપાસના કરે છે; સઃ-તે સપ્રથાઃ-વિસ્તૃત કાર્યોવાળા વિશ્વાયુઃ-સંપૂર્ણ આયુથી યુક્ત વિદ્વાન્ નઃ-અમને બોધ કરાવે.

સઃ-તે સપ્રથાઃ-અધિક સુખી સર્વાયુઃ-સંપૂર્ણ આયુથી યુક્ત વિદ્વાન નઃ-અમને ઈશ્વર સંબંધી વિદ્યાને ગ્રહણ કરાવે; જેથી અમે દ્વેષઃ-દ્વેષી શત્રુઓને અપ+સશ્ચિમ-દૂર કરીએ તથા હરઃ-કુટિલ ગતિયુક્ત લોકોને અપ-પૃથક કરીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રસોને પ્રાપ્ત થયેલી નાભિ રસને ઉત્પન્ન કરીને શરીરના સર્વ અવયવોને પુષ્ટ કરે છે, તેમ સેવન કરેલ વિદ્વાન તથા ઉપાસના કરેલ પરમેશ્વર દ્વેષ અને કુટિલતા આદિ દોષોનું

નિવારણ કરીને સર્વ જીવોની રક્ષા કરે છે, એમ માનીને તમારે તે વિદ્વાનો અને તે પરમેશ્વરનું નિરંતર સેવન કરવું જોઈએ. (૨૦)

ઘર્મૈત્તે પુરીષં તેન વર્દ્ધસ્વ ચા ચ પ્યાયસ્વ ।

વર્દ્ધિષીમહિં ચ વ્યમા ચ પ્યાસિષીમહિ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : ઘર્મ-સર્વત્ર પ્રકાશમય, પૂજ્યતમ જગદીશ્વર વા વિદ્વાન ! જે એતત્-આ તે-આપની પુરીષમ્-વ્યાપ્તિ વા પાલન છે, તેન-તેનાથી આપ વર્દ્ધસ્વ-વૃદ્ધિ પામો, ચ-અને બીજાની વૃદ્ધિ કરો; આપ સ્વયં આ, પ્યાયસ્વ-પુષ્ટ થાઓ ચ-તથા બીજાને પુષ્ટ કરો.

આપની કૃપા વા શિક્ષાથી જેમ વ્યમ્-અમે વર્દ્ધિષીમહિ પૂર્ણ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ, ચ-તેમ અન્યોની પણ વૃદ્ધિ કરીએ. ચ-અને જેમ અમે આ-પ્યાસિષીમહિ-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ પામીએ, તેમ બીજાને નિરંતર પુષ્ટ કરીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સર્વવ્યાપક ઈશ્વર દ્વારા સર્વની રક્ષા અને પુષ્ટિ કરવામાં આવે છે, તેમ જ વૃદ્ધિયુક્ત અને પુષ્ટ થયેલાં આપણે લોકોએ સર્વ જીવોની વૃદ્ધિ અને પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

અચિક્રદત્ વૃષા હરિર્મિહાન્મિત્રો ન દર્શતઃ ।

સઃ સૂર્યેણ દિદ્યુતદુદ્ધિર્નિધિઃ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વૃષા-વર્ષા કરનાર, હરિઃ-શીઘ્રગામી મહાન્-સર્વથી મહાન, અચિક્રદત્-શબ્દ કરનાર, મિત્રઃ-મિત્રની ન-સમાન દર્શતઃ-દર્શનીય તથા સૂર્યેણ-સૂર્યની સાથે ઉદ્ધિઃ-જળને ધારણ કરનાર સમુદ્ર તથા આકાશ જે નિધિઃ-પદાર્થોને ધારણ કરનાર છે; તે સમ્, દિદ્યુતત્-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; તે વિદ્યુતરૂપ અગ્નિનો સર્વે પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ બળદ અને ઘોડાઓ શબ્દ કરે છે, જેમ મિત્ર મિત્રોને પ્રેમ કરે છે, તેમ જ સર્વ લોકોની સાથે વિદ્યમાન વિદ્યુત્ સર્વને પ્રકાશિત કરે છે; તેને તમે જાણો. (૨૨)

સુમિત્રિયા ન્આપ્ઓષધયઃ સન્તુ દુર્મિત્રિયાસ્તસ્મૈ સન્તુ ।

યોસ્માન્ દ્વેષ્ટિ યં ચ વ્યં દ્વિષ્મઃ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપઃ-પ્રાણ વા જળ તથા ઓષધયઃ-સોમ આદિ ઔષધિઓ નઃ-અમારે માટે સુમિત્રિયાઃ-શ્રેષ્ઠ મિત્રોની સમાન સુખદાયક સન્તુ-બને.

યઃ-જે પક્ષપાતી અધર્મી અસ્માન્-અમો ધર્માત્માઓથી દ્વેષ્ટિ-દ્વેષ કરે છે, ચ-અને યમ્-જે દુષ્ટથી વ્યમ્-અમે દ્વિષ્મઃ-દ્વેષ કરીએ, તસ્મૈ-તે અધર્મીને માટે પ્રાણ અને ઔષધિઓ દુર્મિત્રિયાઃ-દુષ્ટ મિત્રોની સમાન દુઃખદાયક સન્તુ-બને. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ પથ્ય, ઔષધિ અને પ્રાણોની સમાન અન્યોનાં રોગો તથા દુઃખોના નિવારક છે, તેઓ 'ધન્ય' છે. અને જેઓ કુપથ્ય, વિકૃત ઔષધ અને મૃત્યુની સમાન અન્યોને દુઃખદાયી છે, તેઓને વારંવાર ધિક્કાર છે. (૨૩)

उद्वयन्तमसस्परि स्वुः पश्यन्तऽउत्तरम् ।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ २४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે તમસઃ-અંધકારથી પૃથક્ક ઉતરમ્-સર્વ પદાર્થોના ઉત્તરભાગમાં વિદ્યમાન દેવત્રા-દિવ્ય પદાર્થોમાં દેવમ્-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી યુક્ત ઉત્તમમ્-સર્વથી શ્રેષ્ઠ જ્યોતિઃ-સર્વના પ્રકાશક સૂર્યમ્-સૂર્યસમાન પ્રકાશસ્વરૂપ ઈશ્વરને પશ્યન્તઃ-જ્ઞાનદંષ્ટિથી નિહાળતાં સ્વઃ-સુખને પરિ + ઉત્ + અગન્મ-સર્વત્રથી ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત આદિ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને પરમાત્માને સાક્ષાત નિહાળે છે, તેઓ પ્રકાશિત બનીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૪)

एधौस्येधिषीमहिं समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ॥ २५ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જે આપ અમારા આત્માઓમાં એધઃ-પ્રકાશ પાથરનાર ઈધણ-બળતણની સમાન પ્રકાશક અસિ-છો; સમિત્-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત સમિધાની સમાન અસિ-છો; તેજઃ-પ્રકાશમય વિદ્યુતની સમાન સર્વ વિદ્યાના દર્શક અસિ-છો; તે આપ મયિ-મારામાં તેજઃ-તેજને ધેહિ-ધારણ અર્થાત્ સ્થાપિત કરો. આપને પ્રાપ્ત કરીને અમે એધિષીમહિ-સર્વત્રથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઈધણથી અને ધીથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે, તેમ જ જગદીશ્વરની ઉપાસનાથી યોગીજનોના આત્માઓ પ્રકાશિત થાય છે. (૨૫)

यावती द्यावापृथिवी यावच्च सप्त सिन्धवो वितस्थिरे ।

तावन्तमिन्द्र ते ग्रहमूर्जा गृहणाम्यक्षितं मयि गृहणाम्यक्षितम् ॥ २६ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યુત્ની સમાન વર્તમાન પરમેશ્વર ! તે-આપની યાવતી-જેટલી દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્ય અને ભૂમિ ચ-અને યાવત્-જેટલા મહાન સપ્ત-સાત સિન્ધવઃ સમુદ્રો વિતસ્થિરે-રહેલાં છે; તાવન્તમ્-તેટલા અક્ષિતમ્-નાશરહિત ગ્રહમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિદ્યુત આદિ ગુણોને અર્થાત્ સામર્થ્યને ઋર્જા-બલથી હું ગૃહણામિ-ગ્રહણ-સ્વીકાર કરું છું, તાવન્તમ્-તેટલા અક્ષિતમ્-નાશરહિત સામર્થ્યને-સુખને મયિ-મારામાં ગૃહણામિ-ગ્રહણ કરું છું. (૨૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જ્યાં સુધી બની શકે, ત્યાં સુધી પૃથિવી અને વિદ્યુત આદિના ગુણોને ગ્રહણ કરીને અક્ષય = કદી ક્ષીણ ન થનાર સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૨૬)

मयि त्यदिन्द्रियं बृहन्मयि दक्षो मयि क्रतुः ।

ઘર્મસ્ત્રિશુગ્વિ રાજતિ વિરાજા જ્યોતિષા સહ બ્રહ્મણા તેજસા સહ ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિરાજા-વિશેષ પ્રકાશ તથા જ્યોતિષા-પ્રદીપ્ત જ્યોતિની સહ-સાથે, બ્રહ્મણા-ધન અને તેજસા-સહ-તેજની સાથે રહેલ ત્રિશુક્-મૃદુ, મધ્ય અને તીવ્ર ત્રણ પ્રકારની દીપ્તિવાળો ઘર્મ-પ્રતાપ વા યજ્ઞ વિરાજતિ-વિશેષ પ્રકાશિત થાય છે, તેમ મયિ-મારા જીવાત્મામાં બૃહત્-મહાન ત્યત્-તે ઇન્દ્રિયમ્-મન આદિ ઇન્દ્રિયો, મયિ-મારામાં દક્ષઃ-બળ અને મયિ-મારામાં ક્રતુઃ-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ વા કર્મ વિશેષ કરીને પ્રકાશિત થાય છે; તેમ તમારામાં પણ સ્વયં પ્રકાશિત થાય. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ, વિદ્યુત અને સૂર્યરૂપથી ત્રણ પ્રકારનો પ્રકાશ જગતને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉત્તમ બળ, કર્મ અને બુદ્ધિ, ધર્મયુક્ત સંચિત ધન અને જીતેલી ઇન્દ્રિયો અત્યંત સુખ પ્રદાન કરે છે. (૨૭)

પયસો રેત્સઆભૃતં તસ્ય દોહમશીમહ્યુત્તરામુત્તરાશ્ચ સમામ્ । ત્વિષઃ સંવૃક્ ક્રત્વે દક્ષસ્ય તે સુષુમ્ણસ્ય તે સુષુમ્ણાગ્નિહુતઃ । ઇન્દ્રપીતસ્ય પ્રજાપતિભક્ષિતસ્ય મધુમત્સ ઉપહૂત્સઉપહૂતસ્ય ભક્ષયામિ ॥ ૨૮ ॥

પદાર્થ : હે સુષુમ્ણ-શોભન સુખયુક્ત વિદ્વાન્ મનુષ્ય ! જેમ આપે જે પયસઃ-જળ વા દૂધના રેતઃ-પરાક્રમને આ + ભૃતમ્-સર્વત્રથી પુષ્ટ વા ધારણ કરેલ છે; તસ્ય-તેની દોહમ્-પૂર્ણતાને તથા તેના ઉત્તરામુત્તરામ્-પ્રત્યેક આગામી સમામ્-સમયને-કાલને ન્-અમે અશીમહિ-પ્રાપ્ત કરીએ.

તે તે-આપની ક્રત્વે-બુદ્ધિને માટે ત્વિષઃ-પ્રદીપ્ત દક્ષસ્ય-બળની અને તે-આપની આભૃતમ્-પુષ્ટિ વા ધારણને અમે અશીમહિ-પ્રાપ્ત કરીએ.

સુષુમ્ણસ્ય-શ્રેષ્ઠ સુખદાયક ઇન્દ્રપીતસ્ય-સૂર્ય વા જીવના દ્વારા પાન કરેલ પ્રજાપતિભક્ષિતસ્ય-પ્રજારક્ષક રાજાના દ્વારા સેવન વા ભક્ષણ કરેલ [પ્રજા રક્ષક ઈશ્વરે સેવન કરેલ વા જીવના ભોજન માટે] ઉપહૂતસ્ય-સમીપ લાવેલ મધુમતઃ-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત પયસઃ-જળ વા દૂધના દોષોને સંવૃક્-દૂર કરનાર બનીને ઉપહૂતઃ-આમંત્રિત તથા અગ્નિહુતઃ-અગ્નિમાં હોમ કરનાર હું અન્નાદિનું ભક્ષયામિ-ભક્ષણ કરું છું. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા વીર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ, વિદ્યા આદિ શુભ ગુણો ધારણ કરવા જોઈએ અને પ્રતિદિન સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જેમ પોતાના સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ બીજાના સુખને માટે પણ કામના કરવી જોઈએ. (૨૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં આ સૃષ્ટિમાં શુભ ગુણોનું ગ્રહણ (૧), પોતાનું અને બીજાઓનું પોષણ (૧૫), યજ્ઞ દ્વારા જગતના પદાર્થોનું શોધન (૧૬), સર્વત્ર સુખ પ્રાપ્તિનાં સાધનો (૧૧-૧૫), ધર્મનું અનુષ્ઠાન (૧૯), પુષ્ટિની વૃદ્ધિ કરવી (૨૧), ઈશ્વરના ગુણોની વ્યાખ્યા (૨૪), સર્વત્રથી બળની વૃદ્ધિ (૨૫) અને સુખ ભોગ (૨૮)નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત

અર્થની પૂર્વ અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ અષ્ટાત્રિંશોઽધ્યાયઃ ॥



॥ અથૈકોનચત્વારિંશોઽધ્યાય આરભ્યતે ॥

ઓઙ્મ્ વિશ્વાનિ દેવ સવિતર્દુરિતાનિ પરાં સુવ। યદ્ ભુદ્રં તન્ન આસુવ ॥

સ્વાહા પ્રાણેભ્યઃ સાધિપતિકેભ્યઃ। પૃથિવ્યૈ સ્વાહાઽગ્નયે સ્વાહાઽન્તરિક્ષાય
સ્વાહા। વાયવે સ્વાહા દિવે સ્વાહા સૂર્યાય સ્વાહા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સાધિપતિકેભ્યઃ-ઈન્દ્રિય આદિના અધિપતિ = જીવની સાથે રહેલા પ્રાણેભ્યઃ-જીવનની સમાન પ્રાણોને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા; પૃથિવ્યૈ-ભૂમિને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી; અગ્નયે-અગ્નિને માટે સ્વાહા-સત્યવાણી; અન્તરિક્ષાય-આકાશમાં ગમન કરવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા; વાયવે-શુદ્ધ વાયુની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા; દિવે-વિદ્યુતની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા સૂર્યાય-સૂર્યમંડળની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહા-સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાને યથાવત્ સંયુક્ત કરો-સંપ્રયોગ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : આ અધ્યાયમાં અત્યેષ્ટિકર્મનો ઉપદેશ છે. જેને નરમેધ, પુરુષમેધ અને દાહકર્મ પણ કહે છે. જ્યારે કોઈ મરી જાય, ત્યારે મરનારના શરીરના વજન જેટલું ઘી લઈને, તેમાં પ્રતિશેરના હિસાબે એક રતી કસ્તૂરી, એક માસા કેસર અને ચંદન આદિ કાષ્ઠ-લાકડાં આવશ્યકતાનુસાર લેવા જોઈએ.

વેદી : - પુરુષ ઉભો રહી માથા તરફ હાથ ઉંચા કરે તેટલી લાંબી, સાડા ત્રણ હાથ પરિમાણ ઉપરથી પહોળી અને તેટલી ઊંડી, નીચે તળિયામાં એક વેંત જેટલી વેદી બનાવવી.

વેદીમાં નીચેથી લઈને અર્ધો ઊંચાઈ સુધી સમિધાઓ-કાષ્ઠ ભરીને, તેના પર મૃતદેહને રાખીને પછી બન્ને પાર્શ્વ ભાગમાં અને ઉપર સારી રીતે સમિધાઓને ગોઠવીને, છાતી આદિ પર કપૂર રાખીને, કપૂરથી પ્રદીપ્ત કરેલા અગ્નિને ચિતામાં દાખલ કરીને, જ્યારે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થઈ જાય, ત્યારે આ અધ્યાયના સ્વાહાન્ત મંત્રોથી પુનઃ પુનઃ આવૃત્તિ દ્વારા ઘી હોમીને શબનો સારી રીતે દાહ કરવો.

આ રીતે કરવાથી દાહ કરનારને યજ્ઞના ફલની પ્રાપ્તિ થાય છે. શબને કદી પણ ભૂમિમાં દાટવું નહિ, જંગલમાં છોડવું નહિ. તેમજ પાણીમાં ડુબાડવું નહિ. શબનો દાહ કર્યા વિના તેના સંબંધીઓ મહાપાપને પ્રાપ્ત થાય છે; કારણકે મૃત દેહના વિકૃત શરીરથી અધિક દુર્ગંધ ફેલાવાથી ચેતન અને જડ પદાર્થોમાં [પ્રાણીઓ અને અપ્રાણીઓમાં] અસંખ્ય રોગો ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી પૂર્વોક્ત વિધિથી શબનો દાહ કરવામાં ભદ્ર = કલ્યાણ છે; અન્યથા નહિ. (૧)

દિગ્ભ્યઃ સ્વાહા ચન્દ્રાય સ્વાહા નક્ષત્રેભ્યઃ સ્વાહાઽદ્યૈઃ સ્વાહા વરુણાય સ્વાહા।
નાભ્યૈ સ્વાહા પૂતાય સ્વાહા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે શરીરનાં દાહ-કર્મમાં દિગ્ભ્યઃ-દિશાઓમાં હોમ કરેલ હુત દ્રવ્યોના

ગમન અર્થાત્ પહોંચાડવા માટે **સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **ચન્દ્રાય-ચંદ્રલોકની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **નક્ષત્રેભ્યઃ-નક્ષત્રોના પ્રકાશની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **અદ્ભ્યઃ-જલોમાં ગમન કરવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **વસ્માય-સમુદ્ર આદિમાં ગમનને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **નાભ્યૈ-નાભિને બાળવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **પૂતાય-પવિત્ર કરવા માટે સ્વાહા-સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાનો સંપ્રયોગ કરો. (૨)**

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પૂર્વોક્ત વિધિથી શરીરનો દાહ કરીને-બાળીને સર્વ દિશાઓમાં શરીરનાં અવયવોને અગ્નિ દ્વારા ફેલાવે-પહોંચાડે. (૨)

વાચે સ્વાહા પ્રાણાય સ્વાહા પ્રાણાય સ્વાહા ।

ચક્ષુષે સ્વાહા ચક્ષુષે સ્વાહા શ્રોત્રાય સ્વાહા શ્રોત્રાય સ્વાહા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે મૃત શરીરની **વાચે-વાણી ઈન્દ્રિય સંબંધી હોમને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **પ્રાણાય-શરીરનાં અવયવોને જગતના વાયુમાં પહોંચાડવાને સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **પ્રાણાય-ધનંજય નામક વાયુને પ્રાપ્ત થવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **ચક્ષુષે-એક નેત્રગોલકને બાળવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **ચક્ષુષે-બીજા નેત્રગોલકને બાળવા માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **શ્રોત્રાય-એક શ્રોત્રગોલક-કાનના વિભાગને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**, **શ્રોત્રાય-બીજા શ્રોત્ર ગોલકના વિભાગને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા**. **સ્વાહા આ શબ્દ બોલીને ઉક્ત ધીની આહુતિઓ ચિતામાં આપવી. (૩)**

ભાવાર્થ : જે લોકો સુગંધયુક્ત ઘૃત આદિ સામગ્રીથી મૃત શરીરનો દાહ કરે છે, તેઓ પુણ્યભાગી બને છે. (૩)

મનસઃ કામમાકૃતિં વાચઃ સત્યમશીય ।

પશૂનાંશ્ચ રૂપમન્નસ્ય રસો યશઃ શ્રીઃ શ્રયતાં મયિ સ્વાહા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ હું **સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી એમ આગળ અને પાછળ કહેલ પ્રકારથી મૃત શરીરોનો અગ્નિદાહ કરીને મનસઃ-અંતઃકરણ અને વાચઃ-વાણીના સત્યમ્-સત્ય વચનોને, કામમ્-ઈચ્છાપૂર્તિને, આકૃતિમ્-ઉત્સાહને પશૂનામ્-ગાય આદિ પશુઓનાં સ્વપ્ન-સુંદર સ્વરૂપને અશીય-પ્રાપ્ત કરું છું; જેમ મયિ-મુજ જીવાત્માને અન્નસ્ય-ખાવા યોગ્ય ઓદન =ભાત આદિના રસઃ-મધુર આદિ રસ, યશઃ-કીર્તિ અને શ્રીઃ-શોભા વા ઐશ્વર્ય શ્રયતામ્-પ્રાપ્ત થાય; તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો, તથા એ વાણી આદિ તમને પ્રાપ્ત થાય. (૪)**

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ વિજ્ઞાન, ઉત્સાહ અને સત્ય વચનોથી મૃત શરીરોનો વિધિપૂર્વક અગ્નિદાહ કરે છે, તેઓ પશુ, પ્રજા, ધન અને અન્ન આદિને પુરુષાર્થ દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

પ્રજાપતિઃ સમ્ભ્રિયમાણઃ સમ્રાટ્ સમ્ભૃતો વૈશ્વદેવઃ સંશ્ચ સન્નો ઘર્મઃ પ્રવૃક્તસ્તેજ

ઽ ઉદ્યત ઽ આશ્વિનઃ પર્યસ્યાનીયમાને પૌષ્ણો વિષ્ણન્દમાને મારુતઃ ક્લથન્ । મૈત્રઃ શરસિ સન્તાચ્યમાને વાયવ્યો હિયમાણ ઽ આગ્નેયો હૂયમાનો વાગ્ધુતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરના દ્વારા સમ્પ્રિયમાણઃ-સમ્યક્ પોષણ વા ધારણ કરવા યોગ્ય, સમ્રાટ્-સમ્યક્ પ્રકાશમાન, વૈશ્વદેવઃ-સર્વ દેવ અર્થાત્ દિવ્ય જીવો વા પદાર્થોથી સંબંધ રાખનાર, સંસન્નઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થનાર, ઘર્મઃ-પવિત્ર, તેજઃ-તેજ સ્વરૂપ, પ્રવૃક્તઃ-શરીરથી પૃથક્, ઉદ્યતઃ-ઉપર ગતિ કરનાર, આશ્વિનઃ-પ્રાણ-અપાન સંબંધી તેજ આનીયમાને-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત પર્યસિ-જલમાં પૌષ્ણઃ-પૃથિવી સંબંધી તેજ, વિષ્ણન્દમાને-વિશેષ ગતિમાં માસ્તઃ-મનુષ્યદેહસંબંધી, તથા ક્લથન્-હિંસા કરનાર, મૈત્રઃ-મિત્રથી સંબંધ રાખનાર, સન્તાચ્યમાને-વિસ્તાર વા પાલનને માટે શરસિ-તળાવમાં વાયવ્યઃ-વાયુમાં વિદ્યમાન, હિયમાણઃ -લજ્જાશીલ, આગ્નેયઃ-અગ્નિના ગુણોથી યુક્ત, હૂયમાનઃ-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય, વાક્-બોલનાર, હુતઃ-ઉપદેશ કરેલા અને પ્રજાપતિઃ-પ્રજાના પાલક જીવ સમ્ભૂતઃ-સમ્યક્ પોષણ વા ધારણ કરેલા છે; તે જ પરમાત્માની તમે ઉપાસના કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે આ જીવ શરીરનો ત્યાગ કરીને પૃથિવી આદિ સર્વ પદાર્થોમાં ભ્રમણ કરતો જ્યાં-ત્યાં પ્રવિષ્ટ થઈને આમ-તેમ ગતિ કરતો કર્માનુસાર ઈશ્વરની વ્યવસ્થા અનુસાર જન્મ પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે જ સુપ્રસિદ્ધ થાય છે. (૫)

સવિતા પ્રથમેઽહન્નગ્નિર્દ્વિતીયૈ વાયુસ્તૃતીય ઽ આદિત્યશ્ચતુર્થે ચન્દ્રમાઃ પઞ્ચમ ઽ ઋતુઃ ષષ્ઠે મરુતઃ સપ્તમે બૃહસ્પતિરષ્ટમે । મિત્રો નવમે વરુણો દશમઽ-ઇન્દ્ર ઽ એકાદશો વિશ્વે દેવા દ્વાદશો ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જીવને પ્રથમે-શરીર છોડતાં આ અહન્-દિવસે સવિતા-સૂર્ય, દ્વિતીયે-બીજા દિવસે અગ્નિઃ-અગ્નિ, તૃતીયે-ત્રીજા દિવસે વાયુઃ-વાયુ, ચતુર્થે-ચોથા દિવસે આદિત્યઃ-આદિત્ય=મહિના, પઞ્ચમે-પાંચમાં દિવસે - ચન્દ્રમાઃ-ચંદ્રમા, ષષ્ઠે-છઠ્ઠા દિવસે ઋતુઃ-વસંત આદિ ઋતુ, સપ્તમે-સાતમા દિવસે મસ્તઃ-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ, અષ્ટમે-આઠમા દિવસે બૃહસ્પતિઃ-મોટાનો રક્ષક સૂક્ષ્મ વાયુ, નવમે-નવમા દિવસે મિત્રઃ-પ્રાણ, દશમે-દશમા દિવસે વરુણઃ-ઉદાન, એકાદશે-અગિયારમે દિવસે ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત અને દ્વાદશે-બારમે દિવસે વિશ્વે- સર્વ દેવાઃ-દિવ્ય અર્થાત્ ઉત્તમ ગુણો પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યારે એ જીવ શરીરને છોડે છે, ત્યારે સૂર્યપ્રકાશ આદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, થોડો સમય ભ્રમણ કરીને, પોતાનાં કર્મોને અનુસાર ગર્ભાશયમાં જઈને, શરીર ધારણ કરીને જન્મ લે છે, ત્યારે પુણ્ય અને પાપ કર્મના કારણે સુખ અને દુઃખ રૂપ ફળ ભોગવે છે. (૬)

ઉગ્રશ્ચ ભીમશ્ચ ધ્વાન્તશ્ચ ધુનિશ્ચ ।

સાસહ્વાંશ્ચાભિયુગ્વા ચ વિક્ષિપઃ સ્વાહા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મૃત્યુને પ્રાપ્ત થયેલ જીવ સ્વાહા-પોતાનાં કર્મથી ઝગ્ર-તીવ્ર ચ-અને શાન્ત સ્વભાવવાળો, ભીમ:-ભયંકારી ચ-અને નિર્ભય, ધ્વાન્ત:-અંધકાર ચ-અને પ્રકાશને પ્રાપ્ત, ધુનિ:-કાંપતો ચ-અને નિષ્કંપ, સાસહાન્-શીઘ્ર = અત્યંત સહનશીલ ચ-અને અસહનશીલ, અભિયુગ્વા-સર્વત્ર નિયમધારી = સંયુક્ત ચ-અને વિયુક્ત બધાથી અલગ થનાર અને વિક્ષિપ:-વિક્ષેપને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જીવ પાપાયરણયુક્ત છે તે ઊગ્ર, જે ધર્માચરણયુક્ત છે તે શાન્ત, જે ભય પ્રદાન કરનાર છે તે ભયંકર, જે ભયયુક્ત છે તે ભીત, જે અભય પ્રદાન કરનાર છે તે નિર્ભય, જે અવિદ્યાથી યુક્ત છે તે અંધકારથી આવૃત્ત, જે વિદ્યાન યોગી છે તે પ્રકાશયુક્ત, જે અજિતેન્દ્રિય છે તે ચંચળ, જે જિતેન્દ્રિય છે તે અચંચલ = શાન્ત [કહેવાય છે આ રીતે આ બધા જીવો] પોત-પોતાના કર્મફળોને સહન કરતા સંયુક્ત [બનીને]વિક્ષેપને પ્રાપ્ત કરીને આ સંસારમાં નિત્ય ભ્રમણ કરતો રહે છે; તેમ જાણો. (૭)

અગ્નિઃહૃદયેનાશનિઃ હૃદયાગ્રેણ પશુપતિં કૃત્સ્નહૃદયેન ભવં યક્ના । શર્વ
મતસ્નાભ્યામીશાનં મન્યુનાં મહાદેવમન્તઃ પર્શવ્યેનોગ્રં દેવં વનિષ્ટુનાં વસિષ્ઠહનુઃ
શિઙ્ગીનિ કોશ્યાભ્યામ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ મૃત જીવ હૃદયેન-હૃદયરૂપ અવયવથી અગ્નિમ્-અગ્નિને, હૃદયાગ્રેણ-હૃદયના અગ્રભાગથી અશનિમ્-વિદ્યુત્ને કૃત્સ્નહૃદયેન-સંપૂર્ણ હૃદયનાં અવયવોથી પશુપતિમ્-પશુઓના પાલક, જગતના કર્તા, રુદ્ર, સર્વ પ્રાણોના હેતુ પરમેશ્વરને, યક્ના-યકૃતરૂપ શરીરનાં અવયવોથી ભવમ્-સર્વવ્યાપક ઈશ્વરને, મતસ્નાભ્યામ્-હૃદયના પાર્શ્વ અવયવોથી શર્વમ્-વિજ્ઞાતા ઈશ્વરને, મન્યુના-દુષ્ટાચારી અને પાપના પ્રતિ વર્તમાન ક્રોધથી ઈશાનમ્-સર્વ જગતના સ્વામી ઈશ્વરને, અન્તઃપર્શવ્યેન-આંતરિક પાર્શ્વ અવયવથી મહાદેવમ્-મહાન દેવને, ઝગ્રમ્-દેવમ્-તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળા પ્રકાશમાન ઈશ્વરને, વનિષ્ટુના-આન્ત્ર વિશેષથી વસિષ્ઠહનુઃ-અત્યંત વાસને માટે રાજાની સમાન ચિબુકવાળા જનને, કોશ્યાભ્યામ્-કોશ = ઉદરમાં રહેલાં બે માંસપિંડોથી શિઙ્ગીનિ-જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો [શરીરના] સર્વ અંગોથી ધર્માચરણ, વિદ્યાગ્રહણ, સત્સંગ અને જગદીશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓ વર્તમાન અને ભવિષ્યના જન્મોનું સર્વ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૮)

ઝગ્રં લોહિતેન મિત્રઃ સૌવ્રત્યેન રુદ્રં દૌર્વ્રત્યેનેન્દ્રં પ્રક્રીડેન મરુતો બલેન સાધ્યાન્
પ્રમુદાં । ભવસ્ય કણ્ઠ્યઃ રુદ્રસ્યાન્તઃ પાશ્વર્ય મહાદેવસ્ય યકૃચ્છર્વસ્ય વનિષ્ટુઃ
પશુપતેઃ પુરીતત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ગર્ભાશયમાં સ્થિત વા બહાર રહેલ જીવ - લોહિતેન-શુદ્ધ રક્તથી ઝગ્રમ્-તીક્ષ્ણ ગુણને, સૌવ્રત્યેન-શ્રેષ્ઠ કર્મથી મિત્રમ્-પ્રાણની સમાન મિત્રને, દૌર્વ્રત્યેન-દુષ્ટાચરણથી સ્દમ્- રડાવનારને,

પ્રક્રીડેન-ઉત્તમ વિહારથી ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્ય વા વિદ્યુત્ને, બલેન-બળથી મસ્તઃ ઉત્તમ મનુષ્યોને, પ્રમુદા-અત્યંત આનંદથી સાધ્યાન્-સિદ્ધિ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને, ભવસ્ય-પ્રશંસિત થનાર પુરુષના કળઙ્યમ્-કંઠમાં રહેલા સ્વરને, સ્દસ્ય-દુષ્ટોને રડાવનાર જનના અંતઃપાશ્વર્ચ્યમ્-અંદરના પાર્શ્વ અવયવને મહાદેવસ્ય-મહાન વિદ્વાન્ના યકૃત્-હૃદયમાં રહેલ લાલ પિંડને, શર્વસ્ય-સુખદાયક મનુષ્યના વનિષ્ઠુઃ- આંત્ર વિશેષને પશુપતેઃ-પશુઓના રક્ષક પુરુષના પુરીતત્-હૃદયની નાડીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેહધારી [જીવ] રક્ત આદિથી ઉગ્ર આદિ સ્વભાવોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જીવ ગભાશયમાં પણ પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

લોમંભ્યઃ સ્વાહા લોમંભ્યઃ સ્વાહા ત્વચે સ્વાહા ત્વચે સ્વાહા લોહિતાય સ્વાહા લોહિતાય સ્વાહા મેદોંભ્યઃ સ્વાહા મેદોંભ્યઃ સ્વાહા માંસેભ્યઃ સ્વાહા માંસેભ્યઃ સ્વાહા સ્નાવંભ્યઃ સ્વાહા સ્નાવંભ્યઃ સ્વાહાસ્થંભ્યઃ સ્વાહાસ્થંભ્યઃ સ્વાહા મજ્જંભ્યઃ સ્વાહા મજ્જંભ્યઃ સ્વાહા રેતસે સ્વાહા પાયવે સ્વાહા ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ દાહકર્મમાં ઘી વગેરેથી લોમંભ્યઃ-ત્વચાની ઉપરના વાળ માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા એ શબ્દનો, લોમંભ્યઃ-નખ આદિને માટે સ્વાહા, ત્વચે-શરીરની ત્વચા બાળવાને સ્વાહા, ત્વચે-અંદરની ત્વચા બાળવાને સ્વાહા, લોહિતાય-લોહી બાળવાને સ્વાહા, લોહિતાય-હૃદયમાં સ્થિત લોહ પિંડ બાળવાને સ્વાહા, મેદોંભ્યઃ સ્નિગ્ધ ધાતુઓને બાળવાને સ્વાહા, મેદોંભ્યઃ-શરીરના અવયવોને આર્દ્ર કરનાર અવયવોને બાળવાને સ્વાહા, માંસેભ્યઃ-બહારના માંસોને બાળવાને સ્વાહા, માંસેભ્યઃ-અંદરના માંસોને બાળવાને સ્વાહા, સ્નાવંભ્યઃ-સ્થૂલ નાડીઓને બાળવાને સ્વાહા, સ્નાવંભ્યઃ-અંદરની સૂક્ષ્મ નાડીઓને, શિરાઓને બાળવાને સ્વાહા, અસ્થંભ્યઃ-શરીરના કઠિન અવયવ અસ્થિ = હાડકાંઓને બાળવાને સ્વાહા, અસ્થંભ્યઃ સૂક્ષ્મ અસ્થિરૂપ અવયવો (મૃદુ અસ્થિઓને) બાળવાને સ્વાહા, મજ્જંભ્યઃ-અસ્થિની અંદરની ધાતુ = મજ્જાને બાળવાને સ્વાહા, મજ્જંભ્યઃ-ઉક્ત ધાતુના અન્તર્ગત ભાગને બાળવાને સ્વાહા, રેતસે-વીર્યને બાળવાને સ્વાહા, પાયવે-પાયુ = ગુદારૂપ અવયવને બાળવાને સ્વાહા સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાનો [એ શબ્દનો સર્વ અવયવોને બાળવાના માટે સર્વની સાથે સ્વાહા શબ્દના અર્થનો] સદા પ્રયોગ કરવો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યાં સુધી લોમ = રૂંવાડાના બાળવાથી લઈને વીર્ય સુધી [અવયવો] ભસ્મ થઈ જાય, ત્યાં સુધી [ચિતામાં] ઘી અને કાષ્ટ નાખતા રહેવું જોઈએ. (૧૦)

આયાસાય સ્વાહા પ્રાયાસાય સ્વાહા સંયાસાય સ્વાહા વિયાસાય સ્વાહોઽયાસાય સ્વાહા શુચે સ્વાહા શોચતે સ્વાહા શોચમાનાય સ્વાહા શોકાય સ્વાહા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આયાસાય-સર્વત્રથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે સ્વાહા-એ શબ્દનો, પ્રાયાસાય-જવાને માટે સ્વાહા, સંયાસાય-સારી રીતે ચાલવાને માટે સ્વાહા, વિયાસાય-વિવિધ વસ્તુઓની પ્રાપ્તિને

માટે સ્વાહા, ઉદ્યાસાય-ઉર્ધ્વ ગતિને માટે સ્વાહા, શુચે-પવિત્ર થવા માટે સ્વાહા, શોચતે-શુદ્ધિ કરનારને માટે સ્વાહા, શોચમાનાય-વિચારોના પ્રકાશને માટે સ્વાહા અને શોકાય-જેમાં શોક થાય છે, તેને માટે સ્વાહા-[એનો અર્થ - સત્યક્રિયા]શબ્દનો પ્રયોગ કરો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પુરુષાર્થ આદિની સિદ્ધિને માટે સત્યવાણી, સત્યબુદ્ધિ અને સત્યક્રિયા કરવી જોઈએ. જેથી દેહાન્તર તથા જન્માન્તરમાં મંગલ થાય. (૧૧)

**તપસે સ્વાહા તપ્યતે સ્વાહા તપ્યમાનાય સ્વાહા તપ્તાય સ્વાહા ઘર્માય સ્વાહા ।
નિષ્કૃત્યૈ સ્વાહા પ્રાયશ્ચિત્યૈ સ્વાહા ભેષજાય સ્વાહા ॥ ૧૨ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તપસે- પ્રતાપને માટે સ્વાહા, તપ્યતે-સંતાપ પામનારને માટે સ્વાહા, તપ્યમાનાય-તાપ-ગરમી પ્રાપ્ત થયેલને માટે સ્વાહા, તપ્તાય-તપેલાને માટે સ્વાહા, ઘર્માય-દિવસ થવાને માટે સ્વાહા, નિષ્કૃત્યૈ-નિવારણને માટે સ્વાહા, પ્રાયશ્ચિત્યૈ-પાપ નિવારણને માટે સ્વાહા-અને ભેષજાય-સુખને માટે સ્વાહા-સત્યક્રિયા એ શબ્દનો નિરંતર પ્રયોગ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણાયામ આદિ સાધનો દ્વારા સર્વ કિલ્લિષ = પાપનું નિવારણ કરીને સ્વયં સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવું જોઈએ. (૧૨)

**યમાય સ્વાહાઽન્તકાય સ્વાહા મૃત્યવે સ્વાહા । બ્રહ્મણે સ્વાહા બ્રહ્મહત્યાયૈ સ્વાહા
વિશ્વેભ્યો દેવેભ્યઃ સ્વાહા દ્યાવાપૃથિવીભ્યાઃસ્વાહા ॥ ૧૩ ॥**

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યમાય-નિયંતા ન્યાયાધીશ વા વાયુને માટે સ્વાહા-આ શબ્દનો, અન્તકાય-નાશક કાળને માટે સ્વાહા, મૃત્યવે-પ્રાણત્યાગ કરાવનાર સમયને માટે સ્વાહા, બ્રહ્મણે-સર્વથી મહાન પરમાત્મા વા બ્રહ્મજ્ઞાની વિદ્વાનને માટે સ્વાહા, બ્રહ્મહત્યાયૈ-બ્રહ્મ અર્થાત્ વેદ, ઈશ્વર વા વિદ્વાનની હત્યાના નિવારણ માટે સ્વાહા; વિશ્વેભ્યઃ-સર્વ દેવેભ્યઃ-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનો વા જળ આદિ પદાર્થોને માટે સ્વાહા-અને દ્યાવાપૃથિવીભ્યામ્-સૂર્ય તથા ભૂમિના શોધનને માટે સ્વાહા-નામક સત્યક્રિયાનો પ્રયોગ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય વ્યવસ્થાનું પાલન કરીને, અલ્પ આયુમાં મૃત્યુનું નિવારણ કરીને, ઈશ્વર અને વિદ્વાનોનું સેવન કરીને, બ્રહ્મહત્યા આદિ દોષોનું નિવારણ કરીને તથા સૃષ્ટિવિદ્યાને જાણીને અન્યેષ્ટિ ક્રિયા કરે છે, તેઓ સર્વને મંગલ પ્રદાન કરનાર બને છે. સદા આ રીતે - વિધિથી મૃતક શરીરને બાળીને સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અન્યેષ્ટિ કર્મનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ એકોનચત્વાર્શિણોઽધ્યાયઃ ॥

થાય છે, તેથી વિદ્યા, આયુ અને સુશીલતા આદિ ગુણોની વૃદ્ધિ થાય છે. (૨)

અસુર્યાં નામ તે લોકાઽઅન્ધેન તમસાવૃતાઃ ।

તાંસ્તે પ્રેત્યાપિ ગચ્છન્તિ યે કે ચાત્મહનો જનાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે લોકાઃ-જોઈ શકે એવા લોકો અન્ધેન-અંધકારરૂપ તમસા-અજ્ઞાનના આવરણથી આવૃતાઃ-સર્વત્રથી આવૃત્ત = ઢંકાયેલા યે, કે, ચ-અને જે કોઈ આત્મહનઃ-આત્માની વિરુદ્ધ આચરણ કરનારા જનાઃ મનુષ્યો છે, તે-તેઓ અસુર્યાઃ-પોતાનાં પ્રાણ પોષણમાં તત્પર, અવિદ્યા આદિ દોષોથી યુક્ત અને તેના સંબંધીઓની સમાન પાપકર્મ કરનારા નામ-પ્રસિદ્ધ હોય છે, તે-તેઓ પ્રેત્ય-મૃત્યુ પછી અપિ-અને જીવતાં પણ તાન્-તે દુઃખ અને અજ્ઞાનરૂપ અંધકારથી યુક્ત ભોગોને ગચ્છન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : તે જ મનુષ્યો અસુર, દૈત્ય, રાક્ષસ, પિશાચ અને દુષ્ટ છે, જે આત્મામાં અન્ય અને વાણીમાં અન્ય અને કર્મમાં જુદુ આચરણ કરે છે. તેઓ કદીપણ અવિદ્યારૂપી દુઃખસાગરને પાર કરીને આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી.

જે લોકો આત્મામાં હોય તેવું મનથી, મનમાં હોય તેવું વાણીથી અને વાણીમાં હોય તેવું કર્મમાં કપટરહિત આચરણ કરે છે, તેઓ જ દેવ, આર્ય, સૌભાગ્યવાન લોકો સંપૂર્ણ સંસારને પવિત્ર કરતા રહીને, આ લોક અને પરલોકમાં અનુપમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે - ભોગવે છે. (૩)

અનેજદેકં મનસો જવીયો નૈનદ્દેવા ઽ આપ્નુવન્ પૂર્વમર્ષત્ ।

તદ્ધાવતોઽન્યાનત્યેતિ તિષ્ઠત્તસ્મિન્નપો માતરિશ્વા દધાતિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જે એકમ્-અદ્વિતીય બ્રહ્મ છે, તે અનેજત્-કંપન રહિત અર્થાત્ પોતાની અવસ્થા = સ્વરૂપથી કદી વિચલિત થતો નથી; તે મનસઃ-મનના વેગથી પણ જવીયઃ-અતિ વેગવાન પૂર્વમ્-સર્વનો અગ્રણી, પૂર્ણ અર્ષત્-સર્વત્ર વ્યાપ્ત હોવાથી મનથી પણ પ્રથમ પહોંચનાર બ્રહ્મ છે.

એનત્-એ પૂર્વોક્ત બ્રહ્મને દેવાઃ-અવિદ્વાન અથવા યજ્ઞુ આદિ ઈન્દ્રિયો ન, આપ્નુવન્-પ્રાપ્ત કરી શકતી નથી. તત્-પરબ્રહ્મ સ્વયં તિષ્ઠત્-પોતાના સ્વરૂપમાં સ્થિર રહીને પોતાની અનંત વ્યાપકતાથી ધાવતઃ-વિષયોની તરફ દોડનારા અન્યાન્-તેના પોતાના સ્વરૂપથી ભિન્ન મન, વાણી, ઈન્દ્રિયો આદિને અત્યેતિ-ઉલ્લંઘન કરી જાય છે, પ્રાપ્ત થતો નથી.

તસ્મિન્-તે સર્વત્ર અભિવ્યાપક સ્થિર બ્રહ્મમાં માતરિશ્વા-અન્તરિક્ષમાં વાયુ ક્રિયાશીલ રહે છે - અર્થાત્ અન્તરિક્ષમાં પ્રાણોને ધારણ કરનાર વાયુ રહે છે - તેમ જ જીવ [તે બ્રહ્મમાં] અપઃ-કર્મમાં વા ક્રિયાને દધાતિ-ધારણ કરે છે. તેમ જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અનંત હોવાથી જ્યાં-જ્યાં મન જાય છે, ત્યાં-ત્યાં પ્રથમથી જ ઈશ્વર અંદર-બહાર વ્યાપ્ત અને આગળ સ્થિત છે તે બ્રહ્મનું જ્ઞાન શુદ્ધ મન દ્વારા થાય છે. તેને યજ્ઞુ આદિ ઈન્દ્રિયો અને અવિદ્વાન લોકો જોઈ શકતા નથી. તે સ્વયં અચલ-સ્થિર રહેવા છતાં સર્વ જીવોને નિયમમાં ચલાવે

છે અને ધારણ કરે છે, તે બ્રહ્મ અતિ સૂક્ષ્મ અને અતીન્દ્રિય હોવાથી ધાર્મિક, વિદ્વાન, યોગીને જ તેનો સાક્ષાત્કાર થાય છે; અન્યોને નહિ. (૪)

તદૈજતિ તન્નૈર્જતિ તદ્દૂરે તદ્વન્તિકે ।

તદન્તરસ્ય સર્વસ્ય તદુ સર્વસ્યાસ્ય બાહ્યતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તદ્-તે બ્રહ્મ એજતિ-મૂર્ખોની દૃષ્ટિએ ચાલે છે; તત્-તે ન, એજતિ-ચાલતો નથી અને તેને કોઈ ચલાવી શકતું નથી. તત્-તે દૂરે-અધર્માત્મા, અવિદ્વાન અને અયોગીઓથી દૂર રહે છે અર્થાત્ કરોડો વર્ષોમાં પણ તેઓને પ્રાપ્ત થતો નથી.

તત્-તે ઉ-નિશ્ચયથી જ અન્તિકે-ધર્માત્મા, વિદ્વાન, યોગીઓની સમીપ છે. તત્-તે બ્રહ્મ અસ્ય-આ સર્વસ્ય-સર્વ જગત અને જીવોની અન્તઃ-અંદર વિરાજમાન છે. તત્-તે ઉ-નિશ્ચયથી અસ્ય, સર્વસ્ય-આ સર્વ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ જગતની બહિઃ-બહાર પણ વિરાજમાન છે; એમ નિશ્ચિત જાણો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તે બ્રહ્મ મૂર્ખોની દૃષ્ટિએ કંપન કરતો હોય તેવો ચાલે છે [પરન્તુ વાસ્તવમાં] તે વ્યાપક હોવાથી પોતાના સ્વરૂપથી - સ્વાભાવિક રૂપથી કદીપણ ચલાયમાન થતો નથી.

જે લોકો તેની આજ્ઞાની વિરુદ્ધ આચરણ કરે છે, તેઓ તેની પ્રાપ્તિને માટે જ્યાં-ત્યાં ભટકતા હોવા છતાં તેને જાણી શકતા નથી. જેઓ ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તેઓ અતિ સમીપ પોતાના આત્મામાં સ્થિત બ્રહ્મને પ્રાપ્ત કરી લે છે.

જે બ્રહ્મ સર્વ પ્રકૃતિ આદિ [પદાર્થો]ની બહાર અને અંદરના અવયવોમાં વ્યાપક બનીને અંતર્યામી રૂપમાં સર્વ જીવોના સમસ્ત પાપ-પુણ્યરૂપ કર્મોને જાણીને યથાર્થ ફળ પ્રદાન કરે છે, એ જ બ્રહ્મનું સર્વેએ ધ્યાન [ઉપાસના]કરવું જોઈએ અને બધાએ તેનો ડર રાખવો જોઈએ. (૫)

યસ્તુ સર્વાણિ ભૂતાન્યાત્મન્નેવાનુપશ્યતિ ।

સર્વભૂતેષુ ચાત્માનં તતો ન વિ ચિકિત્સતિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે વિદ્વાન જન આત્મન્-પરમાત્માની અંદર એવ-જ સર્વાણિ-સર્વ ભૂતાનિ-જડ અને ચેતનને અનુપશ્યતિ-વિદ્યા, ધર્માચરણ અને યોગાભ્યાસ કર્યા પછી ધ્યાનચક્ષુથી જુએ છે.

યઃ, તુ-અને જે વિદ્વાન સર્વભૂતેષુ-સર્વ પ્રકૃતિ આદિ પદાર્થોમાં આત્માનમ્-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માને ચ-પણ જુએ છે, તે વિદ્વાન તતઃ-એવા સમ્યક્ દર્શન પછી ન, વિ ચિકિત્સતિ-સર્વથા સંદેહને પ્રાપ્ત થતા નથી; તેમ તમે જાણો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો સર્વવ્યાપક, ન્યાયકારી, સર્વજ્ઞ, સનાતન, સર્વાત્મા = સર્વ આત્માઓના આત્મા અને સર્વના દ્રષ્ટા પરમાત્માને જાણીને, સુખ-દુઃખ અને હાનિ-લાભમાં પોતાના આત્માની સમાન સર્વ પ્રાણીઓને જાણીને ધાર્મિક બને છે, તેઓ જ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

યસ્મિન્ત્સર્વાણિ ભૂતાન્યાત્મૈવાભૂદ્વિજાનતઃ ।

તત્ર કો મોહઃ કઃ શોકઃ એકત્વમનુપશ્યતઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્મિન્-જે પરમાત્મા જ્ઞાન, વિજ્ઞાન અને ધર્મના વિષયમાં વિજાનતઃ-સમ્યક્જ્ઞાતા જનને માટે [અર્થાત્ વિશેષ કરીને ધ્યાનદૃષ્ટિથી જોનારને] સર્વાણિ-સર્વ ભૂતાનિ-પ્રાણીમાત્ર આત્મા, એવ પોતાના આત્માની સમાન જ સુખ-દુઃખવાળા અભૂત્-હોય છે; તત્ર-તે પરમાત્મામાં વિરાજમાન, એકત્વમ્-પરમાત્માના એકત્વ-અદ્વિતીય ભાવને અનુ, પશ્યતઃ-અનુકૂળ યોગાભ્યાસ દ્વારા સાક્ષાત્ જોનાર યોગીજનને કઃ-શું મોહઃ-મોહ અને કઃ-શું શોકઃ-શોક વા કલેશ અભૂત્-થાય ? અર્થાત્ કોઈ મોહ-શોક થતા નથી. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સંન્યાસી લોકો પરમાત્માની સાથે વર્તમાન પ્રાણીમાત્રને પોતાના આત્માની સમાન જાણે છે, અર્થાત્ જેમ પોતાનું હિત ઈચ્છે છે, તેમ અન્ય પ્રાણીઓના વિષયમાં વ્યવહાર કરે છે તથા એકમાત્ર અદ્વિતીય પરમાત્માનાં શરણને પ્રાપ્ત કરેલ છે, તેઓને મોહ, શોક, લોભ આદિ દોષો કદી પ્રાપ્ત થતા નથી.

અને જેઓ પોતાના આત્માને યથાવત્ રીતે જાણીને પરમાત્માને જાણે છે, તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૭)

સ પર્યગાચ્છુક્રમકાયમ્બ્રણમસ્નાવિરંશ્ચ શુદ્ધમપાપવિદ્ધમ્ । કવિર્મનીષી પરિભૂઃ સ્વયમ્ભૂર્યાથાતથ્યતોઽર્થાન્ વ્યદધાચ્છાશ્વતીભ્યઃ સમાભ્યઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે બ્રહ્મ શુક્રમ્-શીઘ્રકારી, સર્વશક્તિમાન અકાયમ્-સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને કારણ શરીરથી રહિત છે, અબ્રણમ્-છિદ્રરહિત અને જેના બે ટુકડા થઈ શકતા નથી, અસ્નાવિરમ્-નાડી આદિ બંધનથી રહિત છે, શુદ્ધમ્-અવિદ્યા આદિ દોષોથી રહિત હોવાથી સદા પવિત્ર છે, અપાપવિદ્ધમ્-જે કદી પણ પાપથી યુક્ત, પાપ કરનાર અને પાપથી પ્રેમ કરનાર નથી, તે પરિ+અગાત્-સર્વત્ર વ્યાપક છે, જે કવિઃ-સર્વજ્ઞ, મનીષી-સર્વ જીવોની મનોવૃત્તિઓને જાણનાર, પરિભૂઃ-દુષ્ટ પાપીઓનો તિરસ્કાર કરનાર, સ્વયમ્ભૂઃ-અનાદિ સ્વરૂપ, જેની સંયોગથી ઉત્પત્તિ અને વિયોગથી વિનાશ થતાં નથી, જેના માતા-પિતા કોઈ નથી અને જેના ગર્ભવાસ, જન્મ, વૃદ્ધિ અને ક્ષય થતાં નથી, તે પરમાત્મા શાશ્વતીભ્યઃ-સનાતન, અનાદિસ્વરૂપયુક્ત, પોતાનાં સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ ઉત્પત્તિ અને વિનાશથી રહિત સમાભ્યઃ-પ્રજાઓને માટે યાથાતથ્યતઃ-યથાર્થ ભાવથી અર્થાન્-વેદો દ્વારા સર્વ પદાર્થોનો વ્યદધાત્-વિશેષ કરીને ઉપદેશ આપે છે. સઃ-તે જ પરમાત્મા તમારા માટે ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અનન્ત શક્તિમાન, અજન્મા, અખંડ, સદામુક્ત, ન્યાયકારી, નિર્મલ = શુદ્ધ કે પાપરહિત, સર્વજ્ઞ, સર્વના સાક્ષી = દૃષ્ટા, નિયંતા અને અનાદિસ્વરૂપ બ્રહ્મ સૃષ્ટિની આદિમાં સ્વયં ઉપદેષ્ટ વેદો દ્વારા શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ બતાવનારી વિદ્યાનો ઉપદેશ ન કરે, તો કોઈપણ વિદ્વાન બની શકે નહિ અને ધર્મ-અર્થ-કામ અને મોક્ષ રૂપ ફળને પ્રાપ્ત કરી શકે નહિ, એટલા માટે આ બ્રહ્મની

તમે લોકો સદા ઉપાસના કરો. (૮)

અન્ધન્તમ્: પ્ર વિશન્તિ ચેડસંભૂતિમુપાસતે ।

તતો ભૂય ડ ઇવ તે તમો ચ ડ ડ સમ્ભૂત્યાઃ ર્તાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : ચે-જે લોકો પરમેશ્વરને છોડીને અસમ્ભૂતિમ્-અનાદિ, અનુત્પન્ન, સત્વ, રજ અને તમો-ગુણરૂપ પ્રકૃતિ નામક જડ પદાર્થને ઉપાસતે-ઉપાસનીય માને છે તે-તેઓ અન્ધમ્-આવરણ કરનાર તમઃ-અંધકારમાં પ્ર-સારી રીતે વિશન્તિ-પ્રવેશ કરે છે.

ચે-જે લોકો સમ્ભૂત્યામ્-મહત્ત્વાદિ સ્વરૂપમાં પરિણત થયેલી સૃષ્ટિમાં ર્તાઃ-રમણ કરે છે, તે-તેઓ ડ-નિઃસંદેહ તતઃ-તેથી ભૂય, ઇવ-અધિકતર તમઃ-અવિદ્યારૂપ અંધકારને [પ્રવિશન્તિ]-પ્રાપ્ત થાય છે. અર્થાત્ - અંધકારમાં પ્રવેશ કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે લોકો સમસ્ત જડ જગતનાં અનાદિ નિત્ય કારણ = પ્રકૃતિનો ઉપાસ્યરૂપમાં સ્વીકાર કરે છે, તેઓ અજ્ઞાન-અવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને સદા ક્લેશ = દુઃખ ભોગવે છે.

જે તે કારણ = પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન થયેલ પૃથિવી આદિ સ્થૂલ અથવા સૂક્ષ્મ કાર્યકારણ નામક અનિત્ય સંયોગથી ઉત્પન્ન કાર્ય જગતને ઉપાસ્ય માને છે, તેઓ ઘોર અવિદ્યા-અજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને તેનાથી પણ અધિકતર ક્લેશ = દુઃખ ભોગવે છે, તેથી સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ પરમાત્માની જ સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૮)

અન્યદેવાહુઃ સંભવાદન્યદાહુરસંભવાત્ ।

ઈતિ શુશ્રુમ ધીરાણાં ચે નસ્તદ્વિચક્ષિરે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ધીરાણામ્-મેધાવી, વિદ્વાન, યોગીજનોના વચન =ઉપદેશ શુશ્રુમઃ-સાંભળીએ છીએ ચે-જેઓએ નઃ-અમને તત્-તે સંભૂતિ અને અસંભૂતિ બન્નેનું વિવેચન વિચક્ષિરે-વ્યાખ્યાપૂર્વક સમજાવેલ છે તે યોગીજનો સંભવાત્-સંયોગથી ઉત્પન્ન કાર્યથી અન્યત્ એવ-અન્ય જ કાર્યો વા ઇળ આહુઃ-બતાવે છે તથા અસંભવાત્-ઉત્પન્ન ન થનાર કારણથી અન્યત્-ભિન્ન કાર્ય વા ઇળ આહુઃ-બતાવે છે. ઈતિ-એ રીતે તમે પણ સાંભળો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો કાર્યરૂપી અને કારણરૂપી વસ્તુથી, વક્ષ્યમાણ = આગળ કહેવામાં આવનાર ભિન્ન-ભિન્ન ઉપકારને ગ્રહણ કરે છે તથા તેના ગુણોને જાણીને અન્યોને ગ્રહણ કરાવે છે-બતાવે છે.

તે કાર્ય અને કારણના ગુણોને જાણીને અન્યોને જણાવે છે, તેમ તમે પણ નિશ્ચય કરો. (૧૦)

સમ્ભૂતિં ચ વિનાશં ચ યસ્તદ્વેદોભયં સહ ।

વિનાશેન મૃત્યું તીર્ત્વા સમ્ભૂત્યામૃતમશ્નુતે ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે વિદ્વાન્ સમ્ભૂતિમ્-જેમાં સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે તે કાર્યરૂપ સૃષ્ટિને **ચ**-અને સૃષ્ટિના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને તથા વિનાશમ્-જેમાં પદાર્થ વિનષ્ટ = અદૃશ્ય થાય છે તે કારણરૂપ જગત અર્થાત્ પ્રકૃતિને **ચ**-અને તેના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને **સહ**-એક સાથે **ઉખયમ્**- બન્ને **તત્**-તે કાર્ય અને કારણ રૂપ જગતને **વેદ**-જાણે છે; તે વિદ્વાન વિનાશેન-નિત્યસ્વરૂપને જાણવાના કારણે **મૃત્યુમ્**-શરીર અને આત્માના વિયોગથી ઉત્પન્ન દુઃખને **તીર્ત્વા**-પાર કરીને **સમ્ભૂત્યા**-શરીર, ઈન્દ્રિય અને અન્તઃકરણરૂપ ઉત્પન્ન થનારી કાર્યરૂપ, ધર્મકાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરાવનારી સૃષ્ટિના સહયોગથી **અમૃતમ્**-મોક્ષસુખને **અશ્નુતે**-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! કાર્ય = સૃષ્ટિ, કારણ = પ્રકૃતિ નામક વસ્તુઓ નિરર્થક નથી. પરંતુ તમે લોકો કાર્ય અને કારણ એ બન્નેના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને જાણીને, ધર્મથી લઈને મોક્ષ સુધીનાં સાધનોમાં તેનો ઉપયોગ કરીને, પોતાના આત્માના સંબંધી કાર્ય તથા કારણનાં વિજ્ઞાનથી અને [આત્માની] નિત્યતા [ના જ્ઞાન]થી મૃત્યુના ભયનો ત્યાગ કરીને મોક્ષની સિદ્ધિ કરો. આ રીતે કાર્ય = સૃષ્ટિ અને કારણ = પ્રકૃતિના દ્વારા ભિન્ન-ભિન્ન ધર્માદિ અને મોક્ષસિદ્ધિરૂપ ફળને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. ઉપાસના પ્રકરણમાં આ કાર્યકારણની અર્થાત્ સૃષ્ટિ અને પ્રકૃતિની ઉપાસના કરવાનો નિષેધ સમજવો જોઈએ. (૧૧)

અન્ધન્તમ્: પ્ર વિશન્તિ ચેઽવિદ્યામુપાસતે ।

તતો ભૂય ઽ ઇવ તે તમો ય ઽ ડે વિદ્યાયાઈઃ રતાઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : ચે-જે મનુષ્યો અવિદ્યામ્-અનિત્યને નિત્ય, અપવિત્રને પવિત્ર, દુઃખને સુખ અને અનાત્મા = શરીરોદિ જડને આત્મા = ચેતન જાણવારૂપ અવિદ્યા છે, તે જ્ઞાનાદિ ગુણોથી રહિત, કારણરૂપ પરમેશ્વરથી ભિન્ન જડ વસ્તુની ઉપાસતે-ઉપાસના કરે છે, તે-તેઓ અન્ધમ્-જ્ઞાન દૃષ્ટિને ઢાંકનાર તમઃ-ઘોર અંધકાર અને અત્યંત અજ્ઞાનમાં પ્રવિશન્તિ-પ્રવેશ કરે છે.

ચે-જે પોતાની જાતને પંડિત માનનારા વિદ્યાયામ્-શબ્દ, અર્થ અને તેઓના સંબંધને જાણવા માત્ર તથા અવૈદિક આચરણમાં રતાઃ-રમણ કરે છે તે-તેઓ ડે-નિશ્ચયથી જ તતઃ-તેનાથી ભૂય, ઇવ-અધિકતર તમઃ-અજ્ઞાનરૂપી અંધકારમાં પ્રવેશ કરે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે જે જ્ઞાન આદિ ગુણોથી યુક્ત ચેતન વસ્તુ છે, તે જ્ઞાતા અને જે અવિદ્યારૂપ છે તે માત્ર જ્ઞેય કહેવાય છે. જે ચેતન બ્રહ્મ અથવા આત્મા વિદ્વાન આત્મા છે, તે જ ઉપાસના અને સેવન કરવા યોગ્ય છે. જે તેનાથી ભિન્ન છે, તે ઉપાસના યોગ્ય નહિ પરંતુ ઉપયોગ કરવા યોગ્ય છે.

જે મનુષ્યો અવિદ્યા, અસ્મિતા, રાગ, દ્વેષ અને અભિનિવેશ એ પાંચ ક્લેશોથી યુક્ત છે, તેઓ પરમેશ્વરને છોડીને તેનાથી ભિન્ન જડ વસ્તુની ઉપાસના કરીને મહાન દુઃખસાગરમાં ડૂબે છે.

જે શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ [શબ્દાર્થ અને અન્વય]માત્ર સંસ્કૃત ભાષા ભણીને સત્યભાષણ અને પક્ષપાતરહિત ન્યાયાચરણરૂપી ધર્મનું પાલન કરતા નથી, પરંતુ અભિમાની બનીને વિદ્યાનો તિરસ્કાર કરીને, અવિદ્યાને જ માને છે; તેઓ પણ અત્યંત અજ્ઞાનરૂપ-અંધકારરૂપ દુઃખસાગરમાં નિરંતર દુઃખી

૨૯ છે. (૧૨)

અન્યદેવાહુર્વિદ્યાયા ઽ અન્યદાહુરવિદ્યાયાઃ ।

इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचक्षिरे ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે-જે વિદ્વાન લોકો ન:-અમારે માટે વિચક્ષિરે-વ્યાખ્યા કરી ગયા છે કે વિદ્યાયા:-પૂર્વમંત્રમાં કહેલી વિદ્યાનું અન્યત્-જુદુ જ કાર્ય વા ફળ આહુ:-કહેલ છે. અવિદ્યાયા:-પૂર્વ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત અવિદ્યાનું અન્યત્, એવ-જુદુ જ ફળ આહુ:-કહેલ છે. ઇતિ-એમ તે ધીરાણામ્-આત્મજ્ઞાની વિદ્વાનોની પાસેથી તત્-એ ઉપદેશ અમે શુશ્રુમ-સાંભળેલ છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જ્ઞાન આદિ ગુણોથી યુક્ત ચેતનથી જે ઉપયોગ લઈ શકાય છે, તે અજ્ઞાનયુક્ત જડ વસ્તુથી લઈ શકાતો નથી અને જે જડ વસ્તુથી જે પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે, તે ચેતનથી થતું નથી. આ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનોનો સંગ, વિજ્ઞાન, યોગ અને ધર્માચરણથી એ બન્નેનો વિવેક કરીને, જડ અને ચેતન બન્નેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૧૩)

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्यया मृतमश्नुते ॥ १४ ॥

પદાર્થ : ય:-જે વિદ્વાન્ વિદ્યામ્-પૂર્વમંત્રોક્ત વિદ્યા ચ-અને તેના સાધન ઉપસાધનોને તથા અવિદ્યામ્-પૂર્વ પ્રતિપાદિત અવિદ્યા ચ-અને તેના ઉપયોગી વિવિધ સાધનોને તત્, ઉભયમ્, સહ-તે બન્નેની સાથે-સાથે વેદ-જાણે છે; સ:-તે અવિદ્યાયા-શરીર આદિ જડ પદાર્થોના દ્વારા કરેલા પુરુષાર્થથી મૃત્યુમ્-મૃત્યુ દુઃખના ભયને તીર્ત્વા-તરીને=પાર કરીને વિદ્યાયા-આત્મા અને શુદ્ધ અન્તઃકરણના સંયોગરૂપ ધર્મથી ઉત્પન્ન યથાર્થ દર્શનરૂપ જ્ઞાનથી અમૃતમ્-અવિનાશી આત્મસ્વરૂપને અથવા પરમાત્માને અશ્નુતે-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા અને અવિદ્યાનાં સ્વરૂપને જાણીને, એ બન્ને જડ અને ચેતન પદાર્થ સાધક છે, એવો નિશ્ચય કરીને સમસ્ત શરીર આદિ જડ અને ચેતન આત્માનો ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિને માટે એક સાથે પ્રયોગ કરે છે, તેઓ લૌકિક દુઃખથી છૂટીને પારમાર્થિક સુખ = મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે.

જો જડ = અવિદ્યા પ્રકૃતિ આદિ કારણ વસ્તુ અથવા શરીર આદિ કાર્ય વસ્તુ ન હોય, તો પરમાત્મા જગતની ઉત્પત્તિ તથા જીવ કર્મ, ઉપાસના તથા જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે કરી શકે ?

એટલા માટે માત્ર જડ = અવિદ્યા દ્વારા અને માત્ર ચેતન = વિદ્યા દ્વારા, અથવા માત્ર કર્મ = અવિદ્યા દ્વારા અને માત્ર જ્ઞાન = વિદ્યા દ્વારા કોઈપણ મનુષ્ય ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ કરી શકતો નથી. (૧૪)

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।

ઓઙ્મ્ ક્રતો સ્મર ક્લિબે સ્મર કૃતથ્ઙ્ સ્મર ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે ક્રતો-કર્મ કરનાર જીવ ! દેહના અન્ત સમયે ઓઙ્મ્-ઓમ્, એ જેનું નિજ નામ છે, તે ઈશ્વરનું સ્મર-સ્મરણ કર; ક્લિબે-પોતાના સામર્થ્યની પ્રાપ્તિ માટે પરમાત્મા અને પોતાનાં સ્વરૂપનું સ્મર-સ્મરણ કર; કૃતમ્-અને જે કંઈ જીવનમાં [કર્મ] કરેલ છે, તેનું સ્મર-સ્મરણ કર.

અહીં વિદ્યમાન વાયુ:-ધનંજય આદિ રૂપ વાયુ અનિલમ્-કારણરૂપ વાયુને તથા અનિલ અમૃતમ્-નાશરહિત કારણને ધારણ કરે છે.

અથ-અને ઇદમ્-આ શરીરમ્-ચેષ્ટા આદિનું આશ્રય એવું આ નાશવાન શરીર ભસ્માન્તમ્-અન્તમાં ભસ્મ થનાર છે; તેમ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ મૃત્યુ સમયે ચિત્તની વૃત્તિ હોય છે અને શરીરથી આત્મા અલગ-દૂર પડે છે, તેમ જ ચિત્તની વૃત્તિ અને શરીર તથા આત્માના સંબંધને જીવનકાળમાં જાણવા જોઈએ.

આ શરીરની ભસ્માન્ત = અન્ત્યેષ્ટિ ક્રિયા કરવી જોઈએ, આ દાહ ક્રિયા પછી કોઈપણ સંસ્કાર ફરી ન કરવો જોઈએ.

જીવનકાળમાં એક પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન, ઉપાસના તથા પોતાના સામર્થ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

કરેલું કર્મ કદી પણ નિષ્ફળ હોતું નથી, તેમ માનીને ધર્મમાં રુચિ અને અધર્મમાં અરુચિ રાખવી જોઈએ. (૧૫)

અગ્ને નય સુપથા રાયે ઽ અસ્માન્વિશ્વાનિ દેવ વ્યુનાનિ વિદ્વાન્ ।

યુયોધ્યુસ્મર્જુહુરાણમેનો ભૂયિષ્ઠાં તે નમ ઽ ઝક્તિં વિધેમ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્યસ્વરૂપ અગ્ને-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ કરુણામય જગદીશ્વર ! જેથી અમે તે-આપને માટે ભૂયિષ્ઠામ્-અધિક્તર નમઃ, ઝક્તિમ્-સત્કારપૂર્વક પ્રશંસા વિધેમ-કરીએ તેથી વિદ્વાન્-સર્વને જાણનાર આપ અસ્મત્-અમારાથી જુહુરાણમ્-કુટિલતારૂપ એન:-પાપાયરણને યુયોધિ-દૂર કરો.

અસ્માન્-અમને-જીવોને રાયે-વિજ્ઞાન, ધન અને ધનથી પ્રાપ્ત થનાર સુખની પ્રાપ્તિને માટે સુપથા-ધર્માનુકૂળ માર્ગથી વિશ્વાનિ-સર્વ વ્યુનાનિ-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન અને શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ નય-પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે સત્ય ભાવનાથી ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, પોતાની શક્તિ અનુસાર તેની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે તથા પરમાત્માને સર્વથી અધિક સત્કાર કરવા યોગ્ય માને છે, તેને દયાળુ ઈશ્વર પાપાયરણના માર્ગથી પૃથક્ કરીને, ધર્મના માર્ગમાં ચલાવીને તથા વિજ્ઞાન પ્રદાન કરીને, ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષની પ્રાપ્તિને માટે સમર્થ બનાવી દે છે. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ એક એવા અદ્વિતીય ઈશ્વરને ઘોડીને બીજા કોઈની ઉપાસના કદીપણ કરવી નહિ. (૧૬)

હિરણ્મયેન પાત્રેણ સત્યસ્યાપિહિતં મુખમ્ ।

યોઽસાવાદિત્યે પુરુષઃ સોઽસાવહમ્ । ઓઙ્મ્ યં બ્રહ્મ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હિરણ્મયેન-જ્યોતિસ્વરૂપ પાત્રેણ-સર્વના રક્ષક મારા દ્વારા સત્યસ્ય-અવિનાશી સત્સ્વરૂપકારણ [પ્રકૃતિ]ના અપિહિતમ્-આસ્થાદિત-ઢાંકેલા મુખમ્-મુખની સમાન ઉત્તમ અંગનો વિકાસ કરવામાં આવે છે; યઃ-જે અસૌ-તે આદિત્યે-પ્રાણ વા સૂર્યમંડળમાં પુસ્ત્રઃ-પૂર્ણ પરમાત્મા છે, સઃ-તે અસૌ-પરોક્ષરૂપ અહમ્-હું યમ્-આકાશ સમાન વ્યાપક બ્રહ્મ-ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવની દૃષ્ટિએ સર્વથી મહાન છું ઓઙ્મ્-સર્વ જગતનો રક્ષક 'ઓઙ્મ્' છું તે નામ જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે - હે મનુષ્યો ! જે હું અહીં છું, તે જ અન્ય સૂર્ય આદિમાં છું; જે અન્યત્ર સૂર્ય આદિમાં છું, તે જ અહીં છું; હું સર્વત્ર પરિપૂર્ણ, આકાશની સમાન વ્યાપક છું; મારાથી મહાન બીજો કોઈ નથી, હું જ સર્વથી મહાન = મોટો છું.

શ્રેષ્ઠ લક્ષણોવાળા પુત્રની સમાન પ્રાણોથી પ્રિય મારું પોતાનું નામ 'ઓઙ્મ્' છે.

જે પ્રેમ અને સત્યાચરણ દ્વારા મારા શરણમાં આવે છે; તેની અવિદ્યાને હું અન્તર્યામીરૂપથી નષ્ટ કરીને, તેના આત્માને પ્રકાશિત કરીને, તેને શ્રેષ્ઠ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળો બનાવીને, તેનામાં સત્યમય આચરણ સ્થાપિત કરીને, તેને યોગથી ઉત્પન્ન થનાર શુદ્ધ વિજ્ઞાન આપીને તથા સર્વ દુઃખોથી છોડાવીને મોક્ષસુખ પ્રદાન કરું છું. યજુર્વેદભાષ્યની અહીં સમાપ્તિ પર અંતમાં ઓઙ્મ્-નામનું સ્મરણ કરે છે. (૧૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૧), અધર્મના ત્યાગનો ઉપદેશ (૧), સદા શુભ કર્મનાં અનુષ્ઠાનની આવશ્યકતા (૨), અધર્માચરણની નિંદા (૩), પરમેશ્વરના અતિ સૂક્ષ્મ સ્વરૂપનું વર્ણન (૪), ઈશ્વરનું વિદ્વાનો દ્વારા જ્ઞેયત્વ અને અવિદ્વાનો દ્વારા અજ્ઞેયત્વ (૫), સર્વત્ર આત્મભાવથી અહિંસા ધર્મનું પાલન અને તેથી મોહ, શોક આદિનો ત્યાગ (૬-૭), ઈશ્વરનું જન્મ આદિ દોષરહિત હોવું (૮), વેદવિદ્યાનો ઉપદેશ (૮), કાર્ય-કારણરૂપ જડની ઉપાસનાનો નિષેધ, (૯), તે કાર્યકારણ અને કારણથી મૃત્યુનું નિવારણ (૧૦), મોક્ષની સિદ્ધિ કરવી (૧૧), જડ વસ્તુની ઉપાસનાનો નિષેધ (૧૨), ચેતનની ઉપાસનાનું વિધાન (૧૨), જડ-ચેતન બન્નેનાં સ્વરૂપનાં જ્ઞાનની આવશ્યકતા (૧૪), શરીરના સ્વભાવનું વર્ણન (૧૫), પરમાત્માને આત્મામાં સ્થાપિત કરીને શરીરનો ત્યાગ કરવો (૧૫), શરીરના દાહ પછી અન્ય ક્રિયાના અનુષ્ઠાનનો નિષેધ (૧૫), અધર્મનો ત્યાગ અને ધર્મની વૃદ્ધિને માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના (૧૬), ઈશ્વરનાં સ્વરૂપનું વર્ણન (૧૭) અને સર્વ નામોથી ઈશ્વરનાં 'ઓઙ્મ્' એ નામની પ્રધાનતાનું પ્રતિપાદન (૧૭) કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ ઇતિ ચત્વાર્શિણોઽધ્યાયઃ ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां श्रीपरमविदुषां विरजानन्दसरस्वतीस्वामीनां शिष्येण
श्रीमद्दयानन्द-सरस्वतीस्वामीना निर्मिते यजुर्वेदभाषाभाष्ये चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः समाप्तः ।

समाप्तश्चायं ग्रन्थ इति ॥



